



# हिन्दी विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

विद्वान्-वार्त्ति, सद्दर्शन, एत, चार, द, एच,

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्गृहित ।

द्वितीय भाग

[ ५—कपिलोमा ]

## THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. III.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prāchyavidyāmahārṇava,

Siddhānta-vāridhī, Śabda-ratnākara, M. A. S.,

Compiler of the Bengali Encyclopedia; the late Editor of Bangiya Sahitya Par-

śad Kāyastha Patrikā; author of Castes & Sects of Bengal, Mayura-

bhanja Archaeological Survey Reports and Modern Buddhism;

Hon. Archaeological Secretary, Indian Research Society;

Member of the Philological Committee, Asiatic

Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by R. C. Mitra, at the Visvakosha Press.

Published by

Nagendranath Vasu and Vinayath Vasu

9, Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta.

1919.



# हिन्दी विषयकोष

६

दू—१ संस्कृत और हिन्दी वर्णमालाका छतीय स्वर।  
इकारका उच्चारणस्थान तालु है। संस्कृतव्याकरणके  
मतसे इसे अक्षर ऋ प्रकार कीलते हैं। प्रथम ऋक्ष  
दीर्घ और दूत तीन भेद हैं। फिर उनमें प्रत्येक  
उदात्त, अनुदात्त और स्वरित रहता है। यथा,—  
१ ऋक्ष उदात्त, २ ऋक्ष अनुदात्त, ३ ऋक्ष स्वरित,  
४ दीर्घ उदात्त, ५ दीर्घ अनुदात्त, ६ दीर्घ स्वरित,  
७ दूत उदात्त, ८ दूत अनुदात्त, ९ दूत स्वरित। उप-  
रोक्त नौ उच्चारण अनुनासिक और निरनुनासिक  
दोनोंसे अक्षररूप धारण करते हैं। इकारके  
पर्याय यह हैं—छत्र, गालमली, विद्या, चन्द्र, घृषा,  
सुगुणक, समित्र, सुन्दर, वीर, कीटर, पय, भ्रूमध्य,  
माधव, तुष्टि, दचनेव, नासिका, गाला, कामा,  
कामिनी, काम, विघ्नविनायक, नेपाल, भरणी, रुद्र,  
नित्या, क्षिप्वा, पावका। (रक्षाभिषाण) इकार सुगन्ध-  
गुण, कुसुमसद्वय और स्वरि, वक्रा, शक्ति, परमवक्र एवं  
रुद्रमय है। यही मूर्तिमान् कृष्णली मानस पहता  
है। (कामधेनुवक्त्र)

( सं० पु० ) पक्ष विष्णोरपत्यम्, पा-इज्।  
२ विष्णुके अपत्य कामदेव। यह दक्षिणकी गर्भसे

उत्पन्न रहे। (हरिवंश १११ व०)। (अथ०) नजयंकष्य  
इदम्, पा-इज्। ३ खेद। पक्षमोक्ष। हाय। ४ प्रकी-  
र्षण। गुप्सकी बात। ५ निष्ठुर वाक्य। सख्यत बात-  
चीत। ६ दया। रहम। रामराम। ७ निराकरण।  
दूर। ८ प्रत्यक्ष। पाँखके साथने। ९ सविधि। नज-  
दीकी। १० दुःखभाषण। तकलीफ़दिही। ११ क्रोध।  
गुस्सा। १२ विक्रीधन। भुङ्कनाइट। १३ विषय।  
ताजुब। १४ सम्बोधन। पुकार। १५ माधव।  
१६ सुन्दरपक्ष। १७ विद्या। इन्म। १८ दक्षिण मोचन।  
दाहनी पाँख। १९ गन्धर्व। २० पाषाणम्। २१ मयादूर।  
इंगुरोटी (हिं० स्त्री०) इंगुर रणनेकी हज्जी।

इंगुवा (हिं०) रङ्ग ईषी।

इंचना (हिं० लि०) भाकियित होना, पिंचना,  
तनना।

इंटकीधरा (हिं० पु०) इंटका घर।

इंटाई (हिं० स्त्री०) पश्चिमिरी, किसी दिक्ककी  
पेड़की।

इंडर (हिं० पु०) भण्डार्य विनिय, किसी दिक्कका  
खानन। उड़द और रनेकी दान भाय-साय भिगी-  
कर यारीक-यारीक पोष हाजते और लम्बे-लम्बे



टुकड़े उतारते हैं। यह टुकड़े बदलनेमें उवासे जाते हैं। अच्छीतरह एक जानीपर टुकड़ोंको काटकर छोटा-छोटा बना लेते हैं। पसीरोंको उन्हे घी या तेलमें तल और सुर्घु पड़ जानेसे रसामें छोड़ धीमी आगपर पकाते हैं। इंडहर खानमें बहुत अच्छा लगता है।

इंडुरी (हिं० श्री०) कुण्डली, चबड़ा, गुंडरी।

इंडुया (हिं० पु०) कुण्डल, दायारा, गंडुरी। यह कपड़ेमें मोल-मोल बनाया और बोझ उठाते समय नीचे लगाया जाता है।

इंदारा (हिं० पु०) कूप, कूबा।

इंदारुन (हिं० पु०) इंदारुकी शैली।

इंदुवा, इंदुवा शैली।

इंधरोड़ा (हिं० पु०) इन्धन रखनेका स्थान, जिस जगहमें जलानेकी चीज़ रहें।

इक (हिं०) एक शैली।

इक-पांक (हिं० क्रि० वि०) १ निःसन्देह, अवश्य।  
२ अनवरत, लगातार।

इकइस, एकीक शैली।

इकइत राल करना (हिं० क्रि०) विश्रुता सामिल रखना, कुलिया बादशाहतका मालिक होना।

इकटक (हिं० वि०) स्थिर, अपल, साकिन, कायम।

“इकटक लोचन तरावि न टारे।” (तुलसी)

इकड़ा (हिं० वि०) १ एकल, मिला हुआ।  
(क्रि० वि०) २ साथ-साथ मिलाकर।

इकड़ान, इकड़ान शैली।

इकतर (हिं०) एकल शैली।

इकतरफा (हिं० वि०) एक ओरमें सम्बन्ध रखने-वाला, जो एक ही तर्फको भूँका हो। (क्रि० वि०)  
२ एक ओरसे, दूसरी तर्फमें तात्काल छोड़कर।

इकतरा (हिं० पु०) एक दिनके पत्तर पानेवाला प्यार, प्रेमरा, जो दुगार एक दिनके फर्कमें चढ़ता हो।

इकता (हिं०) एकता शैली।

इकतार (हिं०) एकता शैली।

इकताना (हिं० वि०) मद्दग, पमिष, एकधा, एक हीमें मिला हुआ।

इकतार, इकताना शैली।

इकतारा (हिं० पु०) १ वाद्ययंत्र, एक ही तारसे बजनेवाला वाजा। बांसकी डण्डीके छोरमें एक तौलीकी लगा चमड़ेसे मढ़ देते हैं। चमड़ेपर घोड़िया रहती है। तौलीके नीचे बांसमें एक तारको बांधते और घोड़ियोंपर चढ़ा ऊपरकी ओर लगीं हूयो खुंटोंमें लपेटते हैं। इसी खुंटोंको, चढ़ाने उतारने-में तार ढीला या कड़ा पड़ता है। तर्जनीके आघातसे तार बजानेपर बोल निकलता है। साधु इसे बजा बजाकर भिषा मांगा करते हैं।

२ वस्त्रयंत्र, किसी किस्मका कपड़ा। यह भारतमें हाथसे बुना जाता है।

इकताना, एकताना शैली।

इकतानीस (हिं० वि०) एकवत्वारिंशत्, चासीस और एक, ४१।

इकतीस (हिं० वि०) १ एकत्रिंशत्, तीस और एक, ३१।

इकत्तीस, इकतीस शैली।

इकदाम (च० पु०) १ चपराघ करनेकी चेष्टा, गुस्सा करनेकी कोशिश। २ सङ्कल्प, कसूद।

इकपेचा (हिं० पु०) एक पङ्क्ति या दस्तार। इसका मंचार दिल्ली और आगरामें अधिक है। इकपेचा मस्तकका आभूषण है।

इकवारगो, एकवारो शैली।

इकवाल (च० पु०) १ पञ्चोकार, मन्जूरी। २ आदान, रजामन्दी। ३ भाग्य, किसमत।

इकवाल-उद्-दीना—मखनज नवाब सादत अली खानके पौत्र। इनका पूरा नाम इकवाल-उद्-दीला सुबसिन अली खान् रह। १८१८ ई०के जनवरी मास यह पचपकी गवाचीपर अपना खल प्रमाणित करने इस्तेमाल गये थे। किन्तु जब किसीने इनकी बात न सुनी, तब इन्होंने तुर्की परबख्शानमें अपनी बाकी जिन्दगी भजनभावसे काटनेकी ठानी। ‘इकवाल-फिराज’ नामक पुस्तकके यह रचयिता रहे।

इकवाल खान्—मीरोज़ शाह तुगलकके पौत्र और जफ़र खान्के पुत्र। १४०० ई०को यह नगरत अली खान्का हरा दिल्लीके सिंहासनपर बैठे थे। किन्तु १४०५

ई०को भूलतानकी शासक खिज़र खानसे जो युद्ध हुआ, उसमें इनका वध किया गया। इनकी मरनेपर सुलतान मजूमूद शाहने दिल्लीका साम्राज्य पाया था।

इकवालदावा (च० पु०) दण्डाघात-वहण, हुक्म मान लेनेकी बात।

इकबालमन्द (च० वि०) १ भाग्यशाली, किष्मती। २ शुभ, सुवारण, अच्छा।

इकबालमन्दी (च० स्त्री०) सोमाग्य, निकवस्तु, लहर-वहर।

इकराम (च० पु०) १ उपहार, भेंट। २ सम्मान, कदर, इज्जत।

इकराम-उद्-दौला—लखनऊ नवाब वालिद पक्षी शाहकी प्रधान मन्त्री। १८०८ ई०को इनकी मृत्यु हुयी थी।

इकरार (च० पु०) १ स्वीकार, मजबूरी। २ प्रतिष्ठा, पादा। ३ क्रयविक्रय-नियम, बातचीत, ठेका। ४ स्वीकारपत्र, रसीद।

इकरार करना (हिं० क्रि०) वचन देना, वादा वदना। २ कहना, सुनाना। ३ स्वीकृत होना, मान लेना। ४ नियुक्त करना, लगाना।

इकरारनामा (च० पु०) १ निर्धारण, फैसला। २ प्रतिष्ठापत्र, तमछुक, टीप।

इकरारनामा-बन्दोबस्त (च० पु०) १ शासनपत्र, इन्तजामका कागज़। २ सरकारके साथ मालगुज़ार और गांवकी हिस्सेदारका तमछुक।

इकरारनामा सालिखी (च० पु०) मध्यस्थ-प्रतिष्ठापत्र, पञ्चायती तमछुक।

इकरारी (च० वि०) १ सम्मत, राजी। २ अनुमोदनकारी, मान लेनेवाला।

इकलड़ा (हिं० वि०) एक गुणविशिष्ट, जो एकही ज़ोरीसे बना हो। यह शब्द 'हार'का विशेषण है।

इकला, चक्रे देवी।

इकलार्दे (हिं० स्त्री०) १ वस्त्रविशेष, किसी किष्मका कपड़ा। एक पाटकी बारीक गोटा-किनारी लगी चादरकी इकलार्दे कहते हैं। २ गिल्दन्ता, तनहायी, पकेसापन।

इकलार्दे (हिं० वि०) एक ही ज़ोरे रखनेवाली, जो एकही तरेसे बनी हो। जिस कड़ाहोके पेटमें एकही तबा होनेसे जोड़ नहीं लगता, उसका नाम इकलार्दे पड़ता है।

इकलौता (हिं० वि०) एकाकी, अपने मा-बापका भकेला, भाई-बहन न रखनेवाला।

इकला, चक्रे देवी।

इकलार्द (हिं० स्त्री०) स्थूल विशेष, किसी किष्मकी निहायी। यह धरन जैसी बनती और एक ही ओर और लगती है।

इकलठ (हिं० वि०) एकपट्टि, साठ और एक, ६१।

इकसर (हिं० वि०) १ दूसरा पक्ष न रखनेवाला। २ भकेला। (क्रि० वि०) ३ प्रायः, भकसर।

इकसार (हिं० वि०) १ समतल, समवार, जो जंघा-नोधा न हो। २ समान, हमसर, बराबर। ३ सहज, मिलता-जुलता।

इकसार करना (हिं० क्रि०) १ समतल बनाना, हमवार निकालना, जंघा-नोधा मिटाना। २ खोदना और जोतना।

इकलून (हिं० वि०) एकल, इकड़ा, मिला हुआ।

इकलत्तर (हिं० वि०) एकसमति, सत्तर और एक, ७१।

इकलरा (हिं० वि०) १ केवल, भकेला, एकही टुकड़ा रखनेवाला। २ एक विधानविशिष्ट, एक परदा रखनेवाला।

इकलरी भाग (हिं० स्त्री०) दैरागिक, परवा-सुतनासिवा।

इकलार्दे (हिं० क्रि०-वि०) १ नाच-चाय, एकही बारमें, सब मिलकर।

इकार्दे (हिं० स्त्री०) एकाद, बारिद, इकन।

इकलामी (हिं०) एकादसे देवी।

इकाना (हिं०) एकाद देवी।

इकल पण्डित—भागरा दुर्गके एक महापाद स्थितार। शाह बालम और मावधराय सेधियाके समय यह विद्यमान रहे।

इकेला, चक्रे देवी।

इकोठ, चक्रे देवी।

इकोसर (हिं०) एकोसर देवी।

इकीज (हिं० स्त्री०) काकवन्धग, एक ही बार सन्तान उत्पन्न करनेवाली स्त्री, जिस औरतके दूसरी बार वधवा न निकले। "यह अच्छी इकीज बूती।" (श्रीकोमि)

इकीता (हिं० पुं०) पादपर उत्पन्न होनेवाला स्कोट, पैरका फोड़ा।

इकीना (हिं० पुं०) १ मिश्रित भय, जो घनाज कंठान हो।

२ युद्धप्रान्तके बहराद्वय जिलेका परगना। फौरीज ग्राह तुगलकके समयतक इस प्रान्तपर लूट-मार मचानेवाले बहद्दौलीका राज्य रहा। १३०४ ई०की संवार राजपूत बरियार ग्राहने वल्लु डाफूवोकी दबाया और गान्ति रखनेकी शर्तपर इस प्रान्तका दानपत्र सरकारसे सिद्धाया था। किन्तु सिपाही विद्रोहमें योग देनेसे यह राज्य लूट किया और कपूरथलाके महाराज तथा बलरामपुरके नवाबको सौंप दिया गया। १७१६ ई०को राजा प्रतापसिंहके समय इसी परगनेमें जो गंगवाल राज्य निकला, उसपर आज भी उनके वंशजोंका अधिकार बना है। राप्ती, मिथिया और कोहानी प्रधान नदों हैं। क्षेत्रफल २५६ वर्गमील लगता है। ग्राहण, पक्षीर और कुम्भी अधिक रहते हैं। सीताग्राममें शिव-मुह-माताकी मूर्ति पुजती है। ३ अपने परगनेका गहर। यह नगर बहराईचमे २२ मील दूर बलरामपुरकी जानेवाली सड़कपर पन्ना २० ३३ ११' उ० तथा द्राघि ८१° ५६' ३८" पू० पर अवस्थित है। सिपाही विद्रोहके समय तक इकीनाके राजाओंका यही वास-स्थान रहा।

इकीसो (हिं० वि०) ध्रुव, निराला, पलंग।

इकट (मं० पुं०) ईयते, इ-क्षिप-इत्-सिञ्ज-कटो यष्मात् इयोदरादित्वात् तस्य कः। १ कटमाधन लक्ष विधेय, चट्टाई वगैरहके काम आनेवाली घाम। २ बटारुख, वेरका पेड़।

इकवाल (मं० पुं०) सोमाग्यद योगविधेय। ताशकके मतानुसार नवग्रहके केन्द्र (१, ४, ७, १०) अथवा पक्षपर (२, ५, ८, ११) में पढ़ने और दूसरे

स्थान (३, ६, ९, १२) यासी रहनेमें इकवाल योग पाता है।

इकम (हिं० स्त्री०) ईर्ष्या, हसद, डाह।

इकस करना, इधर रखना देवी।

इकस रखना (हिं० क्रि०) ईर्ष्या मानना, डाह करना।

इका (हिं० वि०) १ केवल, एकला, दूसरेकी साथमें न रखनेवाला। २ अद्वितीय, अनोखा, निराला। (पुं०) ३ कानकी दानी। इसमें एक ही मोती पड़ता है। ४ थोड़ा विंग्य, सिपाही। यह युद्धमें एकले ही लड़ता है। ५ पशुविशेष, कोई जानवर। यह अपने साधियोंकी छोड़ पकेली घूमता है। ६ यान विशेष, एक घोड़ेकी गाड़ी। ७ एक बूटीका ताग। यह सबसे बढ़कर रहता और किसीके कट नहीं सकता।

इका-दुका (हिं० वि०) दो-एक, बहुत काम।

इकायन, इकायन देवी।

इकामी, इकायन देवी।

इकी (हिं० स्त्री०) एक बूटीका ताग। इसे इका-भी कहते हैं।

इकीस (हिं० वि०) एकविंशति, दो दहाई और एक। एकाई रखनेवाला, बीस और एक, २१।

इकीस रहना (हिं० क्रि०) क्षिप्र उत्तम होना, बढ़कर निकलना, लौटना।

इकीरी—महिसुर राज्यके गिमोगा जिलेका गांव।

यह पन्ना १४° ७' २०" उ० तथा द्राघि ७५° १' ४५" पू० पर अवस्थित है। १५६० से १६४० तक इकीरीमें लिहायत वंशके कलादी राजाओंकी राजधानी रही। उनका सिद्धा भी इकीरी पगोडा कहाता है। १०६१ ई०की ईदर अमोने कलादी राजाओंका राज्य होन महिसुरमें मिला लिया था। इकीरीकी दीवारें बहुत लम्बी-छोड़ी और तीन ओरमें घिरी रहीं। बीचमें राजप्रामाट और दुर्ग मझा था। नकाभी और मोनेके कामकी भलक बहुत अच्छी रही। किन्तु पय कुल नहीं, केवल पधोरेमरका मन्दिर देख पड़ता है।

इकीड़ (हिं० पुं०) दाहखण्डकी आघातसे प्रति-इन्दीकी सीमामें पड़ना, गेंड़ीकी मारकर सुग्रा-सिफकी हदमें रखना।

इक्षानवे ( हि० वि० ) एकनवति, नवे और एक, ८१ ।  
 इक्षानव ( हि० वि० ) एकपञ्चाशत्, पचास और एक, ५१ ।  
 इक्षायी ( हि० वि० ) एकाशीति, अस्सी और एक, ८१ ।  
 इक्षव ( सं० पु० ) इक्षु साधारण, मामूली नायगकर या गन्दा ।  
 इक्षापिका ( सं० स्त्री० ) चनिचु, किलक, सरकण्डा । यह हृद्य भी विलुक्कुल गन्ने-जेसा ही मीठा होता है । बालक इसका क्लम बनाते हैं । प्रायः इक्षापिका जलके निकट होती है ।  
 इक्षु ( सं० पु० ) इत्यते, मधुरत्वात्, इय-कृष्णः । गन्धे इवेः कृष्णः । अणु० १५० । १ मधुर रसयुक्त सुनाम-ख्यात हृद्यविशेष, नायगकर, ईख, गन्दा । ( Saccharum officinarum ) हिन्दुस्थानमें प्रायः इसे कछ या पौड़ा कहते हैं । इक्षु शब्दके पर्याय यह हैं,—रसाल, कर्कोटक, बंग, फान्सार, सुकुमारक, चधिपत्र, मधुवृण, वृष्य, गुडवृण, मृत्त पुष्य, मङ्गारस, चसिपत्र, कोयकार, इक्षव और पयोधर । रक्तचुको सुष्णपत्र, गोष चयया लोहित कहते हैं ।  
 इक्षु सुदृढ़ वेत जैसा दृढल रहता और ८२ फीट तक बढ़ता है । पुष्पांकी चूड़ा पञ्चतुष्य होती है ।  
 इक्षुमूल ग्रामक और मूलवर्धक है । बाजारमें गन्ना खानेके लिये बिकता है । कोयी-कोयी इसके टुकड़े खतार कर रखता है । गन्नाको झीलकर जो चावले जैसा खण्ड किया, वह गंडरी कहा और भोजनोपयोग्य खानेका मुख्य द्रव्य गिना जाता है । पत्ती पण्डके चारेका काम देती है ।  
 इक्षु प्रायः सकल पृथिवीके देशमें उपजता है । भारतवर्षके अनेक स्थानमें इसकी लायि करते हैं । इक्षुके फोकसे कागज बनता है । पत्रसे चटायी तैयार कर सकते हैं ।  
 इक्षु बारह प्रकारका होता है,—१ पोष्टक, २ भीरक, ३ बंगक, ४ शतपीरक, ५ फान्सार, ६ तापसेचु ० काष्ठेचु, ८ चधिपत्रक, ९ नेपाच, १० दीर्घपत्रक, ११ भीरक और १२ कोयलप ।

पोष्टक एवं भीरक वायु और पित्तको मिटाता है । इसका रस और गुड़ मधुर, चति शीतल तथा बलवर्धक है । कोयलप—गुह, शीतल और रक्त तथा पित्तको नाश करनेवाला निकलता है । फान्सार गुह, बलकारी, श्लेष्मावर्धक, स्मृततामप्यादक और रक्षक है । दीर्घपत्र चति कठिन होता है । बंगक चारलवणाक्त है । शतपीरक कुह-कुह कोयलपका गुण रखता ; किन्तु पत्र उष्ण, लवणाक्त और वायु-नायक ठहरता है । तापसेचु गूद मधुर, श्लेष्मावर्धक, प्रीतिप्रद, रुचिजनक, शक्तिवृद्धिकारक और बलकर है ।

सामान्य इक्षु खानेसे रक्तपित्त घटता और वन, यक तथाद्रुक बढ़ता है । पका लेनेसे यह मधुर, शिथिल, गुह, चतिमय शीतल और मूलको परिष्कार करनेवाला है । इक्षुका मध्य तथा मूल मधुर और स्नादु होता है । गांठ, क्षाल और अग्रभाग लवणाक्त है । मूलके ऊपरका भाग सुमिट और मध्यभाग चति मधुर लगता, फिर क्रमसे पागे नीरस एवं लवणाक्त निकलता है । भोजनमें पहले सुधनेपर इक्षु पित्त और पीछे वायुको बढ़ाता है । रोटी खाते समय लेनेपर यह गुहपाक हो जाता है । दांतमें झोलकर खानेपर इक्षु सुधा बढ़ाता, सुषका छत्र करता और जीवनका हित साधता है । इससे वायु, रक्त और पित्त नष्ट होता है । यह अधिक मिट और प्रीतिजनक है । रक्त धार धातु बढ़ता है । रक्तदोष और भ्रम दूर होता है । अल्प परिमात्र श्लेष्मावर्धक, मनमुष्टिकर एवं सुख-रुचिजनक है । शरीरमें क्षान्ति और बलकी वृद्धि होती है । खानेमें यह पञ्चतुष्य निकलता, पथय त्रिदापनायक रहता है । यन्त्रद निजान कर पीनेपर रस चति शीतल, कोष्ठपरिष्कारक, सुष-रुचिकर और गात्रदाहकर है । वायो इक्षुका रस अच्छा नहीं होता । वह अल्प एवं दातनाशक तथा गुह, पित्तकर, गोषकर, भेदक और अतिमूलकर है । गन्ने करनेसे रस चिक्च, गुह, पत्रल तीक्ष्ण, पानाह और कृष्ण तथा क्लिप्त पित्त-नायक होता है । चतिपाकमें विदाह, पित्तदोष

और रक्तदीप उपजता है। काष्ठा इच्छु खानेसे कफ, मांससार और मेद बढ़ता है। युवा वातहारक, खादु, ईषत् तौष्य और पित्तनाशक है। पक्का रक्त तथा पित्तको दूर करता, घत मिटाता और वीर्य उपजाता है। साधारण इच्छु उत्कृष्ट रसायनकारी, बलकर, रोगनाशक, क्षिप्र, दृढिजनक, स्थूलतासम्पादक, शक्तिजनक, पायुष्कर और श्लेष्माकर है। अत्यन्त खादु होनेसे यह वात और पित्तको नष्ट करता, किन्तु शक्तिजनक रहते भी अन्तर्विदाह उपजाता है। काला इच्छु शोषापहारक और शोफ तथा व्रणजनक है।

इच्छुविकार अर्थात् जखके रमसे बनी चोजकी लक्ष्मीका, फाणित, गुड़, खण्ड, मत्स्याण्डो और सिता कहते हैं। यह द्रव्य निर्मल होनेसे लघु, शीतल और वीर्यकर होता है। पक्क और गाढ़ रसका नाम फाणित है। यह धातुवर्धक, वातपित्त एवं भ्रमनाशक और मूत्र तथा वस्त्रियोधक होता है। मत्स्याण्डो गाढ़ और अल्प शिरा-युक्त रहतो है। यह भेदक, बलकर, लघु, पित्त तथा वातनाशक, धातुवर्धक, पुष्टिकर और रक्तदीपनाशक है। गुह, चण्ड, फाणित प्रणति शब्द द्रव्य है।

२ कीकिलाच वृष, तालमखानेका पेड़। ३ नदी विशेष। मत्स्यपुराणमें दो इच्छु नदीका नाम मिलता है। एक जम्बूद्वीप और अপর शाकहीपमें बतायी गयी है। जम्बूद्वीपकी इच्छुनदी अचस (Oxus) और अश्वेदमें 'अच्छु' नामसे प्रसिद्ध है। अर्थावर्ण देखी।

इच्छुक (सं० पु०) इच्छु प्रकारार्थे कन्। लल्लाम्भः प्रकारवचने कन्। पा २/११६। १ एक प्रकार इच्छु, किसी किष्ककी जख। २ इच्छुगन्धा, कुस, कांस। ३ भूमिकुप्पाण्ड, बिलायीकन्द। ४ काकोली।

इच्छुकण्डिका (सं० स्त्री०) १ इच्छुकाण्ड, मूँज, कांस। २ काकोली। ३ भूमिकुप्पाण्ड, बिलायीकन्द।

इच्छुकन्दा (सं० स्त्री०) खेतभूमिकुप्पाण्ड, सफेद बिलायीकन्द।

इच्छुकाण्ड (सं० पु०) ईचोः वृषस्य काण्डः दण्ड इव काण्डो यस्य, बहुव्री०। १ काण्डवृक्ष, कुस, कांस। २ सुष्मा, मूँज। इच्छुः काण्डइव। ३ इच्छुदण्ड, पौड़ेका डण्डल।

इच्छुकाग (सं० पु०) काण्डवृक्ष, कांस, कुस।

इच्छुकीय (सं० त्रि०) इच्छुयुक्त, जखसे भरा हुआ।

इच्छुकीया (सं० स्त्री०) इच्छुयुक्त देण, जखसे भरो जमोन्, जिस जगहपे पौड़ा ज्यादा उपज।

इच्छुकुट्टक (सं० पु०) इच्छुन् कुट्टयति, इच्छु-कुट्ट-कुन् ६-तत्। १ इच्छुसंघाटक, जख काठनेका ईंसला।

इच्छुगण्डिका (सं० स्त्री०) काण्डवृक्ष, कांस।

इच्छुगन्ध (सं० पु०) इचोः गन्धइव गन्धो यस्य, बहुव्री०। १ काण्डवृक्ष, कांस। २ सुद्र गोक्षुरक वृक्ष, छोटा गोखरू।

इच्छुगन्धा (सं० स्त्री०) इच्छु-गन्ध-टाप्। १ कीकिलाच, तालमखाना। २ गोक्षुरक, छोटा गोखरू। ३ चीरविदारि, सफेद बिलायीकन्द। ४ वाराहीकन्द, रामशर। ५ शृगाली, मादा गीदड़। ६ खेत भूमिकुप्पाण्ड, सफेद भुयिकुन्दड़ा।

इच्छुगन्धिका, इच्छुगन्धा देखी।

इच्छुज (सं० त्रि०) इच्छु-जन-ङ। इच्छुसे उत्पन्न, गन्धसे निकला हुआ। यह शब्द फाणित, मत्स्याण्डो, खण्डक, सिता और सितोपलका विशेषण है।

इच्छुजटा (सं० स्त्री०) इच्छुमूल, जखकी जड़।

इच्छुतुल्या (सं० स्त्री०) इचोः इच्छुणा वा तुल्या। १ इच्छुविशेष, एक जख। २ काण्डवृक्ष, कांस। ३ यावनाल, ज्वार।

इच्छुदण्ड (सं० पु०) इच्छुः दण्डइव, सप० कर्मधा०। जख, सांटा।

इच्छुदर्भी (सं० स्त्री०) इचोरिव दर्भी गन्धो यस्याः, बहुव्री०। वृषविशेष, किसी किष्ककी घास। यह सुमधुर, शीतल, अल्प कपाय, कफपित्तहारक, रुचिकर, लघुपाक और दृढिजनक होती है। (शतनिषण्डः)

इच्छुदा (सं० स्त्री०) इच्छु तदास्वादं ददातीति, इच्छु-दा-क। नदीविशेष, एक दरया (Oxus)। यह इन्द्रप्रथमसे निकली है।

इच्छुनेत्र (सं० स्त्री०) इचोर्नेत्रमिव, ६-तत्। इच्छुप्रण्य, जखकी गांठ।

इच्छुपत्र (सं० पु०) इचोः पत्रमिव पत्रं यस्य, बहुव्री०। यावनाल, ज्वार।

इक्षुपत्रक, इक्षुपत्र दीर्घो ।

इक्षुपत्रा ( सं० स्त्री० ) इक्षुपत्र दीर्घो ।

इक्षुपत्री ( सं० स्त्री० ) १ वषा, वच । २ शूल भूमि-  
कुपाण्ड, सफेद सुयिक्तुम्हड़ा ।

इक्षुपर्णी, इक्षुपर्णो दीर्घो ।

इक्षुपाक ( सं० पु० ) इक्षोः पाकः, इ-तत् । गुड़ ।

इक्षुपुडा ( सं० स्त्री० ) शरपुडा, मरफोका ।

इक्षुप्र ( सं० पु० ) इक्षुरिव पूर्यते इक्षु प्रपोदरादित्वात्  
कः । शरद्वण, रामशर ।

इक्षुप्रमेह, इक्षुमेह दीर्घो ।

इक्षुवातिका ( सं० स्त्री० ) इक्षोर्वात इव वातः केयः

श्रीरथपत्रादिर्यस्याः । १ इक्षुतुष्या, एक जख ।

२ कोकिलाच, तालमखाना । ३ कागडण, कांस ।

इक्षुमर्चिका ( सं० स्त्री० ) इक्षुरसनिष्काषणयन्त्र,  
जख घेरनका कोरह ।

इक्षुमती ( सं० स्त्री० ) इक्षुमहाद्वयो विद्यतेऽस्यां  
नद्याम्, मतुप् । कुक्षेत्रप्रवाहित नदीविशेष । इक्षी  
नदीके तीरे साङ्गाया नगरी रक्षी । ( रामायण १००१३ )

इक्षुमय ( सं० स्त्री० ) इक्षुमिकारज मय, जखके  
रससे बनौ शराव । इक्षुरस, मरिच, बदर, तथा  
अधि धीर भन्तकी लवण मिलानेसे यह बनता है ।  
( शेषवर्णिक्य )

इक्षुमालवी, इक्षु दीर्घो ।

इक्षुमालिनी, इक्षु दीर्घो ।

इक्षुमूल ( सं० स्त्री० ) इक्षोर्मूलं यन्निरिय मूलं यस्य  
१ इक्षुविशेष, किसी किष्ककी जख । २ इक्षुका मूल,  
जखकी जड़ ।

इक्षुमेद ( सं० पु० ) इक्षुपाटिका, जखका बाग ।

इक्षुमेह ( सं० पु० ) इक्षुरसतुष्यो मेहः, मध्यपदश्रीषी  
कर्मधा० । कफज मूलदोष, इक्षुरस-जैमे मूलका  
होना । इक्षुमेहमें मूलके माध मधु गिरता है । इक्षु  
मेहके मूलपर मखो बैठती धीर चौटी चढ़ती है ।

दिवानिद्रा, व्यायाम तथा आलस्यमें आसक्त रहने धीर  
शोथ, क्षिध, मधुर एवं मधु-द्रव्य-युक्त भक्ष खानेसे  
यह रोग भग्न जाता है । सुयुतने इक्षुमेहपर जरामी-  
रुपायके सेवनकी व्यवस्था बतायी है । ३३ दीर्घो ।

इक्षुमेहिन ( सं० स्त्री० ) इक्षुमेह-शूल, मिमिक्षि-  
बीजका मरीज, जिसके कुलक-सुत्तिका रोग रहे ।

इक्षुयन्त्र ( सं० स्त्री० ) इक्षोः निष्पीडनं यन्त्रम्, गात्र-  
तत् । जखके रसको निकालनेका कोरह ।

इक्षुयोनि ( सं० पु० ) इक्षोर्यानिः जन्म यन्मातृ ।  
पुण्ड्रेक्षु, पोंहा । २ कर्दमालि, किसी किष्ककी जख ।

इक्षुर ( सं० पु० ) इक्षुं तद्वदसं राति, इक्षु-रा-क ।  
१ कोकिलाच, तालमखाना । २ इक्षु, जख । ३ गोक्षु-  
रक, गोक्षुर । ४ कागडण, कांस । ५ शरद्वण, राम-  
शर । ६ कृष्णक्षु, कावी जख ।

इक्षुरक, इक्षुर दीर्घो ।

इक्षुरबीज ( सं० स्त्री० ) कोकिलाच बीज, तालमखा-  
नका तुम्हम ।

इक्षुरम ( सं० पु० ) इक्षोरम इव रसो यस्य मः ।  
१ कागडण, कांस । इ-तत् । २ इक्षुका रस, जखका  
निचोड़ । ३ गुड़ ।

इक्षुरमकाय ( सं० पु० ) इक्षुरसस्य कायः, इ-तत् ।

इक्षुगुड़, जखका गुड़ ।

इक्षुरसवलरी ( सं० स्त्री० ) धीरविदारो, मक्षेद विनायो-  
कन्त ।

इक्षुरसविहार ( सं० पु० ) इक्षुगुड़, जखका गुड़ ।

इक्षुरसगुह ( सं० स्त्री० ) तैल, कन्त, गात्र धीर फन  
पहनेसे खड़ा हो जानेवाला इक्षुरस, शिरका । यह गुह  
धीर धनमिस्त्रि होता है । ( इक्षु )

इक्षुरसोद ( सं० पु० ) इक्षुरसत् मिदमुदकं यस्य,  
मदुक्षी० उदकमयस्योदादेगय । इक्षुसमुद्र, गर्बतो  
यहर । पुराणानुसार जवण, इक्षु, सुपु, धर्पि, दधि,  
दुग्ध धीर जल मात वधुका समुद्र होता है ।

इक्षुरालिका, इक्षुराला दीर्घो ।

इक्षुराला, इक्षु दीर्घो ।

इक्षुपाटिका ( सं० स्त्री० ) इक्षुपत्र दीर्घो ।

इक्षुपत्र ( सं० स्त्री० ) इक्षुका वन, जखका जङ्गल ।

इक्षुवत्तकी, इक्षुवत् दीर्घो ।

इक्षुवत्तरी, इक्षुवत् दीर्घो ।

इक्षुवल्ली ( सं० स्त्री० ) इक्षुरिव क्षुद्राद् वल्ली बहरो  
वा । कृष्णधीरविदारो, काष्ठा विनायीकन्त ।

द्रुचुवाटिका, इच्छादी देखो।

द्रुचुवाटी (सं० स्त्री०) इक्षोर्वाटीव। १ पुण्ड्रक, पौंडा। २ करद्वयासीलु, मासूली कख।

द्रुचुवारि, इच्छादी देखो।

द्रुचुविकार (सं० पुं०) इक्षोर्विकारः, इ-तत्। शुद्ध प्रभृति; शीरा, राव, शुद्ध, चीनी, मिसरी घंगरह।

द्रुचुविक्षति (सं० स्त्री०) खण्ड, खांड।

द्रुचुविदारिका (सं० स्त्री०) भूमिकुषाण्ड, भूमि-कुम्हड़ा।

द्रुचुविदारो, द्रुचुविदारिका देखो।

द्रुचुवेष्ट, इच्छादी देखो।

द्रुचुवेष्टन (सं० पुं०) इक्षोरिव वेष्टनमस्य, वहुव्री०। सुस्त्रवण, मूल।

द्रुचुवेष्टन, इच्छादी देखो।

द्रुचुशर (सं० पुं०) इक्षुरिय शृणाति, इक्ष-शृ-भच्। काशवण, रामशर।

द्रुचुशाकट (सं० स्त्री०) इक्षुर्वा भवनम्, इक्षु-शाकट।

द्रुचुका चित्र, कखका खेत।

द्रुचुमाकिन, इच्छादी देखो।

द्रुचुसमुद्र, इच्छादी देखो।

द्रुचुसार (सं० पुं०) इक्षोः सारः, इ-तत्। शुद्ध।

द्रुचुरक (सं० स्त्री०) काकिलाक्षपीक, तालमखानेका तुषुम्।

द्रुचुरकवीज, इच्छादी देखो।

द्रुचुलाकु (सं० पुं०) १ वैवस्वत मनुके पुत्र। सूर्य-वंशीयोर्मि यह अयोध्याके प्रथम नरेश रहे। इनके एक शत पुत्रोंमें विकुक्षि क्येष्ट थे। रामचन्द्रजीने इन्हींके कुलमें जन्म लिया। २ वाराणसीके एक राजा। बौद्धोंके महावस्त्रवदान नामक संस्कृत ग्रन्थमें इनके सम्बन्धपर अद्भुत गल्प लिखा है। एकदिन वाराणसीके राजा सुवन्मुने स्वप्न देखा, कि उनके शयनागारमें इक्षुदण्ड भर गया था। नींद टूटनेपर स्वप्न प्रकृत निकला। क्रमसे सफल इक्षुदण्ड सुखा, केवल एक वृक्ष बचा था। सुवन्मुने देवर्षीको बुला इसका कारण पूछा। उन्होंने कहा,—इस इक्षुके मध्यसे उपजनेवाला बालक ही आपका पुत्र होगा। देवर्षीकी बात

ठीक निकली। इक्षुकी तोड़कर एक बालक उत्पन्न हुआ था। इक्षुके मध्य रहनेसे उसका नाम इक्षुलाकु पड़ा। सुवन्मुने मरनेपर वही वाराणसीका राजा बना था। इक्षुलाकुकी प्रधान महिषीका नाम भन्तिन्दा रहा। उनके ही गर्भसे कुशने जन्म लिया था। (कुशवतन) (सं० स्त्री०) ३ कटुतुम्बी, कड़वी लौकी। इक्षुलाकुकुलज (सं० त्रि०) इक्षुलाकुके वंशमें उत्पन्न। इक्षुलाद (सं० त्रि०) इक्षुभक्षक, कख चूसनेवाला। इक्षुवारि (सं० पुं०) इक्षोः अरिः, इ-तत् वा इक्षुरि-वाकति, इक्षु-वृ-इन्। काशवण, कांस।

इक्षुलानि, इक्षुलिक देखो।

इक्षुलानिक (सं० पुं०) इक्षुरिव भलति व्याघ्रोतीति, इक्षु-ख-ल्। १ काशवण, कांस। २ इक्षुविषेय, किषी किष्मकी कख। ३ वनखड़िका, नरकुल।

इक्षुलानिका (सं० स्त्री०) इक्षुलिक देखो।

इक्षुहा (हिं० स्त्री० वि०) १ एकत्र होकर, मिलके। २ एककाल, मान, उसी वक्त। ३ अधिक, ज्यादा।

इक्षुहा करना (हिं० स्त्री०) १ बटोरना, संगीरना। २ बुला भोजना। ३ जोड़ना, मौजान् लगाना। ४ मिलाना।

इक्षुहा होना (हिं० स्त्री०) १ जमना, मिलना, पाना। २ भीड़ लगना, गोल बंधना। ३ जोड़ना, शमारने पाना।

इक्षुद (हिं०) रत्न देखो।

इक्षुफा-वारदात (फा० पुं०) अगोप्य विषयका गोपन, न छिपाने लायक बातका छिपाना।

इक्षुराल (अ० पुं०) १ अपसारण, वेदखली, निकाला। २ आहरण, बंदर, निकासी। ३ निर्हरण, खिंचाव।

इक्षुराजात् (अ० पुं०) व्यय, खर्च। यह शब्द 'इक्षुराल'का बहुवचन है।

इक्षुलास (अ० पुं०) १ वैमस्य, पाकीजगी, सफाई। २ अनुराग, वफादारी, खरापन।

“इक्षुलासे इक्षुलास देहा होता है।” (श्रीकीर्ति)

३ प्रणय, प्राशनापरस्त्री, मीठरवानी।

इक्षुलास खान्—१ सम्राट् शाहजहान्की समयवाले एक सम्मान्य पुरुष। सन् १६५८ ई०को इनकी मृत्यु हुयी। २ सम्राट् औरङ्गजेबकी सेनाके एक सरदार।

१६८८ ई०को इन्होंने अपने पिता तकरीब खान् के साथ महाराष्ट्र-उपति सभाजीकी कैद किया और तुलापुरमें औरङ्गजेबकी सामने ला फांसीपर चढ़ाया था।

इखलास जोड़ना ( हिं० क्रि० ) मैत्री उत्पन्न करना, दोस्ती लगाना।

इखलासमन्द ( अ० वि० ) १ निर्याज, बेरिया, साफ़।

२ हितकाम, सुगन्धि, मेहरबान। ३ प्रियतम, आश्रय, हिना-मिला।

इखलास रखना ( हिं० क्रि० ) १ निर्याज होना, साफ़ रहना। २ प्रीति पालना, प्यार करना।

इखु ( हिं० ) १४ देखो।

इख्तियार ( अ० पु० ) १ रुचि, पसन्दीदगी, मर्जी।

२ इच्छा, खुशी। ३ स्वतन्त्रता, आजादी। ४ संयम, जख्त। ५ खल्व, हक़। ६ अधिकार, कब्ज़ा। ७ नियम, कायदा। ८ अधिकारपद, ओहदा।

इख्तियार भदानत ( अ० पु० ) न्यायप्रमुख, हुक़म।

इख्तियार समलमें लाना ( हिं० क्रि० ) नियम बांधना, कायदा लगाना।

इख्तियार आम ( अ० पु० ) साधारणधिकार, मामूली हुकूमत।

इख्तियार-आमद-रफ़्त ( अ० पु० ) गमनागमन-का खल्व, आने-जानेका हक़।

इख्तियार-इजतिदायो ( अ० पु० ) प्रथमाधिकार, शौबल हुक़म।

इख्तियार-उद्-दीन—एक सुसलमान वीर। १२५६-५७ ई०को इन्होंने आक्रमण कर आसामदेशके कामरूप प्रान्तकी राजधानी छीनी। राजा पर्वतवर जा छिपे थे। इन्होंने वहाँ मसजिद बनवायी और बङ्गाल एवं कामरूपकी ग्राही पायी। किन्तु १२५७ ई०को हिन्दुओंने पर्वतसे उतर इख्तियार-उद्-दीन मलिक उस-वेगकी घोर रूपसे आहत किया और समय सैन्यकी बन्दी बनाया था।

इख्तियार करना ( हिं० क्रि० ) १ चुनना, छांटना। २ करनेकी ठानना, इरादा बांधना। ३ अपने ऊपर लेना, हिम्मत बांधना, उठाना। ४ अवलम्ब पकड़ना, सहारा बैठना।

इख्तियार कानून ( अ० पु० ) नियमाधिकार, कानून-का जोर।

इख्तियार कामिल ( अ० पु० ) पूर्णाधिकार, पूरा हुकूमत।

इख्तियार जायज ( अ० पु० ) खल्व, हक़, कानूनी कुवत।

इख्तियार-तजवीज़-कानून ( अ० पु० ) व्यवस्थापक अधिकार, इजतिदायो ताक़त।

इख्तियार-तजवीज़-मुकदमा ( अ० पु० ) व्यवहारा-धिकार, इनसाफी जोर।

इख्तियार-नाजायज ( अ० पु० ) अधव्याधिकार, खिलाफ़-कानून हुकूमत।

इख्तियार नाफ़िज़ करना, इख्तियार अमलमें लाना देखो।

इख्तियारपुर—गुलामान्तके रायबरेली ज़िलेका एक नगर। इसे जहाँनाबाद भी कहते हैं। इख्तियारपुर रायबरेली नगरके निकट अक्षा २६° १३' ५०" उ० तथा द्रावि २१° १६' १५" पू० पर अवस्थित है। इस नगरको लहान्-खान्ने प्रतिष्ठित किया था। इमाम-रतमें रङ्गमहल, रोज़ा, बाज़ार और सराय प्रधान हैं। यहाँ गाढ़ा नामक ख़ुश बन्ध बहुत अच्छा बनता है।

इख्तियार मिलना ( हिं० क्रि० ) अधिकार प्राप्त करना, हुकूमत पाना।

इख्तियार मुतलक ( अ० पु० ) पूर्णाधिकार, पूरी पूरी हुकूमत।

इख्तियार मुनसिफ़ी, इख्तियार-तजवीज़-मुकदमा देखो।

इख्तियार मुनामिव ( अ० पु० ) योग्याधिकार, वाजिब हुक़म।

इख्तियारमें होना ( हिं० क्रि० ) अपने अधिकारमें रहना, मर्जीके मुवाफ़िक़ चलना।

इख्तियार रखना ( हिं० क्रि० ) १ खल्व पाना, इज़ाज़त करना। २ योग्य होना, लायक़ बनना।

इख्तियार-शोहरी ( अ० पु० ) पति-विययक़ अधिकार, ख़ाविन्दका जोर।

इख्तियार सरसरी ( अ० पु० ) संचिताधिकार, मुख-तसर हुकूमत।



इख, तियारसे ( हिं० क्रि० वि० ) खेच्छापूर्वक, दिलसे, खुशी-खुशी ।

इख, तियारसे बाहर होना ( हिं० क्रि० ) अपने अधिकारकी सीमाकी उल्लंघन करना, अपनी इज्जतकी हद छोड़ना ।

इख, तियार हासिल होना, इख, तियार रखना देखो ।

इख, तियार होना, इख, तियार रखना देखो ।

इख, तिरा ( अ० पु० ) १ आविष्कार, ईजाद । २ प्रकाशन, फैलाव ।

इख, तिलात ( अ० पु० ) १ मिलन, मिल । २ परिचय, जानपहचान । ३ अचुराग, प्यार ।

इख, तिलाफ ( अ० पु० ) १ अन्तरे, फर्क । २ विरोध, अनवदन । ३ स्कोटन, बिगाड़ ।

इख, तिलाफ रखना ( हिं० क्रि० ) असम्मत होना, फर्क पड़ना ।

इख, तिलाफ-राय ( अ० पु० ) सम्प्रतिभेद, खयालका फर्क ।

इख, तिसार ( अ० पु० ) १ अविस्तार, इज्जमाल, कोताही । २ संक्षेप, खुलासा ।

इख, तिसार करना ( हिं० क्रि० ) १ संक्षिप्त बनाना, छांटना । २ सार निकालना, खुलासा बनाना । ३ गणित शास्त्रासुसार न्यूनता लाना, उतारना ।

इगतपुरी—१ बम्बई प्रान्तकी मद्रास जिलेकी एक तहसील । क्षेत्रफल ३७६ वर्गमील है । उत्तर-पश्चिम और दक्षिणकी भूमि प्रस्तरमय, अल्पजल और परिधीय है । जलवायु शीतल तथा स्वास्थ्यकर रहता है । २ अपनी तहसीलका गहर । अप्रैल और मई मास युरोपीय यहाँ हवा खाने आते हैं ; ग्रेट-इण्डियन-पेनिन-सुखा रेलवेका ट्रेजन बना है । पिम्प्री ग्राममें सट्टर-बुद्ध-टोमकी कर्म देखते हैं ।

इगलास—१ गुलप्रान्तके पत्नीगढ़ जिलेकी एक तहसील । क्षेत्रफल २१३ वर्गमील है । इसमें हंसगढ़ और गोरायीका परगना लगता है । भूमि समतल और उपजाऊ है । २ अपनी तहसीलका नगर । यह पत्नीगढ़से १८ मील दूर मयुराकी जानिवाली सड़क पर अवस्थित है । १८५० ई०की सिपाही विद्रोहके

समय जाटोंने इस नगरपर आक्रमण मारा था, किन्तु साफल्य न पाया ।

इगारह ( हिं० वि० ) एकादश, याजुदा, दश और एक, ११ ।

इगगली—मछीसुर राज्यका एक प्राचीन स्थान । यहाँ जो शिलालेख मिला, उसमें सत्यवाक्क-कौंगुनीवर्मा परमानन्दी और यरियपपाका नाम तथा सत्यवाक्कके इक्कीसवें वर्षका हत्तान्त लिखा है ।

इगगुतपपाकुण्ड—बम्बई प्रान्तके कुर्ग जिलेका एक पहाड़ । पश्चिम छाटकी पर्वतश्रेणीमें इगगुतपपा कुण्डका शिखर सबसे ऊँचा है । ऊपर दुर्ग और मन्दिर बना है । पर्वतका पार्श्व अनेक वनसे परिपूर्ण है ।

इग्यारह, इगारह देखो ।

इङ्क ( अं० स्त्री० = Ink ) मसि, रोगनाली, स्याही । स्याही दो तरहकी होती है । लिखनेकी कसीस, हड़, माजू प्रभृतिकी थोँट और छपनेकी रास, तेल, काजल वगैरहकी थोँटकर बनती है ।

इङ्कटेबुल ( अं० पु० = Ink-table ) सुदृण-यन्त्रालयमें मसि लोहेकी चौकी । यह मेज, दो प्रकारकी होती है, मामूली और बेलनदार । मामूली चिकनी साफ और ठली रहती है । बेलनदारमें एक घोर लोहेका लोढ़ा लगता और उसके पोछे स्याही भरनेका नल रहता है । उसमें कुछ पेंच जड़े जाते, जिनको कसनेसे अधिक और ढोला कारनेसे अल्प स्याही आती तथा कुट-पिस्कर समान बन जाती है । इसमें स्याही-वान्को अधिक काम करना नहीं पड़ता ।

इङ्कमेन ( अं० पु० = Ink-man ) यन्त्रालयमें मसी देनेवाला मनुष्य, छापेखानेका स्याहीवान् ।

इङ्क-रोलर ( अं० पु० = Ink-roller ) मसीवर्तनी, स्याहीका बेलन । छापेखानेमें इसीसे स्याही कागज पर चढ़ती है । यह तीन प्रकारका है,—१ लकड़ीके बेलनपर जनी कपड़ा लगा चमका चढ़ानेसे यह प्रस्तुत और प्रस्तरमय यन्त्रमें व्यवहृत होता है । २ यह लकड़ीके बेलनपर रबर लगानेसे बनता, किन्तु अधिक व्यवहारमें नहीं आता । ३ गराहीदार लकड़ी पर गमित गुड़ तथा सरस लगाकर यह बनता और अधिक काम देता है ।

इङ्ग (सं० पु०) इग-क-सुम् । १ बहुत, तात्त्व ।  
२ ज्ञान, इष्ट । भावे घञ् । ३ इक्षित, इशारा ।  
४ लक्ष्म, चलने-फिरनेवाली चीज । ५ चराचर,  
दुनिया । (ति०) ६ गतिविशिष्ट, हिलने-डुलनेवाला ।  
७ आश्चर्यमय, अनोखा ।

इङ्गन (सं० स्त्री०) इगि भावे लुगट् । १ इष्टत भाव,  
दिनी मतलब । २ चलन, चलफिर । ३ ज्ञान, समझ ।  
४ सहेत, इशारेवाजी । ५ चालन, हेरफेर । ६ व्याकर-  
णानुसार समासान्त पदके एक शब्दको दूसरेसे प्रत्यक्  
करनेका विधान ।

इङ्गनी (हिं० स्त्री०) धातु सम्बन्धी रसायन पदार्थ ।  
(Manganese) पहले लोग इसके सारको लोहेका  
आकषणशील सार समझते थे । किन्तु पन्तको प्रमा-  
णित हुआ, कि इसमें लोहेका नाम नहीं, लवणका  
लेख रहा । इङ्गनी प्रकृतिमें विस्तृत रूपसे व्याप्त है ।  
धर्माकाय, समुद्रजल और अनेक धातुद्रव्यमें इसका  
अंश मिलता है । रसज्ञोंने बड़े यत्नसे तथा और अन्य  
द्रव्य मिला इसे विशुद्ध बनाया है । इङ्गनी फोलाद  
तैयार करनेमें काम आती है । मध्यप्रदेश, मध्यभारत,  
महिसुर राज्य और मन्द्राजमें खानि है । यह काचका  
हरितत्व निकालती और उसपर कान्ति चढ़ाती है ।

इङ्गल (सं० पु०) १ इङ्ग्लोडोल, देशी बादाम ।

इङ्गला, (हिं०) इग देकी ।

इङ्गलिश (अं० वि०=English.) १ इङ्गलेण्ड देश  
सम्बन्धी, अंगरेजी । (स्त्री०) २ ऐश्वर्य, वज्रोक्त । ३ कुट्टी ।  
मियाही वजीफा और छद्मीको इङ्गलिश कहते हैं ।  
४ अंगरेजीकी भाषा, जिस जगहमें अंगरेज बोले ।  
इङ्गलिश कहनेसे वेदना, इङ्गलेण्डके प्राचीन अधिवासी  
एङ्गलोंकी ही भाषाका बोध नहीं होता । यह लाटिन,  
ग्रीक, ड्र्यू, कैलटिक, दानिश, साक्सन, फ्रान्सीसी,  
स्पेनीय, इटलीय, जर्मन, संस्कृत, हिन्दी, मलय, चीन  
प्रभृति नाना भाषाके संमिश्रणसे बनी है । संस्कृतकी  
तरह इङ्गलिशकी पूर्ण भाषा कह नहीं सकते । इस  
भाषामें अनेकानेक शब्दकी सृष्टि हुआ करती है ।  
इङ्गलिशका सम्पूर्ण व्याकरण आज भी प्रस्तुत नहीं ।

इस भाषाको चार अंशमें बांटा जाता है,—१म

एङ्गलो-साक्सन ( ४४८ से १०६६ ई० ), २य  
अर्थ साक्सन ( १०६६ से १२५० ), ३य प्राचीन  
( १२५० से १५५० ई० ) और ४थ वर्तमान काल  
( १५५० से आजतक ) । इस समयके मध्य इङ्गलिश  
भाषामें अनेक रूपान्तर पड़ चुका है । पहले यह भाषा  
जिस प्रकार चलते रही, आज वह बात देख, नहीं  
पड़ती । इङ्गलिश भाषामें २६ अक्षर हैं । २६ अक्षरमें  
विजातीय शब्दसमूह प्रकृतरूपसे सिखा जा न सकने-  
पर उच्चारणके लिये नूतन-नूतन वर्ण बना करता है ।

इङ्गलिशान ( हिं० पु० ) इङ्गलेण्ड, अंगरेजीके रहने-  
का देश । इङ्गलेण्ड देकी ।

इङ्गलिशानी ( हिं० वि० ) इङ्गलिश, अंगरेजी, इङ्ग-  
लेण्डसे तात्तुक, रखनेवाला ।

इङ्गलेण्ड (अं० स्त्री०=England.) देशविशेष, ग्रेटब्रिटेन  
द्वीपका दक्षिणार्ध । इङ्गलेण्डका प्राचीन इतिहास  
अधिक नहीं मिलता । पुराकालमें टोन लेनीको  
फिनीकीय जाति इन देशकी भाते और प्राचीन रोमन  
ग्रेटनिया नाम बताते थे । ग्रेटब्रिटेन शब्दने प्रचलन देखा ।  
एङ्गल नामक जातिके वास करनेसे इस स्थानका  
नाम इङ्गलेण्ड पड़ा है ।

एडवार्ड नामक गृपतिने नरमाण्डोके विलियमको  
इङ्गलेण्डका राज्यभार सौंपा था । किन्तु विलियम  
जब यहां आये, तब लोगोंके बनाये हेरबड नरेशको  
राज्य करने देख बहुत चकराये । विलियम और  
हेरबडमें और युद्ध हुआ था । १०६६ ई०को इङ्गलेण्ड  
नरमानोंके अधिकारमें आ पड़ा । नरमानों और तत्-  
कालीन साक्सनोंके सम्मिलनसे वर्तमान अंगरेजी  
जाति तथा भाषाकी उत्पत्ति हुई है । निम्नलिखित  
राजावर्गने इङ्गलेण्डमें राजत्व किया है,—

एङ्गलो-साक्सनवंश ।

नाम	वृषाब्द	वय
आल्फ्रेड ( थोसेसेक्सके राजा )	८७१	३०
एडवार्ड ( १म )	८०१	२४
एथेल्स्टन ( इङ्गलेण्डके राजा )	८२५	१५
एडमण्ड ( १म )	८४०	६
एद्वेड	८४६	६

नाम	संख्या	वर्ष
एडवी	८५५	४
एडमार	८५८	१६
एडवार्ड (२५)	८७५	३
एथेलरेड	८७८	३८
एडमण्ड (२५)	१०१६	१
दानिग-वंश ।		
कानिउट	१०१८	१८
हैरलड (१म)	१०३६	३
हार्डिकानिउट	१०३८	२
सान्मन-वंश ।		
एडवार्ड (३५)	१०४१	२५
हैरलड (२५)	१०६६	
नरमान-वंश ।		
विलियम (१म)	१०६६	२१
" (२५)	१०८७	१३
हैनरी (१म)	११००	२५
एफेन (सुदम वंशीय)	११३५	१८
हार्डिकानिउट-वंश ।		
हैनरी (२५)	११५४	३५
रिचार्ड (१म)	११८८	१०
सन	११८८	१७
हैनरी (३५)	१२१६	५६
एडवार्ड (१म)	१२७२	३५
" (२५)	१३०७	२०
" (३५)	१३२७	५०
रिचार्ड (२५)	१३७७	२२
लुइसलार-वंश ।		
हैनरी (४थ)	१३८८	१४
" (५म)	१४११	८
" (६थ)	१४२३	३८
इयकोका-रालवंश ।		
एडवार्ड (४थ)	१४६१	२२
" (५म)	१४८३	
रिचार्ड (३५)	१४८३	२

नाम	संख्या	वर्ष
बूदरका राजवंश ।		
हैनरी (७म)	१४८५	२४
" (८म)	१५०८	३८
एडवार्ड (६थ)	१५४७	६
मेरी	१५५३	५
एलिजाबेथ	१६५८	४५
ट्रुयार्ट-वंश ।		
जेम्स (१म)	१६०३	२२
चार्ल्स (१म)	१६२५	२४
साधारणतन्त्र	१६४८	१०
ट्रुयार्ट-वंश ।		
चार्ल्स (२५)	१६६०	२५
जेम्स (२५)	१६८५	३
शरीफका राजवंश ।		
विलियम (३५) और मेरी	१६८८	१४
ट्रुयार्ट-वंश ।		
आनी	१७०२	१२
वर्णसुद्धक-वंश ।		
जर्ज (१म)	१७१४	१३
" (२५)	१७२७	३३
" (३५)	१७६०	६०
" (४थ)	१८२०	१२
विलियम (५म)	१८३०	७
विक्टोरिया	१८३७	६४
एडवार्ड (७म)	१८०१	१०
जर्ज (५म)	१८१०	४८६० देवी ।
इङ्गलकर्म (हिं० पु०) अङ्गारकर्म, भागसे बननी- वाला काम । जैनमतमें लोह, स्वर्ण, इटक आदिका कर्म जो अग्निसे बनता वही इङ्गलकर्म वज्रता है ।		
इड्डिड (सं० पु०) इगि-इलच् । इङ्गदइलच्, अङ्गली बादाम, बादामी ।		
इड्डिस (मं० क्लो०) इङ्ग-ल । स्यन्दन, अभिप्राय-मत चेष्टाका प्रकाशन, धड़क, आवाजकी तबदीली, अन्ध- रुनी हरकत । २ सङ्केत, इगारा । ३ अन्वेषण, तलाश- खोज । ४ चेष्टा, कोशिश । ५ अभिप्राय, मतलब ।		
इङ्गितकोविद, इङ्गित देवी ।		

इङ्गितज्ञ (सं० त्रि०) इङ्गितं जानातीति, इङ्गित-ज्ञा-  
कर्तरि कः । सङ्केतं समझनेवाला, जो इशारेको यह-  
चानता हो ।

इङ्गु (सं० पु०) इङ्गति कस्यते येन, इङ्गि माहुलकात्  
उष्ण । रोग, जिम्मको हिला देनेवाली बीमारी ।

इङ्गुद (सं० पु०) इङ्गुं रोगं द्यति, इङ्गु-दो कर्तरि  
कः । १ तापसहच, हिंमोटका पेड़ । २ ज्योतिष्यती  
लता, भालकंगनीका दरखत । यह मद्गन्धि, कटु,  
उष्ण, केनिल, लघु, रसायन और क्षमि-वात-कफ-व्रणघ्न  
होता है । (राजनिषध) इङ्गुद कुष्ठ, भूतग्रह, व्रण,  
विष एवं क्षमिको खोता और उष्ण, श्लेष्म एवं शूलघ्न,  
तिक्त तथा कटु होता है । (पापकाम) इसका पुष्प मधुर,  
स्निग्ध, उष्ण तथा तिक्त लगता और उसकी सेवनसे  
वात एवं कफ भगता है । (दैनिकनिषध) फल स्निग्ध,  
उष्ण, तिक्त, मधुर और वातश्लेष्मघ्न है । (वृद्ध)

इङ्गुदी (सं० स्त्री०) इङ्गुद देखो ।

इङ्गुदीचार (सं० पु०) इङ्गुद वृक्षका चार, हिंमो-  
टका नमक ।

इङ्गुदीतैल (सं० स्त्री०) इङ्गुदी-फलोत्पन्न तैल, हिंमो-  
टका तैल । यह स्निग्ध, मधुर, पित्तघ्न, शीतल, बल्य,  
कान्तिद, देहपल और केशवर्धन होता है । (राजनिषध) ।  
पहले सुनि लोग मस्तुरादिसे तोड़ फलका तैल व्यव-  
हार करते थे ।

इङ्गुर, इंगुर देखो ।

इङ्गुल, इङ्गुद देखो ।

इङ्गुली (सं० स्त्री०) इङ्गुद देखो ।

इङ्गुय (सं० त्रि०) इङ्गि-यत् । गमनयोग्य, चल सकने-  
वाला । प्रातिग्राह्यमें इङ्गुय उस शब्द भयवा समासान्त  
पदकी उस अंशकी लिये आता, जो किसी व्याकरण-  
सम्बन्धी धार्यकी अपनी पूर्व भागसे ग्रथक् किया जा  
सकता है । पदपाठमें इङ्गुय शब्द अवग्रहसे विभक्त  
होता है ।

इङ्गुज (सं० पु०) इङ्गुलेश्वर देशवात लोक सकल,  
भंगरेज, इङ्गलिस्थानमें पैदा होनेवाला शब्द ।

“पूर्वाभासे गवयतं वचसोतिः प्रकीर्तिता ।

किरिमावश नवाको वा संसाधनात् कवी ॥

Vol. III.

4

• अधिमा मन्थवानाश्च संशमिष्यपराजिताः ।

इङ्गु जा नव वट् पृथ सञ्चुजायाधि भाविनः ॥” (मेघतनू)

इचक—इजारीबाग जिलेका एक नगर । यह अक्षा० २४°  
५' २४" उ० और द्रावि० ८५° २८' २३" पू० पर अव-  
स्थित है । इसमें एक गर्द या किला बना, जिसमें  
बहुत दिन तक रायगढ़के राजाका परिवार रहा है ।  
स्थान विचित्र है ।

इचकना (हिं० क्रि०) क्रीडसे दांत देखाना, खीस  
काढ़ना ।

इचकिल (सं० पु०) तड़ाग, तालाब, चहला ।

इचावर—मध्यभारतकी नूपाल राज्यका एक परगना  
और सहर । यह एक फ़ानूसीसी महिलाकी जागीरमें  
मिला था । वार्षिक भाय प्रायः पौन लाख है । कुछ  
ईसायी भी इचावरमें रहते हैं ।

इचौली—युक्तप्रान्तके बाराबंकी जिलेका एक नगर । यह  
अक्षा० २६° ५८' उ० और द्रावि० ८१° ३०' पू० पर  
बाराबंकी नगरसे साढ़े बारह कोस पूर्व-उत्तर अवस्थित  
है । महमूद गजनवीने भर-सरदार भगा इचौली  
नगर अपने सेनापतियोंको जागीरमें दे दिया था ।  
उन्होंने भरीका क़िला तोड़ा और अपने अगु-  
यायियोंका दल जोड़ा । भासफ-उद्दौलाने प्रधान  
मन्त्री महाराज ठिकानतरायने इसी नगरमें जन्म लिया  
था । उनका वनवाया एका तड़ाग अभी विद्यमान  
है । पुराने जागीरदारोंका अधिकार छटा नहीं ।

इच्छक (सं० पु०) इच्छा शक्ति शक्तिमिति, मत्स-  
र्ययि अच् ततः कप् स्वार्थे कन् वा । १ जम्बीर  
वृक्ष, तुरष्कका दरखत, बिजौरिका पेड़ । २ इच्छायुक्त  
व्यक्ति, चाहनेवाला शब्द । ३ मत्स्र, सवाल । (त्रि०)  
४ अभिलाषी, खाहिशमन्द, चाहनेवाला ।

इच्छत् (सं० त्रि०) इच्छायुक्त, खाहिशमन्द, चाहने-  
वाला ।

इच्छता (हिं० स्त्री०) 'अभिलाष, खाहिश, चाह ।

इच्छत्व (सं० स्त्री०) इच्छता देखो ।

इच्छना (हिं० क्रि०) इच्छा रखना, खाहिश करना,  
चाहना ।

इच्छा (सं० स्त्री०) इप्-भावे श-टाप् । १ मनका

धर्म, दिनका जाविता । २ वाञ्छा, खाहिश, चाह ।  
३ सृष्टा, मासक । ॥ उत्प्राप्त, होसला । मत् और  
भसत् भेदसे इच्छा दो प्रकार होती है । दानध्याना-  
दिकी मत् और मयापान चौर्यादिकी इच्छा भसत्  
है । आत्मासे इच्छा, इच्छासे कृति, कृतिसे चेष्टा  
और चेष्टामे क्रिया निकलती है । (आयमिहान )

इच्छाकृत ( सं० त्रि० ) इच्छया कृतम्, इ-तत् । अभि-  
लापसे क्रिया हुआ, जो खाहिशसे क्रिया गया हो ।

इच्छादान ( सं० स्त्री० ) अभिलाषोपहार, खाहिशकी  
वस्तुशिश, सुंछमांगी या मनमानी चीजका देना ।

इच्छानिमित्तक ( सं० त्रि० ) इच्छा इव निमित्तं यस्य,  
बहुव्री० । अभिलापके कारण होनेवाला, जो खाहिश-  
की सबब हो । मनुष्य अपने इच्छाके निमित्त ही चोर  
या साधु बन जाता है ।

इच्छानिष्ठति ( सं० स्त्री० ) इच्छायाः निष्ठतिः, इ-तत् ।  
याच्छाका दमन, खाहिशका इतुका, चाहका दबाव ।  
इच्छानिष्ठतिसे हो प्रकृत आनन्द आता है ।

इच्छानुगत ( सं० त्रि० ) इच्छाया अनुगतम्, इ-तत् ।  
अतन्त्र, आज्ञाद, मनमाना, खाहिशके सुवाप्ति, कु  
रहनेवाला ।

इच्छानुरूप ( सं० त्रि० ) इच्छाया वा इच्छया अनु-  
रूपम्, इ-तत् वा इ-तत् । इच्छामत यथासाध्य,  
मर्जीके सुवाप्ति ।

इच्छानुसारिणी क्रियाशक्ति ( सं० स्त्री० ) अभिलापके  
अनुरूप कार्य करनेका बल, मर्जीके सुवाप्ति, काम  
करनेकी ताकत । जैनशास्त्रके मतानुसार यह शक्ति  
योगसे प्राप्त होती है । योगी अपनी इच्छाके अनुसार  
बिना कारण कार्यसम्पादन कर सकता है । मोह न रहते  
भी बड़ा बनता और चीज न पड़ते भी पैड़ लगता है ।

इच्छान्वित ( सं० त्रि० ) इच्छानुक्त, खाहिशमन्द,  
चाहनेवाला ।

इच्छाफल ( सं० स्त्री० ) इच्छायाः फलम्, इ-तत् ।  
इच्छाका परिणाम या उत्पत्ति, खाहिशका नतीजा या  
मकसद । गणितमें प्रत्यकी उपपत्तिकी इच्छाफल  
कहते हैं ।

इच्छावत् इच्छावत् श्रेणी ।

इच्छाभेदीरस ( सं० पु० ) भेदक रस विशेष, लुनावकी  
एक दवा । टटण, पारद, मरिच तथा गन्धक बराबर,  
विश्व हिगुण और जयपालचूर्ण नवगुण, हासनेसे  
इच्छाभेदी रस बनता है । एक गुञ्जाकी बराबर यह  
रस खानेसे रचन होता है । (रहेन्द्रसारसं० ४६)

इच्छाभेदीगुड़िका ( सं० स्त्री० ) भेदक रसभेद, लुनावकी  
दवा । पारद, गन्धक, सोहागा तथा पिप्पली समान एवं  
सबके बराबर जयपालचूर्ण मिलानेसे यह गोली बनती  
और शीतल जन्तके साथ खानेसे खासा दस्त लाती  
है । किन्तु उष्ण जन्तके साथ इच्छाभेदीगुड़िका सेवन  
करनेसे दस्त बन्द हो जाता है । (रहेन्द्रसारसं० ४६)

इच्छाभोजन ( सं० स्त्री० ) १ इच्छानुरूप भक्षण, मर्जी-  
के सुवाप्ति खवायी । २ इच्छानुरूप खाद्य, मर्जीके  
सुवाप्ति, खानेकी चीज ।

इच्छावती ( सं० स्त्री० ) इच्छा विद्यतिःस्याः, इच्छा-  
मत्तु मस्य वः । कामुक, दोलत वर्गे रचकी खाहिश  
रखनेवाली औरत ।

इच्छावस ( सं० पु० ) इच्छया एव वसु धनोत्पत्ति-  
र्यस्य, बहुव्री० । कुवेर ।

इच्छासम्पद ( सं० स्त्री० ) वाञ्छामिच्छि, खाहिशकी  
तहसील

इच्छित ( सं० त्रि० ) इच्छा अथ्य जाता, इ-तत् ।  
वदल सहात ताकादिथ १३५ । वा १४५१६ । वाञ्छित, कामना  
क्रिया हुआ, जो चाहा गया हो ।

इच्छु ( सं० त्रि० ) इच्छुतीति, इ-तत् निपातनम् ।  
विदुरिच्छुः । वा १४५१६८ । १ इच्छाशील, खाहिशमन्द,  
चाहनेवाला । ( हिं० पु० ) २ इच्छु, जख ।

इच्छुक ( सं० त्रि० ) इच्छु स्वार्थे कन् । १ इच्छा-  
शील, खाहिशमन्द । ( पु० ) २ मातुलुङ्ग लुच, विजोरे  
नीत्रका पेड़ ।

इच्छुरस ( हिं० पु० ) इच्छुरस, ऊखका भक्ष ।

इच्छावादा—ब्रह्मान् प्रान्तके यमोर जिल्लाका एक ग्राम ।  
यह मागुरासे पश्चिम दो कोस पड़ता है । पहले नवाब  
की यहां कोठी थी छावनी रही । आजकल इच्छावादेमें  
सड़ककी बगल बाजार लगता और गुड़, पालू तथा  
अन्यथास वस्तु विकता है ।

इच्छापुर (इच्छापुर)—१ मन्दाज प्रान्तके गङ्गाम जिले-  
का एक नगर। यह अक्षा० १८° १' ४०" उ० और  
द्रावि० ८४° ४४' १०" पू० बरहामपुरसे आठ कोस  
दक्षिण-पश्चिम बड़ी सड़कपर अवस्थित है। नगरकी  
भूमिका क्षेत्रफल ३७२० एकर है। तीन कोस  
दक्षिण-पश्चिम बोदागिरि (बोहगिरि) पर्वत विद्य-  
मान है। पहले यहां मुसलमानों कायब रहते थे।  
२ बंगाल प्रान्तके चौबोस-परगने जिलेका एक नगर।  
यह अक्षा० २२° २४' उ० चार द्रावि० ७८° २३'  
पू०पर अवस्थित है। इस नगरमें सरकारी युष्मान्-  
तिर्माणशाला बनी है। कलकत्तेसे इष्टन बंगाल रेल-  
वेका इच्छापुर स्टेशन होने लौ कोस पड़ता है।

इक्षामती—१ बंगाल प्रान्तके पामना जिलेकी एक नदी।  
यह पद्मा वा गङ्गाकी शाखा लगती और पावना  
शहरसे सात मील दक्षिण-पूर्व दोगाछी ग्रामके पाम  
बहती है। पावना शहर पहुंच कर इक्षामती  
बङ्गाल नदी सङ्गमे नीचे हुड़ासागरमें जा गिरती है।  
यह बत्तीम मौल लम्बी है। वर्षाकालमें इक्षामती  
प्रशस्त एवं सुन्दर देख पड़ती, किन्तु आठ मास सूखी  
ही-जैसी रहती है।

२ बङ्गाल प्रान्तके नदीया जिलेकी एक नदी।  
यह मायामंगा नदीकी शाखा है। क्षणगच्छसे  
निकल नदीया जिलेमें बहती हुयी, जब इक्षामती  
चौबोसपरगना जिले जाती, तब यमुना नाम पाती  
है। नदी बहुत गहरी है। वारहो महीने व्यापारके  
बड़े-बड़े नौका आ-जा सकते हैं।

इजतिनाव (अ० पु०) १ त्याग, वर्जन, परहेज,  
बचावा। २ सार्धत्याग, इनहिस्साफ् नाहं। ३ व्रत,  
फाका। ४ संयम, परहेजगारी। ५ बेराग्य, टरबेथी।

इजपुर—गुजरात प्रान्त मझीकण्डा-जिलेका अन्तर्गत एक  
राज्य। वार्षिक आय प्रायः छः हजार रुपया है।  
बहोदेकी गायकवाड़की कीथी ठायी सौ रुपया वार्षिक  
कर देना पड़ता है। इजपुर राज्य सप्तम श्रेणीमें  
परिगणित है।

इजमाल (अ० पु०) १ संक्षिप्त वर्णन, मुख्यतः वयान्,  
संक्षेप, निचोड़। २ संयुक्ताधिकार, मिला हुआ कब्जा।

इजमानो (अ० वि०) १ परिमित, सारभूत, मुख्यतः,  
खुलासा। २ संयुक्ताधिकार-सुल्ल, जो कयौ लोगोंके  
कब्जेमें हो।

इजरा (हिं० स्त्री०) भूमिविशेष, कोई जमीन्।  
जो भूमि जोतने-बोनेसे विगड़ और कृषिके योग्य  
बनानेको परती पड़ जातो वही इजरा कहलाती है।

इजराय (अ० पु०) १ प्रचार-प्रतिपादन, गर्दिय देनेका  
काम। २ निर्गम, निःसरण, बरामद, निकास।

इजलाफ् (अ० पु०) मौचतोका, कमेने। यह शब्द  
'जल्फ'का बहुवचन है।

इजलास (अ० स्त्री०) १ उपवेशन, बैठक। २ न्याया-  
लय, पदालत, कचहरी।

इजलास करना (हिं० क्रि०) समापति बनना, न्याया-  
लयमें बैठना, कचहरी लगाना, हुकूमत चलाना।

इजलासमें (हिं० क्रि० वि०) न्यायालयके सभ्य,  
वर-सर-इजलास, कचहरीमें बैठे-बैठे।

इजहार (अ० पु०) १ निवेदन, वयान्। २ समा-  
चार, आभासी, जतावा। ३ साध्य, गवाही।

इजहार करना (हिं० क्रि०) १ निवेदन सुनाना,  
अर्ज लगाना। २ प्रकाशमें लाना, बताना। ३ प्रकाश  
रूपसे कहना, दिखाना। ४ वर्षन निकालना, वयान्  
देना।

इजहार-कानूनी (अ० पु०) पदालती वयान्, न्याया-  
लयमें दिया जानेवाला साध्य।

इजहार जवाबी (अ० पु०) वाचिक साध्य, तज्जरीरी  
गवाही, जो बात लिखो न गयो हो।

इजहार तहरीरी (अ० पु०) लिखित साध्य, कलमी  
वयान्, जो बात लिखो गयो हो।

इजहार देना (हिं० क्रि०) वर्षन करना, शहादत  
सुनाना।

इजहारनवीस (अ० पु०) साक्ष्यलेखक, गवाही  
लिखनेवाला शख्स।

इजहारनामा (अ० पु०) विज्ञापन, साध्यपत्र, इत्तिला-  
नामा, एलान।

इजहारनामा तहरीरी (अ० पु०) लिखित साध्य-  
पत्र, कलमी एलान, लिखी हुयी गवाहीका कागज।

इजहार लादावो (अ० पु०) खल्वप्रतिपादन-नियेध, सुतातवेका इनकार ।

इजहार सेना (हिं० क्रि०) साक्षाग्रहण करना, गवाह जांघना ।

इजहारसलामी (अ० पु०) साक्ष्यलेखकको दिया जानेवाला श्रम्याय पारितोषिक, नाजायज तौरपर इजहार गवीसको दिया जानेवाला मेहनताना ।

इजाजत (अ० स्त्री०) १ अनुज्ञा, परवानगी । २ आज्ञा, रजामन्दी । ३ प्रत्यादेश, रजा, विदा । ४ अनुमति-पत्र, हुक्मनामा, परवाना ।

इजाजतखाह (अ० पु०) याचक, निवेदक, सायल, अर्जी देनेवाला ।

इजाजत चाहना (हिं० क्रि०) जानेके लिये आज्ञा मांगना, रवाना होनेको हुद्दे मिलनेकी दरखास्त करना ।

इजाजत देना (हिं० क्रि०) १ आज्ञा करना, हुक्म निकालना । २ अनुमति प्रदान करना, हुद्दे बख्शना । ३ गमनार्थ अनुमोदन करना, जानेके लिये हुद्दे बख्शना । ४ स्वीकार करना, मान लेना । ५ अधिकार प्रदान करना, सुखुत्तर बनाना ।

इजाजतनामा (अ० पु०) आज्ञापत्र, हुक्मनामा ।

इजाजत-फरोख्त (अ० पु०) विक्रय करनेकी अनुमति, बेचनेका हुक्म ।

इजाजत मिलना (हिं० क्रि०) आज्ञा प्राप्त करना, हुक्म पाना ।

इजाजत थापस लेना (हिं० क्रि०) अनुज्ञा फेरना, हुक्म छोटाना ।

इजाफा (अ० पु०) इद्द, बढ़ती ।

इजार (फ्रा० स्त्री०) जहाजाणका, पायजामा, सुतना ।

“सुन्ने मुन्ने ठाँगे” पटा इजार ।

बन्दमै बुझ्वा पावो” बाजार ॥” (श्रीकोटि)

इजारबन्द (फ्रा० पु०) जहाजाणका गुण, नारा, पायजामेकी डोरी ।

इजारबन्दका डोला (हिं० वि०) कामाधक, नफ्स-परम्दा, भस्म । (स्त्री०) इजारबन्दकी डोली ।

इजारबन्द न रखना (हिं० क्रि०) कामाधकसिं दूर रखना, लंगोटा सधा रखना ।

इजारबन्द पे हाथ डोलना (हिं० क्रि०) जहाजाणका गुण पकड़ना, नाड़ा खोलना ।

इजारबन्दी रिगठा (फ्रा० पु०) स्त्रीस्वहा, लहंगेका लगाव ।

इजारा (अ० पु०) १ नियत धनपर पैसा या उठाया हुआ स्वाधिकार, मुकदर कीमतपर फरोख्त किया या किराये दिया हुआ हक । २ पट्टा, ठेकेपर ली हुयी जमीन । ३ एक व्यापार, वयका इख्तियार-ख़ास ।

“तोड़न चाहे चारा बेचने इजारा ॥” (श्रीकोटि) ४ ग्राम वा ग्रामके भायका पट्टा, गाँव जिसकी ग्रामदनीका ठेका ।

इजारा करना (हिं० क्रि०) अपने ऊपर लेना, जवाबदेह बनना ।

इजारादार (अ० पु०) पट्टोलिकाधारी, पट्टेदार । २ एकाधिकारी, पूरा मालिक ।

इजारा देना (हिं० क्रि०) पट्टोलिका सौंपना, ठेकेदार बनाना ।

इजारागामा (अ० पु०) पट्टोलिका सरखत, ठेका ।

इजाला (अ० पु०) १ विचालन, तंगेयुर, सरकाव । २ व्याकरणानुसार खोप, इज्ज, अक्षरगिराव ।

इजाला-चमन (अ० पु०) दण्डदान, जद्दी, कुर्की ।

इजाला करना (हिं० क्रि०) अपसरण, पड़वाना, हटाना ।

इजाला विक्रय करना (हिं० क्रि०) कीमारीत उतारना, झारपत बिगाड़ना ।

इजाला-हैसियत-छर्फी (अ० पु०) अपभाषण, हतक, लालीका बिगाड़ना ।

इज्जत (अ० स्त्री०) सत्कार, यत्न, बड़ायी ।

“बपनो इज्जत बनने हाथ है ॥” (श्रीकोटि)

इज्जत उतारना, इज्जतबिनाश देना ।

इज्जत करना (हिं० क्रि०) आदर देना, बड़ायी बताना ।

इज्जतका लागू होना (हिं० क्रि०) अपमान करनेपर कमर बांधना, भावरु सेनेकी ठानना ।

इज्जतके पीछे पड़ना, इज्जतका लागू होना देखो ।

इज्जतदार (अ० वि०) सम्मानित, भावरु रखनेवाला ।

इज्जत देना (हिं० क्रि०) आदर होना, छोटा बनना ।

इज्जत वनाना (हि० कि०) प्रतिष्ठा प्राप्त करना, आशु बढ़ानेकी कोशिशमें लगना।

इज्जत बिगाड़ना (हि० कि०) मान घटाना, आशु घटाना।

इज्जतमें फर्क आना, इज्जतमें बड़ा लगना देखो।

इज्जतमें बड़ा लगना (हि० कि०) मानमङ्ग होना, वैशाल्य बनना।

इज्जतवाला (हि०) इज्जतदार देखो।

इज्जल (सं० पु०) एति गच्छतीति, इ-क्षिप्-तुक् च, इत् सन्निहृततया गच्छत् जनसस्य, बहुव्री०। इज्जल-हृद्य, समुद्रफल। यह भीतल, संपाही, वातकोपन और विशेषतः विपन्न होता है। (मदभगवत्) इज्जल कुट्टवत् और वातकोपन है। (भाष्यप्रकाश)

इज्य (सं० पु०) इज्या यागः विद्यतेऽस्य, इज्या-भञ्च। अग्नेर्वादिभ्यश्च। या ३४७। १०। १ हृद्यस्यति, देवगुह। २ पुन्यानचक्र। ३ विष्णुः। ४ परमेश्वर। ५ मिथक। ६ पूजनीय व्याजित।

इज्या (सं० स्त्री०) यज भावे कृष्-टाप्। १ यज्ञ। २ दान। ३ सङ्गम, मिलन। कर्मणि क्वप्। ४ प्रतिमा, तस्त्रीर। ५ गो, गाय। ६ पूजा, परस्तिथ। ७ दूती, दक्षाला, कुटनी।

इज्याशील (सं० पु०) इज्या एवं शीतं यस्य, बहुव्री०। अथवा इज्यां शीलयति; इज्या-शील-भञ्च। पुनःपुनः यागकारी, बार-बार यज्ञ करनेवाला।

इञ्च (अ० स्त्री०=Inch) अङ्गुल, तस्य, गजका छत्तीसवां या फुटका बारहवां हिस्सा।

इच्छाक (सं० पु०) इच्छा दीर्घा अस्ति यस्य। जल-हृद्यिक, भींगा मल्लो।

इच्छुक, इच्छा देखो।

इज्जन (अ० स्त्री०=Engine) १ यन्त्र, आला, कल।

२ उपकरण, औजार, हाथियार। ३ साधन, वशीला।

इञ्जीनियर (अ० पु०=Engineer) १ यन्त्र-कार, कलसाल, गढ़ कपतान। २ यन्त्रकलाभिन्न, कल चलानेवाला। ३ वास्तुविद्याविशारद, माहिर-फ़ूज-मेमारी; सडक, मकान और पुल बनवानेवाला अफसर।

इञ्जीनियरिङ्ग (अ० स्त्री०=Engineering) १ यन्त्र-कारका व्यापार, कलसालीका हुनर। २ वास्तुविद्या, इल्लामेमारी।

इञ्जील (यू० स्त्री०) १ सुसमाचार, खुशखबरी।

२ धर्मग्रन्थ, ईसाके दोन और इालकी किताब।

इट (सं० स्त्री०) इय-क्षिप्। इच्छा, मर्जी, तबीयत।

इट (दे० पु०) १ वेत वा टण, बेंत या घासकी चटायी।

इटवर, इटवर देखो।

इटत (सं० पु०) ऋग्वेदीय सृष्टप्रकाशक भार्गव।

इटली (इटाली=Italy) युरोप महादेशके दक्षिणांशस्थित एक प्रायद्वीप। इटलीमें उत्तर पट्टीया तथा सिल्वर-लेण्ड, पश्चिम फ्रांस एवं भूमध्यसागर, दक्षिण भूमध्य-सागर और पूर्व योनिया एवं आद्रियातिक समुद्र पड़ता है। इसमें पंचमः द्वीप और मध्यभूमि सम्मिलित है। इटली पचा० ३६° ३८' से ४६° ४०' उ० और द्राधि० ६° ३०' से १८° १०' पू०के मध्य अवस्थित है। अधिकसे अधिक दैर्घ्य ७८८ और आयाम ३१० मील लगता है। किन्तु केन्द्रमें यह १५० मील ही विस्तृत है। सागरतटकी रेखा २००० मील दीर्घ समझी जाती है। पश्चिममें गाएता, जिनीवा, नेपल्स, सारोनी एवं पोलिकास्त्री, दक्षिण-पूर्वमें स्कुइल्लेस तथा तारान्तो और आद्रियातिकमें मानफ्रेदोनिया, वेनिस, तथा व्रीस्त प्रधान उपसागर है। मेसिना वा-वोमिफ्रे-सिचो और फारो खाड़ी विद्यमान है। काम्पानेज़ा, स्यार्तिवैन्तो, दी सिलुका, पस्यारो, कोसी और कारवो-नारा प्रधान नन्तरीय है। सिसिली तथा लिपारि, इसचिया, एलवा और सारदिनिया प्रधान द्वीप है। भूमितल सर्वत्र एकप्रकार देख नहीं पड़ता। उत्तरमें कोम्बार्डीका समतल क्षेत्र शस्यप्रद है। दक्षिणमें वेनिस, काम्पो-फेलिस और वासिलिकाता समथली विस्तृत है। रोम एवं समुद्रके बीच पोस्टाइन भील और व्रीस्त तथा वेनिस-खाड़ीके मध्यकी समभूमिमें दलदल पड़ता है। भास्स एवं अपेनाइन पर्वतकी श्रोमा देखते ही बन आती है। नेपल्सके निकट वेष्ट्रवियस पार्मन्ट-गिरि भड़का करता है। उत्तरमें जलवायु साधारणतः



मनोऽप्य, नियत तथा स्वास्थ्यकर और केन्द्रस्थलमें सवि-  
शेष सुखप्रद है। किन्तु दक्षिणकी ओर उष्णता अधिक  
रहती और प्रायः पानीकीकी उत्तम वायु प्रान्तिसे बढ़  
जाती है। यस्मिन् और शीघ्र ऋतुमें मलेरियाके प्रकोप-  
से कितने ही स्थानका स्वास्थ्य विगड़ता है। कारण—  
प्रायः कच्छसे जो वायु उठता, वह मारामक होता है।  
यों प्रधान और चिसोन, मेरा, मना, दोरा-रिपारिभा,  
दोरा बालतिभा, बोरमिदा, तनारो, मेसिपा, तिसिनो,  
महा, मोनलिपो, मिनसिपो, टेल्लिभा, परमा एवं  
पनारो याखा नदी है। उत्तरपश्चिममें घाडिज,  
ब्रेन्ता, पिदाव और तगलिभासेम्लो पाल्पससे निकल  
दक्षिणकी बहती है। मध्यस्थलको प्रधान नदी ताडवेर  
भूमध्यसागरमें जाकर गिरती है। किन्तु अनेक  
नदीमें जहाज, चल नहीं सकता। इस अभावकी दूर  
करनेके लिये तिकिनो और मिलनके बीच २८ मील  
सम्बन्धी नहर निकली, जिसमें बड़ीमे बड़ी नाव चली है।  
दूसरी नहर एडिज और पोकी मिलाती है। उत्तरमें  
सब मिलाकर ५१०से अधिक नहरें हैं। गार्दी और  
लागो माग्गिओर या लोकारनो ऊँच प्रधान है।  
लुगानो, कोमो, लेको, इसको, पेस्जिभा, बोससेना,  
कास्तेल, गानडोलफो, ब्रेस्जिभानो, सेलानी, यारानो  
और पावार्नी छोटा ऊँच है। विविध दृश्यके लिये  
इनमें कितने ही ऊँच प्रशंसनीय हैं। मेग्गिओर परम-  
सुन्दर और कोमो अत्यन्त चित्ताकर्षक है।

द्राचा, जितवृक्ष, जर्बौर, न्यप्रोघ, तरन्मुल, पिस्ता,  
सुपारी तथा कितने ही दूसरे फल होते और खादु  
सगते हैं। उत्तर प्रान्तमें दास, चावल, ज्वार और  
दूसरे शाक उपजते हैं। लोमबार्डिमें रेशमके कीड़े  
पालनेको लाखों शहतूतके पेड़ लगाये जाते हैं।  
यों नदीके मैदानमें सड़क-सड़क गो चरा करती हैं।  
इटलीका बना पपीर अनेकाला होता और दृष्टिवीके  
प्रत्येक प्रान्तमें विकने जाता है। उत्तर अर्ध-सोमप्रत्येक  
समोप और पेनिस, जिनोपा और तासकेनीमें  
मरमरपत्थरकी खानि है। धनेनाइनसे जराइत,  
सूर्यकान्त, मगव, मिलास्फटिक, वेदूर्य और पपर  
रत्न निकलता है। उपरोक्त पर्वतमें धार, घनोभूत

पाम्नेयोहार, गन्धक, वातुका प्रभृति पदार्थ भरा है।  
ताम्ब, लोह और फिटकरीकी भी खानि है। विभिन्न  
प्रान्तमें उष्ण तथा शीतल जलके प्रस्त्रवण मिलते हैं।

पर्वत और वनमें शूकर, हरिण, हक, विष्णू, वात-  
प्रमो और भज, भारण्यपशु रहते हैं। श्वान्छो पर्वतमें  
वनमार्जार और दक्षिणार्धमें शिखायुक्त शक्री देख  
पड़ता है। शयक, गृगाल और वन्यपक्षीकी कोई  
कमी नहीं। दक्षिण सागरतटपर पानीकी जलचर  
पक्षी प्रायः वर्तमान रहते हैं। कहीं कहीं समुद्रमें  
विद्रुम भी विद्यमान है। नदीमें अनेक प्रकारके मत्स्य  
तेरते हैं।

इटलीमें रेशमका काम बहुत बनता है। सन  
और ऊनकी चीज भी तैयार होती है। कितना ही  
सव्य टपकाया जाता है। फ्राम्म, ग्रेटब्रिटेन, ग्रीस  
और स्विटजरलैण्डके साथ प्रधानतः व्यवसाय चलता  
है। फ्राम्मके साथ प्रति वर्ष करोड़ों रुपयेका लेन-  
देन होता है। अन्य ओर रुई बाहरमें मंगाते हैं।  
रेशम, शराव और तेल दूसरी जगह भेजा जाता  
है। क्षेत्रफल ११०६२३ वर्गमील है। १८०१ ई०की  
मनुष्य-गणनाके अनुसार लोकसंख्या ३२८६५५०४  
रही। इटलीमें सैकड़े पीछे ८०.१२% लोग रोमन  
काथलिक हैं। प्रायः २०००० प्रोटेस्टाण्ट और ४००००  
यहूदी निकलेंगे। तीन-चौथायी आदमी लिख-पढ़  
नहीं सकते। दश-बीस प्राचीन प्रतिष्ठित विश्व-  
विद्यालय विद्यमान हैं।

प्रायः ५००० मील रेलवे और १५००० मील  
टेलीग्राफ विस्तृत है। इटलीका प्रान्तीय विभाग यह  
है,—मोदेना, पार्मा, वेरुजो, पादुषा, रोविगो  
व्रेविमो, जेदाइन, वेनेज़िभा, वेरोना, विसेन्ज़ा,  
पारेन्ज़ो, झेरिन्स, प्रोव्वेत्तो लेघोरन, लुका, पिजा,  
सीना, अमकोना, पर्कीनी, पिकेनो, मोन्नोना, फेरा्रो,  
कोर्सी, माकिराता, पेसरो, उर्विनी, रावेना, रोम,  
सेमो, एक्विना, वासिलिकाता, कालेवुषा, कितेरि-  
ओर, रेगिओ, काटनज़ो, केपितानाता, मोलिम,  
नापोली, प्रिन्सिपाती कितेरिओर, प्रिन्सिपाती किते-  
रिओर, तेरा दी बरी, तेरा दी लिवोरो, तेरा दी पोत-

रातो, कासतानीसेचा, कातानिषा, गिरगेंतो, नेस्सिना, पालेर्मी, सिराकुसा, भपानो, जेनोवा, काग-लिभारी, ससारी अलेस्सन्ड्रिषा, वेनेवेन्ता, वेर्गामो, कोमो, क्रेमोना, कुनेग्रो, मानतुषा, मिलन, नोवारा, येविषा, पिथासेनजा, पोर्तो भारेरिजिओ, रेगिओ, एमिलिषा, सोन्ड्रिओ, तूरिन और उर्विषा। नेपिल्स, मिलन, रोम, पालेर्नो, तूरिन, फोरिन्स, जिनोवा, वेनिच, बोन्नोना, मेस्सिना, लेघोरन, और कातानिया, बड़ा नगर है।

इटलीमें अमजोबियोंका वितन अधिक और खाद्य वस्तुओंका मूल्य न्यून है। व्यापारके केन्द्र लोमबार्डी और पीडमोण्टमें इकट्ठा हो बहुत बढ़ती है। किन्तु कितनी ही सेविक्कबद्ध, बीमा कम्पनी और परस्पर-साहाय्य-समिति खुली हैं। को-भापरेशन वा सहाय्य व्यवसायका भी बड़ा वैभव है। उसमें छोटे-छोटे व्यवसायी और छपकू योग देते हैं। अब लोगोंको अधिक व्याज देनेका कष्ट उठाना नहीं पड़ता।

पाठशाळा सरकारके हाथ है। विनामूल्य शिक्षा मिलती है। सरकार और व्यवसायी पर पाठशाळाके व्ययका भार पड़ता है। पढ़े-लिखोंकी संख्या दिन दिन बढ़ती जाती है। पुस्तकालय बहुत हैं। हस्तलिखित और बहुमूल्य पुस्तकोंकी कोई कमी नहीं। थोड़े दिन हुये, कोई दो सहस्र पुस्तकालय गिने गये थे। स्थानीय इतिहासका चम्बेष्ण हुआ करता है। मिल्सस्वस्थीय पुस्तक खरीदनेको करोड़ों रुपया जमा है।

दरिद्रोंको भत्ता-वस्त्र देनेके लिये सार्वजनिक संस्था ये प्रतिष्ठित हैं। रोगियोंके लिये औषधालय, अनाथोंके लिये निवासस्थान और लूकों, लंगडों, बहनों तथा अन्धोंके लिये विद्यालय और विद्यामालय बनाये गये हैं।

इटली राज्य एक राजाके अधीन है। वही लोगोंकी पदाधिकार देते और पारलियामेण्टको एकत्र कर लेते हैं। अदालतका काम फ्रान्सकी तरह चलता है। विचारपतिका वितन कम है। मुकदमा लब्ध नहीं निवृत्तता।

सेनाविभागमें विभिन्न प्रान्तके लोग एकत्र भरती कर लिये जाते हैं। सिपाही बननेसे कोई इनकार कर नहीं सकता। शान्तिके समय सेनाकी संख्या टायी या तीन और युद्धके समय साढ़े सात लाख रहती है। खोजिया, नेपल्स, वेनिच, तारान्तो और मण्ड्रा लोनाडोपमें लड़ी जहाजोंका पड्डा है। इटलीका भाय-व्यय बढ़ते जाता है। सोने, चांदी रूपे और कांसेका सिक्का चलता है। कर अधिक लगता है।

इतिहास—प्रतिग्रय रमणीय देश होने और जलवायु स्वास्थ्यप्रद रहनेसे पुराकाल उत्तरसे कितने ही लोगोंने इटलीपर आक्रमण किया था। इसीसे नाना प्रकारकी भाषाका प्रचार हुआ। रोमक ऐतिहासिकोंके कथनानुसार ई०से ३८० वर्ष पहले गाल्लोंका दल रोमनगर मारने-काटने पड़ चुका था। रोमकोंने इटलीको जोत अच्छी-बच्छी सड़के बनवाये। ४७६ ई० को हेरुदलोयोंके राजा थोडोभाकर रोमुलसको सिंहासनच्युत कर सम्राट् बने थे। ४८८ ई०को थोक-सम्राट् जेनोकी आज्ञासे पूर्व गाल्लिके नरेय थिसो-कोरिकने थोडोभाकरको हराया और ४८३ ई०को जानसे मार डाला। फिर गार्मों और यूनानियोंमें ५३८से ५५३ ई० तक खूब युद्ध हुआ था। अन्तको गालीय नृपति टैडगा वेस्विपसके पास यूनानियोंसे हार गये और यूनानी इटलीके अधिपति बने। ५६८ ई०को लोमबार्डीने गाल्लोंको मार भगाया था। ५८०से ६०४ ई० तक थियोरीने लोमबार्डीकी मूर्ति-पूजक बनाया और ७२६ ई०को द्वितीय पिगोरीने रोममें स्वतन्त्र राज्य प्रतिष्ठित किया। ७५६ ई०को फ्रान्स-सरदारने इटलीका कितना ही उत्तरांश जोत पोपकी सौंप दिया था। ७७४ ई०को चार्लस अपने खगुर ऐसीदेरिफसको सिंहासनसे उतार इटलीके सम्राट् बने। चार्लस वंशके पाठ नरेयोंने इटलीमें राज्य किया था। ८८८ ई०को चार्लस दी फ्राट (मोटे) सिंहासन-च्युत हुये। ८६१ ई०को इटलीय नृपति द्वितीय बेरेङ्गरने अपना राज्य थोटोको दिया था। चार्लस और थोटोके समय पराजितताकी धूम रही। चारो और स्यूट-मार होनेसे जिले बहुत बने

घ। ८७५ को द्वितीय और ८८६ ई० की छतरी  
ओटो सिंहासन पर बैठे। १००२ ई० की छतरी  
ओटो के मरने पर इवरिया के अधिपति फारडोइन  
लोम्बार्ड के राजा हुये और १०१५ ई० की मर गये।  
वेनरिया के इनरीने अपने बैरी पेविया को बिनटकर  
रोम में सिंहासन पाया था, किन्तु १०२४ ई० की पर-  
कोक गमन किया। वाकी इटली के राजाओं का शासन-  
समय नीचे लिखते हैं,—

महात्म	१८८६
८म बापस	१८००
नेपोलियन-शासन	१८०१
सूट	१८०८
प्राचीन अधिपति	१८१५—१८००
इटलीय शासनतन्त्र	१८०१ ई० की बापस

ई० के १६वें शताब्द पहले इटली देश भीषण युद्ध  
और ख-ख जातीय सशक्तिके लिये खेन, फ्रांस तथा जर्म-  
नी के विपक्ष में प्रायः लज्जामय हो गया था। १५२५ ई० की  
पेविया के युद्धने जर्मन-सम्भार का प्रभुत्व प्रतिष्ठित किया,  
किन्तु ई० के १८वें शताब्दार्थ अष्टीया का आतङ्क जम  
गया। १७९७-९८ ई० की नेपोलियन का विजय होनेसे  
शासन बदला और कयी वर्षतक इस प्रायद्वीपका  
अधिकांश फ्रांस के अधीन रहा। १८१४ ई० की  
मन्थ होनेपर लोम्बार्डो-वेनिशीय प्रान्त अष्टीया और  
सारदिनिया राज्य तथा गेनाइस प्रदेश सेवायके राज-  
परिवारने पाया था। लुका नब्बावी बना और तासक-  
नीकी नब्बावीका पुनर्बहार हुआ। बोरवोनीकी  
नेपल्स, पोपकी अपने राज्य और इट वंशकी मोडेने  
तथा अन्य प्रान्तका पुनरधिकार मिला था। १८४८  
ई० की मिसानोसी और वेनिशीयोंने अष्टीया के विरुद्ध  
व्यर्थ विद्रोह बढ़ाया। १८५८ ई० की पीडमीण्ट और  
अष्टीयाने जो युद्ध हुआ, उसमें पीडमीण्ट हार गया।  
१८६१ ई० की पीडमीण्ट-नरेश के अधीन इटली एक  
राज्य बना था। १८६६ ई० की अष्टीयाने नये राज्य के  
हाथ वेनिशिया सौंपा। १८७० ई० की ११ वीं सितम्बर-  
को इटलीय सेनापति सादोरनाने ६०००० फौज के  
साथ पोप के अधिकृत रोमराज्य में प्रवेश किया था।  
पोपने नाममात्र बाधा डाली। अग्रेयकी रोम इटलीय  
शासनतन्त्र के अधीन हुआ था। वाटिकान (Vatican)  
मात्र पोप के अधिकारमें रहा। १८७१ ई० की २२ वीं  
जुलाईकी राजा विक्टर एम्यानुएलने जर्जोत्तासवे,  
सदस्यत्व पदुं व रोम नगरकी इटलीकी राजधानी  
बनाया था। अर्ध शताब्दकी चेष्टाके बाद इटली फिर  
स्वाधीन हुआ।

१८७८ ई० की ८वीं जनवरीकी विक्टर एम्यानुएल

नाम	ई० की
इनरी	१००४
४वें इनरी	१०५६
५म पे मोरी	१०७१
पोपाधिपति	१०७७
मोदर सांसन	११५५—११२०
कोमण्ड राजा	११५८—११२४
प्रिडरिक्	११५४
६वें इनरी	११८४
१५ फ्रेडरिक	११९०
कोमण्ड	११९०
कोमण्डिन	११९४
प्राचीन सुड और जनप्रवीण	११५८—११९१
रशर्ट	११९८
लीन	११९९
बार्नस	११९९
लोडसनाउस	११९०
१५ कीन	११९४
बार्नकीनी	११९५
स्वतन्त्र शासन	११९९—११९९
१५ बार्नस	११९९—११९९
११९९ सुड	११९८
१०म निन्नी	११९९
प्राडिबार्न	११९०
बोनिनी	११९०
फरडीनण्ड	११९०
विक्टर फामोडेस	१०९९
१५ बार्नस	१०९०
परमार्थीन बार्नोडोरानी	१०९०
२ लीन	१०८०
निन्नी	१०८०

(२४) कालवासमें पड़े और उनके पुत्र हामबर्ट राजसिंहासनपर बैठे। १८८१ ई०की राजा हामबर्ट अट्टीया-सम्राट् के सामन्तपक्ष से सखी कर विद्याना गये थे। २७वीं से ३१वीं अक्तोबरतक अट्टीया-राजधानीमें वह ठहरे। उससे जर्मनी और अट्टीयाके साथ इटलीका सहाय स्थायी हुआ था। १८८२ ई०की २०वीं मईको तीनो राज्यके मध्य (Triple Alliance) सम्धिपत्र लिखा गया। इस सम्धिपत्रके अनुसार रूस, फ्रान्स या कोई दूसरा राज्य जर्मनी, अट्टीया वा इटलीसे लड़नेपर उक्त तीनो राज्य उसके विरुद्ध अस्त्र धारण करनेपर सममत हुये थे। इस सम्धिसे इटलीको राज्यकी उन्नति करने और सेना तथा नौ विभागमें बल बढ़ानेका बहुत सुभीता पड़ा है।

१८८१ ई०के जन मास जर्मन और इटलीय मन्त्रीकी बैठकसे वाणिज्यवृद्धिके अभिप्राय फिर उक्त सम्धिपत्र गृहीत हुआ। १८९० ई०की २८वीं जुलाई-को ब्रेस्की नामक किसी राजद्रोहीने इटलीराज हामबर्टको गोलीसे मार डाला। योही उनके एकमात्र पुत्र थे विक्टर एम्मानुएल इटलीके राजा हुये। यह अति शान्तिप्रिय नृपति है। इन्होंने समय १८९८ ई०की २८वीं दिसम्बरका सबेरे पांच बजे अतिदृढ-विदारक भूमिकम्पसे समग्र दक्षिण कलब्रिया और सिसिलीका पूर्वीय विध्वस्त हो गया था। उससे बहुतसे जनपद टूटे और अनेकी मछीना नगरमें डूढ़ साख मनुष्य मरे।

१८९१ ई०के अक्तोबर मास राजा एम्मानुएल सपत्नीक फ्रान्स-राजधानी पारिस गये थे। उससे दोनो राज्यके मध्य यथेष्ट सहाय स्थापित हुआ। १८९८ ई०के अक्तोबर मास अट्टीया-सम्राट् फ्रांसिस जोसेफने बोसनियाकी अपनी राज्यमें भिन्ना लिया था। इस संवादसे राजा एम्मानुएल और अपना पर नृपति विचलित हुये। उसी समयसे अट्टीयाके साथ इटलीका मनोमालिन्य बढ़ा। जर्मनी एवं अट्टीयाके साथ रूस, फ्रान्स और इङ्ग्लैण्डके लड़ने भी कुछ दिन इटली-नरेश निरपेक्ष रहे। किन्तु अपनी स्थायित्वानि भयानक रूपसे होठे देख १८९५

ई० इटलीकी फौज आगे बढ़ी और अट्टीयासे लड़ बैठे। इटली बड़े बलविक्रमसे आजकल अट्टीयाके साथ युद्ध कर रहा है।

राम, गेप, नेपोलियान्, गारिवर्डी, मारिनि, अट्टीया अथवा अन्तर् और गिरिष देखो।

इटली (वे० स्त्री०) इट-क-प्रि-ल एपोटरादिलात् यस सः। शाखामय कटे, बतकी लटाई। "इते इटलीनरसो यथावति।" (गणपयगात्र १४/१४।८।) 'इटलीन गणपय गात्रामय कटे।' (हरिश्चन्द्र)

इटालिक (ई० पु० = Italic) यद्वावर, टेढ़े छायेकी छप्।

इटालियन (ई० पु०) १ इटलीवासी। २ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। प्रथमतः इटलीमें बननेसे ही इस वस्त्रकी इटालियन कहते हैं। हत्तवक्से इटालियन बनता और खूब चमकदार निकलता है। रङ्ग काला होता है।

इटवर (सं० पु०) इय भावे क्षिप्-वर-भय, इया कामिन चरतीति। पण्ड, खतन्त्र धूमनेवाला मांड।

इटलाना (हिं० स्त्री०) १ साहड्वार गमन करना, गुरुरकी साथ चलना। २ अथवा भाषण करना, तुतलाना, साफ-साफ ग बोलना। ३ वक्तात्तर प्रदान करना, टेढ़े जवाब देना। ४ तिर्यक् सभाषण करना, गुस्साहीके साथ बोलना, उलटी बात बताना। ५ छत्र देखाना, मटियाना, भावापिक, कीनेका बहाना करना। ६ विरोध करना, भगड़वा लगाना।

इटलायी (हिं० स्त्री०) साहड्वार गमन, ठसककी चाल, इटलाहट।

इटलाहट, इटलायी देखी।

इटायी (हिं० स्त्री०) अभिलाप, खाहिश, चाह, प्यार।

इटिमिका (सं० स्त्री०) काठक याछामेद, यहुपेदकी एक शाखा।

इट (सं० स्त्री०) इल-क्षिप् वा लस्य डः। १ भूमि, जमीन्। २ अन्न, अनाज। ३ वर्षाकाल, बरसात। ४ तृतीय प्रयाज। ५ यज्ञाङ्ग। ६ षष्ठ प्रयाज। (वे० त्रि०) ७ स्तुतियोग्य, तारीफके काविस।

"मरिचिलपरिदृष्टिम्।" (वाचस्पत्यम् १।१)

'इयते यद् यद् इतीहः सुविद्यम्।' (महोपर)

इडरहर, इडर देवो।

इडमति (सं० पु०) विष्णु।

इडहर, इडर देवो।

इडा (सं० स्त्री०) इल-क-टाप्, डस्य सत्व वा।

१ पृथिवी, जमीन्। २ धेनु, गाय। ३ त्वरा, शितावी,

जल्दी। ४ मरस्त्रती। ५ हविः, अन्न। ६ देवी।

७ दुर्गा। ८ सुति, तारीफ्। ९ यज्ञपात्रविशेष।

१० सन्तोष, तपस्वी। ११ भोजन, खुराक। १२ आहुति

विशेष। यह आहुति प्रयाग अनुयाजके बीच होती है।

इडापर चार प्रकारका दूध तैयारकर जलमय पात्रमें

छालते और फिर होता और यजमान मिलकर पो

जाते हैं। १३ अग्नि देयता विशेष। यह असोमपा

है। १४ आकाशदेयता। १५ मनुकी कन्या, वधपत्नी।

गतपथब्राह्मण-(अ० १। १-१२) में मनुकन्या इडाके

उत्पत्ति-सम्बन्धपर इस प्रकार गल्प कहा है,—

मनुर्न प्रजासृष्टि करनेके लिये पाकयज्ञका अनुष्ठान

किया था। घृत, नवनीत और आमिषा जलमें छोड़नेसे

संवत्सरके मध्य एक कन्या उत्पन्न हुयी। वासिका

सुस्त्रिध्व जलसे उठी थी। मित्रावरुण निकट आये।

उन्होंने प्रश्न किया,—तुम कौन हो। जवाब मित्रा—

मनुकौ कन्या। उन्होंने फिर कहा,—तुम हमारी

हो। इडाने उत्तर दिया—नहों, हम अपने जन्म

देनेवालीकी हो हैं। किन्तु मित्रावरुणने पुनः इनकी

और ध्यारसे देखा। यह कुछ उत्तर न दे मनुके

समीप जा पहुँचीं। मनुने भी पूछा,—तुम कौन हो।

इडाने कहा,—हम आपकी कन्या हुयी, आपके घृत,

नवनीत तथा आमिषा प्रदानसे निकली हैं। हमें यज्ञमें

धर्पण कीजिये। आपकी मनस्सामना पूर्ण होगी।

मनुने इडाके साथ कठोर यज्ञका अनुष्ठान किया।

अन्तको मनु प्रजापति बन गये। २५ देखो। १६ वाम-

पार्श्वस्थ रक्तवाही नाड़ी। मेरुदण्डके वहिर्भाग वाम

तथा दक्षिण पार्श्वपर चन्द्रसूर्यात्मक इडा पिङ्गला

नामक दो नाड़ी होती, जो चन्द्र, सूर्य और

अग्नि तीनोंका गुण रखती हैं। साधकके पक्षमें

इडा नाड़ी गद्गा और पिङ्गला यमुनाका स्वरूप है।

इन दोनों नाड़ीके मध्य सुपुम्णा सरस्वती-जैसी रहती

है। इडा पिङ्गला और सुपुम्णा तीनों नाड़ीके मिलन-

को त्रिवेणी कहते हैं। योगी इस त्रिवेणीके सहमपर

स्थानकर सर्वपापसे छूट जाते हैं। प्राणायाममें पूरक

करते समय इडा नाड़ीसे हो वायुकी ऊपर चढ़ाते हैं।

जब इडा नाड़ीमें स्वर चलता तब प्रत्येक शुभकार्य

करनेमें साफल्य मिलता है। सुपुम्णा-ग्रन्थनाड़ी है।

उसीमें जगत् प्रतिष्ठित है। इडा, इरा और इमा तीनों

रूप सिद्ध हो सकते हैं।

इडाचिका (सं० स्त्री०) इडेय आवति सुष्म संध-

भागम्, इटा-मधु-खुलु-टाप्, अत इत्। १ बरटा,

बर। २ गन्धोली, ककड़ो।

इडाजात (सं० पु०) भूमिज गुग्गुल, जमीनने

पेदा गूगुर।

इडावत् (सं० वि०) १ इडा-मतुप्। इडानाड़ीविशिष्ट,

जो इडाकी रहता हो। २ आनुष्टुप, फुरहत्

बख्ख। ३ आप्यायित, तरोताजा बना हुआ। ४ हवि-

विशिष्ट।

इडिक, गड्ढ देखो।

इडिका (सं० स्त्री०) इडा स्थायै क, इत्वश्चाकारस्य।

पृथिवी, जमीन्।

इडिक (सं० पु०) इडिक् इति कायति गध्दायते,

इडिक्-कं-ड। १ वयस्य क्षागस, जङ्गली बकरा। २ यांवर,

बन्दर।

इडोय (सं० वि०) इडाया अपस्य अदूरदेगः, इडा-

ह्। अन्तरादिष्य। पा ३। १। ८०। अन्न-सम्बन्धीय, अगाजसे

भरा हुआ।

इडेवता (सं० स्त्री०) इडकदानकी देवी।

इडुर (सं० पु०) इच्छति ह्यमिति, इप्-किप्-इट्

ह्यस्यन्तीतया त्रियते, इट् ह् कर्मणि अच्। ह्य,

छोड़देने सायक साँड़।

इपट्टेन्म (सं० स्त्री० = Entrance) १ प्रवेग, दम्ब,

पेठ। २ प्रवेगात्रा, पेठका चुक्क। ३ दार, दरवाजा,

पोली। ४ आरम्भ, शुरु। ५ अंगरेजी पाठगानाकी

एक कक्षा, अंगरेजी मदर्सका एक दरजा।

इण्टरी (सं० स्त्री०) पक्षान्नविशेष, किसी किस्मके

पके अनाजकी बनी चीज।

इण्डिया ( इं० स्त्री० = India ) भारतवर्ष, हिन्दुस्थान ।  
 इण्डोन् ( सं० पु० ) कुरी, चाकू ।  
 इण्ड ( वे० स्त्री० ) मुष्कापत्र, मूँजकी चट्ट । कड़ा ही  
 घूँहसे उतारते समय यह हाथमें सपेट लेनके काम  
 आता है ।  
 इण्डोरिका ( सं० स्त्री० ) वटिका, बाटी, भौरिया ।  
 इत् ( सं० वि० ) एतीति, इ-क्तिप् । देखते-देखते  
 चला जानेवाला, जो बातकी बातमें छड़ जाता हो ।  
 व्याकरणका प्रयोग साधनेके लिये जो चरित्र आते ही  
 चला जाता, वह इत् कहाता है ।  
 इत ( सं० वि० ) इ-क्त । १ गत, गुजरा हुआ, गया-  
 बौता । ( स्त्री० ) भाये क्यप् । २ गमन, चाल । ३ घान,  
 समझ । ४ प्राप्ति, याफूत् । ( हिं० क्ति० वि० ) ५ इस  
 ओर, इधर, यहाँ ।  
 इतः, इतश्च ।  
 इतःपर ( सं० अव्य० ) इसके पोछे, इसके बाद, इसपर ।  
 इत-उत ( हिं० क्ति० वि० ) १ इधर-उधर, जहाँ-  
 तहाँ । ( पु० ) २ छल फरेव ।  
 इत क्षति ( वे० वि० ) इस ओरसे लम्बायमान, जो  
 इधरसे फैला या पड़-चा हो । २ भविष्यत्, वर्तमान  
 समयसे अधिक स्थायी, आयिन्दा, जो जमाना-हानसे  
 च्युत्ता ठहरता हो ।  
 इतना ( हिं० वि० ) एतावत्, इस कदर, इत्ता, इतक ।  
 इतनी, इतना देखो ।  
 इतम ( सं० वि० ) अन्य, दूसरा, और ।  
 इतमाम ( सं० पु० ) पूर्णता, कमाल, पूरापन ।  
 इतमीनान् ( सं० पु० ) १ सन्तोष, आराम, ठारस ।  
 २ बन्धक, जमानत ।  
 इतमीनान् करना ( हिं० क्ति० ) विश्वास मानना,  
 खुश रहना ।  
 इतमीनान् खातिर होना ( हिं० क्ति० ) सन्तुष्ट रहना,  
 यकीन रखना ।  
 इतमीनान् न करना ( हिं० क्ति० ) सन्देह रखना,  
 यकीन न लाना ।  
 इतमीनान् होना ( हिं० क्ति० ) सन्तुष्ट रहना, खुशी  
 मनाना ।

इतमीनानी ( सं० वि० ) विश्वस्त, एतधारी, जिसमें  
 यकीन रहे ।

इतर ( सं० वि० ) इना कामिन तरति तीर्यते, इतं  
 प्राप्तं रातीति ; इत-रा-क, इ-तृ-भप् वा भच् ।  
 १ नीच, कमीना । २ अन्य, दूसरा । ३ अवशिष्ट, बाकी ।  
 इतरजन ( सं० पु० ) इतरथासी जनश्चेति, कर्मघां ।  
 जन साधारण, आम लोग ।

“कथा वच्यते कथं माता विचं पिता सुतम् ।

आश्रयः कुलमिच्छति मित्राप्रमित्रैः जनाः ॥” ( धर्मनीति )

इतर जाना ( हिं० क्ति० ) दस्युके विद्वद् प्रथम जो  
 समाचार पाना, डाकुवोंको खबर पड़ते ही लगना ।

इतरतः ( सं० अव्य० ) विभिन्न रीतिसे, दूसरे तोरपर ।

इतरया ( सं० अव्य० ) इतर-याल् । प्रचारकने शान् ।

या ३५२२ । विपरीत, वरुद्ध, निदोष ।

इतरविशेष ( सं० पु० ) इतरस्मात् विशेषः, ५-तत् ।

अन्य प्रमेद, दूसरा फर्क ।

इतरा ( सं० स्त्री० ) इतरैयको माता । इतरै देखो ।

इतराजी ( हिं० स्त्री० ) विरोध, एतराज, अनबन ।

इतराना ( हिं० क्ति० ) अभिमान देखाना, ठसक

करना, अपनेको बड़ा समझना ।

इतराहट ( हिं० स्त्री० ) अभिमान, गुस्सा, ठसक ।

इतरीफन ( हिं० पु० ) अवलेह विशेष । इसमें

भावना, धनिया और ग्रहद डालते हैं ।

इतरैतर ( सं० वि० ) इतर इतर निपातनात् इन्द्रम् ।

अन्योन्य, सुतफुरिक, अलग, दो-चार ।

इतरैतरकाम्या ( सं० स्त्री० ) १ अन्योन्य वासना,

सुतफुरिक खयाल ।

इतरैतरयोग ( सं० पु० ) १-तत् । १ परस्पर सम्बन्ध,

आपसका तात्सुक्य । २ इन्द्रनामक समास, इसमें पर-

स्पर पदार्थका योग रहता है ।

इतरैतराभाव ( सं० पु० ) अन्योन्याभाव, एकका

दूसरेसे न मिलना । घटका पट और पटका घट न

होना इतरैतराभाव है । अन्योन्याभाव देखो ।

इतरैतराश्रय ( सं० पु० ) इतरैतरं आश्रयति, आ-

श्रय-भच् । अन्योन्याश्रयरूप न्यायका दोषविशेष ।

अन्योन्याश्रय देखो ।

इडरहर, ईडर देवी।

इडप्रति (सं० पु०) विष्णु।

इडहर, ईडर देवी।

इडा (सं० स्त्री०) इन-क-टाप्, इस्य सत्व वा।

१ पृथिवी, जमीन्। २ धेनु, गाय। ३ त्वरा, गितावी,

सन्दी। ४ सरस्वती। ५ हयि, घट। ६ ऐवी।

७ दुर्गा। ८ सुति, तारीफ़। ९ यज्ञपात्रविशेष।

१० सन्तोष, तसमी। ११ भोजन, खुराक। १२ आहुति

विशेष। यह आहुति प्रयाज अनुयाजके बीच होती है।

इडापर चार प्रकारका दूध तैयारकर जलमय पात्रमें

छालते और फिर होता और यजमान मिलाकर पो

जाते हैं। १३ अग्नि देवता विशेष। यह असोमपा

है। १४ आकाशदेवता। १५ मनुकी कन्या, सुधपत्नी।

गतपथनाष्टप- (७८११—१२)में मनुकन्या इडाके

उत्पत्ति-सम्बन्धपर इस प्रकार गल्प कहा है,—

मनुने प्रजासृष्टि करनेके लिये पाकयज्ञका अनुष्ठान

किया था। वृत्त, नवनीत और आमिसा जलमें छोड़नेसे

संवत्सरके मध्य एक कन्या उत्पन्न हुयी। वास्तिका

सुत्रिण जलसे उठो थी। मित्रावरुण निकट पाये।

उन्होंने प्रश्न किया,—तुम कौन हो। जवाब मिला—

मनुकी कन्या। उन्होंने फिर कहा,—तुम हमारी

हो। इडने उत्तर दिया—नहीं, हमें अपने जन्म

देनेवालीकी हो है। किन्तु मित्रावरुणने पुनः इनकी

और प्यारसे देखा। यह कुछ उत्तर न दे मनुके

समीप जा पहुँची। मनुने भी पूछा,—तुम कौन हो।

इडने कहा,—हम आपकी कन्या हुयी, आपके घृत,

नवनीत तथा आमिसा प्रदानसे निकली है। हमें यज्ञमें

अर्पण कीजिये। आपकी मङ्गस्वामना पूर्ण होगी।

मनुने इडाके साथ कठोर यज्ञका अनुष्ठान किया।

अन्तर्को मनु प्रजापति बन गये। इडा देवा। १६ वाम-

पार्श्वस्थ रत्नवाही नाड़ी। मरुदण्डके दहिर्भाग वाम

तथा दक्षिण पार्श्वपर चन्द्रसूर्यात्मक इडा पिङ्गला

नामक दो नाड़ी होती, जो चन्द्र, सूर्य और

अग्नि तीनोंका गुण रगती हैं। साधकके पक्षमें

इडा नाड़ी गद्गा और पिङ्गला यमुनाका स्वरूप है।

इन दोनों नाड़ीके मध्य सुषुम्णा मरुतो-जैवी रहती

है। इडा पिङ्गला और सुषुम्णा तीनों नाड़ीके मिलन-  
की त्रिवेणी कहते हैं। योगी इस त्रिवेणीके सहस्रपर  
खानकर सर्वपापसे छूट जाते हैं। प्राणायाममें पूरक  
करते समय इडा नाड़ीसे हो वायुकी ऊपर चढ़ाते हैं।  
जब इडा नाड़ीमें स्वर चलता तब प्रत्येक शुभकार्य  
करनेमें माफ़स्य मिलता है। सुषुम्णा ब्रह्मनाड़ी है।  
उसमें जगत् प्रतिष्ठित है। इडा, इरा और इला तीनों  
रूप सिद्ध हो सकते हैं।

इडाचिका (सं० स्त्री०) इडेय भावति सूक्ष्मं मध्य-  
भागम्, इडा-पट्ट-कुल्ल-टाप्, पत इत्। १ वटा,  
वर। २ गन्धोली, ककड़ी।

इडाजात (सं० पु०) भूमिज गुग्गुलु, जमीनसे  
पेदा गूगुर।

इडावत् (वे० वि०) १ इडा-मनुप। इडानाड़ीविशेष,  
जो इडाकी रहता हो। २ आनन्दप्रद, फरहत  
वस्तु। ३ आप्यायित, तरोताजा बना हुआ। ४ हयि-  
विशेष।

इडिक, ईडर देवी।

इडिका (सं० स्त्री०) इडा-स्वार्थक, इत्वशाकारस्थ।  
पृथिवी, जमीन्।

इडिक (सं० पु०) इडिक् इति कायति शब्दायते,  
इडिक्-के-ड। १ वय कंगल, जङ्गली बकरा। २ वानर,  
बन्दर।

इडोय (सं० वि०) इडाया अत्रत्य अदूरदेगः, इडा-  
ह। अत्रत्यस्थ। वा ३११८०। अय-सम्बन्धीय, अनासने  
भरा हुआ।

इडदेवता (सं० स्त्री०) उदकदानकी देवी।

इडर (सं० पु०) इड्कृति वृषमिति, इय-क्रिप्-इड्  
वृषस्यन्तौतया प्रियते, इड् इ कर्मणि पठ्। वृष,  
छोड़देने लायक सांड।

इष्टेन्म (सं० स्त्री० = Entrance) १ प्रवेश, दर्शन,  
पेठ। २ प्रवेगान्ना, पेठका द्रव्य। ३ द्वार, दरवाजा,  
पौली। ४ चारक, खड्ड। ५ चंगरेजी पाठगानाकी  
एक कथा, चंगरेजी मदर्मेका एक दरजा।

इष्टरी (सं० स्त्री०) पक्षाक्षविशेष, किसी किष्मके  
पके अनाजकी यमी बीज।

इण्डिया (सं० स्त्री० = India) भारतवर्ष, हिन्दुस्थान।

इण्डोन्य (सं० पु०) कुरी, चाकू।

इण्ड (डे० स्त्री०) मुञ्जापत्र, मूँजकी चट्ट। कड़ा ही चूल्हे से उतारते समय यह हाथमें सपेट लेनेके काम आता है।

इण्डेरिका (सं० स्त्री०) वटिका, नाटो, भौरिया।

इत् (सं० त्रि०) एतीति, इ-क्तिप्। देखने-देखते लक्ष्मी लानेवाला, जो बातकी बातमें सड़ जाता हो। व्याकरणका प्रयोग साधनेके लिये जो अक्षर आते ही चल जाता, वह इत् कहा जाता है।

इत- (सं० त्रि०) इ-क्त। १ मत, गुञ्जरा हुआ, मया-बोता। (स्त्री०) भावे वयम्। २ गमन, चाल। ३ भ्रान्, समझ। ४ प्राप्ति, याफ्त। (हिं० त्रि० वि०) ५ इस ओर, इधर, यहाँ।

इतः, इतव् देखी।

इतःपर (सं० अव्य०) इसकी पोछे, इसकी बाद, इसपर।

इत-उत (हिं० त्रि०-वि०) १ इधर-उधर, जहाँ-तहाँ। (पु०) २ छल फुरेव।

इत ऊति (वे० त्रि०) इस ओरसे लम्बायमान, जो इधरसे फैला या पड़ूँचा हो। २ भविष्यत्, वर्तमान समयसे चविक स्यायी, आयिन्दा, जो जमाना-हालसे व्य,दा ठहरता हो।

इतना (हिं० वि०) एतावत्, इस कदर, इत्ता, इतक।

इतनी, इतनी देखी।

इतम (सं० त्रि०) अन्य, दूसरा, और।

इतमाम (सं० पु०) पूर्णता, कामाल, पूरापन।

इतमीनान् (सं० पु०) १ सन्तोष, चाराम, ठारस। २ वन्द्यक, जमानत।

इतमीनान् करना (हिं० त्रि०) विश्वास मानना, खुश रहना।

इतमीनान् खातिर होना (हिं० त्रि०) सन्तुष्ट रहना, यकीन् रखना।

इतमीनान् न करना (हिं० त्रि०) सन्देह रखना, यकीन् न लाना।

इतमीनान् होना (हिं० त्रि०) सन्तुष्ट रहना, खुशी मनाना।

इतमीनानी (सं० वि०) विश्वस्त, एतवारी, जिसमें यकीन् रहें।

इतर (सं० त्रि०) इना कामिन तरति तीर्यते, इतं प्राप्तं रातीति; इत-रा-क, इ-तृ-अप् वा अच्। १ नीच, कमीना। २ अन्य, दूसरा। ३ अवशेष, बाकी। इतरजन (सं० पु०) इतरचामी जनसंघति, कर्मधा०। जन साधारण, आम लोग।

“कथा चरयते वयं माता विमं पिया सुतम्।

माथवाः कुलमिच्छति निदात्रमितरे जनः॥” (चक्रीति)

इतर जाना (हिं० त्रि०) देख्यके विरुद्ध प्रथम हो समाचार पाना, डाकुवोंको खबर पडले ही लगना।

इतरतः (सं० अव्य०) विभिन्न रीतिसे, दूसरे तोरपर।

इतरथा (सं० अव्य०) इतर-थाल्। प्रकारवत्ने पान्, वा प्रथम। विपरीत, बरबस, ज़िदसे।

इतरविशेष (सं० पु०) इतरस्मान् विशेषः, ५-तत्।

अन्य प्रमेद, दूसरा फकूँ।

इतरा (सं० स्त्री०) ऐतरेयको माता। ऐतरे देखी।

इतराजी (हिं० स्त्री०) विराध, एतराज, अनहन।

इतराना (हिं० त्रि०) अभिमान देखाना, ठसक करना; अपनेको बड़ा समझना।

इतराइट (हिं० स्त्री०) अभिमान, गु, रु, ठसक।

इतरीफल (हिं० पु०) भवलेह दिग्गेष। इसमें चावल, धनिया और गड़द डालते हैं।

इतरेतर (सं० वि०) इतर इतर निपातनात् इन्द्रम्।

अन्योन्य, सुतफुरिक, भलग, दो-चार।

इतरेतरकाम्या (सं० स्त्री०) १ अन्योन्य वासना, सुतफुरिक खयाल।

इतरेतरयोग (सं० पु०) १-तत्। १ परस्पर सम्बन्ध, आपसका तात्क। २ इन्द्रनामक समास, इसमें परस्पर पदार्थका योग रहता है।

इतरेतरामाव (सं० पु०) अन्योन्याभाव, एकका दूसरेसे न मिलना। घटका पट और घटका घट न होना इतरेतरामाव है। अन्योन्याभाव देखी।

इतरेतराश्रय (सं० पु०) इतरेतर आश्रयति, आश्रयो-अच्। अन्योन्याश्रयरूप न्यायका दोषविशेष। अन्योन्याश्रय देखी।



इतरेद्युस् ( सं० अथ्य० ) इतर-पद्यम् । मध्यह्निकदिना ।  
ता ११११२ । अन्य दिन या समय, दूसरे रोज या वक्त ।  
इतरोही ( हिं० वि० ) सगर्भ, भगुर, इतरानिधाना ।  
इतन्नाक ( अ० पु० ) प्रायेणा, अनुसन्धान, चर्चा,  
हथाना ।

इतन्नाक रक्खना ( हिं० क्रि० ) लगना, मिन्नना ।  
इतली, इतो दीवो ।  
इतवरो ( हिं० ) इतरी इतो ।  
इतवार ( हिं० पु० ) आदित्यवार, एकगव्या, एतवार ।  
इतयेतय ( सं० अथ्य० ) इतय हित्वम् । इधर-उधर,  
इस तर्फे उस तर्फे ।

“अथोपायतवन्नामो ननु नृणां ज्ञानधैतवाम् ।

इतलइतलध्यानागितर्षे तप भावनाम् ॥” ( इतिपदम् )

इतस् ( सं० अथ्य० ) इदम् तस्मिन् । १ इस स्थानसे  
यहां, इस जगह । २ इहलोकसे, इस दुनियासे ।

इतस्ततः ( सं० अथ्य० ) इदम्-तद्-अस्मिन् । नाना  
स्थानपर, इधर-उधर, यहां वहां ।

इताति ( हिं० ) इतापन दीवो ।

इताव ( अ० पु० ) १ लोध, गुग्गुलु । २ निन्दा, मला-  
मत, भिड़को ।

इताव-विताव ( अ० पु० ) लोधयुक्त शब्द, गुश्चकी  
बात ।

इतायत ( अ० स्त्री० ) अधीनता, मातृहता ।

इतायत करणा ( हिं० क्रि० ) १ पात्रा मानगा, हुक  
बजा लाना । २ आदर देना, भुक्कना ।

इतानी, इतो दीवो ।

इति ( सं० अथ्य० ) इ-ज्ञिन् । १ अतएव, इससे ।  
२ इसी हेतु, इसी सबबसे । ३ प्रकाश रूपसे, खुले तौर-  
पर । ४ निदर्शनपूर्वक, देख-सुनकर । ५ प्रकार,  
तरफ । ६ अनुकंपसे, पक्षी बातके सुवाफिक ।  
७ समाप्तिमें, पूरा होनेपर । ८ स्वरूप, जैसे । ९ प्रक-  
रणपूर्वक, विज्ञापनमें । १० साविध्यमें, नजदीक ।  
११ नियमपूर्वक, क़ायदेमें । १२ मतमें, रायसे ।

१३ प्रत्यक्ष, सामने । १४ अवधारणपूर्वक, मोच-समझ-  
के । १५ व्यवस्थासे, सज्जवीक़ करके । १६ परामर्श  
द्वारा, नसीहतसे । १७ मानपूर्वक, इज्जतसे । १८ इसी

प्रकार, इस तरफ । १९ प्रकपमें, खोरसे । २० उपक्रम-  
पूर्वक, सिलसिलेमें । प्रकृत रूपसे इति शब्द कहे या  
विचार हुये विषयको बताता और पूर्वगामी शब्दपर  
प्रभाव डालता है । आग्रहमें यह श्रोताको समझी  
हुयी रीतिका स्मरण दिनाता है । उद्धृत वाक्योंमें इससे  
प्रमाणित होता, पूर्व विषय किसी अन्य लेखक या  
अन्यकारका कहा है । कभी-कभी इति एक ही  
विषयके विभिन्न शब्द जोड़ता है । किसी अन्यकारके  
नाममें समझने यह क्रियाविशेषण हो जाता है ।

( स्त्री० ) भावे ज्ञिन् । २१ गमन, चाल । २२ ज्ञान,  
समझ । २३ सुनिविशेष ।

इतिक ( सं० क्रि० ) इतं गतिरुच्यस्येति, ठम् । १ गमन  
विशिष्ट, चलनेवाला । ( पु० ) २ जातिविशेष ।

इतिकथ ( सं० क्रि० ) इति इत्थं कथा यस्य, बहुव्री० ।  
१ अथहेय, न मानने लायक । २ नष्ट, बरबाद ।  
अर्थशून्य वाक्यका वक्ता इतिकथ कहाता है ।

इतिकथा ( सं० स्त्री० ) इति इत्थं कथा । अर्थशून्य  
कथा, बेवृद्धी बात ।

इतिकरण ( सं० स्त्री० ) इति शब्द ।

इतिकर्तव्य ( सं० क्रि० ) इति इत्थं कर्तव्यम्, सुप्-  
सुपा समा० । १ नियमातुसार करने योग्य, क़ायदेके  
सुपाफिक़ किया जानेवाला । ( स्त्री० ) २ धर्म, फ़र्ज ।

इतिकर्तव्यता ( सं० स्त्री० ) इतिकर्तव्यस्य भावः,  
इति-कर्तव्य-तन्-टाप् । धर्म, फ़र्ज, वाजिबात ।

इतिकर्तव्यतामूढ ( सं० क्रि० ) आकुल, गूंगा, वना-  
हुषा, जिसे अपना काम बिनकुल समझन न पड़े ।

इतिकार्यता, इतिवर्तयता दीवो ।

इतिवर्तयता, इतिवर्तयता दीवो ।

इतिय ( वे० क्रि० ) ऐसा-यसा, एक न एक ।

इतिमात्र ( सं० क्रि० ) इति सार्थे मात्रच् । केवल  
इतना ही, इससे कम न ज्यादा ।

इतिवत् ( सं० अथ्य० ) एक ही प्रकार, एक ही  
तरफ ।

इतिवृत्त ( सं० स्त्री० ) इत्थं वृत्तम्, सुप्सुपा समा० ।  
१ पुराणशास्त्र । २ ऐसा ही चरित्र, इसी जिह्मका  
छात्र । ३ इतिहास, तबारीक़ । इतिवत् दीवो ।

इतिश (सं० पु०) एक ऋषि। इनके गोत्रापत्यको ऐतिशायन कहते हैं।

इतिह (सं० ग्रन्थ०) एवं ह' किन्तु, इन्द्र-समा०। पुराणानुसार, निःसन्देह इस प्रकार, इकीकृतमें इसी तरह।

इतिहास (सं० पु०) इतिह पुराणसं प्राप्तो अस्मिन्; इतिह-वास-वज्र, इ-तत्। पुराणस्य, प्राचीन आख्यान, तथारोच। पुराणस्य कथा ही इतिहास है। इसे अष्टा-देश शास्त्रके अन्तर्गत मानते हैं। "कथं दी यजुर्वेदः साम-वेदोऽपरादिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्रौतः श्रुताश्चतुर्वेदाणां मानि।" (यजुर्वेदीय ब्रतपञ्चम्याद्य १३।३।३।०)

उपरिक्त ब्राह्मण और अपरापर प्राचीन ग्रन्थमें इतिहास और पुराण वाक्यका उल्लेख देख अति प्राचीन कालसे इतिहास और पुराण नामके स्वतन्त्र ग्रन्थकी विद्यमानता समझ पड़ती है।

अथर्व-संहिता (१५।४।३), और कान्दोपनिषद् (७।१।१) मध्य इतिहासका उल्लेख पाते हैं। कान्दो-पनिषत् तथा कौटिल्यके अर्थशास्त्रमें इतिहास पञ्चमवेद कहकर निर्दिष्ट हुआ है। महाभारतकार छान्दोग्यपायनने कहा है—

"धर्मवैकान्तोऽपामातुपदैसधर्मनित्यम्।

पूर्वसकृदायुक्तमितिहासं प्रवचते॥"

जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका उपदेश एवं पुराणस्य कथा रहता, वह इतिहास कहाता है।

विष्णुपुराणकी टीकामें (१।४।१०) श्रीधरस्वामीने भी ऐसा और एक प्राचीन वचन उद्धृत किये हैं—

"चर्यादि बहुशास्त्रानां ईश्वर्यं चरितान्ययम्।

इतिहासमिति प्रोक्तं भविष्यत्सुधर्मसुम्॥"

ऋषिप्रोक्त बहु व्याख्यान, देवर्षिचरित तथा अद्भुत धर्मकथादि जिसमें हो यह इतिहास है।

महात्मा चाणक्यने निर्देश किया है— "पुराणमिति तन्मन्त्राधिकाराद्वर्ण धर्मशास्त्रं चर्चशास्त्रं इतिहासः।" (कौटिलीय चर्चशास्त्र) पुराण, इतिहास, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र यह सब ही इतिहास हैं।

इतिहासमें चतुर्दश फल-लाभकी कथा है; अतएव इतिहास पञ्चमवेद अन्तिम कीर्तित हुआ और इसी

लिये अरण्यातीत कालसे भारतमें इतिहासका समादर भी होता आया। ऋग्वेद तथा मन्वादि धर्मशास्त्रमें आदिदि पितृकार्यमें इतिहास और पुराण सुनानेकी जो व्यवस्था लिखी, उसका कारण भी यही है। यथा—

"आयुयता कथाः कीर्तयन्तो माइत्यानीतिहासपुराणानीत्याख्यायमानाः।"

(आयुययनऋग्वेद ४।५)

"स्वाध्यायं आध्वेयं विभे वमंशान्नापि चेद्विह।

आख्यायानोतिहासं च पुराणान्यपि विह॥" (मनु १।७१)

महाभारतमें लिखा है—

"कारण्यकच वेदेभ्यो शीघ्रधियोऽमृतं यथा।

उदानासुदृषि येषो गौरिखी चतुष्पदा॥

यथैतानीतिहासानां तथा भारतमुच्यते।

यथैव दास्येच्छाहं ब्राह्मणं पादमनन्तः॥

अथयमव्रतानं वै विष्णुं लसीपतिष्ठते।

इतिहासपुराणानां वेदं सप्तपदं धेनुम्॥" (बाहिवर्ग, १५०)

अर्थात् वेदोंमें जैसे आरण्यक, शीघ्रधियोंमें अमृत, जलाशयोंमें समुद्र और चतुष्पदोंमें गौ अथ है, वैसा ही इतिहासोंमें भारत अथ है। जो व्यक्ति आदि के समय ब्राह्मणसे इस भारतका अन्ततः एक चरण भी सुन पाता उसका दिया अन्नपान पितृताकर्म अचय होता है। इतिहास और पुराणोंके द्वारा वेदका ही अर्थ प्रकाशित होता है।

उद्धृत महाभारतीय श्लोकसे ज्ञान पड़ता, कि महा-भारत हमारा इतिहास है, इसके पूर्व भी बहुत इतिहास रहा उनमें भारत अथ इतिहास कह परिचित हुआ था। आख्यायन-ऋग्वेदके (१।४।३) "भारत-महाभारत-धर्मार्थाः" इत्यादि वचनसे मालूम होता है, उस समय 'भारत' और 'महाभारत' नाममें विभिन्न इतिहास प्रचलित था। हम प्रचलित महा-भारतसे भी जान सकते, कि पहले साधुओंकी महा-भारत प्रचलित नहीं-रहा, महाभारतमें हो है—

"चतुर्विंशतिवाहो वक्त्रे भारतवर्षिना।

७. सपाख्यानैर्विष्णु तावद्भारतं शेषते ईशः॥"

व्यासदेवने प्रथम २४००० श्लोकमयी भारत-संहिता बनायी थी। वास्तविक वर्तमान प्रचलित संस्करण-संमूहमें उस पादि संहिताकी अनेक कथा रहते भी

उपाख्यान प्रभृतिके साथ बहुत अवान्तर विषय प्रविष्ट हो जानेंसे आज महाभारतकी कितनी ही लोग इतिहास माननेसे हिचकते हैं। किन्तु जिन युरोपीय ऐतिहासिकोंके आदर्शपर हम वर्तमान कालके इतिहासका उपादान मानते, वह जानते हैं,—

“... It is evident that Freeman's definition of history as 'past politics' is miserably inadequate. Political events are more externals. History enters into every phase of activity, and the economic forces which urge society along are as much its subject as the political result. In short the historical spirit of the age, has invaded every field.” *Encyclopaedia Britannica*, 11th. Ed. (1911), Vol. XIII, p. 527.

‘दुर्मेनकी यह परिभाषा अतिशय अपर्याप्त जाती, कि इतिहासकी गणना ‘गत राजनीति’में जाती है। राजनीतिक काण्ड केवल बहिरङ्ग होते हैं। इतिहास व्यापारके प्रत्येक अंशको कूता है। निर्वाहसम्बन्धी बल राजनीतिक फलकी भांति इतिहासका विषय बन जाता है। संक्षेपमें कहनेसे सामयिक इतिहासकी शक्तिन प्रत्येक क्षेत्रपर अपना प्रभाव डालता है।’

सुतरा पाद्यात्य वर्तमान ऐतिहासिकोंके मतसे महाभारतकी भी इतिहास माननेमें कोई आपत्ति न पड़ेगी। हमारे आदि इतिहासके सार महाभारतमें ब्रह्माण्डकी उत्पत्तिसे श्यावर-जङ्गम सकल प्रकार सृष्टि-तत्त्व, देव ऋषि पित्र प्रभृति जीवका संचिह्न परिचय, भारतके प्राचीन राजवंशका विवरण, दुर्ग नगर तीर्थ-क्षेत्र प्रभृति समुदाय जीवस्थान, धर्मरहस्य, कामरहस्य, वेदचतुष्टय, योगशास्त्र, विज्ञानशास्त्र, धर्मार्थकाम-विषयक नाना शास्त्र और लोकयात्राविषयक आशु-रौद्र धनुर्वेद आलोचित है। कहनेसे क्या! वर्तमान पाद्यात्य इतिहासविद् इतिहासज्ञा जैसा व्यापकत्व और विषयनिर्धारण ठहराते, महाभारतरूप भारतके प्राचीन इतिहासमें, वैसा ही आयोजन पाते भी हैं।

जो विषय भ्रुव सत्य रहता और प्रत्यक्ष वा परोक्ष प्रमाण द्वारा प्रतिष्ठित होता, वही इतिहास बजता है। इसीसे भगवान् शङ्कराचार्यने इतिहासका प्रामाण्य मान बता दिया है,—“इतिहासपुराणमपि पीरुष्येयताम् प्रमाणा-  
भारतमृततामाकाङ्क्षते।” (शांतीसभाष्य १।१।१२)

अर्थात् इतिहास पुराणकी भी पीरुष्य समझकर प्रामाण्यान्तरमूलता वा वैदिक वाद गौणप्रमाण मानना पड़ेगा कैसे स्वीकार करेंगे। उत्तरमें शङ्कराचार्यने कहा है,—

“इतिहासपुराणमपि व्याख्यातन मार्गेण सम्भवन् मन्त्राणादवृत्तान् प्रभवति देववाचिविषयदि प्रपञ्चयितुम्। प्रत्यक्षमनमपि सम्भवति। भवति हि अस्माकमप्रत्यक्षमपि चिरकालानां प्रपञ्चम्। तथा च व्यासदीक्षी देव-  
ताभिः प्रत्यक्षं व्यवहरन्मीनि कर्तते।”

अर्थात् इतिहास और पुराण जिस भावसे व्याख्यात हुआ, मन्त्र और अर्थवाद होनेसे वह देवता, विष्णु-हृदिके प्रपञ्चनिर्णयमें समर्थ है। इसका प्रत्यक्ष-मूलक होना भी सम्भवपर है। हमारे पक्षमें अप्रत्यक्ष रहते भी प्राचीनोके लिये यह प्रत्यक्ष हुआ। इसीसे अतिमें कहा, कि व्यासप्रभृतिने देवताओंके साथ प्रत्यक्षरूपसे व्यवहार किया था।

भारतका प्राचीन ऋषिगण समझते, जो प्रत्यक्ष-मूलक वा समसामयिक लोगोंके रचित रहता और जिसकी मौलिकताके सम्बन्धपर कुछ सन्देह उठने न पाता वही प्रकृत इतिहास कहाता था।

हमारे महाभारतीय इतिहासकी मौलिकता और प्रामाणिकता आजकलकी अवस्था देख विचारनेसे नहीं बनता। उसे भगवान् शङ्कराचार्य हो अच्छो-तरह देखा गये हैं। समसामयिकी घटना सम-सामयिक मनोयी द्वारा लिपिवद्ध हुयी थी। पुरा-कालकी सकल विचित्र कथाकी जिसने परवर्ती कालमें एकत्र सङ्कलन किया, उसीने व्यासदेव वा संयहकार नाम कमा किया। हमारे प्राचीन इति-  
हासका अधिकांश विलुप्त वा विकृत पड़ जाना प्रत्यक्ष दुःखका विषय है। अतिप्राचीन भारतका विशुद्ध इतिहास दृढ़ निकालना एकप्रकार दुःसाध्य व्यापार हो गया है। इसीसे वर्तमान ऐतिहासिक महा-भारतकी इतिहास नहीं समझते। तथापि कितनी ही मित्रावष्ट रहते और प्रचित्त उपकरण बढ़ते भी भारतवर्षीय-पण्डित समाजमें महाभारत इतिहास ही कहाता है।

महाभारतीय युगके वाद भी लगातार इतिहास

अपने-अपने राजवंशके चरितार्थायक वा सूतमाग-  
धादि द्वारा लिपिवद्ध होता था। किन्तु राष्ट्रविप्लवसे  
वह समुदाय बिगड़ गया। हमारे पुराणोंमें राजवंशके  
प्रसङ्गपर राजगणका नाम और राज्यशासनकाल मात्र  
मिलता है। विस्तृत इतिहास विलुप्त होते भी हमारे  
आदि कार्यमें इतिहासपुराण भव्यपाठ करकेसे  
अवधारित रहनेपर एककाल वह मिट नहीं सका।  
इसी कारण पुराणसे प्रकृत ऐतिहासिक युगके चीज  
कदाचित्वा सम्भान लगता है।

पाश्चात्य पुराविद् वतर्मे, कि मकटुनिया-और  
फलेक्सन्दरके समयसे ही प्रकृत प्रस्तावपर वैज्ञानिक  
प्रणालीमें भारतीय इतिहास-रचनाकी सूचना पाते हैं।  
तदनुसार अनेक ही मौर्याधिपत्यकालसे हमारे भारतके  
प्रकृत ऐतिहासिक युगका आरम्भ समझते हैं। सम-  
सामयिक लिपिसे इसका प्रमाण यथेष्ट मिला, कि  
उस समय वास्तविक पाश्चात्य और प्राच्य जगत्में धारा-  
वाहिक, इतिहास रचनाका समादर बढ़ा था।  
बहुतसे लोग सोचते, कि भारतमें यवन वा यौक-  
प्रभावके फल और आदर्शसे ही नाना शिलालेखका  
उत्पत्ती होना देखते हैं। प्रवादानुसार उपाख्यान  
वा कल्पनाके हाथसे निष्कृति से उसी समय प्रकृत  
घटना छोड़ी जाने लगी और साथ ही साथ भारतमें  
विज्ञान-सम्मत इतिहासकी भित्ति पड़ी। किन्तु  
पिपरावेमें एक छोड़ित शिलालेख निकला है। उसमें  
शाक्यबुद्धके भक्ताधारपर निर्वाणके वाद लो लिखा गया,  
उससे भारतमें पारसिक वा यवन-प्रभाव-विस्तारके  
बहुत पहले समसामयिक घटना पर्यपर खुदनेको  
पक्षतिके प्रचारका निर्दर्शन स्पष्ट हाथ लगा है।  
फलेक्सन्दरसे बहुत पहले नाना भावमें विभिन्न  
देशका इतिहास लिखा जाता था। उक्त विषय महा-  
पुराण-वर्णित राजवंशके विवरणमें ही प्रमाणित  
होता। फलेक्सन्दरके समय जिन सबकल महात्मा-  
ओंने भारत आकर यहांकी कथा लिखी उनकी  
विवरणसे भी कितनी ही बात पत्ती है। फलेक्सन्दरके  
तिरोधान बाद ही मेगस्थेनिस दील्यकार्यपर पाटलि-  
पुत्रकी राजसभामें उपस्थित रहे। उन्हीं मेगस्थेनिस

पर निभर कर प्राचीन पुराविद् आरियानने लिखा  
है,—“डाइओनिमससे चन्द्रगुप्त पर्यन्त भारतीय  
राजन्यवर्गने ६०४२ वर्ष राजत्व रखा था। राजाओंकी  
संख्या एक-सौ तिरपन रही। फिर भी उक्त समयके  
मध्य तीन बार साधारणतन्त्र चला।”\* इस विवरणसे  
अच्छीतरह समझते—जिस समयसे विज्ञानसम्मत  
ऐतिहासिक युगका सूत्रपात मानते, उससे छः हजार  
वर्ष पूर्वकाल होते भी धारावाहिक रूपमें भारतका  
इतिहास लिखा देखते हैं। आजकल उसका अधि-  
कांश विलुप्त है। महाभारत और पुराणमें सोच  
छुतिमात्र मिलता है। इसी कारण, महाभारत और  
पुराण हमारे भारतके प्राचीन इतिहासका बहुत समझा  
जाता है। परन्तु कालान्तरात् स्थानसे विभिन्न सम्प्र-  
दायके जो गत-गत शिलालेख, ताम्रपत्र वा सामयिक  
इतिहास निकला, उससे भारत-पुराणका प्रभाव सुस्पष्ट  
भलका है।

आर्यभट्टों ही कहा इतिहासको व्यापकता प्रति  
विशाल और विस्तृत है। स्थावर-जङ्गम, जीव-भोज्य  
और मूर्त-पमूर्त क्या—ऐसा कोन पदार्थ जाता, जिसका  
इतिहास नहीं रहता। साहित्य, विज्ञान, दर्शन,  
तथा शिल्पकलादि सभीका इतिहास विद्यमान है।  
इससे प्राधुनिक पाश्चात्य ऐतिहासिक डाक्टर जे, टि,  
मोटपोयेलने कहा है,—

“History in the wider sense is all that has hap-  
pened, not merely all the phenomena of human life,  
but those of the natural world as well. It includes  
everything that undergoes change; and as modern  
science has shown that there is nothing absolutely  
static, therefore the whole universe and every part  
of it, has its history. \* \* \* Solids are solids no lon-  
ger. The universe is in motion in every particle of  
every part, rock and metal merely a transition stage  
between crystallization and dissolution. This idea  
of universal activity has in a sense made physics  
itself a branch of history. It is the same with the  
other sciences—especially the biological division,  
where the doctrine of evolution has induced an  
attitude of mind which is distinctly historical.”†

\* Arrian's Indica.

† Encyclopaedia Britannica, 11th ed Vol. XIII, p. 527.

इदंकार्या (सं० स्त्री०) दुरालभा ज्ञता, जवासा ।  
इदं हस (वै० त्रि०) इसमें और उसमें समूह, इसका  
और उसका अन्तर ।

इदन्तन (सं० त्रि०) अस्मिन् काले भवः, निपातनात्  
व्युत्पत्तम् । इदानीन्तन, आधुनिक, नया ।

इदन्ता (सं० स्त्री०) अस्मिन् भावः, इदम्-तत् । भङ्ग-  
व्यादि द्वारा बतानेका विषय, शिनाख्त्, पदचान ।

इदन्मकार (सं० अर्थ०) इस रीतिसे, ऐसे तौरपर ।

इदन्मथम (सं० त्रि०) प्रथमतः कार्यकारी, पहली-  
पहल काम करनेवाला ।

इदन्मय (सं० पु०) इदम्-मयत् । इसकी द्वारा प्रसूत,  
जो इससे बना हो ।

इदा (वै० अर्थ०) इदम्-दाच् वेदे निपातनात् ।  
इस समय, अब ।

इदानीं (सं० अर्थ०) इदम्-दानीम् । तत्पश्चात् । या श्रावणम् ।  
अधुना, सम्पत्ति, अब, इस समय ।

इदानीन्तन (सं० त्रि०) वर्तमान, मौजूद, नापायादार ।

इदावत्सर (सं० पु०) इदा इति वत्सरः, शाक-  
तत् । पांच संवत्सरादिके मध्य एक । संवत्सर,

परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और उदावत्सर  
पांच वर्ष होते हैं । संवत्सरमें तिल, परिवत्सरमें

यव, इदावत्सरमें अन्न एवं वस्तु, अनुवत्सरमें धान्य  
और उदावत्सरमें दौष्य दान करनेसे अधिकतर फल

मिलता है । नभोमण्डल सूर्य और चन्द्रमण्डलके  
साथ जो समग्रकाल विताता, उसमें शुक्ल प्रतिपत्की

सूर्यसंक्रान्ति पड़ने और सौर तथा चान्द्रमासका एक-  
कालीन उपक्रम लगनेसे संवत्सर आता है । फिर

सौर मास पड़नेसे वत्सरमें छः दिन बढ़ते और चान्द्र  
मास आनेसे छः दिन घटते हैं । इसी प्रकार बारह

दिनके व्यवधानसे दोनोका अथ पश्चात् भाव कम हो  
जाता है । ऐसे ही पांच वत्सर बीतनेपर दो मलमाम

पड़ते हैं । फिर षष्ठ वत्सर संवत्सर होता है ।  
समकालमें लगने और सौर तथा चान्द्रमासयुक्त रहने-

वाले वत्सरको संवत्सर कहते हैं । सौर तथा चान्द्र-  
मास आरम्भ होते जिस वत्सर विषम मास आता,  
वह परिवत्सर कहाता है ।

इदावत्सरीय (सं० त्रि०) इदा वत्सर-सम्बन्धीय,  
इदावत्सरवाला ।

इदुवत्सर, इदावत्सर देखो ।

इहत (अ० स्त्री०) शास्त्रविहित परोक्षाका समय,  
कानुनी जांचका वक्त । पतिकी मृत्यु होनेपर स्त्रीको

दूसरा विवाह करनेके लिये चालीस दिन राह देखना  
पड़ती है । इसीको इहत कहते हैं । इहतसे स्त्रीके

गर्भ रहने या न रहनेका पता लगता है ।

इहतमें बैठना (हिं० क्रि०) एकान्तमें रहना, किसी  
गुरुपरसे न मिलना ।

इह (सं० क्तो०) इन्ध भावे क्त । १. रौद्र, धूप ।  
२. दीप्ति, चमक । ३. आश्चर्य, ताज्जुब । (त्रि०) ४. निर्मल,

साफ । ५. दग्ध, जला हुआ । ६. प्रदीप्त,  
रौशन । ७. आश्चर्यमय, अनोखा । ८. अप्रतिष्ठत,

आश्रय, जो रुका न हो ।

“निविहगाराधयितुं वक्ष्यतेः ।” (भाष)

इहमन्यु (सं० त्रि०) क्रुद्ध, गुस्सेमें आया हुआ, जिसकी  
गुस्सा सजग उठे ।

इहा (सं० अर्थ०) प्रकाश, खुले तौरपर ।

इहानि (वै० त्रि०) प्रदीप्त अग्नियुक्त, जिसकी आग  
जली ।

इहवत्सर, इदावत्सर देखो ।

इहवत्सरीय, इदावत्सरीय देखो ।

इध् (सं० त्रि०) प्रदीप्त, चमकता हुआ । यह शब्द  
समासके अन्तमें आता है, जैसे—पन्नीध ।

इधर (हिं० क्रि० वि०) १. अब, यहां, इस तर्फ,  
इस राह, इस जगह । २. इहलोकमें, इस दुनियापर ।

इधर-उधर (हिं० क्रि० वि०) १. इतस्ततः, जहाँ-  
तहाँ । २. चारों ओर, सब तर्फ, नीचे ऊपर ।

३. दाढ़ने-वाये, आगे-पीछे ।

इधरसे उधर करना (हिं० क्रि०) स्थानमें परिवर्तन  
छालना, सरकाना, वेजगड़ रख देना ।

इधरसे उधर होना (हिं० क्रि०) १. खो जाना, चल  
पड़ना, लम्बो लेना । २. स्थानान्तरित किया जाना, वेतर-

तीबीमें पड़ना । ३. लुप्तकन, उलट जाना ।  
इध (सं० क्तो०) इध्तेऽग्निरनेनेति, इन्ध-भक् ।

अपि दुर्गमिदृश्यान् नृणो मयः। अ० १।१३३। १ यत्रोय समिध, होमकी लकड़ी। (पु०) २ अग्निदोषनकाष्ठ, अग्निलानेकी लकड़ी। ३ प्रियव्रतके पुत्र। (भागवत)

इन्फान्ट (सं० पु०) 'इन्फ' काष्ठ जिह्वेय यक्ष, बहुव्री०। १ अग्नि, लकड़ीकी जीम रखनेवाली भाग। २ प्रियव्रतके एक पुत्र।

इन्फ्रमेशन (सं० पु०) वृत्तादनी, लकड़ी काटनेका कुल्हाड़ा।

इन्फ्रा (सं० पु०) 'इन्फ' समिध वृत्ति, 'इन्फ' वृत्ति-विष्णु। अगस्त्यके पुत्र इन्द्रस्यु। महातेजा अगस्त्यके पुत्रने बाष्पकाल होसे पिष्टभवनमें रहने और पिताके होमकाष्ठका भार उठानेसे इन्फ्रा नाम पाया है।

इन्फ्रा (सं० स्त्री०) प्रकाशन, सुलगाव।

इन्फ्र (सं० पु०) इन्फ्रोति गच्छतीति, इन्फ्र-नक्। इन्फ्रि-लोचयित्री गङ्। अ० १।२। १ राजा, बादशाह, नवाब। २ प्रभु, मालिक। ३ सूर्य। ४ हस्तानन्तर। ५ ईश्वर (वे० त्रि०) ६ योग्य, लायक। ७ शक्तिमान्नी, ताकत-वर। ८ प्रयित, मशहूर।

"अने राजानो यतिरिगः उदीनां सखा।" (अ० १।१।१०)

(हिं० सर्व०) ८ 'इन्फ'का बहुवचन।

इन्फम (सं० स्त्री०=Income) अर्थप्राप्ति, आम-दनी, कमायी।

इन्फम टैक्स (सं० स्त्री०=Income-tax) अर्थप्राप्ति-का शुल्क, आमदनी पर लगनेवाला महसूल।

इन्फार (अ० पु०) १ निषेध, नहीं। २ प्रत्याख्यान, खिलाफ वधानी। ३ मनिभेद, नाराजी। ४ निवर्तन, दस्तवरदारी। ५ आक्षेप, एतराज।

इन्फार करना (हिं० क्रि०) १ निषेध निकालना, न मानना। २ प्रत्याख्यान पङ्कचाना, झुटलाना। ३ निवारण लगाना, इजाजत न देना। ४ अपङ्गव भड़ाना, दस्तवरदार होना। ५ विरोध बढ़ाना, बात काटना। ६ परित्याग देना, छोड़ना।

इन्फार करनेवाला (हिं० पु०) वाधक, अपवाधक, सुनकरि, सरकार।

इन्फार दावा (अ० पु०) स्वत्वप्रतिपादननिषेध, सुता-संघेसे दस्तवरदारी।

इन्फिकाक (अ० पु०) परिक्रय, उधार, खलासो, झुटकारा। कानूनमें यह शब्द बन्धक छोड़नेका अर्थ रखता है।

इन्फिक्सा (अ० पु०) निर्णय, निष्पत्ति, फैसला, चुकोता।

इन्फ्लूयेन्सा (अं० पु०=Influenza) प्रसू श्लेष्मा, गहरा जुकाम। यह एकाएक उत्पन्न हो जाता और साथ ही अशक्त बना देनेवाला स्वर बढ़ जाता है। इन्फ्लूयेन्सा प्रायः महामारीका रूप बनाता और समाजके अनेक व्यक्तियोंपर शोत्र अपना प्रभाव जमाता है।

इन्फ्रा (अ० स्त्री०) १ लिपि, लिखावट। २ भाषा-सरणि, इवारत।

इन्फ्रिस्ट्र (अं० स्त्री०=Institute) १ विधि, नियम, जायदा। २ समाज, पञ्चमन।

इन्फ्रुमेण्ट (अं० पु०=Instrument) १ यन्त्र, भासा, हथियार। २ कारण, मन्त्र। ३ कारक, अक्षर-द्विमयानी, विचौलिया। ४ शेषवत्त, कषाला।

इन्फ्राफ (अ० पु०) धर्म, न्याय, पदल, दियागत-दारी।

इन्फ्राफ करना (हिं० क्रि०) न्याय निकालना, दाद देना।

इन्फ्राफ चाहना (हिं० क्रि०) न्याय मांगना, दावे-दार होना।

इन्फ्राफसे (हिं० क्रि० वि०) न्यायपूर्वक, व-इन्फ्राफ, ठीक-ठीक।

इन्फेक्टर (अं० पु०=Inspector) निरीक्षक, निगह-वान्, देखने-सुननेवाला अफसर।

इन्फेनी (सं० स्त्री०) वटपत्री वृक्ष।

इन्फाम (अ० पु०) १ पारितोषिक, कामका फल। २ प्रीतिदान, शुकाराना, भेंट।

इन्फाम-इकराम (अ० पु०) दान-दायिष्णु, आम-पान। इन्फामका पेसा (हिं० पु०) पारितोषिक वृत्ति, पन्-टेका मत्ता।

इन्फामदार (अ० पु०) निष्कर भूमिका अधिपति, विलगाव जमीनका मालिक।

इनाम देना ( हिं० क्रि० ) पारितोषिक बांटना, पलटा पड़वाना ।

इनाम पाना ( हिं० क्रि० ) पारितोषिक मिलना, कामका नतीजा निकलना ।

इनायत ( अ० स्त्री० ) १ अनुग्रह, मेहरबानी ।  
२ साहाय्य, मदद ।

इनायत करना ( हिं० क्रि० ) १ देना, बख्शना ।  
२ छपा देखाना, मेहरबानी लाना ।

इनायत रखना ( हिं० क्रि० ) छपा देखाना, मेहरबानीकी नजर डालना ।

इनायती ( अ० वि० ) दिया हुआ, जो बख्शा गया हो ।

इनारा, इतरा देहो ।

इतु ( सं० पु० ) गन्धर्व विशेष ।

इने-गिने ( हिं० क्रि० ) अल्प, परिमित, चन्द, थोड़े, भूले-भटके ।

इन्तिकाम ( अ० पु० ) प्रत्य प्रकार, बदला ।

इन्तिकाम लेना ( हिं० क्रि० ) प्रत्य प्रकार पड़वाना, बदला चुकाना ।

इन्तिकाल ( अ० पु० ) १ स्थानान्तर प्रापण, तहवील ।  
२ प्रवासन, जलावतनी, देशनिकाला । ३ उत्सारण, सरकाव । ४ समर्पण, पड़वाना । ५ मृत्यु, मौत ।

इन्तिजाम ( अ० पु० ) १ रचना, भारास्तगी, सजावट । २ प्रणयन, काररवाही । ३ उपाय, तदबौर, ठग । ४ राजव्यवस्था, कानून । ५ विधि, कायदा ।

इन्तिजाम खानगी ( अ० पु० ) गृहचरणा, घराबू सजावट ।

इन्तिजार ( अ० पु० ) अपेक्षा, भरोसा ।

इन्तिजार करना ( हिं० क्रि० ) अपेक्षा रखना, राह देखना ।

इन्तिहा ( अ० स्त्री० ) अत्यन्तता, परमावधि, अखीर, बिनारा, खीर ।

इन्तिहा—ताजकोह सुयहा । इसका ध्यानयन प्रकारादि नीलकण्ठ-ताजकर्म लिखा है—सुयहा अपने-अपने जन्म लगनेसे प्रतिवत्सर क्रमशः एक-एक स्थान भोग करती है । सूर्य तटगत एवं शरद्वर्ष हो खं-खं

जन्म लगनेमें व्याप नचत्रगणसे प्रथम पड़ता है । इन्तिहा प्रत्यह अनुपाद क्रमसे शरलितके साथ बढ़ती है । किसी-किसीके मतानुसार यह मासमें छह पंचपर व्याप्त होती है । खामिसौम्यतामें सौम्यता रहती और छत दृष्टिसे भय तथा रोगकी दृष्टि लगती है । इसके भावावलोकनका फल वर्षलग्नमें सुखप्रद और अन्वरीपुरन्धमें चशम निकलता है । पुण्यकर्म एवं चायगामी होनेसे सुयहा खामित्व और अपुण्यकर्म पड़नेसे उद्यमयश धन देती है । यह शरीरस्थ होनेसे शत्रुचय, मनसुष्टि लाभ, प्रतापवृद्धि, राजप्रसाद, शरीर पुष्टि, विविध उद्यम और सुखप्रदान करती है । अर्थ-भावमें पड़नेसे सुयहा उत्साहके साथ धर्म लाती, यशः फेलाती, बन्धु मिलाली, मान बढ़ाती, उत्तम खाद्य पड़वाती और सुख प्रभृति उपजाती है । पराक्रम हेतु वित्त, यशः एवं सुखप्राप्ति और सौन्दर्यसुख, देवता-ब्राह्मणभक्ति तथा दूसरेके उपकारकी प्रवृत्ति होती है । इसके छतीय लग्नमें जानिसे शरीर पुष्ट पड़ता, कान्तिका प्रभाव बढ़ता और राजाध्यय हाथ पड़ता है । इन्तिहाके सुखभावमें पड़नेसे शत्रुभय, आक्षेप विरोध, मनस्ताप, निरुद्यम, लोकापवाद, पीड़ाभार और दुःखकी दृष्टि होती है । जब यह पक्षम स्थानमें आती; तब सद्वृत्ति सौख्य, पुत्र, धन, प्रताप, विविध विलास, देवता-ब्राह्मणभक्ति एवं राजप्रसाद बढ़ाती है । सुयहाके अरिगत होनेसे पक्षमें क्लम पैठता, शत्रु बढ़ता, भय लगता, रोग उपजता, और चढ़ता, राजा भड़कता, कार्य विगड़ता, धर्म घटता, दुर्वृत्तिका प्रभाव पड़ता और अनुताप उठता है । अरमें जानेसे यश स्त्रीपुत्रादि, व्यसन लगती, शत्रुभय देखाती, उत्साह घटाती, धन एवं धर्म विगाड़ती, शारीरिक पीड़ा उपजाती और मोह तथा विरह चेष्टा लगती है । सुयहाके अत्युत्थ होनेसे शत्रु तथा चोरका भय लगता, धर्म एवं धर्म घटता, अत्यन्त शोक उपजता, पीड़ाका प्रभाव पड़ता, सैन्य विगड़ता और दूरदेश जाना पड़ता है । भाग्यगत होनेसे यह प्रभुत्व बढ़ाती, धनोपाजन कराती, राजाके निकट आनन्द उठाती, स्त्रीपुत्र सुखलाम देती,

देवादि-भक्ति उपजाती; यशः पैलातो और धन मिल-  
वाती है। अस्वरस्थ सुयहामें राजप्रसाद, लोकोप-  
कार, सत्कर्मलाभ, देवादि-भर्चन, यशः और धन  
होता है। इसके लाभगत-जानेपर विलास, सौभाग्य,  
आरोग्य, सन्तोष, राजसेवामें धन, सद्बन्धु और पुत्रादि  
मिलता है। सुयहाके व्ययमें धानसे अधिक व्यय,  
कुसंस्मरण, रोग, कार्यनाश, धर्म एवं धर्मद्वय और सद्-  
व्यक्तिके साथ देर बढ़ता है। इसी प्रकार क्रूर तथा  
क्षुत्-दृष्टिसे भी इन्धियाका फल शुभाशुभ होता है।  
शिवसे युक्त वा दृष्ट होनेपर यह राज्य, महल और  
अतिशय गुणप्राप्ति करती है। महलसे सुयहाके युक्त  
वा दृष्ट होनेपर पिता एवं उष्य बढ़ता, अस्त्राघात  
लगता और रक्तप्रकोप बढ़ता है। शनिके विषयमें  
भी उक्त ही फल मिलता है। सोमसे युक्त वा दृष्ट  
होनेपर यह धर्म, यशः, आरोग्य, और सन्तोष बढ़ाती  
है। पापग्रहके साथ सुयहा रहने दुःख उपजता है।  
सुध वा शुक्ल युक्त अथवा दृष्ट होनेपर यह स्त्री, सद्बुद्धि,  
सुख, धर्म और अतुल योगलाभ करती है। उद्वेगस्थितिके  
साथ सुयहा जाने वा तत्पक्ष नृचक्षुसे देखे जानेपर स्त्री,  
सद्बुद्धि, पुत्र, सुख, स्वर्ण, रौप्य, यज्ञ, मणि और  
मुक्तादि लाभ होता है। शनिके दृष्टमें पढ़ने अथवा  
उसके द्वारा देखे जानेपर यह घातरोग, मानभङ्ग और  
अग्नि धनक्षयादि करती है। किन्तु गुणयोगसे धन  
मिलता है। राहुसे युक्त वा दृष्ट होनेपर सुयहा धन,  
यशः, सुख, धर्म और उन्नत भाव बढ़ाती है। चन्द्रयोगसे  
सत्पद और स्वर्ण रत्नादि प्राप्त होता है। राहुके भोग्य  
एवं दृष्टगत लव और सप्तम नक्षत्रयुक्त पुच्छकी देखकर  
शुभाशुभ फल कहना चाहिये। सुयहाके शुभदृष्ट एवं  
राहुपुच्छ गत होनेसे आपद आती और यत्नभय तथा  
दुःखकी मात्रा बढ़ जाती है। पापयोगमें दर्शनसे  
अर्थ और सुख विगड़ता है। जो जन्मकालमें बन्धी  
और वंशपरान्तमें दुर्बल होता, उसके लिये एक ही  
अशुभ ठहरता है। जिसकी दोनों और समान पड़ती,  
उसके फलकी सीमांसा भी नहीं घटती-बढ़ती। घट-  
घटम वा शेष अथवा इसी पृथिवीपर इन्धियाधिपतिके  
जन्मगत किंवा क्रूर होनेसे अष्टदश अशुभ मिलता करता

है। यह क्रूरतायशः चतुर्थ यदि अस्तगत महलजनक  
नहीं पड़ती, तो रोगद्वि और धनक्षानि होती है।  
अष्टमाधिपके साथ सुयहा युक्त और अष्टदश सुताय  
दृष्टिसे शुभ न होनेपर दोनोंमें मरण तथा एक योगमें  
मरणतुल्य क्रोध मिलता है। सुयहा वा उसका  
अधिप जन्ममें शुभलक्षणयुक्त पढ़नेसे वर्षारम्भ पर शुभ-  
दायक और वर्षके पीछे अशुभ है।

इन्दुस्वर (सं० स्त्री०) नीलपद्म, चाखानी कमल।

इन्दर (हिं०) इन्द्र देव।

इन्दव (हिं०) इन्द्र देव।

इन्दुस्वर (सं० स्त्री०) इन्द्र बहुभूषण अस्वर नील-  
वस्त्रमिव, उप० कर्मधा०। १ नीलपद्म, चाखानी  
कमल। (पु०) २ अमर, भौरा।

इन्दि (सं० स्त्री०) इन्दि-इनि वा डीप्। लक्ष्मी, दौलत।

इन्दिन्दिर (सं० पु०) इन्दि-किरच् निपातनात्।  
मधुप, भौरा।

इन्दिया (अ० पु०) १ मत, राय। २ मनोयोग,  
मनुष्य, इरादा। (सं० स्त्री०=India) ३ भारतवर्ष।  
इन्दिरा (सं० स्त्री०) इन्दि-किरच्-टाप्। लक्ष्मी,  
विष्णुप्रिया।

इन्दिरामन्दिर (सं० पु०) १ इन्दिरायां मन्दिरं  
आश्रय-इव। विष्णु, लक्ष्मीपति, भगवान्। (स्त्री०)  
२ लक्ष्मीदृष्ट।

इन्दिरालय (सं० स्त्री०) १ इन्दिरायाः आलयः, ३-तत्।  
नीलोत्पल, लक्ष्मीके रहनेका स्थान पद्म। २ लक्ष्मीदृष्ट।

इन्दिरावर (सं० स्त्री०) इन्दिरायाः त्रयीयाः वरं  
प्रियम्। नीलपद्म, आशुमान्नी कमल।

इन्दी, इन्दि देवी।

इन्दोवर (सं० स्त्री०) इन्दि-डीप् इन्दी तस्याः वरं  
वरणीयं प्रियम्। १ नीलपद्म, आशुमान्नी कमल।  
२ साधारण उत्पल, मामूली कमल। ३ पद्मलता,  
गुलाब का झाड़।

“इन्दोवरचन्द्रावाम्” रामं कमललोपपम्।” (रामायण)

इन्दोवरा, इन्दी देवी।

इन्दोवरिणी (सं० स्त्री०) इन्दोवराणां समूहः, इन्दि-  
डीप्। पद्मलता, कमलकी वन।



इन्दोवरी ( सं० स्त्री० ) इन्दोवरमस्त्यस्याः, च-  
होप। १ शतमूली, सतावर। नीलपद्म सदृश पुष्प  
निकलनेसे शतमूलीका नाम यह पड़ा है। २ अज-  
शृङ्गी, मेढासींगी। ३ इन्द्रचिर्मट्टी, कुंदुरु। ४ कदलो-  
हृद्य, केला।

इन्दोवार ( सं० पु० ) नीलपद्म, आसूमानो कमल।  
इन्दु ( सं० पु० ) उमस्ति अमृतधारया भुवः क्षितिर्वा  
करोति, चन्द्र-उ। चन्द्रो रिचादिः। उष १।१। १ चन्द्र, चांद।  
“यमसि तव तुवेन्दुं पूर्णचन्द्रं विहाय।” (यद्धारणिकवच) २ मृग-  
शिरा मन्त्र। इस मन्त्रका देवता चन्द्र है। ३ एक  
संख्या, एकायी। ४ कपूर, काफूर।

इन्दुक ( सं० पु० ) इन्दु स्वार्ये क। अशमन्तक वृक्ष।  
इसके तन्तुसे ब्राह्मण धपनी मौखी-मिखला बनाते हैं।  
इन्दुकक्षा ( सं० स्त्री० ) इन्दोयमदस्य कक्षा। राशि-  
चक्रस्य चन्द्रमण्डल। चन्द्रकक्षाका परिमाण ३२४०००  
योजन है। चन्द्र देखी।

इन्दुकमल ( सं० स्त्री० ) इन्दुरिव गुल्लं कमलम्,  
उप० कर्मधा०। गुल्लकमल, कुसुद, बघोला, कोका-  
बेली।

इन्दुकर ( सं० पु० ) चन्द्रकिरण, चांदनी।

इन्दुकला ( सं० स्त्री० ) इन्दोः कला अंगः। चन्द्र-  
रेखा, चांदका सोलहवां हिस्सा। इन्दुकी सोलह-  
कला यह हैं,—१ पूषा, २ यशा ३ सुमनसा, ४ रति,  
५ प्राप्ति, ६ हृति, ७ कृत्ति, ८ सौम्या, ९ मरीचि,  
१० अंशुमालिनी, ११ अङ्गिरा, १२ शशिनी, १३ ज्ञाया,  
१४ सम्पूर्णमण्डला, १५ तुष्टि और १६ अमृता।

चन्द्रकी प्रथम कला अग्नि, द्वितीय सूर्य, तृतीय  
विश्वे देवगण, चतुर्थ वरुण, पञ्चम वषट्कार, षष्ठ इन्द्र,  
सप्तम स्वर्गीय ऋषि, अष्टम विष्णु, नवम यम, दशम  
वायु, एकादश उषा, द्वादश अग्निष्वात्तादि पित्रगण,  
त्रयोदश कुबेर, चतुर्दश शिव और पञ्चदश ब्रह्मा पी  
जाते हैं। किन्तु पौड़स कला सर्वदा ही जलमें प्रविष्ट  
रहती है। ओषधियों परिणत होनेसे अमावस्याको  
चन्द्र देख नहीं पड़ता। फिर उक्त ओषधि मोचर  
लेती हैं। इससे दुग्ध और हृत उपजता है। उसी  
दुग्धघृतादिसे ब्राह्मण यज्ञ करते हैं। यज्ञके फलसे

अमृत निकलता है। अमृतसे फिर चन्द्रकला पूर्ण  
हो जाती है। (काव्यावयव)

इन्दुकलावटिका ( सं० स्त्री० ) वैद्यकीय औषध  
विशेष, दवाकी एक गोली। शिलाजतु, लोह एवं  
स्वर्ण समभाग डाल तुलसीके रसमें घोंटे। घीर रत्नो-  
रत्नीकी गोली बना डाले। यह मसूरिका, विस्कोटक,  
लोहितज्वर, सर्वप्रकार त्रण घीर शीतला रोगके लिये  
विशेष उपकारी होती है।

इन्दुकलिका ( सं० स्त्री० ) इन्दुरिव शुभ्रा कलिका  
यस्याः, बहुव्री०। १ केतकी वृक्ष, केवडेका पेड़।  
२ खेत केतकी।

इन्दुकान्त ( सं० पु० ) इन्दुः कान्तः मनोज्ञः यस्य,  
बहुव्री०। चन्द्रकान्त मणि, हजर-उल-कमर, चन्द्र-  
गांठ। २ चन्द्रकला।

इन्दुकान्ता ( सं० स्त्री० ) इन्दुः कान्तः पतिः यस्याः,  
बहुव्री०। १ रात्रि, रात। इन्दुः कान्तश्च प्रकाशक-  
त्वात् यस्याः। २ केतकी, केवड़ा। ३ चन्द्रप्रिया,  
रोहिणी।

इन्दुखण्डा ( सं० स्त्री० ) कर्कटशृङ्गो, कण्डासोर्गो।

इन्दुचन्दन ( सं० स्त्री० ) हरिचन्दन।

इन्दुज ( सं० पु० ) इन्दोः जायते, इन्दु-जन-उ। ताराके  
गर्भसे चन्द्र कर्कटक उत्पादित बुधपद, दधोर-फलक।  
चन्द्रने राजसूययज्ञ करनेपर विवेकशून्य वन वृक्षस्थिति-  
की स्त्री ताराकी हरण किया था। देवतावर्गके यह  
घात बतानेपर ब्रह्माने स्वयं ताराको ले जाकर वृक्ष-  
स्थतिके हाथ सौंपा। वृक्षस्थतिने ताराको गर्भवती  
देख कहा था,—हमारे घरमें रहकर तुम इस गर्भकी  
कभी रख न सकोगी। ताराने स्वामीके वाक्यानुसार  
तत्तत्क्षण गर्भस्थ पुत्रकी निकाल जनस्तम्भपर फेंक  
दिया। सद्यप्रसूत कुमार शरस्तम्भपर पड़ते ही ज्वलन्त  
अग्निके समान चमकने लगा था। उसका रूप देख  
देवतावांनि भी हार मानी। ब्रह्माने तारासे पूछा,  
कि वह पुत्र किसका था—चन्द्र या वृक्षस्थिका।  
ताराने अतिकष्टसे शिरः कुकाकर कहा, कि पुत्र  
चन्द्रका रहा। उस समय चन्द्रने पुत्रकी गोदमें  
ले बुध नाम रखा था। (हरिवंश २। ५०)

इन्दुजनक (सं० पु०) इन्दोयन्द्रस्य जनकः । १ शक्ति-  
मुनि । शक्तिगत शक्त देवी । २ समुद्र । समुद्रमन्थनसे चन्द्र-  
निकला है । (भारत वादि १८ व०)

इन्दुजा (सं० स्त्री०) इन्दोजाता, इन्दु-जन्म-ह-ट्याप् ।  
नर्मदा नदी ।

इन्दुदल (सं० पु०) चन्द्रकला, चांदका सोलहवां  
हिस्सा ।

इन्दुपत्र (सं० पु०) भूर्जपत्र, भोजपत्रका पेड़ ।  
इन्दुपत्र, इन्दुज देखो ।

इन्दुपुष्पिका (सं० स्त्री०) इन्दोरिव शुक्लं पुष्पं यस्याः,  
वह्व्री० । लाङ्गलीहृद्य, मारियलका पेड़ ।

इन्दुपौदकौ (सं० स्त्री०) -वेजिका, किमी किमकी  
बेल ।

इन्दुफल (सं० पु०-स्त्री०) चाम्रातक, चामड़ा ।

इन्दुम (सं० स्त्री०) १-तत् । १ मृगशिरा नक्षत्र ।  
२ मृगशिरा नक्षत्रका खामी चन्द्र । ३ कर्कटराशि ।

इन्दुमा (सं० स्त्री०) इन्दुना भाति, इन्दु-भा-ह-भाप् ।  
१ कुसुदिनी, कोकाविली । २ चन्द्रकिरण, चांदनी ।

इन्दुभूषण (सं० पु०) इन्दुना भूषति, इ-तत् । नील-  
पद्म, आसुमानी कमल ।

इन्दुभृत् (सं० पु०) इन्दुं विभर्ति, इन्दु-भृ-क्षिप् ।  
महादेव, चन्द्रको सर्वदा कपालपर धारण करनेवाली  
शङ्कर ।

इन्दुमणि (सं० पु०) इन्दुमिवो मणिः, शाक-तत् ।  
१ चन्द्रकान्त, हजर-उल्-कमर, चन्द्रगाँठ । इन्दुरिव  
शुभ्रा मणिर्वा । २ सुता, मोती ।

इन्दुमण्डल (सं० स्त्री०) इन्दोर्मण्डलम्, इ-तत् ।  
चन्द्रविम्ब, चांदका चिरा । चन्द्रमण्डलका परिमाण  
४८० योजन है । (विद्यान शिरोमणि)

इन्दुमत् (सं० पु०) इन्दुर्विद्यतेऽत्र, इन्दु-मत्तप् ।  
१ रात्रि, रात । २ शिव । ३ मयूर । ४ पूर्णिमा ।  
(यै०) ५ अग्नि ।

इन्दुमती (सं० स्त्री०) -मगस्तः इन्दु विद्यतेऽस्याः ।  
१ पूर्णिमा । २ अजराजकी पत्नी और विदर्भराजकी  
भगिनी ।

इन्दुमुखी (सं० स्त्री०) -पद्मिनी, कमलकी बेल ।

इन्दुमौलि (सं० पु०) इन्दुः प्रीतिजनकतया मौली  
गिरसि यस्या, बहुव्री० । महादेव । तपस्यासे सुट-ही  
गह्वर सर्वदा ही इन्दुकलाको अपने मस्तकपर धारण  
किये रहते हैं । (काव्यचक्र)

इन्दुर (सं० पु०) मूषिक, चूहा । इन्दुर बिलेयय  
पर्याय मिलका रहनेवाला है । बिलमें रहनेसे इसका  
मांस वातघ्न, मधुर, हृदय, वक्त्रविण्मूत्र और वीर्याण्य  
होता है । (भाववहार) इन्दुर देखो ।

इन्दुरज (सं० स्त्री०) इ-तत् वा इन्दुरिव शुभं रजम्,  
कर्मधा० । सुता, मोती । देवता चन्द्र होने और चन्द्र-  
जसा शुभ रहनेसे सुताका नाम इन्दुरज पड़ा है ।

इन्दुरसा (सं० स्त्री०) पिष्टकभेद, चंदरसा । चावल-  
को पीस दो हिस्से चीनी मिलाते और दहीका मोहन  
छाल दूसरे दिन वीमें उसकी छोटी-छोटी पूरे सावधानसे  
पकाते हैं । यह शक्ति शीत, हृद्य और बलप्रदिकर  
होती है । (वैद्यकविषय)

इन्दुरा (सं० स्त्री०) -सोमराजो, वाकधो ।

इन्दुराज (सं० पु०) इन्दुना राजते, इ-तत् । १ चन्द्र-  
कान्तमणि, चन्द्रगाँठ । २ कुसुद, कोकाविली ।

इन्दुराजि, इन्दुरा देखो ।

इन्दुराजो, इन्दुरा देखो ।

इन्दुरेखा (सं० स्त्री०) इन्दोर्लेखेव लेखा, रय लय  
इ-तत् । चन्द्रकला, चांदका सोलहवां हिस्सा ।  
२ सोमलता । ३ सोमराजो, वाकधो । ४ गुड़ूची,  
गुर्च । ५ यमानी, अजवायन ।

इन्दुरेखा, इन्दुरेखा देखो ।

इन्दुलोक (सं० पु०) इन्दोलोकः, इ-तत् । चन्द्रलोक ।  
इन्दुलोह, इन्दुलोह देखो ।

इन्दुलोहक (सं० स्त्री०) इन्दुलोहीहम्, छाये कन् ।  
रीष्य, चांदी । चन्द्रदोषकी मानसिक लिये इन्दुलोहक  
दान करना पड़ता है ।

इन्दुलोह (सं० स्त्री०) इ-तत् । लोह-धातु, धातन,  
लोहा ।

इन्दुवटी (सं० स्त्री०) चौपधविशेष, एक दवा ।  
मिलाजस्त, अथ एव लोह एक-एक और स्वर्ण  
चौयाथी भाग कूट-पीस बढ़त्ते, शतशुली, चामलकी

है। यह उत्तरसे दक्षिण १२० मील लम्बा और ८२ मील चौड़ा है। बीचो बीच नर्मदा नदी बहती है। राज्यका दूसरा बड़ा भाग चत्ता २४° ३' एवं २४° ४०' उ० और द्रावि ७५° ६' तथा ७६° १२' पूर्वके बीच पड़ता है। यह प्रदेश पूर्वसे पश्चिम ७० मील लम्बा ४० मील चौड़ा है। प्रधान नगर रामपुरा, भानपुरा और चंदवाड़ा है। तीसरा भाग चत्ता २१° २८' उ० तथा द्रावि ८५° ४२' पूर्वपर अवस्थित और महीदपुर नगरसे संयुक्त है। चौथे भागमें चत्ता २२° १०' उ० और द्रावि ७४° ३८' पूर्वपर धीनगर विद्यमान है। कई छोटे-छोटे राज्य इन्दौरके अधीन हैं। सिवा इसके खासगो या सरकारी १५०से भी अधिक ग्राम लगते हैं। ग्राम समूह हैं। प्रायः दश लाख रुपये वार्षिक ग्रामोंका आय है।

उत्तरमें बम्बल और दक्षिणमें नर्मदा नदी बहती है। दक्षिण दिक् विन्ध्यप्रचल पर्वत खड़ा है। राज्यके मध्यकी मन्देसौर उपत्यका समुद्रतलसे छः सत हजार फीट ऊंची है। टाक, बबूल और दूसरे झाड़का जङ्गल पड़ता है। भूमि उदरा है। प्रधानतः गेहूं, चावल, बाजरा, दाल, राई, सरसों, गन्ना और रुईकी फसल होती है। अहिमेनकी कृषिके लिये भूमि अतिशय उपयुक्त है। उम्दा तम्बाकू भी बहुत पैदा होती है। जङ्गलमें साछकी वीड़ लगायी जाती है। वन्य पशुमें सिंह, चित्तवाघ, बिडाल, तरसू, शृगाल, बौलगाय, और जङ्गली भैंसा मिलता है। नरक और विषाक्त सर्पकी कीड़े कमी नहीं।

इन्दौरमें राजपंथीय महाराष्ट्र, हिन्दू, कुछ सुसन्तान और बहुतसे गोंड तथा भोल रहते हैं। सेनामें शुक्रप्रदेश और पञ्जाबके लोग अधिकांश हैं। मील बन्द्यद्रव्य खा, आखेट मार और सभ्य प्रतिवासीको लूट अपना निर्वाह करते हैं। किन्तु अब सुधपाठशालामें शिक्षा पानेसे यह पुलिस और पनटनमें अच्छा काम देने लगे हैं। लोकसंख्या दश लाखसे अधिक है।

बम्बईसे १५२ मील दूर खंडवा जङ्गलमें होलकर-पेट-रक्षये मयूकी राह इन्दौर नगरको जाती है। महाराजकी प्रतिरिक्त, लामका पर्धांश मिलता है।

१८७६ ई०का नर्मदापर पुल बंधा था। इन्दौरसे नीमचको जानिवाली पक्की सड़कपर ही मयू नगर पड़ता है। इन्दौरसे खंडवेको भी पक्की सड़क निकली है।

इन्दौर नगरमें महाराज रुईका एक पुतलीपर चलाते हैं। अक्कीम धड़ाधड़ बाहर भेजी जाती है। अन्नका चालान अधिक नहीं होता।

इतिहास—होलकर वंश गड़रिये सछाराइने सख्त रखता है। किसी गड़रियेके लड़के महार रावने इस वंशकी प्रतिष्ठा की है। वह १६८३ ई०को दक्षिणमें नीरा नदीपर होल नामक ग्राममें उत्पन्न हुये थे। करका अर्थ अधिवासी है। इसीसे इस वंशका उपाधि होलकर अर्थात् होल ग्रामका अधिवासी पड़ गया है। युवावस्था पर महार राव अपने घरका काम छोड़ किसी महाराष्ट्र पंदाधिकारीकी अम्बारोही सेनामें भरती हुये थे। १७२४ ई०की यह पेशवाके अधीन पांच सौ सवारोंके नायक बने। थोड़े ही दिनमें महार रावको कितनी ही भूमि पुरस्कार स्वरूप मिली थी। १७३२ ई०को उन्होंने पेशवाके प्रधान सेनापति बन मालवेकी सुगल स्वदेरको युद्धमें नीचा देखाया, इस विजयके उपलक्षमें महाररावको इन्दौर और जीते प्रान्तका अधिकांश सैनिक व्ययके लिये दिया गया था। १७३५ ई०की वह नर्मदासे उत्तर रहनेवाली महाराष्ट्र-सेनाके अध्यक्ष बने। फिर बारह वर्षतक महारराव सुगलोंसे लड़ने और बसरेसे पोर्तगीजोंको निकालने तथा रुईलोंसे लखनऊकी नवाबी बचानेमें सहायता पड़ते रहे। इसी बीच अधिकार और प्रभाव बढ़नेसे वह भारतीय नर्योंमें अग्रगण्य हो गये थे। १७६१ ई०को पाणिपथ युद्धसे महारराव सक्तुयल पीछे हट पाये। वह मध्य-भारत पड़ते ही अपने विशाल राज्यकी घटा सम्बद्ध और नियमित बनानेमें लगे। १७६५ ई०को महारराव स्वर्गवासी हुये। महाररावके पुत्र मासीरावको राज्यका उत्तराधिकार मिला था। किन्तु वह सिंहासनपर बैठनेके लो मास बाद ही पागल होकर मर गये। मासीरावके बाद सुमसिंह अहल्या-वाईने सेनापति तुकाराव जीके साथ

राज्यका प्रबन्ध अपने हाथ ले शान्तिपूर्वक ३० वर्षतक शासन चलाया था। १७८५ ई०को अहल्या-बाईके मरनेपर बृहद्विवादसे होलकर पंथका बल घटा। किन्तु तुकारावजीके नारजपुत्र यशोवन्त-रावने बिगड़ा काम बनाया था। एकबार भीषण रूपसे सेंधियाके साथ चारते ही उन्होंने अपनी सेना सुधारनके लिये युरोपीय अफसर नौकर रखे। १८०२ ई०को यशोवन्त-रावने पेशवा और सेंधियाकी संयुक्त सेना द्वारा पूना नगर अधिकार किया था। किन्तु वसईमें जो सन्धि हुई, उसके अनुसार यशोवन्त-रावकी सवारी इन्दौर वापस पाँची और पेशवाकी उनकी राजधानी मिल गयी। १८०३ ई०के महाराष्ट्र-युद्धसे यशोवन्त-राव अलग रहें। अन्तकी वह अंगरेज सरकारमें लड़ गये थे। पहले तो उन्होंने करनल मोनसनको पाछे हटाया और अंगरेज राज्यपर आक्रमण मारा, किन्तु अन्तकी लार्ड लेकसे हारनेपर १८०५ ई०के दिसम्बर मास बियास नदी किनारे आत्मसमर्पणकर सन्धिपत्र लिख दिया। सन्धिके अनुसार युद्धमें जीता प्रान्त अंगरेजोंकी मिला था। किन्तु दूसरे वर्ष अंगरेजोंने उनका अधिकार वापस किया। १८११ ई०को यशोवन्तराव पागल होकर मर गये। उनके लड़के महार-राव रहें, जो तुलसी-बाई नामक रानीसे पैदा हुये थे। कुछ वर्षतक राज्यमें कितना ही भगड़ा चला और पिछारी डाकुर्वीका उपद्रव बढ़ा। सेनाके विप्लव मचाने पर रानीने अपनी और महार-रावकी रक्षाके लिये अंगरेज सरकारसे सहायता मांगी थी। इसी बीच पेशवा और अंगरेज सरकारमें युद्ध लग गया। इन्दौरने भी पेशवाके साथ योग दिया था। रानीका वध हुआ और महीदपुरमें इन्दौरकी सेनाकी पूर्ण रीतिसे जीवा देखना पड़ा। १८१८ ई०को मन्दसोरमें जो सन्धि हुई, उससे कितनी ही भूमि राज्यसे निकल गयी थी। १८३३ ई०को महार-रावके मरनेपर उनकी विधवा रानीने मार्तण्ड-रावको गोद लिया। किन्तु कुछ सप्ताह बाद मार्तण्ड-रावकी निकाल हरिरावने राज्यका भार अपने हाथ उठाया था। हरिरावके समय समस्त राज्यमें अराजकताकी धूम रही। १८४३ ई०को

हरिराव मरे और उनके दत्तकपुत्र भी कुछ मास बाद चल बसे। १८५१ ई०को तुकारावजी सिंहा-सनाफट्ट हुये थे। १८५७ ई०को इन्दौरकी सेनानि अंगरेजी पोलिटिकल रेसिडेण्ट सर हैनरी वुडवुडकी घेर लिया। मुद्रिकलसे वह अपने बालबच्चोंको ले भूपाल पट्टे चले। किन्तु सेनाके कुछ समाह बाद हथियार रख देनेसे फिर शान्ति हो गयी।

१८८८ ई०को इन्दौरमें ब्रिटिश रेसिडेण्ट नियुक्त हुआ। उस समय राज्य-शासन-संक्रान्त कितने नियम परिवर्तित और मन्त्रिसभा स्थापित हुई। १८०३ ई० महाराज शिवाजीराव होलकर अपने १२ वर्षके अवस्थावाले पुत्र तुकाजी रावको-राज्यभार सौंपा। बाद १८०८ ई०को महाराज शिवाजीका परलोक हुआ। महाराज तुकारावजी इस समय वर्तमान महीप है। लब्ध ८६ की।

इन्दौर राज्यकी लोकसंख्या नो लाखसे ऊपर है।

अंगरेज इन्दौरकी रक्षा करते और दूसरे राज्यसे विवाद बढ़नेपर मिटा देते हैं। इन्दौरके महाराज दूसरे राज्यसे सोधे पदव्यवहार न चलाने, अधिक सेना न रखने, किसी युरोपीय या अमेरिकनकी अपने राज्यमें नौकरी न देनेपर बाध्य हैं। उन्हें गोद लेनेकी सनद दी गयी है। अंगरेजोंमें १८ और अपने राज्यमें २१ तोपोंकी सलामी वह पाते हैं। ३१०० मानूली तथा २१५० गैरपाबन्द पैदल और २१०० मानूली एवं १२०० गैरपाबन्द सवार रहते हैं। २४ तोपोंमें ३४० आदमी लगते हैं। महाराजको फाँची देनेका अधिकार प्राप्त है।

राज्यका धाम्य बढ़ते जाता है। इन्दौरकी रेसिडेण्टोंमें मध्य-भारतीय राजावाँके लड़कोंको शिक्षा देनेके लिये राजकुमार-कालेज बना है। किन्तु वह राज्यसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता, समस्त धन्य अंगरेज-सरकारसे मिलता है। १२से २० पर्यन्त राजकुमार शिक्षा पाते हैं। महाराजके स्कूलमें केवल दक्षिणी ब्राह्मण पढ़ते हैं। मन्दसोर और खारगावमें भी अंगरेजी स्कूल हैं।

२ इन्दौर राज्यका प्रधान नगर। यह पन्ना २२०



पण वत्स प्रस्थिति प्रधान प्रधान असुरांको भी इन्द्रने मारा था। (चर् १:१७:८, १:१९:८-१०, ४:१८:१२ इत्यादि) नमुचि-वधके समय अग्निहय एवं सरस्वतीने इन्द्रको साहाय्य दिया।

इस सम्बन्धपर एक मल्य है—

“इन्द्रोऽन्दिमद्रस रवं सोमस्य मयं सुरया चावृषे नमुचिहरत्।  
सोमिनी च सरस्वती च उपपावत्। मेपातोऽग्निं नमुचये न त्वा दिवा न  
मत्तं कृताति न हृद्येन न धन्यता न हृद्येन न सुदिवा न यच्छे च न चाद्रं च  
चर मे इदमहर्षित्। इदं मे चाग्निहोषं च। तैजसप्रत्न गोऽमायध  
आहराम इति। मङ्ग न एतद्वच आहरत इत्यहोरेदिति। तावन्मिनी च  
सरस्वती च अर्थात् नै नमनविद्यन् न यच्छो न चाद्रं इति। तैज इन्द्रो  
नमुचिहारत्पुन्युदायां रात्रौ चन्द्रिते चाग्निं न दिवा न मत्तमिति विर  
चदवाचयत्। तस्य सोमं निन्दते मोहितमियः सोमोतिष्ठन्।” (अमर-  
भाष्य १:४:७:११)

नमुचि नामक असुर इन्द्रका इन्द्रिय, असुरस और सुराके साथ सोमपात्र चपहरण कर ले गया। पीछे उन्होंने अग्निहय एवं सरस्वतीके निकट जाकर कहा, मैंने नमुचिको दिया प्रयथा रात्रिमें यष्टि, धनुः, चपेटिका मुष्टिसे मृत्क प्रयथा भाद्रं स्थानपर न मारनेका शपथ किया है। इस समय मेरी सर्व शक्ति हरण कर ली है। क्या आपलोग मेरा उद्धार कर सकते हैं? उसके बाद अग्निहय एवं सरस्वतीने जलके क्षेपसे वज्रको सिञ्चन कर उत्तर दिया, ‘यह मृत्क वा भाद्रं नहीं है। इन्द्रने उसी वज्रसे नमुचिका मस्तक खण्ड खण्ड कर डाला। उस समय रात्रि बीतनेपर भोर हो रहा था। सूर्योदय न होनेसे वह समय रात्रि दिन कैसे समझा जा सकता था। नमुचिके मस्तक-क्षेपन काल मोम रत्न मिश्रित होने पर अवज्ञा करने लगी, किन्तु पीछे सब कोई पी गये।

अथर्वसंहितामें लिखते,—इन्द्र असुरनारीके प्रेममें सुप्त हुये थे। काठकके (१३:५) मतसे यह विलिखेष्ठा नामक दानवीपर अनुरक्त रहे। ऋक्संहितामें इन्द्रकी अतिप्रिय सोमप्रिय होनेका विस्तार प्रमाण मिलता है।

इन्द्र वारिवर्षण करते और वज्र एवं विद्युत् चलाते हैं। इन्होंने असुरोंके लोहनिर्मित नगर तोड़ भस्म दह्य वा दास जातिको विनाश किया था।

पौराणिकके मतमें इन्द्रके पिता कश्यप रहे। माताका नाम अदिति था। इन्होंने त्वादि असुरोंका वध करनेसे त्वष्टा नाम पाया। इन्द्र पूर्वदिक्के पालक और सबको जलदान करनेवाले हैं।

तैत्तिरीय-ब्राह्मणमें लिखा, इन्द्रको थपर किमी देवीके रूपपर मोह नहीं हुआ। इन्होंने केवल इन्द्राणिको ही रूपपर मोहित हो पत्नी बनाया था। किन्तु पौराणिक मतसे इन्द्रने पुलोमा देव्यको मार उसकी कन्या ग्रहण की थी। वही कन्या इन्द्राणी हुई। इन्होंने दितिके गर्भस्थ पुत्रको नाश करनेके लिये खण्ड खण्ड किया, उसीसे मरुद्गणने जन्म लिया। दिगं और नक्षत्र देखो।

पारिजातके लिये इन्द्रके साथ कण्यका विवाद हुआ था। लक्ष और पारिजात देखो। वृजके गोप इन्द्रकी पूजा करते रहे। किन्तु पीछे कण्यने उस पूजाको उठा दिया था। इन्द्र क्रुध हो अनवरत जल बरसाने और वृज डवाने लगे। कण्यने गोवर्द्धन धारणकर वृजवासियोंको रक्षा की। (हरिवंश) इन्द्रके पुत्र जयन्त, ऋषभ और मोक्ष रहे। छतोय पाण्डव भर्जन भी इन्द्रपुत्र कहे जाते हैं। राज्यका प्रमरावतो, उद्यानका मन्दन, भग्नाका उद्येयवा, हस्तीका पिरावत, रथका विमान, सारथिका मातलि, धनुःका इन्द्रधनुः और भस्त्रिका नाम परब्रह्म है। इन्द्र सब देवताओंके राजा हैं। गुरुपत्नी पद्म्याकी हरण करनेसे इनके सहस्र वस्तुः हुआ। पद्म्या देखो। प्रधान भस्त्र वज्र है। एक एक मनु पर्यन्त इन्द्रका भक्षिकार रहता है। राजत्वके बाद यह १०० वर्ष पर्यन्त ब्रह्माके निकट ब्रह्मविद्या अध्ययन करते, उसके बाद कैवल्य पाते हैं। इन्द्र त्वष्टृपुत्र विग्रहरूपके वध पापसे राज्यभुक्त हुये। अनन्तर इन्होंने पाप भोग करनेपर फिर अपना राज्य प्राप्त किया था। इन्होंने पर्वतोंका पक्ष क्षेपनेसे गोवर्द्धा और १०० गत भग्नेष यज्ञ करनेसे शतक्रतु नाम पाया है। इन्द्रजि देखो। इन्द्रके नाम अनेक हैं—महेन्द्र, मल्लधनुः, ऋषभ, यष्ट, दत्तेय, वज्रपाणि, मेघवाहन, पाण्ड्यासन, देवपति, दिवस्पति, स्वर्गपति, उलूक, जिष्णु, मरुत्वान्,

उपधत्वा इत्यादि है। प्रति मन्वन्तरमें इन्द्रके नाम प्रयक्, धृयक् पढ़ते हैं—१ यष्ट, २ रोचन, ३ सत्य-जित्, ४ त्रिशिख, ५ विशु, ६ मन्वद्भुम, ७ पुरन्दर, ८ वलि, ९ श्रुत, १० शम्भु, ११ वैद्युत, १२ ऋतधाम, १३ दिवस्पति और १४ श्रुचि।

२ परमात्मा। ३ योगविशेष। ४ त्रेष्ट। ५ कुटज-हृत्। ६ रात्रि। ७ प्रथम। ८ राजा। ९ ज्येष्ठानक्षत्र। १० धनवान्। ११ अन्तरात्मा। १२ धन। १३ इन्द्रिय। १४ हन्त्वोविशेष, चौदह संख्या। १५ बङ्गालमें दक्षिण-राष्ट्रीय और बङ्गल कायस्थोंका एक उपाधि।

इन्द्रकटपभ (वे० त्रि०) इन्द्रको हथभकी भांति रखने-वाली, जिसे इन्द्र हामला बनाये। यह शब्द पृथिवीका विशेषण है।

इन्द्रक (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य धनिनः कं सुखं यत्न, बहुव्री०। १ सभाग्रह, बैठकखाना। २ इन्द्रका सुख। ३ मन्दरगिरि।

इन्द्रकर्णक (सं० पु०) रत्नैरण्ड, लाल रङ्गका पेड़। इन्द्रकर्मन् (सं० पु०) इन्द्रस्यैव ऐश्वर्यान्वितं कर्मस्य। विष्णु, इन्द्रका काम करनेवाले भगवान्।

इन्द्रकर्मा इन्द्रकर्म देखो।

इन्द्रकील (सं० पु०) इन्द्रस्य कील इव। १ मन्दर-पर्वत। यह बड़ा पहाड़ है। नाना प्रकार मणि-मुक्ता विद्यमान है। शिशुपाल-वधके समय श्रीकृष्णने पहाड़ें यहां झोड़ा की थी। २ पर्वत, पहाड़।

“न विमन्द्रीलपतुष्यप्रभासुपरिहृतम्।” (सुखत)

इन्द्रकुक्षार (सं० पु०) ऐरावत, इन्द्रका हाथी। समुद्र-मन्थनके समय इन्द्रने इस पाया था।

इन्द्रकूट (सं० पु०) इन्द्रः ऐश्वर्यवान् कूटो यस्य, बहुव्री०। एक पर्वत। यह कैलासके निकट विद्यमान है। “महासिंह सकैमार्ग इन्द्रकूटय नामतः।” (हरिवंश १०॥१५)

इन्द्रकष्ट (सं० त्रि०) क्षय भावे ऋतु तत् पक्षि यस्मिन्, अग्नौ भादित्वात् अच्; इन्द्रेण इन्द्रहेतुकं कष्टम्। इन्द्र-कार्षित, कष्टकर्म पैदा होनेवाला। दृष्टिपटुनेसे जो धान्यादि स्वभावतः उपजता, वह इन्द्रकष्ट वज्रता है।

“इन्द्रकष्टे वर्षयति धान्ये ये च नदीदुर्लभेः।” (महाभारत धर्मा ३॥१८)

‘इन्द्रकष्टः इन्द्र’ वाक्यमें तु अर्धभादि रेविकय शब्दोपेक्षः। (श्रीवक्त्र)

इन्द्रकेतु (सं० पु०) इन्द्रका ध्वज, विमानकी पताका इन्द्रकोश, इन्द्रकोष देखो।

इन्द्रकोष (सं० पु०) इन्द्र-तत्। १ मन्त्र, मन्त्रा-२ खट्वा, खाट। ३ नियुक्त, फौजीका काढ़ा। ४ गिर्या-पेड़का दूध। ५ तमहक, कच्चा।

इन्द्रकोषक, इन्द्रकोष देखो।

इन्द्रगिरि (सं० पु०) इन्द्रनामा गिरिः, शाक-त-महेन्द्रपर्वत।

इन्द्रगुप्त (सं० स्त्री०) १ उगीर, खस। (वे० त्रि०) २ इन्द्रद्वारा रक्षित, जिसके इन्द्र हिमाकृत रहे।

इन्द्रगुप्त (सं० पु०) १ वृद्धस्पति। २ कश्यप।

इन्द्रगोप (सं० पु०) इन्द्रः गोपः रक्षकः यस्य, बहुव्री० १ शकगोप, वीरबह्मटी। यह श्वेत और रक्त-दोनो प्रकारका होता है। (वे० त्रि०) २ इन्द्रक-रक्षित। (खट्वा १६॥१२)

इन्द्रघोष (सं० पु०) इन्द्र इति स्पष्टं सुत्यते, हृष-घञ् इन्द्र।

इन्द्रचन्दन (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य इन्द्रप्रियां वा चन्दन-इन्द्र-तत् वा शाक-तत्। १ हरिचन्दन, श्वेतचन्द-२ रक्तचन्दन, लाल चन्दन।

इन्द्रचाप (सं० पु०) इन्द्रे इन्द्रस्यामिके सिधे चाप इन्द्र-तत्। १ इन्द्रधनुः। इन्द्र-तत्। २ इन्द्र-धरास-इन्द्रचिर्मिटी, इन्द्रचिर्मिटी देखो।

इन्द्रचिर्मिटी (सं० स्त्री०) इन्द्रप्रिया चिर्मिटी, शा-तत्। एक लता। वैद्यशास्त्र-मतसे इसके पर्याय हैं, इन्दोवरा, युग्मफला, दीर्घवृन्ता, उन्नमारणी, गु-मञ्जरिका, द्वेणी, करभा और गलिका। इन्द्रचिर्मि-तिष्ठ, शीतल और शोषनाशक होती है। यह पि-कास, व्रणदोष और कृमिको नष्ट करती है। चतुरो-इन्द्रचिर्मिटी विशेष उपकारी है। २ इन्द्रवारुणी।

इन्द्रच्छन्द (सं० स्त्री०) इन्द्र-इव सङ्घसनेत्रेण सङ्घ-शुक्लेन कायते, छन्द-प्रसून-स्युट् निपातनात्। सङ्घ-शुक्ल-हार, हज़ार लड़ीकी माला।

इन्द्रज (सं० पु०) १ इन्द्रयव। २ कुटजहृत्।

इन्द्रजतु (सं० स्त्री०) शिलाजतु।

इन्द्रजनन (सं० स्त्री०) इन्द्रस्यात्मनः जननः दे-

सम्बन्धः कः । १ इन्द्रका जन्म । २ परमात्माका देह-सम्बन्ध विशेष ।

इन्द्रजननीय ( स० वि० ) इन्द्रजन्म-सम्बन्धीय, इन्द्रकी पैदायशका हाल-वतानेवाला ।

इन्द्रजम्बूकवत्पद्मा ( मं० स्त्री० ) कण्ठसारिका, काली सतावर ।

इन्द्रजव ( हि० ) इन्द्रजन्म दीधी ।

इन्द्रजा ( वे० स्त्रि० ) इन्द्रसे उत्पन्न, जो इन्द्रसे पैदा हो ।

इन्द्रजातु ( स० पु० ) वानरविशेष, किसी बन्दरका नाम ।

इन्द्रजाल ( स० स्त्री० ) इन्द्राणां इन्द्रियाणां जालं भावरक्तं यद्वा इन्द्रस्येश्वरस्य जालं मायेव ।

१ इन्द्रका पाय । २ युद्ध-कल्पना, जङ्गलका फरिष ।

३ कल, घोड़ा । ४ माया, हस्तलाघव, तिलक, बाजौगरी । ५ तन्त्रजाल विशेष ।

मन्त्र एवं 'द्रव्य' द्वारा किसी वस्तुकी भ्रम्य प्रकार बनाया इन्द्रजाल नामका स्वतन्त्र शास्त्र तन्त्रके अन्तर्गत है । शुद्ध उपदेश बिना इसकी गिष्ठा नहीं मिलती । इन्द्रजालमें नाना विषय वर्णित हैं—उधे दृष्टान्त स्वरूप कुछ नीचे लिखते हैं,—

१, एक प्रस्य ( २ सेर परिमाण ) महाकाल या लाल इन्द्रायणकी बीजमें धात्रीरसकी मात भावना दे और उसे गोली-जैसा बना सुखके भीतर रखें तो मनुष्य कपोत बन जाता है । २, कागलके मस्तकपर काली मट्टी रखनेसे और उसमें धूरेका बीज बीनेसे जो फूल जाता है, उसको गात्रमें लगाते ही मनुष्य बकरा बन जाता है । ३, कण्ठचतुर्दशीकी मयूरके मस्तकपर काली मट्टी चढ़ा सनका बीज डालनेसे जब फल-फूल उठते, तब उसको गलेमें बांधते ही मनुष्य मयूरका रूप धारण कर लेता है । ४, कण्ठचतुर्दशीकी मयूरके मस्तकपर काली मट्टी लगा कपासका बीज बीनेसे जब फल-फूल लगे, तब उसे कूट-पीसकर गात्रपर मलनेसे मनुष्य पानीमें नहीं डूबता और भूमिकी तरह जलपर खड़ा रहता है । ५, काली कौबिके मस्तकपर मट्टी डाल हड़ती या बटुन्तेका बीज बोये । और उसके फलको सुधमें दबा लेनेपर मनुष्य कौबिकी तरह उड़ता है, किन्तु उसे उगल देनेसे वह फिर

मनुष्य हो जाता है । ६, कण्ठचतुर्दशीको कव-तरके मध्येपर मट्टी डाल तिल बोये और दूधमें पानी मिला उधे, चीं-चता रहे । फूल निकलनेपर उसे सुधमें रखनेसे कोई उस मनुष्यको देख नहीं सकता । और उस तिलके फलको कूटपीस गात्रमें लगा देनेसे मनुष्य कछिर बन जाता है । तथा समय धन-सम्पत्ति स्वेच्छाकमसे छोड़ बैठता है । ७, फिर उसी तिलको कपिलाके दूधमें पीस गोली बनावे और सात राततक पचाता रहे । पीछे गोली सुधमें दबा लेनेसे देवता भी उस मनुष्यको देख नहीं सकते । किन्तु गोली उगल देनेसे उसको सब लोग फिर देख सकते हैं । वह सौ वर्षतक जीता है और क्या जी क्या पुरुष सब कोई उसके वश हो जाते हैं । ८, कण्ठचतुर्दशीको यकृत्तके मस्तक पर मट्टी डाल सहस्रन लगायिये और फूल पानीपर पुष्पानक्षत्रमें तोड़ कपिलाके घृतसे काजल पारिये । उस फूलकी चक्र काजलमें मिला पांशमें लगानेसे वी योजन पर्यन्त दीर्घ पड़ता है । दिनके समय नक्षत्र दृष्टिगोचर होते हैं । कंठ, गर्दभ, महिष प्रभृति बड़े-बड़े जन्तुके मस्तकपर यदि सहस्रन बोये और फल-फूल ताड़ रखे तो फिर इस फल-फूलको सुधमें डालनेसे उक्त जन्तुके जीवित हो जानेमें कोई संदेह नहीं रहता ।

उक्त मन्त्र धारणाका मन्त्र 'ॐ ह्रीं क्लीं ह्रीं ऐं लं लं ॐ भौ स्वाहा' लक्षजप करनेसे पुरस्करण और सहस्र जप करनेसे होम होता है । घृत द्वारा तर्पण और मार्जन करना चाहिये । ब्राह्मणभोजनादि करानेसे सिद्धि मिलती है ।

जबूकी खोपड़ीमें घृतसे कज्जल पार उसे पांशमें पांजनेपर भ्रम्यकारमें भी पुस्तक पढ़ सकते हैं । 'ॐ नमो नारायणाय विश्वभाराय इन्द्रजाल-कोतुकादि दर्मय सिद्धिं कुर्व स्वाहा' मन्त्र १०८ बार जपनेसे कार्यसिद्धि होती है । उक्त मन्त्र सिद्ध न होनेसे कार्यमें सफलता नहीं मिलती ।

'ॐ नमः परब्रह्म परमात्मने नम शरीरं पाणि पाणि कुर्व कुर्व' रचामन्त्र है । इसी मन्त्रसे रक्षा बांध कार्य करना चाहिये ।



हृत्सतिवारकी हाथीकी खोपड़ीमें भड़ोलका वोज वी मन्त्रपाठपूर्वक जलसेवन करे और फल लगनेपर एक वीजको त्रिलोहसे लपेट सुखमें दया ले। इस प्रक्रियासे मनुष्य हस्ती-जैसा बलवान् और वायु-तुल्य पराक्रमी हो सकता है। त्रिलोह सकल कार्यमें प्रसिद्ध है। दग भाग सोना, बारह भाग तांबा और सोलह भाग रूपा मिलानेसे त्रिलोह बनता है। महा-देवका वाष्प मिय्या नहीं,—किसी वीजको भड़ोलके वीजमें मिला मद्यमें बाँधे और फिर मन्त्र पढ़कर त्रिलोहसे लपेट उसे सुखमें रखे तो साधक बिलकुल वैसा ही बन सकता है। कई वीज भड़ोलमें मिलाकर कोनेसे उसी समय हथ लगता है। भड़ोलके फलका तैल एक विन्दु सुखमें डालनेसे सुर्दा प्रहरके मध्य ही जी उठता है।

शोभाञ्जनाका तैल, कपोतकी विष्टा, शूकर तथा गर्दभकी चर्बी, हरिताल और मन्त्रगिला एकमें मिला टीका लगानेसे मनुष्य बारण-जैसा बन सकता है।

पेचककी विष्टा एरफ्तैलके साथ रगड़ गात्रमें लगाते ही खोग पागल हो जाते हैं।

सर्पका दन्त, काले बिच्छूका कण्टक और छिप-कलो (जकलास) का रक्त एकमें पौस गात्रपर लगाते ही मनुष्य मरता है।

सिन्दूर, गन्धक, हरिताल तथा मन्त्रगिलाकी एकत्र पौस वस्त्रपर डालने और पीछे उसी वस्त्रको मस्तक पर बांधनेसे समस्त जगत् अग्निमय दीख पड़ता है।

विकीरण, वट और लड्डुस्वरका दुग्ध किसी पात्रके मध्य लगा कर जल डालनेसे दूध निकलता है।

भड़ोलके फलका तैल भक्ष्यमें मलनेसे मनुष्य बाँध-जैसा लगता है और उसे देखते ही सब कोई भय खाकर भागते हैं।

भड़ोलके फलका तैल रात्रिको प्रदीपमें जलानेसे आकाशका भूत सकल भूमिपर देख पड़ता है।

बुध वा शनिवारकी जकलास मारकर शत्रुगणके मृत्योत्सर्ग-स्थानमें गाड़ दे। पीछे उसे न उखाड़नेसे शत्रु क्षीय हो जाते हैं।

गन्धक, हरिताल, गोमूल और विष एकत्र पौस

अग्निमें छोड़नेसे समस्त विघ्न मिटता है। (दणामेयतक)

वशीकरण एवं आकर्षण-वसन्त, विहेषण शीत, स्तब्धन वर्षा, मारण शिशिर, शान्तिकर्म शरत् और उखाटनकार्य हेमन्तकी पूर्णिमाको करना चाहिये। वशीकरण देखो। दिनके पूर्वाह्न वसन्त, मध्याह्न शीत, अपराह्न वर्षा, सन्ध्या शिशिर, अर्धरात्रि-हेमन्त और फिर शरत् ऋतुका समय आता है।

पञ्चादि निर्णय—मारणादि अभिचार कथमें, और शान्ति प्रवृत्ति मङ्गलकर्म शुक्लपक्षमें करना उचित है। द्वादशी तथा एकादशीको मारण; तृतीया एवं नवमी-को वशीकरण; चतुर्दशी, चतुर्थी तथा प्रतिपत्तको स्तब्धन और द्वितीया, पछी एवं अष्टमीकी शान्तिकर्म होता है।

अश्विनी, सृगशिरा, मूला, पुष्या तथा पुनर्वसुमें वशीकरण और अनुराधा, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़ा एवं रोहिणी नक्षत्रमें मारण, विजय, शान्ति तथा स्तब्धन किया जाता है। इस सकल कायमें तिथि और नक्षत्रकी विवेचना आवश्यक होती है, नहीं तो मन्त्रादिकी सिद्धि बिगड़ जाती है।

जय—पुष्या नक्षत्रमें गोविन्दा और अपामार्गका मूल उखाड़ मस्तकपर रखनेसे सकल विवादमें जय मिलता है।

सौभाग्य—पुष्यानक्षत्रमें श्वेत विकीरणका मूल उखाड़ दक्षिण बाहुपर बांधनेसे सौभाग्य बढ़ता है।

क्रोधोपशम—“ॐ शान्ते प्रयान्ते सर्वक्रोधोपशमनी स्वाहा” मन्त्र दसोस बार जपकर जो मनुष्य सुख धोता है, उसके प्रति किसीकी क्रोध नहीं होता।

श्वेत अपराजिताका मूल हस्तपर बांधने और शिवजटाका मूल सुखमें डालनेसे हस्ती निकट नहीं आ सकता।

हठतीमूल हस्त और सुखमें धारण करनेसे व्याघ्र-का भय छूट जाता है।

“झों झों झों शौं शौं शौं स्वाहा” मन्त्र पढ़कर पत्थर फंकेनेसे व्याघ्र नतो सुख भुक्ता सकता है और न चला हो सकता है। नारिकेलमूल कृष्णचतुर्दशीकी धारण करनेसे व्याघ्रका भय नहीं होता। (इन्द्रजालतन्त्र)

स्वाभन—जिस व्यक्ति सुखमें सफेद चिरमिटीकी लज्ज रहती है उसके सामने किसीकी बात नहीं चलती।

‘ॐ ह्रीं ह्रीं रघ रघ चामुण्डे कुरु कुरु चमुकं मे चशमानय वयमानय स्वाहा’ मन्त्रसे कार्यसिद्धि होती है। रविवारकी पुष्यनक्षत्रमें यष्टिमधुका मूल उछाड़ सभामें फेंक देनेसे सशस्त्रा सुख बन्द हो जाता है।

मेघस्तम्भन—एक ईंटपर चार चतुष्कोण रेखा खींच धूसरी ईंटसे दबावे और ‘ॐ मेघान् स्तम्भय, स्तम्भय स्वाहा’ मन्त्र पढ़कर किसी वागमें गाड़ देवे तो मेघकी हटि रहती है।

मरणोपचयमें उदुम्बर प्रशस्ति चौरौहचकी मूलकी और प्रांच, अङ्गल परिमाण एकखण्ड काठकी नीकामें डाल देनेसे उसकी चाल रुक जाती है।

निद्रास्तम्भन—यष्टिमधु और हड़तीका मूल बारोक पीसकर सूधनेसे निद्रा नहीं आती।

अस्त्रस्तम्भन—कपिलका मूल क्षत्तिका-नक्षत्रमें उछाड़ धारण करनेसे देवगणका अस्त्र भी स्तम्भित होता है।

गुलचका मूल उछाड़ हस्तपर धारण करनेसे शूल-भय छूट जाता है।

‘ॐ अहो कुम्भकर्ष महाराक्षस निकषागर्भसम्भूत परसेम्यस्तम्भन महाभय रथपद्म आम्नापय स्वाहा’ मन्त्र १०८ बार जप करने और अपामार्गमूल शुभ नक्षत्रमें उछाड़ शरीरपर मलनेसे समस्त शस्त्रका स्तम्भन होता है।

पेटकी हड्डी गोष्ठकी चारो ओर भूमिमें गाड़ देनेसे गो, भेड़, मछिर, अन्न प्रशस्ति स्तम्भित हो जाती है।

सङ्कराज, अपामार्ग, श्वेत चर्यप, सहदेविका, अर्धरत्न, वध और श्वेत विकीरण्या मूल उछाड़ लौह पात्रमें रखे और दो दिनके बाद निकाले। फिर उसका तिलक लगावे और ‘ॐ नमो भगवते विश्वामित्राय नमः सर्वसुखीभ्यां विश्वामित्र-भागच्छ स्वाहा’ मन्त्रका जप करे तो सब प्राणियोंकी बुद्धि स्तम्भित होती है।

‘ॐ ब्रह्मवेगिनि शिरे रघ रघ स्वाहा’ मन्त्र पढ़कर

सात पाँसे छढाविये। उनमेंसे तीन कटिमें धावन पर और बाकी हाथमें रखनेपर चौरागति रुक जाती है।

देहरास्त्रन—कदम्बपत्र, लोधू और धर्जुनपुष्पी एकत्र पीस धनुमें लगानेसे दुर्गन्ध दूर होती है।

एला, शटी, तेजपत्र, रत्नचन्दन, हरीतकी, शोभा-स्त्रन, सुस्त्रक, कुष्ठ और धन्यान्ध सुगन्ध द्रव्य पीस गाड़में मलनेसे जो सोरभ छटता है, उससे सकल ही मोहित हो जाते हैं।

आम्र एवं जम्बुकी भाठी तथा पद्ममूल पाँच मधुके साथ रात्रिकी सुखमें रखनेसे पुरुषके सुखका दुर्गन्ध दूर होता है और सुगन्ध आने लगती है। मुरा-माँची, नागकेसर एवं कुठकी बाँटकर पन्द्रह दिन तक प्रातः तथा सन्ध्याकाल चाटनेसे स्त्रीके सुखमें कर्पूरकी गन्ध भर जाती है।

कोहवा मल, लवाणुष्य और आमलकी बाँटकर मिरःपर लगानेसे तीन मासके मध्य सफेद बाल काले हो जाते हैं।

क्षामोके दुग्ध द्वारा सात दिन पर्यन्त भावना दे तिलका तैल निकाले और फिर उसे मिरःमें लगावे तो काले बाल सफेद हो जाते हैं।

अखिनो नक्षत्रमें वटकी लोवणितका दुग्धके साथ खानेसे पुरुष बलवान् बनता है। पुष्यनक्षत्रमें विकीरण्या मूल उछाड़ गोदुग्धसे बाँटकर खानेपर सात दिनमें हथ भी शुवाके समान सूदने लगता है।

लम्बवन्ध्या-चिकित्सा—रविवारकी मूलपत्र तथा शाखा सहित गन्धनाकुली उछाड़ एकवर्ष गोके दुग्धमें धविबाहित कन्यासे पिशा चतुत्काशमें चार तोले परिमाण सात दिन पर्यन्त खावे और दुग्ध एवं मूँगकी दाल प्रशस्ति खाने पण्य खावे तो बन्ध्याके गर्भ रह जाता है। इस औषधकी खाकर उद्वेग, भय, शोक और दिवानिद्रा त्याग कर देना चाहिये। परित्यक्ता कार्य करना भी मना है। केवल पतिका सहवास रखना कहा है। अन्यथा होनेसे गर्भ नहीं रहता।

क्षुण्ण अपराजिताका मूल खानीके दुग्धमें बाँटकर चतुत्काशपर दोनेसे बन्ध्या गर्भधारण करती है।

इन्द्रतूलक, इन्द्रन दीखी।

इन्द्रतोया (सं० स्त्री०) इन्द्र ऐश्वर्यान्वितं तोयं यस्याः वा इन्द्रेण पूरितं तोयं यस्याः, बहुव्री०। गन्धमादन पर्वतके निकट बहनेवाली नदी।

इन्द्रत्व (सं० स्त्री०) १ इन्द्रका बल और वैभव, इन्द्रको ताकत और हैसियत। २ राजत्व, बादशाही।

इन्द्रत्वोत्त (वे० त्रि०) ३ इन्द्र। तेरे द्वारा रचित।

इन्द्रदत्त (सं० पु०) एकजन ग्रन्थकार। इनकी उपाधि 'उपाध्याय' थी। इन्द्रदत्तने 'सिद्धान्तकौमुदी-शूङ्ग-फक्रिका-प्रकाश' नामक ग्रन्थ बनाया था।

इन्द्रदमन (सं० पु०) १ वाषासुरका पुत्र। (चरित्र १५०) ३ पर्वविशेष। जलप्राप्तिके समय कुण्ड, तड़ाग, घट वा पिप्पलवृक्ष पर्यन्त जल बट्टकर पहुँचने-से यह पर्व पड़ता है। ७ मेघनाद, इन्द्रजित्।

इन्द्रदाह (सं० पु०) १ देवदाह। २ तैल-देवदाह वृक्ष।

इन्द्रदेवी (सं० स्त्री०) काश्मीरराज मेघवाहनकी पत्नी। इन्होंने इन्द्रदेवीभवन नामक विहार बनवाया था। (राजतरंगिणी)

इन्द्रद्युति (सं० स्त्री०) चन्दन, सन्दल।

इन्द्रद्युम्न (सं० स्त्री०) १ उद विशेष, एक भौल। (पु०) २ एक राजा। स्कन्दपुराणके उत्कलखण्डमें लिखा है, कि भालव देशमें इन्द्रद्युम्न नामक एक राजा था। उन्होंने ही उत्कलखण्ड पुत्रपोषण देवका मन्दिर बनवाया था। उसमें विश्वकर्मा स्वयं था दाहमयी मूर्ति निर्माण कर गये थे। (कविचरितिका और पुरुषोत्तमसाहायका)। सुकुन्द-रामछात जगन्नाथमठमें लिखा है, कि इन्द्रद्युम्न एक मन्दिर बनवा ब्रह्माके निकट मूर्तिसंस्थापनके लिये उप-देग लेने पहुँचा था। ब्रह्मलोक पहुँचने और अपने स्व-स्तुति सुनानेपर इन्द्रद्युम्नसे ब्रह्माने सन्तुष्ट हो एक मुहूर्त ठहरने तथा सन्ध्यावन्दनके बाद घर देनेको कहा। ब्रह्माके एक मुहूर्तमें मनुष्यके साठ हजार वर्ष बीतते हैं। किन्तु यहाँ यह कुछ समझ न सके थे। जब ब्रह्मा मन्त्रा करके पाये, तब इन्द्रद्युम्नसे कहने लगे—अपने राज्य एकबार जाकर यापस आपो तब हम आपकी मूर्ति देंगे। ये अपने राज्य यापस

पाये, किन्तु उसके चिह्न भी कहीं न पाये। समयके फेरसे समस्त ध्वंस हो गया था। इन्द्रद्युम्न अपने राज्यको पहचान भी न सके। जिसको देखते, उसीसे पूछते थे—इस राज्यका नाम क्या है। धन-शेषमें एक पैचक और कुम्भमें इनकी पूजकथा बतायी थी। इन्द्रद्युम्न फिर राजा हुये और कौमाथ राजाकी कन्या मानावतीके साथ ब्याह गये। उसके बाद इन्होंने प्रस्तरमय जगन्नाथका मन्दिर बनवाया था। किसी दिन एक दूतने आकर कहा, समुद्रके तीरपर एक काष्ठ तैर रहा है। इन्द्रद्युम्नने उससे पहले ब्रह्माकी मुख सुनने रक्खा था—भगवान् कृष्ण निम्न वृक्षपर प्राण छोड़ेंगे और बहकर समुद्रतीर पहुँचेंगे। इसलिये दूतको बात कानमें पड़ते ही वे महासमारोहके साथ उस काष्ठको समुद्रसे जाकर उठा लाये। विश्वकर्माने आकर उसी काष्ठसे जगन्नाथकी मूर्ति बनायी थी। जगन्नाथ देवो। इन्द्रद्युम्नने जगन्नाथ देवसे अपनी कन्या सत्यवतीकां वियाह कर दिया। २ अन्य एक गङ्गावर्गीय नृपति। ११८८ ई०की इन्होंने जगन्नाथ देवके मन्दिरका पुनः संस्कार कराया था। ३ एक असुरका राजा। कृष्णने इन्हें मार डाला था। (महाभारत वन० १२५०) ४ ऋषि-विशेष। शतपथब्राह्मणमें इन्हें भालवेय कहा है। ५ राजर्षि विशेष। (महाभारत वन० १८८५०) ६ भगवन्के पालवर्गीय श्रेष्ठ राजा।

इन्द्रदु (सं० प्र०) इन्द्रस्य दुः, इ-तत्। १ पर्जन्यवृक्ष। २ कुटजवृक्ष। ३ देवदाह वृक्ष।

इन्द्रदुम्न (सं० पु०) इन्द्रस्य दुम्नः, इ-तत्। पर्जन्य वृक्ष।

इन्द्रद्वीप (सं० पु०-स्त्री०) पौराणिक मतसे भारतके नौ विभागोंमेंसे एक विभाग। वर्तमान अष्ट्रेलिया।

इन्द्रधनुस् (सं० स्त्री०) इन्द्रे तत्त्वसामिके भेदे धनुः इव, इ-तत्। इन्द्राधुध, कौस-कुञ्जा। यथाकालके उदय वा अस्त होनेके समय सूर्यको विपरीत दिशामें यह प्रायः देख पड़ता है। वृष्टिजल-कणोंकी प्राणविक्र शक्तिके प्रभावसे माना वर्षा बन उक्त नैसर्गिक कारण उत्पन्न होता है। इसी प्रकार चन्द्रकी आभासे कभी-कभी राम-धनुः निकलता है, किन्तु यह बहुत कम देख पड़ता है।

**इन्द्रध्वज ( सं० पु० )** इन्द्रादौ ध्वजः, शाक-तत् ६-तत् वा । भाद्र शुक्लाद्वाद्योके दिन इन्द्रतुष्टिके निमित्त ध्वज-दान । इस दिन प्रजापति मङ्गलके लिये राजा ध्वज बना द्वारपर गाड़ते हैं और इष्टदेवको पूजते हैं । इससे प्रचुर वृष्टि और सुचारुरूप शस्यादिकी उत्पत्ति होती है । वृद्धसंहिताके मतमें असुरों द्वारा अधिक पौड़ित होनेसे देवगणने ब्रह्मासे कहा था,—असुरोंसे हम लड़ नहीं सकते ; आपकी शरण आये हैं, कोई प्रतिविधान कर दीजिये । ब्रह्माने उत्तर दिया,—तुम क्षीरोद-सागर जा नारायणका स्तव करो ; वह जो केतु तुम्हें देगे, उसे देखते ही असुर अपनी राह लेंगे । इन्द्र और ग्रन्थान्य देवगणने वही किया । विष्णुने स्तवसे तुष्ट हो उठा केतु ( ध्वज ) देवताओंको दिया और इन्द्रने उससे दुर्दान्त अरिजुलकी मार अपना बदला चुका लिया । चेदिराजकी वैष्णव्य यष्टि गाड़ यथा-विधि पूजा करनेसे इन्द्रने अतिशय तुष्ट हो कहा था,—जो राजा इसी प्रकार इन्द्रध्वज धूलिगा, उसकी राज्यमें प्रजा एवं शस्यादिका आधिक्य होगा और कोई रोग न रहेगा ।

**इन्द्रनक्षत्र ( सं० स्त्री० )** इन्द्रस्वामिकं नक्षत्रम्, शाक-तत् । १ जेष्ठानक्षत्र । इन्द्रनामकं नक्षत्रम् । २ फल्गुनो नक्षत्र ।

**इन्द्रनील ( सं० पु० )** इन्द्रव नीलः श्यामलः । मर-कत मणि, नीलम । इन्द्रनील छाल देनेसे दूधका रङ्ग काला पड़ जाता है । संस्कृत भाषामें खीरिरङ्ग, नीलाश्म, नीलोत्पल, लणघाही, महानील प्रभृति अनेक इसके नाम हैं । इन्द्रनील शनिग्रहकी प्रिय है । इससे शनिदोष घाला हो जाता है । इन्द्रनीलका वर्ष निविड़ मित्र-जैसा रहता है । यह मध्यम रङ्ग है । ( यक्षगीति ) मानसोद्भासकी मतमें अतसी पुष्प-जैसा इन्द्र-नीलका वर्ण होता है, जो कि छाया और रोश्निद्विधसे उपजता है । सिंहल और कलिङ्ग देशमें इसकी खानि है । ( चणका ) जहाँ-जहाँ महादानवकी आँख खुयो, वहाँ-वहाँ, इसकी उत्पत्ति हुयी । सिंहलोत्पल महानील और तद्भिन्न मणि इन्द्रनील कहाता है । इसमें कोयी नीलपद्म, कोयी नीलाम्बर, कोयी खड्ग-

धारा, कोयी शिवनीलकण्ठ वा नीलकण्ठ पक्षीके गले, कोयी छड़दके फूल, कोयी गिरिकर्णिका, कोयी निर्मल समुद्रके जले, कोयो मयूर तथा कोकिलके कण्ठ और नीले रङ्गके बुलबुल-जैसा होता है ।

शेष और गुण—श्रुतिका, पाषाण, गिला, पत्थ, कढ़ड़, अभ्रिका, पटलाख्य छायादि और वर्षदोषसे मणि बिगड़ जाता है । व्यवहार्य पद्मरागका गुण इन्द्रनीलमें भी मिलता है । पदराग देखो ।

परीक्षा—पद्मरागकी समस्त करण और उपकरण द्वारा इन्द्रनील परीक्षित होता है । पयःस पद्म-रागकी चपला यह अधिक उत्तम सह सकता है । होतो रहते भी अग्निसे इसकी परीक्षा करना न चाहिये । क्योंकि अग्निका परिमाण समझ न सकने पर दाहदोषसे बिगड़ इन्द्रनील धारणकारी, परीक्षक और अनुमति देनेवाले सकलके अनिष्टका कारण बन जाता है ।

वैजाय विचर्य—काच, उपल, करवी, स्फटिक और वेदूर्य देखनेमें बिलकुल इन्द्रनील-जैसा ही होता है । किन्तु अल्प ताम्बवर्ण धारण करनेवाला इन्द्रनील रखने योग्य है । फिर जिसमें रामघट्टाका रङ्ग भलकता हो, वह दुर्लभ और महामूल्य निकलता है । अधिक रङ्ग-वाले और छाल देनेसे समस्त दुग्धकी नीलवर्ण बनाने-वालेको महानील कहते हैं ।

शब्द—महागुण पद्मराग और इन्द्रनीलका मूल्य एक एकसा होता है । ( नवग्रहपत्र )

**इन्द्रनीलक ( सं० पु० )** हरिमणि, पद्मा ।

**इन्द्रनेत्र ( सं० पु० )** इन्द्रस्य नेत्रम्, ६-तत् । इन्द्रका चक्षुः, हज्जर संख्या ।

**इन्द्रपति ( महामहोपाध्याय )—१** सीमांसापखल नामक ग्रन्थके रचयिता । २ तीर्थां प्रदेशस्य इक्षोगी जातिकी एक श्राया ।

**इन्द्रपत्नी ( सं० स्त्री० )** इन्द्रस्य पत्नी, ६-तत् । १ शची-देवी । इन्द्रस्य पतिः पालयितो, इन्द्र-पतिः डोप-पुङ्ग, नकारादेशः । विभाषा कर्णेल । या भा० १२३ । २ इन्द्रकी पालयित्री, जो इन्द्रकी परवरिय करती हो ।

**इन्द्रपर्णी ( सं० स्त्री० )** इन्द्रवत् नीलं पर्णं

बहुमी० । १ इन्द्रवारुणी, कुंदरु । २ साङ्गलिका, कलिहारी ।

इन्द्रपर्वत ( सं० पु० ) इन्द्रनामक वा इन्द्रवर्णः पर्वतः, शाक-तत् । १ महेन्द्रपर्वत । २ नीलपर्वत ।

इन्द्रपातम ( वै० त्रि० ) दूसरीकी अपेक्षा अधिक प्रीतिसे इन्द्र द्वारा पान किया हुआ ।

इन्द्रपान ( वै० त्रि० ) इन्द्र द्वारा पान किया हुआ ।

इन्द्रपीत, इन्द्रपान देखो ।

इन्द्रपुत्रा ( सं० पु० ) इन्द्रः पुत्रो यस्याः, बहुमी० । अदिति ।

इन्द्रपुरी ( सं० स्त्री० ) अमरावती ।

इन्द्रपुरोगम ( सं० त्रि० ) इन्द्रको आगे रखनेवाला, जिसको इन्द्र रहनुमा रहै ।

इन्द्रपुरोहित ( सं० पु० ) बृहस्पति ।

इन्द्रपुरोहिता ( सं० स्त्री० ) पुण्या नक्षत्र ।

इन्द्रपुष्य ( सं० स्त्री० ) लवङ्ग, सौंग ।

इन्द्रपुण्या ( सं० स्त्री० ) १ साङ्गलीवृक्ष, कलिहारी ।

२ पूतीकरञ्ज, वनकरैला ।

इन्द्रपुष्पिका, इन्द्रपुष्पा देखो ।

इन्द्रपुष्पी, इन्द्रपुष्पा देखो ।

इन्द्रप्रमति ( सं० पु० ) इन्द्रः प्रमतिः प्रकटा मतिः यस्याः, बहुमी० । १ ऋषभान्वृष्टा एक पृथक् वसिष्ठ ऋषि । ( अष्टादश—६ ) । २ व्यासशिष्य पैल ऋषिके शिष्य ।

( अष्टिपुत्राद्य मया मातवः )

इन्द्रप्रसूत ( वै० त्रि० ) इन्द्र द्वारा उत्पাদित वा प्रोत्साहित, जिसे इन्द्र निकाले या बढ़ाये ।

इन्द्रप्रस्थ—एक प्राचीन नगर । इन्द्रप्रस्थ खाण्डव-रक्षक मध्य था । महाराज युधिष्ठिरने इस नगरमें राजधानी स्थापित की थी । उस समय इन्द्रप्रस्थ समुद्र-मध्य परिखा द्वारा अन्तर्द्वीप और गङ्गुकी तरह द्विपक्ष द्वार तथा परम रमणीय सौधसमूहसे समाकीर्ण था । इसके परम रमणीय प्रदेशमें कुबेरानगर-सदृश कौरव-रक्षक बना था । चारो ओर उद्यानमें नानाजातीय फलशाली वृक्ष थे । ( महाभारत आदि )

इन्द्रप्रस्थ एक पवित्र तीर्थ माना गया है,—

“इन्द्रप्रस्थं चैव संप्रपित् देवैः पुरा ।

पूर्वपश्चिमयोस्त एकयोऽनविच्छेदतः ॥ ७३ ॥

कलिन्दा दक्षिणे यावद्योगानाम् अनुष्टयम् ।

इन्द्रप्रस्थम मर्यादा कथितेषा महाविमिः ॥ ७४ ॥”

( श्रीमद्विष्णु १५ ५० )

अर्थात् पूर्वकालमें देवगणने इस इन्द्रप्रस्थको स्थापन किया था । यह पूर्व-पश्चिम एक ओर यमुनाके दक्षिण तक चार योजन विस्तृत था । महर्षियोंने इन्द्रप्रस्थकी मर्यादा इसीप्रकार बताया है ।

हमारी समझमें पूर्वसमयमें इन्द्रने विष्णुकी पूजाकी इससे इन स्थानका नाम इन्द्रप्रस्थ पड़ा है । इन्द्रप्रस्थमें देहत्याग करनेसे मनुष्य विष्णुतुल्य हो जाता है,—

“इन्द्रप्रस्थस्नानेन चैव विन्दुस्य पावनम् ।

तेनाम पुनितो विष्णुः क्षतुभिर्भुङ्क्षति चैः ॥ १७ ॥

तुष्टेन विष्णुना तर्कं करोति दक्षो नियम्यमान् ।

भो भक्त तारते चैव भवैर्लोकेमया जनाः ॥ १४ ॥”

तत् सचिनि ये ते वै मनुष्या विंशका अपि ॥” ( १ ५० )

“इन्द्रस्य खाण्डवाराणो इन्द्रप्रस्थानिधेः समम् ।”

( श्रीमद्विष्णु ८ ५० )

वर्तमान दिल्लीमें ही यह प्राचीन नगर था । अब इसका सामान्य ध्वंसावशेष मात्र बचा है । ‘इन्द्र-पत’ नाम चला जाता है । सुना जाता है, कि दिल्लीपति पृथ्वीराजके समय यहाँ एक गढ़ बना हुआ था । चन्द्रकविने कहा है,—

“गढ इन्द्रपतं सहायं सुखम् ।

उभे दीन मुई करै यद्युष पथ्ये ॥” ( पृथ्वीराजरायणा १०११ )

आज भी दिल्लीमें ‘पुराना किला’ नामक प्राचीन दुर्ग देख पड़ता है । उसे कोई-कोई ‘इन्द्रपत’ कहती है । यद्यपि यह सुसलमानोंका बनाया है तो भी यह किसी हिन्दू द्वारा निर्मित दुर्गपर रक्षित है ।

( Archaeological Survey Reports of India, Vol. IV, p. 2 )

इन्द्रमहाराज ( सं० स्त्री० ) वज्र । यह दधौचि मुनिकी हठडीसे बना था ।

इन्द्रफल, इन्द्रधर देखो ।

इन्द्रभाय ( हिं० स्त्री० ) तालविशेष । इसमें मादलके गलीन-जेरा शब्द निकलता है ।

इन्द्रब्रह्मपटी ( सं० स्त्री० ) अपभ्रान्तनामक बड़ी विशेष, शरीर रोगकी गोली । रसचिन्दूर, पद्म, लोह, रौप्य, स्वर्णसाधिक, विष एवं पद्मकेसर समभाग ले छिड़,

अग्नि, विजया, एरण्ड, वचा, निष्याव, शूरण तथा नियुंछीके द्रवमें घंटे। फिर सबको कङ्कूनी सर्पोंके तेलमें पकाते और चणमास बटो बनाते हैं। पाट्रकके रसमें देनेसे इन्द्रमख्यटी अपचार रोगकी नाश करती है। (रघुचरित्र ७६)

इन्द्रमगिनो (सं० स्त्री०) शिवपत्नी। यह इन्द्रकी वधन थी।

इन्द्रभूति (सं० पु०) गणधरभेद। जैनियोंके चौबीसवें तीर्थंकर महावीर स्वामीके ११ गणधर थे। सर्वप्र तीर्थंकरकी दिव्य ध्वनिका जो अर्थ समझकर लोगोंके लिये उपदेश देते हैं वे यावक, आविका, मुनि और आर्यका रूप धारणकारके गणके धारक-स्वामी गणधर वा गणेश कहलाते हैं। गणधर भिन्न भिन्न तीर्थंकरोंके भिन्न भिन्न होते हैं। तदनुसार अन्तिम तीर्थंकर महावीर भगवान्के इन्द्रभूति प्रथम और मुख्य गणधर थे। इनके जीवनका उक्तान्त जैनशास्त्रोंमें यों लिखा है,—

इन्द्रभूति जातिके गौतम ब्राह्मण थे। इनका जन्मस्थान गौतम नामक नगर था। ये अपने मातापके इन्द्रभूति, वायुभूति और अग्निभूति नामके तीन पुत्र थे। ये तीनों ही भाई वैदिक धर्मानुयायी महाविद्वान् थे। इनके पास देशदेशान्तरोंसे अनेक छात्र शास्त्राध्ययन करने आया करते थे। इन्द्रभूतिकी जिज्ञापर समस्त वेद और शास्त्र नृत्य किया करते थे। इस कारण इनकी अपनी विद्यावत्ताका बड़ाही घमण्ड था। ये उस समय अपने शास्त्रज्ञानके सामने संसारके विद्वानोंको तुच्छ समझते थे।

जब महावीर स्वामी चार घातिया (ब्राह्मणोंके अनन्त-ज्ञानशक्ति, अनन्त-दर्शनशक्ति, अनन्त-सुखशक्ति और अनन्त वीर्यशक्तिकी आच्छादन कर देनेवाले कर्म) कर्मोंको नष्टकर वैशाख शुक्लदशमीके दिन सर्वप्र हो गये और इन्द्रकी आश्वानुसार कुवेरने भगवान्का समवसरण (व्याख्यानसभा) रचकर तयार कर दिया, तो उनके व्याख्यानकी सुननेके लिये देशदेशान्तरोंसे मनुष्य, तिर्यक्ष और स्वर्गोंसे देवता आने लगे। जब समाके वारही प्रकीर्ण भरे गये और सम्यक्का वाग्वक्तुके

जीव व्याख्यान सुननेकी प्रतीक्षा करने लगे, तो भगवान्की दिव्यध्वनि ही निकली (तीर्थंकरोंकी बाणी श्रोत्र, तात्तु और जिह्वाके संसर्गसे नहीं निकलती, वल्कि मेघके गर्जनके समान मूढांसे खरब्यन्त्रनरहित निकलती है। उसमें तपके प्रभावसे ऐसा अतिशय होता है कि सब देववाणी सब जातिके मनवाले प्राणी अपनी अपनी भाषामें उसे समझने लगते हैं।) दिव्यध्वनिकी प्रतीक्षा करते करते एक दिन दो दिन यथातक कि आठ दिनतक बीत गये, परन्तु भगवान्को उपदेश छटि न हुई। जब यह सब उक्तान्त इन्द्रने देखा, तो उसने अपने अवधिज्ञानसे (अधिज्ञान अर्थ दी) निश्चय किया कि “भगवान्का कोई गणधर तो है ही नहीं, जो उनके दिव्य उपदेशकी धारणा रख लोगोंको समझा सके, इसलिये ही बाणी नहीं निश्चत हुई है।” अब तो इन्द्रको गणधरके खोजनेको आवश्यकता हुई। उसने अपने अवधिज्ञानसे जब इन्द्रभूतिकी भावी गणधर जाना, तो वह सीधा एक विद्यार्थीका वैश्वधारण कर उनके पास गया। उस समय इन्द्रभूति अपने छात्रोंको पढ़ा रहे थे। इसलिये इन्द्र भी उन छात्रोंमें जा कर ही बैठ गया और उनका व्याख्यान सुनने लगा।

उस समय किसी विषयका प्रतिपादन करके इन्द्रभूतिने अपने विद्यार्थियोंसे पूछा—“क्यों! तुम सब लोगोंकी समझमें आ गया न?” उत्तरमें अन्य विद्यार्थियोंने तो ‘हां’ कह दिया, परन्तु छात्रवैश्वधारी इन्द्र अपनी नाक में सिकोड़ अवधि प्रकट करने लगा। उसके इस व्यापारसे असन्तुष्ट हो छात्रोंने इन्द्रभूतिसे कहा—“महाराज! यह नवीन छात्र आपकी अवज्ञा करता है।” यह सुन इन्द्रभूतिने कहा—“क्यों! मैं समस्त शास्त्रोंका वेत्ता हूँ। मेरे व्याख्यानको सब लोग पसन्द करते हैं फिर क्या कारण है कि वह तुम्हें नहीं दबा?” उत्तरमें इन्द्रने कहा—“यदि आप सम्यक् शास्त्रोंके वेत्ता हैं, तो मेरे एक आचार्यका हो अर्थ कह दोजिये वह आचार्य यह है—”

“यद् दृश्य नवपदाय विज्ञान-पदासिधाय-वद्व्यायान् ।

विद्वत्, वरः स पर हि को ज्ञानाति प्रमाणयः” (०) (अथाकोर)

इस जैनधर्मके मर्मोंको कहनेवाले भन्तुतपूर्व विषम-  
आर्याको देखकर इन्द्रभूति बड़े चक्राये। उन्होंने  
कोधमें आकर इन्द्रसे कहा कि “तेरा कौन गुरु है ?  
मैं उसीसे शास्त्रार्थ करूंगा। तुम्हें ह्वात्रके साथ वाद  
विवाद करनेसे मेरी प्रतिष्ठामें चति पड़ चुकी है।”  
इसके उत्तरमें इन्द्रने कहा—“मेरी जगद्गुरु महावीर  
भगवान् गुरु हैं।” इन्द्रभूति बोले—“क्या वही अपने  
इन्द्रजालसे आकाशमें देवोंको दिखानेवाला सिद्धार्थ  
राजाका पुत्र महावीर ? क्या तू उसीका शिष्य है ?  
अच्छा चल। उसीके साथ शास्त्रार्थ करूंगा।” इन्द्र  
अपने प्रयोजनको सिहें हुआ जान प्रसन्नतासे बोला—  
“आइये। मेरे साथ आइये। मैं आपको अपने गुरुके  
साथ सुताकात करा दूंगा।” अपने वचनानुसार इन्द्र-  
भूति इन्द्रके साथ चल दिये। यह देख उनके अन्य दो  
भाई अग्निभूति, वायुभूति और उनके शिष्य भी साथ  
साथ हो लिये। चलकर वे लोग महावीर भगवान् के  
समवसरणके पास आये। समवसरणमें जो चारो  
दिशाओंमें चार बहुत विशाल स्तम्भ (मानस्तम्भ)  
होते हैं, (जिन्हें देखकर मानियोंका मानभङ्ग हो जाता  
है।) उन्हें देखते ही उन सब लोगोंका मान गलित  
हो गया, वे लोग सर्धा छोड़ भगवान् की प्रदक्षिणा दे  
उनकी श्रुति करने लगे। उनमेंसे इन्द्रभूति तत्काल ही  
समस्त परिग्रह (घन धान्य वस्त्र आदि) छोड़ मुनि  
हो गये।

ये ही इन्द्रभूति वादकी तपस्याके बलसे भवविघ्नान  
और मनःपर्ययज्ञानके (दूसरेके मनकी बातको जानने-  
वाला ज्ञान) स्वामी हो गये। सात ऋद्धि प्रकट हो गईं  
और समस्त तपस्त्रियोंमें मुख्य हो ये भगवान् के प्रधान

• जीव, जनीव, जगं, जधर्म, आकाश और काय ये छः द्रव्य, जीव,  
जनीव, काय, मन, संवर, निजं, मोक्ष, पाप और पुण्य ये नौ पदार्थ,  
चोत, जगमग, और सर्वमान्य ही मौनमान, जीव, जनीव, चर्म, जर्म,  
और आकाश ये पांच चरित्रार्थ, सर्व शरीर, जल, तेज, वायु और वनस्पति  
जातिके शरीरवासी पौधवासी जीव और जैवप्राण (वज्रपाश) के चारो जीव ये  
चट्पाद इनकी भी प्रभाव और शक्तियों कायता है यह ही विनाशक है ॥

गणधरहो गये। बस ! इनके गणधर होते ही महा-  
वीर स्वामीका दिव्य उपदेश होने लगा। उसे इन्द्रभूति  
गणधरने धारण कर आचारार्थ, सूत्रकृतार्थ आदि  
वारंवार श्रद्धापूर्वक और उसका भक्तोंको ज्ञान कराया।

जब तक महावीर स्वामी इस संसारमें रहे, तब  
तक तो ये उनके गणधर रहे, बादकी जगहसे मोक्षधाममें  
पधार गये, तब इन्हें भी सर्वज्ञता हुई। इन्होंने १२ वर्ष  
तक इस पृथ्वीमण्डलपर जैनधर्मका प्रसार किया।  
अन्तमें भविष्यी पदमातृकर सर्वदाके लिये अनन्त  
शुखका भन्तुभव करने लगे।

इन इन्द्रभूतिका गोत्र गौतम था, इसलिये इनको  
लोग गौतम नामसे भी कहते हैं। बहुतसे लोग  
बौद्धधर्मके नेता गौतमको और इन गौतमको नाम-  
साम्यसे एक ही समझते हैं, परन्तु यह ठीक नहीं।  
ये दोनों भिन्न भिन्न मतके प्रचारक भिन्न भिन्न  
व्यक्ति थे।

इन्द्रमेवज (सं० लो०) इन्द्रं महत् भेजमभोधम्,  
कर्मधा०। खण्डो, सीठ।

इन्द्रमख (सं० पु०) इन्द्रकी प्रीतिके लिये होनेवाला  
यज्ञ।

इन्द्रमण्डल (सं० पु०) नक्षत्रमण्डलविशेष। इसमें  
अभिजित्त्वे अनुराधातक नक्षत्र रहते हैं।

इन्द्रमद (सं० पु०) तदगुह्य-ज्वर, पेड़पौधोंको  
खमनेवाला बुखार। यह एक प्रकारका विष होता  
है और प्रथम हृष्टिके जलसे उपजता है। इन्द्रमदसे  
तब तथा गुह्य रुखस जाते हैं और मीन एवं जलोत्पादि  
मर जाते हैं।

इन्द्रमह (सं० लो०) इन्द्र-प्रीतिजनक उत्सव-यज्ञादि।  
यह यज्ञ ‘इन्द्रं महं’ प्रत्यति शब्दसे आरम्भ होता है।

इन्द्रमहकासुका (सं० पु०) इन्द्रमहं कामये, इन्द्रमह-  
काम-उत्कृष्ट। कुकुर, कुत्ता।

इन्द्रमादन (सं० लि०) इन्द्रकी प्रसन्न करनेवाला।

इन्द्रमार्ग (सं० पु०) इन्द्रकी प्रसादार्थी मार्गः, शाक-  
तत्। बदरीपावनका निकटवर्ती तीर्थ। इस स्थानमें  
यगिष्ठका आश्रम था। (भाष्य, पृ ११५०)

इन्द्रमेदिन (सं० लि०) इन्द्रसे मित्रता रखनेवाला।

इन्द्रयव (सं० पु०) इन्द्रस्य कुटजवृक्षस्य यवः वीज-  
मिव, लप० ६-तत्। कुटजवीज, कोरैयाका सुखम,  
कुड़ा। (Wrightia antidysenterica) इन्द्रयव  
पर्यायमात्र और कुटज-वाचक है। यह त्रिदोषघ्न,  
धारक, कटु, शीतल, दीपन और ज्वर, शरीरार,  
रक्तार्शः, वमि, वीमर्ष, कुष्ठ, वातरक्त, कफ एवं गुलको  
नाश करनेवाला है। (भावप्रकाश) मध्यभारत, पश्चिम-  
प्रायद्वीप और ब्रह्म में इन्द्रयव पाया जाता है। हृष-  
पसनशील है। सकड़ी जायी दांत-जैषी सफेद,  
कड़ी और दानेदार होती है। तराय और खराद  
कर उसे इमारत में लगाते हैं। पत्तीदार लोके में दो-दो  
फलियां निकलती हैं, जो एक २ हाथ लम्बी होती हैं।  
फलियोंका मुख दोनों ओर एक दूसरेसे मिला रहता है  
और भीतरके धुवे में वीज पड़ता है। बम्बई में कोमल  
पत्तियां और फलियां खाई भी जाती हैं। सफेद  
और सुन्दर फूलोंके गुच्छों में चमेलीको तरह खुशबू  
भाती है। अतिप्राचीन कालसे दार्दिणात्यके लोग  
इन्द्रयवकी पत्तियोंका नीला रङ्ग बनाते चले आते हैं।  
इन्द्रयु (सं० त्रि०) इन्द्रके समीप पङ्कजनेका  
प्रभिलायी।

इन्द्रयोग (वे० पु०) इन्द्रका संयुक्त बल।

इन्द्रराज (सं० पु०) १ देवराज। इन्द्र और इन्द्रजीव देखो।  
२ कान्यकुब्जका एक प्राचीन नृपति, ई०के ८म  
शतक में समस्त उत्तरभारत में कुलकाल तक इसका  
अधिकार था। यह गौड़राज्य परमाल कर्क के परास्त  
और राज्यच्युत हुआ था। कान्यकुब्ज देखो। ३ खाटदेशके  
राष्ट्रकूटवंशीय एकाधिक नृपतिके नाम। राष्ट्रकूट बन्धु  
निकेत विवरण देखो।

इन्द्रराज्ञी (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य कुटजस्य राज्ञा इव  
राज्ञा यस्याः। शीघ्रि हृषभेद।

इन्द्रराज्यं, इन्द्रयव देखो।

इन्द्रसुप्त (सं० पु०) इन्द्राणां तद्वर्णानां विद्यानां सुप्तं  
शोपः यस्मात्, बहुव्री०। अशुकेग्रस्त रोग, बालखोरा,  
गन्ध। (Alopecia, baldness) पड़ले मूर्च्छित  
पित्त वातके स्थान रोमकूपों में पड़ने रोमोंकी सहाई  
छाहता है, फिर शरीरित श्रेया-रोमकूपोंकी रुंध देता

है। इससे दूसरोंका जन्म घसमस हो जाता है। (पद्म)  
यह रोग सर्वाङ्गीन दुर्बलता, ज्वर, पारददोष, उपदंश-  
विष एवं रक्तस्राव प्रभृति कारणांसे उपजता है।  
केयप्रति सम्पूर्णरूपसे रुग्ण वा विनष्ट होने पर भी  
इन्द्रसुप्त प्रायः नहीं मिलता।

पर्वधौत मतसे कड़वी तरीकीके पत्तेका रस रगड़  
देनेपर यह रोग प्रच्छा हो जाता है। इतिदन्त-  
भस्य और रसाध्वन छागोके दुग्ध में शीत लेपन करनेसे  
शीघ्र केय निकलते हैं। धानपीन या सूई द्वारा रुग्ण  
स्थानको छेद प्याज काटकर रगड़नेसे भी बाल  
पाने में देर नहीं लगती। गोचुर, तिलगुण्य, मधु एवं  
घृत एकत्र घीसे मरहमकी तरह चढ़ानेपर सफकार  
होता है। श्वेत हृषिकपात्रीका वीज घिसनेसे एक  
सताईके मध्य ही शीम निकलता है। भिलावे,  
हहतोफल और धुंधचीके फल तथा मूलको मधुके  
साथ घीसेकर इन्द्रसुप्त पर चढ़ाना चाहिये। यष्टिमधु,  
नीनोत्पल, मूंगकी जड़, तिल, घृत, दुग्ध एवं शङ्कराज  
एकसाथ घीसेकर लगानेसे घन, इङ्गमूल तथा वन  
केय उपजते हैं। इस रोग में बार-बार गिरका सुँडाना  
और गरम पानीसे धो डालना प्रच्छा है।

होमियोपैथिक डाक्टर कोयी कठिन रोग प्रच्छा  
होने वा सर्वाङ्गीन दुर्बलता रहनेसे एसिडाम फसफरि-  
काम्, सायबोय ज्वरसे एसिडाम् क्लारिकम्, डिपार  
एवं सालफर, उपदंश किंवा पारद दोषसे आर्सेनिक,  
नेट्राम न्यूरोटिकम्, कैसकेरिया, डिपार तथा फस-  
फरस और प्राचोन गिरःपोड़ाति केय गिरनेपर  
सालफरका व्यवहार करते हैं। किंवदन्ती है कि  
खसवाट निर्धन नहीं रहते।

इन्द्रलोक (सं० पु०) इन्द्रस्य लोकः भवनम्, ६-तत्।

१ परमावती, स्वर्गः २ इन्द्रका स्थान।

इन्द्रलोकगमन (सं० स्त्री०) इन्द्रलोकको पर्यटनका ज्ञान।

इन्द्रलोकेश (सं० पु०) १ इन्द्र। २ विभिन्न भवनका राजा।  
केन-शास्त्रानुसार इन्द्र सो है। और वे इस  
प्रकार हैं—

“शक्रासह पात्रीका वितरदेवाय होति प्रवीणः।

वपामर वरवीका कवी हरी करो भित्तो ॥” (इन्द्रयव-वर्णिका)



पर्याप्त भवनवासी देवोंके चालीस, व्यन्तरोंके बत्तीस कल्पवासियोंके चौबीस, ज्योतिषियोंके दो (चन्द्र और सूर्य), मनुष्योंका एक (चक्रवर्ती) और तिर्यक्षोंका एक (सिंह) इस तरह सब मिलाकर सौ इन्द्र होते हैं।

देव चार प्रकारके होते हैं—भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक। इस पृथ्वीके नीचे रत्नप्रभा नामकी एक पृथ्वी है। उसके खरभाग, पद्मभाग और पद्महलभाग ये तीन भाग हैं। उनमें आदिके जो दो भाग हैं उनमें प्रसंख्य देवोंके भवन हैं उनमें जो देव रहते हैं, वे भवनवासी कहलाते हैं। इनके दस भेद हैं—अशुरकुमार, नागकुमार, विद्युत्कुमार, सुपर्णकुमार, अग्निकुमार, वातकुमार, उदधिकुमार, स्तनितकुमार, ह्रीपकुमार और दिक्कुमार। हर एक भेटमें दो दो इन्द्र और उनके दो दो प्रतीन्द्र हैं। इसलिये कुल इनमें चालीस इन्द्र हैं। इन्द्रोंके समान प्रतीन्द्रोंकी विभूति होती है, अतः प्रतीन्द्रोंको भी इन्द्र कहा है।

पहाड़ नदी शृङ्खल हृत्त और विविध देशदेशान्तरोंमें जो देव रहते हैं, उन्हें व्यन्तर देव कहते हैं। उनके पाठ भेद हैं—किन्नर, किं पुरुष, मञ्जोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, और पिशाच। इनके भी हर एक भेदमें दो इन्द्र और दो प्रतीन्द्र होते हैं। इसलिये बत्तीस इन्द्र हैं।

सूर्य चन्द्रमा आदि ज्योतिषी देव कहलाते हैं। इनके पांच भेद हैं—सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारागण। इनके दो ही सूर्य और चन्द्रमा इन्द्र हैं।

विमानोंमें रहनेवाले देव वैमानिक देव कहलाते हैं। उनमें प्रथम दो भेद हैं—कल्पवासी और कल्पातीत। कल्पवासियोंके बारह भेद हैं। ये कल्पवासी देव सोलह खगोंके पटलोंमें रहते हैं और इनके बारह इन्द्र और बारह प्रतीन्द्र हैं। इसलिये कुल चौबीस इन्द्र हैं। सोलह खगोंके ऊपर जो विमान हैं उनके रहनेवालोंको कल्पातीत कहते हैं। उनमें इन्द्र और सामान्यदेवोंकी कल्पना नहीं है। ये सब समान होते हैं। मनुष्योंमें सबसे बड़ा राजा चक्रवर्ती इन्द्र है। और तिर्यक्षोंमें सबसे बड़ा सिंह इन्द्र है। (अथर्ववेद)

१ अतिथि, मेहमान।

इन्द्रलोहक (सं० स्त्री०) रौप्य, चांदी।

इन्द्रवंशा (सं० स्त्री०) उत्तविशिष्ट, एक कन्द। इस चार पाद और प्रत्येक पादमें बारह वर्ण रहते हैं। इन्द्रवंशाके छतीय, षष्ठ, सप्तम, नवम एवं एकादश वर्ण सद्य तथा अवशिष्ट गुरु होते हैं।

“आदिन्द्रवंशा ततर्गैरङ्गुणैः।” (अथर्ववेद)

इन्द्रयवा (सं० स्त्री०) इन्द्रयव।

इन्द्रवष्वा (सं० स्त्री०) कन्दोविशिष्ट। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें ग्यारह अक्षर होते हैं। छतीय, षष्ठ, सप्तम एवं नवम सद्य तथा अवशिष्ट गुरु होते हैं।

“आदिन्द्रववा यदि तो कवीयः।” (अथर्ववेद)

इन्द्रवटी (सं० स्त्री०) वैद्यकीय औषध विशिष्ट, एक दवा। मृत सूत तथा वस्त्र और अर्जुनकी त्वक्को तुल्यांग ली। शालमली-मूलज द्रवमें छोटे और रत्ती प्रमाण बटिका बनाये। मद्य तथा शास्मलीमूलघृण अथवा शर्कराके साथ खानेपर इन्द्रवटी प्रमेहकी दूर कर देती है। (रसैन्द्रसारसंग्रह)

इन्द्रवधू (सं० स्त्री०) वीरवहूटी, रामकी गुड़िया। यह कीड़ा प्रायः साल होता है और छट्टि पड़नेपर अपने प्राय भूमिसे उपजता है।

इन्द्रवल—मध्यप्रदेशका एक प्राचीन शहर राजा। यह उदयनका पुत्र था। शहर होते भी इसने अपनेको पाण्डुवंशीय बताया है।

इन्द्रवल्ली (सं० स्त्री०) इन्द्रघासी वल्ली चिति, कर्मधा०। इन्द्रवारुणीलता, इन्द्रायन। इस लताका रस तिक्त, पुष्प पीतवर्ण और मूल शुभ होता है।

इन्द्रलका, वरि इन्द्रलोहकी।

इन्द्रवली (सं० स्त्री०) इन्द्रप्रिया वल्ली लता, शाक। तत्। १ पारिजात लता। २ इन्द्रवारुणी।

इन्द्रवस्ति (सं० पुं०) इन्द्रस्यात्मनो वस्तिरिव। लङ्काका मध्य भाग, साक, पिंडली। प्रति पार्ष्णि-लङ्काके स्थानको इन्द्रवस्ति कहते हैं। (हरण)

इन्द्रवायु (सं० पुं०) इन्द्र और वायु।

इन्द्रवारुणिः (सं० पुं०) इन्द्रवारुणी दीक्षी।

इन्द्रवारुणिका, इन्द्रवारुणी दीक्षी।

इन्द्रवारुणी ( सं० स्त्री० ) इन्द्रवरुणयोरेवं वा इन्द्र-  
वरुणी देवते अस्याः इत्यण्-ङीप् ; -इन्द्रस्य आत्मनो  
वारुणीय मिया । १ लताविशेष, इन्द्रायन । ( Citrallus  
Colocynthis ) वैद्यशास्त्रके मतसे इसके पर्याय वाचक  
ये शब्द हैं,—विशाला, ऐन्द्री, इन्द्र, अरुण, गवादनी,  
हृद्रसहा, इन्द्रचिर्मिटी, सूर्या, विषमो, गजकर्षिका,  
अमरा, माता, सुकर्णी, सुफला, वारुणी, वालकप्रिया, रक्तै-  
र्वह, तारका, हृषभाक्षी, पीतपुष्पा, इन्द्रवलरी, हुमपुष्पी,  
हृद्रफला, वल्ली, चित्रफला, चित्रा, गवाची, गजचिर्मिटी,  
शृंगीर्वाह, पिटङ्गोकी और शृगादनी । इन्द्रवारुणी  
उत्तमाश्या अन्तरीप, मित्र, तुर्कस्थान, भूमध्य-सागरके  
द्वीपसमूह और भारतवर्षमें खूब उत्पन्न होती है ।  
गुणमें यह तिक्त, कटु, शीतल, रीचन और गुणम, पित्त,  
श्लेष्मा, कृमि, कुष्ठ तथा स्वरको नाश करनेवाली  
है । ( राजनिषध ) आलोपाधिक मतसे इन्द्रवारुणी  
अति विरैचक होती है, क्योंकि यह अन्तकी श्लेष्मिक  
क्षिप्तीको उपता प्रदान करती है । इसको अधिक मात्रा-  
में सेवन करनेसे यह प्रदाहिक विपक्रिया फैलाती है ।  
शोथ, उदरी, कोष्ठवह एवं सञ्ज्ञास प्रभृति रोगमें विरै-  
चन और प्रत्युत्ता लानेके लिये इन्द्रवारुणीका व्यवहार  
किया जाता है । इसके सेवनसे कभी-कभी उदरमें  
वेदना उठती है, तबोयत मिचलाती और कं पाने लगती  
है । ऐसी अवस्थामें कर्पूर किंवा कोनारम देनेसे पीड़ा  
मिटती है । आलोपाधिक मात्रामें इन्द्रवारुणी खानेसे  
अनेक समय नाना रूप विघ्न पड़ सकता है । इसलिये  
हरसमय इसे कोई व्यवहारमें नहीं लाता । विशेष  
आवश्यक होनेसे विवेचनापूर्वक इन्द्रवारुणीकी खाना  
चाहिये । इसका सार और वटिका व्यवहार्य है । मात्रा  
दो से दस ग्रेन तक होती है । होमियोपाथिक मतसे  
यह सरल अन्तके प्रदाह, अतिसार, रक्तातिसार,  
शुष्करी, अर्धशिरःशूल, स्त्रायुशूल, अन्तशूल, वात,  
अम्बिवात, डिस्त्राशयिक, स्त्रायवीय रोग और नाना-  
प्रकारकी पीड़ाओंमें दी-जाती है । अत्यन्त उदर-वेदना-  
संयुक्त, विशेष कष्टदायक रक्तातिसार, मारकूरियस  
करोसाइदास और इन्द्रवारुणीके यथाक्रम सेवनसे  
निहत हो जाता है । डाक्टर ह्यूस्न शूलरोग पर

इस औषधका व्यवहार किया था । उदर टोल-जैसा  
फूलने, तीव्र वेदनाविशिष्ट पेटिक विषमिया तथा  
यमन लक्षण भूलकने और हृहत् एवं सरल अन्तमें  
प्रदाह उठनेपर इन्द्रवारुणी देते हैं । डाक्टर ह्यूस्ने  
के मतसे यह तरुण शृम्भसोपर पुरातन रोगकी अपेक्षा  
अधिक उपकार करती है । व्यथित अन्तके उत्तोलनसे  
वेदना बढ़ने एवं क्रमागत सञ्चालनसे उपयम पाने  
और साथ ही उदरामय तथा अन्तशूल उठनेपर इन्द्र-  
वारुणी अत्यन्त लाभदायक है । पहले जलवत् एवं  
आममिश्रित, पीले पित्त तथा रक्तमिश्रित और  
धूलरखण्डके मध्य प्रेषित अन्त जैसी उदरवेदनाविशिष्ट  
रक्त आमाशयमें केसोसिन्ध उपयोगी है । मस्तक  
भारी पड़ने, चक्षुः तथा कपालके मध्य अत्यन्त ज्वला  
उठने, और सूच या आलपीन विह-जैसी यन्त्रपासि  
विशिष्ट अर्धशिरःशूल होनेपर इन्द्रवारुणीका प्रयोग  
करना चाहिये । इसका फल नारङ्गी-जैसा पीला या  
साल होता है । उसपर खरबूजाकी तरह फांक होती है ।  
खानेमें वह अतिमय कटु लगता है । इसके गूदेसे औषध  
बनती है । और महिष एवं उष्ट्रपक्षी उसे खाते हैं ।  
अफ्रीकामें कोई-कोई इसके बीजकी भी खाते हैं ।  
इन्द्रवारुणीका ताजा मूल दन्तमार्गानमें काम आता  
है । अफ्रीकाके नीलनद-तीरवर्ती कोयो-कोयो लोग  
इसके फलसे एकप्रकारका रस निकालते हैं और उसे  
पानी भरनेकी मयकमें लगाते हैं । इसके गन्धसे जंट  
मयकको काट नहीं सकते । २ गोरधककंटी, पूट ।

इन्द्रवाह ( वै० पु० ) इन्द्रको से जानेवाला ।  
इन्द्रविद्या ( सं० स्त्री० ) अणुरोगविशेष, किधी किम्बकी  
फुन्सी । यह वात-पित्त विगड़नेसे त्वक्पर जल-  
पूर्ण छुद्र-छुद्र किंवा हृहत् हृहत् स्वरकमें पड़  
जाती है । इन्द्रविद्याका उद्भेद (खाज)की तरह एकत्र  
न हो स्वतन्त्र भावमें अवस्थित रहती है । इस  
रोगमें प्रथम परिष्कार जल वा दुग्धके समान स्वाद  
निकलता है । उसके सुपुनेसे विपविषी बिपिटिका  
उपजती है । चिकित्सकोंके मतसे इन्द्रविद्या चार  
प्रकारकी होती है,—विस्वाकार ( Herpes-phlyc-  
tenous ), चक्राकार ( Herpes-circinatus ), राम-

घनुषाकार (Herpes-zoster) और कटिवन्ध्याकार (Herpes-iris)। सिवा इसके यह रोग (Herpes-prepuplaci), शिग्र्वलक् और (Herpes-labialis) भीष्ठमें भी उपजता है। आयुमें उपदाह उठना ही इन्द्रविहाका प्रधान कारण है। इस रोगमें शरीर खानिसे भरा रहता, गिरः दुखता, पार्श्वमें शूल उठता और ईयत् च्वर चढ़ जाता है। दश-बारह दिनोंमें ही इन्द्रविहा भारोग्य हो जाती है। यह दह्नुजातीय रोग है।

वैद्योंके मतसे पित्तजन्म विषर्पकी भांति इन्द्रविहाकी चिकित्सा करना और सकल फुंसियोंके पकने पर काकोल्यादि गणोक्त द्रव्यको छूतपाक करके लगाना चाहिये। होमिथापार्थिक डाक्टर युवकके यह रोग होनेपर रसटक्का और हडके होनेपर मेलेरियमका प्रधानतः व्यवहार करते हैं। सामान्य इन्द्रविहापर सनकर और सिपियाको, उपद्रवरहितपर मार्कुरिसको, लिङ्गचर्मके पूययुक्तरोगपर फाइटो और भाफाइटोसको, अत्यन्त पीड़ादायकपर आर्मेनिकको और दुर्बल एवं शूलग्रस्तपर टेसुरियमको लगाते हैं।

इन्द्रवीज (सं० पु०) इन्द्रस्य कुटजस्य बीजम्। इन्द्रयष, हुड़ा।

इन्द्रवृच (सं० पु०) इन्द्रस्य वृचः। १ देवदारु।

इसपर लोग इन्द्रवृज लगाते हैं इसलिये इसका नाम इन्द्रवृज पड़ गया है। २ श्वेत कुटजवृक्ष। ३ भर्जुनवृक्ष।

इन्द्रवृष (सं० पु०) १ सुव्रकवर्जित कुलचपाश्व विशेष, किसी किस्रथा खराब घोड़ा।

इन्द्रवृषा, इन्द्रविहा देखी।

इन्द्रवृष्टिक, इन्द्रवृष्टि देखी।

इन्द्रवैद्य्य (सं० स्त्री०) बहुमुख्य रत्नविशेष, किसी किस्रका जौमती पत्थर।

इन्द्रव्रत (सं० स्त्री०) इन्द्रस्येव व्रतम्। व्रतविशेष।

इन्द्र जैसे लाकड़ा उपकार करनेके लिये चार मास तक व्रत बरसाते हैं, वैसे ही राजा भी अपनी प्रजाको सुख देनेके लिये धनादि प्रदान किया करते हैं। इसी नियमका नाम इन्द्रव्रत है।

इन्द्रवृष्टि (सं० स्त्री०) इन्द्राणी, इन्द्रकी पत्नी।

इन्द्रयत्तु (सं० पु०) इन्द्रः यत्तुः यस्मात्, बहुव्री०। हवासुर। "इन्द्रोऽयं यमयिता या सत्ताम् इन्द्रयत्तुः।" (निरुक्त)

इन्द्रशैल (सं० पु०) इन्द्राभिधः शैलः, माक-तत्। इन्द्रकौल-पर्वत।

इन्द्रयेष्ठ (वै० त्रि०) इन्द्रकी प्रधानकी भांति रखनेवाला।

इन्द्रसन्धा (सं० स्त्री०) इन्द्रके साथ संसर्ग।

इन्द्रसारथि (सं० पु०) इन्द्रस्य सारथिः। १ मातलि, इन्द्रका रथचालक। २ यायु, हवा। (चतुर्मास्य१)

इन्द्रसावर्णि (सं० पु०) इन्द्रस्य सावर्णिः। चतुर्दश मनु।

इन्द्रसुत (सं० पु०) १ जयन्त। २ भर्जुन। ३ वानर-राज वाली। ४ भर्जुनवृक्ष।

इन्द्रसुरस (सं० पु०) इन्द्रः कुटजः इव सुरसः, उप-कर्मधा०। निर्गुणही हृद्य, संभालू।

इन्द्रसुरसा (सं० स्त्री०) इन्द्रसुरस देखी।

इन्द्रसुरा (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य आत्मनः सुरा इव प्रिया। गोरक्षकर्कटिका, फूट।

इन्द्रसुरिष, इन्द्रसुरस देखी।

इन्द्रसुरिष, इन्द्रसुरस देखी।

इन्द्रसूत (सं० स्त्री०) इन्द्र-देवर्त सुतम्, माक० तत्। इन्द्रदेवत मन्त्र सूत। इसी मन्त्रसे इन्द्रका स्तव करते हैं।

इन्द्रसुतु (सं० पु०) १ वानरपति वाली। २ भर्जुन वृक्ष।

इन्द्रसेन (सं० पु०) इन्द्रस्य सेनेय महर्तो सेना यस्मात्, बहुव्री०। १ परोक्षितके स्वनाम-प्रसिद्ध पुत्र। २ युधिष्ठिरके पुत्र। ३ नलके पुत्र। ४ किसी नागका नाम।

इन्द्रसेना (सं० स्त्री०) १ इन्द्रसेन्य, इन्द्रकी भीज। २ मौढव्यको ज्येष्ठ पुत्रयधू और वज्रकी माता। ३ नलकी कन्या।

इन्द्रसेनानी (सं० पु०) सेनां नयति सेनानी क्तिप्, इ-तत्। क्रांतिक। इन्द्रनेत्यांतिकका वल-पराक्रम देख कहा था,—'पाप इन्द्रत्व लीजिये। हम पापके आदेशपर चलेंगे।' किन्तु इन्होंने उत्तर दिया,—'हमें इन्द्रत्व न चाहिये। पाप हो उसे अपने हाथमें रखिये। हम पापकी आज्ञातुसार सर्वथा कार्य

‘करेगें।’ इन्द्रने तब इन्हे सेनापति बननेको कहा।  
 इन्होंने उसे मान लिया। (भारत, चादि, ८४ पं०)  
 इन्द्रस्तु (सं० पु०) इन्द्रः स्तुयते यस्मिन्, इन्द्र-स्तु-  
 क्तिप्। इन्द्रयज्ञ। इस यज्ञमें इन्द्रकी आराधना  
 होती है।  
 इन्द्रस्तोम (सं० पु०) इन्द्रस्य स्तोमः स्तुतिः यस्मिन्।  
 भतिरात्राह्नमृत यागविशेष। राजाका भनुषेय यज्ञ।  
 इसकी दक्षिणा १००००० रु० है। (साधयन ब्राह्म०)  
 इन्द्रस्वरस (सं० पु०) वृष्टिजल, बारिशका पानी।  
 इन्द्रस्त (पै० द्वि०) इन्द्रकी समता करनेवाला,  
 इन्द्र-कैसा।  
 इन्द्रहय (पै० पु०) इन्द्रका आवाहन।  
 इन्द्रह (सं० स्त्री०) इन्द्रः हयतेऽनया, इन्द्र-ह-क्तिप्।  
 सम्प्रसारणम्, ६-तत्। इन्द्रकी आराधनाका मन्त्र।  
 इन्द्रा (सं० स्त्री०) १ इन्द्रकी पत्नी शचीदेवी।  
 २ फणिकक हथ। ३ इन्द्रवाक्णी।  
 इन्द्राग्निदेवता (सं० स्त्री०) भनुराधा नचत्र।  
 इन्द्राग्निधूम (सं० पु०) इन्द्राग्नेः निधानलस्य धूम-  
 ह्न, उप० ६-तत्। १ हिम, वरफ। २ अग्निविशेष।  
 यह अग्नि प्रति वर्ष वैशाख और ज्येष्ठ मासमें प्रायः  
 पृथिवीपर गिरती है। इससे महिष, गो, हथ तथा  
 गृह आदि जल जाते हैं।  
 इन्द्राणिका (सं० स्त्री०) १ निगुण्ठीहथ, संभालू।  
 २ नीलसिन्दुवार, काला संभालू।  
 इन्द्राणिकापत्र (सं० स्त्री०) निगुण्ठीपत्र, संभालूका  
 पत्ता।  
 इन्द्राणी (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य पत्नी, लीप्। वाचक ५।  
 वा ५। १ इन्द्रकी स्त्री शची। इनके परम  
 पुरुष हैं। २ दुर्गागति। देवदानव इनके अधीन  
 रहते हैं। ये सकलकी मङ्गलदात्री हैं। “शिवः परमं  
 यलाः वने केव सुराधराः। इदि परमेष्ठये च इन्द्राणी तिन का विवाह।”  
 (श्वेताश्व) ३ सलैला, सही इलायची। ४ सुल्फैला,  
 छोटी इलायची। ५ स्त्रीन्द्रिय। ६ सिन्धुवार, संभालू।  
 ७ इन्द्रायन।  
 इन्द्राहय (सं० पु०) इन्द्रस्यैवाहयनमस्य, इन्द्र-पा-  
 हय-ठक्, ६-तत्। इन्द्रगोप कीट।

इन्द्रागुज (सं० पु०) वामनावतारी भगवान्। इन्द्रके  
 बाद अदितिके गर्भं पौर कश्यपके पौरससे वामनने  
 जन्म लिया था। इसलिये इनका यह नाम पड़ा है।  
 जन्मविवरण वामन मन्त्रमें देखो।  
 इन्द्राभ (सं० पु०) इन्द्रस्यैवाभा यस्य अथवा इन्द्र  
 इवा-भाति, इन्द्र-पा-भा-क। कुरुवंशीय धृतराष्ट्रके  
 सप्तम पुत्र।  
 इन्द्राभा (सं० स्त्री०) कहपश्चिमेद, किसी किष्कका बगला।  
 इन्द्रायन (हिं० पु०) इन्द्रवाक्णी देवी।  
 इन्द्रायुध (सं० स्त्री०) इन्द्रस्यायुधमिव, ६-तत्।  
 १ इन्द्रका भस्त्र वज्र। २ रामधनुः। इसकी उत्पत्ति का  
 विवरण इन्द्र मन्त्रमें देखो। आकाशमें रामधनुष देखकर  
 वह किसीको न दिखाना चाहिये,—“न दिरोद्रायुष” इति।  
 कल्पविदर्भेय उप० ११ (ननु) किन्तु किसी-किसीके मतानु-  
 सार पर्वतपर खड़े होकर देखनेसे दिखा देनेमें कोई  
 दोष नहीं लगता,—“अपि पर्वतादिष्वस्य दर्शने न दोषः।”  
 (निपातित्वि) ३ वज्रकामणि, घोर। ४ स्यावर विप्लाव-  
 र्गत कन्दविप। ५ काम्यकुल का एक पराक्रान्त नृपति।  
 काण्डक देखो।  
 इन्द्रायुधमिखिन् (सं० पु०) किसी नागका नाम।  
 इन्द्रायुधा (सं० स्त्री०) इन्द्रायुधवत् कर्धराज-सविप  
 ललायुका, किसी किष्ककी कड़रोली लोंक। इसकी  
 पीठ इन्द्रधनुष-जैसी चमकती है।  
 इन्द्रारि (सं० पु०) असुर, राक्षस। सर्वदा जो असुर  
 इन्द्रकी यज्ञमें विघ्न डाला करते हैं।  
 इन्द्रार्घपादप (सं० पु०) कसुकहंस, सुपारोका पेड़।  
 इन्द्राग्नि (सं० पु०) इन्द्रं पालिमग्नि, इन्द्र-पा-लिम-  
 ण्। इन्द्रगोप कीट, एक कीड़ा।  
 इन्द्रावरज, इन्द्रावन देखो।  
 इन्द्रावसान (सं० पु०) इन्द्रस्यावसानः यत्र बहुव्री०।  
 मरुभूमि, रेतोली समोन्।  
 इन्द्रायन (सं० पु०) १ सिद्धि, भाग। २ गुह्य, गुप्तधी।  
 इन्द्रायनक, इन्द्रायन देखो।  
 इन्द्रासन (सं०-पु०-स्त्री०) इन्द्र पाया अथवा चिप्यते  
 येन, इन्द्र-अस करने सुप्र०। १ इन्द्रका सिंहासन।  
 २ राजाका सिंहासन। ३ पञ्चमात्रिक प्रस्तावविशेष।

इन्द्राक्षा ( सं० स्त्री० ) इन्द्रधारिणी लता, इन्द्रायण।  
इन्द्रिय ( सं० स्त्री० ) इन्द्रस्यात्मनो लिङ्गमणुमापकम्,  
इन्द्र-घ। इन्द्रविष्णोदि। वा ३। ४। २१। १ वच, जोर।  
२ शक्ति, मनी। ३ शारीरिक शक्ति, जिज्ञानो ताकत।  
४ पांचवी संख्या। ५ ज्ञानसाधन, कुश्वत सुदर्भिक।

इन्द्रिय तीन प्रकारकी होती हैं,—ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय और चक्षुरेन्द्रिय। चक्षुः, कर्ण, जिह्वा, नासिका और त्वक्को ज्ञानेन्द्रिय कहते हैं। वाक्, पाणि, पाद, पायु और उपस्थका नाम कर्मेन्द्रिय है। मनः, बुद्धि, अहङ्कार और चित्तको चक्षुरेन्द्रिय समझना चाहिये। इस प्रकार सब मिलाकर चौदह इन्द्रिय हैं। मनः सकल इन्द्रियका नियामक है। कर्णके दिक्, चर्मके वायु, चक्षुःके सूर्य, जिह्वाके वरुण, नासिकाके अग्निनीकुमार, त्वक्के अग्नि, हस्तके इन्द्र, चरणके विष्णु, पायुके मित्र, उपस्थके प्रजापति, मनःके चन्द्र, बुद्धिके ब्रह्मा, अहङ्कारके शङ्कर और चित्तके देवता अच्युत हैं। न्यायमतसे पृथिवीका नासिका, जलका जिह्वा, तेजःका चक्षुः, वायुका चर्म और आकाशका इन्द्रिय कर्ण होता है। सुप्ततने बुद्धिका ब्रह्मा, अहङ्कारका ईश्वर, मनःका चन्द्र, ग्रासका दिक्, चर्मका वायु, चक्षुःका सूर्य, जिह्वाका जल, नासिकाका पृथिवी, वाक्का अग्नि, हस्तका इन्द्र, चरणका विष्णु और पायुका देवता मित्रको माना है।

इन्द्रियका व्यापार सकल कर्ताके अधीन रहता है, इसलिये इन्द्रियका स्वपर नाम कारण है,—

“हेत्वधीनः कर्ता कर्मधीनः कारणम्।” ( पद्मनाभ )

नैयायिकोंके कथनानुसार मन कभी कर्ता और कभी कारण बन जाता है। क्योंकि किसी रूपकी देखनेके पहले मन चले, फिर दृष्टि डालनेपर दर्शनजन्य सुखकी भी वही अनुभव करेगा। दूसरे मनःके द्वारा आत्मा भी दर्शनसुख पाता है। ज्ञानका कार्य मन है। कारणसे मिल वैदान्तिक मनको इन्द्रिय नहीं समझते और बुद्धिकी भी इन्द्रियसे प्रत्यक् मानते हैं। कर्ण द्वारा बाहरी शब्द सुन पड़ता है, फिर टांक देनेपर भी भीतर ही भीतर आया करता है।

चर्म द्वारा स्पर्शका अनुभव होता है। चक्षुःसे रूप

दीख पड़ता है। नासिकासे गन्धकी पहचान करते हैं। वाक्केन्द्रियसे बात करते हैं। इन्हें द्वारा समस्त वस्तु उठायी जाती हैं। चरण यातायातका कार्य चलाता है। पायु मन और उपस्थ मूत्रकी त्याग-करता है।

चक्षुःकरण तीन प्रकारका होता है,—बुद्ध्यात्मक, अहङ्कारात्मक और मनसात्मक। शरीरके मध्य कार्य होनेसे ही मन, बुद्धि और अहङ्कारको चक्षुःकरण कहते हैं। कोई दृश, कोयी श्रारह, कोयी बारह, कोयी तेरह और कोई कोई चौदह इन्द्रियतक मानते हैं।

जैन-शास्त्रानुसार इन्द्रियके दो भेद हैं द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय। द्रव्येन्द्रिय—स्पर्शन, रचना, प्राण, चक्षु, और श्रोत्रके भेदसे पांच प्रकार है। द्रव्येन्द्रियोंके निर्हृत्ति और उपकरण ये दो और उत्तर भेद हैं। शरीरकी रचना करनेवाले नाम कर्मकी सहायतासे जो रचना विशेष हो उसे निर्हृत्ति कहते हैं और जो निर्हृत्तिका उपकार (रक्षण) करे वह उपकरण है। निर्हृत्ति और उपकरणके भी दो दो भेद हैं—वाह्य और आभ्यन्तर। आत्माके प्रदेशोंका इन्द्रियोंके आकाररूप होना सो आभ्यन्तर-निर्हृत्ति है। पुद्गल ( जिस द्रव्यमें स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण पाये जाय उसे पुद्गल कहते हैं। यह भूतिका है और सब लोकमें देखा जाता है ) परमाणुओंकी इन्द्रियरूप रचना होना सो वाह्यनिर्हृत्ति है। जैसे नेत्र इन्द्रियमें नेत्र इन्द्रियके आकाररूप आत्माके जितने प्रदेश मस्तिष्कके समान फैले हैं, वे आभ्यन्तर-निर्हृत्ति हैं। और उसमें जितने पुद्गल परमाणु मस्तिष्कके आकारमें परिणत हुये हैं वे वाह्य निर्हृत्ति हैं। नेत्र इन्द्रियमें कृष्ण शक्त मण्डलकी तरह मध्य इन्द्रियोंमें जो निर्हृत्तिका उपकार करे उसको आभ्यन्तर उपकरण कहते हैं। और उसी नेत्रमें पलक आदिके समान जो निर्हृत्तिका उपकार करे उसको वाह्योपकरण कहते हैं।

मावेन्द्रिय दो प्रकारकी है—संज्ञि और उपयोग। जिसके होनेसे आत्मा द्रव्येन्द्रियकी रचनानिष्ठ प्रवृत्ति करे ऐसी ज्ञानावरणीय कर्म (आत्माके ज्ञान गुणकी आच्छादन करनेवाले कर्म) की उपयोगमय रूप

शक्ति विशेषको लब्धि कहते हैं। चयोपयम शब्द देखो। और चयोपयम लब्धिके निमित्तसे आत्माका पदार्थोंके प्रति परिणमन होनेसे जो आत्मामें ज्ञान उत्पन्न होता है वह उपयोग है। जैसे कोई जीव सुनना तो चाहे परन्तु सुननेकी चयोपयमरूप शक्ति न हो तो वह सुन नहीं सकेगा। इसलिये ज्ञानका कारण होनेसे ज्ञानावरणोप कर्मकी चयोपयम शक्तिरूप लब्धिको इन्द्रिय माना है। एवं उपयोग इन्द्रियका फल वा कार्य है इसलिये कार्यमें कारणका उपचारकर उसे इन्द्रिय कहा है। अथवा जिस प्रकार वस्तु आदिक इन्द्रियां आत्माके परिचय करानेमें हेतु हैं उसीप्रकार उपयोग भी उसमें मुख्य हेतु है इस कारण उपयोगको इन्द्रिय (इन्द्र-आत्माका परिचायक) कहा है।

ऊपर कही गई स्पर्शन आदिक पाँचों इन्द्रियां हर एक जीवमें समान नहीं होतीं। वे किसीमें एक, किसीमें दो, किसीमें तीन किसीमें चार और किसीमें पाँच तक होती हैं। इन्द्रियाधिक्य (जिनका इन्द्रो ही शरीर है), जलकायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, और धनस्यक्तिकायिक जीवोंके एक स्पर्शन ही इन्द्रिय रहती है। काम आदि जीवोंके स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रियां होती हैं। पिपीलिका (चिंघटी) आदि जीवोंके स्पर्शन, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रियां होती हैं। भ्रमर मकरी वगैरहके श्रोत्रके सिवाय चार इन्द्रियां होती हैं। और छोड़े आदि पशु मनुष्य देव और नारकी जीवोंके पाँचों इन्द्रियां होती हैं।

मन भी आत्माका परिचायक होनेसे इन्द्रिय है। परन्तु उसे शास्त्रोंमें अविन्द्रिय कहा है। क्यों कि जिस प्रकार ईषत् लय उदरवाली कन्याको अनुदरी कन्या कहते हैं उसीप्रकार ईषत् इन्द्रियोंके समान होनेसे मन भी ईषत् इन्द्रिय अविन्द्रिय कहा गया है। इन्द्रियोंका जिस प्रकार विषय परिमित है—ये देश काल क्षेत्रकी मर्यादामें स्थित ही पदार्थोंका ग्रहण कर सकते हैं उस प्रकार मन पदार्थोंका ग्रहण नहीं करता। मनका विषय क्षेत्र अपरिमित है। परन्तु आत्माका परिचायक है इसलिये अन्य इन्द्रियोंके साथ सौसादृश्य न होनेसे ईषत् इन्द्रिय है। (सामान्यतयाचार)

(हिं०) ६ कुम्भीका एक पेंच। अब एक पहलवान् दूसरेको नीचे गिरा देता है और उसके हाथकी कलायो पकड़ सजते तौरपर घुमा ऊपरको खींचता है, तब इन्द्रिय चटानेका पेंच काममें आता है। इस पेंचसे नीचेवाले पहलवान्का हाथ सखड़ जाता है।

इन्द्रियकर्म, इन्द्रियवार्त्त देखो।

इन्द्रियकाम (चै० त्रि०) शक्ति पानेका अभिलाषो, जो तात्काल हासिल करना चाहता हो।

इन्द्रियकार्य (सं० स्त्री०) वस्तु: प्रभृतिका कर्म, प्राप्ति वगैरहका काम। शब्दाकर्षण, स्पर्शग्रहण, रूपदर्शन, रसास्वादन, गन्धग्रहण, वचनादान, विसर्ग, गमन, और आनन्दको इन्द्रियकार्य कहते हैं। (वृत्त)

इन्द्रियगोचर (सं० वि०) उपलब्ध, व्यक्त, जाहिर समझ पड़ने वाला। वस्तु: कर्ष, जिज्ञा, नामिका, तत्त्व और मन: इन्द्रिय द्वारा क: प्रकारका ज्ञान उपजता है। प्रथमत: इन्द्रिय और वस्तुका संयोग होता है, फिर आत्मामें उसका ज्ञान आता है। इसलिये इन्द्रियां ज्ञानका मार्ग हैं। और उस ज्ञानपथमें पतित वस्तु इन्द्रियगोचर कहाती है—

“प्राप्तप्राप्तिप्रदीप प्रत्यक्षं वस्तु चित्तं मतम्।

प्राप्त्यन्त गोचरं यन्मोक्षमार्गविरहितं कृतम्।

उद्धृतवर्गं वदन्त्यं गोचरं चोक्तिं च तत्तः।” (भाषापरिचय ६)

घ्राणज आदि क: प्रकारका प्रत्यक्ष होता है। गन्ध एवं गन्धत्वकी भांति गन्धगत सकल धर्म घ्राणके और उद्धृत पार्थात् प्रत्यक्ष होनेवाला स्पर्श, स्पर्शविशिष्ट द्रव्य तथा स्पर्शका धर्म स्पर्शत्व प्रभृति सकल पदार्थ तत्त्वके गोचर हैं।

“तथा रश्मी रश्मिवासाध्या यन्मोक्षं च मुने:।”

अन्त:तत्त्व-कट-कथायादि रस एवं रसगत धर्म रसत्वादि रसनाके और शब्द तथा शब्दगत धर्म शब्दत्व प्रभृति सकल पदार्थ श्रवणके गोचर होती हैं।

“उद्धृतवर्गं यन्मोक्षं गोचरं द्रव्यवि रसनि पदत्वत्वं परा।

विमान-चक्षुर्गोचरं यन्मोक्षं चोद्धृतवर्गं परिभाषयन्तम्।”

रूप रस प्रभृति सकल गुण उद्भूत और अनुद्भूत भेदसे दो प्रकारके होते हैं। दीर्घ पड़नेवालेको उद्भूत और क्षिप रहनेवालेको अनुद्भूत कहते हैं। जैसे घटादिका

रूपतो स्पष्ट दीर्घ पङ्क्तिसे उद्भूत है और भर्जन-कपालस्थ चन्दिना रूप 'यदि इस कपालमें अग्नि न होती तो किसी तरह भी जी आदिका भुंजना न होता' इस अनुमानसे गम्य होने के कारण, अनुद्भूत है। इसी प्रकार रस गन्धादिको भी समझना चाहिये। इसमें उद्भूत रूप, उद्भूत रूपविशिष्ट द्रव्य, पृथक्त्व (विभिन्नता), संख्या (एकत्व द्वित्वादिक), विभाग (बाँध), संयोग (मेल), परत्व (दूरत्व), अपरत्व (निकटत्व), स्नेह (तैल जलादिमें रहनेवाले मित्य-कारण-समर्थ पदार्थ), द्रवत्व (तरलत्व) और परिमाण (मिकारार) ये समस्त पदार्थ चक्षुः द्वारा ग्राह्य हैं।

“क्रियां ग्राहिं योग्यमिन्द्रियमायत्तं तादृशम्।

यथाति चक्षुः सख्यभादानां कोऽतुल्यपयोः ॥”

उत्प्रेषण, अवप्रेषण, गमन प्रभृति क्रिया, मनुष्यत्व पक्षत्व प्रभृति जाति और सम्बन्धविशेष समवायको योग्यवृत्ति होनेपर चक्षुः आलोक और उद्भूत रूपके सहारे ग्रहण करता है। चक्षुः द्वारा किये गये प्रत्यक्षको चाक्षुष-प्रत्यक्ष कहते हैं।

“उद्भूतस्यैव दृश्यं गोचरः कोटिषु च त्वचः।

रूपान्वयस्य योग्यं दृश्यमपि कारयन् ॥”

पहले जिस स्पर्श श्रेय्य उष्ण एवं रूपका वर्णन कर आये हैं, वही स्पर्श उद्भूत होनेपर त्वक् द्वारा ग्राह्य होता है। एवं इसप्रकारके स्पर्शसे विशिष्ट द्रव्य भी त्वक्के गोचर होता है। रूपके विषय चक्षुःगोचर वस्तुमात्र त्वक्के ग्राह्य है। इस त्वाच प्रत्यक्षमें भी रूप कारण होता है। क्योंकि जिस वस्तुमें उद्भूत रूप नहीं रहता, उसका त्वाच प्रत्यक्ष भी नहीं होता। अतएव उद्भूत रूप होनेसे ही वह होता है।

इन्द्रियग्राम (सं० पु०) १ गरीर, जिस। २ इन्द्रिय-समूह, इन्द्रिया।

इन्द्रियघात; इन्द्रियघट्ट।

इन्द्रियघ्न (सं० पु०) इन्द्रियं हन्ति, इन्द्रिय-हन्-क।

१ रोग, पीड़ा। २ चक्षुरोग-विशेष, पाँखकी बीमारी।

इन्द्रियज (सं० लि०) इन्द्रियेभ्यो जायते, इन्द्रिय-जन-

-क, उत्पत्त। इन्द्रियसे उत्पन्न होनेवाला। जिसप्रकार

विना पीये दूधका स्वाद नहीं जाना जा सकता और

पीने मात्रसे तो उसका ज्ञान प्रत्यक्ष हो जाता है उसीप्रकार विषय-सर्विकर्ष द्वारा समस्त अनुभव प्राप्त होता है इसीसे सकल इन्द्रियां ज्ञानमें कारण मानी गयी हैं। विषय-सर्विकर्ष उसका व्यापार होनेसे जनक और ज्ञान जन्य है।

इन्द्रियजिह्व (सं० लि०) इन्द्रियकी जीतनेवाला, जो इन्द्रियके वशमें न हो।

इन्द्रियज्ञान (सं० क्तो०) इन्द्रियजन्य वा प्रत्यक्ष ज्ञान, देखो-सुनी बात।

इन्द्रियदमन (सं० पु०) इन्द्रियगणको नियंत्रण करनेका कार्य, इन्द्रियकी वृत्ति घटानेका काम।

इन्द्रियदोष (सं० पु०) इन्द्रिय-जन्य दोष। परस्त्री-गमन, चौर्य प्रभृतिको इन्द्रियदोष कहते हैं।

इन्द्रियनिग्रह (सं० पु०) स्नेहसाधार-प्रवृत्त इन्द्रिय-गणका निज-निज विषयमें स्थापन अर्थात् इन्द्रियके अधीन न हो उनका दमन करना। यह समस्त धर्मोंमें साधारण धर्म है। सन्तोष, क्षमा, दया, भस्त्रेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, सद्वृत्ति, विद्या, सत्यपालन और क्लोषपरित्याग ये दश धर्म मनुने कहे हैं। योग-साधनकी समय भी नासिका, कर्ण, वाक्, मनः प्रभृति इन्द्रियोंको अपने-अपने विषयसे रोकना पड़ता है। इन्द्रियगणके मध्य कोई भी इन्द्रिय यदि स्नेहसाधारिणी रहेगी तो योगसाधनादि धर्मकार्य क्लृप्त नहीं बन सकते। मन रोकनेसे ही सब इन्द्रियां वशमें रहती हैं। इतलिये मननिरोध न होनेसे योगीको किसी भी कर्ममें सफलता नहीं होती।

इन्द्रियप्रयोग (सं० पु०) विषयके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध।

इन्द्रियवध (सं० पु०) अपने-अपने विषयमें इन्द्रियकी शक्तिका प्रतिघात अर्थात् भाषात।

इन्द्रियबुद्धि (सं० क्तो०) इन्द्रियजन्य बुद्धि।

इन्द्रियबोधन (सं० लि०) इन्द्रियं बोधति, इन्द्रिय-बुध-णिच्-भुर। १ इन्द्रियकी चेतन करनेवाला, जो क्लृप्तकी जगता हो। (क्तो०) २ इन्द्रियका उत्तेजन, क्लृप्तका जोग। ३ पानसाध्य विकस्यताबोध मय, किसी किसीकी गराव। इसको पी लेनेसे सकल इन्द्रियां स्व-स्व कार्यमें उत्तेजित हो जाती हैं।

इन्द्रियवचो (चि० स्त्री०) वाजीकरण-भेद, नामदीं दूर करनेकी एक सदयोर।

इन्द्रियवत् (सं० त्रि०) प्रयत्न वा वृत्ति इन्द्रियं अस्यस्य, इन्द्रिय-समुत्प, मस्य वः। १ इन्द्रियको वगमें रखने-वाला। २ प्रयत्न इन्द्रिययुक्त, पक्के रहनेवाला।

इन्द्रियवर्ग (सं० पु०) एकादशेन्द्रिय, इन्द्रियसमूह, ग्यारहो रक्त।

इन्द्रियविप्रतिपत्ति (सं० स्त्री०) इन्द्रियकी विवृति, रक्तका बिगाड़।

इन्द्रियवृत्ति (सं० स्त्री०) शब्द, स्पर्श प्रभृति विषयमें बहिरैन्द्रियकी आलोचना, रक्तका काम। वचन, आदान, विहार, त्याग एवं आनन्द ये पांच कर्मेन्द्रियों की और सहज, विकल्प तथा अध्यवसाय ये मनःकी वृत्ति हैं।

इन्द्रियवैकल्प (सं० स्त्री०) इन्द्रियदुर्बलता, रक्तकी कमजोरी।

इन्द्रियसन्ताप (सं० पु०) इन्द्रियवृत्ति, रक्तकी बीमारी।

इन्द्रियसन्निकर्ष (सं० पु०) स्र स्र विषयके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध, प्रत्यक्ष-जनक व्यापार, अपने-पपने काममें रक्तका लगाव। इन्द्रियसन्निकर्ष कार्यमात्र दो प्रकारके कारणसे उपजता है। एक करण-विधायक अर्थात् परम्परासे सम्बन्ध रखनेवाला और दूसरा व्यापार-विधायक अर्थात् साक्षात्कारण होता है। जैसे—काष्ठच्छेदन कार्यमें, कुठार करण-विधायक और चौरनेवाली संयोजना क्रिया व्यापार-विधायक कारण है।

इन नासिका, कर्ण, चक्षुः, जिह्वा, त्वक् और मनः इन छः इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष होता है। इस छहो तरहके प्रत्यक्षका सन्निकर्ष-व्यापार साक्षात् कारण है। तथा वह संयोग, संयुक्तसमवाय, संयुक्त समवेतसमवाय, समवाय, समवेतसमवाय और विशेषणविशेषभावके भेदसे छः प्रकारका है। वस्तुके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध संयोग व्यापार कहलाता है। क्योंकि प्रत्यक्षमें द्रव्यके साथ इन्द्रियका संयोग होते ही उसका ज्ञान हो जाता है। जैसे—त्वक्के संयोगसे स्पर्शयुक्त द्रव्यका वा स्पर्शका प्रत्यक्ष होता है।

द्रव्यमें रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें इन्द्रियसंयुक्त समवाय व्यापार कारण होता है। जैसे—जिसे द्रव्यके दृष्टिगोचर होनेसे उसका गुण रूप प्रभृति भी देखनेमें आता है। वहां उस गुणके साथ इन्द्रियका संयोग हो नहीं सकता। क्योंकि गुणसे गुण कभी नही भिन्नता अर्थात् रूप और इन्द्रियसंयोग दोनों गुण हैं। और गुणमें इन्द्रियसंयोग कभी रह नहीं सकता। इसलिये इन्द्रिय-संयोगको गुणका प्रत्यक्ष कारण कह नहिं सकते इसीसे संयुक्त-समवाय व्यापार माना है। संयुक्त वस्तु होती है, क्योंकि उसमें इन्द्रियका संयोग रहता है। इन्द्रियसंयुक्त रहनेसे ही वस्तु नाम पड़ा है। उस संयुक्त वस्तुमें रहनेवाले गुणादिमें समवाय है। अतः इन्द्रियसंयुक्त समवाय सम्बन्धसे द्रव्यमें रहनेवाले गुणक्रिया जाति प्रभृति पदार्थका प्रत्यक्ष होता है।

द्रव्यमें समवेत-समवाय सम्बन्धसे रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें इन्द्रियसंयुक्त समवेत-समवाय संबंध कारण है। इसलिये द्रव्यमें समवेत-रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें संयुक्त-समवेत-समवायको व्यापार माना है। द्रव्यमें समवेत गुणक्रिया और उसमें रहनेवाली जाति है। इसलिये उसका प्रत्यक्ष इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत-समवायसे होता है। इन्द्रिय-संयुक्त द्रव्य होता है। उसमें समवेत गुणक्रिया इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत है। गुणक्रियामें गुणत्व-कर्मत्व जातिका समवाय है अतः इन्द्रिय-संयुक्त समवेत समवाय-सम्बन्धसे जातिके प्रत्यक्ष होनेमें इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत-समवाय कारण अवश्य स्वीकार करना चाहिये।

शब्दके प्रत्यक्षमें समवाय-व्यापार कारण है। शब्द गुण और कर्ण द्रव्य पदार्थ है। कर्णमें शब्द समवाय सम्बन्धसे रहता है। सुतरां कर्णके समवाय सम्बन्धसे शब्दका प्रत्यक्ष होता है। अतएव शब्दके प्रत्यक्षमें कारण समवाय सन्निकर्ष है।

शब्द-समवेत शब्दत्व जातिके प्रत्यक्षमें कारण समवेत समवाय व्यापार है। शब्द कर्णमें समवेत है। उसमें शब्दत्व जातिका समवाय है। इसलिये शब्दत्व जातिके प्रत्यक्षमें समवेत समवाय कारण माना है।



प्रभाव भी एक पदार्थ है। उसके प्रत्यक्षका कारण इसप्रकार है।

सारांश—जहाँ जिस वस्तुका स्वरूप विलकुल दीख नहीं पड़ता, वहाँ उसका एक विशेषणता-विशेषरूप सम्यन्ध माना है।

प्रभावके प्रत्यक्षमें विशेषणता-विशेषरूप सम्यन्ध व्यापार है। जैसे जलमें अग्नि नहीं, किन्तु अग्निका प्रभाव रहता है। फिर अग्निके प्रभावका कोई आकार नहीं होता। इस जलमें अग्निके प्रभावको कैसे देख सकते हैं। परन्तु जलमें अग्निका प्रभाव देख न पड़ते भी विशेषणता-विशेषरूप सम्यन्ध ही उसका ज्ञान होता है। अर्थात् जल विशेष है और अग्निका प्रभाव विशेष है इसलिये विशेषणता-विशेषरूप सम्यन्धसे प्रभावका प्रत्यक्ष होता है। नहीं तो जलपर चक्षुः जाने ही प्रभाव कैसे समझ सकते हैं। अतएव प्रभावके प्रत्यक्षमें विशेषणता विशेषरूप सन्निकर्षको ही व्यापार अर्थात् साक्षात् कारण माना है।

जैनसिद्धान्तमें नैयायिक मतके समान इन्द्रिय-सन्निकर्षको प्रत्यक्षमें कारण नहि माना है, क्योंकि यदि समस्त इन्द्रियोंका सन्निकर्ष होता अर्थात् यदि समस्त इन्द्रियां विपरीतसे सन्निकृष्ट हो ज्ञान करातीं तब तो स्वीकार भी कर लिया जाता कि इन्द्रिय-सन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण है सो तो है नहीं क्योंकि यह स्पष्टरूपसे देखनेमें आता है कि नेत्र अन्नसन्निकृष्ट होकर ही पदार्थ ज्ञान कराता है। यदि कहोगे कि जिसप्रकार अर्घ्यन आदि इन्द्रियां पदार्थसे संयुक्त हो कर ज्ञान कराती हैं उसीप्रकार नेत्र भी संयुक्त होकर ही ज्ञान कराता है। सो ठीक नहीं, क्योंकि यदि ऐसा माना जायगा तो जिसप्रकार अर्घ्यन इन्द्रियसे विलकुल सन्निकृष्ट शीत वा उष्ण पदार्थ जाना जाता है उसीप्रकार चक्षु इन्द्रियसे भी उसमें समे हुये काजलका ज्ञान होना चाहिये क्योंकि कज्जल नेत्रके विलकुल सन्निकृष्ट है।

यदि यह कहा जायगा कि (चक्षुरप्राप्यकारि—पाततामवपदात्) अर्थात् अर्घ्यन इन्द्रिय जिसप्रकार टके हुये पदार्थके शीत उष्णका ज्ञान नहि करा

सकती क्योंकि वह सन्निकृष्ट नहीं है उसीप्रकार चक्षु भी व्यवहित पदार्थको नहीं जमाता क्योंकि व्यवहित पदार्थके साथ उसका सम्यन्ध नहीं है। सो भी प्रयुक्त है क्योंकि ऐसा माननेसे हेतुको प्रत्यापक और सन्दिग्ध मानना पड़ेगा अर्थात् यह स्पष्टरूपसे देखनेमें आता है कि चक्षु, स्वच्छ काँचेके भीतर रखे हुये पदार्थको और स्वच्छ जलके भीतर पड़े हुये भी व्यवहित पदार्थको देख लेता है। इसलिये पक्षमें साध्यके रहनेसे और साधनके प्रभावसे वह प्रत्यापक हो जाता है तथा लोहकान्त मणि लोहके पास न भी आकर लोहसे संबद्ध हो जाती है। इसलिये उपर्युक्त हेतु सन्दिग्ध है अर्थात् लोहकान्त मणिद्वारा व्यवहित पदार्थका ग्रहण न होनेसे हेतु की सत्ताका तो निश्चय हो जाता है। परन्तु वह “प्राप्त होकर लोहको ग्रहण नहि करती” इसलिये साध्यके प्रभावसे वहाँ यह सन्देह हो जाता है कि चक्षु भी व्यवहित पदार्थको ग्रहण नहि करता इसलिये वह सन्निकृष्ट होकर पदार्थका ग्रहण करता है वा असन्निकृष्ट, इसलिये उपर्युक्त अनुमानमें हेतुके दुष्ट हो जानेसे चक्षु सन्निकर्ष सिद्ध नहीं हो सकता।

यदि मानोगे कि अग्निके समान चक्षु भी भौतिक पदार्थ है इसलिये जिसप्रकार अग्निका प्रकाश संबद्ध हो पदार्थका ज्ञान कराता है। उसीप्रकार चक्षुको किरण भी पदार्थसे संबद्ध होकर ही ज्ञान कराती है। इसलिये चक्षुसन्निकर्ष युक्त है। सो भी ठीक नहीं, क्योंकि लोहकान्त मणिसे ही यहाँ व्यभिचार आता है अर्थात् लोहकान्त मणि भी भौतिक पदार्थ है परन्तु वह पदार्थके पास आकर संबद्ध नहीं होती उसीप्रकार मान भी सो कि चक्षु भौतिक पदार्थ है तथापि वह पदार्थसे सन्निकृष्ट ही ज्ञान नहीं करा सकता।

यदि कहोगे चक्षु यादृ इन्द्रिय है। इसलिये जिस प्रकार अर्घ्यन आदि इन्द्रियां पदार्थसे सन्निकृष्ट हो उसका ज्ञान कराती हैं। उसीप्रकार चक्षु भी पदार्थसे सन्निकृष्ट होकर ही ज्ञान कराता है। सो भी ठीक नहीं। क्योंकि इन्द्रियां (इन्द्रियसन्निकर्ष) दो प्रकारकी

मानी है एक द्रव्येन्द्रिय जो विनयी पक्षक गोलक आदि हैं और दूसरी भावेन्द्रिय जो ज्ञानात्मक हैं उनमें भावेन्द्रियां प्रधान हैं और द्रव्येन्द्रियां गौण हैं इसलिये चक्षु आदि इन्द्रियां सर्वथा बाह्य इन्द्रियां ही हैं यह बात मिथ्या है और चक्षु सर्वथा बाह्य इन्द्रिय नहीं इस बातके सिद्ध हो जानेपर वह सन्निकट होकर ही पदार्थको दिखाता है यह बात भी सर्वथा अयुक्त है।

यदि यह कहा जायगा कि चक्षु 'असन्निकट पदार्थका ज्ञानेवाला है' अर्थात् चक्षुरिन्द्रिय और पदार्थका सन्निकर्ष न हो तो व्यवहित जो जमीन आदिके भीतर रहनेवाले पदार्थ हैं और मेरु कौलास आदि पदार्थ जो अत्यन्त दूर हैं उनका भी चक्षुसे दर्शन होना चाहिये क्योंकि उनके न देखनेमें कोई प्रतिबन्धक कारण नहीं जान पड़ता। और हमारे (प्रतिवादियोंके) मतमें तो कोई दोष नहीं पाता क्योंकि हम चक्षुको तैजस पदार्थ और उससे सूर्य आदि तेजस्वी पदार्थोंके समान रश्मि निकालती हैं ऐसा मानते हैं इसलिये जहांतक रश्मिका संबंध रहता है वहां तकका पदार्थ, दीखता है और जिस पदार्थके साथ रश्मिका संबंध नहीं होता वह पदार्थ नहीं दीखता तथा कठिन मूर्तिक पदार्थमें रश्मियां प्रतिबद्ध भी हो जाती हैं इसलिये हमारे मतमें मेरु वा कौलास पर्वतके अन्तरालमें स्थित बहुतेके वन पर्वत आदिमें स्थित हो जानेमें नेत्रोंकी रश्मियां आगे गयीं वह पातीं अतः मेरु कौलास आदिका ज्ञान नहीं होता ? सो भी सर्वथा अयुक्त है, क्योंकि इस 'शङ्काका समाधान लोहमणिसे ही होजाता है अर्थात् जिसप्रकार लोहमणि लोहेको यथापि खींचती है परन्तु वह व्यवहित लोहेको वा अधिक दूरपर पड़े हुये लोहेको नहीं खींचती उसी प्रकार चक्षु भी पदार्थको दिखाता है परन्तु अयोग्य व्यवहित और अधिक दूरवर्तीको नहीं। तथा प्रतिवादियोंने जो चक्षुको तैजस पदार्थ मानकर उसकी रश्मिकी कल्पना और उनका व्यवधान माना है वह प्रमाणबाधित है—कोई भी प्रमाण इस बातको सिद्ध नहीं कर सकता।

कहोगे कि चक्षु सन्निकट होकर पदार्थको नहीं दिखाता इसमें संशय और भ्रान्ति है अर्थात् यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता कि चक्षु असन्निकट होकर ही पदार्थको दिखाता है। सो भी ठीक नहीं, क्योंकि 'चक्षु, सन्निकट हो करही पदार्थोंका ज्ञान कराता है' इस सिद्धान्तमें भी उपर्युक्त दूषण मौजूद है अर्थात् चक्षु सन्निकट हो पदार्थका दर्शन कराता है वा असन्निकट ही यह संशय वा असन्निकट होकर ही कराता है यह विपर्यय वहांपर भी निर्विघ्नरूपसे विद्यमान है।

यदि कहोगे कि जिसप्रकार अग्नि तैजस पदार्थ है इसलिये उसमें रश्मियां विद्यमान रहती हैं उसी प्रकार चक्षु भी तैजस पदार्थ है इसलिये उसमें भी रश्मियां विद्यमान हैं तथा रश्मिबुल अग्नि जिसप्रकार सन्निकट हो पदार्थोंका प्रकाशन करती है उसीप्रकार चक्षु भी सन्निकट हो पदार्थोंका प्रकाशन करता है सो भी ठीक नहीं, क्योंकि जैनसिद्धान्तमें चक्षुको तैजस नहीं माना तथा जिसमें तेज रहता है वह उष्ण होता है इस्रोतिसे चक्षुका स्थान भी उष्ण मानना पड़ेगा और यह प्रत्यक्षबाधित है क्योंकि यह कोई नहीं कह सकता कि चक्षुका स्थान अग्निके समान उष्ण है। तथा तैजसां भासुरशुक्लरूप माना है यदि चक्षुको तैजस माना जायगा तो उसमें भासुरशुक्लरूप देखना चाहिये।

कहोगे षट्पट्टकी छपासे चक्षुमें अनुपपन्ना और अभासुरपन्ना है सो भी ठीक नहीं, क्योंकि षट्पट्टकी शुष्ण माना है और वह निष्क्रिय है इसलिये उससे स्वरूपका नाश नहीं हो सकता—भासुरपन्ना वा उष्णपन्ना नहीं मिट सकता।

यदि कहोगे नलंकर मार्जार आदिके नेत्रोंमें रश्मि देखनेमें आती हैं इसलिये अवश्य चक्षु तैजसपदार्थ है। सोभी ठीक नहीं क्योंकि किमी किमोके पुनःप्रलय चक्षु भासुररूप भी परिणत हो जाते हैं उन्मत्त ईषो। इसलिये नलंकर जीवोंके चक्षुषोंमें रश्मि देखकर सब जीवोंके चक्षुषोंमें रश्मिका नियम करनेमें कमी चक्षु तैजस पदार्थ सिद्ध नहीं हो सकता।

तथा यह नियम है कि जो पदार्थ गतिमान होता है वह समीपवर्ती दूरवर्ती पदार्थको एक साथ नहीं देख सकता। चक्षुकी रश्मि भी गमनशील है इसलिये उनसे भी दूरवर्ती वा समीपवर्ती पदार्थका एकसाथ ज्ञान न होना चाहिये किन्तु देखनेमें पाता है कि जिस समय वृक्षके नीचे खड़े होकर चन्द्रमाको देखते हैं उस समय वृक्षकी शाखा और चन्द्रमा एकसाथ दीख पड़ते हैं इसलिये मालूम पड़ता है कि चक्षुमें रश्मियाँ नहीं, रश्मियोंके अभावसे वह तैजस नहीं, और तैजस न होनेसे वह पदार्थोंको सन्निकट होकर नहीं जानाता।

यदि चक्षुको सन्निकट होकर पदार्थको जानने-वाला ही माना जायगा तब 'जब कि रात्रिमें बहुत दूर जलती हुई अग्नि दीखती है और उसके पासके पदार्थ नहीं देखते हैं उसी प्रकार जहाँपर प्रकाश नहीं रहता वहाँके पदार्थ भी दीखने चाहिये क्योंकि चक्षु-रश्मियोंकी सम्मति तो बराबर अन्तितक विद्यमान रहती है इसलिये जान पड़ता है कि चक्षुमें रश्मि नहीं इसलिये उसका पदार्थोंके साथ सन्निकर्ष भी नहीं होता।

यदि कहोगे जहाँपर अग्नि है वहाँके पदार्थ दीख सकते हैं क्योंकि वहाँपर प्रकाश रहता है वीचके पदार्थों पर प्रकाश नहीं रहता इसलिये उन्हें चक्षु नहीं देख सकता। सो भी ठीक नहीं क्योंकि अग्नि तैजस पदार्थ है इसलिये उसको जिसप्रकार पदार्थोंके प्रकाशमें अन्य प्रकाशकी अपेक्षा नहीं करनी पड़ती उसीप्रकार चक्षु भी तैजसपदार्थ है इसलिये उसके लिये भी अन्य प्रकाशकी अपेक्षाकी आवश्यकता नहीं इसलिये यह बात सिद्ध हुई कि चक्षु और पदार्थका सन्निकर्ष नहीं होता अतः इन्द्रियसन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण नहीं हो सकता। किन्तु पदार्थोंके नियमित रूपसे और सटतासे जाननेवालो अयोपयम रूप शक्ति कारण है अर्थात् जिस पदार्थका हम ज्ञान वा दर्शन करते हैं उस पदार्थके ज्ञान वा दर्शनमें जो ज्ञानावरण वा दर्शनावरण रूप प्रतिबन्ध है वे जिस समय चक्षु और उपयमरूप अवस्थाको प्राप्त हो

जाते हैं उससमय उस पदार्थका सट ज्ञान वा दर्शन होता है। तथा यहाँपर यह भी समझ लेना चाहिये कि जिसप्रकार इन्द्रियसन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण नहीं उसीप्रकार पदार्थ और प्रकाश भी कारण नहीं क्योंकि अन्य व्यतिरेक व्यभिचार आदि दोषोंसे उनमें भी कारणता सिद्ध नहीं हो सकती। (नित्यार्थवर्तितासङ्कार)

इन्द्रियस्त्राप (सं० पु०) १ सुप्त, नींद। सोते समय इन्द्रियवर्गके उपरम अर्थात् विरामका समय रहता है, अतः न कुछ दीख पड़ता है, और न अनुभव होता है। २ प्रलय। मरणकालमें इन्द्रियोंका प्रलय होता है। ३ चेष्टानाश, चवराहट।

इन्द्रियागोचर (सं० त्रि०) अतीन्द्रिय, जो समझ न पड़ता हो।

इन्द्रियात्मन् (सं० पु०) इन्द्रियमेवात्मा, कर्मधा०। १ विष्णु। २ इन्द्रिय, अज्ञो।

इन्द्रियादि (सं० पु०) इन्द्रियका कारण-रूप अङ्गुष्ठ, वमण्ड।

इन्द्रियाधिष्ठातृ (सं० पु०) अचेतन इन्द्रियोंको निज-निज कार्यमें व्याप्त करनेके लिये ईश्वर द्वारा नियुक्त देवता। इन्द्रिय मन्त्र देखो।

इन्द्रियायतन (सं० स्त्री०) १ शरीर, निष्प। चक्षु, कर्ण प्रभृति इन्द्रियगणका आधार होनेसे शरीरकी इन्द्रियायतन कहते हैं। २ आत्मा, इह। गैयायिकोंके मतसे स्थूल देह और वैदान्तिकोंके कथनानुसार सूक्ष्म शरीर इन्द्रियायतन है।

इन्द्रियाराम (सं० पु०) इन्द्रियसुखारमति, इन्द्रिय-आरम-अञ्ज। इन्द्रियोंको चरितार्थ करनेके लिये भोगासक्त व्यक्ति, रिन्द मस्त।

इन्द्रियार्थ (सं० पु०) रूप रस अग्रे प्रभृति इन्द्रियोंके विषय वस्तुकी चोख। जैसे—मनोहर युवती, बंशीगीत, स्वादुपिष्ट रस, कर्पूरादि गन्ध और अनुरागान्वित अग्रे। इन्द्रियार्थमें भोमुषी इधे सोम प्रायचित्त करने योग्य हो जाते हैं,—

“इन्द्रियार्थेन बन्धेन न प्रबन्धनं कालम्।” (मनु ३।१६)

इन्द्रियावत् (सं० त्रि०) इन्द्रिय-मत्पु मन्त्रे कीर्तयेत् इन्द्र-

विन्देयस्य मयी। पा ६।१।११। इति दीर्घः। इक्षियविमिष्ट, रुक् या तावत् रखनेवाला।

इन्द्रियाविन् (सं० त्रि०) इन्द्रिय-प्राणस्थेन वास्तव्यस्य वहु०, विनि। प्रयस्त इन्द्रिय-विमिष्ट, अच्छे रुक् रखनेवाला।

इन्द्रियासङ्ग (सं० पु०) आत्मसंयम, खुशी और रामसे बेपरवाही।

इन्द्रियेय (सं० पु०) १ जीव, जानू। २ इन्द्रियका देवता।

इन्द्री (हिं) इन्द्रिय देखी।

इन्द्रीशुलाव (हिं० पु०) मूल लानेवाला चौपध, पेगावर दवा। भारतमें प्रायः भाषा जल और भाषा दुग्ध मिलाकर इन्द्रीशुलाव लिया जाता है। शोरा पगेरह खानेसे भी पेगाव बहुत उत्तरता है। इसमें ठण्डी ही चीज पड़ती है। मूल रुकनेपर भात या मिचड़ी खाना चाहिये।

इन्द्रेज्य (सं० पु०) ब्रह्मसति।

इन्द्रेखर (सं० पु०) इन्द्रेण स्थापितः ईश्वरः शिव-लिङ्गम्। शिवलिङ्गविशेष।

इन्द्रीक्षारसायन (सं० स्त्री०) १ इन्द्रकथित रसायनवर्ग। २ ऐन्द्री, कुंदरु। ३ महाभाषणी।

इन्द्रीपल (सं० स्त्री०) नीलहीरक, काला हीरा।

इन्ध (सं० पु०) इन्ध करणे घञ्। १ दौमि, चमक। २ नटविशेष। ३ मदीय, चिराग। (त्रि०) ४ सुलगा देनेवाला, जो जलाता हो।

इन्धन (सं० स्त्री०) इन्धे दीप्यतेऽनेन, इन्ध करणे ल्युट्। १ काष्ठ, लकड़ी। २ अग्निसे ज्वालनार्थ दण्डकाष्ठ, आग जलानेकी लकड़ी। (त्रि०) ३ अग्निको चेतन्य करनेवाला, जिससे आग जले।

इन्धनवत् (सं० त्रि०) इन्धनं प्रज्वालनं विद्यते-ऽग्निम्, मत्तुप्। ज्वालायुक्त, जलता हुआ।

इन्धन्वन् (वे० त्रि०) इन्धनमलम्ब्योयः, वेदे वनिष् निपातनात् प्रलोपः। ज्वालायुक्त, जो जल रहा हो।

इक्षर (हिं० पु०) मसाला मिला हुआ गायका दूध। यह गाय ब्यानेसे दूध दिनके भीतर ही बनाता है।

इन्धका (सं० स्त्री०) इन्ध इव काययति, इन्ध-घट्-

कै-क। इन्धक, नृगशिरा नक्षत्रके उपरिस्थित पांच तारा।

इन्धाम्, इन्धाम् देखी।

इवरायनामा (फ्रा० पु०) त्यागपत्र, जिस कामजमें अपने एक छोड़नेकी बात लिखी जाय।

इवरानो (फ्रा० वि०) १ यहूदी, यहूद जातिसे सम्बन्ध रखनेवाला। (स्त्री०) २ यहूदियोंकी भाषा।

इवलीस (फ्रा० पु०) पिशाच, शैतान्, खत्रीस।

इवादत (फ्रा० स्त्री०) पूजा, भर्चना, वन्दनी।

इवादतगाह (फ्रा० स्त्री०) मन्दिर, पूजा करनेकी जगह।

इवारत (फ्रा० स्त्री०) १ प्रबन्ध, वाक्य-रचना, लुमसेकी बनावट। २ भाषा, लेख, जुबान्, तर्ज-तहसीर। सोलङ्गारकी रङ्गोन, प्रबलको जोरदार, विसूरीयकी मूल-तबील और शिथिल भाषाको लचर इवारत करते हैं।

इवारत-भारायी (फ्रा० स्त्री०) शब्द चित्र, लफ्जोंकी सजावट।

इवारती (फ्रा० वि०) लेखसम्बन्धी, लिखावटके सुताजिक्। जो सवाल लिखकर लगाया जाता हो, वह इवारती कहाता है।

इव्तिदा (फ्रा० स्त्री०) १ आदि, आरम्भ, शुरु। २ उत्पत्ति, पैदायश, निकाल।

इव्तिदायी (फ्रा० वि०) १ प्रस्तावना-रूप, तमहोदे। २ प्रथम, आद्य, आरम्भ, पहला।

इव्न् भाव् उसैबिया—एक सुलमान् प्रत्यकार। इन्हें सुवफिफ्फ्-उद्-दीन पन्व पन्वास प्रहमद भो कहते थे। इन्होंने ई०के १३वें शताब्दमें संस्कृतसे अरबोमाध्यामें 'अयन्-अल-अन्वा-फि-तबकात-उन्-पतिब्बा' (अयान् कैवशम्प्रदाय-सम्पर्किय संवाद-निर्मात) नामक ग्रन्थका अनुवाद किया था। भारतपर्यय जो-जो प्राचोन वैद्य विदेशमें पहुँचते, उन सबका कुछ-कुछ विवरण इस ग्रन्थमें लिखा जाता था। १२६६ ई०में इनकी मृत्यु हुई थी।

इव्न्वतूता—धरतके एक अमणकारी। सुहृद्द तुगलकके समय यह भारतवर्षमें पो से। सुहृद्दने इन्हें दीक्षीका विचार-पति बनाया था। इन्होंने

अपना भ्रमण-प्रज्ञान पुस्तकाकारमें लिखा है। उक्त ग्रन्थमें भारतवर्षके तत्कालीन भाव, इतिहास, भूतत्त्व प्रवृत्तिका खासा विवरण मिलता है। १३३२ ई०में ये मस्केकी तीर्थयात्रा करने गये थे।

**इब्राहीम-आदिल शाह (१म)**—ये आदिल-आदिलशाहके पुत्र, दक्षिण विजयपुरके सुलतान थे। १५३५ ई०में इब्राहीम विजयपुरके सिंहासनपर बैठे थे। १५४३ ई०को इन्होंने अला उद्दौल इमाद शाहकी कन्या रविद्या सुलतानासे विवाह किया था। और २४ वर्ष तक राजत्व किया था एवं १५५८ ई०में ये परलोक सिधारे थे।

**इब्राहीम आदिलशाह (२य)**—तहमासपके पुत्र। इनका दूसरा नाम अबुल मुल्कफर था। १५८० ई०के आरंभ मासमें ८ वर्षकी अवस्थामें ये दक्षिण-विजयपुर (बीजापुर)के सिंहासनपर बैठे थे। इनकी नाबालिगीमें कमाल खान और चांद बीबी सुलतानाने राजकीय भांति इनके राज्यका कार्य चलाया था। प्रथम तो कमाल खां सरल भावसे ही रहते थे, किन्तु पीछे चांद बीबीसे विगड़ पड़े उस समय चांद बीबीके समान बुद्धिमती रमणी बहुत थोड़ी थीं। इन्होंने राजा कीशवर खांकी अपनी पास रख कमाल खानका प्राणवध कराया था। इसके बाद कीशवर खान राज्यके संरक्षक बने। किन्तु उनके भी मारे जानेपर अबुल्लास खानकी राजकीय पद मिला था। कुछ दिन पीछे दिलावर खानने अबुल्लास खानकी चाँचें निकाल साम्राज्यका पटल अपने हाथ में लिया था। १५८० ई०में इब्राहीमने दिलावरको राजकीय पदसे हटाया था और १५८२ ई०में चाँचें लिंघा उसकी कूदहजाने पड़ गया था। १६२६ ई०में ३८ वर्ष राजत्व करने बाद इनकी मृत्यु हुई। इब्राहीम रोजा नामक इनकी कन्या विजयपुरमें बहुत अच्छी बनी है। पत्थरकी दीवार पर कुरान्की आयतें चरबी हर्षमें खुदी हैं। इनके पुत्र सुल्तान आदिल-शाहकी सिंहासनका उत्तराधिकार मिला था।

**इब्राहीम कुतुब शाह**—गोलकुण्डाके राजा कुली कुतुब शाहके पुत्र। कुली कुतुब शाहके भ्राता समीद कुतुब शाहका जय देहान्त हो गया, तब प्रमात्यवर्गने

तत्पुत्र सुमान कुलीको राजा बना दिया। उस समय सुमानकी उम्र केवल बारह वर्ष की थी। इस-लिये राजभार ग्रहण करनेमें इसकी विलकुल असम-देख सब सोर्गोंने इब्राहीमकी राज्यके लिये पसन्द किया। ये विजयनगरमें रहते थे। १५५० ई०की २८वीं जुलाईकी गोलकुण्डेमें इन्हें राजपद मिला। इन्होंने अपर सुसलमान राजगणके साथ योग लगा विजयनगराधिप रामराजसे युद्ध किया और उन्हें मारकर समग्र देश आपसमें बाँट लिया। १५८१ ई०की ५वीं जूनकी ३२ वर्ष राजत्व करने बाद ये अकस्मात् मर गये। इनके पुत्र सुल्तान कुतुब शाह पीछे राजा हुये थे।

**इब्राहीम खान**—अमीर-उल्-उमरा अली मर्दान खानके पुत्र। १६५८ ई०के समय बादशाह आलमगीरने इन्हें पञ्चहजारी बनाया था। पीछे इब्राहीम खानि काश्मीर, लाहौर, बिहार, बंगाल प्रभृति स्वामिके शासनकर्ता भी पद पाया था। बहादुरके राजत्व-कालमें इनकी मृत्यु हुयी थी।

**इब्राहीम खान फतेहगढ़**—नूरजहाँ बेगमके मौला। १६१६ ई०को कासिम खानके पदच्युत होनेपर जहाँगीर बादशाहने इन्हें चार हजार सिपाही साथ बिहारका शासनकर्ता बनाया था। शाहजहाँके अपने पिता जहाँगीरसे विरोध करनेपर यह ठाँकमें लड़े और पन्तकी कट मरे।

**इब्राहीम खान सर**—अयान शासनकर्ता राजा खानके पुत्र और सुल्तान शाह आदिलीके भगिनोपति। १५५५ ई०में इन्होंने बहुसंख्या सेन्य मन्त्रपर यद्यपि दिल्ली और आगरा नगर लीते लिये थे तो भी सिंहासनपर जमकर बैठ न सके। अहमद खानने पञ्चावसे सत्त बढ़ाकर युद्धमें इन्हें हरा गंधानकी भगा दिया और दिल्ली तथा आगरे पर अपना अधिकार जमा लिया। १५६० ई०की उड़ीसेमें एक युद्ध हुआ था। समीने बङ्गालके नवाब सुलेमानने इन्हें को मार डाला था।

**इब्राहीम निज़ामशाह**—बुरखान निज़ाम शाहके पुत्र। १५८५ ई०के अक्टूबर मासमें इन्हें दक्षिण-अहमद-

नगरका राजत्व मिला था। चार मास राजत्व करनेके बाद इन्हें (निजाम-शाहकी) बीजापुरके नवाब इब्राहीम आदिलशाहसे लड़ना पड़ा। इसी युद्धमें ये मारे गये।

इब्राहीम शाह शरकी—युद्धप्रदेश बीजापुरके एक नवाब। १४०२ ई०में अपने भ्राता सुवारिक शाहके मरनेसे ये गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने अराजकता रहते भी साहित्यकी बड़ी छवति की। उस समय हिन्दुस्थानमें बीजापुर विद्याका भवन बन गया था। १४४० ई०की शरकीकी मृत्यु हुई। प्रजा इससे बहुत सन्तुष्ट रहती थी।

इब्राहीम हुसैन लोदी—सिकन्दर शाह लोदीके लड़के। १५१० ई०के फरवरी मासमें पिताकी मृत्यु होनेसे आगरामें ये सिंहासनपर बैठे। इन्होंने सोलह वर्ष राजत्व किया था। १५२६ ई०की २०वीं फरवरीको पानीपतमें बाबर शाहसे लड़ने पर ये मारे गये।

इब्राहीमी (अ० पु०) सुद्राविशेष, एक सिक्का। यह इब्राहीम लोदीके समय प्रचलित था।

इम (सं० पु०) इ-भन्। १ अक्षर। उच् १/१११। १ इस्ती, हाथी। २ पाठकी संख्या। आठों दिशाओंमें एक-एक दिग्गज रहता है इसलिये इम शब्द आठकी संख्याका बोधक है। ३ नागकेशर। (वे० पु०) ४ अमुचर, नौकर। ५ निर्भय शक्ति। (त्रि०) ६ अमुचर द्वारा आहत, जो नौकरोंसे घिरा हो।

इमकणा (सं० स्त्री०) इमोपपदा कणा पिप्पली, शाक० तत्। गजपिप्पली, गजपीपर।

इमकुम्भ (सं० पु०) इस्तीका मस्तक, हाथीका सर।

इमकण्ठ (सं० पु०) इमकणा देखो।

इमकण्ठा, इमकणा देखो।

इमकेशर (सं० पु०) इमसद इव केशरः यस्य, बहुव्री०। १ नागकेशर-हृत्। यह हृत् ठीक वृत्त-जैसा होता है। इसकी पुष्पकी सुगन्ध एक कोसतक पङ्क्तती है। २ नागकेशर पुष्प।

इमकेशर, इमकेशर देखो।

इमगन्धा (सं० स्त्री०) इमस्य गन्ध एकदेशो दन्त इव पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। नागदन्ती हृत्, हत्याजरी, सरियारी। इस हृत्के फल, पुष्प, पत्र, वस्त्रल प्रशस्ति समस्त चक्र ही विषसे होती हैं। नागदन्ती देखो।

इमगन्धिका, इमगन्धा देखो।

इमदन्ता (सं० स्त्री०) इमस्य दन्तवत् शब्दं पुष्पमस्याः। १ इक्षितशृङ्गोदृष्ट, हाथीसूँड। २ नागदन्तीहृत्, सरियारी।

इमदन्ताक्षा (सं० स्त्री०) नागदन्ती, सरियारी।

इमनिमीलिका (सं० स्त्री०) इमस्यैव निमीलिका, इम-निमील-क-टाप्, इ-तत्। १ सिद्धि, भाग। इस हृत्के पत्र वा बीज खानेसे नया चढ़ता है और चक्षुः हाथीकी तरह बेट जाते हैं। इसीसे भांगकी इम-निमीलिका कहते हैं। २ पटुता, रक्षिता, होमियारी, कुद्रदानी।

इमपत्रिका (सं० स्त्री०) चिल्लीशाक, एक सब्जी।

इमपासक (सं० पु०) इक्षिपक, महावत।

इमपुया (सं० स्त्री०) नागकेशर।

इमपीठा (सं० स्त्री०) पीठा पुंलक्षणा इमी, जाति-त्वात् पूर्वनिपातनात् पुंवङ्गावय। १ पुरुषहस्तीकी भांति चिह्नयुक्त इक्षिनी। २ करियावक, हाथीका बच्चा।

इमबला (सं० स्त्री०) नागबला, पान।

इमभर (सं० पु०) इक्षिसमूह, हाथीका झुण्ड।

इमभस्त्रक (सं० पु०) पुत्रदात्री लता, बीटा देनेवाली वेल।

इमसाचल (सं० पु०) इमसाचल्यति, इम-सा-चल् वाहुलकात् णिष्। सिंह, शेर। पर्वतोंपर सर्वदा रत्नपानके लिये हाथियोंको मारता फिरता है इसलिये सिंहका नाम यह पड़ा है।

इममूलक (सं० स्त्री०) १ इक्षिमूलक। २ गन्ध-हृत्।

इमया (सं० स्त्री०) इमेर्यायते भक्ष्यते, इम-या कर्मणि घल्यत्, इ-तत्। स्वर्णचौरी हृत्। हाथीके खानेसे इस हृत्का नाम यह पड़ा है।

इमयुवति (सं० स्त्री०) युवतिः इमी, पूर्वनिपातनात् पुंवत् च। १ युवति इक्षिनी, नौजवाल् हथियो। २ करियावक, हाथीका बच्चा।

इमराज (सं० पु०) विराजत इस्ती। यह संपूर्ण इक्षियोंका राजा होता है।



विवाहादि चत्सर्वों पर बांरी इमलीकी पत्तियोंसे चड़ी-चड़ी पत्तों बना लोगोंको दिखाता है और पुरस्कार पाता है।

**इमाद्-उल्-मुल्की**—दक्षिणापथमें इमाद्-शाही राजवंशकी स्थापयिता। विजयनगरवाले किसी मुसलमान्की घर इनका जन्म हुआ था। बाल्यकालमें ये बन्दो बन बरार गये थे। कुछ दिन बाद बरारके सेनापति और शासनकर्ता जहान् खान्ने इन्हें अपने शरीररक्षीके पद पर नियुक्त किया था। मुहम्मद शाह बहमानीके राजत्व कालमें इन्होंने इमाद्-उल्-मुल्कीकी उपाधि और बरार-सेनानायकका पद पाया था। अपने परिपोषक खान्जा महेमूदके मरनेपर ये बरारके शासनकर्ता बने। जब सुलतान् महमूद बहमानी बरारके नवाब हुए, तब यह मन्त्रीके पदपर बैठे थे। किन्तु अपराधर घमालके वैभव देख न सकनेसे इन्होंने शक्तिपद छोड़ दिया। पीछे ये स्वतन्त्र नवाब हो गये। एल्लिपुर इन्होंने अपनी राजधानी बनाई थी। १५१३ ई०को इनकी मृत्यु हुई। बादमें इनके ल्ये छत्रपुत्रको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला था।

**इमाम** (अ० पु०) प्रधान याजक, स्तुतिपाठ करनेवाला। मुसलमानोंका श्रिया सम्प्रदाय, मुहम्मदके जामाता फलीको और उनके परा-पर वंशधरोंकी इसी नामसे पुकारते पाया है। सब मिलाकर १२ इमाम हुये हैं,—

१	इमाम	फली
२	"	इसन
३	"	इसेन
४	"	औन-उल्-बाविदीन्
५	"	मुहम्मद बाकिर
६	"	जाफर सादिक
७	"	मूसा काजिम
८	"	मुहम्मद तमी
९	"	फली नकी
१०	"	इसेन भास्कीरी
११	"	महदी
१२	"	फली मूसा रजा

किसी-किसीके मतमें जस सेनेपर भी इमाम महदी हिये हुये हैं। वेही जगतमें इसलाम धर्मका प्रचार करेंगे। कितने ही वर्ष पहिले मित्रमें युद्ध होते समय एक इमाम महदी दोख पड़े थे। वे अपनेकी वारसों इमाम बताते थे। चारों ओरसे मुसलमानोंने फलीका पड्डा उन्हें साधाय दिया। धर्मयुद्धमें विधर्मियोंको हराना और मुसलमान्को बचानाही उनका उद्देश्य था।

सबो सम्प्रदायका मत स्वतन्त्र है। उसके कथनानुसार प्रत्येक भजनमन्दिरमें रहनेवाले साधान् गुरु ही इमाम कहला सकते हैं। वह चार इमाम मानता है,—हनीफ, मालिक, शफी और इनबल। इमामदस्ता (हिं० पु०) उलूखत-मुसल, खरल और खुटका। यह लोह, पत्थर या पीतलका बनता है और मसाला तथा दवा कूटनेके काममें पाता है।

**इमामवाड़ा** (हिं० पु०) १ ताजिया रखने और गाड़नेकी जगह। यहाँ मुसलमान् शवपर भेंट चढ़ाते हैं। २ मुहरम त्योहार सम्पन्न करनेका भवन। इमामवाड़ेमें मुहरमके समय फली और तत्पुत्र इसन तथा हुसैनके स्मरणार्थ उपासना की जाती है।

**इमारत** (अ० स्त्री०) १ शमोरेके राज्यका जिला। २ शासन, हुकूमत। ३ वैभव, श्रवण। ४ चमत्कार, शौक। ५ विद्यालय भवन, शालोगान् मकान्।

**इमि** (हिं०-कि०-वि०) एवम्, इसतरह, ऐसे।

**इन्तेहान्** (अ० पु०) १ दिवार, परछ। २ परीक्षा, जांच, प्रकृताष्ट।

**इन्ना** (अ० पु०) खेजमवाली, हिंजी।

**इयसु** (वे० त्रि०) यज्ञ-उ वेदे निपातनात् सम्प्रसारणम्। यज्ञ करनेकी इच्छा रखनेवाला। (यज० १०।१।)

**इयत्** (वे० त्रि०) इदं परिमाणमस्य, वस्तु घादेयम्। निर्दिष्टार्थ की बात। या १।४।४। एतावत्, इसकदर, इतनासा।

**इयत्तक** (वे० त्रि०) इयत्ता इति कुप्रतिश्रुत्यै कन् प्रत्ययः। निर्दिष्ट इयत्ता, अल्प-प्रमाण, बहुत छोटा।

‘ययत्तकः कुप्रतिश्रुत्यै प्रत्ययः।’ (वाचस्पे)

**इयतो** (सं० स्त्री०) इयतो भावेः इति तत्त्वं। एतावत्, इतना परिमाण, मुकुरर मिन्दोर, आन्दाज़।



इयम् (वे० त्रि०) कर्तरि षच्च् कश्च। १ गन्ता, चलनेवाला। (स्त्री०) भावे षच्च्। २ गमन, चाल।  
इर (सं० पु०) इर-क। उर्वरा भूमि, उपजाऊ जमीन।

इरमद (वे० पु०) इरया जलेन मद्यते, इरा-मद-  
खच्च् निपातनात् क्तञः। लट्पण्येति। शा ११५५८।

१ वषानन्त, विषलीकी भाग। २ बहुवानल।

इरण्यु (वे० पु०) इययोका ईश्वर। 'इरणी सुवर्णना-  
मोक्तः' (भाष्य)

इरण्य (सं० स्त्री०) इरण्य ईरिण, षट्-षण्य इयोदरा-  
दित्वात्। ऊपर भूमि, ईश्वरान, जिस जमीनपर  
कुछ न उगे।

इरशास (च० पु०) १ प्रशासन, हिदायत। २ पादेय,  
पुष्प। ३ इच्छा, मरजी।

इरसास (च० पु०) १ वाचिकपत्र, ऊँदरी चिट्ठी।  
२ मासिक राजस्व, माहवार भामदगी। छोटा पफसर  
बड़े पफसरके पास प्रत्येक मास इरसास पहुँचाता है।

इरसी (हिं० स्त्री०) चक्रधुव, पहियेका मध्यर।

इरा (सं० स्त्री०) इ-इन् गुणभावय निपातनात्  
पद्यवा इ कामं राति, इ-रा-क-टाप्। १ भूमि,  
जमीन। २ रात्रि, रात। ३ जल, पानी। ४ भय,  
पनाज। ५ सुरा, गराब। ६ वाण्य, वात। ७ सर-  
स्वती। ८ कश्यपकी स्त्री। इरादेवी इक्ष्वाकु, वक्षी  
और समस्त श्वजातिकी देवा करती है। ९ भानन्द,  
रुग्नी।

इराय्—१ पारस्य प्रदेश-विशेष, ईरानका एक भाग।  
यह एरासान्धे, पूर्व पवस्थित है। इराक् उत्तर-  
पश्चिमसे दक्षिण-पूर्व ६०० मील लम्बा और उत्तर-  
पूर्वसे दक्षिण-पश्चिम १०० मील चौड़ा है। सुसनमान्  
महावंक समय इराकी भारतवर्ष का नैतिक कार्य  
करते थे। २ एशियायी तुर्कस्थानका एक प्रदेश।  
यहाँके लोग परबो बोलते हैं। यह देश दो भागोंमें  
विभक्त है—दर्रा और गीला। सखेका लम्बाय  
रक्षा और गीलेका एराय है। किन्तु गीले भागमें  
हृदिकार्य अधिक होता है। यहाँ तिगरिस और ट्रेतस  
दो नदी बहती है। इनके बिना-किनार खजूरके पेड़

लगे हैं। गीले भागमें दलदल बहुत है। वहाँ हथड़ी  
रहते हैं यहाँके राजाओंके किसे मिटोके होती है। जो  
चावल बोते और चटायो बुनते हैं। मसुन-हाथीके लोग  
बड़े चपटनी हैं। यहाँ यात्री प्रायः लुट जाते हैं।  
उत्तरसे यमर आकर और भी अधिक चपट चप-  
स्थित किया करते हैं। किन्तु तुर्क-सत्कार अब  
धीरे-धीरे तिगरिस पर अपना प्रभाव बढ़ा रही है।  
ट्रेतसकी बाढ़ रुकने और दलदल सुखनेका प्रयत्न  
भी हुवा है। यहाँके अधिवासी अधिकतर ग्रीका हैं।  
इनकी बुद्धि तीव्र होती है। गर्मीमें यहाँके जमीर  
लोग हिन्दुस्थानी पक्ष व्यवहार करते हैं।

बगदाद और बसरा दोनों स्थान इराकमें थे हैं।  
यहाँसे खजूर, पनाज, चावल और लून बाहर भेजा  
जाता है। बाहरसे पानेवाले मालमें कपड़ा, मटोका  
तेल और पत्थरका कोयला प्रधान है। तिगरिसमें  
व्यापारी लड़ाऊ चलते हैं। ट्रेतसमें यात्रियोंकी  
नौका रखीसे पादमी खींचते हैं। यहाँ पक्षी  
सङ्की नहीं हैं। इसलिये बाढ़ आ जाने और दल-  
दल रहनेसे ऊँटपर लादकर माल भेजनेमें असुविधा  
होती है।

ई०के ७वें शताब्दीमें इराककी अधिक औद्योगिक  
थी। अब्बासी खलीफोंकी अधीनतामें यहाँ हृदिकार्य  
बड़े जोर जोरसे चला था। किन्तु उनकी अधिकार  
उठजानेसे फिर यह देश पूर्ववत् बन्द हो गया। अब  
अंगरेजोंने बगदाद जीत लिया है। अंगरेजी होनेसे फिर  
यहाँ धनधान्य बढ़नेकी आशा होती है। इराकमें बाबि-  
लन, सिल्युकिया, तिसफोन प्रभृति प्राचीन नगरोंका  
धंभावशेष देखा है। १ सिन्धुप्रदेशकी एक नदी। यह  
अचा० २५' २०' स० तथा द्रावि० ६०' ४५' पू०  
पर इन्दुस पर्यन्तके गोचरेमें निकलती है और दक्षिणपूर्व  
४० मील बहकर कच्छ में भीषण जा गिरती है।

इराकी (च० त्रि०) इराक् देशीय, इराक् मुल्कके  
मुताबिक।

इराक्षी (सं० पु०) इरा लभं औरमिय यद्य,  
बहुमी०। औरसमुद्र। इस समुद्रके लक्षमें दूधका  
साद है।

हराचर ( सं० स्त्री० ) हरायो चरति, हरा-चर-ट ।  
चरिटा पा १/१५१ । १ करका, घोसा । चैत्र-वैशाख  
मासमें मेघ बरसनेसे प्रायः घोसे पड़ते हैं । २ भूचर,  
जमीनका जानवर । ३ खेचर, भाखानी लोग—जैसे  
देवता भूतप्रेतादि ।

हराज. ( सं० पु० ) हरायो जायते, हरा-जन-ड ।  
कन्दर्प, काम ।

हरादा ( सं० पु० ) १ इच्छा, भरजी । २ अभिप्राय,  
मतसब । ३ सङ्कल्प, कृत्स्न । ४ विचार, तजवीज ।  
५ निर्दिष्ट स्थान, ठिकाना । ६ अर्थ, सुराद ।

हरामुख ( सं० स्त्री० ) १ असुरनगर विशेष । यह मेरुके  
निकट था । २ प्रदोष, सम्झा, ग्राम पड़नेका वक्त ।

हरावत् ( सं० पु० ) हरा विद्यतेऽत्र, हरा भूजन् मत्पु  
मस्य च वः । १ समुद्र, बहर । २ मेघ, बादल ।  
३ राजा, नवाब । ४ अजूनके एक पुत्र । इन्होंने नाग-  
राजकी कन्या उलूपीने गर्भ और अर्जुनके औरससे  
जन्म लिया था । अर्जुनसे कुछ ही इरावान्‌को पिटव्य-  
ने छोड़ दिया, इसलिये ये जमनी द्वारा नागलोक  
हीमें प्रतिपालित हुये थे । एक दिन अर्जुन नागलोक  
गये और इन्होंने उन्हें बंध अपना सकल हत्तान्त बताया ।  
पिताकी आज्ञासे ये रणमें पहुँचे और पार्यश्रुत राघव  
द्वारा मार डाले गये । ( वै० त्रि० ) ५ सुखद, जिससे  
आराम मिले । ६ खाद्य-सम्पन्न, जिसके पास खानिका  
सामान रहे । ७ आखासक, तसखी देनवाला ।

हरावती ( सं० स्त्री० ) हरा वनं तदस्या पक्षिः, हरा-  
मत्पु वत् । १ नदी, दरया । २ नदीविशेष,  
पञ्जाबका एक दरया । शब हरी राखी कहते हैं ।  
राखी है । ३ वटपत्नी, पथरचटा । ४ रुद्रपत्नी । ५ प्रह-  
रक्ष एक नदी । हरावती है ।

हरावदी—ब्रह्मदेगकी प्रधान नदी । यह ब्रह्मदेयके  
पैगु और हरावदी विभागमें उत्तरी दक्षिणकी बहती  
है । इसकी उत्पत्तिका स्थान अनिचित है । सम्भवतः  
हरावदी पतकीवी, पर्वतकी दक्षिण-घाटीसे निकली  
है । छोटी और बड़ी दो शाखा मिलकर यह नदी  
बनी है । हरावदीमें कितनी ही नदी पाकर गिरती हैं ।  
मोगाद्रके सङ्गमपर यह ५०० से २५० गज तक चौड़ी

हो जाती है । वहाँ इसकी धारा बहुत ही तीव्र बहती  
और पानीमें घूम-घूमकर लहर उठती है । भाभीमें  
जहाँ तापिङ्ग मिली है, वहाँ इसकी अपूर्व शोभा खिली  
है । मन्दावयसे थोड़ी दूर हरावदीके किनारे सज्जी  
खूब जगती है । इसकी उपत्यकामें चायलकी क्षति की  
जाती है । मैदानमें प्रतिवर्ष बाढ़ आती है । नदी ८००  
मील लम्बी है । भकाकताङ्ग तक तो इसका तल पयरीला  
पड़ता, उसके बाद रेत तथा दलदल मिलता है । बारहो  
मास इसमें छोटे-छोटे जहाज चला करते हैं । वर्षा में  
रंगूनसे बड़े-बड़े जहाज भी आते जाते हैं । रंगूनसे वासिम  
और मन्दावयकी सत्ताहमें दो बार जहाज छूटता है ।

हरावेक्षिका, परिषेक्षिका देखो ।

हरिका ( सं० स्त्री० ) हरैव, हरा-लन् भत इत्वम् ।  
जल, पानी ।

हरिकावन ( सं० स्त्री० ) हरिका प्रधामं वनम्, शाक-  
तम् वा इ-तम्, खलं बाहुलकात् । मिमोशपरिचयनस्यतिभः ।  
पा ५/५१३ । खलके निकटस्थ वन, पानीके पासका  
जङ्गल ।

हरिकील ( सं० पु० ) अक्षीलवृक्ष, टिरेका पेड़ ।

हरिण ( सं० स्त्री० ) ऋ भर्तः किदिश् इमन् । १ ऊपर  
भूमि, बहर जमीन । २ जलप्रवाह, माला, कुर्वा ।  
३ भूमिछिद्र, खन्दक । ४ मरुभूमि, रेगस्तान ।  
५ वेदोक्त प्राचीन जगपद । आचार्य देखो ।

हरिण ( वै० त्रि० ) १ मरुभूमिसम्यम्भीय, रेगस्तानके  
'सुताक्षिक । ( स्त्री० ) २ ऊपर चैत्र, बहर खेत ।  
( वाचस्पत्यत मतपञ्चाङ्गप्रभाष्य १/५१११ )

हरिन् ( वै० त्रि० ) हरि कदादित्वात् णिनि यद्योपः ।  
१ प्रेरक, भेजनेवाला । 'हरी हरोता भेति ।' ( अग्राधे  
वाचस्पत्य १/५१११ ) २ ईर्ष्यक, इसदी ।

हरिमिद ( सं० पु० ) इरी व्याधिनकतया ईर्ष्यकः  
मिदो निर्यासो यस्य, बहुव्री० । हरिमिद, मिट्ठदिर ।  
यह एक प्रकारका खेर होता और गुप्तमें बापाय  
तथा चण्य रहता है । इससे सुप्त एवं दन्तरोगका  
औषध बनता है और रक्त गिरना बन्द हो जाता है ।  
कण्डू, विष, ज्ञेया, कृमि, कुष्ठ और विपाक ग्रन्थों  
हरिमिद औषध हो नष्ट कर देता है ।

इरिम्बिठि ( सं० पु० ) काण्डवर्गीय एक व्यक्ति ।  
 इरिम्बिठा ( सं० स्त्री० ) इरिम्बी चाची विज्ञा चेति ।  
 मस्तकका एक सुदृ ग्रन्थ ।  
 इरिम्बिठि, इरिम्बिठा देखो ।  
 इरिम्बिठिका ( सं० स्त्री० ) त्रिदोष-लक्षणाक्रान्त मस्तक-  
 की गोलाकार पिड्ढकाविशेष, (Carbuncle of head)  
 माथेका एक फोड़ा । इसके होनेसे बड़ी ही वेदना  
 होती है । कभी कभी तो स्वर तक बढ़पाता है ।  
 पित्तजन्य विषर्प रोगकी तरह वैद्य इसकी भी चिकित्-  
 सा करते हैं । होमियोपैथिकके मतमें ऐसे रोगपर  
 हृदयार सलफर लगानेसे विशेष फल मिलता है । कोई-  
 कोई चिकित्सक मिनिमिया, वेलेडोना प्रभृति चन्दान्य  
 औषधियोंकी भी प्रयोग करना अच्छा समझते हैं ।  
 इरिग ( सं० पु० ) १ विष्णु । २ यक्ष । ३ राजा ।  
 ४ वागीश ।  
 इर्द-गिर्द ( हिं० लि० वि० ) समन्वतः, चारो ओर,  
 दाहिने-बायें ।  
 इर्म ( सं० स्त्री० ) १ त्रण, फोड़ा । २ सत, लूथूम, घाव ।  
 इयं ( वै० लि० ) इरसु-यन् वेदे निपातनात् । प्रेरक,  
 भेलनेवाला ।  
 इर्वाद् ( सं० पु० ) इर् वीज इयति व्याप्नोति, इर-  
 ष्ट वाहुलकात् लण् । कर्बटी, ककड़ी ।  
 इर्वाहक ( सं० पु० ) नृगविशेष, एक जामवर । यह  
 पर्वतकी गुहाओंमें रहता है ।  
 इर्वाहयक्ति, इर्वाहयिका देखो ।  
 इर्वाहयक्तिका ( सं० स्त्री० ) इर्वाहः शक्तिका इव,  
 लण्० कर्मधा० । निर्भयकर्कटी, फूट ।  
 इर्वाशु, इर्वाह देखो ।  
 इर्वाद्, इरवाह देखो ।  
 इर्वना ( हिं० ) लण् देखो ।  
 इल ( सं० पु० ) इल-क । कर्दम प्रजापतिके पुत्र ।  
 इलनाम ( सं० पु० ) १ फलह, मदनासी । २ चप-  
 राध, जुमै । ३ निम्दा, बिकारत ।  
 इलविल ( सं० पु० ) दशरथके एक पुत्र ।  
 इलविज्ञा ( सं० स्त्री० ) कुबेरकी माता, पुत्ररूपकी  
 पत्नी और यणविन्दुकी कन्या ।

इलहाक ( सं० पु० ) १ योग, लोड़ । २ वादी तथा  
 प्रतिवादीसे लिया जानेवाला शब्द, जो मिहनताना  
 सुदोषी और सुहाइससे मिलता हो ।  
 इलहाम् ( सं० पु० ) १ सुश्राव्य शब्द, अच्छी भाषा ।  
 २ आकाशवाणी, परमेश्वरकी बात ।  
 इला ( सं० स्त्री० ) इल-क-टाप् । १ प्रियी, जमीन् ।  
 २ वाक्य, बोली । ३ गो, गाय । ४ सप्रगीला, खाव  
 देखने या ज्यादा सोनेवाली औरत । ५ जम्बूद्वीपके  
 नव वर्षमें एक वर्ष । ६ वैद्यकत मतकी कन्या । यह  
 विष्णुके वरसे पुरुष हो सुश्रुत कहायी थीं । पननार  
 महादेवके अभिषेक कुमारवर्गमें सुमनेसे यह फिर स्त्री  
 हो गई । बुधने इनसे विवाह कर पुरुषवा नामक पुत्र  
 उत्पन्न किया था । किन्तु इनके पुरोहित वगिष्ठदेवने  
 गिवकी उपासना कर इनके एकमात्र पुरुष और एक  
 मास स्त्री रहनेका वर प्राप्त कर लिया था । ७ कर्दम  
 प्रजापतिके पुत्र इल । कार्तिकेयके जन्मस्थानमें जानेसे  
 ये स्त्री हुये और इला नामसे प्रसिद्ध रहे । पीछे  
 इन्होंने भगवतीकी चाराधनासे एकमात्र स्त्री और एक  
 मास पुरुष रहनेका वर पा लिया था । ८ देखो ।  
 इलाका ( सं० पु० ) १ सम्पर्क, तालुक, लगाव ।  
 २ नियोग, सरोकार । ३ उद्देश्य, निष्ठा । ४ चहल,  
 कवजा, एकड़ । ५ राज्य, रियासत । ६ विभाग,  
 हिस्सा । ७ न्यायमूल्य, हुनरानी । ८ पद, मोहड़ा ।  
 इलाकावन्द ( सं० पु० ) दोषघटकार, पटवा ।  
 इलाकावन्दी ( सं० स्त्री० ) १ दोषघटकारकी वृत्ति, पठवे-  
 का काम । २ वस्त्राभरणक्रिया, मोटे-किनारीका काम ।  
 इलावी ( हिं० पु० ) वस्तुविशेष, किसी किछका  
 कपड़ा । इसमें रेशम और सूत दोनों चीजें मिली  
 रहती हैं ।  
 इलागोल ( सं० स्त्री० ) प्रियी, जमीन् ।  
 इलावी, इलावो देखो ।  
 इलाज ( सं० पु० ) १ उपाय, तद्वीर, दीड़-धूप ।  
 २ निवृत्ति, कुटकार । “बदन बिदेका का इलाज ।” (कोशीली)  
 ३ बिकित्वा, दवा-मालमा । ४ दण्ड, सजा ।  
 इलातन ( सं० स्त्री० ) १ रागिणिका चतुर्थ स्थान ।  
 २ प्रियीतल, सतह-जमीन् ।

इलायची (सं० पु०) यज्ञविशेष।

इलाय (सं० ली०) १ उत्पन्न वा कन्दोविशेष, वक खास जलवा या बहर। २ एक सामन्।

इलायच (सं० पु०) भागविशेष।

इलाय (हिं०) पत्तन देवी।

इलायची (हिं० स्त्री०) एला, इलाचो। (Cardamom) संस्कृतमें इसे वसुलगन्धा, ऐन्दो, द्राविडी, कपोत-पर्णी, बाला, बलवती, हिमा, चन्द्रिका, सागर-गामिनी, गान्धालीगर्भा, एलोका और कायस्या कहते हैं। इलायची छोटी और बड़ी या गुजराती और पूर्वी दो प्रकारकी होती है। छोटीका संस्कृत नाम उपकुक्षिका, तुल्या, कोरङ्गो, त्रिपुटा, वृटिवयस्या, तीक्ष्णगन्धा, सूक्ष्मा तथा त्रिपुटि और बड़ीका घृषिका, चन्द्रबाला, निष्कटि, बहुला, खल्लेला,



इलायचीका दृश्य।

सालेया एवं ताड़काफल आदि है। छोटी और बड़ी दोनों इलायची वैद्यकमतसे शीतल, तिक्त, चण्ण, सुगन्धित, हृद्रोगकारक और पित्तरोग, कफ, मल-भेद, वमन एवं शूलकी भाग करनेवाली हैं। बड़ी

विग्रेयतः शूल, कोष्ठग्रह, पिपासा, हृदि एवं वायु और छोटी कफ, श्वास, काय, चर्मा तथा मूत्र-क्षयकी मिटाती है।

इसका यौदा चारसे आठ फीटतक लंबा होता और सदा हरा-भरा रहता है। इसकी मोटी लकड़ीको जड़ जमीनमें जमतो और उसके ऊपरी भागसे हवर उधर खड़ी छाली निकलती है। इलायची पर फल-फल दोनों लगते हैं। भारतवर्षके माना स्थानोंमें इलायची उपजती है। दक्षिणकी ओर कनाड़े, मल्लूर, कोङ्कण, तिरुवाङ्कोर और मद्रासकी पार्श्वभूमिमें इसका जङ्गल खड़ा है। इसका दृढ चार वर्षमें बढ़ता और सातमें फलता है। फल पानेपर जलक खाखा-प्रशाखासे बाँजकोय तोड़ लाते हैं। सुरभरे पत्थरकी भूमि इसके लिये उत्तम है।

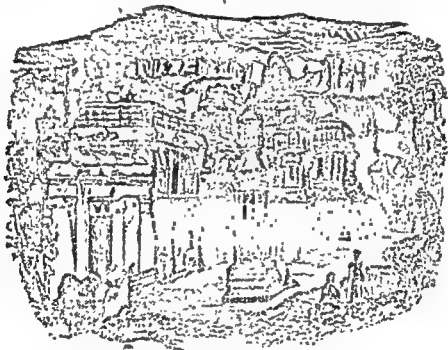
युरोपमें पहले इलायची न होती थी। पीछे भारत-वर्षसे वहाँ लोग इसे ले गये। मुसलमान वैद्य छोटीकी स्त्री और बड़ीकी पुंजातीय समझते हैं। छोटी इलायची सफेद रहती, दक्षिणात्यमें उपजती और पान तथा मिठावौमें पड़ती है। यह भी कयी तरहकी होती है—कागुजी, साखावरी, गुजराती और मिहलो आदि। बड़ी नेपाल तथा बङ्गालमें उपजती और दाल-तरकारीके काम आती है।

इलायचीकी कन्दमूल और बोज दो प्रकारसे तैयार करते हैं। भूमि विकण और उर्वर रहना चाहिये। अधिक वायु वा ताप लगनेसे दृढ मर जाता है। खेतमें हवर-उधर कुछ दूरे बड़े बड़े हचोंके रहनेसे काम होता है। दो तीन वर्षके दृढका कन्दमूल भी लगा सकते हैं। गद्दा एक फुट गहरा और पहारह दृढ चौड़ा होना चाहिये। इसके योर्दोंके बीच १२ फीटतक पत्थर रखते हैं। खेतका घासफूस, कद्दू-पत्थर और कृष्णकण्ट साफ कर दिया जाता है। किन्तु पौदा निकल पानेपर निरानेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। क्योंकि इलायचीके नीचे दूसरी चीजका जगना पसन्न है। सावधानतासे बीजको छालते हैं। किन्तु बीजको गहरमें बोना अच्छा नहीं। इसे ८ इंच बढ़नेपर पौदेकी छडाइकर दूसरी जगह लगा देना चाहिये।

‘रायपको खायी’ गुहाके चारो ओर प्रदक्षिणा है। मन्दिरके मध्य मण्डपमर्दिनी, हरणर्षितो, गिव-साण्डय प्रभृति सुन्दर सुन्दर देवीकी मूर्तियां मोहित हैं। इसमें किसी स्थानपर दगम्कन्ध रायणके कोनास उठानेका दृश्य है; तो कहीं एक दृष्टमें अंसि और दूसरे दृष्टमें पात लिये करिषमंसे आहत समुद्र मेखमूर्ति रत्नागुरका विनाश कर रही है। कहीं यदि ऐरावतपर इन्द्रापी विराजमान है तो कहीं शूकरपर वाराही बंठी है। कहीं यदि गरुड़पर कौमारो मोहित हैं तो कहीं उपमवर माहुरारी मूर्ति स्थित है और कहीं यदि हंसपर सरस्वती बंठी है, तो कहीं निर्जनस्थानमें बैठकर गहर डलरू बत्ता रहे हैं। इस प्रकार इस

निर्जन पार्वत्य प्रदेशमें नाना देवदेवी मूर्तियोंके देखनेसे हिन्दूमात्रके हृदयमें मत्तिका मन्थार हो जाता है।

‘दग-पवतार-गुहा’ और भी चमत्कारियों है। दगावतार और उनके लोनाविषके विशा मक्षपति, पार्थवी, सूर्य, अर्धनारीश्वर प्रभृति पनेक देवमूर्तियां यहां बनी हैं। इस मन्दिरमें अष्ट शिलालेख विद्यमान हैं। अनुमानसे मन्दिरकी प्रतिष्ठाका विवरण उक्त प्रसारणपर लिखा गया होगा। परन्तु काम पाकर वह अक्षट हो गया है। खेद है कि कोटि-कोटि मुद्रा व्ययसे इस अमानुषी कीर्तिकी प्रतिष्ठित करनेवालाकि नामका परिचय देनेवाला निर्दोश भी आज कीर्ति हमें नहीं मिलता।



कैलास।

झुलोराका कैलास या रत्नमहल भारतवर्षके मध्य गुहामन्दिर-निर्माणकी पराकाष्ठा दिखता है। पर्वत फोड़कर ऐसे सुवहस्य देवालय प्रति पत्य हो बने हैं। कैलास देखनेमें समझ पड़ता है कि, प्राचीन भारतीय सिन्धी, भास्कर और स्वयम्भुजोंने किस प्रकार अपनी असाधारण चमत्तामें कैलासका परिचय दिया है। इन निर्जन-जनानि-वेष्टित कैलासमन्त्रमें यहूतमें देवादि-देव महादेवके कैलासमें यहूतमें-जैसा आनन्द जाता है। जो लोग मगरके-जिसमिडकी बात सुनकर अकराते हैं, जोना प्राचीरकी प्रगंसा सुनाते हैं और

आगरेके तानमहलपर सह हो जाते हैं, उन्हें हम एकबार उक्त कैलास देख जानेका पावद करते हैं। इसके देखनेमें हृदयमें धर्म, मत्ति एवं मानिकता उदय होगा। प्राचीन हिन्दू-राजगणकी असाधारण देवमत्ति, स्वधर्माश्रयण, निष्कार्यपरोपकारिता और पनीकिंक कीर्ति देख परिचित हो जाती है।

पायात् पुरातत्त्वविद् कैलासमन्दिरको राष्ट्र-कृताधिपति दत्तात्रेयकृत ई० ७म शतकमें निर्मित बताते हैं। किन्तु इस मन्दिरका अगली पक्षी पूर्वकाक्षमें निर्माण होगा भी संभव है। दत्ति-

दुर्गमि. इसे पुनः सज्जित और संस्कृत किया होगा।  
कैलासके मध्य हमारी प्रधान देवदेवियोंकी तथा  
रामायण एवं महाभारतके वीरोंकी मूर्तियाँ और  
देवकीलायें खुदी हैं। चित्रविचित्र चित्रित रहनेसे  
इसे रङ्गमण्डल भी कहते हैं।

सिवा कैलासके रामेश्वर और नीलकण्ठ प्रभृति  
गुह्याये भी दर्शनीय हैं। इन गुहायोंमें भी नाना प्रकार  
खोदायीका काम और देवदेवियोंकी मूर्तियाँ हैं।

इलोरा-पर्वतकी उत्तरभुजके प्रान्तमन्दिरका नाम  
पार्श्वनाथ है। यह भूमिसे ४८० इन्च ऊर्ध्व, अमा-  
चीन-और दृष्टक-निर्मित है। ई०के १८वें शताब्दीमें  
औरङ्गाबादस्य किसी जैन सेठने यह मन्दिर बन-  
वाया था। इसमें पार्श्वनाथ भगवान्की ३३ हाथ  
जो चौ दिगम्बर मूर्ति ध्यान लगाये विराजमान है।  
गुजरातके जैन भाट्टमासमें शुक्ल चतुर्दशेकी इलोरा  
था कर इस मूर्तिकी पूजा करते हैं। उस समय  
इसका अभिषेककार्य एक मन छतसे किया जाता है।

पार्श्वनाथके मन्दिरसे दक्षिण इन्द्रसभा है। यह तीन  
गुहाओंमें विभक्त है। पहली ४० इन्च दोर्ब और २०  
इन्च विस्तृत है। इसमें १६ खम्भा और १२ कटोई हैं।  
प्राचीरके चारों ओर जैन देवदेवियोंकी मूर्तियाँ अङ्कित  
हैं। रचनाचातुर्य प्रशंसनीय है। दूसरी जगन्नाथ-सभा  
है। इसके मध्यमें प्रकाण्ड गर्भगृह बना है। पार्श्वनाथ,  
महावीरप्रभृति जैन तीर्थङ्करों और अम्बिका प्रभृति जैन  
देवियोंकी मूर्तियाँ विद्यमान हैं। तीसरी गुहा रण-  
छोड़जीका मन्दिर है। इसके गर्भगृह एवं प्राचीरमें  
सर्वत्र तीर्थङ्कर और गणेश्वर प्रभृतिकी मूर्तियाँ उल्लि-  
खित हैं। इन समस्त मूर्तियोंको लोग आजकल रण-  
छोड़जी कहते हैं। इसके सामने वरामदेमें एक पुरुष  
तथा एक स्त्रीकी मूर्ति हस्तिप्रष्ठपर आरुढ़ है।  
ब्राह्मण लोग इन दोनोंको इन्द्र और इन्द्रायीकी मूर्ति  
समझते हैं। उनके मतमें इन्होंने दोनों मूर्तिके नामानु-  
सार इस गुहाको इन्द्रसभा कहते हैं। यस्तुतः  
इन्द्रदेवकी पूजाके लिये यह मन्दिर न बना था।

सिवा इसके इलोरेकी दुमारासेना वा विषाह-सभा,  
सीताका नानी, एहमद-गुहा प्रभृति भी देखने योग्य

वस्तु हैं। इसकी उत्पत्तिके विषयमें अनेक तरहका  
वादप्रतिवाद सुनाई पड़ता है,—

कोई कहते हैं, कि तुषपत्नी इलाके नामानुसार  
इस नगरका नाम इलोरा हुआ है। यहाँ भुवनाम्ह,  
दण्डक, इन्द्रद्युम्न, दयारथ, राम प्रभृति राजा राजत्व  
करते थे।\*

मुसलमान् इसे राजा इलकर्तक स्थापित बताते  
हैं। पूर्वकालमें उन्होंने पर्वत खोदकर ये समस्त मन्दिर  
बनवाये थे। आजसे भी सौ वर्ष पहले ये जीवित थे।

इसर ब्राह्मण कहते हैं कि १८४४ वर्ष पहले एलिब-  
पुरमें इलुनामक एक राजा राज्य करते थे। दैव-  
दुर्विपाकसे उनके सर्वशरीरमें कीड़े पड़ गये। उन्होंने  
इलोरान्द्रस्थ शिवानय-सरोवर नामक तीर्थमें स्नान  
करनेकी इच्छामें यात्रा की थी। यह तीर्थ पहले साठ  
धनुष परिमित था, किन्तु यमकी प्रार्थनासे विष्णुने  
पौष्टि गोप्यदत्तु खर्व बना दिया। इलु राजाने यहाँ  
पहुँचकर और तीर्थजलमें वस्त्र भिगीकर धोना शक्त  
शरीर धो डाला। इससे उनकी व्याधि चली गई  
थी। इसलिये क्षतश्रुता विरक्षारणीय रखनेके अभि-  
प्रायसे इलोरेका पर्वत उन्होंने खुदाया और गुहाओंमें  
नानाप्रकारकी देवमूर्तियाँ प्रतिष्ठित करायीं।†

इल्ल (सं० पु०) स्वर्गस्थ चाचर्य हथ, विहिन्दका  
अजीव दरख्त।

इल्ल (अ० पु०) १ विद्या, ज्ञानकारी। २ विज्ञान, जिक-  
मत। ३ मन्त्र, जादू। चरित्रमें उपदेग-विद्याकी इल्ल-  
अखलाक, साहित्यकी इल्ल-अदब, जलविद्याकी इल्ल-  
आब, शब्दविद्याकी इल्ल-आवाज़, मलविद्याकी इल्ल-  
इलाही, छन्दःशास्त्रकी इल्ल-उरुज, सांख्यिकीकी  
इल्ल कथाफा, अलङ्कारशास्त्रकी इल्ल-कलाम, रसा-  
यन-विद्याकी इल्ल-कीमिया, गूढार्थकी इल्ल-गोब,  
आत्मविद्याकी इल्ल-ज्ञान, धातुविद्याकी इल्ल-तययी,  
इतिहास-शास्त्रकी इल्ल-तवारिख, शरीरव्यवच्छेद-शास्त्र  
की इल्ल-तयरीख, धर्मशास्त्रकी इल्ल-दीन, उल्लिखित

\* Wilson's Analysis of the Mackenzie Manuscripts,  
Vol. I. p. civ.

† Asiatic Researches, Vol. VI, p. 285.

इक्षर-महातात, ज्योतिषशास्त्रको इक्षर-मन्त्र, व्याय-  
शास्त्रको इक्षर-वहम या इक्षर-मन्त्रिक, मोहकाम्नाधर्मको  
इक्षर-मन्त्रनाम, विमयीतिको इक्षर-मन्त्रिक, द्विविद्या  
को इक्षर-मन्त्रिक, राजनीतिको इक्षर-मुद्रा, त्रिकोण-  
मितिको इक्षर-सूचीको, वायुविद्याको इक्षर-इवा, रक्षा-  
गणितको इक्षर-इन्द्रा, रागोपविद्याको इक्षर-ईयत  
और परविद्याको इक्षर-ईवागत कहते हैं।

इक्षर (५० स्त्री०) १ कारण, वायस। २ अभियोग,  
इक्षर। ३ दुर्घमन, बुरी खादत। ४ अपराध, छुछर।  
५ मन, कड़ा।

इक्षरी (५० स्त्री०) दुर्घमनमें फंसा हुआ, जो बुरी  
खादत रणता हो।

इक्षर (५० पु०) पचिमेद, एक चिड़िया।

इक्षा (५० स्त्री०) १ परन्तु, लेकिन। (स्त्री०)  
२ पिटका विशेष, एक कुम्भी। यह त्वक्के ऊपर  
उठती है और कठिन तथा मखी-जैसी होती है।

इक्षिग (५० पु०) मत्स्यमेद, इक्षीय। श्वोर ईषी।

इक्षिका, इक्षिका ईषी।

इक्षर, इक्षर ईषी।

इक्षर (५० पु०) इक्ष-वत् वा इक्ष-कि-वत्।

१ मत्स्यमेद, वाम मक्षी। २ देवविशेष। यह  
मिष्टिकाके गर्भ और विप्रचितिके भोरसमें उत्पन्न  
हुवा था। इसका धर नाम वैदिक था। अक्ष,  
गन्ध, जल, वातापि, जमुषि, कलम, आश्रिक, जरक,  
कातनाम और राहु (शुक, जीतरव, यन्त्रनाम)  
इसके आता थे। इसका वामस्यान मणिमतोपुर था।  
कनिष्ठ आता वातापि किसी तपस्वी ब्राह्मणसे इक्ष-  
रुष्य पुत्र पानेका घर मांगा था। किन्तु पणिमत  
घर में मिलनेमें वातापि और इक्षर दोनों उस ब्राह्मण-  
पर क्रुद्ध हो गये। अभी समझते हैं इक्षरने ब्राह्मणपर  
क्रोध डाली थी। अपने कनिष्ठ आता वातापिको यह  
भिड़ बनाकर ब्राह्मणके सामने आता और पच्छीतरह  
बगा-बुगा मांस रांधकर पिना देता। फिर बाहर  
पेठ वातापिको बुलाता था। वह वातापि पाने की  
ब्राह्मणका घिट पाद निकल पाता और वैपारा ब्राह्मण  
उषी समय घर आता। इक्षर अपने मायावली भूत-

व्यक्तिको संगरीर यमके सदनमें बुला सकता था।  
किसी दिन अपने राजपि-मुनिगएके साथ इससे  
भकानुपर पाये। इक्षरने पति समादरसे इनकी  
अभ्यर्चना को घोर फिर भेड़का रूप रखनेवाले  
वातापिको काटकर इसने मांस बनाया। उसे देस  
जपि चकराये। किन्तु भगवान्ने कहा,—‘कोयी भय  
नहीं, हमी यह मांस खादेंगे। पाप उहर-जायिये’  
इक्षर उन्हें मांस खिला जब वातापिको पुकारने लगा,  
तब भगवान्ना वायु निकल पड़ा। उन्होंने उत्तर  
दिया,—‘आपका वातापि कहाँ है? उसे तो हमने  
पेटमें पचा डाला।’ उसपर यह धमाकी देने लगा।  
भगवान्को इक्षर भी भगवान्नाके निम्नमें निर्गत पणि  
द्वारा जल गया। (शामाच और महाभारत)

इक्षर (५० स्त्री०) नमगिरानक्षत्रके गिरःपर स्थित  
पांच सुद्र तारा।

इष (५० स्त्री०) १ सद्य, सामिन्, बराबर।  
२ जिसप्रकार, जैसे। ३ किसीप्रकार, गायद; कुक्ष-  
कुक्ष। ४ माय; करीब-करीब। ५ इसप्रकार, ठीक  
तौरपर।

इषीक्षक (५० पु०) जम्भोदरके पुत्र। (विष्णुपुराण)

इषोरीगन (५० पु० = Evaporation) वाष्पमाय,  
तपपीर, पानीका भाव बनना। वाष् ईषी।

इगरत (५० स्त्री०) मत्तीय, तुट्टि, खुशी, पाराम,  
चैन। पानन्द-भवनको इगरत-कदा, इगरत-गंगा  
या इगरतगाह कहते हैं।

इगारा (५० पु०) १ मृदेत, रम्भ, मेन। २ पिछ,  
निगान्। ३ झुकदगेन, गूंगा देनाय। ॥ घेस, प्यार।  
“अविच्छेदो इगाराः स्वर्गो पदमासः” (नीलोत्पल)

इगिका, इगिका ईषी।

इगोका (५० स्त्री०) १ इक्षीका वृक्षःशोभक, हाथीकी  
पाखका टोका। २ शरकाण्ड, रामगण्ड तथा।

इरम् (५० पु०) १ पशुराग, प्यार।

“इरम् मय और मय मयम्” (नीलोत्पल)

२ महाप्यमन, प्युक्त, दीवानगी।

३ सुमतिह सुमत्मान कपि शाह इक्षर-उद्-दीनका  
उपनाम। ये शाह पानम्के समयमें वर्तमान थे।

इश्कपेचा ( हिं० पु० ) मलिका विशेष, भमरीकाकी चमेली। ( *Quamoclit vulgaris* ) यद्यपि यह प्रधानतः अमेरिकामें सफलता है, तो भी इस वृक्षकी भारतमें कोई कमी नहीं। यह दो प्रकारकी होती है। एकमें लाल और दूसरेमें सफेद फूल होते हैं। इसका पत्र सूत्र-जैसा सूक्ष्म रहता है। इश्कपेचा ठण्डा है। आघात लगनेसे घातपर इसकी पत्तीका मुलटिष्ठ चढ़ाते और रस गर्म चीमें मिला रोगीको पिलाते हैं। विस्कोटपर पत्रका लेप भी लगाया जाता है।

इश्कवाज ( अ० पु० ) कामुक, रसिया, हँसल।

इश्कवाजी ( अ० स्त्री० ) कामचेटा, इच्छपरस्ती।

इश्कमजाजी ( अ० पु० ) सांसारिक प्रेम, दुनियावी सुहृदत्व।

इश्कककीकी ( अ० पु० ) ईश्वरीय प्रेम, सच्ची सुहृदत्व।

इश्क है ( हिं० अव्य० ) धन्य धन्य! क्या खूब! शानाम।

इश्की—१ एक प्रसिद्ध कवि। यह सुहृद शाहके समयमें वर्तमान थे। १७२८ ई०में इनकी मृत्यु हुई। २ पटनाके रहनेवाले एक सुसलमान कवि, शाह शैब सुहृद वजीहका उपनाम। इनके पिताका नाम गुलाम हुसैन मुजरिम था। इश्कीने अंगरेज सरकारके अधीन दस वर्ष खरवारमें तहसीलदारी की। १८०८ ई०में यह जीवित थे।

इश्तहार ( अ० पु० ) १ घोषणा, इत्तिहा, खीरा। २ प्रकाशन, तयहीर, फैलावा। ३ विज्ञापन, एलान। ४ जवाब, हरकारा।

इश्तहारी ( अ० पु० ) पलायित व्यक्ति, भागा हुआ शख्स। इश्तयाक ( अ० पु० ) १ अभिलाष, चाह। २ प्रवृत्ति, लालच। ३ प्रेम, प्यार।

इश्तियालक ( अ० स्त्री० ) १ उत्तेजना, भड़क। २ दीपकमें वत्ती सरकानेकी सीक।

इम् ( अ० स्त्री० ) इम् इच्छार्थे क्तिप्। १ इच्छायुक्त, आदिशमन्द। कामेष्णि क्तिप्। २ अभिलषित, आदिश किया हुआ। ३ खाद्य, खाने-लायक। ४ अभिलाषके योग्य, जिसे चाहे। ( स्त्री० ) भाये क्तिप्। ५ यात्रा, रवानगी। ६ अभिलाष, आदिश।

इय ( अ० पु० ) इय यात्रा विद्यते यस्मिन् मासे, इय मल्यर्थे क्तिप्-इट्-अच्। १ सौर एवं चान्द्र भास्तिनमास।

“इवे भास्तिते पचे भव्यमासं योगतः।”

( विहितसप्त दशोपराध )

२ प्रेषण, भेजना। ३ अन्न।

इयषि ( हिं० ) एवच देखी।

इयषि ( वे० स्त्री० ) इय निपातनात् अणि। १ प्रेषण, प्रेषण, भेजनेका काम। २ इच्छा, आदिश।

इयष्य ( अ० स्त्री० ) इयषिभिस्त्वतीति, इयषि-स्वच्-अच् भावे टाप्। प्रेषण, आदिश, चाह।

इयष्य ( अ० स्त्री० ) इयुणा विध्यति इषी कुगलो वा, इयु-यत्। १ गरलक्ष्य, जिससे तीरका निशाना ली। २ सम्यकरूपमें बाण चला सकनेवाला, जो तीर मारनेमें होमियार हो।

इषिका ( अ० स्त्री० ) इय-युत्। क्तादिभ्यो इत्। अच् ३। १ गजाधिगोलक, हाथीकी आँखका टेला। २ चित्र-कर्मका यन्त्रविशेष, वालोंका कुलम। यह छोड़े या सूत्रके बालसे बनता है।

इषित ( अ० स्त्री० ) १ चलित, प्रेरित, जो सरकाया या पड़काया गया हो। २ उत्तेजित, भड़काया हुआ। ३ चपल, तेज।

इषिर ( अ० स्त्री० ) इय-किरच्। इषिमतीत्यादिना। अच् १। १ गमनशील, चल सकनेवाला। ( पु० ) २ अग्नि, पाग।

इषीक ( अ० पु० ) जातिविशेष, एक कीम।

इषीकनूल ( अ० स्त्री० ) शरद्वयका उपरिभाग, राम-शरका ऊपरी हिस्सा।

इषीका ( अ० स्त्री० ) इय-इकन्। इरेः शिर इतचः। अच् ३। १ गजाधिगोलक, हाथीकी आँखका टेला। २ कामदण्ड, सूँज। ३ मुष्णामध्यवर्ती दण्ड, सूँजके बीचकी सीक। इसीपर जीरा सपता है। ४ शर-काण्ड, रामशरका तना। ५ वेषाका काण्ड, वेषाका तना। इस दण्डसे एक प्रकारका पन्न बनता है।

“तन्निशासिद्विषाकम्।” ( १३४४ )

इपु ( अ० पु०-स्त्री० ) इय-उ। इरेः शिरः। अच् १। १ पाण, तीर। २ संस्था, पदद। ३ उत्तमैवके मध्यकी



रिपा, दादरके श्रीपकी सतर। ४ कामवेदविहित यष्ट  
रिमेय।

इयुक्त (सं० वि०) वाच सट्टय, तोरके मानिन्द्।

इयुक्ता (सं० स्त्री०) वाच, तोर।

इयुकामगमो (सं० स्त्री०) इवो कामः इयुकामः  
स गच्छते यत्, इयुकाम-गम अधिकारये यष्-छोप्।  
यामविमेय, एक बसतो।

इयुक्कार (सं० पु०) इयुं करोतीति, इयु-कृ-घञ्,  
उप० ममा०। वाच बनानेवाला, जो गच्छुन् तोर  
तैयार करता हो।

इयुक्तात् (सं० पु०) इयु-कृ-जिप्। कर्मकार, सीधार,  
तोर तैयार करनेवाला।

इयुगोनक (सं० पु०) कोकिनाथ हथ, तालमपानिका  
सेह।

इयुवर (सं० पु०) इयु-हृ-घञ्, इ-तत् वा उप-तत्।  
वाचभारी, तोरन्दाज। इयुयत् प्रसृति गण्डाका चयं  
भी वाचधारी हो है।

इयुवि (सं० पु०-स्त्री०) इयु-धा अधिकारये कि।  
वाचधार, तूण, तरकय।

इयुधिमत् (सं० वि०) तूणयुक्त, तरकय रखनेवाला।  
इयुधी (हि०) इयु-इवो।

इयुधा (सं० स्त्री०) इयुधि कष्टादित्यात् यष्-प-  
टाप्। प्राचीना, चर्न।

इयुधु (सं० वि०) १ प्राची, चर्न लगानेवाला।  
२ गमनमोल, जामेवाला। (गण०)

इयुव (सं० पु०) इयु-पा-क, उप-तत्। अचरविमेय।  
यही अचर चमकपरी अचतोष हो नमनित् नामक  
बाजा बना था।

इयुपत्रिका, चरतो देवा।

इयुपती (सं० स्त्री०) चर्नमूला, ईश्वरमूल।

इयुपय (सं० पु०) वाचका यय, तोरका टप्पा।

इयुपुहा, चरति देवी।

इयुपुडिका (सं० स्त्री०) चरपुहा, चरलोका।

इयुपुष्पा (सं० स्त्री०) इयुरिष पुष्पं यस्याः, दूर-  
विहारिण्यभवात् इहृदी०। चरपुष्पा हथ। इस हथके  
मुम्बडा गन्ध वाचकी तरह बहुत दूरतक पहुंचता है।

इयुपल (सं० वि०) वाचका बल रखनेवाला, जिसका  
तोरकी ताकत हो।

इयुयत् (सं० वि०) इयु-य-जिप्। वाचधारी, जो  
तोर लिये हो।

इयुमत् (सं० वि०) इयु पश्यत्ये प्रायस्त्वे मतुप्, मन्-  
च वः। प्रमस्त वाचधारी, तोरन्दाज।

इयुमाव (सं० वि०) इयुः प्रमाचमच्छ, इयु-मावञ्।  
बनाये रखवन् इन्द्रमन्त्रः। वा ३१५१०। १ वाचप्रमाच, तोरके  
बराबर, जो तीन फीट हो। (पञ्च०) २ वाचके  
प्रमाच पर्यन्त, तोरके टप्पंतक। (पु०) ३ चर्मदि-  
योका कृष्ण।

इयुमान्, चर्न देवी।

इयुविषेय (सं० पु०) वाच मारनेका स्थान, तोर  
काड़नेकी जगह। १५० इष्ट परिमाण-विमिट  
प्रदेयको इस नामसे पुकारते हैं।

इयुलिकाप्ला (सं० स्त्री०) मृगमिरा मच्छका तारा-  
मण्डल। इसमें तीन तारे होती हैं।

इयुइष्ट (सं० वि०) वाच-हाथमें लिये हुआ, जिसके  
हाथमें तनवार रहे।

इयुपल (सं० पु०) चर्मरक्षा विमेय, एक तोप। यह  
दुर्गके द्वारपर रहता और प्रसारादि विमेय करता है।

इयुत्वाक (सं० पु०) इयुका इति चक्षि यस्मिन्,  
इयोत्वा-पुन्। दोषारिणी डून्। वा ३१५११। इयुत्वा चक्ष-  
युक्त अयुवाच वा अध्याय। यमुदेष्टे प्रथम अध्यायको  
इस नामसे पुकारते हैं।

इयुत्त (सं० वि०) निष्-ल-प्रप्। निष्को वाचविमि।  
प्रातिगार्य सुखेय मक्षोयः। निष्कतो, निष्पादनकारी,  
बनानेवाला।

इयुत्ति (सं० स्त्री०) निष्-क-तिप् इयुत्तं वा मक्षोयः।  
जननी, धात्री, मा, धाय।

इट (सं० वि०) यत्र वा इय कर्मविज्ञ। १ चमि-  
नवित, भाद्रिम किया हुआ। २ मिय, प्यारा।  
३ पूजित, परस्मिन् किया हुआ। ४ हित, फायदेमन्द।  
५ चर्मवेष किया हुआ, जो टूटा गया हो। ६ चमि-  
मत, खुशगवार। ७ ईक्षित, पसन्द किया हुआ।  
८ सबल, क्षीरदार। (स्त्री०) भाद्रिम। ९ यत्रादि-

कर्म । ११ संस्कार, सुधार । १२ योतकर्म, वेदका  
दृष्ट । १३ जातृकार्योक्त धर्मकार्य । १४ कृत, एहसान् ।  
(पु०) १५ परण्ड हंच, रेलका पेड़ । १६ उशोर, खस ।  
१७ यज्ञद्वारा तुष्ट परमात्मा । १८ विष्णु । १९ पति,  
खाविन्द । (अथ०) २० इच्छापूर्वक, राजीसे ।

दृष्टक (सं० पु०) दग्ध सृत्तिकाखण्ड, ईंट ।  
दृष्टकचित् । (सं० त्रि०) इतत्, अकारस्य कृत्स्नम् ।  
दृष्टकेशीकालागामं चित्तगुणमारिषु । पा ४।१।१६ । दृष्टक द्वारा  
व्याप्त, ईंटसे भरा हुआ ।

दृष्टकर्मन् (सं० स्त्री०) दृष्ट प्रसिद्धार्थं कर्म, शाक-  
तत् । गणित त्रिशिय, फर्जी अददसे हिसाब लगानेका  
कायदा ।

“सर्वं यथासाधनद्विष्टारमिः सुखी कृतोऽर्थे रहितो पुनो वा ।  
दृष्टादृष्टं दृष्टमर्थं न भवत् तस्मिन्नेव शोकनिर्मुक्तकर्म ॥” (लौकायती)

दृष्टका (सं० स्त्री०) १ गृहादिके निर्माणार्थं दग्ध  
सृत्खण्ड, ईंट । २ संपद्, टैरी ।

दृष्टकागृह (सं० स्त्री०) दग्ध सृत्खण्ड द्वारा निर्मित  
भवन, पक्का मकान, ईंटका घर ।

दृष्टकाचित (सं० त्रि०) दग्ध सृत्खण्ड द्वारा निर्मित,  
पक्की ईंटसे बना हुआ ।

दृष्टकान्यास (सं० पु०) गृहके भित्तिमूलका संस्था-  
पन, मकानकी नोवका डालना ।

दृष्टकापय (सं० स्त्री०) दृष्टकायामपि पन्या यस्य  
इष्टं कापयं भगव्यवर्गं यस्य दृष्टकेव सुदृढः पन्याः  
यस्येति वा, सर्वत्र भव् समासात् । अथपूरम्, पलागणये ।  
पा ४।१।१७ । १ घोरणमूल, खस । २ दृष्टकनिर्मित पय,  
ईंटकी बनी राख, पक्की सड़क ।

दृष्टकापयक, दृष्टकापय देवी ।

दृष्टकामदुह (सं० स्त्री०) इष्टं प्रियं काममभिलषितम्,  
इष्ट-काम-दुह-क । अभिलषित प्रियकार्यं सम्पादन  
करनेवाली, जो मन मांगी मुराद भव् शक्ती हो ।

दृष्टकामसृक्, दृष्टकामदुह देवी ।

दृष्टकारामि (सं० पु०) दग्ध सृत्खण्डनिवय, ईंटका  
टैर ।

दृष्टकारिन् (सं० त्रि०) इष्टं करोतीति णिनि ।  
हितेयी, भलायी करनेवाला ।

दृष्टकास (सं० पु०) ज्योतिष मतसे सन्तान उपजने  
वा धर्मकार्ये लगनेका निर्दिष्ट समय ।

दृष्टकाव (सं० त्रि०) दृष्टका विद्यतेऽत्र, दृष्टका-वः ।  
दृष्टकयुक्त, पोखता, पक्का ।

दृष्टकावत् (सं० त्रि०) दृष्टका-मतुप् मध्वादित्वात्,  
मस्य च वः । अत्रर्णाम् । पा ४।१।१८ । दग्ध सृत्खण्ड-  
सम्यक्, ईंट रखनेवाला ।

दृष्टगन्ध (सं० त्रि०) इष्टो गन्धो यस्य, बहुमी० दृष्ट-  
यासौ गन्धयेति वा कर्मधा० । १ सुगन्ध, सु, सुन्दार ।  
(पु०) २ सुगन्धिद्रव्य, सु, सुन्दार चीज । (स्त्री०)  
३ बासुका, बास, रेत ।

दृष्टजन (सं० पु०) इष्टयासौ जनयेति, कर्मधा० ।  
१ प्रियव्यक्ति, प्यारा शख्स । २ प्रियतम, मायूक ।

दृष्टतम (सं० त्रि०) अयमेवां प्रतिपद्येन दृष्टः, दृष्ट-  
तमम् । प्रतिपादनं तनविष्णोः । पा ४।१।१९ । १ प्रतिपद्य प्रिय,  
निहायत प्यारा । गृहस्थकी स्त्रीपुत्रादि पौर उदा-  
सीनकी श्रद्धा दृष्टतम है । २ अत्यन्त मनोमन, निहायत  
सुवाफिक ।

दृष्टतर (सं० त्रि०) अधिक प्रिय, ज्यादा प्यारा ।

दृष्टता (सं० स्त्री०) दृष्ट देवी ।

दृष्टव (सं० स्त्री०) सुदृष्टीयता, पसन्दीदगी, प्यार  
या परस्तिम किये जानेकी इच्छा ।

दृष्टदेव (सं० पु०) दृष्टदेवता देवी ।

दृष्टदेवता (सं० स्त्री०) उपास्यदेवता, जो देव बरा-  
बर पूजा जाता हो ।

दृष्टप्रयोग (सं० पु०) गृष्टप्रयोग, महत्का वाक् ।

दृष्टमूलांगजाति (सं० पु०) लौकावती-कथित मूलांग  
जाति विशेष । मूलांगजाति देवी ।

दृष्टयलुः (वे० त्रि०) जिसके लिये याज्ञिक गीत निकसे ।

दृष्टयामन् (वे० त्रि०) इच्छामुक्त गमनशील, सर्वोक्ति  
सुवाफिक चमनेवाला ।

दृष्टरस्मि (वे० त्रि०) इक्षित प्रपदसे सम्यक्, जो  
पसन्दीदा संगम रखता हो ।

दृष्टवत् (सं० त्रि०) यज्ञ वा दय-त्-वत् । १ यज्ञ-  
कारी । २ इच्छाविशिष्ट, चाहियमन्द । ३ दृष्टकर्म-  
कारी, वेदादिका अध्ययन करनेवाला ।

इष्टव्रत (सं० वि०) चपमौ इच्छाका पात्राकारो,  
जो चपमौ गर्भके सुवायिक, चलता हो।

इष्टवापन (सं० स्त्री०) चमोदसिद्धि, सुरादका वर  
पागा।

इष्टा (सं० स्त्री०) यक्ष करके ल टाप्। समीहच,  
होममें लगनेसे समिष्टका नाम यह पड़ा है।

इष्टादि (सं० पु०) पाणिन्युक्त शब्दगणविशेष। इन गणमें  
इष्ट, पूर्ण, उपसादित, निगदित, परिगदित, परिवादित,  
मिश्रित, निपादित, निपठित, सङ्घतित, परिकलित,  
संरक्षित, परिरक्षित, चक्षित, मक्षित, चवकीर्ण, चयुक्त,  
व्यधीत, चात्रात, व्युत, व्यधीत, चयधान, चासदित,  
चवचारित, चवक्षयित, निराकृत, उपकृत, उपाकृत,  
चवयुक्त, चवगणित, चवगणित और व्याकुलित शब्द  
पड़ता है।

इष्टापति (सं० स्त्री०) चमिसवित-प्राप्ति, इष्टसिद्धि,  
शाम, फायदा।

इष्टापूर्त (सं० स्त्री०) समाहारद्वन्द्व पूर्वपददीर्घय।  
१ चमिष्टोत्तादि यष्ट। २ साधारणके उपकारको यष्ट  
एवं कूपचाननादि कर्म। तालाव, क्यूय, बावड़ी आदि  
सगाने और उपवन सगानेका वष्टित पूर्ण कहते हैं।  
एकान्वि कर्म होमादि व्रतमें जो जात्रा और धेदिके  
मध्य दिया जाता, यह इष्ट कहा जाता है। उपरोक्त  
दोनोका नाम इष्टापूर्त है।

इष्टार्थ (सं० पु०) ईक्षित चपमा प्रियवस्तु, मंगलाभु भोज।

इष्टार्थोद्युक्त (सं० वि०) उत्तमाद्युक्त, चमोदयसुखे  
स्थिते तरावित, मंगलाभु भोजके निये जो-जान्मि  
कोमिग करनेवाला।

इष्टावाप (सं० पु०) मदानाव, वरकर भद्रावाप,  
मैमकी वातधोत।

इष्टाव (सं० वि०) चमिकवित चम रचनेवाला,  
जो बहुत अच्छे चीजे रचता हो।

इष्टि (सं० स्त्री०) यज्ञ वा इव-हिन्। १ यज्ञ।  
२ इच्छा, मर्जी। ३ चमिवाप, आदिम। ४ छोड़-  
संपद। ५ दानमंष। ६ निमग्नच, कुमावा। ७ चमो-  
वच, मंषाव। ८ चमिकवित वस्तु, आदिमको भोज।  
(५०) ९ चमोदगम, हिमोदग।

"इष्टोः चमोदगमोद वरवच विरिष्टेन वरा" (मनु)

इष्टिका (सं० स्त्री०) इष्टका, ईंट।

"इष्टवर्षे चमोदगम वस्तु चमोदगमवस्तु" (मनु)

इष्टिकापथिक, इष्टकापथिकी।

इष्टिकत् (सं० वि०) इष्टि-ज्ञ-किप्-तुक्। यष्टकापी,  
यष्ट करनेवाला।

इष्टिन् (सं० वि०) इष्टमनेन, इष्ट-इमि। इष्टिन्-चमि।  
वा ३५८८। यष्टकारी, जो यष्ट कर चुका हो।

इष्टिपथ (सं० पु०) इष्टये पथति, इष्टि-पथ-पप्।  
१ लपथ, कपथ। २ पसर, दानव। पसर चपने की  
स्थिते पाक बनाता है, यष्टके स्थिते गर्हो; इसीसे  
ससका नाम इष्टिपथ पड़ा है।

इष्टिसुप् (सं० पु०) इष्टि सुप्यति, इष्टि-सुप-किप्।  
देव्य, राक्षस।

इष्टीकृत (सं० स्त्री०) गेटमिष्टं कृतम् इष्ट-ज्ञ-किप्।  
इष्टीकृतके इष्टीकृतके किप्। वा ३५८८। १ म चाहे जाने-  
वासे वस्तुकी इच्छाका करना। २ यष्टविशेष।

इष्टु (सं० स्त्री०) इष्ट-तुन्। इच्छा, मर्जी।

इष्टयन (सं० स्त्री०) इष्टिमिरयनं गतम् यष्ट,  
यष्टी०। यागविशेषका चतुष्टय, सावत्मारिक  
याहादि। चमिन्दैवत्य मण्डित चमिक प्रकार इष्टका  
भेद होता है।

इष्ट (सं० पु०) इष्ट-मक्। इष्टिणीविशेषका इष्ट। चपु-  
३५८८। १ कामदेव। २ चमिक्तकाल, मोमम-वहार।  
३ गमन, रवानगी।

इष्ट (सं० पु०) इष्ट करके मरप्। चमिक्तकाल,  
मोमम-वहार।

इष्ट (सं० पु०) इष्ट-यन्। चमिन्दैवत्यका चपु-३५८८।  
आचार्य, मुर्गद।

इष्टय (सं० स्त्री०) वापका चपभाग, तोरकी नोक।

इष्टदीय (सं० वि०) वापके चपभागों चतुष्टय  
होनेवाला, जो तोरकी नोकमें निक्षेप होता है।

इष्टनीक (सं० स्त्री०) वापका चपपथ, तोरका  
पथ।

इष्टवसन (सं० स्त्री०) इष्ट-वस करके कटुट्। चपु-  
३५८८।

द्रव्यसूत्र (सं० क्री०) इशुरेवास्त्रम् । वाष्पास्त्र, तीर  
हथियार । “इत्यस्त्रे ज्येष्ठो बभूव ।” (रामायण)

द्रव्यास (सं० त्रि०) इषवोऽस्यन्ते अनेन, इषु भक्ष  
करिषे घञ् कर्तयिष्वा । १ वाष्पक्षेपक, तीरन्दाज ।  
(क्री०) २ चाप, कमान् ।

द्रम् (सं० पथ०) १ कोप ! गुस्सा ! मारो ! पकड़ो ।  
२ सन्ताप ! जलन ! ३ दुःख ! अफसोस ! डाय ।  
४ भावना । खयाल । देखो ।

द्रव- (हिं० सर्व०) ‘यह’ शब्दका रूप विशेष ।  
विभक्ति लुप्तते समय ‘यह’ शब्द बदल कर ‘इस’ हो  
जाता है । जैसे—इसने, इसको, इससे, इसकी लिये,  
इसमें, इसका, इसपर ।

द्रवकन्दर—सिकन्दर बादशाह । बसिकन्दर देखी ।

द्रवपत्र (फा० पु० = Sponge) द्रवपत्र, सुवा-  
दादल । यह समुद्रमें रहनेवाला एक प्रकारका जीव  
है । यूनानी शूरवीर इसे अपनी टोपीपर लगाते थे ।  
कोई द्रवपत्र बहुत छोटा और कोई बड़ा होता है ।  
इसकी भीतर चक्कर और ऊपर छेद रहते हैं । इन्हें  
छेदोंसे जल और वायु द्रवपत्रके भीतर पहुँचता  
और बाहर निकलता है । यह बहुत कोमल और  
प्रायः तीन प्रकारका है । द्रवपत्र भूमध्यसागर,  
फ्लोरिडा-सागरतट और बहामा द्वीपसे पाता है ।  
स्नानका द्रवपत्र उद्यते जलमें छपजता है । लोग  
गीता या काँटा लगा इसे समुद्रसे निकालते हैं ।

द्रवपत्रका रेशा यानीसे चलन होती हो छूट  
जाता है । फिर इसे धो कूटकर साफ़ करते और  
छोरीमें लटका सुखा लेते हैं । द्रवपत्रका भार बढ़ा-  
नेके लिये नमक, गुड़, शोभा, कड़क, बालू और  
पत्थर भर देते हैं । यह बहुत जल्द बढ़ा करता है ।

द्रवपात (हिं० पु०) अयस्क, पौवाद, कड़ा लोहा ।  
आजकल कितने ही बड़े-बड़े मकान् इससे बनाये जाते  
हैं । वह बहुत मजबूत होती और आग लगनेसे भी  
खड़े रहते हैं । लोहेकी ।

द्रवपार (हिं० कि० वि०) इस पोर, इस तर्फ ।

द्रवपिरिट (फा० = Spirit) १ प्राण, जान ।  
२ आत्मा, हृदय । ३ चित्त, तबीयत । ४ उन्माद,

होसता । ५ भावाय, मतलब । ६ सार, निचोड़ ।  
७ प्रकृति, कुदरत । ८ भूत, गैतान् । ९ रस, चक्का ।  
१० सुरा, शराब । चीन और भारतवर्षमें द्रवपिरिट  
बहुत प्राचीन समयसे बनते पाये हैं । यह विशेष  
सुरा होती, जो आग लगते ही भड़क उठती है ।  
मद्य, सुरा और शराब इन्हीं ।

द्रवपेशल (फा० = Special) १ असामान्य, गैर-  
मान्य । (क्री०) २ असामान्य रेलगाड़ी, गैर-  
मान्य रेलगाड़ी । यह किसी समय विशेष या व्यक्ति  
विशेषके लिये दूटती है । प्रायः बड़ेलाट, छोटेलाट  
और राजा-महाराज द्रवपेशल पर ही आते-जाते हैं ।  
कहीं बड़ा मेला लगनेसे रेलवे-कर्मचारी इसे समय-  
समयपर छोड़ा करते हैं ।

द्रवगोल (फा० पु०) एक प्रकारका हज, कोई  
दरखूत (Plantago ovata) यह पौदा पञ्जाबमें  
सतलजसे पश्चिम अंशतक उत्तपन्न होता है । प्रथमतः  
ईरानसे इसे लोग भारतवर्ष लाये थे । बीज ही व्यव-  
हारमें आता, जो तिल-जैवा, भूरा और गुलाबी होता  
है । द्रवगोल भीमल एवं कोमल है । यह प्रदाह  
तथा पित्तकी बढ़ाता और पाक्यन्त्रोप रोगमें विशेष  
उपकार देखाता है । बीजको तिलके साथ कूट-पीस  
और तेल मिला पुकटिसे चढ़ानेसे पयिवातका स्कीत  
स्थान अच्छा हो जाता है । पुरातन उदरामयपर  
द्रवगोल बहुत हितकर है । इसका काय कागस्रोग  
पर चलता है । ईरानसे कितना ही बीज बम्बई  
शहर आता है । यूनानी हकीम इसे बहुत व्यवहार  
करते हैं । यह चिपचिमा, गीतल एवं चटोचक  
होता और भ्रूजक, मूत्ररोध, मूत्राघात, आमरल,  
रक्तातिशय, छम्पाद, दाह प्रलाप, तथा मादकताकी  
छोता है ।

द्रवगुद (फा० पु०) कालादाना, राई ।

द्रवमाईस—१ प्रथम इस्लामीयके पुत्र । २ एक मुसलमान  
योगी । बांजीगर खेस देखाते समय द्रवमाईसका  
नाम ले लेते हैं । ३ ईरानके एक सम्राट् । इनके  
पूर्वज साधु समझे जाते थे । यह १४८० ई० की उपजे  
और १५२७ ई० की मर गये ।

इष्टव्रत (सं० त्रि०) अपनी इच्छाका आश्रयकारी,  
जो अपनी मर्जीके मुवाफ़िक़ चलता हो।

इष्टसाधन (सं० क्री०) अभीष्टसिद्धि, सुरादका वर  
पाना।

इष्टा (सं० स्त्री०) यज्ञ करणें का टापू। शमीवृक्ष,  
होममें लगनेसे समिधका नाम यह पड़ा है।

इष्टादि (सं० पु०) पाणिन्युक्त शब्दगणविशेष। इस गणमें  
इष्ट, पूर्त, उपस्थादित, निगदित, परिगदित, परिवादित,  
निकषित, निपादित, निपठित, सङ्कलित, परिकलित,  
संरक्षित, परिरक्षित, अर्चित, गणित, अवकीर्ण, अयुक्त,  
गृहीत, आम्नात, श्रुत, अधीत, अवधान, आसेवित,  
अवधारित, अवकल्पित, निराकृत, उपकृत, उपाकृत,  
अणुयुक्त, अणुगणित, अणुपठित और व्याकुलित शब्द  
पड़ता है।

इष्टापत्ति (सं० स्त्री०) अभिलषित-प्राप्ति, इष्टसिद्धि,  
लाल, फायदा।

इष्टापूर्त (सं० क्री०) समाहारद्वन्द्वः पूर्णपददीर्घध।  
१ अग्निहोत्रादि यज्ञ। २ साधारणके उपकारको यज्ञ  
एवं कृपखननादि कर्म। तालाव, कृपा, बावड़ी आदि  
बनाने और उपवन लगानेको पण्डित पूर्त कहते हैं।  
एकान्ति कर्म होमादि वेतनमें जो डाला और वेदोंके  
मध्य दिया जाता, वह इष्ट कहता है। उपरोक्त  
दोनोंका नाम इष्टापूर्त है।

इष्टार्थ (सं० पु०) ईप्सित अथवा प्रियवस्तु, मनभाय चीज।

इष्टार्थोद्युक्त (सं० त्रि०) उत्साहयुक्त, अभीष्टवस्तुके  
लिये त्वरायित, मनभाय चीजके लिये जी-जानसे  
कोशिश करनेवाला।

इष्टालाप (सं० पु०) सदालाप, परस्पर भद्रालाप,  
मेलकी बातचीत।

इष्टाश्रय (सं० त्रि०) अभिलषित अथ रक्षनेवाला,  
जो बहुत अच्छे छोड़े रखता हो।

इष्टि (सं० स्त्री०) यज्ञ वा इष्ट-क्रिन्। १ यज्ञ।  
२ इच्छा, मर्जी। ३ अभिलाष, चाहिय। ४ शोक-  
संग्रह। ५ दानसंग्रह। ६ निमन्त्रण, बुलावा। ७ अन्वे-  
षण, तलाश। ८ अभिलषित वस्तु, आदिमकी चीज।  
(पु०) ९ पथादगमन, डिफ़ान्त।

“इष्टोः पार्थिवमोषाः केवला निवेद्य वरा।” (मनु)

इष्टिका (सं० स्त्री) इष्टका, ईंट।

“उदवर्धयसिष्टकया कष्टुकोडविनामनम्।” (यजुत)

इष्टिकापथिक, इष्टकापथ देखो।

इष्टिहव (सं० त्रि०) इष्टि-ह-क्षिप्-तुक्। यज्ञकारी,  
यज्ञ करनेवाला।

इष्टिन् (सं० त्रि०) इष्टमनेन, इष्ट-इनि। इष्टादिभ्यश्चि।  
वा ५।२।८८। यज्ञकारी, जो यज्ञ कर चुका हो।

इष्टिपथ (सं० पु०) इष्टये पथति, इष्टि-पथ्-पच्।  
१ छपण, कष्टूस। २ असुर, दानव। असुर अपने ही  
लिये पाक बनाता है, यज्ञके लिये नहीं; इसीसे  
उसका नाम इष्टिपथ पड़ा है।

इष्टिसुप् (सं० पु०) इष्टिं सुथति, इष्टि-सुप्-क्षिप्।  
दैत्य, राक्षस।

इष्टीकृत (सं० क्री०) नेष्टमिष्टं कृतम् इष्ट-कृ-वि।  
कृत्वास्त्रिषोने धन्यपकर्तारि षिः। वा ५।४।४। १ न चाड़े जाने-  
वाले वस्तुकी इच्छाका करना। २ यज्ञविधि।

इष्टु (सं० स्त्री०) इष्ट-तुन्। इच्छा, मर्जी।

इष्टायन (सं० क्री०) इष्टिमिरयनं गमनं यज्ञ,  
बहुव्री०। यागविधिपका अतुष्टान, संवत्सरिक  
आहादि। अग्निदेवत्व प्रगटित होनेका प्रकार इसका  
भेद होता है।

इस (सं० पु०), इय-सक्। इविशुभीभियादिना सक्। उप-  
१।१००। १ कामदेव। २ वसन्तकाल, मौसम-बहार।  
३ गमन, रवानगी।

इय (सं० पु०) इय करणें काप्। वसन्तकाल,  
मौसम-बहार।

इय (सं० पु०) इय-वन्। सर्वेतिषोभियादिना सक् १।१।२५।  
आचार्य, भुर्यद।

इयथ (सं० क्री०) वाणका अग्रभाग, तीरकी नोक।

इयथीय (सं० त्रि०) वाणके अग्रभागमें उत्पन्न  
होनेवाला, जो तीरकी नोकसे निकला हो।

इयनीक (सं० क्री०) वाणका अवयव, तीरका  
पक्षी।

इयसन (सं० क्री०) इय-पच करणें श्युट्। वतु-  
कमान।

इध्वस्त्र (सं० स्त्री०) इधुरवास्त्रम्। वाष्पास्त्र, तीर-  
इधियार। “इध्वसे क्वं चो नृप” (वासायन)।

इध्वास (सं० त्रि०) इध्वावोऽस्त्रान्ते ध्वनिन, इधु धस  
करणे ध्वं कर्तयेण वा। १ वाष्पसेपक, तीरन्दाज्।  
(स्त्री०) २ चाप, कमान्।

इस् (सं० ध्व०) १ कोप। गुप्ता। भारो। पकड़ो।  
२ सन्ताप। जलन। ३ दुःख। अफसोस। डाय।  
४ भावना। खयाल। देखो।

इस् (हिं० सर्व०) ‘यह’ शब्दका रूप विशेष।  
विभक्ति जुड़ते समय ‘यह’ शब्द बदल कर ‘इस’ हो  
जाता है। जैसे—इसने, इसको, इससे, इसकी लिये,  
इसमें, इसका, इसपर।

इसकन्दर—सिकन्दर बादशाह। अश्वकन्दर देखो।

इसपञ्च (अं० पु० = Sponge) इसफञ्च, सुवा-  
बादल। यह ससुद्रमें रहनेवाला एक प्रकारका जोष  
है। यूनानी शूरवीर इसे अपनी टोपीपर लगाते थे।  
कोई इसपञ्च बहुत छोटा और कोई बड़ा होता है।  
इसकी भीतर चक्र और ऊपर छेद रहते हैं। इन्होंने  
छेदोंसे जल और वायु इसपञ्चके भीतर पड़नेवाला  
और बाहर निकलता है। यह बहुत कोमल और  
प्रायः तीन प्रकारका है। इसपञ्च भूमध्यसागर,  
फ्लोरिडा-सागरतट और बहामा द्वीपसे आता है।  
खानका इसपञ्च उधले जलमें उपजता है। लोग  
गीता या कांटा लगा इसे ससुद्रसे निकालते हैं।

इसपञ्चका रेशा पानीसे भलग होते ही छूट  
जाता है। फिर इसे धीरे छूटकर साफ करते और  
छोटीमें लटका सुखा लेते हैं। इसपञ्चका भार बढ़ा-  
नेके लिये नमक, गुड़, शीघ्रा, कड़क, बालू और  
पत्थर भर देते हैं। यह बहुत जल्द बढ़ा करता है।

इसपात (हिं० पु०) अयस्त्र, फौलाद, कड़ा लोहा।  
आजकल कितने ही बड़े-बड़े मकान् इससे बनाये जाते  
हैं। यह बहुत मजबूत होती और भाग लगनेसे भी  
खड़े रहते हैं। नीचे देखो।

इसपार (हिं० स्त्री० वि०) इस ओर, इस तरफ़।

इसपिरिट (अं० = Spirit) १ प्राण, जान्।  
२ आत्मा, रुह। ३ चित्त, तबीयत। ४ उत्साह,

हौसला। ५ भावार्थ, मतलब। ६ सार, निचोड़।  
७ प्रकृति, कुदरत। ८ भूत, गैतान्। ९ रस, चर्क।  
१० सुरा, शराब। चीन और भारतवर्षमें इसपिरिट  
बहुत प्राचीन समयसे बनते पाये हैं। यह विषम  
सुरा होती, जो भाग लगते ही भड़क उठती है।  
अब, सुरा और सुराकार देखो।

इसपेशल (अं० = Special) १ असामान्य, गैर-  
मामूली। (स्त्री०) २ असामान्य रेलगाड़ी, गैर-  
मामूली ट्रेन। यह किसी समय विशेष वा व्यक्ति  
विशेषके लिये छूटती है। प्रायः बड़ेलाट, छोटेलाट  
और राजा-महाराज इसपेशल पर ही आते-जाते हैं।  
कहीं बड़ा मेला लगनेसे रेलवे-कर्मचारी इसे समय-  
समयपर छोड़ा करते हैं।

इसबगोल (फ्रा० पु०) एक प्रकारका हथ, कोई  
दरख्त (Plantago ovata) यह पौदा पञ्चावमें  
सतलजसे पश्चिम अंशतक उत्पन्न होता है। प्रथमतः  
ईरानसे इसे लोग भारतवर्ष लाये थे। बीज ही व्यव-  
हारमें आता, जो तिल-जैस, भूरा और गुलाबी होता  
है। इसबगोल शीतल एवं कोमल है। यह प्रदाह  
तथा पित्तकी बढ़ाता और पाकव्यक्तीय रोगमें विशेष  
उपकार देखाता है। बीजको तिलके साथ कूट-पीस  
और तिल मिला पुकटिस चढ़ानेसे अग्निवातका स्त्रीत  
स्थान अच्छा हो जाता है। पुरातन उदररोगपर  
इसबगोल बहुत हितकर है। इसका काय कायरोग  
पर चलता है। ईरानसे कितना ही बीज बम्बई  
शहर आता है। यूनानी हकीम इसे बहुत व्यवहार  
करते हैं। यह चिपचिपा, शीतल एवं सद्बोचक  
होता और भूचकण्ड, भूचरोध, सूनाघात, आमरक-  
रक्षातिहार, उन्माद, दाह प्रलाप, तथा मादकताको  
खोता है।

इसबन्द (फ्रा० पु०) कानादागा, राई।

इसमार्दल—१ प्रथम इराहीमके पुत्र। २ एक सुशक्ति  
योगी। बाजीगर खेल देखाने समय इसमार्दलका  
नाम ले लेते हैं। ३ ईरानके एक सखाट्। इनके  
पूर्वज सोधु समझे जाते थे। यह १४८० ई० की उपर  
और १४२४ ई० की मर गये।

इसमाईल-आदिशहाह—दक्षिणविजयपुरके एक नवाब। यह युसफ-आदिशहाहके सड़के थे। १५१० ई०में इन्होंने राजसिंहासन मिला था। पच्चीस वर्षतक शान्ति पूर्वक शासनकर १५३४ ई०को २० वीं अगस्तको इनकी मृत्यु हुई।

इसमाईल निजामशहाह—बुरहान शाहके सड़के। इनके पिता अपने भाई सुतंजा निजाम शाहसे सड़क बचकरके पास भाग कर जा रहे थे। उसी समय ये और इनके बड़े भाई इमादोम लोहागढ़के किल्लेमें कैद किये गये। १५८८ ई०के मार्च मासमें औरान् हुसेन शाहके मरनेपर जमाल-खान्ने इन्हें अहमदनगरका राजसिंहासन सौंपा था। अकबरसे साहाय्य पा इनके पिता इनसे सड़ने आये, किन्तु हार गये। दूसरी बार उन्होंने राजमन्त्री जमालखान्का वध किया था। बुरहान निजाम शाहने अन्तकी इन्हें बन्दी बना राज्य अपने हाथमें ले लिया। इन्होंने प्रायः दो वर्ष शासन चलाया था।

इसर—विहारख दोसाद और बांसफोड़ डोमोंकी एक शाखा।

इसरार (अ० पु०) १ गोपनकार्य, छिपाव। २ भेद। ३ प्रेतवाधा, श्रोतानका साया। ४ याद्विष विशेष, एक बाजा। यह सितार-जैसा रङ्गता और गजसे बजता है।

इस्त्राएल—उत्तर पालेस्तिन वा सामारियावासी प्राचीन जाति। ख्रिष्टधर्म-प्रचारक ईसा इसी जातिमें आविर्भूत हुए थे। ईसा और यही ईजी।

इसलाम (अ० पु०) मुहम्मद द्वारा प्रवर्तित धर्म, मुसलमानोंका शास्त्रमार्गवलम्बन।

सुसलमान और इसलाम ये दोनों शब्द अरबी भाषाके 'सलम' धातुसे बने हैं। इसका अर्थ "विपत्तिरहित सुखसुखकी देना" है। जिस धर्मके धारण करनेसे संसारयात्रा निर्बिघ्नरीतिसे परिसमाप्त हो जाय और अन्तमें निर्वाण सुख प्राप्त हो सके, उस धर्मकी मुहम्मदने इसलामधर्म कहकर प्रसिद्ध किया। इसलाम, तसवीम, सलामत, और सुसलाम आदि शब्द उपयुक्त धातुके ही भिन्न भिन्न प्रत्ययोंसे

बने हैं। सुसलाम और ईमान शब्दके योगसे सुसलमान् शब्द बनता है। भारतमें जो सुसलमान् पाये जाते, वे दो तरहके हैं। एक तो सुसलामी अर्थात् आदि सुसलमान् और दूसरे नवसुसलामी (नवमुसल) अर्थात् अपने अपने पूर्व धर्मोंकी छोड़कर इसलामधर्म धारण किये हुये सुसलमान्। ये लोग अपनेकी मङ्गलादी वा मोमिन् भी कहते हैं। ये लोग जिस धर्मका आचरण करते हैं, वह 'दीन-इसलाम' नामसे प्रसिद्ध है।

इस धर्मके प्रवर्तक मुहम्मदने ५८३ ख्रिष्टाब्दमें अरब देशके मक्का नगरमें जन्मग्रहण किया था। उन्होंने अपने वाक्पदानामें उपयुक्त शिक्षा पाई। जिस समय उनका लम्बा हुआ, उस समय अरब देशमें सेविय, मगो और खटानादि मतोंका प्राबल्य था। भिन्न भिन्न मतोंके अभ्युदयसे देशमें विद्वहलताके सूत्रपात और धर्मविग्रहकी आशङ्का कर उन्होंने दुःखोंसे निमुक्त करनेके लिये एक नवीन धर्मका आविष्कार करना उपयुक्त समझा। जिस समय उनकी उम्र ४० वर्षके करीब हुई, उस समय उन्होंने अपने नवीन आविष्कृत मतके विचार सर्वसाधारणमें प्रकट किये और अपनेको ईश्वरका प्रतिनि पेंगम्बर बताया।

मक्कावासी लोगोंने धार उनमें भी विरोधतः कारा-इस् जातिने मुहम्मदके इस नव्य मतकी पुरातन प्रथाका विरोधी समझा और उनके विरुद्ध खड़े हो मार डालनेतकका प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया। मुहम्मदने जब अपने विरुद्ध यह सब चरित्र देखा और अपने बख्शो पुरातन प्रथावलम्बियोंसे हीन समझा, तो वह मक्का छोड़ देनेके लिये लाधार हुये। मक्का छोड़ देनेके बाद १३ दिन तक बराबर चलकर वह 'यात्रेब' नगरमें पहुँचे और वही नगर फिर 'मदीना' नामसे लोकमें प्रसिद्ध हुआ।

६२२ ई०की १२वीं जुलाईके दिन मुहम्मद मक्का छोड़ 'मदीना-नबी'में पहुँचे थे। फिर इसी दिनसे इसलाम धर्मकी अभिवृद्धि प्रतिष्ठित हुई। इसलिये खलीफा और जमर लोग उसी दिनको सुसलामागीका अभ्युदय दिन समझ कर तबसे ही हिजरी पद्धती गणना करते हैं। फिर उसके अनुसार

ही तबसे आज तक मुसलमानों का चन्द्रवत्सर गणित होता आता है।

मदीना में आकर मुहम्मद अपनी शिष्यमण्डली के उपदेश, पुरोहित, दलपति वा राजा नियुक्त हुये। इस जगह उन्होंने अपने सद्स्यों और शिष्यों की सहायता से जिस प्रकार इस्लाम धर्म की पुष्टि और उत्पत्ति की, उसे यथास्थान हमने लिखा है। मुहम्मद ६३२ ई० में अरब देश के सुन्निपथप्रदेश के महात्मा मुहम्मद ने अपना चौसठ वर्ष का आयु समाप्त और संसार में शान्ति धर्म स्थापित कर देहिक लीला संवरण की। जब उनका तिरोधानसमय निकट आया, तब वह अपनी प्रियपत्नी आयेसके बाहुभाग में गिर रखकर आकाश की तरफ शान्तिपूर्ण हृदय से देखने लगे और अल्लुहूत स्वर्ग में "स्वर्ग के सर्वश्रेष्ठ सज़ी" को उद्देश्य कर अपने प्राणों का अभाव धननाते हुये इस लोक को छोड़ चल बसे। इस घटना से ऐसा खट आलूम होता है कि मुहम्मद अपने अन्तसमय में स्वर्गप्राप्तिकी प्रत्याशा से प्रफुल्लित हो गये थे।

मुहम्मद जिस दिन मका की छोड़ मदीना आये थे अर्थात् जिस दिन हिजरी संवत्की प्रतिष्ठा हुई थी, उस दिन से लेकर मुहम्मद की मृत्युपर्यन्त अर्थात् हिजरी संवत्की १० वर्ष भीतर भीतर मुसलमान धर्म और मुसलमान जाति एशियाप्रदेश में इस रूप से दृढ़ संघटित हो गई, कि उसे वहाँ की राजधर्म, जातिविविध आदि कोई भी विघ्न कल्पित न कर सके। इस समय भी यह मुहम्मदप्रचारित इस्लाम धर्म चौदह करोड़ मनुष्यों के हृदय में अपने शक्तिमय अनुशासन के प्रभाव से प्रतिष्ठित रूप में अवस्थित कर रहा है।

जब मुहम्मद मदीना में आ गये, तब उनके अनुचर लोग वहाँ ही जाकर रहने लगे और उन सब के साथ ही मुहम्मदी सम्प्रदाय का प्रथम मुसलमानतनय आखिरका पुत्र अबदुल्ला हुआ। फिर उसके बाद क्रम क्रमसे मुसलमान जाति मुहम्मद की शक्तिके प्रभावसे तलवार और कुरानकी छाये में लेकर 'दीन, दीन' शब्द जोलते यूरोप के समस्त दक्षिण भाग में विस्तृत हो गई। इतिहास-पाठक प्रायः सबलोग ही इस बात से

सुपरिचित हैं कि मुहम्मदी इस्लाम धर्म की उत्पत्ति से पहिले अरब में सूर्योपासक मगौ, पौत्तलिक और खूटान सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव था। भिन्न भिन्न सम्प्रदायवाचक्यी जब एकत्र होते हैं, तब प्रायः पैर का घट्टर फूट निकलता है। इसी नियमके अनुसार जब अरब में दो भिन्न भिन्न सम्प्रदायों का सङ्गम हुआ, तब वहाँ भी सूर्योपासक मगौ के साथ वैजयन्ती (Byzantine) साम्राज्य की आत्मशायामें तत्परता होनेसे विरोध खड़ा हो गया। परस्पर में भगड़ा होनेसे दोनों पक्षों का बल घटता है, इसलिये करकी अधिकता और मनुष्यों की न्यूनतासे पारस साम्राज्य धीरे धीरे हीनमति होने लगा। (गणन देखो।)

सुप्राचीन जरथुष्ट (Zoroaster) के मतानुयायी पारसिक लोग अरब में एकता न रखने के कारण नवोत्थित मुहम्मदी सम्प्रदाय की शक्तिके सामने अपने धर्म की यथावत् रक्षा न कर सके। इसलिये पविरोहित अरब जातिके राज्यजयके साथ ही पासके दो हीनमति साम्राज्य मुसलमानों के हाथ लग गये। अब तो मुहम्मदी सम्प्रदाय का विस्तार अनिवार्य हो गया और अपनी तलवारकी सहायतासे अपने मतका प्रचार करने लगा। जो मनुष्य उसके कथनानुसार इस्लाम धर्म को न स्वीकार करता वह उसे अपनी तलवारकी घनो धारसे, उड़ा दिया करता था फिर जो भयभीत हो उसका अनुयायी हो जाता था, उसे संस्थान अपने में परिगणित करता था। परन्तु ऐसे समय में भी बहुतसे यहूदी और खूटान अपने सम्मानकी कुंज भी परवा न कर अधिक करप्रदान कर किसी तरह अपनी रक्षा कर बच गये।

जिस समय यह समस्त परिदृष्टि चरित्र अरब देश में हुआ, उस समय वहाँ मुसलमान जातिके अधिनायक, साम्राज्यके पञ्चोत्तर स्वयं इस्लाम धर्मप्रदेशक मुहम्मद ही थे। उनकी मृत्युके बाद खलीफा लोगोंने मुसलमान समाजका नेतृत्व ग्रहण किया। उनकी राजशक्ति धर्मप्रशोधित होनेका कारण आतीय एकता द्वारा शासन करनेसे अनुपस्थित देवदेवताओं में विस्तृत हो गई।



खलीफा बंशके प्रथम भत्ताब्दका इतिहास पढ़नेसे यह बात जानी जाती है, कि सुसलमान समुदायने गृहलाघव विजयाभिमान द्वारा अपने साम्राज्यकी सन्निहित भूयसे पसन्दूत किया था। अथर्वकरके राजत्वकालमें बीरवर खानिदने समग्र सिरिया और मिस्रोपोटमिया राज्यको तथा जमरके प्रधान सेनापति अमरुविन्-लेसने समग्र मिस्र राज्यकी भरव साम्राज्यकी अधीन कर दिया था। इसके बाद उन्होंने १४ महीने तक अथर्वह होकर अलेक्जेंड्रिया और मिस्रका जय तथा फोस्तात् (प्राचीन कायारो) नगरका स्थापन किया था।

मिस्रराज्य विजय करनेके बाद ही सुसलमान-सेनादलने भूमध्यसागरके तीर साइरेणिका प्रभृति सुदूर सुदूर राज्य अपने वश कर लिये। इसी समय अफ्रीकाके इबरी लोगोंके साथ भरव देशीय मरुपुत्र लोगोंकी मित्रता स्थापित हुई और इससे सुसलमान समुदायकी शक्ति और भी दृढ़ हो गई।

सैयद बिन आबि बख्शने ६३५ ई०के समय कादे-धियाके युद्धमें। ६३० ई०के समय जल्ला रणक्षेत्रमें, और ६४२ ई०के समय इस्लाम और नेहमन्दके रण-प्राङ्गणमें एकके बाद एक पारसिक सेनाको परास्त किया और पारस्य सिंहासनपर सुसलमान अधीश्वर की स्थापना की। उसानके राजत्वकालमें ६४२ ई०के समय साइप्रासद्वीप लुण्ठित हुआ था। इसके बाद अबदुल्ला बिन-जमर खुरासानने अपने अधिकार की विस्तृति वांछितकराज्य पर्यन्त कर सुसलमान साम्राज्य का पक्ष किया।

असो-बिन-आबी-तासेयरके राज्यकालमें गृहविवाद होनेसे राष्ट्रविघ्न बंधा हो गया। उन्होंने उस विघ्नवके शान्त होनेकी चेष्टा की, तो भी वे अथर्वर-रहमान बिन सुलजिम नामक प्रमुख विद्रोहीके हाथ मार दाले गये। वस! इन्होंने राजत्वकी समाप्ति होते ही मरुपुत्र खलीफा-बंशके शासन की भी समाप्ति हो गई। फिर उनका सिंहासन समैयदगणने सुयो-मित किया।

इसी समैयद बंशके प्रथम खलीफा सुयावियाने

यूफेटिस तीरवर्ती किडेयम नगरीसे उठाकर दमास्कास नगरीमें अपनी राजधानी स्थापित की। उसके राजत्व-कालमें सुसलमान-सेनापति एकवा-बिन-नफ्रीके उद्योगसे ६७५ ई०में कौरवान नगरकी स्थापना हुई। इसके बाद उसका ताश्वियारसे लेकर अतलाशिक महासागरके तीर-पर्यन्त सुसलमान साम्राज्यकी प्रभुता फैल गई। यहांसे जब इन्होंने समुद्रपारकर ओन राज्यमें जानेका उद्योग किया, तब इनकी यहां खलु हो गई। इसलिये किसी प्रधानके न होनेसे सुसलमानोंकी शक्ति ह्रिप्त भिन्न हो गई और सुदूर अफ्रीकाके पश्चिम भूभागमें सुसलमानों द्वारा विध्वस्त समस्त राज्य फिर स्वतन्त्र हो गये।

इसके बाद फिर ६८८ ई०में जिब्राल्टार-प्रणाली पर्यन्त समग्र उत्तर अफ्रीका भरवजातिके हस्तगत हो गया। खलीफा प्रथम वालिदके राज्यकालमें (७५—७१५ ई०) भरवके साम्राज्यकी खूब ही विस्तृति हुई। इसी समय ओनराज रेडाविक-किउटारने शासनकर्ता जुलियानासकी कन्याको विशेषरूपसे सांख्यिक और अपमानित किया, इसलिये जुलिया-नास उनसे विरुद्ध हो गया। उसने अफ्रीकाकी तात्-कालिक प्रतिनिधि भूसाविन नौशिरकी ओनराजके विरुद्ध उभाड दिया। तदनुसार भरव-सेनापति तारीख बिन-जियाद समुद्रकी पारकर ओनराज्यमें पदार्पण किया, उनके नामानुसार तबसे उधं स्थानका नाम 'जिब्राल तारीख' (तारीख पर्यन्त) पड़ा। एवं क्रमसे अपभ्रंश होते होते ही वह अब जिब्राल्टार (Gibraltar) अन्तरीप कहलाने लगा है।

तारीख-बिन-जियादने ओनराज्यमें पहुँच कर ७११ ई०की १८ वीं जुलाईको जेरज डिवा प्रेण्टेरके युद्धमें ओनराज रेडाविकको पराजित किया और स्वयं वहांकी राजा बने। इसके छोड़े ही दिन बाद आदा-ससिया, आषाडा और मासिया प्रभृति स्थानोंमें भी उन्होंने सुसलमान शक्ति का प्रभाव विस्तृत कर दिया। इस तरह पूर्वोक्तमें खुरासानपति कोतबा बिन-सुसलिम मवरान-नहरने घोषारा तुर्कस्थान और खारिज्म राज्यपर अपना अधिकार कर लिया एवं

वहाँ सुसलमान साम्राज्यकी परिदृष्टि की। इसके ही राजत्वकालमें मुहम्मद विन्-कासिमने ७१२ ई०में सिन्धुप्रदेशपर आक्रमण किया। इसके बाद गुर्जर जयकर चित्तोर पर धावा मारा, किन्तु उसमें व्य-रावसे उन्हें पराजित होना पड़ा।

७१४ ई०में सुसलमान साम्राज्यके कलैवरकी जिस प्रकार दृष्टि हुई, उसका हत्तान्त इतिहासमें उल्लिखित है। इस समय सुसलमान बीरोन एसिया और युरोप इन दोनों महादेशोंमें अपने साम्राज्य और इसलाम धर्मकी यथेष्ट दृष्टि की थी। इन दोनों देशोंके मध्य-भागमें एक, समुद्रसे दूसरे समुद्र पर्यन्त सुसलमानोंकी विजय-पताका उस समय फहराये थी। पश्चिममें पत-लान्तिम महासागर, उत्तरमें गिरिनिज् पर्वतमाला, दक्षिणमें साहारा मरु पर्यन्त विस्तृत समग्र उत्तर अफ्रीकाके राज्य (इजिप्त और आबिसिनिया राज्य) और पूर्वमें अर्घाव एसिया खण्डमें समग्र सिनाइ प्रायद्वीप (अरब), पालेस्तिन, सिरिया, आर्मेनियाका कुछ अंश, एसिया-माइनर, मिसोपोटेमिया, पारम्य, काबुल और सिन्धुनदीके पश्चिमदिक्ती समस्त प्रदेश सुसलमान साम्राज्यके अधिकारभुक्त और इसलाम धर्ममें दीक्षित हो सुसलमान संप्रदायकी परिपुष्टि करनेमें सहायक हुये थे।

इसी समय सुसलमान लोग भारतके विजय करनेमें भी उद्यत हुये। इसके बाद तातार जातिकी भी शक्तिशाली संप्रदायमें सम्मिलित कर इन्होंने अपने संप्रदायके कलैवरकी दृष्टि की थी। इसी सुविस्तृत सुसलमान-साम्राज्यमें परवर्ती ११श शताब्दीमें और भी अनेक शुद्ध शुद्ध राजा सन्निविष्ट हो गये, जिससे इसलामकी शक्ति और भी बढ़ गई। किन्तु बहुत काल पर्यन्त सुसलमान शासनाधीशों द्वारा परिचालित इस समस्त साम्राज्यमें एकमात्र खैरराजकी छोड़कर अन्य कोई भी राजा इसलामधर्मकी छायाको दूर करनेमें समर्थ न हुआ।

सुसलमानके राजत्वकालमें (७१५—७१०ई०) एसिया-माइनर तथा कनस्तान्तिनोपल, और जमर विन्-अब्द-अल्-अजीजके शासन समयमें (७१०—७२०ई०)

जोर्जन और तवरिस्तान राजा सुसलमानोंके शासन-से आसित हुये। जमरके संग्रह २२ यज्रीद (७२०—७२५ ई०) एवं परवर्ती खलीफागणकी शासनशक्तिके नष्ट हो जानेसे और हिंसामकी बढ़ती हुई तीव्र राजप्राप्तिकी अभिलाषसे सुसलमानराज्यमें अन्तर्निर्गम्य चपस्थित हुआ। विस्तृत शासन होनेसे प्रजा विद्रोही हो गई और खलीफा-पदाकाही नूतन नेताओंको सुसलमान साम्राज्य प्रदान कर सन्तुष्ट हुई। ७२४ ई०से ७४३ ई०तक खलीफा हिंसामके राजत्वकालमें सुसलमानोंका विजयी वाटु सबसे प्रथम पराभूत हुआ। ७३२ ई०को पट्टियके युद्धमें सुसलमानखेनापति अबदुर-रहमान् विन् अबदुल्ला चार्मस माटेनसे पराजित हुये। इसी युद्धके बाद युरोप महादेशमें अरबी लोगोंका अल्प प्रताप क्रमशः क्षुण्ण होने लगा।

इसके बाद ७४८ ई०में जिस समय अब्बासवंश धर्मप्राप्त सुसलमान-समाजका नेता बना था, उस समय उमैय्यद वंशके लोग अति निष्ठुरभावसे निष्ठत हुये थे। इसी वंशके एकमात्र राजा अबदुर-रहमान्-विन्-सुयावियाने खैरराजमें भाग कर अपना प्राण बचाया और कर्होमा नगरमें ७५८ ई०को उमैय्यद-राजपाटकी स्थापना कर स्वयं खलीफापद ग्रहण किया था।

अब्बासवंशके अधिकारके समय बगदाद नगरमें राजपाट परिवर्तित हुआ था। उसीके यत्नसे उस समय कई सुसलमान राज्य स्थापित हुये। भूमध्य-सागरके कोट, कसिका, सार्डिनिया और सिसीली द्वीप भी अफ्रीकाके सुसलमानोंके अधिकारमें आ गये थे।

पूर्ववर्ती खलीफावोंने अपने अपने धर्मके प्रभावसे अन्य जगत्में राज्यप्रतिष्ठा-प्रसङ्ग पर जेसा सुयोग कमाया था, देखा ही अब्बासियोंने भी ग्रन्थविद्या और साहित्य सम्बन्धपर अपना विशेष ध्यान एवं पनुराग दिया। विश्वव्यापली तथा सम्प्रसाधारणमें अपना गौरव कमाया। मन्सूर, हारुन अल्-रशीद और नामून् प्रथम खलीफा-वोंने उससमय साहित्य-जगत्में शोभमान पाया था।

उनका राज्यकाल भी सुसलमानोंकी शक्तिचमूहिका उल्लस निदर्शन है।

मानसिक एवं ऐकात्मिक चित्तवृत्तिके उन्नति-साधनकी प्राप्तिसे भव्यास-वंशीय लोग क्रमशः निर्जनताप्रिय और विलासी बन गये थे। सुतरां राजकार्यमें अव्यवस्थाभी भ्रमनोयोग देख सुसलमान प्रतिनिधियोंने गृहविच्छेद बढ़ाया। धीरे-धीरे राज-द्रोहिता फैलने लगी। बगदादकी राजशक्ति उस समय बाह्यतः प्रभुत्व थी तो भी वस्तुतः अन्तर्गतमें वह घट रही थी। यह विद्रोहवृद्धि साम्राज्यके एक सुदूर प्रान्तमें प्रथम भड़की। अबदुर-रहमानका खेनराज्यमें स्वतन्त्र एवं स्वाधीन उमैयद राज्य स्थापन इसका प्रारम्भ था। इस दृष्टान्तकी देखकर अपरापर स्थानके सुसलमान-प्रतिनिधियोंने भी स्वाधीन बननेका प्रयास उठाया।

विद्यापुरत एवं विलासी अन्धसर्वश्रीय खलीफावोंने इस राष्ट्रविद्रवके समय अपना अवस्थान विपन्नक विचारा इसलिये उन्होंने सिंहासनकी तथा अपना रक्षा करने लिये येतनभीगी तुर्कप्रहरी नियुक्त किये और नियमातिरिक्त क्षमता प्रदान कर प्रधान-प्रधान अमात्योके (अमीर-उल्-उमरा) हाथ राज्यपरिचासन-के कार्य सौंप दिये।

राज्य-शासनहेतु एतादृश व्यवस्थाके निर्देश, सल-जूकी तुर्कवंशके उपर्युपरि आक्रमण और सरकार-दरबारमें तुर्कोंके प्राधान्य-विस्तारसे खलीफा नाममात्र सुसलमान समाजके नेता माने जाते थे। १२५८ ई०में इलाकू के बगदाद आक्रमण तथा अधिकार करते ही भव्यास वंशका पतन हुआ।

उमैयद-वंशीय खलीफा मुयावियाके दामास्कस नगरमें राजधानी जमाने और परवर्ती भव्यासवंशके बगदाद नगरमें प्रतिपत्ति कमाने पर्यन्त सुसलमान् जातिका अभ्युदयप्रेत अरब-राज्य समग्र साम्राज्यसे नगण्य प्रदेश सम्पत्ता जाता था। अविश्व ही वह विभिन्न सामन्तराज्यमें बंट गया। इस सकल विभागके मध्य एकमात्र यमन प्रदेशमें मुहम्मदके लम्बेसे ई०के १५६वें शताब्द पर्यन्त विशेष प्रतिष्ठा पाई थी। प्रति

वत्सर पवित्र नगरमें तीर्थयात्रियोंके समागम, वह सरदारोंके परस्पर विरोध और नेजद प्रदेशमें बगदादो राजवंशके अभ्युत्थान एवं पतनके सिवा अरबी राज्यमें दूसरी किसी इतिहास-प्रसिद्ध घटनाका उल्लेख नहीं मिलता।

सोरिया, फारस, मोरिटोनिया और स्पेन राज्य सीतनेपर अरब जातिका बाणिज्य बढ़ा था। एकमात्र इस्लामधर्म और अरबी भाषाका प्रचलन रहनेसे तथा पर्याप्त बणिकोंके यातायातकी विशेष सुविधा पड़नेसे विस्तीर्ण सुसलमान-साम्राज्यमें एक बाणिज्य-साम्राज्य-के स्थापनका भी सुन्दर सुयोग लगा। बगदाद-राज-वंशकी विलासिता एवं भव्यास-वंशीय खलीफावोंकी सुखसमृद्धि तथा विलासवासना परिपूरणके निमित्त सुसलमान बणिकोंकी भारतीय उत्तम द्रव्य से आनेके लिये पैदलकी राह भारत जाना पड़ता था। ई० ८म शताब्दके प्रारम्भमें अरब भारतके नाना स्थानमें पहुँच बसने लगे और उसी समयसे बहुसंख्यक भारतीय राज्य अपने धर्मका आश्रय छोड़ इस्लाम धर्ममें दीक्षित होने लगे। अतः अरबोंने भारतीय होप-पुच्छ, सिंहल, सुमात्रा, यव, विलेविष प्रभृति द्वीपराज्य और सुदूर चीनसाम्राज्यमें भी बाणिज्यके व्यपदेशसे इस्लाम धर्मका प्रभाव जा फैलाया।

पदव्रजसे गमनकारी अरबी बणिकसमुदाय इसी प्रकार खलपय द्वारा तातार राज्य और साइबेरियाके उत्तरांश पर्यन्त पहुँचकर अवाध बाणिज्य-कार्य चलाता था। अफ्रीका-खण्डमें वह नाइजर पर्यन्त अग्रसर हुआ था। यहाँ ई० १०वें शताब्दसे सुसलमानोंके प्रभाव द्वारा चाना, बहारा, तोमूर, ऊकू, सेनायार, दफूर, उरनू, तिम्याकतू और मेसी प्रभृति अनेक सामन्त राज्य जन्म गये। अफ्रीकाके पूर्वोपकुलमें बाबेलमन्देब प्रणालीसे जलोवार तक समुद्रतटपर उनके यन्त्रसे मकदुश्या, मेसिन्दे, सोफला, केलू और मोजाविक बन्दर बसे थे। यहाँसे वह मादागास्करवासी लोगोंके साथ वैदेशिक बाणिज्य चलाते थे। सुसलमानियावासी बाणिज्यप्रिय बणिक खलपयसे पण्डित्य से ई० ११वें शताब्दकी सुदूर अमेरिका-खण्डमें जा पहुँचे। साधा-

रणकी विश्वास होता है, कि अरब सम्प्रदाय ही प्रकृत पक्षमें अमेरिका महादेशका आविष्कर्ता है।

वसुन्धराके भोगविलासकी भूमि भारत ही सुसलमान सम्प्रदायके साम्राज्य-विस्तारका सर्वश्रेष्ठ निदर्शन है। किन्तु प्रकृतपक्षमें ई० ७वें शताब्दीके अन्त और ८वें शताब्दीके आरम्भमें भारतवर्षपर सुसलमान सम्प्रदायका अधिकार हुआ था। खलीफाओंकी भोग-लालसा पूरी करनेकी ही सुसलमान् अधिकारिणोंने भारतके साथ संस्पर्ध जमाया। मीरकासिमके सिन्धुपर आक्रमण करनेसे भारतमें सुसलमानोंका समागम हुआ और इसलामधर्म फैला। उसके बाद १० और ११ वें शताब्दी गुलनीपति महमूदकी चेष्टासे भारतमें सुसलमानों की शक्ति प्रतिष्ठित हुई। उक्त सुसलमान पुङ्गवोंने सतत बार भारतपर आक्रमण बार बड़ भयंकर लुण्ठनपूर्वक स्वदेशको पलायन किया था। विख्यात सोमनाथ-मन्दिर और वहाँकी देवमूर्ति दोनोंही उनके द्वारा धूलिमें मिल गये। महमूद गुजनवती ईरानसे भारतके उत्तर-पश्चिम पञ्जाब प्रदेश पर्यन्त अपना राज्ज बढ़ाया था। इससे प्रायः दो शताब्दी बाद ११८१ ई० की सुल्तान घोरीने दिल्ली अधिकारपूर्वक भारतकी सर्वप्राचीन राजधानीमें सुसलमानों की शासन चला दिया। १२५७ ई० की सिपाही-विद्रोह पर्यन्त दिल्ली सुसलमान् बादशाहोंकी राजधानी गिनी जाती थी। यहाँ पठानोंका प्रादुर्भाव मिठनेपर ई० १४वें शताब्दीमें सुगल वंशका प्रभुत्व हुआ। सुगल सम्राट् अकबर और उनके प्रपौत्र औरंगजेबके समय भारतमें सुसलमानों की प्रभाविता पराकाष्ठा पायी थी।

भारतवासी इसलाम धर्मावलम्बी सुसलमान् विभिन्न जातिसे समुद्भूत हैं। उनमें कितने ही विभिन्न शाखायुक्त अरब जातिके सन्तान हैं। कितने ही पारसियासी ईरानियों, यूनानियों, तातारों, मुगलों, तुर्कों, बलूचियों, अफगानों, अग्निहोत्र-राजपूतों, जाटों और आर्योपनिषदिके पूर्ववर्ती भारतसमागत मीक्षलीय शाखा जातिके लोगोंसे इसलाम धर्मान्तर लेने बाद भारतीय विभिन्न सुसलमान् सम्प्रदाय परिपुष्ट हुआ है। आर्यावर्त भूमिमें मीक्षलीय सम्प्रदायके सुगल,

अफगान, पाठान और विश्व भरकी सुसलमान श्रेष्ठ कहाने हैं। सुल्तान, सुसलमान, यूनानोंका प्रभुत्व शब्द देखिये।

इसलामखान्—१ मीर जिया-उद-दीन बदल्शुका उपाधि। कवितानमें इनका उपनाम वाला रहा। बादशाह आलमगीरके अधीन इन्होंने कार्य किया था। १६६१ ई० की आगरामें इनकी मृत्यु हुई। नयाब हिम्मत खान्, सैफखान् और अवदुर-रहीम खान् इनके बेटे थे।

२ सफी खान् के पुत्र और इसलाम खान् मग-हदोके पौत्र। बादशाह फारुख-सिंहारके समय यह लाहौरके सूबेदार थे। सुल्तान शाहने इन्हें सात हजार सवार रखनेका अधिकार दिया था। इसलाम खान् मगहदो—बहालके एक सूबेदार। प्रथम यह मगहदमें रहते थे। उस समय इनका नाम मीर अवदुल्लाह माना गया। जहांगीरके राजत्वकालमें ये पांच हजार मनसबदार और बहालके सूबेदार बने थे। सम्राट् शाहजहानने मीर इन्हें छः हजारों मनसबदार किया और मोतमद-उद-दीनकी उपाधि तथा दक्षिणापथके शासनकर्ताको पदको दी। शाहजहान् इन्हें बहुत चाहते थे। मृत्युसे कई वर्ष पहले इन्हें सात हजारों मनसबदार और मनोका पद मिला। १५८० ई० में यह दक्षिणापथमें मरे थे। औरंग-बादमें इनको काम बनी है। कोई-कोई भूलसे इन्हें इसलाम खान् रूसी भी कहते हैं।

इसलाम खान् रूसी—पहले पायाके लड़के। इनका प्रकृत नाम हुसैन पाया था। यह बरारके शासनकर्ता थे। अपने चाचा द्वारा उक्त पदसे निकाले जानेपर इन्हें भारतवर्ष आना पड़ा। आलमगीर बादशाहने इन्हें पांच हजारों मनसबदार बनाया था। १६०६ ई० की ११ वीं जूनको यह विजयपुरके नगरमें मारे गये। इन्होंने आगरा दुर्गके समीप यमुना किनारे अपना गृह बनाया और उद्यान लगाया था। इसलाम खान् ग्रैव्—ग्रैव् सलीम चिन्तीके पौत्र। १६०८ ई० की बादशाह जहांगीरने इन्हें बहालका सूबेदार बनाया था। इनके पुत्रका नाम इक़राम खान् और आताका नाम कासिम खान् था। १६११ ई० में इस-

खान खान् मरे और इकराम खान् बहालके सुवेदार बने। आगरके पास फतेहपुर-बीकरीमें इनकी कबर है।

**इसलामगढ़**—राजपूताना प्रान्तभागमें भावलपुरके अन्तर्गत एक दुर्ग। खानपुरसे सैसलमेर खानिके पधपर यह दुर्ग खड़ा है। पहले इसपर सैसलमेरके राज-पूतोंका अधिकार था, किन्तु भावलपुरके खानोंने उनके हाथसे छीन लिया।

**इसलामनगर**—युक्तप्रदेशस्थ बदायूँ जिलेके अन्तर्गत बिसौली परगनेका एक नगर। यह अक्षा० २८° १८' ४५" उ० और द्रावि० ७८° ४६' पू०के मध्य अवस्थित है। इस नगरके चारों ओर आमका बाग लगा है।

**इसलामाबाद**—ब्रह्मानके चट्टाम जिलेका एक प्रधान नगर। बाराह देखो। २ काश्मीरका एक नगर। यह अक्षा० ३३° ४१' उ० तथा द्रावि० ७५° १०' पू०के मध्य भेल्लम नदी किनारे गिरिशङ्कर पर अवस्थित है। गिरिके नीचे प्रस्रवण है। सुनेमें भाता है, कि विष्णुने उक्त प्रस्रवण बनाया था। इसका प्राचीन नाम अन्तनाग है। अम्बरनाथ जानेवाले यात्री इसी स्थानसे आहार्य संघट्ट करते हैं। ई०के १८वें शताब्दीमें सुसलमानोंने इस नगरका नाम इसलामाबाद रक्खा था। यहां काश्मीरी शाल और नानाप्रकार कई एवं सनका कपड़ा विकने भाता है। केशर खूब मिलती है।

**इसलाह** (अ० स्त्री०) १ संशोधन, दुस्खी, सुधार। २ चिबुककैय, टुछड़ीका बाल।

**इसहाब खान्**—दिल्ली-सम्राट मुहम्मद शाहके एक प्रति प्रियपात्र बन्धु। इनकी उपाधि मोतमिन-उद्-दौला और प्रहल नाम मिर्जा मुलाम पड़ी था। ये अच्छी कविता बनाते थे। १०४० ई०में इनकी मृत्यु हुई। १०४६ ई०में इनकी कन्याका विवाह मफ्दर-जङ्गके पुत्र राजा-उद्-दौलाके साथ धूमधामसे किया गया था।

**इसहाब मोमाना**—पञ्जाब प्रान्तस्थ मूलतान जिलेवाले अच्छा स्थानके एक पढ़े-लिखे सुसलमान्। मुवावझामें उन्होंने अपनेकी चाचा मयद सदर-उद्-दौल राज कस्तावकी देण रेश्मर छोड़ रक्खा था। १४५६ ई०में

इनकी मृत्यु हुयो। सहारनपुरमें अपने मकानपर ही मोमानाकी कबर बनी है।

**इसायी**, ईसाई देखो।

**इसीका** (हिं०) १ 'यह'का सम्बन्ध कारक। इसीका देखो।

**इसे** (हिं० सर्व०) इसको, इसके लिये। 'इसे' यह शब्दके कर्मकारक और सम्प्रदानकारकका रूप है।

**इस्कात** (अ० पु०) पतन, गिराव।

**इस्कात-हमल** (अ० पु०) गर्भपात, पेटका गिराना।

**इस्कातर** (=पोर्तुगीज *Escreitoare*) सम्प्रतिविष्ट लेखनमञ्च, खानेदार लिखनेका मज।

**इस्कादी** (इस्काद) —काश्मीर-राज्यान्तर्गत बलती नामक प्रदेशका एक नगर। यह अक्षा० ३५° १२' उ० और द्रावि० ७५° ३५' पू०के मध्य अवस्थित तथा पर्वतमाला द्वारा वेष्टित है। नगरमें एक दुर्ग बना है, जो पर्वतपर निकटस्थ सिन्धुनदीसे ८०० फीट ऊँचा खड़ा है। काश्मीरराज मुलाबसिंहने स्थानीय राजा अहमद-शाहसे इसे छीन अपने राज्यमें मिला लिया था।

**इस्मरार** (अ० पु०) १ सनातनत्व, कयाम, ठहराव। २ एकाधिकार, बेरोक कब्जा। कानूनमें नियत और अपरिवर्तनीय करको इस्मरार कहते हैं।

**इस्मरारदार** (अ० पु०) क्षेत्र या पट्टका सनातन अधिकारी, जो शख्स खेत या पट्टेपर हमेगाके लिये कब्जा रखता हो।

**इस्मरारो** (अ० वि०) १ सनातन, कयाम, कमी न बदलनेवाला। (स्त्री०) २ नियत पट्टकी भूमि, कयाम पट्टेकी जमीन।

**इस्तिफांल** (अ० पु०) १ स्वागत, बगयानी। २ भविष्यत्काल, लुमाना आदि।

**इस्तिफास** (अ० पु०) १ हटाना, मञ्जूरी। २ खिरता, कयाम।

**इस्तिफा** (हिं० स्त्री०) जहाजी रफ्तो। यह तिकीमें लगती है। पानकी इसीमें तागसे और खींचते हैं। यह पंगरेली string शब्दका अपभ्रंश है।

**इस्तिस्ना** (अ० पु०) १ मूलोत्सर्ग, पेशाब करना, मतायी। २ मूलपुरीयोत्सर्गके पश्चात् करगति, हाथ-पानीका लेना। ३ मूलोत्सर्गके पश्चात् नृत्तिका-

खण्डसे मूत्रके विन्दुका सुखाना, मूत्रनेके बाद मद्यके टेलसे पेयावके बूदका जञ्ब करना। किसी तुच्छ वस्तुको 'इस्तिस्तेका देला' कहते हैं।

इस्तिरजा (च० स्त्री०) स्त्रीकृति, रजामन्दी।

इस्तिरी (हि० स्त्री०) १ स्त्री, कपड़ेकी बराबर और कहा करनेका घीज़ार। यह कोड़ेकी बनती और खोखली होती है। नीचेकी ओर पीतल लगाते हैं। खोखली जगह गर्म कोयला भरा जाता है।

जब कपड़ा धुलकर साफ होता, तब घोंघी इस्तिरीकी छपर फिरता है। इससे कपड़ेका शिकन मिट और तब बराबर काम जाता है। दरजी भी इससे काम लेते हैं। किसी-किसीके मतानुसार यह अंगरेज़ी steel गन्धका अपभ्रंश है। २ स्त्री, लोहार। ३ पत्नी, छोड़।

इस्तिरगा (च० पु०) १ वर्जन, इस्तराज, कूट।

३ निराकरण, नामझूरी, इनकार।

इस्तेदाद (च० स्त्री०) १ योग्यता, लियाकत। २ बुद्धि, समझ। ३ अर्थ, हिष्ठा। ४ विज्ञान, हुनर।

इस्तेफा (च० पु०) उत्सर्ग, तर्क, छोड़।

इस्तेमाल (च० पु०) १ अभ्यास, रवत। २ व्यवहार, चाल। ३ कार्य, काम।

इस्तेमाली (च० वि०) १ व्यवहृत, मुराना। २ साधारण, मामूली। (पु०) ३ उत्तम शालि, बढ़िया चाल।

इस्म (च० पु०) १ अभिधान, लक्ष्य, नाम। २ व्याकरणमें—संज्ञा।

इस्मनवीसो (च० स्त्री०) १ नाम लिखनेका काम।

२ नामका रजिष्टर। ३ नामसूची, लक्ष्यनामा।

इह (सं० अव्य०) इह-ह। इहो हः। पा ३।१।१।

१ इस स्थानपर, इस जगह, यहां। २ इस स्थानकी, इस जगहकी तरफ़। ३ इस लोकमें, इस दुनियाकी वीच। ४ इस पुस्तकमें, इस कायदेमें। ५ इस अवस्थामें, इस हालतमें। ६ सम्प्रति, अब।

इहकास (सं० पु०) इहम्-हः, कर्मधा०। श्रवणोक्ति कहते। पा ३।१।१। वर्तमान समय, ज़माना हाल, यह जिन्दगी।

इहकस्तु (सं० वि०) इस लोक या स्थानका ध्यान

रखनेवाला, जिसे इस दुनिया या जगहका ख्यास रहे।

इहचित्त, इहकतु देखो।

इहतन (सं० वि०) इहम् भावार्थे त्व, न् तुटच। इस जगत्में जन्म लेनेवाला, जो इस दुनियामें पैदा हो।

इहतिथात (च० स्त्री०) १ साधधानता, खबरदारी, चौकसी। २ प्रमत्ताद, होशियारी।

इहत्व (सं० वि०) इह भवम्, सम्यक्तात् त्वप। अव्ययम्। पा ३।१।१। इहकालमें होनेवाला, जो इस जगत् हो।

इहच (सं० अव्य०) इस स्थानपर, इस दुनियामें, यहां।

इहभोजन (सं० वि०) जिसके वस्तु और दान यहां पहुंचे, जिसके चीज और वस्त्र यहां पाये।

इहद्वितीया (सं० स्त्री०) इस कालकी द्वितीया, इस वक्तकी दूसरी।

इहपञ्चमी (सं० स्त्री०) इस समयकी पञ्चमी।

इहलोक (सं० पु०) इहम् प्रथमाया हः, कर्मधा०। १ यह जगत्, यह जिन्दगी। (अव्य०) २ इस लोकमें, इस दुनियामें।

इहवां (हि० क्ति० वि०) इस स्थानपर, यहां।

इहसान, यहकतु देखो।

इहस्थ (सं० वि०) इस स्थानपर उपस्थित, जो यहां खड़ा हो।

इहस्थान (सं० स्त्री०) १ यह जगत्, यह दुनिया। (वि०) २ स्थितिपर निवास करनेवाला, जो इस दुनियामें रहता हो। (अव्य०) ३ इस स्थानपर, इस जगह।

इहां, वहां देखो।

इहागत (सं० वि०) इस स्थानपर या पहुंचनेवाला, जो यहां आ गया हो।

इहामुत्र (सं० अव्य०) इहलोक और परलोकमें, इस दुनिया और उस दुनियामें, यहां और वहां।

इहेह (सं० अव्य०) चत-तत्, चत-तव, बारबार।

इहेहमाट (सं० वि०) जिसकी सर्वत्र माता रहे, जो अपनी माकी सब जगह रखता हो।

ई—हिन्दी वर्णमालाका चतुर्थ स्वरवर्ण। यह इकारका दीर्घ रूप है। तालुमे निकलनेके कारण इसे तालव्य वर्ण कहते हैं। ईका अक्षरार्थ कभी दीर्घ और कभी झूत होता है। तन्वके मतसे यह कुण्डलिनी है। प्रजा, विष्णु, शिव प्रभृति देव इसमें रहते हैं। इसकी उपासनासे चतुर्वर्ग फल मिलता है। (चान्दोग्य)

वर्णोच्चारणतन्त्रके मतसे ई लिखनेका नियम यह है,—  
ऊपर-नीचे और मध्यदिक पर यह कुञ्चित होता है। अधोगत तीन कोण रहते, जो दक्षिण दिक्से ऊपरकी सिकुड़ते हैं। ऊपरी दक्षिण कोणपर कोणयुक्त एक दूसरी रेखा कुञ्चित भावसे खींचना पड़ती है। ईमें चन्द्र, सूर्य और अग्नि विद्यमान हैं। इसकी मात्रा शक्ति है। (वर्णोच्चारण) ईकी तन्त्रमें त्रिमूर्ति, महात्माया, लोलाची, वामकोचन, गोविन्द, शेषर, पुष्टि, सुमद्रा, रत्नचन्द्रा, विष्णु, लक्ष्मी, प्रदाय, वाग्विशुद्ध, धरापर, कालोत्तरीय, मेघच्छा, रीति, यौष्ट्यवर्णन, शिवोत्तम, शिवा, तुष्टि, चतुर्थी, विन्दु, मालिनी, वैष्णवी, वैन्दवी, जिह्वा, कामकला, सनादका, पावक, कोटर, कीर्ति, मोहिनी, कालकारिका, कुचदन्त, तर्जनी, शान्ति और त्रिपुर-चन्द्री भी कहते हैं। माटकान्यासमें इसका स्थान वामघट्ट है। (ई मनी शालग्राम)

हिन्दीमें ई प्रत्ययका काम भी देती है। इसके अक्षर-विशेष्य और विशेषण दोनों बनते हैं। जैसे—  
पेटी-पेटी और सेटासे सेटी। कभी-कभी विशेष्य-वस्तुमें लगनेसे विशेषण और विशेषणके वस्तुमें होनेसे विशेष्य हो जाता है। जैसे—  
पेटी-पेटी और सेटासे सेटी।

ई (ई प्रत्यय) १ दिवादि। अफसोस। डाय। २ दुःख। ३ क्रोध। ४ दुःखानुभव।

तकलीफ। ५ प्रत्यय। भाखेके सामने। ६ सन्धि। नजदीकी। (स्त्री०) अथ विष्णोः पत्नी, प-छोप। ७ लक्ष्मी। ८ माया। (पुं०) ९ शान्ति। १० कामदेव। ११ गोविन्द। १२ त्रिमूर्ति। १३ वाम-कोचन। १४ तृप्तिहास। १५ सुरेश्वर। १६ कल्याण्युगम। १७ कलंड।

ईंगुर (हिं० पुं०) सिन्दूर, गिरारफ, लालबीज। यह भारतमें बनता और बाहरसे भी आता है। गलते बीसको वायुप्रवाहमें रखनेसे ईंगुर तैयार होता है। यह विशेषतः महावीर पर चढ़ता है। सीमाव्यवती स्त्री अपने मांग इससे भरती हैं। ईंगुरसे पारा भी निकालते हैं। सिन्दूर और ईंगुर ईको।

ईंवे (हिं०-प्रि० वि०) इधर, यहाँ, इस ओर।  
ईंचना (हिं० प्रि०) १ अचन करना, खींचना। २ लिपना, घसीटना। ३ अंस निकालना, तलवारकी ध्यानसे बाहर करना। ४ फाँसी चढ़ाना। ५ शीघ्र करना, छोड़ लेना। ६ पान करना, दम लेना, पीना। ७ घट्टण करना, घेंठ लेना। ८ रख छोड़ना, हथ रखना। ९ बांधना, बंधेजना।

ईंघमनौती (हिं० स्त्री०) भूमिपतिका अपने जपकके महाजनसे कर ग्रहण करना। जपक भूमिकर देनेमें घममर्ग होनेसे जमीन्दार महाजनसे वह घन लेता है और उससे खातेमें जपकके नाम जमा करा देता है। इसीका नाम ईंघमनौती है।

ईंट (हिं० स्त्री०) १ इटका, सड़ीका टुकड़ा। यह चौखंडी और लम्बी रहती तथा मांसमें टनती है। ईंट कच्ची और पक्की दो तरहकी होती है। पक्की ईंट पत्रावेमें पकती है। इसे लखौरी, मन्थरी और पुडो कहते हैं। लखौरी पतली और छोटी होती है। इसका चलन अथ बन्द हो गया है। पुराने समय

इसे घिस घिस कर सुन्दर गूँद बनाये जाते थे। नम्बरी मोटी और लम्बी होती है। आलकल पक्के मकानमें यही लगती है। पृष्ठीको गण भी कहते हैं। यह चौड़ी और परिधिके खण्ड जैसी रहती है। कूँकी जोड़ायी इसीसे होती है। क्योंकि दूसरी ईंट लगनेसे गोलायी आ नहीं सकती। तामड़ा, फररा, ककैया, ननिहारी, नौतेरहो और मेज़ा चादि अन्य प्रकारकी होती है। ईंट सौने, चांदी, ताँबे, पीतल और जस्ते आदिकी भी बनती है।

लोरीकी ईंट जोरते चढो। (लोकोक्ति)

२. ताशका एक रङ्ग।

ईंटका घर मही होना (हिं. क्रि०) विनष्ट होना, बिगाड़ना। “ईंटका घर मही हो गया।” (लोकोक्ति)  
ईंटकारी (हिं० स्त्री०) इटका-स्थापन, ईंटकी जोड़ाई।  
ईंटमार चट्टाकड़ा (हिं० पु०) लोड़ाविशेष, लड़कोंका एक खेल। कितने ही लड़के इकट्ठे होकर यह खेल खेलते हैं। कोई लड़का एक ईंट दूर फेंक देता और दूसरीसे उसपर गिराना लगानेको कहता है। जो अपने टेलेसे फेंक्री हुयी ईंटकी मारता, वह ईंट फेंकनेवाली लड़की पर चढ़कर ईंटकी जगह तक जाता है।

ईंटा (हिं० पु०) ईंट शब्द।

ईंढवा (हिं० पु०) १ गोलाकार पुट विशेष, चक्रदार तह, इंडुरी। इसे गिरपर रख लसकुन उठाते हैं।

ईंढवी (हिं० स्त्री०) गिरोविटन, पगड़ी।

ईंट (हिं० वि०) सट्टा, बराबर।

ईंत (हिं० पु०) ईंटका टुकड़ा। यह बीजारकी धार पैमानेके लिये सामके नीचे रखा जाता है।

ईंदर (हिं० पु०) किदार, नये दूधकी मिठाई। गाव या भैंस आनिपर पाठ-दश दिनके बन्दर दूधकी शीट कर जो मिठाई बनती, वह ईंदर बजती है।

ईंदूर (हिं० पु०) इन्दूर, चूड़ा। इन्दूर शब्द।

ईंधन (हिं० पु०) १ इन्धन, लखानेकी लकड़ी।  
२ लण, घास-फूस। “बापको पाटा न मिले, जो ईंधनको भेजे।”

(लोकोक्ति)

ईंकार (सं० पु०) ईं स्वर्ये कार। चतुर्थ वर्ण ईं।

ईंस्क (सं० पु०) ईंस्क-कनू। दर्गक, नाजरीन, देखनेवाला शब्द।

ईंस्व (सं० स्त्री०) ईंस्व भावे सुगद। १ दर्शन, नज़र, देखावा। करवे सुगद। २ चक्षुः, बांछ। ३ पर्यावेक्ष, स्वरदारी, चौकसी।

“श्रीशे धर्मपरायण परिपात्रसंभवः।” (मनु ४।१।१)

ईंस्विक (सं० पु०) ईंस्व ज्ञप्तापादादि देखा शुभाशुभं चिह्नं चिह्नित्, ईंस्व-ठनू। देवस्य, योगेनो, हाथ-पैरके नियान् देखकर भला-बुरा बता देनेवाला शब्द। “महावं चिह्नैः सह।” (मनु ४।१।८)

ईंस्विका (सं० स्त्री०) ईंस्विक-टाप्। गवकको स्त्री, नज़मीकी बीरत।

ईंस्वमाप (सं० त्रि०) पर्यावेक्षक, जांचनेवाला।

ईंस्वा (सं० स्त्री०) ईंस्व दर्शने ल टाप् च। दर्शन, नज़र, देख-रेख।

ईंस्वित (सं० त्रि०) पर्यावेक्षित, देखा हुआ, जो समझा गया हो।

“एकीष्टनकोत्याकामं धनुस्” कत्याचनयते।

निष्कं भित्तके जपेन पुष्पनापेक्षिता मुनिः।” (मनु ८।१।१)

ईंस्वित (सं० त्रि०) द्रष्टा, देखनेवाला।

ईंस्वेष्ट (सं० त्रि०) अद्भुत, अनोखा, देखने लायक।

ईंस्वमाप (सं० त्रि०) देखा जानेवाला, जो जांचा जा रहा हो।

ईंस्व (हिं० स्त्री०) इंड शब्द।

ईंस्वना (हिं० क्रि०) ईंस्व करना, देखना।

ईंस्वराज (हिं० पु०) इच्छु वपन करनेका प्रथम दिवस, जिस दिनको पहले पहल जख बोरे जाती हो।

ईंस्वन (हिं०) ईंस्व शब्द।

ईंस्वना (हिं० क्रि०) इच्छा रखना, चाहिय करना, चाहना।

ईंस्वा (हिं०) इच्छा शब्द।

ईंस्वा (सं० स्त्री०) दुःख, मुसीबत, तकलीफ।

ईंस्वाद (सं० स्त्री०) आविष्कार, छटि, उत्प्रादन, दरियाफूत, बगावट।

ईंस्वान (सं० त्रि०) यज्ञमान, जो यज्ञ करता हो।

ईंस्वान (सं० पु०) १ स्त्रीकार, मन्त्रूरी। २ प्रथम



प्रस्ताप, पक्षी तजवीज। इसे दोन एकदल कोयी  
कार्य जायमें लेनेसे प्रयत्नतः उपस्थित करता है।  
ऐलिक (सं० पु०) समपद विशेष, एक गांव।  
कहीं-कहीं ऐलिक भिन्न पाठ भी मिलता है। यहां  
पनेक ब्राह्मण, चण्डिय, वैश्य प्रभृति रहते हैं। (भौषण्यं)  
ऐल्ला (सं० स्त्री०) १ भूमि, जमीन। २ गो, गाय।  
ऐट (हिं०) १८ देखो।  
ऐठि (हिं०) २६ देखो।  
ऐठी (हिं० स्त्री०) बरखी, भाता।  
ऐठीदाड़ (हिं० पु०) चौगानका छप्पा। इससे हाके  
या पोखी खेलते हैं।  
ऐड (सं० स्त्री०) उदकदान, देवतापर धारका  
पदार्थ।  
ऐडन (सं० स्त्री०) प्रयसाकार्य, तारीफका करना।  
ऐड़ा (सं० स्त्री०) ईड-प-टाप्। १ स्तुति, तारीफ।  
२ नाड़ी, नवज। नारी देखो।  
ऐड़ित (सं० त्रि०) ईड कर्मणि। स्तुति, जो तारीफ  
या शुका हो। ऐड़ित रूप भी होता है।  
ऐड़िय, १८ देखो।  
ऐड्य (सं० त्रि०) ईड-प्यत्। ईडप्यत्/पड्यत्/पड्यत्।  
वा १८/१९। १८/१९। १८/१९। १८/१९। १८/१९। १८/१९।  
ऐलेन्य रूप भी बनता है।  
ऐड्यमान (सं० त्रि०) प्रयसा पानेवाला, जो तारीफ  
किया जा रहा हो।  
ऐड्या (सं० स्त्री०) भूयमानकी, भूईं पांवला।  
ऐड (हिं० स्त्री०) इठ, जिड़।  
ऐड़ी (हिं० त्रि०) इठी, जिड़ो।  
ऐत (हिं० स्त्री०) धनमसिका, डांड।  
ऐतर (हिं० पु०) १ चामुआघी, ग्रेडीवाक, जो  
मधुस इतराता हो।  
“ऐतार पर तोर बाड बांध कि भीतर।” (भोजीणि)  
(वि०) २ इतर, मामूली, छोटा।  
ऐति (सं० स्त्री०) ऐत गम्यते, ई भावे हिन्।  
१ इत्य, भगवा। २ प्रयास, छेरा। ३ सर्वात्मिक रोग,  
सन्नेवाकी बीमारी। ४ राजगोपद्रव विशेष, चामुत,  
छातिमें छः प्रकारकी ऐति कह्यो है,—

“कतिपरिणामतिः प्रथमा सुविधाः चतुः।  
प्रथाप्रथा रात्रानः पडता ऐतयः चतुः।” (चामुतः)  
धर्माधिक चर्पा होना, बिलकुल पानी न बर-  
सना, टिड्डी आना, चूने लगना, पक्षी यदना और  
शत्रु राजाका चढ़ना इति कह्यता है। उक्त छः  
प्रकार उपद्रव छठनेसे गश्च नहीं उपजता और प्रजाको  
बड़ा ही कष्ट मिलता है।  
ऐयर (च० = Æther) १ पदार्थविज्ञानके अनु-  
सार अधिक स्थितिसापकता और अत्यन्त चीनताका  
कल्पित साधन। यह पदार्थ समस्त स्थानमें भरा है।  
घन द्रव्यका भीतरी भाग भी इससे खाली नहीं होता।  
प्रकाश और उष्णताके संचारणका द्वार ऐयर ही है।  
२ रसतन्त्रातुमार अत्यन्त लघु, वायु-परिणामशील और  
दाहामक द्रव पदार्थ। यह गन्धके अन्त साध-  
सुरासार चरण करनेसे बनता है। सुरासारकी  
चपेला ऐयर अत्यन्त होता और बहुत भेदक गन्ध-  
तथा प्रखर, शीतल एवं सुगन्धि आद रहता है।  
यह द्रव अंग जलमें हल पड़ और वायु लगनेसे उड़-  
जाता है। अधिक शीतल रहनेसे ऐयर बरफ जमा-  
नेके काम आता है। इसे सूँघनेसे पचकता भी  
बढतो है। ३ वायुके ऊपरका कल्पित पदार्थ।  
यह अतिस्थूल होता है और चक्षुसे देख नहीं  
पड़ता। शून्य स्थानमें इसकी स्थिति समझी जाती  
है। तारागण इसीमें घूमता और हमारे एक पङ्कका  
अनुभव दूसरीको इसीके सहारे मिलता है। प्रकाशके  
पाने-जानेका द्वार ऐयर ही है। निकटस्थ द्रव्यके  
चलते-फिरते भी इसमें गतिचक्षार नहीं होता।  
ऐद (च० स्त्री०) १ सुसज्जमानोंके धर्मात्सवका  
दिन। यह रमजान् महीनेके अन्तमें पड़तो है।  
ऐदसे पहले सुसज्जमान् तीस दिन रोजा रखते यानी  
दिनको भूखे-प्यासे रह गाम पड़ते ही भोजन करते  
हैं। वर्षमें बार ऐद होता है—चाखिरी चहार गम्मा,  
ग्रावन, रमजान् और बकरीद। इनमें ऐद-उल-फितर  
और ऐद-उज-जु-या या बकरीद पड़ो है। उक्त चारसर  
पर विहान् और मूर्प समो सुसज्जमान् ऐदगाहमें  
जमाव पड़ने-जाने हैं। बिधा इनके भगूर और

शबरात भी एक प्रकारकी ईद है। किन्तु इसमें सिर्फ प्रधान साधुओंके नामपर फातिहा पढ़ा जाता है।

नौरोज भी कोई छोटी ईद, नहीं होती। सूर्यके संपरागिपर चानिसे यह उत्सव मनाया जाता है। सब लोग कुरीब कासे या किरमिजी रङ्गका कपड़ा पहनते हैं। राजा अपने सिंहासनपर बैठते हैं और अमीर-उल्ल-उमरा, दरबारी तथा नौकर चाकर भज्जर गुजारते तथा सुशारक माद देते हैं। 'सुशारक नौरोज' कहकर सलाम किया जाता है। इस दिन खेल-तमाशा होता है, नजराना दिया जाता और दरबारमें खानेकी लिये नाश्ता मिलता है। लोग आपसमें एक दूसरेसे मुसाक़ात करने भी जाते हैं।

२ उत्सव, जलसा।

ईद-उज्-जु, हा (अ० स्त्री०) मक़रीद, सुमलमानोंका एक उत्सव। यह जिलहज महीनेमें होती है।

ईद-उल्ल-फ़ितर (अ० स्त्री०) उत्सव विशेष, सुमलमानोंका एक जलसा। यह शबाल महीनेमें पड़ती है।

ईदगाह (अ० स्त्री०) उल्लतखान विशेष, एक चतुर्तरा। सुसलमान प्रधानतः ईद या दूसरे धर्मोत्सवके दिन इस जगह नमाज पढ़नेको इकट्ठा होते हैं।

ईदी (अ० स्त्री०) १ उत्सवोपहार, ईद या किसी जलसेकी भेंट। २ उत्सव-सम्बन्धीय कविता, ईद या किसी जलसेकी शायरी। ३ उत्सव-सम्बन्धीय कविता लिखनेका पत्र, जिस कागज़में ईद या किसी जलसेकी शायरी लिखी जाय। ४ उत्सव-सम्बन्धीय कविता लिखनेका पारितोषिक, ईदकी शायरी बनानेका इनाम। इसे छात्र अपने सुसलमान गुरुको देते हैं।

५ उत्सवके दिन बालकोंको दिया जानेवाला धन, जो रुपया-पैसा ईदके दिन लड़कोंको खाने और खेलनेको दिया जाता हो।

ईदक (सं० स्त्री०) इदमिव दृश्यते, इदम्-दृग्-क्षिप्, क्त कर्मोत्पत्ती। पृ० ११२०। इति ईग् इत्यादेशः। १ एवम्भूत, ऐसा। (स्त्री०) २ एवम्भूत अवसर, ऐसी हालत। ईदगा (सं० स्त्री०) ईदगो भावः, ईदग्-तल्-टाप्। इस प्रकारका भाव, ऐसी हालत।

ईदग्, ईदग्-क्षो।

ईदय (सं० स्त्री०) इदम्-दृग्-घञ्। १ एवम्भूत, ऐसा। (अव्य०) २ इसप्रकार, इसतरह, ऐसे।

ईसन (सं० स्त्री०) ईन्ना क्षो।

ईसा (सं० स्त्री०) आप्-सन्-घट्-टाप्। बान्हा, खादिश, पाह।

ईसित (सं० स्त्री०) आप्-सिडम्, आप्-सन् कर्मणि क्त। बाण्डित, खादिश किया हुआ, जो बाँधा गया हो।

ईसितफन (सं० पु०) नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

ईसु (सं० स्त्री०) आप्-सन्-उ। १ प्राप्ति की चेष्टा करनेवाला, जो हासिल करनेकी कोशिशमें लगा हो। २ प्राप्ति की इच्छा रखनेवाला, जो हासिल करना चाहता हो।

"धर्मस्य सत्तु धर्मज्ञाः सतां नृपिमुज्जिताः।" (मनु १०।१२०)

ईसुयज्ञ (सं० पु०) सोमयज्ञ विशेष। सोमयज्ञ क्षो।

ईफा (अ० पु०) निष्पत्ति, साधन, पञ्चामदिही, नथड़ा। यह यौगिक शब्दोंमें लगता है।

ईफा-डिगरी (अ० और अं० मिश्रज) डिगरीके रुपयेकी निष्पत्ति, डिगरीका रुपया दे देना।

ईफावादा (अ० पु०) प्रतिज्ञा साधन, इकारकी पञ्चामदिही, बातका पूरा करना।

ईबीबीबी (हिं० स्त्री०) सम्भोगजनित शब्द विशेष, सीसीकी धावाज़, मिसकारी।

ईवनवतूता (इववतूता)—एक भरव पर्यटक। इन्ने मुहम्मद तुगलकने दिल्लीका विचारपति बना दिया था। 'मपर इवनवतूता' नामक ग्रन्थ इन्नेने लिखा है। १३२२ ई०में ये मके तीर्थयात्रा करने गये थे। इनके उक्त ग्रन्थमें भरवका विमोचन वर्णन नहीं मिलता। मक़ाके विषयमें इन्नेने इतना ही कहा है,—  
"परमेश्वर इसे सड़ा बनाये।"

ईम् (यै० अव्य०) १ अच्छा! हाँ। ठीक है। २ वस! ठहरो! यह प्रायः छोटे शब्दोंके अन्तमें वाक्य पारम्भ होने समय पद्यवा सम्बन्धवाचक सर्वनाम, यद् अथय, उपसर्ग और भाव, उत् तथा अथ आदि निपातोंके पीछे लगता है।

"विचोदितानामपराधोपमोदकया कर्मिण्यथा वा।" (रघु १३।४)

“प्रकृतिप्रवृत्तिश्च पुनरुत्पत्त्यादिवर्तिताः” (११४)

यन्तुतः प्रकृतिमें प्रवृत्तिका अर्थात् सिद्ध होता है। क्योंकि वेदने ही निर्देश किया है, कि प्रवृत्तिसे जगत् निकलता है। (आत्माधि नहीं)

इन्द्रवादीने मन्त्र और हिरण्यगर्भ अर्थात् वेदोंसे इन्द्रकी सम्भवा है, वेदों-ही कथिने भी समुदाय कीवत्ता आदिबोध एक प्रवृत्तको माना है।

“इन्द्रो नरविदिः पित्राः” (११२०)

इस प्रकार (प्रकृतिहीन) जनेन्द्रवर अथवा मानना पड़ेगा।

“मन्त्रान्तरिः परात्” सतोऽप्यभ्युदयः पुनरुत्पत्तिरुत्पत्तिः”

(उत्तम) प्रधानकी जगत्सृष्टि दूसरेके लिये है। क्योंकि सृष्टिके कुछम पक्षकी तरह वह स्वयं भोक्ता नहीं होता।

“मन्त्रादिपुनरुत्पत्तिः सत्त्वनिमित्तम्” (१११९)

प्रकृति और प्रवृत्तियों को छोड़ कर सभी अनित्य है। (अतएव प्रकृति और प्रवृत्ति ही जगत्का उपादान-कारण ठहरता है)

अवशेषमें महर्षि कथिने धारणा, ध्यान, आसन, विहित कर्मास्तुष्टान और वैराग्यको ही मोक्षका द्वार मतलाया है। सांख्य ११०—१२ देखो।

योगसूत्रमें पतञ्जलि सुनिने प्रकाशित किया है,—

“अत्र तद्वर्तितात्पुनरुत्पत्त्यादयः पुनरुत्पत्तिश्च ईश्वरः” (योगसू० ११२०)

क्षोभ, कर्म, विपाक एवं आशय जिसे छू नहीं सकता और जो काशयसे प्रवृत्त तथा आत्मासे स्वतन्त्र रहता है, यही ईश्वर है।

“तत् तद्वर्तितात्पुनरुत्पत्त्यादयः” (१११९)

ईश्वर निरतिशय ज्ञान रखनेसे सर्वज्ञ है।

“कर्तृत्वमपि तु त्वः कर्मिण्यवस्थात्वात्” (१११८)

वह पूर्वतनो (पादि सृष्टिकर्ताओं)का भी शुरु है। वह किसी काल द्वारा अमच्छिन्न नहीं होता।

“तस्य कालः प्रवृत्तिः” (११२०)

प्रवृत्ति उसका बोधक है।

“तत्त्वप्रवृत्तिर्भावनम्” (११२०)

उत्तम प्रवृत्तिका जगत् और उसके अर्थका ध्यान करना ही उपायना है।

“तत्त्वप्रवृत्तिर्भावनम्” (११२०)

(पूर्वीक उपायना द्वारा चित्त निर्मल होनेपर)

उसके प्रत्यक्षचेतन्यका (अर्थात् शरीरात्मगत आत्म-सम्बन्धीय) ज्ञान उपजता है। उस समय दूसरा कोई विषय नहीं पड़ता। (निर्विघ्न समाधि लग जाता है)

कथाद कथिने ईश्वर अथवा पुरुष नामसे किसीका अस्तित्व नहीं माना है। (इसीसे अनेक उन्ने नास्तिक कहा करते हैं) किन्तु उनके भी गौणरूपसे ईश्वर माननेका प्रमाण मिलता है। कथादके मतमें—

“अथामिहैकमिदं ब्रह्मकारितम्” (ईश्वर ३।१।१०)

हृषसे रस सञ्चार होनेका कारण ब्रह्म ही है।

“अथैकमिदं ब्रह्मकारितम्” (ईश्वर ३।१।१०)

आत्मनिर्गम्य अथवा ब्रह्मकारितम्” (१।१।१०)

अपसरण, उपसरण और भुक्त एवं पीत वस्तुका संयोग ब्रह्मसे ही उत्पन्न होता है।

सिवा इसके अन्यान्य स्वयंमें ब्रह्मको अनेक वस्तुका कारण कहा है। इसीसे सम्भव पड़ता है कि कथाद-कथित ब्रह्म ही (अर्थात् जिसका कार्यकारण प्रत्यक्ष ब्रह्मिणोचर नहीं होता) ईश्वर है। कथादमतमें ब्रह्म कारण-विशेष द्वारा परमाणु समुदायका संयोग होनेसे यह विग्रहब्रह्माष्ट बना है। परमाणु देखो।

महर्षि गौतमके मतमें—

“ईश्वरः कालश्च पुनरुत्पत्त्यादयश्चैव” (आश्वलायन १।१।१२)

ईश्वर ही कारण ठहरता है, क्योंकि अनुरूप-जत कर्म स्वयंदा सफल नहीं होता। आप देखो।

गौतमके मतसे परमेश्वरमें नित्य ज्ञान, इच्छा और यथादि कतिपय-गुण रहते हैं। वह जगत्का केवल निमित्त कारण है, उपादान कारण नहीं। जैमिनि अथवा जैमिने मतमें वैदिक कर्मास्तुष्टान द्वारा प्रवृत्तार्थ मिल सकता है। उन्होंने भी ब्रह्मका अस्तित्व स्वीकार किया है,—

“ब्रह्मोति च” (ईश्वर ३।१।१२)

महर्षि वादरायणने समय उपनिषद्का चार विकास-विदास्तुष्टानमें अच्छीतरह ईश्वरतात्वकी मोमांसा लियी है। उन्होंने कथिने, कथाद, गौतम-प्रभृतिका मत काटकर एक अद्वितीय परब्रह्मका स्वरूप देखा दिया है। उनके मतमें—

“जन्मादस्य यतः ।” (वेदान्त १।१।१२)

जिससे जन्मादि (उत्पत्ति, स्थिति, भङ्ग) होते हैं, वही ब्रह्म है ।

“आनन्दमयोऽभावात् ।” (१।१।१२)

परमात्म विषयमें आनन्द शब्दका बहु उच्चारण समुचित है । (इसी हेतु श्रुति-उक्त आनन्दमय परमात्मासे भिन्न नहीं है)

“चित्तोऽनुपपत्तेः ।” (१।१।१६)

क्योंकि आनन्दमयमें जीवत्व नहीं है (परमात्मा और जीव भिन्न है)

“शक्तिसामान्यात् ।” (१।१।२०)

समानरूपसे चेतनमें ही जगत्की कारणता प्रतीत होती है ।

“श्रुतत्वाच्च ।” (१।१।२२)

श्रुतिके मतमें सर्वत्र ईश्वर ही जगत्का कारण है ।

“वस्तुपक्षेऽन्यथा शरीरः ।” (१।१।२२)

ब्रह्ममें जीवका धर्म भिन्न संकता है, किन्तु जीवमें ब्रह्मका धर्म नहीं रहता ।

“वराण्युत्पत्तेः ।” (१।१।२४)

क्या कर्तृत्व और क्या मोक्षत्व समस्त ही परमात्माके अधीन हैं । परमात्मा और वेदान्त देखो ।

प्रधानके जगत्कर्तृत्वको छोड़, वेदान्तका अपरापर मत अपनेकाशमें सांख्यमें मिल जाता है । किन्तु इतने दिनोंसे कर्म एवं ज्ञानवाक्यपर जो भगड़ा था और दर्शनकारोंमें अपने-अपने विभिन्न मतपर जो विवाद बढ़ा था, श्रीकृष्णने जसा ले उसको साधारणका समझ जटाकर मिटा दिया और सर्वशास्त्र-सङ्गत विशुद्ध ईश्वरत्व देखा दिया । श्रीकृष्ण-मोक्ष गीता, वेद उपनिषद् और दर्शनशास्त्रके एकत्र मिलनकी परिचायक है । वास्तवमें भगवद्गीताके तुल्य सार्वजनिक उपदेश-शास्त्र आजतक कहीं देख नहीं पड़ता । गीतामें भगवान्ने सांख्यके ‘प्रधान’, योगके ‘ईश्वर’, वैशेषिकके ‘परमाणु’, न्यायके ‘कारण’ और मीमांसिकों ‘ब्रह्म’को ईश्वर मान लिया है । उन्होंने लोगोंको समझाया—वेदोक्त कर्मकाण्ड और उपनिषद्प्रोक्त ज्ञानकाण्ड दोनोंसे ईश्वर या मोक्ष मिला जुला है। उनके मतमें—

“अतोऽर्थं कर्मफलसङ्गं निवृत्त्यर्थं निराश्रयः ।

कर्मफलसङ्गस्यैव भवति किंचित् शरीरि सः ॥ २०

निराश्रयोऽर्थोऽपि नाना कर्मसम्यक्परिदृष्टः ।

शरीरं केवम् कर्मं कुर्यादिति किंचित् ॥ २१

यदप्यात्मसमुद्यो ह्यभासीति विमनुजः ।

समः सिद्धान्तविहीन इत्यपि न निवृत्तते ॥ २२

नतवत्तस्य सुखस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।

यथायाचरतः कर्म समर्थं विनियोजते ॥ २३

ब्रह्मार्थं ब्रह्मविद्ब्रह्मभाषी ब्रह्मवाक्यतः ।

ब्रह्मं च तेन कथ्यते ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ २४ (गीता ४ पञ्चाश)

‘जो कर्मफलकी आसक्ति छोड़ चिच्छिन्न और सबके आश्रयमें दूर रहता है, वह सम्यक् प्रवृत्त होती भी कोई कर्म नहीं करता । जो कामना और सकल परिपक्व छोड़कर अपने आत्मा तथा मनकी विशुद्ध रखता है, वह केवल शरीर द्वारा कर्मानुष्ठान करते भी पापभोगी नहीं बनता । जो यहच्छा सामसे सन्तुष्ट, शीतवर्ण एवं सुखदुःखादि इन्द्रियहिणु, शत्रुविहीन और सिद्धि तथा पसिद्धिकी समान मानने वाला है, वह कर्म करते भी किसी बन्धनमें नहीं पड़ता । जो कामना छोड़कर, रागादिसे मुक्त हो ज्ञानकी चिन्तामें अवस्थान देता है उसके यथायं कर्मानुष्ठान करनेसे सकल कर्म विमुक्त हो जाते हैं । सुकृ, सुखादि सकल पात्र ब्रह्म, हवनीय घृतादि ब्रह्म, अग्नि ब्रह्म और होम करनेवाला भी ब्रह्म ही है । कर्मस्वरूप-ब्रह्म जिसका समाधि जगता, उसीको ब्रह्म मिलता है ।’

इस प्रकार भगवान्ने कर्मयोगीको ईश्वरत्वका उपदेश दे पीछे प्रकाश किया है,—

“आदरणीयं नैवोक्तं कर्म कारयत्युच्यते ।

श्रीशारदय तन्मेव श्रमः कारयत्युच्यते ॥” (गीता ४।५)

जो मुनि ज्ञानयोग पर आरोहण करना चाहता है, कर्म ही उसका सहाय बनता है । मननार योगपर आरोहण करनेवालेको कर्मत्यागका सहारा लेना पड़ता है ।

इसी प्रकार कर्म और ज्ञानकाण्डका मिलन हुआ है । गीतामें व्याप्त किया है—एकके समापन दूसरा ही नहीं सकता ।

योग्यके मतमें (उपनिषद्मोक्ष) पञ्च, पञ्चय  
 चौर जगत्का मूलकारण ही प्रकृत है। (योग ५२)  
 यह जन्मरहित, पञ्चमय-स्वभाव और सकलका ईश्वर  
 होते भी मायामें पड़कर सन्मान्तरूप कर्मावधार  
 प्रत्ययकान्त-विहीन कर्मादि परवश समस्त भूतोंके  
 बनाता है, किन्तु स्वयं उस सकल सृष्टिके प्रायत्त नहीं  
 होता। माया उसका पछिछानने इस चराचर विग्रहकी  
 उपजाती है। ईश्वरके पछिछान निमित्त ही यह  
 जगत् पुनः पुनः उत्पन्न होता है।

".....रिपुर्न पुनः पुनः।

मृतममिह जगत्समस्तं प्रकृतिरेवम् ॥ ८

न च मां तानि कर्माणि निबध्नाति धनवशः।

उदासीनब्रह्मसमस्तं तेषु कर्मेषु ॥ ९

महाभक्तो च प्रकृतिः सृष्टेः च चराचरम्।

ईशुगुणेन कोऽपि जगद्विपरिवर्ति ॥" १० (योग ५ पञ्चाश)

मैं स्वीय प्रकृतिका प्रायत्त पकड़ भविष्या-परवश  
 प्राणिसमूहकी बार-बार सृष्टि करता हूँ, किन्तु उस  
 सृष्टि कर्मके प्रायत्त नहीं रहता। मैं सकल ही  
 कर्मसे पनासल हो उदासीनकी भाँति सर्वदा भवस्थान  
 रहता हूँ। प्रकृति मेरा पछिछान पकड़ इस चराचर  
 जगत्की बनाती है। मेरे पछिछानके हेतु ही जगत्  
 नियत रूपसे बदलता (पुनः पुनः उत्पन्न होता)  
 रहता है। यह स्वप्न भी स्वप्न है। (योग ५२)  
 यह स्वीय प्रकृतिका प्रायत्त से समय-समय पर जन्म-  
 म्रक्षय किया करता है।

"कर्मोति सर्वव्यापका भुक्तानां चरीति यम्।

प्रकृतिं धामनिधाय सर्वव्यापकमायया ॥ ६

इहा एता हि धर्मस्य भातिर्नरिणो ज्ञानाः।

ब्रह्मसामान्यमेव तदासात्मानं एवावबुध्यन् ॥ ७

परिधायाव संप्रभा विमलानां च दुष्कृताम्।

धर्मवैभवावर्तमानां चरन्ति मुने मुने ॥" ८ (योग ५ पञ्चाश)

यद्यपि मैं जन्मरहित, पञ्चयामा एवं सर्वभूतका  
 ईश्वर हूँ तो भी निम्न प्रकृतिका प्रायत्त से जन्मम्रक्षय  
 करता हूँ। निम्न निम्न समय धर्मका विग्रह और  
 अधर्मका प्रादुर्भाव होता है, उसी उसी समय मैं  
 पाप्माकी सृष्टि किया करता हूँ। मैं साधुके परित्राघ,

पसाधुके विनाश और धर्मके संस्थापनके लिये पुनः-  
 पुनर्गमें जन्म लेता हूँ।

ईश्वरकी जो जिस भावसे पुकारता है, वह उसी  
 भावसे उसे पा जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र  
 और स्त्री सब कोई उस परमपुरुषका प्रायत्त से  
 भक्त्युत्कृष्ट गति पा सकते हैं। (योग ५ पञ्चाश)

इसी प्रकार गीतामें सर्वव्यापिसमस्त ईश्वरतत्त्व  
 स्थापित हुआ है। गीतामें ईश्वरके चवतारकी कथा  
 लिखी है और पुराणमें उसी महापुरुषकी श्रीता वर्णित  
 हुई है। सकल पुराणके मतमें ईश्वरने अपनी मायासे  
 सगुण बन ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर संज्ञा पायी है।

मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि प्रकृतिके गुणत्रयका  
 नाम हो ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर पड़ा है। रजोगुण  
 ब्रह्मा, सत्वगुण विष्णु और तमोगुण महेश्वरका स्वरूप है।

"मत्तमस्यमर्षेण गुणत्रयमुदाहृतम्।

साम्याग्निविरेकिनां प्रकृतिः परब्रह्मोक्तिता ॥ १०

केचिन्महात्मनोऽहं ब्रह्मसमस्तं जगत्।

एतदेव ब्रह्मसृष्टिं करोमि विष्णोति च ॥ ११

दुर्गोष्ठी श्रीमहात्मनोऽहं देवा विष्णोति।

एका श्रीदेवोऽहं भगवन् ब्रह्मविष्णुमहेश्वरः ॥" १२

(भाग्य १ पञ्चाश)

पुराणमें इन तीनों देवतायोंकी उपासना वर्णित है और  
 यही त्रयीमूर्ति सर्वशक्तिमान् ईश्वरभावसे युजित है।  
 छिया इसके सहाय्या, नक्षी प्रकृति देवियों और दूसरे  
 देवतायोंकी उपासना भी देख पड़ती है। किन्तु सकल  
 ही विशुद्ध भक्त्युपाधिभिन्निष्ठ परातोत परब्रह्म माने  
 गये हैं। सकल पुराणमें प्रधानतः ईश्वरकी साकार  
 उपासना निरूपित है। पुराणके मतसे इसी उपासना  
 द्वारा ईश्वर मित्र भक्तता है। ऐसे स्वयं पर भक्त  
 लोग प्रायत्तमें पाकर पूछ बैठेंगे—जिस देयमें भ्रान्त-  
 प्रधान उपनिषद् एवं दशम द्वारा ईश्वरकी निराकार  
 उपासना ठहरायी, और ईश्वरको सर्वव्यापी सर्व  
 नियन्ता बता सर्वत्र घोषणा की गयी, उसी भ्रान्तप्रधान  
 देयमें जगद्व्यापी ईश्वरकी रूपकल्पना कैसे भव-  
 धारित हुयी? जिसे निराकार कहा गया, उसके  
 साकारकी कल्पना करनेका क्या प्रयोजन पड़ा?

पुराणकार व्यासदेवने देखा—जैसा समय है,

उसके अनुसार ईश्वरोपासनाका प्रचार करना भी कर्तव्य है। कर्म एवं ज्ञानमार्ग पर अनेक चलना चाहते हैं सच्ची, किन्तु सद्गुरु ही उसे समझ नहीं सकते—कैसे उस परमेश्वरकी कल्पना की जाय। कर्म करते हैं सच्ची और ज्ञानालोचना भी बताते हैं सच्ची, किन्तु उससे मनको छुट्टि दे नहीं सकते। हम संसारी हैं और संसारवन्धनमें प्रायः जड़भूत रहते हैं, जो कुछ समय मिलता है, उसमें मन इतना नहीं लगता—कि उस निराकार अद्वितीय परमेश्वरका ध्यान बंध सके। संसारमें ऐसा निश्चय-स्थान ढूँढ़ नहीं पाते, जहाँ रहकर मनको ठहरावे और चित्तवृत्तिकी निरोधमें ला सके। जितने समय कर्मकाण्ड एवं ज्ञानकाण्डकी आलोचना बताते हैं, उसमें मनको शांत नहीं पाते और न प्राणमें भक्तिका भाव ही बढ़ाते हैं; केवलमात्र संसारके वंशस्थमें ही पड़ जाते हैं। संसारमें रहकर कैसे उस परमपिताको पहचान सकेंगे? इसलिये संसारियोंको उपासनाका मेढ़ सिखाने और सद्गुरु ही ईश्वरका रूप समझानेके लिये भक्तिप्रधान अष्टादश महापुराण एवं उपपुराण बनाये गये। भगवान् भी कहा है,—

“यन् उपरं कर्त्तुं शीघ्रं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।

सदृशं भक्त्युपकृतमस्मि प्रयत्नात्मकः॥” (गीता ८/१६)

जो भक्ति, सद्गुरुसे सुभी पत्र, पुष्प, फल और जल देता है, मैं संयमी व्यक्तिका वही द्रव्य खा पी लेता हूँ।

इसीसे पुराणमें पत्र, पुष्प, फल और जलसे सद्गुरु उपासना प्रचारित हुई है। पुराणकारके ईश्वरकी असंख्य मूर्ति माननेका यह कारण है—कि जिस जिस रूपकी भक्ति रहे, वह उसी रूपकी पूजा करे।

हमारे शास्त्रमें ईश्वरके शरीरकी जो कथा है वह समस्त ही रूपक है। वेदान्तसूत्रमें अष्ट लिखा है—

“आत्मनिर्दिशमयं ईशानिति शेष इत्येवमविवक्षितोत्पत्तेर्द्वयं यति च॥”

(भक्त्युप १/११)

कुछ स्थिर होकर विचारनेसे अष्ट ही समझ पड़ता है कि पुराणोक्त ईश्वरके भवतारकी सकल सीसा प्रकृत

घटना नहीं—समस्त ही रूपक है। भगवान् के कर्म भवतारमें समुद्रमन्थनका उपाख्यान पाया है। इस उपाख्यानके पाठसे यही उपलब्धि होती है—

‘देहिमात्र इन्द्रियरूपी असुरगण-कर्तृक परिपीडित है। उसका कर्तव्य इन्द्रियगणको नयीभूत बना विवेकादि देवताके साहाय्यसे कैवल्यरूप अमृत उत्पन्न करना है। किन्तु यह कोई साधारण बात नहीं है। इन्द्रियरूपी असुरगणका सङ्घर्षमें बशीभूत होना कठिन है। इसीसे भगवान् ने प्रथम विवेकादि देवतागणसे उनको मिला दिया था। पीछे इन्द्रियादिके अधिपति मोह पर्याप्त देहान्तबोधसे विवेकादिने सन्धि की ओर श्रुतिसमुद्र मथनेके लिये उभय दलने रुढ़िकी मन्थनदण्ड बना आत्माको रज्जु हाथमें ली। आत्मा कूटस्थ है। इसीसे कर्म उपाधि विग्रहित आत्मा मन्दार नामक देहकूटमें था। मन्थनसे प्रथम ही उपसर्गरूप कालकूट निकला। महादेवरूप तमोत्रयकारी गुरुदेवने उसे पोंकर गिर्यगणका व्याघात हटा दिया। (यद्यपि प्रथम गुरुके अयोग्य कष्ट उठानेसे गिर्यशो ज्ञान प्राप्त है) फिर निर्विश्व वेदाभ्यास होने लगा। क्षम-क्षमसे यन्त्ररूप सुरभि, ऐश्वर्यरूप सद्यःशवा घोटक, मांस्त्रयोगरूप शिरावत नामक हस्तो, अष्टाङ्गयोग-रूप अष्ट दिग्दहस्तो, अष्टसिद्धिरूप अष्टहस्तिनो, जोषोपाधिकरूप कौतुभमभि, आत्मोपाधिकरूप अष्टरत्न, विजोहास-जनक पानन्दमय पारिजात वृक्ष, शान्ति एवं कल्याण, आदि असुरगण, चित्तशक्तिरूप लक्ष्मी और मिथ्यादृष्टि पर्याप्त अधिष्ठा-रूपी वारुणिकी उत्पत्ति हुई। परिशेष कैवल्य-मृत हाथमें लिये ज्ञानरूप चम्पनारि निकले। इन्द्रियादि असुरगण अमृतरूप कैवल्य पानेके अयोग्य था। इसीसे भगवान् ने विद्यारूप मोहिनीके धमसे उन्हें मोहित कर विवेकादि देवदुर्गको यह है चिर-जीवी बनाया। इसी समय तमः (राहु) ने गुप्तभावसे अमृत दिया और रजः एवं सत्वरूपी अमृतस्यने उसका परिचय दिया। अनन्तर पन्तरीमी भगवान् ने ज्ञान-तत्पररूप चक्र द्वारा उसका गिर्योद्धेदन किया।

पुराणकारने यह भी सबको बार-बार समझाया—

यथार्थमें ईश्वरका रूप एवं वर्ण इत्यादि कुछ भी नहीं है, कल्पनामात्र है। (सर्वत्रोपपादक-वचन)

पुराणके मतमें ईश्वर ही पुरुष है। द्विजातिगण सभीको ब्रह्म बताते हैं और जयकासमें यही मधुर्यप नाम पाता है,—

“इति ईश्वरः सोमो ब्रह्म सोमो रिषात्पु।

अथ ईश्वरः सोमः कल्पनामात्रम् ॥” (मन्त्र १ अष्टाद)

पुराणमें गीताका यही मूलतत्त्व कहा गया है,—

“अनादिममो मे ह्य निबद्धा उपासने।

इदं चार्यः पितरं मे कुतश्च यताः ॥ १

मे मन्त्रमभिर्देवमन्त्रं कर्तुं कामते।

संनितमभिलष्य कृतस्त्वयं भुवम् ॥ २

संनितमभिलष्य कृतस्त्वयं भुवम् ॥ ३

मे मन्त्रमभिर्देवमन्त्रं कर्तुं कामते।

मे मन्त्रमभिर्देवमन्त्रं कर्तुं कामते।

मे मन्त्रमभिर्देवमन्त्रं कर्तुं कामते।

मे मन्त्रमभिर्देवमन्त्रं कर्तुं कामते।

मे मन्त्रमभिर्देवमन्त्रं कर्तुं कामते।

मे मन्त्रमभिर्देवमन्त्रं कर्तुं कामते।” (गीता ११ अष्टाद)

जो मेरि (ईश्वरके) प्रति अत्यन्त चतुराग और निविष्टमना हो अदापूर्णक उपासना करता है, वही प्रधान योगी है। एवं जो किनेन्द्रिय है सबको समान समझता है और अक्षर, अनिर्दिष्ट, अप्रकृत, अविनश्य, सर्वव्यापी, ज्ञान-सिद्धि, कृतस्त्वयं तथा नित्य परब्रह्मकी उपासना करता है, वह भी मेरि ही प्राप्त पहुँचता है। देखो अतिशय अत्यन्त गति पा सकता है। जो अत्यन्त ब्रह्ममें आसक्तमना होता है, वह अधिकतर दुःख उठाता है। जो मेरिपर सकल निर्भर कर एकमात्र भक्तिपूर्वक मेरा ही ध्यान धरता है और भक्ति ही उपासना करता है, उसे मैं मनुके आकर इस संसार-मागमें जुड़ा देता हूँ।

इसमें संभारी समझ सकता है, कि भक्तिमयकारने इष्टदेवकी सकल समर्पण कर ध्यान-उपासना करने पर मोक्ष मिलता है।

पहले ही लिख दिया है, कि केवल साधककी सुविधाके लिये पुराणमें ईश्वरका आनादप मान लिया है। वस्तुतः आत्मा रूपवत्कला रूपक मात्र है। पुराणमें

भगवान्के भक्त, कर्म, धर्मादि नामा देव धारण-पूर्वक अथवा होनेका जो प्रसङ्ग है, उससे विवरण पाठसे समझ पड़ता है, कि वह सर्वगम्यता और नर, तिर्थगादि यावन्तीय कीवले आभासपूर्वमें उपस्थान करता है। तन्ममें ईश्वर आकाशमयकिते नामसे भी निर्दिष्ट है,—

“आकाशं वदन्त य इत्यादि ॥ १ ॥

अद्वैतादिर्बो न सर्वोत्तरं वदन्ति ॥

रक्षाद्वैतं वदन्त य इत्यादि ॥ २ ॥

विष्णुवत् वदन्त य ईश्वरं वदन्ति ॥

गीतावत् वदन्त य इत्यादि ॥ ३ ॥

अमृतार्थं बो द्यो योरावर्ति ॥ ४ ॥ (आराधन १ १२३)

तन्ममें भी यही घोषणा हुई है,—

“विष्णुवत् वदन्त य इत्यादि ॥ १ ॥

आकाशं वदन्त य इत्यादि ॥ २ ॥

(उपासना १ १२३ ॥ १ ॥)

विष्णु, अमृत, विष्णु और अमृतकी मन्त्रकी रूप-कल्पना केवल साधकके हितार्थ है।

इसीप्रकार आकार उपासना सभी है। आकार उपासनाके प्रचारका प्रधान कारण यही है, कि मन अद्वैत वस्तुकी धारणा कर नहीं सकता। विविधता निराकार अथवा अत्यन्त इत्यादि विविध-गुण नाम सुननेसे प्रथम उसकी चिन्ता करना दुःसाध्य हो जाता है। सुतरां इसी आकार मूर्ति रचना बाह्य, जिससे सहज ही किसी प्रकार धारणा हो सके। आकार प्रत्यक्ष मन करनेसे ध्यान और अर्चना उभयका काम निकल जाता है। मन नियत ही परिवर्तनमान और नियत ही नव नव भाव प्रत्यक्ष करनेका प्रयास है। इसीसे आकार-उपासक संभारी आत्मा मूर्तिमें ईश्वरकी पूजा करते हैं। आज योद्धागोपचारसे दयमुखाकी ओर दो दिन पीछे भयंकरा भयंकर महा-कालीकी मूर्ति पूजते हैं। किन्तु साधक समझता है, कि दोनोंमें उगी एक महाशक्तिवा पूजन होता है; केवल रूप और उपाधिका भेद रहता है।

आकाशक मात्र, अथवा, अथवा, आकाशक प्रथम विभिन्न मतावली देव पढ़ते हैं। आकाश इसप्रकार स्तव करते हैं—

“नमो दीनो महादीनो मित्राये कृतः नमः ।

नमः प्रहस्ये भद्राये नित्याः प्रवृत्ताः का वाम् ॥ ७

अविरोध्यातिवद्राये दीनो हृत् नमो नमः ।

नमो अतृप्तप्रतिज्ञाये दीनो हृत् नमो नमः ॥ ११

या दीनो सर्वभूतेषु निष्कामयेति श्रद्धिता ।

नमस्तस्ये नमस्तस्ये नमस्तस्ये नमो नमः ॥ १२

या दीनो सर्वभूतेषु चैतन्येनभिषोयते ।

नमस्तस्ये नमस्तस्ये नमस्तस्ये नमो नमः ॥”

( मार्कण्डेयपुराण ८३ अध्याय )

“नमो दीनि भद्राभाये सद्विषंकारकारिण ।

नमो दिनिधने चण्डि मुक्तिमुक्तिप्रदे मित्रे ।

न मे कर्प विज्ञानाति सगुणं निगुंष्यन्त्या ।

अविनापि कृती दीनि च क्षातीतानि यानि मे ॥”

( देवीभागवत १।८।४०—४१ )

भव पुकारते हैं,—

“तं प्रपद्ये महादीनः सर्वं भगवत्प्राप्तितम् ।

विभूतिः सकलं यस्य चराचरमिदं जननम् ॥”

( विष्णुपुराण—वायुसंहिता १।७ )

वैष्णवीकी स्तुति है,—

“अधिकाराय प्रहाराय निक्षाय परमात्मने ।

सर्वैकपदप्रदाय विप्रवे सर्वशिष्ये ॥

नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च ।

वायुदेवाय ताराय क्षीरसागराकारिणे ॥”

( विष्णुपुराण १।१।१७ )

यद्यपि भिन्न भिन्न सम्प्रदाय भिन्न रूप और भिन्न नामसे अपने उपास्य देवताको पुकारते हैं तो भी यह प्रमायास ही समझ पड़ता है, कि वे समस्त मतावलम्बी उसी एक अद्वितीय ईश्वरको लक्ष्यकर अपनी-अपनी स्तुति करते हैं ।

तन्मन्त्रं कदा है,—

“निगुंषा प्रकृतिः समनन्तरं च निगुंषाः ।

सर्वे च सगुणा तं हि सगुणोऽहं सदभिषः ॥

सकं हि सगुणा दीनोऽन्ये हि निगुंषाः निषाः ।

उपासकानां विद्वद्भिः सगुणा सगुणो मयाः ॥”

( मुच्यमानात्म ७ पटल )

मेरा ( ईश्वरका ) और प्रकृतिका निगुंष होना सत्य है । किन्तु पापके सगुण होनेसे मैं भी सगुण ( भूतिमान् ) बन जाता हूँ । देवीके सगुण और शिवके निगुंष रहनेमें कोई सन्देह नहीं । हाँ,

उपासककी कार्यसिद्धिके निमित्त उभय सगुण हो जाते हैं ।

यह साकार उपासना आजकल सकल संसारी ईश्वर-तत्त्वानुसन्धायी प्राथम-कल्पिक मात्रकी ग्रहण करना उचित है । श्रीमद्भागवतमें लिखा है,—

“अर्चयन्त्येव सारदीयं वा भवत्सन्तम् ।

यावन्नवेदं स्रष्टुं सर्वभूतेष्ववस्थितम् ॥” ( भागवत १।१०।१३ )

मैं ईश्वर हूँ । मुझे प्रतिमादिमें पूजना कर्मों सोमोंका तभीतक कर्तव्य है, जबतक उन्हें निज हृदय एवं सर्वभूतमें मेरा अवस्थान समझ नहीं पड़े ।

किन्तु जब देही निज हृदय, एवं सर्वभूतमें ईश्वरका अवस्थान पाये और प्रकृत ज्ञानमें समा जाये, तब उसे प्रतिमाका पूजन आवश्यक नहीं है । भगवान् समझाया है,—

“अथ वा सर्वभूतेषु भूतानाम् कृताग्रयम् ।

अर्चयेद्भगवानात्मा भगवामिह न अष्टमा ॥” ( भागवत १।१८।१० )

अनन्तर मुझे सर्वभूतमें अवस्थित समझ सकनेपर मनुष्य सर्वत्र सकलको दान, भोजन तथा मैत्रीसे पूजे और अभिन्न दृष्टिसे देखे । ( यही मेरी प्रकृत पूजा है )

हमारे प्राचीन शास्त्रोंमें जिस प्रकार ईश्वरका ग्रहण किया गया है उसे हमने असंग-अलग दिखा दिया । अब चार्वाकादि भिन्न सम्प्रदाय जिस प्रकार ईश्वरका अवस्थित मानते या नहीं मानते उसे भी नीचे दिखाते हैं ।

चार्वाकके मतमें ईश्वर कोई वस्तु नहीं । चैतन्य-विशिष्ट देह ही आत्मा है । उसे छोड़ स्वतन्त्र आत्माका रहना असंभव है । शोकसिद्ध राजा परमेश्वर और देहका उच्छेद ही मोक्ष है ।

जेनमतमें अनन्तज्ञान, अनन्तगुण, अनन्तवीर्य आदि अनेक गुणोंसे विशिष्ट आत्माको ईश्वर माना है । संसारमें जितने आत्मा हैं, वे सब शक्तिकी अपेक्षा ईश्वर हैं, परन्तु ज्ञानावरण आदि पाठ कर्मोंसे उनके गुण भाग्य हो रहे हैं, इसलिये वे इस समय अल्पज्ञता, अल्पशक्तता आदि दूषणोंसे दूषित होनेके कारण ईश्वर नहीं हैं । जिस समय यह ओश अपने तम और ध्यानके प्रभावसे कर्मोंको नष्टकर छाड़ता है, उस समय



सर्वज्ञता आदि गुणोंमें विमिश्र हो जाता है और उसी समयमें ईश्वर कहनाने लगता है। फलतः जितने आत्माओंमें सुक्ति (प्राणायामादि कर्मोंमें शून्यता) प्राप्त कर लेता है, वे सब ही ईश्वर हैं। जैनयोग ऐसी ही आत्माओंको पूजते हैं, ऐसीका ही ध्यान करते हैं और ऐसीको ही ईश्वर नामसे पुकारते हैं। जैनाधिक आदि महापुरुषोंके समान जैनशास्त्र ईश्वरको सृष्टिका कर्ता नहीं स्वीकार करता। उसके मतमें यह जगत् पनादि-निधन है। इसको न तो किसीने उत्पन्न किया और न कोई इसका सर्वथा नाश ही कर सकता है। जो कुछ हमको इस समय वर्तमान मालूम पड़ता है और थोड़ी देर बाद उसीका जो हम नाश देखते हैं, वह और कुछ नहीं केवल पदार्थका पर्याय मात्र बदलना है, ऐसे पर्याय तो सर्वथा बदला करते हैं, परन्तु ऐसा कोई समय न था और न हो सकता है जिस समय कोई पदार्थ न हो या न रहा हो। क्योंकि सत्का प्रभाव और असत्की उत्पत्ति प्रमाण-वाधित है।

समस्तभद्रशास्त्रोंमें अपने 'रक्षकरपञ्चाशकाचार'में ईश्वरका जो कथन बतलाया है, वह यह है—

“कर्मोच्छिद्यहोत्रं च सर्वं जगन्निजम्।

अस्मिन्मिन्निर्दिष्टं नास्तीति प्राप्ता मयि ॥ १

पुनश्चास्मिन्मिन्निर्दिष्टं नास्तीति प्राप्ता मयि ॥ २

न चान्ये वसोऽप्यस्यः न चोर्वि ॥ ३”

परमेश्वर परमोर्विप्राप्ति विनयः प्रतिः।

सर्वोर्विप्राप्तिः प्राप्तिः प्राप्तिः प्राप्तिः ॥ ४

पर्याप्त जिसके भूत, प्यास, बुढ़ापा, रोग, जन्म, मरण, भय, गर्व, राग, द्वेष, मोह और 'व'शे रति, चरति, छेद, छेद, निद्रा, विन्ता, पावर्ष्य ये पठारह दोष न हों जो सर्वज्ञको, समस्त प्राणियोंका हितही हो, कर्ममल रहित हो, छतप्रत्य हो, और जो परम पदमें रहनेवाला हो वही प्राप्त है।

बहुतमें लोगोंने कहा है, कि जैनों ईश्वर नहीं मानते या भोवोम तोपेकरीको ही ईश्वर मानते हैं। परन्तु यह बात ठीक नहीं। जैनशास्त्रमें उपर्युक्त गुणवाला ईश्वर माना गया है। भोवोम तोपेकरीको

जो विशेष रीतिसे जैनों पूजते हैं, उसका कारण यह है कि सामान्य सुधारणाओंकी अपेक्षा उन्होंने समय समयपर बहुतपेदे द्वारा आत्माके कल्याणका विशेष रीतिसे मार्ग बतलाया है। उन्होंने आविर्भूत मार्गपर चलकर जोवोंने सुक्ति पाई है और सामान्यनि बहुत थोड़ा उपदेष्ट दिया है। मोहोर और जैनधर्म ग्रन्थ देखो।

बौद्धोंमें प्रधानतः जैनयान और महायान दो सम्प्रदाय हैं। जैनयान गौतमबुद्धका प्रचारित धर्ममत मानते हैं। उनके मतमें देह अवयव ईश्वर है, ध्यान, धारणा एवं योग द्वारा ज्ञान मिलता है; और उसके पीछे निर्वाण होता है। वे ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते। महायान शून्यवाद मानते हैं। उनके शास्त्रमें ईश्वरको बात बिलकुल नहीं लिखी। परवर्तीकालमें उन्होंने हमारे तन्त्रोक्त देवताओंको स्वीकार किया वही, किन्तु एक अद्वितीय ईश्वरको माननेसे मुँह मोड़ दिया। वे आत्माको भोगी, विनाशी और अप्रत्यक्षी बताने हैं। शून्यता ही नित्य, प्रथम और अन्त्य है। शरीरस्य इन्द्रियस्य अवधि प्रभावविमिश्र रहता है पर्याप्त आत्मदर्शन करनेकी समता नहीं रहता। अतः एवं प्रभाव-प्रभाव समस्त भवार्थस्य प्रतिफल करना सुसुक्ष्मा धर्म है। जगत्की उत्पत्तिसे पूर्व केवल शून्य था, वहीसे शून्यके प्रायसका प्रयोजन पड़ा। शून्य व्यतीत सकल पदार्थ मिला है। शून्यमें मन लगा समाधिस्थ होनेसे क्रमशः देहों निर्वाणपद पाता है। समाधिराज, माध्यमिकसुखरति और अभिधर्मकीप-प्राप्ति नामक मोहप्रत्यय यह बात आन्धोतरह लिखी है। मोहर्ण देखो।

उक्त जैनों और बौद्धोंको छोड़कर पड़ने हुए भी अनेक सम्प्रदाय थे; जिनमें कोई ईश्वरको मानते, कोई ईश्वरको बहुतपेदे जानते और कोई ईश्वरको बिलकुल पक्षपातमें न थे। आत्मनिर्दिष्ट गहर-दिग्विजयमें उनका विवरण विद्यमान है।

बौद्धों और जैनोंका प्राधान्य बढ़ने पर भारतवर्षमें महातन ब्राह्मण धर्मके कोप जैनोंका उपक्रम चलाया। उसी समय भगवान् महाशारण्यने कथन प्रवृत्तकर

विधर्मियों के करास कलसे सनातन धर्म को निकाल  
बहै तवाद् प्रचार किया। उनके मतसे—

“न तावदयमिहानेनाविषयः। अथगु प्रथमविषयत्वात् अपरोचनाय  
प्रथमायप्रविष्टः। न चायमस्ति नियमः पुरोऽप्यस्ति एव विषये विषयात्मक-  
संशयितव्यमिति। अथत्यचेऽपि आकाशे वाताकाशमन्वितायाश्चक्षुः।  
यमविबुधैः प्रत्यात्मन्यपानाकाशायाः।” (शारीरकभाष्य ११)

यह कहन ठीक नहीं कि आत्मा बिलकुल  
अविषय है और उसमें किसी प्रकार विषय लगना  
सम्भव नहीं। इस जीवावस्थामें अस्मद् प्रत्ययकी विष-  
यता होती है और अन्तरात्म-रूपसे प्रतीत पड़नेपर  
अपरोचना भी रहती है। आत्मा ‘अहं’ (मैं) ज्ञानका  
विषय होनेसे बिलकुल अविषय और अपरोच कहा  
जा नहीं सकता। अविद्या-कल्पित ‘अहं’ जबतक  
रहेगा, तबतक उसे अहं वृत्तिका विषय कौन न  
कहेगा। आत्मा अप्रत्यक्ष नहीं, पूर्ण प्रत्यक्ष है।  
क्योंकि जीवमात्र आत्मा अर्थात् अपनेको अहं (मैं)  
रूपसे देखा करता है। वास्तव अप्रत्यक्ष आकाशमें  
अस्तिनताका दोष लगा देते हैं। अतएव साक्षात्  
प्रत्यक्ष और इन्द्रियग्राह्य न होते भी आत्माके समझनेमें  
कौई बाधा नहीं पड़ती।

“यौत्पत्तिर्ब्रह्मः कारणान् गतेषु स्थितिः प्रवचस्यते यद्वर्तते।  
न यदीकविधेयवत्स जगती यदीकविधेयपनौवरं तुक्लाभ्यतः प्रमाणाद-  
भेदनादपयोबाभाभावात् संसारिणो वा उत्पत्त्यादि सभावयितुं शक्यम्।”  
(शारीरकभाष्य ११।१)

ब्रह्मसे जगत् सृजता, ब्रह्ममें ठहरता और ब्रह्ममें  
ही समा जाता है। वस! ईश्वर व्यतीत शून्य, अभाव,  
अज्ञप्रकृति, परमाणु किंवा क्लृप्त-मृत्युके अधीन किसी  
संसारी जीवसे इस प्रकार सृष्टि, स्थिति और लय  
होना विज्ञ मतमें सम्भावित नहीं होता।

शङ्कराचार्यनै भिन्न भिन्न मतको काट इसप्रकार  
विग्रह वेदान्त मत प्रचार किया था,—

“अयं यत् सजते विश्वं तदवकाशयतुं पुमान्।  
न कीचि मन्त्रो माथे सर्वेश्वर इति श्रुतः ॥१००॥  
अयं यथापिबुद्धीनां वासनात्मक सृष्टितया।  
तामिः कोहोक्तं सर्वं तेन सर्वत्र इति ॥१००॥  
विज्ञानमयसृष्टौ तु कोचि अथवा चेन्न हि।  
असृष्टिश्च न भवति निराकारमिति प्रवेत्तु।

उक्तो विग्रहप्रयोगोऽसाधारणोपाय भवतुः।

विषयमयसृष्टौ च वेदेन बोधितम् ॥” १०८

(पंचमी ६ परिच्छेद)

ईश्वरने जो कुछ बनाया, उसे कोई बिगाड़ नहीं  
सकता; इसीसे वह सर्वेश्वर कहनाता है। कारण,  
समस्त प्राणीको वहि वासना उसी ईश्वरमें रहती  
है। बुद्धिवासनासे ही यह ब्रह्माण्ड व्याप्त है। बुद्धि-  
वासना पराधीन होनेसे ईश्वरकी सर्वश्र कहते हैं।  
अन्तर्यामी होनेका कारण यह है, कि विज्ञानमय  
प्रकृति कोष और अन्त्यान्व वस्तुसमूहमें रह ईश्वर  
उसको यथानियम नियुक्त करता है। जो बुद्धिमें  
रहते भी बुद्धिसे दूर पड़ता है और भीमय होते भी  
घोंका विषय नहीं बनता, वही ईश्वर बुद्धिसे अन्तरस्य  
रहते भी बुद्धिको नियुक्त कर-देता है।

“मार्गः पुनश्चकारिणो बं ना महरतां यतः।

ईश्वरः पुनश्चकारणं दूषेवापि विनर्तते ॥” ११८

इसप्रकार भाषाया न कौनिये, कि कुछ भी  
पुरुषका कृतिसाध्य होना असम्भव है। क्योंकि ईश्वर  
ही पुरुषरूपमें परिणत होता है।

“एतिसृष्टौ सृष्टिविषयानुपपन्नानिमोक्षे।

तुषोभारमनोराध्य इव सृष्टिचकारिणी ॥” ११९

जैसे दिवा एवं रात्रि, आपत एवं सुषुप्ति; चक्षु-  
के लब्धोत्पन्न एवं मिलोत्पन्न और तुष्योभास एवं मनोराज्य  
प्रकृतिमें ज्ञानका, वैसे ही ईश्वरमें जगत्का तिरोभाव  
तथा आविर्भाव स्पष्ट समझ पड़ता है और प्रलय तथा  
उत्पत्ति कहा जाता है।

“मायो सजति विश्वं सृष्टिचकारणं मायया।

अथ इवमपि दृते वृत्तियोऽन्यतः सृष्टीत् ॥

आनन्दस्य ईश्वरोऽयं वरुणाभिधेयवत् ॥

हिरण्यगर्भस्योऽयम् सृष्टिः स्वयां यदा भवेत् ॥” १२०

मायाही ईश्वर अपने मायामें वह ही इस समस्त  
विश्वकी सृष्टि करता है। श्रुतिमें जो उसे परब्रह्ममें  
भिन्न कहा है। सृष्टिके अवस्थामेद्वे क्षणरूपमें  
परिणत होनेकी भांति ईश्वरने वह गरीमें प्रविष्ट  
होनेके सहस्र हारा हिरण्यगर्भरूप पाया है।

ईश्वर, हिरण्यगर्भ, विराट्, प्रजापति, विश्व, इन्द्र,

रजः, पद्मि, विप्रमेरु, मेरास, मारिक, यशः, राघव, ब्राह्म, सतिय, वैद्य, शूद्र, गो, चण्ड, मृग, पक्षी, चमत्ता, बट, धाम, यश, धाम्ना, छप, जल, मन्दार, शशिका, काठ, एवं लुहास प्रभृति मूलज ही उसके अवयव हैं और पूजा याने ही समकल देते हैं।

“चतितोरवदन्तस्ते मञ्जोरममिर्न कवत् ।

ईश्वरोऽद्विदेव चेतनतेजसात्मकम् ॥

चानन्दमयविज्ञानमपारोचरभोजम् ।

मादता कलितवैती तावती शब्दे प्रकल्पितम् ॥” ११६

ईश्वर, जीव एवं देव प्रभृति चेतन और अचेतनात्मक समस्तमनुदाय चर्चितोय ब्रह्मतत्त्वमें मायाकल्पित क्षणमरूप है। क्योंकि चानन्दमय ईश्वर और विज्ञानमय जीव दोनों माया द्वारा कल्पित हैं। इन्हीं दोनोंमें मनुदाय विश्व बना है।

“ईश्वरादिकैवाला चर्चितोयेन कल्पिता ।

ब्रह्मादि विभीकानः सर्वे जीवकल्पिताः ॥” ११७ (चण्डो)

श्रुतिविययक सङ्कल्पसि सर्ववस्तुमें प्रवेश पर्यन्त ईश्वर और लाघत अवस्थादिसि मोक्ष पर्यन्त व्यापार मनुदाय जीवकल्पित है। अन्त और ब्रह्ममार्ग दोनों।

कुल धोके मूलपदाद रामानुजन प्रचार किया,— ईश्वर मजलका अन्तर्गामी है। समस्तशक्ति प्रारम्भमें चित् तथा अचित् शुद्धभावमें उसके पञ्चरूपमें रहता है, किन्तु चित्, अचित् और ईश्वर तीनोंमें परस्पर भेद है। स्थूल रूपमें परिणत होनेसे चित् और अचित्का अन्तर्गामी ईश्वर होता है। जीवसमूह और जलजगत्के नामा उपकारणमें ईश्वर सर्वदा वर्तमान रहता है।

चेतन्यदेवकी रामानन्दने इसप्रकार ईश्वरतत्त्व समझाया था,—

“ईश्वर इत्यत्र चः सर्वसाधारणः ।

अन्यदित्येति चः सर्वसाधारणः ॥” (ब्रह्मसिद्ध)

अर्थात् मण्डिमानन्द-मूर्ति, सर्वकारणका कारण, अनादि और आदि मोविन्द ही परमसत्य ईश्वर है।

अन्तर रामानन्दने विष्णुप्रायका वक्त्र उद्भूतकर धी-ईश्वर-तत्त्व समझाया, “चेतन्यचित्तान्तः” अन्तमें

यही विस्तृत भावसे बताया है। हम नीचे उसीश्वर सार संक्षेपमें लिखते हैं,—

‘छप्पका स्वरूप सत्, चित् और चानन्दमय है। अतएव स्वरूप-मूर्ति तीनप्रकार होती है। चानन्दमय आत्मादिनी, सट्टममें सन्धिनी और चिट्टममें मन्त्रि मूर्ति रहती है। छप्पको पाश्चाद देनेमें पाश्चादिनी नाम पड़ा है। स्वरूप छप्प सुपाश्चादन करता है। अन्तको सुप देनेका कारण पाश्चादिनी ही है। पाश्चादिनी जिसका अंग है, उसकी अंश प्रेम है। प्रेम चानन्द और विनाय रूप-रसका आस्वादन है। प्रेमका परम सार और भाव महाभावरूप श्रीराधा रानीकी समभक्ता चाहिये।’ गौड़ीय वैष्णवसमाजके ईश्वरतत्त्वका सार यही है।

रामानुजके बाद भारतमें नामा सम्प्रदायों द्वारा वैष्णवधर्म प्रवर्तित हुआ था। अध्याचार्यसे यद्वाचार्य प्रदेन्त विभिन्न वैष्णव सम्प्रदायके प्रवर्तकोंने ज्ञान और कर्मकाण्डका प्राधान्य न मान भक्तिकाण्डकी ही ईश्वर वा भगवत् प्राप्तिका प्रशस्त मार्ग बताया। अर्थात्में महाप्रभु चेतन्यदेवने विशुद्ध प्रेम ही ईश्वर वा छप्प-प्राप्तिका मुख्य कारण प्रदर्शित किया था। सारार्थदे चेतन्यदेव गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदायके प्रवर्तक हैं। उन्होंने प्रभावसे परवर्तिकात्त ब्रह्ममण्डलमें नामा वैष्णव सम्प्रदायका प्रकाश हुआ। उसमें धोके, श्लोक, कीर्त राधा और कीर्त राधाछप्पकी सुगल सूरिनी ईश्वर भावमें पुजते हैं। ईश्वरकल्पना मन्त्रि चित् तत्त्व ही है।

वद्वान्के परमसाधक रामप्रसादके कथनानुसार मूर्ति ही मूलाधार है। उसीके कारणसे सब कुछ होता है। उसके रपकी कल्पना उत कर नहीं सकते। मन ही उसे पुजता और देवता है। महति-पुद्गल विना बनता है।

महात्मा राममोहनरायके मतमें ब्रह्मका वासी-छप्पादि रूपधारण केवल मायाका कार्य है। इधोने भक्त केवल रूप नामने बद्ध नहीं रहता। जन्मस्थिति भ्रष्टा कारण मग्न तटस्थ मण्डलमें भी ईश्वरकी उपासना ही मकनी है। वाचोद्वाम, महवप्याधिन और वेदमन्त्रपुत्र देवोत्पत्तिमें भी चाविर्भाव दर्शन-



कोर्यः नान्यथाऽपि कृतान्तः विवेकितोऽपि अन्तरिक्षीकोर्यः यत् ।  
 विषयैः नैव इत्यन्तरिक्षीकोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् ।  
 कोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् ।  
 कोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् ।  
 कोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् ।  
 कोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् ।  
 कोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् ।  
 कोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् । अन्तरिक्षीकोर्यः यत् ।

पुनः इस विषयमें अष्टवेदका प्रमाण है—विष्णु  
 पर्यात् व्यापक परमेश्वरका जो आवृत्य आनन्दरूप  
 प्राप्तिके योग्य होता और सुखि कहलाता है, वह  
 विद्वान्को सर्वदा या सकल काल देखाता है । ( पर्यात्  
 योगी मुख्य मदा उस परमात्माके आनन्दरूपको  
 ज्ञाननिर्गम देखते या क्षिप्त हृदयमें रखते हैं ) वही  
 समस्त पदार्थमें व्याप्त है । उसमें देव, काल और  
 यत्नका भेद नहीं पड़ता पर्यात् ऐसा नहीं—वह समस्त  
 स्थानमें रहता है, इस स्थानमें नहीं ; समस्त समय या,  
 इस समय नहीं अपना समस्त समुच्चय है, इस समुच्चय  
 नहीं । सर्व पदार्थमें विराजनेमें वह सदा सर्व समय  
 सर्वत्र परिपूर्ण रूपसे अधिष्ठित रहता है । सूर्यके  
 प्रकाशमें आधरश्चरित पाकाग और नैव भर जानेकी  
 भांति, परब्रह्मका अवस्थान सर्वप्रकाश और व्याप्तवान्  
 है । इस परब्रह्मके परमपदकी प्राप्तिमें श्रेष्ठ दूसरी  
 प्राप्ति ब्रह्माण्डमें नहीं, इसीसे चारों वेदमें यह पद-  
 प्राप्ति विमेष प्रतिपादित है । इस विषयमें व्यासदेव-  
 निमित्त विद्वान्मायाका प्रमाण भी मिलता है,—  
 'समस्त वेदवाक्यमें उसी ब्रह्मका ही विमेष प्रति-  
 पादन विद्यमान है ।' यही ब्रह्म वेदके किसी स्थानमें  
 साक्षात् और किसी स्थानमें परम्परामात्रमें प्रतिपादित  
 है । इसीमें परब्रह्म वेदका परम अर्थ वा परम  
 प्रतिपादक पदार्थ क्या है । यत्पूर्वमें भी इसका  
 दिसा ही प्रमाण है—उस परब्रह्मकी अपेक्षा  
 श्रेष्ठ वा उत्कृष्ट द्वितीय पदार्थ अन्य कोई नहीं,  
 वह सर्वत्र समस्त दिग्दर्शमें व्याप्त है, समस्त जगत्का  
 आनन्दकर्ता तथा आधर है और अस्मि शृणु एवं  
 विष्णु तैव श्रोतुमिच्छामि अस्याप्यष्ट पदार्थमें निम-  
 ग्नं कारण बोद्धुमी पर्यात् बोध्यमन्ता कहलाता है ।  
 यथा—१ ईश्वर वा अर्थ विचार, २ समस्त विषयको

धारण करनेवाले प्राण, ३ अथा वा सन्तान-निर्माण  
 विग्रह, ४ आकाश, ५ वायु, ६ अग्नि, ७ जल, ८ पृथिवी,  
 ९ वायुमन्त्र, १० मन पर्यात् ज्ञान, ११ अथ, १२ योग  
 पर्यात् अथ एवं पराक्रम, १३ तप पर्यात् धर्मावुद्धान-  
 रूप सदाधार, १४ अथ वा वेदविद्या, १५ अर्थ वा  
 चेष्टा और १६ नाम पर्यात् दृष्ट वा एवं पदार्थको  
 मंत्राको बोध्य कला कहते हैं । ईश्वर व्याप्तिमें रहनेमें  
 ही कलाका बोद्धुमी नाम स्थिति पाया है । इन बोध्य  
 कलाका प्रतिपादन मन्त्रावधिपत्यके यह प्रथम निष्ठा  
 है । इस स्थानमें वेद ब्रह्मका मुख्यार्थ परमेश्वरके स्वरूप  
 का ही प्रतिपादन करना है । परमेश्वरमें अथक् रूप  
 सगतादि वेद ब्रह्मका गोचर्य है । इसीमें मुख्य और  
 गोचर्यमें मुख्य ही ग्रहणीय है । पुनः सिद्धा है,—  
 उस अथवा वा अविनाश परमात्माका नाम ७  
 है । जो सर्वत्र व्याप्त और सर्व श्रेष्ठ है, वही ब्रह्म  
 है । इसमें हमने यह समझा है कि वेदका  
 मुख्य तात्पर्य परब्रह्मका प्रतिपादन और उसमें  
 जोषको किसी प्रकार मित्रा देना है । परमेश्वरका  
 उपदेशरूप वेद तीन प्रकारके अवयवसे युक्त है—कर्म,  
 उपामना और ज्ञान, इन तीनों काण्डोंमें ब्रह्मका  
 तथा परब्रह्मका व्यवहारिक फल प्राप्ति और यथावत्  
 उपकारार्थ सकल मनुष्यके उपरोक्त तीन प्रकार  
 अनुष्ठान विषयमें मुख्यतः आनेकी ही देवधारणा  
 फल समझना चाहिये । आर्यवक्ता और दशान्त नामकी  
 ग्रन्थमें विस्तृत विवरण देखिये ।

महात्मा किमर्थमने मतमें वेदका ईश्वर निघेष्ट  
 और पुराणका ईश्वर कर्ममोल है । निघेष्ट और कर्म-  
 मोल दोनों प्रकारका समतल विद्म होता है कि—  
 ईश्वर मनुष्यको भाति इधर-उधर नहीं घूमता और न  
 बारबार कोई कर्म ही करता है । वह हमारे और  
 हमारे सुखमें ब्रह्मका रूपमें अथ न ज्ञान समस्त  
 ब्रह्माण्डकी शक्ति और उपकार प्रबन्ध बांधता है । ब्रह्म  
 निष्क्रिय रहते भी गूढ़ नियमसे हमारा समुदाय चलाय  
 मोचन करता है । हम देव, नगर एवं साममें सर्वत्र  
 ब्रह्मकी पूर्ण और अर्धकी उपमि मन्त्रकी लक्ष्मी समझें ।  
 विषयमें निगूढ़ ब्रह्मका ही मन्त्रमें आदेशका श्रोत निगम

ब्रह्मा करता है। ईश्वर उसी कल्याणकी कौशलसे भक्तको सुखी बनाता और सबेकी जिताता है।

(सिवहवा निवेदन १म और २म खण्ड, १०६ ३४)

केशवका कहना है—जो दुर्गा है, वही काली है। पूजा करनेवालेने दोनोंमें एकही शक्ति पायी। केवल मनके भावने देवीको दो वर्षमें प्रतिफलित किया था। जिस मूर्तिको देख पहले भक्तिभाव बढ़ा और मन सुख पड़ा, उसीका परिवर्तन या ऐसा भय उपस्थित हुआ। भक्तिपूर्वक एकबार हृदयके मध्य पहुँचने और वहाँ ही ठूँढ़नेसे यह मूर्ति देखनेको मिलती है। भीतर आसोक न पाये और अन्धकार समा जायेगा। अनन्त आकाश काळा है। उसी अनन्त आकाशमें यह शक्ति विकीन रहती है। इस स्थानपर अन्धकारमें अन्धकार बना और एक निराकारमें सकल एकाकार बना है। आकाश और अन्धकारमें कुछ भी प्रमेद पड़ नहीं सकता। उसी गहरे काले आकाशमें अन्धकारके भीतर ब्रह्मशक्ति ब्रह्मज्ञान है। बाहर उसीकी काली-मूर्ति बनी है। बाहर देवी और भीतर ब्रह्मज्ञानरूप ब्रह्मशक्ति है। (सिवहवा निवेदन ३म खण्ड १३०-८ १३)

परमहंस रामकृष्णने कहा है,—सच्चिदानन्द हरि बहुरूपी है। वह एक है, वह अनन्त है, वह विश्व-रूपी भगवान् है। जो उसको नहीं देखता, वह उसका मर्म नहीं समझता और साकार निराकार पर लक्ष्मी भी करता है। किन्तु प्रकृत भक्त उसे साकार और निराकार दोनों रूपमें पूजता है। ब्रह्मका अनन्त नाम और अनन्त भाव है। जिसे जो भाव और जो नाम अच्छा लगता है, उसे उसी नाम और उसी भावसे पुकारने पर ईश्वर मिलता है। यह भाव कूटनेसे ईश्वर देख पड़ता है। कलिकालमें ईश्वरका नाम ही एकमात्र साधन है। रामकृष्ण और विवेकानन्द देखो।

खुटानीकी बाइबिलके मतसे ईश्वर सृष्टिकर्ता है। सृष्टिके पूर्व एकमात्र वही विद्यमान था। उसीसे यह बराबर जगत् निकला है। ईश्वर देखो।

कुरान्के मतसे ईश्वर सर्वशक्तिमान्, सर्व श्रेष्ठ और सकलका स्रष्टा है। उसने नूतन रक्तसे मनुष्य-

को बनाया है। वह सर्वदर्शी, असीम, अमर इत्यादि विशेषणसे संयुक्त है। इस स्थान और सन्तुष्टाम् देखो।

वर्तमान समयमें खुटानीका धर्मसम्प्रदाय नाना श्रेणियोंमें विभक्त हो गया है। कोई ईश्वरको सर्वस्रष्टा समझता और कोई ईश्वरसे नहीं—स्वभावसे ही जगत् की उत्पत्ति मानता है। कोई संयोग-वियोग द्वारा दृष्टिबोकी उत्पत्ति ठहराता है और ईश्वरके अस्तित्वपर विश्वास नहीं लाता। पापाय सर्वत्र अन्धमें विस्तृत विवरण देखो।

ईश्वरकवि—एक प्रसिद्ध हिन्दुस्थानी कवि। ये औरंगजेबकी राजसमामें रहते और सरस कविता करते थे।

ईश्वरकृष्ण—एक प्रसिद्ध अन्धकार। इनकी बनायी सांख्यकारिका हमारे दर्शनशास्त्रमें विरप्रसिद्ध है।

५५७ से ५८८ ई०के मध्य चलती (परमायें) ने चीना भाषामें उक्त अन्धका अनुवाद किया था। ईश्वरकृष्णको—कोई-कोई कानिदास समझते हैं। पायाय पण्डितोंके मतसे ये ई०के ६ठें शताब्दीमें विद्यमान थे। किन्तु उनका यह मत माना जा नहीं सकता। क्योंकि जो अन्ध ६ठें शताब्दीमें चीन देशमें जा कर अनुवादित हुआ, वह उक्त समयसे अन्ततः बहुत वर्ष पूर्व अवश्य बना था। बनते ही सांख्यशक्ति का कुछ चीनदेश पहुँच न गयी होगी। नाना स्थानोंमें विख्यात होनेपर चीन देशके लोग भारतवर्ष आ उसे ले गये होंगे। अनुवाद करनेमें भी कम समय लगा न होगा। अतएव ६ठें शताब्दीसे बहुत पूर्व ईश्वरकृष्णका विद्यमान रहना समझ पड़ता है। इस देशके कोई पण्डित भगवान् श्रीकृष्णको ही सांख्यकारिकाका रचयिता मानते हैं। कृष्णदेवायन प्रवृत्ति पर कृष्णोंसे भिन्न रखनेके लिये ईश्वरकृष्ण नाम पड़ा है।

नारायणने 'सांख्यचन्द्रिका' नाची सांख्यकारिकाकी टीका एवं विज्ञानमिच्छने 'पायभाष्य' नामक सांख्यकारिकाका भाष्य बनाया है।

ईश्वरगोता (सं० प्लो०) कूर्मपुराणका अंगविशेष। ईश्वरचन्द्र—यक्षदेवान्तर्गत क्षत्रियनगरके एक राजा। ये शिवचन्द्रके पुत्र थे। १०१८ ई०में शिवचन्द्रके मरनेपर इन्हें राजपद मिला था। ईश्वरचन्द्र रूपवान्, बलवान् और सङ्गीतप्रिय थे। १८०२ ई०में ६५

वर्षके सप्तमं शारीरिक नियमके सङ्गनयन इनकी मृत्यु हुई। तिरोगचन्द्र नामक इनके एक पुत्र थे। इंद्रचन्द्र की समाधि एक प्रसिद्ध स्तोत्रविद् रहते थे। उन्होंने भारद्वाज्य नामक एक पंडीत गुरु बंगालमें बनाया था।

इंद्रचन्द्र गुप्त—विद्यात ब्रह्मज्ञी कवि। ये कोहरा-पाड़ा निवासी हरिनारायण गुप्तके पुत्र थे। इनकी माताका नाम श्रीमती देवी थी। १०३२ शकमें फागुन शुक्लपक्षमें शुक्रवारके दिन इंद्रचन्द्र गुप्तने जन्म लिया था। बाल्यकालमें ये बड़े ही दुरास थे। लिखने-पढ़नेमें इनका विशेष प्रेम न लगता था। किन्तु बाल्यकालमें ही कविता लिखनेका शौचसुख था। शामका बराबर बालक उस समय फारसी पढ़ते थे। इंद्रचन्द्र लगने सुघने फारसी कविताका अर्थ सुनते और अर्थ फिर बंगालमें कविता बनाते।

इंद्रचन्द्र जन्मकवि थे। पाठ्यावलोकनमें ये केवल कविताकी चर्चा बनाते थे। मानो कविता ही इनका जीवन और कविता ही इनका प्रधान लक्ष्य था। कवित्वमयिनी भांति इंद्रचन्द्रकी प्रतिभाति भी बहुत चमत्कारिणी थी। १०४८ वर्षके वयसमें छंद नामके सभ्य इन्होंने सुप्रबोध व्याकरण सुपुस्तक लिखा। कलकत्तेकी ठाकुरगोष्ठिमें इंद्रचन्द्रके मातामह रंगकी कुछ प्रियता थी। इसी गृहमें ठाकुरबाड़ी में भवदा आते-जाते थे। क्रम-क्रमसे पद्यरियाहा-निवासी गोपीमोहन ठाकुरके धीरे धीरेन्द्रमोहनमें इंद्रचन्द्रका वस्तुत्व बढ़ा। समय समवयस्क थे। इनके महागमनं धीमेन्द्रमोहनमें भी रचनामालि उपकी थी।

१४ वर्षके वयःक्रमकालमें गुप्तपाड़ा-निवासी गौर-हरि मलिककी कन्यामें इंद्रचन्द्रका विवाह हुआ। दुर्भाग्यवि देवमें बहुत पक्षमें गमनती थी, नूंगी-जेमी गमन पक्षमें थीं। इसलिये उनमें इनका मन न भरा और विवाहके बाद ही कोलकाल गन्द ही गयी। दोनो विरदिन मोष-भोगकर लक्ष्मं लगे।

१०५१ शकमें धीमेन्द्रमोहन ठाकुरके शास्त्राध्यक्ष इंद्रचन्द्रमें 'संवादप्रभाकर' नामक एक भागादित

पत्र निकाला था। १०५१ शकमें धीमेन्द्रमोहनके मरणसे संवादप्रभाकर हस्त हुआ। परन्तु इसी वर्ष इनकी कवित्व पर रचनामालि देव चन्द्रके जमीन्दार बाबू अमरावतनाद मलिकने 'संवाद-प्रभाकर' निकाली थी। इंद्रचन्द्र इस पत्रिकामें विविध साहाय्य करते थे।

कुछ दिन पीछे ये श्रीचितादिके दर्शन करनेको कटक पहुँचे। यहाँ ये अपने मोठा माममोहन रायके घरपर रह एक दफ्तीमें तन्वादि नीयते थे। १०५१ शकके वैशाखमासमें इंद्रचन्द्र कलकत्ते वापस आये। इसी वर्ष आश्व मासके अन्तिम सुधवारकी रातमें कन्याईसाल ठाकुरके शास्त्राध्यक्ष 'प्रभाकर' निकाला। १०५८ शकका चापाट मास चारश्व द्विने ही प्रभाकर प्रात्यक्षिक रूपमें प्रकाशित होने लगा। देवीय प्रात्यक्षिक संवादपत्रमें प्रभाकर की प्रथम था। इसी समय पण्डित और नगर तथा ग्रामके मन्थाल जमीन्दार मानाप्रकारमें इंद्रचन्द्रकी साहाय्य देने लगे।

१०६० शकके चापाट मास इन्होंने 'वापण्डपीडन' नामक दूसरा पत्र निकाला था। इसी समय 'भास्कर'-सम्पादक गोरीमहर्ष तर्कवागीश 'दमराज' नामक एक पत्र प्रकाश कर इंद्रचन्द्रमें कविता-पुष्पमें प्रवृत्त हुये। इन्होंने भी 'वापण्डपीडन' पत्रमें 'भास्कर'-सम्पादककी कविताका प्रतिवाद चारश्व किया था। इसी तरह दोनोंमें अनेक दिन लुत्नापूर्व कविताकी लड़ाई लगे रहें। किन्तु कुछ समय बाद दोनों पत्र बन्द हो गये।

वापण्डपीडनके छठ लक्षमें १०६८ शकके वैशाख मासमें इन्होंने 'वापण्डपीडन' नामक दूसरा पत्र निकाला। इसमें इंद्रचन्द्रके दासोंकी कविता और प्रमत्तायकी कृत्यो थी। १०७४ शकके वैशाख मासमें यह एक लक्षत् कर्मवरका प्रभाकर निकालने लगे। यह प्रतिभासकी पक्षमें त्रिधिको निकलता और इनकी स्तंभ कवितामें पूर्ण रहता था। उस संज्ञा मासिक प्रभाकर निकालनेमें इंद्रचन्द्रकी प्रतिरिक्त परिश्रम लक्षणा पड़ा, इसमें इनका क्रमः प्रात्यामर्ष होने लगे। इससमय इंद्रचन्द्र कलकत्तेमें रह कविकाय समय किसी काममें दिताते थे। इन्होंने

पूर्ववर्णके अनेक प्राचीन स्थानोंका हस्ताक्षर एवं वल्लीय कवियोंका जीवनचरित—लिखा और भारतचन्द्रकी सुतप्राय कविताको बड़े परिश्रमसे टूटकर छपा दिया। प्रबोध-प्रभाकर, हितप्रभाकर और बोधेन्दु-विकाश नामक ग्रन्थ भी इन्होंने प्रभाकरमें प्रकाशित किये। पीछे श्रीमद्भागवतका पद्यानुवाद करना ईश्वरचन्द्रने हाथमें लिया था। किन्तु १८७८ शककी माघकृष्ण दशमी को आधौरातके समय इनका स्वर्गवास हो गया। ये बङ्गभाषाके एक आसाधारण कवि थे।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर—बङ्गदेशके एक ख्यातनामा पण्डित। १७४२ शक (१८२० ई०) को आखिन जंघ मङ्गलवारके दिन मेदिनीपुर जिलेके बोरसिंह नामक ग्राममें इन्होंने जन्म लिया। इनके पिताका नाम डाकुरदास बन्द्योपाध्याय था। १७८२ ई०की १वीं जूनकी विद्यासागरने विद्याभित्तार्थ संस्कृत-कालेजमें प्रवेश किया। गम्भीर गवेषणा और धीमति-के प्रभावसे अल्प दिवसके मध्य ही संस्कृत साहित्य-शास्त्रमें इन्होंने पारदर्शिता पायी थी। विद्यासागरने गङ्गाधर तर्कवागीशसे व्याकरण, जयगोपाल तर्कालङ्कारसे साहित्य, प्रेमचन्द्र तर्कवागीशसे अलङ्कार, शम्भुचन्द्र विद्यासाधुतिसे वेदान्त, रामचन्द्र विद्यावागीशसे स्मृति और पड़ले निमार्णचन्द्र शिरोमणिसे तथ्या पीछे जयनारायण तर्कपञ्चाननसे न्याय पढ़ा। संस्कृत कालेजसे इन्हें 'विद्यासागर' उपाधि मिली थी।

विद्यासागरके पिताकी आर्थिक अवस्था अच्छी न थी। अतएव बाबूकालसे पाठावस्था पर्यन्त इन्हें दरिद्रतावश अनेक कष्ट उठाना पड़े।

१८४१ ई०के दिसम्बर मासमें विद्यासागर फीर्ट-विलियम कालेजमें प्रधान पण्डित रूपसे नियुक्त हुये। कार्यकारिता और विचक्षणतादर्शनसे संस्कृत कालेजके कर्तृपक्षने १८४६ ई०के अपरेल मास इन्हें संस्कृत-कालेजमें सहाकारी कर्माध्यक्ष (Assistant secretary) का पद सौंप दिया, किन्तु उसके दूसरे वर्ष ही विद्यासागरने उक्त पदसे अवसर ग्रहण कर लिया।

१८४८ ई०के फरवरी मास में फिर फीर्ट विलियम कालेजमें पढ़ने और 'हेड राइटर' (Head-writer) के

कार्यमें नियुक्त हुये। विद्यासागरकी सुख्याति क्रमशः बढ़ने लगी। १८५० ई०के दिसम्बर मासमें इन्हें संस्कृत कालेजके साहित्याध्यापकका पद मिला था। अनेक विषयोंमें पाण्डित्य देख तत्कालीन भारतस्य संस्कृत साहब विद्यासागरके पक्षपाती बने। उन्हींके यत्नसे दूसरे वर्ष ही विद्यासागर संस्कृत कालेजके अध्यक्ष (Principal) हुये। इसी समय इन्होंने संस्कृत कालेजके सम्बन्धमें अनेक सुनिष्ठ बनावे थे। १८५५ ई०में कालेजका अध्यक्षता रहते भी गवरन-मेण्टने इनपर 'विशेष विद्यालय-परिदर्शक' (Special Inspector of Schools) का भार डाला। समय कार्यमें इन्होंने सुख्याति पायी थी।

फीर्ट विलियम कालेजमें रहते समय कप्तान मार्शल साहबने विद्यासागरसे बंगरेजी पढ़नेकी कहा। उसके बाद ही ये बंगरेजी सीखनेमें लग गये। उस समय सिविलियनोंको पढ़ानेके लिये हिन्दीभाषाका प्रयोजन पड़ता था। इसी लिये विद्यासागरने हिन्दी-भाषा भी पढ़ ली।

संस्कृत-कालेजकी अध्यापनाके समय तत्कालीन गवरनमेण्ट-सेक्रेटरी हालिडे साहबसे इनका आलाप परिचय हुआ। वे नाना विषयोंका परामर्श करनेके लिये सप्ताह पीछे एकदिन विद्यासागरको अपने घर ले जाते और अनेक समय विद्यासागरका उत्प्रेरामर्ग ग्रहण करते। उन्हींके यत्नसे ये 'स्कूल-इम्पेक्टर' हुये। उस समय बङ्गला विभागके चार जिलोंमें कुल २० मंडल-स्कूल थे। उन्हीं बीस विद्यालयोंके परिदर्शनका भार विद्यासागरपर न्यस्त था। इसी समय वेद्यन साहबके मरनेपर तत्प्रतिष्ठित बालिका-विद्यालय गवरनमेण्टके हाथ आया। ये वेद्यन स्कूलके तत्वावधायक रहे और छात्रिकाओंके सम्बन्धमें विशेष यत्न करते थे। हालिडे साहबके उत्साहशक्तसे उत्साहित हो बङ्गालमें स्थान-स्थान पर विद्यासागरने ५०६० बालिका-विद्यालय खोल दिये। किन्तु दुःखका विषय है, गवरनमेण्टने उस प्रहङ्ग कार्यमें मन न लगाया। कुछ दिन पीछे इन्होंने समस्त बालिका-विद्यालयोंके खर्चाका विवरण बंगाल



मेता, किन्तु मगरमैयूरे हथियार देना न था।  
 दिनके अन्त्यार्धमें सुख विद्यालय खुले, वह जानिए  
 साहब भी उस समय कुछ उत्तर दे न सके।  
 विद्यासागरने अपने पासमें हथियार दे मोड़े दिन विद्या-  
 लय बनाये थे।

उसी समय विद्यासागरके एक बन्धु 'तत्त्वबोधिनो'  
 पत्रिकामें प्रकाशित थे। जो विषय तत्त्वबोधिनोके  
 निधे और विचार भेजता, वह इनके देखनेमें आता  
 और वीरे उत्तम पत्रिकामें प्रकाशित था। विद्यासागर  
 अपने बन्धुके निकट पत्ररत्नी पालीसना करने पहुँचते  
 और उन्हीं बन्धुवरके पत्रुरोधमें तत्त्वबोधिनोके लेखक  
 इनका परिचय पाने। तत्त्वबोधिनो-पत्रिकाके तत्-  
 कालीन सम्पादक पद्मकुमार दत्त स्वयं निकट था  
 विद्यासागरसे प्रस्ताव विपरीत पत्रुरोध करने और  
 जो अन्य सिद्धांत, उन्हें संशोधन करा देनेको भेजते  
 थे। बहुत दिनों में साक्षात् अपने पद्मकुमारकी रचना-  
 प्रकाशित करने में सफल हुए। विद्यासागरकी कभी  
 तत्त्वबोधिनोमें प्रस्ताव विपरीत थे। इन्होंने सबसे  
 पाने महाभारतका प्रकाश पत्रुरोध उत्तम पत्रिकामें  
 प्रकाशित किया। किन्तु विद्यासागर-विरचित महा-  
 भारतका प्रकाश पत्रुरोध अस्वीकार किया न था। स्वर्गीय  
 कालीप्रसाद सिंहने उसे देना इनके परामर्शानुसार  
 पत्रिकाके साक्षात् अपने पूरा कराया। तत्त्वबोधिनो-  
 सम्पादकने कभी पत्रुरोध विद्यासागर तत्त्व-  
 भाष्य भेजे थे। किन्तु कुछ दिन बाद ही किसी  
 विशेष कारणसे इन्होंने तत्त्वबोधिनोका संस्थापन  
 रद्द किया।

१८३६ ई. की विद्यासागरने निज लगभगमई और  
 जून के महीने में निज दानकमानिकाओंके उपकारार्थ  
 अर्धशतक विद्यालय खोला था। दरिद्र बालकों  
 को समस्त दिन अध्ययन न मिलनेसे रात्रिकालमें  
 भी विद्या देनेके निधे विद्यालय खुलता। विद्या-  
 लय खोलनेके बाद निज घरमें इन्होंने एक दातव्य-  
 शिक्षणालय भी स्थापन किया था।

इसी समय मगरमैयूरे संस्कृत विद्या निकाल  
 देनेका प्रस्ताव किया। अनेक उत्तर दिए गए और

प्रस्तावितोंमें इन प्रस्तावका समर्थन किया था।  
 किन्तु विद्यासागर उत्तम प्रस्तावको रद्द करनेके निधे  
 विशेष चिन्तित हुए। इन्होंने उस समय अपने का-  
 निज उत्तरविद्योका मत काटा और भारतवर्षमें संस्कृत  
 शिक्षा पश्चिम केमनेके निधे मगरमैयूरेके निकट  
 पाठ्यक्रम दिया। विद्यासागरका त्रय और मर-  
 कारमें भारतवर्षके छात्रोंपर विद्यालयोंमें संस्कृत  
 शिक्षाके प्रचारका पाठ्यक्रम दिया। लोकोकी सहाय्य  
 संस्कृत भाषाके निधे इन्होंने मरक संस्कृत पाठ्य-  
 पुस्तक सहाय्य किये थे।

विद्यासागर केवल छात्रों और साधारण निर्धनोंको  
 शिक्षाके निधे ही उत्तमानु न हुए, किन्तु विधवाविवाह  
 प्रथाके भी पाने सहे। इनके द्वारा विधवाविवाहके  
 विषयमें समस्त स्मृतिशास्त्रोंमें जो व्यवस्था लुकी, उसमें  
 इनकी साक्षात्-पारदर्शिता विस्तार मालूम पड़ी थी।  
 इसी समय अपने समाजवाले अपने उत्तम विद्या,  
 मन्थान और मूर्त प्रवृत्ति मकर देवियोंके लोग  
 विद्यासागरपर प्रभाव पड़े। ये देशीय लोगोंकी  
 मानि, कृष्ण और निम्नका वाद अन्तर्गत सहे भी  
 प्रतिवादिताका मत काटा और तत्त्व पदमें पाने  
 सहे थे। तत्काल तारागाय तुर्जवापसति, भरतचन्द्र  
 गिरीमणि, गिरिचन्द्र विद्यारथ, राममणि व्यापक  
 प्रवृत्ति पत्रिकाके विद्यासागरको साक्षात् दिया।  
 इन्होंने उस और उद्योगसे सरकारने विधवाविवाह  
 प्रथाके १८३६ ई. का ३ वां पारित किया था।  
 विद्यासागरके यत्नसे कई विधवाविवाह भी गालि-  
 पूर्वक हो गये। इसी समय इन्होंने समाजके एक  
 विशेष हितकर कार्यमें मन लगाया। इन दिनों में बहुत  
 विवाहकृत कुटुम्ब बहुत दिनोंमें खल रहे थे। इनके  
 प्रसाद देनेका प्रयोजन नहीं, कि उत्तम सामाजिक  
 कार्यमें हमारे समाजका दिनना पत्रित होता है।  
 इस कुटुम्बको रोकनेके निधे विद्यासागरने साधनपथ  
 साधनाय प्रेरित की। इसी समयमें बहुविवाह पर  
 विचार करनेके किये दो प्रश्न इन्होंने करवाये।  
 उन प्रश्नोंका नाम 'बहुविवाहके अहितकरमें रोकने का  
 न रोकनेका विचार का।' इन्होंने साक्षात् समाज देशीय

कृतविद्य पण्डितों और सम्मान्य व्यक्तियों को बहु-विवाह रोकनेके लिये उभारा था। इस कार्यमें छपन-नगरके राजा श्रीयशचन्द्रने विद्यासागरको यथेष्ट साहाय्य दिया। किन्तु सिपाही-विद्रोह लग जानेसे सरकार बहुविवाह रोकनेका कानून बना न सकी थी।

१८५८ ई०में नामा कारणोंसे विरक्त हो इन्होंने कालेजकी अध्यक्षता और स्कूल-इन्स्पेक्टरीको छोड़ दिया। कुछ दिन पीछे विद्यासागरने अपने तत्त्वावधानमें निज ध्येयसे 'सिद्दोपलिटन' नामक अंगरेजी विद्यालय खोला था। किन्तु विद्यालयके कठपंथ साहस्य मिल-जुल कर कहने लगे,—बङ्गाली अंगरेजी कालेज चलानेकी क्षमता नहीं रखते। सिवा अंगरेजी के दूसरेसे कालेजका प्रबन्ध होगा असम्भव है। इन्होंने उनकी बात न मान निज विद्यालयमें बङ्गालियोंके मध्य ही सर्वप्रथम कालेज स्थापन किया। इसी कालेजपर छोटीसाठ ई० सी० बैलौसे धनक कथा-यार्ता लगी थी। ई० सी० बैलौने कहा, "विद्यासागर। किस प्रकार आप निज कालेज चलायेंगे? अंगरेजोंके साहाय्य भिन्न अंगरेजी कालेज चल नहीं सकता।" विद्यासागरने उत्तर दिया,—“अपने छात्रोंकी अंगरेजी पढ़ा न सकते भी उन्हें परीक्षा पास करा देना नियत है।” पीछे वही हो गया। आजकल इनके स्थापित एक कालेज और पाँच विद्यालयोंमें भली भाँति पठन-पाठन होता है।

विद्यासागरसे पूर्व बङ्गलाभाषा सरल, सुगम और इस समय-जैसी परिशुद्ध न थी। ये पाठ्यपुस्तक इस उद्देश्यसे बनाने लगे, जिसमें सब कोई सहज ही बंगला भाषा सीख सके। विद्यासागरके बनाये गये-की तालिका नीचे लिखी है,—

वैतालपञ्चविंशति, बङ्गालका इतिहास, जीवन-चरित, बोधोदय, उपक्रमणिका व्याकरण, ऋतुपाठ (तीन भाग), शकुन्तला, विधवाविवाह, वर्षपरिचय, कथामाला, संस्कृतप्रस्ताव, चरितोवली, महाभारतकी उपक्रमणिका, सीताका वनवास, व्याकरणकीसुदी, पाश्चान्तरमञ्जरी, आन्तिविकास और बहुविवाह रहित होना उचित है या नहीं।

वर्तमान विशुद्ध बंगला भाषाने जो आकार बनाये, उनके आदि प्रवर्तक विद्यासागर ही हैं। उक्त विषयको विद्वान् मात्र मानते और उन्हीं प्रणाली को पकड़कर अनेक वर्तमान बङ्गला-लेखक माना करते और भाषाओंमें अपनी लेखनी चलाते हैं।

विद्यासागर केवल समाज-संस्कार और बंगला भाषाके उत्पत्तिकथामें ही प्रसिद्ध नहीं। इनकी परोपकारिता और दानशीलताको भी बहुदेशके महा-धनवान्से लेकर दोन दरिद्र पर्यन्त सकन हो जानते थे। विद्यासागर देसीय विपन्न, दरिद्र और विधवाओंके लिये प्रति मास धनक रुपये दे देते। किन्तु इन्होंने प्रकाश रूपसे नहीं, गुप्तभावसे ही दानकार्य सम्पन्न किया था। धनाश्रय न होते तो १८६५ ई०के दारुण दुर्भिक्ष समय विद्यासागरने प्रायः छः मास पर्यन्त वीरसिंहमें प्रत्यह महत्ता व्यक्तियोंकी चर और वस्त्रहीन दरिद्रोंको प्रायः दो हजार रुपयेका वस्त्र दिया। इन्होंने यह दानशीलता और परदुःख-कातरता अपनी मातासे सीखी थी। प्रवादानुसार विद्यासागरकी माता पतिग्रय दानशीला थीं। किसीका दुःख देख उनका हृदय फट जाता और उसके दूर करनेका प्रयास उठाना पड़ता। उन्हीं सदाग्रय जननीके माना गुण इनमें भी पा गये थे। विद्यासागरके कथनानुसार—दरिद्रोंकी पीड़ा कितनीने देखी और उनके हृदयकी ध्या कितनीने सुनी है। वास्तविक दरिद्रता देख और विधवाका दुःख देखनेपर नयन-जलसे इनका वस्त्रल हूँ जाता था। दुःखीका दुःख किसीने कहते समय भी अनु बहने लगते। इस चरित्रको कोई पतिरक्षित न समझे। यह चातुर्व-प्रत्यक्ष है। मुक्तकण्ठसे कहनेपर ऐसे हृदयवान् पुरुष बहुदेशमें पतिविरत हैं। विद्यासागर सामान्य मेवपाठकसे लेकर बहुत बड़े राजातक तक उनके ही अनु थे। अपनी विपद् बतानेपर ये अर्थ, परिश्रम, परामर्श, दूसरेके साहाय्य प्रयत्न किसी न किसी उपायसे यथासाध्य लोगोंका उपकार कर देते।

विद्यासागरके निबन्ध अर्माटोड नामक एक स्थान

है। विद्यामागर व्याख्यारचाके निर्धि समग्र समग्र पर  
महा प्राकर रहते और अन्त्यासोका बड़ा उपकार  
पाने, ये मां ईश्वर देवतातुष्य समझने से।

विद्यामागरका हृदय अस्मिन्मय रहा। ये माता-  
पिताको ईश्वर-भेदा मानने से। माता-पिता को  
जनके चाराध देवता से। अब मातापिताको बात  
कोई छटाता, तब देवते-देवते पुनः, अस्मिन्मय  
अदम्य-निश्चयनके दुःखसे मरणाका हृदय प्रेमाश्रुते  
भर जाता। अंतर्धर्म कहनेसे विद्यामागर एक माता-  
विधारण, समाजमंस्कारक, राजनैतिक और देश-  
हितोर्षी महापुरुष से। अर्थात् क्या, ये वर्तमान  
महासाहित्य-जगत्के पितामह माने जा सकते हैं।  
१८८१ ई०के जुलाई मासमें ( १९८८ बंगला मनुके १६  
आवृत्ति ) महात्मा विद्यामागरका परलोक हुआ।

ईश्वरता, ईश्वर देवी।

ईश्वरदास—१ ज्योतिषरायके पुत्र। इन्होंने 'सुहृत्तरत्न'  
नामक ज्योतिषपण्य लिखा था। २ प्रायश्चित्तपदमन्त्रो-  
क्तोपके रचयिता। अपर नाम ईश्वरदास-कानिदास  
रहा।

ईश्वरदीक्षित—रामायण-व्याख्याके रचयिता।

ईश्वरनिधि ( सं० पु० ) १ नास्तिक, इनकाद, ईश्वरका  
न मानना। २ अनिष्टजनक कार्य, जिस कामसे  
मुक्ति पाये।

ईश्वरनिष्ठ ( सं० सि० ) ईश्वर निष्ठा इत्यादि वा अस्मि-  
त्त्व, बहुव्री०। ईश्वरपरायण, ईश्वरको माननेवाला।  
ईश्वरपरायण ( सं० सि० ) ईश्वर पर परं सुखं चयनं  
प्राप्तये यथा, बहुव्री०। अत्र, निर्णय ईश्वरका महारा  
मनेवाला।

ईश्वरपूरी—एक गाँव। गंगा धाममें इन्हीं महाप्रभु  
सेतुद्वीपमें दोषा को से। ( सं० १८० ई० )

ईश्वरपूज ( सं० वि० ) ईश्वरको उपासना करने-  
वाला, जो ईश्वरको पूजता हो।

ईश्वरपूजः ( सं० स्त्री० ) भगवान्को चाराधन, पुता-  
दाहणे।

ईश्वरपिधान ( सं० स्त्री० ) प्रयाग कमाधिपति, महारा  
महेश्वरी तथ्यात। यह योगके अर्ध निराले अस्मिन्

है। समस्त जगत्को ईश्वरपद देवता और उपधे  
प्रत्येक वस्तुको अस्मिन् मानना ईश्वरपिधान कहला  
है। इसके व्यवहारमें भगुण लोचक हो जाता है।  
ईश्वरपदाद ( सं० पु० ) ईश्वरका अनुपद, पुताको  
महाराजो।

ईश्वरभाव ( सं० पु० ) राजदगा, माहाना दासत।  
ईश्वरमस्त्रिका ( सं० स्त्री० ) बकहण, चगन्नाका भिक्षु।  
ईश्वरमिय—१ इपतरङ्गिणी-व्याख्यारके रचयिता।  
२ कपुतामके टोकाकार।

ईश्वरमूलक ( सं० पु०-स्त्री० ) तथ्येद, एक विद्व।

ईश्वरमोटे—अस्मिन्मय-रचयिता।

ईश्वरविभूति ( सं० स्त्री० ) ईश्वरका ऐश्वर्य, पुताको

मान्। यह संसारमें सर्वत्र विराजतो है। प्राप्तप्राप्तमें

ईश्वरकी विभूतिका प्रत्यक्ष प्रमाण विद्यमान है।

ईश्वरगर्भा—व्यवसायितु नामक अस्मिन्मयके रचयिता।

ईश्वरसप्त, ईश्वर देवी।

ईश्वरसप्त ( सं० स्त्री० ) १ मन्दिर, मन्त्रिद। २ त्रिभु-  
वन, जगन्।

ईश्वरसप्त ( सं० स्त्री० ) राजपरिषत्, माही मन्त्रिष।

ईश्वरसाधन ( सं० पु० ) ईश्वर पर माधी, कार्यपा०।

वेदान्तिक मतमिद मायातत चेतन्य विमय। माया  
द्वारा साक्षादित चेतन्यको ईश्वरसाधो कहते हैं।

क्योंकि ईश्वरका उपाधि मामागर-दाहण है, माया  
और तादृश चेतन्यमें कोई भेद नहीं।

ईश्वरसाधन ( सं० स्त्री० ) भगवत्पुता, पुताकी परमिय।

ईश्वरसमिति—पार्श्वतोपरिचय नामक अस्मिन्मय के  
रचयिता।

ईश्वरमिया ( सं० स्त्री० ) ईश्वरकी उपासना, पुताको  
परमिय।

ईश्वरा ( सं० स्त्री० ) ईश्वरप्य स्त्री, ईश्वर-टाप्।

ईश्वरकी स्त्री दुर्गा। 'विष्णुपदमन्त्रोक्तोपके रच-  
यिता' ( सं० १८० ई० )

ईश्वराधोन ( सं० सि० ) भगवान्के योगीश्वर, जो  
मास्त्रिके मानवत हो।

ईश्वराधेयता ( सं० स्त्री० ) ईश्वरतथ्या, मास्त्रिकी  
मानवतो।

ईश्वराधीनत्व (सं० स्त्री०) ईश्वराधीनता शब्दः।  
 ईश्वरानन्द (सं० पु०) १ ईश्वरका आनन्द, खुदाकी  
 खुशी। २ महासाध्यप्रदोप-विवरणके रचयिता।  
 ईश्वरी (सं० स्त्री०) भग-वरद, चकारात् उपभाषाया  
 ईश्वरं टित्वात् ङीप्। अनेकविधार्थोंपर १८३। १७३।  
 १ दुर्गा। २ लक्ष्मी। ३ सरस्वती। ४ सकल प्रकार शक्ति।  
 ५ लिङ्गिनीलक्ष। ६ वग्धाककोटकी लता, कड़वी ककड़ी।  
 ७ नागदमनी, नागदेवना। ८ नाकुलीकन्द, बाँदा।  
 ९ रुद्रजटा। १० ऐश्वर्यान्वित स्त्री, शानदार औरत।  
 ईश्वरीदत्त—शब्दबोधतरङ्गिणी-व्याकरणके रचयिता।  
 ईश्वरीनारायण सिंह (महाराज)—काशीके एक विद्योत्-  
 साही नृपति और महाराज उदितनारायण सिंहके  
 भ्रातृपुत्र। उदितनारायणके मरने बाद १८३५ ई० में  
 ये वाराणसीके राजपदपर अभिषिक्त हुए थे। ईश्वरी-  
 नारायण सुकवि और मिस्त्री रहे। इनका रचित  
 सुन्दर गान और सुहृद्-निर्मित विविध हस्तिलेखका  
 कारुण्य रामनगरके राजभवनमें विद्यमान है। ईश्वरी-  
 नारायण बहुतेरे कवियोंके आश्रयदाता थे। देव, हरि-  
 जन एवं उनके पुत्र सरदार, गणेश, वन्दन पाठक प्रभृति  
 बहुतसे हिन्दुस्थानी कवि इनके आश्रय और साहाय्यसे  
 कितनी ही कविता बना गये हैं। १८८८ ई०के ज्येष्ठ-  
 मास महाराज ईश्वरीनारायणके परलोक पधारनेपर  
 उनके पुत्र महाराज प्रसन्नारायणको राजपद मिला।  
 ईश्वरोपसाद—शब्दकोशुभ-व्याकरणके रचयिता।  
 ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी—सीतापुर जिलेके औरनगर ग्राममें  
 रहनेवाले एक हिन्दुस्थानी कवि। १८८३ ई०में  
 यह जीवित रहे। इन्होंने विभिन्न शब्दोंमें वाक्प्रीति-  
 रामायणका हिन्दी अनुवाद लिखा, जिसका नाम  
 'रामपिलास' रखा है।  
 ईश्वरीय (सं० त्रि०) दिव्य, देव, रत्नानी।  
 ईश्वरेच्छा (सं० स्त्री०) भगवान्की आकांक्षा, खुदाकी मर्जी।  
 ईश्वरोपासना (सं० स्त्री०) भगवान्की पूजा, खुदाकी  
 परस्तिश।  
 ईश्वर-तुदा परं सकं सेट् धातु। १ चञ्चलप्रति।  
 आ० आत्म० सकं सेट् धातु। २ इससे दान, दण्ड,  
 गमन और हिंसाका अर्थ निकलता है।

ईष (सं० पु०) ईष-क। १ तृतीय मनु उत्तमके  
 पुत्र। २ पाश्चिमास। ३ शिवके एक श्वत्।  
 ईषच्छास (सं० त्रि०) अल्पसुखरित, थोड़ा मूँलनेवाला।  
 ईषज्जल (सं० स्त्री०) अल्प नीर, कुछ पानी।  
 ईषण (सं० त्रि०) सत्वर, त्वरा करनेवाला, जल्दबाज।  
 ईषणा (सं० स्त्री०) त्वरा, गिताबी, जल्दी।  
 ईषणित्, ईषण शब्दः।  
 ईषत् (सं० अथ०) ईष् वाष्पलकात् पति। अल्प,  
 किञ्चित्, खफीफ, जरासा, थोड़ा, कुछ, कम।  
 ईषत्कर (सं० त्रि०) ईषत्-कृ-णुस्। १ अल्पस्य,  
 बहुत कम। २ अल्पप्रयाससाध्य, आसानीसे होनेवाला।  
 ३ अल्पकारी, थोड़ा काम करनेवाला।  
 ईषत्कार्यं (सं० त्रि०) अल्प चेष्टाविशिष्ट, खफीफ,  
 कोमियसे साहस रखनेवाला।  
 ईषत्पाण्डु (सं० त्रि०) ईषत् चासो पाण्डुय।  
 १ धूसर, हलका भूरा। (पु०) २ धूसरवर्ण, हलका-  
 भूरा रङ्ग।  
 ईषत्पाण (सं० त्रि०) १ अल्प पीया हुआ, जो व्यादा  
 पीया न गया हो। (स्त्री०) २ सूक्ष्म पाणोय, जरासा  
 छूट।  
 ईषत्प्रसन्न (सं० त्रि०) अल्पार्थ प्राप्तस्य, थोड़ेसे  
 आसिप्त किया जानेवाला।  
 ईषत्सृष्ट (सं० त्रि०) अल्प संसृष्ट, कुछ कुछ हुआ।  
 यह शब्द अधस्वरका विशेषण है।  
 ईषद्, ईषत् शब्दः।  
 ईषदुष्य (सं० त्रि०) ईषत् च तदुष्येति, कमपा०।  
 अल्पतप्त, खफीफ गर्म। इसके पर्यायमें कोष्ण, कषोष्ण,  
 मन्दोष्ण और कदुष्ण शब्द भी पाते हैं।  
 ईषदून (सं० त्रि०) किञ्चित् मून्, कुछ कम।  
 ईषदुगुण (सं० त्रि०) अल्प उत्कर्ष-युक्त, कम-ऊँच,  
 जो थोड़ा बल रखता हो।  
 ईषदुर्गम (सं० स्त्री०) कटाघ, नजुर, चितवन।  
 ईषदोर्ध्व (सं० स्त्री०) वातामकष, बादाम।  
 ईषहास (सं० पु०) क्षिप्त, मुसकराहट, हलकी हँसी।  
 ईषद्रक्त (सं० पु०) अल्प रक्तवर्ण, निहायत हलका  
 सुखरङ्ग।



कोनेपर यूसुफ समझ गये—मेरी पत्नी मेरी चमड़ा-  
वस्थाने ही गर्भवती है। सुतरां उन्होंने चुपके खोय  
पत्नीको छोड़ प्रयत्न करनेकी ठहराया। उनके चित्तका  
भाव परख परख पिताने देवदूत भेजा था। यूसुफने  
निद्रावस्थामें खर देखा, मानो देवदूतने उनको लख  
कर कहा—मेरीके गर्भमें भ्रूणरूपसे विद्यमान शिशुको  
‘पवित्रात्मा (Holy Ghost) का बालक-जैसा समझो ;  
जितने दिन वह प्रसूत न हो, उतने दिन मेरीसे यह  
संवाद क्रियावो ; उन्हें पत्नी-रूपसे ग्रहण करो और  
जातबालकका नाम ईसा (Jesus) रखो।

यद्यच्छाचारो राजा हिरौद ईसाके जन्म-समय  
भौतिक और भौतिकरूपसे चटना पड़ने देख  
विचर्यायित हुये। पूर्वप्रोक्त भविष्यदाणो-वर्णित जन्मका  
‘इस्राएल एवं स्थानादिका ऐक्य गंठ जानिसे वह मन ही  
मन अपनेको विपद्ग्रस्त समझने और इस भयसे  
‘बालकके भ्रंशसाधन पर झपटने लगे, कहीं परिणाममें  
वह परम शत्रु न निकले। तदनुसार ईसाकी श्रुत  
‘चलतनीय बनानेके लिये राजाने थेलीहेम और तस्-  
‘पाखर्तरी स्थानवासी दो वर्षयुक्त यावतय शिशु मार  
‘छाननेका आदेश दिया था। इसी दुर्घटनाके समय  
‘एक देवदूतने पड़ुं च निष्पायोगसे मित्रित मेरी और  
‘यूसुफको खबरमें बताया,—तुम इस बालकको उठा  
‘और ही मिशर राज्यमें भाग जायो।

‘महात्मा मयी इतना ही लिखकर निधिल ही गये  
‘हैं। किन्तु लूक (St Luke) के सुसमाचारमें प्रकाशित  
‘है—‘सूक्तिकाके शौचान्त मेरी चार यूसुफ पवित्र  
‘मन्दिरमें समर्पणार्थ बेथलेहेममें जातबालक ईसाकी  
‘उठा जेरुसलम नगर पड़ुं चे थे। वहाँ यथाविधि कृत्य  
‘सम्पादनके बाद वह पुत्रको क्रोडमें दबा जन्मभूमि  
‘( गालिलीके भन्तर्गत ) नजरेथ नगरकी ओर चले।  
‘इस स्थानपर बालोचित शिष्याके साथ-साथ ईसाके  
‘ज्ञानका विकास भी बढ़ने लगा। तीक्ष्णबुद्धि और  
‘प्रतिभाने ही भविष्यत्में उन्हें अगत्वा उच्च पद सौंपा  
‘था। कहना दुःसाध्य है—ईसाने विद्यालयमें शिष्या  
‘पायी या नहीं।

‘इन्के प्रीक, धर्मिय, विद्व, और सातिन भाषा

जाननेका आभास मिलता है। बारदिस देखनेसे  
मालूम पड़ता है—ईसाके गृहमें अध्ययन होता था  
( Deut. vi. 4, Psalms cxiv—cxvii )। धर्म-  
पुस्तकको आलोचना ही इनका मुख्य उद्देश्य रही।  
ईश्वरप्रतिष्ठ गत्यावलीने प्रत्यक्षमें ईसाका आचार्य-  
पद पाया था। इनके चित्तमें सर्वदा ईश्वरका आदेश-  
वाक्य गूँजते रहता।

‘दादय वर्षके वयःक्रमज्ञान शिष्या समापन करनेपर  
यहूदी-बालक ईसाकी व्युत्पत्ति धर्मशास्त्रमें विमोच  
बढ़ गयी थी। उस समय साग उन्हें सर्वत्र ‘कामूनके  
‘बेटे’ ( Son of law ) कहने लगे। मातापिताके  
प्रति ईसाको भक्ति और यथा यथेष्ट रही। यह कमी  
कमी पिताकी स्वधारणता उठा उनका परिचय चटा  
‘देते थे। तीस वर्षके वयःक्रम पर्यन्त ईसाने सांसारिक  
जीवन पतिदीन भावसे बिताया ( Mark 6-3 )। दादय  
वर्ष गिरोभूषा ( Phylacteries ) पहना धर्मसम्बोध-  
देशकके पदपर अभिषिक्त करनेके मानस मेरी और  
यूसुफके जेरुसलम नगर खानेसे ईसाकी प्रतिभा  
प्रबोध यहूदी-पण्डित-समाजमें समा गयी थी। एक  
दिन मन्दिरमें बैठ ईसाने मनोविद्या- ( Doctors ) से  
इतना धर्मविषयक प्रश्नोत्तर किया, कि पतिकाल हो  
खानेका शिलकुल अवधारण न रहा। मातापिताने  
समझा, मुद्र कहीं खी गया था। वे इतस्ततः चले-  
‘पणमें व्यावृत्त हुये। अवधेयमें प्रबोध बालककी  
पण्डितमण्डलीकी मोमांशमें पड़ा देप उन्हें बहुत  
विस्मय लगा था।

‘दादयवर्ष जेरुसलम जाने और विगर्व यहूदी  
पुरोहित-पुत्र जोहन-दी-बातिस्तसे जर्देन नदीतोर  
दीचा सेनेतक अष्टादश वर्षकाल ये गार्हस्थ-जीवनमें  
व्यस्त रहे। दीचाके बाद ईसा धर्मप्रचार पर लगी  
हुये। इन्होंने खोय धर्म फैलाने, ईश्वरकी प्रेरणासे  
‘देवकार्य ( Divine mission ) बनाने और अपना  
‘मत चलानेको प्रायः तीन वर्ष नामाकृत भौतिक  
‘कर्म देखाया था। ईसाने ईश्वरसे जो पवित्र धर्म  
‘पाया, साधारणमें उसी पवित्र वाक्यके प्रचारार्थ दादय  
‘सत्तरित्र काष्ठ पुत्रकी मनोनीत कर अपना साथी

बनाया। साथ रहने-रहने उन्हें उनके धर्मोपदेशमें समिष्टता या मसीही हो। धर्मोपदेशमें उन्होंने दादग 'अपोस्तल' (Apostles—देवाभ्युपेक्षित व्यक्ति) माना है। अपने मूल्यके लिये यह धर्मोपदेशिका धीरे धीरे ऐना-मिश्र चरित्रकी ईमाने उन दादग व्यक्तिको निज मतमें परिवर्तन दौचित किया था। इन 'अपोस्तल' समिष्टित, पद्मान, निर्माण और मर्यादाहीन रहे। उनकी चकोकशामान्य प्रतिभामें ऐसे आनंदान को भी आचारचक्रे चित्तमें दृष्टमूल धारणा में रहार, अंश अभीष्टको प्रतिपादित धर्मप्रचारों और हृदयमजिपर प्रतिष्ठित नैतिक आचाररदि मूल्य उत्पादित कर गये थे। अतःपर ईमाने अपने मतावलम्बियोंमें ०० व्यक्ति को शिष्य (Disciple) बना दाखित पदपर दो-दो में ले दिष्ट (Luke x. 1.)। इन मसिष्ट शिष्यके नियोगको क्या पदनाम ईसापरितकार (Evangelist) ने नहीं लियी।

जब ईसा इन प्रकार शिष्यमय धीरे-धीरे अपना धर्म पैनामिको पाने गये, तब पापाय सभ्य-जगतमें अष्टिमाभी रोमक मज्जिका ओपेक्षीमापर चढ़े थे। क्षुद्रियम कोनके प्रभाव और पदस्थायके कृत मानममें सामान्य लक्षितके नरम पदपर पहुँचने भी पियने-मदगत रोमकोंमें दाखिलता वगैरः पयगत होते गया। तारविरिदायके राजत्वकासमें यह पयगति-चित्त मानममें गया। ईसायी गुमारचमें प्राकाल रोम-माग्राज्यपर बसाचार और अनाचारको धीरे-छाया पड़ी थी। रोमक श्रुतिके मज्जिकादपर आभीय क्षातनद्वामें अंशतः राजपमय विवादकासिमा लगी और अयोध्या पराग्राहारी निर्दय वष' बसा-बारी हृदयीय ईसाय राजाके कृत जाते बुद्धिपाराय-को लम्पेइम बसा लक्षमें भी पचिक लगी। बुद्धिपारके अनाचाररिप राजाका अनुष्ठित बीमत्तु हान्यमंशु प्रतीय लक्षमें वृधारी लक्ष नहीं देवमें नहीं पाया।

माग्राज्यकी ईमी दादग उत्पन्न पयक्षामें रोम-देवताकीके हृदयमें लमयः आभीय धर्मप्रभाव इत रहा था। अनेक क्षातनाय व्यक्ति दाखिलका निर्दिष्टार-वाद (Heresy) माना और कोमोने मया एक

प्रकार दाखिलता (Atheism) को अपना परम धर्म माना। जब प्रतीय जगतका पौतमिक सभ्यपय प्रगतपचन दाखिलतामें दृढा धीरे दृढीय मयदायका धर्म माधोय आचारके प्रतिपादनमें लपटता रहने पर हृदयमें छूटा, तब ईसा तारेकी तरह मानो आकाशके छूटा था।

धर्मनैतिक तथा राजनैतिक लक्षमें ऐसा विपदेय पड़ने को क्या दृष्टी गग क्षमाएल—मयक-ही परितानमायी को किसी परिदायके पानिकी राह देवने लगे। पेम्बर-परम्बराने ईश्वरके पयतारका को लक्षणे होते पाया, अरमविना इमराहलके हृदय पर भी सभी विम्रासने अपना प्रभाव लमाया। मात्रिक, तामिताम, लयेटीनियाम, कोषीकाय प्रभृतिने सिपा, कि लक्षकाके पापाय सभ्य जगतमें पाय देवने हो अपने पयितामाको दृष्ट सिपा था।

इसी लक्षछा धीरे पयतारागमकी आमाके दिन ईसायी-धर्मगुह मासिदा जोहन (John) गतधर्म पैनाम लगे। लक्षमें लक्ष था—मूसाका विधि माननेवाकी सभ्यमागोयवी लक्षके जातिमें मसीहा पयतार केने। उनके माय, भनी, मज्जिगुच धीरे परिच्छदादिको देव कोमिके मतमें पयिता-प्रभृति पेम्बरकी लयाका अरम था जाता था। मयक ही उनके वातावर विम्रास लाने। मयाग धीरे निर्जन प्रदेशका योगलय देव कोम लगे बहुत मिनलुल गये थे। धर्मोपदेश लुनकर माधारधर्म इतनी दृष्टलक्ष पड़ी, कि मज्ज-मज्ज कोमोने अदंन-मदीमोरपर लाकर कोपने देवा को।

महाका ईसाकी वनमय लगे कास ईश्वरविनाम निमय रहने भी जानलामकी पामां निमंमयद पाय होइ देवा धीरे ईश्वर-विनाका पय परिच्छार करनेकी प्रतामामे ईश्वरवादविषयक अपने पदमामे लगी महापुनरके पाय पहुँच लदंनपर देवाको मया पड़ा। उषी समय इगरी निच्छमय मोम्युति देव निजमयाको निर्भीक प्रवारय मोहनका हृदय लार गया था। लक्षोने पयितामाकी प्रतिमूर्ति निपाय-देव ईसाको दीया देवा न पाया। कोकि लक्ष

स्वयं अपने निष्पाप होनेमें सन्देह था। किन्तु निष्पाप ईसाको बारम्बार अनुरोधसे जोहन उसे दीक्षा देनेको बाध्य हुआ। दीक्षाकालमें उन्होंने इनके शरीरमें दिव्यज्योतिः देखा था। उसी समय जोहनके प्रति आकाशसे देववाणी हुई, यही प्रतिश्रुत मसीहा और यही मसीहा ईश्वरके पुत्र हैं।

दीक्षाके बाद ईसाने ईश्वरलामकी आश्रासे वन-गमनपूर्वक सत्यास लिया था। द्वादश अपोसल-कथित अभिव्यक्तिसे समझ पड़ता है—ये जेरिका मरुभूमिके कोयावान्तानिथा प्रदेशमें योगसिद्ध हो ऐश्वर्यिक प्रत्यादेशसे वस्तीयन् बने। योगाभ्यासके समय पाप-सङ्घर (Powers of Evil)से इन्हें लड़ना पड़ा था।

पापपर जय पा ईसा जर्दन नदीतीर फिर आये। इसी स्थानसे इनका धर्मप्रचार-कार्य आरम्भ हुआ था। इसीही लोग इस धर्मप्रचार-कालको प्रधानतः पाठ भागमें बाँटते हैं,—

१ जोहन-विभूत प्राथमिक चित्र-चर्चात् गालिलीके साधारण प्रचारार्थ पर्यन्त।

२ गालिलीका प्रचार—जोहनकी हत्या पर्यन्त।

३ विरोधकाल अर्थात् गालिलीवासी फारासियों और स्काइवोंसे ईसाका मतद्वेष।

४ विपद्युक्त हो गालिलीसे चिरप्रस्थान और इनके पलायनकालका वृत्तान्त।

५ उक्त सुदीर्घ प्रवासप्रसङ्ग्यासे जेरुसलम आगमन और वहाँसे श्रुतहत्याके भय इज्राइम ग्राममें पलायन एवं लुब्धावित भावपर अस्थान। टेवारनूकलके भोजोत्सव दिन ईसा सद्गुण जेरुसलमके पवित्र मन्दिर में आ पड़ गये थे। 'अन्धोंकी चक्षुदान' (Healing of the blind) और Woman taken in adultery नामक घटनाइयसे इन्होंने पक्षीकिक कहूँ और ज्ञानशक्तिका जो परिचय दिया, उसने इन्हें उस पवित्र नगरके पदार्थप्रसङ्गपर चिरस्मरणीय बना लिया है। उसी समय उत्सर्गभोजके दिन जेरुसलम मन्दिरमें यहूदियोंसे ईसाका घोर मतद्वेष उपस्थित हुआ। विवाद इतना बढ़ा, कि उन्होंने एकवार उठकर इन्हें मन्दिर-निक्षेप द्वारा मार डालनेका भय देखाया

था। उसीके अनुसार अपना प्राण बचानेकी ये नाना स्थानमें घूमे-फिरे। साजारासके मृत्यु उपसङ्गमें ईसाको बेधनो जाना पड़ा था। वहाँ स्वीय शक्ति-बलसे मृत साजारासकी पुनर्जीवित करनेपर सांनहेद्रिन इतने उभरे, कि कायाफास (Caiaphas) के नेतृत्वमें इनके धर्मसाधनको खदेड़ दिये। ईसाने वनप्रान्तस्थित इफ्राइम पहुँच आकरचा की थी।

६ इज्राइममें रहनेमें 'पासोवर' (The passover)-के भोजोत्सव पर्यन्त। इस समय कुछरोगमुक्त साधु-मानके भोजदान उपनक्षपर भक्तिमती मेरीकल्लक उनके अभिषेकमें युदावासों प्रतिहिंसावृत्तिसे ऐसे लगे, कि यहूदी-पुरोहित एकत्र कर ईसाको मारने चले। सहस्रो, स्त्राइव, हिरोदीय, फाराम् और सांनहेद्रो इनके उपदेशसे क्रमशः विरक्त बने जाते थे। एकदिन प्रकाश बलतामें इन्होंने विहंगो यहूदियोंसे अभि-सम्प्रातपूर्वक कह दिया,—'रे धूर्त फ्राइवों और फारासियों तुम उत्सव हो' (Woe unto you, Scribes and Pharisees, hypocrites.) यहूदी ईसाके इस घृणास्पक वाक्यसे इतने विगड़े, कि पवित्र-लम्ब इन्हें मार डालनेकी मन्त्रणा करने लगे। अवशिष्टमें पद्यात् पहुँच उन्होंने इसाको एकड़ बन्दो बना लिया।

७ इसके पीछे शेषभोज (Last supper), ईश्वरप्रेम, अपूर्व नियम, विचार (Trial) और क्रुशारीप (Crucifixion) पर्यन्त।

८ सर्वशेषमें इनके समाधिसे पुनरुद्भूत्याम (Resurrection) और स्वर्गरोहण (Ascension) पर्यन्त।

पूर्वमें लिखा था बुझा है कि इसाने बेधनो भाग-कर शरण लिया था। उइत यहूदी एकदिन सन्ध्याको शीतल समीरण लेते-लेते इनके पदानुसरणपूर्वक चलकर बेधनो पहुँचे। ठीक उसी समय युदा-प्रमुख यहूदी ईसाको मटका पकड़नेके लिये पुरो-हितोंसे कुमन्त्रणा करते थे। सम्भवतः १० ई.की ११ वीं मार्च शकवारकी ये बेधनो पाये थे। परवर्ती बुधवार पर्यन्त ईसा वहाँ गुप्तसे सोये, किन्तु शक-शक्तिकी प्रातःकाल ग्रय्या छाड़ आगने पीछे फिर





सठ रहा। लोग ईसाको 'यहूदियोंका राजा' कहकर चिढ़ाते और निर्दय सिपाही 'रोमके' बैटलरोंकी भाँति दारुण रूपसे आघात लगाते थे। ऐसी अवस्थामें भी पिन्टने फिर एकबार यहूदियोंका चित्त खींचने-को करुण कष्टसे स्वीय आवेदन प्रापण किया। शेषकी पुरोहितोंका तर्जन-गर्जन सुन उन्हें साधारणके समझ इनके क्रुशारोपका आदेश देना पड़ा।

अनन्तर यहूदी दो दस्यु और ईसाको क्रुशपर चढ़ानेके लिये गोलगोथेकी ओर ले चले। अपने हस्तमें कील ठुंकी समय भी इन्होंने हत्याकारियोंकी मुक्तिके लिये प्रार्थना की थी। ईसाके मृत्युकालकी वाक्यावली ईश्वर-विश्वासकी सुगंधी परिचायक है।

जो विहंगमी और अत्याचारी यहूदी इनके क्रुशपर चढ़ते समय उपस्थित रहे, वे भी उदाराता एवं मात्सीय देख नयनजलमें डूब और 'हा हतोऽसि' कहते तथा करसे बच कूटते जेरुसलम नगर झूट गये। सन्ध्याके प्राक्काल सिपाहियोंने क्रुशपर चढ़े दस्युइयके पदहय तोड़ कर भेज दिये थे। तत्काल उन्होंने मरने या न मरनेकी परीक्षा लेनेकी ईसाके मृत वस्त्रमें भस्म भोँका। अनन्तर सन्ध्याके बाद समाधिकार्य-सम्पादनको असम्भव समझ उन्होंने भटपट इन्हें मड़ी दी थी। शासनकर्ताके आदेशक्रमसे निको-दिमाग और आरमाधियावासे घुसफूने ईसाके मृत-शवको ग्याराती कर्ममें रखा। शुक्रवारको सन्ध्या समय महात्मा ईसा मसीहका समाधि लगाया था। रविवारकी अतिप्रत्युष मेरी इनके समाधिस्थानपर पहुँची। रजनीकी देवदूतसे ईसाके पुनरभ्युत्थानकी बात सुन वहाँ गये थीं।

बाइबिल ग्रन्थके John xx. 17, xxi. 1-24, Matt xxviii. 9-10, Luke xxiv. 13-32, 34, I Cor. xv. 3, 5, 8. प्रभृति स्थलमें ईसाके पुनराविर्भावका उल्लेख मिलता है। प्रथम ईस्टर-दिवस (Easter day)से ४० दिन पर्यन्त इन्होंने स्वीय भक्त मिथी और अपोमलोंके सम्राट् भाविभूत हो उनके प्रति धर्मतत्त्व सत्यभूमि उपदेश दिया था। शेष दिन ईसा भक्तप्राण मिथीकी बेथनीके अविमुख

ले गये। वहाँ उनकी मङ्गलकामना कर इन्होंने अपना शेष आदेश माननेकी समझाया था। इसी प्रकार आशीर्वाद देते देते ईसा उनके सामने भेष मध्य समा गये। चालीस दिन पीछे इन्होंने स्वर्गारोहण किया।

स्वर्गारोहणके पचास दिन पीछे ईसाको मिय-मण्डली घेरकेष्ट भोजोत्सवके समय जेरुसलम नगरमें समवेत हुई थी। इस दिन मिथीपर परमात्माका भर डूपा और उन्होंने सकल भाषाओंमें उपदेश दे जनसाधारणकी विमोहित किया। इसी दिन इसी मुहूर्तपर उनके भावसे सुप्त हो प्रायः तीन सहस्र लोग ईसाई धर्ममें दीक्षित हुए थे। अतःपर ईसा-निर्वाचित अपोसलों और मिथीने पृथिवीके नामा स्थानोंमें जा ईसाईधर्म प्रचार करना आरम्भ किया। सब पहिले मध्य-एशियामें धर्मप्रचार कार्यपर प्रती बने थे। विश्वासघातक युदासके बदले मथियास (Matthias) अपोसल मनोनित हुये। (ये यहूदीयंग सन्धूत थे पीछे पल नामसे प्रसिद्ध हुये।) दूसरे एक जोहन भी 'अपोसल' बने थे।

सयों, सार्क, लूक और जोहन प्रभृति महात्मा-योंने जो सिखा, उससे ईसाको ऐसी एक पार्थिव जीवनीका चित्र उतारा गया। इनका आध्यात्मिक जीवन वा धर्मतत्त्व (Christianity) जिस सञ्चल उपादानसे गँठा, वह ययास्थान सिखा है। ईसाईयो।

पायाल्य ऐतिहासिकोंने इसका कोई प्रमाण नहीं दिया, ऐतिहासिक-प्रधान पायाल्य जगत्में किस उद्दी-यनासे कोन उपादान उठा ईसाने नूतन धर्मप्रचारमें अग्रगमन किया था। ईसाई भी इसका कोई ठोस प्रमाण बता न सके, अपने पञ्चातवारकाल ईसा किध देशमें रहे। सम्भवतः इनके पिता इन्हें मिशर में पाये थे। बाइबिलके नामा स्थलोंमें जेरुसलमनगरके पूर्व-दिक्षे मसीहाके भाविभूत होनेका प्रसङ्गादि विवृत रहने पर स्पष्ट ही समझ पड़ता है, कि यहूदो-प्रधान पालेस्तिनके पूर्वांचल ही ईसाईधर्मका भूछा उड़ा था। पूर्वांचलवासियोंपर ईसा और उनके मलोंके एतादृश अनुप्राण रहनेका कारण क्या है? इस बातको प्राय वा प्रतीत्य मुसमल्लोका कोई व्यक्ति रहने दिनतक



सुद्युक्तके मतसे ईसा मसीह 'रुह-पन्ना' वा जगदीश्वरके आत्मा, कुमारी मेरीके सन्तान और एक दैतृय समझे गये हैं। सुसलमान इनके आगमनसे औत्तलिकताके स्त्रोतका कितना ही रुकना और सनातन धर्मका जमाना मानते भी इन्हें जगत्का परिव्राता (Redeemer and Saviour) नहीं समझते। स्वयं सुद्युक्तने ईसा मसीहका जन्म, ईश्वर कष्टक श्रद्धिकारसे उत्पत्ति और मेरीके निकट देवदूतका समागम प्रभृति घटनायें कुरानमें लिखी हैं।

ईसाइयोंने इनकी जीवनी नाना प्रकारसे सङ्कलित की है। सकल ही ग्रन्थोंमें ईसाका मत विषदरूपसे मौलानसित और पालोचित है। इनकी ईसा-प्रवर्तित धर्ममतको विचार विशेष निन्दा भी की है, जिसकी आलोचनाका यहां थोड़ा प्रयोजन नहीं। ईसाइयोंमें किन रुकल सहाय्योंने इनकी जीवनी देखकर हृदयमें उत्तम भाव प्राप्त किये, उनमें कई लोगोंके मत यहां लिखे जाते हैं। काण्टने ईसाकी अभिव्यक्तिसे पूर्णज्ञानकी आकांक्षा पायी थी। हेगेलने इनमें नर और नारायणका एकत्र समावेश (The union of the human and the divine) देखा था। बहुमत बड़े नास्तिक (sceptics) भी ईसाकी सम्मानना कर गये हैं। स्निमोजाने इन्हें स्वर्गीय ज्ञानकी प्रतिमूर्ति बताया है। वोल्टार (Voltaire) ईसा-चरित्र-चित्रके सौन्दर्य और गाभीर्यपर सुग्ध हुए थे। जगत्की विख्यात और नेपोलियनने सेण्टहेलेना द्वीपमें रहते समय कहा था—इनके साथ किसी अपर व्यक्तिका सामन्तस्य ठहर नहीं सकता। रूसीने ईसाका जन्म और मृत्यु देवताकी भांति माना है। पतञ्जल द्वायात्, रेनान, जमद्वयार्टमिल प्रभृतिने इन्हें मनुष्यजीवनका नेता और आदर्शपुरुष लिखा है।

एक और जैसे ईसाई ईसाके गुण गाते हैं, दूसरी ओर ऐसे ही अनेक ईसाई पुराविद् धराधाममें उल्लाप्यतारके होनपर बिलकुल विश्वास नहीं करते। इनके अवतार होनपर सन्देह कर नेपोलियनने पहले

आर्द्धारसे पूछा था,—ईसा नामक कोई व्यक्ति धरातल-पर रहा या नहीं?" पुराविद्ोंने उल्लाप्यने मतकी औपकतापर अनेक ग्रन्थ भी लिखे हैं। किन्तु ईसाई धर्मपर प्रकृत विश्वास रखनेवाले पद्यौक्तिक युक्तिको मुख्य व्यक्तिका प्रमाण कहा करते हैं। उनके कथनानुसार कुडरिनियाम्, पिलेट वा टाडविरियाम्की राज-तालिकामें लिखा न रहते भी तासिताम्को लेखनसे उसका प्रमाण मिलता है। तासिताम्ने निम्ना है—ताडविरियासके राजत्वकालमें शासनकर्ता पान्तयात् पिलेटकी आज्ञासे ईसाईधर्म-प्रवर्तक (Founder of Christianity) मारा गया था। पिलेटने ईसाई मतके अनुसरणसे हीनमति बानकाको सतर्क करनेके लिये एक राजाज्ञा (Act of Pilate) निकाली थी, और वह ई.के २२ गताब्दतक बलवती रही।

ईसाई (फा. वि.) १ ख्रिष्टीय, नसरानी, मसीही। (पु.) २ उद्धान, मसीहको माननेवाला।

यह ईसा मसीहका भक्त और तत्कालवत्तम्यो सम्प्रदाय है। ईसाके भक्त कहा करते हैं,—“उसी पसीम अन्तर्गत शक्तिमान् विग्रह्यापी जगदाधरने परम प्रीतिसे पवित्रात्मासमूह और इस जगत्को बनाया था। पवित्रात्मा ईश्वरका साहाय्य, प्रेमसन्धोग और कियत् परिमाण उनकी पवित्रता पानेके अधिकारी हुये। पीछे ईश्वरने कामावसायिता (Free Will) उन्हें दे डालो। सुतरां वे इच्छानुसार चलने लगे। स्नेहावय कसमयः उनका मन कलुषित हुआ। उसीमे पापकी उत्पत्ति, धीरे-धीरे पापको हृदि और उनकी साथ दारुण मनस्ताप छाया है। गीतानके साथ लड़के दूतभी देही ही पवस्यामें पड़ गये। उन्होंने सारे पापआ भार सरलप्रकृति मानवपर डालना चाहा था। उनकी मनोवाञ्छा पूर्ण हुई। इसीसे मानवजाति इतनी सन्तप्त, इतनी पीड़ित और इतनी पापग्रस्त है। मानवके पापमोचन, जगत्में न्याय एवं शुद्धराज्यस्थापन और मानवजातिको फिर पवित्रता तथा पूर्वोक्तप्रदान करनेके लिये भगवान्ने अपना प्रियपुत्र ईसाको धरातल-पर प्रेषण किया था। जो ईसा मसीहका धर्मोपदेश प्रकतरूपसे समझते हैं, वे जो उनकी इच्छाके अनुकूल



पुष्कलान्धन और भक्ति के पात्र बने। उसी समय पश्चिम में रोमनगर और पूर्व में अन्तियोक ईसाई समाजका प्रधानस्थान माना गया।

ईसा मसीहका धर्ममत एक ही है। किन्तु उत्तर काल नाना जातिके नाना मत और विश्वास मिल जानेसे अकेले ईसाई धर्मने नाना आकार बना लिये। अब उसके कई समाज हो गये हैं, जैसे—रोमन-काथोलिक, मिरियक, याकुबी, नेटोगी, धर्मनी, यीक, प्रोटेस्टाण्ट, जैसुट इत्यादि।

रोमन-धर्माज।

विपक्षवादियोंके अन्त्याचारसे आदि ईसाइयोंने “काथोलिक” अर्थात् सार्वजनिक वा साधारण मतवा-  
लम्बीके नामसे अपना परिचय दिया था। उसी समयसे यह नाम पड़ा। अब काथोलिक कहनेसे रोमनकाथोलिक (Roman Catholic) नामक ईसाई समाज समझा जाता है। काथोलिक रोमनराज्यके अधि-  
पति पोपकी उसे यावतौय ईसाइयोंका धर्मपिता माना  
अतिशय भक्तिश्रद्धा करते हैं। उनके कथनानुसार मानव भयपाल थे। पीछे एकताका बन्धन टूटा ;  
इसीसे ईसा मसीहने अपने प्रधान शिष्य सेण्टपीटरको भयपाल रूपसे नियुक्त किया। रोम नगरमें सेण्टपीटर रहते थे। वहाँ ठहरकर उन्होंने साम्य और मुक्तिमार्ग लोगोंको देखाया। ईसाका आदेश था—सेण्ट-  
पीटरके पीछे उनका उत्तराधिकारी भी ‘भयपालक’ होगा। रोमके पोप सेण्टपीटरके स्थलाभिषिक्त और  
उत्तराधिकारी है। सुतरां जिन समय जो पोप होंगे, उस समय वेही ‘भयपालक’ रहेंगे।

रोमन काथोलिकोंको धर्मरचार्य सात प्रपञ्च मानना पड़ते हैं,—ईसाईधर्मकी दौबा, धर्मसम्बन्धीय उपा-  
सनादिका क्रियाकलाप, क्रूरारोपके पूर्वरात्र ईसाका मन्थिय भोजनपर्यन्त, निग्रहस्वीकार (Penance), मृत्युकाल-  
में तेलका अवलेपन (Extreme unction), धर्माधिकार (Orders) और पालिषद्वय।

इस समाजके धर्माधिकारमें अनेक पद पड़ते हैं,—  
प्रथम पोप (Pope) अर्थात् सकलके धर्मपिता, तत्पर  
कार्डिनाल (Cardinal) अर्थात् ईसाई समाजके राजा

प्रभृति महाजन, (जो पोपके निर्वाचनमें अधिकारी होते हैं) उसके पर पेट्रियार्क (Patriarch) अर्थात् प्रधान धर्मगुरु, उनके अधीन आर्क बिशप (Arch-  
bishop) अर्थात् धर्माचार्य, उनके मोक्ष बिशप (Bishop) अर्थात् महापुरोहित, तत्पर पुरोहित (Priest) और सामान्य याजक (Deacon)।

रोमन काथोलिक आकार उपामक है। ईश्वर, ईसा और दिव्यात्मा (Holy Ghost) इनके उपास्य देव हैं। भिन्ना इसके वे मूसा प्रभृति मिहपुरुषोंको भी विशेष भक्ति और पूजा करते हैं।

ई० हादससे चतुर्दश शताब्द मध्य रोमाधिपति पोपके प्रबल प्रतापसे समस्त युरोपमें काथोलिक धर्म फैला था। उक्त महादेयमें प्रबल पराक्रान्त राजाधि-  
राजने कुटीरवासी दीन दक्षिण पर्यन्त सकल ही पोपके पदावनत हुए। पोप अथवा मन्थियुक्त धर्माधिकारियोंके बिना आदेश कोई धर्मकर्म कर न सकता था। उस समय अनेकोंने समझा—पोप ही सम्भवतः देवता और ईश्वरका संग है। उनके अग्रने कोई एक बात भी मुँह खोलकर कह न सकता था। उस समय पोपने ईसाई धर्मोपन पर बैठ आ अन्त्याचार किया, उसे सुननेसे किसी धृत्कम्प नहीं हुआ। जो ईसाई पोपका नियम लांघा, वह यथाकाल उनके उपचार प्रदानने विमुख जाता अथवा जो सुषाघरसे भी किसी विधर्मिता संलग्न करसिता किंवा जो विधर्म पोपका आदेश न मानता, उसका निन्दार हो न होता था। इसी प्रकार मंडङ्गों व्यक्तियोंने अकालमें कालका आतिथ्य स्वीकार किया और हजारों लोगोंने कारागृहवाला दुःख अपने ऊपर लिया। आवासदुःखनिता हजारों व्यक्तियोंने पसीम मनोकष्ट पाया था। युरोपमें ऐसा बार्द प्रदेश नहीं, जो पोपके उस दादप दण्डविधि (Inquisition)से अन्त्याहति पाता। सर्व जातोंपर प्रेम रखना जिस धर्मका मूलमन्त्र है, उसी धर्मके सर्वमय कर्ताका ऐसा कार्य। ईसाई इतिहासपर विषम कलह समता है।

काथोलिकसे जैसुट (Jesuit) सम्प्रदायका जन्म हुआ है। जैसुट मण्डले ईसाके समाजका अर्थ निकलता



बासियों को ईसाई-धर्म की दीक्षा देनेके लिये बड़ा उद्योग किया था। उन्हींके यत्नसे दुर्भाति-नुनेज (Duarte Nunez a Dominican) नामक एक व्यक्ति (१५१४—१७ ई०) सर्वप्रथम बिशप (Bishop) बन भारत आये। वे जन-डि-आलबुकार्क (John de Albuquerque) गोया-नगरके सर्वप्रथम बिशप हुये। किन्तु उस समय भी काथोलिक समाज भारतमें अपना प्रभोट बना न सका था।

१५४२ ई०में सेण्ट जे.वियर नामक एक जीसुट भारत आये। मलबार, मदुरा तथा दक्षिण मद्राजके अनेक प्रसभ्यों और तेनिवल्ली जिल्लेके परवर नामक क्षेत्रोंमें सेण्ट जे.वियरसे दीक्षा ली थी। दक्षिणात्यके वे लोग आज भी सेण्ट जे.वियर पर प्रतिग्रह भक्तिग्रहा रखते और अपनेको 'जे.वियरके सन्तान' कहते हैं।—जीसुट समाजमें सेण्ट जे.वियर प्रतिग्रह सम्मानित है। उन्होंने भारतवर्ष अतीत भारत-महासागरके होपपुस्त और लापानमें भी ईसाई धर्म चलाया था। अन्तसमय चीन-राज्यमें धर्म चलानेके लिये गये और वहाँ जा अपनाहार अनिश्रुसे १५५२ ई०की २२वीं दिसम्बरको नाङ्किन नगरमें कालके प्रास पतित हुये। १५५४ ई०की १५ वीं मार्चको उनका अस्त्रि मंगाकर गोया नगरके रोम्या-घरमें रखा गया।—१५४८ ई०को उक्त तेनिवल्ली जिल्लेमें एण्टानिओ-क्रिमिनेल नामक एक विख्यात जीसुट किसी भारतवासीके हाथों निहत हुआ था। उसके पर वर्ष भी अनेक सम्मान जीसुटोंने धर्म चलाने का विषय याचि उठाया। १५५० ई०को बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत याने नगरमें जीसुटोंका एक धर्मालय बना। इस स्थानमें विस्तार प्रसभ्योंकी ईसाई धर्मकी दीक्षा मिली। यौना देखो।

१६०६ ई०में राशर्ट डि गोबिनी नामक एक सम्मान जीसुट इटलीसे मद्राजके उपकूल आये। उन्होंने जिस प्रकार यहाँ आकर ईसाई धर्म चलाया, वह बहुत ही अद्भुत और कीर्तुहलोहोपक था। उन्होंने सोचा,—‘भारतवासी हिन्दू युरोपीयोंसे खेच्छ-की तरह प्रतिग्रह दृष्टा करते हैं, सुतरां कोई उस

हिन्दू सभजमें युरोपीयोंके मुखसे धर्मकी बात नहीं सुनते। विशेषतः बहुदिनसे वे जिस धर्म और विश्वासपर चलते हैं, उसे भी एककाल सामान्य मान्य ठहारा नहीं सकते।’ इसीसे उन्होंने प्रथम भारतका आचार-व्यवहार समझा। वे अपनेको नाम तथा जन्मस्थान लिपा ‘रोमक ब्राह्मण’ बताया करते थे। फिर उन्होंने अनेक कष्ट उठा सम्प्राप्ति के योगमें ब्राह्मण पण्डितोंसे संस्कृत और तामिल भाषा सीखी। कुछ दिन बाद गोबिनीका नाम ‘तत्त्वबोधधामी’ पड़ गया। झाबिड़के ब्राह्मणोंने तत्त्वबोधको ‘रोमक ब्राह्मण’ मान लिया था। जीसुट सभ्यासी उन लोगोंके आग्रहसे घूमफिर स्वकाय बनाने लगे। प्रथम उन्होंने तामिल भाषामें ‘आत्मनिर्णयविवेक’ और ‘पुनर्जन्म प्राप्ति’ नामक दो ग्रन्थ लिखे। उनमें उन्होंने वेदान्तके मतसे सिद्ध आत्मतत्त्व एवं परलोकका विषय और पुनर्जन्मके सत्यत्वमें पुराणका मत काट डाला। हिन्दू दागिनिकोंमें बहुतसे उनके ग्रन्थ पढ़कर विदग्ध गये और उनकी बात श्राव्यके विरुद्ध समझ उपहास करने लगे। इसपर उन्होंने निज मतकी समर्थन करनेके लिये कल्पित वेद और उपवेद लिपिगुःपारम्भ किया। उनके रचित एक कल्पित उपवेदमें लिखा है,—

“ब्रह्मा न ईषी नित्य नापतारक मिषयः।

न सृष्टिः तस्य कृतः ईश्वरं नरपञ्चकः।

दया लभ्य तथा च ॥ विदेशो नास्ति विचयः।

सर्वे नार्य पावनम् करीवि च सदम्भुः।

तन्नापतारी भार्गवे न मुच्यति स्वर्गं तथा ॥”

ब्रह्मा न तो नित्य ईश्वर, न ईश्वरके अवतार और न जगत्के सृष्टा ही है। वे सामान्य मानवमात्र ठहरते हैं। स्वयम्भू ईश्वर ही सृष्टि, नाम और पानन करता है। उसमें अवतार किंवा अर्गादि गुण नहीं होता। इसीप्रकार शुद्ध भावसे जीसुट सभ्यासीने हिन्दुओंके धर्मपर आक्रमण किया। अनेक प्रसङ्गि ब्राह्मणोंने उनके कल्पित वेदपर विग्रहकर और उसे वेदिक धर्म समझ ईसाई धर्म मान लिया था। (ऐसे जो कल्पित वेदका एक पुस्तक ग्रन्थके प्रधान देवमन्दिरमें मिला है।) \*





प्रायः कितना ही पूर्वभाव बनाया है। किन्तु अब ईसाईधर्मका प्रबल स्रोत वह निकला है इसलिये किसी बातका ठिकाना नहीं लगता। इसी भारतवर्षमें देगो और विदेशी मिलाकर चौदह लाखसे ऊपर कार्यात्मिक ईसाई रहते हैं। अंगरेजोंके राजत्वसे प्रायः सकल युरोपीय देशोंके धर्मप्रचारक भारतमें आ टिके हैं। अधिकांश कार्यात्मिक गिर्जा और ईसाई-याजक गोया-वाले धर्माचार्यके अधीन हैं।

(सिरीयक-समाज।)

सिरीयक ईसाई समाज अतिप्राचीन और अति-यौक तथा जेहन्नालमवाले प्रधान धर्मगुरुके (Patriarch) अधीन है। पूर्वकालमें यह समाज अतिप्रिय सन्तुष्टिगानी हो गया था। ई०के ४थे शताब्दीमें इस समाजके अधीन १२८ बिशप (Bishop) और प्रायः दस लाखसे अधिक ईसाई रहे। आजकल यह समाज मेटोनाइट, याकूबी, असली सिरीयक और मेलकाइट (यौक) चार संप्रदायोंमें विभक्त हो गया है। ई०के पचम शताब्दीमें ईसा मसीहके अवतार सन्त्यभ्यपर इस समाजमें एक भगड़ा पड़ा। ४४४ ई०को यूटिकेस (Eutyches) नामक एक पादरीने कन्स्तान्तिनोपलमें प्रचार किया—‘अवतार होनेसे पूर्व ईसा मसीहका पात्रा ईश्वरसे मिला था; अवतार होनेसे पीछे भी वह पूर्वभाव नहीं गया। ईसाके देव और मानव दोनों प्रकृति रहते भी मानवप्रकृति देवप्रकृतिसे जा मिली थी।’ इसी मतभेदपर सिरीयक-समाजमें विषम तर्क वितर्क खड़ा हुआ। कन्स्तान्तिनोपलके प्रधान धर्मगुरु (Patriarch) फ्लोरियानने एक महासमिति आह्वान की। इस महासमितिके उक्त मत न माना। किन्तु ४४८ ई०को जोकिसासकी महासभामें नियत-वाले ईसाई उदासीनके प्रबल आन्दोलनसे यूटिकेसका मत फिर सादर मान लिया गया। फ्लोरियान और उनके सहचरका पद घटा था। उस समय सिरीयकसमाजमें उपरोक्त मत ईसाई धर्मके मूलतत्त्वकी तरह चल पड़ा; किन्तु अधिक दिन न ठहरा। कालचिह्नकी महासभामें ४५० बिशप लोगोंके विचारसे माना गया था,—‘पूर्वमत अत्यन्त असङ्गत और ईसाई धर्मके

विरुद्ध रहनेसे बचाव है। ईसा मसीहकी देव और मानव प्रकृति एकत्र निवृद्ध है। वस्तु मतिसे कोई प्रभेद नहीं।’ यूटिकेसके मतको मानकर उस समय कई समाज बन गये थे। उनके मरनेपर भी उक्त मत सैकड़ों वर्ष चला। इस समाजके लोगोंने परवर्तीकाल कोई कोई फिर मोनोफिसाइट (Monophysites) अर्थात् ईसाके एक-प्रकृतिवादी नामसे विख्यात हुये। वही एकप्रकृतिवाद आज भी याकूबी (Jacobites) समाजमें चलता है।

यूफाटॉसके मत-वैषम्यसे सिरीयक समाजका पूर्व गौरव घटने लगा। शेषमें इस नाम धर्मके अभ्युदयसे अत्यन्त घबराते हुए। ई०के ७म शताब्दीमें इस समाजपर अधिक विपद् पड़ी थी। ई०के ८म शताब्दीमें मेटोनाइटोंने सुसन्तमानोंके अत्याचारोंसे स्वेच्छन परतपर रह कर धर्म बचाया। ये मेटोनाइट ही बाद में सिरीयक ईसाईय शब्द उत्पन्न है। किसीको मतानुसार ६१० ई०को सन्त्याटो हेराक्लियसके समय सिरीयक समाजमें मोनोथेलीट (Monothelite) अर्थात् ईसाके एकेच्छावादो नामसे निकलने और ६८० ई०को पठ महासमितिके ईसाई धर्मका विरुद्धवादी माना जानेसे उठनेवाले सम्प्रदायके जो ये मेटोनाइट सन्तान हैं। ई०के ९म शताब्दीको मेटोना-शास्त्रमें मेटो नामक एक धर्मगुरु रहते थे। उन्हींकी ९४० सन्त्याटोके अपना प्रधान-जैसा माननेसे ‘मेटोनाइट’ (Monothite) नाम निकला। सुसन्तमानोंके आधिपत्यका जितना एक समाजमें केवल मेटोनाइट ही धर्म और आधीनता बचा सके थे। ई०के १२म शताब्दीको जेहन्नालममें रोमक समाज जन्मनेसे इन्होंने एकेच्छावाद छोड़ रोमक समाजकी अधीनता मान ली। १२८४ ई०को मेटोनाइट याजककी अत्याचारोंसे लिये रोममें एक विश्व-विद्यालय खुला था। रोमक समाजकी अधीनता मानने भी इस सम्प्रदायके ईसाई जातीय विश्वासनाथ और आचार-व्यवहारमें सम्पूर्ण अधिकार रहते हैं। सिरीयक-भाषामें उपसर्गनादि काम होता है। यात्रा करता करनेसे पूर्व विशिष्ट कोमिटर नामक साय रह सकता है, किन्तु

करनेका अधिकार नहीं रखता। इस समाजकी प्रति दसम वर्ष पौषे धर्मराजकी-प्राभ्यन्तरिक व्यवस्था बताना पड़ती है।

याकुबो या जाकोबाइट (Jacobite) सम्प्रदायके लोग पहले प्रादि-सिरियक समाजका मत मानकर चलते थे। याकुब-बरदाई (Jacobus Baradaens) नामक एक सिरियक यति इस सम्प्रदायके थे। क्योंकि नामपर यह सम्प्रदाय याकुबी कहाया है। इसका पूर्वनाम मोनोफिसाइट (Monophysite) अर्थात् एक-प्रकृतिवादी है। मोनोफिसाइटोंके मतसे ईसाकी प्रकृति एक ही रही, मानवप्रकृति ही क्रमसे दोषो प्रकृति बन गयी। नेटोरियासके मत विरुद्ध प्रथम यह मत निकला था। टूटिकेस्का मत छठनेपर काससिडनकी सभासे ही मोनोफिसाइट नाम चल पड़ा। इस सभामें स्थिर हुआ था,—‘ईसामें एकाधार ही प्रकृति विद्यमान है। उनका परिवर्तन वा विभाग कोई सम्भव नहीं सकता।’ किन्तु साधारण सिरियक ईसाइयोंका मन इस बातसे विगड़ गया था। तर्क-वितर्क, वाद-प्रति-वाद, विरुद्धवादिधर्म परस्पर लड़ाई भगड़ा लातजता और दीपमें लाली-छोटा चलने लगा। ई०के ६ठे शताब्दीको मोनोफिसाइट सम्प्रदाय प्रादि सिरियक समाजसे प्रयत्न हुआ। उसके पीछे सम्राट् जस्टिन् और जस्टिनियान्के इस सम्प्रदायकी कौटु रोमक-समाजमें जा मिश्रणसे इन लोगोंपर बड़ा गड़बड़ पड़ा था। इनमें परस्पर एकता न रही। फिर इस समाजसे जितने ही नूतन दल निकले थे। उनमें एक दलका नाम ‘अकेफोलोई’ (Akepholoi) पड़ा। ११८ ई०की विषम तर्क छठा था—ईसाका शरीर भ्रष्ट है या नहीं। अस्तियोकके सेडिरास् नामक पटुतात विषयके गिर्थीने (Seberians) प्रचार किया, ईसाका शरीर भ्रष्ट है। उधर गजनाम् नामक विषयके गिर्थ (Gajanites) कहते फिर,—ईसाका शरीर कभी भ्रष्ट नहीं। इसीप्रकार प्रथम दल ‘फार्तोलोस्ट्रि’ (Phthartolotrist) अर्थात् भ्रष्टोपामक और द्वितीय दल ‘अफार्तोलोस्ट्रि’ (Aphthartolotrist) अर्थात् पतु-देह-पूजक वा गिषक कहाया।

द्वितीय दलने फिर तर्क छठाया था,—ईसाका देह भ्रष्ट है या नहीं? ‘अकतिस्तो तोई’ (Aktisteloi) अर्थात् पसष्टिवादीने कहा—भ्रष्ट नहीं। ‘किस्तोलोस्ट्रि’ (Kistolotrist) अर्थात् सृष्टिवादीने प्रमाण करके देखा दिया—हां भ्रष्ट है।

इन लोगोंमें फिर ‘अग्नोतोई’ (Agnotoloi) नामक तीसरा दल निकला था। उसने प्रचार किया,—ईसा मानव नहीं, सर्वशक्तिमान् थे। ५५० ई०की एकप्रकृतिवादीमें अस्कनगेस (Askunages) नामक एक व्यक्ति और उनके पीछे फिलोपोनस् (Philoponns) नामक किसी पण्डितने घोषणा की,—ईसर, ईसा और दिव्यात्मा तीनों अलग-अलग स्वतन्त्र हैं। किन्तु इस मतकी एकप्रकृतिवादीने ईसाई धर्मके विरुद्ध समझ मारा न था। मिसर, मिरिया और मेनो-पोटेमिया प्रभृति स्थानोंमें उक्त मतप्रसङ्गों बहुत दिनतक प्रचल रहे। ये अनेकजुद्धिया और अस्तियोकके धर्मगुरुका धर्मानुशासन स्वीकार करते थे। ई०के ६ठे शताब्दीमें याकुब-बर्दाईयोंके अभ्युदयसे उन्होंने स्वाधीन समाज बना लिया। उनमें कोई-कोई धर्मनी समाजसे जा मिला था।

प्रादि-सिरियक ईसाई-प्रेषका प्राधान्य नहीं मानते। उनको बाइबिल सिरियक भाषामें लिखी है। उसीके द्वारा उपासनादि कर्म होता है। दूसरा धर्मकाण्ड ग्रीक-समाज-लेखा है। उनके पुरोहित याजक होनेसे पूर्व विवाह कर सकते हैं, किन्तु पीछे नहीं। उन्हें द्वितीय दारपरिषद करनेका भी अधिकार प्राप्त नहीं। विगयोकी एकवारगी भी विवाह करना मना है। वे निरुपद्रवका चित्र रखते और उसका स्तव करते हैं। रमणी बहुत धर्मशील होती है। स्त्री-पुरुष उभय उपासनादि किया करते हैं, किन्तु उनकी संख्या घटि चली है।

नेटोरियन (Nestorians)

ई०के ६ठे शताब्दी सिरियक-समाजमें नेटोरियास नामक एक महात्माने अग्र लिया था। उनके वाक्-पटुता और सतुपदेशी देशीय सकल लोग मुग्न हुए। ७२८ ई०की वह कलामातिनोपसके धर्मगुरु

(Patriarch) बने थे। एक उच्चासन मिलनेसे अत्यन्त काल पीछे ही ईसाके देव और मानव प्रकृति-सम्बन्धपर घोरतर तर्क चला। अनाटेसिया नामक एक पुरोहित नेष्टोरियाके साथ कनस्तान्तिनोपल पहुँचे थे। एक दिन उन्होंने उपदेश देते समय कहा,—कुमारी मेरी ईश्वर वा देवपुरुषकी माता हो नहीं सकती। वह मानव ईसाकी माता है। इस बातकी सुनकर अनेकोंने समझा, कि वह नेष्टोरियाका मत था। नेष्टोरियाने अपनी बात समर्थन करनेके लिये घोषणा की—‘ईसाकी दोनो प्रकृतियों में भेद है। उनका देह मानवप्रकृतिसे बना, किन्तु उनका उपदेश देवप्रकृतिसे बना है।’ उस समय ईसाई-जगतमें इस बातपर तुमुन आन्दोलन उठा था। अलेक्जेंड्रियाके धर्माचार्य सेण्ट-साइरिल उनसे विगड़ पड़े। फिर रोमके बिशप सिलेस्टाइनने नेष्टोरियासे कहला भेजा,—‘यदि तुम अपना मझल बाँधो, तो शीघ्र ही इस दुष्ट मतकी छोड़ो। किन्तु नेष्टोरियाने किसी बातसे मझासभामें पदच्युत होते भी अपना मत न छोड़ा। इसलिये कनस्तान्तिनोपलके एक धर्माश्रममें चार वर्षतक वह कैद रहे थे। किन्तु उससे भी उनका विश्वास किसी प्रकार न घटा। अतःपर वह मिश्रकी महामह-भूमिमें निर्वासित किये गये।

नेष्टोरियाके मत माननेवाले व्यक्तिोंकी ही नेष्टोरियान् (Nestorian) कहते हैं। आजकल नेष्टोरियान् एक दृष्टि सम्मान समझा जाता है। इफेसास्की सभासे पदच्युत होनेपर भी नेष्टोरियाका मत आसीरिया, पारस्य प्रकृति नामा स्थानोंमें बढ गया था। अल्प दिनोंमें रोमके शासनाधीन सकल स्थानोंसे उठ जाते भी ईरान, अरब, भारतवर्ष प्रकृति नामा स्थानोंमें नेष्टोरियान् समाज स्थापित हुआ। मिरिय भाषामें लिखित एक ग्रन्थलिपि द्वारा मालूम पड़ा है,—ई०के ७५५ गताब्दमें नेष्टोरियान् ईसाई चीन राज्यमें धर्मप्रचार करने गये थे। तुर्कस्थानमें खनीफावों और मध्य एशियामें मुगल-बादशाहोंने नेष्टोरियानोंको आश्रय दिया। प्रसिद्ध चङ्गिज खानकी पत्नी एक नेष्टोरियान्-कन्या थी। सुनते हैं—मध्य एशियासे

नेष्टोरियान् धर्मप्रचार करनेवाले सुगल बादशाहोंने कराकोरमके अधिपति चङ्गिज खान प्रदान थे। चङ्गिज खानने चारनेपर उन्होंने अपनेको प्रेस्टर-जोषाहो (Prester John) अर्थात् जोहन् (नामक) याज्ञक बताया था।

ई०के १६वें गताब्दकी नेष्टोरियान् समाजमें कुछ गड़बड़ पड़ा था। उस समय कितने ही लोगोंने बाध्य हो पोपकी अधीनता स्वीकार की। आजकल उन्हें कासदी ईसाई कहते हैं। ये सकल ही प्राचीन मत मानते हैं। कुर्दिस्थानके पार्सतोय राज्यमें इस समय प्रधानतः नेष्टोरियान् रचा करते हैं। किन्तु वे दरिद्र और मूर्ख हो गये हैं। उनके पुरोहित और निम्नश्रेणीके याज्ञक विवाह कर सकते हैं। विवाहादिमें धर्माचार्यका मत लेना पड़ता है। वह मृतकी मूर्तिके उद्देश्यसे स्तवपाठ करते और विवाह क्रमके ईसाकी दूसरी मूर्ति नहीं पूजते।

भारतवर्षमें भी बहुत दिनों नेष्टोरियान् देखाते और वे दक्षिणापथके मलबारमें सिरियक ईसाई कहाते हैं। विवाहमें सिरियक ईसायियोंके सन्तान आजकल ‘नसरानी मापिन्ना’ नामसे परिचित हैं। इसके सम्बन्धमें कुछ मतभेद है—किस समय भारतमें सर्वप्रथम ईसाई आये। किसी-किसी मतसे ईसा मसीहके पन्थतम शिष्य सेण्ट टोमस अरब, ईरान् आदि स्थानोंमें धर्मप्रचार कर ६५ ई०की भारत पहुँचे थे। उन्होंने यहाँ सिरियक ईसायियोंकी उत्पत्ति है।

दाक्षिणात्यके ‘नसरानी मापिन्ना’ और नीच-जातीय ईसायियोंमें अनेक सेण्ट टोमसकी धर्मपिता एवं खास ईसा मसीह समझते हैं। बहुतसे लोगोंकी विश्वास है—ई०के २१ वीं दिसम्बरको सेण्ट टोमस ही सम्राट् के पार्सवर्ती मारनापुर नामक स्थानमें ब्राह्मणोंकी उत्तेजनासे हिन्दू अधिपतिके कर्तृक निहत हुये थे। कोई कोई कहता है—पारस्यवासी मन्त्रिक शिष्य टोमस-मन्त्रिकीयन (Thomas the Manichean) ई०के ३२ गताब्दमें भारत पहुँच अभिनव ईसाई धर्म प्रचारित था। दाक्षिणात्यवासी टोमस उन्हींके शिष्य हैं।



दाक्षिणात्यमें सर्वप्रथम ईसाई धर्म चलाया था।  
दाक्षिणात्यवासी देसो ईसाई धर्मको अपना धर्मपिता  
और ई०के १४वें शताब्दसे पूर्वावधि स्वयं ईसा मसीह  
जैसा समझते थे। वे पारस्यसे आये नेष्टोरियान विग्रप-  
की पात्राकी अधीन थे। ई०के ७वें शताब्दमें पारस्यके  
ईसाई समाजने अपनेको टोमस ईसाईके नामसे  
प्रभिक्षित किया, जिसके अनुसार मलबारस्थ अथ  
ईसाइयोंने भी अपना नाम 'टोमस ईसाई' रख  
लिया। मलबारस्थ ईसाइयोंकी संख्या अधिक रहते  
भी देसो लोगोंके उत्थोड़नेसे भयस्या अत्यन्त शोचनीय

पापसे उन्नत लोगों परदाय बनायेके निवे ईसा मसीह एवं दिव्यात्माकी  
बनाया था। पश्चिमात्मा (Intelligences) के साथ ईसा मसीह की  
एक जग है। वे सर्वशक्तिमान् रहते थे। फिर मानवता पाप कीद्वारे  
और पापकाकी सुनि ब्रह्मणेकी दक्षिणमें मनुष्यके शरीरपर ईसा मसीह  
इस। दक्षिणमें तभीसे आये वन उन्हें कृपार चढ़ाया था। हिन्दु  
'सम्राट् मरय न इव, सम्राट्' मानवता पाप निज शरीर को छाया।  
शक्तिसे सम्पन्न कार्य मेघ बार पुनर्जन्मपूर्वक ईसा निज राज्य सूर्य-  
कीवकी सहे गये। उन्होंने ज्ञाने समस्त निज धर्म बनाये और निज  
नियमों सत्ताया यह धर्म के द्विमे दूतस्वरूपसे पाराजित संजने को बल  
करी थी। मनि ही ईसाके प्रेरित थे साम्यताको दूतस्वरूप पाराजित रहे।  
मनिके मलबारस्थ आत्मा चन्दनीक और सूर्यकीवसे पाप होजाने पर  
'परमपुरुषमें समाता है। मनिजीय ईसाके ईसाके पुनर्जन्म नहीं  
मानते। उनके मतमें पापी आत्मा सर्वशक्तिमान् को ला नहीं सकता, जिसे  
'परमपुरुषमें पड़' व जीवस्वरूपे नाम होता है। आधुनिकता मूलभूततः प्रेरणा  
'ईश्वरप्रदीप्त नहीं, एकमात्र भूत को उल्लास प्रथमकर्ता है। इसीसे  
'होई आधुनिक आदिवासीको नहीं मानता। धर्मपरदाय मनिजीयोंकी  
'नाम छाना गया है। उन्हें मानवता से विरहित ब्रह्मचारी को तरह  
रहना पड़ता है।

मनिजीयोंमें प्रमेजित और पलची की प्रकारके ईसाई होते हैं।  
'धर्मजित ईसाई नांव, हिन्दू, द्रविड़, मनुष्य, मनु एवं' अपारपर सादक  
'द्रव्य नहीं होते और रोटी, दान, तरकारी तथा अन्यवस्तुवर्षे बलि बलि  
साथ अपना काम बनाते हैं। कामकीपादि बहुरिपुत्री मारना की  
'धनका सुख उद्देश्य है। अच्छे दुर्बल ईसाई को-पुनर्जन्म पाप उल्ला-  
'नकार सुख उठा रहते हैं। उनके सर्वसमाजका कार्य देखनेको एक  
व्यपारि (ईसा मसीहके प्रतिनिधित्वपर), पादक प्रधान (ईसाके दूत-  
स्वरूप) और पादक विद्वान् रहते हैं। उनके बीच चलाय काम है।  
'वे ईसाई समुदायकी सेवा और शिरोधार्य (Eucharist) को  
मानते हैं। मनिजीय रविवार, ईसाके पुनर्जन्म (Easter) और  
'दक्षिणके पेंटेकोस्ट (Pentecost) दर्शनेसे उपवास करते हैं।

हो गयी थी। ई० ई०को धर्माचार्य जेसजाबुसने  
(Jesajabbus) पारस्यके प्रधान ईसाई याज्ञकको  
एक पत्र लिखा। उसके पढ़नेसे समझ पड़ता है—  
ऐसा कोई आदमी न था, जो मलबार उपश्रुतके  
देसो ईसाइयोंको भलीभांति उपदेश देता। ई०के  
८वें शताब्दमें धर्मनी टोमसने लिखा था,—मलबारके  
ईसाई वन्यपशुकी तरह वन और गिरि-गह्वरमें  
रहते हैं। ई०के १४वें शताब्दमें जार्दानासने (Ficar  
Jordanus) देखा था—वे नाममात्रके ईसाई हैं, उनमें  
दीक्षा (Baptism) नहीं। पात्र भी कनाह्वाप्रदेशके  
अनेक पसभ्य हिन्दुओंमें ईसाई धर्मके विज्ञ मिलते  
हैं। इससे बोध होता है—वे सकल पसभ्य अनेक  
दिन ईसाई रहे होंगे। उन्होंने हिन्दुओंका भय भयवा  
अपनी शोचनीय अवस्था देख और हिन्दुओंके समाजमें  
समानिका कोई उपाय न पा काम-कामसे हिन्दुधर्म  
पकड़ा होगा। वास्को-डि-गामाके आनेसे पहले  
मलबारी ईसाई स्थानीय नृगतिके अधीन सैनिक  
विभागमें सुव सके। उस समय धर्मधर्म बनायेको  
नेष्टोरियान् विग्रप, याज्ञक, पुरोहित प्रभृति सगे थे।  
पोर्तुगोज् नीसेनापति भारतमें वहाँ प्रथम उतरे, वहाँ  
ईसाई उनके जा मिले। पोर्तुगोज्ओंके साथ जो सकल  
याज्ञक रहे, वह उन्नत ईसाइयोंको कार्यात्मिक समाजमें  
मिसानेकी चेष्टा करने लगे। उनको उत्तेजनसे  
१५६० ई०को भारतमें पोर्तुगोज्ओंके अधिकृत स्थानपर  
विधर्मियोंका विचारालय खुला था। धर्मिक तर्कवितर्क  
पर इतना विस्वादा बढ़ा, कि बहुतांको स्मृत रक्षार्थ  
रक्त बहाना पड़ा।

१५८८ ई०को कीचीनके निकटवर्ती उदयम्पूर  
नगरमें गोयाके प्रधान धर्माचार्यने (Arch-bishop)  
एक महासभा लगायी थी। वहाँ विद्वत् पात्रोपनाके  
बाद सिरीयक ईसाई रोमक-समाजमें मिल गये।  
इसी प्रकार भारतसे नेष्टोरियान् समाज छड़का था।  
सिरीयक ईसाइयोंने रोमक-समाजको पशोमता

• उसी समय पोर्तुगोज् राजवर्तिनियोंने भारतके सब इन्डि-  
इन्डिसे वस्तु बँटायें, निजमें शरभसे विहोरकार नेष्टोरियान् निज  
आने न पड़े।

मानते भी अपना कर्मकाण्ड न छोड़ा। वे पात्र भी मिररीयक भाषा में ही उपासना किया करते थे।

१६६५ ई. की पन्तिथोक के धर्माचार्य ने अपना मिररीयक समाज की रक्षा करने के लिये मार-पेगरी नामक एक विषय को भारत भेजा था। मलबार में पहुँचने पर अनेक मिररीयक ईसाइयों ने मार-पेगरी का मत पकड़ लिया। उस समय मिररीयक ईसाई दो भाग में बंट गये थे। उनमें एक दल का नाम 'पञ्चद्वया कुत्तकार' अर्थात् प्राचीन समाज है। उदयम्पुर की महासभा में ही 'पञ्चद्वया कुत्तकार' की उत्पत्ति है। इस समाज के मिररीयक ईसाई पोप का प्राधान्य मानते हैं। फिर मार-पेगरी में 'पुत्तेन कुत्तकार' अर्थात् नूतन समाज निकला है। नूतन समाज याक्षवी धर्ममत पर चलता है। इस दल के मिररीयक ईसाई रोम के विषय और नेटोरियास पर अनेक दोष लगाते हैं। उनके मत से ऋग्वेद के पुरुषाव ईसाई के मशिय भोजोपलक्ष्य पर ईसाई समाज में होनेवाले पर्व के दिन जो रीटी और शराव बंटती है, वही ईसा का प्रकृत शरीर तथा रक्त ठहरती है। भारत के मिररीयक ईसाई अधिकांश धीवर और भोकाजीवी हैं।

धर्म-समाज।

ईसाई सम्प्रदाय में धीक समाज का कर्मकाण्ड और मतमत स्वतन्त्र है। ईसाइयों में इस स्वतन्त्रता समाज के लक्ष्य के कारण यह है—धीक ईसाइयों ने रोम के एक मात्र पोप और उनके बनाये नियमों से विरुद्ध माना तर्क युक्ति लगा अपने को विभिन्न बना लिया है। पाककन, यीर, योनीय हीपुन्ना, यान्तेरिया, मोमु-दाविया, मियर, पाविसीनिया, न्युविया, त्रिविया, अरब, मेघोपटेमिया, सिरिया, साइलिसिया, पासेस्तिन, इस-साइनाय, अष्टाकान, आमान, जर्जिया प्रभृति स्थानवासी अधिकांश व्यक्ति इस समाज में शामिल हैं। यह समाज लोग शाखा में बटा है। उनमें १५ कनस्तान्तिनोपल के धर्मगुरु, २५ कीकराज और २५ शाखा एनीज़ार के अधीन हैं।\*

\* कर्तुन केरियो में इनकी वही कर्मकाण्ड ईसाई शाखा के लक्ष्य है।

किन्तु पोप की धर्मप्रणाली पर गहवर्ष पड़ा था। ६०८ ई. में गताष्ट्र के मध्य भाग में (८६२ ई.) पोप निकोलास ने केरुसलम के धर्मगुरु फोटिउस को (Photius) अपने समाज से निकाल दिया। फोटिउस ने उसी कारण एक साधारण धर्मसभा लगायी। इस सभा में रोमक-समाज के प्रवर्तित कई मतपर विचारकाय चारुत हुआ था—

१५—रोमक-समाज के मत में ईश्वर और तत्पुत्र ईसाई दिव्यात्मान अवतरण किया है। किन्तु धीक-समाज इस बात को नहीं मानता। इसकी मतानुसार दिव्यात्मा एकमात्र ईश्वर में ही प्रतीति होता और तत्पुत्र कहाता है अथवा ईश्वर के पुत्र ईसा में ही दिव्यात्मा देखाता है।

२५—याज्ञक विवाहादि सांसारिक धर्म समाज न सकेंगे, केवलमात्र ब्रह्मचर्य को पकड़े रहेंगे।

३५—पुरोहित दौघा के बाद किसी व्यक्ति का धर्मसंस्कार कर न सकेंगे।

इसी प्रकार कई मतविरोध रोम और कनस्तान्तिनोपल का धर्मसमाज घुसका हो गया। फिर ८६८ ई. में सम्राट बैसिन्स ने एक सभा लगा उभय सम्प्रदाय के मध्य शान्ति और एकता को स्थापन किया था। सर्व समाज का शीर्षमान रोम रहने और कनस्तान्तिनोपल अधीन बनने से पोप के लिये कार्य-कलाप पर हस्तक्षेप करने की विरोध अथवा विधा पड़ने लगी। पोप के गर्भ और भीदत्व से धीरे धीरे धीक ईसाइयों का मन अशांति हो गया था। मियका १०५४ ई. में कनस्तान्तिनोपल के धर्मगुरु माइकेल केरुलरियास ने (Michael Cerularius) ईसा को शत्रु धारण करने के लिये ग्रेग भोजपर्वको (Euchari-st) फामिस रोटी के (Unleavened bread) व्यवहार, रविवार की किराकसापक अनुष्ठान, शनिवार को उपवास के शमकाय और यज्ञदियों के माघ एकादश वास की बात उठा विवाद बढ़ाया। इसी समय पोप ६५ सिपोन केरुलरियास को धर्मभ्रष्ट किया और समस्त धीक धर्मप्रणाली को मिथ्या कह दिया। परिणाम पर उन्होंने निज दूत द्वारा साफ़ा-साफ़ाये

धर्मगुरुको पदसुगत किया। इसमें ग्रीक विद्वानसमे जलने लगे थे। वस! चिरकालके लिये रोमक-समाजसे ग्रीक-समाज स्वतन्त्र हुआ।

ग्रीक समाजके लिये ईसायियोंकी निम्नलिखित व्यवस्थाके वशीभूत हो चलना पड़ता है,—

१. पोपका प्राधान्य कोई न मानेगा। ग्रीक ईसाई रोमकसमाजको यथार्थ काथोलिक समाज न समझेंगे।

२. तीन वत्सुरसे न्यून वयस रहते पुत्रादिको दोचा देना नियमविरुद्ध है। फिर अष्टारह वत्सुर तक दीक्षा दे सकते हैं। तीन बार जर्दन नदीका जल मल्ले पर डिङ्क देनेसे ही दीक्षा हो जाती है।

३. ईसाई समिथ भोजपर्वमें (Lord's Supper) रोटी और शराब रहना चाहिये। दीक्षाके पीछे ही पवित्र भोज-सम्बन्धीय द्रव्य पुत्रादिको देना पड़ता है।

४. रोमक समाजकी भांति पापका प्रायश्चित्त करनेकी कोई सुझा निधारित नहीं।

५. रोमन काथोलिकोंके मतसे देह छोड़नेपर पाप-चालनके लिये जो स्थान होता, उसे ग्रीक समाज नहीं मानता; तथा मृतके शेष विचारसे कल्याण होनेकी भावनापर ईश्वरकी उपासना करता है।

६. ईश्वर और मनुष्यके मध्यस्थ समझ ग्रीक ईसाई पुण्यात्मा साधु (Saint) लोगोंको पूजते हैं।

७. रोमक समाजका धर्मसंस्कार (Confirmation), विपद्जनक रोगमें पवित्र तैलस्नान (Extreme unction) और विवाहबन्धन (Matrimony) छोड़ा गया है।

८. चुपके चुपके पाप मान लेनेको ईश्वर आदेश नहीं देता।

९. ईसाकी मृत्युसे पूर्वका भोजपर्व (Eucharist) धर्मकाण्डमें गिना नहीं जाता।

१०. रोगी एवं वसिष्ठ व्यक्ति उभय भोजके शंशका अधिकार रखते हैं। किन्तु जो पुरोहितके (Confessor) निकट पापको खोकार करता है, उसे उक्त शंश बांटकर देना नहीं पड़ता। क्योंकि धर्मविज्ञाको व्यक्ति मात्र इस भोजका शंश पानेके उपयुक्त होते हैं।

११. केवल एकमात्र ईश्वरमें ही दिव्यात्मा आबिभूत होती है।

१२. अदृष्टवाद पर विश्वास रखना चाहिये।

१३. गिर्जामें ताम्र एवं रौप्यके फलकपर मेरी और उनके पुत्र ईसाकी प्रतिमूर्ति खोदाकर रखना ग्रीक समाजका मुख्य कर्तव्य है।

१४. धर्मालयमें नियुक्त होनेसे पूर्व पुरोहित विवाह कर सकते हैं। किन्तु विधवा-विवाह करनेपर कोई याजक बन नहीं सकता।

१५. कितने ही पर्वके दिन उपवास करना चाहिये।

१६. मृत्युके पूर्वभोज (Lord's Supper) की-रोटी और शराब ईसाके मांस एवं रक्तका रूपान्तर समझी जाती है।

१७. गिर्जामें किसी प्रकारका वाद्ययन्त्र आवश्यक नहीं। केवल गानसे ही उपासना होती है।

१८. यहूदियोंके पेंटेकोस्ट (Pentecost) पर्वपर छुटने टेक भजना और चपर मकल हो ममद खड़े होकर उपासना करना पड़ती है।

१९. सभी को कृग्र पहनना चाहिये।

२०. स्त्री-पुरुष उभय ब्रह्मचर्य चरितम्वन कर सकते हैं।

तुर्कीराज्यके अधीन घोसरान्य जगहपर यह धर्म-समाज अतिप्रचलित हो गया था। उस समय कनस्तान्तिनोपलके धर्माचार्य ही ग्रीक और रूसी समाजके दक्षपति बनें। पीछे पीटर दी ग्रेटने (Peter the Great) यह प्रथा उठा डाली। फिर जार द्वारा निर्वाचित धर्मसमितिके इस राज्यके धर्मसमाज-का कार्य चलाया। १८२८ ई०को स्वाधीन होनेपर ग्रीसके सभापति कापोदिस्त्रियसने नूतन राज्यकी भांति समाजकी भी व्यवस्था कर लिया था। राज-कल समग्र घोस राज्यका धर्मकार्य विपद् दम विगम चलाते हैं।

धर्मविषयमें पोपका एकाधिपत्य मान और अपने अपने समाजका कार्यचलावादि पालकर जो सम्प्रदाय रोमक समाजका प्राधान्य खोकार करता है, उसका नाम 'दो यूनाइटेड ग्रीक चर्च' (The United Greek Church) पड़ता है।



चर्मनी समाज

ई०के २९ गताब्दको चर्मनिया राज्यमें ईसाई धर्म पड़ने सुना था। उस समय मेहजनेश नामक एक व्यक्ति विद्यमान रहे। किन्तु लोग ईसाई धर्मको अधिक मानते न थे। २०१ ई०के समय सेण्ट ग्रेगोरीने धाकर चर्मनीराज निरिदतगकी ईसाई धर्मको दोषा दो। उसी समयमें चर्मनीमें ईसाई धर्म प्रचल पड़ा है। ई०के ७वें गताब्दको चर्मनी भाषामें बाइबिलका अनुवाद हुआ। ईसा मसीहकी दो प्रकृति पर गहवड़ पड़नेमें चर्मनियोंने काननियन-महासभाका आदेश न धन एक प्रकृतिवादोका पक्ष पकड़ा था। फिर चर्मनी-समाज प्रत्यक्ष हुआ और ग्रेगोरीके कारण प्रथम नाम ग्रेगोरीय (Gregorian) पड़ा। कुछ काल-तक इस समाजमें ज्ञानतत्त्वपर धीरतर आन्दोलन रहा। ई०के १२वें गताब्दको चर्मनी ईसायियोंमें 'क्ला' (Klah) नामक एक महाधामोने जन्म लिया था। उनके सजल आध्यात्मिक शक्तोको चर्मनी प्रति समादरकी दृष्टिमें देखते हैं। इस समाजके लोग हमेशा रोमक-समाजसे घुसा करते हैं। जब इससम धर्मकी रचनेमें चर्मनीमें वजी, तब चर्मनी समाजने गुरोपके राजगवते महाधामा देनेकी कही। उसी समय पर पोपने कई बार (११४५, ११४९, १४४० ई०) चर्मनियोंको रोमके धाममाघोन बनानेकी चेष्टा की थी। चर्मनीके कितने ही सम्मान व्यक्तिय प्राप्त भी हो गये। किन्तु जनसाधारणका मनोभाव किसी प्रकार न बदला। इसपर पोप (१२ग) ग्रेगिडिकने चर्मनी-समाजकी तीस सभासोचना कर ११० दोष देवाये थे। उसी समय कितने ही चर्मनी रोमक समाजमें मिल गये। इसीमें उन्हें संयुक्त चर्मनी (United Armenians) कहते हैं। इस मिलित समाजके लोग आजकल पारस्य, रुस, मार्मोयेन, इटली, पोसेण्ड प्रभृति स्थानोंमें रहते हैं। ई०के १०वें गताब्दमें सुमनसामोके प्रथम आक्रमणसे बहुतसे कोमोने बाध हो इससम धर्म पकड़ा था। फिर भी अधिकांश चर्मनी आजकल पूर्वमत और विस्वासको बचाते थसे आते हैं।

चर्मनी समाज ईसावर एक ही प्रकृतिका आरोप करता है। उसके मतमें केवल ईश्वर ही दिव्यात्मा (Holy Ghost) जे अवतरण किया। दीक्षाके समय मृत्युपर तीन बार जन किर्कुर्मा-पड़ता है। ईसाके सगिष्य मोनोहेगक पर्वपर सबको ध्यानि गताम और पावरोटी देनेमें पड़ते गराबमें पावरोटी सुवाधो जाती है। याजक, पुरोहित प्रभृति धर्माध्यापक की मरने-पर तेज मगानेका अधिकार रखते हैं, दूसरे नहीं। ईसाई महापुरुष भी चर्मनी ईसाई समाजके उपासक हैं। ये लोग अधिक धर्मात्मक नहीं मनाते, फिर भी लोक समाजकी उपेक्षा अधिक उपवास करते हैं। पुरोहित एकवार विवाह कर सकते हैं। रुसाधिकृत चर्मनी परिकान नगरके निकट एसमियो-दजिम नामक प्रायममें प्रधान धर्माचार्य रहते हैं। यह स्थान चर्मनी समाजका महातीर्थ है। प्रत्येक चर्मनी ईसाईको जीवनमें एकवार इस महातीर्थका दर्शन करना पड़ता है।

सीटेलाय बन्धाराव।

ई०के १६वें गताब्दमें यह सम्प्रदाय उभरा है। इस सम्प्रदायके प्रभुदयसे पूर्व पोपने चर्मनीको समस्त ईसाई जगत्का अधिपति बताया था। जहाँ ईसाई न रहते, वहाँ पोपके मतसे जन-मानवशून्य बन गे। वह ईसाई समाजके शीर्षस्थानपर बैठ बाइबिल और ईसाई मतके विवरण अनेक अध्याय-कार्य करने लगे। इसपर धार्मिक ईसाई माने उनसे मत ही मत अत्यन्त विरक्त हो गये। किन्तु प्रकृत पराक्रान्त पोपके विवरण बात कहनेका साधन किसीको न था। अनेक लोग पोपका अत्याचार सब और मुख बन्दकर रह न सके। १५१० ई०में महाका गार्डिन-नूधरने समाजके संस्कार करने पर कसर कसो। वे चर्मनीके अन्तर्गत बिटेस्वर्ग नगरमें पुनर्जन्मके प्रधान अध्यापक हो गये। उसी समय तेजस नामक एक ईसाई उदासीन बिटेस्वर्गमें जा पड़े। ये साधारणको पोपका मुक्तिपथ दे कर ठग रहे थे। धर्मोत्तर नूधरकी वह चन्दा न लगा। उन्होंने चर्मनी ८१ प्रधान मित्रीको तेजसकी गति रोकने पर रखा। तेजसने

पीठ देखायी। पोपने लूथरके विरुद्ध त्रयमासिक दण्डनियोग-पत्र भेजा था। किन्तु लूथरने पोपको न मान १५२० ई० की १६वीं दिसम्बरकी विटेम्बर्गके तोरणद्वार पर सबके समक्ष दण्डनियोगका पत्र जला दिया।

इसी समय पर स्विजरलैण्डमें कई भगुचर पोपका सुक्षिपत्र (Indulgences) बांटते थे। हिन्दुओंमें जैसे पापका प्रायश्चित्त करनेकी श्रृंखला देकर ब्राह्मण-पण्डितसे व्यवस्थाको लेना पड़ता, वैसेही रोमक-समाजमें उक्त सुक्षिपत्रका व्यवहार चलता है। उस कालमें अनेक ईसाइयोंको विस्वास था,—इस सुक्षिपत्रकी\* खरीदनेसे हमारे पापका प्रायश्चित्त होगा और पापका दुःख छूटाना न पड़ेगा। उस समय स्विजरलैण्डमें जुडङ्गकी नामक एक महापण्डित थे। वे सुक्षिपत्रके घोरतर विरोधी बने। लूथरकी तरह वे भी पोपके समाजका बन्धन एककाल ही तोड़नेकी चेष्टामें लगे थे। जूरिच, बर्न, बेमिल प्रभृति स्थानके लोगोंने उनका मत मान लिया।

इधर लूथरने जर्मनीके सत्रपदस व्यक्तिी सम्बोधन कर कहा,—“भाइयण। रोमके विपक्षमें खड़े हो आओ। यही प्रकृत समय है। घर घर क्रूय-लूथकी बातका ध्यान रहना चाहिये। भयङ्कर रोमक तुम्हें सभीकी खा डाला है। जगतके धनसे रोमक-भाण्डार भर गया है।” लूथरने रोमक-समाजके सात अङ्ग माने न थे। उनके मतसे धर्मकी दीक्षा, ईसाका सन्धिभोजपत्र\* और निग्रह स्त्रोकार, तीन ही ईसाई धर्मके प्रधान पङ्क्त हैं।

१५२१ ई० की ५म मार्चसे जर्मनीमें रहे। पोप पर वे कुछ भक्तिग्रहा रखते थे। रोमक-समाजके कष्टपक्षगणने लूथरका दोष देखा सम्राटकी भड़काया। सम्राट मजिस्ट्रारके विरोधी बन गये। उन्होंने लूथरके पुस्तकादि ध्वंस करनेकी आदेश दिया था। किन्तु राज्यके प्रधान प्रधान सचिव उससे

पसम्यत हुये। उनके परामर्शसे वारमस् नगरमें एक महासभा लगी। इस सभामें जर्मनीके सकल राजा और अध्यापक भा पड़े। संस्कारके विरुद्ध कितनी ही बातें निकली थीं। लूथर भी इस सभामें आये। सभाने लूथरसे कहा,—“तुमने रोमक-समाजको विरुद्ध जो आपत्ति उठायो, यह बहुत ठीक है। इस सुयोगमें परिवर्तन करो। तुम्हारा मद्देन होगा।” लूथरने निर्भीक विपक्ष उत्तर दिया,—“सच बात कहूंगा। प्राण जानें कोई क्षति नहीं। मैं ईश्वरके आदेशसे बंधा हूँ। मेरे हृदयका बलवान् विश्वास जबतक भ्रान्त प्रमाणित न होगा, तबतक रोमक समाजका गौरव कैसे समझ पड़ेगा।” उनकी यह बात जर्मनीमें सर्वत्र चल पड़ी। विपक्षने लूथरके प्राण लेनेका बीड़ा उठाया था। किन्तु साक्सो-राज फ्रेडरिकने सत्परामर्शसे लूथर कुछ दिन छिपे रहे। उसी समयपर साक्सनीमें सर्वत्र उनका मत सादर माना गया। इड्लेण्ड\* और डेनमार्कके अधिपति तथा प्रजावर्ग भी समाज-संस्कारके पक्षपाती हुये थे। डेनमार्कके राजा लूथरका एक मित्र बुला निज राज्यमें यह गया मत चलाने लगे।

१५२२ ई० की लूथरने मेलान्थन (Melancthon) के साथ बाइबिलके ग्रन्थभाग न्यूटेस्टामेंट (New Testament) की अनुवाद कर छपाया था। अनुवाद देखकर लोग चकराये। उन्होंने समझ लिया—“पोपके नियमने ईसा मसीहका मत सम्पूर्ण विभ्रित है। लूथर जो मत चलाने, उसीकी यथार्थ ईसाका मत मानने हैं।” फिर जर्मनीके सत्पण्डितने प्रकाशरूपसे रोमका धर्माभ्यासन छोड़ा था। जर्मनीके लपकने धर्मके निये पक्ष उठाये। जर्मन राज्यमें सर्वत्र घोरतर गुद चलने लगा।

१५२३ ई० में फ्रान्स-राज फ्रांसिस्की भगिनो मार्गारेटने नूतन मतका पक्ष लिया और फ्रान्स-राजके नाजा स्थानोंमें बहुतने लोगोंने इस मतको ग्रहण किया। फ्रांसराज प्रथम संस्कारके पक्षपाती

\* इस दिनमें जैसे बस एवं अधिकांश पापके अनुसार चर्च लगाकर प्रायश्चित्त करना, वैसीही पोपका सुक्षिपत्र खरीदनेमें विभिन्न व्यवस्थाएं पायी जाती हैं।

\* डिनने की शब्दोंके मतानुसार १५११ ई० की फरवरी २६ दिनांक (Waldse) के इतिहास अनुसार लिखा है।

स्नानोमें स्नानका मत पड़ा। चनेक मोचजातिको चनेमें ईसाई धर्मकी दीक्षा दे दी। किन्तु हिन्दुस्थानमें ईसाई धर्मका आदर बढ़ा न था। क्योंकि मराठोंके भयमें ईसाई पास न फटकें। राज्य कम्पनीके हाथ जाते भी वहीसे कोई ईसाईधर्म-प्रचारक इस देशमें घुसने पाया न था। राजतन्त्रका नियम रहा—कोई यूरोपीय कम्पनीके अधिकारमें धर्मप्रचार कर न सकेगा। क्योंकि उसमें देशीयजनके धर्मपर आघात पड़ेगा और सकल अधिवासीके विगड़नेमें राज्यमें विस्तार उत्पन्न छड़ेगा।

१८११ ई०को बंगरेज-सरकार ईसाई धर्मप्रचारक पर मदद हुई। मिसनरियोंको हिन्दुस्थानमें धर्मप्रचारकरनेका अधिकार मिल गया। उनके अध्यक्ष वसायमें बस्य दिनमें ही नीच श्रेणीके चनेक हिन्दु-म्यानिश्योंमें ईसाई धर्म पकड़ा। जेयको ईसाई-सहिना मिथाके पीछे चनेक सम्प्रदाय व्यक्तिके घरमें घुस ईसाई भानोक डालने लगीं। चनेक हिन्दु-म्यानिश्योंमें अपनी प्रकृत जातीयता खो दी। धीरे-धीरे उस मिथाका स्त्रोत सूँटा। बासकीर माइबने लिखा है—इस उस मिथाको पाकर फिर कोई ईसाई होना नहीं चाहता। ईसाई भाव रखते भी बहुतसे लोग धर्ममें नास्तिक रहते हैं।

१८८४ ई०को बंगला सुद्रायन्त्रके प्रवर्तक केरो हाइस इस देशमें धर्मप्रचार करने पाये थे। उन्होंने समाधारण अध्यक्षताय एवं मद्रिच्युताके गुणसे चनेक विपद् पापद् मूढ़ और सुन्दरजनमें रज धमम्यकीर्णको गुप्त भावने दीक्षा दी। किन्तु प्रकाश भावसे कम्पनीके राज्यमें उन्हें आश्रय न मिला था। जेयको दसैण-वासिगणके अधिष्ठित श्रीरामपुरमें ठिकाना लगा। श्रीरामपुरमें ही मार्चमास और बार्ड नामक दो विख्यात पण्डित भारतकी ज्ञाना भाषाओंके ज्ञाननेजाने केरी माइबने मिल गये। इसी व्यापार उक्त बापटिड मोटेहाय्को उत्साहमें प्रथम बंगला सुद्रायन्त्र जमा था। १८०० ई०से मार्च मासकी १८वीं तारीखको बार्ड हाइबने अपने हाथसे प्रथम बंगला पत्तर संजारे। हाजिर, ईसा और पत्तर संजारे ईसा।

ईह—भादि० पाक० एक० सेट भात। यह सेटा और यह सधमें पाता है। म'पुर्णक रहनेमें ईह सकमेंक है। ईह (सं० त्रि०) सखारक, कोमिगहरनेवाला। (पु०) २ सेटा, तदधीर।

ईहग (चिं० पु०) इस्लामुमार चनेवाला, कवि, गायर।

ईहमान (सं० त्रि०) सेटित, तदधीर सहानेवाला।

ईहा (सं० स्त्री०) ईह भावे पा-टाप। १ छपम, कारवार। २ बाब्दा, छादिम। १ सेटा, तदधीर।

"इच्छा मज्जे काम ईधराली विवर्ते।" (राजदण्ड)

ईहातः (सं० चक्ष०) परिश्रमपूर्वक, जोरने।

ईहामग (सं० पु०) १ लोक, भेड़िया। पर्यायमें इसी कोक, हक, परस्त्राग और वनकुकर भी कहते हैं। ईहामगकी आकृति बिलकुल कुत्ते-जैसी होती है। वसे पीत और नील पर्याप्त पिङ्गल रहता है। यह हरिण प्रभृतिको मार सकता है। २ एक नाटक विमोच। मृगकी भांति नायकके नायिकाको दूक सेनेमें यह नाम पड़ा है। ईहामग नाटक और चहने विविष्ट होता है। इसमें प्रसिद्ध और चमत्तित उभय रतिवृत्त देखिये जाते हैं। ईहामगमें मनुष्य पदया देवता नायक और प्रतिनायक दोनों हो सकते हैं। नायक मृदभावे नायिकाको दूकता है। नायकको मनुष्य और नायिकाको देवता समझते हैं। नायक उक्त गुणगुण और नायिका मृदभावे मनुष्य रहती है। वसात्कार वा जलना द्वारा भी नायिकासंयद लगता है। योड़ा बहुत उद्धाररम होना पावगत है। प्रतिनायकको जो लोप-उपजता, उसे किसी कार्य-क्षेत्रमें निष्ठान करता है। मझाकाया पद पर्यन्त है। एक चंडमें देवविषय रहता है। दिव्यहेतु युद्ध पर्यन्त करते हैं। बिना इसके पश्य दो नायक भी रहते हैं। ईहाघिन् (सं० त्रि०) किसी वस्तुको चेष्टा करने-वाला, जो दोस्त दूकता हो।

ईहागक, ईहग ईको।

ईहित (सं० त्रि०) ईहक। १ सेटित, कोमिग किया गया। २ सपेक्षित, खाया गया। (क्रि०) १ उद्योग, तदधीर। २ रतिन, पात।

उ—(इसल उकार)—१ स्वरके मध्य पञ्चमवर्ण। इसके उच्चारणका स्थान ओष्ठ है। ओष्ठमात्रसु। (गिवा) इत्यस्त्रोमें उकार-लोमरा है। इत्य, दीर्घ, पुन, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित भेदसे यह भी प्रकारका होता है। फिर प्रत्येक अनुनासिक और समनुनासिक रङ्ग-नेसे इसके अक्षररूप भेद होते हैं। यह स्वयं कुण्ड-लनी है। उकारका वर्ण चम्पेके फल-जैसा होता है। इसमें पञ्चदेव और पञ्चमात्र रहते हैं। उकार चतुर्वर्गका फल देनेवाला है। (चामधेनुगन्ध)

विशेष—जिह्व—जिह्व, अधः और मध्यस्थानमें वाम दिग्गामी तीन क्लृप्तरूपा ध्वनिसे यह बनता है। इन रेखावेमें ध्वनि, वायु और इन्द्र रहते हैं। भावामें गतिरुका वाम है। (वर्णशतकम्) भाटकान्याससे इसका स्थान दक्षिण कर्ण पड़ता है। उकारको गङ्गा, वतनाची, शून, कल्याण, चमरीश, दक्षकर्म, पङ्ककर्म, मोहन, शिव, वष, प्रसु, धृति, विष्णु, विश्वकर्मा, महेश्वर, शत्रुघ्न, चटिका, पुष्टि, पञ्चमी, वज्रवामिनी, कामध, कामना, ईश, मोहिनी, विप्रहृत्, मही, उठछ, क्लृप्ता, योत्र, पारदीपी, वष और इर भी कहते हैं। २ भादि० बाव० अक० धनिट् धातु। यह शब्द कारनेके अर्थमें आता है। (अथ०) उ-क्लिप् तुगभावः। १ छि० य। सुमिथे। ४ कोपप्रकाश। देखेने। ५ अनुकम्पा। रहस्य। बचावो। ६ निवीग, राय। कहिये। ७ पदपूरण। लुप्तलोका पुराव। ८ कोपयुक्त कथा। शुभकी बात। ९ अङ्गीकार। मञ्जरी। १० ठीक। १० अत्र। सवाल। ११ का। १२ वितर्क। मछल। १३ विमर्श, चक्रमोच। १४ धाय। १५ विकल्प। गक। धायद। १६ सम्भावना। इसकान। हो सकता है। "अथिः सतीतां व मे डुं व बाः।" (अथ १११०१५) "वर्धति माता मयकी निविता।" (इतर) (उ०) अत्र १५१५ मित्र। १६ वाच। १७ ब्रह्मा।

उ' (हिं० अथ०) १ क्या। क्यों। २ नहीं। ३ परे। कारणवश मुख न खुलनेपर वह अथ्य आता है। उ'कन (हिं०) उड़च देतो। उ'कीत (हिं० पु०) रोग विषय, एक बीमारी। इसमें प्रायः वर्षाकालपर पड़की चङ्गुनि पिडिका पड़ने से सङ्गने लगती है। उ'खारी (हिं० स्त्री०) इच्छुचैत, जलका खित। उ'गनी (हिं० स्त्री०) गाड़ी भोगनेका काम, पहि-एमें तेजकी दिवाइ। इससे पहिया गूबं धूमता है और बैलको गाड़ी खोचनेमें ब्यादा और नहीं लगाना पड़ता। उ'गनी ॥ होनेसे पहिया बिगड़ जाता है। गाड़ीवान् जोतनेमें पहले उ'गनी कर लिया करते हैं। इसमें प्रायः रेड़ीका तेज लगता है। उ'गनाई (हिं० स्त्री०) चङ्गुनि निवीजन, उ'गनी चलायनेका काम। उ'गलाना (हिं० क्ति०) चङ्गुनि चलाना, उ'गनी करना, उ'गलीसे हथारा लगाना। उ'गली (हिं०) चङ्गुनि, चङ्गुत। चङ्गुनि देतो।

"सोकी उ'गलिया बगल नहीं।" (भीमोडि)

तर्जनीको कलमेकी। उ'गली, मध्यमाको छारन, अनामिकाको पूजाउ'गली और कनिष्ठाको कामकी। उ'गली, पुंगलिया या चिटली उ'गली कहते हैं। उ'गलीकी नोक (हिं० स्त्री०) चङ्गुनिको मिया, चङ्गुतका और। उ'घाई (हिं० स्त्री०) जिद्रा, सुफी, कपकी। उ'चन (हिं० पु०) १ उदचन, चपरो पिंवाव। २ अदवान। यह रङ्गी खाटमें मोपेकी और रिह स्थानमें जगती है और बुनावटको पायतानसे मिला खींच देती है। इससे खाटका औसापन निहल जाता है।

उचना (हिं० क्रि०) उदघन करना, ऊपर उठाकर  
 खींचना, पदपान लगाना।  
 उचनाय (हिं० पु०) वसविमेष, एक कपड़ा।  
 यह एक प्रकारका चारपाया होता है।  
 उचाई (हिं० स्त्री०) १ उचमा, बुनटो। २ विभि-  
 दता, बड़ाई।  
 उचान (पु०) उचान देवी।  
 उचाना (हिं० क्रि०) उच बनाना, बुनटो बघाना,  
 लंचा करना।  
 उचाव (पु०) उचान देवी।  
 उचाम, उचान और उचान देवी।  
 उचोमी (हिं० स्त्री०) १ भागी, होनेदार। २ प्रहार, मार।  
 उचरी (हिं० स्त्री०) गन्ध, वासुधोरा।  
 उचर (हिं०) उचर देवी।  
 उच (हिं० अय०) १ नहीं। दूर हो। २ दुःख।  
 चक्षुषी। हाय।  
 उचना (हिं०) उदय होना, निकलना।  
 उचाई (हिं० स्त्री०) उदय, निकाल।  
 उचाना (हिं० क्रि०) १ उदय करना, जानना।  
 २ प्रहारय उदयत होना, मारनेकी उठना।  
 उचर (हिं० वि०) उचर न रचनेवाला, जो कर्म  
 दे चुका हो। "ननु यदि कति उचर करीरे।"  
 महर्षि उचर कीरे उचर करीरे" (उचकी)  
 उचपन (हिं० पु०) सुपुङ्गव पुण्य, सुपुङ्गवका फूल।  
 उचपना (हिं० क्रि०) १ निकल जाना, उटना।  
 २ ऊपर पड़ना, पतं छोड़ना। ३ भागना, दूर होना।  
 उकटना (हिं० क्रि०) १ उचाड़ना, तोड़ डालना।  
 २ भेद लेना, पृथक्। ३ चन्देय करना, टूटना।  
 ४ मरवा दिना, याद कराना। ५ चयमान करना,  
 गामी देना। ६ सुपुन करना, डाका डालना, मूटना।  
 उकटा (हिं० वि०) १ छतका पुनः पुनः चरप  
 दिखानेवाला, जो दूसरेकी किसी चक्षुषीकी याद  
 कराता हो। "कटेकी चरि, उचरकी = चरि।" (नीलेश)  
 २ सुपु, चमोना, जलका। विगत विपयका  
 पुनः पुनः सविहार प्रकाय उकटा-पुराण या उकटा-  
 मेची कहाता है।

उकठना (हिं० क्रि०) गुच्छ होना, घुपना।  
 उकठा (हिं० क्रि०) गुच्छ, सूडा, जो सगा न हो।  
 उकठापन (हिं० पु०) गुच्छ हो जानेका भाव,  
 सुखेकी दानत।  
 उकड़ (हिं० पु०) सुदा विमेष, एक बैठक। इसमें  
 घुटने मुड़कर तनके भूमिपर जम घोर चूतड़ पड़ि-  
 योँसे जम जाते हैं।  
 उकड़ बैठना (हिं० क्रि०) घुटने ऊपर उठाकर  
 पड़ियेके बन बैठना।  
 "बापा बापु' जल निबन्ध' उकड़ बैठ पडाउट नाई" (कुरर)  
 उकत (हिं०) उचि देवी।  
 उकताना (हिं० क्रि०) १ घुषा करना, घक जाना,  
 लव उठना। २ मसुद होना, पाघुदगी पाना, जक  
 जाना। ३ विह्वल होना, घबरा जाना।  
 उकताव (हिं० पु०) घुषा, दसि, विह्वलता, मफरत,  
 मसुदगी, घबराहट।  
 उकति (हिं०) उचि देवी।  
 उकनाट (सं० पु०) पीत-रक्त-वर्ण चोटक, पीला-  
 काल घोड़ा।  
 उकलयेक-बदाय' जिनेके चमर्गत खोरीका एक  
 प्राचीन नगर।  
 उकलना (हिं० क्रि०) घुपक पड़ना, चलग होना,  
 तह छोड़ना, उधेड़ने पाना।  
 उकलवाना (हिं० क्रि०) घुपक कराना, तह छुड़-  
 वाना, उधेड़वाना।  
 उकलाई. (हिं० स्त्री०) समग, फै, निचलाई।  
 उकलाना (हिं० क्रि०) १ उकटाना, घबराना।  
 २ न्यास होना, उकना। ३ चयान्त पड़ना, विधेन  
 होना। ४ रोमपक्ष बोध होना, बीमार मानूम  
 पड़ना। ५ समग करना, पोकना।  
 उकलैसरो (हिं० वि०) उकलैसरने सम्मर रक्ष-  
 वाला, उकलैसरका बना हुआ। उकलैसर दक्षिण  
 विद्यमान है। जो खागुन उकलैसर पर मरता है, वह  
 भी उकलैसरो हो जाता है।  
 उकलैद (Juclid) — ई००० पक्षी दसोय शताब्देके  
 एक यनामी गणितज्ञ। इनके जन्म-मृत्यु, ज्ञातयिता,

गिच्छक और चांदिनिवासका विषय प्रज्ञात है।  
कोई-कोई इन्हें भूलसे सोकृतिस् के शिष्य मीगारेण्डिस  
ममभते हैं। मिथके राजा १५० टलेमीके समय  
( ई० से प्रायः द्वाइं तीन सौ वर्ष पहले ) ये विद्यमान  
थे । उक्लैदेन भलेकजुन्दियाकी सुप्रसिद्ध गणितपाठ-  
शाला खोली थी। ये मृदुस्वभाव, निष्कल और गणित-  
के प्रकृत विद्यार्थियोंपर कृपाशु रहते थे। ज्ञानिमि देखो।

उक्तवच ( हि० ) उक्तवच देखो।

उक्तवा ( हि० क्रि० वि० ) प्रसुमानसे, अन्दाज़न,  
मीट्टे हिसाबमें।

उक्तनगा ( हि० क्रि० ) १ बाहर निकलनेकी चेष्टा  
करना, भगड़ना। २ फूटना, उल्लसना, फूटना, निकल  
पड़ना। ३ उत्तेजित होना, जोशमें पाना, उभरना।  
४ उधड़ पाना, टूटने लगना।

उक्तनि ( हि० स्त्री० ) उत्तेजना, उभार, उबराहट,  
उधड़, टूट।

उक्तनवाना ( हि० क्रि० ) बाहर निकालनेकी चेष्टा  
करना, भगड़ाना, निकलवा देना।

उक्तसार् ( हि० स्त्री० ) निकलवा देनेका काम,  
उभराई, निकसार्, उठाई।

“दमकीका पुनश्च टका उक्तसार्।” ( जोशोक्ति )

उक्तसाना ( हि० क्रि० ) १ उठाना, उठाना, ऊँचा  
करना। २ घागे बढ़ाना, सुलगाना, भड़काना।  
३ हाँकना, चलाना। ४ प्रतीभन दिखाना, बरगलाना,  
दिखत देना। ५ उठाना, दूर करना। ६ उत्तेजित  
करना, उभारना। ७ छेड़ना, जलाना।

उक्तसौं ( हि० वि० ) उठता हुआ, जो उभर रहा हो।

उक्ताव ( सं० पु० ) गद्ग, गूध, गीध। इसकी दृष्टि  
बहुत तीव्र होती है। सुनते हैं—उक्ताव या शार्दूल-  
की छाया पड़नेसे दीगदरिद्र भी रात्ता बग जाता है।

उक्ताराम ( सं० त्रि० ) उक्तारको भयमें रखनेवाना,  
जिसके पक्षीरमें उछर्फ रहे।

उक्तालना, उक्तेलना देखो।

उक्तासना, उक्तासना देखो।

उक्तासी ( हि० स्त्री० ) १ उदघाटित होनेकी स्थिति,  
खुद जानकी हालत। २ उत्सव, खुशी, फुरसत।

उक्तिङ्गा, उक्कनगा देखो।

उक्किङ्गा, उक्कनगा देखो।

उक्किनुवाना, उक्कनवाना देखो।

उक्किसमा, उक्कनगा देखो।

उक्कीरना ( हि० क्रि० ) १ खनम करना, खोदना।

२ उखाड़ डालना, नोच लेना, ठकेल देना।

उकुण ( सं० पु० ) १ गिरःकीट, सूँ, चित्तड़। २ मत्-  
कुण, खटमल।

उकुति ( हि० ) उक्ति देखो।

उकुति-लुगुति ( हि० ) उक्तिलुगि देखो।

उकुद, उक्कू देखो।

उकुसना, उक्कनगा देखो।

उक्केलना ( हि० क्रि० ) निकाना, उधड़ बुन करना,

उचाड़ डालना, बकना निकालना।

उक्केला ( हि० वि० ) १ उधेड़ा, उचाड़ा, निकाला।

( पु० ) २ कम्पनका वाता।

उक्कीय ( हि० ) उक्कीय देखो।

उक्कीया ( हि० ) उक्कीय देखो।

उक्त ( सं० वि० ) १ कथित, कहा हुआ। ( स्त्री० )

२ शब्द, वाक्य, सफुज, सुमला।

उक्तत्व ( सं० स्त्री० ) कथनका भाव, कहे जानेको  
हालत।

उक्तनिर्वाह ( सं० पु० ) कथनका पासन, बातका  
निशाह।

उक्तपुंस्क ( सं० स्त्री० ) शब्दप्रिय, एक सफुज।

जिस स्त्रीलिङ्ग शब्दका पुंलिङ्ग भी रहता है, वही  
इस नामसे पुकारा जाता है। ऐसे शब्दोंके चर्चमें  
सिवा स्त्रीलिङ्ग और पुंलिङ्गके दूसरा गेट नहीं  
पड़ता। जैसे शोभना शब्द उक्तपुंस्क है, किन्तु गद्गा  
शब्द नहीं।

उक्तप्रत्युक्त ( सं० स्त्री० ) वाक्य एवं वस्तु, बातोंकाप,  
सवालजवाब, गुप्तगूँ, कहासुनी, बातचीत।

उक्तवत् ( सं० त्रि० ) कथन कर चुकनेवाला, जो  
बोला हो।

उक्तवर्क ( सं० शब्द० ) कथित विषय भिन्न, कही हुई  
बातोंकी जोड़कर।

उच्चावाक्य (सं० त्रि०) १ मन्त्रादि दे चुकनेवाला, जो राय  
बता चुका हो। (स्त्री०) २ आदेश, हुक्म, आज्ञा।  
उच्चावृत्त (सं० त्रि०) कथित एवं चकथित, कहा  
चौर न कहा।

उच्चि (सं० स्त्री०) वाक्य, निर्देश, सुमना, इज्जदार,  
बयान।

उच्चोपसंहार (सं० पु०) अंतिम वर्षीय, सुखपूर्वक  
बयान, घोड़ेमें कही हुई बात।

उक्त्वा (सं० अथ०) कथन करके, कहकर।

उक्ष्य (सं० स्त्री०) १ वायव्य, सुमना, कहावत।

२ क्रियासंस्कारमें एक प्रकारका पठन वा उच्चारित  
पाठ। उक्ष्य माहाका एक अवयव है। यह प्रायः  
परिपाटी निर्माण करता और साम तथा यजुःके  
प्रतिकूल चलता है। मरुद् वा हृद्-उक्ष्य तीन  
श्रेणियोंमें पठनकी परिपाटी ठामता है। उक्त तीनों  
श्रेणियोंमें यक्षी ऋक् रहता, जो अग्निचयनके  
पक्षे मन्त्रपाठमें कही जाती है। ४ सामवेदका एक  
नाम। (पु०) ५ अग्निका एक रूप।

उक्ष्यपथ (वे० त्रि०) श्लोकीकी पत्रकी भांति  
रचनेवाला।

उक्ष्यपात्र (सं० स्त्री०) उक्ष्य पढ़ने समय चढाया  
करनेवाला पात्र वा तर्पणोदक।

उक्ष्यधत् (वे० त्रि०) उक्ष्यकी समर्पण करने वा  
चढ़ानेवाला।

उक्ष्यरत् (वे० त्रि०) उक्ष्यमें मिला दुपा।

उक्ष्यवर्धन (वे० त्रि०) प्रमंसागे प्रसक्त हो अपना  
बल बढ़ानेवाला।

उक्ष्यवाहम् (वे० त्रि०) १ श्लोक समर्पण करनेवाला।  
२ श्लोकका समर्पण पानेवाला।

उक्ष्यार्थमिन् (वे० त्रि०) १ प्रमंसा करनेवाला।  
२ उक्ष्य पढ़नेवाला।

उक्ष्यमप (पु०) उक्ष्यमप देवी।

उक्ष्यमम (वे० त्रि०) श्लोक कहनेवाला, जो प्रमंसा  
करता हो।

उक्ष्यमाग (स्त्री०) उक्ष्यमाग देवी।

उक्ष्यमद (वे० त्रि०) उक्ष्य करके श्लोक पढ़नेवाला।

उक्ष्यमद (वे० स्त्री०) प्रमंसा एवं प्रसक्तता।

उक्ष्यार्क (वे० स्त्री०) उक्ष्य एवं भजन।

उक्ष्याथी (वे० त्रि०) श्लोकका प्रेमी।

उक्ष्यायासा (वे० स्त्री०) पठन एवं प्रमंसा।

उक्ष्यिन् (वे० त्रि०) १ श्लोक पढ़नेवाला। २ विभक्त  
मात्र प्रमंसा या जाये वा (क्रियासंस्कारमें) उक्ष्य रहे।

उक्ष्य (वे० त्रि०) १ श्लोक वा प्रमंसा सुनानेवाला,  
जो प्रमंसा करनेमें निपुण हो। (पु०) २ प्रातःकाल  
और मध्याह्निक यज्ञका तर्पणोदक। ३ एक गोमयत्र।

४ प्रार्थना मार्गका एक संस्कार। यह उपोतिटोमका  
एक भाग है।

उक्तेद (सं० पु०) वमि, की।

उक्त्—आदि० पर० सक० भेद। यह निम्ननिम्न  
पदोंमें पाता है—१ पाद करना, २ विन्दु डालना,  
३ विखेरना, ४ परस्कार करना, ५ चढ़ाये होना,  
६ अपना बल बढ़ाना और ७ बलवान् बनना।

उच (सं० त्रि०) १ हड़ल, बढ़ा। २ हड़, माफ़।  
इस अर्थमें यह शब्द किसी-किसी योगिक पदके घोड़े  
लगता है।

उचच (सं० स्त्री०) उच भावे लुट्। मीचन, प्रीचन,  
छिड़काव। “उचचमीचचनम् उचचम्” (रघु ३।१०)

उचच्छायन (वे० पु०) उचच्छ का गोदापाय।

उचच्छु (वे० त्रि०) उचच्छकी भांति व्यवहार वा कार्य  
करनेवाला, धनकी सर्वा करनेवालाका अभिप्राय।

उचत्तर (सं० पु०) उच्य इति टट्। १ उचत्तरमेव  
लुट्। वा उचत्तर। १ छोटा उच, लडा खेल। २ महाउच,  
बड़ा खेल।

उचत्तरौ (सं० स्त्री०) उचत्तर-छोट। १ छोटी गाय,  
बहिया। २ हड़ गयी, बड़ी गाय।

उचन्, उच देवी।

उचरय (वे० पु०) पालन, बढ़ावा, बढ़ा।

उचरैवत् (वे० पु०) अप्रसक्त पण्ड, यथिया खेल।

उचा (सं० पु०) उच्य-उच्य-कनिन्। १ उच्य-उच्य-  
उच्य ३।१। १ उच्य, खेल, मीच। २ उच्यम, नामक  
छोड़वि। (त्रि०) ३ खेलक, मीचनेवाला। “उच्य-  
उच्यो उच्य देवी” (रघु ३।११)

उद्यान (वे० त्रि०) वृषभचक्र, बेलका गोश-  
खानियाला।

उद्याल (सं० त्रि०) १ त्वरित, फुर्तीला। २ अँठ,  
बड़ा। ३ कराल, कड़ा। ४ उत्कट, उदायना।  
(पु०) ५ धानर, बन्दर।

उद्यत (सं० त्रि०) उद्यत्-त। १ सिद्ध, सिंघा या  
मुसा हुआ। २ सित, लया हुआ। ३ गतिशाली,  
लाफतवर। ४ वृद्ध, पुराना।

उद्य-भूदि० पर० सक० सेट् धातु। यह गमन चर्यमें  
आता है।

उद्य (सं० त्रि०) उद्य-क। १ गमनकारी, चलने-  
वाला। उद्य-खन्-ड निपातनात् तत्सोप०। २ ऊर्ध्व  
दिक् खनन करनीवाला। (वे० पु०) ३ पात्र, बरतन।  
४ तिसरिके एकशय्यका नाम।

उद्यच्छिद् (वे० वि०) पात्र तोड़नेवाला।

उद्यटना (हिं० क्रि०) १ इतस्ततः पद पड़ना, अच्छी  
तरह चल न सकना, ठोकर खाना, खडखड़ा जाना।  
२ धिरकना, धीरे-धीरे चलना। ३ छुटकना, तोड़ लेना।

उद्यड़ना (हिं० क्रि०) १ निर्मूल होना, उपटना,  
जड़से टूट जाना। २ निकल पड़ना, अलग होना।  
३ टूटना, कटना। ४ छूटना। ५ स्थानान्तरित होना,  
जाह्र छोड़ना। ६ उद्घाटित होना, खुलना। ७ पतित  
होना, गिरना। ८ बिगड़ना। ९ बन्द होना।

१० बेतान गाना। ११ सम्मान खोना, इज्जत गंवाना।  
१२ बेपरवा होना, फिक्र न करना। १३ अप्रसन्न  
होना, बिगड़ पड़ना। १४ इताय होना, दिल टूटना।  
१५ बदलना। १६ बिखरना। १७ हटना। १८  
मिटना। १९ डटना। २० बाहर होना। २१ राह  
पकड़ना। २२ भागना। २३ सरकना। २४ लोप हो  
जाना। २५ खुदना। २६ गमन करना। २७ फूट  
पड़ना। २८ लड़ खड़ना। २९ हारना। ३० हाँपना।  
३१ रुकना। तीस भाषाको उद्यड़ी-उद्यड़ी मानते,  
सुई फेर सेनेको उद्येड़की सेना और दण्ड देनेको  
काम उद्याड़ना कहते हैं।

उद्यड़वाना (हिं० क्रि०) उद्याड़नेको आदेश देना,  
बन्धके द्वारा उद्याड़नेका कार्य कराना।

उद्यड़ाई (हिं० स्त्री०) उद्याड़नेका काम।

उद्यभोज (हिं० पु०) इक्षुवपनोत्सवका विभिन्न-  
सम्भार, जल बोनेकी जियाफत। कृषक इक्षु बोनेके  
प्रथम दिवस यह भोज देते हैं।

उद्यम (हिं० पु०) उद्य, ताप, गरमी, हारात।  
(स्त्री०) उद्यमा।

उद्यमज (हिं० वि०) १ उद्यज, गर्मिसे पैदा।  
(पु०) २ उद्यज जीव, गरमीसे पैदा होनेवाला कीड़ा।

उद्यर (सं० स्त्री०) १ चारभूमि, रैतीसी जमीन।  
२ चारवृत्तिका, गोरा। इनके उपर भी लिखते हैं।  
(हिं०) ३ साङ्गलपूजन, हलकी पूजा। यह कृष  
बोनेके बाद होता है।

उद्यरज (सं० स्त्री०) १ पांशुलवण, गोरा। २ पय-  
स्कात मीद, एक बीड़ा। ३ लवण, नमक।

उद्यरगा, उद्यरगादेवी।

उद्यराज, उद्यमीर देवी।

उद्यर्वस (सं० पु०) द्यविमिय, एक घास। यह बन्ध,  
हचिलनक और पशुके लिये सदा हितकर होता है।  
(राजविषय०)

उद्यस, उद्यरन देवी।

उद्यसना (हिं० क्रि०) खीसना, गम होना।

उद्यली (हिं० स्त्री०) उद्यूलस, हावन, कुंडी। ब्रह्मानमें  
यह पात्र काष्ठमय होता है। मध्यस्थमें एक हस्तके  
प्रमाण गढ़ा रहते हैं। इसी गढ़में चेल डाल और  
सुपलसे मार तुप सुड़ाते हैं। किन्तु हिन्दुस्थानि-  
योंके घरमें यह पत्थरकी होती, और जमीनमें गड़ी  
रहती है। "उद्यलीमें कुंज काच औरसे रत्न करना।" (मोक्षवि)

उद्यड़ाई (हिं० स्त्री०) कलकी सुवाई या खवाई।  
उद्या (सं० स्त्री०) १ रन्ध्रस्याली, देग, बटलोई।  
२ चूल्हा। ३ शरीरका अवयव, जिघ्रिका एक हिस्सा।  
(हिं०) उद्या देवी।

उद्याड़ (हिं० पु०) १ उद्यच्छिद्, शिपकनो, उद्याड़ने  
का काम। २ मज्जयुष्का जस्तसाधव, जुहतीका एक  
दांव। अपने माथ खड़नेवालेको फरर एकद कर  
ऊपर उठा भूमिपर पटक देनेका नाम उद्याड़ है।  
पियनता और निन्दाको उद्याड़-पद्याड़ कहते हैं।



उच्चाटना (हिं० क्रि०) १ निर्मूल करना, उच्चाटना।  
२ हिममिल करना, सोझना। ३ निकालना। ४ खान-  
पुग करना, हटाना। ५ चला करना। ६ चलावना  
करना, चलावना। ७ परिष्कार करना, सफा करना।  
८ चलावना। ९ भगाना, बिगड़ाना।

उच्चाट (हिं० क्रि०) निर्मूल करनेवाला, जो उच्चाट  
होता हो।

उच्चाटना, उच्चाटना देखो।

उच्चाटो (हिं० स्त्री०) उच्चाट, उच्चाटनी।

उच्चाट (हिं० पुं०) समीक्षा, जो करनेका काम।  
विश्वविद्यालय समीक्षाओं की उच्चाट-पुष्पाट  
करते हैं।

उच्चाटिया (हिं० पुं०) उच्चाटनका पाद्य, भात,  
मसुरका खाना।

उच्चाटो (सं० स्त्री०) देवीविगीत, जिगी देवताका  
नाम।

उच्चाट, उच्चाट देखो।

उच्चाटना, उच्चाटना देखो।

उच्चाटना, उच्चाटना देखो।

उच्चाटन (हिं० क्रि०) उच्चाटन करना, तगीर  
उत्तारना।

उच्चाट (वे० क्रि०) उच्चाटन संज्ञकम्, उच्चाटनम्।  
खानेपान, देवमें पका हुआ। यह मन्द मांसादिका  
विशेष है। "उच्चाटनं वदेत् विद्वान्" (बर्हस्पति)

उच्चाटनी (हिं० पुं०) एक किण्वकी रंगारी।

उच्चाटन (हिं० क्रि०) १ उच्चाटन करना, उच्चाट  
देना। २ उच्चाटन करना, उच्चाट उठाना।

उच्चाट (वे० पुं०) प्रसन्न दलपुत्र, जिसमें बहुत  
मियाही रहें।

उच्चाटना (हिं० क्रि०) बताना, बोलना, कहना।  
यह जिज्ञा दलाने बोलनेमें कहती है।

उच्चाट (हिं० क्रि०) उच्चाटन करना, निकालना,  
देख पड़ना।

"उच्चाटो हिमं नदीं दृष्ट्वा।

हिमं नदीं दृष्ट्वा हिमं दृष्ट्वा दृष्ट्वा" (दृष्ट्वा)

उच्चाटन (हिं० पुं०) पूर्ण, समाप्त।

उच्चाटना (हिं० क्रि०) १ उच्चाटन करना, उच्चाट  
बाहर निकालना, छूट देना। २ निराकरण करना,  
निकालना, फेंकना। ३ प्रत्यक्ष करना, पाप देना,  
फेंकना। ४ पूर्ण प्रकाश करनेकी छहर उच्चाटना कहते हैं।

उच्चाटना, उच्चाटना देखो।

उच्चाटना (हिं० क्रि०) १ उच्चाटन करना, उच्चाट  
या सुंछने बाहर निकालना। २ प्रत्यक्ष करना,  
पाप दिखाना।

उच्चाटना (हिं० क्रि०) उच्चाटना, पैदा करना, पलाना-  
पोषण।

उच्चाटना, उच्चाटना देखो।

उच्चाटना (हिं० क्रि०) वर्णन करना, कहना,  
बुनाना।

उच्चाटना, उच्चाटना देखो।

उच्चाटना (हिं० क्रि०) १ उच्चाटना, पैदा करना,  
निकालना। २ उठाना, टेपाना। ३ प्रत्यक्ष करनेकी  
दृष्टिको तानना, उठाना।

उच्चाट (हिं० पुं०) १ निठोवन, छूट। २ जल, पानी।  
जा जल कमजोर निठोवनकर एकत्र होता, वही उच्चाट  
कहता है। ३ निठोवन हुआ रक्त। ४ जलमें जल  
निकालनेका काम। जब जलमें जल कम हो,  
तब उही बढ़ानेके लिये उच्चाट किया जाता है।

उच्चाट (हिं० पुं०) १ उच्चाट, जलवार। २ जोर  
वला, पुराना कपड़ा। यह ठगोंकी बोलती है।

उच्चाटन (हिं० पुं०) निठोवनपास, जोड़ना,  
गुठनेका बरतन।

उच्चाटना (हिं० पुं०) १ कोटविगीत, एक कोड़ा।  
यह खड़ी कलमकी मारता है। (स्त्री०) २ चार  
भूमि, तर जमीन।

उच्चाटना (हिं० क्रि०) उच्चाटन करना, उच्चाट करना।

उच्चाटो (हिं० क्रि०) १ उच्चाटन, उच्चाट, उच्चाट।  
२ उच्चाटनमें जल, उच्चाट किया हुआ रक्त। ३ भूमि-  
कर, जमीनका उच्चाट। ४ एक प्रकारका पादा-  
प्रदान, जिसे जिज्ञासा कहते हैं। इसमें मन्त्राचार्यको  
मन्त्र-मन्त्र पर चला दिया हुआ रक्त उच्चाट  
करना पड़ता है।

उगिलना, उगलना देखो ।

उगिलवाना, उगलवाना देखो ।

उगिलाना, उगलाना देखो ।

उगगाहा ( छिं० पु० ) उद्गाया, गीति, एक प्रकार-  
का भार्या छन्द । इसके विषयमें हादम और सम  
चरणमें भटादग मात्रा होती है । जगणका प्रयोग  
घटाटा है ।

उद्य ( सं० पु० ) उद्यति क्रोधेन मन्व्यते, उत्-रक्  
गयान्तादिशः । अथे नारदयविपकुत्रुमदुग्धुभद्रोपमेरुतरेरुधमयल  
गीतके रामाशाः । उद्य १।१८ । १ शिव, महादेवकी वायु-  
मूर्ति । २ पतिय के वीर्य और शूद्राके गर्भसे उत्पन्न  
जातिविशेष । यथा—

“अविद्यात् यद्रक्त्यायी कृत्वाचार-विहारवान् ।

अमयद्रवमूर्तमुद्यो नाम ब्रजानने ॥” ( मनु १।१८ )

इस जातिके लोगोंका कार्य गर्तस्थित गोहकी  
भारना और पकड़ना है । १ पूर्वाफल्गुनी, पूर्वा-  
षाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, मघा और भरणी नक्षत्र ।  
४ भीभाञ्जन वृष, सङ्गन । ५ केरलदेश, मलबार ।  
६ खनामस्यात दानविशेष । “वेनवान् कुमानुषः सोऽप्ये  
महाहयः ।” ( हरिवंश भादि १६१ व० ) ७ धृतराष्ट्रके एक पुत्र ।  
( भागवत भादि ११० व० ) ८ नरेन्द्रादित्य नामक काश्मीर-  
राजकी गुरु । ९ पिण्ड । ( भागवत १४ व० ) ( त्रि० )  
१० उत्कट, गर्म । ११ यष्टि प्रवृत्ति धारण करनेवाला,  
जो लकड़ी रखता हो । १२ पतियय दारुण कर्म  
करनेवाला, जो खूंखार काम करता हो ।

“विहितवृक्षस्य वनयो ज्जलोन्मिष्टमोग्रिणः ।

उद्यत्” इतिवाच्य पर्यायानमभिर्दम् ॥” ( मनु ३।२१२ )

( स्त्री० ) ११ वत्सनाभ नामक विध, बच्छनाग ।  
१४ शेषसम्प्रदाय विशेष । इस सम्प्रदायके लोग वाहु  
पर डमर पहनते हैं । १५ तीर्थविशेष । “उद्यं वनमध्वर्यु  
वैश्वं मेरुं तथा ।” ( रिवाज २ व० ) १६ क्रोध, गुस्सा ।

उद्यक ( सं० पु० ) नागविशेष ।

उद्यकर्मन् ( सं० त्रि० ) उद्यं कर्म यस्य बहुव्री० ।  
हिंस्रस्वभाव, वैश्वरम, कड़ा काम करनेवाला ।  
२ प्राविहिंसाकारी, भार डालनेवाला । ३ खल, बद-  
साय ।

उद्यकाण्ड ( सं० पु० ) उद्यं काण्डो यस्य, बहुव्री० ।

१ करवैलक, करेता । २ काण्डवृक्षी, करेलेकी वृक्ष ।

उद्यगन्ध ( सं० स्त्री० ) उद्यो गन्धो यस्य, बहुव्री० ।

१ छिद्र, छिग । ( पु० ) २ शुक्रस्रोत, सङ्गुन ।

३ कट्फल्गुवृक्ष, कायफल । ४ रत्नस्रोत, प्याज ।

५ धनक वृक्ष, ववई । ६ चम्पक, चम्पा । ( त्रि० )

६ उत्कट गन्धयुक्त, कड़ो खुशबूवाला ।

उद्यगन्धा ( सं० स्त्री० ) उद्यगन्ध स्त्रियां टाप् । १ मन

यवानो, पञ्चवायन । २ पञ्जमोदा, पञ्जमोद । ३ वचा,

वच । ४ महाभरीवचा, कुसोजन । ५ छिद्रिका, लक-

क्षिकनी ।

उद्यगन्धिका, उद्यगन्धा देखो ।

उद्यगन्धिन् ( सं० त्रि० ) उत्कट गन्धविगिट, तीखो  
खुशबूवाला ।

उद्यगन्धो, उद्यगन्धा देखो ।

उद्यघण्डा ( सं० स्त्री० ) उद्या घण्डा कोयना स्त्री,

कर्मधा० । १ भगवतीको एक मूर्ति । पाश्चिम मासकी

लष्ण-नवमीको कीटि योगिनीके साथ यह घटादगमुता

मूर्ति पारिभूत होती है । यथा,—

“उद्यगन्धा मु या मूर्तिरादवमु भगवन्तम् ।

सा नवमी पुरा ऋषयश्च यदा कति रयो ।

माहर्षिता महात्मना सीतिली कीटिभिः सह ।” ( कारिका १८ १०० )

इसी मूर्तिने दक्षका यज्ञ मङ्ग किया था । पावाद  
मासकी पूर्णिमा तिथिको दक्ष हादम वर्षमें निष्यस्य  
होनेवाला यज्ञ करने लगे थे । इस यज्ञमें सज्जन ही  
देवता बुलाये गये । किन्तु दक्षने कपाल-मान्वाचरो  
समस्त शिवकी और कपालीको पदो होनेसे नित्र क्रन्धा  
सतीको भी निमन्त्रण दिया न था । इसीसे सतीने  
पतियय क्रोधमें पाकर प्राण छोड़ा । देहत्यागके  
पनस्तर सतीने अपना रूप बटुन कीटि योगिनीके  
साथ उद्यघण्डा मूर्ति बनायी और शिव तथा उनके पुत्र-  
परकी से यज्ञमें धूलि उड़ायी दी । ( कारिका १८ )

२ दुर्गाका एक आवरण ।

उद्यधय ( सं० पु० ) उत्कट पतियाय, खोरखी पा-

चिम, बड़ी पाह ।

उद्यचारिणी ( सं० स्त्री० ) दुर्गा देवीका एक नाम ।

उपजाति ( सं० ति० ) नीचवर्गमनुभूत, कमजोर  
प्राप्त्योगी देता। उ० १६०।

उपविन् ( सं० स्त्री० ) एक पक्षरा। ( प० १११५१ )

उपता ( सं० स्त्री० ) उपपन्न भावः कर्म वा तत्त्व।

१ उपभाव, मूलज्ञी, तैजो। २ उपकर्म, कटा काम।

३ कटता, कटपापन। ४ पक्षद्वार माछका कटा

द्वारा व्यापिपारी मुचरिमेव। अपराधादिके कारण

पित्तमें दद्यापन पानेको उपता कहते हैं। यह

उपता धर्म, मिरःकल्पन, तर्जन, ताडन प्रभृति द्वारा

भलकती है। यथा,—

“श्रीवैष्णवादिभ्यः सर्वेक्षणमुद्वहः।

तत्र नोद्विहःकथः सर्वज्ञतावधारकः”

( काविरचरित १ परिच्छेद )

उपतारा ( सं० स्त्री० ) उप-त-विष्-पच-टाप्। भग-  
वतीको एक भूर्ति। ये उप भयसे भक्तोंको त्राप  
देती है। उपार्त्तिको कथा इस प्रकार है—

किसी समय शुभ और निरुद्ध देवके यज्ञका भाग  
चुरा भयं दिक्पाल बन गये थे। इस पर समझा  
देवता इन्द्रके माघ इच्छे को विमानप यहुं थे। यहाँ  
शबने महापतारके निकट ठहर महामाया भगवतीका  
स्नान किया। भगवती देवोंके साथमें समुद्र कुं  
थोर मतद्वका को रूप बना पूजने लगीं,—देव।  
तुम इस स्थान पर किस स्त्रीको स्नान करनाते  
थोर इस मतद्वके पार्श्वपर क्यों पार्ते हो? ऐसे  
कहते ही समय उनके शरीरकीपयें एक देवी निकल  
कर बोलीं,—यै देव हमारा ही स्नान करते हैं। उप  
थोर निरुद्ध नामक हो दागव रहने बापा देते हैं।  
हमारे देव उनके पय निमित्त यहाँ पाये हैं। शरीरमें  
इस देवोंके निकलने बाद हो विमानयों रहनेवाली  
यह शरीरकी मातङ्गी। अतिमय लक्षणों बन  
गयीं। अरि हमोंको उपतारा कहते हैं। यह  
भूर्ति चतुर्भुजा, छप्परकी और मुष्ममासाधारिणी  
है। दक्षिणके लपरी हस्तमें खट्वा तथा नीचेके  
हस्तमें चामर और बायेंके लपरी हस्तमें करपा-  
लिका तथा नीचेके हस्तमें खपर है। अष्टाक्ष पर  
पाशामेरी एक कटा मनी और मनीमें मुष्ममासा

पक्षी है। हातोपर सोपका बार निरटा है। अक्ष  
रक्ष लेती पान हैं। उपतारा लक्षणपे वषा पहने है।  
कटिदेशमें व्याघ्रचर्म भूषित है। चामरद्वारको  
हातो थोर दक्षिण घट निहकी पीठपर रखा है।  
ये देवी सर्व शयके शरीरकी चातनी है।

उपतेजम् ( सं० ति० ) १ उच्छेद प्रक्षियामो, सुभार  
ताकृत रश्मिवाला।

उपतेजा ( सं० पु० ) १ नागविशेष। २ विधी  
कुसका नाम। ३ एक देवता।

उपदंष्ट्र ( सं० ति० ) उच्छेद दन्तयुक्त, तीसरे दाँतो-  
वाला।

उपदण्ड ( सं० ति० ) १ उच्छेद दण्डधारी, मोटा  
घोंटा बांधनेवाला। २ निर्दय, शरदम, कड़ी मर्मा  
देनेवाला।

उपदयन ( सं० ति० ) भयानक, दीकानक, त्रिी  
देवते हर ली।

उपदुहित ( सं० स्त्री० ) उच्छेद पुत्रपत्नी कथा,  
सुभार चादमीकी पीटी।

उपपन्नम् ( सं० पु० ) उपप्रभुर्गण्य, समष्टि समा०।  
१ मिय। २ इन्द्र। ३ मगधराज मन्त्रके कनिष्ठ पुत्र।  
मकटाल द्वारा ये मगधके राजा हुए। शत्रुगुप्तने निपाल-  
राज वर्धेतरके साहाय्यी उपपन्न्याके राज्य होनेको  
चेष्टा की थी। उपमे इन्द्रोंने कुछ ही शत्रुगुप्तके  
भायमणको मार डाला। पीछे वर्धेतरकी भद्रति उप-  
पन्न्याने प्राप दीदा। ( सं० ति० ) ४ भगवत् प्रभु-  
विंगिट, कड़ी कमाल वाला, जिसके प्रभुपत्नी मार  
दुग्धन मर न सके।

“यत् प्रभुपत्नी वर्धेतरमाला” ( प० १११११ )

उपनामिक ( सं० ति० ) दोषनामिक, मङ्ग, बर्ही  
नाकवाला।

उपपत्तक ( सं० पु० ) महानीला, काला भोरा।

उपपुत्र ( सं० पु० ) उपपन्न पुत्र। १ मृगका  
पुत्र, महादुर का कहका। ( प० १११११ ) ( कल्प-  
सूत्र १००५१ ) २ मित्रके पुत्र काविकेव। ३ मगध  
कामाग्र, महाराजाला। “यत् प्रभुपत्नी वर्धेतरमाला” ( प०  
१११११ ) ‘यत् प्रभुपत्नी वर्धेतरमाला’ ( प० १११११ )

(त्रि०) ४ उत्कट पुत्रविशिष्ट, जिसके ताकतवर लड़का रहे।

उद्यबाहु (सं० त्रि०) उत्कट बाहुविशिष्ट, जोरदार बाहु रखनेवाला।

उद्यमा (सं० स्त्री०) गोपसक्ती, एक वेल।

उद्यम्यश (सं० त्रि०) उद्य-दृश्य-शब्द सुम्। उद्य-दृष्टि-युक्त, कड़ी नजरवाला, जो सब्बोंसे देखता हो। वन्य जन्तु व्याघ्रादि उद्यम्यश होते हैं।

"उद्यम्यशकुविरको ।" (महि)

उद्यम्यश्या (सं० स्त्री०) अक्षरा विशेष, एक परी। (अक्षर-विज्ञान ४।११५१।)

उद्यरेताः (सं० पु०) रुद्र विशेष। (भागवत)

उद्यवीर (सं० त्रि०) शक्तिशाली वीरविशिष्ट, ताकत-वर सिपाही रखनेवाला।

उद्यवीर्या (सं० स्त्री०) १ हिङ्ग, हींग। (त्रि०) २ उत्कट वीर्यविशिष्ट, सज्जन ताकत रखनेवाला।

उद्यव्यय (सं० पु०) एक दानवका नाम।

उद्यशक्ति (सं० पु०) एक राजा। ये राजा अमर-शक्तिके पुत्र थे।

उद्यशासन (सं० त्रि०) शास्त्रा देनेमें उत्कट, जो कड़ा हुकम निकासता हो।

उद्यशेखरा (सं० स्त्री०) उद्यशेखरः अष्ट-टाप्। अष्ट-बाहिष्ठी-५१। या ३५॥१०॥ महादेवके मन्त्रक पर रहनेवाली गङ्गा। यानवासीभिनी गङ्गा ऐनम्बु-गुप्तेकरा। (विकाराष्ट्र-३५॥१६)

उद्यशोक (सं० त्रि०) उत्कट शोकयुक्त, बड़े अफ-सोसमें पड़ा हुआ।

उद्य-श्रवण-दर्शन (सं० त्रि०) उत्कट श्रवण एवं दर्शनविशिष्ट, जो देखने-सुननेमें खोफ़नाक हो।

उद्यशयस् (सं० पु०) १ सौरि, कर्क राजा। २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

उद्यसेन (सं० पु०) १ परीक्षितके एक पुत्र और जनमेजयके स्त्राता। (अष्टाध्याय-१३॥३॥) २ मयुरादेयके एक राजा। ये बाहुकके पुत्र और कंसके पिता थे। इनकी पत्नीका नाम कर्षी था। उद्यसेनकी राज्यभूत कर कंस स्वयं सिंहासन पर बैठा था।

पौष्टि कृष्णने कंसको मारकर राज्य उद्यसेनके अधीन कर दिया। (भागवत)

उद्यसेनज (सं० पु०) उद्यसेनसे उत्पन्न कंस। अंश देवो।

उद्यसेना (सं० स्त्री०) अक्षरकी स्त्री। (स्तिरि)

उद्या (सं० स्त्री०) १ धन्याक, धनिया। २ यमानी, भजवायन। ३ संविदा मन्थरी, गांजा। ४ वषा, वष। ५ छिन्निका, नक छिन्ननी। ६ तीव्रवीर्य वस्तु, कड़ी या सख्म चीज।

उद्यादित्य आचार्य (सं० पु०) जैनपन्थ कल्याणकारक भेदके रचयिता।

उद्यादेव (सं० पु०) एक यदिक ऋषि। (अष्टाध्याय-१३॥३॥)

उद्यायुध (सं० त्रि०) १ उत्कट आयुधविशिष्ट, सज्जन हथियार रखनेवाला। (पु०) २ एक प्राचीन घोरव राजा। इनके पिताका नाम छत घोर पुत्रका नाम चैम्य रहा। इन्होंने मित्र बाहुवर्धन नेपथ्यं घोर अन्यान्य गृपतिको मार डाला था। कुदवीर भीषके पिष्टवियोगसे कातर होनेपर उद्यायुधने दूत द्वारा कहना भेजा,—'भीष! तुम्हारी लज्जा गन्ध-काली खोगणके मध्य रत्नस्वरूप है। उन्हें हमको दे डालो। हम तुम्हें 'चतुस ऐश्वर्यशाली बना-देगे।' किन्तु भीष उस समय क्रुद्ध न बोले। पिताका प्रयोज कास बीतने पर उन्होंने घोरतर युद्ध कर उद्यायुधको मार डाला था। (महाभारत)

उद्येय (सं० पु०) उद्यावा ईयः। १ गिव।

२ उद्याका बनवाया एक मन्दिर।

उद्यटना (हिं० त्रि०) १ उद्यटाटन करना, खोसना।

२ उद्यटन करना, कह देना। ३ तास खगाना, सम देवाना। ४ विगत विषय बताना, गढ़े। सुदं उद्या-डना। ५ उद्यहास करना, हँसी उड़ाना। ६ निन्द-याद करना, भर्त्सो-बुरी सुनाना।

उद्यटवाना, उद्यटाना देवो।

उद्यटा (हिं० त्रि०) उद्यटाटन करनेवाला, जो खोस देता हो।

उद्यटाई (हिं० स्त्री०) १ उद्यटाटन, खोसाई।

२ उद्यटन, कहारै।

उपटाना (हिं० जि०) १ उपटान कराना, जो-  
जाना। २ उपटान कराना, उठाना।  
उपटाना (हिं० जि०) उपटानित होना, खुलना,  
मूला हो जाना।  
उपटाना उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना (हिं० स्त्री०) कुश्चिका, किरीट, चाबी,  
कुन्नी।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना (हिं० पु०) १ उपटानित आन, खुला  
मदान। (वि०) २ उपटानित, खुला।  
उपटाना (हिं० जि०) १ उपटान कराना, जो-  
जाना, खपड़ उतार कर खेक देना।  
“उपटाने हाथ उतारे और पाद हो जाती बरि।” (कोशवि)  
२ प्रकट कराना, बता देना।  
उपटाना (हिं० वि०) १ मज, बरहना, खुलना।  
“मजि बाज बरि जाती हो हो हाथ वही उपटाने।” (कोशवि)  
२ प्रकट, जाहिर।  
उपटाना (हिं० जि०) १ मंघड़ कराना, रकड़ा कराना,  
जमा कराना। २ कर भगाना, मजदूरन बाँधना।  
३ माँगना, मजदूर कराना।  
उपटाने (हिं० स्त्री०) १ मंघड़, मजदूरनका मजदूर।  
२ मंघड़ दिया जानेवाला धन, धावना।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना (मं० पु०) विष्णुके एक अवतारका नाम।  
उपटान (मं० पु०) उपटान, उपटान।  
उपटान (मं० पु०) कृतमन्त्रन जानाप, जानाप,  
मयी मयी बात, मजदूर।  
उपटान (हिं०) उपटाना ईश्वरी।  
उपटान—विश्व० पर० मज० शीट्। एक मजदूर और  
मिथर परामि जाता है।  
उपटान (हिं० पु०) उपटान, उपटान, उपटान,  
पाद, ट्रेड। २५ मीने वराने वराने उपटाने  
मयी जाता।  
उपटाना (हिं० जि०) १ पाच्छेद कराना, जोन

सेना। २ दवाना, जिम्मे जानना। ३ मे भागना।  
४ पूर्वाभादन कराना, पक्षमे हो मज्जा मेना। ५ उपटान  
कराना, उठाना। ६ पक्षि मूल देना, जवादा कौमन  
मजाना। ७ वन्यन कराना, कूटना, उठाना, पादना।  
८ पदावपर उठाना, पक्षीके वन पक्षी होना।  
९ पलायन कराना, भाग जाना। १० वन्यन कराना,  
मवावरन कराना, जोन मजाना। ११ विभिन्न  
होना, बकराना। १२ लासायित होना, जमवाना।  
उपटाना (हिं० जि०) उपटानेको पादेम देना,  
दूरमे उपटानेका काम सेना।  
उपटाना (हिं० जि०) पदावपर उठाना, पक्षीके  
वन पक्षी कराना, भगाना, जोन वनवाना, बकरवाना।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना (हिं० वि०) १ पाच्छेदक, जोनने जाना।  
२ पदावपर उठनेवाला, जो पक्षीके वन पक्षी  
रहता हो।  
उपटाना (हिं० पु०) वन्यन, भूत, पियार, पक्षीमार।  
उपटाना (हिं० पु०) वन्यनपक्ष, वन, नम्र-  
वन्दी, दगावारी, मोचापमोटी।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना (हिं० जि०) १ उपटान पक्षना, मिरना।  
२ उपटान कराना, पक्षना, मिरना। ३ वन्यन कराना,  
कूटना। ४ विमर्षण कराना, मरहना। ५ पक्षम  
होना, बक जाना। ६ दुपना, पादुम होना।  
उपटाना (हिं० जि०) उपटानेको पादा देना,  
उपटानेका काम दूरमे सेना।  
उपटाना (हिं० स्त्री०) उपटानेका कार्य या काम।  
उपटाना (हिं० जि०) १ विमर्षण कराना, पादना,  
पक्षन कराना। २ उपटान कराना, पक्षना।  
३ विमर्षण कराना, मरहना। ४ पुमाना, पिराना।  
५ जताम कराना, दिक तोड़ना।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना, उपटाना ईश्वरी।  
उपटाना (हिं० स्त्री०) मजदूर, मारीट्। (मज०, मज०)

'उचय' (वि० वि०) १ प्रगंसनोय, तारीफ़ दे ब्याविल ।  
 ( पु० ) २ अङ्गिराका एक नाम । ( अष्ट २४१/१८ ) ।  
 'उचना' ( हि० क्रि० ) १ उच पड़ना, ऊँचा जाना,  
 ऊपरको उठना । २ उच करना, ऊपरको उठाना ।  
 'उचनि' ( हि० स्त्री० ) उच होनेकी दशा, उठान,  
 उभार, उचकाई ।  
 'उचरंग' ( हि० पु० ) पतङ्ग, परवाना, कपड़का  
 कीड़ा ।  
 'उचरना' ( हि० क्रि० ) १ उच्चारण करना, ज़वानमे  
 निकालना, बोलना । २ गश्द खाना, धावाज देना,  
 मुँहसे निकलना । ३ उचड़ना, छूटना ।  
 'उचरवाना, उचराना' दि० ।  
 'उचराई' ( हि० स्त्री० ) १ उच्चारण करनेकी दशा,  
 कड़ाई । २ उचड़ाई ।  
 'उचराना' ( हि० क्रि० ) १ उच्चारण कराना, कहाना ।  
 २ उचड़वाना ।  
 'उचलना, उचरना' दि० ।  
 'उचाट' ( हि० वि० ) धृक् किया हुआ, जो टूट  
 गया हो । २ विरक्त, नाखुश, नाराज़ । ३ शान्त,  
 शकामांदा । ४ खिन्न, बेचैन । ५ इताश, दितगौर ।  
 ( स्त्री० ) १ छुपा, नज़रत, भ्रमण होनेकी सवृत्त  
 आदिगि ।  
 'उचाटन' ( हि० ) उचाटन दि० ।  
 'उचाटना' ( हि० क्रि० ) उचाटन करना, उठा देना,  
 भगाना ।  
 'उचाटी' ( हि० स्त्री० ) उचाटन, उचाट, इटाव ।  
 'उचाटू' ( हि० वि० ) उचाटन करनेवाला, जो इटा  
 देता हो ।  
 'उचाड़, उचाड' दि० ।  
 'उचाड़ना, उचाड़ाना' दि० ।  
 'उचाना' ( हि० क्रि० ) उच करना, उठा देना ।  
 'उचापत' ( हि० स्त्री० ) १ विश्वास, पतवार,  
 मानता । "हिनयेको उचापत कोर कोर को बीज नपार ।" ( भीमोक्ति )  
 २ प्रतारणा, फ़रिब, धोकाधड़ी । ३ विश्वास पर  
 खानेवाली चीज़ ।  
 'उचापती' ( हि० वि० ) १ उचापतसे सम्बन्ध रखने

.वाला, जो, उधार खाता हो । ( पु० ) २ ऋणी वा उत्त-  
 मर्ण, कर्जदार या कर्ज-दिहन्दा, देनदार या लेनदार ।  
 उचापनी सेवा ( हिं० पु० ) २ पापपण्ड, दुकानका  
 परचा, चन्ता हिसाब ।  
 उचायी, उचारं दीयो ।  
 उचार ( हिं० ) उचार दीयो ।  
 उचारक ( हिं० ) उचारक दीयो ।  
 उचारन ( हिं० ) उचारण दीयो ।  
 उचारना ( हिं० क्रि० ) १ उचारण करना, कहना ।  
 २ उचाटन करना, उछाड़ देना ।  
 उचास, उचास दीयो ।  
 उचासना, उचाटना दीयो ।  
 उचावा ( हिं० पु० ) स्वप्नप्रसाय, स्वप्नवाक्की वक्तव्य ।  
 उचित ( सं० त्रि० ) १ योग्य, कर्तव्य, वाजिब, कर-  
 नेके काविल । २ परिचित, शब्दप्रद, जाना-बूझा, जो  
 समझ में था गया हो । ३ सुखमय, सुखगजार, अच्छा  
 लगनेवाला । ४ साधारण, मामूली । ५ मान्य,  
 मानने लायक । ६ निश्चित, स्थिर, रक्ता हुआ ।  
 ७ व्यवस्थित, दुकन्द, ठीक ।  
 उचैटना, उचाटना दीयो ।  
 उचैतना, उचाटना दीयो ।  
 उचोड़ा ( हिं० वि० ) उठा हुआ, उभरा हुआ, जो  
 ऊँचा पड़ गया हो ।  
 उछ ( सं० त्रि० ) उच्चिनोतीति, उत्-वि-ट टिकीयः ।  
 १ उदत, बुलन्द, ऊँचा । २ तुल्य, सम्या । ३ गमोर,  
 गहरा । ४ महास्थान, पुराणोर, जोरमे जोना जाने-  
 वाला । ५ प्रचण्ड, गदीद, तुन्द । ६ खंय, भाग,  
 हिस्सा । ( पु० ) ७ रागिभेद, मैयारेके दायरेकी गोंब ।

“मीषो यषी स्वः शब्दा वाचंस्तेजःपराः ।

भास्करादिभक्त्युद्वा रादयः कर्मजसिद्धिः ।

सोऽवाच भगवन् त्वेवं ब्रह्मरूपमादेर्देहिनिर्देहो ह ।

उद्यानः सचरुतः छागु नीचाने तु सुवीचयः ।" ( श्रीः, १८८८ )

ज्योतिषशास्त्रके अनुसार भयका भूयः, तपका चन्द्र,  
सूयका मङ्गल, कन्याका बुध, कर्कटका शुक्रप्रति, मीनका  
शुक्र और तुलाका शनि चय होता है। अतः उक्त-  
स्वात्मि सप्तम पदार्थपर प्रत्येक पद बोधे निकलता



कंपड़े की गाँठ, इकारवन्द । ३ रचना, बनावट ।  
 “नास” स्यादयोग्यताश्चासत्सिपुः । यदोच्यते ।” (साहित्यदर्पण)  
 ४ संयोजना, मिलाव । ५ समूह, ढेर । ६ त्रिकोणका  
 सम्युखस्य पार्श्व, सुसङ्गठके सामनेका बाजू ।  
 उच्चापचय (सं० पु०) हडि और फ़ास, घटती  
 बढ़ती, चढ़ा उतरी ।  
 उच्चारण (सं० स्त्री०) १ ऊपर या बाहर जानेका  
 काम । २ कथन, तलफ़फ़ुज । यह कण्ठ, तालू, मूर्धा,  
 दन्त, ओष्ठ और नासिकादिके प्रयत्नसे होता है ।  
 उच्चारणा (हिं० स्त्री०) उच्चारण करना, मुँहसे निकाल-  
 ना, बोलना ।  
 उच्चारित (सं० स्त्री०) उत्-चट्-कर्मणि क्त । १ कौस्तित्,  
 कथा या निकाला हुआ । २ उचित, उठा या  
 निकाला हुआ । (स्त्री०) ३ विद्या, मलमूल, बराज,  
 मेला ।  
 उच्छल (सं० स्त्री०) उत्-चल-भच् । मन, दिल ।  
 उच्छलन (सं० स्त्री०) गमन, रवानगी, सरक जा-  
 नेका काम ।  
 उच्छलनाटा, (सं० स्त्री०) उच्छलनाटविगिष्ट स्त्री,  
 जंघे मल्ये स्त्री औरत ।  
 उच्छलनाटिका, उच्छलनाट देखो ।  
 उच्छलित (सं० स्त्री०) ऊपर या बाहर पहुँचा हुआ,  
 जो फटकारा गया हो ।  
 उच्चा (वे० भव्य०) उपरि, ऊपर, ऊँचे ।  
 उच्चाचक्र (वे० द्वि०) उपरि चक्र युक्त, जिसके उपर  
 चिरा रहे । यह शब्द रूपका विग्रहण है ।  
 उच्चाट, उच्चाटन देखो ।  
 उच्चाटन (( सं० स्त्री०) उत्-चट्-बिच्-ल्युट् । १ उत्पा-  
 टन, स्थापित या संयोजित वस्तुका प्रयत्न करण, उखाड़,  
 मोच-खसोट । २ उच्छल करण, डावांढोल बनानेका  
 काम । ३ पट्कर्मनिर्गत भूमिधार विग्रह, एक जाटू ।  
 इस कार्यकी देवता दुर्गा और त्रिवि लक्ष्माटसी वा  
 चतुर्दशी है । ग्रन्थिधारको साधुके बालोंमें पिरोयी हुई  
 घोड़ेके दाँतोंकी भासासे अप करते हैं । (साहित्यदर्पण)  
 उच्छाटन देखो । ४ उत्कण्ठा, फ़िक्र । ५ विवाद, झगड़ा ।  
 ६ उत्खातन, भफ़सुर्दा बनानेका काम ।

उच्चाटनीय (सं० स्त्री०) उत्पाटनयोग्य, उखाड़  
 डालनेके काबिल ।  
 उच्चाटित (सं० द्वि०) उत्पाटित, उखाड़ा हुआ,  
 जो निकाला गया हो ।  
 उच्चाधुन (वे० द्वि०) उपरि तल्लुन, जिसके पैदा  
 ऊपर रहे ।  
 उच्चार (सं० पु०) १ विद्या, बराज, मेला । छूतिमें  
 लिखा है,—उच्चार, मैद्युन, प्रस्त्राव, दन्तधावन, छाग  
 और भोजन छः कार्य करते समय बोलना न  
 चाहिये ।  
 “उच्चारि मैद्युने चैव प्रथाये दन्तधावनम् ।  
 धर्मे भोजनवादि च बहव जीवन्” उच्चारितम् ३” (सूनि)  
 २ त्याग, बरखास्तागी । ३ उच्चारण, कथन, तलफ़फ़ुज ।  
 उच्चारक (सं० स्त्री०) उच्चार कार्य कर्त्ता । उच्चारण-  
 कारी, तलफ़फ़ुज करनेवाला, जो उच्चारण करता हो ।  
 उच्चारण (सं० स्त्री०) उत्-चर्-बिच्-ल्युट् । कथन,  
 शब्दप्रयोग, तलफ़फ़ुज, बोलनेका काम । २ उच्चाटन-  
 कार्य, सुमकिन्-उल्-समा बनानेका काम, जिससे  
 समझमें आ जाय ।  
 उच्चारणश्च (सं० पु०) शब्दव्युत्पन्न, ज्ञानदान, जो  
 तलफ़फ़ुज करनेमें होगियार हो ।  
 उच्चारणस्थान (सं० स्त्री०) गनागविग्रेय, गलेका एक  
 हिस्सा । इसीसे शब्द निकलता है । कण्ठ, तालू,  
 मूर्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका, जिह्वामूल और उपधा  
 पाठ उच्चारणके स्थान होते हैं ।  
 उच्चारणार्थ (सं० स्त्री०) १ उच्चारणके लिये उद्योगी,  
 तलफ़फ़ुजमें लगनेवाला, जो बोलनेके लिये सुर्जाद  
 हो । २ उच्चारणके लिये आवश्यक, तलफ़फ़ुज करनेमें  
 जिसकी जरूरत पड़े । कमी-कमी चतिरिक्त पक्षर  
 लगा लेनेसे उच्चारणमें सरलता आ जाती है ।  
 उच्चारणोद्य (सं० स्त्री०) उच्चारण किया जानेवाला,  
 जो तलफ़फ़ुज किये जाने काबिल हो ।  
 उच्चारणा (हिं० स्त्री०) उच्चारण करना, तलफ़फ़ुज  
 निकालना, बोलना ।  
 उच्चारित (सं० स्त्री०) उच्चारितम् । तलफ़फ़ुज  
 तलफ़फ़ुज करण । या उच्चारण । ३ उचित, मन्दावित, तलफ़फ़ुज



किया या कहा हुआ, जो बोला गया हो। २ मूलमूल-  
युक्त, बराबरी भरा हुआ।

उच्चार्य (सं० त्रि०) उत्-चर-विच्-त्यप्। १ उच्चारण-  
योग्य, तत्काल फूटने कायित। (अव्य०) २ उच्चारण  
करके, कहकर।

उच्चार्यमाण (सं० त्रि०) उच्चारण किया जानेवाला,  
जो कहा जा रहा हो।

उच्चावच (सं० त्रि०) उदक्-उत्कटश्च अवाक्-निकटश्च,  
निपातमात् साधुः। मूलसंज्ञा उच्चावच। या ५११०२। १ विविध,  
जानाप्रकार, सुख-तुल्य। २ पक्षमान, जाहमवार,  
जो बराबर न हो। ३ उच्चनीच, भलाबुरा।

उच्चिष्ट (सं० पु०) १ टण्डुल-मत्स्य, किसी किसका  
केसड़ा। २ कोपनसमाप्त, गुस्मावर पादमी। ३ पतङ्ग-  
विशेष, किसी किसका सुरसुरा, एक भोगर।

उच्चिष्ट (सं० पु०) उच्चिष्ट, एक भोगर। यह  
कौड़ा तीन चार प्रकारका होता है। एक जातीय  
(*Acheta domestica*), नगर, विशेषतः पक्षि-  
ग्राममें ही अधिक रहता है। देखनेमें कीमत् है।

इसे उष्णस्थानमें रहना अच्छा लगता है। उच्चिष्ट  
श्रीमन्मन्त्रमें निकलता है। गीत पढ़ते ही यह निज  
आवाजका आनन्द लेता है। उच्छ्रिता न मिलनेसे  
उच्चिष्ट मृत्यु पड़ा रहता है। यह निशाचर  
होनेसे चण्डालके बाद आहार दूँदने निकलता  
है। किन्तु ग्राम्य उच्चिष्टकी अपेक्षा अन्य पक्ष्या  
चेवज (*Acheta campestris*) बहुत बड़ा और  
देखनेमें कासी रोगनायी-जैसा होता है। यह सात-  
पाठ हाथ नीचे मंडीमें गते बनाता है। रात्रिकालकी  
गर्तके मुखपर बैठ प्रथम पक्ष्य पक्ष्य और पक्ष्यात्  
प्रणयिनीके आकर मिल जानेसे मृत्यु  
प्राप्त भर मोक्षता है। इसका स्वर दूर-  
सुनने पर प्रति मिट लगता और  
प्रकार ध्वनिका भाव जाता है।

दो गो डिम्ब देती डिम्ब फूटनेपर  
प्रायः मध्यमपर १ तरङ्ग

पक्षी नहीं मि

एक जातीय

१ यह

जातिसे बड़ा होता है। हिन्दुस्थानमें इसे सुरसुरा  
या भोगर कहते हैं। भीरर देखो।

महर्षि सुश्रुतके मतमें यह विषाक्त कीट है। इसके  
दंशने वायुजन्य रोग उपजता है। (उद्धत बलमान्)

उच्छ्र (सं० पु०) उच्छ्रता यद्वा यत्त, उच्छ्र स्वरम्।  
१ ध्वजोर्ध्वमुख कूर्च, ध्वजके उपरिभागका पक्षध्वज,  
अच्छेके ऊपरी हिस्सेका फहरानेवाला कपड़ा।  
२ ध्वजके उपरि भागपर बांधा जानेवाला एक  
फलदार, अच्छेके ऊपरी हिस्सेका एक गहना।

उच्छ्र, उच्छ्र देखो।

उच्छेः (सं० अव्य०) १ उच्छत-ऊपरे, ऊंचे। २ चत्यन्ता,  
निहायत, बहुत। ३ उच्च स्वरपूर्वक, मुसन्द आवाजमें।

उच्छेःकर (सं० त्रि०) तीक्ष्ण-क्षरित बनानेवाला, जो  
लहलही जोरसे बदा करता हो।

उच्छेःकुल (सं० स्त्री०) १ उच्छत वंश, ऊँचा खान्दान्।  
(त्रि०) २ उच्छत वंश-सम्बन्ध, ऊँचे खान्दान्वाला।

उच्छेःगिरम् (सं० त्रि०) उच्छेःवर्तनं शिरोरस्थ। उच्छत-  
मन्त्रक, महत्तर, ऊँचे दरजेवाला।

उच्छेःश्वम् (सं० पु०) १ इन्द्रका घोटा या घोड़ा।  
मत्स्यमन्त्रमें इसकी उत्पत्ति है। इसका कान लहलहा  
और बोल बड़ा होता है। वर्ष भरत है। मुखकी  
संख्या सात बताते हैं। (त्रि०) २ बधिर, बहुरा, जो  
कम सुनता हो।

उच्छेःश्वस, उच्छेःश्वस् देखो।

उच्छेःश्वया, उच्छेःश्वस् देखो।

उच्छेःस्थान (सं० स्त्री०) १ उच्छत स्थान, ऊँची जगह।  
(त्रि०) २ उच्छत पदाधिकारी, ऊँचे दर्जे या स्थान-  
वाला।

उच्छेः (सं० स्त्री०) दृढ़ता, मजबूती (आन

“यदुच्चैर्भूजतः पतन्त्यवाः उच्चैर्भूजतः” (पतन्त्यवाः १४)

उच्चैर्भूजतः (सं० त्रि०) उच्चको विस्तारित बाहुकी भांति रखनेवाला, जो फेंके पेड़ोंकी बाजूकी तरह रखता हो।

उच्चैः, उच्चैः शब्द।

उच्चैस्तम (सं० त्रि०) १ अत्यन्त उन्नत, निहायत बुलन्द, बहुत ऊँचा। २ अत्यन्त उन्नत स्वरविशिष्ट, बहुत ऊँची आवाजवाला।

उच्चैस्तमाम् (सं० प्रथ०) १ अत्यन्त उन्नत रूपसे, बहुत ऊँचे। २ उन्नत स्थानपर, बुलन्दको ऊपर। ३ उन्नत स्वरसे, बुलन्द आवाजके साथ।

उच्चैस्तार (सं० त्रि०) १ अपेक्षाकृत उन्नत, ज्यादा ऊँचा। २ अधिक स्तराघातयुक्त, जो ज्यादा ऊँची आवाजसे बोला जाता हो।

उच्चैस्तारत्वं (सं० स्त्री०) अधिक उन्नत होनेकी स्थिति, ज्यादा ऊँचा होनेकी क्षमता।

उच्चैस्त्व (सं० स्त्री०) उच्चता, बुलन्दी, ऊँचाई।

उच्छ—१ तुदा० इदित्० पर० सक० सेट्। यह धान्यकषा ग्रहणका अर्थ रखता है। २ तुदा० पर० सक० सेट्। इससे अन्न, समागम, प्रतिक्रम और त्यागका अर्थ निकलता है।

उच्छन्न (सं० त्रि०) उत्-छद्-त्त। नष्ट, बरबाद, उजड़ा।

उच्छन्नसन्धि (सं० स्त्री०) सन्धि विग्रह, एक सुलझ। उत्तम राज्य लेनेके बाद किसी राजाके साथ होनेवाली सन्धिको उच्छन्नसन्धि कहते हैं।

उच्छ्रय (सं० स्त्री०) त्रिकोणका पयाम् पद, सुमनसके पीछिका कदम।

उच्छ्ररणा, उच्छ्ररणा शब्द।

उच्छ्रल (सं० त्रि०) उत्-गल्-घच्। आधार पति-क्षमकर ऊर्ध्वकी द्रावित होनेवाला, जो चपनी जगह छोड़ ऊपरकी उड़ता हो।

उच्छ्रलत् (सं० त्रि०) १ ऊपर या दूर उड़नेवाला। २ सामना करनेवाला।

उच्छ्रलन (सं० स्त्री०) ऊपरका उड़ना, उछाल।

उच्छ्रलना, उच्छ्रलना शब्द।

उच्छ्रलित (सं० त्रि०) उत्-गल्-त्त। उच्छ्रलित, उल्लित, उछला हुआ, जो ऊपर उड़ गया हो।

उच्छ्रव (सं० त्रि०) उत्-गल्-त्त।

उच्छ्रादन (सं० स्त्री०) उच्छ्राद्यते मसोऽनेन, उत्-छद्-विष्-स्पर्ट्। १ मन्त्रद्वय द्वारा शरीर भाजन, खुशबूदार चीजसे निष्पत्ती मफाई। २ पाच्छ्रादन, क्षिपाव, टंकार।

उच्छ्राद्य (सं० प्रथ०) उतारकर, कपड़े धोकर। उच्छ्रात—एक प्राचीन जनपद, मोड़के मध्य अवस्थित।

उच्छ्रास (सं० त्रि०) उत्-गल्-त्त।

उच्छ्रास्त (सं० त्रि०) उत्-उत्क्रान्तम् गाम्नाम्। मास्-विह, जो मास्त्रसे मिश्रता न हो।

उच्छ्रास्त्रवर्तिन् (सं० त्रि०) मास्त्रोक्तज्ञानकारी, मास्त्रकी मर्यादाको उल्लङ्घन करनेवाला।

“न वाचः प्रमियतोवाच, अतोऽस्त्रवर्तिनः” (वाचस्पत्य ११०)

उच्छ्राह (सं० त्रि०) उत्-गल्-त्त।

उच्छ्रिष (सं० त्रि०) उच्छ्रता मिषा यश्च, प्रादि० बहुव्री०। उच्छ्रत-मिषा, चोटो ऊपरको उठाये हुआ। २ खाला ऊपरको लगाये हुआ, जो सपटकी मोक ऊपरकी निकाले हो। ३ स्वतन्त्र, भ्रमरनेवाला। ४ यतिमान्, चमकीला। “नान्दोऽर्चोऽर्चयिषि ३८ वाच-वर्तोऽर्चयिषि” (१९ १७१०) (पु०) ४ उच्छ्रत मिषा-विशिष्ट एक नाम। (भारत चरित)

उच्छ्रिह्न (सं० स्त्री०) नक्षत्री भांति नामिका द्वारा किसी वस्तुकी खामकी साथ खोंचनेका कार्य, खुराट भारनेकी क्षमता। इसे उच्छ्रिह्न भी लिखते हैं।

“विश्वे वीः वा पादोऽस्त्रात्” (वाचस्पत्य ११०)

उच्छ्रिह्नेन इत्येको इतिमयश्चः चकः ३” (द्वयन उत्तर १०५०)

उच्छ्रित (सं० त्रि०) उत्-गल्-त्त। उछ, उका या घिरा हुआ।

उच्छ्रिति (सं० स्त्री०) उत्-छिद्-भावे तिन्। उच्छेद, विनाश, बरबादी।

उच्छ्रिय (सं० प्रथ०) विनाश करके, काट या मारकर।

उच्छ्रिय (सं० त्रि०) उत्-छिद्-त्त। १ ममूज उत्-पाटित, तोड़ा या उखाड़ा हुआ। २ मोच, बमोना।

( पु० ) १ बह्वन्त्र्य भूमिको देनेसे प्राप्त हुई सन्धि, जो सुनहरी शीशीमत लमीन् देनेसे मिली हो ।

उच्छिष्टरस ( सं० त्रि० ) उपरतं गिरोस्थं । १ उपरतं गिरःविग्रितं, सहिमान्वित, जो मल्लिकी ऊपर उठाये हो । ( पु० ) २ बौद्धशास्त्रोक्त उरुमुण्ड पर्वत ।

उच्छिष्टनीन्द्र, उच्छिष्टनीम् देखो ।

उच्छिष्टनीम् ( सं० स्त्री० ) सदृशतं गिल्लीन्त्रम् । गोमय-चन्द्रिका, कुसाह-सारात्, कुकरमुत्ता, मापकी टोपी ।

बर्षामिं यह भूमिको विदारण कर प्रकट होना है ।

उच्छिष्ट ( सं० त्रि० ) उत् गृथ्यते यत्, उत्-गृथ्य-क्त । १ मुक्तावशित, जुड़ा, जो खाते-खाते बचा हो । गालमें उच्छिष्ट द्रव्य खानेको भना कहा है—

“भीष्टिष्टं कालविह्वलादाहिव तवाग्नयः ।

न वैवाद्यमनं कुर्वीतभीष्टिष्टः कश्चिद् भवेत् ॥” ( मनु ११६ )

उच्छिष्ट किसीको देना, साथ एवं प्रातर्भोजन कालके मध्य फिर खाना, अतिशय चाहार करना और उच्छिष्ट सुखसे कहीं जाना न चाहिये ।

भिक्ष-भिक्ष जातिका उच्छिष्ट कूने भयवा खानेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है—

“कदापि यत्तु भुञ्जीत शरीष्टिष्टं विभोजनः ।

मित्राभ्युपेक्षितो भूत्वा यवमयेन शयति ॥” ( चापनम् )

जो ब्राह्मण भक्षानसे शूद्रका उच्छिष्ट खाता है, वह तीन रात्रि उपवास करने बाद पक्षगव्यसे शोध पाता है ।

“कदापि भुज्जेत यत्तु भुञ्जीत शरीष्टिष्टं विभोजनः ।

आहूतं कृत्वा तदर्थं च भगवन् वा विदीधनम् ॥” ( शाल्विकविवाद )

द्विजाति अन्नका उच्छिष्ट खानेसे क्रमान्वयमें पान्द्रायण और तप्तलक्ष्म भयवा उसका चर्ध प्रायश्चित्त करनेपर यह होती है ।

“कदापि भुज्जेत यत्तु भुञ्जीत शरीष्टिष्टं विभोजनः ।

विभोः कदापि यत्तु भुञ्जीत शरीष्टिष्टं विभोजनः ॥” ( चरितम् )

चण्डाल, पतित प्रभृतिका उच्छिष्ट भक्ष खानेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य पराक्त तथा शूद्र लक्ष्म द्वारा यह होता है । जान गन्धकर उच्छिष्ट खानेसे दुना प्रायश्चित्त करना पड़ता है ।

“कदापि भुज्जेत यत्तु भुञ्जीत शरीष्टिष्टं विभोजनः ।

विभोः कदापि यत्तु भुञ्जीत शरीष्टिष्टं विभोजनः ॥” ( चरितम् )

शूद्रका एक मास, वैश्यका एक पक्ष, क्षत्रियका एक समाह और ब्राह्मणका उच्छिष्ट खानेसे एक दिन व्रत करना पड़ता है ।

“यद्वा रात्रिभोजनं यद्वा रात्रिभोजनम् ।

उच्छिष्टः कुरुते यत्तु भुञ्जीत शरीष्टिष्टं विभोजनः ॥” ( बाल्यम् )

कुम्भ, शूकर, शूद्र, चण्डाल, मदाभाण्ड और रजस्रसाका उच्छिष्ट कूनेसे लक्ष्म और सान्तापन द्वारा यह होना चाहिये ।

चिकित्साशास्त्रमें भी उच्छिष्ट भोजन निषिद्ध कहा है । क्योंकि जो व्यक्ति प्रथम खाके उच्छिष्ट छोड़ता है, उसका संक्रामक रोग उच्छिष्ट खानेवालेको भी दवा सकता है । अतएव उच्छिष्ट भोजन न करना ही अच्छा है । २ त्यक्त, कूटा कुषा, जो छोड़ दिया गया हो । ३ अपवित्र, नापाक, जिसके मुँह या हाथ-पर जुड़ा खाना लगा रहै । ( पु० ) ४ मधु, यहूद । ( स्त्री० ) ५ दत्तावशित, बधत, जो देनेसे बचा हो ।

“यत्तु कृतवर्त्तमानां वेदिनां दुष्कृतवितानम् ।

उच्छिष्टं भाष्ये यत्तु भुञ्जीत शरीष्टिष्टं विभोजनः ॥” ( मनुस्मृत्यम् )

उच्छिष्टकल्या ( सं० स्त्री० ) १ निःसार पाविष्कार, वैमला ईलाद, बासी बनावट ।

उच्छिष्टगणपति ( सं० पु० ) १ उच्छिष्ट व्यक्ति द्वारा पूजित गणेश । जुंटे सुँह रहनेवाले लोग इसे पूजते हैं । २ हेरम्ब सम्प्रदाय । इसके मतसे स्त्री और पुरुष उभय होते हैं । उनके संयोग वियोगमें पाप नहीं लगता । यह शब्द शूद्रगणपतिके विरोधमें खाता है ।

उच्छिष्टगणेश ( सं० पु० ) तन्मोक्त गणेशकी मूर्तिका एक भेद । नदीय देखो ।

उच्छिष्टधाण्डालिनी ( सं० स्त्री० ) तन्मोक्त मातङ्गी देवीकी एक मूर्ति । कातकी देखो ।

उच्छिष्टता ( सं० स्त्री० ) १ शेष रहजानेकी दगा, भ्रिम बालतसे कुछ कूट जाये । २ अपवित्रता, नापाकी, लूठन ।

उच्छिष्टमोक्ष, उच्छिष्टभोजन देखो ।

उच्छिष्टभोजन ( सं० पु० ) १ देव-भयैव-वलिभोजन-कर्ता, जो देवता पर श्रद्धा प्रसाद खाता हो । २ अपवित्र

सच्छिष्टका खानेवासा, जो दूसरेका जूठा खाता हो।  
(स्त्री) १. अपरके सच्छिष्टका अन्न, दूसरेका जूठा खाना।

उच्छिष्टभोजिन् ( सं० त्रि० ) नीच व्यक्ति का भुक्तावशिष्ट  
 खानेयासा, जो दूसरेका जूठा खाता हो ।

उच्छिष्टमोदनं ( सं० क्लो० ) उच्छिष्टं मधु तेन मोक्षते ।  
सिक्थय, मीम । मीम देखो ।

सच्चीर्षण ( सं० त्रि० ) उत् सध्वंस्तं शीर्षं येन, कन्.  
बहुव्री० । १ उन्नत गिरःपृष्ठ. ऊंचा मरु रङ्गनेवाला ।

“सखीरंके प्रिये कुर्यात् भद्रकाल्यै च पादतः ।

“ ब्रह्मवासीः पतिष्यान् वासुमधे बलिं इरेत् ॥” (मनु ४:८८)

उदय. सितारे बगैरहका नमूद । ० त्रिकोणका  
उच्छ्रित पार्श्व, सुषप्तसका खड़ा बाजू ।

उष्णयण ( सं० स्त्री० ) उत्पत्ति करने खुद । १ उचलित,  
ताकड़ी, उठान । ( त्रि० ) उत्पत्ति कर्तारि श्यु ।  
२ उत्कृष्ट, उम्दा, बढ़िया ।

“उष्णयणि उत्कृष्टाणि ।” ( भाष्यभाष्यभाष्यभाष्य ३८ )

उष्णयोपेत ( सं० त्रि० ) उचल, बुलन्द, ऊँचा ।

उष्णाय ( सं० पु० ) उत्पत्ति-घञ् । उदितवर्तनीनि-  
पुनः वा १११४० १ उचलता, बुलन्दी, उँचाई । २ उचलित,  
तरकड़ी, बढ़ती ।

उष्णायिन् ( सं० त्रि० ) उचलत, ऊँचा, उमरा हुआ ।

उष्णायी ( सं० स्त्री० ) फलक, तपूता, पटरा ।

उच्छ्रित ( सं० त्रि० ) उत्पत्ति-क्त । १ उचलत, उठा  
हुआ । २ उच्छ्रात, पैदा । १ प्रवृत्त, बढ़ा हुआ ।  
४ त्यक्त, छोड़ा हुआ । ( पु० ) ५ सरल देवदारुका वृक्ष ।

उच्छ्रितपाणि ( सं० त्रि० ) उल्लिखित हस्तयुक्त, हाथ  
उठाये हुआ ।

उच्छ्रिति ( सं० स्त्री० ) उत्पत्ति वापुनकात् करणे  
घञ् । १ उच्छ्राय, उठान । २ उत्कर्ष, बढ़प्यन ।

“उष्णं निषण्णं वा वा प्राप्नुयन्ति ततो पुनः ।” ( मनु ३०० )

३ उचल घँप्या, ऊँची पदद । ( नीलावली ) ४ त्रिकोणका  
दण्डवान् पार्श्व, सुषप्तसका खड़ा बाजू ।

उच्छ्रेय ( सं० त्रि० ) उचलत, बुलन्द, ऊँचा ।

उच्छ्रक ( सं० पु० हि० ) मानवके शरीरका एक अवयव ।  
( अथर्व० १०५१ )

उच्छ्रद्ध ( सं० पु० ) जन्मप, फाजा, जमदार ।

( अथर्वशा० ३१५१८ )

उच्छ्रमन् ( सं० त्रि० ) स्थूल निष्प्रास-विशिष्ट, हाँकता  
हुआ, जो मुगकिनसे शांस लेता हो ।

उच्छ्रमन ( सं० त्रि० ) १ निष्प्रास लेता हुआ, जो  
चाह भर रहा हो । २ स्थूल निष्प्रास-विशिष्ट, जो  
गहरी शांस छोड़ता हो ।

उच्छ्रमिन् ( सं० त्रि० ) उत्पत्ति-घञ् । १ विकसित,  
मिगुफता, खिला हुआ । २ स्फीन, फूला या गुला  
हुआ । १ जीविन, जिन्दा । ४ उच्छ्रासयुक्त, हाँकता  
हुआ । ५ कम्पित, काँपता हुआ । ६ पाशासयुक्त,

भरोसा रखनेवाला । ( स्त्री० ) ७ उच्छ्रास, खँपी ।  
८ कम्पन, काँपण । ९ स्फुरण, मिगुफता ।

उच्छ्रास ( सं० पु० ) उत्पत्ति-घञ् । १ पन्तल-  
खास, पन्तरकी खींची हुई दम । २ पाशास, भरोसा ।  
३ विद्रोह, कुटकारा । ४ विकार, मिगुफता ।  
५ स्फीति, मूजन । ६ पाकाद्वय, छादिय । ७ हिट,  
सुराक । ८ प्रापन, जिन्दगी । ९ उच्छ्राय, बाह ।

उच्छ्रासित ( सं० त्रि० ) १ प्रापणीन, पैदम, जो शांस  
न लेता हो । २ अधिक, ज्यादा । ३ मुक्त, छूटा  
हुआ । ४ विभक्त, बँटा हुआ । ५ पशुयुक्त, जो मिला  
न हो ।

उच्छ्रासिन् ( सं० त्रि० ) उत्पत्ति-घञ् । १ कर्ष-  
शासयुक्त, हाँकनेवाला । २ उदगत, उठा हुआ ।  
३ शास लेनेवाला, जो दम खींच रहा हो । ४ भरता  
हुआ, जो दम काढ़ रहा हो । ५ गम्यमान,  
जानेवाला ।

उच्छ्रास-तुदा० इदित् पर० सक० सिट् । २ तुदा०  
पर० सक० सिट् । यह बन्ध, समापन और विराम  
अर्थमें लगता है ।

उच्छ्रास-पञ्चाशके भावसुपर राख्यका एक प्राचीन नगर ।  
यह पचा० २८° ११' उ० तथा द्रावि० ७१° ८' पू० पर  
पञ्चनदके पूर्व किनारे भूतानगरे ३० मील दूर अव-  
स्थित है । कहते—उच्छ्रास नगर उधरा, जो सिन्धु-  
बादशाहके बादशाहके पञ्चायमें नदीयोंके सहस्रपर  
बना था । रणोद्-उद्-दीर्घने इसे सिन्धुके पार प्रधान  
प्रान्तमें एककी राजधानी बनाया है । योही उच्छ्रास  
भूतानगके स्वतन्त्र राज्यमें मिल गया । कितने ही  
भावतन्त्र-परिवर्तनके बाद पञ्चवरने इसे अपने सुगम-  
शास्त्राणमें जोड़ दिया था । पञ्चनदके रानी  
भूतानग सुवेका पुत्रक जिना सिपा है । आजकल  
उच्छ्रास-पञ्चाशके मध्य मात्र है । सुगममानों इति-  
हासमें इसका विशेष वर्णन भरा है । सुगममानोंके  
अधिक पादर देवानसे इसकी प्राप्तिगता प्रकट होती  
है । पारसिकोंके जन्म-अवस्था प्रान्तमें लिखा—जिसो  
समय जह या सौमनागरे दरबद माहवार बन्दीदादमी  
प्रति उच्छ्रास ले गये थे ।

उत्तरंग - ( हिं० ) उत्तरंग देना ।

उत्तरङ्गना ( हिं० क्रि० ) विधित होना, उत्तरङ्गना, चौकना, मौचक रह जाना ।

उत्तरङ्गना, उत्तरङ्गना दीखी ।

उत्तरङ्ग ( उच्चाङ्ग )—गुजरातमें दायमा राजपूतोंका एक राज्य । यह मैदान नदीके परवार मोरीसे देखिष्य अवस्थित और औरपुर, रेगन, विक्रमपुर तथा उच्चाङ्ग चार प्रान्तमें विभक्त है । भूमिपरिमाण २६ वर्गमील है । १८वें ई०के शताब्दाब्द पर स्थानीय नृपति, भागर और राजपिपलीने औरपुरके राजा बाजी दायमाको राज्यको श्रीहर्षिमें बड़ा साहाय्य दिया था । इसकी भूमि हलकी और नदी-नालेसे कटी फटी है । ज्वार बहुत उपजती, किन्तु कुछ-कुछ रुई, तेलहन और मदी किनारे तम्बाकू की उपज भी हाथ लग जाती है । राजपिपली ग्राम पार्वत्य और हवादिसे घ्यात है । वनमें खल तथा कठोर फल होती है । महुवा खूब पाते हैं । क्षेत्रफल साढ़े १२ वर्गमील है । प्रति वर्ष कोई दस हजार रुपयेकी धानदानी पाती है । ३५६) ६० गायकवाड़की कर की भांति दिया जाता है । रेगन उच्चाङ्गसे प्रथिम पक्षेला ग्राम है । ग्रामने नर्मदा बहती है । अंशभागी तीन हैं । भूमिका परिमाण प्रायः ४ वर्गमील है । वार्षिक आय ५००) ६० होता, जिससे ४६१) ६० गायकवाड़की करकी तरह दिया जाता है । प्रभु प्रायः रिक्रइस्त ही रहते हैं । स्थानीय भूमि, फसल और जाति उच्चाङ्गसे मिलती है । जमीन्दार साधारण जपकसे अधिक समता नहीं रखते । भूमि कुछ-कुछ हलकी और काली है । ज्वार और चावलकी बहुत बोते हैं । मौलोंका निवास अधिक है । उपरोक्त विभाग लग जानेसे उच्चाङ्गकी भूमिका परिमाण साढ़े ८ वर्गमील है । बारह ग्राम बसते हैं । वार्षिक आय ८००) ६० है । ८८३) ६० गायकवाड़की कररूप देना पड़ता है । पविषासी कोल हैं । मोटी फसल उपजती है ।

उत्तरङ्गना, उत्तरङ्गना दीखी ।

उत्तरङ्गना, उत्तरङ्गना दीखी ।

उत्तरङ्गना ( हिं० स्त्री० ) १ प्रतगति, कोड़ाकोणक, दोड़घूष, नाच-नमागा, हंसी दिखनी ।

उत्तरङ्गना ( हिं० क्रि० ) १ वसित होना, फसाम मारना, छूटना, फाटना, एक बारगी हो ऊपरको उड़कर नीचे आ जाना । २ संयोग निःसरण करना, फट निकलना, उबलना, जोरके साथ बाहर आना । ३ धानन्द करना, खुश होना, उत्तरंग लेना । "बाये बनावत पुन बांध । धाम उत्तरंग मो मो बांध ।" ( मोकीकि ) ४ मोघसे उत्तेजित होना, गुस्से में झूझार बनना, तड़पना । ५ संयोग करना, चट्ट बैठना ।

उत्तरङ्गना, उत्तरङ्गना दीखी ।

उत्तरङ्गना ( हिं० क्रि० ) उत्तरङ्गनेका कार्य करना, उत्तरङ्गना ।

उत्तरलिया—बम्बई प्रान्तकी एक जाति । इस जातिके लोगोंको भामता या गांठघोर मो कहते हैं । पूनाके उत्तरलियोंका वीज तेलगुप्रान्तसे आया समझ पड़ता है । यह टूटी फूटी तेलगु बोलते और अपने नाम दक्षिणो या पूर्वी टाङ्के रखते हैं । दक्षिणसे बरार, गुजरात और पश्चिम भारतमें उत्तरलिये फैल पड़े हैं । इन्हें सामान नहीं अपना घर कब छोड़ा था । कुछ लोग कहते, कि वह चार पांच पीढ़ीसे पूनेके पासपास ग्राममें रहते हैं । भामते कहते मो पूनेके उत्तरलिये भामते नहीं । क्योंकि प्रकृत भामते पूर्व पथया दक्षिण-पूर्वमें नहीं—उत्तरमें पाये थे । यह राजपूतोंके सन्तान हैं । रुप सुन्दर और प्रचक्षतायुक्त रहता है । चर्म कोमल है । भङ्ग सुडोल और हड़ होते हैं । यह कितने हो रुप बना लेते हैं । अपने हो ग्राममें कोई मारवाड़ी बनिया, कोई गुजराती यावक वा जैन, कोई ब्राह्मण और कोई राजपूतके वस्त्र पहनता है । यह जिसे वेगमें वर्षों बने रहते और लग प्रकारके लोगोंको भेकड़ों कोस घूम ठगा करते हैं । कभी कभी यह अपना झूठा नाम धाम बना उसी जातिके व्यवसायीकी सेवामें नग जाते हैं । कुछ दिन शिवासपूर्वक कार्य बना बचकर पाछर बहुत सा द्रव्य ठगा मांगते हैं । बड़े-बड़े मेलोंमें दो-तीन भामते पहुंचते और धानके घाटपर जा बैठते हैं । वनमें कोई ब्राह्मण

कोई यात्रीका रूप बनाता है। फिर मन्थपाठ करने करते वह यात्रियोंके चमद्वारादिपर दृष्टि रखते और चमद्वार वाकर भोगा वस्त्र सुधानेकी केंद्रा देने है। दृष्टि तथा भामते चमद्वारादिकी चण्डीमे दवा रेतमें कुछ दूर पर गाढ़ पाते हैं। छाया इधर-उधर घूम टहल जाते हैं। यात्रीके रीनेधोने पर वह मन्थामुक्ति देघाते हैं। फिर कहने लगते—'हमने चोरोको उधर घूमते देखा है। पाप को चण्डीपण करना चाहिये।' जागोंके उधर जाते हैं। भामता चमद्वारादि उछाड़ कर चम्पत होता है। ऐसी मैनोंमें प्रायः स्त्रियां चपने चमद्वार गठरीमें बांध-कार रख देतीं और उमीके पास बैठ भोजन करती हैं। उस समय दो भामते उनके पास पड़ जाते हैं। एक स्त्रियोंके निकट रहता और दूसरा थोड़ी दूरपर विश्राम लेनेको बैठता है। स्त्रियोंके दूसरी ओर घूमते ही वह गठरी चोरा रेतमें गाढ़ देता है। एकड़े जागेपर भामतेके पास कुछ नहीं निकलता और पदाक्षतसे साफ छूट जाता है।

पुना नगरमें छहलिये चण्डी दक्षिणी भामते भरे पड़े हैं। नगरकी चारो ओर प्रधानतः बादगांव, भाटगांव, करजा, मुगियाबाड़ी, पावस, गोपुड़ी, खनेरसर, कोंडवे, मुगटव, तलेगांव और चमारीमें इनका चढा है। कुछ सर्वदा पर्यटनपर रहते हैं। इनके गायकवाड़ और जादव दो विभाग हैं। केवल मीच जातिके जांगी, मारो, चमारो, छोडो, बरुडो और तैलियांकी छोड़ छहलिये सब हिन्दू मुसलमान चण्डीकार करते हैं। रसोमे कितने ही ब्राह्मण, यनिये और सोनार सममें जा मिले हैं। अन्य आतिथानीकी छहलिया बमनेके जिये २०१५ रूपये देना पड़ता है। याचकके मुखमें दरिद्रता तथा मर्खी का लम्बनेसे ही संस्कार बन जाता है। फिर दो एक बड़े बड़े छहलिये माधारण भोजनमें बैठ उनके साथ पाटे-पीते हैं। बाबा यज्ञता और चतर-पान बंटता है।

पूनाके छहलिये कामे और तेलगु या द्राविड़ लेशे होते हैं। कितना ही मारते-पीटते भी उनके चतुसे पद नहीं निश्चता। 'पुदय गिष्ठा, झल्ल, मण्डलीम

और चमक रखते हैं। दाढ़ीमे मयको छूपा है। तेलगु और मरहठी मिली बोनी चलती है। एक घूर पातते हैं, गोष्ठ्या कभी नहीं करते। विवाहके समय मांसपूजा पकता है। छहलिये संध फोड़ने का हाका हासनेसे दूर रहते हैं। क्योंकि ऐसा मान करनेसे ये आतिथी निकाल दिये जाते हैं। प्रातः कामसे सम्बन्धित धोकेधडीमें भाम मारना ही इनका प्रधान चहेश्र है। छहलिये चपने सुखिये पटेकथे पूछ मांस मारने जाते और लोटकर कपड़ेमें दो भामे उसकी भेंट चढ़ाते हैं। जुगुप्सी करनेमें पचापत कठोर दण्ड देता है।

'पुदय और चोरी दोनो चमग या मित-मुलकर मांस मारते; किन्तु किसीकी सब चीज नहीं चुराते, एक ही पाधसे समुष्ट हो जाते हैं।

सम्मान चतुपथ होनेपर सट्टाई देनीका पूजन है। चौम करमें भोज देनेका विधान है। विवाहके समय वरका १०१२० और कन्याका ययस ६१० वत्सर रहता है। वरपक्षसे कन्यापक्षकी २००१२५ रूपया दिया जाता है। विवाहके समय रातभर गांधने भाचते गाते हैं। छहलिये विधवा विवाह और झोल्याग भी करते हैं।

इनमें मृतक लसानीकी प्रथा है। तीसरे दिन श्रमयानमें भोज होता है। १३ वें दिन सुपुन और पिण्ड तथा बलिदान करते हैं।

छहहरा (उचहरा) गांध दीयो।

छहाट्या (हिं० कि०) छहाटन करना, छटाना, भगाना।

छहाड़, चवान दीयो।

छहार, चवान दीयो।

छकास (हिं० खो०) १ प्रति, फर्मान, कूद-फांद।

२ सवेग निःसरण, लारका निकाल, चवान। ३ चानन्द, खुशी, छर्लंग। ४ उल्लेखना, गुणा, तक्ष। ५ संशोध, चर्चा। ६ क, वमन, हाट। ७ फेंकना। ८ चप-मान, धिक्कनी। ९ युद्ध, झड़।

छलान बडा (हिं० खो०) विचारवती गी, प्राहिमा, दिनाल। यह चपनी हसी देसती है।

छहालना (हिं० कि०) १ चतुपथ करना, फेंकना।

"कोन चवान है चने जने।" (नोर्वीच) २ वमन या क

करना, डालना, झाड़ना। ३ चपमान करना, चावक  
उतारना, नामकी बड़ा लगाना। ४ खुद करना, सड़ना।

उद्दाला (हिं० पु०) उद्दान देखो।

उद्दाव (हिं० पु०) उत्साह।

उद्दास (हिं०) उद्दास देखो।

उद्दाह (हिं० पु०) उत्साह।

उद्दाही (हिं० वि०) उत्साही।

उद्दिस (हिं०) उद्दिस देखो।

उद्दिष्ट (हिं०) उद्दिष्ट देखो।

उद्दीड़ (हिं० स्त्री०) अत्यन्त, कमी, खोलापन।

उद्दीनना (हिं० क्रि०) उद्दिष्ट करना, मोच डालना,  
छाड़ना।

उद्दीद (हिं०) उद्दीद देखो।

उद्दील, उद्दील देखो।

उद्दीर (हिं० क्रि० वि०) उस धीर, उस तर्क।

उद्दीक—प्राचीन स्तूपसुद्धा विशेष। सुसलमानों समयमें  
इसका चलन था।

उद्दीका (हिं० पु०) सन्नासन, भुचकाग, विड़ियोंके  
छड़ानिका पुतला, काली कण्ठी, घोका, डड़ाया। यह  
दणपत्रादिसे बनाया और गल्लेमें लगाया जाता  
है। भीषण चाकार देखते ही पत्ती भागते हैं। इससे  
किसी की कुदृष्टि भी धीरेपर नहीं पड़ती।

उद्दीज (हिं० पु०) उद्दीज, साधु या मुनिका चायम,  
भोपड़ा। यह घासफूससे बनता है।

उद्दीड़ (हिं० वि०) उद्दीड़।

उद्दीड़ना (हिं० क्रि०) १ समूल नष्ट होना, नष्टमें  
सखड़ना, सूख जाना, मोच खसोटमें पड़ना। २ पतन  
होना, गिरना, बरबादीमें पड़ना, मरी हो जाना।

३ चपवत होना, झुटना। ४ जनशून्य होना, खाली  
पड़ना। ५ रूपव्यय होना, खर्चमें लगना, खो जाना।

६ तमोहत होना, अच्छा न लगना, सदास पड़ना।

७ अत्यन्त सतुल्य होना, बड़ा जाना, किसी कामका  
न रहना। ८ शून्य, समान, नाबीज होना, तुच्छ  
देख पड़ना। ९ भवन झूटना, घरसे बाहर होना,  
देख पड़ना। १० विनष्ट होना, मरना। ११ अप-  
मानित होना, ह्यूत होना। १२ पति वा स्त्री

झूटना, रांड या रंहुवा होना। १३ पतनकी प्राप्त  
होना, गिर पड़ना।

उजड़वाना (हिं० क्रि०) विनष्ट कराना, बरबादीमें  
डसवाना, उजड़ाना।

उजड़वायी (हिं० स्त्री०) विनष्ट करानेकी क्रिया,  
बरबादीमें डसानेका काम।

उजड़ा (हिं० वि०) १ विनष्ट, शून्य, बरबाद, धानी,  
जो खराब बन गया हो। "उजड़े परना बरबाद" (श्रीकोवि)  
(पु०) २ नाथक, बरबाद करनेवाला, बदमाश।  
३ अधम व्यक्ति, कमीना शब्दस।

उजड़ा मुजड़ा (हिं० वि०) नष्ट भट, खराबपन्ना,  
सखड़ा-पुखड़ा, गया गुजरा, टूटा-फूटा, कटा फटा।

उजड़ाई, उजड़वायी देखो।

उजड़ाना, उजड़वाना देखो।

उजड़ड (हिं० वि०) १ गिताम्भमूर्ख, विलकुल बेवकूफ,  
जिसे जरा भी समझ न रहे। २ भीषणशोद्धन, कमीने  
खान्दानसे पैदा, जो तौर तरीका जानता न हो।  
३ तुच्छ, कठोर, सपूत, गंवार। (पु०) ४ महा-  
मूर्ख व्यक्ति, जो गल्ले स निहायत बेवकूफ हो। ५ निर्दय  
मनुष्य, बेरहम शब्दस।

उजड़डपन (हिं० पु०) १ मूर्खता, बेवकूफी। २ तुच्छता,  
कठोरता, सपूती।

उजड़क (तु० वि०) १ मूर्ख, बेवकूफ, गंवार।  
(पु०) २ तातारियोंकी एक जाति। उजड़क देखो।

उजड़िया—अफगान-तुर्कस्तानकी एक शासक जाति।  
उजड़िया देखो।

उजड़मन (हिं० पु०) भोजके समय अपनमें हृद  
स्त्रियोंकी दो जानेवाली भेंट।

उजड़त (अ० पु०) १ पारित्यमिक, मजदूरी, कामका  
दाम। २ शल्ल, किराया।

उजड़न (हिं० स्त्री०) ध्वंभावयेव, जो बीज उजड़नेमें  
बधी हो।

उजड़ना, उजड़ना देखो।

उजड़ा, उजड़ा और उजड़ा देखो।

उजड़ाई (हिं० स्त्री०) १ शल्लता, सज्जेदी, गोराई  
२ निर्मलता, सफाई।



उज्जराना (हिं० जि०) १ विनष्ट कराना, बरबादीमें डलाना। २ खेत कराना, सफेदी दिखाना।

उज्जमत (च० स्त्री०) गीमता, फुरती, चम्पदी।

उज्जमयाना (हिं० जि०) उज्ज्वल कराना, चमकवाना।

उज्जला (हिं० वि०) १ चच्छल, चमकीला। २ निर्मल, गङ्गाफूल, गोरो-जैसा। ३ खेत, सफेद। ४ पवित्र, पाक, पच्छा। ५ दीप्तिमान्, रोशन, होशियार।

उज्जला भादमी (हिं० पु०) १ खेत परिच्छेद पहनने-वाना मनुष्य, जो भादमी सफेद कपड़े पहने हो। २ भग्यानिष्ठ व्यक्ति, दयितदार मनुष्य। ३ साधारण मनुष्य, मामूली मनुष्य। इसी प्रकार खेतवस्त्रको 'उज्जला-कपड़ा' और छाच्छ भवनको 'उज्जलाघर' कहते हैं।

उज्जला कहूँ (हिं० पु०) पलाइ, गोलकहूँ, लोकी।

उज्जला कनेर (हिं० पु०) खेतकरघोर, सफेद कनेर।

उज्जला चन्दन (हिं० पु०) खेतचन्दन, सफेद चन्दन।

उज्जला जामुन (हिं० पु०) सफेद जामुन।

उज्जलाधतूरा (हिं० पु०) सफेद धतूरा।

उज्जलामंगरा (हिं० पु०) सफेद मंगरा।

उज्जली (हिं० स्त्री०) रजकली, धोवन।

उज्जलीका बाजार (हिं० पु०) खेतप्रदर, सफेदा।

उज्जली बाघफूरो (हिं० स्त्री०) सफेद खींच।

उज्जली तुलसी (हिं० स्त्री०) सफेद तुलसी।

उज्जलीवरम्—गुजरातकी एक जाति। इस जातिके लोग काशीप्रजवासोमें प्रचलित हैं। किन्तु कोलियोंके साथ विवाहादि सम्बन्ध कर लेते हैं। इनमें कुनबी आदि कृषक एवं ब्राह्मण, बनिये, राजपूत, कारीगर और भाट मिलते हैं, जो प्रायः नागरिक रहते हैं। ये खेतिप्रायके अनुसार प्राचीन वर्षाविभागके पक्षपाती हैं। देवदेवियोंकी पूजा करते हैं। इनमें विधवा विवाह कोई नहीं करता।

उज्जसे पानकी लड़ (हिं० स्त्री०) खेत ताम्बूलका मूल, सफेद पानकी लड़।

उज्जयाना (हिं० जि०) डलाना, डलाना, लोढ़ाना, धासी करवाना।

उज्जयास (हिं० पु०) युक्ति, तदघोर, बाल, बोजली।

उज्जहाणी—युद्धप्रदेशके बड़ाया जिलेका एक नगर। यह पचा० २८° १०' २५" उ० और द्रावि० ७२° २' २०" पू०पर अवस्थित है। यहाँ हिन्दू, जैन, मुसलमान और ईसाई रहते हैं। नगरमें पकी इमारत और सड़क बनी है। शुद्ध सेमी बहुत तेजवर की जाती है। गोलका काम भी चलता है। सप्ताहमें दो बार मङ्गल और मनिवारको बाजार लगता है। घाना, डाकघर, स्कूल और सुसाकिरखाना मौजूद है। कितनी ही सुन्दर भस्त्रिदे छोड़ी है।

उज्जागर (हिं० वि०) १ दीप्तिमान, चमकीला।

२ प्रसिद्ध, मशहूर। ३ प्रकाशित, साफ, जाहिर।

उज्जाड़ (हिं० पु०) १ विनाश, बरबादी। २ गृह स्थान, पाली लगह। (वि०) ३ विनष्ट, बरबाद, जो विगड़ गया हो।

उज्जाड़सुँह (हिं० पु०) हतमाय्य सुख, कमबख्त चेहरा। 'बर नाक सुँह उज्जाड़' (लोकोक्ति) इसी प्रकार 'चलद्वार-रहित खीकी मो' 'उज्जाड़ घाते' कहते हैं।

उज्जाड़ना (हिं० जि०) १ उतुपाटन करना, उखाड़ना, जोत काटना। २ पछ करना, तोड़ना, टुकड़े छड़ाना। ३ विनाश करना, खोँच लेना, भरीमें मिलाटना। ४ निष्कासन करना, निकालना। ५ सुच्छन करना, लूटना, से भागना। ६ दरिद्र बनाना, तबाह करना। ७ निर्जन करना, बसा डेखाना। ८ आघात करना, चोट मारना।

उज्जाड़ू (हिं० वि०) १ सुखदय, माहमुर, खाने-छड़ायेवाला। २ नायक, बरबाद करनेवाला, जो लूट लेता या विगाड़ देता हो।

उज्जान (हिं० जि० वि०) धाराके प्रतिजूल, दरयाकी जपरी घोरकी।

उज्जार, उज्जरी देखो।

उज्जारा, उज्जरा और उज्जरा देखो।

उज्जारी (हिं० स्त्री०) देवता किञ्चित् प्राय, चन्दन खेतका कुछ पनाज। यह देवताके चर्च प्रथम तोड़ कर चलग रख दी जाती है। उज्जरी देखो।

उज्जालना (हिं० जि०) १ प्रकाशित करना, जलाना।

- २ प्रकाशित कराना, चमकाना । ३ परिष्कार करना, सफाई लाना, रंगड़ना, सांजना ।
- उज्जाला ( हिं० पु० ) १ दिन, धूप, चमक । २ दीप्त, रीगनो । ३ सहिष्णुता, नाम, गङ्गा । ४ एकमात्र पुत्र, एक लोता घंटा ।
- उज्जाली ( हिं० स्त्री० ) चन्द्रज्योत्स्ना, चांदनी ।
- उज्जालेका तारा ( हिं० पु० ) शुक्र, शबरेका नक्षत्र ।
- उज्जास, उज्जासा देखो ।
- उज्जियर, उज्जसा देखो ।
- उज्जियरिया, उज्जसा देखो ।
- उज्जियार, उज्जसा और उज्जसा देखो ।
- उज्जियारना, उज्जसा देखो ।
- उज्जियारा, उज्जसा और उज्जसा देखो ।
- उज्जियारी, उज्जालो देखो ।
- उज्जियाला, उज्जसा देखो ।
- उज्जीता, उज्जसा और उज्जसा देखो ।
- उज्जीर ( हिं० पु० ) ज्वीर, मन्दी ।
- उज्जुबा ( हिं० ) बगुना देखो ।
- उज्जनी ( हिं० स्त्री० ) उल्लोम । उज्जनी देखो ।
- उज्जैर, उज्जसा देखो ।
- उज्जैरा ( हिं० पु० ) १ नूतन वृषभ, नया बैल । जब तक बैल गाड़ी चरुहरनमें जोता नहीं जाता, तब तक उज्जैरा कहलाता है । २ उज्जाला, प्रकाश । ( वि० ) ३ उज्जता, साफ़ ।
- उज्जैला, उज्जसा और उज्जसा देखो ।
- उज्जय ० ( सं० स्त्री० ) खूब या बलिष्ठ पड़नेका भाव, जिस हालतमें मोटे या ताकतवर रहें ।
- उज्जयनी ( सं० स्त्री० ) अवनी । उज्जयनी देखो ।
- उज्जयन्त—काठियावाड़के अन्तर्गत एक पवित्र पहाड़ । इसका वर्तमान नाम गिरनार है । यह लूनागढ़से प्रायः ५ कोस पूर्व पड़ता और अक्षां २१° २१' १०" तथा द्रावि० ७०° ४२' पूर्व पर अवस्थित है । पतिप्राचीन कालसे यह पर्वत हिन्दुओं और जैनोका मुख्य तीर्थ माना जाता है । महाभारतमें लिखा है—

“अनामकोटी तीर्थं विद्वानां सुप्रसिद्धम् ।

सर्व विचारकं नाम तापसाचार्यं गिरम् ।

उज्जयन्त गिरौ पितृ विविचरी मन्त्रम् ॥ २१

पुत्रो विरो सुराष्ट्रं वनपक्षिनिरे विने ।

उज्जयन्तं च जगज्जो नावदुष्टं नरोदते ॥ २२ ( वन पञ्च ७० )

समुद्रतीर सुराष्ट्रके निकट देवगणका प्रभासतीर्थ है । यहां विष्णुआरक तीर्थ और पाण्डु सिद्धिदायक उज्जयन्त पर्वत परिलक्षित है । शृंग और पंचियोमे समाकुल सुराष्ट्रदेयके पवित्र उज्जयन्त पर्वतपर तपस्या कर मनुष्य स्वर्गलोकमें पहुँचता है । स्कन्दपुराणके प्रभासखण्डमें कहा है—

“अनामकोष समिधे उज्जयन्तो गिरिर्भद्रम् ।

तत्र पवित्रमाथे तु देवतश्च इति श्रुतम् ।

उज्जयन्ते पदं गता ततः स्वर्गं निगमयः ।

द्वैपायनपदाश्रित उज्जयन्तो महाशक्तिः ।

मुखाय तीर्थं बहुधा मनपाशीर्हर्षं हविः ।

उज्जयन्तं गिरिरं वैशाख्यं चणोदरम् ।

सुराष्ट्रदेशे विख्यातं पुनर्यो प्रथमकृतम् ॥”

उक्त वचनसे उज्जयन्त गिरिका माहात्म्य सूचित होता है । पर्वतके पास ही सुप्रसिद्ध वन्यापयक्ष है । इस स्थानको भी पालकान गिरनार कहते हैं ।

स्कन्दपुराणमें लिखा है—भारतवर्षके सकल तीर्थोंमें प्रभास श्रेष्ठ है । प्रभासतीर्थको अपेक्षा वन्यापयको समधिक पुण्यप्रद बताया है ।

“यद् देव त्वया पूर्वं प्रसादं बलिने जने ।

तथाप्यपि त्वं प्रीतिं चेतं वन्यापयं जय ॥” ( प्रभासखण्ड )

वन्यापय-क्षेत्रको भीमा इस प्रकार निर्दिष्ट है—

“अत्रैव तु नरो भद्रा पूर्वकां योजनवन्तम् ।

दक्षिणे च पश्चिमामुज्जयन्तो नदीमनु ।

अत्रत्यो वरं वयोः सङ्गं नामान्तरं पुरातम् ।

अत्रत्यो वरं वयोः सङ्गं सुप्रसिद्धं नामवन्तम् ।

यः कालं विचारी तं यो योजनार्थं अनुदरम् ॥” ( प्रभासखण्ड )

उत्तर अम्बानदी, पूर्व एवं दक्षिण दो योजन अवधि विस्तृत यलियाग, उसोके पश्चात् उज्जयन्ती नदी और पश्चिम बागमनुरसे उभय नदीके मध्य पर्वत श्रान्तमें सुप्रसिद्ध वन्यापय-क्षेत्र है । इसका विस्तार चार योजन है । प्रभासखण्डमें वन्यापयको उत्पत्तिका इसप्रकार उपाख्यान है—

एक दिन केनासमें शिव और पार्वती दोनों बैठे थे । पार्वतीने शिवसे पूछा,—प्रभो ! कुछ दयापूर्वक

वतनारये, जिस प्रकारके कार्यमें मानव भाषकी पूजता और कभी पाचरण तथा कभी उपासनासे समुत्पन्न करता है। गिवने कहा,—जो जीव नहीं मारता, सर्वदा सत्य वचन बोधता, कभी क्रूरकर्म नहीं जाता और युद्धक्षेत्रमें पकातर पाने पद बढ़ाता, वही मुझे रिक्ताता है। इसी प्रकार कथावातां होने समय ब्रह्मादि देव केनाममें पा पढ़े। उनमें विष्णुने गिवको सप्र कर कहा,—‘पाप सर्वदा ही देव्यादिको घर देते हैं, जिसके प्रभावसे वे नियत मनुष्य पर अनिष्टाचरण करते और मेरे पालन कार्यमें व्याघात जानते हैं। इधिवेकी चप में पात्र नहीं सकता। मेरा पद कौन लेगा!’ गिवने उत्तर दिया,—‘मैं पाद्यतोष हूँ। सप्प वेशसे ही समुत्पन्न हो जाता हूँ। मेरा यह स्थाय कूट नहीं सकता। पापकी बुरा लगता है। इसीमें मैं चप देता हूँ।’ यह कहकर गिव कैलाससे चत्तर्धान हुये। उस समय पार्वती बोली—‘मैं गिवके व्यतीत एक क्षण भी नहीं ठहर सकती।’ बोले देवता पार्वतीके साथ गिवकी टूटने निकले। उधर गिव वस्त्रापथमें चलने वस्त्र छोड़ पड़्यस्त भावसे रहने लगे। पार्वती और देवता सब मिलकर टूटने टूटने वस्त्रापथमें पा पढ़े। विष्णु गहड़स उत्तर चैतक पर्वतपर टिके। पार्वतीने उज्जयिनी गिरिकी चूटापर विद्याम किया। इसी समय नागराज और गङ्गादि नदीमनुष्य पातामसे यहाँ पाये। देवगण भी निज निज मनोनीत स्थानमें बैठ गये। पार्वती उज्जयिनी-गिरिके श्रृङ्गसे गिव-क्षीत गाने लगी थी। पाद्यतोष फिर टिप न सके, पार्वतीके स्नायसे समुत्पन्न हो सर्वके समक्ष देख पड़े। देवगणमें उनमें कैलास चमनेका अनुरोध किया। गिवने कहा,—‘मैं कैलास का सकता हूँ। पाप और पार्वतीको इसी वस्त्रापथमें रहना पड़ेगा।’ देवगणमें घेसा हो किया था। गिव स्वना पंग छोड़ कैलासकी चप दिये। उसी समयमें विष्णु चैतक और पार्वती चम्पा नामसे उज्जयिनी गिरिके श्रृङ्गपर पवस्थित हैं।

वस्त्रापथमाहात्म्यका उपासना इस प्रकार है—

भोज नामक एक राजा रहे। देहद्वयवर्धन पुत्रपर राज्यभार ठान लीके साथ गङ्गातीर पहुँचे। कुछ दिन वीके भद्र नामक एक मुनि कतिपय पक्षि साथ से उसी नदी तीर गये। पुत्रहीन गङ्गामें नहा मुनिवरने ध्यान लगाया था। उसी समय राजा भोजने उठे देख लिया। दग्धन मातसे ही भोज राजाके हृदयमें भक्ति टपक पड़ी। उन्होंने निकट पहुँच निज पायम चलनेके लिये मुनिको मनाया था। वे भद्र राजाके वाक्यसे सम्भत हो उनके पायम गये। भोजने लीके साथ मुनिवरकी परिचर्या कर पूजा—‘मुनिवर! मानव संसारके प्रसोभनसे मूल जन्म और मरणके चक्रमें घूमता फिरता है। भगवन्! पाप दयापूर्ण कृता सकन हैं—कैसे मानव निज गानि का लाभ उठाता है?’ मुनिने उत्तर दिया—‘इधिवेपर गङ्गा प्रवृत्ति बनेक पुष्पतोया नदी और विष्णु पथ गिवके तीर्थ हैं। निर्दिष्ट समयपर नदीमें स्नान और तीर्थमें देवदर्शन तथा दान कार्त्तसे चगीय सुख मिलता है। किन्तु वस्त्रापथतीर्थ धार्मीको निज चमना सुगमय स्वर्ग देता है। एकदा मैं वस्त्रापथके दर्शनको गया था। वहाँ विष्णु रहते हैं। उन्होंने मुझसे कहा था—सकल तीर्थ दर्शनके निमित्त वस्त्रापथ परियमसे वरा प्रयोजन है। वस्त्रापथमें दामोदर देवका दर्शन और दामोदरकुण्डमें ध्यान करनेसे ही सर्व तीर्थों का फल मिलजाता है। विष्णुके पादेगामुनार में उसी तीर्थका दर्शन करने जाता हूँ।’ चमत्कार राजाने पूजा—भगवन्! वस्त्रापथ चैत कहाँ है? वहाँ कौन कौन पर्वत, कौन कौन नदी और कौन कौन वन हैं। मुनिने बताया—उम चैतकी पागे दिक् समुद्र है। चगेज गगर बने है। भवनायके निकट उज्जयिनी पर्वत है। उसके पश्चिम चैतक विद्यमान है। इसी पर्वतके श्रृङ्गसे सरस्वती नदी निकली है। पातालसे चर्मरक्षाकी उत्पत्ति है। गाम्ब, प्रद्युम्ब प्रवृत्ति यादव सदीक इस चैतमें रहते हैं। दामोदरके निकट चैतक-कुण्ड है; चगे चैतने बलशाय था। इसी स्थानपर ब्रह्मकुण्ड नामक दूगा भी कुण्ड है। दामोदर इस कुण्डमें गङ्गामें धारि है। इस चैतमें जो

अग्नि पक्ष प्रस्तरका मन्दिर बनाता है, वह पक्ष खड्ग वर्ष निरामय स्वर्गका वास पाता है। रेवतकके सन्धिकट दो कोश विस्तृत भस्मार्ष्ट्य चेत है। यह चेत अधिकतर पुष्पपद है। इसके जलमें प्राचीका अस्थि गिरनेपर उसी क्षण विलीन होनेसे इसका नाम विलीयक पड़ा है। यहाँ अनेक संसारसूक्ष्म सप्तासी रहते हैं।<sup>१</sup> भद्र ऐसा कह कर चलते बने। पीछे राजा और रानी वस्त्रापथकी गये। वे कार्तिक मासकी पूर्णिमाकी यहाँ पहुँचे थे। महारंज राजाने भवनाथ और दामोदरका दर्शन किया। उसी समय स्वर्गसे रथ आकर उनके लिये वहाँ लग गया। राजा और रानी दोनों स्नानसह उसपर बैठ निरामय स्वर्गकी चले गये।<sup>२</sup>

प्रभासखण्डमें वस्त्रापथके देखने योग्य स्थान भी वर्णित हैं—वस्त्रापथसे पश्चिम कनकविष्णु गिरि है। इस स्थानपर भीमने उन्नक नामक असुरको मारा था। अनेक शिवलिंग प्रतिष्ठित हैं। तीर्थयात्रीको इस स्थानका कार्य शुका मङ्गलगिरिसे पश्चिम प्रवाहित गङ्गाके स्रोतमें नहाना चाहिये। फिर गङ्गेश्वरकी पूजा आदि करना उचित है। उसके पीछे भारी भारी विष्णेश्वरसे पश्चिम स्थित इन्द्रेश्वर, और मङ्गल गिरिसे पश्चिम यक्षवन्धय यक्षेश्वरीकी दर्शन कर पूजने का विधान है। पीछे रेवतक पहुँचना चाहिये। यहाँ रेवती और भीमकुण्डमें नहा दामोदरका दर्शन करना उचित है। दामोदरके दर्शनात् भवनाथ जाते हैं। वहाँ भृगी प्रभृतिमें नहा उज्जयन्त गिरिपर चढ़ना चाहिये। पीछे अम्बा देवी, इन्द्रिपद, रसकूयिका, तप्तकुण्ड, गोमुख, गङ्गा, प्रसूय प्रभृतिके दर्शन बाद तीर्थयात्रीका कर्तव्य सुस्वकर्मोदि होना उचित है।

जैन भी उज्जयन्तकी अपना अतिपवित्र तीर्थ मानते हैं। प्रति वर्ष हजारों जैन यहाँ तीर्थ करने जाते हैं। तीर्थहस्तके अनेक मन्दिर बने हैं। उनमें

<sup>१</sup> भस्मार्ष्ट्य चेत कर्तव्य है पूर्ण सचरेण मनीषी उज्जयन्त गिरि परेण विस्तृत है। यहाँ दामोदर, भवनाथ, विष्णु, सचरेण, मङ्गलेश्वर, मङ्गलेश्वर, मङ्गलेश्वर, मङ्गलेश्वर, रेवतक, उज्जयन्त, रेवतीकुण्ड, कुली, नर, भीमकुण्ड और भीमेश्वर-तीर्थ है। (प्रभासखण्ड)

नेमिनाथका मन्दिर अति प्राचीन है। स्थानीय मिना-लिपिसे समझ पड़ता है—१२७८ ई०को इस मन्दिरका संस्कार हुआ था। दूसरा भी एक अति वृहत् प्राचीन मन्दिर है। उसे वस्तुपात्र और तेलोपात्र समय भ्रान्ताने धनवाया था। जैनशास्त्रके मतमें इस तीर्थका दर्शन करनेसे पञ्चय स्वर्ग मिलता है। गिरनार देवी।

पूर्व समय इस उज्जयन्तमें बौद्ध भी तीर्थ करने जाते थे। बौद्धराज अयोधकी मिताक्षिपि इस गिरि-पर उत्तुकीर्थ थी। अनुशासनके पत्र पर शोक और बालुहिक राजगणका नाम मिलता है। ई० के ७ वें शताब्दीमें चीन-परिव्राजक ह्युएन-त्सुह इस गिरिको देखने जाये थे। उन्होंने इसके विषयमें लिखा है—‘उज्जयन्त (जुह-चेन-तो) गिरिपर (बौद्धोंका) सङ्घाराम है। स्थानीय आर्यमादि पर्वतका पार्श्व छोड़कर बनाये गये हैं। पर्वत वनसे परिपूर्ण है। कई नदी इसके शिखरसे निकलती हैं। सिद्ध जाते जाते हैं। आत्मप्रान्ती श्रद्धा एकत्र रहते हैं।’ किन्तु उन्न परिब्राजकका वर्णित सङ्घाराम अब देख नहीं पड़ता। कहते हैं—७२४ ई०में अरबोंने भारतके भीतरहुस उज्जैनकी जीता था। यह सम्भवतः उज्जयन्त या गिरनारका जूनागढ़वाला पर्वत होगा। किन्तु अचनानेमें लिखा है—उभयपद अक्षमनीदेके समय (७०५-७१५ ई०) काश्मिरके पुत्र मुहम्मदने जयपुर और उदयपुर विजय किया। हमसे मालूम होता है—कदाचित् अरब मध्यभारतमें उज्जैनतक बढ़ पाये थे। क्योंकि राजस्थानमें खरमश टहने उज्जैनकी चित्तौरका एक सूबा बताया है।

उज्जयिनी—मध्य भारतान्तर्गत मालवप्रान्तकी प्राचीन राजधानी। यह सिपा नदीके दक्षिणतट अक्षा० २१° ११' १०" ७०' और द्रवि० ७५° ५०' ४५" ५०' पर अवस्थित है। हिन्दूमें धोग उज्जैन कहते हैं। आर्यकाल उज्जयिनी ब्राह्मण राजपूतकी प्राचीन है। यहाँसे बहुत पक्षीय बाहर भी जाते।

यह एक अति प्राचीन नगरी और पदविराज्यकी विख्यात राजधानी है। महामारतके समय यह मध्य

‘चवन्तो’ कहलाता था। (अनन्तर) किन्तु पुरा-  
तन उत्खडिनी नाम लिखा है। इसे बिद्याला और  
पुष्पकरचिनी भी लिखते हैं। चवन्ते ईश्वर; पाश्चात्य  
प्राचीन ऐतिहासिक टलेमी और ऐतिहासिक दस  
अक्षरका ओज़ेनि (Ozene) नाम लिखा है। टले-  
मीका लेख है—उल्लेख तियादासको राजधानी है।  
(Ptolemy, Geog. Bk. vii. c. 1. 53) ‘तियादास’  
‘चटन’ शब्दको प्रयुक्ति है। प्राचीन मुद्रा और  
मिन्मोनिपिहारा समझ पड़ा है—उल्लेख चटन नामक  
एक राजा मालन और थारके निकटवर्त प्रदेशपर राज्य  
करते थे। इतराज्य है।

ऐतिहासिक भी लिखा है (अर्थ) बारिगजके पूर्व  
उत्पन्न है। इस नगरमें राजा रहते थे। उल्लेख  
साधारणके व्यवहारको पक्षीक, वर्तन, उल्लेख मलमल,  
कईका बढ़िया कपड़ा और जामाप्रकार उपादेय द्रव्य  
बनाता था।

प्राचीन कालमें चनेक राजवत्सवर्ती यहाँ मिन्मालन  
पर बैठ राजत्व कर गये हैं। किन्तु दुःखका विषय है  
उल्लेख प्राचीन इतिहास अतिचलनकी मिलता है।  
मिन्मालनके महावंश नामक बौद्ध ग्रन्थमें लिखा है—  
चन्द्रगुप्तके पीछे चमोकेने अपने पिताके राजप्रतिनिधि-  
रूपमें कुछ कालतक उल्लेखमें राजत्व किया था।  
चमोकेके पिता पाटलिपुत्रके राजा थे (ईसाके १२  
शताब्द पूर्व)। उसके प्रायः प्रताप कीतीतपर (ई०  
१५० वर्ष पूर्व) एक बौद्ध यति प्रायः ४०००० मिथोने  
ममभियाधारमें उत्खडिनीके दक्षिण गिरिमठके सिंहासन  
दीपको गये थे।

बहुकाल पीछे राजा विजयमालिकके दस नगरीका  
अधिकार मिला। उसके राजत्व कालमें कालिदास  
प्रवृत्ति नगरमें उत्खडिनीको चमकाया था। पूर्व-  
काशीन चन्द्रगुप्त, इक्ष्वाकुपुर प्रवृत्ति प्राचीन नगरीको  
भानि विजयमालिकके शासन कालमें समय इसको भी  
नष्ट हो रही। ई०के ७३० शताब्दमें चीन यात्रिगणक  
हुएन्-तुएन् उत्खडिनी (ह-ले-सेन्-न) देखने पाये  
थे। उस समय भी यह नगरी बहुतसे लोगोंकी वास्तव्य  
रही। हिन्दू धर्मके चमोके औरतान और महाप्राय

समय सम्प्रदायके बौद्ध धर्म थे। हुएन्-तुएन्ने  
उत्खडिनीके निकट ही चमोकराजनिमित्त एक स्तूप  
देखा था। किन्तु यह वह स्तूप ही नहीं। सबको यह  
आश्चर्य मानमें चली गयी। प्राचीन उत्खडिनी पर्यन्त  
भूगर्भमें गाढ़ी है। बिद्याला अपने समस्त राज्यों  
दुःखमें कलाले अपना मुखा देखा न सकी। इसीमें समझ  
पड़ता है—चन्द्रगुप्तकी गोदमें चमोकेके राजा हैं।  
आजकल यह प्राचीन चवन्तो नगरी नहीं। उल्लेख  
उत्तर पार्श्वपर बसो एक नूतन नगरीको उत्खडिनी  
कहते हैं। इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता—प्राचीन  
चवन्तोकी भूमिमें मध्य निहित दृष्टि कितना आश्चर्य  
बोता। निश्चित भूमिमात्र हीनेका क्या कारण है ?  
उल्लेख सम्प्रदायमें नाना मतमें देख पड़ते हैं। वर्तमान  
उत्खडिनीमें दक्षिण वर्तमान प्राचीन चवन्तो विस्तृत  
हूयो है। यही खोदते खोदते प्रायः १०१२ पात्र  
नीचे पाज भी प्राचीन नगरका चित्र मिलता है।  
भूगर्भमें प्रसारका बहुत चमक स्तूप गाढ़ा है।

इसका भी प्रमाण नहीं मिलता—वर्तमान नगर  
किसने बनाया था। चमोकेके काल  
उत्खडिनी सुसज्जमानोंके बावली। १२८५ ई०  
१४८८ ई० तक इसके शासनका भार एक राज-  
प्रतिनिधि पर रहा। पीछे में आधीन हो गये थे।  
१४११ ई० तक आधीन भारतमें राजकार्य चला। उसके  
बाद गुजरातके नवाब सदादुर शाहने उत्खडिनीपर  
अधिकार किया था। १४०१ ई०की फिर एकबार  
बादशाहने इसे जीता। १४१८ ई०को उत्खडिनीके  
निकट ही चोर्गनजिब और दारा दोनों भाईगोत्रों की  
तरफ से युद्ध हुआ था। १०८२ ई०को चोलवरने इसे  
ने चनेक काल बना दिया। उसके बाद उत्खडिनी  
मिन्मालनके बावली हो चोर्गनजिब परम कालमें  
उल्लेख राजत्व भोग किया।

उत्खडिनी एक पवित्र तीर्थस्थान है। इसे हिन्दू,  
बौद्ध, जैन प्रवृत्ति मिश्र-मिश्र सम्प्रदायने अपना पुण्य-  
क्षेत्र माना है। चन्द्रगुप्तके परमचक्रमें उत्ख-  
डिनी तीर्थका विस्तृत विवरण मिला है।

यहाँ महाकाव्य नामक विरचित लिखित है।

स्कन्द, मत्स्य, नारसिंह प्रभृति पुराणोंमें महाकाल-शिवलिंगका उल्लेख मिलता है। इसी शिवलिंगके कारण उज्जयिनीको पीठस्थान कहते हैं। महाकालके मन्दिरमें दिनरात छतका प्रदीप जलता है। प्रति-सोमवारको मन्दिरके सेवक पञ्चमुखी सुकुट उठा महा-समारोहसे कुण्डामुख जाते हैं। उस समय मन्त्र पाठ, वाद्यरव और साधारण कर्तक अत्यन्तकार हुआ करता है। दानों पार्श्वसे पण्डे मयूरपुच्छका चमर टाकते चलते हैं। कुण्डपर पड़नेसे प्रधान पुरोहित मन्त्रपाठपूर्वक सुकुट धीरे हैं। फिर महासमारोहसे मन्दिरमें उसे जाके महाकालको पहना देते हैं। उस समय महाकाल कोपेय वज्र और मणिमालिकादिसे सज महोंकी पूजा लेते हैं। महाकाल-मन्दिरके समस्त कार्यका भार तैलङ्गी ब्राह्मणों और बाघोरी नामके लोगोंपर न्यस्त है। इस लिंगका दूसरा नाम अनन्त-केशिधर है।

महाकाल शिवका मन्दिर पतिष्ठत् है। इस सुन्दर मन्दिरको देखनेसे प्राचीन हिन्दू शिल्पिनके नैपुण्यका कितना ही परिचय मिलता है। देवालयेकी रक्षा और महाकालकी सेवाकेलिये अनेक सम्मान्त्वयित्वोंमें छति बांध दी है। उसमें उँधिया प्रायः १००, देवायके राणा ५०, या ६०, गायकवाड़ १२० और होलकर ६० ६० मासिक देते हैं।

महाकालका मन्दिर बने तीन गत वत्सर हुये। फिरिस्ता नामक सुसलमानो इतिहासमें लिखा है—यह मन्दिर सोमनाथके समतुल्य है। इसके द्वार-स्वर्णस्तम्भ, मणिमालिकसे खचित थे। गर्भगृहके मध्य एक सामान्य चालीक जला देनेसे चरामान्य औरकमें प्रतिफलित होता है और समस्त मन्दिरमानो चूर्णालोककी भांति चमकने लगता है। अचंध्य रत्न-राजिपूर्ण मन्दिरकी अनुपम शोभा अब पूर्वमत देख नहीं पड़ती। अस्तमास बादशाह समस्त मणिमालिक रत्नादि लूट मन्दिरको विस्तार-पति पड़वा गये हैं। उस समय पण्डोंने अमेय यज्ञसे लिङ्गमूर्तिकी गुप्त भागमें दूसरी अनज डटाकर बचाया था। प्रायः गत वत्सर हुये रामचन्द्र बापू शासक एक व्यक्तिने मन्दिरको पुनः

बनवाया था। आज भी इस मन्दिरका सर्वकसब दूरसे यात्रियोंके नयनोंको खींच लेता है।

उज्जयिनीमें केदारेश्वर नामक शिवका एक अपर सुन्दर मन्दिर है। अचान्तपण्डके मतमें इस शिवलिंगका दर्शन करनेसे महापुण्य मिलता है। लिंगकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें एक उपाख्यान भी है,—‘किंमो समय हिमशृङ्गवासी देवगणने महादेवसे जाकर कहा था—देवदेव! दाह्य हिमने हमें बहुत चबरा दिया है। हम चिरदिन उसे सहे नहीं सकते। पाप वषी उपाय करें, किंसमें हम इस दुःखसे दूर रहें?’ उस पर महादेवने हिमालय पुच्छा भेजा,—‘चिरकाल ऐसा दाह्य हिम पड़नेका कारण क्या है?’ हिमालयने मार्त्यगर्भक कहा—‘हमारे ऊपर पाप आकर रहिये। हम हमेशा आपकी पूजा करेंगे। पाठ भास हिमका प्रभाव भी काम पड़ जायगा।’ महादेव गिरिशृङ्गपर एक उष्ण कुण्डके निकट जाकर टिके। वहाँ योगेश्वरि केदारेश्वर नामसे उन्हें पूजने लगे। काश पाकर इयिबी मानवके पापसे कतुपित हुए। इसलिये देवादिदेव महादेव भी चलाहित हुये। एकदिन कतिपय ऋषि केदारेश्वर दर्शन करने गये थे। किन्तु केदारेश्वरको वहाँ न देख वे चबराये चोर रो रो कर भाँसू बहाने लगे—‘हाय! हमें वे हृदयेश्वर कहाँ देख पड़ेंगे! क्या दयापूर्वक वे हमें दर्शन न देंगे? परमदयालुके ध्येयत हमें कौन शान्ति प्रदान करे गा?’ उसी समय देववाणी हुई—‘महाकाल यन्में जावो। वहाँ गिरा नदीपर तुम्हें केदारेश्वरका दर्शन मिलेगा।’ अनन्तर ऋषि उल्लासपूर्वक हृदयसे उज्जयिनीकी प्राये थे। वे गिरा नदीके तीरपर पहुँच प्रेमभरसे देवादिदेवका स्त्रव करने लगे। उस समय खोतलतोके वचनपर एक मिला अंतरा उठी थी। ऋषिगणने उषीको केदारेश्वरका लिंग समझ सादर से लिया। अनन्तर कुक्षपाण्डके पुत्रमें उज्जयिनी पर भी पापने हाथ मारा। केदारेश्वर पुनः क्षिय गये। सोमने एक ऋषिसे परामर्श लिया था—‘अब केदारेश्वर किसपकार मिलेगा?’ ऋषिने भीमसे पैर फेलाकर कहा रहने और राज्यके अमरदा हब उनके

“अथर्वी” कहलाता था। (अथर्वी) किन्तु पुराण-  
में उत्खडिनी नाम लिखा है। इसे विमाळा और  
मुण्डकारिणी भी लिखते हैं। अथर्वी देखो; पाञ्चाल्य  
प्राचीन इतिहासिक टलेमी और पैट्रिआरुस इस  
नगरका ओझिनि (Ozene) नाम लिखा है। टले-  
मीका लेख है—उत्खेन तियाएनकी राजधानी है।  
(Ptolemy, Geog. Bk. vii. c. 1. 53) “तियाएन”  
“अटन” शब्दकी अप्रतिमि है। प्राचीन मुद्रा और  
मिनामिद्वारा समझ पड़ा है—पहले अटन नामक  
एक राजा मालव और भारवे निकटवर्ष प्रदेशपर राज्य  
करते थे। अथर्वी देखो।

पैट्रिआरुस भी लिखा है (अथर्वी) बागिकके पूर्व  
उत्खेन है। इस नगरमें राजा रहते थे। उत्खेनसे  
भाषारके व्यवहारकी प्रतीति, वर्तन, उत्कृष्ट मलमल,  
हईका बढ़िया कपड़ा और आनाप्रकार उपाधि दृश्य  
पाता था।

प्राचीन कालमें अनेक राजसत्त्वर्ती यहां मिहसम  
पर बैठ राज्य कर गये हैं। किन्तु दुःभाका विषय है  
उनका प्राचीन इतिहास प्रतिपक्षकी मिलता है।  
“विजयिनीके महावंश” नामक बौद्ध ग्रन्थमें लिखा है—  
अश्वगुप्तके दोन अयोधने अपने पिताके राजप्रतिनिधि-  
रूपसे कुछ कालतक उत्खेनमें राज्य किया था।  
अयोधनेके पिता पाटलिपुत्रके राजा थे (ईसाके ३२  
साल पूर्व)। उसके प्रायः सत्ताब्दी बीतनेपर (ई० श.  
१५० वर्ष पूर्व) एक बौद्ध यति प्रायः ४०००० गिर्घीके  
समभिम्यह्वारमें उत्खडिनीवर्ष दक्षिण गिरिपठमें सिंदस  
दीपकी गये थे।

बहुनाथ पीछे राजा मिहमादिश्वकी इस नगरीका  
अधिकार मिला। उनके राज्य कालमें आनिदास  
प्रभृति नगरकने उत्खडिनीकी प्रसफाया था। पूर्व-  
कालीन अश्वमेध, क्षत्रिणापुर प्रभृति प्राचीन नगरीकी  
आति विजमादिश्वके प्रायन बसने समय इसकी भी  
सूचि रही। ई० श० ७३० सत्ताब्दीमें योना परिमालक  
मुण्ड-मुण्ड उत्खडिनी (अ-सि-सि-न) देखने पाये  
थे। उस समय भी यह नगरी बहुतसे चीनीकी वासभूमि  
रही। हिन्दू इतिहासके अथर्वी चीनवासी और महादान

समय सम्प्रदायके बौद्ध बसते थे। मुण्ड-मुण्डने  
उत्खडिनीके निकट ही अयोधराजनिमित्त एक स्तूप  
देखा था। किन्तु यह वह स्तूपही नहीं। नगरी नर  
कालके कालमें बनी गयी। प्राचीन उत्खडिनी पर्यन्त  
भूगर्भमें गाढ़ी है। विमाळा अपने समस्त रत्न को  
दुर्गमें लपकाये अपना मुण्ड देखा न सकी। इसीसे बसभ  
पड़ता है—वस्तुस्थिति की दृष्टिमें असाह्यता को गर्ह है।  
पाञ्चकल यह प्राचीन अथर्वी नगरी नहीं। उद्योके  
उत्तर पार्श्वपर अभी एक नूतन नगरीको उत्खडिनी  
कहते हैं। इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता—प्राचीन  
अथर्वीकी भूमिके मध्य निहित दृष्टि कितना काब  
बोता। निवित भूमिमात् इनेका क्या कारण है।  
इसके सम्बन्धमें आना मतभेद देख पड़ते हैं। वर्तमान  
उत्खडिनीसे दक्षिण बसने प्राचीन अथर्वी विमुक्त  
हुयी है। सही प्योदने खोदने प्रायः १०१२ हाथ  
नीचे पात्र भी प्राचीन नगरका चित्र मिलता है।  
भूगर्भमें प्रसारका बहुत प्रसङ्ग स्थाप गाढ़ा है।

इसका भी प्रमाण नहीं मिलता—वर्तमान नगर  
किसने बसाया था। असाह्यदीन विजयिनीके समय  
उत्खडिनी सुनसमानोके हाथ लगी। १२८५ ई०  
१२८८ ई० तक इससे शासनका भार एक राज-  
प्रतिनिधि पर रहा। पीछे से आधीन हो गये थे।  
१२२१ ई० तक आधीन भाषसे राजकार्य चला। उसके  
बाद गुजरातके नवाब बहादुर गाहने उत्खडिनीपर  
अधिकार किया था। १२०१ ई०की फिर एकबार  
बादगाहने इसे जीता। १२४८ ई०की उत्खडिनीके  
निकट ही धीरमसेव और दारा दोनो भाईवर्गों और-  
तर मुह हुआ था। १०८२ ई०की चीनकारने इसे  
से अनेक काल जया दिये। उसके बाद उत्खडिनी  
मिथियाके हाथ गयी थी और अनेकें परम सुषसे  
उसका राज्य भीम किया।

उत्खडिनी एक पवित्र तीर्थक्षेत्र है। इसे हिन्दू,  
बौद्ध, जैन प्रभृति मिश्र-मिश्र सम्प्रदायने अपना मुख्य  
क्षेत्र माना है। अश्वपुराणके अथर्वीवर्षों उत्ख-  
डिनी तीर्थका विस्तृत विवरण मिलता है।

यहां महाकाव नामक विजयिनी विजयान है।

स्कन्द, मत्स्य, नारसिंह प्रभृति पुराणोंमें महाकाल-  
शिवलिंगका उल्लेख मिलता है। इसी शिवलिंगके  
कारण उष्णिगिनीको घौटस्थान कहते हैं। महाकाल-  
के मन्दिरमें दिनरात घुमता प्रदीप जलता है। प्रति  
सोमवारको मन्दिरके सेवक पञ्चमुखी मुकुट उठा महा  
समारोहसे कुण्डाभिमुख जाते हैं। उस समय मन्त्र  
पाठ, वाद्यरव और साधारण कर्तक जयजयकार हुआ  
करता है। दोनों पार्श्वसे पण्डे मयूरपुच्छका चमर  
ढालते चलते हैं। कुण्डपर पङ्चनेसे प्रधान पुरोहित  
मन्त्रपाठपूर्वक मुकुट धोते हैं। फिर महासमारोहसे  
मन्दिरमें उसे लाने महाकालको पहना देते हैं। उस  
समय महाकाल कोयेय वस्त्र और मणिमाणिक्यादिसे  
सज भातोंकी पूजा सेते हैं। महाकाल-मन्दिरके समस्त  
कार्यका भार तैलङ्गी भाद्रपणों और बाहोरी नामके  
शौगोंपर न्यता है। इस लिंगका दूसरा नाम धनस्त-  
कषपेश्वर है।

महाकाल शिवका मन्दिर पतिवृद्ध है। इस  
मन्दिर मन्दिरको देखनेसे प्राचीन हिन्दू मिथिगणके  
नैपुण्यका जितना ही परिचय मिलता है। देवास्यकी  
रक्षा और महाकालकी सेवाकेलिये अनेक सन्तान  
व्यक्तियोंनि वृत्ति बांध दी है। उसमें ऊँधिया प्रायः  
१००, देवासके राजा ५० या ६०, गायकवाड़ १२०  
और होलकर ६० ६० मासिक देते हैं।

महाकालका मन्दिर बने तीन गत वत्सर हुये।  
फिरिष्ठा नामक सुसज्जमानो इतिहासमें लिखा है—  
यह मन्दिर सोमनाथके समतुल्य है। इसके दृढ़त्व  
स्वर्णस्तम्भ मणिमाणिक्यसे खचित थे। गर्भगृहके  
मध्य एक सामान्य भालोक लता देनेसे चसामान्य  
हीरकमें प्रतिफलित होता है और समस्त मन्दिरमानो  
सूर्यालोककी भांति चमकने लगता है। असंख्य रत्न-  
राजिपूर्ण मन्दिरकी अनुपम शोभा अब पूर्वमत देख  
नहीं पड़ती। अतन्मास बादमाह समस्त मणिमाणिक्य  
रत्नादि स्रुट मन्दिरको विस्तार पति पङ्चा गये हैं।  
उस समय पण्डोंने चयेय यज्ञसे लिंगमूर्तिको गुप्तभावमें  
दूसरी जगह डटाकर बचाया था। प्रायः गत वत्सर  
हुये रामचन्द्र बापू नामक एक व्यक्तिने मन्दिरको पुनः

बनवाया था। आज भी इस मन्दिरका स्वर्णकलश  
दूरसे यात्रियोंके नयनोंको खींच सेता है।

उष्णिगिनीमें केदारेश्वर नामक शिवका एक अपर  
सुन्दर मन्दिर है। अवगतिपण्डके मतमें इस शिवलिंगका  
दर्शन करनेसे महापुण्य मिलता है। 'लिंगकी उत्प-  
पत्तिके सम्बन्धमें एक उपाख्यान भी है,—'किसे  
समय हिमशृङ्गावासी देवगणने महादेवसे जाकर कहा  
था—देवदेव! दास्य हिमने हमें बहुत चबरा दिया  
है। हम चिरदिन उसे चढ़ नहीं सकते। आप  
वही उपाय करें, जिसमें हम इस दुःखसे दूर रहें।'  
उस पर महादेवने हिमालय उलुखा भेजा,—'चिरकाल  
ऐसा दास्य हिम पड़नेका कारण क्या है?' हिमा-  
लयने मार्थभापूर्वक कहा—'हमारे ऊपर आप चाकर  
रहिये। हम इसीमा आपकी पूजा करेंगे। पाठ  
मास हिमका प्रभाव भी काम पड़ जायेगा।' महादेव  
गिरिशङ्कर पर एक उष्य कुण्डके निकट जाकर टिके।  
वहाँ योगिश्रष्टि केदारेश्वर नामसे उन्हें पूजने लगे।  
काश पाकर श्रुतिवी मानवके पापसे कतुपित हुई।  
इसलिये देवादिदेव महादेव भी चमत्कृत हुये।  
एकदिन कतिपय ऋषि केदारेश्वर दर्शन करने गये थे।  
किन्तु केदारेश्वरको वहाँ न देख वे चबराये और रो रो  
कर पांच बहाने लगे—'हाय! हमें वे हृदयेश्वर कहा  
देख पड़ेंगे! क्या दयापूर्वक वे हमें दर्शन न देंगे?  
परमदयालुके व्यतीत हमें कौन शान्ति प्रदान करे  
गा?' उसी समय देवशासो हुई—'महाकाल वनमें  
जानो। वहाँ गिरा नदीपर तुम्हें केदारेश्वरका दर्शन  
मिलेगा।' अनन्तर ऋषि उन्नामपूर्ण हृदयसे उष्णि-  
गिनीको पाये थे। वे गिरा नदीके तीरपर पड़ूँच  
श्रीमभरसे देवादिदेवका स्तव करने लगे। उस समय  
स्वोत्पत्तिके वचन पर एक गिरा जतरा उठी थी।  
ऋषिगणने उसीकी केदारेश्वरका निश समझ सादर  
से लिया। अनन्तर कुहपाण्डके वृद्धने उष्णिगिनी  
पर भी पापने दाय मारा। केदारेश्वर पुनः द्वि-  
गये। शीघ्रमें एक ऋषिसे परामर्श लिया था—'यह  
केदारेश्वर किस प्रकार मिलेगी। ऋषिने भीमसे पर  
फैलाकर बड़े रहने और राज्यके अनन्त हृदयनके





है। स्थानीय सरोवरमें अनेक पायरे घटना सची रहती है। सुनते—सरोवरपर नागकन्या मध्य मध्य पड़ती और उपरिभाग नारी तथा निम्नभाग मत्स्यकी मूर्ति—जैसा रखती है।

यहां जेनेके भी अनेक मन्दिर देख पड़ते, जिनमें १० खेताम्बरी और ८ दिगम्बरी हैं। कितने ही जैनमठ भालकल चिह्नुओंके अधीन हैं। उनमें जवरेखर और जैनभञ्जनीखर ही प्रधान हैं।

यहां गुजराती ब्राह्मण अधिक रहते हैं। रामस-नेही, दादू, कधीरपत्नी, रामात, रामानुज प्रभृति सम्प्रदायके लोग भी विद्यमान हैं। प्रायः प्रति वृत्तके तलपर सतीस्त्रक्ष खड़ा है। इस प्रस्तरखण्ड देखनेसे ही पड़चानते—सतीकी कितना मानते कितना जानते हैं। ब्राह्मणचरित्रादिके वर्णक्रमसे प्रस्तरपर स्त्री पुरुषकी मूर्ति बनती है। ब्राह्मणके गो और चरित्रके परिचयके लिये अथ्य प्रशस्ति अङ्कित होता है। स्थानीय धार्मिक रमणियों सतीस्त्रक्षकी पूजा करती हैं।

नगरसे दक्षिण पूर्व दिक् लोग-गहौद नामक एक पर्वत है। लोग कहते—इसीके नीचे राजा विक्रमादित्यके बत्तीस सिंहासन प्रोथित हैं। पर्वत पर चढ़नेसे नगरकी प्राकृतिक गोभा देख पड़ती है। राजा विक्रमादित्यके समय उज्जयिनीमें मानयन्त्र रहा। भारतके प्राचीन भौगोलिक उक्त यन्त्र द्वारा उज्जयिनीसे ही प्रथम याम्योत्तरवृत्त खींचते थे। एकवरके पितामह बाबरने इस यन्त्रकी बात लिखी है। किन्तु आजकल इस यन्त्रका हस्तान्त कोई बता नहीं सकता। समझ पड़ता—प्राचीन उज्जयिनीके साथ यह भी लुप्त हो गया। फिर आज भी यहाँ जयसिंहका मानमन्दिर विद्यमान है, किन्तु अवस्था अच्छी नहीं। कौन उसकी उद्धार करेगा। अर्धदिखा।

प्रकृतत्वयित्के देखने योग्य भी अनेक वस्तु हैं। यहाँ ग्रीक, बाह्लिक, शक और देशीय नरपतिगणके समयकी प्रचलित प्राचीन मुद्रा मिली हैं। आज भी प्राचीन उज्जयिनीकी वनस्पति दृढ़त दृढ़त होरा, चकोर, खर्च तथा रौप्यमय मुद्रा और स्त्रीगणका चमड़ा

मध्य मध्य हाथ लग जाते हैं। हम समझते—इसीसे लोग उज्जयिनीकी 'रीजगारका सदाव्रत' कहते हैं।

नगरके पाखंडपर राजा भट्टहरिकी गुहा है। उन्होंने संसारत्यागके पथात् इसका आकर पायय पकड़ा था। कोई कोई कहता—इसी स्थानपर भट्टहरिका प्रासाद था। किन्तु यह सम्भव नहीं। गुहामें सीधे खड़े होनेपर क्षतमे गिर टकराता है। तीन दिक् स्तम्भ लगे हैं। उनपर पक्षट मूर्ति खुदी हैं। स्थान स्थान पर शिवसिद्ध पड़े, जिनमें केदारेश्वर सबसे बड़े हैं। केवल उन्हींकी पूजा होती है। वामदिक् चालगुहामें पश्चिमप्रस्तरकी दो मूर्तियां हैं। एक कुक्ष ऊपर और दूसरी उसीके नीचे लगी है। यहाँ लोग कहते ऊपर गोरखनाथ और नीचे उनके मिथ्य भट्टहरि हैं।

उज्जर ( हिं० ) सम्मन देना।

उज्जानक—काष्मोरेके उत्तरस्थित एक जनपद। चाङकल इसे स्वात कहते हैं। महाभारतके मतसे उज्जानक एक पवित्र तीर्थ है।

“उज्जानक उज्जयिनी नदीके तीरे पर है।

पिंडीयाचार्यने आत्मा चरित्रके प्रकरण ४” ( अष्टमस्क ११० )

पूर्वकाल यह जनपद वितस्ता नदीके पश्चिम तटके विस्तृत था। माकण्डेयपुराणमें इसका नाम उज्जिहान लिखा है—

“विदुषा रिनामनाः दाम्पणीयानवा मकाः।

वर्जितानवा मनुष्या धीवर्षणावपा चणाः ॥” ( १२८ )

महाभारतमें कहा है—कार्तिकेय और वगिष्ठने इस स्थानपर शान्ति पायी थी। इसके पीछे कुगवान् नामक छद्म है। उसमें प्रचुर कुगोमय उपजता है।

( १२९ )

पूर्व समय इस स्थानपर बौद्ध धर्म भी बहुत प्रबल रहा। फाहियान, ह्वेनत्सून्, यचन् चुयन् प्रभृति चीना परित्राजकोंने देवकर इस स्थानकी बौद्धधर्म-मूर्त्तियों सकल कथा लिखी है। ह्वेनत्सून्ने कहा—यह देश उत्तरमें सुल्लि पर्वत और दक्षिणमें भारतमें मिलित है। जलवायु उष्ण और मनोरम है। राज्य प्रायः सत क्रोम विस्तृत है। पश्चिमाधी और उपादेय

उद्य कृत है। भूमि पश्चिम दिशा है। इसी  
उपद्वीप (विशाल) राजाने अपने पुत्रों मित्रा-  
वरद्वीप है राजा का। फिर बोधिसत्वने निज देह  
व्याप्यो को मानने मित्र बोध। राजा मातामहीनी  
परम धार्मिक और माय व दानः काम बुद्धदेवको  
पूजना करवाने है। पुत्राये मलय भोजन यज्ञतो  
है। मध्याह्न खाते हैं व राजायाँ देखते हैं।  
रामदेव भोग दयावान् मदीय वाच धर्मको नहीं  
तोकरे। इसी भूमि को चरैरा मणि वरुणी है।  
मन्त्रागमय मन्त्र मदीय वाच धर्मने और ज्ञान-  
वर्ग बुद्धदेवकी पुजा करने अर्गते है। उद्यानक पद्म-  
चर्म पर बुद्धदेव प्रथम नामराजके मठ मदी है।  
हिन्दु नामराज अपने मठ को पानी परमाने मने।  
हिन्दुने बुद्धकी मठको भील मणी है। पानी मन्द  
भीमने है एक पत्थर पर बैठे। इसी उपाय उपायने  
अपना कथाय वसन सुखाया था। यह सुष्ठु कथाय  
पात्र भी उपाय प्रस्तुतके निकट पड़ा और यह काम  
कीमती भी पैसा की बना है। बुद्ध उपायमन-स्थानपर  
उत्तरपाय एक मठ बना है। राजधानीमें प्रायः पौन-  
लोम उचार पर्यन्त बुद्धकी पादुकाका चित्र पण्डित  
है। यहाँ भी मठ मठ मठा है। नगरमें उत्तर नाराका  
मन्दिर है। यह मन्दिर पश्चिम दिशा और उद्य है।  
इसमें बुद्ध देवदेवी और उद्यमजगन्मकी मूर्तियाँ हैं।  
राजधानीमें दक्षिणपूर्व की पात दिन चमने पर एक  
पात्रतीव्र प्रदेश निकला है। यहाँ बुद्ध तपस्या करने  
है। इसी स्थानपर उद्यने पुत्रार्थ स्थायीको अपने  
देहका माँग विनाया था। इस स्थानमें मलयम  
उपजता है। राजधानीमें प्रायः ८८ लोग दूर एक तीर्थ  
है। इसी मण्ड बुद्धने विष्णुके मित्र अपने देहका  
पात्र उत्तर निदा। इस पश्चिम स्थानको रसाके जिसे  
राजा पमाऊने एक मठ मन्दिर बना दिया था।

सुषुप्त-सुषुप्तके मठमें हिन्दु मठमें दक्षिण  
मण्ड पात्रतीव्र प्रदेश और विनायकमें विष्णु मदी  
पर्यन्त दूर राज्य उत्तरमैक देम कहाला था। यह राज्य  
देव प्रथम १००० नि (प्रायः २५० प्रोम) परिमित  
और विविध तथा उद्यकाई मिश्रित है। यह

ममलभ भूमिपर उद्यका और जमाव है। यहाँ  
मातामकार और पद्म, विष्णु पट्टे मध्य नहीं उद्य-  
जता। पद्म और मया विचार होता है। भूमिमें  
बौद्ध और धर्म निजन्ता है। देव समीप मानने  
मिष्ट पश्चिम प्रथम है। मोग बीच ममल रहता है।  
यहाँ दयावान् मठनी है। पश्चिमी मठमने,  
मातृज और जतर है। ये विद्यामृताणी पौन भी  
कार्यतः विद्याम पश्य रहते हैं। मन्त्र को दान  
इन्द्रजान मीयते है। अपने वाच मद्यान मन्त्रा-  
मृता है। चीनजान मन्त्राव पात्र प्रकारका है—  
मर्मातिवर्दी, धर्मगुण, महोगामक, कामवर्दी और  
महासाहिक। भाषा पश्चिम भारतवर्ष पैसी है।  
विष्णु-प्रवासी भी पैसी को है। यहाँ ४५ प्रथम  
नगर है। राजा मठनी नगरीमें रहते हैं। यह राजा  
माय-वर्दी है। स्थानोव सुशान् (नान) मदीके  
उभय तीरपर प्रायः १५०० महासाम बने हैं। मठको-  
नगरीको पानी दिग् पश्य बौद्ध चीमियाँ देव पड़ती  
है। हिन्दुवर्दी भी १० देवमन्दिर बने हैं।

इस प्रदेशमें मैके वस्त्रको पश्चिम प्रकाण्ड मूर्ति रही।  
पादियानमें निदा है—यह मूर्ति बुद्धके निशानके  
२८० वर्ष पौके (पमाऊराजके समय) बनी थी।  
सुषुप्त-सुषुप्तने यही मूर्ति १०० पौट खोदी पायी।

पादियान तथा सुषुप्त 'उद्य' और सुषुप्त-सुषुप्त-  
ने इस स्थानका नाम 'उद्य' निदा है। मूर्ति,  
कनिष्ठाम् प्रथमि मुरीपोवने पैसा परिनामकोज ज्ञान  
मन्त्रका मन्त्र नाम 'उद्य' उद्यका है। किन्तु यह  
मत मन्त्रपूर्व मन्त्र वहुता है। पौलि धर्म नामका  
मन्त्र 'उद्य' नहीं—'उद्यानक' होता है पश्चिम  
मन्त्र है। निम्नतः महाभारत पुराणादि और पौता  
परिनामके विद्वान् स्थानपर जगदमें नामनिष्ठ  
विद्य रहनेमें मन्त्र को मानना वहुता—इसमें कोई भेद  
नहीं, मित्र देमने पुराण तथा विष्णु-प्रवासीके  
भेदने मित्र पाकार मन मठा है।

आनीव पात्रकीम, विनायक, दान और बुद्ध  
प्रदेश पात्रोव उद्यानक राज्यके पमाऊन रहा। यह राज्य  
२ महाविष्णुके पामको विवर्तनी एक व

विस्तीर्ण बालुकापूर्ण समतल भूमि। (हरिवंश ११ पं०)  
इस मरुस्थलके मध्यमें नलिनी नदी बहती है।  
(अनुसू ११२ पं०)

उज्जालक, उज्जालक देखो।

उज्जासन (सं० स्त्री०) उत्-जम्-णिच्-ल्यट्। मारण,  
घट, कुत्स, जानका लेना।

उज्जिघ्र (सं० त्रि०) उत्-घ्रा-श। आत्रायकर्ता,  
घुंघनेवाला।

उज्जिति (सं० स्त्री०) उत्-जि-जिन्। १ उत्कृष्ट जय,  
गङ्गरी फतेह। २ वाजमनेयसंहिताका मन्त्रविशेष।

‘उज्जितिमनुष्यवर्जितेन कृषिः शोकरचक्रपुत्रकमवन्।’ (वेदोपे मन्त्रोप)

उज्जिहान, उज्जालक देखो।

उज्जिहाना (सं० स्त्री०) एक प्राचीन नगरी। भरत  
राजगृहसे पयोध्या जाति समय हंस नगरीमें पहुँचे  
थे। उस समय उज्जिहाना प्रियंक वृक्षके उपवनसे  
शोभित रही।

“तत्र रथे बने शार्ङ्ग कलाशी प्रादमुषे वयो।

उज्जानुस्त्रिधानायाः शिवका दत्त कादयः॥” (रामायण ५०।११)

उज्जिहीर्षा (सं० स्त्री०) शङ्ख करनेकी इच्छा,  
पकड़ लेनेकी खाँझ।

उज्जीविन् (सं० त्रि०) उत्-जीव्-णिनि। १ पुनर्वा  
जो उठनेवाला, जो दो बारा ज़िन्दा हो गया हो।  
(पु०) २ काक्यराज मिथवर्षके सम्राट्।

उज्जम्भ (सं० त्रि०) उत्-जम्भि-घञ्। १ प्रफुल्ल, प्रसफु-  
टित, फूला यां खिना हुआ। २ उदघाटित, खुला।

उज्जम्भण (सं० स्त्री०) उत्-जम्भ भावे ल्यट्। मुख-  
विकास, जमझार।

उज्जम्भित (सं० त्रि०) उत्-जम्भि-श। १ विकसित,  
शिगुफला, खिना हुआ। २ वेदित, घिरा हुआ।

(स्त्री०) १ चेष्टा, योग्य। ४ उज्जम्भण, जमझार।

उज्जय (सं० पु०) उत्-जिप् भावे घञ्। १ उच्चति,  
तरकी, बढ़ती। (त्रि०) भावे घञ्। २ उत्कृष्ट  
जययुक्त, जो खूब जीता हो।

उज्जेविन् (सं० त्रि०) उत्-जिप्-विनि। उत्कृष्ट  
जयधीन, खूब फतेह करनेवाला।

उज्जैन—उज्जिनो देखो।

उज्जा (सं० त्रि०) आरोपित-व्या, कमान् डोनी  
कर देनेवाला। ‘उज्जापत्ता वापेरिणपवुत्तत्।’ (आचार्य-  
श्रीमद्भगवत् कर्माचार्य)

उज्ज्वल (सं० त्रि०) उत्-ज्वल्-घञ्। १ दीप्तिमान्,  
चमकीला। २ विमल, साफ़। ३ विक्रान्त, खिना  
हुआ। ४ ज्वलता, जलता हुआ। ५ सुन्दर, खूब-  
सूरत। (पु०) ६ शृङ्गाररस, सुहृद्वत्, प्यार।  
(स्त्री०) ७ स्वर्ण, सोना। ८ धान्यभेद, एक भताज।

उज्ज्वलता (सं० स्त्री०) १ दीप्ति, चमक। २ सुन्दरता,  
खूबसूरती।

उज्ज्वलत्व (सं० स्त्री०) उज्ज्वलता देखो।

उज्ज्वलदत्त (सं० पु०) एक विख्यात पण्डित।  
इन्होंने उपादिस्त्रुक्की हस्ति बनायी थी। हस्तिमें  
प्राचीन कोष और स्थान-स्थानपर प्रमाणरूप प्राचीन  
काव्य उद्धृत हैं। कह नहीं सकते—उज्ज्वलदत्त किस  
समय विद्यमान रहे। किन्तु ११११ ई०को महेश्वरने  
जो कोष रचा, उसे इन्होंने अपनी हस्तिमें प्रमाणरूप  
रखा है। फिर १४३१ ई०को रायसुकुटने अपनी-  
भरमरकोपकी टोकामें उज्ज्वलदत्तका नाम लिखा।  
ऐसा जोनेसे समझ पड़ता—सम्भवतः वे ई०के १२वें  
वा १३वें शताब्द विद्यमान रहे।

उज्ज्वलन (सं० स्त्री०) उत्-ज्वल् भावे ल्यट्।  
१ उद्दीप्ति, चमक। २ निमज्जता, मफ़ाई।

उज्ज्वला (सं० स्त्री०) १ दीप्ति, चमक। २ जगती-  
छन्दःका एक भेद। यह बारह पदरकी रहती, और  
दो नगण, एक भगण तथा एक रगण रखती है।  
२ कुमरिच, नाचमर्च।

उज्ज्वलित (सं० त्रि०) दीप्तिमान्, रोशन, चमकने  
वाला, जो झलकाया गया हो।

उज्जम्भ—तुदा० पर० मऊ० भेट्। यह स्थान और  
विराग पर्यमें लगता है।

उज्जम्भ (सं० पु०) उत्-जम्भ-घञ्। त्याग, विम-  
ज्जन, छूट, भूल। (अनुसू १११४)

उज्जम्भक (सं० पु०) १ भिद्य, बादल। २ तापन,  
फ़कीर।

उज्जम्भता (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुरे पाँवका।

पुष्पाङ्क (पिं. वि.) आरम्भ अङ्क. धनकङ्क, क्रिमे  
जराभी भी माराह न वहे ।

पञ्चम (गं. छी.) चक्र-भ-कृ. विमर्श,  
श्रीशक्ति. (विमर्श)

परीक्षित ( सं० वि० ) सङ्ग्रहः । १ गणक, यमिनि,  
श्रीकृ० बुधा । २ लघुयमिनि, दशपा बुधा, श्री राज  
दिया गया श्री ।

छात्रद्वारा, छात्र-वर्ग देखी २

पुण्याह, समन्ते दीपः ।

सुखदायक, मज्जक रसः ।

संज्ञा ( ५० पु० ) १ आर्षा, वृद्धा । २ राजा,  
सहाय । "इत्यर्थो यमः, यत्नो यमः" ( अथर्व )  
३ विमल, आर्षा, आरज, अश्वत्थ ।

मूल.सू. ( अ० टी० ) प्रथम व्यापत्ति, औरदार महाम ।

उपकरणों ( य. को. ) आगदय चापति, कानून-  
का पय ।

ઇતિહાસ ( ૧૦ ક્ષી. ) ૧ ઇતિહાસ ક્રિયામાં સ્થા-  
 પિત થો ન સ્થાપિતો પ્રાચીન । ૨ ઇતિહાસ, સમ્પ્ર-  
 નેદન, માતમવર્ગો ।

हजारासती ( १० शी० ) अमर्यादापति, भूमको  
वधस ।

एल्यूमीनियम ( अ० द्र० ) वायुमय वायुमय, वायुमय  
यद्यपि ।

एष्यतमशीर्षी (च० शी०) प्राच्यमिदं वाचति, शुद्ध-  
नी वक्ष्यते ।

उपहार (च. पु.) वापस छठामेघामा, श्री महान  
करता हो।

७३५० ( ५००० ) १. चान्दिका चन्द्रिका, चन्द्रिका  
 चन्द्रिका. २. चान्दिका, चन्द्रिका, चन्द्रिका  
 चन्द्रिका. ३. चान्दिका, चन्द्रिका, चन्द्रिका

सुख, दुःख ( ५० सं० ) सुभक्तो ज्ञानि, भौतिको बहम ।

प्रत्यक्ष ( य. को. ) प्रत्यक्ष, जो वृद्ध  
मात्र हो ।

कृष्णनाभः ( ४० श्लोकः ) विष्णु, ब्रह्मण्य, निखलः ।

पुनर्जागरण ( ४० वर्ष ) प्रतिपत्तिकी यादगि,  
महात्माजी के वचन :

उत्तरविभाजन (च. प्रो.) संसदायकी वास्तु  
बनीतीकी वृत्त ।

[illegible]

सुभाषकुमार, कनकचक्र शिखर

उपसर्गना ( हिं. जि. ) १ एक पाती दूधरे में भुंने-  
लना, बहाना, धार बाधित कामना, टालना । २ उच्च  
बोना, बहना, उपसर्ग उठना ।

सुभाषभा ( हिं. लि. ) भाषिणी, उपनम सुभाषने  
द्वेषा।

જામારી—ગુજરાતમાં મુશ્કેલીમાંથી મુક્તિ મેળવી શકાય તેવા પ્રકારે  
 યજ્ઞ કરવામાં આવે છે. જેમાં ૧૦૦૦ થી વધુ યજ્ઞ કરવામાં આવે છે. જેમાં  
 ૧૫૦૦ થી વધુ યજ્ઞ કરવામાં આવે છે. જેમાં ૧૫૦૦ થી વધુ યજ્ઞ કરવામાં આવે છે.  
 જામારી, જો સાદે ૦ માંથી દરેક વસ્તુ વધતી જાય છે.

पाप समजिदोनि मुसलमान-साधु ग्राह दाऊदरा  
महदरा भी है। मताहमें एक बार दाऊदर जगता है।

सुभाषभा, सुभाषभा सुभाषभा

सम्पत्ति, सम्पत्ति ईश्वरी ।

શ્રમિકા : ( હિં. શ્રી. ) ૧ પદ્મપ્રભેશ્વર્ય વજ્ર મયંવ,  
જો મારમો પદ્મનહં નિયે જલમો ગયો જો । ૨ મોતકે  
વજ્ર ક્યાનમો મોદો દુયો શ્રમિકા, જો મોદો મોતકા,  
જાંબો જગદ્ગી દોદકર નિજાધો મો જો । ૩ મો  
વાસેલે મદ્દે મરે જાનું રું । ૪ મોતક નિમિષ, વજ્ર  
વાસા । ૫ મો મહુરા થોર લોપાકા લાના મિતકર  
લજાસેલે શ્રમિકા કનકા જે ।

प्रमाण ( दि० ५० ) चरगा, घोडा, जनावनें/मिढे  
मुधार कर रगा पुना जमोका देर ।

गद्यः, पद्यः च ।

अर्थ ( म० पु० को० ) इति-अर्थात् अथ, अथवा,  
यावत्-यथावत्, यथावत्, यथावत् विधातुः ।

[illegible]

श्रीविद्या यन्त्रात् महामेधा महाप्रज्ञो विधीयते

हस्तिसे निर्वाह करना चाहिये। क्योंकि भस्म प्रतियोग्यसे मिलने होता और उसकी अपेक्षा भी उच्छ्वन-हस्तिका पद अधिक प्रशस्त है।

“छत्रपुष्पोत्पत्तिं वा तैदिकीं प्रवृत्तौ विधा ।

कीर्तिरपि शिथिलेभ्यः च मानेन परः परः ॥” (वाचस्पत्यु ॥ ११८)

“एतेषां भाषादि गुणकोऽयमनुसृतः ।” (उद्भृ ८)

२ उच्छ्वशील, सीला बीनने वाला ।

उच्छ्वन (सं० स्त्री०) उच्छ्व-ल्युट्। संग्रहकरण, खेतमें सीले या बाजारमें दानेका बीनना ।

उच्छ्वहति (सं० स्त्री०) धान्यकणिके संग्रहसे निर्वाह, सीला बीननेका रोजगार ।

उच्छ्वशिल (सं० स्त्री०) उच्छ्वश्च शिलयेत्येकव-  
द्भावः । उच्छ्वहति, सिला बीननेका रोजगार ।

“सतमन्त्रमिह” से समन्त्रे व्याख्यायितम् ।” (ननु ३।१)

उच्छ्वशील (सं० त्रि०) धान्यकणिके संग्रहसे निर्वाह करनेवाला, जो सीला बीनकर काम चलाता हो ।

उठ (सं० पु०) गृह्य लण, चुखी घास, फूस। यह भीषण और छपर बनानेमें लगता है ।

उठकना (हिं० क्ति०) १ ध्रुव लगाना, कुदकना, उछलना, कुदना । २ अनुमान बांधना, अन्दाज लगाना ।

उठकनाटक (हिं० वि०) अद्भुत, अनोखा ।

उठकरलेख (हिं० वि०) इच्छानुसारो, मनमाना, ऐसा-वैसा ।

उठक (हिं० वि०) १ उद्बुधित, ऊंचा हो रहने-  
वाला, जो नीचे न पहुँचता हो । १ कुनिर्मित, जो अच्छी तरह कटा छटा न हो ।

उठकन (हिं० पु०) छत्रपिशेप, एक चास । यह शीतल स्थान और नदीके कक्षारमें उपजती है । तीनका रूप रहते भी चार पत्तियां लगती हैं । मीठ शाक बनाकर खाते हैं । हिन्दीमें प्रायः गुठ्ठा कहते हैं । उठकन शीतल, लघु और कपाय होता है । इससे मल रुकता और उन्निपात, ज्वर, प्रमेह तथा श्वास-  
विकार घटता है ।

उठल (सं० पु०) उठा: लघुपर्यायस्तेभ्यो जायते.  
जन-ड । १ पर्यशासा, घासफूससे बना भोपड़ा ।

“यनेर्वांतीमन्ददृष्टमात्रमृन्निडः ।” (रघु ५।११) २ मृदमात्र, एक मकान् ।

उठहपा (हिं० पु०) उठहड़ा, उठडा, गाड़ी खड़ी करनेका डब्बा । यह गाड़ीके आगे लगता और अग्रभागको उठाये रहता है ।

उठड़ा, उठहपा देखो ।

उठारी (हिं० स्त्री०) पट्टा, चारा काटनेकी मकड़ी ।

उठेव (हिं० पु०) काष्ठखण्ड विशेष, मकड़ीके दो टुकड़े । यह झाड़नकी धरनमें लगते हैं । इनपर एक गड़ारी रखकर धरन जमाते हैं ।

उछा (हिं० पु०) चोटनी ।

उठ—भू० पर० सक० भेदः । इसमें आघात उपघात करने या मारने-गिरानेका पर्यं गिकलती है ।

उठंगन (हिं० पु०) १ अवष्टम्भ, पाया, पाठ, टेकनी, धूनी ।

उठंगना (हिं० क्ति०) १ अवष्टम्भ पकड़ना, टेक लेना, तकिया लगाना । २ आश्रयमें पड़ जाना, भरोसे रहना ।

उठंगल (हिं० वि०) मन्द, कुन्द, गावदी। मूर्त्यं  
अश्लिष्यो ‘उठंगल आदमी’ और कुशामित राज्यको  
‘उठंगल सुख’ कहते हैं ।

उठंगवाना (हिं० क्ति०) उठंगनेको आघात देना,  
उठंगानेका काम दूसरेसे लेना ।

उठंगाना (हिं० क्ति०) अवष्टम्भ देना, टेक पड़-  
वाना । २ आश्रयमें डालना, भरोसे रखना । कपाट  
देनेको ‘किवाड़ उठंगाना’ कहते हैं ।

उठक (हिं० स्त्री०) उद्यान, उद्यान । यह शब्द  
प्रायः योगिक पदमें लगता है, जैसे—बैठक-उठक ।

उठगन, उठगन देखो ।

उठतक (हिं० पु०) १ उठतक, जीन् या काठोके  
बीचकी गद्दी । इसी रूपमेंपर पिठनमें घोड़ेकी सवारो  
देते या मास लादते कष्ट नहीं पड़ता । २ अवष्टम्भ,  
पाया, टेक ।

उठत-बैठत, उठने बैठने देखो ।

उठती (हिं० वि०) १ उद्यमनशील, बढ़ती, बढ़ती ।

२ परिश्रम-शील, भुक्तो, उतरती ।

उठनी कोपक (हिं० को०) १ नवीन पत्रक, नई माग, नवीन डिजा। २ योगदानपत्र, सहाय, भोजन।  
उठनी जगनी (हिं० को०) नव यौवन, नवानीका  
आभास, नवीन नव यौवकी शक्त।

उठनी देठ (हिं० को०) उदितश्रील उद, गिरना  
वास्तव। "उठनी देठ नव देठ" (को०)

उठनी मरुतन (हिं० को०) उदितश्रील इन्द्रिया-  
शक्ति, उठनी मरुती।

उठनी बेटनी (हिं० जि० वि०) १ कम कम, छोटा-  
छोटा, कुछ-कुछ, जह-नह, मोती-जगती। २ चर-  
गई, जेने-जेने, चल-दिर में। ३ भाटपट, चालन-  
जानन, बान चोनी। ४ मदा मरुता, बार बार।

उठना (हिं० जि०) १ पारथ होना, चरुट पक-  
जना, निकलना। २ प्रगमन करना, रवाना होना,  
चल पड़ना। ३ उदित होना, उगना, उदयना,  
जगना। ४ उदित होना, उपादा पड़ना, बढ़ना। ५ चल  
देना, पछामाका पड़ना, चलना। ६ टिप्पण निक-  
लना, चरुटी नुटके जाना। ७ प्रादुर्भूत होना,  
पूटना, पट पड़ना। ८ निष्क्रमण करना, उभर  
जाना। ९ उदित होना, चुनक पड़ना, पड़ना।  
१० उदित होना, चले जाना, बढ़ना। ११ मनु-  
जित होना, जीना पड़ना। "उठनी चल देठे नुका"  
(को०) १२ जगन करना, जाना। १३ जागरण  
करना, जानना। १४ दण्डाणमान होना, दण्डवत्  
प्रवृत्त करना, गड़ा होना। १५ उठने जाना,  
उकलना। १६ उदित होना, उदना। १७ उदित  
होना, उदयानीपर जाना, घूम जाना। १८ उदय  
पड़ना, मरुतना। "उठनी चल देठे नुका" (को०)

१९ योगदानपत्राकी प्राप्त होना, नवानीमें जाना।  
२० उदित चलना, उदयना, प्रोम जाना, मड़ना।  
२१ नवम किया या उपा जाना। २२ इन्द्रियोपर  
होना, मरुतीमें जाना, देठ पड़ना। २३ उदयन करना,  
उठना। २४ उदित होना, जगना। २५ उदित  
होना, मनुज किया जाना। २६ उदित होना,  
जगना। २७ उदित करना, दिवार मरुतीकी मरुत  
जाना। २८ उदित होना, उदयना, उदयना।

२९ उदित किया जाना, उदयमें जाना। ३० उदय  
किया जाना, उठना। ३१ उदय किया जाना, उदय  
जाना। ३२ पारथ किया जाना, उदय होना,  
उठना। ३३ उदित मरुत देठा जाना, उदय  
जगना। ३४ उदित होना, उदय जगना। ३५ उदित  
होना, उदय जाना। ३६ पारथ होना, पारथ  
जाना। ३७ उदय किया जाना, उदयना, मरुत  
जाना। ३८ उदय होना, उदय जगना। ३९ उदय-  
मिंत किया जाना, मरुतार होना। ४० उदयमें  
जाना, उदयना। ४१ उदित मरुतना, उदयना, जगने  
पड़ना। ४२ उदयित होना, उदय किया जाना,  
उठना। ४३ उदय किया जाना, उदय होना।  
४४ उदय होना, उदय उठना। ४५ उदय जाना, उदय  
जाना। ४६ उदय होना, उदयमिंत जाना। ४७ उदय  
होना, मरुतीमें जगना। ४८ उदय करना, उदयना।  
४९ उदय होना, उदय उदयना, उदयना। ५० उदयित  
होना, उदयना।

उठाएक उठनीको उठ गड़ा होना, उदयपूर्वक  
उठनीको उठ जाना और धीरे-धीरे काम करके,  
मिलने जुलने, माय रहने, उदनी जगद बार बार  
होने, उदय जाना तथा उदयमिंत जाना उठनीको  
उठना-उठना कहते हैं। उठ उठ, उठा उठा और  
उठक-उठकका पद उदय उठना; बार बार उदय  
जगद होनेका, उदय हो उठक उठना, उठनी उदय-  
मिंत, जान उदय उठना उठना तथा उदय जाना है।

उठक (हिं० वि०) १ उदयित जान मरुतने-  
जाना, जो मागपटार और वे उदय हो। निम्न-  
योगन उदयना: उदय उदयमिंतको उठकका मरुत  
या उठक, उदयना कहते हैं।

उठवारी (हिं० को०) उठने या उठनीका काम।  
उठवानी (हिं० जि०) उठनीका काम पदमे देना,  
उदयनीको उठनीको पाठा देना।

उठना (हिं० वि०) १ बार उठनीमें पारथ करके  
जाना, जो उदय उदयमें मरुत देठा हो। २ उदय-  
मिंत, उदय मरुत, जो उदय उदय देठा देठा हो।  
उदयमिंत उठाक और उठनीका मरुत की जाना है।

उठाईनीरा ( हिं० पु० ) चीर, मोथक, उचका, गिरी  
हुई चीजको उठा लेनेवाला । परिहाससे भिक्षुकको  
भी उठाईनीरा कह सकते हैं ।

उठाऊ, उठाई देखो ।

उठान ( हिं० पु० स्त्री० ) १ समुत्थान, उभार, चढ़ाव ।  
२ उच्चता, बुलन्दी, उंचाई । ३ उछि, बढ़ती । ४ रूप,  
आकार, स्वरूप, शैली, बनावट । ५ यौवनावस्था,  
जोवन । ६ कामानल, शहवत, मस्ती । ७ अभिमान,  
फुल्लूर, घमण्ड । ८ व्यय, खर्च । आकाशिक उचतिका  
नया उठान कहते हैं ।

उठाना ( हिं० क्ति० ) १ उच्च करना, बुलन्दी पर  
लाना, उचकाना । २ स्थापन करना, जमाना ।  
३ खड़ा कराना । ४ निर्माण करना, बनाना ।

“बहक पुन पुन मदन उठाना ओग बहै” घर मेरा दे ।

ना घर मेरा ना घर तेरा बिडिया रैन बसेरा रे ॥” ( बगैर )

५ ध्यान करना, तुलना । ६ आकर्षण करना,  
खींचना । ७ वैकुण्ठ से जाना, विच्छिन्न पहुँचाना ।  
८ उड़ाना, ठोसना, खोसना । १० उभाना, भारनेको  
तानना । ११ करना, भरना, किसी काममें लग  
रखना । १२ दायी बनना, अपने ऊपर लेना । १३ पारम्भ  
करना, निकालना । १४ बांधना, कसना । १५ प्रबन्ध  
करना, देखना भालना । १६ प्रस्तुत करना, तैयारी  
पर लाना । १७ प्राप्त करना, पाना । १८ सङ्ग  
करना, सङ्गना । १९ लगाना, करना । २० व्यय करना,  
खर्चमें लाना । २१ काममें लाना, खर्च कर डालना ।  
२२ कर लेना, पङ्क जाना । २३ श्रृण्व करना, क्लृप्त  
लेना । २४ धन देना, चन्दा सुद्वेया करना ।  
२५ दान करना, दे डालना । २६ मिटाना,  
रगड़ना । २७ अलग रखना, निकालना । २८ बन्द  
करना, छोड़ना । २९ छेकना, हटाना । ३० रहित  
करना, मनुसूखीमें लाना । ३१ रख देना, दूर करना ।  
३२ प्रयत्न करना, लगा देना । ३३ से जाना, टोना ।  
३४ सुपुन करना, घोराना । ३५ स्थानान्तरित  
करना, एक जगहसे हटा कर दूसरी जगह रखना ।  
३६ दूर करना, निकाल डालना । ३७ निर्जन  
कराना, उजाड़ना । ३८ जागरित करना, जगाना ।

३९ आविष्कार करना, ईजादमें लाना । ४० उल्लेखित  
करना, भड़काना । ४१ छेड़ना, सताना । ४२ तेज  
करना, बढ़ाना । ४३ उत्सवमें प्रदर्शित करना,  
जलसेमें लाना । ४४ उपजाना, पैदा करना । ४५ मिचा  
करना, मिथाना । ४६ भक्षण करना, खा लेना ।  
४७ शय्य संग्रह करना, फुसल काटना । ४८ भाड़ना,  
पछोड़ना । ४९ हाथमें लेना, पकड़ना ।

उठाव, उठाव देखो ।

उठावना ( हिं० पु० ) उठावनी देखो ।

उठावनी ( हिं० स्त्री० ) १ उत्थानकर्म, उठानेका काम ।  
२ पारिव्ययिक, उठानेकी मजदूरी । ३ पश्चिममूल्य,  
पेगमो दिया जानेवाला दाम । ४ श्रृण्वका आदान-  
प्रदान, कर्जका लेनदेन । ५ पश्चिम दक्षिणा, पुरहन ।  
यह विवाहादिका मुहूर्त बताते हैं पण्डितकी मिलती  
है । ६ विवाहसे पूर्व दिया जानेवाला रुपया,  
बरिच्छा । ७ उठावना, देवतापर चढ़ानेको रथी हुई  
चीज । ८ संस्कारविशेष, एक चाल । वैश्यके घर किसीके  
मरनेसे दसवें दिन सजातीय पहुँचते और घरके  
पुरुषोंको कुछ रुपया पकड़ा पगड़ी बांध देते हैं ।  
९ अन्य संस्कारविशेष । मृत व्यक्तिके पश्चिमप्रत्यय करने-  
को यह तीसरे दिन होती है । १० काष्ठविशेष, एक  
खकड़ी । इसमें कोरी पाईकी मृगदो जगाती है ।  
११ स्रग्ज कर्षण, हलकी जोत, गाड़ना । यह धान्यके  
चैत्रमें दूर-दूर दो प्रकारसे होती है । एक विदहनी  
और दूसरीका नाम धुरदहनी है । भरकी विदहनी  
और खुले खेतकी धुरदहनी कहाती है । १२ प्रत्युता  
स्त्रीकी सेवा, लयाकी टहल ।

उठानो, उठावनी देखो ।

उठोवा, उठाई देखो ।

उड़—पर० सक० सेट । यह संज्ञति पद्यमें लगता है ।

उड़ ( हिं० पु० ) उड़, नधव, पितारा ।

उड़हु ( हिं० वि० ) १ उड़ान भरनेवाला, जो मूढ़  
उड़ता हो । २ शीघ्र शीघ्र कार्यकारी, जो दोड़ दोड़-  
कर काम करता हो ।

उड़चक ( हिं० पु० ) चीर, उचका, मान उड़ाकर  
ले जानेवाला ।



उड़-चलना (हिं० क्रि०) अभिमान रखना, गुस्ताख होना।

उड़तक, उड़तक देखो।

उड़त काँवरों (हिं० स्त्री०) पादनेका शब्द, मोल, फसकी।

उड़ती बिड़िया पक्षानना (हिं० स्त्री०) चिड़ लगाना, निशान देना।

उड़ती-पुड़ती खबर (हिं० स्त्री०) किंवदन्ती, अफवाह, बाज्राफ बात।

उड़ती बैठक (हिं० स्त्री०) व्यायामविशेष, एक खँस-रत। इसमें दोनो पद समेट कर रखते और उठने बैठनेके साथ ही आगे बढ़ते या पीछे हटते हैं। यह साधारण बैठकका एक भेद है। इसे प्रायः उड़ानकी बैठक कहते हैं।

उड़ती मछली (हिं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, एक मछली। (Exocoetus) यह मछली समय समयपर जलको छोड़ २०-२५ इंस ऊर्ध्व उड़ सकती है, प्रसिद्ध इसे उड़ती मछली कहते हैं। यह बड़ी-जैसी देख पड़ती है। देह दीर्घाकार है, किन्तु स्थूल नहीं। चतुर्भुजि हृदय होते हैं। उभय पात्रोंके पक्ष अधिक विस्तृत हैं। कोई कोई कहता—उड़ती मछली अपने सखे चौड़े बाहुओंके सहारे ही उड़ती है। किन्तु यह बात ठीक नहीं बैठती। प्राणितत्त्वविद्वज्जने अनेक अनुसन्धानके बाद ठहराया—यह मत्स्य टेढ़िक



विन

पेरीकी अधिकतर गति लगानेसे ऊर्ध्व चल सकता, मत्सुतः पक्षीकी भांति ऊर्ध्व उड़ता नहीं। जब उन्फिन नामक समुद्र मत्स्य मारता, तब यह प्रायके भय वम जलसे १५-२० इंस ऊँच दूर भागता है; किन्तु एक मिनटसे अधिक कासतक शून्यमें अवस्थित

अथवा जलसे पृथक् रह नहीं सकता। भूमध्यसागर, अतलांतिक महासागर और अमेरिकाके अनेक स्थानमें इस जातीय विविध प्रकार मत्स्य मिलता है।

उड़द (हिं० पु०) माघ, एक दास। (Phaseolus Radiatus) नाम देखो।

उड़न (हिं० स्त्री०) उड़ड्यन, उड़ान, उड़नेका काम।

उड़न बनार (हिं० पु०) अग्निक्लीड़ाविशेष, एक आतशबाजी। यह छूटने ही वाष्पकी भांति आकाशको उड़ता है।

उड़न खटोला (हिं० पु०) १ वायुधान, विमान, उड़नेवाला पसंग। यह परियोंके पास रहता था। २ शिशुके सोनेकी बलड़त गय्या, बच्चोंके लेटनेकी खूबसूरत पसंगड़ी। ३ शवधान, जनाजा। इसपर हिन्दू स्तनको जलाने से जाते हैं।

उड़नगोला (हिं० पु०) १-उड़नेवाला गोला, जो गोला छूटने ही पासमानकी उड़ जाता हो। २ बन्दूककी गुमायगी बाबाज। उल्लासिके समय आकाशको घेर ताकके जो बन्दूक छोड़ी जाती, वही उड़नगोला कहती है।

उड़नछू (हिं० वि०) लुप्त, गायब, देख न पड़नेवाला।

उड़नभाई (हिं० स्त्री०) छल, धोका, चकमा।

उड़नफल (हिं० पु०) फल विशेष, एक मेवा। कहते हैं—इसके खानेसे लोग उड़ने लगते थे।

उड़नफावता (हिं० स्त्री०) उड़डोन-कपोतिका, उड़नेवाली मैना। यह शब्द सूखका उपाधि है।

उड़नबीमारी (हिं० स्त्री०) महामारी, सुताही मर्ज, कृया कृतका रोग।

उड़ना (हिं० क्रि०) १ उड़ड्यन करना, परवान लगाना, उड़ान भरना, आकाशमें पक्षके आश्रयसे चलना। "उड़ बीमारी कायन पया।" (लोकोक्ति) २ अति

ग्रीव गमन करना, जल्द-जल्द दोड़ना। ३ पलायन करना, भागना, बचना। ४ उल्लङ्घन करना, फाड़ना।

५ अथगामी होना, आगे आगे चलना। ६ कार्यमें लग जाना, खाली रहना ७ नष्ट होना, मिटना।

८ समाप्त होना, ऊर्ध्वमें पड़ना, उठ जाना। ९ चौरा

जाना, लुटना, मारि पड़ना। १० सरना, जिन्दा न रहना, मझीमें मिलना। ११ बाध्यभाव धारण करना, माप बनना, सुखना। १२ विकीर्ण होना, फेल पड़ना, चला जाना। १३ विदलित होना, भड़कना, फटना। १४ विवर्ण बनना, कुम्हलाना, धुंधला पड़ना। १५ विस्तृत होना, फैलना। १६ वयमें न रहना, हाथसे बेइश्वर होना। १७ रूप बनाना, शान-शीकत देखाना। १८ प्राप्त होना, मिलना। १९ पारोक्ष्य करना, चट बैठना। २० विकसित होना, खिलना। २१ छल करना, बहाना बताना। २२ गाल बलाना।

उड़नागन (हिं० स्त्री०) १ सपन पसगी, उड़नेवाली सांपन। २ उच्छेजित स्त्री, जोशमें आई हुई पीरत।

उड़प (हिं० पुं०) १ नृत्यभेद, नाचकी एक चाल। २ उड़प, चांद। ३ तरण, बेड़ा, चौघड़ा।

उड़पति (हिं० पुं०) उड़पति, चांद।

उड़राज (हिं० पुं०) उड़राज, चांद।

उड़री (हिं० स्त्री०) उड़री, छोटा उदद।

उड़व (हिं० पुं०) १ रागभेद। जिन रागमें मान स्वरसे दो छूट जाते, उसे सद्गीतज्ञ उड़व बताते हैं। जैसे—हिण्डीम, मानकोष, भूपाली इत्यादि। २ सुदृक्का एक प्रबन्ध।

उड़वाना (हिं० क्रि०) उड़ानेका कार्य दूसरेसे कराना, किसीकी उड़ानमें लगाना।

उड़वाला (हिं० पुं०) प्रह्वर, पत्थर। यह उगोंकी बोली है।

उड़मना (हिं० क्रि०) १ खींसना, रखना। २ धुसेटना, डाल देना। ३ ठूसना, भरना। ४ तह करना, समेटना।

उड़ा (हिं० पुं०) यन्त्र विशेष, एक चीजार। इसमें कीटसूत्रकी खींसती है। उड़ा एक प्रकारका कलावा होता, जो चार परे चौर छः तोखी रखता है। तोखी मर्यान सट्टय रहती है। तोखियोंके मध्यवर्ती छिद्रमें गजकी चलाते हैं।

उड़ाक, उड़ा देखो।

उड़ाज (हिं० वि०) १ उच्छयनशील, उड़नेवाला।

२ अधिक ध्वय करनेवाला, गड़गड़, जो बपया बरबाद करता हो।

उड़ाक (हिं० वि०) सपन, परदार, उड़नेवाला।

उड़ाकू, उड़ा देखो।

उड़ान (हिं० पुं० स्त्री०) १ उच्छयन, परवान, उड़नेकी क्षमता। २ यन्त्रायन, फरार, भग्गी। ३ पारोक्ष्य, सजद, चढ़ाव। ४ वयम, कूद, फांद। ५ मषिबन्ध, कलाई, पट्टाचा। ६ मालखन्धकी एक कमरत।

उड़ान घाई (हिं० स्त्री०) १ जपट, धोका। २ उपाय, तदबीर। ३ सधासन, टानमटोन।

उड़ानघाई बताना (हिं० क्रि०) १ सत्पयसे बत करना, बिराड से जाना। २ छल करना, धोका देना।

उड़ाना (हिं० क्रि०) विद्राव देना, परवान पर लाना, कीड़ना। २ छलन करना, काटना, गिराना।

३ गोपन करना, छिपाना। ४ से भागना। ५ ध्वय करना, धुंघुं डालना। ६ मोजन करना, धाना।

७ झोडा करना, खिलना। ८ मारना। ९ बहाना।

१० प्राप्त करना, पाना।

उड़ायक (हिं० वि०) उड़ायेया, उड़ानेवाला।

उड़ान (हिं० स्त्री०) काष्ठनकी लक, कचनारका बकला। २ काष्ठनकी लकने निर्मित रज्ज, कचनारके बकलेकी रखी।

उड़ाम (हिं० स्त्री०) यामस्यान, रहनेकी जगह।

उड़ामना (हिं० क्रि०) नपेटना, उठाना, समेटना। उड़िका, उड़िका देखो।

उड़िया (हिं० वि०) उत्थन देगका पधियासी, उड़ीसा मुक्कका रहनेवाला। उड़िय देखो।

उड़ियाना (हिं० पुं०) कन्दोविमेष। इसमें २२ मात्रा रहती है। १० पौर १२ मात्रापर विर्याम पड़ता है। पल्लिम मात्रा शुभ लगती है।

उड़िल (हिं० पुं०) कैययुक्त देय, दानदार मिड़।

उड़ी (हिं० स्त्री०) व्यायाम विमेष, मानखन्धकी एक कमरत। यह मशका, सचक पौर साधारण तीन प्रकारकी होती है।

उड़ीय (हिं० पुं०) अता विमेष, एक बेल। यह गठरी बांधने पौर भूसेका मिश्र तथा टोकरी बनानेमें लगता है।

उड़ीया—उठल देय। उड़िय देखो।

यह नगर मन्दाज प्रान्तका प्रधान स्वास्थ्यप्रद स्थान है। मत्स्यपलायम्का रत्नयै ट्रेगन निकट पड़ता है।

१८१८ ई०में मन्दाजके दो सुलकी हाकिमोंने तस्याकूके महसूल चोरोंको खदेरते खदेरते उतकामन्द-को उपत्यका दूँ दी थी। १८२१ ई०में पहले स्थानीय कलेक्टरने यहाँ एक घर बनाया, कुछ दिन पोके नगर ही निकल आया। इसकी चारो ओर ऊँचे पर्वत हैं। पास ही डेढ़ मील लम्बी भील खुदी है। दोदा-बैठाकी घोटी समुद्रतलसे ८०६० फीट ऊँची है। भीलकी चारो ओर पक्की सड़क खिंची है। समस्यली-पर रहनेसे इस नगरने ग्रिमसे जैसे हिमालयके स्थान जोगोंकी दृष्टिसे गिरा दिये हैं। हरी हरी घास घदयकी लहरा देती है।

१८६६ ई०में यहाँ सुनिमिपलिटी पड़ी थी। किन्तु सकान् पर्वत पर दूर-दूर बने हैं। जिलेके कलेक्टर, डिप्टी कलेक्टर और सब जज यहाँ रहते हैं। गिर्जाघरों, होटलों, स्कूलों, अस्पतालों और दुकानोंकी कोई कमी नहीं। १८५८ में पुस्तकालय और १८५८ ई०में लाइब्रेरी आरम्भ हुआ था।

उतङ्क—१ वेद नामक मुनिके शिष्य। ये जितेन्द्रिय, धर्मपरायण और बड़े गुरुभक्त थे। महाभारतमें कहा है—जनमेजय और पौष्य नामक राजद्वयने वेदको अपने उपाध्याय रूपसे वरण किया था। किसी समय वेद उतङ्कको गृहमें छोड़ और सकल भार सौंप प्रवासपर चल गये। एक दिन वेदपत्नीने उतङ्कको बोला कहा था—‘उतङ्क! तुम्हारे गुरु घरमें नहीं। मैं कहती हूँ। अब वह करो, जिसमें मेरी श्रुति निष्फल न हो।’ गुरुपत्नीके समझाते भी इन्होंने देसा कुकर्म न किया। गुरुने घरमें आकर उतङ्कके विशुद्ध चरित्रकी बात सुनी। उन्होंने इन्हें आशीर्वाद देकर कहा था—‘तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा। चले जाओ।’ उतङ्कने गुरु दक्षिणा-देना चाही। गुरु बोल उठे—‘वत्स उदमन्यु! गुरुदक्षिणा देनेसे क्या है! फिर भी यदि नितान्त तुम्हारी इच्छा हो, तो अपनी गुरुपत्नीमें पूछो। वह जो मांगेगी, वही चीज जाना पड़ेगी।’ गुरुपत्नीने उतङ्कसे

कहा—पौष्यराजकी धर्मपत्नीके कुण्डल में पहनावा चाहती हूँ।

उतङ्कने पौष्यराजके निकट जाकर कहा—‘महाराज! गुरुदक्षिणा देनेके लिये आपसे कुण्डलद्वय मांगने आया हूँ। कृपाकर दे दीजिये।’ राजा बोले—‘कुण्डल मैं देता हूँ। किन्तु पाप पति पाव-धानतासे ले जाइयेगा। क्योंकि इस कुण्डलद्वयपर नागराज तक्षककी दृष्टि सर्वदा रहती है।’

उतङ्क कुण्डलद्वय लिये भागे थे। राहमें एक उसक शपथक मिल गया। वह संध्य मध्य द्विप जाता था। ये कुण्डलद्वयकी भूलतलपर रख खान तर्पणादिके लिये सरोवर पड़ते। इसी बीच शपथक-रूपी तक्षक उन्हें उठा नागलोकमें घुस गये। उतङ्कने स्नानके भन्तमें आकर कुण्डल न पाये थे। पौष्य-राजकी बात श्रवण पायी। ये बड़े कष्टपूर्वक इन्द्रलोकसे यज्ञ और उसके महारि नागलोकसे जा कुण्डल लाये। फिर कुण्डल गुरुपत्नीको उतङ्कने जाकर दिये थे। इन्होंने नागलोकमें जी देखा, गुरुसे कह सुनाया। गुरु बोले—‘वत्स! तुमने वहाँ जो स्त्रीके दो रूप देखे, वे परमात्मा और जीवात्मा हैं। दादग अवयवयुक्त चक्र संवत्सर, शक्त एवं क्षणवर्ष सकल वस्तु दिशा तथा रात्रि, कः कुमार कही शत्रु, पुत्रप-पत्न्यन्त्र, भयम भस्मि, पथिमध्य हयम नागराज, ऐरावत और भस्मोपरि नृपति इन्द्र हैं। तुमने इस स्नानसे जाते समय हयभका जो पुरीष खाया, वह भन्त है। भन्तके प्रभावसे ही तुम नागलोक जा और यह कुण्डल ला सके। उतङ्क गुरुसे विदाय हो राजा जनमेजयके निकट गये थे। वहाँ तक्षक मारनेके लिये उनसे सर्पयज्ञ कराया। (भारत भाग ३६०)

२ गौतम मुनिके एक शिष्य। ये महर्षि थे। इनकी जीवनो भी पूर्वार्ण उतङ्ककी तरह है। इन्होंने भी गुरुपत्नी पद्मस्थाके कहनेसे छोटास राज-पत्नीके कुण्डल जाकर गुरुदक्षिणा दी थी। ये घोरतर तपस्यामें आसक्त और गुरुभक्ति-परायण रहे। गौतम भी सकल शिष्यकी अपेक्षा उतङ्कको ही अधिक चाहते थे। यथा समय अपरापर शिष्यके पाठ पढ़ घर जाते

भी उन्होंने स्नेहप्रयुक्त उत्तद्विषय को न छोड़ा। ये भी गुरुभक्तिमें गृहकी कथा भूल गये थे। प्रायः यत् वत्सर इतीतरह बीते। एकदिन उत्तद्व दूर बनसे काष्ठ भार उठा जानेपर क्लान्त हो गये; इसलिये शीघ्र शीघ्र आश्रमके निकट पहुँच जैसे ही फेंकने लगे, वैसे ही उसके साथ साथ कूक केग भी टूट पड़े। उत्तद्व टूटे कीग देख रोने लगे थे। गौतमने भाकर रोनेका कारण पूछा। इन्होंने आंसू बहाते बहाते कहा— 'मेरे बाप पक गये हैं। मैं यहीं रुक बना हूँ। तथापि आपने मुझे घर जाने न दिया।' गौतम बोले—'तुम्हें मैं बहुत चाहता और तुम्हारी श्रमपूर्वक अत्यन्त सुख पाता हूँ। इसीसे तुम्हें छोड़ नहीं सकता। अब मैं आज्ञादसे गृह जानेकी आज्ञा देता हूँ।' फिर गौतमने अपनी कन्याके साथ उत्तद्वको व्याहारा दिया। (भारत आश्रमविषय)।

(हिं० वि०) १ उत्तल, ऊँचा।

उत्तद्विषय (सं० पु०) विषय विशेष, किसी कृष्णका बादल।

उत्तद्व (हिं० वि०) १ उत्तल, बुलन्द, ऊँचा। २ उत्तल, ऊँचे दरजावाला, बड़ा।

उत्तय्य (सं० पु०) मुनि विशेष। महर्षि अद्विराके शीरस और उनको पत्नी यद्वीके गर्भसे इनका जन्म है। ये ब्रह्मसत्त्विक ज्येष्ठभ्राता लगते हैं। इन्होंने ममतासे विवाह किया था। उनके गर्भसे दीर्घतमा नामक एक पुत्र हुआ। शीर्षला दीक्षी।

उत्तय्यतनय (सं० पु०) उत्तय्यके पुत्र गौतम।

उत्तय्यानुज (सं० पु०) उत्तय्यके कनिष्ठ भ्राता ब्रह्मसत्त्विक।

उत्तय्यानुजकान्, उत्तय्यानुज दीक्षी।

उत्तन (हिं० क्रि० वि०) तन, बढ़ा, उस तन, उधर।

उत्तना (हिं० वि०) १ तत्परिमाणविशिष्ट, उस भिक्षुद्वारासा, उसकी बराबर। (क्रि० वि०) २ उस परिमाणपर, उस भिक्षुद्वारमें।

उत्तवा (हिं० पु०) कर्षिकाविशेष, कानमें पहनी जानेवाली एक बाधी। यह कर्षिके उपरि भागपर रहता है।

उत्तपन्न (हिं० वि०) उत्पन्न, पैदा।

उत्तपात (हिं० पु०) उत्पत्ता, भगड़ा।

उत्तपानना (हिं० क्रि०) १ उत्पन्न करना, उपजाना। २ उत्पन्न होना, उपजना।

उत्तमद्व (हिं० पु०) उत्तमाद्व, मर्याद, सुख, मत्या, सुख।

उत्तरंग (हिं० पु०) उत्तरङ्ग, दरवाजेके टाँचेपर रखी जानेवाली लकड़ीकी मेहराब।

उत्तर (हिं० पु०) उत्तर, जवाब।

“उत्तर देत जाकेच” विगु मारे।

केवल कीर्तिवत् शील गुणारे ॥” (गुणवती)

उत्तरन (हिं० स्त्री०) १ जर्जरभूत वस्त्र, जो कपड़ा पहनने-पहनने बिगड़ गया हो। २ उत्तरङ्ग, उत्तरंग। ३ गुल्म विशेष, एक भाड़। इसे ब्रह्माक्षमें चतुस्रपती और सिंघलमें कानकुम्भल कहते हैं। उत्तरनमें सूख बहुत रहता है। आकार दीर्घ है। दक्षिणापथके कोष्ठपथसे दक्षिण दिवालोड़ और सिंघलमें उत्तरन उपजती तथा कहीं कहीं ब्रह्माक्षमें भी देख पड़ती है। सिंघलवासी इसके पत्रका मास बनाकर खाते हैं। इसका दुग्धवत् रस चान्द्र होता है।

उत्तरन-पुतरन (हिं० स्त्री०) जर्जरभूत वस्त्र, फटा-पुराना कपड़ा।

उत्तरन होना (हिं० क्रि०) वस्त्र चयन उपकारसे सुक्षिपाना, फट या पड़साने से टूटना।

उत्तरना (हिं० क्रि०) १ अवतरण करना, नाज़िल होना, नीचे आना। “आवतारसे उत्तर यत्राग्रे वरना।” (नीलोत्पल) २ निगलित होना, निगला जाना। “कता वातो वृथा गच्छी।” (नीलोत्पल) ३ उत्पन्न होना, उपजना।

“जिलो सेकर उत्तरा वा उत्तरा से जिला।” (नीलोत्पल)

४ प्रवेश करना, घुसना। १ पार होना, काटना। २ निःसृत होना, निष्कलना, घाता। ३ ध्वन पड़ना, घटना। ४ घिस जाना, बिगड़ना। ५ हट होना, बुझना। ६ मनिम पड़ना, कुम्हलाना। ७ समान होना, खातिमें पर पड़ना। ८ स्थानान्तरित होना, लज्ज होना। ९ अवसरानित होना, विरह्यत बनना।

“उत्तर ग्यो कीरे मो का वरन होत।” (नीलोत्पल)

१४ मृत्युको प्राप्त होना, मरना। १५ तुलना, बज्रममें बैठना। १६ परिपक्व होना, पकना।

उत्तरवाजा (हिं० क्रि०) उतारनेका कार्य अन्यसे लेना, उतारनेको हुकम देना।

उत्तरदा (हिं० वि०) उत्तर दिक् सम्बन्धीय, शिमासी, उत्तरी।

उत्तरा (हिं० वि०) अधोगत, अवनत, घटा हुआ, जो वैभ्रगह पड़ा हो।

उत्तरार्द्र (हिं० स्त्री०) १ अधोगमन, नीचेको जानेका काम। २ नदीके परपार पड़नेका श्रृङ्ख, दरया पार होनेका महसूस।

उत्तराग (हिं० क्रि०) १ उत्तरण करना, नीचेसे ऊपर आना। २ उत्तरवाजा, उतारनेका काम दूसरेसे कराना।

उत्तरायण, उत्तर देवी।

उत्तरारी (हिं० स्त्री०) उत्तरवायु, शिमालसे चलनेवाली हवा।

उत्तराय (हिं० पु०) उत्तर देवी।

उत्तरायना (हिं० क्रि०) उतारना, ऊपरसे नीचे लाना।

उत्तरास (हिं० स्त्री०) उत्तरनेकी इच्छा, नीचे आनेकी चाहिष।

उत्तरिण, उत्तर देवी।

उतरीला—१ युक्त-प्रदेशके गोंडा जिलेकी एक तहसील। यह प्रचा० २६° २३' एवं २७° २५' उ० और द्रावि० ८२° ८' तथा ८२° १८' पू० के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १४४८ वर्गमील है। इसमें ८८० वर्गमील पर कृषिकार्य चलता है। लोकसंख्यामें हिन्दू अधिक हैं। उतरीलेमें घात परगने लगते हैं—उतरीला, ग्राहदुला नगर, बूढापाड़ा, बहरीपुर, मानिकपुर, बलरामपुर और तुलसीपुर।

२ गोंडा जिलेका एक परगना। इससे उत्तर रापती नदी, पूर्व बसती जिला, दक्षिण कृवाना नदी और पश्चिम बलरामपुर परगना है। उतरीले परगनेके मध्य सुभावन नदी बहती है। सुभावन और कृवाना नदीके बीचका स्थान 'उपरवार' कहलाता है। रबी और खरीफ दोनों फसलें अच्छी तरह पैदा होती हैं। सुभावन

नदीका तीर कंकरीला है। अधिवासियोंमें भोज, कुर्मि, कोरी प्रभृति नीच जातीय हिन्दू अधिक मिलते हैं। यहां अनेक प्राचीन दुर्गों का अवशेष पड़ा है। मुसलमानोंके आनेसे पहले हिन्दू राजगणने उक्त दुर्ग बनवाये थे। वर्तमान नवाबके आदिपुरुष भलीखान् नामक एक पठानने यह स्थान किसी रजपूतसे लीता। उस समय भारतमें मुगल बादशाह प्रबल हो गये थे। किन्तु स्थानीय पठान नवाबने उनकी अधीनता स्वीकार करना न चाही। अवशेषकी भलीखान्ने भक्तवर्क वसीभूत हो अपने पितापर बल उठाये थे। पिता-पुत्रमें युद्ध ठना। भलीखान्ने अपने पिताका मस्तक हिलफड़ कर जयचिह्नस्वरूप दिल्ली भेजवाया और पिछमूर्तिके स्मरणार्थ एक सुन्दर समाधिस्तम्भ बनवाया। बीस बत्तार राजत्वके बाद उनके पुत्र दाजद-खान्की पिछपद मिला था। किन्तु उनके राजत्व-कालपर उतरीलेमें बहरीपुरके राजगणका अधिकार जम गया। १६२८ ई० की पूर्वराजवंशीय सलीम-खान् नामक एक व्यक्तिने फिर यह स्थान ले लिया था। किन्तु उनके राजत्व कालपर दाहण बृहद्विवाद उठा। सलीमने विवाद बन्द करनेके लिये राजत्वकी पांच भागमें बांटा था। उन्होंने फतेहखान्, पहाड़खान्, रहमतखान् और सुबहार बार मुलको एक-एक भाग दिया तथा एक भाग खास अपने लिये रख लिया। सलीम खान्के प्रपौत्र महावत (दिनावरखान्)ने गोंडके राजा दत्तमिहकी मिल बानसीके राजासे अनेक बार युद्ध किया था। बानसीराज सम्पूर्ण रूपसे हार। पहाड़ खान्के बंधुधर कमान्वयये उतरीले पर राजत्व करते चले आते हैं।

३ गोंडा जिलेका एक नगर या शहर। उतरीला अपने परगनेमें प्रधान स्थान है। यह प्रचा० २७° १८' उ० और द्रावि० ८२° २०' २५' पू० के मध्य अवस्थित है। राजपूतोंने यह नगर बसाया था। निदर्शन मिला—उनके समय उतरीला परिच्छासे परिवेष्टित सुन्दर दुर्ग रहा। यह नगर पान्थके उपवनसे समीकोर है। विशालय, न्यायालय और दातव्य चिकित्सालय बने हैं।

उतलाना (हिं० क्रि०) आतुर होना, जल्दी मरना,  
झलझल होना ।

उतला (हिं० वि०) आतुर, जल्दबाज, जो जल्दी  
करता हो ।

उतवंग (हिं० पु०) उतमाङ्ग, मस्तक, खोपड़ा ।

उतसव (हिं० पु०) उत्सव, जलसा ।

उतसाह (हिं०) उत्साह देखो ।

उतान (हिं० वि०) १ व्युत्क्रान्त, मजलूब, भौधा,  
छलटा, जो अपनी पीठ जमीनसे लगाये दो ।

उतान—दम्बईप्रान्तके थाना जिसका 'बन्दर' यह  
थाना १८° १८' उ० तथा द्रावि० ७२° ४८' पू० पर  
थाने नगरसे १० मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है ।  
यहां एक पोर्तुगोज़ गिर्जा है । कितना हो माल  
भाया-जाया करता है ।

उतार (हिं० पु०) १ अवतरण, ढलाव, ऊपरसे  
नीचे जानेका काम । २ निर्मल स्त्री, शैशवं औरत ।  
३ प्रतिषेध, अनुकरण, सुसमा, नकल । ४ घाट, नदी  
पार होनेका महमूल । ५ दरौके करषिका एक बांसा  
यह लुलाहिसे चलन और पचाव दिक् चढ़ावके बराबर  
पड़ता है । ६ न्योछावर, सदका । ७ विपकी मारने-  
वाला पदार्थ, जिस जोड़से ऊपर उतरे । ८ अभिचार  
विशेष, एक टोटका । ९ से, लपक अपने लङ्गलकी  
कामनाके किये करते और एक दिन चामसे बाहर  
बसते हैं । ८ भाटा, लहरका ढलाव । १० विनाश,  
बरबादी । ११ मूलका पतन, भावका गिराव ।  
१२ मूलका अपचय, चामदगीकी कमी ।

उतार-चढ़ाव (हिं० पु०) आरोहण एवं अवतरण,  
चढ़ा-उतरी, ऊँच नीच, चटती-बढ़ती, मलाई-सुराई ।

उतारन (हिं० पु०) १ परित्याग वस्त्र, पुराना कपड़ा ।  
२ न्योछावर, सदका, किसीके ऊपर उतार कर दो  
जानेवाली चीज । ३ निस्तुट द्रव्य, खराब चीज ।  
४ दुष्ट मनुष्य, बदमाश बादमी ।

उतारना (हिं० क्रि०) १ अवतारण करना, ऊपरसे  
नीचे खाना । २ लिखना, खींचना, घसीटना । ३ घुसक  
करना, झोड़ना, छोटाना । ४ अवस्थित करना, रखना,  
ठहराना । ५ अतुर्दिक् भुमाना, दृष्टतः देखना ।

६ परियोध करना, दे छालना । ७ उगाड़ना, मे  
थाना । ८ उपजाना, पैदा करना । ९ निर्माण करना,  
बनाना । १० न्यून करना, घटाना । ११ तुलना  
करना, तोलना । १२ नदी पार से खाना । १३ प्रवेग  
करना, घुसेड़ना । १४ निःसरण करना, निःकासना ।  
१५ पान करना, पीना । १६ निगल जाना । १७ त्याग  
करना, छोड़ना । "कारण गृहा भगवत् उतारती ही ।"  
(नीलोत्पल) १८ त्यागपुत्र करना, छोटाना । १९ खराब  
करना, बिगाड़ना । "न बन्धनो उतार की नो, दुःखको उतारने  
का देर ।" (नीलोत्पल) २० रगड़ना, घिसना । २१ सुखन  
करना, लूटना । २२ एकत्र करना, जुनना बिनना ।  
२३ टालना, भरना । २४ विभाग करना, बांटना ।  
२५ दान करना, देना । २६ प्रेरण करना, भेजना ।  
२७ देशनिर्वासन एवं स्वाध्यायिनागमन करनेको  
समुद्रपार और मार उतारना कहते हैं ।

उतार-सुतार (हिं० पु०) १ उपग्राम, चाराम ।  
२ मोचन, पदा, चुकती ।

उतारा (हिं० पु०) १ उत्सर्ग, तफरीक, कमी ।  
२ पावस्थित परिपक्व पचादि, किसी वस्तुमें रखा  
भात बगैरह । इसे कई बार रोगीको चारो चोर  
भारतीकी तरह घुमाकर उतारते हैं । नोर्माकी  
विज्ञास है, रोगीको प्रेत बाधा उतारे पर उतर पानो  
है । ३ सामग्री विशेष, किसी क्षिपका सामान् । यह  
उतारमें जुगता है । ४ संखान, पड़ाव, उतारनेको  
जगह । ५ तरपस्थान, घाट, नदी पार करनेकी जगह ।  
६ प्रतिषेध, नकल । ७ उत्तर, जवाब । ८ मूठ-  
मूक, घाटकी उत्तराई । ९ मन्दिरकी प्रदत्त भूमि,  
जो जमीन मन्दिरकी मिश्री हो । १० निष्कर भूमि,  
माफीकी जमीन । इसे सरकार अपने कर्तव्य पालन-  
वाले सेवकोंको देती है । (वि०) ११ उतारा हृषा,  
जो उतार डाला गया हो । पञ्चापागल और अन्य  
भूख द्वारा क्रीत द्रव्यको उतारेका भात कहते हैं ।  
उताह (हिं० वि०) १ उन्मुख, चाराम्हा, राजो,  
उतर पड़नेवाला । (पु०) २ यात्री, सुभाषित ।  
उतास (हिं० क्रि० वि०) १ उत्तर, जल्द, चट ।  
(की०) २ खरा, मिताबी, जल्दी ।

उतास (विज्ञापुर)—मध्यप्रांतके सखनपुर जिलेकी एक जमीन्दारी। यह बड़गढ़ तहसीलमें लगती और सम्मलपुर नगरसे १८ मील दक्षिणपूर्व पड़ती है। भूमिका परिमाण ८० वर्गमील है। चावल, दाल, ककड़, रुई और तेलहनकी उपज अधिक है। उताल या विज्ञापुरग्राममें एक सुन्दर तड़ाग और विद्यालय बना है। इसके प्रमुख प्रकृत गोंद हैं। १८२० ई० पर अंगरेज सरकारसे कुछ सखनपुरकी राजा महाराज साहनीने स्थानीय नरेश गोपी कुलताको उताल उपाधि दिया था। उन्हींके वंशज आज भी जमीन्दारी अपने हाथ रखते हैं।

उताली, उताल देवी।

उतावल (हिं० स्त्री०) १ व्ययता, चलास्य, बेचैनी। २ साहस, हिम्मत। ३ शीघ्रता, गतिशील। (क्रि० वि०) ४ सत्वर, प्रौरम्। (वि०) ५ भाग्यकारी, लब्धवाज्, तेजी देधानेवाला।

उतावला (हिं० पु०) धैर्यरहित पुरुष, बेसम आदमी।

“उतावला सी बावला धीरा सी नहीं।” (श्रीकृष्ण)

उतावली (हिं० स्त्री०) १ त्वरा, जल्दी। २ चापल्य, बेचैनी।

उताहल (हिं० क्रि० वि०) शीघ्र-शीघ्र, जल्द-जल्द, तेजीके साथ।

उताहिल, उताहन देवी।

उताही (सं० अव्य०) १ पिकल्प—भयवा, या इत्यादि।

२ प्रश्र—फला, यहाँ वगैरह। ३ विचार—अवस्था, हाँ प्रकृति।

उताहोसित् (सं० अव्य०) भयवा, आया, या।

उतल (सं० पु०) जातिविशेष, किसी क्षीमकी लोग।

उतण, उतण देवी।

उतने (हिं० क्रि० वि०) उम पाई, उधर, वहाँ, उत।

उतैला (हिं० पु०) १ माघ, उहड़। (क्रि० वि०)

२ शीघ्र-शीघ्र, जल्द-जल्द।

उत्क (सं० स्त्रि०) उत्क निपातनात्। १ उत्सुक, खाई। २ यशु विमेषकी प्राप्तिका अभिलाषी, जो किसी खास चीजके पानेका खाई हो। ३ पचासाप-कारी, भक्षुसुदा, उदास। ४ अनुपस्थित, गैरहाजिर,

जो दूसरी बात विचारता हो। (पु०) ५ अभिलाष, खाइग। ६ भयसर, मौका।

उत्कच (सं० स्त्रि०) उद्गतः उद्यतो कचोऽस्य। १ केश-शून्य, बेघान। २ उपलब्ध, पड़े वालवाला। ३ पुराणवर्णित भारतके पूर्वप्रांतवासी दुर्धर्ष जाति-विशेष। अष्टांगदेवी।

उत्कच्छा (सं० स्त्री०) कन्दो विमेष। इसमें कः पाद रहते हैं। प्रत्येक पादमें ग्यारह एकाक्षरमात्रा लगती है।

उत्कच्छुक (सं० स्त्रि०) कूर्पासकविहीन, जो बोली या मिर्जई न पहने हो।

उत्कट (सं० स्त्रि०) उत्-कट्-पच्। तीव्र, तेज, मामूली हिसाबसे ज्यादा। २ मत्त, मतवाला। ३ व्यास, भरा हुआ। ४ अधिक, ज्यादा। ५ जेठ, बड़ा, चमड़ी। ६ विषम, नाहमवार, जो बराबर न हो। ७ कठिन, सुगमिल। (पु०) ८ मत्त गज, मतवाला हाथी। ९ मत्तगजके गण्डस्थलसे टपकने-वाला द्रवपदार्थ, हाथीके मलेसे भड़नेवाला मद।

१० शरकाण्ड, रामसर। ११ सुदृढ़ सुपविमेष, एक छोटा भाड़। १२ इष्ट, जल। १३ रत्नेष्ट, जल जल। १४ मद, नशा। (स्त्री०) १५ हृषमेद, एक पेड़। १६ लताविशेष, सानसा। १७ गुडत्वक, दालचीनी। १८ तेजपत्र, तेजपात।

उत्कटा (सं० स्त्री०) संचलीलता, जटकाटारा, सफेद पुंघची। सैइली (उत्कटा) कटु, उष्ण, क्षमिष्ठ, दीपन-एवं कीडमोघन होती और कफ, श्लेष्म तथा वायुजनित रोगको शमन करती है। (चरकनिघण्टु) उत्कटा उष्ण, तिक्त, हृष्य और रुचिकर है। यह मूत्रलक्ष्ण, पित्त, वात, मूत्र, कृच्छ्र, हृद्दरोग और विस्फोटकको मारती है। इसका घोज शीतल, हृष्य, टांठिकर और मधुर प्रकीर्तित है। (शेखरनिघण्टु)

उत्कटासनं, उत्कटुकासन देवी।

उत्कटुकासन (सं० स्त्री०) कठिगासन, गजिन्द्र-चारंलान, चौखूट बैठक, पालती मारकर बैठनेकी क्षमता।

उत्कटिका (सं० स्त्री०) अग्निग्न सुदीप, उठाया हुआ रंजा या टुकड़ा।

उत्कण्ठक ( सं० स्त्री० ) हृषमिद, दवाहृष ।

उत्कण्ठ ( सं० पु० ) उन्नतः कण्ठो यस्य । १ धासन, नमिसं, बैठक । यह गृहकारके पोह्य बन्धमें लयोदेय है ।

“गरीपादी च हस्तं न भारयेन्नरके पुनः ।

कानां पितृवः क्षांती बन्धोत्कण्ठकं प्रभः ॥” ( रविमन्त्रो )

२ प्रिय व्याज वा वस्तुके लिये चमिस्वाय, प्यारके वास्ते सालस्य । ३ पयात्ताप, किसी भादमी या चीजके लिये पछतावा । ( त्रि० ) ४ उद्ग्रीय, गर्दन उठाये हुआ । उत्कण्ठा ( सं० स्त्री० ) उत्कण्ठित-भावः । पोतुस्वस्व, शीत, खादिय । इतनाभमें कालचेपकी पसहियुताको उत्कण्ठा कहते हैं । यह एक सचारी भाव है ।

“कनो वप हरि सखी सखी ।

विष हिय बनि उत्कण्ठा जानी ॥” ( तुलसी )

उत्कण्ठित ( सं० त्रि० ) उत्कण्ठा जाताइस्य, उत्कण्ठा-इतच् । उद्भिन्न, उत्सुक, बेचैन, अप्रसन्नमें पड़ा हुआ । उत्कण्ठिता ( सं० स्त्री० ) नायिकाभेद, किसी किष्कंधी औरत ।

“सहेतम्यनं प्रति भवत् रासमन्धारमं विनयति सा ।” ( रवमन्त्रो )

सहेत स्यानपर नायिकागमनके लिये दुःखित होनेवाली स्त्रीको उत्कण्ठिता कहते हैं । इसके परति, सन्ताप, कृथा, चढ़ाकरपण एवं कम्पन, रोदन और शब्दयुक्त दीर्घ निश्वास सकन लक्षण देख पड़ते हैं । दूसरे— “बातन्” इत्यधिकोऽपि दैवाद्यादति यत्पुनः ।

मदात्मनः स्यातां विरहीतृष्वपि तु वा ॥” ( साहित्यदर्पण )

पागमनको निश्चय करत भी यदि प्रिय देवात् नहीं जाता, तो उस नायिकाका नाम विरहीतृकण्ठिता रखा जाता है । क्योंकि वह उसके मनःपानेपर दुःखित होती है ।

उत्कृता ( सं० स्त्री० ) उत्कृ-तन् । १ गजपिप्पसी, बड़ी पीपल । २ उत्कण्ठा, शव ।

उत्कण्ठक ( सं० पु० ) रोगविशेष, एक बीमारी । उत्कण्ठर ( सं० त्रि० ) उन्नतः कण्ठोऽस्य, प्रादि-यद्गुणो । १ उन्नतपीय, गर्दनकी पीछे उठाये हुआ ।

( स्त्री० ) २ योवाका पयात् दिक् नमन, गर्दनका पीछेकी ओर झुकाव ।

उत्कम्प ( सं० पु० ) १ कामादिजनित कम्पन, मर-जिह्व, घरघराहट । “लोकम्पानिप्रियसहचरौ भक्तमर्षिद्विजानि ।” ( नाग ) ( त्रि० ) उत्कम्प-भच् । २ उत्कम्पान्वित, सरजा, घरघरानेवाला ।

उत्कम्पन ( सं० स्त्री० ) विनोदन, लुभिय, भ्रकोर । उत्कम्पन् ( सं० त्रि० ) कम्पान्वित, सरजा, जो हिलसल या भ्रकोर रहा हो ।

उत्कर ( सं० पु० ) उत्क-कृ-यच् । १ रामि, डेर । २ प्रसारण, फैलाव । ३ विविध, फैलपाक । कर्मचि भच् । ४ विविध भूखादि, कूड़ाकट । ५ रत्नेषु, मान लख । ६ उत्कारिका, मुलटिस । ( त्रि० ) ७ रागि-मय, डेर हो जानेवाला, जो लमा हा ।

उत्करादि—पाणिनि-कथित एक भच् । इसमें निम्न-लिखित शब्द पड़ते हैं—उत्कर, शम्भल, शफर, पिप्पल, पिप्पलीमूल, चमन, सुवर्ण, पलाजिन, तिक्, कितव, पणक, वेंवण, पिपुल, चमत्त, काय, सुद्र, भस्त्रा, शाल, कल्या, पजिर, चर्मन्, उत्क्रोश, शाल, खदिर, शूर्पपाय, श्यापनाय, नैवाकय, लघ, लघ, शाक, पलाय, विजिगीषा, चनेक, पातप, फन, मम्पर, पर्क, गर्त, पन्नि, वेराचक, इहा, घरस्थ, निगाम्, पर्क, नीचायक, गदर, पयरोहित, चार, विगास, वेत, चरीहय, खण्ड, वातागर, मन्वपाई, रम्भहय, नितास्ताहय और पादहय ।

उत्करिका ( सं० स्त्री० ) मोटक विमेष, एक मिठाई । यह दुग्ध, गुह और घृतसे बनती है ।

उत्करोय ( सं० त्रि० ) उत्कर-शब्दबोध, डेरने निरुद्ध रचनेवाला ।

उत्ककर् ( सं० पु० ) वाद्ययन्त्र विशेष, एक वाजा । उत्कर्ण ( सं० त्रि० ) उन्नतः कर्णो यस्मिन् यज्य वा । १ उन्नतकर्णयुक्त, जो कान जड़े ऊँचे हो । ( पु० ) २ उन्नतकर्ण, खड़ा कान । ३ दातृमय चमरीय, छोड़ेकी यातसे पैदा होनेवाली एक बीमारी । इसमें थोड़ेकी कर्ण, पुच्छ और भाव धाव हो जाता है ।

( चरन )

उत्कर्तन ( सं० स्त्री० ) उत्कृ-कृत-भृच् । १ हृदन, हृदार्क । २ उत्कण्ठन, काट-काट । ३ चण्डाल





वना। प्रत्येक ग्राममें ब्राह्मणशासन विद्यमान है। नगर, ग्राम, यहां तक कि घर घर मन्दिर बने हैं। पति पूर्व कालसे जगन्नाथकी पूजा होती है। जनभाव देखो।

ब्राह्मणमें श्रेयका प्राधान्य रहते भी वैष्णवमार्गी लोगोंकी अधिक प्रथा है। उड़ीसेके ब्राह्मण वैदिक और लौकिक दो प्रकारके होते हैं। कहते हैं—प्राय ई०के १२ वें शताब्दसे कसोज और बङ्गालके ब्राह्मण पुरी जिलेमें आकर बसते हैं। उर्फीका नाम वैदिक है। इससे कोई सो वर्ष पहले वे उड़ीसाकी प्राचीन राजधानी याजपुरमें आ गिरे थे। किन्तु ११०५ और १२०२ ई० के बीच जगन्नाथ मन्दिरको पुनः बनवाने-वाले राजा जनकभूमिदेवने उनके लिये पुरी जिलेमें ४५० उपनिवेश स्थापित किये। वैदिक ब्राह्मण कुलीन और श्रौतिय दो श्रेणीमें विभक्त हैं। कुलीन ब्राह्मणके वाच, नन्द और गौड़ोय तीन पद्वति होती हैं। लौकिक राजाकी दो हुई माफ़ भूमि, वासकीकी गिवा और पूजा अर्चनासे बसती है। श्रौतिय-कन्याका विवाह अपने पुत्रके साथ करनेपर वैदिक ब्राह्मण बड़ा दण्ड लेते हैं। श्रौतिय ब्राह्मणके भट्ट, धर, उपाध्याय, मित्र, रथ, भोत, तियारी, दाम, पति और श्रतपथी नव पद्वति हैं। लौकिक ब्राह्मण सबसे छोटे और उड़ीसेके आदि अधिवासी हैं। इनमें छः पद्वति हैं—पण्डा, सेनापति, परबो, बसतिया, पालि और साङ्ग। कृषि, वाणिज्य, शाकविक्रय, रूपयेका लेन-देन और तीर्थयात्रियोंकी पथप्रदर्शन इनके सनोपा-र्जनका प्रधान द्वार है।

चन्द्रिय तीन प्रकारके हैं—देव, नाल और शय। राजा, जागीरदार और मराजान इनमें मिलित है। संख्या न्यून रहते भी आर्थिक दया अच्छी है। द्वितीय श्रेणी सिंध और चम्पू राजपूतोंकी है। यह छोटे मोटे जमीन्दार होते या फौज, पुलिस, दरबानी और चिट्ठे रसाईका काम करते हैं। लोगोंके शूद्र कहते भी प्रचारायत अपनेको चन्द्रिय बताते हैं। पूर्ण समय स्थानीय सृष्टि इनको निष्कर भूमि दे चुका काम देते थे। आज कुछ इनकी संख्या बहुत अधिक है।

कुछ जमीन्दार और माफीदार होते भी अधिकतम खण्डायत कृषि कार्य करते हैं।

करण अपनेको भारतके प्राचीन चन्द्रिय बताते हैं। कितने ही करण जमीन्दारी करते और श्याज पर रूपया तथा चावल श्रष्ट देते हैं। किन्तु अधिकांश सुनीम, छिवावदार और छोटे चफसर हैं। इनकी आर्थिक दया साधारणतः अच्छी है।

शूद्रोंमें चासा (प्रधान छपक), श्वाला, पान, सेबो, वाउरो (मज्दूर) तांतो (छुहाले), केचट, कापिन, घोश, कुम्हार, बटई, कन्दू (हलवाई), गोशार, चमार, मासो, इड्डो (मैदनर), मोदक (मोदी), डोम, लुगी (कोरी), सुनरी (कनवार) प्रभृति प्रधान हैं। पान पूर्व समयमें नरवनि के पत्र मानवकी पकड़ से जाते थे।

यहां मुसलमान भी बहुत रहते हैं। किन्तु वे दरिद्र, अधिमानी और चपलुट हैं। कितने ही चफसानोंके बंग प्रतिष्ठित हैं। किन्तु वास्तविक ये मुसलमानोंकी कौशिके साथ आये सिपाहियोंके सन्तान हैं।

आदिम अधिवाशियोंमें गोंड, खत्यान, सुंइया, भूमिज, खरवार और कोल अधिक हैं। इनमें कुछ हिन्दू धर्मको मानते और कुछ अपने स्वतन्त्र मतपर चरते हैं।

ईसाइयोंमें युरोपीय, यूरोपीय, देग्रीय और एस्ति-याके लोग मिलते हैं। देग्री ईसाई वापतिस्त मिशनरी सम्बन्ध रखते हैं।

प्राचीन कालमें इन देशमें जनों तथा बोर्डीका प्राबल्य अधिक रहा। किन्तु सन् ई०के ४वीं शताब्दीमें बौद्ध धर्मका प्रभाव घटा था। फिर श्रेयका प्राधान्य बढ़ा। भुवनेश्वर नगरमें सन् ई०के ७वें शताब्दीमें छेड़ों मिवमन्दिर बन गये हैं। वैष्णव महाभारत और रामायणकी भावने हैं। किन्तु मिव और विष्णु दोनों भक्तियानन्दस्वरूप परब्रह्मके एक ही धर्म समझे जाते हैं। अजि, सुनेवर और जयराज देखो।

प्रति वर्ष उड़ीसेमें शोषोम धार्मिक महोत्सव होता है। उसमें विष्णुका ही पूजन अधिक रहता है। वैशाख मासमें चन्दनयात्रा तीन बरस चलती है।

भोकापर विन्तु और शिम दोनो जलविहार करते हैं। खानयात्राके समय गर्दम भगवान् तड़ागमें नहाने जाते हैं। रामलीला, कालीयदमन और जगन्नाथके जन्मका उत्सव भी बड़ा है। रथयात्रा जैसी धूमधाम दूसरे समय नहीं होती।

छदिमें चावल अधिक चरता है। सूखे टीकों और गहरे दलदलोंमें हर जगह उसे बो देते हैं। चावल कई प्रकारका होता है। दिसम्बर जगन्नाथकी मार्च-पर्वरेल, मईजूनका जुलाई-भगवत् और वर्षाके भारभका बोया दिसम्बरमें कटता है। सिवा चावलके गेहूं, भड़हर, उड़द, मूंग, मसूर, मटर, सरसों, सन, तम्बाकू, रुई, जूत, पान, चानू और चनेक प्रकारका गाकादि भी उपजता है।

वालेसर, कटक, पुरी और चांदबाबी बड़े बन्दर हैं। चावल और कपड़ेका व्यवसाय अधिक होता है। कलकत्तेसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। कितना ही माल आता और कितना ही जाता है। प्रधानतः विलायती एवं देशी सूत, कपड़ा, बोर, मोटालकड़, तेल, मसाला, तम्बाकू और सोना-चांदी बाहरसे मंगते हैं। चावल, चमड़ा, लकड़ी और लाख आयात करते हैं। वालेसरसे चावलका निर्यात अधिक होता है। जहाज बराबर कलकत्ता आया-जाया करते हैं। बङ्गाल नागपुर रेलवे उड़ीसाके प्रधान प्रधान नगरोंकी पहुँचती है। पुरीमें नमक बहुत बनता है। कटकके सोनेका काम प्रसिद्ध है।

यहां रेल और सड़ककी कमी है। कलकत्तेसे मद्रास जानेवाली पाण्डुरङ्ग रोड (Grand Trunk Road) कलार-जैसे प्रान्तके बीचसे निकलती है। इसीकी एक शाखा कटकमें पुरीकी फ़ीटी है। सम्बलपुरकी भी कटक और मेदिनीपुरसे सड़क लगी है। बन्दर बड़े जहाजोंके लिये उपयुक्त नहीं। पहले मान लहाऊसे पानेमें ही नावपर उतरता, फिर वहीं किनारे पहुँचता है। नधि भी बहुत कम मिलती है। बरसातमें माल बढ़ाते-उतारते बड़ा कष्ट पड़ता है। उड़ीसकी नहर भद्रसे भोगे नहीं बढ़ती। अंदराणाकी नहरमें जटकसे मारसावाँ तक ही

नावें चल सकती हैं। तासदखेकी १२ और मङ्ग-गांवकी नहर ३३ मील लम्बी है। इनसे प्रायः निंबाई होती है।

उड़ीसेमें प्रतिवर्ष प्रायः साढ़े बासठ इंच वृष्टि होती है। फिर भी जलके रुक न सकनेसे दुर्भिक्ष पड़ने देर नहीं लगती। १८३१-३४, ३६-३८, ३८-४० और ४०-४१ ई०को बड़ा सूखा पड़ा और ख़र बढ़ा था। फिर १८६६, १८९५ ई०को बाढ़ आनेसे करोड़ों रुपयोंकी हानि हुई। चौयाई लोग मर मिटे थे। समुद्र किनारे भी तूफानी पानी चढ़ आता है। उसके नदीको बाढ़से मिलनेपर जङ्गल और बस्ती दोनों डूब जाते हैं। १८८५ ई०को ऐसी ही दयापर कटकमें कितने ही सरकारी भवन और उनके बालबच्चे मर गये थे। पय और सम्पत्तिकी क्षति हानि हुई। तूफानी सहरने घण्टोंमें पचासों कोसों तक घर गिरा दिये थे।

किन्तु १८६६ ई०को जो दुर्भिक्ष पड़ा, उसका दृश्य इतिहासके पन्नोंपर सबसे ख़ूब है। चावल न मिलनेसे बाजार बन्द हो गये थे। रुपयोंमें साढ़े चारसेर चावल बिकनेसे गरीब पादमी भूँको मरे। लोगोंने चास चबा चबाके दिन काटे थे।

उड़ीसका जलवायु दक्षिण-बङ्गालमें मिलता जुलता है। मार्चमें मध्य जूनतक शीघ्र, मध्य जूनमें शहोबर तक वर्षा और नवम्बरके भारभमें फरवरी मास तक शीत ऋतु रहती है। जून, जुलाई और अगस्त मास ऐजा दूषा करता है। ऐश्वक जगन्नाथमें मध्य अपरैल तक चलती है। भीष वृष्टिमें डुप्राणतका विचार नहीं रहते और न टोका जो नमवाना चाहते हैं।

#### विहार

उत्कलका प्राचीन नाम कलिङ्ग है। महाभारतके समय धैरव्यो नदी-प्रवाहित कलिङ्ग या उत्कलनाम यशोवर्ध देव समझा जाता था। उस समय यहाँ चनेक मुनि ऋषिके आश्रम रहनेका सम्मान करा है। बुद्धदेवके समय भी यहाँ भगवद् विद्वत् बड़ी थी।

चमोऊके पितामह चन्द्रगुप्तके समयमें कलिङ्ग योद्धाके पक्षमें रहा। सम्राट् चमोऊके कलिङ्ग

बासी दीर्घकाल तक लड़ते रहे। युद्धमें अचरित्य कलिङ्ग-बासी मारे गये थे। ऐसी उत्कल नरहिंसा देख चमोकाका हृदय कण्ठसे पिघल उठा था।

चमोकप्रियदर्शी देखो।

मौर्यवंशका प्रभाव घटने पर जैनराजवंशने प्रबल हो कलिङ्ग जीता था। खण्डगिरिकी द्वायीयुकासे उत्कीर्ण सुवस्त्रत् मिश्रालिपिमें पराक्रान्त भीसुराज खारबेलका परिचय मिलता है। खारबेलने मगध पर्यन्त देश कीत यज्ञवंशको मथुरा भगा दिया था।

जैनवंशके बाद कलिङ्गमें गुप्तवंशका प्रभुत्व हुआ था। सिंहलके 'दायावंश' नामक पालीग्रन्थमें कलिङ्गाधिप गुहगिव या गिवगुहका नाम मिलता है। इस प्राचीन ग्रन्थकी पढ़नेसे समझ सकते हैं—शाकबुद्धके निर्वाण पर जैन नामा उनके एक मिथुने चितासे बुद्धदेवका पवित्र दन्त उठा कलिङ्गाधिप मगध-दन्तको लाकर दिया था। उन्होंने अपनी राजधानी पर मणिभाषिण्यसूचित एक सुवर्ण-मन्दिर बना उसमें पवित्र दन्तकी रखा। इसी दन्तके कारण कलिङ्गकी राजधानीने दन्तपुर नामे पाया था। ३०० से ३८० ई०के बीच उत्तराधिकार-युद्धसे गिवगुह दन्तपुरके सिंहासन पर बैठे। पहले वे ब्राह्मणके प्रत्यस्त भक्त रहे। उन्होंने ब्राह्मणवर्गके परामर्शसे अपने पूर्वज राजाके समान दन्तका पूजा-झोड़ दिया था। किन्तु किसी नैसर्गिक घटनासे डिग पीके वे भी दन्तके कट्टर भक्त बने। ब्राह्मणवर्गने इसमें विगड़ पाटलिपुत्राधिपके निकट कलिङ्ग-नरेशपर अभियोग लगाया था। उन्होंने बुद्धदन्तके साथ गुह-गिवकी पकड़ लानेके लिये विजयान नामक एक सामन्तराज भेजी। गुहगिव उनकी गति रोक न सके और दन्तके साथ पाटलिपुत्र नगरकी जाँमेपर बाध्य हुए थे। पाटलिपुत्रमें दन्त लानेके बहु अभूतपूर्व काण्ड घटने लगे, जिससे पाटलिपुत्राधिप भी उसके भक्त बन गये। उनके मरने बाद गुहगिव फिर उस दन्तकी अपनी राजधानी से लाये थे। किन्तु वे निश्चित बैठ न सके। अल्प-दिन छोड़े ही चौरधार नामक किसी पाण्डुवर्ती नृपतिने उनके राज्य-पर

आक्रमण मारा था। चौरधारके शरते और मारे जाते भी उनके भ्रातृपुत्र बहुमेव सामन्त बठा दन्तपुरीकी दीड़ पड़े। गुहगिव कहीं निस्तार न देख अपने प्रिय जामाता उज्जयिनीके राजकुमार दन्त-कुमारसे कह गये—हमारे न रहते पवित्र बुद्धदन्तको सिंहल पहुँचा दीजियेगा। गुहगिवके युद्धमें मारे जाने पर दन्तकुमार राजशक्त्याके साथ दण्डवेगमें पवित्र दन्त उठा सिंहलकी चसते बने। उधो समयसे बुद्धका दन्त सिंहलमें रखा और पूजा गया। समय-वतः उस गिवगुहके वंशने दन्तपुरीको खो उत्कलके गड़जातका प्रायः लिया और क्रम क्रमसे उसमें अपना प्रभुत्व फैला दिया। गौड़कविने उनके वंशधरको 'नानारत्नकूट-कुट्टिमयिकटकोटाटवोक्कली-रवो दक्षिणसिंहासनवत्तवर्ती' कहा है।

मगधमें गुप्तसाम्राज्यकी प्रतिष्ठाके साथ उत्कल भी उसीमें मिल गया। गुप्त-साम्राज्यके पतनपर यह प्रदेश सोमवंशीय राजगणके अधिकारभुक्त हुआ था। कुमारगर्भ और कीमरवी बन्त दिये।

सोमवंशीय राजगण मादनापुत्रोंमें क्षैरिवंशीय भी कहाने थे। इसी क्षैरिवंशके समय उत्कलमें नाना स्थानोंपर बहु गिवमन्दिर बने। उनका भग्नावशेष आज भी विद्यमान है। मगध या गाण्ड्य-वंशके प्रभुत्वमें सामवंशीय राजगणका प्रभाव घट गया था।

शक ८८८में गाण्ड्य-वंशतिनका चौदहगुहका प्रभुत्व हुआ। इस विषयके कितने ही गिनानेय और साम्प्रदायिक मिले हैं, जिनमें देखनेसे हम निश्चयनित हस्ताक्षर समझ सके हैं—

शक ८८८के कई वर्षवाद महाराज चौदहगुह उत्कलमें सिंहासन पर बैठे। इनके पिता प्रायः गङ्गवंशके २५ राजराज रहे। माताका नाम राजकुन्दरी था। इनकी कई रानियाँका नाम—कस्तूरिका, मोदिनी, मन्दिरा, चन्द्रसेवा, सोमता, महादेवी, मधुमोदेवी और प्रियवी महादेवी रक्षा। कामार्चव, राघव, राजराज, प्रजियहमीम और सभावन्नम पुत्र थे। उनके लोग चन्द्रवर्मा, चासुरगुह, गाण्ड्यपर और विक्रमगुह उपाधिसे सम्बोधन करते थे। वे राजराज

प्रसिद्ध और शक्तिशाली थे। इन्होंने उत्कलका राज्य दश बड़देवकी भी जीत लिया। सद्गुण बनमया नगर कीज चोड़गङ्गने मन्दार-नरैयकी मार मगाया था। सत्पावनः पाइन-चक्रवर्तीमें जिस स्थानका नाम 'सरकार-मन्दारन' लिखा है, वही मन्दार प्रान्त रहा। आज कल इसे भीतरगढ़ या भीटागढ़ कहते हैं। चोड़गङ्गने अपना राज्य गङ्गाके उत्तरसे गोदावरीके दक्षिण तक बढ़ा लिया था। किन्तु वेदी-मिलालेखके अनुसार इन्द्रदेव राजाने इन्हे गोपा दिखाया। ये बड़े धार्मिक थे। इन्हींकी आज्ञामें पुरीमें जगसाध देवका मन्दिर बना। चोड़गङ्गके समय विप्रान और साहित्यकी भी अच्छी उत्पत्ति हुई। संस्कृत और तेलगु भाषाका प्रचार अधिक था। शक १०२१ में शतानन्दने भास्वती नामक ज्योतिष-सम्बन्धीय ग्रन्थ लिखा। कीर्ति ८० वर्षके वयसमें इन्होंने ७२ वत्सर राज्यकर इहलोक छोड़ा था। आज भी चोड़गङ्गके नामका परिषद पुरीके सुइङ्गसाही मण्डले, कटक नगरसे दक्षिणपश्चिम तीन कांठ चड़ङ्गपुरसे तालाब, सारङ्गगढ किले और कटक जिलेके याज्ञपुर नगरमें मिल सकता है।

शक १०६८में कामार्चवने सिंहासन पर बैठ १०७८ तक राज्य किया। ये चोड़गङ्गके औरस और कस्तूरिकाभीदिनीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। उपाधिपुत्रसे कामार्चवकी लोग कामार्चव देव, जनता-समु-कामार्चवदेव और जनतदेव भी कहते रहे।

शक १०७८ से १०८४ तक राघव राजा बने। उन्होंने चोड़गङ्गके औरस और रविकुलकी इन्दिराके गर्भसे जन्म लिया था।

शक १०८२ की २५ राजराज राजा हुये। ये चोड़गङ्गके औरस और चन्द्रसेवाके गर्भसे उत्पन्न थे। इनका उपाधि नाम जनतावर्तदेव रहा। शक १११२ में उनका शासन समाप्त हो गया।

शक १११२ से ११२० पर्यन्त २५ चनियाह-भीम वा चनहभीमदेवने राज्य किया था। ये चोड़गङ्गके पुत्र और २५ राजराजके भ्राता रहे। गोविन्द नामक इनके एक महाबल ब्राह्मण मन्त्री थे। २५

राजराजके ब्राह्मण खोखरदेवने मन्त्रालयका मन्दिर बनवाया था।

शक ११२० में २५ राजराज उत्कलके औरस हुये। ये चनियाहभीमदेशके औरस और रानी पाण्डा देवीके गर्भसे उत्पन्न थे। इनका उपाधि नाम राजेन्द्र था। राजराजके सिंहासनाष्ट, होते ही सुदृग्ध बज्र-ति-यारके दो सेनापति सुदृग्ध येरान् और चन्द्रमद येरान् उड़ोसे पर चढ़े, किन्तु अपने प्रभुके वधका समाचार पा नीट पड़े। २५ राजराजने शक ११२१ तक राज्यका सुख उठाया था।

शक ११२२ से ११३० तक २५ चनहभीमदेवने शासन चलाया। वे २५ राजराजके औरस और चालुक्यवंशीया सद्गुणा वा मङ्गला देवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। त्रिकलिनगाय उपाधि रहा। उनके ब्राह्मण-मन्त्री विष्णु तुनमाओ पृथिवोपति और यवनेसे सङ्ग थे। शक ११३० की १५ तृसिंहदेवने राज्य पाया। ये चनहभीमदेशके औरस और कस्तूरदेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। १५ तृसिंह देवने राढ़ और चरैन्द्र पर पाकमच कर यवनोंको जराया। कोषार्कका बड़ा मन्दिर उन्हींके आदेशसे बना था। फिर कोषार्कवा या कोषार्कवाले सुपा-मयके भी वेही निर्माता रहे। १५ तृसिंह देवकी सभामें रहनेवाले पण्डित विद्याधरने एकादशी नामक धर्मद्वाराका एक ग्रन्थ लिखा था। शक ११८६ में उनके शासनका अन्त हुआ।

११८६ से १२०० तक १५ भाद्रदेवने राज्य किया। ये १५ तृसिंहदेवके औरस और मान-चन्द्रकी कन्या सीतादेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। १५ भाद्रदेवने ज्योतिष ब्राह्मणकी भूमि तथा गृह सम्पन्न कर मकड़ों दानपत्र लिखे थे।

शक १२०० से १२२७ तक २५ तृसिंह देव उत्कलके सिंहासन पर सुगोभित हुये। वे १५ भाद्रदेवके औरस और चालुक्यवंशीय आकला देवीके गर्भसे उत्पन्न थे। उपाधि औरतृसिंहदेव, वीरकोषवा औरतृसिंह देव, प्रतापवीर औरतृसिंहदेव, वीरकी वा औरतृसिंहदेव और जनतवर्त

प्रतापवीर नरनारसिंह देव रहा। कलिङ्गके यासक नरहरितीर्थने कामेश्वरके सम्पुष्ट योगानन्द-नृसिंहका मन्दिर बनवाया था।

१२२७-८८ से १२४६-५ तक २५ भानुदेवका राज्य रहा। ये २५ नृसिंहदेवके भोरस भौर चोड़ा-देवीके गर्भसे उपजी थे। पूर्ण उपाधि श्रीवीरादिचौर-श्रीभानुदेव रहा। इनके साथ गयासुद्दीन तुगलकका सुसुल युद्ध चला था।

१२४६-५० से १२७४-५ तक २९ नृसिंहदेव-राजाके पद पर बैठे। ये भानुदेवके भोरस भौर रानी लक्ष्मीदेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। उनके मन्त्रिणी कमला देवीके गर्भसे भीतादेवी नामक कन्या हुयी।

१२७४-५८ से १३००-१ तक २९ भानुदेवका अधिकार रहा। वह २९ नृसिंहदेवके भोरस भौर कमला देवीके गर्भसे उत्पन्न हुये। उपाधि श्रीवीर भयवा चौरश्री भानुदेव भौर प्रतापवीर भानुदेव रहा। ब्रह्मानके शासक काजी इलयासने २९ भानुदेवके मरनेसे उत्कल पर आक्रमण किया था।

१३००-१८ से १३२४ तक २४ नृसिंहदेव राज्य करते रहे। ये २९ भानुदेवके भौरस भौर चानुक कुलकी रानी हीरादेवीके गर्भसे उपजी थे। उपाधि नाम चौरनृसिंहदेव, चौर-श्रीनरसिंहदेव भौर श्रीनृसिंहदेव रहा। उनके समय कौनपुरके सरकी खानदानवासे राजा जहानूने लक्ष्मणावती भौर जाजनगरको कर देनेपर बाध्य किया था। फिर यहमानी वंशके सुनतान् फीरोज़ जाजनगरमें पहुँच कितने ही छापी लूट ले गये। मालवेके नवाब हुसे-नुद्दीन् दीमाजने भी जाजनगर पर आक्रमण मारा था।

इसके पीछिका हताशा किसी दानपत्र या शिला-लेखमें नहीं मिलता। मादकापंजी चयन लगवाय मन्दिरके हतविपरवसे समझते हैं, यहाँयवंधके अन्तिम नृपति भानुदेव रहे। उनकी शासन शक १३५१-८ से लगा था। उन्हें चकटा चबटा या मस भो कहते थे। उनके मरने पर कपिलेश्वर वा कपिलेश्वरदेव मन्त्रीने सिंहासन हड़प कर सूर्यवंशी प्रतिष्ठा की थी।

१३७४ शक (१३५२ ई०)में इस गङ्गवंशका भोप होनेपर कपिल नामक एक सूर्यवंशी पुत्रप कपिलेश्वरदेव उपाधि धारण कर उड़ीसेके राजा बने। उन्होंने सेतुबन्ध रामेश्वर तक अधिकार फैलाया था। इसी वंशमें प्रतापचन्द्रने जन्म लिया। प्रतापचन्द्रके राजत्वकाल पर श्रीचैतन्यदेव श्रीचैत्रके दर्शनको गये थे। प्रतापचन्द्रके पीव कलाख्या देवके राजत्व बाद कपिलवंश मिटा।

१३५२ ई०में सुकुन्ददेव राजा हुये थे। उनके राजत्वके अन्तिमकाल पर देवदेवी कालापहाड़ यहाँ था पहुँचा था। सुकुन्दके पुत्र गोहिया गोविन्द जब राजा रहे, तब कालापहाड़ पुरो लटके गये। गोविन्द जगन्नाथ देवको मूर्ति उठा गढ़पारकूदकर भागे थे। फिर १८ बत्सर पराजयता चला। जनशर भूजा-वंशीय रामचन्द्रदेव नामक एक व्यक्ति राजा हुये। उन्होंने जगन्नाथ देवकी अवशिष्ट मूर्ति फिर पुरोमें स्थापन कराया था।

१३५१ ई० की सुसम्मानांमें इन्मादल गाजीने सर्वप्रथम उड़ीसेपर आक्रमण मारा था। किन्तु आधिपत्य जम न सका। उस समय भी हिन्दू राज-गणका प्रबल प्रताप था। कालापहाड़के पानेसे स्थानीय राजा नानाप्रकार कीनबल हो गये भौर च-सर देख बङ्गालके नवाब सुलेमान कराराने चनेक स्थान जीत लिये।

१५७४ ई०को चक्रवर्तके सेनापति मुनास्सु खान् भौर टोहरमत उड़ीसेपर भगट पड़े थे। बहाम, बिहार भौर उड़ीसेके नवाब दाऊदने जनेश्वर निकट मुगलमारीमें युद्ध चला, जिसमें दाऊदके हारते बङ्गाल एवं बिहार चक्रवर्तके हाथ लगा। ये क्षेत्रमात्र उड़ीसेके नवाब-रह गये। राजा रानी मन्त्र्ये दाऊदकी प्रतीवर्तसे चक्रवर्तने फिर मुगल पर चढ़ उठाये थे। नाना स्थानपर मुगल पार पठान लड़ मरे। १५७८ ई०के समय चक्रवर्तने साधुमगान् झांसीकी उड़ीसेका शासनकर्ता बनाकर भेजा था। किन्तु कुछ दिन पीछे उन्होंने पठानीसे मिल मुगलको उड़ीसेमें भगा दिया। फिर कृतज्ञपान् नामक एक पठानने उड़ीसेका सिंहासन पाया था। चक्रवर्तने कृतज्ञ-खान्के विरुद्ध मुगल सेना भेजी। उसीमानादमें कृतज्ञ

खान्ने सप्तधामके शासनकर्ता नज़ातकी इराया था।

कृत्यधाम देवी।

१५८० ई०में राजा मानसिंह बङ्गाल और विहारके शासनकर्ता बने। ये वर्षाकाल पर वर्षमानके दक्षिण-पश्चिमदिक्छ गढ़-मन्दारनमें ठहर उड़ीसा सीतने गये थे। धरपुरमें कृत्यखान्ने गुह किड़ा। सुगुप्त-सिपाही द्वारे और मानसिंहके पुत्र जगत्सिंह बन्दी बने। कृत्यखान्ने विशुपुर सीत लिया था। पन्ध्र दिन बाद ही कृत्यखान् सहसा मर गये। उनके प्रधान वजीर ईसा खान्ने मानसिंहसे सन्धि कर ली। जगत्सिंहकी मुक्ति मिली और पुरी पकवरके अधिकारमें था गई।

१५८२ ई०में सुलेमान् और उसमान् नामक कृत्य खान्के पुत्रोंने सन्धिको तोड़ पुरी पर पाल-मण मारा था। राजा मानसिंह द्वितीय बार उड़ीसे पाये। बलापुरमें सुगुप्त और पठान भिड़ गये थे। पठान हारे। सुलेमान् और उसमान्ने फिर अवगिष्ट पठान सेना कोड़ सारनेगढ़में सड़नेकी पन्ना उठाया। किन्तु ये सुगुप्तोंका तैज सह न सके थे। शीघ्र बुह हो गया। सुलेमान् और उसमान् मानसिंहसे झुके थे। उड़ीसा राज्य पकवरकी मिला। राजा मानसिंह बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके राजप्रतिनिधि बने थे। उसी समय स्थानीय देशी राजा रामचन्द्र देवकी पकवरने बहुत मारना। पकवरके अधिकारमें पङ्चवने पर उड़ीसा (बङ्गाल और विहारके साथ) एक शासनकर्ताके अधीन रहा।

१६०० ई०को उड़ीसा स्वतन्त्र हुआ। हाजिम-खान् नामक एक व्यक्ति शासनकर्ता बने थे।

१६११ ई०में राजा कल्याणमल उड़ीसेके शासनकर्ता हुये। उसी समय उसमान् फिर मुत्त खाद्योगता बचानेकी टोड़े। उन्होंने पठानोंसे मिल शीघ्र चेष्टा कराया। किन्तु इसबार उन्हें धूमना न पडा, सुगुप्त-देवाके तीर रणकी भयना पर प्रायः हट गया।

सुरदा और राजमहेश्वरीकी कोड़ उड़ीसेके सकल स्थानोंपर पकवरका अधिकार जमा। १६१८ ई०में सुकरमखान् नामक तत्कालीन शासनकर्ताने राजाकी

हरा सुरदा भी दिकी-सगाटके अधीन कर दिया था। किन्तु राजमहेश्वरी स्थायीन ही रही।

१६२१ ई० पर शाहजहान्ने विद्रोह लगाया था। उन्होंने अपने पिता लङ्गोरीके रखे तत्कालीन शासनकर्ता पद्मद बेको हरा उड़ीसा जीत लिया था। सुबमें पठान-सामन्त समेत मिल गये थे।

१६२३ ई०में शाहजहान्ने अंगरेजोंको बङ्गदेगमें जहाजके सहारे बाणिज्य करनेका पादेय दिया। किन्तु बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके तत्कालीन शासनकर्ता पान्जिम खान् बीन उठे—अंगरेज बालेयारके निकटवर्ती केशव पिपली नामक स्थानमें ही जहाज लगा गयेगे।

१७०६ ई० को बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके नवाब मुर्शिदकुलीखान् उड़ीसेमे मेदिनीपुरका जिला स्वतन्त्र कर दिया था। पक्षमे बह उड़ीसेके ही पन्त-गैत रहा।

१७०५ ई०में सुहृण्णद तकीमान् उड़ीसेके सहकारी शासनकर्ता बनकर पाये थे। उसी समय सुरदाके देशी राजा रामचन्द्रदेवने सुधनमानों पर पक्ष उठाये। पनेक युद्धके बाद ये कटकमें कैद हुये थे। सुसन्तमानोंके भयसे पक्षे जगदाय-देवकी मूर्ति दाब कर भाग गये।

१७१३ ई०में सुरमिद कुनीयान् उड़ीसेके सहकारी शासनकर्ता बने। उन्होंने पाकर देखा—पूर्व समयकी भांति चामदनी बसल न होती इसका प्रधान कारण जगदायदेवकी मूर्तिका पुरीमें न रहना है। दूर देशान्तरसे यादगणका आना बन्द हो गया। पक्षे यादगणका गमनागमन लगा रहनेसे चामदनीके परिमाण क्रमशः बढ़ते ही जाता था। फिर उन्होंने पण्डावोंसे मूर्ति लाकर फिर मन्दिरमें रखनेकी विनियमन भवाया। जगदायकी मूर्ति वापस पायी चार चामदनी भी अधिक परिमाणसे बढ़ गयी।

१७२८ ई०में गरफराज खान् विहार और उड़ीसेके शासनकर्ता बने। किन्तु तत्पूर ही अमीरदों-खान्ने उन्हें हरा सिंहासन से निचा।

१७३१-३२ ई०में मराठोंका कृत्यात उठा।

सुविंदकुलीके दीवान् मीर-हबीबने गुणके मराठाको  
छड़ीमें बुलाया था। 'पलीवर्दी' उन्हें भगानेके लिये  
अनेक बार लड़े, किन्तु सफलमनोरथ न हो सके।  
१७४५ ई०में रघुजी भोंसले बङ्गालपर चढ़े थे। उन्होंने  
छड़ीसेको हस्तगत किया। मीर हबीबको प्रतिनिधि  
बना रघुजी खराज्यको चला दिये। १७४७ ई०में  
मीरजापुर मराठाको कटकसे निकालनेके लिये  
भेजे गये थे। किन्तु उनसे भी कुछ न बन सका।  
मराठे चम्पारनमें मिल गये थे।

१७५१ ई०में 'पलीवर्दी' मराठाको छड़ोसे  
भगानेके लिये ससैन्य कटक पहुँचे। मराठे हार तो  
गये, किन्तु किसीप्रकार उन्होंने देग न छोड़ा। इसलिये  
पलीवर्दीने प्रति वर्ष १२ लाख रुपया कर ठहराकर  
उन्हें छड़ीसा फिर खोप दिया।

मराठाोंने शिवभट्ट शास्त्री प्रथम ग्रामनकर्ता दिये थे।  
१७५६ ई० १८०३ ई० तक उन्होंने छड़ीसे पर शासन  
चलाया। इसी समय मराठाोंने घोड़नसे चबरा पत्तक  
प्रजाने जन्माभूमि छोड़ी। उसमें किसी किसीने  
चंगरेजीसे साहाय्य भी माँगा।

१८०३ ई० की १४ वीं फरवरीको चंगरेजीने  
कटकका दुर्भेद्य दुर्ग जीता था। एक ही दिनके उत्-  
सामान्य युद्धमें उन्होंने मराठाोंके हस्तसे छड़ीसेका  
शासन भार निकाल लिया। उनका प्रथम प्रताप  
छठी दिन छड़ीसे राज्यसे पलटाने हुआ। किन्तु  
अधिकार मिलते भी राज्यको सामर्थ्यका प्रभाव था।  
चामदनी देनेवाले जमीन्दार और फ़मन तैयार करने-  
वाले किसान न रहे। चंगरेजीने देखा—'सकड़ों  
ग्राम मानवशून्य हैं। उनमें शृगाल वास करते हैं।  
कुत्तार प्रहरी हैं।' उन्होंने घोषणा निकाली—'यह  
प्रजाको काँह भय नहीं। सो जहाँ रटे, पाकर निज  
निज भूमि ले ले।' पड़ले लोग अधिक घुम न सके  
थे। किन्तु काम क्रमसे प्रजा आयी। पूर्वमें लंसे  
समृद्धि रही, फिर भी यैसी ही पट गयी।

चंगरेजीके छात्र छड़ीसा पानेपर प्रजापतः तोन  
नियम चले थे। प्रथम—सून्द नामक पदम्य जालि  
पर किसी प्रकारका कर वा नियम न बंधना और चंग-

रेज-कर्मार्थ्यकोका सर्वदा देखते रहना कि, ये परस्पर  
विवाद बढ़ा रहत न बढ़ायें। द्वितीय—करदराजगवपर  
सन्धिके अनुसार कर लगाना, किन्तु उनपर भी गवरन-  
मेंष्टका कर न बढ़ाना। तृतीय—कटक, पुरी और  
बालेश्वर तीन खास सरकारी स्थान रहना और उनका  
उत्सव गवरनमेंष्टको ही मिलना।

उत्कल (सं० पु०) १ उड़ीसा प्रांत्के अधिकांश।  
२ ब्राह्मण्येष्विविधेषु। ३ सुदुम्भके एक पुत्र, तक्षामने  
उत्कल प्रांतका नाम चला है। ४ शाकुनिक,  
बड़ेसिया, चिड़ोमार। (वि) ५ भारवाहक, बोझ  
ढोनेवाला।

उत्कलाप (सं० द्वि०) उद्यत एवं विस्तारित पुच्छ-  
युक्त, खड़ी और फेंको पूरुवाला। "तोत्कलो वसिष्ठ-  
वर्णः।" (१५ १११४)

उत्कलि (सं० पु०) देखिविधेय।

उत्कलिका (सं० स्त्री०) उत्कल-कुन्-टाप्। १ उत्क-  
कण्ठा, गहरी खाइ। २ जर्मि, गहर। ३ पुष्प-  
कलिका, फूलको कली। ४ झोड़ा, नट्रावाजी।

उत्कलिकाप्राय (सं० स्त्री०) ममामयुक्त गद्यभेद,  
जिम हवारतमें मिले द्युये चमपाज लयादा रहे।  
"अनेदुत्कलिकाप्रायं यमावाच्यं देवावरम्।" (चम्पेनहरी)

उत्कर्षण (सं० स्त्री०) उत्कर्ष-ण्ट्। कर्षण,  
खोलाई।

उत्कलित (सं० द्वि०) उत्कल-क। १ उत्कलित,  
छाई, गहरी खाइरखनेवाला। २ दुर्बिमान, पक्षमन्द।  
उत्का (सं० स्त्री०) उत्क-कुन्-टाप्। उत्कलितता  
भाविका।

उत्काका (सं० स्त्री०) उत्क पञ्च-पण्ट-टाप्। प्रति-  
वर्धयसूना गरी, हरसाल पानेवाली गाय।

उत्काकृत् (सं० द्वि०) उद्यतं काकुटमस्य। कलिका  
काकृत। १५ १११४८। उद्यत तादृशयुक्त, जैसे तान्त्राणा,  
जिसके तान्त्र छटा रहे।

उत्का (सं० पु०) उत्क-कु-पञ्ज। १ उत्क-कु-पञ्ज। २ उत्क-  
१ धान्यात्पेषण, गन्धको भड़ई। पन्नाजो भड़  
पडाइ। २ धान्यका राखीकरक, गन्धका रइहा किया  
जाता।



उत्कारिका (सं० स्त्री०) उत्कृष्ट-शब्द । १ सुद-  
मोष्ठ शोफादि-निवारक पाचन, सुपक्वी, सुरता, पुष्-  
टिम । यथा—

“पुनर्नये व वः शोको विरेकामेव चक्रे ॥

मया च पचये चुरात् यथाचोदयति मु ॥

दरिद्रजलप्राप्तकालाये चोदयति मु ॥

विमर्दिन मरुचैः शय चरेदुत्पत्तिरिति मुनी ॥

हृदयवशा शोके मावेदुत्पत्तिरिति मुनी ॥ (रुह्य)

उपवाससे विरेकन पर्यन्त प्रक्रिया द्वारा यदि शोफ  
पचता न हो ; तो दधि, मक्ख, सुरा, चुल, काश्चिक,  
घृत एवं लवण मिना उत्कारिका पक्वावो पोर उष्ण  
रहते-रहते परस्परपत्रके सङ्योगसे शोफपर बांध दो ।

२ रोटिका, रोठो, माटी । ३ गुटिका, बड़ी ।

४ क्षुधिता, उल्टा, नपयो ।

उत्क्रामन (सं० स्त्री०) भासनकाय, दृक्प्रमत्त ।

उत्क्राम (सं० पुं०) उत्क्रमस्यति, पच-पच । कास-  
रोग विग्रेष, किसी किमकी कासी, सुखार । यह  
कार्धगत केसाका उत्प्रेषक रोग है ।

उत्क्रासन (सं० स्त्री०) उत्क्रास दीयो ।

उत्क्रिर (सं० लिं०) उत्क्रा कर्तरि भ । उत्प्रेषक,  
फेंकनेवाला ।

उत्क्रौर्च (सं० लिं०) उत्क्रा-लृ । १ उत्प्रेषित,

झाला या लगाया हुआ । २ उत्सृष्टि, लिखा हुआ ।

३ चत, विह, चुभोया हुआ । ४ खोदित, खोदा हुआ ।

उत्क्रौर्तन (सं० स्त्री०) १ घोष, प्रचार, पुकार,  
फेंकाव । २ प्रक्षमा, तारोष् ।

उत्क्रौर्तित (सं० लिं०) १ विघोषित, सुमृद्ध, दंडोश  
घोटा हुआ ।

उत्कुक्षिका (सं० स्त्री०) १ स्थूल क्षणजीरक, मोटा  
कासा जीरा । कालकीरिका । २ कुमिच्छनवय, कुनी-  
लमका पेड़ ।

उत्कुक्षिता, उत्क्रा-लृ दीयो ।

उत्कुट (सं० स्त्री०) उत्पत्तं कुटो यम । उत्पानग्रयन,  
चित पढ़नेकी क्षमता ।

उत्कुटक (सं० लिं०) उत्पान, चित, पीठकी समीचीन  
मगाये पोर चेहरकी छपर उठाये हुआ ।

उत्कुटकप्रधान (सं० स्त्री०) उत्कुटस्थितिवा वस्त्रेन,  
चित पहनेके परदेज ।

उत्कुटकासन, उत्पन्न दीयो ।

उत्कुप (सं० पुं०) उत्कुप-हिंसने पदः पुरा-  
कर्मणि पच । १ केमकोट, जू । २ मत्कुप, घाटमल ।

इसे मंस्कृतमें मत्कुप, उद्गं पोर कटिम भी  
कहते हैं । (Anoplura) यह कीड़ा प्रायः ५००  
प्रकारका होता, जिसमें मनुष्यके देहपर हा की  
तरहका देव पड़ता है—एक (Pediculus capitis)  
संस्कृत पोर दूसरा (Pediculus vestimenti) गरीरमें ।  
किसी किसी स्थानपर पीड़ित म्यांकि के वसमें तीसरा  
(P. tabescentium) भी उत्पन्न हो जाता है, जो  
बहुत भयानक होता है । उसमें उपरननेसे प्रायः  
रोमोंके जीवनमें संशय रहता है । साधारणतः उत्कुप  
पशुपक्षीके गरीरमें अधिक रहता है । इसके देहका  
पायतन चपटा है । ११।२ खण्ड वा दन बन सकते  
हैं । छगमें शुष्कके चंम मौन है । प्रत्येकके दो पाद पोर  
खर्चेंद्रियमें पांच चयित रहते हैं । मस्तकके दोनों  
किनारे एक या दो के हिमाग्रसे सुदृष्ट वस्तु देख  
सकते हैं । दंम दो होते हैं । एक दंमके द्वारा पशुपक्षीके  
केम वा घानक्रमें उत्कुप-भ्रमता फिरता है । समग्र  
समय पर हमी दंमकी सुमेड चपने फण्डमें पड़  
पक्षीका रक्त चूस भेता है । शिशुके मरण पर प्रायः  
उत्कुप उत्पन्न हो जाता है । यह केमपर विन्दु-  
विन्दु हिम्य देता, जो पाठ दिनके बाद फट पड़ता  
है । फिर एक मासके मध्य ही यह बढ़ जाता  
है । गरीरमें जो उत्कुप उत्पन्न होता, उसका  
लोकोट प्रति मसाल प्रायः १।० गज हिम्य देखर कचे  
निकासता है ।

शिशुके पक्षकपर भी एक जातीय उत्कुप उपपन्न  
है—जो कसो मस्तकके केममें देव नहीं पड़ता । यह  
भी बहुत चमिडकर होता है । बन्दरके लोममें जो  
उत्कुप रहता, यह स्तम्भ जातिजा होता है ।  
कभी-कभी यह विन्दु-घोटक्रमें भी देव पड़ता है ।  
उत्कुल (सं० लिं०) परिभट, नापमप, कपू, -  
चपने सुम्भानकी इत्यन विगाहनेवाला ।

उत्कृष्ट ( सं० पु० ) कोकिलका शब्द, कोयलका गाना ।  
 उत्कृष्ट ( सं० पु० ) छत्र, छाता, पाफताबी ।  
 उत्कृष्टम ( सं० स्त्री० ) यथान, सफलकृद् ।  
 उत्कृन् ( य० वि० ) १ पर्वतपर चढ़नेवाला, जो ऊँचेपर हो । ( अश्व० ) २ पर्वतपर, पहाड़के ऊपर ।  
 उत्कृन्तित ( सं० वि० ) सागर वा नदीके तटपर आनीत, जो किनारे लगा हो ।  
 उत्कृति ( सं० स्त्री० ) २६ अक्षरका छन्दोविशेष । इसमें चार पद होते हैं ।  
 उत्कृत्त ( सं० वि० ) उत्कृत्-त । १ छिच, काटा हुआ । २ उत्प्लात, खुदा हुआ ।  
 उत्कृत्त ( सं० अश्व० ) छिच करके, काटकर ।  
 उत्कृत्तमान ( सं० वि० ) छिच किया जानेवाला, जो काट रहा हो ।  
 उत्कृष्ट ( सं० वि० ) उत्कृष्ट-त । १ प्रमत्त, बड़ा हुआ, जो खिचकर ऊपर या बाहर निकल गया हो । २ उत्तम, श्रेष्ठ, उन्मुदा; बढ़िया । ३ उत्कृष्टाश्विन, ऊँचे दरजीवाला । ४ क्षयवत्, खिंचा हुआ । ५ सूर्योत्तम, सबसे अच्छा । ६ आकर्षित, खिंचा हुआ ।  
 उत्कृष्टता ( सं० स्त्री० ) श्रेष्ठता, उन्मुदगी, बढ़ाई ।  
 उत्कृष्टत्व ( सं० स्त्री० ) उत्कृष्टता देखो ।  
 उत्कृष्टभूम ( सं० पु० ) श्रेष्ठभूमि, बढ़िया जमीन ।  
 उत्कृष्टवेदन ( सं० स्त्री० ) श्रेष्ठकुलके साथ विवाह-कार्यका समापन, ऊँचे खान्दानवाले बादमीसे मादोका करना ।  
 उत्कृष्टोपाधिता ( सं० स्त्री० ) प्रबल मायाकी स्थिति, बड़े धोकेकी हालत ।  
 उत्कृष्टकयलि ( सं० स्त्री० ) वलविशेष, एक ताकत । वेगसे आवर्तमान वस्तुमें इसका उद्भव होता है । यह उल्लस गलुके अंग विशेष अथवा तटुपरिस्थित अन्य द्रव्यको केन्द्रसे घृण्ण केन्द्र देती है । उत्कृष्टकयलि ही चक्रका कर्दम निवास इधर उधर छिटकाने रहती है ।  
 उत्क्रोश : ( सं० पु० ) उत्क्रुष सहोचि क । उपायन, रिमपत, घूस ।

उत्क्रोचक ( सं० वि० ) उत्क्रोच-कृन् । १ उपायन दान करनेवाला, जो रिमपत देता हो । २ उपायन ग्रहण करनेवाला, रिमपतखोर । ( पु० ) ३ धोम्या-श्रमके निकटस्थ तीर्थविशेष । ( भारत वादि १२१०० )  
 उत्क्रोठ ( सं० पु० ) कोठरोगभेद, किसी किसीका लुत्ताम, एक कोढ़ । इस रागमें उदोर्ष विरा, ट्रेष और धमिनके ग्रहसे पञ्चम्यक् वमन होता और मकण्डू, रागवान् तथा आनुबन्ध बह्म मण्डल पड़ता है । ( भारतवादि )  
 उत्क्रम ( सं० पु० ) उत्त-क्रम-पच् । १ व्यक्तिक, वेपरोत्य, इनदिराफ, भड़काव । २ उपरि वा बहिर्गमन, ऊपरों या बाहरी वाल । ३ उचति, तरङ्गो ।  
 उत्क्रमण ( सं० स्त्री० ) उत्क्रम-ण्ट । १ पपवरच, उड़ान, निवास । २ वेपरोत्य, इनदिराफ, भड़काव ।  
 उत्क्रमणीय ( सं० वि० ) त्यागने योग्य, जो ढाड़ देनेके काबिल हो ।  
 उत्क्रान्त ( सं० वि० ) उत्त क्रम-त । १ उन्नत, समरा हुआ, जो धागे निकल गया हो । २ उत्तहित, साँधा हुआ, जो पीछे रह गया हो ।  
 उत्क्रान्ति ( सं० स्त्री० ) उत्क्रम-तिन् । उन्नमन, उत्तहन, सबजन, उन्नार, निवास, धागे बढ़ जानेकी हालत । “विशकाचकीर्तनरवाः ।” ( मनुस्मृत्यनुसारे )  
 उत्क्रान्तिन् ( सं० वि० ) उन्नमनकरनवाला, जो धागे निकल गया हो ।  
 उत्क्राम ( सं० पु० ) १ उन्नमन, उत्तहन, सबजन, धागे बढ़ जानेकी हालत । २ वेपरोत्य, इनदिराफ, उलट-मुलट ।  
 उत्क्रामत् ( सं० वि० ) उन्नमनकारी, सबजन से जानेवाला, जो धागे बढ़ रहा हो ।  
 उत्क्रुट ( सं० वि० ) १ उपोः स्वरसे कथन करना हुआ, जो ऊँचसे बोले रहा हो । ( स्त्री० ) २ उग्रश्रु कथन, गुरगोर गुफ्तगू, चंचे ।  
 उत्क्रोद ( सं० पु० ) परमाक्रोद, उन्माद, पागो ।  
 उत्क्रोश ( सं० पु० ) उत्क्रुश-पच् । १ उन्नवर पश्चिमिये, एक दरवाजों परिन्द । यह मत्स्यवागो होता है । इसका मांस रक्तवित्त, मोतल, छिद्य,

मय, वातकर और रस एवं पाकमें मधुर है। (च० पु०)  
२ पेषक, उष्ण। ३ कुररपर्णी, किसी विप्रका उष्ण।  
४ भोतकार, मोर, वृक्षा।

उत्क्रिष्टवर्त्म (सं० स्त्री०) क्रिष्टवर्त्मनामं रोगविशेष,  
पांशु पेटा करमेवासे मयाटकी बड़ती। निरुद्ध रंध्रोः।  
उत्क्रिष्ट (सं० पु०) १ चार्द्रभाय, तरा, भोगनेकी  
क्षमता।

उत्क्रिष्टेन (सं० स्त्री०) उत्क्रिष्ट रंध्रोः।  
उत्क्रिष्टिन् (सं० स्त्री०) चार्द्र, तर पड़नेवाला, जो  
भीग रहा हो।

उत्क्रिष्टेन (सं० पु०) १ उत्तेजना, प्रगति, उत्पन्न,  
भ्रमण। २ समनक्षत्रा, वलगुमका विभाग। ३ रोग,  
बोमारी।

उत्क्रिष्टक (सं० पु०) विषमय कीट विशेष, एक  
जहरीला कीड़ा। यह अग्निप्रकृति होता है। इसके  
काट स्थानसे पिच्छजन्म रोग लग जाते हैं।

उत्क्रिष्टन (सं० स्त्री०) उत्तेजना देनेवाला, जो उभा-  
रता या धीतरनीभी पेटा करता हो।

उत्क्रिष्टिन्, उत्क्रिष्टेन रंध्रोः।

उत्क्रिष्टगम-वर्त्म (सं० पु० स्त्री०) वर्त्ममैट, पिच-  
कारीकी एक दवा। यह पड़ते परण्डोवादि कृकसे  
उत्क्रिष्टगमके श्रद्धे लगायी जाती है। उक्त कृकमें  
परण्डोवा, मधुक, पिप्पली, सेन्धु, वषा और हड्ड्या-  
क्षत जाते हैं। (चरित्रच०)

उत्क्रिष्ट (सं० स्त्री०) उत्-विप-यन्। १ उत्क्रिष्टित,  
उत्क्रांता या उठाया हुआ, जो ऊपर उड़ा दिया गया  
हो। २ निराकृत, उठाया हुआ, जो फेंका गया हो।  
३ दूरीकृत, पुराजि किया हुआ। (पु०) ४ धूम्र-  
कम, धुंरेका मगर।

उत्क्रिष्टकम्पन (सं० स्त्री०) भूमिकम्पविशेष, किसी  
विषयका उत्पन्न, एक भूकंप। इस प्रकारके कम्प-  
नानेपर भूमि सामान्य उठन पड़ती है।

उत्क्रिष्टिहा (सं० स्त्री०) उत्-विप-यन्-कन् टाप।  
क्षमाम्भार विशेष, ज्ञानका एक गहन। यह चर्च-  
वन्द्यकार रहती और कर्षके उपरि भावसे पड़ती  
जाती है।

उत्क्रिष्ट (सं० पु०) उत्-विप-यन्। १ उत्क्रिष्टक,  
उत्क्रांता। २ दूरीकरण, कर्षकांक। ३ धीरप,  
चानाम। ४ समनक्षत्रा, छोट, उलटी। ५ मन्दिरके  
ऊपरका स्थान। (वि०) ६ उत्क्रिष्टकारक, केकनामा।  
उत्क्रिष्टक (सं० स्त्री०) १ उत्क्रिष्ट मिश्रिकाणी, उष्ण-  
सने वाला। २ चापा देनेवाला, जो दृक्म लगता  
है। (पु०) ३ यद्यपि उपहरण करनेवाला, जो  
कपड़ेको उद्धारकर पुरा होता हो।

“उत्क्रिष्टवर्त्मविशेषो वरुणश्चोक्तो” (वाचस्पति १/१००)

उत्क्रिष्टेय (सं० स्त्री०) उत्-विप-यन्-टप। १ उत्क्रि-  
ष्टेय, उत्क्रांता। २ धीरप, चानाम। ३ समनक्षत्रा,  
छोट, उलटी। ४ उदयन, रूप। ५ ध्वजन, वृक्षा।  
६ पौडगपथ, सोमह, पथकी एक माप। ७ व्याप-  
गतसे पथकमांसगत कर्मविशेष।

“उत्क्रिष्टवर्त्मविशेषो वरुणश्चोक्तो” (वाचस्पति १/१००)

उत्क्रिष्टेय उत्क्रिष्टवर्त्मविशेषो वरुणश्चोक्तो” (वाचस्पति १/१००)

उत्क्रिष्टित (सं० स्त्री०) मिश्रित, मशान्त, मिला  
हुआ।

उत्क्रिष्टिन् (सं० पु०) देव विशेष।

उत्क्रिष्टा (सं० स्त्री०) उत्-विप-यन्-टप। सुरा  
नामक मन्त्रद्रव्य, एक पुरुषादार चीज। तप रंध्रोः।

उत्क्रिष्टात (सं० स्त्री०) उत्-विप-यन्-टप। १ उत्क्रिष्टित,  
उत्क्रांता हुआ। २ उत्क्रिष्टित, गिराया हुआ। ३ विना-  
शित, नारा हुआ। ४ पणित, खोटा हुआ। (विशेष  
पणितविशेषः) (चरित्रच०) (स्त्री०) ५ उत्क्रिष्टन, गूदा।

उत्क्रिष्टातकेलि (सं० पु०) कोड़ा विशेष, एक खेल। इसमें  
शुद्धादि द्वारा हथ एवं गन्धर्व भांति श्रुतिका खेदने है।

उत्क्रिष्टाता, उत्क्रिष्टात रंध्रोः।

उत्क्रिष्टातिन् (सं० स्त्री०) १ नागप, वरुणाद करने-  
वाला, जो खोद क्षमता हो। २ उत्क्रिष्टनयुक्त, जिसमें  
गड़े रहे।

उत्क्रिष्ट (सं० पु०) उत्-विप-यन् भावे घञ्। हिदन,  
काटछांट।

उत्क्रिष्ट (सं० स्त्री०) उत्क्रिष्टेन द्वे, पुटविदेति पथे पुरा-  
भावः। चार्द्र, तर, भोगा। (वि०) ५ धीरप, चानाम।

उत्क्रिष्ट (सं० पु०) उत्-विप-यन्-टप-कन् टाप।

१ कर्णभूषण, बाली, कानका गहना। २ शिरोभूषण, कलंगी।

उत्तंसिक (सं० पु०) नागविशेष।

उत्तंसित (सं० द्वि०) १ कर्णभूषणविगिट, बाली पहने हुआ। २ शिरोभूषणयुक्त, कलंगी लगाये हुआ।

उत्तहराई—१ मन्द्राजप्रान्तके ससेम् जिलेका एक तालुक। यह अक्षां ११° ४६' तथा १२° २४' उ० और द्रावि० ७८° १५' एवं ७८° ४६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ८०८ वर्गमील है। इसमें कोई ४३६ ग्राम समेत और प्राय ११०००० मनुष्य बसते हैं। हिन्दुओंकी ही संख्या सबसे अधिक है। कुछ सुसलमान और ईसाई भी हैं। दक्षिण, पूर्व और थोड़े बहुत पश्चिम भी पहाड़ खड़े हैं। उत्तरकी ओर तिरुपातूर उपत्यका है। भूमि प्रधानतः लाल और रेतीली है।

२ अपने तालुकका प्रधान नगर। यह दक्षिण-पश्चिम मन्द्राजरेलवेके जोलारपेट जंक्शन-स्टेशनसे कोई २४ मील दूर है।

उत्तङ्ग (सं० पु०) महादेवके एक अनुचरकानाम। (हिं०) उग्र देवी।

उत्तट (सं० द्वि०) स्त्रीय तटकी उत्सिक्त करनेवाला, जो अपने किलारकी सींचता हो।

उत्तत (सं० स्त्री०) उत्त-तप-स्त। १ शुष्कमान, सूखा गोरत। २ सन्ताप, उमाल, गर्मी। (द्वि०) ३ तप्त, ताप हुआ, गर्म। ४ सन्तप्त, जोड़ल गया-हो। ५ परिहृत, तरवतर, नष्टाया-घोया। ६ चिन्तित, फिक्रमन्द।

उत्तमित (सं० द्वि०) उत्तमित, भुका हुआ।

उत्तम (सं० द्वि०) उत्त-तमप्। १ उत्कृष्ट, श्रेष्ठ, उत्तम, बढ़िया। "उत्तम मन्त्रमोचनं नृपतिं नृपं चन्द्रवर्मा" (उपनी) २ अन्त्य, आदिदेशी। "उत्तमरथीः शार्ङ्गः" (विशालकीर्तनी) ३ प्रधान, खास, सबसे बड़ा। ४ प्रथम, चौथल। (चण्ड०) ५ अत्यन्त, निहायत, बहुत। (पु०) ६ विष्णु। ७ व्याकरणानुसार—अन्त्य पुरुष, आदिरी मीमा। युरोपीय इसे आदिपुरुष कहते हैं। ८ सुरक्षिके गर्भलात उत्तानपादके एक पुत्र। यह ध्रुवके सीतेसे भार्गव और प्रियव्रतके भतीजे रहे। कुबेरने

इन्हें मार डाला था। ९ प्रियव्रतके पुत्र छतीय मनु। १० कव्योसंधे व्यास। ११ लमपद विशेष। (भारत भूष० २४०) यह विन्ध्यप्रदेगमें अवस्थित था। पुराणान्तरमें उत्तमर्ष और उत्तामार्ष पाठ मिलित है। १२ पश्य-विशेष, किसी किछका घोड़ा। यह महा वीर होता है। यहमें उत्तम आघात खाते भी अपने मादिनकी नहीं छोड़ता। (अपदण)

विशेषणके रूपमें समान नगनेपर उत्तम शब्द प्रायः संज्ञामे पीछे आता है, जैसे—दिशोत्तम, सर्वोत्तम और नरोत्तम।

उत्तमगन्धा (सं० स्त्री०) मल्लिका, चमेली।

उत्तमगन्धा (सं० द्वि०) मधुर-शोरभ-विगिट, मीठी खुशबूवाला।

उत्तमता (सं० स्त्री०) १ श्रेष्ठता, पूर्यो, बढ़ाई। २ साधुगीतता, नेकचलनौ, भनाई।

उत्तमताई (हिं०) उत्तमता।

उत्तमपद (सं० पु०) उत्तमस्थान, ऊँचा चौड़ा।

उत्तमपालेयम्—मन्द्राजप्रान्तीय मदुरा जिलेके पेरिया-कुलम् तालुकका एक नगर। यह अक्षां ८° ४८' ३०" उ० और द्रावि० ७७° २२' २०" पू०में विशालनूरमे ५ मील दक्षिण अवस्थित है। पहले उत्तमपालेयम् मदुराके एक प्राचीन पालेयम् राज्यका प्रधान स्थान था।

उत्तमपुरुष (सं० पु०) १ श्रेष्ठ मनुष्य, अच्छा आदमी। २ शाब्दिक गणका उत्तम व्यक्ति, जेनके गरदानका आदम मीमा। (First person) हिन्दीमें 'मैं' शब्द उत्तमपुरुषका च्योतक है। कर्ता कारकमें सर्वमंक क्रियाके साथ प्रयोग पहनेपर 'मैं' आगम होता है। जैसे—मैंने पत्र पढ़ा था। किन्तु प्रथमक और वर्तमान तथा भविष्यत् कालकी सकर्मक क्रियाके साथ 'मैं'का आगमनका निषेध है। जैसे—मैं पत्र पढ़ता हूँ, मैं पत्र पढ़ूँगा, मैं पाता हूँ, मैं पाया था और मैं पाऊँगा। 'मैं'का बहुवचन 'हम' है। 'मैं'के साथ वर्तमानकालकी क्रियापर 'हूँ'या आगम पड़ता है, जैसे—मैं सोचता हूँ। कर्मकारकमें 'मैं'का 'तुम्हें' आदिग हो जाता है, जो चण्ड्य लननेके अपने

मन्त्रका प्रकार को देता है, अर्थात्—सुभको, सुभये, सुभ-  
पर और सुभमें। मन्त्रा मन्त्रकारण 'मिरा' और  
'हम'का 'हमारा' है। कोई कोई समझते हैं कि—  
उत्तम पुरुषमें वंशगत और अंगरेजी व्याकरण नहीं  
मिलता। किन्तु यह बात झूठ है। क्योंकि उत्तमका  
पथ प्रथम (First) ही है।

१ जैनशास्त्रानुसार मंत्रारमें सबसे उत्कृष्ट ऐश्वर्यवाले  
पुरुष। परियत्तमयोग फलके एक चपेपासे जैन-  
शास्त्रमें दो विभाग किये हैं—उत्तमपिंथी, और अ-  
मपिंथी। इन दोनों कानोंमेंसे हर एकमें तिरैसठ तिरै-  
सठ उत्तमपुरुष दृष्टा करते हैं। वे इसप्रकार हैं—चक्र-  
वर्ती १२, तीर्थंकर २४, नारायण ८, प्रतिनारायण ८,  
और वनभद्र ८। इसका और बरकती नहीं बन्द देवी।

उत्तमफलिनो (मं० छी०) उत्तम-फल-पिनि-डीपू।  
दुम्भिका, दूधी।

उत्तमभद्र—वन्द्यमानके एक उत्तिय राजा। मानिककी  
एक मुकामें जो मिलासिपि मिली, उसपर यह बात  
निघी है—मन्त्रके खोंगने एक बार स्थानीय उत्तिय-  
नृपति उत्तमभद्रपर चढ़ाई की थी। चहुरात नष्टपान  
नृपतिके सामाता और दीनीक लगवदातके पुत्र  
हमके माधव्यकी सैन्य सेकर आगे बढ़े, जिससे  
मन्त्र पीछे हटे और उत्तमभद्रके पथोन दृष्टि में।

उत्तमपे (मं० पु०) उत्तम-मृचमप्य। अष्टदाता,  
कर्जुदिहन्दा, महाजन, साह।

उत्तमपिंथी (मं० पु०) उत्तमं देवले गान्ताप्य, ठन्।  
उत्तमपे, कर्जुदिहन्दा, भासिक।

“साधनविंकी साधः साधनगुरुके वन्द्य।

एक एक वर्ग साधः कर्जुदिहन्दाविंथी” (साधनगुरु ५४१)

उत्तमपिंथी, उत्तमपे देवी।

उत्तमसाम (मं० पु०) विपुले कलाम्बर, बड़ा  
फायदा।

उत्तमसारि (मं० छी०) १ तण्डुलोदक, चावनका  
पाणी। २ उत्कृष्ट जल, उम्दा पाणी।

उत्तमवेध (मं० पु०) मित्र, महादेव।

उत्तमवेध (मं० पु०) उत्तमसाह-वेदाभयन वेध,  
उम्दा तथैव, बढ़िया साह्यर।

उत्तमसंघ (मं० पु०) १ सम्यक् संघद्वय, उम्दा  
गिरफ्त। २ निर्जनेमें पर पयोने साथ परस्पर  
आनिष्ठन उपवेशनादिद्वय मेमानाय, दूसरेकी  
घोरतके साथ चढ़ते मिलना-जुगना और हमना  
बोलना।

उत्तमसाहस (मं० पु०) १ अत्युक्त दण्ड विवेक।  
इसमें १०००, ८००० या १८०००० पय जुमाना देना  
पड़ता है। “नरक वरनीयदेवे जने मृतमना वन्द्य” (साधनगुरु)  
२ उत्कृष्ट दण्ड, बड़ी सजा—जैसे मर्खर, चरण, चक्र-  
कर्तन और व्यापादन।

उत्तमा (मं० छी०) उत्तमप-टापू। १ उत्कृष्ट  
श्री, उम्दा घोरत। २ श्रीवादि नायिकाभेद। यह  
मन्दकारिणी होने भी प्रियतमके प्रति हितकारिणी  
रहती है। ३ दुम्भिका, दूधी। ४ मनःमिष्टा।  
५ भूम्यामसकी, भुवि पांवला। ६ तिकला; पांवला, हर  
और बहिरा। ६ सुम्ता, मोटा। ७ मृहदीपविमेष,  
जकर बढानेकी दवा लगानेसे पेदा हुई एक बीमारी।  
इसमें मूक और पक्षीचक्षे सिद्धपर सुहमापके समान  
रक्तपिंकी रक्तपिङ्का पड़ जाती हैं। (६४१)

उत्तमाह (मं० छी०) उत्तमं प्रगल्भाङ्गम्, कर्मधा०।  
१ मन्त्रक, सर। मन्त्र देवी। २ सुष्ट, दहन।  
“उत्तमाहीनसाधो ज्ञानसाधकचक्षेव पात्साय” (मन्त्र १८२)

उत्तमाधम (मं० वि०) उद्य मोच, भला-बुरा,  
बढ़िया-घटिया, छोटा-बड़ा।

उत्तमाधममध्यम (मं० वि०) उद्य, मोच और  
मध्य, ऊंचे, मोचे और धोसत दरजेवाला।

उत्तमाभम (मं० छी०) तुष्टि विमेष, एक पायू-  
दगी। भाव्य मतानुसार यह पिंथा छोड़नेसे मिलती  
है। योगमें इसका नाम सार्वभौम-महाप्रत है।

उत्तमाव्य (मं० वि०) ठाया या देखाया आने-  
वाला, जो मनाया आनेवाला हो।

उत्तमारथी (मं० छी०) १ इन्दोवरा। २ इन्द्र-  
बाह्यी। ३ इन्द्रविर्मिटी। ४ योगमात्रिका, ऊँची।

उत्तमाध (मं० पु०) १ पत्तिल पथ या भाग,  
पाथिरी पहनाया बिम्बा। २ उत्कृष्ट पथ, निहायत  
उम्दा पथा।

- उत्तमार्थ ( सं० त्रि० ) अन्तिम वा उत्कृष्ट अर्थ  
सम्बन्धीय, आखिरी या उम्दा अर्थसे तात्पर्य रखनेवाला।  
उत्तमाष्ट ( सं० पु० ) अन्तिम दिवस, आखिरी या  
उम्दा दिन।  
उत्तमीय ( सं० त्रि० ) प्रधान, उत्कृष्ट, उम्दा,  
सबसे ऊँचा।  
उत्तमोत्तम ( सं० त्रि० ) उत्कृष्टसे उत्कृष्ट, उम्दासे  
उम्दा, जो सबसे अच्छा हो।  
उत्तमोपपद ( सं० त्रि० ) सर्वोत्तम, उत्कृष्ट, जिसके  
लिये सबसे अच्छी बात कही जा सके।  
उत्तमोजस ( सं० पु० ) १ दग्ध मनुष्यमेद।  
२ एकजन महावीर। इन्होंने कुरुक्षेत्रमें पाण्डवोंके  
पक्षमें रह कर युद्ध किया था। (भारत)  
उत्तम ( सं० पु० ) उत्कृष्टतम, उत्तम। १ स्वामी-  
भाव, रोक रखनेकी क्षमता। २ निवृत्ति, कुट्टी।  
३ अवलम्ब, सहारा।  
उत्तमन ( सं० स्त्री० ) उत्तम-स्वभाव-युक्त। १ अच-  
लस्वभाव, गिरफ्त, पकड़, टेक। २ मेख, छूटा।  
उत्तमिन्त ( सं० त्रि० ) १ सधा या टिका कुपा।  
२ रोका या पकड़ा गया। ३ उत्तम, खड़ा, मोड़ा।  
उत्तमिन्तव्य ( सं० त्रि० ) पकड़ा या रोका जानेवाला।  
उत्तर ( सं० स्त्री० ) उत्-त-पप्, उत्-तरप् वा।  
१ प्रतिवाक्य, जवाब। "विचरोपनि वा एवा नत पपन-  
स्तत्।" (आश्वलायन) २ दोषमञ्जन वाक्य, ऐव मिटाने-  
वाली बात। ३ जिज्ञासित विषयमें अपने मतका  
प्रकाय, पूछी जानेवाली बातपर अपने प्रयासका  
इश्वार। ४ किसीके आश्रय करनेपर तत्त्व यथ-  
सूचक वाक्य, किसीके पुकारने पर उसके चुन लेनेकी  
बात। ५ उपरि तलका आवरण, ऊपरी सतह या  
ढकन। ६ दिक् विभेद, दक्षिणके सामनेकी दिशा।  
७ निम्न संस्था, किसी हुई चीजका आखिरी स्थिति।  
८ व्यवस्थाके अनुसार प्रतिवचन, कानूनमें बह जवाब।  
९ सीमांशानुसार अधिकारका अत्युच्च अंश, शान्तका  
चौथा टुकड़ा। १० उत्कृष्टता, उत्तम, बढ़ाई।  
११ फल, मत्तीजा, गणितमें शेष, बाकी फल।  
१२ गीत विभेद, एक गाना। (पु०) ११ मिव।

१४ विराटराजके पुत्र। कौरवगणने जब विराट-  
राजके गो चुराये, तब ये अर्जुनकी मारपीत बना  
उड़नेकी भाँसे थे। १५ गंगाराज विभेद। १६ पर्यंत-  
विभेद, एक पड़ाई। (त्रि०) १० ऊर्ध्व, ऊँचा, बड़ा।  
१८ उत्तरीय, गिमाती। १९ प्रधान, श्रेष्ठ, शाय,  
बढ़िया। २० वाम, बायाँ। २१ निम्न, नीचे पड़ने-  
वाला। २२ अधिक उत्तम, ज्यादा अच्छा। २३ अनन्तर  
पिछता। (अर्थ०) २४ फलतः, अतएव।

उत्तरकाण्ड ( सं० स्त्री० ) १ पुस्तकका शीर्षांग,  
आखिरी किताब। २ रामायणका अन्तिम काण्ड  
वा पुस्तक।

उत्तरकाय ( सं० पु० ) शरीरका ऊर्ध्व भाग, मिथुना  
ऊपरी हिस्सा।

उत्तरकाल ( सं० पु० ) १ अविद्युत् काल, पानीवाला  
काल। २ गीतकाल, छोटा समय।

उत्तरकाशी ( सं० स्त्री० ) पुष्पस्थान विभेद, एक जगह।  
यह हरिद्वारसे उत्तर लगती चौर बदरोनारायणकी  
राहमें पड़ती है।

उत्तरकुक्ष ( सं० पु० ) अस्त्योपका वर्षविभेद, कुक्षविभेद।  
उत्तरकुक्षके सम्बन्धमें अनेक मतमेद हैं। अष्टा-  
वक मासमें कक्षानुसार यह अनुपद तिब्बतमें  
ब्रह्मपुत्र नदीके समान नीर रहता। (Kart von Alt In-  
dien) ब्रिस्फोर्ड हिमालयके शत्रुदेयमें ऐसे तिब्बतका  
एक नगर समझते हैं। (Asiatic Researches, Vol.  
ix, p. 63, 67, xiv. 387) भौगोलिक सेण्ट्रमार्टिन  
उत्तरकुक्षका अस्तित्व नहीं मानते। उनके मतसे यह  
एक कल्पित स्थान है। (Etude sur la Geographie  
Grecque et Latine de l'Inde, 415-414) किन्तु  
निम्नलिखित प्रमाण दीपनिषे महात्रयमें जो समझ  
पड़ता है—एतद्वामक स्थान पूर्वोक्तानमें रहति,—

"दे के च उरिच विमलम्" अथवा उत्तरकुक्ष स्थान (उत्तर दिक्)

(उत्तरदिक्स्थान ५१४)

"उत्तराक्ष कुक्षम् पञ्चमं वर्षं च मदीयम्।

उत्तराक्षकुक्षं च मदीयं पञ्चमं वर्षं च मदीयम्।" (आश्वलायन १०१८)

महाभारतके अनुसार सुमेरुसे उत्तर मोलपर्यन्तके  
दक्षिण पार्श्वपर उत्तरकुक्ष अवस्थित है। (श्री १५०)



सदृश घोर पीते हैं। चक्रवाक घोर चक्रवाकीकी तरह दम्पती एक कालमें जन्म ले समभावसे बढ़ते हैं। वे एकादश सहस्र वत्सर जीते घोर एक दूसरेकी कभी नहीं छोड़ते। मरनेपर भावण्ड पक्षी उन्हें उठा गिरिदरीमें फेंक देते हैं। (महाभारत भीष्म पर्व, रामायण किष्किन्धा ३१ सर्ग)

उत्तरकोशल—प्राचीन जनपदविशेष, एक पुराणा सुक्त। वर्तमान अयोध्याप्रदेशके उत्तरांगका पड़से यही नाम था।

उत्तरकोशला (सं० स्त्री०) उत्तरकोशलकी राजधानी अयोध्या नगरी।

उत्तरकेन्द्र (सं० पु०) पृथिवीका उत्तर प्रान्त, जमीनका शिमांश सुक्त।

उत्तरक्रिया (सं० स्त्री०) १ उत्तरकालका कर्तव्य कर्म, पहिले वस्तुका काम। २ मावत्सरिका आकाटि।

उत्तरखण्ड (सं० स्त्री०) १ पश्चिम अर्धाय, पश्चिमी बाय। २ पद्म, गरुड़ घोर शिवपुराणका अन्तिम भाग।

उत्तरखण्डन (सं० स्त्री०) प्रतिघेप, प्रत्याख्यान, तरहीद, काट, भुठलाव।

उत्तरगुण (सं० पु०) जैनशास्त्रके पञ्चमर सुनिके मूल गुणकी बचानेवाला गुण।

उत्तरङ्ग (सं० स्त्री०) उत्तरमद्भुत कर्म शक्त्या। १ हारीश्वर्य दारु, दरवाजेके ठाठपर लगनेवाली लकड़ीकी मेहराब। (त्रि०) २ उदगत तरङ्ग, नहर लेनेवाला। "वसन्तिवायारमनुजङ्गम्" (उत्तर १।४८)

उत्तरच्छद (सं० पु०) शय्याके उपरि आभूषणका वस्त्र, विक्रीनिके ऊपरकी चादर।

उत्तरज (सं० त्रि०) पञ्चाङ्गात्, जो पीछे पैदा हो।

उत्तरज्या (सं० स्त्री०) छत्तखण्डका सुप्रतिष्ठित व्यापिण्ड, कौसका माहिर जैव ज्ञाविद्या। सुप्रतिष्ठित व्यापिण्ड द्वारा अर्धोत्त गुणके द्वितीय अर्धशकी भी यही मंत्रा है।

उत्तरज्योतिष (सं० पु०) भारतका पश्चिमोत्तरप्रान्तीय जनपद विशेष। "अनुच" पञ्चदशे व तं नाम पदं नम्।

• प्रिन्सिपल कालिदास नामक एक छन्दस विद्या है। उद्धृते शाल वंशक उत्तरज्योतिष विद्या की काव्यक कविता है।

उत्तरज्योतिषवे व तदा दिव्यवटं पुनः॥" (भारत, मन्त्र, ११ प०)

उत्तरण (सं० स्त्री०) उत्थल्युट्। १ नद्यादिके पारकी जाना, उत्तराई। २ किसी स्थानमें उपस्थित होना, पहुँच।

उत्तरणस्थान (सं० स्त्री०) सराय, घट्टा, पड़ाव, मुकाम, उत्तरनेकी जगह।

उत्तरतन्त्र (सं० स्त्री०) सुन्दरके वैद्यक ग्रन्थका अन्तिम भाग।

उत्तरतर (सं० त्रि०) अधिक उच्च दूर वा अत्यधिक, ज्यादा ऊँचा, जो बहुत उँचा हो।

उत्तरतम् (सं० अर्थ०) १ उत्तरके प्रति, बाईं घोर ऊपर। २ पद्यात्, पीछे।

उत्तरतापनीय (सं० पु०) नृसिंहतापनीयोपनिषद्का ग्रेप भाग।

उत्तरत्र (सं० अर्थ०) पद्यात्, पीछे, पश्चोरकी।

उत्तरदाय (सं० पु०) उत्तर देनेकी समता रखनेवाला, जवाबदिह, जियेदार, जिसे भलेबुरेका जवाब देना पड़े।

उत्तरदायक (सं० त्रि०) उत्तर ददाति, उत्तरदायक। १ प्रतुत्तरदाता, सवालका जवाब लगानेवाला। २ प्रभुके समक्ष उत्तर प्रदानधे निज दोषके गोपनकी चेष्टा करनेवाला, जो मानिकके सामने जवाब लगा अपना ऐय क्लिपानेकी कोशिश करता हो।

"वरपुत्रि रमा नारी भवघोरदायकः।

सर्वत्र सदैव यत्नी कथं विव मं द्रवः॥" (विनोदपत्र)

उत्तरदायित्व (सं० स्त्री०) उत्तर देनेका अधिकार, जवाबदेही, जियेवारी।

उत्तरदायी (सं० त्रि०) उत्तर देनेका अधिकार रखनेवाला, जवाबदिह, जियेदार, जिसे भलेबुरेका जवाब देना पड़े।

उत्तरदिक् (सं० स्त्री०) दिक् विनोप, पदीशे, शिमान्।

उत्तरदिक्काल (सं० पु०) रविवारका उत्तरदिगर्तो काल।

उत्तरदिक्पाय (सं० पु०) सृष्टमन्त्रिकारके दिन उत्तरदिक्में यात्रा युवादिके नियंत्रका प्रापक पागवज।



उत्तरदिक्स्थ (मं० त्रि०) उत्तर दिक्पर अवस्थित, उत्तरीय, गिमानो, जो उत्तरकी ओर हो।

उत्तरदिगीय (मं० पु०) १ कुपेर। २ कुड। यह दोनों देवता उत्तरदिक्के अधिपति हैं।

उत्तरदिग्बन्धो (मं० पु०) उत्तरदिग् दिग्ने बन्धो। १ गुड। २ बन्ध। ये दोनों यह उत्तरकी ओर बन्धवान् होमे हैं।

उत्तरदिग्, उत्तरदिग् द्वयोः।

उत्तरदेग (मं० पु०) उत्तरकी ओरका देग, मुख गिमानो, जंघा देग।

उत्तरधीय (मं० त्रि०) पद्यात् किया जानेवाला, जो पीछे बंध मके।

उत्तरगामि (मं० पु० शी०) यज्ञके उत्तरका कुण्ड, जो कुण्ड यज्ञमें उत्तरकी ओर बना हो।

उत्तरपक्ष (मं० पु०) १ विचारपक्ष, प्रत्याख्यान, तरदीद, काट, भुठलाव। यह पूर्वपक्षके सिद्धान्तकी काट डालता है। २ उत्तर विकल्प, पहली बहमका जवाब। ३ हृद्यपक्ष, पंधेरा पाछ। ४ उत्तरीय वा वाम पाछे, गिमानो या बाईं ओर।

उत्तरपक्षता (मं० शी०) फल, चागय, नतोआ, भतलव।

उत्तरपक्षय (मं० शी०) उत्तरपक्ष द्वयोः।

उत्तरपट (मं० पु०) उपरिस्थ मध्य, ऊपरका कपड़ा। उपरगा, खोदनी, चादर वगैरहकी उत्तरपट कहते हैं।

उत्तरपथ (मं० पु०) उत्तरीय मार्ग, देवगाम, गिमानो राह, जो गन्ना उत्तरकी निकल गई हो।

उत्तरपथिक (मं० त्रि०) उत्तरः तदेगमयः पन्थानम्, कन्। स्वः कन्। उत्तरः ११११११। उत्तरदेगवासी, गिमानका रजमवासा।

उत्तरपद (मं० शी०) १ समामका शीव पद, मिमे हूये लक्ष्मका धारिणी दिक्षा। २ समामथोग्य पद।

उत्तरपदिक (मं० त्रि०) समामके पन्थान पदमे भवत्य रचनेवाला, जो मिमे हूये लक्ष्मके धारिणी रूकके समान रचता हो।

उत्तरपदधीय, उत्तरपद द्वयोः।

उत्तरपर्वत (मं० पु०) उत्तरदिक्स्थ पर्वत, गिमानो पहाड़।

उत्तरपथाधि (मं० पु०) उत्तर ओर पथिमका रूप, गिमानो ओर मगरकी चढ़ा।

उत्तरपथिम (मं० त्रि०) उत्तर एवं पथिम दिक्स्थ, गिमानो ओर मगरकी।

उत्तरपाड़ा—यज्ञान मानके दृगसी जिनका एक लगर। यह बालीमे उत्तर दृगसी, नदीपर अवस्थित है। सुगमिमपनिटी बड़ी है। यहां मगरमैयट स्कूल बनता है। जयलक्ष सुगोपाध्याय नामक एक बड़े लमोन्दारने यहां सयं साधारणके पदनेका एक विराट् पुस्तकालय स्थापित करवाया है। उनमें प्राचीन व्यासहर्षवर्षे पण्डे पण्डे पन्थ रगे हैं। सरकारी विज्ञानालय भी विद्यमान है।

उत्तरपाट (मं० पु०) चतुष्पाद व्यवहारके धनगत द्वितीय पाद, पदान्तो कार्यवाहिका एक हिस्सा यह लबाव या बचावमे सम्मत् रचता है। प्रत्येक धर्मयोगमे चार विभाग पड़ते हैं।

“पूर्वपक्षः कृतः करोति उत्तरपक्षः कृतः” (तत्त्वत्रि)

उत्तरपुरस्तात् (मं० पद्य०) उत्तर-पथिमामिमुख, गिमान ओर मगरकी ओर।

उत्तरपूर्व (मं० त्रि०) उत्तर एवं पूर्व दिक्स्थ, गिमानो ओर मगरकी। २ उत्तरकी पूर्व समाहनेवाला, जो गिमानकी मगरकी पथाल करता हो। (पु०) ३ ईगान कीष।

उत्तरमच्छाद (मं० पु०) नृनिवासदार, रज्जाई, गुदही।

उत्तरमच्छादार (मं० शी०) १ विशाद, भगड़ा, बड़म। २ पथियोगका हेतु उत्तरपाद, जानूमी बहन, लबावपर जवाब।

उत्तरमोष्ठपदसुग (मं० शी०) सुग-वत्पुष्पभेद। हमने मन्दन, विजय, जय, मन्मथ और पुष्प वत्पुष्प पड़ता है।

उत्तमोष्ठपदा (मं० शी०) उत्तमोष्ठ द्वयोः।

उत्तराकान्धो (मं० शी०) उत्तरा पर्वति, फल-उत्तम-गुड, मोरादित्यात् कीष कान्ध मन्दात् शर्म

अथ। हादग नक्षत्र, बारहवां मसकन् कमरी। (B. Leonis) इसका रूप दक्षिणोत्तर मिलित पर्यङ्गाकृति तारकद्वय होता है। अथमा अधिष्ठात्री देवता है। उत्तरफाल्गुनी नक्षत्रमें जम्ब लेनेसे मनुष्य दाता, दयालु, सुशील, कीर्तिमान्, सुमति, श्रेष्ठ, धीर और अत्यन्त मृदुस्वभाव होता है। इसके प्रथममें सिंह और उत्तर पादत्रयमें कन्या राशि पड़ता है।

उत्तरफाल्गुनी, उत्तरफल्गुनी देखो।

उत्तरभाद्रपद (सं० पु०) षड्विंश नक्षत्र, कृत्वी-सर्वा मसकन् कमरी (α Andromedæ)। इसका पर्याय मोठपदा और देवता अहिर्बुध्न है। यह पर्यङ्गरूप षट्तराश्याक होता है। इस नक्षत्रमें जम्ब लेनेसे मनुष्य धनी, कुलोत्तम, कार्यकुशल, राजमान्य, सखवान्, महातेजस्वी, सत्कर्मकारी और बन्धुमत्त निकलता है। (स्त्री०) टाप्। उत्तरभाद्रपद।

उत्तरमन्द (सं० पु०) चन्द्रस्वरसे मन्द मन्द गानेकी शैति, जोरसे धीरे-धीरे गानेका तरीका। यह वज्र-ग्रामकी स्मृति है। इसमें सरिग म प ध नि स्वर क्रमशः पागेकी बढ़ते जाते हैं। (स्त्री०) उत्तरमन्द।

उत्तरमात्र (सं० स्त्री०) केवल उत्तर, सिर्फ जवाब।

उत्तरमानस (सं० स्त्री०) मानसके उत्तरस्थ तीर्थ विज्ञेय।

“कानोरत्न मन्दिर्गुप्तं तथा योगरमानसम्।

अथैव योगरमानसं चण्डा विवदुर्गते ॥” (भारत चतु० १३ अ०)

उत्तरमीमांसा (सं० स्त्री०) उत्तरस्थ वेदान्तभागस्य उपनियदृष्टव्यस्य मीमांसा। वेदान्त, वेदके द्वितीय भाग ज्ञानकाण्डका विचारमूलक ग्रन्थ, ब्रह्मसूत्र। शैलान् देखो।

उत्तररहित (सं० स्त्री०) उत्तरसे शून्य, ना जवाब, जो जवाब न रखता हो।

उत्तरराद—राददेशका उत्तरांग। वर्तमान ब्रह्मन्-प्राप्तका यहमान, सुमिदावाद और धीरगूढ जिज्ञा पूर्वकाममें उत्तरराद नामसे ज्ञात था। राद देखो।

उत्तरराष्ट्री—उत्तररादराष्ट्री। १ बृहद्देशीय काव्योंकी एक श्रेणी। जो काव्यस्य राष्ट्रके उत्तर पंगमें रहे, वेही इस नामसे विख्यात हुए। २ चौबीस-परगनेके सोडा-

रोंकी एक श्रेणी। ३ श्रेणी करनेवाले धीरियों और नाइयोंकी एक श्रेणी। ४ बृहद्देशीय जालिक शैवर्तोंकी एक श्रेणी। ५ मोर्धियोंकी एक श्रेणी।

उत्तरनक्षत्र (सं० स्त्री०) प्रकृत उत्तरका प्रकाश, अश्ली जवाबकी भक्षक। (स्त्री०) २ वाम दिक् विन्दित, बाईं ओर निगान् रखनेवाला।

उत्तरशोमन् (सं० स्त्री०) ऊपरी या बाहरी ओर घुमावदार बाल रखनेवाला, जिसके बाल ऊपर या बाहरकी घूमें रहें।

उत्तरवयस् (सं० स्त्री०) जीवनके पचास वर्ष, जिन्दगीके पिछले साल।

उत्तरवक्त्री (सं० स्त्री०) दो अध्यायमें विभक्त कठीप-निपट्टका द्वितीय भाग।

उत्तरवस्ति (सं० पु०) मूत्रागममें छेद पड़ जानेका सुश्रुतांत एक यन्त्र। सुश्रुतने कहा है—यह यन्त्र रोगीकी चतुर्दश चङ्गुलि परिमित दीर्घ, ओर चप भागमें मानतोपुष्पके वृन्त समान तथा सुदृढ सिद्धयुक्त होगा। इसमें छेदका परिमाण रहेगा। रोगीका वयस पचीस वत्सरसे कम ठहरने पर विचारसङ्गत छेदकी मात्रा रखना चाहिये। कीरके पतल पतले चार चङ्गुलि अन्तर पर मूत्रनाली जगती है। उसके सुदृढ तुल्य छिद्रका परिमाण दश चङ्गुलि दीर्घ है। उत्तरवस्ति लगानेकी उपपत्यपथमें चार ओर मूत्र-नालीमें दो चङ्गुलि विषकारी देना चाहिये। अन्य वयसेका कन्याके एक ही चङ्गुलि पर्येट है। ऐसे स्थलमें औरअथ वा शूकरका वस्ति व्यवहार्य है। अथवायमें पचीके गवदेयका चर्म चमत्ता है। यह भी न मिलनेपर हरिणके पट या अन्य किसी प्रकारका कोमल चर्म वस्ति बनानेमें लगता है। प्रथम रोगीकी लिम्ब ओर श्रेष्ठ प्रयोग कर सुश्रुतग्रन्थ यथागति यथागू पिनामा चाहिये। फिर जानु परिमित स्थान पर दृष्ट टोक (उपविष्ट भागमें) और वस्ति तथा मूर्ध्नि देशमें अन्य तैल सेव मिट्टनको दृष्ट ओर पट्ट करे। उसके बाद मैत्रमें मन्नाका दास पन्थेपचक्र दः चङ्गुलि परिमाणसे अन्य पन्थे चमत्ताये। वस्ति लगा नष्ट फिर धीरे धीरे निष्कायना चाहिये। छेद

तपश्च पठनेभिः पदराक्षकी दुष्टद्वयं वा मां परमुखा परि-  
 भ्रमिन् भावामि भोजनं कराये। इमो निषण्णो तौ न  
 या पारं वक्षिन् कदापि। दूषितं गृहं वा नोचिन्,  
 मृतापातं, मृतदोषं, योनिदोषं, गृहदोषं, गर्भराक्षसौ,  
 बद्धगूलं, वट्टकगूलं, भेङ्गगूलं, ममसां भिन्नरोगं धीरं  
 चम्यान् चतुष्टयं वक्षिन्नातं गेहं। उत्तरवक्षिणे पारोग्यं  
 कीर्तिर्नृपि।

उत्तरायण ( धं० कौ० ) उत्तरीय, चादर ।

उपरवादिन् (सं० त्रि०) उत्तर-वद-विनि । १ प्रति-  
वाद्य, सहासक ।

“कविप्रमाणम्” इत्युक्तं तदर्थम् ।

ସର୍ବଦେବୀ ଶାନ୍ତିପୁରୀ ଶାନ୍ତିପୁରୀ ଶାନ୍ତିପୁରୀ ୫" (୫:୫୫:୫୫)

२ प्रतिपादो, जगत् देनवाता । ३ चन्द्रो पृथ्वीस्य  
रक्षणेवासा, लो दमरुसि पीठे इव स्थिता इति ।

उत्तरदायु ( भं० पु० ) उत्तरदिग्भव मानक, गिरासी  
जवा, उत्तराई। यह मीन, क्षिप्र, क्षेप प्रकोपकर,  
अंजन, प्रलतिलको बलद, शत्रु और वतपीव विषा-  
जक मियो पथिक गुणकर होता है। ( भरतृण )

असावाकरी ( सं० स्त्री० ) इन्द्रवाकरी, इन्द्रायन ।

सप्तमवारिन्द्र ( सं० पु० ) १ यद्वदेगका उत्तराग पर्याप्त  
दिनाप्रपुर सोर रत्नपुर जिला । २ यद्वदेगके वारिन्द्र  
मासकी एक मासा ।

उत्तराध्यायि ( सं० कृती० ) १ चिटोस चिटोसा एक  
मैदः । " वं द्रो वाप्ये अथवा । न काण्डायीर वेदी उत्तराध्यायि  
गर्हस्थि न धर्मवाम ।" ( उद्भवकाव्य पृ० १४ )

२. कृत्योपदेशे समस्तपठक नीतिः। अपर नास्ति ।

ମନୋହରୀୟ ଶ୍ରୀମତୀଙ୍କ ଦେବଦାସୀଙ୍କୁ ନିର୍ବାଚନ କର ।

६५५. सुदृढो जलमयः सः विनाशकः कश्चित् देवः ॥

( १५४०९ अथवा २३६७ )

हाम्राई, चरमन, रामदाद और मधु

ਸਾਖਰੀ ਯਾਨ ਹੁਸ਼ਿਆਰ-ਮਸਲਾਹਤ ਕਰਾਈ

द्वितीयोऽपि तद्विधिः प्रसिद्धः ।

प्रकारः ( गं. ली. ) मरुतिका ..

आदि पदः ।

प्रमाणपत्र (मं. ति.) १ प्रमाणपत्र :-

महाभारतम् ।

<sup>86</sup> "संस्कृतभाषायाः शब्द-कुलावली" मद्रासु, पृ. १३२-४०-४१ ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

३. चन्द्रके कथन पर भाष्य देनेवाला, जो दूसरों को बाल  
सुनकर मगधों देता हो।

उत्तरमाधक (सं० वि०) । गेप भागको लम्बाई  
करनेशान्ता, जो बच्चे दृष्टि कागको परा जाता हो।

२ महागुरु, मददगार । ३ उत्तरजो प्रतिष्ठित करमे-  
गामा, जो सदाव भगता हो ।

उत्तररत्न (पै. प.) इंगुफा उपरि भाग, जखयेंका  
उपरी दिक्ता। (चरयेराय)

उत्तर। ( सं० स्तो० ) १ शिरादशात्मको कथा ।  
अभिमत्यके माघ दसका विवाह हुआ था । अतिवक्त देखी ।

(अथ०) २ उत्तरकी ओर, मिमांसाकी तरफ़ ।

उत्तमायुषः ( मं० स्त्री० ) उत्तरीय विभाग, प्रिन्साली  
हिमालयः । यद्य भारतमें हिमालयके समीप है ।

उत्तरात् ( गं० चय्य० ) वाम ओरमे, बाईं तरफ़ पर ।

उत्तराशान् (वि० अथ०) उत्तरार्धे, विमासकी तर्कः ।

उत्तराधर (मं० वि०) १ उत्तमीय, उत्तमीया, बड़ा  
घोटा । "उत्तराधर इव उत्तमीयः" (उत्तराधर इव ३१.४.११)

(सी०) २ ऊपर एवं निम्न पाठ, नीचे लखवा है।

उत्तराधिकार ( गी. पु. ) सम्पादिका कमिटी द्वारा,  
मालकी निवृत्तिसेवार परामर्श, इवोर्गो ।

उत्तराधिकारिता ( मं० शर्ती० ) उत्तराधिकारित्व का अर्थ,  
मित्रमित्रेश्वर परामर्श ।

उत्तराधिकारित्व ( सं. २१० ) चर्चादिपत्रिका सं. १०१

दत्ताधिकारिन् ( सं. शि. ) पुष्पनामिकं यन्त्रम्  
यन्त्रादिकं च. ' यन्त्रि, यन्त्रि । दत्ताधिकारिन् '

पुनर्निर्माण कार्य. महाराष्ट्र सरकार.

समस्त धर्म

पृष्ठ २

ਪੰਨਾ ੨

*(continued)*

100



मीमानिर्वायक रक्षा, जो उत्तर पापुताइके मिमान  
जानेको नाम ठहरातो हो। (Tropic of Cancer)  
उत्तरायणी (सं० स्त्री०) राशीको मूर्ध्नाका एक भेद।  
उत्तरायणी (सं० स्त्री०) ऊपर परति। इसीको  
आठनेमे यक्षीय प्रमज्ज बनाता है।

उत्तरायं (सं० वि०) निश्चलित विषयके पद,  
तत्त्वमूल लेनके लिये।

उत्तरायं (सं० स्त्री०) उच्छ्रुतमर्थम्। १ टेङ्का  
अपरिभाग, जिम्माका छपरी हिस्सा। २ गेपाथं,  
आपिरो पहा। "जदे नेतेरायेंनाकनेपरे।" (उत्तर-  
अर्थ १५५११) ३ दूरतर पक्ष, ल्यादा दूरका सिरा।  
४ उत्तरका पद, बायां पहा।

उत्तरायं (सं० वि०) उत्तरदिक्, मिमानको चौर  
पहुनेवाला।

उत्तरायन् (सं० वि०) विजयी, पुनेकमन्, जीतने-  
वाला।

उत्तराय (सं० स्त्री०) उत्तर दिक्, मिमान।

उत्तरायपिपति (सं० पु०) उत्तर दिक्के नामी,  
कुपेर।

उत्तरायपति, उत्तरायपति है।

उत्तरायम् (सं० पु०) १ पार्वतीय देश विमिय, एक  
पहाडी मुख्य। २ पार्वतीय नद विमिय, एक पहाडी  
तराया। (उत्तरायपति १५१०)

उत्तरायपादा (सं० स्त्री०) उत्तरा-पापादा। एक-  
विमि मध्यत। इसका रूप गुर्दे समान होता है।  
यह दो तारा मुख्य है। पश्चिमदिक्ता गिरा है। किसीके  
मतमें यह चाँद ताराका रक्षता चौर गजके दन्तवत्  
लगता है। इस मध्यममें जल लेनेमें मनुष्य दाता,  
दयावान्, विजयी, विजोत्, सार्वभौ, धनवान्, श्री-  
पुत्रपुत्र चौर पालना एषी निश्चयता है।

उत्तरायण (सं० पु०) ऊर्ध्व पालनने, उत्तर-या-  
मध्य-यन्। उत्तरीयक, चोड्गो, चादर, बिछोरी,  
लपरो या बाहरी कपडा।

उत्तराय (सं० पु०) उत्तर-यन्-टप्। परदिक्,  
आगे पानेवाला रोज, खन।

उत्तरादि (सं० अर्थ०) उत्तरदि, मिमानके।

उत्तरिका (सं० स्त्री०) नदी विदेह, एक दरवा।  
भरतने राज्यवर्धने पदोष्ठा जाने समय समनेके  
नामक नाममें इस नदीको पार किया था। उत्तरका  
पाठान्तर भी ललित है। (उत्तरिका १५१०)

उत्तरिणी (सं० स्त्री०) उत्तम परकी, बड़िया  
पाकर। यह कटुक, मोत, अक्षुण्णितकर, लघु, दृक्,  
धिय, भारक, सुवर्ण, प्रचरोपच एवं सुपयस्य कर जोनी  
चौर काष्ठ, मृत्, लमि, शाव, जार, पित्त, दमिष्ट, लक,  
कुह, मन्नाप, वात, तन्मू, दह, चप, धूमकधु, मोनि-  
रोम तथा मोयकी चोती है। इसका भाग  
उत्तरीय एवं तिष्ठ रहता चौर लमि, चर्म, कुह, लक  
तथा वातकी रहता है। कम रोगमृत्, तिष्ठ, लक,  
कटुक, मनु, धमिपदीपक, पित्तकोपकर, लब्धापद  
चौर विषनामक है। (उत्तरिका १५१०)

उत्तरिन् (सं० वि०) श्रेष्ठ, बड़ा।

उत्तरीय (सं० स्त्री०) उत्तरायन् देहभामि, क।  
उत्तरिन् १५१०। उत्तरीयकवा, उत्तरका, चोड्गो,  
चादर। (वि०) २ ऊर्ध्वस्थित, लपरो। ३ उत्तर-  
दिक्, मिमान।

उत्तरीयक, उत्तरीय है।

उत्तरीय (सं० स्त्री०) दक्षिण विमान, जन्मो तरा।  
उत्तरीयम् (सं० अर्थ०) पर दिक्, पागामी दिग्म,  
कम।

उत्तरीय (सं० वि०) उत्तरकादुलत। १ पश्चिमाधिक,  
ल्यादा ल्यादा। (अर्थ०) २ लम मम, चोरे-चोरे,  
बराबर। (स्त्री०) ३ उत्तर पर उत्तर, अशास्त्रा  
जवाय। ४ पातालाय, गुप्तमृत्। ५ इतिरक्षण, रक्ष  
कवाय। ६ पश्चिमा, ल्यादो। ७ पञ्चमम, विम-  
विम। ८ पयतरक, उत्तर।

उत्तरीयिन् (सं० वि०) १ गवेदा इतिमासी, इतिमा  
इतिमासी। २ पयके पीठे पानेवाला, जो दूरनेके  
बाट पड़ता हो।

उत्तरीय (सं० पु०) अपरिच्छि चोड, लपका चोड।

उत्तरीय, उत्तरीय है।

उत्तराय (सं० स्त्री०) उच्छ्रुतमर्थम्, पारि० जना०।  
उच्छ्रुतमर्थम् अर्थ० जना, चौरकी भाव-उत्तरका।

उत्तलित ( सं० त्रि० ) उत्-तल-ल । उत्तलित, उल्लास  
हुषा ।

उत्ता, उल्लास दीर्घ ।

उत्तान ( सं० त्रि० ) उद्गतस्तानो विस्तारो यस्मात् ।

१ ऊर्ध्वमुखपायित, मुँह ऊपरको उठाये पड़ा हुआ,

चित । २ भ्रमभीर, उद्यम । ३ उच्छ्रित, खंडा, सोपा ।

४ पुटाकार, खोकांला । ५ ऊर्ध्वतल, सतह पर फैला

हुषा । ६ उद्वाटित, खुला । ( स्त्री० ) ७ जल, पानी ।

उत्तानक ( सं० पु० ) उत्-तन-खुल् । १ उच्चटाहव,

उटझनका पेड़ । २ सुप्ताभेद, नागरमोथा ।

उत्तानकूर्मक ( सं० स्त्री० ) कूर्मासन विशेष । चानन दीर्घ ।

उत्तानपत्र, उल्लासपत्र दीर्घ ।

उत्तानपत्रक ( सं० पु० ) १ रत्नोरण्ड, लाल रङ्गीका

पेड़ । २ श्वेतोरण्ड, सफेद रङ्गीका पेड़ ।

उत्तानपट्ट ( सं० स्त्री० ) १ छत्र, पेड़ । २ मल्लि,

ताकत । उत्तानपट्टसे दिक् चौर प्रथिवी उपजती

है । ( अ० १:०७११-१० )

उत्तानपथ ( सं० त्रि० ) विस्तृत पथयुक्त, बड़ी हुई

पत्तो रखनेवाला ।

उत्तानपाद ( सं० पु० ) स्थायम्बुव मनुके पुत्र और

भ्रुवके पिता । इन राजाके सुनोति और सुवचि दो

पत्नी रहीं । सुनोतिके गर्भसे भ्रुव, कीर्तिमान्, पायु-

मान् एवं वसु और सुवचिके गर्भसे उत्तमने जन्म

लिया था । ( हरिवंश, विष्णुपर्व, भागवत )

उत्तानपादज ( सं० पु० ) उत्तानपादके पुत्र भ्रुव ।

भ्रुव दीर्घ ।

उत्तानपथ ( सं० त्रि० ) उत्तानः ऊर्ध्वमुखः शिरो, यो-

ध्व । १ ऊर्ध्वमुख शयन करनेवाला, जो चित

सेटा हो । ( पु० ) स्थायपायिमिय, योर प्वारा

बधा, जो लड़का बहुत छोटा और माका दूध

पीता हो ।

उत्तानमीमन् ( सं० त्रि० ) उत्तानस्थित, दम्भादा,

खड़ा, बका हुआ । ( अ० १:०७११-१० )

उत्तानहस्त ( सं० त्रि० ) विस्तारित हस्तयुक्त, हाथ

फैलाये हुआ ।

उत्ताप ( सं० पु० ) उत्-तप-पञ् । १ उष्णता, गर्मी ।

२ ताप, धूप । ३ दुःख, तकलीफ़ । ४ चिन्ता, चिन्ता ।

५ उत्तेजना, जोश । ६ चेष्टा, खोमिया ।

उत्तापन ( सं० स्त्री० ) उष्णताकरण, गर्म करनेका

काम ।

उत्तापित ( सं० त्रि० ) १ तापयुक्त, तपा हुआ, जो

गर्म किया गया हो । २ दुःखित, तकलीफ़ उठाये

हुषा ।

उत्तार ( सं० पु० ) उत्-त-विष्-पञ् । १ घमन,

कौं, उलटो । २ उत्तहन, मंचाई । ३ पारगमन,

उतारा । ४ रचा, बचाव । ५ दूरीकरण, चलागाव ।

( त्रि० ) ६ पत्यन्त उच्च, निहायत ऊँचा ।

उत्तारक ( सं० त्रि० ) उत्-तृ-विष्-पञ् । १ पार

हो जानेवाला, जो उतर गया हो । ( पु० ) २ पार

जगानेवाले महादेव ।

उत्तारण ( सं० स्त्री० ) उत्-तृ-विष्-पञ् । १ पारको

गमन, उतारा । ( पु० ) कर्तरि ल्य । २ विष्णु भृगु-

वान् । ( त्रि० ) ३ पारको गमन करनेवाला, जो उतर

रहा हो ।

उत्तारलोचन ( सं० त्रि० ) चूर्णित नेत्रयुक्त, चूमे

हुई पाँपोंवाला ।

उत्तारिन् ( सं० त्रि० ) उत्-तृ-विनि । १ पार जगाने-

वाला, जो उतारता हो । २ चपल, चुनचुन ।

उत्तार्य ( सं० त्रि० ) पार किया जानेवाला, जो उता-

रनेके पाविल हो ।

उत्ताल ( सं० त्रि० ) उत्-पुटादित्वात् तल्-पञ् ।

१ जेठ, बड़ा । २ उत्कट, भारी । ३ कठिन, सुगन्धिन ।

४ तीव्र, तेज । ५ उच्च, ऊँचा । ( पु० ) ६ मर्कट,

बन्दर । ( स्त्री० ) ७ मंथ्या विशेष, कोई प्यम पदद ।

उत्तर ( त्रि० पु० ) पश्चिमे गतेके ऊपर और क्षम्यके

नोचे रहनेवाली पट्टी ।

उत्तरनमेरूर ( उत्तरामनोर )—मन्दाज प्राणीय चेङ्गलपट

जिनके मधुरामतकम् ताकुकका एक नगर । यह पचा०

१२° ३१' ३५" उत्० और द्रवि० ७८° ४८' पु० पर पच-

स्थित है । चेङ्गलपटसे उत्तरनमेरूर १६ मील पड़ता

है । प्रायः साढ़े ७ हजार मनुष्य बसते हैं । हिन्दुओं और

मुसलमानोंके शासन-समयमें स्थान था ।



उत्तोलन (सं० स्त्री०) उत्-तुल भावे क्युट्। उत्था-  
पन, उत्तरेष्य, उठाव, चढ़ाव।

उत्तोलित (सं० वि०) उत्-तुलादित्वात् तुल-ञ।  
उत्थित, उत्थापित, उठाया या चढ़ाया हुआ।

उत्तुल्यञ्ज (सं० वि०) उत्-तुल्य-ञ। १ परितुल्य,  
झोड़ा हुआ। २ विरक्त, सुदृज्यत या भोक्, न रखने-  
वाला। ३ कर्ध्वचित्त, फेंका या उछाला हुआ।

उत्त्याग (सं० पु०) १ उत्सर्ग, तर्क, छोड़ा।  
२ उद्घोषण, फेंकफांक। ३ विरक्ति, दुनियाधी सुदृज्यतकी  
छुटाई।

उत्तुवस्तु (सं० वि०) प्रतिभय मयभौत, वहुत डरा हुआ।  
उत्तुवांस (सं० पु०) उत्-वस-वञ्। प्रतिभय,  
बड़ा खौफ या डर।

उत्तुविपद (सं० स्त्री०) उत्तत विपदी, काँची तिपाई।  
उत्थ (सं० वि०) उत्-स्था-क। १ उत्थित, उठा  
हुआ। २ उत्तत, काँचा। ३ उत्तत, निकला हुआ।  
४ उत्पन्न, पैदा। (पु०) ५ उत्पत्ति, उपज, निकास।  
उत्थवना (हिं० स्त्री०) उत्थापन करना, उठाना,  
लगाना।

उत्थाव (वे० पु०) १ उत्थापन करनेवाला, जो उठ  
रहा हो। २ अधवसायी, पक्षा हरादा रखनेवाला।  
उत्थान (सं० स्त्री०) उत्-स्था-लुट्। १ कर्ध्वपतन,  
काँचा पड़नेकी हालत। २ उथम, कोमिय। ३ उदय,  
निकास। ४ उत्तति, तरकी। ५ उठाव, उठान।  
६ तन्य। ७ पौरुष, जीर। ८ पुस्तक, किताब।  
९ युद्ध, लड़ाई। १० पुनरुत्थीवन, हथ। ११ त्याग,  
तर्क, छोड़ बैठनेकी हालत। १२ मूल, जड़, निकाम।  
१३ महीतुर्गम। १४ मनरोग, दस्तकी बीमारी।  
१५ हर्ष, खुशी। १६ सैन्य, फौज। १७ बहाता।  
१८ वसिदानकी जाला। १९ सीमा, हद। २० गृह-  
कार्य, घरका काम। २१ विचार, ख्याल। २२ रोगका  
सबिष्ट कारण, बीमारीका मज्दकी सबब। (वि०)  
२३ उठपाने या निकलपानेवाला।

उत्थानवत् (सं० वि०) कार्यार्थ तत्पर, कामके  
झिये तैयार।

उत्थानकादमी (सं० स्त्री०) चान्द कार्तिक कादमी

गुरु एकादशी, देव उठनी एकादमी। सबतक यह  
एकादशी नहीं पड़ती, तबतक धार्मिक हिन्दुओंके  
भोजनमें ऊष, भंडा, सिंघाड़ा प्रभृति चीज नहीं  
चबती। शीघ्र घरकी चन्द्री तरह शीघ्र पीत विष्ट-  
भगवान्की पूजा करते हैं। एकादमी रोजी।

उत्थापक (सं० वि०) १ उत्थापन करनेवाला, जो  
उठाता हो। २ उत्तेजक, होसला बढ़ानेवाला।

उत्थापन (सं० स्त्री०) उत्-स्था-विच्-क्युट्। १ उत्तो-  
लन, उठाव। २ प्रेरण, पहुँचाव। ३ प्रबोधन,  
जगाव। ४ उपस्थितकरण, लगाव। ५ चोमन,  
मड़काव। ६ छाड़ाव। ७ गचितमें प्रयुक्त उत्तर  
निकासना, सवातका जवाब।

उत्थापित (सं० वि०) उत्-स्था-विच्-क्युट्। १ उत्तो-  
लित, उठाया हुआ। २ प्रेरित, भेजा हुआ।  
३ प्रबोधित, जगाया हुआ। ४ चोमित, मड़काया हुआ।  
उत्थाय (सं० ध्ये०) १ उत्तोलन करके, उठाने  
२ चोमन करके, मड़का कर। (वि०) ३ उत्तोल  
जानेवाला, जो जगाने काबिल हो। (वे०) ४ उत्तोल  
किया जानेवाला, जो भेजे जानेके लायिक हो।

उत्थाय (सं० ध्ये०) १ उठकर। २ उत्तोलन  
उत्थायिन् (सं० वि०) उत्तोल करनेवाला, जो  
उठ या निकल रहा हो।

उत्थित (सं० वि०) उत्-स्था-क्युट्। १ उठान  
उपजा हुआ। २ उदय, निकास। ३ उत्तत, काँचा  
सुन्दर। ४ वर्धित, बढ़ा हुआ। ५ उत्तत, जो  
पड़ गया हो। ६ उत्तत, जो उठ गया हो।  
फेंका हुआ। (वे०) ७ उत्तत, जो उठ गया हो।  
८ दग पादह, रक्तमय।

उत्थितता (सं० स्त्री०) उत्तोलन करनेकी  
व्यवस्था, उत्तोलन करनेकी विधि सुन्दरी।

उत्थितवत् (सं० वि०) उत्तोलन करनेकी  
विधि सुन्दरी। उत्तोलन करनेकी विधि सुन्दरी।  
उत्थित (सं० वि०) उत्तोलन करनेकी  
विधि सुन्दरी। उत्तोलन करनेकी विधि सुन्दरी।

उत्थित (सं० वि०) उत्तोलन करनेकी  
विधि सुन्दरी। उत्तोलन करनेकी विधि सुन्दरी।



कृष्णपुष्पमन्त्रः कर्माङ्कनं देवः।

अनुसन्ध ( ४० वि० ) पाठ करके सोच, जो  
पत्राग्रे के कहिये हो ।

मनुष्य (मं. पु.) मनुष्य-पु. । १ हसादिको  
हरणको भेदकर चरण को निवास निवास, पेड़को  
जानको कोषकर निजकले वासा गोष्ठ ।

<sup>१</sup> 'लव वरुणः कः' इति शब्दः लवः वरुणः ।

उत्पलविनाशिन ( सं० वि० ) उद्भूत होते ही चतुः  
पानिपाला, जिसे पेदा होते ही मोत पकड़े ।

उत्पन्ना ( सं० स्त्री० ) मार्गशीर्षके क्षुब्धपक्षकी  
एकादशी ।

उत्पल ( सं० स्त्री० ) १ जलजात जलाविशेष, पानीकी एक  
वेल । इसका संस्कृत पर्याय—पद्म, नल, नलिन, चम्पोज,  
चम्पूज, चम्पूज, यो, चम्पूरुह, चम्पूपद्म, सुजल,  
चम्पूरुह, सारस, पद्मज, सरसीरुह, कुटप, पायो-  
रुह, पुत्कर, बाल, तामरस, कुम्भेय, कञ्ज, कज,  
चरविन्द, गतपद्म, गतदल, विमकुलम, सङ्गपद्म,  
मञ्जीरुपल, वारिरुह, सरसिज, सलिलज, पद्मेरुह,  
राजीव और कमल है । उत्पलको हिन्दीमें कंवल,  
मराठीमें कलवन और तामिलमें चम्पूज कहते हैं ।  
( *Nelumbium speciosum* ) बहु कालसे भारत-  
वासी इसके पुष्पको चलि पवित्र समझते पाये हैं ।  
वेदमें भी "कमलपद्माद्वा" ( तैत्तिरीयसंहिता ७।४।१०१ ) मन्त्र  
मिलता है ।

महाभारतके अनुसार भगवान् की नामिने उत्पल  
और उत्पलसे ब्रह्माका उद्भव हुआ है ।  
"महाभारतकाव्य ब्रह्मसंहिता: उपात्मनः ।  
भ्यामनावे तु भगवन्नाम्ना पद्मः समुत्पिताः ।  
तत्तत्पद्मं चो ब्रह्मा नामिपद्मादितिःकृतः ॥"  
( महाभारत वन १०।१०१-१२ )

प्राच्य-पण्डित थियोफ्रेस्टेसने *Koamus Aegyptios*  
( इजिप्तकी वेल ) और नीलोफर नाम लिखा है ।  
यह जला पमेरिका, कासीय-सागरके तटस्थ  
प्रदेश, भारतवर्ष, पारस्य, चीन और मिस्रमें उपजती  
है । श्वेत और रक्त उत्पल भारतवर्षके अनेक  
स्थान, पारस्य, तिब्बत, चीन और जापानमें मिलता  
है । किन्तु नील उत्पल केवल काश्मीरके उत्तरांग,  
तिब्बतके पश्चिमी गन्धमादन और चीनके किसी  
किसी स्थानमें देख पड़ता है ।

एशियाके मध्य चीन देशमें ही यह अधिक होता  
है । चीना इसका मूल घड़े घेससे खाते हैं ।

उत्पल तीन प्रकारका है—श्वेत, रक्त और नील ।  
श्वेत उत्पलको गतपद्म, महापद्म, सुन्दरीक,  
मिताम्युल, मलै, सरोज, नलिन, चरविन्द और मञ्जी-

रुपल कहते हैं । वैद्यक शास्त्रके मतमें यह शीतल,  
मधुर और कफ तथा पित्तका नाशक है ।

रक्त उत्पलका नाम कोकपद, वृजक, रक्तमन्थिक,  
रक्षोपल, रक्तसरोरुह, रक्षाश, चरुच, कमल, गोपपद्म,  
चरविन्द, रविप्रिय और रक्तशरिज है । वैद्यकके  
मतसे यह कटु, तिक्त, मधुर, शीतल, सत्वर्ण एवं  
वृष्य और पित्त, कफ तथा रक्तके दोषका नाशक होता  
है । किन्तु श्वेतकी अपेक्षा रक्तमें गुण कम है ।

नील उत्पल इन्डोवर, नीलात्पल, मृदुत्पल, कुव-  
लय, नीलावृज, नीलमुत्पल और मट कहलाता है ।  
इसमें रक्तोत्पलसे भी गुण अल्प है ।



उत्पलके वीजकीपका कर्मिकर, मधुका मकरन्द,  
केसरका किष्कसक और नानका नाम ग्रन्थान है ।

यूनानी वैद्योंके मतमें यह तिक्त और शैत्यकारक है ।  
पारस्य देशके नागस्यानोंकी उत्पलका वीज मित्रा  
जाता है । उत्पल पुष्प भारतवर्षीय नाग स्यानोंके  
देवमन्दिर और मोटागमें पूजाके लिये व्यवहृत होता  
है । पूर्वकालमें मिस्रके पश्चिमासी भी उत्पलको  
पवित्र पुष्प समझ पूजामें व्यवहार करते थे ।

२ कुसुदादि, यद्यन्ता वगैरह । ३ कुठोपधि, एक  
वृद्धि । ४ एक जन विख्यात ज्योतिर्विन् । ५ १२५ ईसवी  
५ बौद्ध शास्त्रोक्त मरकत । ( दिवाकरानन्द ६५११ )

उत्पलक ( सं० पु० ) १ वीर्यशरीर, रीतका कूड़ा  
ककट । २ मोनोत्पल, मोना कमल । ३ नागराज  
विशेष ।

उत्पलकन्द ( सं० पु० ) शालूक, कन्द ।  
उत्पलकुण्ड ( सं० पु० ) कुठोपध, एक वृद्धि ।  
उत्पलकेसर ( सं० स्त्री० ) पद्मेसर, कमल की धूलि ।  
उत्पलगन्धि ( सं० स्त्री० ) गोमोय, एक प्रकारका  
चन्दन । यह शीतल केसर और बहुत कुसुदा-  
र होता है ।



उत्पन्नविनाशिन ( सं० त्रि० ) उद्भूत होते ही मृता पानियाला, जिसे पेदा होते ही मीत पकड़े ।

उत्पन्ना ( सं० स्त्री० ) मार्गशीर्षके लक्ष्मणचकी एकादशी ।

उत्पल ( सं० स्त्री० ) १ जलजात लताविशेष, पानीकी एक बेल । इसका संस्कृत पर्याय—पद्म, नल, नलिन, पद्मोज, चम्पूजम्ब, चम्पूज, शो, चम्पूद्वह, चम्पूपद्म, मुजल, चम्पूद्वह, सारम, पद्मज, मरसीद्वह, कुटप, पायोद्वह, पुष्कर, वाल, तामरस, कुशेय, कच्छ, कज, भरविन्द, शतपत्र, शतदल, विजकुसुम, सहस्रपत्र, सहोत्पल, वारिद्वह, मरसिज, सनिलज, पद्मेद्वह, राजेश और कमल है । उत्पलकी हिन्दीमें कंबल, मराठीमें कनवल और तामिलमें चम्पन कहते हैं । ( *Nelumbium speciosum* ) बहु कालसे भारत-वासो इसकी पुष्पकी चति पवित्र समझते पाये हैं । वेदमें भी “कमलाय नमः” ( तैत्तिरीयब्रह्म ३।४।१५ ) मन्त्र मिलता है ।

महाभारतके अनुसार भगवान्की नाभिसे उत्पल और उत्पलसे मछाका उद्भव हुआ है ।  
“भगवानस्य नाभ्यं मछादिनीः समानयः ।  
आमनासे तु भगवन्नाभो यमः सन्निवितः ।  
तत्पद्मं तु श्रीं मछा नाभिपद्मोऽभिपद्मः ॥”  
( महाभारत वन २०१।१२-१६ )

पाश्चात्य-पण्डित खिओफ्रेटसेने *Kuamus Aegyptios* ( इजिप्तीकी बेल ) और नीलीकर नाम लिखा है । यह लता अमेरिका, काश्मीर-सागरके तटस्थ प्रदेश, भारतवर्ष, पारस्य, चीन और सिमरमें लपकती है । ज्ञेय और रत्न उत्पल भारतवर्षके चनेक स्थान, पारस्य, तिब्बत, चीन और जापानमें मिलता है । किन्तु नील उत्पल केवल काश्मीरके उत्तरांचल, तिब्बतके अन्तर्गत गन्धमादन और चीनके किसी-किसी स्थानमें देख पड़ता है ।

पृथिवीके मध्य चीन देशमें ही यह अधिक होता है । चीना इसका मुल बड़े प्रेमसे खाते हैं ।

उत्पल तीन प्रकारका है—रत्न, रत्न और नील । रत्न उत्पलकी शतपत्र, महापत्र, पुष्परीक, गिताम्बुज, नक्ष, सरीक, सन्नि, भरविन्द और सहो-

त्पल कहते हैं । वैद्यक शास्त्रके मतमें यह मीतन, मधुर और कफ तथा पित्तका नाशक है ।

रत्न उत्पलका नाम कोकनट, हलक, रत्नसन्धि, रत्नोपल, रत्नसरीद्वह, रत्नाश, चक्षुष, कमल, मोवपत्र, भरविन्द, रविप्रिय और रत्नधारिज है । वैद्यकके मतमें यह कटु, तिक्त, मधुर, मीतन, सन्तर्पण एवं लघु और पित्त, कफ तथा रक्तके दांपका नाशक होता है । किन्तु खेतकी पसेवा रक्तमें गुण कम है ।

नील उत्पल इन्दोवर, नीलोत्पल, मृदूत्पल, कुवलय, नीलावज, नीलमुत्पल और मद्र कहलाता है । इसमें रत्नोत्पलमें भी गुण चम्पू है ।



उत्पलके बीजकोपका कर्मिकर, मधुका मकरन्द, केसरका किशकक और नानका नाम मृद्यान है ।

यूनानी वैद्यके मतमें यह तिक्त और मीतकारक है । पारस्य देशसे नानास्थानोंकी उत्पलका बीज मछा जाता है । उत्पल पुष्प भारतवर्षमें आना स्थानीके देवमन्दिर और भोटानमें पूजाके लिये व्यवहृत होता है । पूर्वकालमें सिमरके अधिवासी भी उत्पलकी पवित्र पुष्प समझ पूजामें व्यवहार करते थे ।

२ कुसुदादि, यवाना वगैरह । १ कुहोपधि, एक बूटो । ३ एक जन विज्ञान ज्योतिर्विन्तु । अंगद्वय शैवी । ४ बौद्ध शास्त्रोक्त मरक । ( विद्यावसान ७५१ )

उत्पलक ( सं० पु० ) १ सेयसरीप, चीतका कृद्रा कर्कट । २ नीलोत्पल, नीला कमल । ३ नागराज विशेष ।

उत्पलकन्द ( सं० पु० ) शालूक, कन्द । उत्पलकुण्डक ( सं० पु० ) कुहोपधि, एक बूटो । उत्पलकेसर ( सं० स्त्री० ) पद्मकेसर, कमल की पुनि । उत्पलगन्धि ( सं० स्त्री० ) गोमोय, एक प्रकारका चन्दन । यह पीतल जेवा और बहुत कमकुदारा होता है ।



उत्पत्नी ( सं० स्त्री० ) तुल्यवर्ती, मूषीको धपाती या रोटी ।

उत्पत्नीधर ( सं० पु० ) महानदीका तीरवर्ती एक प्राचीन तीर्थ । मगधसे देवी ।

उत्पत्तन ( सं० स्त्री० ) १ प्रावन, सैनाय, वृद्धा ।  
“अथमुत्पत्तनमायः ।” ( मनुस्मृति निषादिनि ३।१४ )

२ यथीय पात्रादिके संस्कारभेद ।

( आध्यात्मन्याय १।१५१ )

३ कुशादि द्वारा कलका उत्प्रेषण ।

उत्पत्ति ( सं० स्त्री० ) १ पावन, पाक । २ पावन करनेवाला, जो पाक साफ बनाता हो । •

उत्पत्ति ( सं० स्त्री० ) कर्धमुत्र, ऊपरकी ओर देखनेवाला ।

उत्पाट ( सं० पु० ) उत्पट-ध्व । १ उत्पात, उखाड़ । २ कर्णरोग विमेष, कानकी एक बीमारी ।

उत्पाटक ( सं० पु० ) कर्णरोगी रोग, कानकी नोकमें होनेवाली एक बीमारी । शुरु प्रारम्भकी संयोग, ताड़न एवं प्रति घर्षणसे कणकी पालीमें जो भोज, दाह और पाकका रोग लगता है उसे उत्पाटक कहते हैं । ( नागरनिदान ) इसमें कान चटचटाया करता है । ( चक्र )

उत्पाटन ( सं० स्त्री० ) उत्पट-विष् भाने लुट् । १ उन्मूलन, उखाड़ । २ वायुजन्म वृणकी एक वेदना, वातसे पैदा होनेवाला दर्द ।

उत्पाटिका ( सं० स्त्री० ) उत्पट-विष्-लुम्-टाप् भूत इत् । १ हृत्को मुख काष्ठ, पैड़का खुराकका । २ उत्पाटनकर्त्री, उखाड़ डालनेवाली ।

उत्पाटित ( सं० स्त्री० ) उत्पट-विष्-लुम्-लित, उखाड़ा हुआ ।

उत्पाटिन् ( सं० स्त्री० ) उन्मूलन करनेवाला, जो उखाड़ डालता हो ।

उत्पाद्या ( सं० स्त्री० ) उन्मूलन करके, उखाड़कर । ( स्त्री० ) २ उखाड़ डालनेके योग्य ।

उत्पात ( सं० पु० ) उत्पत्त भावे धञ् । १ कर्धपतन, उड़ान, उड़ान । २ सट्ट, धात । ३ वधम मुखक धककात् टेषघटना, धातुमौ गुण्य । यह

‘दिध्य, धान्तरीषा और भीम भेदसे तीन प्रकारका होता है । सूर्यशास्त्रादि दिध्य, वस्त्रापातादि धान्तरीषा और भूमिकव्यादि भीम है ।

उत्पातक ( सं० पु० ) उत्पत्त-विष्-लुम् । १ कर्धपतनयोग्य प्रभु विमेष, उड़ान उड़ान कर धननेवाला एक जानवर । इसमें पट पाद होते हैं । “देदीपुलकमङ्गलधामान्तराधाम् ।” ( भात मदी १ व० )

२ तीर्थविमेष । ( भात मदी ) ( स्त्री० ) उत्पत्त-ध्वम् । ३ कर्धपतनयोग्य, उड़ने या उड़ाने वाला ।

उत्पातकेतु ( सं० पु० ) धमद्रक्त चिह्न, घुरा निशान् । उष्कापात, भूमिकव्य और उपद्रवकी पातका निमित्तक उदित धूमकेतु प्रकृति उत्पातकेतु कहते हैं ।

उत्पाती ( सं० स्त्री० ) उपद्रव उठानेवाला, जो धातु डालता हो ।

उत्पाद ( सं० पु० ) उत्पद भावे धञ् । उत्पत्ति, पैदायण, उपज ।

उत्पादक ( सं० पु० ) कर्धस्मिताः पादा यस्य, उत्पद-विष्-लुम् । १ पण विमेष, एक जानवर । घटपादयुक्त गजाराति गरभका नाम उत्पादक है । कार्मीमें इसी हुमा कहते हैं । ( स्त्री० ) २ कारण, मध्य । ( स्त्री० ) ३ उत्पत्तिकारक, पैदा करनेवाला ।

उत्पादन ( सं० स्त्री० ) उत्पद-विष्-लुम् । १ उत्पत्तिकारण, पैदा करनेका काम । ( स्त्री० ) २ उत्पादक, पैदा करनेवाला ।

उत्पादपूर्व ( सं० स्त्री० ) जैग-भासीक १४ पूर्वमें प्रथम पूर्व । पूर्वत ओर नैऋत्य दिशि ।

उत्पादग्रथन ( सं० पु० ) टिट्ठिभ पयो, टिट्ठिरी ।

उत्पादिका ( सं० स्त्री० ) उत्पद-विष्-लुम्-टाप् भूत इत् । १ देहिका नामक कीट, दीमक । २ हिनमोचिका, जरहण । ३ पूतिका, पोष ।

उत्पादिन ( सं० स्त्री० ) उत्पत्त किया हुआ, जो पैदा किया गया हो ।

उत्पादिन् ( सं० स्त्री० ) उत्पत्त करनेवाला, जो पैदा करता हो । समाधानमें इस मन्त्रका अर्थ ‘उत्पत्त किया हुआ’ लगता है ।



उत्पन्न (सं० स्त्री०) उत्पन्-कृट्। १ उत्पन्न, उत्पन्न। २ अभिमन्त्रित कुमादियुक्त वारि द्वारा द्रव्यकी गृहि।

उत्पन्ना (सं० स्त्री०) उत्पन्-कृट्-टाप्। नौका, नाव।

उत्पुन (सं० त्रि०) वल्गित, चकला हुआ, जो एकाएक फांद पड़ा हो।

उत्पुन्य (सं० ध्य०) बलान करके, ऊपर चकलकर।

उत्पन्न (सं० स्त्री०) उत्पन्न फल, उम्दा मेवा।

उत्पन्न (सं० पु०) उत्पन्न-घञ्। लम्क, चकला।

उत्पुन (सं० त्रि०) उत्पन्न-ल, उत्पुनसंपुनयो-रुपसंस्थानमिति निष्ठा, तस्य सः। १ प्रफुल्ल, खिलता, फला। २ स्वीत, सूजा या बड़ा। ३ उत्तान-गय, चित सेटनेवाला। (स्त्री०) ४ स्त्रीन्द्रिय।

उत्परोला—उत्परोला हेनो।

उत्प (सं० पु०) उत्पत्ति जलिन, उत्प-स-कृत्। उत्पत्तिविशेष। उ० ११८। १ प्रसवण, चरमा, भरना २ खात, कुवा। (निष्ठा ११९) ३ उत्तरण, सरकाव। (निष्ठा १०८)

उत्पक्ष्य (सं० त्रि०) उत्पक्ष्ययुक्त।

‘उत्पक्ष्य’ सङ्गिनी उक्त दशा वा उत्पक्ष्यी

(उत्पक्ष्यमार्ग मरीच ११११)

उत्पन्न (सं० पु०) उत्पन्न-घञ्। १ क्रोड़, गोद। २ पर्वतका शिखरदेश, पहाड़की चोटी। (१४ ११) ३ अट्टालिकाका उपरि भाग, छत। (निष्ठा १८) ४ अत्यन्तर भाग, वगल। (इगार ११०) ५ उत्पन्नतल, ऊपरी भक्षिल। ६ वज्रभांग, बाहरी हिस्सा। (१५ १०४) ७ चक्रम, मिलाव। ८ आसिद्धन, इमा-गोगी। ९ एकगत संख्या=विवाह। (मुत्पन्न १५) १० वषट्का भीतरी भाग, जूझका चन्द्रनी दिशा। (पुष्प, ११०) ११ गर्भ, इमल। (भाषा १५ २११८)

उत्पन्नपिडका (सं० स्त्री०) मेखवर्मागत रोगविशेष, आँखके नीचे पयोटेकी फुन्नी। यह मूत्र और कण्डुमत्त होती है। मुखवर्माके अत्यन्तर पड़ता है। वर्ष तास-जैमा होता है। (कण्डु निदान)

उत्पन्न (सं० त्रि०) उत्पन्न-गुण, भिन्ननेवाला। उत्पन्न-हीन, उत्पन्नविषय देखो।

उत्पन्नी (सं० पु०) नाट्यप्रविशेष, फोडा, गहरा जूझ।

उत्पन्न (सं० स्त्री०) उत्पन्न-विष्-कृट्। उत्पन्न संयोजन, उत्प्रेषण, ऊपरकी रहनुमाई।

उत्पत्ति (सं० स्त्री०) उत्प-सद-कृत्। उत्प्रेद, उखाड़, नोचखोटा।

उत्पत्ति (सं० पु०) उत्पत्ती घोरते चय, उत्प-धा, कि। जलप्रवाहगील कूप, जिस कुँवे से पानी बहा करे। (चक्र १८५४)

उत्पन्न (सं० त्रि०) उत्प-सद-ल। १ उच्छिद्य, उछड़ा हुआ। २ गट, बरबाद। ३ अनायासनाथ, आसानीसे बन जानेवाला। ४ अत्यवस्थ, नाकाम। ५ वर्धित, बड़ा हुआ।

उत्पन्नधर्म, उत्पन्नधर्म देखो।

उत्पन्नयज्ञ (सं० पु०) अन्नयज्ञ यज्ञ, जो यज्ञ दक गया हो।

उत्तर (सं० पु०) उत्पन्नविशेष। इसमें पन्द्रह पन्द्रह अक्षरके चार पाद होते हैं। उत्तर अतिमहतीका एक मेद है।

उत्सर्ग (सं० पु०) उत्-सर्ग-घञ्। १ त्याग, तर्क। २ दाग, बख्शिश। ३ सामान्यविधि, सामूची कायदा। ४ न्याय, कानून। ५ सामान्य कर्तव्य क्रियाविशेष। ध्यान, मन्त्रा एवं आचमनादिके बाद प्रथम नारायण, नवपद तथा गुरुको पूजा प्रदान करने पड़ती है। द्रव्यकी वाम दक्षमें रखना चाहिये। दक्षिण दक्षमें तीन बार पूज कर तत्पश्चात्तुष्टि देवताको अन्न-दान करे, फिर कर कुंभ, तिन एवं अन्यथागूर्वक दान दे। इसी क्रियाको वेधोत्सर्ग कहते हैं। ६ मन-मृदादिके त्यागकी क्रिया। (मन १५११)

उत्सर्गतः (सं० ध्य०) साधारणतः, सामूची मोरपर।

उत्सर्गिन् (सं० त्रि०) त्यागो, तर्क कर देनेवाला।

उत्सर्ग (सं० स्त्री०) उत्-सर्ग-कृट्। १ दाग, बख्शिश। २ वेधोत्सर्गद्वय दः आम कर्तव्य वेदिकी





उत्सादन ( सं० स्त्री० ) उत्-सद-विच्-ञ्च् ।  
 १ उत्सारण, सरकाव । २ स्थानान्तरकरण, दूसरी जगह उठा देनेका काम । ( भाष्यमन्त्रोदय १७।१० )  
 ३ उदहन, उठाव । तैसादि द्वारा परिमोधनको उत्सादन कहते हैं । ४ विनाशन, बरबादी । ५ उन्मूलन, उखाड़ । ( भारत, ५१ १०९ पं० ) ६ महावीरादि परित्याग देय, बहादुरीका कोड़ा हुआ मुक्त ।  
 ७ उत्सव, जलसा । ८ समुल्लेखन, खिंचाव । ९ निवृत्तयका समतीकरण, नौके जूझमकी समारनेका काम । १० चेतका सम्यक् कर्षण, चेतकी खासी जोताई । ११ तैसाभ्यङ्ग द्वारा शुद्धीकरण, तेल लगा सफाई करनेका काम ।  
 उत्सादनीय ( सं० वि० ) १ नष्ट किया जानेवाला, जो बरबाद किये जानेके काबिल हो । २ पूर्ण करने योग्य, पक्काम देने लायक । ३ चढ़ा जाने योग्य । ( स्त्री० ) ४ प्रतीयव विग्रह, जूझमपर लगा-नेकी एक दवा । इससे घाव भर जाता है ।  
 उत्सादि ( सं० पु० ) उत्स-पादि । उत्सादिभ्याम् । १।३।१८ पाणिनिका कड़ा एक गण । इसमें निम्न-लिखित शब्द पड़ते हैं—उत्स, उदपान, विकर, विनद, महानद, महानस, महाप्राण, तरुण, तलुन, धृष्यनी, धेत, पंक्ति, जगती, त्रिष्टुप्, चतुष्टुप्, जनपद, भरत, उगीनर, घीघ, पौतुकुष, वृषदंम, भल्लकीय, रघन्तर, मध्यन्दिन, उहत्, महत्, सत्यत्, कुव, पञ्चान, इन्द्रावसान, उष्यह, ककुभ, सुवर्ष, देव ।  
 उत्सादित ( सं० वि० ) उत्-सद-विच्-ञ्च् । १ उन्मूलित, उखाड़ा हुआ । २ उदहर्तित, ऊपरको उठाया हुआ । ३ परिष्कृत, साफ किया हुआ ।  
 उत्सादितव्य ( सं० वि० ) नष्ट किये जाने योग्य, जो बरबाद किये जानेके काबिल हो ।  
 उत्सारक ( सं० पु० ) उत्-स-विच्-ञ्च् । १ हार-पाल, दरवान् । २ प्रहरी, चौकीदार । ( वि० ) ३ चपकारक, उठानेवाला ।  
 उत्सारण ( सं० स्त्री० ) उत्-स-विच्-ञ्च् । १ दूसरी-करण, उठा देनेका काम । २ चतुष्टिका सागन, निहमान्की पैगवाई ।

उत्सारित ( सं० वि० ) उत्-स-विच्-ञ्च् । १ दूसरी-छत, उठाया हुआ । २ चालित, मरकाया हुआ । ३ स्थानान्तरित, दूसरी-जगह पहुँचाया हुआ ।  
 उत्साह ( सं० पु० ) उत्-सह-ञ्च् । १ उद्यम, कोशिश । २ प्रयत्नसय, इस्तकामस । ३ स्थिर-यत्न, पकी तदवीर । ४ वीरमका स्थायी भाव, दृढियत, होसला । “उत्साहवर्धनं उत्साहः उत्साहवर्धनः ।” ( भाष्यवर्धन ) ५ राजाका गुणविशेष, बादशाहका एक वस्त्र । “कारेभ्योनाहरोदेन विपरीतं च वर्धमानः ।” ( मनु ८।१८६ )  
 ६ कन्याप, भन्ना । ७ सुख, धागा । ८ दर्प, झुमी । ९ संरम्भ, युद्ध । १० उद्गीतमाफोत प्रयुक्त विग्रह । इसका लक्षण हाथरम, केन्दुकताम घोर वंगहृदिकर तयोदयाचर पाद है ।  
 उत्साहयुक्त ( सं० पु० ) गरम, हुमा ।  
 उत्साहवन् ( सं० वि० ) उद्यमी, दृढ़, होमसेमन् ।  
 उत्साहवर्धन ( सं० स्त्री० ) उत्साह-वृध्-ञ्च् । १ उद्यमवृद्धि, होससेमन्दी । २ वीरत्व, बहादुरी ।  
 उत्साहसम्पय ( सं० वि० ) कार्यरत, होससेमन्, काममें लगा रहनेवाला ।  
 उत्साहन ( सं० स्त्री० ) चेष्टा, इदता, कोशिश, मन्त्र ।  
 उत्साहिन ( सं० वि० ) उत्साह रखनेवाला, होमसेमन् ।  
 उत्साही ( सं० पु० ) भडारोगी, खानेका बीमार ।  
 उत्सिंहन ( सं० स्त्री० ) नामा द्वारा ऊर्ध्व ग्रासका धारण, नाकमें ऊपरी घांसकी रोक ।  
 उत्सिक्त ( सं० वि० ) उत्-सिच्-ञ्च् । १ रघित, मगधन, धमण्डी । २ रघित, बड़ा हुआ । ३ उद्गिर, फेंका या चाली किया हुआ । ४ उदहन, उठा या उठा हुआ । ५ प्रावित, दुबा हुआ ।  
 उत्सिध्यमान ( सं० वि० ) १ जनकी भद्रो लगानेवाला, जो पात्री बरसाता हो । २ हृदिमोल, बदनेवाला ।  
 उत्सिद्यु ( सं० वि० ) उत्स-विच्-ञ्च् । १ उत्स-विच्-ञ्च् । २ उत्स-विच्-ञ्च् । ३ उत्स-विच्-ञ्च् ।  
 उत्सुक ( सं० वि० ) उत्-स-विच्-ञ्च् । १ उत्स-विच्-ञ्च् । २ उत्स-विच्-ञ्च् । ३ उत्स-विच्-ञ्च् ।



४ ऊर्ध्वगमनशील, ऊपरकी घूमा हुआ। ५ उपरिष्ठ, ऊपरवाला। ६ उत्तरस्थ, गिमासी। ७ अन्तः, बाहिरी।

उदक ( सं० स्त्री० ) उन्दो कंदने उन्द कन्। उदक्य। उ० ३२६। १ जल, पानी। जन शब्दो। २ करि-शब्द, हाथी बांधनेकी लप्रीर।

उदककार्य ( सं० स्त्री० ) १ जल द्वारा किया जाने-वाला एक धार्मिक कार्य। २ देहशुद्धि, निष्कामी सफाई। ३ मृतके चर्य ज्वन।

उदककुम्भ ( सं० पु० ) जलघट, पानीका घड़ा।

उदकक्रिया ( सं० स्त्री० ) शास्त्रविहित जलादि द्वारा तर्पण। तर्पण शब्दो।

उदकक्षीड़न ( सं० स्त्री० ) जलविहार, पानीका खेल।

उदकक्षेत्र ( सं० पु० ) व्रत विमेष। इसमें एक मास पर्यन्त केवल ययका मत्त खाते और जल पीते हैं।

उदकगाह ( सं० पु० ) जल प्रवेश, पानीमें दखन।

उदकगिरि ( सं० पु० ) जलप्रवाहयुक्त पर्वत, नदी मानिसे भरा हुआ पहाड़।

उदकदत्त ( सं० द्वि० ) १ जल प्रदान करनेवाला, जो पानी देता हो। ( पु० ) २ उत्तराधिकारी, वारिस, जो पितरकी पानी दे सकता हो।

उदकदाह, उदकद शब्दो।

उदकदान ( सं० स्त्री० ) उदकक्रिया शब्दो।

उदकदानिक ( सं० द्वि० ) तर्पण सम्प्रयोग।

उदकधर ( सं० पु० ) जलधर, बादल।

उदकना ( द्वि० स्त्री० ) ऊपर उठ आना, निकल जाना।

उदकपरीक्षा ( सं० स्त्री० ) विवाहादिके समयपर भौतिक प्रमाण न मिलते लज्जामृन्नादि द्वारा मययका कराना।

उदकपर्वत, उदकगिरि शब्दो।

उदकपूर्वक ( सं० अम्य० ) महात्पपूर्वक, दान या धन लेनेके लिये दायपर पानीको डालकर।

उदकप्रसेप ( सं० स्त्री० ) जलके भीतीकरपका

उपाय, पानी ठण्डा करनेकी तदबीर।

उदकप्रतीकाम ( सं० द्वि० ) असप्रभ, पानी-प्रेम।

उदकप्रमेह, उदकमेह शब्दो।

उदकमार ( सं० पु० ) बलका युग, पानी से जानेकी कड़ी।

उदकभूम ( सं० पु० ) भारंस्थली, तर जमीन।

उदकमष्टिका ( सं० स्त्री० ) जलके प्रसाधनाय एक पाधार, पानी रखनेका पट्टा।

उदकमन्त्ररीरस ( सं० पु० ) निरामज्वरका एक रस, पके हुए बुधारकी एक दवा। एक एक भाग धारा, गन्धक, सोडागीकी फूली और मरिच तथा चार भाग शर्कराको २४ प्रहर बार बार भावना देनेसे यह रस बनता है। फिर शर्कराके स्थानमें मन्त्रगिमा डालनेसे चन्द्रगीपूररस निकलता है। ( श्रीदशरथरस )

उदकमण्डल, उदकत्रय शब्दो।

उदकमन्य ( सं० पु० ) निष्त्वर्धोभूत गन्ध विमेष, एक चनाज। इसका क्षिणका उत्तरा रहता है।

उदकमेह ( सं० स्त्री० ) कफोत्प मेह विमेष, बल-गमसे पेदा हुआ जिरियान्। इसमें चण्ड, बलुमिन्, भीत, निर्गन्ध, उदकोपम और किञ्चित् चाबिस पिच्छन मेह रहता है। ( नाचर विज्ञान )

उदकमेहन्त ( सं० द्वि० ) उदकमेहका रोगी, जिसके बलगमका जिरियान् रहै।

उदकवष ( सं० पु० ) गर्जित वृष्टि, कड़कझाड़की बारिश।

उदकज, उदकत्रय शब्दो।

उदकजल ( सं० द्वि० ) जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ।

उदकविन्दु ( सं० पु० ) जलका जल, पानीका बूँद।

उदकवहस्रोत ( सं० स्त्री० ) जलवह गाड़ी, पानी चरनेकी गस। ये दो होते हैं। मूल तालु और चपर-क्षोममें हैं। ( शुक्ल शरीरम्पार )

उदकवहा ( सं० स्त्री० ), उदकवह शब्दो।

उदकवीर्य, उदकवार शब्दो।

उदकमाक ( सं० स्त्री० ) जलमाक, पानीमें पेदा होनेवाली मछरी।

उदकशान्ति ( सं० स्त्री० ) जलद्वारा पुरका निवाप, पानीसे बुधार बुझानेका काम। इसमें विभिन्नोचित जल रोगीपर बिड़कने है।

उदकघटपलघट (सं० स्त्री०) चर्मरोगका घृत-  
विषय, बगमोरको बीमारोका एक घी। यमवार,  
दियभोगमूल, चर्षा एवं नितक एक एक-पल से कष्ट  
बनये और ४ ग्राहक तिनका तैल तथा १२ ग्राहक  
दुग्ध जान ४ सेर घृत पकाये। इस घृतसे प्थर, चर्म, प्रोधा  
और कामका रोग नष्ट होता है। (चक्रपञ्चरत्न चर्षा)  
उदकघट (सं० पुं०) चाट्टीकृत पिष्टगालि, पानीसे  
तर किया हुआ मत्त।

उदकस्वर्ग (सं० स्त्रि०) १ जनसे ग्रहीके विभिन्न  
चक्षुस्पर्ग करनेवाला। २ प्रतिष्ठाकी मूर्तिके निचे  
जनकी छुनेवाला।

उदकहार (सं० पुं०) जनवाहक, पानी से जानेवाला।  
उदकाला (सं० स्त्री०) जनका लट, पानी या दरयाका  
किनारा।

उदकादिन् (सं० स्त्रि०) दधित, प्यासा, पानी मांगने-  
वाला।

उदकाहार (सं० पुं०) जनका आकर्षण, पानी  
पौंचनेका काम।

उदकिका (सं० स्त्री०) बनावानम रुप, बरियारी,  
गुनमकरी।

उदकिल, उदकन दीधी।

उदकी (सं० स्त्री०) पाठा, पारी, हरणोरी।

उदकीर्ण (सं० पुं०) मझाकरघ्न, बड़ा करीदा। यह  
पानीमें होता है।

उदकीर्ण, उदकीर्ण दीधी।

उदकीर्ण (सं० स्त्री०) मूलीकरघ्न, करघ्न।

उदकुम्भ, उदकुम्भ दीधी।

उदकेधर (सं० स्त्रि०) जनधर, पानीमें रहने या  
चमने-किरनेवाला।

उदकेविमोर्ण (सं० स्त्रि०) जनमें गुच्छीभूत, पानीमें  
गुगा हुआ। यह शब्द उपमाको भांति पचपच  
विषयके सिधे भाता है।

उदकीदधन, उदकुम्भ दीधी।

उदकीदर (सं० पुं०) जलीदरनाम रोग। उदर दीधी।

उदकीदन (सं० पुं०) जनके साथ पकेवालि, पानीमें  
उबाला हुआ चावल।

उदक (सं० स्त्रि०) उद-पञ्च-म। १ रूपसे जनो-  
मित, कुंघेने निकाला हुआ। २ उलित, उठा या बढ़ा  
हुआ। ३ मेरित, पड़बाया हुआ। ४ कवित,  
कहा हुआ।

उदकान्ता (सं० च्य०) उत्तरकी ओर, गिमावकी तरफ।

उदकपय (सं० पुं०) उत्तरीय देग, गिमावकी मुख।

उदकप्रवेच (सं० स्त्रि०) १ क्रमयः दक्षिणसे उत्तरकी  
निध, सिधमिलेवार जनधम गिमावकी ठना हुआ।  
(आचार्यकीदृष्ट ११११११) २ उत्तरमागमासी, गिमावकी  
राधसे जानेवाला।

“उदकप्रवेचो यतो दक्षिणत उदा भवति।” (भाष्योत्तर १. १. १८)

“उदकप्रवेचः उत्तरमागं गति ईदृशः।” (भाष्य)

उदक (सं० स्त्रि०) उदकमर्षति, उदक-य। १ उत्तरी-  
यः। वा ११११११। १ जनमें होनेवाला। २ जनघानार्थ,  
पानीमें धोया जानेवाला। (पुं०) ३ जनयोय मोक्षि-  
प्रभृति, पानीमें उपजनेवाला पनाम वगैरेह।

उदक्या (सं० स्त्री०) उदक संज्ञाया यत्-टाप्।  
दिवसिनी वत्। वा ११११११। रजस्रजा, जो औरत कपड़ोंमें  
हो। “मोक्षप्रदिवसिनी वत्” लब्धेवप्रागः। (मृ०)

उदगद्गि (सं० पुं०) १ उत्तरीय पर्वत, गिमावकी पहाड़।  
२ हिमालय।

उदगयन (सं० स्त्री०) उत्तरायण, सूर्यके दक्षिणसे  
उत्तरकी ओर मुकनेका समय।

उदगरना (हिं० स्त्रि०) १ उदगारण होना, भीतरसे  
बाहर निकलना। २ मकाय पाना, गुन जाना।  
३ उल्लिखित होना, तैल पड़ना।

उदगगल (सं० पुं०) दक्षिणके स्थानविनिधम जनका  
अनुमन्त्राण, पानीका पता। यह पद ज्योतिषमन्त्राणीय  
विद्या है। इसमें समझ सकते हैं—किन्तु स्थानपर  
क्रियता महरा खोदनेसे पानी निकलेगा।

उदगारना (हिं० स्त्रि०) उदगार करना, दिखाने  
जानना।

उदग (हिं०) उत्तर दीधी।

उदगद्ग (सं० स्त्री०) उदक उत्तरा दगा दक्ष।  
१ उत्तरायणवत्, कपड़का जो दिगारा गिमावकी तरफ  
मुका रहे।

उदग्भूम (सं० पु०) उदक् उन्नता भ्रमन्ता वा भूमिर्यत्र, उदक्-भूमि-पच् । “अथोदग्भूम्या भूमिरुच्यते ।” (वा ३।३।७३ एते विज्ञानबोहरी) उतकृष्ट भूमि, वदिया जमीन ।

उदय (सं० त्रि०) उत-पय । १ उच्च, ऊँचा । २ वृद्ध, बृद्ध । ३ उदय, पक्व । ४ दीर्घ, बड़ा । ५ विमाल, पानीयान् । ६ महत्, बज्जीम ।

उदयदत् (सं० पु०) उद-पय-दत् । पयानुदयपय-वर्णनय । वा ३।३।७३ । १ उदयदत्तस्त्री, बड़े दांतोंका । २ (त्रि०) २ उदयदत्तयुक्त, ऊँचे दांतोंवाला । उदधाम (यै० पु०) उदकघाही मेघ, पानी रखनेवाला वादल । “अथोदधामस मकरध्वजः ।” (चङ् ७८७।३)

‘उदकधामसुदधामादिर्ध्वज इत्यम् ।’ (भाष्य)

(त्रि०) २ लनघाही, पानी रखनेवाला ।

उदघटना (हिं० त्रि०) निकलना, खुलना ।

उदघाटना (हिं० क्ति०) उदघाटन करना, खोल देना ।

उदह (सं० पु०) उत्-पन्च-घञ् । १ चर्ममय छतादि पात्र, कुप्पा, घी तेल वगैरह रखनेको चमड़ेका घर-तन । २ मन्दंग, चिमटा या सम्पी । “उदोदहवर्ष्णां कलानामवसिम्भिनः ।” (भट्टि) ३ एकजन ऋषि । (अपवचनाङ्क १।३।१०१)

उदधुख (सं० त्रि०) उदक् उत्तरस्थो मुखमस्य । उत्तरमुख, जो मुखको शिमानकी तरफ मुकाये हो ।

उदधुक्षिप्त, उदग्भूमि-देशी ।

उदधमस (यै० पु०) उदकस्थायनयोग्य चमसाकार एक पात्र ।

उदधव्या—एक देवी । बम्बई प्रांतीय धारवाड़ जिलेके अदरङ्ग, घी ताहूकमें डीरेडखी ग्राममें खोडीग लृप-तिका जो शिवालियि निकली, समके पृष्ठपर इन देवीकी मूर्ति बनी है ।

उदज (सं० पु०) उत्-पञ्च पशुविषयके धातुर्ध्व पय । अश्वतोषः पशु । वा ३।३।८८ । १ पशुपरेष, मवेमियोंकी हकार । (त्रि०) २ जलघात, पानीसे पैदा ।

उदजन—Hydrogen हादीम्य देशी ।

उदह (सं० त्रि०) १ ऊपरि गमनकारो, ऊपरको

धूमा दृष्या । २ उपरिष्ठ, ऊपरवाला । ३ उत्तरकी ओर धूमा दृष्या, शिमासी । ४ पयात्, दिहा ।

उदधन (सं० स्त्री०) उत्-पञ्च भाषे लृट् । १ ऊर्ध्वक्षेपक, ऊपरको फेंकफाँड । २ उदगमन, चढ़ाई, उठान । ३ पाष्ठादन, टक्कन । ४ घटीयन्त्र, डोल । (त्रि०) कर्तारि लृट् । ५ उत्क्षेपक, ऊपर फेंकनेवाला ।

उदधित (सं० त्रि०) उत्-पञ्च-लृट् । १ उत्क्षिप्त, फेंका या ऊपर उठाया हुआ । २ पूजित, पूजा हुआ । ३ ऊर्ध्वगत, चढ़ा हुआ ।

उदधुनि (सं० त्रि०) इधेनियोंकी गहराकर हाथ उठानेवाला ।

उदधु (हिं०) उदध् देशी ।

उदधुपाल (सं० पु०) १ मत्स्यविशेष, एक मछली । यह पण्डेसे निकलते ही भागती है । २ मर्षविशेष, किसी किसका नाव ।

उदधुपुर (सं० स्त्री०) १ मगध । २ विशारनगर । यह नाम प्राचीन शिवालियिमें मिला है ।

उदय (हिं० पु०) सूर्य, प्राकृत ।

उददान (सं० त्रि०) जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ ।

उदधा (सं० स्त्री०) उत्-पद यादुनयात् यत् । तेलपायिका, तिलपट्टा ।

उदधि (सं० पु०) उदकानि धोयन्तोऽपिन्, उद-धा-कि । देव वाचपादवर्षिषः । वा ३।३।८८ । १ मसृष्ट, बहुर । २ तट, किनारा । ३ मेघ, बादल । ४ सूर्य, प्राकृत । “अथेव दिव्यमृत्तिर्निधिः ।” (आरधनेयन विना २५।११) ५ घट, घड़ा । ६ लमाग्रय, तात्ताव । ७ ऊद, भोजन । (यै० त्रि०) ८ जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ ।

उदधिक (सं० पु०) मसृष्टकेन, बहुरका बहगम । उदधिकुमार (सं० पु०) जेन-शांभातुसार देवीके जो प्यतर, ज्योतिषी, भवनवासी और वैमानिक ये चार भेद बतलाये हैं, उनमेंसे भवनवासियोंका एक भेद । उदधिकुमार देव पणोनोंकी रसप्रभा नामक इन्की खर भागमें रहते हैं । वहाँ इनके भवनीकी मंदा बहुरका वास है । उदधट् पादुकावट्ट पञ्च है ।

एव देशी । कामादिक शरीरकी अर्थात् दम

इमके मासमिह भाग कुमारीसे हीति है इसलिये  
कुमार नाम पड़ा है।

उदधिक्रम, उदधिक्रमः।

उदधिका (ये० पु०) उदधिक्रम-विट्। समुद्राक्रम-  
कतां, बहर पर महर करनेवाला।

उदधिमेषमा (मं० स्त्री०) पारो दिक् मागरे  
धेहिमि हयिमी, बहरमे चिरो हरे ममोन्।

उदधिराज (मं० पु०) मदीका राजा समुद्र।

उदधिमन्त्र (मं० स्त्री०) मासुद्र मन्त्र, बहरी मन्त्र।

उदधिराजा, उदधिराजा देवाः।

उदधिराजि (मं० स्त्री०) मुहान्काट, बहरी मीप।

उदधिमन्त्र, उदधिमन्त्र देवाः।

उदधिसुत (मं० पु०) उदधिके पुत्र। चन्द्र, चमत्,  
ग्रह चौर, दमन उदधिके पुत्र हैं।

उदधिसुता (मं० स्त्री०) समुद्रकी कन्या। जप्ता  
चौर धारकाकी उदधिसुता कहते हैं।

उदधिय (मं० स्त्री०) मासुद्र, समुद्रजात, बहरी।

उदन् (मं० स्त्री०) बहरीमास, उदितवन्बहरीमासवन्बहरीमा-  
सवन्बहरीमास। वा ११।१११। इति सूत्रे उदकस्य उदनादेयः।  
उदक, पानी।

उदनिमत (ये० स्त्री०) तरङ्गमय, जिसमें बहरे उठें।

उदन्ता (मं० पु०) १ पानी, वात। २ समाचार,  
सुवर। ३ माधु, पाकमाफ, चादमी। ४ उत्तिवाजन,  
रोजगारमें काम चलानेवाला। (स्त्री०) ५ किसी  
मनुष्य पत्नी तक पहुँचनेवाला। (हिं० स्त्री०) ६ दन्त-  
चोरा, बहाग, जिसके दाँत न निकलें। यह ग्रन्थ पयके  
निये जाता है।

उदन्ताक (मं० पु०) उदन्त ग्राह्ये जन्। मंगल,  
सुवर।

उदन्तिका (मं० स्त्री०) उदन्त-निष्-स्व-स्-टाप्।  
मृति, पायुकी, लकाट।

उदन्ता (मं० स्त्री०) मीमांसे पर रहनेवाला, जो  
ब्रह्मके सम तर्क रहता हो।

उदन्ता (ये० स्त्री०) लक्षमय, पानीसे भरा हुआ।

उदन्तान (ये० स्त्री०) लक्षमें उपवने या रहनेवाला।

उदन्ता (मं० स्त्री०) उदन्तित उदकमिच्छति,

अथगोदकमिच्छति। वा ११।११। इति मन्त्र  
मन्त्रये परे पार्थ मिश्रान्ते। १ विवाता, ध्यातः वेदे  
माह्निकात् पारम्। २ जलानयन, पानीका मना।  
३ लक्षमयस्त्री, पानीसे सरोकार रहनेवाली।

उदन्ता (ये० स्त्री०) उदन्त-उत्। जलेशु, विवात,  
पानी टूटनेवाला। "अथ मन्त्रेऽथानुप्रासः" (अथ ११।११)  
'उदन्तः उदकमिच्छति' (वाचस्पति)

उदन्तान, उदन्तान देवाः।

उदन्ताम् (ये० पु०) उदकानि मन्दत, उदक-मन्त्र,  
मन्त्र वाः। उदन्त-मन्त्रो वा। वाचस्पतिः। १ समुद्र, बहरी।  
"अथ मन्त्रेऽथानुप्रासः" (अथ ११।११) २ अविनिमित्त।

(स्त्री०) ३ उदकयुक्त, पानी रहनेवाला। (अथ ११।११)

उदय (मं० स्त्री०) पानीकी पार करनेवाला।

उदयर्णी (मं० पु०) कुपान्यविमिय, एक पुराव चलाज।

उदयात्, (मं० स्त्री०) जलपूर्ण पात्र, मांटा।

"जितान्तादयम्" वा दन्तुव निधिर्बन्धम्। (अथ ११।११)

उदयान (मं० पु०-स्त्री०) उदकं पोषतेऽनेति, उदक-  
पा पधिरने सुवट्। १ कूप, कुवा।

"वाचस्पति उदयाने वनेऽथ मन्त्रोदयः।

वाचस्पति मन्त्रेऽथानुप्रासः" (अथ ११।११)

२ जलमण्डप।

उदयानमण्डप (मं० पु०) कूपका मण्डप, कुवेदा  
मण्डप। यह मण्डप सम व्यापित्तिये जाता है, जो  
चतुर्भुजगुण होता और मन्त्रेऽथानुप्रास पदार्थ विषय नहीं  
समझता।

उदय (ये० स्त्री०) लक्षमें पानी यदि करनेवाला,  
जो पानीसे पाकमाफ बना हो।

उदयय (मं० स्त्री०) १ जलपेय, गुमेर, लेही, गारा।  
(अथ ११) २ लक्षमें पीत कर, पानीमें रगड़क।

उदयन्त (ये० स्त्री०) लक्षमें पत्थर करनेवाला,  
जो पानीमें सेरता हो।

उदयन्त, उदयन्त देवाः।

उदयन (हिं० स्त्री०) १ मृग, गुना। २ लक्षान्तरित,  
किसी लक्षमें बटाया हुआ, जो गारा मारा करता हो।

उदयमना (हिं० स्त्री०) १ लक्षान्तरित करना, किसी  
लक्षमें निकाल देना। २ मृगकरण, गुना बनाना।

उदभर ( हिं० ) उदर देखो।  
 उदभय ( हिं० ) उदर देखो।  
 उदभार ( सं० पु० ) मेघ, बादल।  
 उदभीत ( हिं० पु० ) पायरे, ताज्जुब, घनीबी बात।  
 उदमन्य ( सं० पु० ) १ उदकप्रधान मन्त्र, पानीकी मधानी। २ जलानीहित मष्टत मनु, चो और पानीका मनु। इति श्रीभर्मे सेवन करना चाहिये। (भाष्यभाष्य)  
 उदमदना ( हिं० क्रि० ) उन्नत होना, पागल बनना।  
 उदमन्य ( सं० पु० ) यथा जल, औका पानी।  
 उदमाद ( हिं० ) उदर देखो।  
 उदमादी ( हिं० वि० ) उन्नत, मतवाला।  
 उदमान ( सं० पु० ) १ वारिके मानका आठक।  
 यह ४०८६ भागीका होता है। (हिं० वि०) २ उन्नत, मतवाला।  
 उदमानना ( हिं० क्रि० ) उन्नत होना, पागल बनना।  
 उदमेघ ( सं० पु० ) १ जलशुद्धि, पानीकी भङ्ग।  
 उदस्वर ( सं० पु० ) १ गरीरज कृमिका एक भेट, जिधमें पैदा होमेवाला एक कीड़ा। कृमि देखो। २ तान्त्र, ताबा।  
 उदय ( सं० पु० ) उदयन्ति चन्द्रसूर्यादयो पश्चा यस्मात्, उत्पन्न-पक्ष। १ पूर्वपर्वत, उदयाचल।  
 “उदित उदयगिरि मधुर १५५५ कल्पना।  
 दिक्की मूल शरीर वन हरे लोचन यह” (गणेश)  
 २ समुन्नति, उरुज, उठान।  
 “उदय तापु विमुचयनय भाषा।” (गणेश)  
 ३ मद्राज, भनाई। ४ दीप्ति, चमक। ५ प्रावि-  
 भाय, निकास। ६ हृदि, बढ़ती। ७ लाभ, फायदा।  
 ८ फलसिद्धि, कामयाबी। ९ मज्ज, पहचानका प्रकाश।  
 शरीरि मन्त्र यह उदयका निरूप देखो। १० भावो उत्प-  
 र्णोपेक्षी सतम पर्यन्त, उदयाग्र। यह याज्ञिकके पुत्र और शास्त्रमुनिके मित्र थे। (वि०) ११ व्याक-  
 रणमें—पद्यादुगासी, वीरि पहनेवाला।  
 उदयगढ़ ( हिं० पु० ) उदयाचल।  
 उदयगिरि—दाक्षिणात्यका एक घाम। यह पहचमद-  
 नगरसे १६० मील दूर है। १०६० ई०को मराठोंने

यहां निजामकी फौजपर आक्रमण मारा था। निजामके हारनेपर मन्त्रि दुरे। दीनताबाद, निघर, अमीरगढ़, तथा विशापुरका किना, पहचमदनगर और विशापुर विदर एवं औरंगाबाद प्रान्तका अधिक भाग मराठोंके हाथ लगा। वर्तमान पहचमदनगरके समग्र प्रान्त और नासिकके कुछ भागपर भी उनका अधिकार हो गया था। उग्रवाक सेनापति मदागिर रावने वही यीरता दिखाई दी।

उदयगिरि—उड़ीसा प्रान्तके पूर्वी जिलेका एक पर्वत। यह सामान्य जनपथमें खण्डगिरिमें स्तम्भ है। अति पूर्वकालमें (प्रायः १०० ई०के पहले) उदयगिरि अपनी पवित्र गुहाओंके लिये प्रसिद्ध है।

रानीहंसपुर, मधेय, स्वर्गपुरी, भजन, जया, विजया, चनन्त, हस्ति, पवन और व्याघ्र-गुफा हो प्रधान हैं। सङ्गन गुहापर्वमें पर्वत तोड़ गड़ाई बने हैं। प्राक्कल यद्यपि इनकी चट्टानें नितान्त मन्द हो गई, अनैकाग्रमें गड़ाई बिगड़ गये और सकल स्थानोंमें व्याघ्र-भङ्ग रहने, तो भी बोध होता है—पूर्व-कालपर उग्र सकल गुहापर्वमें बोधधर्मावतरी यति तथा सन्नायो रहा करते थे। अनेक गुहा महाराम नाममें विख्यात थीं। इन्हीं देवनेके लिये पहले कितने ही बोधवासीयहां आते थे। ई०के ८म शताब्दीमें चीनपरिव्राजक युचनसुयह यहां पहुंचे थे। उन्होंने गुणगिरि नामक महारामकी बात लिखी है। युच-मान है—यह महाराम उदयगिरिके ऊपर या पास ही रहा होगा।

२ अन्य एक पर्वत। यह बैरागरीमें एक कोण दक्षिण-पश्चिम और सांघीमें दूर कोण दूर पश्चि-  
 स्थित है। उदयगिरि एक मोल विख्यात है। इसमें अनेक मूर्ति खुदी हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी मूर्ति उपर हैं। एक स्थानमें स्वर्गी गङ्गा और युमुनाके चतुरणका दृश्य है। इन्द्रका कारकाय अति चमत्-  
 कारी है। लहा गङ्गायुमुनाकी धार हस्तिपौर चर्ममें पड़ी, वहां समग्र देवोंकी मज्जावाहना और कर्मवाहना मूर्ति बनी है। अथर्वनिह हिन्दू तोपेंदमेंकी आते हैं। इस पर्वतमें चन्द्रगुप्त (२य) शासक १०१ गुप्तकालका



इनके मानसिक भाव कुमारोंके होते हैं इसलिये कुमार नाम पड़ा है।

उदधिक्रम, उदधिका देखो।

उदधिक्षा (वे० पु०) उदधि-क्रम-विद्। समुद्राक्रमण-कर्ता, बहर पर सफ़र करनेवाला।

उदधिमखला (सं० स्त्री०) चारो दिक् सागरसे घेष्टित पृथिवी, बहरसे घिरो हुई ज़मीन।

उदधिराज (सं० पु०) नदीका राजा समुद्र।

उदधिलवण (सं० स्त्री०) सामुद्र लवण, बहरी नमक।

उदधिमखला, उदधिमखला देखो।

उदधिशक्ति (सं० स्त्री०) मुक्तास्फोट, बहरी सीप।

उदधिसम्भव, उदधिसम्भव देखो।

उदधिसुत (सं० पु०) उदधिके पुत्र। चन्द्र, अमृत, शङ्ख और कमल उदधिके पुत्र हैं।

उदधिसुता (सं० स्त्री०) समुद्रकी कन्या। लक्ष्मी और द्वारकाकी उदधिसुता कहते हैं।

उदधीय (सं० त्रि०) सामुद्र, समुद्रजात, बहरी।

उदन् (सं० स्त्री०) पद्मोमास उद्भिः समुद्रस्योदयकाले दन्ता-यन्त्र प्रयतिः। पा ६।१।६३। इति सूत्रे उदकस्य उदनादेशः। उदक, पानी।

उदनिमत् (वे० त्रि०) तरङ्गमय, जिसमें लहरें उठें।

उदन्त (सं० पु०) १ वार्ता, बात। २ समाचार, खबर। ३ साधु, पाकसाफ़ आदमी। ४ वृत्तियाजन, रोज़गारसे काम चलानेवाला। (त्रि०) ५ किसी वस्तुके अन्त तक पहुँचनेवाला। (हिं० वि०) ६ दन्त-ह्वन, वेदांत, जिसके दांत न निकले। यह शब्द पशुके लिये आता है।

उदन्तक (सं० पु०) उदन्त स्त्राघं कन्। संवाद, खबर।

उदन्तिका (सं० स्त्री०) उदन्त-णिच्-खल्-टाप्। हत्ति, आसुदकी, छकाइट।

उदन्त्य (सं० त्रि०) सोमाके परे रहनेवाला, जो हृदके उस तर्फ़ रहता हो।

उदन्त्य (वे० त्रि०) जलमय, पानीसे भरा हुआ।

उदन्त्यज (वे० त्रि०) जलमें उपजने या रहनेवाला।

उदन्त्या (सं० स्त्री०) उदन्त्यति-उदकमिच्छति,

अथवापीदयमभावात्सुखापिपासायेति। पा ७।१।७। इति क्वच् प्रत्यये परे आलं निपात्यते। १ पिपासा, प्यास। वेदे बाहुलकात् क्वच्। २ जलानयन, पानीका खाना।

३ जलसम्बन्धिनी, पानीसे सरोकार रखनेवाली।

उदन्त्य (वे० त्रि०) उदन्त्य-उष्। जलेच्छु, पिपासु, पानी ढूँढनेवाला। “हरि नमन्ते इत्या उदन्त्यः।” (छक् ६।१।१०) ‘उदन्त्यः उदकेच्छावन्।’ (सायण)

उदन्त्यत, उदन्त्यान् देखो।

उदन्त्यान् (दे० पु०) उदकानि सन्त्यत्र, उदक-मनुष्य, मन्त्र वः। उदन्त्यानुदयो वः। पा ८।२।१। १ समुद्र, बहर।

“वि च मासु उदन्त्यं उनुषे पादियुक्चः।” (रङ्) २ ऋषियेश्वर।

(त्रि०) ३ उदकयुक्त, पानी रखनेवाला। (छक् ३।२।१०)

उदप (सं० त्रि०) पानीको पार करनेवाला।

उदपर्णी (सं० पु०) कुधान्यविशेष, एक प्रकार का अनाज।

उदपात्र (सं० स्त्री०) जलपूर्ण पात्र, लोटा।

“मिषामग्रादाय” वा सत्कृत्य विधिपूर्वकम्।” (मनु ३।६६)

उदपान (सं० पु०-स्त्री०) उदकं पीयतेऽत्रेति, उदक-पा अधिकरणे सुगट्। १ कूप, कुआँ।

“वासावः उदपाने संवतः संतुतीदके।

तावान् सवसु वेदिषु ब्राह्मणस्य विमानतः॥” (गीता-१।७३)

२ कमण्डलु।

उदपानमण्डूक (सं० पु०) कूपका मण्डूक, कुएँका मेंढक। यह शब्द उस व्यक्तिके लिये आता है, जो अनुभववशु होता और नैकक्य भिन्न अन्य विषय नहीं समझता।

उदप (वे० त्रि०) जलसे चपनी शुद्धि करनेवाला, जो पानीसे पाकसाफ़ बना हो।

उदपेप (सं० स्त्री०) १ जलपेप, खमीर, लेही, गारा। (अथ०) २ जलमें पीस कर, पानीसे रगड़के।

उदप्लुत् (वे० त्रि०) जलमें सन्तरण करनेवाला, जो पानीमें तैरता हो।

उदप्लुत, उदप्लुत देखो।

उदवस (हिं० वि०) १ शून्य, सूना। २ स्थानान्तरित, किसी जगहसे छटाया हुआ, जो सारा सारा फिरता हो।

उदवसना (हिं० क्रि०) १ स्थानान्तरित करना, किसी जगहसे निकास देना। २ शून्यकरना, सूना बनाना।

उदभर (हिं०) धार देवो।  
 उदभय (हिं०) उग्र देव।  
 उदभार (सं० पु०) मेघ, बादल।  
 उदभीत (हिं० पु०) धारय, ताड़व, धनोषी बात।  
 उदमन्य (सं० पु०) १ उदकप्रधान मत्स्य, पानीकी मधानो। २ जनानोद्धित सद्यत शत्रु, धो धीर पानीका मत्स्य। इति धीक्षिते मेघन धरना चाहिये। (भाष्यभाष्य)  
 उदमदना (हिं० क्रि०) उन्नत होना, घासल बनना।  
 उदमन्य (सं० पु०) यवका जन, जौका पानी।  
 उदमाद (हिं०) उन्माद देवो।  
 उदमादौ (हिं० वि०) उन्माद, मतवाला।  
 उदमान (सं० पु०) १ धारिके मानका भादक। यद्य ४०८६ मायिका होना है। (हिं० वि०) २ उन्नत, मतवाला।  
 उदमानना (हिं० क्रि०) उन्नत होना, घासल बनना।  
 उदमेघ (सं० पु०) १ जनशुद्धि, पानीकी भङ्ग।  
 उदम्बर (सं० पु०) १ गरीरज कनिका एक भेद, भिक्षुमें पैदा होनेवाला एक कीड़ा। कृमि देवो। २ ताम्र, ताम्र।  
 उदय (सं० पु०) उदयन्ति चन्द्रसूर्यादयो यथा यस्मात्, उत्-ह-पत्तु। १ पूर्वपर्वत, उदयाचल।  
 "उदित उदयगिरि मधुपरा पशुपरा कल्पवृक्ष।  
 विहसि सल यतोऽत्र वन वसति लोचन धरा॥" (गुणयो)  
 २ समुन्नति, उदङ्ग, उठान।  
 "उदय ताव निधुवनमव मागः॥" (गुणयो)  
 १ सद्गल, भलाई। ४ दोगि, चमक। ५ आवि-  
 भाव, निवास। ६ उद्वि, बढ़तो। ७ नाम, फायदा।  
 ८ फलनिधि, कामयाबी। ९ मन, पहचानका प्रकाश।  
 धर्मादि धर्ममें लक्ष्य लक्ष्यका निरूप देवो। १० भावो उत्-  
 सर्पणोक्षी सतम चर्चत्, उदयाग्र। यह यात्रिकके  
 पुत्र और श्रावणसुनिके मित्र्य थे। (क्रि०) ११ व्याक-  
 रणमें—पद्यादगामी, वेदिके पढ़नेवाला।  
 उदयगढ़ (हिं० पु०) उदयाचल।  
 उदयगिरि—दाक्षिणात्यका एक ग्राम। यह चण्डमद-  
 नगरसे १६० मील दूर है। १०६० ई०को मराठोंने

यहां निजामकी फौजपर आक्रमण मारा था।  
 निजामके हारनेपर सन्धि हुई। दोसताबाद, मिर्जर,  
 चंभोरगढ़, तथा विजापुरका क़िला, चण्डमदनगर और  
 विजापुर विदर एवं औरंगाबाद प्रान्तका अधिक भाग  
 मराठोंके हाथ लगा। वर्तमान चण्डमदनगरके समग्र  
 ग्राम और नामिकके कुछ भागपर भी उनका अधिकार  
 हो गया था। वेमवाके सेनापति मदागिर रावने  
 वही वीरता दिखाई दी।  
 उदयगिरि—उड़ीसा प्रान्तके पुरी जिलेका एक पर्वत।  
 यह सामान्य वनपथमें खण्डगिरिमें स्थित है। पति  
 पूर्वकालमें (प्रायः १०० ई०के पहले) उदयगिरि चपनी  
 पथिगु गुहाओंके निचे प्रविष्ट है।  
 रानीचमपुर, गधेग, स्वर्गपुरी, भजन, जया, विजया,  
 चनन्त, इक्षि, पवन और व्याघ्र-गुफा हो प्रधान हैं।  
 सकल गुहापथमें पर्वत तोड़ गड्ढादि बने हैं। पात्र-  
 कल यद्यपि इनकी चट्टानों जिताना मन्द हो गई,  
 चनेकागमें गड्ढादि विगड़ गये और सकल व्यानेमें  
 व्याघ्र-भक्षण रहते, तो भी बोध होता है—पूर्व-  
 कालपर इन सकल गुहाओंमें बोधधर्मावतन्त्री यति  
 तथा मन्त्रासो रक्षा करती थे। चनेक गुहा महाराम  
 नाममें विख्यात थीं। इन्हीं देवनेके निचे पर्वने  
 कितने ही बोधवातीयहाँ पाने थे। ई०के ८म शताब्द-  
 में चीनपरिमाणक गुप्तपुष्पक यहाँ पहुँचे थे। उन्होंने  
 पुष्पगिरि नामक महारामको बात लिखी है। पशु-  
 मान है—यह महाराम उदयगिरिके ऊपर या पास  
 ही रहा होगा।  
 २ पत्थ एक पर्वत। यह वेमनगरमें एक कोम  
 दक्षिण-पथिगु और मांवेधे दार्द कोष्ठ दूर पथ-  
 स्थित है। उदयगिरि पथ मौल विद्युत है। रथमें  
 चनेक मूर्ति खुदी हैं। मन्त्रा, विष्णु और शिवकी  
 मूर्ति लटकी हैं। एक व्यानेमें चर्चने गङ्गा और यमुनाके  
 पर्वतरक्षका दृष्टा है। दृष्टका कादकार्य पति चमत्  
 कारो है। जहाँ महारामनाको धार इक्षिमेपर धर्ममें  
 पड़ी, वहाँ समग्र देवोंकी मकरपाहना और कर्मधारण  
 मूर्ति बनी है। धर्मनिष्ठ हिन्दू लोकदेवोंको पाने हैं।  
 इन पर्वतमें चन्द्रगुप्त (२य) शाकाके १०६ गुप्तकालका

एक अनुशासन मिला है। वेशनगर निकटस्थ गृह-  
दिके प्राचीर इसी पर्वतके प्रस्तरसे बने हैं।

२ मन्द्राज प्रदेशके प्रन्तर्गत गन्धाम जिलेका एक  
तालुक। इसमें खम्ब और शबर जातिके लोक अधिक  
रहते हैं।

४ मन्द्राज प्रान्तके प्रन्तर्गत नेल्लूर जिलेकी एक  
तहसील। भूमिका परिमाण ८५० वर्गमील है।  
लोकसंख्या प्रायः एक लक्षसे कम है।

उदयचन्द्र—१ बम्पईप्रान्तीय कनाड़ा जिलेवाले प्राचीन  
पञ्चव-नृपति नन्दीवर्माके एक सेनापति। ये  
पुचानवंश-सम्भूत और वेगवती नदीतीरस्थ विस्वल-  
नगरके अधिपति थे। मन्द्राजप्रान्तीय उत्तर-भरकाट  
जिलेके प्राचीन नरेश उदयेन्द्रिमका जो ताम्रफलक  
निकला, उसमें लिखा है—२य परमेश्वरवर्मा-नृपतिके  
अनुयायी द्रामिल राजाधोनि नन्दीपुरमें नन्दीवर्माको  
घेर लिया था। किन्तु उदयचन्द्रने वहाँ पहुँच अपने  
हाथसे पञ्चवराज चित्रमयको मारा और स्वामीको  
काटते उबार। इन्होंने निम्बवन, चतुवन, शङ्करग्राम,  
नेल्लूर, नेलवेली, सुरावलन्दूर तथा अन्य स्थानोंके भी  
रणक्षेत्रमें कई बार शत्रुको हराया और नन्दीवर्माका  
राज्य बचाया था। नेलवेलीमें उदयचन्द्रने शबरराज  
उदयनको भी वधकर मोरपुच्छ लगा शीशका कट  
छीन लिया। उत्तरीय प्रान्तमें इन्होंने अश्वमेधयज्ञ  
करनेवाले दृष्टिबीव्याघ्र नृपतिके सेनापति निषादको  
विष्णुराजके राज्यसे भगाया और नन्दीवर्माको उसका  
अधिपति बनाया था। मणार्डकुड़ांमें उदयचन्द्रने  
कालीदुर्ग नामक किला तोड़ पाण्ड्योका सेन्य हराया।  
नन्दीवर्माने अपने राज्यके २१ वै वर्षमें इनके कंधेनेसे  
१०८ ब्राह्मणोंको पैलातूरका कुमारमङ्गल नामक ग्राम  
उत्तमर्ग किया और उसका नाम बदल कर उदयचन्द्र-  
मङ्गल रख दिया। आज उसे उदयेन्द्रिम कहते हैं।  
२ बम्पई प्रान्तस्थ गुजरातवाले प्राचीन चालुक्य  
नृपति (११४३ से ११७४) कुमारपालकी सभाके  
एक लेन पण्डित। पाटनमें भद्रकाली-मन्दिरके  
निकट जो शिलालिपि निकली, उसमें यह बात  
लिखी है।

उदयत् (सं० त्रि०) ऊर्ध्वगामी, ऊपर चढ़नेवाला,  
जो निकल रहा हो।

उदयन (सं० पु०) १ भगवत् २ शतानीकके पुत्र।  
पत्नीका वासवदत्ता और पुत्रका नाम नरवाहन था।  
(शिवपुराण १२।१२) मत्तान्तरसे यह शतानीकके पोत्र  
रहे। अपर पत्नीका नाम रत्नावली था। कौशाब्दी  
नगरी इनकी राजधानी थी। कोई कोई बुद्धदेवका  
इनका धर्मगुरुक बताते हैं। ३ वृषभराज। ४ वत्स-  
राज। कथासरित्सागरमें इनका उपाख्यान पाया  
है। ५ शुषोदनके एक पुरोहित। (ल्लो०) भावे  
खुद। ६ उत्थान, निकास, उठान। ७ फल, नतीजा।  
८ अन्त, अखीर।

उदयनाथ त्रिवेदी कवीन्द्र—दुर्वाधके प्रन्तर्गत अमेठीके  
एक प्रधान कवि। प्रथम ये अमेठीके राजा हिम्मत-  
सिंहकी सभामें रह कविता बनाते थे। इनका विर-  
चित 'रसचन्द्रोदय' वा 'रतियिनीद' नामक हिन्दी ग्रन्थ  
पद राजा अतिशय सन्तुष्ट हुये। उन्होंने उदयनाथको  
'कवीन्द्र' उपाधि दिया था। उक्त पुस्तक १८०४  
विक्रमाब्दमें लिखा गया। पीछे इन्होंने अमेठीके गुरु-  
दत्तसिंह एवं भगवन्तराय खीचौ, अजमेरके गजसिंह  
और बूंदीके बुहराय प्रभृति राजाकी सभामें मश-  
सम्मान पाया था। इनके पुत्रका नाम दूल्ह त्रिवेदी  
था। ये भी एक अच्छे कवि थे। उनका रचा 'कवि-  
कुल-कण्ठाभरण' नामक हिन्दीग्रन्थ युक्त-प्रदेशमें  
समाहित है।

उदयनाचार्य (सं० पु०) कुसुमाञ्जलि नामक संस्कृत  
दर्शनग्रन्थ प्रणीता। भक्ति-माहात्म्य ग्रन्थके मतसे—

“मयवानपि तत्रैव मिथिलार्थं जगद्भनः।

श्रीमदयनाचार्यविरचितपाठारम्भ ॥” (१७२१)

“वीहसिद्धान्तसुखानुसुखाय हितकारिणीम्।

अनेने विदुषां प्रीत्यै विमर्शा किरणारजोम् ॥” (११।१२)

“अथापि मिथिलार्थाय तदन्वयमभा विनाः।

विहासः शालसम्प्राः पाठयति यदे यदे ॥” (११।८१)

अर्थात् भगवान् जनार्दन मिथिलापर उदयनाचा-  
र्यके रूपमें उतरे हैं। उन्होंने वीह सिद्धान्तसुख  
लोगोंके सुखविधान और पण्डित-मङ्गलकी प्रीति-

सम्पादनकी मङ्गलमयी” किरवायकी बनायी। पात्र भी उनके बंधुधर, शांदाविद, विद्वान्, विज्ञ सिधिलाली धर धर पढ़ाया करते हैं। फिर “भादुही-बंयायकी” नामक बारिन्द्रनाथोंकी कुलधर्ममें लिखा है—

“... बारिन्द्रविद्वान् श्रीमान् मुनि विद्यालालकृतः।

... बारिन्द्रलालनाथ वीरविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य उदय, इहो कृपा।

... कुलधर्मनाथ वीरविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य वीरविष्णुसंस्कृतः।

... कुलधर्मनाथ वीरविष्णुसंस्कृतः।

इसमें समझ पड़ता है—उदयनाचार्य कुलधर्म और मयूरमङ्गल समसामयिक रहें। उन्होंने बीहोंके विष्णुको जन्म लिया था और कुलधर्मनाथ नामक ग्रन्थ लिखा था।

बारिन्द्रसमाजके पण्डितोंका विचार है—बारिन्द्र-कुलधर्म परिवर्तन-मयूरादिके प्रतिष्ठाता और कुलधर्मनाथ-कार उदयनाचार्य भादुही-अभिषेकस्थिति हैं। बारिन्द्र-कुलधर्मनाथके ग्रन्थमें भी ऐसा ही कहा है। “सम्पन्न-निर्णय” नामक ग्रन्थकी देखते राजगोपीके पन्तर्गत निरिन्द्या ग्राममें प्रर उदयन रहते थे। किन्तु उसीके महाचार्य बताते हैं—मायिकगणके पन्तर्गत बालीयाटी ग्राममें उदयनाथ भादुही बसते थे। आज भी इस ग्रामके एक उग्र स्थानको लोग “भादुही-मिठा” कहते हैं।

“... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्यविष्णुसंस्कृतः।

कुलधर्मनाथ कारिकाकार राममठ शार्वरीमने भी एक मिथिलादेशीय लिखा है।

“... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

... उदयनाचार्य विष्णुसंस्कृतः।

भरावकी पर्वत और दक्षिण-पश्चिम महीकांटा है। यह पहा २६' ४८" एवं २५' ४४" ल० और ब्रावि० ७२' ७" तथा ७५' ५१" पूर्व के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १२६७ वर्ग मील है। कोकसंख्या लगभग छह लाख है। चिन्टू और जैन अधिक रहते हैं। स्थानीय पर्वतमें महेट, भीख और मौना तीन प्रकारकी असभ्य जाति रहती है।

प्रमाण—चङ्गाक्षी यहां सूर्यप्रभोय राधा भासन चलाती, जो महाराजा चलाते और अपनेकी रामचन्द्रके अवस्थान प्रसन्न बताते हैं। किन्तु प्राचीन मिथ्या-लिपिसे प्रभावित हुआ है वे पहले ब्राह्मण थे, पीछे चण्वि हो गये हैं।

राजपूत राजगर्भमें उदयपुरके राजा ही खेड और सर्वाधिक माननीय हैं। सुसलमान बादशाहोंके आधिपत्यकालमें राजपूतानेके प्रधान प्रधान प्रायः सकल ही राजा किसी न किसी दिक्किसम्वादसे दब गये थे। जनेकीमें कन्यादान भी दिया था। किन्तु प्रबल प्रतापवाली उदयपुरके राजाने सुसलमानोंकी अधीनता न मान बचवा अपनी कन्या उन्हें न खीप जातीय गौरव बचाया था। उदयपुरके राजा राजपूत जातीय लक्ष्मीत जेबोकी मिथो-दीय शासक हैं।

७२८ ई०में इस वर्गके बन्धु राजसने सर्वप्रथम मेवाड़में राज्य जमाया था। १२०१ ई०में चित्तौरराज समरसिंहके मरनेपर उनके लघुपुत्रने राज्यसे भाग छगपुरवाले जङ्गलमें जाकर राजधानी बसायी थी। पहले उदयपुरके राजाका राज (राव) उपाधि रहा। किन्तु राष्ट्रपने राजा होकर राजसके परिवर्तन राजा उपाधि लिखा था।

१२०५से १२८० ई० तक लक्ष्मणसिंहने राज्य किया। उसी समयपर पलाउहीन चित्तौरपर चढ़े थे। १३०१ ई०में औरकेमरी हमीर राजा बने। वे महमूदके विरुद्ध खड़े हुये थे। दिक्किसम्वादकी केंदकर उन्होंने यवन-कवलि मेवाड़का राज्य फिर कुड़ाया। जिससे कि जयपुर, बूंदी और स्वाधिरके राजगर्भने हमीरकी यथाविविध सन्मानित किया था।

राजपूत-और संघामसिंह या साङ्गालीके समय पञ्च-बरके पितामह बाबरने चित्तौर घेरा। उन्होंने फतेहपुर-सीकरीके निकट पागे बड़ सुगल सेन्यकी गति रोकी थी। किन्तु युद्धमें घसाधारण औरत्व देखाते भी खल-शेषकी घे हार गये। उसी दिनसे साङ्गाराधा फिर देगको न छोटे, पर्वत पर्वत घूम केवल सुगल कायो-जन करते रहे। उनके मनमें था—जबतक हम युद्धमें सुगल बादशाहको न हरायेंगे, तबतक अपने देगकी भी वापस न लायेंगे। मनकी भासा मनमें ही रही, पञ्च दिनमें ही मृत्यु उन्हें खा गयी। १५१० ई०को साङ्गालीके पुत्र रत्नसिंह राजा बने थे। उन्होंनेभी बूंदीराज-के साथ सम्मुख समरमें प्राण दे दिया। फिर रत्नके भ्राता विक्रमादित्यको राज्य मिला था। उस समय गुजरातके सुसलमान बहादुर चित्तौर पर चढ़े। युद्ध चलनेपर चित्तौरके दुर्गमें दुर्गमें यावतीय भाग्यगण राजपूत-नारीने भाग्य किया था। जब देखा, कि दुर्ग बचाया न जा सकेगा और ग्रीष्म ही सुसलमानोंके मुखमें पड़ेगा, तब प्रायः दो सङ्घ राजपूतवासिने चमूख सतीत्वरत्न रखनेके लिये चितागलमें जीवन छोड़ा। दुर्गस्थित राज-पूत वीरोंने जब देखा—विराराध्य जननी, प्राणप्रतिभा दयिता और खेड एवं आदरके रत्न कन्यागर्भने पकातर जीवन छोड़ राजपूत-कुलका गौरव बढ़ाया है। तो फिर वे तेजसी वीरगण भी दुर्गका द्वार खोल सुसलमानोंके सेन्यसागरमें बूद पड़े। एक-एक जन सुसलमानोंको मारते मारते रक्तकी शय्यापर सो गया। और चित्तौर सुसलमानोंके हाथ लगा।

हुसायूँके प्रतापसे बहादुर गुजरात छोट गये। चित्तौर फिर विक्रमादित्यको मिला था। किन्तु पञ्च दिनके मध्य ही सरदारोंने उन्हें राज्यसे हटा मार डाला। रणवीर नामक एक व्यक्ति राधा बने थे। पञ्च दिनके बाद साङ्गाराधाके कनिष्ठ पुत्र उदयसिंहने फिर मेवाड़का राजसिंहासन अधिकारमें किया।

उदयसिंहके राजत्वकालमें चक्रवर ग्राहने चित्तौर जीता था। उदयने चित्तौर छोड़ भरावकी पर्वतपर निर्वा उपलका में उदयपुर नामक नगर बसाया। यही स्थान उस समयसे मेवाड़की राजधानी बना है।

१५०२ ई० में उदयसिंह के मरनेपर प्रतापसिंह ने पिछ-  
सिंहासन पाया था। उनके जैसे उज्ज्वल, स्वदेश-  
प्रेमिक और कष्टसहिष्णु वीरपुरुष पति पत्नी ही  
भारतवर्ष में उपजे हैं। वे स्वदेश और स्वातंत्र्य के  
लिये बार बार अकबर बादशाह से लड़े। सकल  
युद्धों में जारते भी उन्होंने सुगुणों की अधीनता मानी  
न थी। प्रतापने स्वाधीनता बचाने की अपना राज्य-  
भन गंवाया, परंतु-परंतु 'एवं वन वन चकर लगाया'  
और गुहादिमें छेरा लगाया। ऐसा भी सम्भव न था,  
जिससे कायको क्रोध मिलते ही दिन कटता। वह  
कष्ट के बाद विधाता उनपर प्रसन्न हुये। उसी समय  
आमराह नामक एक मन्त्री ने वन द्वारा उनका  
साहाय्य पहुँचाया था। प्रताप फिर राजपूतों को  
जोड़ देवार नामक रणक्षेत्र पर उतर पड़े। उनके  
साहाय्य और रणकी दक्षतासे सुगुण फौज हार गयी।  
प्रतापने अल्प दिनों के साथ ही समस्त मेवाड़ जीता  
लिया। फिर उन्होंने समस्त मेवाड़का एकेश्वरत्व स्वीकृत  
भावसे जीवनका अवशिष्ट काल बिताया। प्रतापके  
मरनेपर तत्पुत्र अमरसिंह राजा हुये थे। अमरसिंह ई० १५०३

दिन के सम्राट् बननेपर जहांगीरने मेवाड़का  
राज्य अपने वयस में लाने के लिये अनेक बार युद्ध लगाया,  
किन्तु किसी प्रकार कुछ कर न पाया। वह अमर-  
सिंह से दो बार सम्पूर्ण रूपसे हारा था। अन्तिमपर  
जहांगीरने प्रतापसिंह के भ्राता अक्षिसिंह को मिलाया  
और तदीये भ्रातृपुत्र अमरके विषय सझाया। सात  
वर्ष बाद अक्षिसिंह भारतीय विद्रोह के लिये मन ही मन  
सरमाये थे। फिर उन्होंने मेवाड़की प्राचीन राजधानी  
चित्तौर अमरकी ओप हो ली। इस संवादसे  
जहांगीरकी परीम खोख थाया था। उन्होंने अपने  
पुत्र परवीरजी के सहित अमरके विषय भेजा। परवीर  
भी हार गये थे। फिर सुगुण-सिंहालायक महम्मद  
खान्, बड़ी भारी सेना से मेवाड़के अभिमुख चले।  
शाहजहान् प्रह्लाद-अभिनायक बने थे। इत-पूर्व  
वहवार सड़ राजपूतोंका सेना क्रमशः घट रहा  
था। फिर अचानक सुगुण सेना के समुख अच-  
चमनेकी पड़ी। राजपूत वीरगणने देखा—एवं

रचा नहीं। उसपर भी एक बार प्रायः पर्यन्त लगा  
जातीय गोरव बचानेकी सकलने चढ़ उठाया था।  
घोरतर युद्ध के बाद राजपूत हारे। राधा अमरने  
साधारणोंमें दिव्यीश्वरका आनुग्रह माना था। किन्तु  
जहांगीरने उन्हें यथेष्ट सन्मानित किया। फिर भी  
राधा प्रतापसिंह के पुत्र अमर सुसम्मानकी अधीनता  
सह न सके थे। उन्हें समझ पड़ा—सुसम्मान के अधीन  
रहनेसे राजपद छोड़नेमें ही राय है। अमरने अपने  
पुत्र अक्षिसिंह की मेवाड़का राज्य सौंप वातव्य पकड़ा  
था। १५२८ ई० की अक्षिसिंह के मरनेपर तत्पुत्र  
अक्षिसिंह राजा बने। १५५४ ई० की मेवाड़की  
सिंहासनपर बैठे थे। उन्होंने राजस्वकाशपर औरत-  
प्रेमने जिनिया कर लगाया। यह कर मेवाड़पर  
बांधने के लिये सुगुण सेना भेजा गया था। राजपूतोंमें  
किसीने जिनिया कर देना न चाहा। उसीसे युद्ध  
हुआ था। अक्षिसिंहने बार बार सुगुण सेनाकी  
हाराया। १५८१ ई० में औरतजीने जिनिया कर  
छठा डाला। इसी वर्ष अक्षिसिंह मरे थे। उनके पुत्र  
अमर (२५) राजा बने। इसी राजा के समयपर  
मारवाड़, मेवाड़ और अजमेरके राजपूतने मिलकर  
सुगुण राज्य भेदनेकी चेष्टा लगायी थी। सुसम्मानोंने  
जहाँ जहाँ देवदेवीके मन्दिर तोड़ मस्जिद बनायी,  
१०१२ ई० में एकत्र हो राजपूत राजगणने वहीं वहीं  
भूमिकी धारा बहायी। किन्तु यह समुदायक आनीय  
मिनन-बहु दिन टिका न पा। भारतका यह  
बहुत ही प्रथम निकला। सुभ मिननमें दिव्य द पद  
था और मारवाड़के राजा अक्षिसिंहने स्वयं कर  
अपनी कन्याका विवाह अक्षिसिंह कर दिया। कुछदिन  
बाद राधा अमर भी दिव्यीश्वरके साथ अभिमुख बंध  
गये थे। १०१३ ई० की अमरके मरनेपर तत्पुत्र  
अक्षिसिंहको पितृराज्य मिला। इस समय सुगुण  
सम्राट्की अवस्था क्रमशः बिगड़ रही थी। मराठे  
सुगुण बादशाहोंने चोप भेजे गये। १०१६ ई० में  
देवधाने राजौराधनी स्वयं आगयी थी। इस स्थिति  
पदानुसार राधा मराठोंको १५५० ई० २० चोपमें  
देने के लिये अग्रत हुये।

जिन राजपूतानों सुसलमानोंकी कन्या दी, उनसे उदयपुरके राणावेणीयने विवाहसूत्रमें बंधनेकी इच्छा न की। इसीसे उदयपुरके राणावीका गौरव बहुत बढ़ा था। किन्तु थपूर राजपूत राजगणके चतुर्मेवह खेटके गया। उन्होंने उदयपुरके राजगणसे वैवाहिक सूत्रमें बंधनेकी अनैक चेष्टाें लगायी थी। अवश्यमें उदयपुरसे राणावीने कन्या देनेपर संमत होने भी नियम रखा—राणा-वेणीय कन्यासे जो पुत्र जन्म लेगा, वही राज्यका उत्तराधिकारी बनेगा। थपरापर राजपूत राजा राजी हो आदान-प्रदान करने लगे थे।

१७४२ ई०में जयपुरके राजा संघायी जयसिंह मरे गये। उनके पुत्र ईश्वरीसिंह राजा बने थे। किन्तु राणाकी भगिनीके गर्भसे जयसिंहका मधुसिंह नामक एक कनिष्ठ पुत्र हुआ था। इन्हीं मधुसिंहको राजा बनानेके लिये अनैक लोगोंने यत्न लगाया। राणा ईश्वरीसिंहके विरुद्ध सैन्य चला था। किन्तु संधियाके साहाय्यसे ईश्वरीने राणाको हरा दिया। फिर राणाईश्वरीको राज्यसे निकालनेके लिये हीलकरका साहाय्य लिया था। विषप्रयोगसे ईश्वरी मारे गये। मधुसिंहको राज्य मिला।

१७५२ ई०में राणा जगत्सिंहके मरनेपर तत्पुत्र प्रतापसिंह राणा हुये। इसी समयसे मेवाड़राज्यमें मराठोंका उपद्रव उठने लगा। प्रतापसिंहके बाद तत्पुत्र राजसिंहने कुछकाल राजत्व रखा था। फिर उनके पिछ्छे भरिसिंह राणा बने। सरदार उनसे विगड़राजसिंहके बालकपुत्र रत्नसिंहको मेवाड़का सिंहासन सौंपनेपर तत्पर हुये। मेवाड़में दो दल बंधे थे। एकने भरिसिंह और थपूर दलने रत्नसिंहका पक्ष पकड़ा था। उभय दलने मराठोंसे साहाय्य मांगा। संधिया भरिसिंहके विपक्षमें लड़े थे। उज्जयिनीके निकट कई बार युद्ध हुआ। राणा हारे थे। संधिया उदयपुर चरनेकी बड़े। किन्तु राणाकी दीवान् अमरचन्दने अपने सुबहिकीशलेसे सब गंडबड़ मिटा दिया था। संधिया ६३५०००० रु० लेनेपर खीझत हुये। इसमें ६३०००० रु० नकद और अवशिष्ट रुपयेके लिये जवदजिरम, नौसच और मरदून जिला रहने रहने।

राणा भरिसिंह पाछिटखिलते समय बूंदेली युव-राजद्वारा मारे गये। उनके बालकपुत्र हमीर राजा हुये थे। १७७८ ई०में हमीरके मरनेपर तदीय भ्राता भीमसिंहने सिंहासन पाया। उनकी कन्या कृष्णकुमारी परम रूपवती रहीं। रूपकी प्रशंसा सुन जयपुरके राजाने उनसे विवाह करना चाहा था। भीमसिंह भी इस शुभकायपर सन्मत हो गये। किन्तु मारवाड़के राजा मानसिंहने कहला भेजा था—उदयपुरके पूर्वतन राजगणने मारवाड़के राजाकी कन्या देनेकी पिछलेसे ही प्रतिज्ञा कर रखी है। अतएव उसी ध्वज-कारके अनुसार अब उन्हींकी कन्या देना उचित है। भीमसिंह विषम-समस्यामें पड़ गये। किसकी कन्या दी जाय? जयपुरके राजाकी कन्या न देनेसे बात कटती है और मानसिंहसे सुं ह मोड़नेपर पिछ्छेपुछकी ख्याति घटती थी। उस समय जयपुरके राजमन्त्रीने समझाया—ऐसे खलपर कन्याको मार डालना श्रेय है। इससे सकल दिक् रचा रहती है। भीमसिंहने मन्त्रीके कथनानुसार वैसाही कार्य किया था। विष-प्रयोगसे कृष्णकुमारीके जीवन-गत कर दिया। इसी समयसे १८१७ ई० तक मराठे समय-समयपर पहुंच कर मेवाड़का राज्य लूटते रहे। सबसे बाद थपूरजीका शासन चलनेसे उत्पात मिटा था।

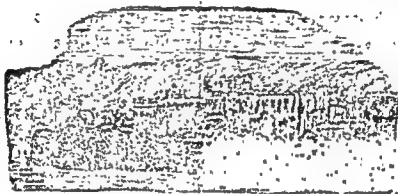
१८२८ ई०में भीमसिंहके मरनेपर तत्पुत्र जवानसिंहने राज्य पाया था। जबसे भी मरे, तब पुत्रादि न रहनेसे, प्रातिसम्यकीय सरदारसिंह महाराणा बने। १८४२ ई०में वे भी मर गये। फिर उनके कनिष्ठ भ्राता खरूपसिंहको मेवाड़का राज्य मिला। १८६१ ई०में खरूपसिंहके दत्तकपुत्र शम्भुसिंह महाराणा बने थे। १८७४ ई०में फिर उन्होंने अपने ज्येष्ठ भ्रातापुत्र सज्जनसिंहपर राज्यका भार डाल इहलोक छोड़ दिया। १८८४ ई०की २३वीं दिसम्बरको सज्जनसिंह मरे थे। उनके बाद फतेहसिंह उदयपुरके महाराणा हुये। १८८६ ई०में महाराणा साहब की जि, सि, एंस, आई, (G. C. S. I.) की पदवी मिली। कविराजे श्यामलदासजी जो महाराणा सज्जनसिंहके समयमें प्रधान मन्त्री थे, थपूरजी सर-

कारण 'महामहोपाध्याय' का उपाधि मिला है। महाराणा सज्जनसिंहके आश्रानुसार कविराजजीने "वीर-विमोद" नामक राजस्थानका एक बहुत बड़ा इतिहास रचा है। दिल्ली-दरबारमें महाराणा फतेसिंहजीको भारतीय हिन्दू राजन्यवर्गमें सर्वप्रधान सम्मान मिला था। मरण देखो।

उदयपुरके महाराणा अंगरेज सरकारमें १८ तोपोंकी सलाामी पाते हैं। महाराणाके अधीन १३२८ गोलान्दाज, ६२४० सवार और १३,१०० पैदल रहते हैं।

उदयपुर राज्यमें सुबां, बाजरा, चांग, यम, चना, गेहूँ, जूने, अफीम, कपास, तम्बाकू प्रवृत्ति द्वय उपजते हैं।

२ उदयपुरके राज्यकी राजधानी। यह पचा २४° ३५' १८" उ० और द्राधि ७३° ४३' २९" पू० पर अवस्थित है। चकवर बादशाहके पिता-पर यहमेंसे उदयसिंहने यहां आकर नूतन नगर बनवाया था। उर्दोके नामानुसार लोग इसे उदयपुर कहते हैं। यह नगर पर्वतपर प्रतिष्ठित और बनवाजी द्वारा परिवेष्टित है। संयुक्त एक विस्तीर्ण ऊँट-बंदरहा



उदयपुरमें महाराणाका बाग

है। प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त सुन्दर और परम-मनोरम है। महाराणाका प्रासाद नानावर्णके पत्थरोंसे निर्मित, ऊँटतीरसे कुछ ऊर्ध्व भागपर अवस्थित और पर्वतके मध्य प्रतिष्ठित है। दूरसे इसकी गोभा दर्शकका मन मोह लेती है। भवन चारों दिक् ५० फीट उच्च प्राचीर द्वारा वेष्टित है। राजभवनके निचा युव-राजका गृह, सरदारका भवन और जगन्नाथ देवका मन्दिर भी दर्शनीय है। पचीसा ऊँटके बाँचे बीच यक्षमन्दिर और जनवास नामक दो जलप्रासाद हैं। ई०के १७वें शताब्दीमें जगन्नाथजीने इन्हें बनवाया था।

नगरके निकट ही बाहर नामक एक ग्राम है। उसमें स्थान-स्थानपर अष्टासिकादिका भग्नावशेष देखनेसे समझ पड़ता—यहाँ पहले कोई गहर था। बाहरमें मणामतो-स्थान पड़ा है। जिन प्रधान प्रधान सामन्तगणके मरनेमें उनकी पत्नीने भी चितापर यह अपना प्राय कुछ न गिना, उर्दोके दरवाजे महासतो-

स्थान बना है। महाराणा चमरसिंहका स्तम्भ यहाँ पेवा रहता है।

उदयपुरके दक्षिण प्रागपर एक निम्नगढ़ है। उसमें दक्षिण गोवर्धनविनाम विद्यमान है।

इस नगरसे छः कोष उत्तर गहोर्ष पर्वतके मध्य एक निम्न महादेवका मन्दिर बना है। चरित्र देखो।

३ राजपुत्र राज्यके अन्तर्गत पयरी १ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित एक सुन्दर नगर। वर्तमान उदयपुर प्राचीन नगरके भग्नावशेषपर बना है। स्थानीय बंदोबोहार पति पुरातन है। नगरकी दक्षिण दिगामें अनेक भतीमन्त्र पड़े हैं। मध्यमन्त्रमें तीन प्राचीन मन्दिर हैं। उनमें बड़ा मन्दिर पतिप्राचीन बनाया जाता है। संवत् १११६ में राजा उदयसिंहने यहाँ बनवाया था। लोग कहते—दिल्लीके बादशाह और हमें दक्षिणपथकी ओर हम स्थानपर आये हैं। उन्होंने इस मन्दिरका समस्तकार और मोर्चवर्ष



अविसम्भ कोदनेके बिदे बादेश दिया। किन्तु दूसरे ही दिन औरङ्गजेब अकबार्न पोहित हुये थे। इसलिये उनको भय लगा—सम्भवतः मन्दिरस्व मन्त्रादेवके आत्मीयसे मेरी दशा इसप्रकार बिगड़ी है। फिर उन्होंने मन्दिर खोदनेकी अनाई कर दी थी। उन्होंने बादेशसे पार्श्वपर एक मसजिद बनी। औरङ्गजेबकी आज्ञा थी—कोई सुखमान् जगतक मन्त्रे पेटे मन्त्रादेवकी मूर्तिके दर्शन करने मन्दिरमें न जायेगा, तबतक इस मसजिदमें भी न घुसने पावेगा।

४ सहायप्रदेयके अन्तर्गत पार्वतीय त्रिपुराराज्यका एक विभाग। ५ पार्वतीय त्रिपुरा राज्यके मध्यका एक भाग। यह जोमती नदीके तीरे अक्षां २३° ११' २५" उ० और द्रावि ८१° ११' १०" पू० पर अवस्थित है। त्रिपुरेश्वरीका मन्दिर रहनेसे यह स्थान एक तीर्थ सम्पन्न जाता है। त्रिपुरेश्वरी देवीसे ही देशका नाम त्रिपुरा पड़ा है। प्रति वर्ष इस तीर्थके दर्शनको गाना स्थानसे सहस्र सहस्र यात्री आते हैं। कापास, लकृता और कठ बहुत बिकता है।

६ प्राचीन पार्वतीय त्रिपुराराज्यके मध्यस्थित एक प्राचीन नगर। आजकल यह अश्वमाय है। ई० के १६ वें शताब्दीमें उदयपुर राजा उदयभास्करकी राजधानी रहा। एक शिवमन्दिर विद्यमान है। मन्दिरमें मन्त्रादेवके दर्शनार्थ समय समय बहु यात्री आया करते हैं।

७ छोटे नागपुरमें देशीय राजाके शासनाधीनस्थ एक जरद राज्य। यह अक्षां २२° १' ३०" तथा २२° ४०' उ० और द्रावि ८३° ४' ३०" एवं ८३° ४८' १०" पू० के मध्य अवस्थित है। उत्तर सरगुजा, पूर्व रायपुर जिला तथा छत्तिसगढ़ राज्य, दक्षिण रायगढ़ और पश्चिम सीमापर बिलासपुर जिला विद्यमान है। भूमिका परिमाण १०५५ वर्गमील है।

१८१८ ई० में अन्धा साहबसे अंगरेजोंकी जो सन्धि हुयी, उसीके अनुसार उदयपुर पर उनके शासनकी अधीनता पड़ी। १८५७ ई० की सिपाही युद्धके समय स्थानीय सरदार और उनके भाईने अंगरेजों पर अस्त्र उठाया और इस स्थानको जीत कुछ दिन तक

राजत्व चलाया था। १८५८ ई० में अंगरेजोंने फिर उदयपुर लिया और सरदार उत्तराधिकारीको आन्ध्रमान होप यावज्जीवन निकाल कर भेज दिया। अन्धमें सरगुजाके राजाने अंगरेजोंकी साहाय्य प्रार्थना की। इसी महत्कार्यके लिये १८६० ई० में ब्रिटिश गवर्नमेण्टने यह राज्य उनको सौंपा।

राजधानी रावकोय मांद नदीके तीरेपर अवस्थित है। उत्पन्न द्रव्यके मध्य सालमिर्च प्रचुर परिमाणसे होता है। एतद्विष कापीस, नियांस, गानाप्रकार तैलबीज, धान्य, खीर और अन्य स्वर्ण भी मिल जाता है। कोयलेकी एक विस्तृत खान खुदी है।

उदयप्रमसूरि—एक विख्यात खेताम्बर जैन ग्रन्थकार। इन्होंने प्रवर्धन-सारासार-विषमपद-व्याख्या और धर्म-धर्माभ्युदय काव्य या सङ्घपतिचरित नामक दो संस्कृत ग्रन्थ बनाये थे। शेषोक्त ग्रन्थ आधु पर्वतवासी प्रसिद्ध जैन-मन्दिरनिर्माता राजमन्त्री वस्तुपालके सम्मानार्थ लिखा गया। उदयप्रमसूरि श्रीविजयसेन सूरिके मित्र और नरचन्द्र सूरिके समसामयिक रहे।

उदयप्रस्य (सं० पु०) उदयाचलकी समस्थली।

उदयमद्र—एक बौद्धराजा। इन्होंने छः वर्ष राजत्व किया था। बौद्धोंके प्रधान विनयाचार्य उपालि विद्यमान रहे। अशोकके अनुशासनमें लिखा है—बुद्ध निर्वाणके साठ वत्सर बाद उदयप्रमकी स्मृति हुई थी।

उदयभास्करकपूर (सं० पु०) स्तनमस्थित कपूर, किसी किस्मका बनाया हुआ काफूर। यह पक्ष और सदल एवं निर्दल भेदसे दो प्रकारका है। उदयभास्कर पीत, सर, खच्छ, कठिन, कटु, समुदित, अम्लि, दीपक, लघु, शीत एवं पित्तकर होता और कफ, कृमि, विष तथा वातको खोता है। इससे नासा तथा श्रुतिका रोग, सालास्राव, गन्धग्रह और जिह्वाका जहल भी कूट जाता है। (वेद्यक नियन्त्र)

उदयभास्कररस (सं० पु०) १ कुशाधिकारका एक रस, कोढ़की एक दवा। केवल गन्धकसे घृत ताम्र दर्श, चण्ड (त्रायण) पांच और विष (सींगिया) दो भाग डाल जसमें पोषे और रत्ती रत्ताकी वटिका बना कुडीको खिलाये। (रवेन्द्रसार०५४) मतान्तरसे

पिप्पलीमूल वा त्रिकटु पांच भाग पड़ता है। २ इंचा घोर धासका एक रस, इंचकी घोर दमेकी एक दवा। पत्र एवं गन्धकको बराबर-बराबर धोत चपामार्गके द्रवसे पीस पातालधनुर्में पकाने कर्ष भागपर जो वस्तु छड़कर लग जाता, वही उदयमास्कररस कहलाता है। यह दो गुणके प्रमुमान रोगोको खिलानेसे पचविध श्रास पच्छा होता है। (रसचर्याचरं)

उदयमती—बम्बई प्रांतस्थ गुजरातके चालुखराज (१०२२ से १०६० ई०) १म भीमकी एक पत्नी। इनके पुत्रका नाम कर्ण रहा। इन्द्रायकाधर्म लिखा है—एक दिन किसी चित्रकारने कर्णको चन्द्रपुरके कदम्बरज जयकेयीकी कन्याका चित्र देखाया, जिसने उसने विवाह करनेका प्रयत्न सहाया था। चित्रकारने कहा—राजकन्याने आपकी भेंटके लिये एक हाथी भेजा है। कर्ण जब हाथी लेने गये, तब उसपर उक्त राजकन्याकी देख विक्षिप्त हुये। किन्तु उन्होंने उसे क्रूरप पाकर विवाह करना अस्वीकार किया। उसपर राजकन्याने अपनी पाठ सहेलियोंके साथ विलापर चढ़ भय हो जानेकी ठानी थी। उदयमतीने कर्णसे कहा—आपके विवाह न करनेसे मैं भी प्राण दे दूंगी। यह दया देख कर्णने विवाह किया, किन्तु राजकन्या मियापल देवीको पत्नी स्वरूपमें न लिया। उधर सुच्छाल मन्त्रीकी छिपी कौड़ीसे घमाधार मिला—कर्ण एक बांदीको बहुत चाहते हैं। उन्होंने मियापलदेवीको उक्त बांदी बना राजासे मिला दिया। कर्णकी हतावस्थामें मियापलदेवीके सुप्रसिद्ध सिद्धराज सिंह नामक पुत्र उत्पन्न हुये। कहते हैं—तीन वर्षकी अवस्थामें ही सिद्धराज सिंहासनपर एक दिन चढ़कर बैठ गये। यह देख कर्णने ज्योतिषियोंमें पूछ सतीकी राजा बना दिया था।

उदयमासिक्य—मिपुराके एकजन राजा। कोई सवा तीन सौ वर्ष पहले यह मिपुराके राजा रहे। इनके राजत्वकालमें प्राचीन उदयपुर नगर बना था। विष्णु देवी।

उदयराज—उदयाबादके एक जन राजा। कुहपदेयमें किम्बदन्ती है—उदय मासिवाहनके पुत्र घोर रसातलके

प्रबल यज्ञ रहे। एक समय रसातल अपनी राजधानीमें उपस्थित न थे। अवसर पाकर उदय उनकी प्रधान पत्नी कोकिलकुमारी पर आक्रमण हुये। रानीने भी उदयके प्रेमसे मुग्ध हो आत्महमर्षण कर दिया था। किन्तु उनके पास एक पालतू मैना थी। वह पर-पुत्रपक्षे साथ रहनेपर कोकिलकुमारीको विस्तर भर्षणा बताने लगी। अवश्यकी रानीने उसके सिंघट्टेकी छिड़की खोल दी। यह छड़कर लुनना-कम्पन नामक स्थानपर पहुँची। रसातल निद्रित रहे। मैना उनके गयन-पट्टमें सुष 'घोर घोर' चिलाने लगी। रसातलकी निद्रा टूट गई। उसने राजासे एक एक बात कह दी। पीछे रसातल अपनी राजधानीको पाये थे। उन्होंने सफ़स मुहमें उदयकी मार छासा। उदयको कोई उदी घोर कोई बूंदी कहता है। पुरातत्त्वविद् समझते हैं—इनमें उदयसे तोषरी या यूँही घोर रसातलसे यज्ञ या य जाति उपजी है। पति प्राचीन कालसे इन उभय जातियोंमें विवाद होता आया है।

उदयवत् (उ० त्रि०) उत्थित, उठा या निजसा हुआ, जो चढ़ आया हो।

उदयवराह—बम्बई प्रांतस्थ गुजरातके कर्णावती नगरका एक जैन-मन्दिर। चालुखराज कर्ण (१०६४-१०८४ ई०)के उदा मन्त्रीने इसे बनवाया था। इसमें ७२ तीर्थहरोंकी मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। जिनमें २४ भूत, २४ वर्तमान घोर २४ भविष्यत् तीर्थहर हैं।

उदयसिंह—१ भिवाड़वाले राजा चांदाजीके कनिष्ठ पुत्र। अस्तबालराजो बनवोरके राजत्वके बाद ये भिवाड़के सिंहासनपर बैठे थे। इनके समय बित्तोरकी राजसत्ती चलती बनी। १२६८ ई०में बीरभोज बित्तोर नगर पकड़ने से लिया था। फिर राजा उदयसिंहने बित्तोर छोड़ राजपिपली बनें गोहिलोंके निकट आश्रय दूँटा। कुछदिन बाद ये परावसी गिरिमाताके मध्यस्थ गिरवा नामक स्थानपर पहुँचे थे। उदयसिंहने उपन्यहाके पुरोमानमें उदयसागर नामक एक विद्वान बरोबर छोड़ाया। इसी उदयसागर-पार्श्वस्थ कई गिरिपट्टके मिरोदेयमें

‘नचौकी’ नामक एक प्रकाण्ड प्रासाद भी बन गया। इसी राजप्रासादमें ‘उदयसिंह’ रहने लगे। क्रमशः प्रासादकी चतुर्दिक् सीधेबासगृह बननेपर ‘उदयपुर’ नगर निकला था। १४२ वत्सरके वयःक्रम कालपर इन्होंने गोकुण्डा नामक स्थानमें प्राण छोड़ा। मृत्युकाल पर २४ पुत्र जीवित थे। किन्तु उनमें राणा प्रताप-सिंहका नाम ही भारतमें विख्यात है। प्रतापसिंह देखो।

२ जोधपुरके एकजन राजा । ये भक्कर वाद-  
शाहके एक प्रधान सभासद थे । १५८६ ई०में  
इन्होंने सुलतान् सलीमसे अपनी कन्या बालमतीको  
विवाह दिया। इन्हीं बालमतीके गर्भसे शाह-  
जहान उत्पन्न हुये थे। भक्करने जोधपुरका राज्य  
उदयसिंहको जागीरमें दे डाला। १५८४ ई०में ये  
मरे थे। साथ ही इनकी चार पत्नी भी चितापर  
चढ़ीं। फिर उदयसिंहके पुत्र सूर्यसिंहको सिंहासन  
मिला था। इनके पौत्र गजसिंह और प्रपौत्र यमो-  
वन्तसिंह रहे।

उदयसिंह देव—बम्बई प्रान्तस्थ, भिनमाल के एक चौहान राजा। एक प्राचीन शिलालिपि से विदित हुआ है—  
ये महारावल समरसिंह देव के पुत्र रहे। इन्होंने स्वयं भिनमाल पर अधिकार किया था। १२४८ ई. तक जीवित रहे उदयसिंह देव ने कम से कम ४९ वर्ष तक राजत्व चलाया। प्रजा सम्पत्तिवाली रही। बहादुर सिंह पुत्र का नाम था। किन्तु वह इन्होंने समग्र मर गये।

सदयाचल, सदयपथ'त दिखी ।

उद्घातिथि ( सं० स्त्री० ) सूर्योदयकी तिथि, जिस तिथिमें सूर्य भगवान् निकले। शास्त्रानुसार स्नान-दानादि इसी तिथिमें होता है।

चदयादित्य—बालक्यराज भुवनैकमल्लके 'सेनापति' ।  
कुछ दिन सेनाकी देखरेख रखने बाद ये वनवासी  
नामक स्थानके राजा बन गये । - १०६६ और १०७६  
ई०के मध्य चदयादित्य विद्यमान रहि । 'वनवासी देखो' ।

उदयान्न—मगधराज अजातशत्रु के. पौत्र।.. इन्हीं  
पाटलीपुत्र बसाया था। (वि.) बौद्ध ग्रन्थोंमें इनका  
नाम उदयभद्र लिखा है।

उदयिन् (सं० त्रि०) : उदय होनेवाला, जो निकल रहा हो।

उदयिभद्र—अज्ञातशत्रु के पुत्र । ' उदयभद्र देखो ।'

उदरः (सं० स्त्री०) । उत्-ट् विदारणे अच् । उद्वि-  
 षातेरस्यचो पूर्वपदान्यनोपब । अण् प्रत्यये १ लठर, कुक्षि, मेदा,  
 शिकम, पेट । सुश्रुतादि प्राचीन वैद्यगणके मतसे  
 उदर एक अङ्ग-लगता है । इसमें पेशी, गुद, वृक्कि  
 एवं नाभि मर्म, चौबीस शिरा, तीस धमनी, सात  
 आशय (वाताशय, पित्ताशय, श्लेष्माशय, रक्ताशय,  
 आम्लाशय, पक्वाशय, शीर-पक्वाशय) तथा स्त्रीके देहका  
 एक अतिरिक्त गर्भाशय, बल्य नामक पस्त्रि शीर  
 अण्ड है । नाभि, बोट शीर मर्म शब्द देखो ।

पाश्चात्य चिकित्सकोंकी मतानुसार कर्ध्वं वक्ष एवं उदर विच्छेदक स्नायु (Diaphragm) भीर-पद्मोदय पर वस्तुकोटरका अस्थिसमूह रहता, जिसकी मध्य उदरगद्गर है। इस गद्गरमें पंजायय, चन्त, डीह, यक्षत्, वृक्क भीर, पानक्रियस. (Pancreas) हैं। उदरका समस्त स्थान पतला रहता, जिसपर चन एवं हृद स्थान भिन्नोका आवरण बढ़ता है। इसे अन्त्रावरक (Peritoneum) कहते हैं। २ युव, लड़कियाँ

(यु०) उदरं आययत्वात्, अर्थः आदिभ्योश्च इति अच् । १ उदररोग विधिः, पीटकी एक बीमारी । भीतर ही भीतर जिनके उपजनेसे पीट बढ़ता, उनमें कितने ही बड़े बड़े रोगका उदर नाम पड़ता है । वैद्यशास्त्रमें इसे उदररोग भी लिखते हैं ।

• प्राचीन आयुर्वेदाचार्यकें इस नामकरणमें बड़ा महत्व है। उन्होंने घाट प्रकारकें उदर रोगका जो लक्षण किया, उससे किसी विशेष पीड़ाका परिचय नहीं दिया है। वह अन्य अन्य नानाप्रकार पीड़ासे ही सम्बन्ध रखता है।

॥ आलोपाथीका आसाइटिस (Ascites), अर्थात् जलोदर नाम भी ठीक नहीं बैठता। क्योंकि पेट में जलका सञ्चय प्रायः कोई विशेष पीड़ा नहीं, अन्य अन्य नानामकार रोगकी चरमदशाका एक उत्कट उपसर्ग मात्र है।

१. 'चरकसंहिताके संग्रहकार' कहते हैं—कोठ-शुद्धि

न होना ही सकल प्रकार उदररोगका प्रधान कारण है।" लिखते हैं—

"विदितोऽप्युक्तानां रोगवद्भूत इति विदितम्।"

मन्त्रादाय शरीरं विभक्तं चोदरादि हि ॥" (११४)

मनुष्यके पश्चिमोपरी पृथक् पृथक् भागा प्रकारकी पीड़ा उपजती है। विशेषतः उसके कारण मनुष्यने-पर चनेक उदर रोग फूट पड़ते हैं।

किन्तु यह मत माननेसे वर्तमान चिकित्साशास्त्रके साथ सामञ्जस्य पड़ना दुर्घट है। उदरके लक्ष्य विचारनेसे स्पष्ट ही समझ सकते, कि उसमें चनेक प्रकारके रोग लगते हैं। पाकस्थलीकी विरुद्धि (Dilatation of the stomach), पाकस्थली और अन्त्रके भीतरका उपपदार्थ (Foreign bodies in the stomach and intestines), पाकस्थली, अन्त्रावरक भिन्नो प्रसूति स्थानका कर्कटरोग (Cancer of the stomach, peritoneum etc.), पाकस्थली, अन्त्र प्रसूति अन्त्रका छिद्र (Perforation of the stomach and intestines), ग्रीवाकी पुरातन विरुद्धि (Chronic enlargement of the spleen, ague-cake; leucocytæmia), ग्रीवाका नरुचप्रदाह (Acute splenitis), यकृतका प्रदाह (Suppurative hepatitis), यकृतका स्फोटक (Abscess of the liver), यकृतकी विरुद्धता (Cirrhosis); यकृतके हाइटेडिड नामक कीटाणुका कीटाणुद (Hydatid cysts of the liver), अन्त्रके स्थानवियेयका स्फोटक, अन्त्रावरक भिन्नोका प्रदाह (Peritonitis), अन्त्रावरक भिन्नो तथा उदरके अन्त्र अन्त्र स्थानका टुबर-कुलर नामक विषर्चिका-सञ्चय (Tubercular deposits in peritoneum, intestines etc.), अन्त्राव-रोध (Obstruction of the bowels), स्त्रीके जरायुका प्रदाह (Metritis), अण्डाधारका ल-सञ्चय (Ovarian dropsy), हृदयकी पीड़ा (Diseases of the kidneys) प्रसूति व्याधि उदर-रोगसे भिन्न नहीं।

आधुनिक मतसे उदररोग पाठ प्रकारका होता है—१ वातजनित, २ पित्तजनित, ३ कफजनित,

४ विदोषजनित, ५ श्लेष्मोदर, ६ बह्ममुद, ७ वायुमुद, ८ घोर उदररोग।

"इत्युक्तं एव किं दीर्घः दीर्घोऽपि उदररोग इति।"

वायुमुदं कफमुदं च उदररोगे नि यदिति मतिः ॥" (११५)

शरीरमें सिखा है—अत्यन्त उष्ण, अत्यन्त शय-मिश्रित, चार, दाहजनक, उष्ण एवं अत्यन्त दृढ दृढ स्थाने,—वमन विरेचनादिके संशोधन बाद अतिप्रसूत भोजन पाने,—रुच, विरुद्ध तथा अविशुद्ध द्रव्य पीनेमें पड़ने,—ग्रीवा, गर्भ, प्रसूति प्रसूति व्याधिके अतिप्रसूत रुचिपर पाने,—वमनादि क्रियाके विरुद्धमें जाने,—किन्तु किसी पीड़ाका यथासमय प्रतीकार न लगाने,—रुचता, वेगरोध, स्त्रीत सकलकी दोषजनक क्रिया जाने,—आमदीय, संघोष समाने,—अतिभोजन पचाने, गर्भ, वायु और मलका रोध देवाने, अन्त्रका स्फुटन एवं भेद पड़ जाने, दोषका अतिमय सञ्चय बढ़ जाने, पापकर्म छठाने और मन्दात्मिका दोष हो जानेमें उदर-रोग उपजता है। अतुल्यमें भी संक्षेपसे शीघ्र रोग ही कारण कहे हैं—

"दुर्बलत्वे अतिमयस्य च उदररोगोऽपि यथा।"

के इति विचार्यते च ज्ञेयं किं दृढः कीदृशः च उदरः ॥

दुर्बलत्वे अतिमयस्य च उदरः किं दृढः कीदृशः च उदरः ॥"

जिसके अतिमयस्य रोग, अत्यन्त शरीर, उष्ण अत्यन्त शय-मिश्रित वा अतिभोजन पाने, किंवा गर्भदा स्थाने अथवा श्लेष्मोदकी अथवा अत्यन्त शरीरमें जानेमें श्लेष्मो-यित दोष बढ़ने और उनसे गुण व्याधि-प्रेष उदर रोग निकलते हैं। सामान्य लक्षण यह है—

"उदररोगोऽपि दीर्घः दीर्घोऽपि उदररोग इति।"

मन्त्रादिः उदररोगः पाठं दीर्घरोग इति ॥" (११६)

कुछिमें आधान वा पाटोप छठना, पाद और कर पर शीघ्र बढ़ना, अतिमयस्य भ्रमना, द्रव्यगण्डत पड़ना और क्षयता बढ़ना उदररोगका लक्षण है। शीघ्रको शक्य प्रकार उदररोगका सामान्य लक्षण मानने-पर पित्तोदर प्रसूतिसे निदानमें विरोध पड़ता है।

उदररोग उपजनेसे पूर्व ये लक्षण भ्रमने लगते हैं—भ्रमो मति दुष्टा न भ्रमना, रुद्धादु, धिक् एवं दुष्ट अथ बढ़ा विरुद्ध लगने—अथवा शरीर उष्ण

ज्ञाने परः पेटः गर्भं पडनेसे पचना, भुक्त द्रव्यका पचना न पचना रोगीको, अच्छे प्रकार समझ न पड़ना, भोजनसे रुचि वा तृप्ति न मिलना, पाद कुछ कुछ फूल उठना, भव्य श्मसे ही दुर्बलता रहना, शीघ्र शीघ्र श्वास प्रश्वास चलना, मल बंध जानेसे श्वास बढ़ना, उदावर्तजनित यन्त्रणा चढ़ना, वस्तिशूल तथा सन्धिके स्थानमें वेदना भरना, भव्य भोजनसे ही पेट उचकना और दुखना, पेटपर रखा देख पड़ते भी फूलनेपर त्रिवली न बिगड़ना। (चरक)

सुश्रुतने भी प्रायः इसी प्रकार पूर्वरूप लिखा है—

“वत्पूर्वरूपं वदन् रचकाद्रात्रालीविनाशो कठोरं हि राग्यः ।

जीर्णपरिणामविशेषवती बली रुजः पादगतस्य शोथः ॥”

यह अनेक प्रकार पीड़ाका पूर्वरूप है। विप्रसृत, शालोपाधीमें जिसे डिब्बे पसिया अर्थात् भस्मिमान्द्य रोग कहते, उसीके इसमें लक्षण अधिक रहते हैं। चरक और सुश्रुतमें लिखा है—पेट पर भव्य शोथ आ जाता है। किन्तु वैसा होनेपर उक्त लक्षणको किसी व्याधिका पूर्वरूप मान नहीं सकते। कारण—यक्ष्म, क्षतपिण्ड, घृक्ष्म वा अन्त्रावरक भिक्षी प्रभृति स्थानमें प्रथम कीड़े रोग कुछ कालतक संचित रहता है। पोछे कदाचित् देखके स्थान विशेष वा सर्वाङ्गमें भले प्रकार रक्त चलफिर किंवा श्लैमिक भिक्षी तथा अन्य प्रभृतिसे निःसृत रस उपयुक्त भांति शब्द पड़ अथवा खेद-मूत्र प्रयोजनानुरूप निकल न सकनेसे शरीर पर शोथ चढ़ता है।

ऊपर जो समस्त लक्षण लिखे, यक्ष्मकी विश्वक्ताका रोग कुछ काल तक रहनेपर हो जाते हैं।

चरकमें वातजनित उदररोगका लक्षण इस प्रकार लिखा है—कुचि, रुद्ध, पाद एवं अण्डकोपपर शोथ आता है। पेटमें सूचके सुभने—जैसी वेदना उठती है। कभी शरीर बढ़ और कभी घट जाता है। कुचि तथा पाखमें शूल होता है। उदावर्त, अङ्गमर्द, पर्यभेद, शूलकास, ज्वरा, दीर्घश्व और अरुचिका विग बढ़ता है। शरीरके अषोभागमें शुक्ता रहती है। वायु तथा मलमूत्र बंध जाता है। नख, चक्षु, चर्म एवं मलमूत्र लक्षण तथा पीतवर्णमिश्रित और

रक्तवर्ण बन जाता है। पेटपर सूक्ष्म एवं रक्तवर्ण रेखा तथा गिरा देख पड़ती है। पेट पर पाघात लगानेसे वायुपूर्ण मयकको तरह शब्द निकलता है। वायु ऊर्ध्व, अधः और पार्श्वदिक् वेदना बढ़ती फिरता है। माधवकरने भी कहा है—वातोदरमें हस्त, पाद, नाभि और कुचिपर शोथ आ जाता है। सुश्रुतमें वातोदरका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

“वर्धया पात्रोदरपुच्छनामौर्ध्वं हि कृष्णमिरावमहम् ।

अयुल्लमानाश्चतुर्दशस्य सतीरभेदः पचनाका लक्षणम् ॥”

इस जगहपर बड़ा गड़बड़ है। किसी पीड़ाके साथ उक्त लक्षणका सामञ्जस्य आ सकता है। नाभि और कुचिमें शोथ कछनेसे कभी नाभि तथा कुचिपर शोथका चढ़ना संभव नहीं। इससे पेटके भीतर अन्त्रावरक भिक्षीमें ही जलका सञ्चय प्रमाणित है। अन्त्रावरक भिक्षीमें जल भर जानेसे नाभि और कुचिपर पृथक् पृथक् शोथ नहीं चढ़ता। एक ही शोथ सकल स्थानमें पड़च रहता है। केवल रोगीके भिन्न भिन्न प्रकार पाख बढ़नेपर पर अपने ही शुक्लसे जल निम्न दिक् गिर पड़ता है। जल अधिक होनेसे समस्त उदर भर जाता है। फिर जल भव्य रहनेसे रोगीके उठकर खड़े होने पर नाभिकी निम्न दिक् ढलता है। रोगीके वाम पार्श्व खेतनेसे वाम कुचि, दक्षिण पार्श्व सोनेसे दक्षिण कुचि और दोनों हस्त तथा दोनों पादपर भर दे चतुष्पद जन्तुकी तरह खड़े होनेसे नाभिके मध्यस्थलमें जल लुढ़क आता है। फिर भूमिपर मस्तक टेक कर्ध दिक् पाद उठा देनेसे जल वचकी और सरकता है। इसीसे नाभि और कुचिपर पृथक् पृथक् शोथ चढ़ नहीं सकता।

दूसरी बात—यदि वातरोगसे भी पेटमें जल जमता, तो उदकोदरसे उसका प्रभेद क्या पड़ता है। इस विषयकी सीमांसा मिलना कठिन है। कारण उक्त लक्षण जब सङ्कलित हुये, तब आयुर्वेदके आचार्य शोथको अन्यरूप पीड़ा समझते थे।

वातोदरका जो लक्षण लिखा, उससे विशेष किसी यांत्रिक रोगका सामञ्जस्य लाना दुष्कर है। फिर भी उदर मध्यके कर्कटादि रोगपर हस्तपादमें

शोथ, जलोदरी और उससे पाश्चात्त हो सकता है। पाश्चात्तनीके विट्ठल रोगमें भी ऐसा लक्षण रहनेकी सम्भावना है। किन्तु इस रोगका प्रधान उपसर्ग वमन ही है।

किमी व्यक्तिको यल्लूकी विद्युत्प्रवाहाका रोग लगा था। प्रथम अग्निमान्द्य हुआ, पश्चात्तको अल्प-अल्प स्वरका वेग बढ़ा, उसके बाद पादपर शीघ्र बढ़ा और सबसे पीछे श्वास एवं हृत्प फूला, तथा पेट कठने भर गया। इसी अवस्थानमें किमी पसिह कविरात्रने उसे देख वातोदरका रोग बताया था। किन्तु रोगीके पेटमें अन्तून पन्द्रह सैर ऊपर निकाला गया। किमी रोगीके प्रस्त्रावकी पीड़ाने बहुत, पाद और मुख पर शीघ्र बढ़ा था। पीछे एक दिन बंसी बजाते बहाने उसके वायुगूल (Flatulent colic) होने लगा। किन्तु लैनैक प्रयत्ननामा देखने रोगको वातोदर ठहराया था। अतएव जो 'स्वेदीय एव' विदेयोग समय प्रकारकी चिकित्साके मास्त्रहा अनुशीलन करते, ऐसे स्थानपर ये बड़े गह्वड़में पड़ते हैं।

पित्तोदरका लक्षण भी ठीक नहीं बैठता। वाक्-  
संज्ञितामें बिष्ठा—पित्तोदर रोगमें रोगीको दाह, ज्वर,  
लूणा, मूत्रां, अतीमार और मलमला वेग रहनता है।  
मुणमें कट्टा पास्ताह या जाता है। मण, चण्ड, मुण,  
त्वक् एवं मलमूत्रका वर्ण हरा और पीला देख पड़ता  
है। पेट पर नील, पीत, हरित एवं ताम्रवर्ण रेखा  
तथा मिरा भङ्गती है। फिर दाह एवं तापके लक्षणों  
धूम निकटने पर पेट लूण रहता, धर्म तथा ज्वर  
होता, दशनेष कोमल लगता और मीन पड़ता है।

कुष्ठ रोग कहता—पिसीदारमें पेटका कौन  
 स्थान पकता है। वहाँमें संक्षिप्त यह लक्षण मिलता—  
 पिसीदार होनिंतर मुखोप, कण्ठा, त्वर एवं दाहका  
 रोग बढ़ता है। शरीर पीत पड़ जाता है। मनस्त  
 मिरा, चक्षु, नाद, मुख और मनमूला वर्ष भी पीत  
 हो रहता है। यह रोग चक्षु पर बढ़त दिनोंमें  
 बढ़ता है।

- "संस्कृतकथादास" की जिता का वर्णन होता है।

“सौमित्रिन्सकदुःखमप्यनुभवेत्तुं नृपः सितमिति ॥”

दशवृक्षी मन्त्रित पीड़ासे सदा यह जानिएर है  
मकर सदा भुनक मकते हैं ।

चरकमें द्वैधप्रणित उदररोगका यह नवप्रहिषा—  
रोगोको शरीर माटी भाङ्गम पड़ता है। भोजनमें परि-  
रक्षती है। पचाह घोर पङ्कमर्द होता है। देहका  
पक्षिक ध्यान नहीं पड़ना। जल, पाद घोर मुख मुख  
जाता है। वमन कतिको दृष्टा हमी रहती है। मर्वादा  
निद्रादयः, कास घोर ग्रास चलना है। नय, वल्ल,  
मुख, मलमूत्र घोर त्वक्का वरं ग्रेत पड़ जाता है।  
पेट पर द्रव्यवर्ष रक्षा घोर गिरा भ्रमरकनी है। उदर  
गुद, क्षिप्रित, स्थिर घोर कठिन हो जाता है।

कुटुम्बों में कहा है—

“इच्छतेऽपि इच्छित्वाऽपि” इत्येवं लि। इत्यन्वयः ।

विनाशं कुरुष्वेति कुरुष्वं कुरुष्वं एव विदुः ॥”

कक्षादरमें पेट गीनच, गृहदरर्ष दितासे ध्याम,  
विहव पौर स्थिर हो जाता है। मय पौर मुय  
गृह वर्ष रहते हैं। पेट स्थिप पौर मद्यामोयवृक्ष  
बनता है। देखते पवनबना या जानी है। यह  
उदररोग पनेक दिनामें बढ़ता है। दिनु नाका पक्षार-  
के सूयरोग पौर हृदरोगमें भी उग्र मक्षप जग मक्षता  
है। त्रिदोष-प्रतिग उदररोगमें बानोदर, पितादर पौर  
कफादर तीनों उदररोगका मक्षप रहता है।

प्रो. जोदरके सम्बन्धमें क्या है—

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

समस्त विद्वत्सु प्रसिद्धः ।

ਸੇ-ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਤਾ ਵਰਤਦੇ ਹਨ। ਸਿਰਫ਼ ਇਹ।

इति तस्य श्लोकः अत्रोक्तं विदुषां सर्वज्ञानमयं वाचकं कथम् ।

संस्कृत-संज्ञा-सूची (संस्कृत-संज्ञा-सूची)

भोजनके बाद अष्टादि पक्षि वनान्, क्षान्तर  
 क्षान्, क्षान्तर गीर पक्षि विज्ञाने, पक्षिणि क्षी  
 क्षान्द स्वाने, क्षान्तये पक्षि भार उदने, क्षान्  
 पक्षि यम पाने पौर वनन तप्य व्याधि क्षान्  
 पक्षि विज्ञाने क्षान्तर गीर वनन तप्य व्याधि  
 क्षान्तर गीर वनन तप्य व्याधि क्षान्तर गीर

हाने पर पेट गर्म पड़नेसे पचना, मुक्त द्रव्यका पचना न पचना रोगीको, अच्छे प्रकार समझ न पड़ना, भोजनसे रुचि वा दृष्टि न मिलना, पाद कुछ कुछ फूल उठना, अल्प अमसे ही दुर्बलता रहना, शीघ्र शीघ्र श्वास प्रश्वास चलना, मल बंध जानेसे श्वास बढ़ना, उदावर्तजनित यन्त्रणा चढ़ना, वस्त्रिशूल तथा सन्धिके स्थानमें वेदना भरना, अल्प भोजनसे ही पेट चचकना और दुखना, पेटपर रेखा देख पड़ने भी फूलनेपर निश्चयी न बिगड़ना । (चरक)

सूत्रुतने भी प्रायः इसी प्रकार पूर्वरूप लिखा है—

“अतुष्टं भवचर्चकाहावनीविनायी उदरे ॥ रात्रिः ।

गौरपरिमाणविशङ्कनी वसी रुजः पादगतस्य शोथः ॥”

यह अनेक प्रकार पीड़ाका पूर्वरूप है। विशीपतः पालोपाथौमें जिसे द्विर्षपठिया अर्थात् अग्निमान्द्य रोग कहते, उसीके इसमें लक्षण अधिक रहते हैं। चरक और सूत्रुतने लिखा है—पैर पर अल्प शोथ था जाता है। किन्तु वसा होनेपर उक्त लक्षण की किसी व्याधिका पूर्वरूप मान नहीं सकते। कारण—यक्ष्म, क्षतपिण्ड, वृक्क या अन्नावरक भिक्षी प्रभृति स्थानमें प्रथम कोई रोग कुछ कालतक संचित रहता है। पोछे कदाचित् देखके स्थान विषम वा सर्वाङ्गमें भले प्रकार रक्त चलफिर किंवा श्लैष्मिक भिक्षी तथा पन्थि प्रभृतिसे निःसृत रस उपयुक्त भांति शष्क पड़ अथवा खेद-मूल प्रयोजनानुरूप निकल न सकनेसे शरीर पर शोथ चढ़ता है।

ऊपर जो समस्त लक्षण लिखे, यक्ष्मकी विशुद्धताका रोग कुछ काल तक रहनेपर ही जाते हैं।

चरकमें वातजनित उदररोगका लक्षण इस प्रकार लिखा है—कुक्षि, हस्त, पाद एवं अण्डकोपपर शोथ आता है। पेटमें सूचके सुभने—जेसी वेदना उठती है। कभी शरीर बढ़ और कभी घट जाता है। कुक्षि तथा पाखमें शूल होता है। उदावर्त, अङ्गमर्द, पर्वभेद, शष्ककास, कृम्यता, दोर्बल और अरुचिका वेग बढ़ता है। शरीरके अयोभागमें शुरुता रहती है। वायु तथा मलमूल बंध जाता है। नख, चक्षु, शर्म एवं मलमूल छत्र तथा पीतवर्णमिश्रित और

रक्तवर्ण बन जाता है। पेटपर सूक्ष्म एवं रक्तवर्ण रेखा तथा गिरा देख पड़ती है। पेट पर पाघात लगानेसे वायुपूर्ण समककी तरह शब्द निकलता है। वायु ऊर्ध्व, अथः और पार्श्वदिक् वेदना बढ़ाते फिरता है। माधवकरने भी कहा है—वातोदरमें हस्त, पाद, नाभि और कुक्षिपर शोथ था जाता है। सूत्रुतने वातोदरका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

“अथवा पार्श्वोदरहस्तगोपेर्धर्मे स लक्षणावगन्तव्यम् ।

सल्लमानाङ्गदुग्धयक्ष्म स्तीर्णमेव पर्वणाकालम् ॥”

इस जगहपर बड़ा गड़बड़ है। किसी पीड़ाके साथ उक्त लक्षणका सामञ्जस्य था सकता है। नाभि और कुक्षिमें शोथ कइनेसे कभी नाभि तथा कुक्षिपर शोथका चढ़ना संभव नहीं। इससे पेटके भीतर अन्नावरक भिक्षीमें ही जलका सञ्चय प्रमाणित है। अन्नावरक भिक्षीमें जल भर जानेसे नाभि और कुक्षिपर ध्रुयक् ध्रुयक् शोथ नहीं चढ़ता। एक ही शोथ सकल स्थानमें पड़ूँव रहता है। केवल रोगीके भिन्न भिन्न प्रकार पाख बदलने पर अपने ही शुरुत्वसे जल निम्न दिक् गिर पड़ता है। जल अधिक होनेसे समस्त उदर भर जाता है। फिर जल अल्प रहनेसे रोगीके उठकर खड़े होने पर नाभिकी निम्न दिक् ढलता है। रोगीके वाम पाख खेतनेसे वाम कुक्षि, दक्षिण पाख सोनेसे दक्षिण कुक्षि और दोनों हस्त तथा दोनों पादपर भर दे चतुष्पद जन्तुकी तरह खड़े होनेसे नाभिके मध्यस्थलमें जल लुदक आता है। फिर भूमिपर मस्तक टेक ऊर्ध्व दिक् पाद उठा देनेसे जल वचकी ओर सरकता है। इसीसे नाभि और कुक्षिपर ध्रुयक् ध्रुयक् शोथ चढ़ नहीं सकता।

दूसरी बात—यदि वातरोगसे भी पेटमें जल जमता, तो उदकोदरसे उसका प्रभेद क्या पड़ता है। इस विषयकी सीमांश मिलना कठिन है। कारण उक्त लक्षण जब सहजित हुये, तब प्रायुर्देके पाचार्य शोथको अन्तरूप पीड़ा समझते थे।

वातोदरका जो लक्षण लिखा, उससे विशेष किसी यात्रिक रोगका सामञ्जस्य लाना दुष्कर है। फिर भी उदर मध्यके कर्कोटादि रोगपर हस्तपाखमें

शोथ, जलोदरी और उससे आधान हो सकता है। पाकस्थलीके विटहि रोगमें भी ऐसा लक्षण रहनेकी सम्भावना है। किन्तु इस रोगका प्रधान लक्षण वमन ही है।

किसी व्यक्तिकी यक्ष्मकी विशुद्धताका रोग रुगा था। प्रथम अग्निमान्य हुआ, अपराह्नकी भय-भय स्वरका वेग बढ़ा, उसके बाद पादपर शोथ बढ़ा और सबसे पीछे हृषण एवं हस्त फूला, तथा पेट लक्ष्म भर गया। इसी अवस्थामें किसी प्रसिद्ध कथिराजने उसे देख बातोंदरका रोग बताया था। किन्तु रोगीके पेटसे अत्यन्त पन्द्रह सेर जल निकाला गया। किसी रोगीके प्रस्तावकी पीड़ासे हस्त, पाद और मुख पर शोथ बढ़ा था। पीछे एक दिन संशो वजाते वजाते उसके वायुमूल (Flatulent colic) होने लगा। किन्तु लक्षण प्रथितनामा बेश्म रोगकी बातोंदर ठहराया था। अतएव जो स्वदेशीय एवं विदेशीय उभय प्रकारकी, चिकित्साके शास्त्रका अनुशीलन करते, ऐसे स्थलपर वे बड़े गड़बड़में पड़ते हैं।

पित्तोदरका लक्षण भी ठीक नहीं बैठता। चरक-संहितामें लिखा—पित्तोदर रोगमें रोगीको दाह, त्वर, दृष्ट्या, मूर्च्छा, अतीसार और भ्रमका वेग दहलता है। मुखमें कटु आस्वाद आ जाता है। नख, चक्षु, मुख, त्वक् एवं मलमूलका वर्ण हरा और पीला देख पड़ता है। पेट पर नील, पीत, हरित एवं ताम्रवर्ण रेखा तथा गिरा भनकती है। फिर दाह एवं तापके उद्गारसे धूम निकलने पर पेट उष्ण रहता, घर्म तथा क्लेद छोड़ता, दशनेसे कोमल लगता और शीघ्र पकता है।

सुश्रुत नहीं कहता—पित्तोदरमें पेटका कौन स्थान पकता है। उसमें संक्षेपसे यह लक्षण मिलता—पित्तोदर होनेपर मुखशोथ, दृष्ट्या, स्वर एवं दाहका वेग बढ़ता है। शरीर पीत पड़ जाता है। समस्त गिरा, चक्षु, नख, मुख और मलमूलका वर्ण भी पीत ही रहता है। यह रोग भय भय बहुत दिनोंमें बढ़ता है।

“यक्ष्मोदरकाग्रदाहपुत्रं पीतं गिरा दह भवति शोकाः ।  
पीतादिरिक्कमूलगन्धानल पित्तोदरं त्व चिपिभिदि ॥”

यक्ष्मकी संहित पीड़ासे उदर पक जानेपर दे सकल लक्षण भ्रमक सकते हैं।

चरकमें श्लेष्मजनित उदररोगका यह लक्षण लिखा—रोगीको शरीर भारी मालूम पड़ता है। भोजनसे पश्वि रहती है। अपाक और अहमर्द होता है। देहका अधिक ध्यान नहीं पड़ता। हस्त, पाद और मुख सूज जाता है। वमन करनेकी इच्छा वनी रहती है। सर्वदा निद्रावस्थ, कास और खास चलता है। नख, चक्षु, मुख, मलमूल और त्वक्का वर्ण श्वेत पड़ जाता है। पेट पर शुक्लवर्ण रेखा और गिरा भनकती है। उदर शुब, स्थिति, स्थिर और कठिन हो जाता है।

सुश्रुतने भी कहा है—

“यक्ष्मोदरं यक्ष्मोदरान्नं चक्षो विरं दहमन्मानसः ।

विश्वं नक्ष्मोदरुतं सदाहं यक्ष्मोदरं त्व चिपिभिदि ॥”

कफोदरमें पेट शीतल, शुक्लवर्ण गिरासे व्यात, विक्षण और स्थिर हो जाता है। नख और मुख शुक्ल वर्ण रहते हैं। पेट श्लिष और महाशोथयुक्त बनता है। देहमें पश्वसत्ता आ जाती है। यह उदररोग अनेक दिनोंमें बढ़ता है। किन्तु नाग प्रकारके मूलरोग और हृद्दोगमें भी उक्त लक्षण लग सकता है। विदोष-जनित उदररोगमें वातोदर, पित्तोदर और कफोदर तीनों उदररोगका लक्षण रहता है।

झीहोदरके सम्बन्धमें कहा है—

“अभितलातिष्ठं शोभाह्वानशामभिरुचिरे ।

अतिशयामराध्वरमनकाधिकवर्णैः ॥

वामपार्श्वस्थितः शोभापुतिः स्थानम् वचनं ।

शोभितं वा रथादिभ्यो विज्ञाप्य विवर्णयेत् ॥

इति सप्त झीहा अतिशयप्रतिषेधतो रथं मानवकारं व्यात उपनयने ।  
स शोभितः श्वनेषु कुचिं लक्षणप्रतिज्ञाप्य परिचितुदरमिति ॥  
वदि ॥” (चरक)

भोजनके बाद चहादि अधिक चसाने, यानपर जाने, यानपर शरीर अधिक हिताने, प्रतिरिक्त स्त्री संसर्ग लगाने, चमतसे अधिक भार उठाने, यथपर अधिक अम्र पाने और वमन तथा व्याधि द्वारा शरीर अधिक धिनानेसे पञ्चरकी वामपार्श्वस्थित झीहा स्तनानकी कोड़ बढ़ती किंवा रसादि द्वारा रक्त



प्रतिशय उपजनेसे वही वर्धमान झीड़ा। पक्षिका स्थूल पड़ती है। शीतोरका लक्षण तथा शीतोरकसे उठ सकनेवाली समस्त पौष्टिक विवरण शीड़ा और यकृत उदरका लक्षण यकृत मर्दमें देखी।

चरकमें वसोदरका लक्षण एवं निदान इसप्रकार लिखा है—खाद्य द्रव्यके साथ चक्षुका लोम पेटमें पड़ने और उदावर्त, भयं एवं भन्त सन्धूकन प्रकृति कोई रोग रहनेसे मलका द्वार रुक जाता है। फिर अपान वायु अपना पथ बन्द होनेपर बिगड़ कर घातु, भग्नि, मूल, पित्त एवं वेगको रोक देता है। इसीसे वसोदर रोग होता है। इससे दृष्ट्या, दाह, ज्वर एवं सुख तथा तालुग्रोषका वेग बढ़ता और उर अवसन्न पड़ता है। श्वास, कास, दीर्घश्वास, अरुचि, अपाक, मलमूल बन्ध, आघमान, वमि, कम्प, शिरःपीड़ा, हृदयवेदना, नाभिशूल और उदरवेदनाका भागमन लगता है। इस पीड़ामें उदर स्थिर रहता है। पेटपर रक्त एवं नील वर्ण रेखा तथा शिरा देख पड़ती हैं। किंवा रेखासमूह नाभि पर गोपुच्छ-जैसा आकार बना बढ़ा करता है। इस वसोदर वा वक्षुदोदर कहते हैं।

डाक्टरीके मतसे यह अन्तर्वरोधकी पीड़ा (obstruction of the bowels) है। पाकस्थली आदि स्थानोंमें कर्कटरोग, पुरातन रक्तामशय प्रकृति अनेक कारणोंसे अन्तका पथ रुक सकता है।

असादिके साथ कड़ड़, दण, काष्ठ, पक्षि, कण्टक प्रकृति खा लेनेसे चिकी आने लगती है। फिर प्रति भोजन द्वारा ही अन्तमें छिद्र पड़ जाता है। उस समय अन्तश्चक्रनादि भुक्त द्रव्य सकल छिद्रसे बाहर निकल मलहार और अन्तको पूर देता है। क्रमशः वही रस नाभिसे नीचे जम उदकादर एवं वातादि जिस दोषका आधिक्य पाता, उसीका लक्षण सकल देखाता है। इस प्रकारके उदरग्रोषमें नील, पीत, पिच्छिल, दुर्गन्ध एवं अपक्व मल निकलता और चिक्का, श्वास, कास, दृष्ट्या, प्रमेह, अरुचि, अपरिपाक तथा दीर्घादिका लक्षण भलकता है। (चरण) यही उदर-रोग डाक्टरीके हिसाबसे (Perforation of the bowels and stomach) है।

पद्मान ग्रन्थ अनेक प्रकार द्रव्य सुखमें डाल खा

जाते हैं। पागल मो-वाल, रसो-पीर कड़ड़ निगलते हैं। डाक्टर पोनकने एक उन्मत्त बालिकाकी बात लिखी है। उसका वयःक्रम १८ वत्सर रहा। उसके पेटपर चाम-जैसा क्या न क्या उभर आया था। मोजनोपरास्त वसन करती थी। यही उसका उपसर्ग था। कुछ दिन बाद बालिका मर गयी। डाक्टरोंने पेट फाड़ कर देखा, कि पाकस्थलीका पक्षिकास्थान बाल और रसोकी लच्छेरी भरा था। कितना ही पाकस्थलीके दक्षिण मुखमें फंसा, कुछ हाद-शाङ्कल यन्त्रके मध्य धंसा और घोड़ा लच्छा शून्यान्त्रके ऊपर ठंसा था।

वफानलने किसी अपस्यारके रोगिणीकी कथा कही है। २२ वत्सर वयःक्रमपर अन्तर्वेष्टिभिन्निके प्रदाहसे वह मर गयी। पाकस्थलीके स्वर्य चक्रांग (lesser curvature)में अठवी परिमित एक छेद हुआ था। छिद्रकी चारो दिक् कृष्णवर्ण चत रहा। पाकस्थली औरनेपर भीतरसे सात घेर भाटा, घृत और नारियलका छिलका निकल पड़ा।

इमानने लिखा है—एक शिशु मुख खोसी सी रहा था। इठान् एक शुद्धिया दौड़कर उसके मुखमें हुस गयी। किन्तु परिशेषको पचते-पचते मलहारसे वह नीचे गिरी थी। उससे कोई उपसर्ग न उठा।

सोनि-ये-मोरेने एक झोका विवरण बतलाया है। वह ग्यारह कांटे और छोटे छोटे कांसिके टुकड़े निकल गयी थी। जान मार्शलने लिखा है—एक झोकी पाकस्थलीमें प्रायः पांच छटोका सूत रहा। एतद्विज हादशाङ्कल अन्तमें अनेक सूच भी मिले थे।

पोलरुडने किसी रोगीका हाल कथा है। उसके हादशाङ्कल अन्तमें सखुख दिक् छिद्र पड़ा था। पाकस्थली एवं अन्तमें सवा घेर लोहा-लङ्गड़ और कड़ड़-पत्थर रहा।

इन सकल कारणोंके सिवा दूसरी भी अनेक कारणोंसे पाकस्थली और अन्तमें छिद्र पड़ सकता है। अपने अथवा यकृत तथा झीड़ाके फोड़ेसे भी पाकस्थलीमें छिद्र हो जाता है। फिर कर्कट, पुरातन रक्तातिसार एवं अन्तज्वर प्रकृति रोगसे फोड़ा उभरता है।

यक्ष्मसे बड़ी पथरी खिसक अन्त्रके किसी स्थानमें पड़ जानेसे भी चत और छिद्र हो सकता है।

अन्त्रमें छिद्र पड़ने समय छटात् रोगीकी अवस्था बदल जाती है। पेटमें दुःसह वेदना उठती है। किसीकी अधिक और किसीकी अल्प हिक्का आने लगती है। फिर किसी किसी रोगीको कुछ भी हिक्का नहीं आती। जोर जोरसे वमन होता है। कपोलपर बिन्दु बिन्दु पसीना निकल आता और किसीका सर्वाङ्ग पसीनेसे भर जाता है। रोगी पैर समेट सुस्थिर भागमें पड़ा रहता, किन्तु हिलना डुलना या बात करना नहीं बनता। निश्वास छोड़नेमें भी कष्ट लगता है। नाड़ी चौथ, चक्कल और शब्दहीन हो जाती है। मुखकी त्वी कुम्हलाती और जिह्वा सुखाती है। अतिग्रथ लक्षणा लगती है। पेटकी अल्प दवानिसे ही कष्ट मालूम पड़ता है। ऐसी अवस्थामें रोगी अवसन्न हो शीघ्र प्राण छो देता है। किसीकी अवस्था कुछ दिनको थोड़ी बहुत सुधर जाती परन्तु परिशेषमें उसे मृत्यु घर दशाती है। अन्त्रमें छिद्र पड़नेसे किसी किसी रोगीको अन्त्रवेष्ट भिक्षोपर प्रदाह उठता है।

उदकोदर, दकोदर वा जलोदरका लक्षण चरकमें इस प्रकार बतलाया है—जो व्यक्ति अधिक खाता किंवा अभिनका विजः गंवाता तथा अपनेकी शीघ्र एवं क्षय बनाता, वह अधिक परिमाणमें जल पीनेसे सुधामान्द्य रोग बढ़ाता है। उस समय वायु क्षीम स्थानमें ठहर जाता है। क्रमशः सकल स्रोतका पथ रुकता और पीत जलसे कफ बढ़ता है। परिशेषमें उभय स्वस्थानसे पीत जल बड़ा उदर रोग उत्पन्न करते हैं। इस उदररोगमें भोजनकी इच्छा नहीं रहती। लक्षणा बहुत लगती है। गुदस्त्राव, शूल, श्वास, काश और दोर्बल्य दुष्पा करता है। पेटपर नाना वर्णकी रेखा तथा शिरा देख पड़ती और आघात लगानेसे जलपूष मशककी तरह कंपकंपी उठती है।

किन्तु छात्ररीके हिंसासे यह आसाइटिस (Ascites) रोग है। दकोदर स्वयं-कीर्ति विधेय व्याधि नहीं—अन्य अन्य रोगकी श्रेय अवस्थाका एक लक्षण-

मात्र है। यक्ष्मकी विगुंक्ता, पुरातन ग्रीवा, पुरातन अन्त्रवेष्टप्रदाह, पुरातन रक्षातिसार प्रभृति नाना प्रकार रोगकी श्रेय दशामें दकोदर हो सकता है। फिर किसी व्यक्तिको जेल देकर भी यह रोग पकड़ लेता, परन्तु ऐसा दकोदर सुसाध्य है।

किसी सखित पीड़ापर शिरासमूहमें रक्त न पड़ने किंवा आण्डलासिक पदार्थ स्वल्प पड़नेसे प्रथम उदरमें नहीं—अन्त्रवेष्ट भिक्षोमें जन जमता है। पूर्वं हस्तपाद पर शोथ चढ़ आता, पश्चात् उदरमें जल भर जाता है। किन्तु यक्ष्मकी पीड़ामें हस्तपादपर शोथ न चढ़ने भी दकोदर हो सकता है।

किसी किसी रोगीके पेटमें अल्प परिमित जल रहता और दूसरोंके उदरमें बाधे मनसे भी ज्यादा जल मिलता है। एक दकोदरवाले रोगीके पेटमें जलके साथ छः बड़े बड़े कीड़े भी थे। पुरातन सड़ेगले सर्वाङ्गजनके पेटमें ईपत् हरिद्रावर्ण बड़े मोटे मोटे कीड़ों-जैसे वे रहे। मस्तक, मुख तथा मल-हार क्षयवर्ण और दृष्ट अश्रियुक्त था। शब्दाई तीन और चौड़ाई छेठ अङ्गुल बैठे, सुखमें कतरनी-जैसी तीक्ष्ण दंष्ट्रा थी। सकल ही कीट जोवित थे। जल और खाद्य द्रव्यके साथ अनेक कीट उदरमें पड़ते हैं। पेटमें उगके ग मर मिटनेसे नानाप्रकार पीड़ा उठती है। फिर सुद्रावस्था पर अन्त्रकी काट वह अन्त्रवेष्ट भिक्षोमें घुसते हैं। पर्याप्तको उन्हींकी उग्रतासे दकोदर रोग लग जाता है। इस रोगमें रोगी प्रायः दश वत्सर जीता है।

दकोदरका जल अनेक स्थानोंपर अधिक परिष्कृत रहता और किसीके मेला और किसीके पेटमें बीला भी पड़ता है। इस जलका सन्ताप गात्रके सन्तापसे मिलता है। हाँ, इसमें लवणका अंश, आण्डलासिक पदार्थ और फेब्रिन होता है। पेटमें अधिक जल सखित होनेसे यक्ष्म, ग्रीवा और हृक् तनी छोटे पड़ जाते हैं। हृदय और उदरमध्यवेष्ट (Diaphragm) ऊपरकी चढ़ने लगता है।

दकोदर होनेसे प्रथम पेटमें सार मालूम पड़ता है। सुधा कम लगती है। कोष्ठकी शक्ति नहीं

जाती। प्रस्त्राव भली भाँति परिष्कृत नहीं पड़ता। क्रममें जलका परिमाण बढनेसे खासकष्ट ही जाता है। फिर अधिक फूलनेसे उदर, अण्डकोष एवं पुरुषाङ्ग पर सूजन आ जाती एवं उदर पर गिरा देखाती है। आघात लगानेसे पेट ठलका करता है।

उदररोगकी चिकित्साका एक सामान्य विधि होता है। इसमें विशेष कुछ करने धरनेकी बात नहीं। कारण पड़ने ही कष्ट चुके हैं,—उदररोग स्वयं कोई स्वतन्त्र बीड़ा नहीं। अतएव मूल बीड़ाकी ही निश्चित रूपसे चिकित्सा होना चाहिये।

चरकमें असाध्य उदररोगके लक्षण 'बहुत अस्थी तरह लिखे हैं। यथा—“कदातुमुपद्रवाः न्यग्निं कथंतेऽतोऽतार-ममकः दण्डा-वास-काय-हिंसादीर्बल्यपात्रं यत्रावृचिसरमेदमूलसङ्कादवसपा-विषमचिकित्सं विधादिति।”

वमन, अतिसार, तमक, पिपासा, श्वास, काश, हिक्का, दीर्बल्य, पार्श्वशूल, अरुचि, स्वरभेद, मूलरोध प्रभृति-जैसे उपसर्ग उठनेसे रोगीको अधिकित्स्य समझते हैं।

“पचाद्वृद्धं नृवं सर्वं जलोदकं यथा।

प्राची भवत्यभावाद् विद्वान् चोदरं वृथान्॥”

बहु शूदोदर, सकल प्रकार जलोदर और हिक्का-न्दोदर राग होनेसे प्रायः एक पक्षके बाद मनुष्य मर जाता है।

“यन्मात्रं छटिषीपस्यमप्रतिव्रतगुलचम्।

अस्योपि तमांसाप्रिपरिचोच सत्यमिन्॥

स्वयम् स्वैमनीत्यः आसी हिक्कावपिः कटम्।

नृकावृचिविचारय मिहमादित्वे नरम्॥”

चक्षु पर सूज न बढ़ने, पुरुषाङ्ग भुङ्कने, चर्म होंदुक्त तथा पतला पड़ने और बल, रक्त, मांस एवं क्षुधा घटनेसे उदररोगीको छोड़ देना चाहिये।

सकल मर्मस्थानपर शोध बढ़ने और श्वास, हिक्का, अरुचि, दण्डा, मूर्च्छा, वमन, अतिसार प्रभृति उपसर्ग उठनेसे दकोदरका रोगी मरता है।

उदररोगमें विरेचक औषध खिलाना, पिचकारी लगाना और खेद कराना ही वैद्यशास्त्रकी प्रधान चिकित्सा है। तद्विषय अन्य अन्य प्रकार भी औषधकी व्यवस्था हो सकती है।

इस रोगपर जलोदरदिसर देनेका विधान है—

“पिपली मरिचं तावत् रजनोचूर्णसंयुतम्।

शुचीपारिदं नं मयं तुभ्यमेवायकीमहम्॥

निष्ठां खादित्विरक्तं स्यात् सद्योऽस्ति जलोदरम्।

रैचननाथ सर्वेभ्योऽप्यथ सत्यमे विद्वान्॥

दिनामे च प्रदातव्यमत्र वा सुद्वयपक्वम्॥” (रसैष्टसारचर्च)

पिपली, मरिच, (मारित) ताम्र, घनिया और हरिद्रा सकल द्रव्यका एक-एक भाग रस एक दिवस सहीजनके दुग्धमें घोंटे, फिर जयपालबीजका चूर्ण एक भाग मिला दो रत्ती प्रमाण वटिका बांध डाले। इस औषधकी खानेसे जलोदर रोग सद्य ही मिट जाता है। सकल प्रकार विरेचनकी दधियुक्त अन्न ही रोकता है। अतएव इस औषधके सेवनपर दिनान्तकी दधि प्यवा सुद्वयपुष्पका अन्नका पथ देना चाहिये। उदररोगके अधिकारका इच्छाभेदीरस यह है—

“शुष्की मरिचसंयुक्तं रसमथकटहणम्।

नैपाली विगुचः शीतः सर्वमिदं चूर्णयेत्॥

इच्छाभेदी विगुचः स्यात् चित्ता वच दापयेत्॥

विषे च सुक्ताय वायव्यं सावद्वयरात्रि विरेचयेत्॥”

शुष्की, मरिच, (शोधित) पारंद, गन्धक और सोहागा समुदाय द्रव्य एक एक भाग और जयपालका बीज दो भाग ले पीस डाले। इस औषधको दो रत्ती प्रमाण चीनीके साथ खाना चाहिये। इसे इच्छाभेदी रस कहते हैं। यह औषध खाकर जितने गण्डू, जल पीते, उतने ही बार वमन करते हैं।

वर्तमान डाक्टरोंकी तरह पेटमें जल जमनेसे प्राचीन आयुर्वेदाचार्य भी उसे निकाल डालते थे। उन्होंने लिखा है—

“तथाप्राग्मेकैकीभागी यत्र यिलाङ्गुलवयम्।

जलनाडीचालुमयं, इत्यपने च वेष्टयेत्॥

एरञ्जत्रयनाथस्य वयं सद्यारयेत् यः।

चान्नैतज्जघं जान्यं ततः घनारयेद्द्वयम्॥

यदा न धरति तब तदा दाहः प्रयत्ये।

छावाकलं परिचाय्य चूर्णं रैयं चतुर्थं यम्॥

शुद्धिनिवा यमं प्राप्य पायसाक्षिपेन द्वितम्॥

यदाकले निषकृष्टं ही विजातिरैव आरयेत्॥

दुग्धं चरं क्लृप्तं च न पुनर्दायव्यं तव त्॥

प्रक्रियायां भूयो यन्त्रः क्रियायां संभयो भवेत् ।

तथादस्य कर्मण्यमोदरः सतिवर्त्तमानः ।

इसी हेतु नाभिके वलिकी दिक् दो चङ्गुलि छोड़ जल गाड़ीको सुधार कुम्पकसे लपेट दे और परण्डके पत्रका नल उसमें चला अन्तर्गत जल निकाल ले । तदनन्तर सत्वर उसे बन्द करना चाहिये । यदि जलका निर्गम न हो सके, तो दाह लगानेको ही प्रयत्न समझे । जलको निकाल औरकका कल्क चतुर्गुण घीमें मिला समभाग गुच्छी एवं विपाकी साथ पका पीने और चुपड़नेसे उपकार पड़ता है । दूसरी बात यह है, कि अतिशय निपुण और अभिन्न व्यक्तिसे अस्त्रका कार्य ले । अस्त्रकर्म अत्यन्त दुष्कार है । यत्र तत्र उसे न करे । इस रोगमें अस्त्र न लगानेसे निश्चय मृत्यु पाती है । किन्तु अस्त्रकर्म कर देनेसे उसमें संशय पड़ जाता है । अतएव ईश्वरको साची ठहारा अथवा जलोदरमें अस्त्रकर्म करना चाहिये । जल निकाल डालनेसे अनेक स्थलोंमें रोगी घारोम्य नहीं पाता, केवल यन्त्रयाका वेग घट जाता है । क्योंकि निकाल डालने से भी अल्प दिन बाद पुनर्वार जल पेटमें भरता और शीघ्र रोगी मरता है । किन्तु भीतर कोई विशेष यान्त्रिक पौड़ा न रहने पर इस प्रक्रियासे घारोम्य लाभ होता है ।

अथ शब्दोंमें उदरसंज्ञाका भिन्न देखो ।

उदरक (सं० त्रि०) उदरसम्बन्धीय, पेटके सुताक्षिक । उदरग्रन्थि (सं० पु०) उदरस्थ ग्रन्थिरिव । १ अश्वरी-रोग, हृदय-उल-बौल, चिन्मङ्ग । २ गुल्मरोग, तिहरी, पिलही ।

उदरज्वाला (सं० स्त्री०) १ जठराग्नि, खाना हज्म करनेवाली हारत । २ घुसुसा, भूक ।

उदरत्राण (सं० स्त्री०) उदरस्थ त्राणो यस्मात् । १ कायस, बहुर । २ वरत्रा, कमरबन्द ।

उदरधि (सं० पु०) उत्-ऊ-धधिन्-चित् । उदधेपित् । अथ शब्दः । १ समुद्र । २ सूर्य ।

उदरमा (हिं० लि०) खण्ड खण्ड होना, टुकड़े चढ़ना ।

उदरगाड़ी (सं० स्त्री०) अन्तर्गाड़ी, घात ।

उदरपरता (सं० स्त्री०) रोगविशेष, एक बीमारी । इसमें बहुत खानेको मन चला करता है ।

उदरपरायण (सं० त्रि०) उदरं उदरपूरणमेव परं अयनं प्रधानाश्रयो यस्य, यदा उदरे विषये परायण प्राप्तः । पेटक, पेट, सिर्फ पेट भरनेकी क्रिया रखनेवाला ।

उदरपरीक्षा (सं० स्त्री०) जठर-परीक्षा, मेदेको जांच । उदरपियाच (सं० त्रि०) उदराय तत्पूरणाय पियाच इव । १ यथेच्छाहारो, मनमानी चीज खानेवाला । (पु०) २ सर्वात्मसक्त, बड़पेटा ।

उदरपौड़ा (सं० स्त्री०) उदरामय, पेटका दर्द ।

उदरपुर (सं० अश्व०) उदरपूर्तिपर्यन्त, पेट भर जाने तक ।

उदरपोषण (सं० स्त्री०) कुक्षिपालन, पेटका भराव ।

उदरभङ्ग (सं० पु०) उदरस्थ भङ्गः । अतीसाररोग, दस्तकी बीमारी ।

उदरभरणमात्रकेवलीच्छु (सं० त्रि०) केवल उदर पोषणका अभिलाषी, जो सिर्फ पेट भरनेकी खाहिश रखता हो ।

उदरभरि (सं० त्रि०) उदरं विभक्तिं, उदर-इन्-सुम् च । “आत्मनोमुपासनं इत्युक्तं यथा । चतुस्तुष्टयार्थे उपकारः ।”

(विज्ञानकोश) आत्मभरि, पेट, बड़ा खानेवाला ।

उदररस (सं० पु०) उदरका पाचक रस, जो अर्क पेटका खाना हज्म करता हो ।

उदररेखा (सं० स्त्री०) उदरकी रेखा, पेटका बत ।

उदररोग (सं० पु०) कुक्षिकी पौड़ा, पेटकी बीमारी । उदर देखो ।

उदरवत् (सं० त्रि०) दीर्घ उदरयुक्त, बड़े पेटवाला ।

उदरवृद्धि (सं० स्त्री०) उदरस्त्रीति, पेटको बढ़ाई ।

उदरव्याधि (सं० पु०) उदरामय, पेटको एक बीमारी ।

उदरग्रय (सं० त्रि०) उदरको भूमिसे लगा ग्रयन करनेवाला, जो पेटके बल सेटता हो ।

उदरशाण्डिल (सं० पु०) ऋषिविशेष । (भात, पृ० १५०)

उदरसर्वस्व (सं० पु०) भोजनचक्षु, भिक्षमपरस्व, चटोरा ।

उदरस्फटा ( सं० स्त्री० ) नागवल्ली, यान।

उदराग्नि ( सं० पु० ) जठराग्नि, सफरा, पेटमें खाना  
हजम करनेवाली ईरारत।

उदराधान ( सं० स्त्री० ) उदरस्थ आधानम्। उदरकी  
वायुफुल्ला, पेटका फूलना।

उदरानलपत्रक ( सं० पु० ) लघुतालीशपत्र।

उदरामय ( सं० पु० ) उदरस्थ आमयः। अतौसार  
रोग, आंवके दस्त लगने की बीमारी। अविचार देखो।

उदरामयकुम्भकेशरी ( सं० पु० ) श्लेष्माधिकारका एक  
रस, तिक्तोकी एक दवा। पारा, गन्धक, ताम्बू,  
त्रिकटु, यवचार, टङ्गण, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक,  
पञ्चलवण, यमानी एवं हिरण्य, मल्लिक समभाग ले चौबूके  
रसमें घोटो। एक मापा परिमित बटिका खिलानेसे  
उदरामय रोग अच्छा हो जाता है। ( रसैन्द्रसारचण्ड )

उदरामयिन् ( सं० त्रि० ) उदरामययुक्त, जिसके  
आंवकी बीमारी रहे।

उदरारिरस ( सं० पु० ) उदराधिकारका रस, पेटकी  
एक दवा। पारद, शक्तितुल्य, जैपाल और पिप्पली  
बराबर बराबर डाल बचीचौरमें घोटो। सापामात्र  
बटो खानेसे स्त्रीका जसोदर आरोग्य होता है। दधि  
और शोदनका पण्य देना योग्य है। ( रसैन्द्रसारचण्ड )

उदरावर्त ( सं० पु० ) उदरस्थ आवर्त इव। नाभि,  
नाफ, खंडी।

उदरावेष्ट ( सं० पु० ) शरीर क्लमिद, पेटका  
झेंचुवा।

उदरिक, उदरिन् देखो।

उदरिणी ( सं० स्त्री० ) उदर-इनि-डीप्। गर्भवती,  
हामिला, जिसके पेटमें लड़का रहे।

उदरिन् ( सं० त्रि० ) १ उदरिक, बड़े पेटवाला।  
२ कुक्षिसम्बन्धीय, गिकमी, जो पेटसे सरोकार  
रखता हो। ३ उदरसर्वस्व।

उदरिल ( सं० त्रि० ) उदर-इलच्। गुदादिभ्य इलच्।  
या श्रुति०। उदरी, तोदल, सुरसुरीका शैला।

उदक ( सं० पु० ) उत्-ऊच्-घञ्। १ उत्तरकाल,  
आयिन्दा जमाना। २ भाविफल, कामका भागे पाने-  
वाला नतीजा। ३ सदनकण्टक, मेनफल। ४ धूसूर

वृक्ष, धतूरेका पेड़। ५ उत्कर्ष, सव्यक्त, भारी निकल-  
जानेका काम। ६ चन्त, सिरा। ७ भवनकी उन्नता,  
इमारतकी बुलन्दी। ८ उपहार, इनाम।

उदार्चिस् ( सं० पु० ) उन्नतमर्चिः शिरा, यस्य।  
१ अग्नि, आग। २ शिव। ३ कामदेव। ( त्रि० )  
उन्नतं प्रभा यस्मात्। ४ प्रवृत्तित, भभकता इषा।

उदर्द ( सं० पु० ) उत्-अर्द-घञ्। दह, डमरा,  
ददोरा। वरटीके दहसंस्थान पर शीघ्र बढ़ने, कण्ठ  
उठने, अथवा बढ़ने, सड़न पड़ने और कर्द, खर  
एवं विदाह लगनेसे यह रोग उपजता है। ( माधवनिदान )

उदर्दप्रशमनवर्ग ( सं० पु० ) उदर्दके शमनका एक  
योग, ददोरा मिटानेवाली चीजोंका जखीरा। तिन्दुक,  
पियाल, बदर, खदिर, कदर, सप्तपर्ण, शङ्खकर्ण,  
चर्बुन, पीतशाल और विट्खदिर मिलनेसे यह वर्ग  
बनता है। ( चरक )

उदर्थ ( सं० पु० ) शोषल्लव, सर्प हुंकार।  
उदर्थ ( सं० त्रि० ) १ उदरी, पेटवाला। ( वै० स्त्री० )

२ उदरपूरक, पेटका माहा।

उदलशरी—आसाम प्रान्तके देरङ्ग जिलेका एक ग्राम।  
यह भूटानकी सीमाके समीप है। निकटवर्ती पहाड़ी  
लोमोंके साथ व्यापार करनेकी प्रति ययें यहां मिला  
लगता, जो प्रायः एक मास चलता है। भूटागकी राजा  
भेंटकी चीजें खरीदने पाया करते हैं। भूटिये हजारों  
रुपये का टह्, कम्बल, नमक तथा मोम बेचते और  
चावल, रुई, कपड़ा एवं पीतलका बरतन खरीदते हैं।

उदलावणिक ( सं० त्रि० ) उदलवण-ठक्। लव-  
णोदकसिद्ध, नमक और पानीसे पकाया हुआ।

उदवयह ( सं० पु० ) स्वरित आघात विशेष। यह  
उदात्तपर निर्भर रहता, जो ध्रुवपद्धतिमें उठता है।

उदवमा ( हि० कि० ) उदय होगा, निकलना, देह  
पड़ना।

उदवसानीय ( वै० त्रि० ) अन्तिम, अखीर।

उदवसित ( सं० स्त्री० ) उदूर्ध्वमवसीयते अ, उद-  
अव-पिच् वहुवचने वा स्त। भवन, भकान्, रहनेकी  
जगह।

उदवास ( सं० पु० ) उदके व्रतार्थवासः, उदादेशः।

येथ वासवाहनविषुय । पा १।१५५ । प्रतके पालनार्थ जलमें वास ।

उदवाह ( वै० पु० ) जलवाहक, पानी डोनेवाला ।

( अक्ष३।७५२ ) ( हिं० ) उदाह देखो ।

उदवेग ( हिं० ) उद्वेग देखो ।

उदगराव ( वै० पु० ) जलपूर्ण गराव, पानीसे भरा म्याला । ( आन्दीय उपनिषत् ५५१ )

उदयु ( सं० त्रि० ) उद्वतमयु यस्य, प्रादि० बहुव्री० ।

निर्गतायु, आसू बहानेवाला ।

उदक्षित् ( सं० स्त्री० ) उदके नक्षयति वर्धते, उद-क्षि-क्षिप्-त्वा । अर्धकल तक, भाषा पानी और भाषा मठा । यह लम्बा, दाढ़ तथा मुखके शीघ और पुपड़नेसे कुछको दूर करता है । ( राजवज्रम् )

उदसन ( सं० स्त्री० ) उत्क्षेपण, फेंक फांक, उठाव ।

उदसना ( हिं० स्त्री० ) उठ जाना, उखड़ना, बर-बाद होना ।

उदस्त ( सं० त्रि० ) उत्-पस-त्त । १ उत्क्षिप्त, फेंका हुआ । २ वहिष्कृत, निकाला हुआ ।

उदस्य ( सं० चक्षु० ) १ उदसन करके, फेंक कर । २ वहिष्कार करके, निकालेकर । ३ चेष्टा करके, कोशिश लगाकर ।

उदहरण ( सं० पु० ) उदकं क्रियते अनेन, उत्-हृ करणे ऋदु । ऊभ, घड़ा ।

उदहार ( सं० त्रि० ) उदकं हरति, ह-अण् उदादेयः । १ जलहारक, पानी लानेवाला । ( पु० ) भावे घञ् । २ जलहरण, पानी लानेका काम ।

उदाज ( सं० पु० ) उद-अज-घञ्, कवर्गादेशो न स्यात् । अजिग्रवीभक्ष । पा ७।३।१५ "उदाजः अजिग्रवाणाम् ( अरचम् ) ।" ( विद्याकीसरी ) प्रेरण, पट्टु चाने या भेजनेका काम ।

उदाजी चौहान—दाक्षिणात्यवासे रामचन्द्रपत्न्यके एक सैनिक । इन्होंने शाहूराजके समय पूनाकी वारना उपत्यकामें बत्तीस गिरालका किला जीत लिया था । किन्तु शाहूने इन्हें गिराल और कराहका चौध दे अपना मित्र बनाया था ।

उदाजी पवार—दाक्षिणात्यवासे शाहू नृपतिके एक अश्वारोही सेनापति । पहले इनके पिताको राम-

चन्द्रपत्न्य चमाल्यने गिष्ठीके घेरे जानेपर शासक बनाया था । ये शाहूके सैन्यमें भरती हो कितनेही अश्वारोहियोंके अधिनायक रहे । इन्होंने गुजरात और मालवेपर आक्रमण मारा था । लूनाबाड़ तक गुजरात सूटा गया, किन्तु गिरघर बहादुर मालवेके रक्षक बनने पर इन्हें घारका किला छोड़ पीछे हटना पड़ा । १६८६ ई० को उदाजी पवारने मांडूका किला छीना था । १७३१ ई० की १ वी अपरेलकी बड़ोदेके निकट भीलापुरमें जो युद्ध हुआ, उसमें इन्होंने निजाम् उल्-मुल्ककी फौजके हाथ आत्मसमर्पण किया ।

उदात्त ( सं० पु० ) उत्-पा-दा-त्त । उद्देवताः । पा १।५१८ "तात्तादिबु उपायेषु स्थानेषु भूमि निपत्रीः शुदानः ।" ( विज्ञानबीजरी ) १ सुखमें तात्तु प्रभृति ऊर्ध्व भागसे उच्चारित होनेवाली स्वर, तेज, लहज, तीखा स्वर । अउदात्त देखो । २ वाद्य विशेष, एक बाजा । ३ दान, बख्शिय । ४ काव्यालङ्कार विशेष । ५ सुदीर्घ भेरी, बड़ा ढोल । ६ कार्य, काम । ( स्त्री० ) ७ आभूषण-विशेष, एक गहना । ( चि० ) कर्तरि क्त । ८ मङ्गल, बड़ा । ९ समर्थ, काबिल । १० दाता, देनेवाला । ११ उच्च, ऊँचा । १२ उच्च स्वरयुक्त, तीखे स्वरवाला । १३ सुन्दर, खूबसूरत । १४ प्रिय, प्यारा ।

उदात्तमय ( सं० त्रि० ) उदात्तसदृश, तीखे स्वरसे मिलता-जुलता ।

उदात्तवत् ( सं० त्रि० ) उदात्तस्वरसे उच्चारण किया जानेवाला, जो तीखी आवाजसे बोला जाता हो ।

उदात्तयुति, उदात्तवत् देखो ।

उदात्तयुतिता ( सं० स्त्री० ) उदात्त स्वरमें उच्चारण करनेका भाव, जिस ह्रासतमें तीखी आवाजसे बोले ।

उदातूह ( सं० पु० ) जलकाक, पानीकी एक बिड़िया ।

उदायन्त ( सं० त्रि० ) अन्तमें उदात्त स्वर रखनेवाला, जिसके पीछे तीखी आवाज सने ।

उदान ( सं० पु० ) उदूर्ध्वेन पानिति अनेन, उत्-पा-अन-घञ् । कण्ठवायुविशेष, गलेसे निकलने और सरपे चढ़नेवाली हवा । "उदानः १ कण्ठप्रानोयः ऊर्ध्व-गमनवायुनृक्प्रमयाः ।" ( वेदान्तसार ) वेदान्तके मतसे यह ऊर्ध्वगमनशील कण्ठस्थायी उत्क्रमण वायु है ।

“उदापो नाम यच्चूर्ध्वमुपैति पवनोद्यमः ।

ऊर्ध्वं जगु गतान् रोगान् करोति च विशेषतः ॥” (सुश्रुत)

महर्षि सुश्रुतके कथनानुसार ऊर्ध्व दिक् सञ्चरण करनेवाले वायुका नाम उदान है। इसके क्षुण्णित होनेसे स्कन्धसन्धिसे उपरिस्थित सकल रोग उपजते हैं।

योगार्णवमें इसका क्रियास्थान आदि इसप्रकार निरूपित है—

“स्वन्दयन्धरं बलं” नामनेत्रकोपनः ।

इह जयति मर्तापि उदानो नाम नासः ॥

विद्युत्पारकवर्णः स्वादुस्वानासकारकः ।

पादयोर्हस्तयोर्वापि सर्वसन्धिषु वर्तते ॥”

उदानवायु धर और सुखको फड़काता है। यह चक्षु एवं शरीरको प्रकोपकारी और भस्मको उत्तेजक है। वर्ण विद्युत् एवं पावक जैसा होता है। इसीके सहारे लोग उठते बैठते हैं। हस्त एवं पाद म्बाल सन्धिमें यह विद्यमान है।

वैद्यकके मतानुसार उदानवायु ऊपरको चढ़ता है। इसीके सहारे गाना और बात करना होता है। विशेषतः यह ऊर्ध्व-जगु-गत रोग बढ़ाता है। (सुश्रुत) २ उदावर्त, ढेंढो। ३ सर्प, सांप। ४ पक्ष, पक्षक। ५ बौद्ध शास्त्रभेद। इस शास्त्रमें बुद्धदेवका चरित्र लिखा है।

उदापि (सं० पु०) सहदेवके पुत्र और मगधराज जरा-सन्धके पौत्र। (हरिवंश)

उदापेक्षी (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्र। (भारत)

उदाप्य (वे० भष्य०) धाराके ऊपर, दरयाके सामने।

उदाम (हिं०) उद्दाम देखी।

उदायन (हिं०) उद्यान देखी।

उदायुध (सं० त्रि०) उद्धूर्ध्वं प्रायुधो यस्य। उद्धृतास्त्र, हथियार उठाये हुआ। (रघु १५४४)

उदार (सं० त्रि०) उत् उत्कृष्टं वा समन्तात् राति ददाति, उत्-वा-रा-भातर्येति क। १ दाता, देने-वाला। २ महात्मा, साधु। (गीता १८) ३ सरल, सीधा। ४ उत्कृष्ट, बढ़िया। ५ गम्भीर, गहरा। ६ मद्भोच, बहुत ऊँचा। ७ वैदाम्य, रहस्य। ८ सार-वान्, पसली। ९ रम्य, उम्दा। १० न्याय्य, पाजिव।

११ शिष्ट, शरीर। १२ असाधारण, अनोखा। (पु०)

१३ दीर्घशालि, खम्बा चावल। (भष्य०) १४ ऊँचे खरसे, बुधन्द-भावाक्षमें। (वे० त्रि०) १५ उत्तेजक, उठाने या भड़कानेवाला। (पु०) १६ उद्यानशील वाय्व, उठनेवाली भाप। १७ काष्ठासङ्घार विशेष। इससे निर्जीव पदार्थमें श्रिष्टता प्रदर्शित करते हैं।

उदारा—सङ्गीतशास्त्रका सप्तक विशेष। सा ऋ ग म प ध और नि सात स्वरको एकत्र करनेसे सप्तक संज्ञा होती है। मनुष्यके देहमें स्वाभाविक तीन सप्तकसे अधिक नहीं निकलते। इसीसे भारतीय सङ्गीतशास्त्रमें उदारा, मुदारा और तारा तीन सप्तकका उल्लेख है। नाभिसे जो सप्तक उठता, उसे सङ्गीतज्ञ उदारा कहता है। वेदाम्बके मतसे यह अनुदात्त है।

उदाराग्रय (सं० त्रि०) उत्कृष्ट आग्रयविशिष्ट, ऊँचा मतलब रखनेवाला, बड़ा।

उदावत्सर (सं० पु०) वर्ष विशेष। इस वर्ष रौप्य देनेसे महाफल मिलता है। उदावत्सर देखी।

उदावर्त (सं० पु०) उत्-वा-वृत्-वच्। रोग-विशेष, घेठकी एक बीमारी। इसके होनेसे न तो मल गिरता, न मूत्र उतरता और न वायु ही चलता है।

“मातृपिण्डवन् आधुपयोरारवनीन्द्रियैः ।

व्याडवमानेवदितैश्चदावर्तो निश्च्यते ॥” (सुश्रुत)

वायु, मल, मूत्र, कृन्मा, भन्धु, काय, ह्रिक्का, उद्वगार, वसि, शुक्ल प्रवृत्तिका वेग रोकनेपर वायु ऊर्ध्वजानेसे यह रोग उत्पन्न होता है। इसी कारण उदावर्त नाम पड़ा है।

“सुवृत्तवाशावभिद्वानासुदावर्तो विचारयान् ।

वायुःकीडातुमी रुद्रेः कपायकटुविलम्बैः ।

भोजनैः कुपितः सद्य उदावर्तं करोति हि ॥” (सुश्रुत)

सुधा, दध्या, निद्रा और स्वासका वेग रोकनेसे भी यह रोग हो जाता है। फिर रुध्र, कपाय, कटु और तिक्त भोजन कोष्ठमें पड़नेसे वायु भड़कना इसकी उत्पत्तिका दूसरा कारण है।

“वृक्षदिहं” परिक्रिष्टं भीषं शुद्धैरभिद्रुतम् ।

शुक्लमलं मतिगामुदावर्तमनुपजन्ते ॥”

सुशुतने कहा—उदावर्त रोगमें दध्यात, पतन्ना

क्षान्त, चीर, शूलार्त और शीघ्र शीघ्र पुरीष एवं धमि करनेवाले रोगीको छोड़ देना चाहिये।

वायुके विपथ गमनपर उत्पन्न होनेसे सकल ही अवस्थामें वायुको स्वाभाविक पथपर पहुँचाना ही इस रोग-प्रतीकारका प्रधान उपाय है।

वायुसे उत्पन्न होनेवाले उदावर्त रोगमें खेद और खेद डाल आस्थापन लगाना चाहिये। मलरोधसे होनेवालेकी चिकित्सा शानाह रोगकी तरह चलती है। मूलाबोधके उदावर्तपर एला वा दुग्ध मिला कर मद्दिना तीन दिन भयवा कल डालकर तीन दिन आमलकीका रस पिलाते हैं। अशुवारणसे होनेपर इस रोगमें खेद और खेद लगा अशुभोचण कराये। उद्गारसे जो उदावर्त उभरता, उसमें रोगी बिजौरा नीबूका रस मिला सुरापान करता है। वमनसे उदावर्त उठनेपर चार वा लवणके साथ अभ्यङ्ग प्रयोग किया जाता है। शूलरोधवालेमें स्त्रीका सहवास आवश्यक है। अनिद्रासे उपजनेपर उदावर्त रोगमें सुरापान करना और निद्रा लानेका ध्यान रखना चाहिये। कोष्ठगत वायु बिगड़ने उदावर्त उपजनेपर हृदय एवं वक्षिदेशमें शूल उठता, देह पर गौरव बढ़ता, शरीर, दृष्ट्या तथा शिक्काका वेग बढ़ता, कष्टसे वायु, मूत्र एवं मल ठसता, श्वास लगता, काय बढ़ता, प्रतिश्याय पड़ता, दाह दहता, मोह मदता, वमन चलता, गिरीरोग चलता और मन एवं श्वषेन्द्रियका विभ्रम रहता है। इसी प्रकार वायुके प्रकोपसे अनेक विकार उठ खड़े होते हैं। सुप्तकी मतमें ऐसे खल पर तेल एवं लवण मलाये और खेद तथा निरुहका वस्त्र लगाये। मदनफल, अलावुभोज, पिप्पली और कण्टकारीका चूर्ण पिचकारीसे मलहारमें पहुँचाना चाहिये। इससे शीघ्र ही उदावर्त रोग अच्छा हो जाता है।

उदावर्त (सं० स्त्री०) वायुजन्य-स्त्रीयोनिरोगविशेष, औरतोंकी एक बीमारी। इसमें कष्टके साथ सफेनिल रज निकलता है। (भावप्रकाश)।

उदावर्तिन् (सं० द्वि०) उदावर्तरोगविशिष्ट, जिसके काँच निकल जानेकी बीमारी रहे।

उदावसु (सं० पु०) निमिके पीत और जनकके पिता। यह राजर्षि जनकसे भिन्न रहे। जनक देखो।

उदास (सं० पु०) १ विराग, मसला-जत्र। २ उपेक्षा, बेपरवाई। ३ उच्चता, उँचाई। ४ उत्प्रेषण, उक्षाल। (त्रि०) ५ उदासीन, जत्रिया मज्जवका मोतकिद। ६ विरक्त, बेपरवा। ७ दुःखो, रक्षोदा।

उदासना (हिं० कि०) १ उदासन करना, मट्टीमें मिलाया। २ छाना, समेटना, लपेट डालना।

उदासिष्ठ (सं० द्वि०) विरक्त, बेपरवा, किसीसे सरोकार न रखनेवाला।

उदासिन् (सं० द्वि०) विरक्त, बेपरवा। उदासी देखो।

उदासिल, उदासिष्ठ देखो।

उदासी (सं० पु०) १ दर्शनज्ञ, सुहृदिक। २ विरक्त पुरुष, बेपरवा आदमी। ३ सव्यासी, एक मज्जबूी फिरकीका पावन्द। यह नानकके धर्मपर चलते और मठमें बसते हैं। उदासी अपने हाथसे भोजन नहीं बनाते, दूसरेका ही बनाया खाते हैं। नानकका 'ग्रन्थ' नामक धर्मग्रन्थ ही उपास्य है। सकल जातिके लोग उदासी-सम्प्रदायभक्त हो जाते हैं। इनके शिष्या नहीं रहते। मस्तक मुँडवा डालते हैं। लंगोट-सभी चढ़ाते हैं। (हिं० स्त्री०) ३ दुःख, अप्रसोस।

४ बम्बई प्रान्तका सूरत जिलेवाले बारडोलोकी उदा कुनवियोंका एक सम्प्रदाय। कोई सवा तीन सौ वर्ष पहले, गोपालदास नामक एक व्यक्तिने यह सम्प्रदाय चलाया था। उन्होंने वैदिक मत अस्वीकार कर केवल एक परमेश्वरपर विश्वास करनेके लिये अपने अनुयायियोंको उपदेश दिया। यह सम्प्रदाय ईश्वरके ध्यानसे मुक्तिकी प्राप्ति और पुनर्जन्मको मानता है। पाँच लोग मिलकर महन्तकी निर्वाचन करते हैं। महन्तकी शिथके गलेमें सेली पड़ाने, विशाह एवं अन्यष्टिक्रियाका समय ठहराने और आन्नाभक्ष करनेवालेको सम्प्रदायसे निकलानेका अधिकार है। उदा-कुनबी उदासी प्रातःकाल नहाते, काकी तुलसीपर जल चढ़ाते और अपने पवित्र धर्मग्रन्थसे ध्यान लगाते हैं। सव्या समय बह धर्मग्रन्थके पीठोपाधानको मम-स्कार करते हैं। फिर उसकी भारती उतारी और स्तुति



सुनाई जाती है। विवाहके समय महन्त भगुवा रहते हैं। शीर्ष दैहिक कर्म कोई नहीं करता। किन्तु यह भखाहेमें रहनेवाले नानकपत्नी उदासियोंसे भलग हैं।

उदासीन ( सं० त्रि० ) उत्-भास-शान्-ईदास इति इत्वम् । १ वैरागी, वैपरवा । २ मध्यस्थ, बीचवाला । ३ स्वतन्त्र, भाजाद, भगहेमें न पड़नेवाला । ४ सम्यक्-रहित, निराला । ५ तटस्थ, नज़दीकी । ६ अपरिचित, जिससे जान-पड़चान न रहे । ( पु० ) ७ अपरिचित व्यक्ति, भजनवी, जो दोस्त या दुश्मन् न हो ।

उदासीनता ( सं० स्त्री० ) विराग, वैपरवाई ।

उदासी वाला ( हिं० पु० ) वाद्यविशेष, एक बाजा । यह भोंपे-जैसा रहता और फूंकनेसे बजता है ।

उदास्थित ( सं० पु० ) उत्-भा-स्था-क्त । १ मध्यस्थ, मालिक । २ द्वारपाल, दरभान् । ३ चर, एलची । ४ नष्टश्रास । ५ प्रमत्तशायसित ।

उदाहट ( हिं० स्त्री० ) कड़े रङ्गकी भलक, मोले रङ्गमें सुर्खीकी चमक ।

उदाहरण ( सं० स्त्री० ) उत्-घा-ह भावे ल्युट् । दृष्टान्त, मिसाल । कोई विषय सम्राण करनेकी अन्य विषयका सम्वन्ध उदाहरण कहाता है—

“साध्यासाधनार्थमगमो दृष्टान्त उदाहरणम् ।”

साध्यासाधनार्थसे उसके धर्मादि प्रकाशक दृष्टान्तकी उदाहरण कहते हैं। न्यायमतसे भन्वयी और व्यतिरेकी दो प्रकारका उदाहरण होता है। साधन-की तरह अप्रयुक्त एवं साध्यवत्ताका अनुभावक अवयव भन्वयी और साध्यसाधनसे व्यतिरेक तथा व्याप्तिके प्रदर्शन द्वारा प्रकाशित दृष्टान्त व्यतिरेकी है ।

२ निदर्शन, भलक । ३ उल्लेख, ज़िखार । ४ वर्णन, बयान् । ५ सन्दर्भ, जाड़तोड़ । ६ कथाप्रसङ्ग, बात-चीत । ७ नाव्यशास्त्रोक्त गर्भाह-विशेष ।

उदाहार ( सं० पु० ) उत्-भा-ह-घञ् । १ उदाहरण, मिसाल । युक्ति और व्याप्ति द्वारा दिया जाने-वाला दृष्टान्त उदाहार कहाता है । २ यत्न ताका आरम्भ, बातका शुरु ।

उदाहार्य ( सं० त्रि० ) उदाहरण-दिये जाने योग्य, जो मिश्रालमें पाने काविस हो ।

उदाहृत ( सं० त्रि० ) उत्-भा-ह-क्त । १ उल्लिखित, लिखा हुआ । २ कथित, कहा हुआ । ३ उच्चारित, निकाला हुआ । ४ वर्णित, बताया हुआ । ५ उपन्यस्त, रखा हुआ ।

उदाहृति ( सं० स्त्री० ) उदाहरण देखो ।

उदित ( सं० त्रि० ) उत्-द्-न्-क्त । १ उद्गत, चढ़ा हुआ । २ उचित, वाजिब । ३ उन्नत, उठा हुआ । ४ उत्पन्न, निकला हुआ । ५ प्रादुर्भूत, चमका हुआ । ६ कथित, कहा हुआ । ( स्त्री० ) उत्-द्-न् भावे क्त ।

७ राशिका उदय, लग्न । “उदित उदयति मन्तर ।” ( हस्तो )

( पु० ) ८ नीवार, किसी किस्मका आवल ।

उदितयोवना ( सं० स्त्री० ) सुग्धा नायिकाका एक भेद । इसमें तीन भाग यौवन और एक भाग वाक्यकाल रहता है ।

उदितहोमिन् ( वै० त्रि० ) सूर्योदयके पश्चात् यज्ञ करनेवाला ।

उदिति ( सं० स्त्री० ) उत्-द्-न्-क्तिन् । १ उदय, उठान । २ वाक्य, बात । ३ अस्त, शुद्ध ।

उदितोदित ( सं० त्रि० ) उदिते कथिते शास्त्रे अभ्युदितः । शास्त्रोक्त, जो शास्त्रमें कहा गया हो ।

उदीक्षण ( सं० स्त्री० ) सन्दर्शन, देखभाल ।

उदीक्ष्य ( सं० भव्य० ) सन्दर्शन करके, देखभालकर ।

उदीची ( सं० स्त्री० ) उत्क्रान्त दृष्टिपथं भ्रष्टति, उत्-पक्ष ऋत्विगादिना किन् उगितथेति ङीप् । उत्तर दिक्, शिवाल ।

उदीचीन ( सं० त्रि० ) उदीची-ख । उत्तरदिक्-सम्बन्धीय, शिवाल ।

उदीच्य ( सं० त्रि० ) उदीची भावार्थे यत् । १ उत्तर देशीय, शिवालमें होने या रहनेवाला । ( पु० ) २ सर-स्वती नदीके उत्तरपश्चिमस्थ देश । ३ उदीच्य देशका अधिवासी । ( स्त्री० ) ४ ऋषिर, एक क्षत्रवृद्धार चीज ।

उदीच्यकाष्ठ ( सं० स्त्री० ) चोपचीनी ।

उदीच्यवृत्त ( सं० स्त्री० ) उदीच्यवृत्ति देखो ।

उदीच्यवृत्ति ( सं० स्त्री० ) वैताकीय इन्द्रका एक भेद ।

“उदीच्यवृत्तिः इती सती अथाचार्य सती सुनी निरगताः ।

न समान पराजिता कला वैताकीयेभ्ये रती युद्धः ॥ १२ ॥

उदीच्यवृत्तिः तौवजः सतीत्येव मनेन्द्रिययोः ।” ( अमरभाष्य )

उदीप्यवृत्तिके विषय चरणकी द्वितीय और तृतीय मात्रा संयुक्त होकर गुरुवर्ण बन जाती हैं।

उदीप ( सं० त्रि० ) उदता प्राणो यतः, अच् समा० ईत्वम् । १ उदतजल, पानीसे डूबा या भरा हुआ।

( पु० ) २ जलझावन, पानीकी बाढ़।

उदीपन, उदीपित ( हिं० ) उदीपन और उदीपित देखो।

उदीपी—रामन्द्राज प्रान्तके दक्षिण कानाड़ा जिलेका एक तालुक। भूमिका परिमाण ७८७ वर्गमील है। प्रायः ठाँह साध मनुष्य बसते हैं। हिन्दू और ईसाई अधिक हैं।

२ अपने तालुकका नगर और डेडकार्टर। यह पचा० १३° २०' ३०" उ० और द्राघि० ७४° ४७' पू० पर अवस्थित है। कानाड़ा प्रान्तमें यह स्थान हिन्दु-बौद्धोंका पवित्र तीर्थ है। मछिधुरसे प्रतिवर्ष यात्री आया करते हैं। मन्दिर बहुत पुराना है। हिन्दु-बौद्धोंके पाठ मठाधीय दो-दो वर्षके हिसाबसे उसका प्रबन्ध करते हैं। निकटवर्ती कल्याणपुर सम्भवतः कोस-मस रणडिकोम्लुसटस (५४५ ई०) का कालियेना है।

उदीरण ( सं० स्त्री० ) उत्-ईर्-ण्युट् । १ उच्चारण, बोलचाल। २ कथन, कहनाई। ३ उदीपन, भड़काव। ४ प्रेरण, पङ्कचानि या भेजनेका काम। ५ विलुब्ध, लज्जनाई। ६ उत्पत्ति, पैदायश। ७ उल्लेख, लिखाई। ८ उत्प्रेषण, उछाल।

उदीरित ( सं० त्रि० ) उत्-ईर्-ण्युट् । १ कथित, कहा हुआ। २ उद्घात, उड़ाया-या समझाया हुआ।

३ प्रेरित, भेजा हुआ।

उदीरितवी ( सं० त्रि० ) कुयायनुडि, तेजफहम, समझदार।

उदीर्ण ( सं० स्त्री० ) उत्-ण्युट् । १ उदित, उठा या उड़ा हुआ। २ प्रबल, जोरदार। ( पु० ) ३ विष्णु।

उदीर्णदीर्घिति ( सं० त्रि० ) अतिशय प्रमान्वित, बहुत चमकीला।

उदीर्णवेग ( सं० त्रि० ) अतिशय वेगशील, निष्ठा-यत जोरदार।

उदीर्य ( सं० त्रि० ) १ उच्चारणके योग्य, जो कहे जाने काविल हो। ( अर्थ० ) २ कहकर, बोलके।

उदीर्यमाण ( सं० त्रि० ) १ चलाया या उठाया जानेवाला, जो फेंका या चलाया जा रहा हो।

उदीपित ( सं० त्रि० ) उदत, जंचा, जो बढ़ गया हो।

उदुषा ( हिं० पु० ) धान्य विशेष, एक चावल। यह वर्षाके भन्त समय कटता है।

उदुखल, उदुख देखो।

उदुम्बर ( सं० पु० ) १ उदुम्बर, गूलर। (Ficus glomerata) पर्याय है—जन्तुफल, तपसाङ्ग, क्रिमिफल, शीतवल्कल, यक्षाङ्ग, विषहृद्य, हेमपुष्प, घोरहृद्य, जन्तु-हृद्य, सदाफल, हेमदुग्धक, कालस्त्रन्द, यक्षयक्ष, सुप्रति-ष्ठित, पुष्पगुण्य, पवित्रक, शीघ्र्य। वैद्यकके मतसे यह शीतल, रुच्य, शुद्ध, मधुर, कषाय, वर्षाकारौ, व्रणशोधक एवं व्रणपूरक होता और प्रदर, पित्त, कफ तथा रुधिर रोगको खोता है। उदुम्बरका पत्र फल मधुर, शीतल एवं क्रिमिकर और रक्तपित्त, ज्वर, मूर्च्छा, दाह, पित्त, श्वस, शोथ, पथ्यार तथा उन्माद-रोगनाशक है। कक्षा गूलर कषाय, अग्निदोषक, रुच्य, मांस-वर्धक और रक्तयिकारनाशक ठहरता है। वरकाल शीतल, कषाय, गर्भरक्षक एवं स्तनदुग्धकर होता और व्रण, चत, कुष्ठ तथा चर्मरोगको खोता है।

२ कुछ विशेष, किसी वृक्षका कोड़। ३ देहकी, बोखट। ४ पण्डक, नामर्द। ( स्त्री० ) ५ ताम्र, तांबा। ६ कर्प, दो तोलेकी एक तोल। ७ मेदु।

उदुम्बरच्छदा, उदुम्बरका देखो।

उदुम्बरदला ( श० स्त्री० ) उदुम्बरस्य दलमिव दल-मस्याः। ऊखदन्तीहृद्य, छोटी दांतीका पेड़।

उदुम्बरपर्णी ( सं० स्त्री० ) १ दन्तीहृद्य, दांतीका पेड़। २ कण्डदन्तीहृद्य, छोटी दांतीका पेड़।

उदुम्बरमयक ( सं० पु० ) मृपिक, चूड़ा।

उदुम्बरावती ( सं० स्त्री० ) हरिवंशोक्त मदीविशेष।

उदुम्बरी ( सं० स्त्री० ) काकोदुम्बरिका, कठगूलर, गोबला।

उदुम्बल ( धै० त्रि० ) विस्तारित शक्तिस्मय, बड़ी ताकत रखनेवाला। ( काल० ) ( सं० पु० ) २ उदु-म्बर, गूलर।

उद्गमल, उद्गम देखो।

उद्गमसुख (घं० त्रि०) अथर्वसंहिता रत्नवर्ण सुखयुक्त,  
घोड़ेकी तरह खाल सुँह रखनेवाला।

उद्गमसुख (सं० स्त्री०) १ तण्डुलादि कण्डनार्थ काष्ठ-  
पात्र, चावल वगैरह कूटनेको लकड़ीका बरतन,  
भोजली, इमामदस्ता। २ गुग्गुलु, गुग्गुलु।

उद्गमसन्धि (सं० पु०) उद्गमलाकारश्रीवीर्धगत-  
सन्धि, भोजली-जैसा गर्दनके ऊपरका जोड़।

उद्गम (सं० त्रि०) उत्-वह-क्त। १ विवाहित, व्याहृत।  
२ स्थूल, मोटा। ३ धृत, वाहित, असली। ४ चमत,  
जंघा।

उद्गम (घं० पु०) शासनमन्त्र, नाकरमान्नी, हुक्म न  
माननेकी बात।

उद्गमहुक्म (घं० वि०) आश्रमभङ्गकारी, नाकरमान्नी,  
जो हुक्म मानता न हो।

उद्गमहुक्मी, उद्गम देखो।

उद्गम (हिं०) उद्गम देखो।

उद्गमय (सं० त्रि०) उत्-एल-पिच्-खश्। १ उद्गम-  
कारक, घबरा देनेवाला। २ भयप्रद, खौफनाक।  
३ उत्कम्पजनक, कंपा देनेवाला।

उद्गमपुर—अथर्वप्रामात्य देशकाठि जिलेके छोटे-उद्गमपुर  
राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षां २२° २०' उ०  
और द्राघि० ७४° १' पू० पर, समतल भूमिमें अवस्थित  
है। इसके निकट ही थोड़सङ्ग नद उत्तरपश्चिम  
धूम पड़ा है। नगरकी दक्षिण ओर उक्त नद और  
पूर्व ओर विचित्र झड़ पड़ता, जिसके किनारे घना  
जङ्गल मिलता है। १८५८ ई०के दिसम्बर मास  
हंगेडियर पार्कने झड़की ओर सुन्दर आश्रम एवं  
नदीके मध्य तांतिया तोपीकी फौजको भगाया था।  
झड़के पार्श्वपर एक मनोरम देवमन्दिर बना है। राज-  
प्रासाद बहुत जंघा है। शहरपनाह पूरी नहीं,  
बाधुरी खड़ी है। नगरमें कोई वाणिज्य-व्यवसाय नहीं  
होता। लोग राज्यपर ही अपने जीवनके निर्वाहार्थ  
निर्भर हैं। ई०का १८ वां शताब्द लगते अलीमोहनसे  
राजधानी उठकर यहाँ आयी थी। पहले राजा  
गायकवाड़की कर देते रहे। किन्तु १८२२ ई०में

उनके (१०५००) रु० अंगरेज सरकारको देनेपर राजा  
हीनेसे गायकवाड़ने यह राज्य अंगरेजोंके अधीन  
बनाया। राजाकी बदलीमें सम्मानार्थ सरोपा और  
गायकवाड़के नामोंसे कुछ रुपया मिला करता है।

उद्ग (हिं०) उद्ग देखो।

उद्ग (हिं०) उद्ग देखो।

उद्गमस् (वे० त्रि०) अतिशय प्रचण्ड, निहायत  
ताकतवर।

उद्गम (हिं०) उद्गम देखो।

उद्गमकर (हिं० वि०) प्रकाशक, रोगनी बख्शनेवाला।  
उद्गमनी, उद्गमकर देखो।

उद्ग (हिं०)

उद्गदन (सं० पु०) जलसे सिद्ध भस्म, पानीमें  
पकाया हुआ चावल।

उद्गम (सं० त्रि०) उत्-गम-क्त। १ उत्थित, उठा हुआ।  
२ उत्पन्न, पैदा। ३ उदित, निकला हुआ। ४ विगत,  
गया हुआ। ५ स्थल, फँका हुआ।

उद्गमन्युक्त (सं० त्रि०) नूतन न्युक्तयुक्त, निकलते  
सीनोंवाला।

उद्गमता (सं० स्त्री०), विषमवृत्तिद्वन्द्वका एक भेद।  
इसमें चार पाद पड़ते हैं। पहले तीनमें दम दम  
और पिछले चौथे पादमें तेरह अक्षर लगते हैं।

“उद्गमनि सलङ्घी च नवमयुक्तैरुद्गमः।

वाङ्मनसमननना युवाः सज्जता लघी च चरपक्षिताः पदेन ॥”

(भगवद्गीता)

उद्गमता (सं० त्रि०) मृत, सुदा, मरा हुआ।

उद्गमति (सं० स्त्री०) उत्-गम-क्तिन्। १ ऊर्ध्वगति,  
चढ़ाव। २ उदय, निक्कास। ३ उत्पत्ति, उपज।

उद्गमि (सं० त्रि०) उत्कृष्ट गन्धयुक्त, खुशबूदार।

उद्गम (सं० पु०) १ उत्थान, उठान। २ उत्पत्ति,  
पैदायश। ३ उदय, निक्कास। ४ ऊर्ध्वगति, चढ़ाई।  
५ यान्ति, कूँ, उचटो।

उद्गमन (सं० स्त्री०) उद्गम देखो।

उद्गमनीय (सं० स्त्री०) उत्-गम-घनीयर्। १ धीत-  
वसाहय, घोया जोड़ा। (त्रि०) २ ऊर्ध्वगमनके योग्य,  
चढ़े जाने काविल।

उद्गाढ ( सं० त्रि० ) प्रतिशय अधिक, बहुत ज्यादा ।  
उद्गाता, उद्गात्र देखो ।

उद्गातुकाम ( सं० द्वि० ) गान करनेकी अभिलाषी,  
जो गाना चाहता हो ।

उद्गात्र ( सं० पु० ) उत्-गै-त्रच् । ॥ सामवेद-  
गायक । २ ऋत्विग्भेद ।

उद्गाया ( सं० स्त्री० ) पार्याङ्गभेद । यह  
गीति सट्ठय रहती और अपने चार पादमें क्रमशः  
वारह तथा पट्टारह मात्रा रखती है ।

उद्गार ( सं० पु० ) उत्-गृ-ञच् । उद्गारः । या  
१११२८ । १ वमन, कौ, उलटी । २ मुखसे वायुका  
निर्गम, डकार । ३ निःसरण, टपकाव, बुवाव ।  
४ उच्चारण, कहाई । ५ निष्ठीवन, धूक । ६ प्राधिक्य,  
वदती । ७ गर्जन, फुफकार ।

उद्गारकमणि ( सं० पु० ) प्रवाल, मृंगा ।

उद्गारग्रहि ( सं० स्त्री० ) उद्गारका जनवरोध,  
सधम पत्नीहारका भाव ।

उद्गारशोधन ( सं० पु० ) उद्गारं शोधयति, शुध-णिच्-  
ल्यु । श्वेतजीरक, कृष्णजीरक, काला या सफेद जीरा ।

उद्गारशोधनी ( सं० स्त्री० ) जीरक, जीरा ।

उद्गारिन् ( सं० त्रि० ) उत्-गृ-णिनि । उद्गार-  
शुक्त, उगलनेवाला ।

उद्गिरण ( सं० स्त्री० ) उत्-गृ-ण्यट् । निपात-  
नात् इजम् । १ उद्गार, डकार । २ वमन, कौ,  
उलटी । ३ कण्ठस्त्रमेद, गलेकी घरघराघट ।

उद्गीत ( सं० द्वि० ) उत्-गै-क्त । उच्चैःस्वरमें  
गीत, हुलन्द भावाञ्जसे गाया हुआ ।

उद्गीति ( सं० स्त्री० ) उत्-गै भावे ङिन् । १ उच्चैः  
स्वरसे गान, ऊंची भावाञ्जका गाना । कर्मणि ङिन् ।  
२ मात्राहृत भेद । इसके प्रथम एवं द्वितीयमें पन्द्रह,  
द्वितीयमें बारह और चतुर्थ पादमें पट्टारह मात्रा  
लगती हैं ।

“वायोरुक्तमस्ति” आन्ध्रवर्षितं भवेदुक्तम् ।

कोटीतिः विभक्तित्वा तदनुवचं भवेदुक्तम् । ( इत्यमरः )

उद्गीय ( सं० पु० ) उत्-गै-थक् । गतीति । उत्-गृ-  
१ सामगानका अवयवभेद । सामके पञ्च वा सप्त अवयव

होते हैं—१ प्रस्ताव, २ उद्गीय, ३ प्रतिहार, ४ उपद्रव,  
५ निघन, ६ द्विहार और ७ प्रणव । उद्गाता जो  
साम गाता, वही उद्गीय कहाता है । साम देखो ।  
वर्षाकालको उद्गीय गाया जाता है । उपनिषत्के  
मतसे पञ्चमें ऋग्वेद, पञ्चमाणमें यजु और सप्तविध वाक्यमें  
उद्गीत शब्द ही उद्गीय है । छान्दोग्यके कथनानुसार—

“उद्गीय ही साम है । जो उद्गीय ( उ० ) गाता, उसका  
निष्वास-प्रश्वास नहीं जाता-जाता । ‘उत्’ प्राण है ।  
क्योंकि इसी प्राणवायुसे लोग ऊपर चढ़ते हैं । ‘गै’  
वाक् और ‘थ’ भस्म है । कारण भस्म द्वारा सकलकी  
स्थिति होती है । ‘उत्’ स्वर्ग, ‘गै’ आकाश और ‘थ’  
पृथिवी है । ‘उत्’ सूर्य, ‘गै’ वायु और ‘थ’ भस्म  
है । ‘उत्’ सामवेद ‘गै’ यजुर्वेद और ‘थ’ ऋग्वेद  
है । लोगोंको उद्गीयका ध्यान करना चाहिये ।”  
( छान्दोग्य उ० १ ब० १ ख० ) २ सामवेदका द्वितीय अंग ।  
३ पौंड्रार । ४ भवपुत्र । ( विचित्राच २१/१८ ) ५ वेदके  
एक टीकाकार ।

उद्गीरण, उद्गिरण देखो ।

उद्गीर्ण ( सं० त्रि० ) उत्-गृ-ञ । १ घमित, कौ  
किया हुआ । २ उच्चारित, कहा हुआ । ३ उद्गत,  
उठा हुआ । ४ पतुरक्षित, खुश किया हुआ ।  
५ निर्गत, निकला हुआ । ६ प्रतिविम्बित, झलका  
हुआ ।

उद्गूर्ण ( सं० त्रि० ) उत्-गूर-क्त । उत्तोलित,  
उकाला हुआ । २ उद्यत, सुसौद, तैयार ।

उद्गृथित ( सं० त्रि० ) उत्-ग्रथ-क्त । १ उपरि भागमें  
बद्ध, ऊपरी हिस्से पर बंधा हुआ । २ सुक्त, खुला हुआ ।

उद्ग्रथ ( सं० त्रि० ) उद्ग्र-क्त, खुला हुआ । ( पु० )  
उत्-ग्रथ-ञच् । २ उन्मीचन, छोड़ाई । ३ अन्धाय,  
भाग, बाध, हिक्सा ।

उद्ग्रमण ( सं० स्त्री० ) उत्-ग्रह-ल्युट् वेदे हल्य भः ।  
१ ग्रहण, पकड़, ऊपर पकड़के दान । ( वाचा० शी० १४/११ )

उद्ग्रह ( सं० पु० ) १ ऊर्ध्व ग्रहण, उठाव । २ धर्म  
द्वारा किया जानेवाला कार्य ।

उद्ग्रहण ( सं० स्त्री० ) ऊर्ध्व ग्रहण, उठाव, चढ़ाव ।

उद्ग्राम ( सं० पु० ) उत्-ग्रह-ञच् । वेदे हल्य

मः । १ ग्रहण, पकड़ । २ तत्तुनिर्देश, पकड़की  
वन्दिश । ३ दान, दान, दान ।

“मानस मानस उद्ग्राहोदगीतः ।” (मानसमेवम् १२५८)

“उद्ग्राहमेव उद्ग्राहोदगीतः ।” (मन्त्रपर)

उद्ग्राह (सं० पु०) उत्-ग्रह-घञ् । १ दान,  
वन्दिश । २ वामभेद, विद्या विचार । यह प्राति-  
शाख्यकी सन्धिका एक नियम है । इससे विसर्ग,  
इकार और ओकारके स्थानमें स्वर आगे रहनेपर  
अकार आदेश होता है । ३ तर्कका उत्तर, वचसका  
जवाब । ४ आपत्ति, उच्च । ५ उद्गार, उकार ।

उद्ग्राहणिका (सं० स्त्री०) तर्कका उत्तर, वचसका  
जवाब ।

उद्ग्राहिणी (सं० स्त्री०) उत्-ग्रह-णिनि-ङीप् ।  
पाशरज्जु, जालकी रस्सी ।

उद्ग्राहित (सं० त्रि०) उत्-ग्रह-णिच्-क्त । उपरि  
नीत, चढाया हुआ । २ बद्ध, बांधा हुआ । ३ उदीर्ण,  
निकाला हुआ । ४ भन्तःकरणसे अर्पित, सौंपा  
हुआ । ५ धाक्रान्त, सताया हुआ । ६ उन्मिलित,  
उचकाया हुआ । ७ पाहित, पकड़ा हुआ । ८ स्मरण  
किया हुआ, जो सोचा गया हो ।

उद्ग्राहीव (सं० त्रि०) ग्रीवाकी उठानेवाला, जो  
गर्दन ऊँची करता हो ।

उद्ग्राहिन्, उद्ग्राहिनी ।

उद्घ (सं० पु०) उत्-हन-ङ् । १ अग्नि, आग ।  
२ प्रशंसा, तारीफ़ । ३ देहवायु, जिसकी हवा । ४ कर-  
पुट, अंशुरी । ५ उत्कर्ष, उद्गरी । ६ आदर्श,  
नमूना ।

उद्घट (सं० स्त्री०) वार्ताकुपुण्य, भाटिका फल ।

उद्घटक (सं० पु०) उद्घट-कन् । ताल ।

उद्घटन (सं० स्त्री०) उत्-घट-घञ् । १ आघात,  
रगड़ । २ उन्मोचन, खोलाव ।

उद्घटित (सं० त्रि०) उन्मोच, खुला हुआ ।

उद्घन (सं० पु०) उद्घ-स्याय-हन्त्येड, उत्-हन  
आधारे धूप निपातनात् । काष्ठमय आधारे, लक-  
डीका तृण । तद्यक इसी आधारे पर काष्ठकी  
रख परिष्कार करता है ।

उद्घर्षण (सं० स्त्री०) उत्-घृष्-लृट् । १ उपरि  
घर्षण, रगड़ । २ दृष्टकादि द्वारा गात्रादि मार्जन,  
हँट या पल्लरसे जिसकी रगड़ाई । ३ लंगुड़, लठ ।

“सिरासुखविहितम्” तत्कृष्टाद्यर्थे यत्नम् ।

उद्घर्ष-कौमुदादयार्था आधेयानामर्थे यत्नम् ॥” (सुप् ४)

उद्घस (सं० स्त्री०) उत्-भट-घप् घसादेशः ।  
१ मांस, गोश्त । २ भक्ष्यवस्तु, खाने लायक चीज ।

उद्घाट (सं० पु०) उत्-घट-घञ् । १ उद्घाटन,  
खोलाई । २ पृष्ठादि द्रव्य देखानेकी खोजनेका  
स्थान, चेचनेकी चीज खोजकर देखानेकी जगह ।  
३ राजस्वके ग्रहणका स्थान, चुर्गीघर । ४ इनन,  
मार्काट । ५ चत, जूखम । ६ खजाना, सरकाव ।  
७ उन्नति, उठान । ८ आरम्भ, शुरु । ९ प्राप्तायाम ।  
१० गद्दा, सोंटा । ११ पथ्याय, बाव । १२ प्रहरी  
रहनेका स्थान, चौकी ।

उद्घाटक (सं० पु० स्त्री०) उत्-घट-णिच्-ण् ।  
१ घटीयन्त्र, लोटाडोर । २ कुक्षिका, चाबी ।  
३ उन्मोचनकारी, खोलनेवाला ।

उद्घाटन (सं० स्त्री०) उत्-घट भावे लृट् ।  
१ उन्मोचनकारी, खोलनेवाला ।

उद्घाटन (सं० स्त्री०) उत्-घट भावे लृट् । १ उन्मो-  
चन, खोलाई । २ उल्लेख, लिखाई । ३ प्रकाशकरण,  
जाहिर करनेका काम । ४ घटीयन्त्र, लोटाडोर ।  
५ कुक्षिका, चाबी । ६ उन्मोचनकारी, खोलने-  
वाला ।

उद्घाटनीय (सं० त्रि०) उन्मोचनयोग्य, खोला  
जानेवाला ।

उद्घाटित (सं० त्रि०) उत्-घट-णिच्-क्त । १ प्रका-  
शित, जाहिर, खुला हुआ । २ कृतारम्भ, शुरु किया  
हुआ । ३ उत्तोलित, उठाया हुआ । ४ कृतोद्योग,  
कोशिशके साथ किया हुआ ।

उद्घाटितज्ञ (सं० त्रि०) चतुर, होशियार ।

उद्घाटिताङ्ग (सं० त्रि०) १ नम्र, नरम । २ चतुर,  
होशियार ।

उद्घाटिन् (सं० त्रि०) उन्मोचनकारी, खोलने या  
शुरु करनेवाला ।

उद्घात (सं० पु०) उत्-हन-घञ् । १ प्रतिघात, ठोकर । २ बाधा, आपत्त । ३ भारभ, शर । ४ पाद-खलन, पैरकी फिसलाहट । ५ कुम्भक । ६ सूचना, दीवाचा । ७ सुदगर । ८ परघट, कुर्वेसे पानी निकालनेकी कल । ९ निदर्शन, देखाव ।

उद्घातक (सं० त्रि०) १ प्रतिघात लगानेवाला, जो ठोकर मारता हो । (पु०) २ नाटककी एक प्रस्ता-वना । इसमें कोई पात्र स्वधार वा नटीका कथन श्रवण कर अन्य अर्थ जोड़ता है ।

उद्घाती (सं० त्रि०) १ प्रतिघात करनेवाला, जो ठोकर लगाता हो । २ उद्यमी, चढ़ा-उतार ।

उद्घुष्ट (सं० त्रि०) १ शब्दावमान, पुरघोर । २ विवोषित, कड़ा हुआ । (स्त्री०) ३ शब्द, आवाज ।

उद्घुष्ट (सं० स्त्री०) उच्चारणका दोषविशेष, तलफ-फुलका एक ऐव ।

उद्घोष (सं० पु०) उत्-घुप-घञ् । १ उच्च शब्दकरण, मूलम् आवाजमें कहनेकी बात । २ साधारण-कथन, मामूली बात ।

उद्ग (सं० पु०) उत्-दन्-घञ् । १ मशक, मच्छड़ । २ मत्कुण, खटमल । ३ केशकीट, भूँ ।

उद्ग (सं० त्रि०) १ प्रचण्ड, बखेड़िया । २ उन्नत-दण्डयुक्त, ऊँची डालवाला । ३ दण्डोपरि उत्तोलित; बांसपर चढ़ाया हुआ । (पु०) ४ उन्नत दण्ड, लंबा सोटा ।

उद्गणपाल (सं० पु०) १ उन्नत दण्डाकार सर्पविशेष, ऊँचे उण्डे-जैसा एक सांप । २ मत्स्यविशेष, एक मछली । ३ दण्ड देनेवाला राजा वा शासनाधिकारी, जो शाकिम सजा देता हो ।

उद्गुर (सं० त्रि०) अतिशयेन दन्तुरः । १ उत्तुङ्ग, ऊँचा । २ कराल, खौफनाक । ३ उत्कटदन्त, बड़े दाँतीवाला ।

उद्ग (सं० पु०) वशीकरण, दमन, मगलूची, दवाव । उद्ग (सं० स्त्री०) उत्-दी भावे लुट् । १ बन्धन, बंधाई । २ उद्यम, कोशिश । ३ सुखी, चरहा । ४ बड़्यानि, दरयाके भीतरकी भाग । ५ मध्य, दर-मियान् । ६ सन् । ७ पालन, पलाई ।

उद्गानक (सं० पु०) १ गिरीवृक्ष, कलसीसका पेड़ । २ सुखी, चरहा ।

उद्गान्त (सं० त्रि०) उत्-दम-क्त । अतिदमित, शान्त, ठण्डा, जो बहुत दबा हो ।

उद्गाम (सं० त्रि०) उद्गतं दाम् । १ उत्कृष्ट, खुला हुआ । २ स्वतन्त्र, आजाद । ३ उत्कट, गुस्ताख । ४ पयोम, बेहद । ५ दीर्घ, बड़ा । (पु०) ६ यम । ७ वरुण । (अथ०) ८ उत्कृष्ट रूपसे, खुले मैदान ।

उद्गामन् (सं० त्रि०) उत्-दामन् दन्धनम् । १ बन्धन-रहित, खुला । २ उत्कट, भगड़ालू । ३ अतिशय, बहुत, ज्यादा ।

उद्गारदा (सं० स्त्री०) शक्तव, साधूका पिड़ ।

उद्गारा (सं० स्त्री०) गुरु, चौ, गुर्च ।

उद्गारी, उद्गार देको ।

उद्गाल (सं० पु०) उत्-दल-णिच्-घञ् । १ बहुवार-हच, लसोड़ेका पिड़ । २ वनकोटव, कोदी । ३ कुष्ठ, केज । ४ धान्यविशेष, एक भनाज ।

उद्गालक (सं० पु०) १ अतिविशेष । इनकी पुत्रका नाम अतकेतु था । उद्गालक याज्ञवल्करके गुरु रहे । आचर देको । २ बहुवार हच, लसोड़ेका पिड़ । ३ भारण्यकोटव, कोदी ।

उद्गालकपुत्रमक्षिका (सं० स्त्री०) झौडाविशेष, एक खेल । यह 'भाती मार छाती' की तरह खेला जाता है ।

उद्गालकव्रत (सं० स्त्री०) व्रतविशेष । पौड़य वक्करके वयस पर्यन्त गायत्रीकी दीक्षा न मिसनेसे दिनातिको यह व्रत करना पड़ता है । दो मास यव, एकमास दधि, दुग्ध तथा शर्कराका शर्बत, षट् रात्रि घृत, पड़रात्रि अयाचित रूपसे प्राप्त द्रव्य, त्रिरात्रि केवल जल और एक दिन उपवास पर निर्वाह करते हैं ।

उद्गालकायन (सं० पु०) उद्गालकस्य गोत्राप्रत्ययम्, फक् । अतिभेद, अतकेतु ।

उद्दित (सं० त्रि०) उत्-दी-क्त । बह, बंधा हुआ । (हिं०) उद्यत, उदित और उद्यत देको ।

उद्दिघोषा (सं० स्त्री०) खानान्तरित करनेकी इच्छा, हटा देनेकी चाहिय ।

उद्दिन (सं० स्त्री०) मध्याह्नकाल, दोपहर ।

उद्दिम (हिं०) उद्यम देखो।  
 उद्दिग् (सं० स्त्री०) दिक्विशेष।  
 उद्दिष्ट (सं० अर्थ०) १ प्रकाश वा वर्णन करके, देखाकर। २ निर्देश करके, मांगकर। ३ प्रति, तर्फ।  
 उद्दिष्ट (सं० त्रि०) उत्-दिग्-कृत। १ उपदिष्ट, समझाया हुआ। २ अभिप्रेत, देखाया हुआ। ३ कृतानु-सन्धान, ठंढा हुआ। (पुं०) ४ बदरवृक्ष, बेरका पेड़। ५ उपायभेद, छन्दके मात्रा-प्रसारवाले भेदका वर्णन।

“उद्दिष्टं विदुषामापादुपयदान् समन्विषेत्।

ननुप्या ये तु तदाहो के के निमित्तैवेत् ॥” (अभरन्नाकर)

उद्दीप (सं० पुं०) १ प्रकाशन, चमकाइट। २ प्रका-  
 शक, चमकानेवाला। ३ प्रोत्साहन, होसला बढ़ानेका काम। (स्त्री०) ४ गुग्गुलु, गूगुर।  
 उद्दीपक (सं० त्रि०) उत्-दीप-णिच्-ण्वुल्। १ उद्भा-  
 भक, रौशन करनेवाला। २ उत्तेजक, होसला बढ़ानेवाला।

उद्दीपन (सं० स्त्री०) उत्-दीप-णिच्-ण्वुल्। १ प्रकाश,  
 रौशन। २ उत्तेजन, भड़काव। ३ वर्धितकरण,  
 बढ़ावा। ४ कामकोषादि-प्रवृत्त करनेका काम,  
 खाद्विग गुस्सा वगैरहका उभाड़ना। ५ अलङ्कारोक्त  
 विभाव विशेष, अङ्कार रसको बढ़ानेवाली चीज।

“रत्नायुद्धोपका लोके विभाषाः काव्यानामप्येः।

आलम्बणीदीपनायौ तस्य भेदादौपौ च लौ॥

आलम्बनस्य दीपनायौ दिशकायादयश्च।” (साहित्यदर्पण)

उद्दीपमान (सं० त्रि०) प्रकाशमान, चमकनेवाला,  
 लो रौशन हो।

उद्दीप्त (सं० त्रि०) उत्-दीप-कृत। १ प्रकाशान्वित, रौशन।  
 २ प्रज्वलित, जलनेवाला। ३ वर्धित, बढ़ा हुआ।

उद्दीप्त (सं० पुं०) उत्-दीप-रण। १ गुग्गुलु, गूगुर।  
 (त्रि०) २ उद्दीप्त, चमकता हुआ।

उद्दिष्ट (सं० त्रि०) उत्-दिग्-कृत। उद्दिष्ट, गुस्ताख,  
 घमण्डी।

उद्देश (सं० पुं०) उत्-दिग्-घञ्। १ अनुसन्धान,  
 खोज। २ लक्ष्य, इशारा। ३ अभिलाष, खाद्विग।  
 ४ उपदेश, नसोहत। ५ वार्ता, बातचीत। ६ उद्देश,

सिखाई। ७ नामकयन, इसा बतानेका काम।

उद्देश्य, सुत्क। “उद्देश्यमनित्यम् यदीदं गुणः। उद्देश्यं उद्देश्य-  
 रश्च। अभिप्रेतवशात्प्रयत्नम्। यत्तद्देश्यं उद्दिश्यते तद्देश्यः।” (नाने)

उद्देश्य, सुखतत्पर। १० तन्वाधिकरणभेद। ११ उत्-  
 कृष्ट देश, बढ़िया सुत्क। १२ गिरिगण्डकूप, पहाड़की  
 चोटी। १३ उदाहरण, मिसाल।

उद्देशक (सं० पुं०) उत्-दिग्-ण्वुल्। १ उपदेशक,  
 नवीकृत देनेवाला। २ उदाहरणवाक्य, मिसालका  
 जुमला। ३ प्रच्छेक, खाना करनेवाला। “उद्देशकाना-  
 यवदिष्टयसिः।” (लोपावती) ४ प्रश्न, सवाल। (त्रि०)

५ दाटोस्तिक, मिसाल देनेवाला, जो समझाता हो।

उद्देश्यतः (सं० अर्थ०) वर्णन करके, मिसाल देकर।

उद्देश्य (सं० त्रि०) उत्-दिग्-ण्वुल्। १ लक्ष्य,  
 बताने का मिल। २ अभिप्रेत, मतलबवाला।  
 ३ अनुवाक्य, कह देने लायक। (स्त्री०) ४ तात्पर्य,  
 मतलब। विशेषण और विशेष्यके सम्बन्धको ‘उद्देश्य-  
 विधेयभाव’ कहते हैं।

उद्देश्यसिद्धि (सं० स्त्री०) अभिप्रेत निधि, मत-  
 लबकी कामयाबी।

उद्देश्य (सं० त्रि०) १ सहित करनेवाला, जो  
 इशारा देता हो। २ अभिप्रायसे कार्य करनेवाला,  
 जो मतलबसे चलता हो।

उद्देशिक (सं० पुं०) १ विदेह देग, एक सुत्क।

उद्देशिका (सं० स्त्री०) १ उत्पादिका, पैदा करने  
 वाली। २ कीट विशेष, दीमक।

उद्दीप्त (हिं०) उद्योत देखो।

उद्योत (सं० पुं०) उत्-द्युत-घञ्, वा दलोपः।  
 १ प्रकाश, रौशन। २ उद्घाटन, खोलाई। (त्रि०)  
 ३ प्रकाशमान, चमकीला।

उद्योतकार—मेघदूतकी टीकाके रचयिता। कल्याण-  
 मल्लने इनका यद्यन उद्धृत किया है।

उद्योतकराचार्य (सं० पुं०) भरद्वाजगोत्रके एक जन  
 प्रसिद्ध नैयायिक। इनके ह्वाये ‘न्यायवार्तिक’ और  
 ‘न्यायत्रिसुवार्तिक’ नामक दो ग्रन्थ विद्यमान हैं।  
 वाचस्पतिमिश्रने ‘न्यायवार्तिक’ की टीका बनायी है।

उद्योतकृत—१ एक अलङ्कारग्रन्थ-रचयिता। रत्न-

कण्ठने इनका वचन उद्धृत किया है। २ काव्य-प्रकाशके एक नवीन टीकाकार।

उद्द्योतित ( सं० स्त्री० ) प्रकाशित, रोशन, जो जलाया या चमकाया गया हो।

उद्द्राव. ( सं० पु० ) उत्-द्-घञ्। १ प्रस्थान, द्रुत पदसे पलायन, भागाभागो। ( त्रि० ) २ उत्प्लुट गतियुक्त, भाग खड़ा होनेवाला, जो दौड़ते जा रहा हो।

उद्द्रुत ( सं० त्रि० ) १ पलायित, भागा हुआ, जो दौड़ पड़ा हो। २ उहत, चढ़ा हुआ।

उद ( हिं० क्लि० वि० ) ऊर्ध्व, ऊपर।

उदत्त ( सं० पु० ) उत्-हृन्-क्त। १ राजमल, आही पहलवान्। ( त्रि० ) २ अविनीत, अकड़। ३ उन्नित, उठा हुआ। ३ उत्क्षिप्त, उछला हुआ। ४ उद्भूत। ५ चानित, भड़काया हुआ। ६ घोर, बड़ा। ७ उत्कट, कड़ा।

उदत्तमन ( सं० स्त्री० ) १ अभिमान, घमण्ड। ( त्रि० ) २ अभिमानी, घमण्डी।

उदत्तमनस्क ( सं० त्रि० ) अभिमानी, घमण्डी।

उदत्ताण्वनिष्पन्न ( सं० त्रि० ) समुद्रकी भांति कोलाहल करनेवाला, जो समुन्द्रकी तरह गरजता हो।

उदति ( सं० स्त्री० ) उत्-हृन् गतौ क्तिन्। १ उदगति, उंचाई, चढ़ाव। २ उन्नति, तरकी। ३ उत्पत्तन, ठोकर, चमेट। ४ उद्वल, अकड़पन। ५ धृष्टता, शरारत। ६ गर्व, घमण्ड।

उदन्तपुर (उदरन्तपुर) — बङ्गाल प्रान्तके वर्धमान जिलेका एक ग्राम। यह भागीरथी किनारे भूमा २३° ४१' १०" उ० और द्रावि ८८° ११' पू० पर अवस्थित है। नदीपार करनेको माव बना करती है। यहां रोज बाजार और पोस्टकान्तिको प्रति वर्ष मेला लगता है। उदना ( हिं० क्लि० ) उदगमन करना, उड़ना, फेंक पड़ना।

उदम ( सं० त्रि० ) उत्-भा-श, धमादेशः। १ कृत-शब्द, जो बोला हो। ( पु० ) २ कष्टवास, हंफो। ३ शब्दकरण, भावाञ्ज निकालनेका काम।

उदमान ( सं० स्त्री० ) बुझी, चूल्हा।

उदमाय. ( सं० घञ् ) कष्टवास ग्रहणकर, हंफकी उदय ( सं० त्रि० ) पान करनेवाला, जो पीता हो। उदर ( सं० त्रि० ) उत्-घेष्ट-श। १ उठाकर पान करनेवाला, जो उठाकर पीता हो। ( पु० ) २ राक्षस विशेष।

उदरण ( सं० स्त्री० ) उत्-हृ-ष्णुट्। १ उदार, कुटकारा। २ ऋणशोध, कर्जकी चुकतो। उग्र लन, उखाड़। ४ उत्तोलन, उठाव। ५ धमन, धँ, चलती। ६ निराकरण, बलगाव। ७ व्यसनादिसे विमोचन, बुरी भादत धरै रहसे बरतर्फी। ८ परिधिषण, विराय। ९ उत्पटन, ओचखसोट। १० पठित पाठका पुनः पठन, आमीखता। १२ गाईपत्य अनिका ग्रहण। ( पु० ) १३ गान्धु नरैगकी पिता। इहानि मार्कण्डेय पुराणके कृष्ण अंगकी टीका बनायी हो।

उदरणी ( हिं० स्त्री० ) पठित पाठका पुनः पठन, आमीखता।

उदरणीय ( सं० त्रि० ) ऊपर चढ़ानेके योग्य, जो निकाल लेनेके लायिल हो।

उदरना ( हिं० क्लि० ) १ उदर करना, बचाना। २ उदर पाना, उदरना।

उदरन्त, उदरणी देखो।

उदर्य ( सं० त्रि० ) उत्-हृ-लब्। १ उदरकारक, उदरनेवाला। २ उन्मूलक, उखाड़नेवाला। ३ तारण-कारक, पार लगानेवाला। “विराजन्तु मयि चोदयन्-रवौतवः” ( वाचस्पत्य ) ४ अंग लेनेवाला, हिस्सेदार। सम्पत्तिको पुनः प्राप्त करनेवाला, जो जापदाद फिरसे लेता हो।

उदर्य ( सं० पु० ) उदगती उर्ध्वं यस्मिन्। १ उत्पन्न, जलसा। प्रधानतः धार्मिक उत्सवको उदर्य कहते हैं। २ प्रतिशय उर्ध्व, बड़ी खुशी। ३ कार्य करनेका उत्साह, काम बनानेका होशना। ( त्रि० ) ४ उत्कट, बढ़िया। ५ जातउर्ध्व, खुश।

उदर्यण ( सं० स्त्री० ) उत्-हृ-ष्णुट्। १ रोमांच, रोंगटोंका खड़ा होना। २ मोत्साहन, होसनेका बढाव। ३ उर्ध्वमुख करना, खुश बनानेका काम। ( त्रि० ) ४ उत्तेजक, होसला बढानेवाला।



उद्धर्पिणी ( सं० स्त्री० ) वसन्ततिलक नामक वृक्ष  
वृक्षका भेद । इसमें चार पाद पड़ते और प्रत्येकमें  
चौदह-चौदह पत्तर लगते हैं—

“उद्धर्पिणी वसन्ततिलका इत्यस्या स्त्री । त्रिंशद्विंशत्युदितानि पुनश्चतुर्विंशतिः ।  
उद्धर्पिणीपुनश्चतुर्विंशतिः त्रिंशतिः” ( शतभाष्यम् )

उद्धर्पिन् ( सं० त्रि० ) उत्-धृ-णिच्-णिनि । १ उद्धर्प-  
कारक, ध्वज करनेवाला । २ पुलकित, खड़े रोंगटे  
रखनेवाला ।

उद्धव ( सं० पु० ) उत्-धृ-ङ्-प् । १ यज्ञाग्निः ।  
२ उत्सव, जलसा । ३ क्षत्र्यभ्रातृत्वं एक यादव ।  
ये सत्यकके पुत्र और वृद्धवृत्तिके शिष्य रहे । दूसरा  
नाम देवश्यावः था । उद्धव अग्निमदशको बदरिका-  
श्रममें रहते थे । श्रीकृष्णने इन्हें ज्ञानका उपदेश  
दिया । ( भागवत ११ स्कन्ध )

उद्धवमित्र—दैत्यप्रदीप नामक दैत्यकथनेके रचयिता ।

उद्धस्त ( सं० त्रि० ) उत्-क्षिप्ती हस्ती येन, प्रादि०  
बहुव्री० । उत्क्षिप्त हस्त, हाथ उठाये हुआ ।

उद्धान ( सं० स्त्री० ) उद्ध्यतेऽस्मिन्नग्निः, उत्-धा-  
व्यट् । १ सुखी, चूल्हा । २ धमन, कै । ( त्रि० )  
३ उन्नत, उठा या चढ़ा हुआ । ४ वमित, उगला हुआ ।  
५ स्थूल, मोटा, सजा हुआ ।

उद्धान्त ( सं० पु० ) उत्-घन-णिच्-ङ् । १ मद-  
शून्य हस्ती, जिस हाथीके मस्तकसे मद न बहे ।  
( त्रि० ) २ वमित, उगला हुआ ।

उद्धार ( सं० पु० ) उद्-धृयते, उत्-धृ भावे घञ् ।  
१ सुप्ति, नजात, छुटकारा । २ पतित या समाजप्युत  
व्यक्तिका प्रक्षय, गिरे या जातसे खारिज शब्दसंको  
फिर मिला लेनेका काम । ३ ऋणशोध, भदाकर्ण ।  
४ गणवस्तुका पुनरधिकार, खोयी हुई चीजपर फिरसे  
कब्जा करनेकी बात । ५ अंशभेद । मनुने उद्धारका  
नियम इसप्रकार रखा है—

“अथ विंश उद्धारः सप्तधाश्च वक्ष्यामि ।

ततोऽथ मध्यमश्च स्यात् तुरीयस्तु त्रयोदशः ॥

अथ त्रयोऽथ चतुर्विंशत् सप्तविंशतिश्च पञ्चदशतिः ॥

सप्तविंशतिश्चतुर्विंशतिश्च त्रयोदशतिश्च त्रयोदशतिः ॥

सप्तविंशतिश्चतुर्विंशतिश्च त्रयोदशतिश्च त्रयोदशतिः ॥

अथ चतुर्विंशतिश्चतुर्विंशतिश्च त्रयोदशतिश्च त्रयोदशतिः ॥

उद्धारो न दशसतिः सप्तविंशतिश्च त्रयोदशतिः ॥

यत्किंचिदेष देयम् कामसि मानवर्षं ननु ॥

एवं समुद्रतोऽहारे समाम्नात् प्रकल्पयेत् ॥

उद्धारोऽनुद्वेष्टे त्रिंशतिश्च पञ्चदशतिश्च त्रयोदशतिः ॥

एवं वक्ष्यामि उद्धारं सप्तविंशतिश्च त्रयोदशतिः ॥

ततोऽपि उद्धारोऽनुद्वेष्टे त्रिंशतिश्च पञ्चदशतिश्च त्रयोदशतिः ॥ ( २५० ११२१११ टी० )

पैठक धनके विभाग काष्ठपर विंश ज्येष्ठ, चत्वारिंशद् मध्यम और पञ्चीति भाग कनिष्ठकी मिसना चाहिये । फिर अवशिष्टांश सकलकी बराबर बराबर प्राप्य है । ज्येष्ठ और कनिष्ठके मध्यगत सकल भ्राता चत्वारिंशद् भागके अधिकारी होते हैं । ज्येष्ठ यदि गुणवान् रहे, तो द्रव्य सामग्रीके मध्य उत्कृष्ट वस्तु सकल और १० गाभीमें थोड़ा गाभी उसको मिले । सकल भ्राता समान गुणसम्पन्न होनेसे ज्येष्ठको दशम पदार्थ प्राप्य नहीं । फिर भी सम्मानकी रक्षाके लिये यत्किंचित् उसे अधिक देना उचित है । अवशिष्ट सकल धन भ्राता बराबर बांट लें । पैठक धन बंटते समय ज्येष्ठको दूना, मध्यमको आधा और तद्विध सकलको एक एक अंश मिलेगा । प्रथम विवाहितासे कनिष्ठ और पश्चात् परिणीता पत्नीसे ज्येष्ठ सम्मान रहनेपर प्रथम स्त्रीगर्भजात, कनिष्ठ पड़ते भी एक थोड़ा हृदय उद्धाररूप पाता है । फिर उपर पत्नीगर्भज सम्मानकी माताके कनिष्ठानुसार अपकृष्ट हृदय मिलेगा ।

उद्धारक ( सं० त्रि० ) उद्धार करनेवाला, जो उठाता या निकालता हो ।

उद्धारण ( सं० स्त्री० ) उत्-धृ-णिच्-लुगट् । १ उद्यापन, उठाव । उत्-धृ-णिच्-लुगट् । २ उद्धारमाधन, उद्धार, बचाव । ३ भागकरण, बंटवारा ।

उद्धारणदत्त ( सं० पु० ) महाप्रभु चैतन्यदेवके एक प्रसिद्ध भक्त । १४०३ शकको त्रिवेणीतीरवर्ती सप्तग्राममें इन्होंने लक्ष स्त्रियां दान कीं । पिताका श्रीकरदत्त और माताका नाम भद्रावती रहता । गौड़ शाण्डिल्य था । ये घरमें पंचने पुत्र श्रीनिवासको छोड़ और वाणिज्यका कार्य सौंप दिव्येकाचारो बने । नौसाचनमें उद्धारणदत्त प्रभुसे मिलने प्रायः जाते और प्रसाद मांगकर खाते थे ।

उद्धारना ( हि० क्रि० ) उद्धार करना, छोड़ना ।

उद्धारपण्य—जैन-शास्त्रानुसार एक योजन लंबे एक योजन चौड़े और एक योजन गहरे खुदे हुये गड्ढे में एक दिनसे लेकर सात दिनके भीतर २ पैदा हुये भियोंके बच्चोंके बाल सुँघ तक ऐसे काट २ कर भरे जिनके फिर टुकड़े न हो सकें तो ऐसे गड्ढेका नाम व्यवहारपण्य है । और उन धविभागो बालोंके टुकड़ोंमेंसे हर एक टुकड़े के-जितने प्रसंख्यात करोड़ वर्षोंके समय होते हैं उतने ही कल्पनासे टुकड़े किये जाय और उनसे पूर्वोक्त परिमाणवाला गढा भरा जाय तो उस भरे हुये गड्ढेका नाम उद्धारपण्य है ।

उद्धारपण्योपमकाल—जैनशास्त्रानुसार उद्धारपण्यमें भरे हुये कल्पित बालोंके टुकड़ोंमेंसे एक एक टुकड़ा यदि एक एक समयमें निकाला जाय तो जितने कालमें वह गढा खाली हो जायगा उतने ही कालका नाम उद्धारपण्योपमकाल है ।

उद्धारविभाग ( सं० पु० ) अंगका विभाग, तत्समीप-दृष्टि ।

उद्धारसागर—जैनशास्त्रानुसार दम कोड़ाकोडी उद्धार-पण्योका यह होता है ।

उद्धारसागरोपमकाल—जैनशास्त्रानुसार दम कोड़ाकोडी उद्धारपण्योपमकालोका यह होता है ।

उद्धार ( सं० स्त्री० ) गुद्घी, गुर्घ ।

उद्धारित ( सं० त्रि० ) छतोद्धार, छोड़ाया हुआ, जो बचा लिया गया हो ।

उद्दि ( सं० पु० ) ऊर्ध्वको-धारण, ऊपरको उठाव ।

२० अक्षाग्रस्थित शकटभाग, धुरीपर टिकनेवाला गाड़ीका हिस्सा । ३ उष्णास्थानका मध्य उपपन्न ।

उद्दित ( सं० त्रि० ) स्थापित, दण्डायमान, रखा या खड़ा हुआ ।

उद्दुर ( सं० त्रि० ) उत्-धूर्-क, प्रादि बहुव्री० । १ भारशून्य, बेभार, जिससे बोझ या जुवा न रहे ।

२ दृढ़, मजबूत । ३ उच्च, ऊँचा । ४ बन्द हो जाने-वाला, जो निकल पड़ता हो । ५ प्रसन्न, खुश, जो रोकमें न हो ।

उद्दृत ( सं० त्रि० ) उत्-धृ-त् । उत्कम्पित, डिला-

हुला, जो छूट पड़ा हो । २ उत्पाटित, मोचा हुआ ।

३ निरस्त, निकाला हुआ । ४ उत्क्षिप्त, उछाला हुआ । ५ छतोच्च, बढ़ाया हुआ । ६ उच्च, ऊँचा ।

उद्दृतपाप ( सं० त्रि० ) पापको छोड़ाये हुआ, जो गुनाहको भलग कर चुका हो ।

उद्दूनन ( सं० स्त्री० ) उत्-धू-णिव्-णुक् भावे लुट् । १ कम्पन, कंपकंपी । २ उत्क्षेपण, उछाल ।

उद्दूपन ( सं० स्त्री० ) उत्-धू-प-भावे लुट् । १ ऊर्ध्व सञ्चालन, ऊपरको उठाव । २ वासनकार्य, सौंधाव । करण लुट् । ३ धूप । ४ घूना ।

उद्दूलन ( सं० स्त्री० ) १ चूर्णकरण, पिसाई । २ सत्तैल-लवङ्ग-कर्पूर-कस्तूरी-मरिच-त्वक्चूर्ण, मसालेकी हुकनी । ( पाकशास्त्र )

उद्दूपण ( सं० स्त्री० ) उत्-धू-प-लुट् । १ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना । ( त्रि० ) २ रोमाञ्चित, खड़े रोंगटे रखनेवाला ।

उद्दृत ( सं० त्रि० ) रोमाञ्चित, जो खड़े रोंगटे रखता हो ।

उद्दूपित ( सं० त्रि० ) उत्-धू-त् । १ धूपकृत, भलग किया हुआ । २ मोचित, छोड़ाया हुआ ।

३ उच्छेदित, तोड़ा हुआ । ४ समाजमें गृहीत, मङ्ग-फिरमें शामिल किया हुआ । ५ उद्दृत, बढ़ाया हुआ । ६ उत्क्षिप्त, उठाया, बढ़ाया या बढ़ाया हुआ ।

७ विभक्त, बांटा हुआ । ८ उद्घाटित, खोला हुआ । ९ वमित, उगला हुआ । १० अविकल गृहीत, नकल किया हुआ ।

उद्दृतपाणि ( सं० त्रि० ) उद्दृत इन्द्र, हाथ समेटे हुआ ।

उद्दृतध्वज ( सं० त्रि० ) द्रुतफेन, भाग, फेन या मलार्क उतारा हुआ ।

उद्दृतारि ( सं० त्रि० ) रिपुहृदन, दुश्मन्को हटा देनेवाला ।

उद्दृति ( सं० स्त्री० ) उत्-धृ-तिन् । १ उत्क्षेपण, उछाल । २ उत्तोलन, उठाव । ३ भाकपण्य, खिंदाव । ४ रचा, बधाव ।

उद्दृतोद्धार ( सं० त्रि० ) १ निज अंगप्राप्त, अपना हिस्सा

पाये हुआ। २ निज भागदाता, किसीका हिस्सा दे देनेवाला।

उद्धृत्य (सं० अथ०) उत्तोलन वा भाकर्षण करके, उठा या खींच कर।

उद्धाम (सं० स्त्री०) उत्-धा-लुट्। शुद्धी, वृद्धा।

उद्धाय (सं० अथ०) निश्चाय या सांस छोड़कर।

उद्धय (सं० पु०) उज्ज्वल्यदमिति क्वप्, निपातनात् माधुः। विजोत्थोदः। पा ३।१।१। १ नद, दरया।

(स्त्री०) २ जलोत्थेषण, पानीका उछाल।

उद्ध्वंस (सं० पु०) भङ्ग, फटाव, खरखराहट।

उद्धवह (सं० वि०) १ ऊर्ध्ववह, ऊपर बंधा हुआ, जो टंगा हो। २ बन्धनभट्ट, जो खुल गया हो।

उद्धवन्ध (सं० पु०) उद्धवन्धे।

उद्धवन्धक (सं० पु०) वर्षसङ्हर जातिविशेष।

उद्धवन्धन (सं० स्त्री०) उत्-वन्ध भावे लुट्। १ कण्ठमें रख्नु डाक ऊर्ध्व बन्धन, गलेमें फाँसी लगाकर टंग जानैका काम। २ मृत्युके अर्थ कण्ठमें रख्नुवेष्टन, मरनेके लिये गलेमें रख्नीकी लपेट। ३ बन्धनच्युति, बंधाईका खोलाव। ४ बन्धन, बंधाई, टंगाई।

उद्धवन्धुक (सं० त्रि०) उद्धवन्धन करनेवाला, जो टांगता या लटकाता हो।

उद्धवल (सं० त्रि०) शक्तिशाली, जोरदार।

उद्धवाह—वन्धुके गुजरात प्रान्तका एक ग्राम। यह बलसारसे १५ मील दूर है। १०४२ ई० की २८ वीं अक्तोबरको सन्धान-पारसियोंने यहां का अपना अग्नि प्रतिष्ठित किया था। उस समयसे बराबर इस स्थान-पर सन्धान अग्नि जल रहा है।

उद्धवाह (सं० त्रि०) १ ऊर्ध्ववाह, हाथ उठाये हुआ। २ प्रसारित वाह, हाथ फैलाये हुआ। ३ शण्ड उठाये हुआ, जो खंड गढ़ी किये हो।

उद्धवल (सं० त्रि०) विलसे वहिर्गत, माँदकी छोड़े हुआ।

उद्धवह (सं० त्रि०) उत्-वृष-क्त। १ प्रस्तुटित, खिला हुआ। २ उद्दीपित, रौशन किया हुआ। ३ प्रवृद्ध, लगाया हुआ। ४ उदित, उठा हुआ। ५ अणुधृत, जो याद भा गया हो।

उद्धवहसंस्कार (सं० पु०) वासनसंसर्ग, रत्तिपात्र-मनघ्वा, किसी बातकी यादगारी।

उद्धवाह (सं० स्त्री०) परकीया नायिका भेद। यह निज इच्छानुरूप परपुरुषसे छेड़ बढ़ाती है।

उद्धवोष (सं० पु०) उत्-वृष-घञ्। १ क्लिप्त ज्ञान, हलकी समझ। २ न्यायादि मतसे—पूर्व अंस्कारका उद्धदीपन। ३ अणुधरण, यादगारी, भूली हुई बातका कोई सबब पड़नेसे फिर याद भा जाना।

उद्धवोषक (सं० वि०) उत्-वृष-घिच्-लुट्। १ प्रकाशक, देखाने या बतानेवाला। २ उद्दीपक, रौशन करनेवाला। ३ उद्धवोष उत्पन्न करनेवाला, जो याद दिला देता हो। जैसे—किसी व्यक्तिने काशीमें विशेषेश्वरके निकट एक श्मश्रुत पुरुषकी देखा था। फिर वह प्रदेशान्तरस्थित स्त्रीय ग्रामकी आया। वहां अन्य श्मश्रुत पुरुषकी देख उसे काशीके विशेषेश्वरका अरण्य हुआ। इसमें श्मश्रुत पुरुष उसकी विमेश्वर स्मरणका उद्धोषक बन गया। ४ जाग्रत करनेवाला, जो जगाता हो। (पु०) ५ सूर्य।

उद्धवोधन (सं० स्त्री०) उत्-वृष-घिच्-लुट्। १ ज्ञापन, जगाई। २ अरणीत्पादन, याद दिलानेका काम। (त्रि०) ३ ज्ञानोत्पादक, समझाने, देखाने या जगाने वाला।

उद्धवोचिता (सं० स्त्री०) परकीया नायिकाका एक भेद। जब परपुरुष कीमलसे छेड़ देखाता, जब इसका प्रदय उसपर सुन हो जाता है।

उद्धट (सं० त्रि०) उत्-भट-घप्। १ सहार्ग्य। २ उदार, सखी। ३ अष्ट, बढ़ा। (पु०) ४ अर्थ वहिर्भूत। ५ कच्छप, कछुवा। ६ पूर्व, मगरिकी। ७ शूर्य, राप। ८ सूर्य, आकाश। ९ जयापीड़के अधीनस्थ समापति। इन्होंने एक अलङ्कारका ग्रन्थ बनाया था। इन्द्रराजने उसकी टीका की। (राजतरंगिणी भा० ६४) आनन्दवर्धन 'धोर' अभिनव गुप्तने इनका वचन उद्धृत किया है।

उद्धव (सं० पु०) उत्-भू भावे घप्। १ उत्पत्ति, पैदायग।

“स्वतन्त्रोदकयावन्ति उपभूतवन्ति च ।

निधातोऽत्रावस्थात् ये वास फलवन्ति ॥” (भु ४११२)

२ विष्णु । (त्रि०) कतरि भव् । ३ उत्पत्तिमान्,

उपलनेवाला । ४ संसारातीत, दुनियासे निराला ।

उद्भवकार (सं० त्रि०) उत्पन्न करनेवाला, जो उपजाता हो ।

उद्भाव (सं० पु०) १ उत्पत्ति, पैदायश । २ चित्ती-  
दार्य, सख्वात । ३ उष्मा, उमस ।

उद्भावन (सं० स्त्री०) उत्-भू-णिच्-ल्युट् । १ कल्पन,  
अन्दाज । २ उत्पादन, पैदा करनेका काम ।  
३ चिन्तन, खयाल । ४ उत्क्षेपण, उछाल । ५ अज्ञात  
विषय प्रकाश, न समझी बातका खोलाव । (त्रि०)  
६ प्रकाशक, जाहिर या रीयन करनेवाला । ७ चिन्ता-  
कारक, फिक्रमन्द ।

उद्भावना (सं० स्त्री०) १ कल्पना, अन्दाज ।  
२ उत्पत्ति, पैदायश ।

उद्भावयिष्ठ (सं० त्रि०) उन्नतिकारक, ऊपर उठा  
देनेवाला ।

उद्भावित (सं० त्रि०) १ उपेक्षाकृत, खयालमें न  
लाया हुआ । २ कथित, कहा हुआ ।

उद्भास (सं० पु०) उत्-भास्-भावे घञ् । प्रकाश,  
चमक । २ शोभा, खूबसूरती ।

उद्भासन (सं० स्त्री०) उत्-भास्-ल्युट् । १ उद्घोषन,  
चमकाहट । २ उल्लापनकरण, उजलाहट । (त्रि०)

३ प्रकाशक, चमकानेवाला ।

उद्भासयत् (सं० त्रि०) प्रकाशक, जो रीयन कर  
रहा हो ।

उद्भासवत् (सं० त्रि०) प्रकाशमान, चमकदार ।

उद्भासित (सं० त्रि०) उत्-भास्-लृट् । १ दीप्त,  
चमकाया हुआ । २ शोभित, सजाया हुआ ।

उद्भासित् (सं० त्रि०) देदीप्यमान, चमकदार ।

उद्भिज्, उद्भिद देखो ।

उद्भिज्ज (सं० त्रि०) उद्भिन्नति क्तिप् उद्भिन् तया  
सन् जायते जन-ङ । भूमिको भेदकर जन्म लेनेवाला,  
जो जमीनको फोड़कर निकलता हो ।

उद्भिज्जविद्या, उद्भिदि देखो ।

उद्भिन् (सं० पु०) १ तरु गुल्मादि, पेड़ झाड़-वगे-  
रह । २ निर्भर, भरना । ३ यागभेद । (त्रि०)  
उद्भिद देखो ।

उद्भिद (सं० त्रि०) उत्-भिद-क्तिप् । १ उद्भिज्ज,  
उगने वाला । २ भेदक, तोड़ डालनेवाला ।

उद्भिद (सं० पु०) उत्-भिद-क । १ हवादि,  
पेड़ वगैरह । (स्त्री०) २ पांशुलवण, मतवल्ली  
नमक । (त्रि०) १ भूमिको भेदकर उत्पन्न होने-  
वाला, जो जमीन फोड़ कर निकलता हो ।

उद्भिदजल (सं० स्त्री०) हृद्यजल त्रिशै, पेड़का  
पानी । मरुभूमिमें पान्यपादय नामक एक प्रकारका  
हृद्य उपजता है । उसका कोई स्थान काटनेसे हृद्य  
और शीतल जल निकलता है । उत्तम वातुसामय  
मरुभूमिमें चलते समय पथिक उक्त जल पोकर हो  
जोते-जागते हैं । उसो जलका नाम उद्भिदजल है ।

उद्भिदविद्या (सं० स्त्री०) जिस शास्त्र द्वारा उद्-  
भिदके विषयका सकल तत्त्व समझते, उसे उद्भिद-  
विद्या (Botany) कहते हैं । यह विज्ञानशास्त्रकी  
एक शाखा है । वहेय्य—उद्भिद सकलकी रीति  
और प्रकृतिका अनुसन्धान लगाना है ।

उद्भिद सजीव एवं वर्षिण होता और प्रावि-  
गपकी भांति जन्म लेता, फिर समय पाकर मृत्तुके  
सुखमें गिर पड़ता है । मल्लिक न रहते भी यह  
अनुभवकी गति रखता है । सूर्यास्तके पक्षे कोई  
कोई उद्भिद पत्रको लपेट सो जाता है । यह समझ  
भी सकता, चतुष्पात्र कैसा गुजरता है । हमारे  
देहमें जैसे रक्त, उसके देहमें वैसे हो रस कार्य किया  
करता है । फिर जाति-सम्पर्कयता भी देख पड़ती  
है । उद्भिद मामा माई लता प्रभृति एवं अनेक  
मित्र और शत्रु रखता है ।

प्रथम यह बीज रूप पर रहता, जिसके भूमिमें  
पड़नेसे चढ़ाव होता है । उस समय उत्ताप, जल  
और वायुके यथोचित साहाय्यका प्रयोजन है । क्योंकि  
ताप, जल और वायु न मिलनेसे बीजस्य पद-  
(काण्डस्य रूप) फिर कैसे पनपेगा ।

पद-उत्पत्तिकी प्रथमावस्था पर भ्रूणके स्वरूप

साधनमें लगनेसे बीजान्तर्गत स्थित खाद्य द्वारा उद्भिद् पुष्ट हुआ करता है। मूलके एक पार्श्वसे किसी प्रकारका कोमल पदार्थ बीजके अधिकांग अङ्गमें भर जाता, जो खेतसार वा धातुविशेष (Albumen) कहलाता है। अङ्गुरोत्पत्तिके समय स्वाभाविक नियमानुसार उक्त खेतसार शर्कराका आकार बनाता है। शर्कराको जलमें घुलनेसे वासोडिद् सञ्जन ही बाट लेता है। फिर अङ्गुरकी उत्पत्तिके कालपर उद्भिदको भिन्न भिन्न ओषधोंमें बांट देते हैं। एक बीजपत्र निकालनेवालेका एकपर्णिक (Monocotyledon) और दो बीजपत्र निकालनेवालेका द्विपर्णिक (Dicotyledon) नाम है।

एकपर्णिक उद्भिद् जवतक जीता, तवतक मेरुदण्डके अन्तिम भागसे नहीं—मध्यभागसे कितनी ही पत्तों फूट पनपा करता है। किन्तु द्विपर्णिकका उक्त भाग दोर्ध्व होकर भूमिमें शाखा-प्रशाखा डालता है। अधिकांश एकपर्णिकमें शाखा नहीं—केवल मस्तककी दिक् कितनी ही पत्तों पड़ती है। ताल खजूरादि एकपर्णिक वा एकपत्रोत्पत्तिक हैं। फिर आन्ध्र जम्बू आदि द्विपर्णिक वा द्विपत्रोत्पत्तिक होते हैं।

पत्र सकलकी साधारणतः किसलय, वृन्त और वृन्तकोप तीन भागमें बाँटते हैं। बीजपत्रका वृन्त और वृन्तकोप अधिक पनपनेसे मेरुदण्ड निकल जाता है। बीजपर अङ्गुरोत्पादक शक्तिका प्रभाव पड़नेसे उद्भिदमें मूल लगता है।

बीजसे प्रथम जो इन्द्रिय निकलता, वही मूल ठहरता है। एकपर्णिकके अन्तिम भागमें केवल जो मूल चलता, वह गोण रहता है। फिर द्विपर्णिकमें अन्तिम भागके अग्र्य वटनेसे उपजनेवाला मूल मुख्य है। मूल प्रधानतः मृत्त वा शाखान्वित और तान्त्रयिक वा तन्तुवत् षष्ठ शाखायुक्त, दो प्रकारका होता है। वह अधोगामी है। उसमें अन्त्यभागके रसाकर्षणकी शक्ति रहती है। फिर प्रत्येक ही मूलका अन्त्य भाग वर्धमान और रसाकर्षी है।

मूल तीन प्रकारका होता है—मूलमूल, जलीय मूल और वायव्य मूल। जो मूल सृत्तिकामें रहता,

उसमें सब कोई मूलमूल कहलाता है। इस ओषधके उद्भिद् पृथिवीके मध्य अधिक है। केवल जलमें रहने और अङ्गुर उत्पन्न करनेवाले उद्भिदका मूल भूमिको न भेद जलपर ही उतराता है। इसीका नाम जलीय मूल है। जैसे—काई प्रभृति। कोई कोई उद्भिद् न तो सृत्तिकामें घुसता और न जलमें बसता, पालीक एवं वायु लेनेके लिये वस्त्रक वा पर्वत-विपरमें धंसता है। इसका मूल दरा और काण्ड-जैसा होता है। एतद्विषय दूसरे प्रकारका भी मूल है। उसे परभूत मूल कहते हैं। क्योंकि वह अन्य तत्वकी त्वक् फाड़ जहाँ पुष्टिकर रस पाता, वहाँ पड़ूँच जाता है। वट प्रभृति वृक्षके काण्डमें ईपत् पोतवर्ण मूल लटकते देख पड़ता है। वह साधारण नहीं। उद्भिदके तत्त्वसे उसे असाधारण वा अनियत मूल कहते हैं।

प्रथमावस्थामें काण्डका नाम सुकुल (Plumule) है। उसके अन्य भागमें एक कलिका पाती, जो अन्य कलिका या मांस कहलाती है। उसी कलिकापर काण्डकी छद्म निर्भर है। उससे बीजपत्र निकलते हैं। काण्ड कई प्रकारका होता है,—१ मूच्छगामी, २ ऊर्ध्वग, ३ क्षतायुक्त, ४ लम्बमान और ५ भारोही। प्रत्येक मूलमें वस्तु विवरण दीयो। मूलमें नहीं—पत्र, वस्त्रक वा अन्य उपकरण काण्डमें रहता है। काण्डकी जिस जिस गांठसे पत्तों पाती, वह पर्वमन्धि (Node) कहलाती है। मन्धिद्वयके मध्यस्थित भागका नाम अन्तःपर्व (Inter-node) है। काण्डका एक पर्व महीमें रहता है। मूलको कलिका-विकाशकी क्षमता नहीं। मूलमध्यस्य काण्डसे किसी किसी पेड़की कोंपल निकल पाती है। जैसे—केलेसे। अनेक व्याज्जि भ्रान्तिक्रमसे महीके मध्यस्य काण्डको मूल-जैसा समझते हैं। वस्तुतः जो कदलीकाण्ड कहाता, वह अत्यन्त विस्तृत पत्रवृन्तसमूहका कठिन काण्डाकार होनेके सिवा दूसरा कोई द्रव्य नहीं। उसका नाम मूलाकार काण्ड (Rhizoma) है। चतुर्ध्रुव मूलमध्यस्य काण्डको स्तरीतकाण्ड (Tuber) कहते हैं। जैसे—चासू। कभी कभी काण्डके पत्र सम्पूर्ण स्थिर एक वा ततोधिक, कठिन वस्तु उत्पन्न करते हैं।

उसीका नाम कन्द (Balb) है। यह अधिकतर मूलाकार काण्ड रहता है। जैसे हुर्या। काण्ड दो प्रकारका है—दाहमय और रसाय। उद्भिदके शरीरमें जो गोलाकार वस्तु पाते हैं, उसे बुद्बुद (Shell) कहते हैं। बुद्बुद अति सूक्ष्म चर्मसे निर्मित सूद्र सूद्र दाने होते हैं। उनमें कोई न कोई कठिन वा द्रव पदार्थ रहता है। उद्भिद और प्राणीका देहका एकत्र दृष्टव्य बुद्बुदके स्तरद्वारा निर्मित है। वास्तविक किसी जीवित पदार्थकी पहिचान करनेके लिये प्रथम बुद्बुदकी चिन्ता रखना पड़ती है। गारुडकी गूदा देखनेसे बुद्बुदका दृष्टान्त मिलता है। बुद्बुदका परिमाण अणुलके चार सौ भागमें एकसे तीनतक बैठता है। और किसी किसी उद्भिदमें स्तु, जैसी पेशदार नली (Spiral vessel) रहती है। ऐसे आकारविशिष्ट एवं सञ्चित पदार्थयुक्त और गोल बुद्बुदके संयोगसे (Annular vessel) मण्डलाकार नली निकलती है। बुद्बुद अपने मध्यस्थ सञ्चित पदार्थके कठिन पड़नेसे मात्ताकार बन जाते हैं, जिन्हें कोष्ठ कहते हैं। कोष्ठके वहिःस्थित व्यावर्तक स्तरकी त्वक्को और बुद्बुदविशिष्ट मध्यमभाका नाम मज्जा है। एक-पर्यन्त उद्भिद दाहमय काष्ठविशिष्ट होनेसे नारियल और द्विपर्यन्त चामके पेड़ जैसा देख पड़ता है।

मज्जा और वल्कलके अन्धवहित निम्नभागमें अणु-बीजपयन्त्र अगानेसे काष्ठका स्तर दृष्टिगोचर होता है। वही त्वक् और काष्ठकी वृद्धिका प्रधान स्थान है। वहाँ बुद्बुद अति सूक्ष्म प्राचीरविशिष्ट और अपने उपरिस्थ सञ्चित पदार्थसे विहीन रहते हैं। नूतन काष्ठ-स्तरमें निर्माता बुद्बुद केवल दीर्घ एवं पदार्थके सञ्चयसे परिमाणमें कठिन तथा जलद्वारा अमेधा हो सकते हैं। अन्तरस्थ कठिन काष्ठके स्तरको सार वा आन्तरिक काष्ठ (Heart-wood) कहते हैं। यह नामा वर्णयुक्त हो सकता है। सर्वप्रथम अन्तरस्थ स्तरका नाम तन्तुत्पादक प्रदेश (Liber) है। क्योंकि कामजु बननेसे पहले हृषका उन्नत भाग निकाल लोग लिखा-पढ़ी करते थे। तन्तुत्पादक प्रदेशसे बाहर एक स्वतन्त्र हरित एवं प्रस्तुत बुद्बुद होता है।

उसको हरितस्तर कहते हैं। हरितस्तरसे बाहर वीर्य वेदा करनेवाला स्तर (Cortical lair) है। सर्ववहिःस्थित स्तरका नाम चर्म (Epidermis) है। यह स्तर अधिकतर देह पड़ता है। नारियल या वैसे ही हृषके बीच जब पत्र फूटते, तब काण्डके नववर्धित अंशवाले अग्रभागसे निकटस्थ कितने ही बुद्बुद सञ्चित पदार्थ द्वारा कठिन पड़ नली-जैसे बन जाते हैं। फिर वही नली एक बुद्बुदके स्तरसे रचित रहती है। उन्नत नली और कठिन बुद्बुद सकल एकत्र स्वयक स्वयक पर मिल काण्डमें चक्षु वा तन्तु उत्पादन करते हैं।

किसी काण्डको समस्त कलिकायें एककालमें ही व्यक्त हो डाल नहीं बनती। उनमें प्रत्येक गुप्त रहती और वर्धितके परिणत होने पर देख पड़ती हैं। कितनी ही परिवर्तित कलिकाओंके कठिन और सूक्ष्मपत्र बननेसे कण्टक निकलता है।

शरीर और वीर्यके पेड़ोंमें प्रत्येक पर्वकी सन्धिसे एक-एक पत्र निकलता है। इसको एकीतराजस कहते हैं। मदार और सेंडुव प्रसूति कितने ही पेड़ोंमें प्रत्येक पर्वकी सन्धिसे दो पत्र फूटते हैं। इसका नाम प्रतीपल्ल है।

काण्ड प्रादिम अवस्था पर कलिकामें रहता है। तन्मध्यस्थित स्तरविशिष्ट और घन सन्निविष्ट पत्र यथा-काल प्रस्तुटित हो सौन्दर्य, वर्णोत्कर्ष एवं सद्गन्ध द्वारा प्रकृतिको मतवाला बना देते हैं।

इन पत्रोंका निगूढ तत्त्व दृढ़नेसे नहीं मिलता। जितना ही इनकी उत्पत्तिका विषय जांचते हैं, उतना ही प्राचीनमें अभूतपूर्व आनन्दका सञ्चार हो निकलता है। इसलिये कहना पड़ता है—सिवा उस विषयविधाता जगदीश्वरके कौन इसप्रकार कार्यको सुसम्पन्न कर सकता है। हम जैसे रक्तके शोधनार्थ ग्वास लेते हैं, वैसे ही पत्र भी वायुग्रहणसे जीवगणके श्वासयन्त्रका कार्य चलाते हैं। ये वायुके ग्रहण और रचनके सिवा अधिक परिमाणसे जलका भी नियंत्रण करते हैं। वृष्टिका जल प्रथम गिरकर महीमें घुसता है, जिसे उद्भिदका मूल चूसता है। प्रत्येक वृक्षमें यह सब

पत्र होते और प्रत्येक पत्र एक-एक विन्दु जल देता है। इसीप्रकार पत्रसंख्या हृत्तीय अधिक परिमाणमें जल गिरता है। जल यदि पत्रसे निकल वायुमण्डलमें पुनः न पहुँचता, तो पत्रालय शीथके समय वह सुखकर नितास्त हो उष्णभाव धारण करता।

पत्रदल पर्याप्त भ्रमकिससयकी भूमि भयविन्दु और हितस है। एक भाकाग और परपर तल भूमिकी और रहता है। दलके प्रान्तभागकी धार कहते हैं। क्योंकि वह हस्त या दण्डपत्रके तलकी धारण करता है। उल्ल दण्ड काण्डके साथ संयोग-स्थलपर फेसकर हस्तकोय निकलता है। सहस्रक पत्रमें एक बहुत स्पष्ट रेखा दलके मध्य पड़ती है। उसका नाम मध्यरेखा है। हस्तका दण्ड स्वयं दलके मध्य न फेस प्रायः प्रथमकालमें दो वा अधिक गिराते घंट जाता है। इन रेखाओंका दैर्घ्य प्रायः समान और उत्पत्तिस्थानसे सर्वत्र प्रसारित भयवा दलके मध्य किश्ति सरल वा वक्र रहता है। प्रधान रेखा वा गिरावे बहु शाखा ये निकलती है और पीछे हृत्विगत हो पत्रदलकी सकल दिशाओंमें क्रियाकार सूक्ष्म सूक्ष्म प्रयागा छोड़ती हैं। उनकी परस्पर संयोगसे एक जाल बनता है। जिन उद्भिदके पत्र इस प्रकार जालविगिष्ट रहते, उनमें दो एककी छोड़ प्रायः सकल ही द्विपर्यंक होते हैं। फिर उल्ल जालविहीन और पत्रदलके मध्य समानान्तर गिरा-विगिष्ट पत्र एकपर्यंक हैं। जटिल गिरायुक्तकी जालालति (Reticulate) और परपर पत्रकी पञ्जालालति (Non-reticulate) कहते हैं। उनमें भ्रम्य, कटहल जालालति और वार, चदरक, सर्वजया प्रभृति पञ्जालालति हैं। हस्तका दण्ड स्वयं पत्रके दलमें फेसता है। वह दलकी दो भागमें घंट दक्षिण और वाम पार्श्वपर्यन्त शाखा छोड़ता है। उसकी मध्यरेखा परके मध्यांग जैसी और पञ्चाकार (Pinnate) नाम पानेवाची होती है। फिर हस्तका दण्ड जलके पत्रमें घुसते ही घटकर दो वा अधिक गिरा निकलता है। उनमें कोई क्वकी कमानकी तरह प्रसारिताकार (Radiate), कोई कराराकार (Palmate), कोई वक्रगिरायुक्त (Curve-

nerved) और कोई दलकी मध्यरेखा समानान्तर गिरायुक्त (Parallel-veined) होती है। पत्र दो प्रकारके होते हैं—सरल और योगिक। जिस पत्रमें एकसे अधिक पत्रि पड़े, वह योगिक है। सहस्रक पत्रकी कर्णाकार (Auriculate) चाकृति लक्षित होती है। सहस्रक पत्रकी भूमि नानाप्रकार है। कहीं पानके पत्ते जैसी (Corvate), कहीं तीक्ष्ण एवं शृण्णालति, कहीं टालू किनारेदार, कहीं दन्तुर, कहीं लकचाकृति (Lorate) किंवा एक-एक बड़ी मेहरावके भ्रम्यगत छोटी छोटी मेहरावके आकारमें लक्षित (Crenate) भूमि रहती है। पत्रकी पड़का वा गिरा अपने द्विज किनारेसे जो सम्यन्व रहते, उसकी बात सहज ही समझ नहीं पड़ती। द्विजका परिणाम अधिक रहनेसे पत्र कई खण्डमें घंट जाता है। उससमय देखने में जाता है—पत्रका आकार पड़का वा गिरापर निर्भर है। खण्डके पत्रकी संख्या यदि इस्ताद्विधे न्यून होती है, तो द्विखण्डित त्रिखण्डित इत्यादि उसके नाम पड़ते हैं। जिसमें दल इस प्रकार कट जाता है, वह व्यथिष्ट (Dissected) पत्र कहलाता—जैसे लनीकन्दका पुष्प। योगिक पत्रका दल सहजमें ही हस्तदण्डसे घुसक हो जाता है। किन्तु सूक्ष्म जान पर भी सकल पत्रके दण्डका हस्तदण्डसे छूटना कठिन है। पत्र, मुकुल और पुष्पविगिष्ट काण्ड शाखके पक्ष और पुनरुत्पादनका कार्य करता है। पुष्प ही पुनरुत्पादनका साधन है। पुष्पकी कलिका प्रधान प्रधान विषयोंमें पत्रकलिका हो जैसी रहती है। जिस पत्रके कक्षमें पुष्पकी कलिका निकलती है, उसकी संज्ञा पुष्पोत्पादक पत्र (Bract) है। पुष्पोत्पादक पत्र प्रायः हरा और परपर पत्र जैसा होता है। कभी कभी वाद्य सौन्दर्य देखनेसे उमीके पुष्प होनेका भ्रम हो जाता है। पत्रकी कलिकाके कक्षमें अन्य पत्र कलिका, फिर उसी स्थानमें परपरापर कलिका भी पर्याप्तक्रमसे निकल सकती हैं। किन्तु पुष्पकी कलिकासे केवल एक पुष्प किंवा पुष्पस्तवकगुल गिराका उत्पत्ति होता है। प्रसूटित पत्रकी कलिकाके मेहरावकी शाखा कहते हैं। फिर पुष्पकी कलिकामें

शाग्रिका मुख्यवृत्त (Pidangle) और गौण प्रशा-  
खाका गौणवृत्त (Pedicel) नाम है। कलिका तथा  
मुख्यका यथास्थान और यथा क्रमपर सन्निवेश पुष्प-  
विन्यास (Inflorescence) कहलाता है। उदादिका  
फलोत्पादक अंग ही पुष्प है। वह चार स्तवक और  
परिवर्तित पत्रों द्वारा वनता है। सबसे बाहिरके  
दो स्तवक अन्य दो स्तवकोंके चारों तरफ रक्षावरणकी  
तरङ्ग लगते हैं। मध्यस्थित दो स्तवक स्त्रीपुं-जातिका  
भेदकरानेवाले उद्भिदके इन्द्रिय हैं। उद्भिदका  
तत्त्व समझनेवाले इन्हों दोनोंको प्रधान इन्द्रिय बताते  
हैं। पुष्पके उपरोक्त चार स्तवकोंमें वहिःस्थकी  
वहिरावरण (Calyx) और अन्तःस्थकी अन्तरावरण  
(Corolla) कहते हैं। अन्तरावरणके निकट पुंस्त-  
वक वा पुंकेसर (Stamen) और उससे दूर वृत्त-  
दण्डके अन्य भाग पर स्त्रीस्तवक वा गर्भकेसर (Pistil)  
रहता है। वहिरावरण कितने ही परिवर्तित पत्रोंसे  
वनता है, जिनका नाम वहिःखण्ड (Sepal) है।  
यह अन्तरावरणके खण्ड वा दलकी अपेक्षा अधिकतर  
वृद्ध और सुरक्षित होता है। अन्तरावरण भी कितने  
ही पत्र वा पत्रोंके खण्डोंसे वनता है। उन्हें पुष्पदल  
(Petal) कहते हैं। अन्तरावरण वहिरावरणसे  
मनोरम लगते भी स्थायी नहीं होता। पुंकेसर  
अन्तरावरणके मध्य एवं प्रायः सर्वदा पुष्पदलके साथ  
एकोत्तर क्रममें रहनेसे वहिःखण्डके सम्मुख ही  
पड़ता है। पुष्पदल और वहिःखण्डके साथ पत्रका  
जैसा सादृश्य है, पुंकेसरके साथ ऐसा देख नहीं  
पड़ता। स्त्रीस्तवक वा गर्भकेसर पुष्पमें मेरुदण्डके  
अन्यभागपर रहता है। उसके खण्ड वा पत्रका  
नाम किष्कल (Cape) है।

शिखामें विन्यास और वृत्तहीन पुष्पकी मञ्जरी  
कहते हैं। समस्त पुष्प केवल पुं वा स्त्री जातीय रह-  
नेसे मञ्जरी एक जातीय (Catkin) कहलाती है—  
जैसे शङ्खुत। यदि वह एक बड़े, पुष्पोत्पादक पत्रके  
मध्यमें लिपट जातो है, तो उसे त्रिजातीय (Spadix)  
कहते हैं जैसे सुइया। त्रिजातीयके निम्नस्थ पुष्प स्त्री  
जाति, मध्यस्थ पुंजाति और उपरिस्थ स्त्री अर्थात्

उत्पादक पुष्पसे रहित होते हैं। मुख्य वृत्तका देर्घ  
असमान रहनेसे शिखायुक्त रूपको समतालिक  
(Corymb) कहते हैं। पुष्पोत्पादक पत्रके कचने  
रहनेवाली अनिर्दिष्ट कलिकासे किसी किसी स्थलपर  
पुष्प नहीं—गौण शिखाका सकल निकलता है। फिर  
इस सकल शिखामें जो पुष्पोत्पादक पत्र लगता है,  
उससे फल पैदा होता है। ऐसे स्थलपर शिखायुक्त  
मञ्जरी और समतालिक रूप दोनों सरल न हो  
योगिक बन जाते हैं। फूलकीबी समतालिक रूपका  
उदाहरण है।

कहीं कहीं छत्राकार (Umbel), मस्तकाकार  
(Capitulum) प्रकृति शिखाके अन्य रूप देख  
पड़ते हैं। किसी साधारण मस्तकाकार पर स्थित  
कितने ही पुष्प एक-जैसे लगने पर योगिक कहलाते  
हैं। फिर उनमें एक-एककी पुष्पक कहते हैं। छत्रा-  
कार या मस्तकाकार प्रकृति व्यावर्तक पुष्पके उत्पादक  
पत्र स्तवकका नाम पत्राच्छादन (Involucre) है।  
जबतक फलकी कली अनिर्दिष्ट पत्रकलिकाके समान  
पुष्प प्रसव नहीं करती और अपने वृत्तके अन्य  
भागमें केवल एक फूल रखती है, तबतक उसकी संज्ञा  
अनिर्दिष्ट-पुष्प-विन्यास है। किन्तु यदि पार्श्विक  
कुसुम छग और उसके भीतरी फूलके फूटने पर नीचे  
फिर पार्श्विक कुसुम निकले और पुनः पुनः अन्य  
भागकी वृद्धि रुककर पार्श्व भागकी होती रहे, तो  
अनिर्दिष्ट पुष्पविन्यास सट्टम उसकी भी संज्ञा बहु-  
शिखान्वित पुष्पविन्यास पड़ती है। मंदारके पेड़की  
स्थित शिखा विसकुल पत्रके कचमें न रहकर—दो  
वृत्तके मध्यमें रहती है। इस प्रकारके पुष्पविन्यासको  
अक्षाधिक कहते हैं। प्रधानतः आदर्श पुष्पपत्रकी कक्षासे  
निकलता है। यह पत्र पुष्पोत्पादक पत्र है। जब  
पुष्पके बाहर एकसे अधिक पुष्पोत्पादक पत्र स्तवका-  
कारमें वर्तमान रहते हैं, तब उसका एक अतिरिक्त  
वहिरावरण वा उपकरण (Epicalyx) देख पड़ता है।  
जैसे जवाकुसुममें पुष्पोत्पादक पत्रसे दक्षिण और बायं  
पार्श्वस्थ दलके सम्मुख दो दो वहिःखण्ड रहते हैं।  
आदर्शपुष्पमें सबसे नीचे वहिरावरण, उसके ऊपर अन्त-



रावरण, फिर पुंकेसर और सर्वोपरि गर्भकेसर होता है। गर्भकेसरके साथ पुंकेसरका जो सम्बन्ध रहता है उससे अनुसारः पुष्पका समूह तीन श्रेणीमें बंटता है। १. भ्रमको भयजात (Hypogynous) अर्थात् पादार्थ-रूपविशिष्ट कहते हैं। यह पुंकेसर पुष्पाधारके ऊपर और गर्भकेसरके नीचे रहता है। चम्पेका फूल नोच काष्ठनेपर इसका उदाहरण मिलेगा। द्वितीय पारिजात (Perigynous) है। इसमें तीन बहिःस्त्वकके जुड़कर पुष्पाधारपर पहुँचनेसे पूर्व एक नल निकलता है—जैसे गुलाब, इसकी प्रवृत्ति। तृतीय का नाम अघ्राजात (Epygynous) है। इसमें उक्त नल गर्भकेसरसे लिपटता और पुंकेसर गर्भकेसर पर चढ़ा—केसा देख पड़ता है—जैसे भमरुद और वासुनका फूल। जो केसर युक्तदलान्वित अन्तरावरण पर रहते, उन्हें दलीज्जात (Epipetalous) कहते हैं। केसरके स्थानानुसार द्विपरिणक उद्भिद, प्रधानतः तीन श्रेणीमें विभक्त हैं। १. भ्रमका भयजात और पुष्पावरणसे वियुक्त होनेपर चतुर्विभुक्तस्त्वकी (Thalamiflorae); २. घा वहिरावरण, अन्तरावरण तथा केसर एकत्र मिल नलाकार रहने एवं केसर उच्छात वा परिजात पड़नेसे त्रियुक्त बहिःस्त्वकी (Caliciflorae) और ३. घा दलीज्जात केसर गर्भकेसरके ऊपर वा चार पार्श्व चढ़ने तथा अन्तरावरणयुक्त दल समूहसे द्वियुक्तान्तःस्त्वकी (Corolliflorae) नाम है।

पुष्पक चार स्त्वक रहनेसे सम्पूर्ण समझा जाता है। प्रथम असम्पूर्ण पुष्पमें बहिरावरण एवं अन्तरावरण नहीं पड़ता। द्वितीय अन्तरावरणका अभाव रहता और तृतीय एक जाति केसरविशिष्ट अथवा समय केसरका भी कहीं ठिकाना नहीं मिलता। केवल पुंकेसरविशिष्टकी केसरी और केवल गर्भकेसर विशिष्ट पुष्पकी स्त्रीकेसरी कहते हैं। समस्त पुष्प पुंकेसरी किंवा स्त्रीकेसरी होनेसे हृद्यका नाम एकलिंगभाक् (Dioecious) है—जैसे ककड़ी और गन्धूत।

बहिरावरणके अंग अर्थात् बहिःस्त्वक प्रायः अष्ट-स्तक होते हैं। स्वतन्त्र स्वतन्त्र रहनेसे बहुस्त्वक

(Polysepalous) और सम्पूर्ण वा असम्पूर्ण रूप मिलकर बहिःस्त्वक नलाकार बनेसे बहिरावरणकी युक्तस्त्वक (Gamo-sepalous) कहते हैं। नलके मुखाग्रसे त्रियुक्त अंग चद्र (Limb) कहते हैं। पुष्प विनाशके बाद बहिरावरण गिर पड़ता (जैसे चक्रीमके फूलमें) अथवा जितने दिन किमस्य चलता, उतने दिन या कुछ अधिक भी बना रहता है। अन्तरावरण ही पुष्पकी रचा रहनेका अन्तःस्त्वक है। उसके पत्राकार इन्द्रियको दल कहते हैं। अन्तरावरणके दल परस्पर मिलनेसे युक्तदलक (Mono-petalous) और वियुक्त रहनेसे बहुदलक (Poly-petalous) नाम पड़ता है। अन्तरावरणका नियत रूप पाँच प्रकार है—१. नलाकार (Tabulary) २. सुरङ्गाकार (Hypocrateriform) ३. चक्राकार (Rotate) ४. घण्टाकार (Campanulate) और ५. धूसूराकार (Infundibuliform) फिर अन्तरावरणका अनियत रूप तीन प्रकार है—१. लोभाकार (Labiate), २. छद्माकार (Personate) और ३. जिह्वाकार (Lingulate)। यदि अन्तरावरण बहिरावरणकी अपेक्षा दीर्घकालस्थायी रहता, तो किसी स्वरूप स्वर गिर पड़ता है। धूसूर पुष्पके पुंकेसरका कार्य श्रेष्ठ होनेपर अन्तरावरण और बहिरावरण तिरछा तिरछा झुक पड़ छूट जाता है। अन्तरावरण और बहिरावरण एक वर्ष का रहनेसे समवेग (Perianth) कहाँता है। एकपरिणक उद्भिद प्रायः ऐसा ही होता है।

रचक वा प्रधान इन्द्रियविहीन पुष्पकी जग्न कहते हैं। फिर ससुदय केसरका पुंस्त्वक (Androecium) और समस्त गर्भकेसरका स्त्रीस्त्वक (Gynaecium) नाम है। केसरदल और गर्भमें रहनेपर दो अंगसे विशिष्ट हो जाते हैं। प्रथम अंग हस्तके दण्ड जैसा एक ताल है। उसे धूम हस्त वा तन्तु (Filament) कहते हैं। फिर अति अल्प विस्तृत घड़ीका अन्तभाग रेश्मीय वा परागकोष (Anther) कहाँता है। पतलके हस्त दण्डकी भाँति अनेक स्वरूप

तन्तु भी परागकोषमें फैल जाता है। पत्रके मध्य पिंछले-जैसे इस चंगको योजक (Connective) कहते हैं। पराग नामसे ख्यात रणूत्पादक परिवर्तित पुष्पके पत्रका नाम केशर है। रणू पराग-कोषके अभ्यन्तरसे निकलता है। जब परागके कोषमें गर्त पड़ता, तब मध्यगत प्रथक् बुद्बुद् प्रत्यन बदल कर रणू बनता है। पराग नामक रणू निकालना ही केशरका कार्य है। कारण—गर्भकेशरका मध्यगत बीज वा अण्ड भरनेके लिये पराग प्रयोजनीय है। अतएव पत्रके पर पराग कोषके फटनेसे रणू निकलता है। परागकोषके फटनेकी प्रसोटन (Dehiscence) कहते हैं। संख्यामें दो बड़े तथा दो छोटे चार रहनेसे द्विदन्धक (Didynamous) और चार बड़े एवं दो छोटे छः होनेसे केशर त्रिदन्धक (Tetradynamous) कहलाते हैं। सिवा इसके एकत्र एक राशिमैं मिल जानेसे केशरका नाम एकगुच्छ (Monodelphous) पड़ता—जैसे जवाकुसुम रहता है। इसीप्रकार अधिक राशिमैं केशर युक्त रहते द्विगुच्छ (Diadelphous), त्रिगुच्छ (Triadelphous), बहुगुच्छ (polyadelphous) इत्यादि नाम पाते हैं—जैसे परण्डके पुष्प।

पूर्व ही बता चुके—गर्भकेशरके प्रथक् प्रथक् अण्डको किष्कल कहते हैं। किष्कलके नीचे एक गर्त रहता है। उसका नाम अण्डाधार वा डिम्बकोष अथवा बीजकोष (Ovary) है। उसमें नवडिम्ब (Ovule) वा आदिबीज क्षिपा रहता है। अण्डाधार पर आयसदण्ड (Style) नामक एक खम्बा घुल्ल नल लगा होता है। आयसदण्डके शीघ भागपर स्थित चपटे गोलाकार अथवा दीर्घाकार वस्तुकी आश्रय (Stigma) कहते हैं। किष्कलक कभी वियुक्त हो जाते हैं—जैसे चमके फूलमें। फिर कभी गर्भकेशरके स्थानपर एक ही किष्कलक रहता है। वह निरुत वा विविक्त (Solitary) कहलाता है—जैसे हमलीका फूल।

किष्कलके समुदय देर्घ्यसे मध्य पर्यंका तक विपरीत दिक्मैं विभक्त (रंटा हुआ) एवं संख्यम धार-

द्वारा गठित जो कुछ कठिन कांटे रहते, उन्हें उद्भिदतत्त्ववेत्ता नाड़ी (Placenta) कहते हैं। वही नव कलिकाके समान छोटे बुद्बुदविशिष्ट सकल वस्तुओंको पुष्ट और प्रकाशित करते हैं। अण्डाधारके मध्य नाडीपर डिम्ब नामक बुद्बुदविशिष्ट अन्नत वस्तु उत्पन्न होता है। बुद्बुद वदनेपर सामान्यतः गोल पड़ जाते हैं। फिर क्रमशः एक हुन्त उन्हें एकड़ लेता है। हुन्तका नाम कौशिकहुन्त (Funiculus) है। गोल एवं हुन्तयुक्त होते समय बुद्बुद, अन्तरावरण तथा वहिरावरण द्वारा वेष्टित रहते हैं। यह आवरणद्वय अस्यांकी छोड़ सर्वांश टांक लेते हैं। अल्प स्थान ही कौशिकहुन्तसे डिम्बके विपरीत शेषभागमें नल स्वरूप लगता है। इस नल वा द्वारको कौशिकनली (Micropyle) कहते हैं। द्विजातपर डिम्बका एक मध्यस्थ बुद्बुद बहुत बढ़ जाता है। फिर उसका मध्यगत पदार्थ विभक्त हो अनेक सुद सुद बुद्बुद उत्पन्न करता है। अभ्यन्तरके इस बुद्बुदविशिष्ट कठिन वस्तुका नाम भ्रूणस्थली है। इसमें परागरणू पाने और डिम्बसे मिल जानेपर उद्भिद् भ्रूण (Embryo) उपजता है। परागरणू की शक्तिसे भ्रूणस्थलीमें भ्रूण निकलनेकी बीजोत्पादन (Fertilization) कहते हैं। भ्रूण निकल पानेपर डिम्ब फल (Fruit) और गर्भकेशर बीज (Seed) कहलाता है।

परागका रणू एक जानेपर पूर्ववर्णित किसी एक रीतिके अनुसार परागकोष फटनेसे बाहर निकलता है। किसी फूलमें पुंकेसर द्वारा उसी पुष्पस्थ स्त्रीकेसरका संयोग प्रायः नहीं लगता; यदि लग जाता है, तो अच्छा बीज नहीं उपजता। उद्भिदतत्त्वज्ञका यह स्थिर सिद्धान्त है—अधिक्रांय स्थानमें किसी फूलमें पुंकेसरद्वारा स्त्रीके गर्भकेशरको ससत्त्वा करना उद्भिद्गणका अभिप्रेत वा स्वभावसिद्ध कार्य नहीं। एक पुष्पके परागका रणू अन्य पुष्पके गर्भकेशरमें पहुँचनेसे गर्भाधानका कार्य हो जाता है। यहाँ प्रश्न उठता—एक पुष्पका रणू अपर पुष्पमें कैसे पहुँच सकता है? इसका उत्तर यही है—वास्तविक पतङ्ग एवं वायु समय दूतीका कार्य बनाते

हैं। वह एक पुष्पके पुंकेसरका परागरेण चपरके गर्भकेसरमें पहुँचाते और ऐससे गर्भकेसरको मिलाते हैं। यदि पतङ्ग प्रथम स्त्रीपुष्पपर बैठ कर पोछे पुष्पपर पहुँचता, तो कोई कार्य नहीं निकलता। प्रथम पुष्पपर बैठ पराग प्राच्छादित होनेसे पोछे स्त्री-पुष्पपर जानेसे पतङ्ग आनीत पराग प्राग्यमें डालता है। पराग प्राग्यमें पड़नेसे ही बीज उत्पन्न होता है। अनेक स्त्रीपुष्प नहीं फलते अर्थात् एकते एकते बाल्यावस्थामें ही भङ्ग पड़ते हैं। इसका कारण उन्हें पुंकेसरसे पराग न मिलना है। एक एक पतङ्ग एक एक उद्भिद्का भक्त होता है। वह अपने प्रिय पुष्पके पास पहुँच या ऊपर बैठ स्वीय पुरस्कारस्वरूप एक विन्दु मधु ले लेता है। इसी प्रकार प्रफुल्लित पुष्पसे पुष्पाक्षरपर घूमते घूमते पतङ्ग परागके ऐसको दूसरे स्थान पहुँचाता और बीज उपजाता है। पुनः पुनः मिलनेकेलिये पुष्प सकल सुरक्षित एवं सुगन्धित होकर अपने मधुके उपहारसे उसे बहलाने रहते हैं। प्राची-तथ्यविद् डाइडनके मतसे पतङ्गके लिये ही पुष्पका विविध वर्ण बनता है। वस्तुतः पुष्प न मिलने पर भी वह अन्य किसी उपायसे जी सकता है। किन्तु पतङ्गका साहाय्य न पानेसे उद्भिद्का बीजीत्पादन करना असम्भव है। कहीं कहीं सहर वा मिश्रजातीय वृक्ष देख पड़ते हैं। उससे जान पड़ता—पतङ्ग कष्टक सम्पत्कीय वा समघर्मी उद्भिद्ऐस न पाने और भिन्न जातीय परागरेण गर्भकेसरमें लग जानेसे सहर वृक्ष उपजाता है। वह बीजके द्वारा अपना वंश स्थायी रखनेकी चेष्टा नहीं करता, क्योंकि उसका बीज बन्धा होता है। अथवा यदि बीज बन्धा नहीं निकलता, तो तद्वारा उद्भूत वृक्ष क्रमशः प्रादि उद्भिद्द्वयके एकका आकार पकड़ता है।

फलके आचरण तीन हैं—अन्तरावर्तक (Endocarp) वा आन्तरावर्तक, मध्यावर्तक (Mesocarp) वा मध्य और बहिरावर्तक (Epidermis) स्तर। उद्भिदके विचारसे इन तीनोंमें प्रायः तथा अल्पको किञ्चिद् अल्पका चर्म (pericarp) और मध्य स्तरकी उद्भुद्-अल्पन कहते हैं।

सकल फलोंकी ये चोख करकेका उपाय नहीं, क्योंकि प्रथिवीपर भागान्तीय फल विद्यमान हैं। प्रमीतक लोग उसका तत्त्व पञ्चमीतरङ्ग ठहरा नहीं मने हैं। फिर भी माधारणतः फलकी ये चोख पाँच रख भी गये हैं—१ कठिन (Nut), २ नोरस (Capsule), ३ गिम्स (Pod), ४ निरस्थिक (Berry) और ५ मास्थिक (Drupe) फल।

नाडीसे चलन उद्भुद् अल्पन होनेपर गूदा (Hesperidium) पड़ता है।

अनेक स्थलमें खूब एक जानेपर फलकी चतुर्दिक्में एक प्रतिरिक्त वा छत्तीय स्तर लगता है। उसे उपस्तर (Arl) कहते हैं। वह बीजके नामसे आरम्भ हो कौशिकनली पर्यन्त फैलनेपर उपस्तर (Arlis) और कौशिकनलीसे हस्तकी दिक् बढ़नेपर उपस्तरनन (Arlode) कहलाता है।

एव देखना चाहिये—उद्भिद् भोजन, पान और श्वासप्रश्वास करते हैं या नहीं और यदि करते हैं, तो कैसे। मूल ही उद्भिद्का प्रधान आकर्मकेन्द्रिय है। वही सृष्टिकामें वृक्ष उद्भिद्गणके खाद्यता अधिकांश संप्रदा करता है। मूल रसको चोख काण्ड और पत्रमें पहुँचाता है। उद्भिद् श्वास किया करते हैं। ये दिनको अकस्मिज्जन और रात्रिको कारबोनिक छोड़ते हैं। फिर भी एक प्रमेद है—सूर्याकीर्णमें हरित उद्भिद् निज शक्ति द्वारा वायु मण्डलस्य कारबोनिकका उपादान चटा कारबन रखते हुये अकस्मिज्जन निकालते हैं। दिनको जो कारबोनिक निकलता है, वह समझ नहीं पड़ता। इनमें देव याते—उद्भिद् वायुमण्डनको स्वास्थ्य कर चबसापर लाते और इनमें विवेक उपहार पहुँचाते हैं। क्योंकि वायुमें अधिक परिमाण कारबोनिक रहनेसे हमारे जीवनमें संशय था। उद्भिद् श्वास दास वायु लेते और किञ्चित् अकस्मिज्जन रोक कारबोनिक निकाल देते हैं। रात्रिमें यह क्रिया होती है। इसीसे मयना-गारमें अनेक उद्भिद् रहनेपर स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। मंडहत-शास्त्रमें भी उल्लिखित है—‘‘लोचनं च शून्यं हरितः पत्रिर्बन्धुः’’ अर्थात् रात्रिको वृक्षमूलके

दूर ही रहना चाहिये। उद्भिदके मूल द्वारा पीतकी आम और निम्बगकी जीर्ण रस कहते हैं। पीत रसके द्वारा उद्भिद पुष्ट होता है। भक्षिजन, नाइ-ट्रोजन, कार्बन और जल व्यतीत उद्भिदगणको जिध जिस वस्तुका प्रयोजन पड़ता, उसका सृत्तिकामें रहना आवश्यक है। जब किसी उद्भिदका विशेष प्रयोजनीय वस्तु क्षेत्रमें नहीं रहता, तब उसकी खेतीका करना अनुचित लगता है, क्योंकि कोई फल नहीं मिलता। सकल उद्भिद सृत्तिकासे एक ही पदार्थ नहीं लेते। प्रत्येक उद्भिदकी स्व-स्व उपयोगी सृत्तिका होती है।

कोई कोई जातीय उद्भिद केवल रससे नहीं रहता होते, कौटादि जीवकी भी पकड़ और रगड़ खा डालते हैं। विहार अञ्चलमें मेदान और पहाड़की ढाल जगह पर एक प्रकारका सुद्र पेड़ होता है। उसके पत्र सुद्र, गोल, ईपद्रुल, सुन्दर और लम्बित हुनत द्वारा धृत रहते हैं। जब इन पत्रोंपर कौटादि बैठते, तब एकचपटे वा अल्पकालके मध्यमें ही सूक्ष्म वस्तु द्वारा स्पृष्ट होने बाद उनके केश केन्द्राभिमुख भीतरी दिक्को भुङ्क पड़ते हैं। अमेरिका देशके भी पेड़ बड़े चमोछे हैं। उनमें कौड़े पकड़ कर खानेका प्रति सुन्दर कौशल होता है। प्रति पत्रका उपरिभाग एक ग्रन्थि द्वारा घृयक्कृत और किनारा तीक्ष्ण कण्ठक द्वारा घेष्टित रहता है। तत्पर कितने ही छोटे छोटे कांटे नानादिक् सुड़ जाते हैं। कौड़े पकड़नेके लिये मध्यकी रेखा रक्तवर्ण होती है। यह मनोहर पत्र कौड़ेको घठते ही बन्द होकर मार डालता है। हमारे देशकी पुष्करिणीमें जो भांभ पड़ती, वह भी एक जातीय मांसायी वा पतङ्गघातक उद्भिद ठहरती है। उपाध नामक एक प्रकारका विषहृष होता है। सुन पड़ता—वह प्रणपक्षी और मानवको भी मार सकता है।

उपाध देखो।

किसी किसी उद्भिदमें अनुभवकी शक्ति भी अधिक रहती,—जैसे सज्जावती खता, सोला, कामरख प्रभृति है।

उद्भिदमें जो नामाप्रकार वर्ण देख पड़ता,

उसका उत्पादक सूर्य है। सूर्यांश रक्त, पीत और नील तीन भ्रंशसे विशिष्ट है। ये तीनों एकत्र हो इन्द्रधनुषकी तरह नानाप्रकार वर्ण बनाते हैं। उद्भिदका भी रक्त एवं पीत पिच्छिल, पीत तथा नील हरित और नील एवं रक्तके सहयोगसे बैंगनी वर्ण होता है। दो एक जातीय उद्भिद पान्थोकाभावसे वर्ण विशिष्ट रहते भी संश्र्यामें भति भव्य है। प्रकृत रूपसे सूर्य ही उद्भिद पर रक्त चढ़ाता है।

जगत्में नानाप्रकार उद्भिद विद्यमान है। प्रत्येकसे किसी न किसी विषयमें हमें उपकार पड़ता है। किन्तु इस खेलपर उसका परिचय देना अनावश्यक है।

उक्त मत वर्तमान युरोपीय उद्भिदवेत्तागणका है। अब देखना चाहिये—हमारे इस भारतवर्षमें उद्भिद विद्याकी चर्चा रहीं या नहीं? पूर्वतन ऋषि उद्भिद विद्याकी किस प्रकार समझते थे?

प्राचीन कालसे मुनि उद्भिदकी स्थावर जोष जैसा मानते पाये हैं।

छान्दोग्योपनिषद्में कहा है—“शिवो छावेश भूतानां जीवो व वीजसि सवन्पाच्छजं नीरजसृजिमिति।” (१।१।१)

सकल भूतके मध्य तीन प्रकारका बीज है—अण्डज, जीवज और उद्भिज्ज।\*

महाभारतमें बताया है—

“भिला गु श्रिवी” यदि ज्ञानमे कालपर्यन्त।

उद्भिज्जानि च तावन्पुर्वं तावि रिजसृजमाः ॥”

कालके पर्यायसे जो पृथिवी भेदकर निकलता, उसका नाम उद्भिज्ज भूत पड़ता है। अतियास्त्रने उद्भिद जातिको भोषधि, वनस्पति, शुक्ल, गुल्म, वृण, प्रतान और वल्ली कई श्रेणीमें विभक्त किया है,—

“उद्भिजाः स्थावराः कपे वीरकाशमपेहिषः।

बीजजः कल्पवाक्याना बहुपुष्पकानेपवाः ॥

अणुपाः कल्पकी ये ते वनस्पतयः का लाः।

पुष्पिषः फलिनर्पे व श्यामं मलयः का ताः ॥

गुल्मगुल्म विविधं तपे व द्युपारयः।

बीजकाष्ठवृक्षाश्च व प्रताना वृण पत्र व ॥

\* श्वेतये उपनिषद्के मते बीज चार प्रकारका होता है—“बीजानि तावि श्वेतानि वाय्वानि च प्रावजानि च क्केदजानि श्वेद्विजानि।” (१।१)

तन्मया वरुदेव विद्या वर्तते इत्युक्तम् ।

“तन्मया वरुदेव विद्या वर्तते इत्युक्तम् ।” (मनु १।१७६-१८)

समुद्र उद्भिद ही स्वापर (जोष) है। उनमें कितने ही बीज और कितने ही रोपित काण्डों से उत्पन्न होते हैं। जो वस्तु पुष्पयुक्त रहते और फल पकने में मरते, उनका नाम पोषधि रहते हैं (जैसे धान यम प्रभृति)। जो फल न देते ही फल खाते, वे वनस्पति कहलाते हैं। फलने या फलनेवाले दोनोंका नाम वृक्ष है। शुष्क (मल्लिकादि) और गुल्म (रंगादि) नानाप्रकारके होते हैं। यद्यजाति भी विविध है। प्रताम (लौकी, कुल्हड़ा वगैरह) और वल्ली (गुच्छादि) नानाविध हैं। यह वस्तु रूप कर्मके फलपर तमोगुणसे आच्छद्य हैं। इनके अन्तर चैतन्य रहता है। इन्हें सुख और दुःख भी समझ पड़ता है।

गार्हपत्यने इसप्रकार उद्भिदविद्याका परिचय दिया है—

“वृक्षमिन्द्रमन्तरावृक्षाः पादपजातयः ।

बीजात् काष्ठातया कन्दान् तन्मया विविधं विदुः ॥

वृक्षान् बीजवर्षैश्च इत्यङ्गं जातिः प्रविशति ।

कण्ठादिभिर्वातैश्चैव पार्श्वकान्तुनीयते ॥

ते वनस्पतयः प्रोक्ता विना पुष्पैः फलानि च ।

द्रुमापानि निरदिताः पुष्पैः च फलानि च ॥

प्रधरानि वृक्षानि वास्तु जातः परिचीरिताः ।

वस्तुत्वादिभिर्विदुः ते ते वृक्षाः प्रोच्यन्ते ॥

जम्बू कन्दकद्रुमावृक्षाः किराणि च ।

किरारिचरीचिचकुम्भकारी मिश्रवः ॥

पद्मपद्मपद्माद्याः करमर्द्ध बीजजातः ।

ताम्बू भी विन्धुवाप तन्मयाद्याः काष्ठाद्याः ॥

पाटला दाडिमी इत्यक्षरबीजजातयः ।

मल्लिकार्जुनौ वृक्षौ बीजकाष्ठादिजातयः ॥

इह जातयोः नामाकायाः कन्दसमुत्पन्नाः ।

पद्मपद्मपद्मदिनौ बीजवृक्षौ वृक्षौ हि ॥”

(इन्द्रपर्वत परवृक्ष पादपरिवर्तनप्रकरण)

पादपजाति० चार प्रकार हैं—१ वनस्पति, २ द्रुम,

३ सता और ४ गुल्म । कुष्ठ बीज, कुष्ठ काष्ठ और कुष्ठ कन्दों से जन्म लेते हैं। यद्य और बीजवि नामक यथान्तर सकल वृक्षों जाति लेते देखिये मने है। क्योंकि पादप जातिके साथ उनका जन्म मरणादि नहीं मिलता। जिनमें पुष्प नहीं विनता पदप फल लगता, उनका नाम वनस्पति है। पुष्प और फल उभय देनेवाले द्रुम हैं। प्रसारित और प्रतामि सता कहलाते हैं। जो स्तम्बयुक्त रहते पर्याप्त वस्त्रोद्गी यापना नहीं रखते, उन्हें गुल्म कहते हैं। जम्बू, कम्बू, पुष्पाग, नागकेसर, चिचिनी, कपित्थ, बदरी, विल्व, कुलथी, मिश्रद्रु, पद्म, पद्म, मधुक और करमर्द्ध प्रभृति बीजज हैं। पान, विन्धुवार और तगर प्रभृति काण्डज होते हैं। पाटला, दाडिमी, इक्ष, करवीर, वट, मल्लिका, उदुम्बर तथा कुम्भ प्रभृति उभयज पर्याप्त बीज चार काष्ठ दोनोंसे उत्पन्न हैं। कुष्ठ, म, पाट, रसीम और पाशू प्रभृति कन्दज हैं। एकापत्र और उत्पन्नादि बीज एवं कन्द उभयसे जन्म लेते हैं।

क्षयिष्यान्तके वस्तुसार उद्भिद इन कई श्रेणियों में बंटे हैं—१ पदपबीज पर्याप्त पदपभाग कलमकर लगाये जानेवाले (पदप नाम काण्डज भी रख सकते हैं), २ मूलज पर्याप्त मूल गाड़नेसे उत्पन्ननेवाले (कन्दज), ३ पूर्वयोग पर्याप्त पद्म गाड़नेसे जन्म लेनेवाले (यह काण्डज जातिके पद्मगत हैं), ४ स्तम्बज पर्याप्त पद्म वृक्षके तनेसे निकलनेवाले, ५ बीजवृक्ष पर्याप्त बीज छाननेसे पद्मपनेवाले और ६ समूहज पर्याप्त चिति, जल, वायु एवं तैलके परस्पर समवर्द्धित जाने और सृष्टिका एकानेसे प्रकाशित होनेवाले।

भारतवर्षीय ऋषियगने उद्भिदकी जाति, श्रेणी, संज्ञा और लक्षणा उक्त संक्षिप्त शब्द द्वारा ही कही है। उन्हें बीज, पद्म, मूल, दाडिमी उत्पन्नाका विषय

माकादमी बीजवृक्षः कन्दः कण्डः पादः ।

“मूलमन्तरावृक्षाः कन्दः कण्डः पादः ॥” (मनु १।१७६-१८)

वस्तु—“वृक्षमिन्द्रमन्तरावृक्षाः पादपजातयः । बीजवि विविधं विदुः ।” (मनु १।१७६-१८)

“इह जातयोः नामाकायाः कन्दसमुत्पन्नाः ।

पद्मपद्मपद्मदिनौ बीजवृक्षौ वृक्षौ हि ॥”

वर्तमान वैज्ञानिकोंकी तरह अवगत था। आयु-  
वेदोक्त द्रव्यगुण देखनेसे सविशेष ज्ञान सकते—किसी  
किसी विषयमें पायात्वं तत्त्वविदोंकी अपेक्षा वे सम-  
धिक समझते थे।

“तत्र चित्तं जलस्य मिरलरूपविधाभिम्।

वायुना व्यङ्ग्यमानं भु कौजलं प्रतिपाद्यते ॥

तथा व्यक्तानि लोकाणि स चित्तात्मनोऽपि पुनः।

उच्छ्रान्तं चतुर्लोकं शून्यभावं प्रयाति च ॥

तस्य सादृश्यं रीतिरतिरूपात् पश्येत्तथाः।

एषां तस्य ततः काण्डं काण्डाय प्रथमं पुनः ॥” (राघवम्)

जलचित्तं भूमि अभ्यन्तरस्थ उष्मा द्वारा पच्यमान  
होती है। फिर परिष्कारजनित विकारविशेष जब  
वायुद्वारा पकड़ा या रगड़ा, तब वह उद्भिदे  
जन्मका बीज अर्थात् उपादन-कारण समझा जाता है।  
इसी अभ्यन्त बीजसे प्ररोध निकलता है। कभी कभी  
प्ररोधसे व्यक्त बीज फट पड़ता है। व्यक्त बीज सकल  
जलसे भाई होनेपर प्रथम फूलने और शूद्र तथा  
कोमल होने लगता है। क्रमसे वही भविष्यद् अक्षुरका  
मूलस्वरूप बन जाता है। मूलसे अक्षुर, अक्षुरसे  
पत्रका अवयव, पत्रके अवयवसे आत्मा वा देहभाग  
(काण्ड) और देहभागसे प्रमथ (पुष्पफलादि) उत्-  
पन्न होता है।

चिदा इसकी प्राचीन शास्त्रमें त्वक्सार, अन्तःसार,  
निःसार प्रभृति शब्दोंका उल्लेख रहनेसे सहज ही  
मानना पड़ता—प्रतिगुणकी उद्भिदका तत्त्व अवश्य  
अवगत था। कृपिपराशर, द्रव्यगुण प्रभृति प्राचीन  
ग्रन्थमें उद्भिद्विद्याका सूक्ष्मतत्त्व विद्यमान है।

निम्नलिखित वचनसे भी उद्भिद्विद्याका प्राचीन  
तत्त्व प्रदर्शित होता है—

“मूलत्वक्सारनिर्गोमसारसरपक्वकाः।

चौराः चौराः पुनः पुनः भक्ष्यं भक्ष्यं कष्टकाः ॥

पवापि शुभाः कष्टाय प्रतीतिरिति गवाः ॥” (बृहत्)

उद्भिद (सं० त्रि०) उत्-भिद-क्त्। १ उत्पन्न, पैदा।

२ दलित, तोड़ा हुआ। ३ उल्यित, निकला हुआ।

उद्भू (सं० त्रि०) स्थायी, पायदार।

उद्भूत (सं० त्रि०) १ उत्पन्न, पैदा। २ उत्पन्न,

जन्मा। ३ दृश्य, देख पड़नेवाला।

उद्भूतरूप (सं० स्त्री०) दृश्य आकार, देख पड़ने-  
वाली स्वरूप।

“उद्भूतस्य नयनस्य मोक्षं द्रव्याणि तत्रापि दृश्यन्ते ॥

वदन्तस्तेनोपपत्तयस्ते च उद्भूतत्वं परिभाषयन्तम् ॥

क्रियाजातीयोपपत्तौ समवायस्य सादृश्यम्।

यद्वापि चतुर्लोकभावादीन् उद्भूतपयोः ॥” (भाषापरिच्छेद)

उद्भति (सं० स्त्री०) उत्-भू-क्तिन्। १ उत्पत्ति,  
पैदायम। २ उत्तम विभूति, अच्छी हैसियत।  
३ उत्पत्ति, तरकी, उपाई।

उद्भेद (सं० पु०) उत्-भिद-घञ्। १ भेदके साथ  
प्रकाश, फोड़कर निकास।

“उपोद्भेदं उद्भेदितस्यैवं चानां विधिनात् ॥” (सिंह)

२ उदय, उठान। ३ स्फूर्ति, शिगफूतगी। ॥ भावि-  
ष्कार, ईजाद। ५ रोमाञ्च, रीगटोंका खड़ा होना।  
६ मेलन, मिलाप।

“उपोद्भेदं उद्भेदितस्यैवं चानां विधिनात् ॥” (सिंह)

७ काव्यासङ्कार विमेष। इसमें चातुर्थके साथ गुप्त क्रिये  
हुये विषयका किसी कारण वय प्रकाशित होना  
देखाते हैं। ८ अक्षुर, किता।

उद्भेदन (सं० स्त्री०) उत्-भिद भावे शूद्र्। १ प्रका-  
शन, खोसाई। २ निर्भर, भरना।

उद्भ्यस (सं० त्रि०) जो ऊँचा कर रहा हो।

“उद्भेदोऽयं भावतः उद्भेदोऽयं उद्भेदोऽयम्। उद्भेदोऽयं  
योगतः ॥” (अथर्व ११/१०)

उद्भ्रम (सं० पु०) उत्-भ्रम करणे घञ्, मोटासो-  
पदेमेति न ह्रिः। १ उद्वेग, उभार। २ बुझलिय,  
बेहोशी। ३ व्याकुलता, बेचैनी। ४ उध्वभ्रमण,  
धक्कर। ५ शिथिलगण विमेष।

उद्भ्रमण (सं० स्त्री०) इतद्धतः गमन, चलफिर।

उद्भ्रान्त (सं० त्रि०) उत्-भ्रम-त्त। १ व्याकुल,  
बेचैन। २ भ्रान्तियुक्त, मूलाभटका। ३ इतमुचि,  
मोचका। ४ धातुर्णित, धक्कर लगाता हुआ। ५ अद्धत,  
लगा हुआ। ६ उच्छृङ्खल, बिकायदा। (पु०)

७ खड़गादिका सञ्चालन, पटेबाजो, तलवारकी फट-  
कार। इसमें हस्त ऊपरको उठा खड़ग घुमाते और  
गड़के आघातकी वजाते हैं।

उद्भ्रान्तक (सं० स्त्री०) आयुमें उत्थान, उथामें उठान।

उद्यमन् (सं० स्त्री०) महोर्मि, बहाव ।  
 उद्य (सं० द्वि०) यद-यवप् । १ कयनीय, कहे  
 जानि काविल । (पु०) २ नद, दर्या ।  
 उद्यत् (सं० त्रि०) उत्-रन्-यट् । १-गमनशील,  
 चलनेवाला । २ उदयगोच, निक्षलने या उठनेवाला ।  
 (पु०) ३ नद्य । ४ किसी पर्वतका नाम ।  
 उद्यत (सं० त्रि०) उत्-यम-त् । १ उद्युत्, उठाय  
 हुआ । २ उत्तोलित, उठाला हुआ । ३ उद्यमित,  
 काम करनेवाला । ४ तत्पर, मुत्तेद । ५ प्रवृत्त,  
 लगा हुआ । (स्त्री०) भावे क्त । ६ उद्यम, काम ।  
 ७ अध्याय, वाच । ८ तानमेद ।  
 उद्यतकामुक (सं० द्वि०) उत्तोलित धनुःयुक्त,  
 कामान् खींचे हुआ ।  
 उद्यतगद (सं० त्रि०) उद्यन् गदयुक्त, गुर्जु ताने हुआ ।  
 उद्यतशूल (सं० त्रि०) उद्यपित शूलयुक्त, भाला  
 उठाये हुआ ।  
 उद्यतशुक् (सं० त्रि०) उदकदान करनेको दूर्ध्व  
 उठानेवाला ।  
 उद्यतायुध (सं० त्रि०) युद्ध उठाये हुआ, लो  
 हथियार ताने लो ।  
 उद्यति (सं० स्त्री०) उत्-यम भावे क्तिन् । १ उद्यम,  
 कोशिश । २ उद्यापन, उठाव ।  
 उद्यन्त (सं० त्रि०) उद्यायक, उठाने या तरकी  
 प ड़् चानेवाला ।  
 उद्यम (सं० पु०) उत्-यम-घञ्, न हृदिः । १ प्रयास,  
 कोशिश । २ उद्योग, काम । ३ उत्तोलन, उठाव ।  
 ४ उद्यम, होसला ।  
 उद्यमन (सं० स्त्री०) उत्-यम-निष्-स्यट् । १ उत्थे-  
 पथ, उठान । २ उत्तोलन, उठाव ।  
 उद्यमभङ्ग (सं० पु०) १ प्रयासका नाश, कोशि-  
 मका मिगाड़ । २ विराम, ठहराव ।  
 उद्यमभृत् (सं० द्वि०) उद्यम करनेवाला, लो  
 कोशिश लगा रहा हो ।  
 उद्यमित (सं० त्रि०) उत्-यम-विच्-त् । १ उत्तो-  
 लित, उठायो हुआ । २ यज्ञसे प्रेरित, तदवीरसे  
 जगोया हुआ ।

उद्यमिन् (सं० त्रि०) तत्पर, मुत्तेद, लो कोशिश  
 कर रहा हो ।  
 उद्यान (सं० पु० स्त्री०) उत्-या प्राधारे ऋट् ।  
 १-बनो-प्रतिष । २-बाग । ३-प्राज्ञोद्, बाग । ४-नि-  
 सरण, निवास । ५-प्रयोजन, मत्तल । ६-उद्यम,  
 रोडगार, कामकाज ।  
 उद्यानक (सं० स्त्री०) चाराम, बाग ।  
 उद्यानपास (सं० पु०) १ उद्यानरक्षक, मानो,  
 बागका सुशिक्षित । २ उद्यानलामी, बागका मानिक ।  
 उद्यानपासक, उद्यानवाच दीया ।  
 उद्यानरक्षक, उद्यानवाच दीया ।  
 उद्यापन (सं० पु० स्त्री०) उत्-या-पिच्-स्यट् । १ चारण,  
 युद्ध । २ व्रतसमापन, व्रत पूरा करनेका काम ।  
 उद्यापित (सं० त्रि०) पूर्णकृत, पूरा किया हुआ ।  
 उद्याम (सं० पु०) उद्यम्यतेऽनेन, उत्-यम करणे  
 घञ् वा हृदिः । १ उत्तोलन, लोहा खड़ा करनेका  
 काम । २ रब्ज, रखो ।  
 उद्याव (सं० पु०) उत्-य उद्यपदे घञ् । १-उद्यव-  
 योनिः । २-बाग । ३-उद्य-मिथ्य, मित्रावट, लोडगाड़ ।  
 उद्याव (सं० पु०) उत्-यस-घञ् । १ उद्यमकर्ता,  
 कोशिश करनेवाला । २-प्रायास घञ् । ३-देवता-  
 भेद । (बागवतवेद-विता १४११)  
 उद्यत् (सं० त्रि०) तत्पर, मुत्तेद, कौरसे काम  
 करनेवाला ।  
 उद्याग (सं० पु०-स्त्री०) उत्-युज-घञ् । १-पेटा,  
 कोशिश । "आदिपर्व-उद्योग-विद्योग-उद्योगः ।  
 उद्योग-विद्योग-उद्योग-उद्योग-विद्योग-उद्योगः" (वायव्या १४११)  
 २-प्रायोजन, मेथारो । ३-महाभारतका एक पर्व ।  
 उद्योगसमर्थ (सं० त्रि०) पेटा करने योग्य, लो  
 कोशिश लगा सकता हो ।  
 उद्योगिन् (सं० त्रि०) उत्-युज-घिच्-त् । १ उद्योग-  
 युक्त, कोशिश करनेवाला । २-उद्योगी, होसले-  
 मन्द ।  
 उद्योगक (सं० त्रि०) उत्-युज-स्यट् । प्रयत्न,  
 काममें लगा देनेवाला ।  
 उद्योत, चरदैन दीया ।

उद्ग (सं० पु०) उद्ग को देने रक् । १ जलचर, पानामें रहनेवाला जानवर । २ उद्गिहाल, जलविहाव ।  
 उद्गह, उद्ग देखो ।  
 उद्गह (सं० पु०) १ नगर प्रतिमार्ग, गहर जानेको राह । २ हरिचन्द्रपुर । (विद्याभ्युपे १।१।२४)  
 उद्गथ (सं० पु०) उद्गतो रथो यस्मात् । १ रथकोल, गाड़ीकी कील । २ ताम्रचूड़ पत्ती, सुर्ग । ३ वृक्ष-विशेष, कुकुरमुत्ता ।  
 उद्गपारक (सं० पु०) नागविशेष । (भारत-वादि ५० च०)  
 उद्गाव (सं० पु०) उत्-व-घञ् । १ उद्गध्वनि, गुलन्द गोर । २ पलायन, भागाभागी ।  
 उद्गाह (सं० पु०) रत्नचित्रक, लाल चीत ।  
 उद्गिह (सं० त्रि०) उत्-रिच-ह । १ स्फुट, फूटा हुआ । २ स्पष्ट, साफ । ३ चिह्नित, निशानदार ।  
 उद्गिहवितता (सं० स्त्री०) १ पानात्ययोरोग, शराब-खोरीकी बीमारी । २ मत्तता, मदहोशी ।  
 उद्गिन् (सं० त्रि०) जलयुक्त, पानीसे भरा ।  
 उद्गज (सं० त्रि०) भङ्ग, तोड़ ताड़ । २ उग्र सन, उखाड़ ।  
 उद्ग्रेक (सं० पु०) उत्-रिच-घञ् । १ वृद्धि, बढ़ती । २ अतिशय, ज़ियादती । ३ उपक्रम, शुरु । ४ काव्यालङ्कारविशेष । इसमें कई वस्तु एकके सम्मुख तुच्छ दिखाये जाते हैं । ५ रजोगुण । ६ महानिम्य ।  
 उद्ग्रेकभङ्ग (सं० पु०) आदिमें हो किसी द्रव्यका विपक्षीकरण, गुरुसे हो किसी चीजका रङ्ग मार देना ।  
 उद्ग्रेका (सं० स्त्री०) महानिम्य ।  
 उद्ग्रेकिन् (सं० त्रि०) अधिक, ज्यादा, भरा हुआ ।  
 उद्गोधन (सं० स्त्री०) उद्ग, उत्पत्ति, विकास, पैदायश ।  
 उद्गथीय (सं० स्त्री०) सामभेद । (तात्पर्यहस्ताश्रय)  
 उद्गत् (सं० स्त्री०) उद्गता, पर्वत, लंछाई, पहाड़ ।  
 उद्गत्सर (सं० पु०) १ वृत्सर, साल । २ उदा-वृत्सर ।  
 उद्गपन (सं० स्त्री०) उत्-वप्-ल्युट् । १ दान, वण-मिश्र । २ उत्तोलन, उठाव । ३ उत्पत्तन, उखाड़ ।  
 उद्गमत् (सं० त्रि०) वमन करते हुआ, जो उगल रहा हो ।

उद्गमन (सं० स्त्री०) उत्-वम्-ल्युट् । उद्गिरण, वान्ति, चलती, कै ।  
 उद्गयस् (वे० त्रि०) उद्गतं वयो यस्मात्, प्रादि बहुमी० ।  
 उद्गोत्पादक, बलवर्धक, भनाज या ताकत पैदा करनेवाला । 'उद्गतं वयोऽयं यस्मात् वयोः स उद्गयाः वायुः वायुनेन हि धामानि निपायन्ते ।' (वागवतेयभाष्ये मन्त्रोपर)  
 उद्गतं (सं० पु०) उत्-वृत्त-घञ् । १ पतिरिक्त द्रव्य, वचो हुई चीज । २ आधिक्य, बढ़ती । (त्रि०)  
 ३ अधिक, ज्यादा । ४ उद्गृह्य, वचा हुआ ।  
 उद्गतक (सं० त्रि०) १ उत्थान-कारक, बढ़ानेवाला । २ शरीर शुद्ध करनेवाला, जो जिह्मको मसता या धोता हो । (पु०) ३ गणिताङ्क विशेष, हिसाबको एक बढ़द । जो बहुत क्रियाके कार्य रखा, वही उद्गतक कहा जाता है ।  
 उद्गतन (सं० स्त्री०) उत्-वृत्त-णिच् करण ल्युट् । १ उत्पत्तन, उद्गाव । २ वर्धण, मलाई । ३ विलेपन, चुपड़ाई । उद्गतन वात, कफ, मेद एवं अनिलको हटाकर पड़को ठहराता और त्वक्को प्रसाद पहुँचाता है । हरिद्रादिसे उद्गतन करने पर कण्डू, वैषण्य और रीछ दूर होता है । इसी प्रकार तिल द्वारा उद्गतन कण्डू, रीछ और त्वक्की दोषका नाशन है । (रागनिष्य) ५ शरीर निर्मलीकरण गन्ध द्रव्यादि, जिसे साफ करनेवालो खुशबूदार चीज, उद्गतन । ६ द्रव्य द्वारा खेहादि अपहारक कार्य, चीजसे तिल वगैरह छोड़ानेका काम ।  
 "वशावशावच्छादितैर्विषयैर्गतं हितम् ।  
 ज्ञातव्यं वदन्नाथो वयसो रजनीरर्षेः ॥" (सङ्ग)  
 ७ उद्गृह्यन, वातका बनाव । ८ सेवन, रक्षोमास ।  
 ९ उद्गृहीतपत्ति, किहोंका फूटना । १० धातुका आकर्षण, तारकशी । ११ पेदण, फुटाई-पिसाई । १२ असद्वृत्त, बुरा चालचलन ।  
 उद्गतनीय (सं० त्रि०) उद्गतन-ञ् । मार्जनीय, लगाने लायक ।  
 उद्गतित (सं० त्रि०) १ उद्गत, लंघा किया हुआ । २ उत्पन्न, आकर्षित, जो निकला या खिंचा हो । ३ सुगन्धी-कृत, सुवस्त्र किया हुआ, जो महकाया गया हो ।



उद्घर्षन (सं० स्त्री०) उत्-घर्-ञ्णट् । १ चर्म-  
छर्म, भीतरी हंभी । (विद्याभरणे ५४०) २ हस्त-  
साधन, बटोकी का म । (त्रि०) ३ उदतासाधक, वट्टा  
देनेवाला ।

उद्घर्षण (सं० स्त्री०) उत्-घर्-ञ्णट् । १ चर्मसन,  
छटाड़ । २ उत्पाटन, नोचखुभोट । ३ छहरण, छठाव,  
बचाव ।

उद्घर्षित (सं० पुं०) उत्-घर्-ञ्ण । छहत, छठाया हुआ ।

उद्घर्ष (सं० पुं०) उद्घर्षी वहति नयति, उत्-घर्-  
ञ्च । १ पुन, घेता । २ समविध वायुके चत्तर्गत  
वायुविशेष । यह प्रवहवायु पर रहता है—

“पावः परधर्षे विरहव समीरवः ।

परावः सधेव उद्घर्ष उदाहवः ॥

तदा परिषवः शोभातुनामवधमिति ।

धर्मे ते धर्मिताः नम माहता वधमेवमाः ॥” (उद्घर्ष २६५०)

पावह, प्रवह, विवह, परावह, संवह, उद्घर्ष और  
परिषव सात उत्पातचक्रक क्षुभितवायु हैं । १ उदाम-  
वायु, गिला पट्टुचानेवाली हवा । ४ विहार, खेस-  
मूद । ५ वर, दूधवा । ६ गायक, गानेवाला । (त्रि०)  
७ पंगकारक, हिक्का करनेवाला । ८ प्रधान, प्यास ।  
९ मदन करनेवाला, जो से जाता हो ।

उद्घर्त्त (सं० त्रि०) १ पाययदाता, जो सहारा  
लगा रहा हो । २ सम्मथ, रखनेवाला ।

उद्घर्षन (सं० स्त्री०) उत्-घर्-ञ्णट् । १ स्तब्धके  
सहारे बहन, कन्धेपर बोझका ढोना । २ विवाह,  
मादी । ३ चानयन, सवाई । ४ पाकधर्ष, खिंचाव ।  
५ पारोहण, चढ़ाई । ६ पधिका, कूँछेदारी ।

उद्घर्षा (सं० स्त्री०) उत्-घर्-ञ्च-टाप् । कन्या,  
बेटी ।

उद्घर्षन (सं० स्त्री०) नाद, धोव, पुकार ।

उदाहन (सं० स्त्री०) उत्-वट्-णिच्-ञ्णट् । १ संघे  
स्तरण धर्मदेन, हुनम् पावाकर्म करियाद । “उदेव  
उदाहति दीविमोऽपि आदयो दीविमोऽपि आदय उति निर्विद्वमेवमिह-  
वम्” इत्येव निर्विद्वमेव कदापि की वरं आदित्यं हुपाविकीयुत्  
होम-उदेव के ताव निष्पन्नः ।” (उदाहनाश्रय १०११८) २ उद्य-  
वायकरण, औरसे भाजिका बजाना ।

उदान् (सं० त्रि०) १ उत्कर्षयुक्त, गान्धार । २ उद्यम,  
ऊँचा । “उदाहना उद्यमोत्तमा” (शब्द ११६१११)

“उदहर्षतेजः” (माधव)

उदान (सं० पुं०) उत्-यन संमक्षी घञ् । १ उद्यम,  
रोडगार । २ सुखी, धूम्र । ३ उद्यमन, उगास, डाँट ।  
(त्रि०) ४ उद्यमित, उगना हुआ ।

उदान्त (सं० त्रि०) उत्-यन-ञ् । १ उद्यमित, उगना  
हुआ । (पुं०) उद्यतं वान्तं मदी यष्मात् । २ निम्न-  
गङ्गा, जो हाथी मतवाला न हो ।

उदाप (सं० पुं०) उत्-यप भाये घञ् । १ उद्युक्तन,  
छपाड़ । २ छहरण, निकास । ३ सुखन, सुड़ाई ।

उदाय (सं० पुं०) उत्-वा-ञ्चञ् । १ उदासन, निकास ।  
२ उपगम, दबाव ।

“उदायति उदायं शोभयुः समानति ।” (शाब्दीयकोशे उदायः)

उदाय्य (सं० त्रि०) चञ्चु बहानेवाला, जो रो रहा हो ।

उदाय (सं० पुं०) उत्-यच-घञ् । १ सस्त्रानको  
पतिक्रम कर पक्षा होनेका काम, चपनी लगवकी  
आध कर गुद्व होनेकी बात । (त्रि०) २ वक्ता उतारे  
हुआ, जो कपड़े खोल चुका हो ।

उदासन (सं० स्त्री०) उत्-यस-णिच्-ञ्णट् । १ संस्कार-  
भेद । इसमें यज्ञधे पूर्व पासग विहोया, यज्ञपात  
सजाया और छूतादि भराया जाता है । २ सारण,  
कृतज्ञ । ३ विसर्जन, छोड़ना । ४ निष्कासन, निकालना ।

उदाय्य (सं० चण्य०) १ विसर्जन करके, छोड़कर ।  
(त्रि०) उत्-यस-णिच्-ञ्णट् । २ छहरणोप, छठाने  
का विन । ३ उत्तोलनयोग्य, चढ़ाने लायक । ४ यज्ञीय  
पशुके वधने सम्बन्ध रखनेवाला ।

उदाह (सं० पुं०) उत्-यच-घञ् । विवाह, मादी ।  
ताव ६५ ।

उदाहकर्मन् (सं० त्रि०) विवाहसंस्कार, मादीका काम ।

उदाहन (सं० स्त्री०) उत्-यच-णिच्-ञ्णट् । १ पिशाच,  
मादो । २ द्विवारकर्मितसेव, दो मरतवा जोता हुआ  
खेत । ३ उद्यमन, छठाव । ४ उदाहनाशन, छोड़नेका  
काम । ५ पिशा, फिल ।

उदाहनी (सं० स्त्री०) उदाहन-होप् । १ वराटक,  
कोड़े । २ रज्जु, रस्सी ।

उद्वाहिक ( सं० त्रि० ) उद्वाहः प्रयोजनमस्य, ठक् ।

विवाहसम्बन्धीय, शादीके मुताजिक ।

“गोवाहिके प्र यन्ने प्र विषयवेदनं कविम् ।” ( अथ ४८२ )

उद्वाहित ( सं० त्रि० ) उत्-वह-णिच्-क्त । १ विवाहित,

शादी किये हुआ । भागमके मतसे कलिकालमें

भागमको छोड़ चपर शास्त्रके अनुसार उद्वाहित होने-

वाली नारी गर्हित है । २ उत्तोलित, उखाड़ा हुआ ।

उद्वाध्नि ( सं० त्रि० ) १ उत्तोलन करनेवाला, जो

उठाता हो । २ विवाहसम्बन्धीय, शादीके मुताजिक ।

उद्वाहनी ( सं० त्रि० ) उद्वाह-इनि-ङीप् । रक्त, रक्सी ।

उद्वाहु ( सं० त्रि० ) ऊर्ध्व बाहु, हाथ उठाये हुआ ।

उद्वाहुलक, उवाहूँ देको ।

उद्दिन ( सं० त्रि० ) उत्-विज्-क्त, खादिन इति नेट् ।

१ चिन्तित, फिक्रमन्द ।

“नोविप्रचरते धर्मो नोविप्रचरते विद्वान् ।” ( भारत धारि )

२ व्याकुलित, विचल । ३ क्षुब्धित, भौचक्षा ।

उद्दिनचित्त ( सं० त्रि० ) दुःखित, चफसुर्दा ।

उद्दिनमान ( सं० त्रि० ) भयभीत, घबराया हुआ ।

उद्दिवाल ( सं० पु० ) भूचर और जलचर जन्तुवियेय,

कमीन और पानीमें रहनेवाला एक जानवर ।

( Lutra ) ईस्लाम ग्रन्थकारोंने इसके जलविडाल, जल-

माजरी, जलनकुल इत्यादि नाम लिखे हैं ।

वैदिक कालमें इस जन्तुको ‘उट्र’ कहते थे । शुक्ल

यजुर्वेदमें लिखा है—

“उपरंते गन्धर्वाणामपामुद्रीमागङ्गाप्रणे ।” ( १३१० )

मिथ मित्र देशके शब्दांश इस जन्तुवाचक ‘उट्र’

नामका समधिक ऐका लक्षित है । यथा—वैदिक

‘उट्र’, हिन्दी ‘ऊट्र’, उर्दू ‘उट्र’ वा ‘गोहर’, भोलराज

‘यथं लिख तथा जर्मन ‘गोत्तर’, फ्रेंचकी ‘गोहर’,

फ्रांसीसी ‘लुटर’, इटलीय ‘लोटर’ और स्पेनीय, लाटिन

प्रभृति भाषाओंमें ‘लुटर’ कहते हैं । \*

उद्दिवाल पृथिवीके प्रायः अधिकांश देशोंमें रहता

है । तन्मध्य भारतवर्षीय जलचर डिमनारिसे दक्षिण

कुमायी पर्वतपरि पर्यन्त सर्वस्थानके नद, उपनद और

झरमें इसको देखते हैं । इसकी देहका सङ्गठन सकल

जन्तुओंसे भिन्न है । इसका शङ्ख चपटा और पलंग पलंग

रहता है । प्रत्यङ्ग सुदृढ़ होते भी सुदृढ़ होते हैं । पैरकी

एड़ी अनाच्छादित और तनभाग जालाकारसे संयत

है । गालकी ओमावली निविड और सुदृढ़ होती

है । तन्मध्य उपरिभागके जोम कोमल और निम्न-

भागके यति विक्षिप्त रहते हैं । चक्षुके पपोंटे किञ्चित्

सूक्ष्म त्वक्से निर्मित और अधिकतर पक्षीजाति-

जैसे देख पड़ते हैं । दन्त दृढ़ एवं तीक्ष्ण होते हैं ।

भारतवर्षमें तीन-चार प्रकारका उद्दिवाल मिलता

है । परन्तु उन सबमें ‘ऊट्र’ प्राय अधिक देख पड़ता है ।

ऊट्रविनायके बाल बाढ़ानी या धूसर होते हैं ।

फिर किसीके श्वेत और किसीके पीत वर्णका धब्बा

भी पड़ा रहता है । नौचेकी ओर लोम पीताभ पथवा

रक्तभ रंगते लगते हैं । मुख कितना ही साफ होता

है । किसीके कर्णदेयमें नारङ्गीके रङ्गजैसे भामा

भलकती है । फिर किसीका समस्त देह पांशुवर्ण

रहता है । यह मुख्य समेत प्रायः तीन साढ़े तीन हाथ

तक लम्बा बैठता है । वायस्थान अत्युच्च पार्यन्त निर्भरके

निकट प्रकार प्रयथा नदनदीतौर १०।१२ इत्थ दक्षि-

काकी नीचे गतमें होता है । यह प्रधानतः मत्स्य

खाकर जीता ; मछली न मिलनपर कीड़े, मकोड़े

या छोटे चिड़ेके पकड़नेमें भी काम चला लेता है ।

ऊट्रविनाय पालनेसे हिंस्र जाता है । कितने ही चौदर

इसे पालते हैं । जब वे खाल लगाते, तब ऊट्रविनाय

भाग पट्टे चकर मछलियोंको उसके पास खड़े लाते

हैं । इससे मछली पकड़नेमें सुभीता पड़ता है ।

सुननेमें धाया—किसी बादमीने एक ऊट्रविनाय पाला

था । वह कुत्तेकी तरह प्रभुकी आज्ञा मानता

और जलाशयके निकट इद्रित करते हो मछली

पकड़ लाता । बयस बढ़ने पर जब कुछ उछका

पराक्रम बढ़ा, तब ग्रामके मध्य किसी घरमें बहुत

मछली देखने पर निकालनेका अभ्यास पड़ा । काट

खानेके भयसे इटहस-कुछ योस न सकते थे । इस

वर्षावसे प्रभु क्रमशः प्रत्यन्त विरक्त हो एकदिन

\* मरहटे कुलमाधर, देवडो-गोवर्धन चर्मा, पानीवा कुषा, कर्नाटो गोलाइ और हिन्दुधामी ऊट्रविनाय कहते हैं ।

उभे भीमोंमें हास घामसे प्रायः १०।१२ खीस दूर होउ पाये। परन्तु अपने घर वापस पहुँचनेके कुछ काम बाद ही उन्होंने देखा—प्रसुभक्त उद्दिष्टाल मामने पड़े पड़ा दिखा रहा है।

भूटान और चामाके उत्तर प्राचीन प्रदेशोंमें एक प्रकारका उद्दिष्टाल रहता है। उसका देश मटमेवा और सुण, मद्रक तथा कण्डदेम मादा होता है। बीच बीच हरित् या हरिताभ पिङ्गल वर्णके विन्दु पड़े रहते हैं। मावकका रंगत् पिङ्गल और वयस्या स्त्री जातिका निम्न भाग प्रायः स्पष्ट रहता है। देहका घेने दो और लाङ्गुलका पायतन एक हाथसे अधिक बैठता है। इस जातिके दो-एक उद्दिष्टाल कभी कभी वट्टदेशमें भी देख पड़ते हैं।

हिमालयके हिमप्रधान स्थानोंमें अन्य जातीय उद्दिष्टाल होता है। इसके लोम कृच्छ्र, अपरिष्कार और पिङ्गलाम लक्षणवर्ण लगते हैं। निम्न भाग लाङ्गुलके पन्नाप्रदेश पर्यन्त ग्रेत रहता, जिसमें धूसर और पिङ्गलाम-मिश्रित वर्ण भलकता है। देहका दो और लाङ्गुलका पायतन प्रायः डेढ़ हाथ पड़ता है।

युरोपमें लुत्रा वलगेरिस (Lutra vulgaris) जातीय उद्दिष्टाल होता है। किन्तु अमेरिकाका उद्दिष्टाल उपरोक्त सजसये कृच्छ्र और देखनेमें अनेकान्य विवर सह्य होता है। लोम अधिक मूल्यवान् रहते और भिन्न भिन्न पट्टुमें रक्त बदलते हैं—बीस कालमें 'सुद एवं लक्ष्य तथा शीतकालमें मगोहर रक्तान पिङ्गल वर्ण लगते हैं'। फिर भी वह विवरके लोम सह्य कृच्छ्र नहीं। प्रतिवर्ष हजारों इस जातिके उद्दिष्टाल अमेरिकाके इन्डिपेण्डो भेजे जाते हैं।

प्रयान्त महासागरके उत्तरीय एवं उत्तर अमेरिकाके निकटस्थ सागरसमूहमें 'सासुद्रिक उद्दिष्टाल' मिलता है। लोम अपर सकल जातिकी अपेक्षा सम-धिक पिच्छ और अधिक मूल्यवान् है। सागरके मत्स्यपर जीवन चलाता है। प्रायः सवा दो सौ वर्ष पहले इसी उभे पकड़ते और बहुमूल्य लोम बिकने से। उसमें उनको अधिक काम होता था। जब युरोपीयोंको इसका संवाद मिला, तब उन्होंने भी चारों

दिक् भ्रष्टाङ्ग छोड़ उद्दिष्टाल पकड़नेकी प्रयोग किया। भिन्न भिन्न जातियोंका रङ्ग व्यवसाय पर पापड़ का जानिसे लोमका मूल्य अधिक घट गया। ईट रफिया कम्पनीके लोग इस लोमको काष्ठन नगर भेजते थे। पूर्वमें हम देगके चसम्ब स्थित उद्दिष्टाल खाते थे। रोमन फायनिकोंके धर्मग्रन्थोंमें भिन्न भिन्नके मत्स्यका निषेध पड़ने भी इसका मान नहीं छूटा। वे पापड़के साथ इस खाते थे। इसका मांस एवं और मत्स्यवत् स्वाद होता है।

उद्दिष्टाल (सं० स्त्री०) उत्-वि-उह-सुट्। उद्धार करण, मुड़ा देनेका काम।

उद्दीचय (सं० स्त्री०) उत्-वि-ईय भावे लुट्। १ लब्धं दृष्टि, उठी हुई नजर। करपे लुट्। २ दग्ध, नेत्र, नजारा, पाँख।

उदीय (सं० पश्य०) १ लब्धं दृष्टि प्राप्तिके, उपर देखकर। (ति०) २ देखनेके योग्य।

उदीत (सं० ति०) उत्-वि-उह। १ उन्नत, उठा हुआ। २ प्रवित, या हुआ। ३ उल्लसित, उल्ला हुआ।

उद्दृष्टय (सं० स्त्री०) आधिक्य, बढ़ती।

उद्दत्त (सं० ति०) उत्-लृ-त्। १ उत्पत्ति, उपर केका हुआ। २ उत्तोलित, उठाया हुआ। ३ जाल, पेदा। ४ सुमित, चवराया हुआ। ५ पतिरिक्त, छोड़ा हुआ। ६ उद्घात, उगला हुआ। ७ धुल्लभित, खानिसे बचा हुआ। ८ दुहत्त, बदचलन।

उद्देग (सं० पु०) उत्-वि-भावे घञ्। १ पिन्ना, फिक्त, चाद। २ भय, डर। ३ उद्भय, ताजुब। ४ चमत्कार, रोगन। ५ विरहजन्य दुःख, लुदाईकी लजबीक। ६ उद्दमन, उभार। (स्त्री०) ७ गुदाक-फल, सुपारी। (ति०) ८ गोपुगामो, लज्ज चमने-याना। ९ खायो, कायम। १० उद्दमनमगीन, उभरने-याना। ११ लब्धं वाद्, साथ उठाये हुआ।

उद्देगिन् (सं० ति०) १ पिन्नाकारक, फिक्त बढ़ाने-याना। २ चिन्तित, किन्नमन्द।

उद्देजक (सं० ति०) दुःखदायी, लज्जोके देनेयाना।

उद्देजक (सं० स्त्री०) उत्-वि-भावे लुट्। १ उद्देग, लोभ। (नञ्-प्रत्यय) २ भय, डर। ३ लम्पन, लब्धकी।

४ कष्ट, तकलीफ । ५ पयात्ताप, पक्षताप । ( वि० )

६ भयप्रदर्शक, डरावना ।

“स्यमप्रतिविहीना हि गीतवन् कुलकनकाः ।

उद्देकनीय परस्मादि व्युत्पद्यते कर्त्तव्यः ॥” (अष्टाध्यायी २.३.५४)

उद्देकनीय ( सं० वि० ) भयप्रदर्शक, कंपा देनेवाला ।

उद्देकित ( सं० वि० ) उत्-विज्-णिव-त्ता । १ क्लेशित, भ्रष्टसुर्दा । २ भयाकुल, घबराया हुआ ।

उद्देहि ( सं० वि० ) उदत्ता वेदि यत्र । उदत्त वेदियुक्त, कच्ची वेदीवाला ।

उद्देय ( सं० वि० ) धातुके साथ मिश्रणयोग, जो हवामें मिलाया जा सकता हो ।

उद्देह ( सं० वि० ) उत्क्रान्ती घेलायाम्, अत्यां समा० ।

१ अपने तौरका प्रभावित करनेवाला, जो अपना क्लिनाला हुआ रहा हो । २ सीमातिक्रान्त, हृदको लाँघ जानेवाला । ३ कुलातिक्रान्त, अपने खान्दानकी हृद छोड़ देनेवाला । “वसन्तीये नजउरानिधेः ॥” (अष्टाध्यायी)

उद्देह ( सं० पु० ) १ चतुर्दिक् घेदन, घेराई । २ नगर-घेदन, शहरको घेर लेनेका काम ।

उद्देहन ( सं० स्त्री० ) उत्-घेह-लुगट् । १ हस्तपादका आवेष्टन, हाथपैरको बंधाई । २ उन्मोचन, खोलाई । ३ आलिङ्गन, हमागोयी, लिपटाई ।

“उद्देहोऽहम् तन्ना मत्माहुरितरोषकाः ॥” (सुषुप्त)

उद्देहनीय ( सं० वि० ) उन्मोचनयोग्य, खोल देनेके कायिल ।

उद्देष्ट ( सं० वि० ) चतुर्दिक् आहूत, चारो ओरसे घेरा हुआ ।

उद्देष्ट ( सं० पु० ) उत्-वह्-लृच् । वर, शीघर, दृष्टा ।

“उद्देष्टाणि भवेत्प्राची संज्ञायां कुलनायिके ।

केप्रागमनं यावत् तस्य पुं लो द्विने द्विने ॥” (अष्टाध्यायी २.३.५४)

उधः ( सं० स्त्री० ) वह प्रापद्य, उध् कर्त्तव्य वा भवन् । प्राचीन, स्तन, बाजू, भाग्य ।

उधेड़ना ( हिं० क्लि० ) १ अपाहत होना, उधड़ जाना । २ उध्घाटित, होना, खुलना । ३ निष्प्रवृत्तभूत होना, खाल खिंचना । ४ ताड़ित होना, पीत पड़ना । ५ उन्मुख होना, झूट जाना । ६ मट होना, बर-वादीमें पड़ना ।

उधम, कथन देवी ।

उधर ( हिं० क्लि०-वि० ) तब, वहाँ, उस ओर ।

उधरना ( हिं० क्लि० ) १ उधार होना, झूटना । २ उधार करना, छोड़ना । ३ उधड़ना, अलग-अलग हो जाना ।

उधरसे ( हिं० क्लि०-वि० ) १ उस ओर या तर्फसे ।

उधराना ( हिं० क्लि० ) १ धातुसे इतस्ततः होना, हवामें उड़कर बिखर जाना । २ मदोन्मत्त होना, झगड़ा लगाना ।

उधलना ( हिं० क्लि० ) १ कामातुर होना, मस्त पड़ना । “जो न बेटे उधल गई समर्थे दो ।” (लोकोक्ति)

२ अन्य पुरुषके साथ वलायमान होना, दूसरे मर्दको लेकर भागना । ३ मट होना, बिगड़ना ।

उधली ( हिं० स्त्री० ) कामासक्त, झिनाल, बिगड़ी ओरत । “उधली वह बनेके साथ देखाये ।” (लोकोक्ति)

उधाड़ ( हिं० पु० ) उधाड़, कुत्तीका एक पेंच । इसमें एक पहलवान दूसरेको लंगोटा पकड़ कर उठाता ओर भूमिपर गिराता है ।

उधार ( हिं० पु० ) १ ऋण, कर्ज । “नौ नव न नरक उधार ।” (लोकोक्ति) २ दैन, मंगनी । ३ उधार, नजात ।

उधारक ( हिं० ) उधार देवी ।

उधारना ( हिं० क्लि० ) उधार करना, छोड़ना ।

उधारी ( हिं० वि० ) उधार करनेवाला, जो निजात देता हो ।

उधुनाला—बङ्गाल प्रान्तके सन्तालपरगनेका एक पुराना नाला ओर गाँव । यह राजमहलसे दक्षिण ६ मील पचा० २४° ४८' ३०" उ० ओर द्रावि० ८०° ५३' १५" पू० पर अवस्थित है । १७६३ ई०में मेजर पदमचन यहां नवाब औरकासिमकी फौज हरायी थी । गड़-खाद्योंका ध्वंसावशेष आजभी विद्यमान है । मुगलोंने जालेपर जो बढ़िया पुल बनाया, उधे गङ्गाकी धारने बागि बढ़कर बहाया है ।

उधेड़ना ( हिं० क्लि० ) १ धक् धक् करना, खोदना । २ अपाहत करना, उधाड़ना । ३ ध्वित करना, उधमना । ४ तोड़ना । ५ विजय करना, जीतना । ६ इतस्ततः फैकना, बिखराना । ७ निर्वन् करना,

गरीब बनामा। ८ ठगना। ९ चपमाजित करना, माफी देना। १० धैल बनामा। ११ खचित करना, मर्म देना। १२ फाटना। १३ गिपोड़ करना, रगाना। उधेड़वन (हिं० धी०) १ चिन्ता, जिक्र। २ उपाय, तटबोर। ३ व्याकुलता, घिघी। ४ दुःख, तकलीफ। उधेड़ना, उधेड़ना देना। उधाम (घं० धी०) सुनो, चला। उधार, उधान देना। उल (हिं० ल०) १ 'उल'का बहुवचन। उलहल, उलह देना।

उलका (घं० पु०) १ पश्चिमिग, एक चमदेखा पत्थर। (वि०) २ विरल, शैरमासूनी, चमोखा।

उलमुलत—बम्बई प्रांतके राजागिरि जिलेके घण्टी एक त्रयो। राजकल इस त्रयोमें केवल लहलही खुर ही देना पड़ता है। यह सच्चाई पर्वत और सागर तटके मसीप रहता है। शीघ्र चरतमें खुर दल-दर्भके पास चाते और घण्टी लैट लगते हैं।

उलचकोटरा—बम्बईके काठियावाड़ प्रदेशका एक ग्राम। यह एक बड़ी चटान पर चरबसागरके किनारे बना है। सोमनाथ-पाटन और उनाथे निकाले जाने-पर उलचकोटरा यात्रोकी प्रसिद्ध राजधानी रही। दहाके श्रीमंजी राज एक प्रसिद्ध और है। यह ग्राम भोभनेरदे दक्षिण-पश्चिम मात और भावनगरसे प्राय द्वितीयकी मील दूर है। उलच-कोटरमें एक मील उत्तर नीचकोठरमें एक क्षुप है। उसमें एक ही साय ३२ पुर चल सकती है।

उलचया—काठियावाड़ प्रांतके लगानदकी एक तह-मील। भाकरा उपजातिका बावचिये ताण्णुदार है। पड़ने उलचया एक घुचक करद राज्य था। यह लाजराबादमें उत्तर-पूर्व दग और भनारवाड़ी नदीमें पूर्व एक मील पड़ता है। भिगुईका मन्दर सिर्फ ३ मील उत्तर है।

उलचाम (हिं० वि०) एकीनपद्यामत्, भार दहाई और भी एकाई रचनेवाला, ४८।

उलहली—बम्बई प्रांतके उत्तर लगाना जिलेका एक ग्राम। यह भिगुपुरमें उत्तर-पश्चिम १२ मील दूर

और अपने सुन्दर लमप्रपात (Lushington falls)के निचे समझर है।

उमजा—गुजरात प्रांतके बड़ोदा राज्यका एक नगर। यह चचा० २३° ४८' १०" उ० तथा दाधि० ७२° २०' पू० पर अवस्थित है। यहां राजपुताना-मानवा-रिस-बेका ऐमन बना है। उमजा चरमदाबादमें उत्तर ५६ और भिगुपुरमें दक्षिण ८ मील पड़ता है। कड़वा कुरमियोका यह प्रधान स्थान है।

उमतादिया—बड़ोदा राज्यका एक तीर्थस्थान। यह कड़ोके निकट अवस्थित है। यैय यहां महादेवका दर्शन करने चाते हैं।

उमतरा—काठियावाड़ प्रांतके भाताबाड़ विभागका एक देगोय राज्य। भूमिका परिमाण ६ वर्गमील है।

उमतीम (हिं० वि०) एकीनचिगत, दो दहाई और भी एकाई रचनेवाला, २८।

उमदा (हिं०) चक्र देना।

उम देनवार—काठियावाड़का एक प्राचीन स्थान। इसका प्राचीन नाम उमरत नगर है। चरतनगर देना।

उममायगा (हिं० लि०) उमयन करना, मय उमाना।

उममान (हिं० वि०) १ उदम, बराबर। २ चतु-मान, चम्दाज।

उममानना (हिं० लि०) चतुमान करना, चम्दाज लगाना।

उममूलना (हिं० लि०) उममूलन करना, उखाड़ना।

उममेघ, उमवे देना।

उममद (हिं० पु०) जन विगीय, किधी क्षिपका भाग। यैय प्रथम छटिये उपजता है। इसमें मत्तुय श्रुत्य को प्राप्त होते हैं।

उमरना (हिं० लि०) १ उदगत होना, उठना, पटना। २ प्रथके माघ गमन करना, कूद-कूद करना।

उमरगा (हिं० लि०) १ उममन करना, भूक या लटक पड़ना। २ आच्छादित होना, छा जाना। ३ एकछात् पा पड़ना, सग जाना।

उमर (हिं० वि०) चय, लुकील, लो ल्यादान हो।

उमरान (हिं०) उमरान देना।

उमरठ (हिं० वि०) एकीनपट्टि, पांच दहाई और भी एकाई रचनेवाला, ४८।

उनसरी—बलखके एक अधिवासी और सुलतान् महमूद गज़नवीकी सभाके पण्डित। इन्हें प्रायः अनुल कासिम उनसरी कहते हैं। यह अनुलफरह सनजरीके शिष्य और असजदी तथा फरखी कविके गुरु थे। ये अपने समयके एक श्रेष्ठ विद्वान् थे। उनसरी कवि, होनेके सिवा विज्ञान और अनेक भाषाओंके भी जाननेवाले थे। गज़नी विश्वविद्यालयके समस्त विद्यार्थी और चार सौ कवि तथा विद्वान् इन्हें अपना गुरु मानते थे। सुलतान् महमूदकी वीरता पर इन्होंने एक ग्रन्थ रचनाया था। एकबार सुलतान् अपने सेवक अय्याज्जी पसकावली कटा कर पंखा-तापमें पड़े थे। किन्तु इन्होंने उस समय ऐसी कविता बनाकर सुनायी, कि सुलतान्ने प्रसन्न हो इनका मुख तीन बार अमूल्य रत्नोंसे भरनेकी सेवकोंकी आज्ञा दी। १०४० या १०४८ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

उनसी—एक सुलतमान कवि। इनका मुख्य नाम सुहृद्द था। १५६५ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

उनहत्तर (हि० वि०) अकीनसमिति, कः दहाई और नौ पकाई रखतेवाला, ६८।

उनहार (हि० वि०) समान, बराबर, कम-ज्यादा न होनेवाला।

उनहारि (हि० स्त्री०) माहृश, बराबरी।

उना—पञ्जाबके होशियारपुर जिलेसे उत्तरपूर्व एक तहसील। इसका कितना ही ग्राम शिवानिक गिरि-मासा और हिमालयके मध्य पड़ता है। उनाके चारों ओर प्रायः सोहन नदी बहती है। उपत्यकाके प्रदेशकी यशवनन्दन कहते हैं। गेहूँ, धान, चना, कपास, नील, ज्वार, ऊख, तम्बाकू और सबजियोंकी उपज यहाँ अधिक है। इसका क्षेत्रफल ८६७ वर्गमील है। २ अपने तहसीलका प्रधान नगर। यह भन्ना ११° ३२' उ० और द्रावि० ७६° २८' पू० पर अवस्थित है। सिखोंके गुरु गानकके वेदी नामक देशधर उनामें ही रहते हैं। रणजितसिंहके अधिकार-कालमें वेदी उपाधिवारी विक्रमसिंह नामक एक व्यक्तिकी सिखराजसे इसकी और अनेक निकटस्थ स्थानोंकी जागीरी सनद मिली थी। उना पर्वतपर सोहन नदीके

किनारे स्थित है। यहाँ बाजार लगा करता है। लोकसंख्या प्रायः साढ़े चार हजार है।

उनाना (हि० क्रि०) १ सम्मिलित करना, भुका देना। २ तत्पर करना, काम बंधाना। ३ व्यवहार करना, कान देना। ४ आज्ञापालन करना, कहेपर चलना।

उनाव—१ युक्त प्रदेशका एक जिला। यह भन्ना २६° ८' एवं २७° २' उ० और द्रावि० ८०° ६' तथा ८१° ५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १७४७ वर्गमील है। इसके उत्तर हरदोई, पूर्व लखनऊ, दक्षिण रायबरेली और दक्षिण-पश्चिम फतेहपुर तथा कानपुर जिला पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः नौ लाख है। उनाव लखनऊ विभागके भन्तर्गत और युक्तप्रदेशके कोटे साठके शासनाधीन है।

यह लपिपधान स्थान है। इसमें उनाव, पुरवा, मोरावाँ, सकीपुर, बांगरमऊ, मोहान, नवलगञ्ज, इसन गञ्ज, महाराजगञ्ज और हरहा ये प्रधान नगर हैं।

इतिहास—पूर्व कालमें यह जिला वनादिसे भरा था। स्थानीय मनुष्योंकी विधान है—पहले मोरावाँ, पुरवे और हरदेमें भर जातिका वास था। अवशिष्ट स्थानमें सोध, पटौर, ठठेरे प्रभृति जातिके लोग रहते थे।

सुहृद्द गोरीके समयसे राजपूत निज जन्म-भूमिका खेह छोड़ उनावमें आकर बसने लगे। १२०० से १४५० ई० के बीच चोहान, दौलत, रैक-वार, जनवार और गौतम यहाँ पाये थे। पीछे परिहार, गेहलोत, गोड़ और शेरग भी पड़च गये।

सुलतमानोंके शासनमेंसे पहले विष्णुराज राजत्व करते थे। संयद भला-वहीनके पुत्र बहावहीनने उन्हें जीता। क्योंकि उस समय ईरानी और कानुनी मित्राही तो उनके साथ थे। और राजपूतका विवाह था। इस लिये सुलतमानोंकी सयोग मिला। उन्होंने धार्मिक राजाकी संवाद दिया कि—'इस शादीमें हम खुश हैं। अतएव हम अपने औरतोंको आपकी औरतसे मिलानेके लिये भेजना चाहते हैं।' राजा मन्मथ हो गये। इसलिये कामिनीयोंके बदले समस्त औरतोंको पर बँट भवाह दुर्गमें सुसज्ज। राजपूत उन्सवध-मत्त हो

पथिक गगा पीये थे। उधर मुसलमानोंने दुर्गमें पहुँचते ही पथिक गंगीनी और पथिकस्य ही राजदुर्ग अपने हाथमें कर लिया। राजपरिहारके निरन्तर लोग पथिके समान मारे गये। दुर्गटनाके समय राजपुत्र मिहिर नेमने गये थे। एकछात्र यह दाह्य संवाद पा वे मानिकपुरका अपने सम्पर्कमें एकजनके पासगले भगे। मुसलमानोंने नरामें राजपुत्रके साक्षात्पायें मुसलमानों पर अपना श्रेष्ठ भेजा। किन्तु दोवार पराजय हुआ। मुहम्मद मुसलमानोंको फौज भी बहुत मारी। उधर वैम-राज तिलकचन्द्र चयौध्या पदेमके टचिप भागमें स्वाधीन भावने राजत्व चलाते थे। मुसलमानोंने उनाव से एकके परितोपाय कितना हो उपटोकन पहुँचाया और साथ ही यह भी कहनाया—'हमारे बुजुर्ग बडाउहोन् गहाउरीन्ने मिलकर क्लेश जहने आते थे। लेकिन विष्णुरात्रने उन्हें वेदन्ताकोम मार डाला। हमोंने हमने उनाव से लिया है।' तिलकचन्द्रने गोचा—मुसलमानोंका विद्वाना चण्डा नहीं, क्योंकि हमारा हमपर भी विपद् पड़ सकती है। हमप्रकार पथिकपात् देख लगेनि उपहार पट्ट किया और पथिक दिया—'हम आपसे विवाद बढाना नहीं चाहते। हमारे अधिकारका कोई राजपुत्र पाप नोगोंपर चढ़ा न चढायेगा।' फिर दिकोके सम्राटने सन्तुष्ट हो मयदाँकी 'सामोन्दारी'की सनद वसूली थी। मिवाही-विदाहके समय उनावके कितने ही लोग चंगरेजोंसे लडे। लखवारके राजा यमोमिह जेतेंहमदमें उधर पनासक चंगरेजोंको नाना साहबके पास चक्रे भेजते थे। चंगरेजों-नेनापति दाहककने उनके विरुद्ध सेना भेजा। मुहम्मद यमोमिह चाहत हुये, जिसने उनके प्राण भिक्षन गये। हलशा मिटनेपर चंगरेजोंने स्वाधीन राजपुत्रको फौजीपर चढाया और राजकी फौज फौज कर लगाया। उस समयमें पात्रतज उनाव तटिग माननेमें ही विद्यमान थे।

पथिकामित्रीमें राजपुत्रोंकी चन्दा पथिक है। फिर ब्राह्मण, गोमारि, कापल, बमिया, पड़ौर, लोथ, पायो, खाही, खोरी, घमार, नाई, तेनी, तेंकोली, बरई, कुरमी, पोथी, कडार, कुमार, मोहार, सुरको,

मानो, कलवार, धानुक, भडी, मोमार और मज्ज प्रभृति उच्च-नीच समो हिन्दू रहते हैं। मुसलमानोंने पठान, मज्ज और संयद क्पादा हैं। ये पायः मज्ज ही सुघो मज्जदायुक्त हैं।

जमीन् दोरमा, सटियार, धुई और लमर कर भागोंमें विभक्त है। कई वर्षके पन्नासे गेहूं उपजता है। जिस वर्ष गेहूं नहीं होता, उस वर्ष लपक यव, उड़द, मूंग, प्यार प्रभृति होते हैं। ऊपर, नील, मग, कपास, पकीम, तम्बाकू, सरसी और तरह तरहकी सब्जीही खेती भी होती है।

२ अपने जिनेकी तहसील। यह पचा० २६' १०" तथा २६' ४०" उ० और द्रावि० ८०° २१' एवं ८०° ४४' पू० के मध्य पश्चिम है। चार परगने लगते हैं—उनाव, परियर, निकन्दरपुर और हरहा। भूमिका परिमाण १८५ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः दो लाख है।

१ अपने जिसेका प्रधान नगर। यह पचा० २६' ३२' २५" उ० और द्रावि० ८०° २' पू० पर मान-पुरमें साढ़े ४ कोस उत्तरपूर्व पश्चिम है। कोई ११ देवदेवोंके मन्दिर तथा १० मस्जिद हैं। इस नगरकी प्रतिष्ठाके सम्बन्धमें एक प्रवाद सुनते हैं—पूर्वकालमें उनाव नगर यममें भरा था। कोई मरा हजार वर्ष पहले बहुराजके पधोमस गजसिंह नामक योद्धान मिवाहीने इस स्थानको परिष्कार करा। 'मराय-गडा' नामक एक नगर बसाया। किन्तु पथिक दिन बाद ही ये इसी कीड़ गये थे। फिर मानिकपुराज पत्रयपालने उनाव नगर पर अपना अधिकार जमाया। उन्होंने पाडेमिहकी इस स्थानका मानन कर्ता बनाकर भेजा था। कुछ दिन बाद उनका मिह नामक कोई उद्दिन भागीय पाडेमिहकी मार इस स्थानके स्वाधीन राजा बने। उन्होंने अपने नामानुसार 'मरायगडा'के बदले उनाव नाम रखा था। १४१० ई०में तटंगीय राजा चमरायत मिहके समय मेददोंने लखकर कोयलमें इस नगरको अपने हाथ लिया।

१८२० ई० की २८ वीं जुलाईको उनावमें भेजा

पति हादलकके साथ विद्रोहियोंका प्रधान युद्ध हुआ था। यहाँ चौनी बनानेका एक पुतलीघर खुला है।  
उनालके ढिड़े अधिक प्रसिद्ध हैं।

उनाला (हिं० पु०) चौबनटतु, गर्मीका मौसम।

उनासी, उनासी देखो।

उनीदा (हिं०) उन्निद देखो।

उनेवाल—गुजराती ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। इस

श्रेणीके ब्राह्मण दुर्भिक्षसे पीड़ित हो अपनी देस राज-पूताना छोड़ गुजरातमें जा बसे थे। ये प्रायः बड़ोदे और काठियावाड़में रहते हैं। उना ग्रामके नामपर उनेवाल कहें जाते हैं। उक्त ग्राम बेजा और वाघल राजपूतोंके नेता वीजोने इनसे छीन लिया था। प्रायः कृषिकार्य और भिक्षा पर जीविका निर्वाह करते हैं।

उन्द—काठियावाड़ प्रान्तकी एक छोटी नदी। यह लोधिकाले निकल उत्तरकी ओर बहती हुयी जोड़ियाके पास कलकी खाडोमें जा गिरती है।

उन्दक (सं० पु०) भवत यावनाल, सपेद मकाई।

उन्दन (सं० स्त्री०) कूटन, खिंचाई।

उन्दर, इन्दर देखो।

उन्दरन—बम्बई प्रान्तकी एक पर्वतश्रेणी। इसके आधारपर बाधका और भालावाड़ नगर बसा है।

उन्दरवेया—काठियावाड़का एक प्राचीन उपविभाग। आजकाल यह मोहिलवाड़में मिल गया है। क्षेत्रफल १६० वर्गमील है। पूर्वकी ओर खम्बातकी खाड़ी है। शतरुष्ठी नदीके दक्षिण तट तक उन्दरवेया विस्तृत है।

उन्दिरवेड़ा—बम्बई प्रान्तके खानदेश जिलेका एक गांव। बोरी नदीके एक द्वीपमें श्रीगणेश्वर महादेवका मन्दिर बना है। कहा जाता है—ब्रम्हक-राव साम्र पिटेने उक्त मन्दिर निर्माण कराया था। यह गांव ब्रम्हक रावकी पियधान कोई १६३ वर्ष हुये उत्सर्ग किया था। चारो ओर ७५ फीट ऊंचा प्राचीर है। नदीमें जानिके लिये सोपान लगे हैं और सुन्दर पालोकस्तान खड़ा है। मन्दिर ४५ फीट लम्बा और २५ फीट चौड़ा है। द्वारप्रकोष्ठमें नन्दीकी मूर्ति है। प्रस्तर सुन्दर कारुकार्यसे खचित है।

उन्दिरमारी (सं० स्त्री०) मृषिकारी, एक दूती। मृषिकारी कटक तथा नेत्रकी लाम पड़वाने, पाखुका विष मारने, और ब्रह्मदोष एवं नेत्रके रोगकी मिटाने-वाली है। (राजनिषधः)

उन्दो—सब विशेष, एक पेड़। यह बम्बई प्रान्तके रत्नागिरि जिलेमें समुद्र किनारे साधारणतः उपजता है। इसके वोजका कट-तैल मूषवान् है। तनेसे, छोटी मौका बनती है।

उन्दोकाटाका—बम्बई प्रान्तके कनाड़ा जिलेका एक ग्राम। मासखेडाविष राष्ट्रकूट-नृपति भविष्यके पुत्र अभिमन्युने इसे एक ब्राह्मणकी पेटपङ्कजबाले दक्षिण-शिवको सेवाके लिये उत्सर्ग किया था। तान्-फलकपर उक्त विवरण लिखा है।

उन्दोवनकोष्ठक—तोण्डकराट्टका एक उपविभाग। आज कल इसे उरदककाहु कहते हैं। यह काञ्चोपुरम्के समीप अवस्थित है। जो प्राचीन तान्फलक मिता, उसमें लिखा है कि—अपने मुख्यमन्त्री ब्रह्मथीराज या ब्रह्म-युवराजके कहनेसे नन्दीवरम् नृपतिने अपने राज्यके २२वें वर्षमें किसी ब्राह्मणकी कोट्टकीकी नामक इस प्रान्तका एक ग्राम उत्सर्ग किया था।

उन्दुर, इन्दुर देखो।

उन्दुरकर्णी (सं० स्त्री०) उन्दुरस्य कर्णद्वय, गौरा-दित्वात् छीप्। पाखुपर्णी, मूसकानो।

उन्दुर, इन्दुर देखो।

उन्दुरक इन्दुर देखो।

उन्दुरकर्णी (सं० स्त्री०) १ पाखुपर्णी मता, चूहा-कानो। २ दन्तोभेद, किसी क्षिप्तकी दाँती।

उन्दुरकर्णिका, उन्दुरकर्णी देखो।

उन्दुरकर्णी, उन्दुरकर्णी देखो।

उन्दुरकर्णी, उन्दुरकर्णी देखो।

उन्दुर (सं० पु०) उन्द-उरु। इन्दुर, चूहा। संस्कृत पर्याय—मुषिक, पाखु, गिरिक, बासमूषिका, मूष, मूषक, मूषिक, खनक, वन्तु, वृष, पापनिक, वृष, दोना, मूषीका, विसेयय और शमिर है। उरु इन्दुरकी चिक. वैष्णवकुल, चिक, हाताहला और अन्ननिका कहते हैं। इन्दुर देखो।





पूर्यकालमें यह प्राचीन नगर पति पवित्र स्थान  
समझा जाता था । स्कन्दपुराणके प्रसासखण्डमें  
वर्णित है—देयादिदेव महादेवके पादसे विष्णुकर्मणि  
कृपतीया नदीके तटपर यह नगर बनाया था । यह

[illegible]

**अथ यः कथं :**

असमर्था परित्राये जिताः क्वे तपोधमाः ।  
नगरसिद्धिं विं कुमन्तव भक्तिमयीपूजिता ॥

ईश्वर उभाय ।

मृद्विथित तदा भवि मुं वाचं परमिष्वरे ।  
 मृद्वीध्वं नमः रम्यं कुरुष्वं वचनं मम ॥  
 वतुषाः भगवान् दीप ईषमौनितमौचनः ।  
 सद्यार विजयं नीतिं सुं शिषिवादिवाचम् ॥  
 अमुनामां विश्वमौ प्राप्तिवापातः शितः ।  
 वाचापययु मां दीप वचनं कुरुष्वं ते ॥

### ਮੁੱਖ ਚੁਣਾਵ

मगर' क्षिप्रतां त्वष्टः विप्रार्थे सुन्दरं सुखम् ।  
इत्यु शो विप्रकर्मा तां भूमिं वीक्षा समनतः ॥

ब्राह्मणोंके वासके लियेही निर्मित हुआ था। उस समय यहाँ स्थलकेश्वर नामक एक ज्ञायत शिवलिंग था।

सुसज्जमानोंके पानेसे पूर्व उन्-दिप्रवरमें छनेवाल  
नामक ब्राह्मण-सम्प्रदाय रहता था। किसी समय  
ब्राह्मणोंने वैजलावाजी नामक किसी सामन्तकी

[illegible]



उन्नमन (सं० क्री०) उत्-नम-ण्यट् । १ उन्नति, तरङ्गी । २ उत्तोलन, उठाव । ३ सुन्दरीक यन्त्र द्वारा ब्रणशक्तिर स्थापसाधक चिकित्सा कर्मविशेष । नश्वरसे जख्मके सह निकालनेका इलाज ।

उन्नमित (सं० त्रि०) उत्-नम-ण्यच्-क्त । १ उत्तोलित, उठाया या चढ़ाया हुआ । २ ऊर्ध्वोन्नत, ऊचा किया हुआ । “यद्यप्यव्यभिचारात्तानमन्त्येः” (भाष १।१।१)

उन्नम्न (सं० त्रि०) उत्-नम्न-रन् । उन्नते, ऊँचा, खड़ा हुआ ।

उन्नय (सं० पु०) उत्-नो क्वचिदपवादविषये णच् । १ उत्तोलन, खिंचाव । २ उद्धान, उठान । ३ साहस्य, बराबरी ।

उन्नयन (सं० क्री०) उत्-नो-न्यट् । क्वचिदपवादम् । भाष १।१।१ । १ उत्तोलन, खिंचाव । २ परामर्श, मशविरा । ३ अनुमान, धन्दाज । ४ उन्नति, तरङ्गी, उठान । ५ उद्भावन, मुफलात । ६ न्याययान्त्र, हलमन्तिक । ७ पुनश्चतुपात्र, धर्क, रखनेका बरतन । “उन्नये च” (आप्ययनश्लेष १।१।१।१) “उन्नययादित्युन्नयनं पुनश्चतुष्टयम्” (कर्म) (त्रि०) उन्नमिते नयनं येन । ८ उन्नमितचतुष्टय, पाँच उठाये हुआ ।

उन्नविष्क—काठियावाड़के गिरनार पर्वतके निकटस्थ एक प्राचीन ग्राम । भोमने इसी स्थानपर उन्नक नामक श्वरको मारा था । आजकल इसे ‘धोसम’ कहते हैं ।

“ततो गच्छेन्नाहरेति उन्नविष्के नि विवृतम् ।

भोजनस्थाने हि वि पथिमे मङ्गला स्थितेः ।

उन्नको यव भोजन इत्या मङ्गलाया त्रिवि” (प्रभाषण १८५१, १-३)

उन्नस (सं० त्रि०) उन्नता नामिका यस्य, बहुव्रीहिः समाधानोऽव् स्यात् । उपनर्तव । भाष १।१।१ । १ उन्न नासायुक्त, ऊँची नाकवाला ।

उन्नाद (सं० पु०) उत्-नद-घञ् । उन्न शब्द, ऊँची आवाज । (भाष १।१।१।१)

उन्नाय (सं० पु०) वदरीफल, धेर । यह भफुगान-स्थानसे शुष्क भाता और चौपधमें डाला जाता है ।

उन्नायी (सं० वि०) वदरी फलवत् रक्तवर्ण, धेर-धोसा सास ।

उन्नाय (सं० पु०) रघुवंशेय राजविशेष । (१७ १८१८) उन्नाय (सं० पु०) उत्-नो उपपदे घञ् । १ उन्न विष्क । भाष १।१।१ । १ उत्तोलन, उठाव, खिंचाव । २ परामर्श, मशविरा ।

उन्नायक (सं० त्रि०) १ उत्तोलन करनेवाला, जो उठाता हो । २ प्रमाण देनेवाला, जो उवाला देता हो । उन्नायकत्व (सं० क्री०) १ प्राणकत्व, समझाने या बतलानेका काम । २ जनकप्रानविषयत्व । (भाष १।१।१) उन्नायी (सं० वि०) उन्नायीति, सात दहाई और नौ एकाई रखनेवाला ।

उन्नाह (सं० पु०) उत्-नह-घञ् । काश्चित्, काजौ । यह लण्डलके मण्डसे बनता है ।

उन्निद्र (सं० त्रि०) उन्नना निद्रा स्त्रज्ञ द्रुवादिर्क वा यस्मात् । १ प्रफुल्ल, फूला हुआ । २ विकसित, खिला हुआ । ३ निद्रासहित, जागता हुआ, जिसे नौद न लगे । ४ सतर्क, खबरदार । ५ उद्योत, चमकीला । ६ निद्रा न लेनेवाला, जो सोता न द्या ।

उन्निद्रता (सं० स्त्री०) निद्राशक्त्य, वेदारी, नौद न लगनेकी हालत ।

उन्नो (सं० त्रि०) उत्तोलन करनेवाला, जो ऊपरको खींचता हो ।

उन्नोत (सं० त्रि०) उत्-नो-क्त । १ ऊर्ध्वनीत, ऊपर उठाया हुआ । २ विकसित, खिला हुआ ।

उन्नोस (सं० वि०) १ एकीनविंशति, एक दहाई और नौ एकाई रखनेवाला । २ किञ्चित् न्यून, कुछ कम ।

उन्नोसर्ग (सं० वि०) उन्नोस संख्या रखनेवाला ।

उन्नेद (सं० त्रि०) उत्-नो-टच् । १ ऊर्ध्वनीता, ऊपर ले जानेवाला । २ उद्भावक, तरङ्गी देनेवाला । (पु०) ३ सोसाट् पटलिकके अन्तर्गत एक पटलिक । इसके द्वारा सोसरसको भाण्डमें प्राप्तमें छोड़ते हैं ।

उन्नेत्र (सं० क्री०) १ उन्नेता पटलिका कार्य । (आप्ययनश्लेष १।१।१।१) (त्रि०) २ ऊर्ध्वनेत्र, पाँच ऊपरको उठाये हुआ ।

उन्नेय (सं० त्रि०) उत्-नो-यत् । १ ऊर्ध्व ले जाने योग्य, जो ऊपर चढ़ाने कावित हो । २ उद्भावनोय, ख्यासमें न लाये जाने कावित ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) १ प्राग्गम्योप्यत, सम्प्रदाये  
जाने यादिस ज्ञानतः । २ सन्ध्याप्राग्विषयतः । (नन्दोद्भेदो)  
उत्पद्यत (मं० पुं०) उत्प-उत्पद्य-लुट् । १ तपस्वी-  
भेदः । उत्पद्यत तपस्वी गते बराबर जलमें डुबे की  
तपस्या किया करने है ।

“उत्पद्यते तपे ज्ञानात् तपः कृत्वा नृपः ।

उत्पद्यतः स विदेहसत्तमो श्रीकृष्णः ॥” (वीरभार)

(ति०) २ जलमें डुबनेवाला ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्प-उत्पद्य-लुट् । १ प्रथम,  
तैरंम या पानीमें जूदनेका काम । २ गिरके किमा  
गणका नाम ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) ज्योतिषोक्त दिनरात्रिको चत-  
तद्विका प्रापक मण्डप विशेष ।

“द्वीपरात्रिचतुर्विंशत्योऽस्ति चतुर्दशः पञ्चमस्तथा ।

श्रीमान् पुनरिदं चतुर्विंशत्योऽस्ति चतुर्विंशत्योः पञ्चमस्तथा ॥”

(विद्यापतिगीतिका)

उत्पद्यतकर्म (मं० पुं०) ज्योतिषोक्त उत्पद्यतकर्म  
शुभकी दायाका कर्म ।

“द्विपरात्रिचतुर्विंशत्योऽस्ति चतुर्विंशत्योः पञ्चमस्तथा ।

उत्पद्यतकर्म चतुर्विंशत्योऽस्ति चतुर्विंशत्योः पञ्चमस्तथा ॥”

(विद्यापतिगीतिका)

उत्पद्यतकर्म (मं० पुं०) ज्योतिषोक्त उत्पद्यतकर्म प्रदत्तमात्र  
उत्पद्यतकर्म ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्प-उत्पद्य-लुट् । १ उत्पद्यत,  
प्रागम्य । २ वाङ्मयानुसूय, विचार । ३ मतवाला । (पुं०)  
करने । ४ धृष्ट, धूर्तका पैदा । ५ अतिधृष्ट, र,  
मर्द धृष्ट । ६ मृगउत्पद्यत । ७ राक्षसविशेष ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्पद्यत रत्न, कर्म । १ सत-  
वाला, जो नदीमें हो । २ उत्पद्यत, प्रागम्य ।

“उत्पद्यत रत्नकर्मः १५, उत्पद्यत रत्नः १” (राक्षस १५)

उत्पद्यतारिणी (मं० स्त्री०) दुष्टिका, दुष्टी ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) देवविशेष । (विद्यापतिगीतिका)

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) प्रसादके कथा कथा, जो  
प्रागम्यमयी माया गया हो ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्पद्यत होनेकी बात,  
प्रागम्य ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्पद्यत, जो प्रागम्य-  
कथा देव कथा हो ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्पद्यत, जो प्रागम्य-  
कथा देव, जो प्रागम्यमयी कथा गया हो ।

उत्पद्यत (मं० पुं०) श्रीमान्, गणपतिगण देव  
जानेवाला एक चौप । रत्न एवं मन्त्रको सुनाय  
ने धृष्टकर्मके द्वयमें एक दिन छोटे और कि मर्द  
बराबर निकटका कर्म छोड़े । इस चौपके मन्त्रमें  
श्रीमान्, गणपति दूर होता है । (विद्यापतिगीतिका)

उत्पद्यत, उत्पद्यत रत्नी ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्पद्यत मन्त्रा कथा,  
जो भूतमूढ प्रागम्य देवाता हो ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्पद्यत कर्मकी भाँति,  
प्रागम्य की तरह ।

उत्पद्यत (मं० पुं०) गिर, मर्द ।

उत्पद्यत, उत्पद्यत रत्नी ।

उत्पद्यत—काशीरके एक राजा । शत्रुमर्दके मारे  
जानेपर मर्द और चपरापर मन्त्रागम्य प्रागम्य  
उत्पद्यतकी काशीरका राजागम्य गीता था । किन्तु  
इनके राजत्वकालमें पत्न्याचार और व्याभिचार द्विगुण  
होने लगा । राजा विद्वत् मन्त्रागम्यकी बात न मान दुष्ट  
सोमके मोयामोदमें भूले और पत्न्या गणित  
प्रागम्यमें भूले थे । अन्तमें विद्वत् प्रागम्य राजागम्य की  
ज्येष्ठविचारमें आ मपरिवार प्राग किया । मर्द  
भिक्षुक जा दुष्ट कर्म प्रागम्य देने, में अभीपर जानें  
थे । किन्तु इनके सब भी मर्द न गया । उत्पद्यत  
दुष्टका भोग लगा अपने प्रक्रीय विद्वत् और प्राति-  
कर्मकी मर्दवा दाता था । राजा इनके मन्त्र थे, कि  
मर्दमोदका पैदा कर्मा मर्दम्य भूषको पैदा और उत्पद्यत  
प्रागम्य मानने । अन्तमें राजागम्य भोगका प्रागम्य  
हो रत्नी (८६८८०) प्राग छोड़ा । (विद्यापतिगीतिका)

उत्पद्यत (मं० पुं०) उत्पद्यत-पद्य । रत्न, कर्म ।

उत्पद्यत (मं० स्त्री०) उत्पद्यत भाँति लुट् । १ उत्प-  
द्यत, मर्द-मर्द । २ विद्या, मर्दका । (विद्यापतिगीतिका)  
३ दुष्टमर्द मर्दके कर्मका एक भेद । (ति०) कर्म  
४ मर्द-मर्द, मर्द कामनेवाला ।





कभी बुरी राह चलनेकी जी चाहता है। मेधाकी शक्ति घट जाती है। मन हावांड़ोल रहता भयवा वस्तुका अनुभव और मोह लगता है। उत्पत्तता होनेसे मस्तिष्क विगड़ता अथवा मस्तिष्क की क्रियाका क्रमशः भ्रममान होने लगता है। मनकी गति, इच्छा एवं प्रकृति चलट पलट जाती है। इस उन्मादमें प्रधानतः दो प्रकार होते हैं। कभी रोगी स्थिरभाव पकड़ता है और कभी भीषण मूर्ति बना अपने साधन करता है। उत्पत्तता रोगमें शोक अथवा दुःख, मनका भाव एवं मस्तिष्कका कर्म बढ़ता है। कभी कभी एक विषयकी चिन्तामें मन स्थिर होनेसे यह रोग लग जाता है। ऐसी अवस्थाको ऐकान्तिक उन्माद कहते हैं। बुद्धिके विषयमें मानसिकक्रिया घट जाती है और मनपर अधिक दुर्बलता या लान्से मानसिकशक्ति भ्रममंष्य हो जाती है। रोगका कोई अनुमान नहीं लगा सकता। निमुद्विष्टता या जड़ताका रोग लगनेसे एककाल हो बुद्धिको शक्ति लुप्त हो जाती है। किसी किसी स्थलमें प्रति सामान्य बुद्धिका परिचय मिलता है। यह रोग प्रायः श्रेष्ठ या बालककालमें होता है। जन्मकालीन अथवा किसी विशेष कारणसे बुद्धिकी वृत्तिका पथ रूकनेसे जड़ता बढ़ती है।

महर्षि चरकका वाक्य है—“यस्य दोषानिमित्थो उन्मादः। यद्यपि चतुष्टयानुपूर्वपरिनिवृत्तिरिति वचनमस्ति। अथवा उन्मादसामान्यतावत्तै।” अर्थात् जो उन्माद पूर्वोक्त दोषानिमित्तक उन्मादसे विशेष निदान, पूर्वरूप एवं रूपविशेष रखता है, उसका नाम प्रागन्तुक उन्माद है। किसीके मतमें पूर्व जन्मके प्रथम कर्मसे प्रागन्तुक उन्माद उठता है। इसमें देवताके समान वस्त्रोपादि देख पड़ते हैं। प्राचीन वैद्योंके विचारसे देवतादिके डर करनेसे उपजनेवाला रोग ही प्रागन्तुक उन्माद है। चरकने स्पष्ट कहा है—देवतागणकी दृष्टि, गुरु हृद सिंह या ऋषिगणके अभिगाप, पिंडशोकाकी चषप्रा, गन्धर्वगणके स्पर्श, शरीरमें यक्ष तथा राक्षस प्रभृतिके प्रवेश और पिशाचगणके आरोहणसे उन्माद उपजता है।

पूर्वोक्त देवतादिके द्वारा उन्मादकी उत्पत्ति पूर्वोक्त

पापके परिणाम, एकाकी शून्य गृहके वास, चतुष्पथपर, सम्यकाल अथवा अशुचि अवस्थामें पर्वसन्धिके मद्युन, रजस्त्रला स्त्रीके अभिगमन, अध्ययन यदि मङ्गल-होमादि कार्यके अवधि आचरण, तुमुन युद्ध, देग कुल वा नगरादिके विनाश, स्त्रीके मत्तानोत्पादन, नाना-प्रकारके भ्रून और अशुचि स्पर्श, वमन तथा रक्तस्रावके अशोच, अशुचि रहते चैत्य एवं देवालय वा नगर एवं जनपदमें रात्रिकालको चतुष्पथ अथवा वायुमुख वा श्रमयानके अभिमुख गमन, मांस मधु तिल गुह मद्य प्रभृतिके सेवनकी उत्कृष्टावस्था, दिन गुरु देशता रागो आदिकी अवमानना, धर्मात्माके व्यतिक्रम और पाप-कर्म अथवा प्रमत्त कालमें किसी मङ्गलकार कार्यके आरम्भसे होता है।

भारतीय वैद्य कहते हैं—मोह हाने, मनमें उद्वेग, कर्षमें शब्द और हृदयमें प्रतिग्रह उत्साह उमाने, देह दुर्बलाने, भ्रमपर अशुचि पाने, स्वप्नमें कतुवित द्रव्य खाने और वायु द्वारा उन्मथन एवं भ्रमपान आदि लक्षण देखानेसे उन्मादरोग शीघ्र आरोग्य होता है।

चिकित्सा—देवता अथवा ब्रह्मादि द्वारा उन्माद उठनेपर याज्ञिक और पौष्टिक आभिचारिक प्रभृति क्रियासे दूर जाता है। साधारण औषधसे कोई फल नहीं निकलता। फिर भी यथार्थ शारीरिक और मानसिक कारण लगनेपर भिन्न भिन्न उपायसे चिकित्सा चलाना चाहिये।

“उन्मादी पतिके पूर्व” सं ह्वाने विरचनम्।

विचने कश्चि वाणिः पदोवस्त्रादिभक्षणः ॥” (चक्रपाणि)

वातिक उन्मादमें खेह्वान एवं विरेचन और पित्तज एवं कफजमें वमन कराने बाद खेह्वान, वस्त्र आधन तथा विरेचनके क्रमसे चिकित्सा होती है।

प्राचीन वैद्यगणके मतसे उपचार रोगकी तरह उन्मादकी चिकित्सा करनेसे भी निर्वाह हो जाता

• “कोहोके दो स्वतः कोने मातापामनचर्च वम्।

चतुर्मुखकोऽभिचवाते यत्र कतुर्मुखमम्।

वायुकोऽभिचवाते यत्र कतुर्मुखमम्।

यस्य ह्यदिचिरेव उन्मादः कोऽभिचवाति ॥” (हृदय)





“सन्धीनोन्मादनी च शीघ्रपक्षपनसया ।

समनयेति कामप पचवाचः प्रकीर्तितः ।”

(विकारचर्चः १११०)

उन्मादगजाङ्गुथ (सं० पु०) उन्मादाधिकारका एक रस, पागलपनकी एक दवा। कितना ही पारा ले धतूरे, ब्रह्मयष्टि और कुचिलेकी रससे ऊर्ध्वपातन करे। फिर उसमें बराबर गन्धक मिला बन्धनाये ताम्बज्जिका में रख भस्म पुट देना चाहिये। फिर उसको सम-भाग धुसूरीबीज, पञ्च, गन्धक एवं विषसे मिला तीन दिन घोटनेपर यह रस बनता है। (रसद्वयचर्चः) (त्रि०) २ चिलमें विभ्रम उत्पन्न करनेवाला, जो पागल बना देता हो।

उन्मादपर्ययदस (सं० पु०) उन्मादके अधिकारका एक रस, पागलपनकी एक दवा। कालेधतूरेकी पांख बीज मिलाकर जैत्रपर्पटीरस खिलानेसे उन्माद रोग दूर होता है। (रसद्वयचर्चः)

उन्मादमञ्जरस (सं० पु०) उन्मादके अधिकारका एक रस। त्रिकटु, त्रिफला, गजपिप्पली, विड़ङ्ग, देव-दाह, किरात, कटुकी, कण्टकारी, यष्टि, इन्द्रयव, चित्रक, बला, पिप्पली एवं वीरणाका मूल, योभाञ्ज-मका वोज, त्रिहता, इन्द्रवारुणी, वङ्ग, रुप्य, पञ्चक तथा प्रवालकी समभाग मिलाने और सबके बराबर लोह डालकर जलमें घोटनेसे यह रस तैयार होता है। (रसद्वयचर्चः)

उन्मादमञ्जिनी (सं० स्त्री०) उन्मादके अधिकारका एक रस। यह मनःशिलाका चूर्ण, संभव, कटुकी, वचा, शिरीषबीज, हिङ्गु, श्वेतसर्पप, करञ्जबीज, त्रिकटु और पारावतका मल बराबर बराबर कूटपौस गोमूत्रमें कूटलबीज जैसी वटिका बना छाया में सुखा ले। इसे सबरे, शाम और रातकी रगड़कर पांखमें भगानेसे उन्मादरोग दूर होता है। इस रसकी मधुरा-दिके रस और जलमें रगड़ना चाहिये। (रसद्वयचर्चः)

उन्मादवत् (सं० त्रि०) उन्माद-मत्पक्ष मस्य वः। उन्मात्, मतवाला, पागल।

उन्मादाङ्गारस (सं० पु०) शीघ्रधविशेष। तीन दिन धुसूरीबीजके द्राव, जलपिप्पलीके रस और कुचिलेकी

द्रावसे सूतका ऊर्ध्वपातन करे। फिर उसको बराबर कनकबीज, पञ्चक, गन्धक एवं विष डाल सबको तीन दिन घोटें। इस रसका बलमात्रा प्रयोग करना चाहिये। (मेघनरवावली)

उन्मादिन् (सं० त्रि०) उन्मात्, मतवाला, नशेबाज। उन्मादिनी (सं० स्त्री०) विजया, भांग।

उन्मादुक (सं० त्रि०) मादक द्रव्यका प्रेमी, जिसमें नशा पीनेका शौक हो।

उन्मान (सं० स्त्री०) उत्-मा भावे श्युट्। १ परि-माण, वजन।

“ऊर्ध्वपातनं द्वितीयान्नं परिमाणं चर्चतः ।

पागलपनं प्रत्यर्थं स्नात् सन्धा वाक्ता तु चर्चतः ॥” (वार्तिकचरिका)

काये श्युट्। २ श्लेष परिमाण, ३२ सेरकी एक पुरानी तोल। ३ मूल्य, कीमत।

उन्मार्ग (सं० त्रि०) उत्क्रान्ती मार्गात्। १ कुपय-गामी, बुरी राह जानेवाला। २ बुरी राह। ३ गड़ित् पाचरण, खराब चलन।

उन्मार्गगमन (सं० स्त्री०) चसत् पयावलम्बन, बुरी राहका जाना।

उन्मार्गगामिन् (सं० त्रि०) उन्मार्ग-गम-णिनि। चसदाचारी, बदचलन, जो बुरा काम करता हो।

उन्मार्गजलवाहिन् (सं० त्रि०) चपना पानी बिराह ले जानेवाला।

उन्मार्गवर्तिन्, उन्मार्गगामिन् द्वौ च।

उन्मार्गिन्, (सं० त्रि०) कुपय पकड़नेवाला, जो बिराह जाता हो।

उन्मार्गी (सं० पु०) पञ्चविधमें अन्यतम भगन्दर रोग। यह बवाबीरके शाय होता है।

उन्मार्जन (सं० स्त्री०) धर्षण, रगड़।

उन्मित (सं० त्रि०) परिमित, नापा-जोखा।

उन्मिति (सं० स्त्री०) उत्-मद-णिन्। परिमाण, माप-जोख।

उन्मिष (सं० पु०) उत्-मिष-क। १ प्रकोप, जड़र, चमक। २ विकार, खुलना।

उन्मिषत् (सं० त्रि०) चसु उद्घाटन करता हुआ, जो पांख खोल रहा हो।



उपकथा (सं० स्त्री०) पाठ्यायिका, कहानी।  
 उपकनिष्ठिका (सं० स्त्री०) उपगता कनिष्ठिकाम्।  
 अनामिका, सबसे छोटीके पासकी उँगली।  
 उपकन्या (सं० स्त्री०) उपगता कन्याम्। कन्याकी  
 सखी, बेटाकी सहेली।  
 उपकन्यापुर (सं० ग्रन्थ०) स्त्रीभवनके समीप, श्रीरतके  
 घरके पास।  
 उपकरण (सं० स्त्री०) उप-क-सुगट्। १ सामग्री, सामान्।  
 २ रानावा हस्तधामरादि विष्ट। ३ उपकार, भलाई।  
 उपकरणवत् (सं० द्वि०) सामग्रीयुक्त, सामान्से भरा  
 हुआ।  
 उपकरना (हिं० क्रि०) उपकार करना, फायदा  
 पहुँचना।  
 उपकर्ण (सं० ग्रन्थ०) कर्ण वा कर्णस्थ समीप,  
 'विमकर्ण्ये' सामीप्ये वा 'पश्ययीभावः। कर्णमें, कानके  
 पास।  
 उपकर्णिका (सं० स्त्री०) १ मृपकर्णिका, चूहाकानी।  
 २ क्षिबटन्ती, भफ्वाह, कानाफूसी।  
 उपकर्ण (सं० द्वि०) उप-क-ट-ट्। उपकारक, फायदा  
 पहुँचानेवाला।  
 उपकलाप (सं० ग्रन्थ०) कलापमें, कलापके निकट।  
 उपकल्प (सं० द्वि०) उपगतः कल्पम्। कल्पोपगत,  
 कल्पसे मिता हुआ।  
 उपकल्पन (सं० स्त्री०) उप-क-ल-प-णिच्-सुगट्। १ सम्पा-  
 दन, बनवाई। २ आयोजन, तैयारी।  
 उपकल्पित (सं० द्वि०) १ आयोजित, तैयार किया  
 हुआ। २ सम्पादित, बनाया हुआ।  
 उपकादि—पानिनिका, कहा हुआ एक गण। इसमें  
 निम्नलिखित शब्द पड़ते हैं—उपक, लमक, अष्टक,  
 कपिष्ठल, कृष्णाजिन, कृष्णसुन्दर, चूड़ारक, पाडारक,  
 पडक, उदह, सुधायुक्त, भवन्तक, पिष्टलक, पिष्ट,  
 सुपिष्ट, मयूरकर्ण, खरीजह, शलाखल, पतञ्जल,  
 पटञ्जल, कठेरिण, कुपोतक, कागल्लस, निदाघ,  
 कलशोकण्ड, दामकण्ड, कृष्णपिष्टल, कर्णक, पण्यक,  
 लटिलक, वधिरक, जन्तुक, अनुसोम, अनुपेद, प्रति-  
 सोम, अल्पजग्ध, प्रतान, अनभिहित, कमक, गटारक,

लेखास्त्र, कमन्दक, पिष्टलक, वर्णक, मयूरकर्ण,  
 मदाघ, कवन्तक, कमन्तक, कदामन, दामकण्ड।  
 उपकादिभ्योऽन्तरस्यामश्चे । ता राधा ६८।  
 उपकान्त (सं० ग्रन्थ०) कान्तके समीप, दास्तके  
 पास।  
 उपकार (सं० पु०) उप-क भावे घञ्। १ साहाय्य,  
 मदद। २ अनुग्रह, मेहरबानी। ३ उपकरण, सामान्।  
 ४ विकीर्ण कुसुमादि. नटकाये हुये फूल वगैरह।  
 उपकारक (सं० द्वि०) उप-क-खुन्। उप-  
 कारकर्ता, भलाई करनेवाला।  
 उपकारकाल (सं० स्त्री०) साहाय्य, मदद, भलाई।  
 उपकारपर (सं० द्वि०) उपकारक, भलाई कर-  
 नेमें मेहनत उठानेवाला।  
 उपकारायकार (सं० पु०) साहाय्य तथा आपद,  
 भलाई-बुराई।  
 उपकारिका (सं० स्त्री०) उप-क-खुन्-टाप् घत  
 इत्वम्। १ उपकारकर्त्री, भलाई करनेवाली।  
 २ विष्टकमेद, किसी किसीकी रोटी या पूड़ी।  
 ३ कुशुल, कोठला। ४ राजभवन, गाड़ी महल।  
 उपकारिता (सं० स्त्री०) साहाय्य, मदद।  
 उपकारिन् (सं० द्वि०) उपकार करनेवाला, जो  
 फायदा पहुँचाता हो।  
 उपकार्य (सं० द्वि०) उप-क-खुन्। १ उपकार  
 किये जाने योग्य, जो भलाई किये जानिके काबिल हो।  
 उपकार्या (सं० स्त्री०) १ राजभवन, गाड़ी महल।  
 २ कुशुल, अन्न रखनेका पिरा।  
 उपकाल (सं० पु०) एक नागराज।  
 उपकालिका (सं० स्त्री०) १ जोरकमेद, किसी  
 किसीका जीरा। २ खेतजोरक, घफेद जीरा। ३ कृष्ण-  
 जोरक, काला जीरा। ४ कनोचोर्जोरक, कुनोर्जम।  
 ५ पिप्पली, पोपल।  
 उपकीचक (सं० पु०) विराट् राजाके श्मशानक,  
 कीचकके अनुज।  
 उपकीर्ण (सं० द्वि०) सिक्त, लिहका हुआ, जो  
 भरा हो।  
 उपकुक्ष (सं० पु०) कृष्णजोरक, काला जीरा।



११ उपस्थिति, पङ्ख। १२ वेदारम्भ करनेका संस्कार। विशेष। १३ मित्र या सभासदके पासकुछकी परीक्षा।  
 उपक्रमण (सं० क्लो०) उप-क्रम भावे च्युट्।  
 १ पारम्भ करण, शुरु। २ चिकित्सा, इलाज।  
 उपक्रमणिका (सं० स्त्री०) भूमिका, तमझोद।  
 किसी वाद्व्य विषयके लिखनेसे पूर्व संक्षेपमें जो परिचय दिया जाता, वह उपक्रमणिका कहलाता है।  
 उपक्रमणीय (सं० स्त्री०) उप-क्रम-भनोयर्।  
 शुरु किये जानेंके काविल। २ चिकित्सा-सम्बन्धीय, इलाजसे सरोकार रखनेवाला।  
 उपक्रमितव्य (सं० त्रि०) पारम्भणीय, शुरु किये जाने काविल।  
 उपक्रमित (सं० त्रि०) पारम्भ करनेवाला, जो शुरु करता हो।  
 उपक्रान्त (सं० त्रि०) उप-क्रम-त। १ पारम्भ, शुरु किया हुआ। २ विस्तृत, पैला हुआ।  
 उपक्राम्य (सं० त्रि०) चिकित्सनीय, इलाज किये जाने काविल।  
 उपक्रिया (सं० स्त्री०) उप-क्र भावेश। १ उपकार, एहसान, भलाई। २ कार्य, काम, नौकरी।  
 उपक्रोड़ा (सं० स्त्री०) क्रोड़ान्मि, खेलकी जगह।  
 उपक्रुष्य (सं० ध्व०) निन्दावाद करके, झिड़ककर।  
 उपक्रोध (सं० पु०) उप-क्रुष-घञ्। १ निन्दा, झिड़कारत, बदनामी। (त्रि०) २ आसन्नक्रोध, कोसा हुआ।  
 उपक्रोशक (सं० त्रि०) १ निन्दाकारक, झिड़कारत करनेवाला। (पु०) २ गर्दभ, गधा।  
 उपक्रोशन (सं० क्लो०) निन्दावाद, बदनामी करनेका काम।  
 उपक्रोष्ट (सं० पु०) उप-क्रुष-घञ्। १ गर्दभ, गधा। २ निन्दक, झिड़कारत करनेवाला।  
 उपक्रोश (सं० पु०) उप-क्रिग-घञ्। मदादि, नया बगैरह।  
 उपक्रव्य (सं० पु०) उप-क्रव्य-घञ्। कचो कोबाघ। शशपरा। बीषानिनाद, तम्बूर या भरवतकी आवाज।  
 उपक्रस (सं० पु०) कौटविरुप, एक कोड़ा।  
 उपचय (सं० पु०) उप-चि-घञ्। १ अपचय, मुन-

सान्। २ निवाससमीपादि। (त्रि०) चयमुपगतः।  
 ३ चयप्राप्त, विगड़ा हुआ।  
 उपचिन्त् (सं० त्रि०) उप-चि-क्लिप्। १ पचिवासी, पड़ोसी, नजदीक रहनेवाला। २ संसन्, चिपटा हुआ।  
 उपचीण (सं० त्रि०) उप-चि-ल, तस्य नः दीर्घ।  
 हानिग्रस्त, सड़ा-गला।  
 उपचेष्ट (सं० त्रि०) पचिवासी, पड़ोसी, पास पाने-वाला। (भाव्य)  
 उपचेष (सं० पु०) उप चिप भावे घञ्। १ भासेप, लस्य। २ निकट-निचेष, पास फेंकनेका काम।  
 ३ काव्यालङ्कार विधेय।  
 उपचेषण (सं० क्लो०) उप-चिप-लुगट्। १ निचेष, फेंकफांक। २ शूद्रसामिक पच विधके घर पाक करनेको समर्पण।  
 उपखात (सं० ध्व०) खातके समीप, खाड़ीमें।  
 उपखान (हिं०) उपखान देखा।  
 उपग (सं० त्रि०) उप-गम-ङ। १ उपगत, पास आया हुआ।  
 - "शेषः उपगच्छान्ता बहुवचनोपगतः।" (मृ ११६)  
 २ उपगन्ता, पास जानीवाला। यह शब्द समासके अन्तमें आता है।  
 उपगत (सं० त्रि०) उप-गम-ञ्। १ सोऊत, मचूर किया हुआ। २ उपस्थित, हाजिर। ३ प्राप्त, समझा हुआ। ४ प्राप्त, पहुँचा या मिला हुआ। ५ घमल, यका हुआ। ६ क्षतमेयुन, ग्रहवत किये हुआ। ७ संहित। ८ खल, गुजरा हुआ। (क्लो०) ९ प्राप्ति, पहुँच। १० प्राप्तिपूर्वक पच, रसोद।  
 उपगतवत् (सं० त्रि०) १ गमन करनेवाला, जो पहुँच गया हो। २ अधिकारी, कब्जा रखनेवाला। ३ भीता, मालूम करनेवाला। ४ लोकार करनेवाला, चीनहार।  
 उपगति (सं० स्त्री०) उप-गम-क्लिप्। १ प्राप्ति, पहुँच। २ ज्ञान, समझ। ३ लोकार, मचूर। ४ पासङ्ग, लगाव।  
 उपगन्तु (सं० त्रि०) उप-गम-घञ्। १ लोकारकारी,

मधुर करनेवाला। २ प्राप्त करनेवाला, जो या गया हो। ३ प्राप्ता, समझ जानेवाला।

उपगम (सं० पु०) उप-गम-घप्। १ पङ्गीकार, मधुरी। २ निकटगमन, पहुँच। ३ प्राप्त, समझ। ४ पासति, लगाव। ५ प्राप्ति, याफूत।

उपगमन (सं० स्त्री०) उप-गम भावे ष्यट्। उपरम देवा। उपगम्य (सं० द्वि०) १ निकट जाने योग्य, मिलने काहिल। (घञ्) २ निकट जाकर, पहुँचने।

उपगमन (सं० पु०) ऋषिभेद। (भारत पाद ३५०) उपगा (सं० पु०) उप-गै-लिप्। १ यज्ञमें गानेवाला एक ऋत्विग्। (स्त्री०) भावे षञ्। २ उपगान।

उपगाढ (सं० पु०) उप-गं-डव्। यज्ञस्वरुमें उद्-गाताके समीप गानेवाला एक ऋत्विग्।

“उपगतिरुद्गाता विरं देवा उपगताः।” (अथर्वणः ४/१५१)

उपगामिन् (सं० द्वि०) निकट उपस्थित होनेवाला, जो पास पा रहा हो।

उपगिर (सं० घञ्) पर्यंतपर, पहाड़के ऊपर। उपगिरि (सं० घञ्) गिरिः समीपस्थ। १ पर्यंत समीप, पहाड़के पास। (पु०) २ देख विधेय, एक पहाड़ी सुस्त।

“सर्वे उपगिरिर्विष्वे विविधे पुनर्वर्णः।” (भारत वन २६०/५०)

उपगीत (सं० द्वि०) कवियों द्वारा गाया हुआ, जो गाया-बजाया गया हो।

उपगीति (सं० स्त्री०) छन्दोविधेय, एक प्रकारका भार्या छन्द। इसमें चार पाद होते हैं। सममें चारह और विषम पादमें पन्द्रह मात्रा लगती हैं।

“सर्वे गीतिरुद्गाता विरं देवा उपगताः।” (अथर्वणः ४/१५१)

उपगीतारि दन्वोदपरीतिं सो ऋत्विग्।” (अथर्वणः ४/१५१)

उपगीय (सं० घञ्) गान करके, गा-बजाकर। उपगीयमान (सं० द्वि०) गान किया जानेवाला, जो गाया-बजाया जाता हो।

उपगु (सं० पु०) १ राजविधेय। २ सत्वरयिके पुत्र थे। (निघ्नः १/१/१२) (घञ्) २ मोक्षे समीप, गायके पास। (द्वि०) १ प्राप्तकरिषादि।

उपगुप्त (सं० द्वि०) १ गुप्त, पोषीदा, जो छिप गया हो। (पु०) २ एक बीज सिद्ध पुष्ट। बीज

इन्हें ‘गुप्तबीज’ कहते थे। ये जातिके मृद रहे। समदम वर्षके वृष्टिक्रम कालपर इन्होंने सञ्चालन किया और योगवशसे कामकी विज्ञप्ति तथा समाधि-कालमें बुद्धदेवका दर्शन किया था। बुद्धनिर्वाणके एक गतवर्ष बाद कालाशोकके समय ये विद्यमान रहे। बौद्धोंका प्रथम महासाहित्य सम्प्रदाय उपगुप्तके ही समय चला। इन्होंने मयूरामें एक स्तूप बनवाया था। बौद्धसत्त्वावदानकल्पनाके मतसे इन्होंने मद्य-राके प्राय १८ लक्ष लोगोंको बौद्ध धर्ममें दीक्षित किया। (उपगुप्तवदान)

उपगुप्तविष (सं० द्वि०) गुप्त विषजबुद्ध, द्विषा दीक्षित रखनेवाला।

उपगुह (सं० पु०) १ सहायक गुह, मददगार उस्ताद। २ राजविधेय।

उपगूठ (सं० द्वि०) उप-गुह-ङ्। १ पालित, लिपटाया हुआ। २ गुप्त, पोषीदा। ३ निपन्नित, दबाया हुआ। (स्त्री०) भावे ण्। ४ पालित, हमामोषी। “विद्यालयोऽस्य गूठमवधत्।” (भाष)

उपगूढवत् (सं० द्वि०) पालित करनेवाला, जो छातीसे लगा चुका हो।

उपगूहन (सं० स्त्री०) उप-गूह-क्यट्। पालित, हमामोषी।

उपगीय (सं० द्वि०) गान करने योग्य, गाने-बजाने या मनानेके काहिल।

उपगोष्ठ (सं० द्वि०) उप-गुह-स्थप्। १ पालित-योग्य, निपटानेके काहिल। २ पाद, लेने लायक।

उपगन्धि (सं० पु०) पत्रके किमो घन्धिपर निब-धनेवाली गाँठ।

उपपह (सं० पु०) उप-पह-घप्। १ बन्दी, कैदी। २ बन्धन, कैद। ३ उपयोम, रक्षा साज। ४ अनुपह, मिष्टरवानी। ५ सन्धि विधेय, किमो फिखकी सुलह। यह कुछ देकर की जाती है। ६ कुगममूह। ७ श्लोतिपौष्ठ पक्षके तुल्य स्वरुप करनेवाला श्लोति-पदार्थ, राहु केतु प्रभृति।

“दन्मन्तु वरुणं विषमं देवं रिपुं च धर्तारम्।

एतन्नामनं बीजं धर्तारं चतुर्दशम्।”

केतुपदादम् भोजमुक्ता खाद्विंशतिः ।

शविंशतिमे कल्पयत्येव च वचम् ॥

निर्णय चतुर्विंशतुक्ता चतुष्पादः ।” (जीतिप्रसङ्ग)

सूर्याक्रान्त नक्षत्रसे पञ्चम विद्युत्सूत्र, षष्ठम शून्य, चतुर्दश सप्तपात, षष्ठादश केतु, एकविंशति सक्ता, द्वाविंशति कल्प, त्रयोविंश वष्य और चतुर्विंश निघात नामक नक्षत्र—सब आठ उपपद्य होते हैं ।

कर्मणि घञ् । ८ काराकृत्, कौर्दने पड़ा हुआ । उपपद्यङ्ग (सं० स्त्री०) उप-पद्य-ञ्युट् । निकटवै ग्रहण, नजदीककी सेवायो । २ खीकार, मज्ज, री । ३ संस्कारपूर्वक वेदका ग्रहण वा अध्ययन । ४ यन्त्रादि साधक आधारकरण ।

‘न सदेन वैदीपयः ।’ (कर्काचार्य)

“द्विष्यहसरास सागरस्य हसत्यस्य हसकस्यादिना हस्यवाच्य वराधः” हस्यहसद्वीतयेदीनाचारवरपसुनपुन्यवसुपते ।”

(जातीय जीतप्रसङ्गमे कर्काचार्य ११०६)

उपपाद्य (सं० पुं०) उप-पद्य-णिच्-भच् । १ उप-दौकन, भेंट । कर्मणि घञ् । २ उपहारस्वरूप दिया जानेवाला वस्तु, जो खोज नजर की जाती हो ।

“उपायपातुपपाङ्गम् राज्ञिः प्राथितान् वदन् ।” (भारत-सभा ५१ च०)

‘उपपाङ्गम् उपहारम् ।’ (नीलकण्ठ)

उपपाद्य (सं० स्त्री०) उप-पद्य-णिच्-यत् । १ समीप स्थाकर रखने योग्य, जो नजर किये जाने काविल हो । (पुं०) २ उपदौकन, भेंट ।

उपघात (सं० पुं०) उप-घन्यते घनेन, उप-घन करणे घञ् । १ रोग, बीमारी । २ विनाश, बर-बादी । ३ कर्मकी चयोज्यताका सम्पादन ।

“काश्चिन्ने रघातान्ननिमित्तं नास्तीति दितिः ।

उपघातमघातान् न चादिस्तीति रघति ॥” (मीमांसाकारिका)

४ अपकार, बुराई । (मनु ११०८) ५ इन्द्रियगमक निज कार्य उत्पादनकी सक्षमता, नाताकृती, कमजोरी । ६ पापस्त्रह । ७ जीमभेद ।

“चरी तु नृदेवकी वीमः खादुवचामव ।” (अथीमपरिचिह्न)

उपघातक (सं० स्त्री०) उप-घन-ञ्युञ्ज् । १ नाशक, बरबाद करनेवाला । २ पीड़क, तकसीफ देनेवाला । ३ अनिष्टकारक, बुराई करनेवाला ।

“अथ शङ्ख न शोभाति मृत्ना चवीपवातकः ।” (भारत-पार ८ च०)

(पुं०) ४ आरग्वध हस, नट नीरा ।

उपघाती, उपपद्य देखो ।

उपघुष्ट (सं० स्त्री०) मग्दायमान, मूँजता हुआ ।

उपघोषण (सं० स्त्री०) घोषणा, टिंटारा, जाहिर करनेकी बात ।

उपघ्न (सं० पुं०) उप-घन सजयें क । उपघ्न वाच्य । वा ११०८ । १ निकटायय, पासका सहारा ।

“क्षिप्रदिशेपघ्नतीर्षन्त्यो ।” (रघु)

२ समीपस्थ पित्रामागार, जो ठहरनेकी जगह पास हो हो । ३ शायय लेनेवाला, जो सहारा पकड़े हो ।

उपघ्न (सं० स्त्री०) उप-घ्ना-ङ । सम्यस्योय, सरोकार रखनेवाला ।

उपघ्न (हिं०) उपघ्न देखो ।

उपघ (सं० स्त्री०) उपचिनोति, उप-चि-ङ । चक्ष-मापपिटक मिश्रित, जिसमें उड़दना चाटा याड़ा मिला हो । (चतुष्यन्ता ११११०८)

उपचक्र (सं० पुं०) चक्रवाक पक्षिचिप्य, चकोर । चक्रवाक देखो । इसका मांस लहू, हृद्य, उष्णवीर्य, पाकमें कटु और बल तथा अग्नि बढ़ानेवाला होता है । (पञ्चतन्त्र) उपचक्षुः (सं० स्त्री०) १ दिव्यचक्षु, चक्षमा । (अथ०) २ चक्षुके समीप, पाँखके पास ।

उपचतुर (सं० स्त्री०) प्रायः चार, करोब चार ।

उपचय (सं० पुं०) उप-चि-भच् । १ हृदि, वदुती । २ उदति, तरङ्गो । (भाष ११६) ३ आधिश्व, व्यादतो । ४ पुष्टि, मज्जुतो । ५ ममूह, झुण्ड । ६ चंपद, सुनाव । ७ ज्योतिषोक्त सम्मसे छतीय, पङ्क, दयम और एकादश स्थान ।

उपचयमवन (सं० स्त्री०) दण्डकहस्तभेद, एक चन्द ।

उपचयावचय (सं० पुं०) हृदि और डाढ़, बदती-घटती, नफा-नुकसान ।

उपचर (सं० पुं०) उप-चर-भच् । १ प्राप्ति, पहुँच ।

२ उपचार, दवाजीरी । उपचर देखो । (स्त्री०) चरख समीपम् । ३ दूतका सामीप्य, एतदीका पहुँच । (अथ०) ४ दूतके समीप, एतथोके पास ।



मञ्जूर करनेवाला । २ प्राप्त करनेवाला, जो पा गया हो । ३ प्राप्ता, समझ जानेवाला ।

उपगम ( सं० पु० ) उप-गम-घप् । १ पङ्गीकार,

मञ्जूरी । २ निकटगमन, पहुँच । ३ प्राप्ति, समझ ।

४ पासपट्टि, लगाय । ५ प्राप्ति, याकृत ।

उपगमन ( सं० स्त्री० ) उप-गम भावे क्यट् । उपगम देखा ।

उपगम्य ( सं० वि० ) १ निकट जाने योग्य, मिलने काबिल । ( घञ्० ) २ निकट आकर, पहुँचने ।

उपगमन ( सं० पु० ) उप-गमिन् । ( भाग्य चरि ७५० )

उपगम ( सं० पु० ) उप-गमि-कृप् । १ यज्ञमें गानेवाला

एक ऋत्विग् । ( स्त्री० ) भावे घञ् । २ उपगमन ।

उपगम्य ( सं० पु० ) उप-गमि-कृप् । यज्ञस्थलमें उद्-

गाताके समीप गानेवाला एक ऋत्विग् ।

“हव्यतिहरतावा रिचं देवा उपगमातः ।” ( ऋग्वेदः १०/१५१ )

उपगमिन् ( सं० वि० ) निकट उपस्थित होनेवाला, जो पास या रहा हो ।

उपगिर ( सं० घञ्० ) पर्यंतपर, पहाड़के ऊपर ।

उपगिरि ( सं० घञ्० ) गिरिः समीपस्थ । १ पर्यंत समीप, पहाड़के पास । ( पु० ) २ देग विशेष, एक पहाड़ी सुस्त ।

“तर्षी शीतवर्षाचं विविधं पुरवर्षं भः” ( भाग्य चरि ११०/५० )

उपगीत ( सं० वि० ) कवियों द्वारा गाया हुआ, जो गाया-बजाया गया-हो ।

उपगीति ( सं० स्त्री० ) छन्दोविशेष, एक प्रकारका चार्या छन्द । इसमें चार पाद होते हैं । सममें चारद और विषम पादमें पन्द्रह मात्रा लगती हैं ।

“चारो द्वितीयाचं बहुद्वितीयं चत्वारं तन्म स्तान् ।

पदमन्त्रसि दक्षमोषधोति सो सुनिर्गमे ।” ( उपरखावर )

उपगीय ( सं० घञ्० ) गान करके, गा-बजाकर ।

उपगीयमान ( सं० वि० ) गान किया जानेवाला, जो गाया-बजाया जाता हो ।

उपगु ( सं० पु० ) १ राजविशेष । ये सत्वरयिके पुत्र थे । ( विश्वः १०/११ ) ( घञ्० ) २ गोकु के समीप, गावके पास । ( वि० ) ३ प्राप्तिकरवादि ।

उपगुप्त ( सं० वि० ) १ गुप्त, पोखीदा, जो छिप गया हो । ( पु० ) २ एक बौद्ध सिद्ध पुद्गल । बौद्ध

इन्हें ‘वलसंस्कृत बुद्ध’ कहते थे । ये सात्विके शूद्र रहे । सप्तदश वर्षके वयस्कम कामपर इन्होंने सङ्ग्राम लिया और योगवर्धने कामको विजय तथा समाधि-काममें बुद्धदेवका दर्शन किया था । बुद्धनिर्वाणके एक गतवर्ष बाद कासाशोकके समय ये दिष्टमान रहे । बौद्धोंका प्रथम महासाहसिक सम्प्रदाय उपगुप्तके ही समय चला । इन्होंने मयूरामें एक स्तूप बनवाया था । बोधिसत्त्वचदानकल्पनाके मनमें इन्होंने सप्त-राके प्राय १८ लक्ष लोगोंको बौद्ध धर्ममें दीक्षित किया । ( उपगुप्तचरितम् )

उपगुप्तवित्त ( सं० वि० ) गुप्त विभवयुक्त, हियाँ दीक्षित रखनेवाला ।

उपगुह ( सं० पु० ) १ सहायक गुह, मददगार उस्ताद । २ राजविशेष ।

उपगूढ ( सं० वि० ) उप-गुह-ञ् । १ धातुहित, लिपटाया हुआ । २ गुप्त, पोखीदा । ३ नियन्त्रित, दबाया हुआ । ( स्त्री० ) भावे ण । ४ धातुहित, हमसंगीही । “विनाभावो ह्युपगुहमन्त्रः ।” ( भाग्य )

उपगूढवत् ( सं० वि० ) धातुहित करनेवाला, जो कानोसे लगा चुका हो ।

उपगूहन ( सं० स्त्री० ) उप-गूह-क्यट् । धातु-हित, हमसंगीही ।

उपगोय ( सं० वि० ) गान करने योग्य, गाने-बजाने या मनानेके काबिल ।

उपगोह्य ( सं० वि० ) उप-गूह-क्यट् । १ धातुहित-योग्य, लिपटानेके काबिल । २ ग्राह्य, लेने लायक ।

उपगन्धि ( सं० पु० ) पङ्कके किसी गन्धिपर निक्षेपनेवाणी गाँठ ।

उपपङ्क ( सं० पु० ) उप-पङ्क-घप् । १ बन्दो, कंदी । २ बन्धन, कंद । ३ उपयोग, इर्लो भाग । ४ पशुपङ्क, मिश्रवाणी । ५ सन्धि विशेष, किसी किछकी सुनह । यह कुछ देकर की जाती है । ६ कुगममूह । ७ ज्योतिषोक्त पङ्कके तुल्य भ्रमव करनेवाला ज्योतिःपदार्थ, राहु केतु प्रभृति ।

“हृत्मान् पङ्कमं विषं च कुरु विपुलं कानिचन ।

द्वयचरान्ते हीनं कश्चित् पशुं वदन् ।”

“देगुलादम् शीतलका आदिहविशतिः ।

“हविशतिलम् कल्पय्योविशय भवकम् ॥

निर्वातव चतुर्विंशमुक्त्वा पठावपादः ॥” (जीतिषात्)

सूर्यास्तान्त नक्षत्रसे पञ्चम विद्युन्मुख, षष्ठम शून्य, चतुर्दश सन्निपात, अष्टादश केतु, एकविंशति सल्का, हविशतिल कल्प, चयोविंश वष्य और चतुर्विंश निघात नामक नक्षत्र—सब आठ उपग्रह होते हैं ।

कर्मणि घञ् । ८ काराहृह, कौटम् पड़ा हुआ । उपग्रहण (सं० क्री०) उप-ग्रह-लुट् । निकटसे ग्रहण, नजदीकको लेवाया । २ खीकार, मन्त्र, री । ३ संस्कारपूर्वक वेदका ग्रहण वा अध्ययन । ४ यज्ञादि साधक आधारकरण ।

“न सवेन विदीपयः ।” (कर्वाचार्य)

“हविषहृहसास साग्राको हृहयका हृहयन्मादिवा कन्दवावर वरबाः कन्दहसमूहीतवेदीनावारकचतुर्ग्रहचमुच्यते ॥”

(कातीय शीतलपामो कर्वाचार्य १११५६)

उपग्राह (सं० पु०) उप-ग्रह-णिच्-भच् । १ उप-टोकर, भेंट । कर्मणि घञ् । २ उपहारस्वरूप दिया जानीवाला वस्तु, जो चोज नजर की जाती हो ।

“उवाचवातुपवाकान् राजभिः प्रापितान् वचनम् ॥” (भारत-उवा ५१ च०)

“उपवाकान् उपग्राहान् ॥” (नीलकण्ठ)

उपग्राह्य (सं० क्री०) उप-ग्रह-णिच्-यच् । १ समीप साकर रखने योग्य, जो नजर किये जाने काविष हो । (पु०) २ उपटोकर, भेंट ।

उपघात (सं० पु०) उप-हन्त्यते घनेन, उप-हन करणे घञ् । १ रोग, बीमारी । २ विनाश, बर-बादी । ३ कर्मकी अयोग्यताका सम्पादन ।

“बाधिनो रघातमानमिति बाधोऽपि दिमिवः ।

उपघातवधानात् न बाधिनोऽपि रघति ॥” (मीमांसाकारिका)

४ अपकार, बुराई । (अत ११०८) ५ इन्द्रियगणके निज कार्य उत्पत्तादनकी अवसता, आताकती, कमजोरी । ६ पापसह । ७ होमभेद ।

“अरी तु हृदयदीप्योऽयः आदुष्यतावत् ॥” (अद्वैतपरिचित)

उपघातक (सं० क्री०) उप-हन-लुक् । १ नाशक, बरबाद करनेवाला । २ पौष्टक, तकलीफ देनेवाला । ३ अनिष्टकारक, बुराई करनेवाला ।

“अथ यत् न मुनीनामि मूला धर्मविशतकः ॥” (भारत-पार २ च०)

(पु०) ४ आरग्यवृद्ध, लट नीरा ।

उपघाती, उपग्रह देको ।

उपघुष्ट (सं० क्री०) अश्र्वायमान, मूर्जता हुआ ।

उपघोषण (सं० क्री०) घोषणा, टिंटारा, जाहिर करनेकी बात ।

उपग्र (सं० पु०) उप-हन घञ्ये क । उपग्र बाधणे । वा शाश्वत् । १ निकटावय, पासका सहारा ।

“वेरादिघोषघातोर्यं तयो ॥” (१४)

२ समीपस्थ विश्रामागार, जो ठहरनेकी जगह पास हो हो । ३ आश्रय लेनेवाला, जो सहारा पकड़े हो ।

उपग्र (सं० क्री०) उप-ग्रा-ड । सम्यन्ध, सरोकार रखनेवाला ।

उपहृ (हिं०) उवाह देको ।

उपच (सं० क्री०) उपचिनोति, उप-चि-ड । पक्ष-मापपिष्टक मिश्रित, जिसमें उड़ना पाटा थाड़ा मिला हो । (अतयका १११११०)

उपचक्र (सं० पु०) चक्रवाक पक्षिजिमेप, चक्रोर । चक्रवाक इको । इसका मांस लघु, हृद्य, लघुबोय, पाकमें कट और बल तथा अग्नि बढ़ानेवाला होता है । (पात्रनिच्य)

उपचक्षुः (सं० क्री०) १ दिव्यबल, अयमा । (अव्य०) २ चक्षुके समीप, पांखके पास ।

उपचतुर (सं० क्री०) प्रायः चार, करोब चार ।

उपचय (सं० पु०) उप-चि-प्रच् । १ वृद्धि, बढ़ती । २ उन्नति, तरकी । (अत १११६) ३ आधिक्य, ज्यादाती । ४ पुष्टि, मजबूती । ५ समूह, क्लृप्त । ६ संपन्न, सुनाव । ७ क्योतिप्राप्त समवे दतीय, पठ, दयम और एकादय स्थान ।

उपचयमवग्न (सं० क्री०) दण्डकृत्तमेद, एक दण्ड । उपचयावचय (सं० पु०) वृद्धि और प्राप्ति, बढ़ती-घटती, मन्दा-लुक्स्थान् ।

उपचर (सं० पु०) उप-चर-प्रच् । १ प्राप्ति, पङ्च । २ उपचार, जाजिरी । उपचर इको । (क्री०) चरस्य समीपम् । ३ दूतका सामीप्य, एतबीबा पहुंच । (अव्य०) ४ दूतके समीप, एतबीके पास ।

उपचरण (सं० स्त्री०) निकटमें गमन, नजदीकका जाना ।

उपचरित (सं० त्रि०) उप-चर-ण । १ पाराधित, मनया या हाजिरी सजाया हुआ । २ लक्षण द्वारा बोधित, पारस्परिक समझा हुआ ।

उपचरम् (सं० पञ्च०) उप-चर-मन् चय्ययीभावात् टच् । अष्टाध्यायीप्रमाणः । वा ४।१।०८ । १ चरम्के समीप, चमड़ेके पास । (त्रि०) २ चर्मोपगत, चमड़ेमें लगा हुआ ।

उपचर्य (सं० त्रि०) उप-चर कर्मणि यत् । १ सेवनीय, विदमत किये जाने का विल ।

“उपचर्य” शिवा साध्या सुतः ईश्वरं प्रति ।” (मनु ३।१४४)

(पञ्च०) २ उपस्थित हो या पहुँचकर । ३ छोड़ोंकी दलमलके ।

उपचर्या (सं० स्त्री०) उप-चर-क्यप्-टाप् । १ चिकित्सा, इलाज । २ परिचर्या, विदमत ।

उपचायिन् (सं० त्रि०) उपचिनोति, उप-चि-णिनि । वृद्धिकारक, बढ़ानेवाला, जो अच्छी हालतमें हो ।

उपचाय्य (सं० पु०) उप-चोयते-भिरत्, उप-चि-निपातने प्यत् । १ चोरीपरिचालनकार्यवाला ; वा ४।१।११ । १ यशस्वि । २ वेदी ।

उपचार (सं० पु०) उप-चर-घञ् । १ चिकित्सा, इलाज । २ सेवा, विदमत । ३ व्यवहार, चालचलन । ४ उत्कीर्ण, रिश्वत । ५ परकी तुष्टिके लिये मिथ्या कथन, दूसरेकी राज्जी रखनेके लिये भूठ बोलना ।

“उपचारपद्मं न वेदिदं नामनः कथमथा प्रति ।” (कुमार ३।८)

६ धर्मातुलान, मज्जवी काम । ७ पूजाके उपयोगी द्रव्यका सेद । यह कटारट्ट प्रकारका होता है— १ पासन, २ स्वागतमय, ३ पाद्य, ४ चर्य, ५ पाच-मनीय, ६ स्नान, ७ वस्त्र एवं उपवीत, ८ भूयस्पादि, ९ गन्ध, १० पुष्प, ११ धूप, १२ दीप, १३ पत्र, १४ तर्पण, १५ माला, १६ अनुसेपन, १७ गमस्कार और १८ विसर्जन । तत्संसारके मतमें १४ प्रकारका उपचार उद्धरता है ।

८ व्याप मतमें—सहचरणादिके निमित्त सभी मात्रमें सेवा ही अभिधान । (मनु १०।१४) ८ स्नान, सम्राट् । (मनु १०।१४)

१० सचच द्वारा चर्यबोध, चामार देखकर मतस्रका समझना । ११ द्रव्य, बोका । १२ स्नान, इच्छा । १३ सत्ता, सजावट । १४ व्याकरणानुसार—विशेष स्थानमें सकार वा रकारका आदेश । १५ सामयेदका परिग्रहित विधेय ।

उपचारक, उपचारकर देखो ।

उपचारकरण (सं० स्त्री०) १ उपडोकनदान, भेंटका चढ़ाव । यह प्रधानतः गन्धपुष्पादि द्वारा किया जाता है । २ ध्यान, मुद्रान ।

उपचारकर्मन्, उपचारकर देखो ।

उपचारक्रिया . (सं० स्त्री०) उपचारकर देखो ।

उपचारण्य (सं० स्त्री०) न्यायमतमें—उपचार्य प्रयोगसे चर्यका निराकरण, गलत इस्तीमालसे मागीका न मानना ।

“कर्मनिचल्लिखितं न विवक्ष्यतेति चेत् उपचारण्यम् ।” (दीनपद्म १।१४)

उपचारना (सं० त्रि०) उपचार करना, बरतना ।

उपचारपर (सं० त्रि०) दृढ़ सेवक, पूरी विदमत करनेवाला ।

उपचारपरिभ्रष्ट (सं० त्रि०) कठोर, बिरहम, जो सभ्य या गायस्ता न हो ।

उपचारिन् (सं० त्रि०) सेवक, विदमतगार ।

उपचार्य (सं० पु०) उप-चर भावे प्यत् । १ चिकित्सा, इलाज । २ सेवा, विदमत । (त्रि०) १ सेवनीय, विदमत किये जाने लायक । २ चिकित्सुप्रयोग, जो इलाज किये जाने का विल हो ।

उपचिकीर्षा (सं० स्त्री०) उप-ल-सन्-च । वा ४।१।०८ । कर्मणः कर्ता कर्मणि कर्तृत्वात् वा । १।१० । चरमकात् । वा ४।१।०८ । उपकार करनेकी इच्छा, दूसरेकी तकलीफ, मिटानेकी खाँहश ।

उपचिन्त (सं० स्त्री०) देशवर्धकरोम विधेय, सुजन ।

“उपचितः कथमुपचिन्तयति ।” (शांख्यवेदान्तमें कठोर १।१४)

उपचित (सं० त्रि०) उप-चि-ण् । १ समृद्ध, बढ़ा हुआ । २ निम्न, सजा हुआ । ३ सेवनादि द्वारा वर्धित, जो सेपन वगैरहसे बढ़ गया हो । ४ समाहित, इकट्ठा किया हुआ । ५ गणित, जोड़ा हुआ । ६ रचित, बनाया हुआ । ७ दण्ड, लका हुआ ।

उपचित्रस ( सं० त्रि० ) रागमें छद्मिप्राप्त, जोयमें बड़ा हुआ ।

उपचित्रि ( सं० स्त्री० ) उप-चि-त्रिन् । १ छद्मि, बदती । २ उदति, तरङ्गी । ३ संघट्ट, डेर ।

उपचित्रिन्त ( सं० पु० ) प्राणीयःके एक पुंवका नाम ।

उपचित्र ( सं० स्त्री० ) १ समस्तचरणं छन्दोवृत्तभेद ।

“उपचित्रमिदं सप्तधाह्वी ।” (हररत्ना०) २ अर्ध-समवर्णवृत्तभेद ।

“विचित्रे यदि दौहलगा दधि भी पुत्रि मादगदकाउपचित्रम् ।” (हररत्ना०)

३ छतराङ्गीके एक पुत्र । ४ छत्रिपर्णीवृक्ष, चक्रीडिया ।

५ दन्तीवृक्ष, दांती । ६ भाखुर्को, चूहाकानी ।

७ छद्मदन्ती, बड़ी दांती ।

उपचित्रका ( सं० स्त्री० ) क्रूरदन्ती, छोटी दांती ।

उपचित्रा ( सं० स्त्री० ) १ सूर्यकापर्ण, चूहाकानी ।

२ स्नाति । ३ हस्तानचक्र । ४ दन्तिवृक्ष, दांती ।

५ योद्धयमात्रात्मक मात्रावृत्तभेद । “विचित्रितद्वयपुरचित्र-

वृत्तिरेव भाषाद्वयं यदि क्षिप्रार्थवचना नवमे चतुर्थे ।” (हररत्नाङ्क)

उपचित्रि ( सं० स्त्री० ) खेत चित्रि शाक ।

उपचौयमान ( सं० त्रि० ) संघट्ट किया जानेवाला ।

उपचूसन ( सं० स्त्री० ) तापन, गर्म करनेका काम ।

उपचैय ( सं० त्रि० ) उप-चि कर्मणि यत् । चयनीय,

इकट्ठा किये जाने काविल ।

उपच्छन्दन ( सं० स्त्री० ) उप-च्छदि-णिच् भावे लुगट् ।

१ प्रार्थना, प्रज्ञ । २ उपसन्धन, फुसलाहट । ३ चतु-

रोध, कड़ना ।

उपच्छन्न ( सं० त्रि० ) गुप्त, पोशीदा, टंका हुआ ।

उपच्छव ( सं० पु० ) उप-च्छव् भावे भच् । रहस्ये

निर्गत, घरसे निकलता हुआ ।

उपज ( सं० त्रि० ) १ वर्धयिष्य, बढ़नेवाला । ( पु० )

२ देवविशेष । ( हिं० स्त्री० ) ३ उत्पत्ति, पैदायश ।

४ हृदयमें दौड़ा हुआ विषय, जो बात दिलमें भागी

हो । ५ मनमानी तान ।

उपजगती ( सं० त्रि० ) छन्दोविशेष । यह त्रिष्टुप्का

एक भेद है । इसमें तीन पादपर आरहकी जगह

वारह-वारह प्रचर पड़ते हैं ।

उपजन ( सं० स्त्री० ) उप-जायते, जन-भच् । १ देह,

जिन्म । “स्त्रीऽउचोऽन्तोकोपवनेने जायते इत्युपजनम् ।” (हन्दीयभाषे

महाराज्यं) ( पु० ) २ स्त्रीमादि वृद्धि । ( भा० जी० ८।१।१० )

३ उत्पत्ति, पैदायश । ४ अक्षर, वर्ण ।

उपजना ( हिं० त्रि० ) उत्पन्न होना, निकलना ।

उपजप्य ( सं० त्रि० ) उप-जप कर्मणि चर्हार्थं यत्

मेदाहं, काना-फूसी करने लायक, जो चुपके कहनेसे

अपनी ओर आ सकता हो ।

“उपजपाग्रजपेडगुणैरेव च कृत्तव्यम् ।” ( मनु ७।१८० )

उपजरस ( सं० अर्थ० ) वृद्धावस्थामें, बुढ़ापे के पत्र ।

उपजला ( सं० स्त्री० ) यमुनापार्श्व एक नदी ।

( भारत-वन ११ व० )

उपजस्थित ( सं० स्त्री० ) वार्ता, बातचीत ।

उपजस्थिन् ( सं० त्रि० ) उप-जस्थ-यिनि । उपदेशक,

समझानेवाला । ( भारत-वादि० )

उपजा ( सं० स्त्री० ) दूरस्थ वंश, जो खान्दान् नज-

दीकी न हो ।

उपजाक ( हिं० दि० ) चर्वद, ज़रखेज, जिससे क्यादा

उपजी ।

उपजात ( सं० वि० ) उत्पन्न किया हुआ, जो उप-

जाया गया हो ।

उपजातकोप, उपजातकोच देखो ।

उपजातकोच ( सं० त्रि० ) कृत्र किया हुआ, जो छेड़ा

गया हो ।

उपजातविश्वास ( सं० त्रि० ) विश्वास करनेवाला, जिसे

यतवार रहे ।

उपजाति ( सं० स्त्री० ) छन्दोविशेष । यह इन्द्रवज्रा

तया उपेन्द्रवज्रा और वंशस्य एवं इन्द्रवंशके योगसे

चौदह-चौदह प्रकारकी होती है । उउउउ ।

उउउउ । उउउउ । उउउउ । उउउउ ।

उउउउ । उउउउ । उउउउ । उउउउ ।

उउउउ । उउउउ । उउउउ । उउउउ ।

उउउउ । उउउउ । उउउउ । उउउउ ।

उउउउ । अन्यन्य मिथित जातिमें भी इसी प्रकार

१४ भेद पड़ते हैं ।

उपजाना ( हिं० त्रि० ) उत्पन्न करना, निकालना ।

उपजाप ( सं० पु० ) उप-जप-भच् । १ भेद, कानाफूसी ।

२ कुचक, साजिश । ३ बिच्छेद, पलगवा । ४ उपाप

जप ।

उपजापक ( सं० त्रि० ) उप-जप-खुस् । १ भेदक, कानाफूसी करनेवाला । २ प्रोत्साहक, उभारने-वाला ।

“उपजोतिर्विदं श्वेतोपाधीनमपह्नुः” ( मनु ४१० )

उपजाय ( सं० पथ्य० ) जायाके निकट, चौरतके पास ।  
उपजिगमिषु ( सं० त्रि० ) निकट उपस्थित होनेका अभिप्रायो, जो नजदीक पहुँचना चाहता हो ।

उपजिज्ञास्य ( सं० त्रि० ) निगूढ़, छिपा हुआ ।

उपजिह्वीयां ( सं० स्त्री० ) उप-ज-सन्-ध । भाषा-कर्तृक; मूलमन्त्र-कारिण्यात् वा । वा ३।१।० । चतुर्थात् । वा ३।१।० । वा ३।१।० ।  
उपरके द्रव्यादिको दूरण करनेकी इच्छा, दूररकी चीज चोरानेकी आदिश ।

उपजिह्वा ( सं० स्त्री० ) १ कीटविशेष, किसी किसीकी पीठी । २ मूल जिह्वा, हलफला कथा ।  
३ अग्रके मुखका एक रोग, घोड़ेके मुँहमें होनेवाली एक बीमारी । इसमें जिह्वाके नीचे सूजन भा जाती है । ( अयन ) ४ जिह्वागत मुखरोग, जीभमें होनेवाली मुँहकी बीमारी ।

“निद्रावदः अपरु हि निद्रातुष्यमानः कठोरपीडितः ।

महेश्वरपरिराक्षतुः । मध्यमेऽप्यनुपजिह्वीति ।”

( हृष्य, निदान ११५० )

सूयित कफ एवं रक्तसे अथभागकी तरह अघो-भागमें जिह्वाध मूल उठता, जिससे लास्रास्त्राव, कण्ठ चौर दाह उपजता है । इसी रोगको उपजिह्वा कहते हैं । वैद्यक मतसे इस रोगमें जिह्वाध कर्माग पत्र द्वारा रगड़ यवधारसे प्रतिहारण करना चाहिये ।  
शिकटु, यवचार, इरीतकी चौर बिता सकल घृम-भागमें सिमा रगड़ने अथवा उल्ल सकल द्रव्यके कण्ठ तथा चतुर्गुण लत द्वारा तेल पका सुपकनेसे यह रोग सत्वर ही शरीरस्थ होता है ।

उपजिह्विका, उपजिह्वा की

उपजीक ( सं० पु० ) जल देवता ।

उपजीव ( सं० त्रि० ) उपगतो जीवम् । जीवो-पगत, जीने-कामनेवाला ।

उपजीवक ( सं० त्रि० ) उपजीव-खुस् । १ जीविका-ब्रह्मनिवाता, जो जिन्दगी बसर करता हो । २ पादय-

वा चयसम्भनकारक, “सहारा या टेक सेमभासा । ( स्त्री० ) ३ जीविकानिर्वाह, वसर-जिन्दगी ।

उपजीवकत्व ( सं० स्त्री० ) व्यापक मतसे—१ कार्यत्व, काररवाई । २ प्रयोज्यत्व, इसीमान ।

उपजीवन ( सं० स्त्री० ) उप-जीव करके झुट् । जीविका, रोजी ।

उपजीवनीय ( सं० त्रि० ) उपजीवन करने योग्य, जो रोजी चलाता हो ।

उपजीविका ( सं० स्त्री० ) उपजीव्यतेत्यदा, उप-जीव संश्रयां कन् झृन् वा । उपजीवन, रोजी, रोजगार ।

उपजीविन् ( सं० त्रि० ) उपजीव-विनि । १ पालित, जो सहारा पकड़े हो । २ चेतनभोगी, तन्मूलाहपर वसर करनेवाला ।

उपजीव्य ( सं० स्त्री० ) उप-जीव-ण्यात् । १ आश्रय, सहारा । “उपजीव्युतावाच विमतिरिषुं की धनः ।” ( दासकथा )

उपजीव्य ( सं० पु० ) उप-लुप-घञ् । १ प्रीति, मक्का । ( पथ्य० ) उप-लुप-घञ् । २ प्रीति, मन्त्रमें ।

उपजीव्य ( सं० स्त्री० ) आलादन, मजेदारी ।

उपज्जा ( सं० स्त्री० ) उप-ज्जा कर्मणि घञ् । १ पाद-ज्ञान, अचली समझ । जो ज्ञान बिना उपदेश पाता, वही उपज्जा कहाता है । भावे पट् । २ पादि कथन, पक्षी यात ।

उपज्जात ( सं० त्रि० ) उप-ज्जा-त । बिना उपदेश-ज्ञात, वे सिखाये समझा हुआ ।

उपज्जम् ( सं० पु० ) पादार्पण करते हुआ, जो बट रहा हो ।

उपज्योतिष ( सं० स्त्री० ) १ ज्योतिष शास्त्राभुगत गवि-तादि, नज्मका हिसाब । २ दिग्विशेष । ( वातविशेष )

उपज्यलित ( सं० त्रि० ) प्रकाममान, जो जल रहा हो ।

उपटन ( हिं० पु० ) १ बिड़, दाग, उभार । २ उबटन ।

उपटना ( हिं० कि० ) १ बनना, उभर आना । २ स्थापनादि होना, उटना । ३ नष्ट होना, मिट जाना, किसी काममें न लगना ।

“धनं विना उपटं भवति” ( जेरोनिम )

उपटा : ( हिं० वि० ) १ नटम्बट, 'बरबाद' । ( पु० )  
 २ जलप्लावन, पानीका बूझा । ३ चमेट, ठोकर, धक्का ।  
 उपटाना : ( हिं० क्रि० ) स्थानान्तरित करनेको  
 आदेश देना, उखड़वाना, हटवाना ।  
 उपटारना ( हिं० क्रि० ) स्थानान्तरित करना, हटा देना ।  
 उपड़ना, उपटना देखो ।  
 उपटौकन ( सं० स्त्री० ) उप-टौक भावे खट ।  
 १ उपहार, नय, भेंट । २ उत्कोच, रिश्वत ।  
 उपतप्त ( सं० पु० ) नाग वा गन्धर्व विशेष ।  
 उपतट ( सं० अर्थ० ) १ तटके निकट, किनारेपर ।  
 ( पु० ) २ प्रान्त, बगल ।  
 उपतन्त्र ( सं० स्त्री० ) उपगतं तन्त्रम् । शिवोक्त  
 ; तन्त्र जैसा कृत्रिमत तन्त्र । वाराहोतन्त्रके मतसे—  
 कपिल, जैमिनि, वसिष्ठ, नारद, गरुड, पुलस्त्य, भार्गव,  
 याज्ञवल्क्य, शृग, राम, बृहस्पति प्रथेति सुनिश्चित तन्त्र  
 उपतन्त्र है ।  
 उपतपत् ( सं० पु० ) आन्तरिक ताप, भीतरी गर्मी ।  
 उपतप्त ( सं० त्रि० ) उप-तप-क्त । १ सन्तप्त, गरम,  
 जलाभुना । २ पीड़ित, तकलीफमें पड़ा हुआ ।  
 ३ कातर, डरपोक ।  
 उपतप्य ( सं० पु० ) उप-तप-द्यच् । १ उपतापक,  
 तपा डालनेवाला । २ उपताप, बिगड़ी गर्मी ।  
 ३ रोग, बीमारी ।  
 उपतप्यमान ( सं० त्रि० ) पीड़ित, जो तकलीफ  
 उठा रहा हो ।  
 उपताप ( सं० पु० ) उप चाधिक्ये तप चाधारे घञ् ।  
 १ खरा, जख्मी । २ उत्ताप, सरगर्मी । ३ रोग,  
 बीमारी । ४ अप्रम, खराबी । ५ पीड़न, तकलीफ-  
 दिही । ६ दुःख, रज्ज ।  
 उपतापक ( सं० त्रि० ) उप-तप-णिच्-खुल् । १ सन्ताप-  
 जनक, गर्मी पैदा करनेवाला । २ कष्टदायक, तक-  
 लीफ देनेवाला ।  
 उपतापन ( सं० त्रि० ) उप-तप-णिच्-खुल् । १ सन्ता-  
 पक, जला डालनेवाला । ( स्त्री० ) २ सन्ताप, जसन ।  
 उपतापिन् ( सं० त्रि० ) उप-तप-णिनि । १ सन्तापी,  
 जाला डालनेवाला । २ रोगी, बीमार ।

“गुर्वसं” पितृमातृसं, स्वाध्यायाद्यु, यथाप्रतिभा ।” ( मनु १:११ ) -

सप्तारक (सं० त्रि०) सप्त-द्व-षिच्-श्वल्। सप्ता-  
रक, सप्त सठनेवाला, जो सप्त सप्ता हो ।

“यत्र तदुपतारकाः बह्व्यो ।” ( श्रीशिवसू. )

उपतिथ्य (सं० क्ली०) उपगतं तिथ्यम्, अत्या०  
समा० । १ पुनर्वसु । २ अश्लेषा । ३ शौच-शास्त्रोक्त  
विहमेद । धर्मपति नामक किसी ब्राह्मणके, पौरस  
और सारोके गर्भसे इनका जन्म हुआ । बुढ़ने  
इन्हें अपने धर्मकी दीक्षा दी । अपर नाम सारीपुत्र  
था । ( महाभारत ) ।

उपतीर (सं. अथ.) सामीप्यादौ अथ्यधीभावः ।  
तीरसमीप, किनारे पर ।

उपतुला (सं० स्त्री०) स्नायुके नव समान अंगमें  
वृत्तीय । यह धातुविद्यामें वर्णित है ।

उपतुल ( सं० अथ० ) तुलोपरि, रुईके ऊपर ।

सपट्टण्य (सं० पु०) सप, सांप। दृष्टमें क्षिपकर  
 घेठनेसे संपंका यह नाम पडा है।

उपतैल (सं० स्त्री०) अभ्यक्त तैल, लगाया हुआ तैल ।

उपत्यका (मं० स्त्रो०) उपसमोपे पाषचा भूमिः, उप-त्यकान् । उपविर्भा न्यस्यमानादङ्गनः । वा १।४।१ । १ पर्वत की निकटस्थ भूमि, उहाड़के मोथेकी जमीन । २ पर्व-तके प्राधारका वन, उहाड़की जड़का जङ्गल । ३ पवि-त्यका, घाटी ।

“उपमन्वा पञ्चैतस्यासन्नं व्यवहृत् ।” ( सिद्धान्तकोशधरी )

उपदंश ( सं० पु० ) उप-दंश कर्मणि घञ् । मृदु-  
रोग विग्रह, पातयक, पातय, गरमो, लिङ्गको एक  
बोमारो । भावमिश्रने कडा—हृत् नष्ट वा दन्तना  
पाघात पड़ने, प्रसाधन न मिश्रनेसे अपरिह्वार बजने,  
अतिरिक्त खौंससंग रहने, दूषित योनिमें चलने और  
अन्यान्य नागा कारण समनेसे मिश्र देयमें उपदंश  
रोग उत्पन्न होता है । यह पांच प्रकार है—पातक,  
पैक्तिक, श्लेष्मिक, स्राविपातक और रक्तज ।

सुग्रतने कदा—पतिमैयन, संसर्गके प्रभाव,

• - "उत्साहिविद्यायाश्चद्वन्द्वमप्युक्तं ।

“योगिप्रदीपात् मयस्मि मित्रे यत्नोदयः। विविचयः॥”

( आर्यभट्टाचार्य गणित शिखर )

मग्नपारिषी, संमर्गरहिता, रक्तस्रवा, दीर्घ कर्कोम महीर्ष गूढ रोमयुक्ता, पतिसुद्वयवा पति हृत्पुं हार-विगिता, दूषित ललाटे प्रसाधन, शक्त मूत्रके वेगधारण और मेयुनाम्नके प्रप्रसादन इत्यादि किन्हीं कारणसे पथमें दोष लगते और उक्त पड़ते या न पड़ते जननेन्द्रियका फट जाना ही उपदंश है।

युरोपीय विकृत्याके कोर्ष तत्त्वप्र हाक्कर कहते— यह पोड़ा संस्रवके भिन्न नहीं उपजती। किन्तु मन्त्रवका प्रथम स्थान खोजनेसे मानना पड़ेगा— किन्हीं विविध कारणसे इसकी उत्पत्ति हुई। फिर तो ठहर ही लासेगा—देसा कारण समझे, विना संस्रवके भी उपदंश रोग निकल सकता है। जब कारण देखना चाहिये। भग्नके स्वाच्छस-जैसे रोग (Glandus) और कुक्षरके एक प्रकार चतुर्थे उपदंश उठता है। स्त्रीसंस्पर्शकालीन सतिष्का या पूय शैथिल्य सूक्ष्म चर्ममें चिपटनेसे इसकी उत्पत्ति है। परस्पर संसर्ग से उपदंश स्त्री और पुरुष समथकी जग जाता है। परस्पर संसर्गपर स्त्रीमें होते पुरुष और पुरुषमें रहते स्त्रीको यह रोग पकड़ता भयात् एकजनमें उपजनेसे अन्यको निश्चार नहीं मिलता।

युरोपीयोंने उपदंश रोगको नामा लेषीमें बांटा है। प्रधान यह है—

- १ प्राथमिक उपदंश (Primary Syphilis)।
- २ द्वितीय अवस्थाका उपदंश (Secondary Syphilis)
- ३ तृतीय अवस्थाका उपदंश (Tertiary Syphilis)
- ४ सार्वजनिक उपदंश (Constitutional Syphilis)
- ५ क्षौलिक उपदंश (Hereditary Syphilis)।

सधराचर जननेन्द्रियकी यात्रा एवं चाम्पन्तरिक त्वक्, निद्रके मुष्ट चयवा त्वक् एवं शयिके मध्यसाग शयिके अधोभागमें सुदृष्ट वटिकाकार एक पूय निकलता है। फिर वही फटकर विविध मध्यमाकाशा घन बन जाता है। मेयुनकालसे पांच-छः दिनके मध्य यह उक्त पड़ा करता है। इसीका नाम उपदंश या दातयक है। युरोपीयोंने इसे प्राथमिक उपदंश लिखा है। यह रोग मानाप्रकार होता है। तत्त्वप्र हार प्रकारका उपदंश सधराचर देण पड़ता है, यथा—सहज उपदंश

(Simple chancre), कठिन उपदंश (Indurated or Hunterian chancre), चयकारी उपदंश (Phagedenic chancre) एवं गलित उपदंश (Sloughing chancre)।

वेद्यक ग्रन्थसे पांच प्रकारका जो उपदंश बताया, उसमें भी प्रत्येकका लक्षण स्वतन्त्र लगाया है।

पुरुषके पातक उपदंशमें भेददेगपर एवं पुमने-जैसे ध्याया उठती, भेदनवत् वेदगा बढ़ती और कम्पन सहित काली फुस्को पड़ती है। स्त्रीको जननेन्द्रियका काठिन्य लगता, त्वक्का भेद पड़ता, स्वाभाव रहता और वायुजन्य मानाप्रकार क्षेम बढ़ता है।

पैतिक उपदंशमें पुरुषके भेदपर दाह उठता और बढ़ते-दयुक्त पीतवर्ण पोड़ा पड़ता है। फिर स्त्रीको स्वर हो जाता, शोथ सताता, तीव्र दाह देघाता, सिप्र पाक पाता, पित्तका दुःख सताता और पक्क दुःख-जैसा वर्ण निकल पाता है।

शैथिल्य उपदंशमें पुरुषके भेददेगपर शीतवर्ण काठिन्य चयवा गाढ़ स्रावयुक्त और स्त्रीके काठिन्य, चय वेदनायुक्त, शोथ एवं कष्ट-विगिट चिकण वर्ण हृत्पुं स्कोटक उठता है। पुरुषके भेददेगपर रक्तज उपदंशमें ताम्र या स्राववर्ण स्कोटक उठता, अधिक रक्त पड़ता, पैतिककी भांति सकल लक्षण लगता, स्वर बढ़ता, दाह रहता एवं शोथ बढ़ता है। स्त्रीके रक्तज उपदंशका लक्षण पुरुष की जैसा रहता, फिर भी धमेक स्वस्मै रोग नहीं मिटता और यावज्जीवन क्षेम उठाना पड़ता है।

• “नतोभेददृष्टेः वक्त्रेः कोटीभ्यश्च न मन्त्रोपमम्।”

(भारवच)

वे पाचक मन्त्रोपमम् नतोभेददृष्टेः वक्त्रेः कोटीभ्यश्च न मन्त्रोपमम्।

(हृत्पुं)

• “दीर्घं पुनर्दृष्टेः वक्त्रेः कोटीभ्यश्च न मन्त्रोपमम्।”

(भारवच)

• “दीर्घं पुनर्दृष्टेः वक्त्रेः कोटीभ्यश्च न मन्त्रोपमम्।”

(हृत्पुं)

• “नतोभेददृष्टेः वक्त्रेः कोटीभ्यश्च न मन्त्रोपमम्।”

(भारवच)

• “नतोभेददृष्टेः वक्त्रेः कोटीभ्यश्च न मन्त्रोपमम्।”

(हृत्पुं)

पुरुषके सांख्योपतिष्ठ उपदंशमें नाना प्रकारका स्त्राव और नानाप्रकारका क्षेप लगा रहता है। यह असाध्य है। स्त्रीको होते भी उक्त सकल प्रकारके लक्षण मिलते हैं, जननेन्द्रियपर उपजननेवाले शोधमेंसे फट कर छमि निकलते और प्रायः मरण हो जाता है।

इस रोगमें जिसके भेदका मांस विशेष और छमियों द्वारा भक्षित अथवा समस्त विशेष रूपसे अण्डकोष मात्रमें अवशिष्ट रहता है, चिकित्सकको यह रोगी उसी समय छोड़ देना पड़ता है।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे १८ सहज उपदंश (Simple chancre) में गोल, गभीर एवं सूक्ष्म रक्ताभ रेखाविष्ट भूसर वर्ण देख पड़ता है। मध्यमे ४५ दिन पीछे पुरुषकी खांजमें एक या दो तीन फुन्की निकल पाती हैं। फिर उसके फूटनेसे उपरोक्त चत होता है। कभी इससे चतिप्रदाह उठ बिड़ फूलता और रक्तवर्ण बनता, और कभी पोपे जैसा हो अत्यन्त द्रव्य छोड़ता है।

२य कठिन उपदंश (Indurated chancre) लिङ्गके सुष्ठ और ऊपरी चर्मपर हुआ करता है। इसका प्रान्त कठिन, मध्य गभीर गोलाकार, निम्न भाग भूसराभ और पार्श्व उन्नत रहता है।

३य स्यकारी उपदंश (Phagedonic chancre) शीघ्र ही बढ़ता और वेदनायुक्त होता है। इसका प्रान्त भिन्न भिन्न और आकार-असमान होता है। चत रक्तवर्ण एवं दुर्गन्धमय रहता और तरल कंद बहता है। कभी कभी इसके गभीर पड़नेसे भेद क्रमशः गल जाता है। इसमें वैद्यकीय यातिक, पौष्टिक और दैहिक तीनोंका लक्षण मिलता है।

४य गलित उपदंश (Sloughing chancre) प्रायः लिङ्गके सुष्ठ और परिवेष्ट चर्मपर उठता है, एवं प्रथमतः क्षयवर्ण पड़ता, पश्चात् गलने लगता है। कभी गलितार्थ गिरते समय लिङ्गकी प्रधान गिरा (Dorsal artery) से रक्त टपकता है। प्रान्त भाग कटा-जैसा दिखाई देता है। इसमें छ्वरका प्रदाह

बहुत बढ़ जाता है। उपदंशका चत निकलने या सूखनेके १५२० दिन बीच गिलटी पड़नेसे अत्यन्त वेदना बढ़ती है। इसका नाम बढ़ है। कठिन उपदंशके बाद बढ़ होनेसे प्रायः बैठ, परन्तु साधारण बढ़ सघरावर एक जाती है।

उपदंशका चत उठनेसे बढ़ निकलने तक इस रोगको सुख या प्राथमिक उपदंश (Primary Syphilis) कहते हैं। यह विष एकवार देखमें पड़नेसे सहज ही दूर नहीं होता। क्योंकि कभी दो वर्ष, कभी दश वर्ष, कभी आजीवन इसका फल लगा रहता है। इसे गोण वा द्वितीय चवस्थाका उपदंश (Secondary Syphilis) कहते हैं। उपदंशमें प्रथमतः रक्त विगडनेसे यह अवस्था पाया करतो है कि गात्रमें ताम्रवर्णकी फुनियां उठ खड़ी होती हैं, चत गल जाता है, चक्षु जलते हैं, एवं अन्ध और अस्मिं वेदना बढ़ती है।

कभी कभी उक्त प्रकारका उपदंश अधिकतर दूर-वस्थाकी पड़च जाता है, जिसे तृतीय चवस्थाका उपदंश (Tertiary Syphilis) कहना पड़ता है। इसमें सुष्ठ, कण्ठ और चर्म प्रसारित तथा चत एवं अस्थिवेष्ट हो जाता है। हृत्पिण्ड, यकृत, चक्षु, अण्डकोष और अस्मिं अर्बुदादि उठते हैं। ओको यह रोग जगनेसे गर्भ गिर पड़ता, यकृत स्थान जलता और झीझाका आकार बढ़ने लग जाता है। कभी कभी मूत्रमें अधिक परिमाणसे खेतसार (Albumen) जाता है। फिर कभी उपदंश-जनित फुलफुलकी पीड़ा चलती है। यही रोग सर्वाङ्गमें जानेसे सार्वजनिक उपदंश (Constitutional Syphilis) का नाम पाता है। इस चवस्थामें यह प्रथमतः त्वक, तालु तथा कण्ठके दैहिक सूक्ष्म चर्मपर, पश्चात् अस्थि और अस्थिवेष्टनी पर देख पड़ता है। उस समय प्रदाहयुक्तके समान पल्प पल्प छ्वर चढ़ने लग जाता है। सकलप्रकारकी शक्ति घटकर शरीरपर दुर्बलता आ जाती है। गोचररूपसे यह हृत्पिण्ड, कण्ठको नली, झीझा, यकृत, हृक् एवं पल्प प्रवृत्ति स्थानोंपर भी आक्रमण करता है। फिर कभी मन्दिर, छाया, गिरा, धमनी और अस्थि आदि पर्यन्त भी इसका वेग

• "नागाविषधारणोपपन्नमाध्यमासिम्बोपदंशम्।

प्रयोदशोऽंशं कृतिभिः प्रत्यक्षं सुचारुमेव परिवर्तनीयम्॥" (भाष्यभाष्य)



पट्टपा करता है। इस चपस्यामें शरीरके सबस  
ही यन्त्रोंपर समय समय माना राशोंका उपभोग हुआ  
करता है।

माता पितामें मलानादिकी भी उपदंश लगता  
है, इसका नाम कोनिक उपदंश (Hereditary  
Syphilis) है। कोनिक उपदंश होनेके फल  
रोसा, सरभट्ट, गाना स्थूलमें चत, चप, गण्डमाला,  
घथिरता, चक्षुरोग प्रभृति हैं।

विचित्र—उपदंश रोग सांघातिक होता है।  
हमभी चाहेमही यथानाथ चिकित्सा करनी चाहिये।  
कितने ही लोग मलानाके भयसे सहजमें इसे नहीं  
खोजना चाहते, किसी चनाड़ो या चतारैम दवादारु  
करा बचनेकी राह खोजते हैं। किन्तु उनसे भगार्द  
न निकल चनेक स्थलमें विषम फल मिला करता  
है। इस रोगमें प्रथम ही सुचिकित्सकसे परामर्श  
लेना चाहिये। नैचक मतमें इस रोगपर सिन्ध छोट  
द्वारा लिङ्गमें शिराका वेध होना अच्छा है। जोक लगा  
रक्तमोक्षण और ऊर्ध्व तथा पधःशोधन करते हैं। वही  
प्रक्रिया यक्ष्मपूर्वक चलाया अत्यन्त आवश्यक है,  
जिसमें उपदंश मर जाय। वातिक उपदंशमें  
यष्टिमाधु, राधा, इन्द्रिय, पुच्छरीक, सरसकाष्ठ, पुन-  
र्धवा, भगुर पदं सुप्ताक इन सकल द्रव्योंकी पीस  
प्रसेप और इन्हीं कायका शोधन लगाना चाहिये।  
पेलिक उपदंशमें गैरिक, रसायन, मन्त्रिठा, यष्टिमाधु,  
शेवाका मूल, पद्मकाष्ठ, रक्तचन्दन और लवणस  
सकल द्रव्य पीसकर घृतके साथ जिह्वपर लगाया  
करते हैं। दोलिक उपदंशमें मित्र, चक्षुंन, चण्डाल,  
कदम्ब, जम्बू, पट, यष्टिचूर्ण एवं घेतस इन  
सकल द्रव्योंके वस्त्रका ज्ञाय बनाकर लिङ्ग धोना  
चाहिये। फिर एक द्रव्य असुदायक चूर्णका लेप  
भी लगा लेना ठीक है।

बदरी, पाखनादी एवं चणामार्गके मूलकी त्वक,  
आम्रपत्रि और टिङ्गुल प्रत्याक बराबर बराबर रस  
माड़ लेना चाहिये। इस असुदायक द्वारा धूप देनेपर  
उपदंशका चत घुसता है। येष इस रोगपर भूमिस्था  
एवं करेष्टाव्य हत, चामारभूमाघतेस प्रथितिका प्रयोग

करते हैं। शृगालकण्टकी जड़ तम्बाकूमें जल पीने  
या भस्मनामकी जड़ घालके पीर लिप्टभीरी पूर  
केनेके माय पानेसे भी उपदंश अच्छा हो जाता है।

पानोपायोक्त मतमें सहज उपदंशमें मारटिक चप  
सिलर एवं मारटिक एमिट भी लगते हैं। एक  
पीपके प्रयोगसे जो छोट खाता, यह उष्य जसमें  
परिष्कार किया जाता है। सहज उपदंशमें मुदाकी  
सचप रचनेसे लेड मोगन चयना प्रिरिट व्यवहार  
करे। लोके भी एक पीप लगता है। चपिक  
घटाइ छठनेपर गोसार्ड मोगन पीर कभी कभी मिह-  
मोगन व्यवहार करते हैं। देसी डाहुर यह मरहम  
भी देते हैं—मोम २ ग्राम, मारिचनका तीन १ चोग,  
बकरैकी चर्बी पाध चोग, कलानी १ ग्राम पीर कपूर  
१ ग्राम एक माय थोड़ा सवा मरहम बनाये। यह  
उपदंशके लिये विगैय उपकारी है। घनकर पद्य  
देना चाहिये।

कठिन उपदंश पर ड्रू-मारटिक पंथिद लगा  
ग्लाक वाम या दोनो वास (Wash) व्यवहार करते हैं।  
दांतमें अधिक पीड़ा छठनेमें प्रिरिट मोगन दाग डूब  
चढ़ा दे। इस उपदंशपर चनेक लोग पारदसे कार्य  
लेते हैं। चपकारी उपदंश पर प्रथमतः पुनटिंग पीर  
चकीम चढ़ाना अच्छा है। स्थानिक उत्तेजना घटने-  
से ड्रू मारटिक एमिट व्यवहार करे। रोगीकी  
१ घेन कुनेन पीर १ घेन चकीम गिलाते हैं। गलित  
उपदंश पर चारकोस पुनटिंग पीर चोपियम मोगन  
३ बार दिनमें चढ़ाते तथा मारटिक एमिट लगते हैं।  
प्रथम कापर मोगन प्रथति द्वारा डूब देना चाहिये।  
गलितमा निकलनेसे चत मिटानेके लिये कारबोलिक  
चायम लेगाते हैं। स्वर रचनेमें प्रथम कोष्ठ परिष्कार  
करा पड़ने १ चोग काटर चायेल पीर पोष्ट १ घेन  
कुनेन दिनमें तीन बार छिलाना चाहिये। रोगीकी  
दुबलानेमें सबस बनानेके लिये पोर्ट गारन, वाण्डो, चारा-  
रोट, मांसका मोरबा, रोटी पीर दूध दिया जाता है।

द्वितीय चपस्याके उपदंशपर पारदका भस्मा  
विगैय उपकारी है। इस रोगके सम्पूर्ण प्रकाशित होने  
पर चनेक इस पीपका प्रयोग करते हैं—

होइजिरीराई परफोराइडम्	...	१ येन
नसोदर	...	५ "
पोटाम प्रायोडाइड	...	४० "
जल	...	२ डाम
एक्सट्राक्ट सार्जी त्रिकिडियम	...	१ औन्स
डिकक्शन सालसा	...	३२ "

सब औषध मिलाकर १ औन्स मात्रासे दिवसमें ३ बार सेव्य है। सार्वांगिक उपदंश निकलने समय किञ्चित् त्वर पा जाता है। इसीसे मृदुविरैचक फोवर मिक्सचर, सेलाइन मिक्सचर, और प्रदाइ-नामक औषध व्यवहार करे। लक्षणार्थ सम्पूर्ण रहनेसे किसी-किसी स्थलपर रोगी अत्यन्त दुर्बल हो जाता है। ऐसे स्थलपर बलकार बाह्य खिलाना चाहिये। बार्क कुनैन, साखसापरिला, लोडोटिड औषध प्रशस्ति प्रयोग करते हैं। कौलिक उपदंशमें पनसमूलका काय (डिकक्शन) दिनमें ३ बार पिलाये। शरीरपर चत पडनेसे कैलो-मेल प्रायण्डमेण्ट और मेडिन प्रायण्डमेण्ट लगाते हैं। जोमिषोपायोके मतसे पारदके व्यवहारमें कोई चति आनेकी आशङ्का नहीं। उससे सत्वर और निर्विघ्न पनिक लोग भ्रष्ट हो गये हैं। प्राथमिक अवस्थाके उपदंशमें मार्कसल, मार्ककर और चिनावार द्वारा ही उपकार पहुँचना है। किसी प्रकार पड़ने पारद ले लेनेसे नाइट्रिक एसिड या हिपार सलफर व्यवहार करना चाहिये। चतपर क्लोरेट हाइड्रैड और क्लोरेट अब पोटासका चूर्ण लगाते हैं। द्वितीय अवस्थामें एसिड नाइट्रिक मार्क, कालो क्लोरिकम, काली हाइड्रोप्रायोडिकम, हिपार और सार्जा चलता है। तृतीय अवस्थामें थरम थरोटिकम्, एसिड फसफरस, एसोफेटिडा, कालडेरिया, काली हाइड्रो, फस और वायना कार्बी उपयोगी है। कौलिक उपदंशपर उपरोक्त औषधमें लक्षणागुहार कोई एक खिलानेसे विशेष उपकार देख पड़ता है। इसीमी मतसे पातयककी बीमारी होनेपर पहले यह दवा दी जाती है—गोपालफल ३ मासे, सुगन्धा सात, सोंफ ६ मासे, सोनामुछीका पत्ता २ मासे और सुखो वदन्ता ६ मासे एकत्र मिला भुगये। एकवार फूट जानेसे नीचे उतार लेते और एक तोसे गुलकण्ड

मिला देते हैं। यह औषध ३ दिन खिलाना चाहिये। पथ मिसरी है। हॉग, मालफल, भकारकरहा, नागोड़ी, असगंध, सफेद और काली मूखल तथा छोटी गुधुतीकी बुकनी, जङ्गली बैरकी लकड़ीसे जलाकर इफतेभर जूष् मोपर घूवा देना चाहिये। इससे उपदंशका मूलतक नष्ट हो जाता है। उपदंश पुरातन होनेसे शिरोप, वज्र और नोमकी छाल सवा-सवा सेर पौने छः सेर जलमें पका चार सेर जल रहनेपर उतार ले। प्रत्यह पाच पाव मात्रासे सेवन करनेपर पुरातन उपदंश निश्चय ही पारोग्य होता है।

उपदंशचम (सं० पु०) गिरहृत्त, एक पेड़।

उपदंशिक (सं० त्रि०) उपदंशका रोगी, पातयकका बीमार।

उपदंश (सं० त्रि०) ईपदंश, थोड़ा जला हुआ।

उपदधि (सं० त्रि०) ऊपर रहनेवाला, जो रख देता हो।

उपदन्त (सं० पु०) कुलसुख, हरी धनिया।

उपदंशक (सं० पु०) उप-दृग्-शिष्-गुलु। १ द्वार-पाल, दरवान। (त्रि०) २ दंशक, देखनेवाले। ३ साक्षी, गवाह।

उपदल (सं० स्त्री०) पुष्पदल, फूलकी पत्ती।

उपदग (सं० त्रि०) प्रायः दग, कोई दस।

उपदा (बै० स्त्री०) उप-दा-पड़। १ उल्लोच, रियवत। २ उपढोकन, भेंट।

“प्रत्यर्थं पुत्रमुपदाच्छेन।” (१७)

(त्रि०) ३ उपढोकन देनेवाला, जो भेंट देता हो।

“उपरी उपदानदामात्।” (उपदानदामे गरीवर)

उपदान, उपदानक, देवी।

उपदानक (सं० स्त्री०) उपदान स्त्रायें कनू।

१ उत्कीव, रिगवत। २ उपढोकन, भेंट।

उपदानवी (सं० स्त्री०) हृषयवी और पुलोमाकी कन्या। इनके गर्भसे दुष्यन्त, सुषन्त, प्रयोर और अनघने जन्म लिया था। (चरित्र १ और २२ व०)

उपदिक् (सं० स्त्री०) १ उपदिगा, दो दिगाके बीचकी दिगा। (चण्ड०) २ उपदिगामें।

उपदिका (सं० स्त्री०) उप-दो-पड़, साथे कनू

टापः। उपनिष्ठा, एक धीटी। इससे दुर्मन्त्र निष्क-  
नता है।

उपदिग्ध (सं० त्रि०) १ निम्न, आसूदा, भरा हुआ।  
२ विन्दुनाम्नित, ध्वजेदार।

उपदिग्, उपदिग् दीपो।

उपदिग् (सं० पु०) वसुदेवके एक पुत्र।

उपदिग्गा, उपदिग् दीपो।

उपदिग्घा (सं० पद्य०) उपदेग करके, नसीहत देकर।

उपदिग्गमान (सं० त्रि०) उप-दिग् कर्मणि गमान्।

१ उपदेग-सम्पत्तीय, नसीहतसे मरोकार रखनेवाला।

२ उपदेग पानेवाला, जिसको नसीहत दी जाती हो।

उपदिष्ट (सं० त्रि०) उप-दिग् कर्मणि क्त।

१ उपदेगमान, नसीहत किया हुआ। २ कथित,

कहा हुआ। ३ प्रापित, बताया हुआ। ४ सादिष्ट,

कृपम दिया हुआ। ५ प्रदर्शित, देखाया हुआ।

(क्री०) भाषे क्त। ६ उपदेग, नसीहत।

उपदी (सं० स्त्री०) उपेत्य दीयते पराज्यते, उप-

दी-क-डीप्। अन्दाक, बाटा।

उपदीका, उपदिष्टा दीपो।

उपदीक्षन् (सं० त्रि०) उपगतो दीक्षिषं सामो-

प्यम। १ यज्ञसमर्पे दीक्षितके निकटस्थ। २ दीक्षाप्राप्त।

उपहृत् (सं० त्रि०) उप-हृत्-क्तिन्। १ ऊर्ध्वस्थित

हो। दुर्मन्त्र करनेवाला, जो ऊंचे बैठकर देवता हो।

(क्री०) २ दुर्मन्त्र, मन्त्रारा।

“मन्त्रा ह्युपदीक्षन्” (शुक् पृ० १५/१) “वर्गमभोवमीप-

हृत्” (अथर्ववेद-ब्राह्मण-उपनिषद्) (आथर्व)

उपहृग्, उपहृग् दीपो।

उपहृत्पद् (सं० पद्य०) सीमा-प्रभृत्के समीप,

कृदके पदभृत्के पास।

उपहृष्टि (सं० स्त्री०) दुर्मन्त्र, मन्त्रारा।

उपहृष्ट (सं० पु०) उपगतो दुष्टं साहृष्टेन, अत्यादि

ममान्। १ अक्षरपुत्र। (विष्णु-संहिता) २ देवक

राजके पुत्र। (वीर-संहिता) ३ मृत प्रेतादि।

उपहृष्टता (सं० स्त्री०) यक्षभूतादि।

उपहृष्टो (सं० स्त्री०) १ उपहृष्टकी यक्ष स्त्री।

२ देवराजकी अन्धा। ३ विद्याधरी प्रभृति।

उपदेग (सं० पु०) उप-दिग्-घञ्। १ परामर्श,  
नसीहत। २ मिषादान, तानीमका देना। ३ दित-  
कथन, भली बात। ४ पादेग, दृक्। ५ मनाकथन।  
६ दीक्षा।

“उपदेगं दीपो” (विष्णु-संहिता) (विष्णु)

मन्त्रागमनसमनुदितः क उपदेगः” (आथर्ववेद-उपनिषद्)

अन्तर एषं सुययहृत्, तीर्थस्थान, मिषादी चोर  
मिषमन्त्रिन्मं मन्त्रकथनका नाम उपदेग है।

मनु प्रभृति प्राचीन संक्षिप्तकारिने साम्राज्यादि  
विषय लोगोंको ही उपदेग देनेकी आज्ञा दी है।  
मनुने एक स्थानपर कहा है—

“अन्योपदेगं दत्तं च विद्याधारा पुत्रतः।

अन्तराधिकारं दीपो वक्षो दीपो च वादिः क” (अथर्व)

दत्तं यदि शूद्र साम्राज्यको अन्योपदेग सुनाये, तो  
राजा उसके सुपचार कारणों तब तैस ठाननेकी  
आज्ञा दे। अन्य चोर दीपो दीपो

० न्यायमतसे—शब्द, पावाज। ५ सुभाष, मोघा।

उपदेगक (सं० त्रि०) उप-दिग्-कृत्। १ उपदेग-

कर्ता, नसीहत देनेवाला। २ अनुपरासगदाता,

भली मन्त्रा दे देनेवाला। ३ मिषक, मिषानेवाला।

उपदेगता (सं० स्त्री०) १ उपदेग देनेकी क्षिति,

नसीहत करनेकी क्षमता। २ गामभ, दृक्। ३ मिषा

की रीति, तरीक-नानीमका। ४ मत, पक्षीदा।

उपदेगन (सं० स्त्री०) परामर्शका देना, नसीहतका

करना।

उपदेगमा (सं० स्त्री०) मत, पक्षीदा।

उपदेगमोय, उपदेग दीपो।

उपदेगमोयक (सं० स्त्री०) दृष्टान्त, मिषाव।

उपदेगिन् (सं० त्रि०) उपदिगति, उप-दिग्-

चिन्ति। उपदेष्टा, नसीहत देनेवाला।

उपदेग्य (सं० त्रि०) मिषा दिये जानिके योग्य,

जो मिषानेके कर्त्तव्य हो।

उपदेष्टव्य (सं० त्रि०) मिषा दिये जानिके योग्य,

मोघनेकर्त्तव्य।

उपदेष्ट (सं० त्रि०) उप-हृत्-घञ्। उपदेगकर्ता,

नसीहत देनेवाला।

उपदेस ( हिं० ) उपदेस दीखो।

उपदेह ( सं० पु० ) उपदिह्यते अनेन, उप-दिह-घञ्।

१ देहदिकी छवि, जिह्वा समूहकी तरकी। गण्ड-  
माला, चतुर्द प्रभृतिको उपदेह कहते हैं। ( सुव्रत )  
२ उपसेप, भरहम।

उपदेहिका, उपदिहा दीखो।

उपदोह ( सं० पु० ) उप-दुह आधारी घञ्। १ दोहन-  
पात्र, दूध दूहनेका बरतन।

“माः कांलोपदोहाय मयाय बहलदूताः।” ( हरिवंश )

२ गौकी खानका सुख, गायके आयनकी टिमनी।

उपद्रव ( सं० पु० ) उप-द्रु भावे घञ्। १ उत्थात,  
हलचल। २ अत्याचार, लुब्ध। ३ आपद्रु, आपत।

४ उपसर्ग, अलामत। प्राचीन वैद्यक हारोतके मतसे—

“यो व्याधिरस्य यो हेतुर्दोषस्तस्य प्रकीर्तनः।

योऽप्यो विकारो भवति स उपद्रव उच्यते।

आर्थे कपति यो व्याधिः उपद्रव उदाहृतः।

लोपद्रवा न जीवन्ति लोचन्ति निरुपद्रवाः॥”

जो व्याधि छठकार शरीरमें पूर्वस्थित किसी रोगको  
बढ़ा फिर निकालता या कोई विकार उत्पन्न,  
वही उपद्रव है। उपद्रवयुक्त रोगी प्रायः नहीं  
जीता। निरुपद्रव बच जाता है।

उपद्रविन् ( सं० त्रि० ) १ आक्रामक, हमला मारने-  
वाला। २ अत्याचारी, लुब्ध।

उपद्रष्टु ( सं० त्रि० ) उप-द्रष्टृ लृट् वाहुलकात्।  
साक्षी, देखनेवाला। “उपद्रष्टागुमना च सर्वा भोक्ता महिषः।

परमात्मेति चायुक्ती देहिमिन् पुनश्च परः॥” ( नीति ११११ )

“निरुपद्रवेन सानीये न हस्ततादुपद्रवाः।” ( महाराज्य )

उपद्रुत ( सं० त्रि० ) उप-द्रु-क्त। आतोपद्रव, आपत-  
लक्ष, जो उत्पन्न गया हो। २ व्याकुल, बेचैन।  
३ उत्पन्नप्रसन्न, बदगिगून्। ( ली० ) ४ सम्भिविशेष,  
किसी क्लेशकी सुलक्ष।

उपद्वीप ( सं० पु० ) १ सुद्वीप, छोटा टापू। २ प्रायो-  
द्वीप ( Peninsula ) की तरह तीन भयवा चारो ओर  
प्रायः जलसे घिरी हुई भूमि।

उपधरना ( हिं० क्ति० ) उपधारण करना, बचाना।

उपधर्म ( सं० पु० ) उप हीनो धर्मः, प्रादि० समा०।

१ अप्रधान धर्म, छोटा धर्म। २ अनुके मतसे—

“निर्धेयविति द्वयं हि पुरश्चल समापते।

एव धर्मः परः साक्षादुपधर्मोऽप्य उच्यते॥” ( १११० )

पिता माता और गुरु तीनोंके प्रिय कार्यका साधन  
तथा उनकी सेवा श्रमसा साक्षात् परम धर्म है। सिवा  
इसके अग्निहोत्रादि सकल पुण्यकार्य उपधर्म कह-  
लाते हैं। “विदमेवाभ्यसेमिव” अथा आत्मतत्त्वितः।

नं द्रष्टव्यः परं धर्ममुपधर्मोऽप्य उच्यते॥” ( १११० )

समय पाते ही आलस्यको छोड़ नित्य वेदाभ्यास  
करना चाहिये। विज्ञानके सिधे यही परम धर्म  
है। दूसरे सभी धर्मोंको उपधर्म कहते हैं।

उपधा ( सं० स्त्री० ) उप-धा-घञ्। आनोपधर्मे।  
वा १११०६। १ धर्मका भय दिखा राजा द्वारा अमात्म  
सचिवगणकी परीक्षा।

“धर्मोऽपराधिवर्मासु सर्वाणि सचिवान् पुनः।”

( चाण्डिकापु० ८१ ब० )

२ हल, धोका। ३ उपधानपर स्थापन। ४ व्याकर-  
णानुसार अक्षरवर्षके पूर्वका वर्ष। ५ धाया, तद्वीर।

उपधातु ( सं० पु० ) १ आठ प्रधान धातुधोके समान  
अन्य धातु। उपधातु सात प्रकारका है—स्वर्णमासिक,  
तारामासिक, तृतिया, बांसा, पित्तल, सिन्दूर और  
गिन्नाजतु। यह यथाक्रम स्वर्ण, रौप्य, ताम्र, रांगा,  
जस्ता, सौंसा और लौहके उपधातु हैं। धातुमें जो  
गुण रहता, उपधातुमें भी वह मिश्रता ; किन्तु  
अपेक्षाकृत कितना ही अल्प पड़ता है। कारण—  
उपधातुमें मूल धातुका अंग अतिअल्प ही होता है।  
नैसर्गिक प्रकृति प्रकृतिमें उत्पन्न उपधातु बनानेकी प्रणाली देखो।

युरोपीयोंके मतसे जर्मन सिलवर, जर्मन गोहड  
प्रकृति नानाप्रकारके उपधातु होते हैं। नीचे उनकी  
संज्ञा और बनानेकी प्रणाली लिखी जाती है—

जर्मन रौप्य—ताम्र २ भाग, जस्ता १ भाग और  
निकल १ भाग सकल मिश्रानेसे उत्तम जर्मन सिलवर  
( रौप्य ) बनता है। इससे घड़ी, कटोरी, चमची  
प्रभृति नानाविध द्रव्य निर्माण किये जाते हैं।

जर्मन स्वर्ण—ग्राटिनम् २६ भाग, ताम्र ७ भाग  
और जस्ता १ भाग एकत्र मलिकानीकी धरियामें रख  
अनिका उत्ताप देनेसे बिलकुल स्वर्ण-जैसा उत्पन्न  
और भारी एक प्रकारका उपधातु प्रसृत हो जाता

६। प्रकृत सार्वभौमिकी के अन्तर्गत ही पर्यावरण नहीं  
पाए। हमने विविध यन्त्रादि बनाये जा  
सकते हैं।

गोहामा या मानद्विम श्रवणं—ताम्बु टाई भाग  
 दोर लडा पाया भाग एकत्र श्रुतिपात्री घरियामे  
 गनानिमे दह प्रस्तुत होता है । द्रव्य रहते रहते यह  
 धर्म सांख्येमे दमेगा, ऐसा ही द्रव्य बनकर निकलेगा ।

भोमिक स्वर्य—किसी पाद्यमें विग्रह रांगा १२ भाग चन्द्रिके उत्तापये गन्ना पारद १ भाग मित्रा दोत्रिये। फिर गीतल पट्टनेपर निगादल १ भाग और गन्धक ७ भाग हाथकर चन्द्रिके उत्तापमें गन्ना-नेमें यह बनता है। पारद एवं निगादल बाष्प बनकर उड़ जाता और सञ्चल मोक्षक स्वर्य निकल जाता है।

प्यूटर—टीम सिड मीर, सीसा एक पाय, तावा सिड  
हटाक और लसा पाय हटाक एकत्र पन्नि के उत्ताप-  
न गतिज्ञानी घरियामें गना आसनेपर विनकुस  
बादी-सीसा एक प्रकारका उपधातु प्रयुक्त होता है।  
इसके आनाप्रकार द्रव्य बननेपर बादी ही जैसे चमका  
करते हैं।

विशेष—यह शीशामा नामक उष्णामुकी तरफ  
ही प्रसृत होता है। खेपत तमि धीर जखोले भाग-  
पर ही मगान्तर है।

२ मरीरस्य धातुसहस्रं द्रव्यम् । वैद्यक-मतस्य यक्षी  
सात मरीरकेषु उपधातु इ—

“ହେଉ ହେଉ ଜାଣିବା କାନ୍ଦି ଧବଳି ଧବଳି ।

द्वयम् अथवा च. वा. अथवा परिशोधनम् ।

ॐ श्री गणेशाय नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

[illegible]

(रमणी) श्वानदुग्ध धीर (रक्षणी) धीरजः काल  
पात्तर वनता-विमदता है। यह मांससे निकली  
जोहवा नाम वसा है। भिदसे धर्म, यक्षिणी दन्त,  
मन्त्राणि शिग धीर शुक्ली धीरः निकलता है। वस—  
श्वानदुग्ध, धीरजः, वसा, धर्म, दन्त, शिग धीर धीरः  
को धातुमय लदधातु ममभवा पाद्विधि।

उपधान : (उं. ली.) उप-धा यधिकारे ह्राद।

१ गिरीषाम्, तक्षिणः । २ विमेदय, अशुभितम् ।  
३ प्रपद्य, मुह्यन्त । ४ जतः । ५ विष, ज्वरः ।  
६ समीपस्थापनम् । ७ उत्कर्ष, यद्गर्ह । (वि०)

८. रस जेनेने खगाया हुआ, ओ रसनेके काम पाया हो।  
उपधानीय (सं. स्त्री.) उपधोयते यजिन्, उप-  
धा खर्मणि पनीयद् । १ उपपान, तक्षिण । (दि०)  
समीपस्थापनके योग्य, ओ पास रखे जानेके क्षात्रिक हो।  
उपधाभृत (सं. पु०) कहरिमिय, पक्ष मरहूम।  
२ पधर्मसे पन्निमुक्त मीयक, ओ मोहर धर्मसौहा  
सुखरिम हो।

उपधाय (सं० पथ्य०) रणकर, हानके ।  
 उपधायिन् (सं० ति०) गोषे रणनेवाला, जो सदा  
 खेता हो ।

उपधारण (मं. स्त्री.) उप-धृ-चिच्-भ्राट् । बहुव्र  
 द्वाया वाक्येन, सम्यगीति विचारः । २ सम्यक् विज्ञान,  
 धोषविचारः ।

उपधायं (उं० चय०) से या एककृद्धे।  
उपधावन (उं० लौ०) उप-धा-व-सुट्। १ उन्धवत्,  
जटाव। २ अनुविस्तार, जिसमन्दे। (उ०) ३ पीछे  
पीछे चलनेवाला, जो पीछा करता हो।

उपधाएचि ( सं० त्रि० ) परोक्षित, जांया वृषा ।  
उपधि ( सं० पु० ) उपधोयते पारोक्ष्यतेऽनेन, उप-  
धा-कि । १ कपट, धालाकी । २ भय, डर । साधादि-  
कि । ३ रसपत्र, गाढोष्ण पदिया ।

समधिष्ठ ( सं० पुं० ) १ दक्षी, धोखेबाज ।  
समधोयमाण ( हिं० वि० ) पुरःसर सुख, निमग्न पदसे  
लज्ज रहित ।

समधुनित ( सं० लि० ) सम-धुन-प्र । १ पायक-  
मरथ, मर कामेवाला । २ समश्लिष्टत, मजकाला  
हुया । ३ सत्यता योजित, बहो तत्त्वोक्तमें पड़ा हुआ ।  
समधुनित ( सं० लि० ) सम-धुन-प्र जातोप्य । जातधूम,  
धुनो दिया हुआ ।

उपधमिता ( मं० पुरो० ) ज्योतिषोद्घाटादि वने-  
भीषण्युपमनस्य दिग्।

<sup>10</sup> "દાદા દિગેશી અલ્લભ દિગેશુ સુદિત્તુ જાનર્દયુ પ્રભાતે ।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

उपधृति (सं० स्त्री०) उप-धृ-क्तिन् । १ ज्योतिः, किरण । २ सन्धारण, संभाल ।

उपधेय (सं० त्रि०) उप-धा-यत् । मन्त्र द्वारा स्थापनीय, रखा जानेवाला ।

उपधा (सं० स्त्री०) १ श्वास ग्रहण, सांस लेनेकी बात । २ उपधानीय शब्द उत्पन्न करनेवाली वाक्की चेष्टा ।

उपधान (सं० क्ली०) उप-धा-करणे ख्यट् । १ थोड़ा, छोटा । २ श्वासग्रहण, सांस खींचनेका काम ।

उपधानिन् (सं० त्रि०) • श्वास ग्रहण करनेवाला, जो सांस लेता हो ।

उपधानीय (सं० पुं०) प और फ के बाद विसर्ग 'खान'में लेखनीय गजकुम्भाकृति वर्ष विधेय ।

“उपधानीयानामोटी” (विद्याकीमुने)

उपध्वस्त (सं० त्रि०) उप-ध्वन्स-क्त । १ नष्ट, बरबाद । २ अधःपतित, गिरा हुआ । ३ मिश्रित, मिखा हुआ ।

“हीमाः उपध्वस्ताः सावित्रा वसुधतः” (समुः १३।१०) “उपध्वस्तमधःपतन्म्” (महीधर)

उपनक्षत्र (सं० क्ली०) राशिवक्रस्थ तारकामेद, छोटा सितारा । भस्त्रिनो प्रभृति २७ नक्षत्रमें प्रत्येकके भस्त्रगत सत्ताईस-सत्ताईस तारका हैं। इन्हींका नाम उपनक्षत्र है। ज्योतिषशास्त्रके मतसे ७२८ उपनक्षत्र होते हैं। तात् देखो ।

उपनख (सं० क्ली०) सुश्रुतोक्त चिप्य नामक सुद्र-रोग विशेष, चकल-बड़ा ।

“नखमांसमधिष्ठाय पित्तं वातश्च वेदनाम् ।

करोति दाहपाकी च सं स्यात्” चिप्यमादिषु ३

तदेव चतुरिणां तथोपनखानिषु ॥” (निदान ११७०)

पित्त एवं वायु नखके मांसकी एकड़ की रोग बढ़ाता, वही चिप्य वा उपनख कहता है। यह एककर वेदना तथा दाह उत्पन्न करता है। इसे चत रोग भी कहते हैं। चक्रदत्तके मतसे—

“चिप्युपाख्वा ना शिष्टसूक्ष्माश्च ३ त्रयम् ।” (३।१।८)

चिप्यरोगमें छण जलसे स्नेह लगा देनेसे तैलाम्यक करनेपर त्रणकी प्रतीकार पड़ता है। वैद्यकके

मतसे—इसमें धूनेका चूर्ण गांध त्रणरोगके चतकी चिकित्सा करना चाहिये। इस रोगमें सोहागा और भास्कोतका मूल एकत्र पीस प्रलेप चढ़ानेसे नख निकल जाता है ।

उपनगर (सं० क्ली०) शाखानगर, शहरके पास पासका गांव ।

उपनत (सं० त्रि०) उप-नम-क्त । १ नम, झुका हुआ । “श्रीरं प्रतापोपगतेरिवस्ततः ।” (भाव १।१।१)

२ ग्ररणागत, पनाहमें पड़ा हुआ । ३ उपस्थित, छाजिर । ४ उपगत, पहुँचा हुआ । ५ प्राप्त, पाया हुआ ।

उपमति (सं० स्त्री०) उप-नम भावे तिन् । १ नमन, झुकाव । २ उपगम, पहुँच । ३ उपस्थिति, छाजिरी ।

उपनद (सं० बध्वा०) नदीके समीप, दरयाके पास ।

उपनह (सं० त्रि०) १ वह, बंधा । २ सवह, लगा ।

उपनमा, उपनमा देखो ।

उपनन्द (सं० पुं०) १ वसुदेवके पुत्र । यह मदि-राके गर्भसे उत्पन्न हुये थे । (विष्णु ७।५।१।१)

२ गोपपति नन्दके कनिष्ठ भ्राता । ३ बौद्धशास्त्रोक्त नागराज विशेष । (सम्बुत्पुत्र १७०) ४ कामीराज ब्रह्मदत्तके पुत्र । इन्होंने राजपुरोहितके कनिष्ठ भ्राता कुहनकी सहकारितासे शुवराज नन्दको मार डालनेका यत्न किया था । (बोधिसत्त्वपदानुसंगता २२)

उपनन्दक (सं० पुं०) उप-नन्द-विद्-एख ल् । १ हत-राष्ट्रके एक पुत्र । (भारत-पारि ६० ७०) (त्रि०) २ भानन्दजनक, खुशी पैदा करनेवाला ।

उपनय (सं० पुं०) उप-नो-करणे भच् । १ उप-नयन, नजदीक पहुँचानेका काम । २ संस्कार कर्म विशेष, जनेज । ३ न्यायावयवभेद, मन्त्रिककी एक बात । इसमें उदाहरणार्थ वाध्याका उपसंहार रहता है। जैसे—धूमवान् वस्तु ही वस्त्रिमान् होती है ।

गौतमसूत्रमें लिखा—“उदाहरणार्थवस्तु वस्त्रो न तद्वि वा वाध्यालोपनयः ॥” (१।१।८)

उपनय दो प्रकारका होता है—पन्थयी उपनय और ध्यतिरकी उपनय । (शौतमसि) ४ न्यायके मतसे सिद्ध और भ्रान्तका सङ्घर्ष—जैसे पक्षोक्ति प्रत्यक्ष साधनके सन्निकर्षका भेद । इसमें सन्निकर्ष रूपके द्वारा

पूर्वज्ञान समुच्चयको विषय केवल देख पड़ती है। १ मास, समस्त। (अनन्तर)

उपनयन (सं० स्त्री०) उप-नी-युट्। १ ब्राह्मण, अतिथि और वैश्य विष्णुतादि पञ्चमनेका प्रधान संस्कार।

“अग्निहोत्राणां दिनं वसोर्ध्वं शेषं दृष्टिः।

एते वैश्यः श्रुतोग्राह्यवर्गोऽपि विदुः॥”

यह संस्कार तीन प्रकारका है—नित्य, काम्य और नैमित्तिक। अष्टम वर्ष पर्यन्त नित्य, पञ्चम वर्ष पर्यन्त काम्य और आषाढिष्ठ उपनोदनार्थ पुनः संस्कार नैमित्तिक कहाता है।

“अग्निहोत्रः कुर्वित ब्राह्मणोत्पन्नवत्।

वसुधैव कुटुम्बकम् शान्तिं शान्तिं शान्तिं विदुः॥

ब्राह्मणवद्व्याज्यं वाचं विदुः पश्यते।

वासी वसुधैव कुटुम्बकम् शान्तिं विदुः॥”

गर्भके समयमें अष्टम वर्षमें ब्राह्मण, एकादश वर्षमें अतिथि और द्वादश वर्षमें वैश्यका नित्य उपनयन संस्कार करना चाहिये। ब्रह्मचरिणःकामो ब्राह्मणका पञ्चम, वनार्यो अतिथिका षष्ठ और धनकामो वैश्यका अष्टम वर्षमें काम्य उपनयन होता है।

एक समय उपनयनका सुख और उसमें अतिरिक्त समय उपनयनका मोक्ष काज कहा जाता है। गौतमकाल दो प्रकार है—मध्यम पार प्रथम। ब्राह्मणका द्वादश, अतिथिका षोडश और वैश्याका द्विंशति वर्ष पर्यन्त मध्यम काल होता है। इसमें अतीत समयको प्रथम काल कहते हैं।

पेठिमनीने निम्ना है—

“अतः षोडशविंशतिं कृत्वा पञ्चदशान् वर्षान्।”

मनुका वचन है—“अनीयं द्वादशवत् अतीतं वसुधैव कुटुम्बकम्।

अनीयं पञ्चमोत्पन्नवत् अनीयं।

अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।” (अनु० १००)

ब्राह्मणका गर्भमें सोमस, अतिथिका सोम और वैश्याका सोमस वर्ष तक उपनयन काल अतीत नहीं होता। एक काल पर्यन्त संस्कार न करनेमें ब्राह्मण, अतिथि और वैश्या बाह्य उपनयनमें अष्ट, बीसवां व्रमाजमें द्वितीय उपनयन और श्राव्य कहा जाता है।

“अतः षोडशविंशतिं कृत्वा पञ्चदशान् वर्षान्।

अनीयं द्वादशवत् अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

(अनन्तर १००)

बी ब्राह्मण गर्भमें १५ वर्ष २ मास, अतिथि २५ वर्ष २ मास और वैश्य २० वर्ष २ मास भोजन पर विदवात एवं उपनयन संस्काररहित रहता, उसे माया मात्य कहाता है। ऐसा व्यक्ति ब्राह्मण्योपनिषद् योग्य पर्याप्त मात्यमात्र करके फिर मायाको वाचि-कारो होता है।

ब्राह्मण, अतिथि और वैश्य इन तीन जातिमें ही जन्म है। प्रथम जन्म माताके गर्भ और द्वितीय जन्म गुरुके यथाविधि मायाके ग्रहण द्वारा होता है। इसप्रकार ब्राह्मण, अतिथि एवं वैश्य द्विजन्म पाते और अन्य दोयने छूट जाते हैं। फिर वे श्रुति, स्मृति, पुराणादि पञ्चमनके उपयुक्त होते हैं।

महर्षि नारदके मतमें—

“अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

द्विजातिके मध्य ब्राह्मणका वसन्त, अतिथिका शोच, और वैश्याका मरुद शत्रुमें उपनयनकाल प्रसिद्ध है।

शरीरके अद्यतनुसार—गर्भमें सुषमात् एवं धन-शाली, फाल्गुनीमें बुद्धिमान् तथा मिथ्या, वैशाखी में वैद-वित्, वैशाखीमें सोभाग्यशाली एवं विचक्षण, ज्येष्ठमें श्रेष्ठ तथा विश्व, और आषाढ मासमें उपनयन करनेमें द्विजातिका बालक स्थाननामा एवं महाप्रसिद्ध होता है। यह नियत ब्राह्मण और अतिथिके नियत रहा है। वैश्यके पञ्चम व्रमकाल ही प्रसिद्ध है।

कक्षाचार्य कर्णके मतमें, मास और रात्रिमें जोनेवाले उपनयनको ही प्रसिद्ध समझते हैं। जिस गर्भमुनिमें इस विषयमें कुछ विनिर्दिष्ट कहा है—

“अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं अनीयं।

विवाह और अनीयमें अनीयका मास, विनिर्दिष्ट

वशिष्ठादिके मतसे जन्मका पक्ष भवश्य छोड़ देना चाहिये।

इस स्थानपर नक्षत्राक्षसे गर्गका विरोध देख आर्त लोगोंने स्थिर किया है—गर्गका वचन चतुर्य और वैश्यके लिये है, ब्राह्मणके लिये नहीं।

हृद गर्गके मतसे अनध्यायका दिन, मगमी, तयो-दशी और माघ मासकी दोनों द्वितीया छोड़ उपनयन करना चाहिये। जहने दीका हृदस्मृति, यजुर्वेदीका शुक्र, सामवेदीका मङ्गल और अथर्ववेदीका सोमवारको उपनयन विधेय है।

शृङ्गाच्छादि और मनुके मतसे—ब्राह्मणको कृष्ण-सारका, क्षत्रियको रुक् नामक शृङ्गा और वैश्य ब्रह्मचारीकी छागकी चर्मका उत्तरीय लेना चाहिये। ब्राह्मणको शण, क्षत्रियको चोम और वैश्यको मेपके लोमका अधोवसन परिधेय है। ब्राह्मणको नृदुष्पत्र तीन फूले सुञ्जाखण्डे, क्षत्रियको धनुस्फो तांत-जैसी मूर्त्ति हृत्चमे और वैश्यकी त्रिगुणित शणकी तन्तुसे मीखला बनाना पड़ती है। सुञ्जादि न मिलने पर यथाक्रम कुश, अश्वत्थक और धवज खण्डसे मीखला प्रस्तुत करना उचित है। उसे एक, तीन अथवा पांच ग्रन्थिसे बांध रखना चाहिये। ब्राह्मणका कार्पास, क्षत्रियका शण और वैश्यका मेपके सूतसे उपवीत प्रस्तुत होता है। नीचे-ऊपर तीन ग्रन्थि सूत हीं जनेज है। ब्राह्मणको विष्व अथवा पलायका, क्षत्रियकी घट या खदिरका और वैश्य ब्रह्मचारीको पीतु अथवा यक्षदुसुरका दण्ड-लेना चाहिये। ब्राह्मण-के केश, क्षत्रियके ललाट और वैश्यके दण्डका परि-माण नासाग्र पर्यन्त है। उपनयनका दण्ड सरल, परिष्कार, किट्टीन, चदगध लक्यूक्त, देखनेमें सुथी और मनीमत्त होना चाहिये। इस मनीमत्त दण्डकी ले सूईकी लपासना और तीन बार अग्निकी प्रदक्षिणा दे यथाविधि भिक्षा करना उचित है। प्रथम ब्रह्म-चारीकी माता, भगिनी, माताकी सहोदरा भगिनी और दयाशील स्त्रीके पति भिक्षा मांगना कहां है। उप-नीत ब्राह्मण 'भवति भिक्षां देहि', क्षत्रिय 'भिक्षां भवति देहि' और वैश्य ब्रह्मचारी 'भिक्षां देहि भवति' कह

कर भिक्षा मांगे। भिक्षा संकटीत होनेपर ब्रह्मचारी भक्षपट मनसे शुककी निवेदन कर, हाथ-पैर को और पूर्वमुख शक्ति हो आहार करे। मनुने कहा है—

“पापुषं प्रादुर्मुखी मुखं यद्वर्गं दक्षिणामुखः।

यिदं नयत्सुखी मुखं अग्रे मुखं शृणुषुः।”

आयुष्कामीको पूर्व, यशस्कामीको दक्षिण, धनार्थी-को पश्चिम और सत्यकामीको उत्तरमुख बैठकर खाना चाहिये। यद्यपयोग यन्त्र रिकालि विरक्त देखिये।

२ आयुर्वेदके शिष्यार्थीका एक संस्कार। आयु-वेद सीखनेसे पहले यह उपनयन करना पड़ता है। महर्षि सुश्रुतने ऐसी व्यवस्था दी है—

ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य तीन जातितें जो व्यक्त शुद्ध संयज्ञात, पौंड्रवर्ष वयस्क, वीरभाषापन्न, शुद्धाचार, विनीत, बलवान्, शक्तिसम्पन्न, मेधावी, धृतिमान्, यगः अभिलाषी, सर्वदा प्रसन्न रहनेवाला, कामी धनित न करनेवाला, श्लेष्मसङ्घिष्ठ हो, जिनकी मोठ एवं जिह्वा दानों पतले, दन्तका पश्चभाग घृष्ट तथा चतु एवं मुख सुन्दर हो, उसे शुद्ध आयुर्वेदका उपदेश देनेके लिये शिष्य भावसे उपनयन करे। शुभ क्षणको प्रशस्त दिशामें पवित एवं समतल भूमिपर चार कोण-युक्त और चार हस्त-परिमित एक वेदी बनाना चाहिये। वेदीपर गोमूत्र द्वारा लेपन कर कुग बिजाते हैं। फिर उपनयनकर्ताको पुष्प, नाजा, पद्म एवं रत्न द्वारा देवतायणकी पूजा और भिक्षुकी भूमि-पेक देना उचित है। उस समय कुगनिर्मित ब्राह्मणकी अपने दक्षिण और अग्निकी सम्मुख स्थापन करे। अनन्तर खदिर, पलाय, देवदाह, विष्व अथवा घट, यक्षदुम्बुर, अश्वत्थ तथा मधुक चार प्रकारके काष्ठसे दधि, मधु और घृत लगा कर अग्नि जनाना चाहिये। उसी अग्निसे आचार्य प्रणव एवं व्याहृति मन्त्र द्वारा देवता तथा ऋषिका आवाहन करे और शिष्यको भी वेदी हीं करनेकी आज्ञा दे। फिर आचार्य तीग बार शिष्यको अग्निसंघर्ष कराये और अग्निछाया कर सुनादे—जाम, कोष, लोम, मोह, अभिमान, पक्षद्वार, ईर्ष्या, कर्क-शता, खलसमाय, असत्य, पातस्य एव नन्दनीय कार्य छोड़ दो। यह संमस्त परित्याग कर अन्य नष्ट एवं



यथैतः पार्ष्णिपका कर्मनागमस्य महा प्रसूति सुसू-  
 त्तस्य सुसू दीपसमूहो ज्ञो ज्ञेयः । किञ्च सुसू  
 दीपसमूहस्य सप्तर्षि सप्तर्षिष्य व्यापनका प्रमाप कदा  
 ६ । द्विषो पार्ष्णिप मितान्त्रो प्रसूत्यै पार्ष्णिपस्य न  
 पदनी मी प्रसूतस्यस्य दी-पक वात सप्तर्षि ।

રામાયણે નિર્દેશાનુસાર સ્થિતપથ પર રામચન્દ્ર પૌર  
મન્દાપ મોતાકો ધોજાને વદ્દૂરવર્તી દુર્ગમ ભદ્રા  
ગયે છે. કિન્તુ ભદ્રા ક્યાં છે? વર્તમાન ટેંગીય  
પૌર વિટેંગીય ભોગોલિક એક પાદને સિંહલ યા  
મોબોન કહ્યાને સામે સૌપકા થી પ્રાધોન નામ ભદ્રા  
જ્ઞાતિ છે. કિન્તુ યદ મિદાન સહત સમગ્ર નહીં  
પ્રકૃતા. અતિ પૂર્વ કાલકે હો હમારે પ્રાધકાર ભદ્રા  
પૌર સિંહલકો રાતના હોવ માખતે પાયે છે. મિષ્ઠ-  
ખિણિત શ્રીક દેવર્તે હો મદલા ચન્દ્રેષ મિટ આયેમા.

“विष्णुः कुरुते मनुजान्, तं विष्णुं विष्णुः कुरुते मनुजान् ॥”

( अष्टाध्यायी, सूत्र ३.३.१०० )

<sup>4</sup> लक्षा लाला/रुनाये व डी/रि/का विषय टिप्पणी ३ २० ॥

सुदमा: मि'दु'म'य' इ'य' क'म'म'म'म'म'म' १ १० ११

( ॥ १०० ॥ )

मिथा ११के भागगत ( ४१८।१० ) एवं हृदय-  
मंजिता प्रकृति प्राचीन यत्नमें सदा और निरुद्ध दोनों  
नृत्य ही जैम उद्घाटित है ।

ब्रह्माण्यपुराणम् लिखा है, कि महापुरो मन्त्र-  
कोषके यन्त्रार्थ है।<sup>१०</sup> यान्त्रिक पूर्ण उपरीषदे यन्त्र-  
मंत्र ज्ञान देग दक्षिण्यत विष्णोर् मूर्तिस्वामी  
मन्त्र-मन्त्रोद्घोष कहते हैं। वह उपरीषदे पण्डित

पर्वणत है। वनेमम मन्मम जातिहा माधीन इति।  
 काम पदमे सममके, कि मन्ममामी पदमे गुणाया  
 होवते मन्मदाय कामम स्वागत रहते है। पदमे मन्मम  
 पादितोपका स्वागत पा। पदमेकी ये मन्मम भी कहते  
 है। इम मन्मम जातिकी भागी पाक भी गुणाया  
 मन्मम होवते पदमेगिया पार पदमि मन्ममाम्मम  
 पदमेग पदमेग है। १ भाग मन्ममाम्मम इम  
 होवमन्ममम प्राय एक भागी मन्मममे मन्मम का  
 मन्मम सकुते—ये मन्ममामी मिय देगीव विमम  
 जातिवानी पदमे एक जातिके है। कोरे पदम  
 पदमाम्मम रहते भी मन्मममे मन्मम मन्मम भूये पोर  
 कोरे मन्मम होते भी फिर पदमाम्मम मेदमे मन्मम  
 पदमम मन्मम गये।

मलयवासी जातिके लोग रथ; या राक्षस नामके रामायणमें कहते हैं। आजकल हमदीयों निकटवर्ती क्षीरम दीपमें एकप्रकार कदाकार भौवप लव्वरूप चक्षुष्य जातिके लोग रहते हैं। उनमें सभीको रक्त कहते हैं। उनका प्यारा भी राक्षस की तरह ही है। हमी दीपमें सरासाज नामक एक मगर है। यह नाम भी वृद्धत गरासाज। मनुष्य। चक्षुष्य-जैसा समझ सकते हैं। इस दीपके निकट ही आज भी राक्ष, कपार, मीन और भ्रम प्रभृति रामायणमें वीरगर्षक नामानुसार जिनमें जो भ्रम एव ही विद्यमान हैं।

उक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि राजकीय राजस्व-  
कायमों में राजस्व वर्धमान शुभता प्रगति हो-  
पुत्रों से बर मादा मास्तर वर्धन विद्यमान है।

က. <sup>၁၁</sup> သူတို့၏ နှစ်စဉ် အသက်မွေးဝမ်းကျောင်း

[illegible]

အဘိုးက နားထောင်နေကြရင်း ခုနက

**अष्टादशसंस्कृतशब्दकोषः**

संज्ञा विज्ञानः नृपः अक्षयः नृपः नृपः

ਅੰਤਰਰਾਸ਼ਟਰੀ ਵਿਕਾਸ ਸੰਗ੍ਰਹਿ : ੧੦

本報 廣告刊例 電話：二二二二

निम्नलिखित सूची में दिए गए पदों में से सही पद चुनिए।

पञ्चमः अङ्कः

[illegible]

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

\* *Civilian's Index Analysis*, Vol. II, p. 2712.

[illegible][illegible]

6. *Das ist eine tolle Idee!* (That is a great idea!)

\* English Postmaster (Germany), Vol. II.

1015 Vol III p.261 ~~XXXXXXXXXXXXXXXXXXXX~~

3. 研究人員在進行研究時，應如何處理研究對象的隱私？

... 1992, 1993, 1994, 1995, 1996, 1997, 1998, 1999, 2000, 2001, 2002, 2003, 2004, 2005, 2006, 2007, 2008, 2009, 2010, 2011, 2012, 2013, 2014, 2015, 2016, 2017, 2018, 2019, 2020, 2021, 2022, 2023, 2024, 2025, 2026, 2027, 2028, 2029, 2030, 2031, 2032, 2033, 2034, 2035, 2036, 2037, 2038, 2039, 2040, 2041, 2042, 2043, 2044, 2045, 2046, 2047, 2048, 2049, 2050, 2051, 2052, 2053, 2054, 2055, 2056, 2057, 2058, 2059, 2060, 2061, 2062, 2063, 2064, 2065, 2066, 2067, 2068, 2069, 2070, 2071, 2072, 2073, 2074, 2075, 2076, 2077, 2078, 2079, 2080, 2081, 2082, 2083, 2084, 2085, 2086, 2087, 2088, 2089, 2090, 2091, 2092, 2093, 2094, 2095, 2096, 2097, 2098, 2099, 2100, 2101, 2102, 2103, 2104, 2105, 2106, 2107, 2108, 2109, 2110, 2111, 2112, 2113, 2114, 2115, 2116, 2117, 2118, 2119, 2120, 2121, 2122, 2123, 2124, 2125, 2126, 2127, 2128, 2129, 2130, 2131, 2132, 2133, 2134, 2135, 2136, 2137, 2138, 2139, 2140, 2141, 2142, 2143, 2144, 2145, 2146, 2147, 2148, 2149, 2150, 2151, 2152, 2153, 2154, 2155, 2156, 2157, 2158, 2159, 2160, 2161, 2162, 2163, 2164, 2165, 2166, 2167, 2168, 2169, 2170, 2171, 2172, 2173, 2174, 2175, 2176, 2177, 2178, 2179, 2180, 2181, 2182, 2183, 2184, 2185, 2186, 2187, 2188, 2189, 2190, 2191, 2192, 2193, 2194, 2195, 2196, 2197, 2198, 2199, 2200, 2201, 2202, 2203, 2204, 2205, 2206, 2207, 2208, 2209, 2210, 2211, 2212, 2213, 2214, 2215, 2216, 2217, 2218, 2219, 2220, 2221, 2222, 2223, 2224, 2225, 2226, 2227, 2228, 2229, 2230, 2231, 2232, 2233, 2234, 2235, 2236, 2237, 2238, 2239, 2240, 2241, 2242, 2243, 2244, 2245, 2246, 2247, 2248, 2249, 2250, 2251, 2252, 2253, 2254, 2255, 2256, 2257, 2258, 2259, 2260, 2261, 2262, 2263, 2264, 2265, 2266, 2267, 2268, 2269, 2270, 2271, 2272, 2273, 2274, 2275, 2276, 2277, 2278, 2279, 2280, 2281, 2282, 2283, 2284, 2285, 2286, 2287, 2288, 2289, 2290, 2291, 2292, 2293, 2294, 2295, 2296, 2297, 2298, 2299, 2300, 2301, 2302, 2303, 2304, 2305, 2306, 2307, 2308, 2309, 2310, 2311, 2312, 2313, 2314, 2315, 2316, 2317, 2318, 2319, 2320, 2321, 2322, 2323, 2324, 2325, 2326, 2327, 2328, 2329, 2330, 2331, 2332, 2333, 2334, 2335, 2336, 2337, 2338, 2339, 2340, 2341, 2342, 2343, 2344, 2345, 2346, 2347, 2348, 2349, 2350, 2351, 2352, 2353, 2354, 2355, 2356, 2357, 2358, 2359, 2360, 2361, 2362, 2363, 2364, 2365, 2366, 2367, 2368, 2369, 2370, 2371, 2372, 2373, 2374, 2375, 2376, 2377, 2378, 2379, 2380, 2381, 2382, 2383, 2384, 2385, 2386, 2387, 2388, 2389, 2390, 2391, 2392, 2393, 2394, 2395, 2396, 2397, 2398, 2399, 2400, 2401, 2402, 2403, 2404, 2405, 2406, 2407, 2408, 2409, 2410, 2411, 2412, 2413, 2414, 2415, 2416, 2417, 2418, 2419, 2420, 2421, 2422, 2423, 2424, 2425, 2426, 2427, 2428, 2429, 2430, 2431, 2432, 2433, 2434, 2435, 2436, 2437, 2438, 2439, 2440, 2441, 2442, 2443, 2444, 2445, 2446, 2447, 2448, 2449, 2450, 2451, 2452, 2453, 2454, 2455, 2456, 2457, 2458, 2459, 2460, 2461, 2462, 2463, 2464, 2465, 2466, 2467, 2468, 2469, 2470, 2471, 2472, 2473, 2474, 2475, 2476, 2477, 2478, 2479, 2480, 2481, 2482, 2483, 2484, 2485, 2486, 2487, 2488, 2489, 2490, 2491, 2492, 2493, 2494, 2495, 2496, 2497, 2498, 2499, 2500, 2501, 2502, 2503, 2504, 2505, 2506, 2507, 2508, 2509, 2510, 2511, 2512, 2513, 2514, 2515, 2516, 2517, 2518, 2519, 2520, 2521, 2522, 2523, 2524, 2525, 2526, 2527, 2528, 2529, 2530, 2531, 2532, 2533, 2534, 2535, 2536, 2537, 2538, 2539, 2540, 2541, 2542, 2543, 2544, 2545, 2546, 2547, 2548, 2549, 2550, 2551, 2552, 2553, 2554, 2555, 2556, 2557, 2558, 2559, 2560, 2561, 2562, 2563, 2564, 2565, 2566, 2567, 2568, 2569, 2570, 2571, 2572, 2573, 2574, 2575, 2576, 2577, 2578, 2579, 2580, 2581, 2582, 2583, 2584, 2585, 2586, 2587, 2588, 2589, 2590, 2591, 2592, 2593, 2594, 2595, 2596, 2597, 2598, 2599, 2600, 2601, 2602, 2603, 2604, 2605, 2606, 2607, 2608, 2609, 2610, 2611, 2612, 2613, 2614, 2615, 2616, 2617, 2618, 2619, 2620, 2621, 2622, 2623, 2624, 2625, 2626, 2627, 2628, 2629, 2630, 2631, 2632, 2633, 2634, 2635, 2636, 2637, 2638, 2639, 2640, 2641, 2642, 2643, 2644, 2645, 2646, 2647, 2648, 2649, 2650, 2651, 2652, 2653, 2654, 2655, 2656, 2657, 2658, 2659, 2660, 2661, 2662, 2663, 2664, 2665, 2666, 2667, 2668, 2669, 2670, 2671, 2672, 2673,

ପିଣ୍ଡ ୨୫୧୦୧ କାମପତ୍ର (୩୩୫୫)

अथवा प्राचीन मलयजाति सुदूरवर्ती मादागास्कर प्रभृति सकल द्वीपोंमें उपनिवेश करती रही होगी। मलयभूमिमें निरुक्त विवरण देखो।

अन्ततः ब्रह्माण्डपुराणके मतानुसार यह बात मानना पड़ेगी—मलयमें ही लङ्कापुत्री रही। रामायणके अनुसार इसी मलयका नाम सुवर्णद्वीप था। आजकाल इसे सुमात्रा कहते हैं।

वर्तमान मानचित्रमें सुमात्रा द्वीपके उत्तर पूर्वार्धमें पर्वतके श्रानुदेशपर समुद्रके निकट 'सीनी लङ्का' नामक एक नगर है। यह "खर्णलङ्का" शब्दका अपभ्रंश-जैसा ही समझ पड़ता है। क्रि. इसी द्वीपके अन्तर्गत हीरक अन्तरीप (Diamond Pt.) के निकट एक मन्दिरको आज भी 'लङ्का' कहते हैं। इस समय भी इस द्वीपके उत्तर पश्चिमार्धमें काश्चनगिरि (Golden Mt.) विद्यमान है। \*

उक्त प्रमाणसे रामायणोक्त 'लङ्कापुत्री' अथवा 'सुवर्ण-द्वीप' से वर्तमान सुमात्रा द्वीपकी प्रचीन लङ्काका बोध होता है। सुमात्राद्वीप, यहद्वीप और फोरिस द्वीपसे दक्षिण-पश्चिम प्रवाहित सुमुद्रको आज भी स्थानीय लोग जातिवाले 'लङ्काई' सागर कहा करते हैं। इसके द्वारा भी लङ्काके स्थानका निर्णय हो सकता है।

सुमात्रा द्वीपमें हिन्दुजातिका लेश मात्र न रहने, हिन्दु-निमित्त मन्दिरादिका अन्वेषण तब तक देख न पड़ते और इतिहासमें कुछ न लिखते भी ऐसे अनेक प्रमाण मिलते, जिनके द्वारा हम सुलक्ष्णसे मान सकते, कि श्रीरामचन्द्रके आगमन बाद भारतवासी स्वर्णके लाभकी आशासे उस स्थानपर जा पहुँचते थे।<sup>†</sup> इस द्वीपमें आज भी मङ्गल, इन्दुगिरि, इन्द्रपुर आदि हिन्दु-प्रदत्त संस्कृत नामके नगर तथा नदी नद

विद्यमान हैं। मलयजातिवाले जिस स्थानकी अपनी आदि जन्मभूमि समझ गौरव बढ़ाने और प्रयोजके अपर सकल स्थानकी अपेक्षा जहाँ समझित सुवर्ण पाते हैं, वही स्वर्णमय भूमिके निकट आज भी इन्द्र-गिरि नामक नद प्रवाहित है। उक्त नामसे स्पष्ट ही हृदयङ्गम हुआ, कि एक समय हिन्दुोंने सुमात्रा द्वीपमें जा उपनिवेश किया था। कृपया देखो।

उसके बाद ही यहद्वीप है। इसका बहुतसा प्रमाण मिला, कि उक्त स्थानमें किसी समय भारतवासी-योंने उपनिवेश किया और अपनी धर्मकी विरोध प्रवृत्त बना दिया था। अद्यापि यहद्वीपके प्रस्थान नामक स्थानमें बहुसंख्यक देवमन्दिर देख पड़ते हैं। उक्त मन्दिरसमूहमें इस समय भी शिव, दुर्गा, गणेश, विष्णु, सूर्य प्रभृति देवताओंकी पाषाणमयी और पित्तनमयी मूर्तियाँ विराजमान हैं।<sup>‡</sup> हिन्दुधर्मावलम्बी राज-गणने बहुकाल पर्यन्त इस स्थानमें राज्य किया। बौद्धधर्म बढ़ने पर यहांके धर्मनिष्ठ भारतवासी बालि-द्वीपमें जाकर रह गये। यही पृथक् है।

बालिद्वीपमें आज भी हिन्दु धर्म प्रबल है। अद्यापि यहांके राजा श्रेयसतावस्यों देख पड़ते हैं। वहाँ पूर्वकालीन भारतीय राजनीतिक अनुसार माध्यम विचारकका कार्य किया करते हैं। पतिके मरनेपर सती उसकी सङ्गामिनी बनती है। यह देखो। फिर भी इसके समझनेका कोई उपाय नहीं—कितने दिनों वहाँ भारतीय उपनिवेश स्थापित हुआ है।

बालि द्वीपके बाद हो लम्प्य द्वीप है। यह भी इस समय हिन्दु राजाके अधीन है। यहां हमारी प्राचीन स्मृतिके अनुसार राजकार्य और विवाहादि निर्वाह हुआ करते हैं। कितनी कठिनी कहा, कि बालि द्वीपके हिन्दुोंने वहाँ पहुंच उपनिवेश किया था न लम्ब देखो।

ब्रह्माण्डपुराणके मतसे मलयद्वीपके पूर्व मङ्गदीप

\* ब्रह्माण्डपुराण इसीको 'काश्चनपार' नामसे मलयद्वीपके लक्ष्य बताता है। "तथा काश्चनपारं मलयद्वीपं पश्य" (ब्रह्माण्डपुराण ३८५०)

† ब्रह्माण्डपुराणके निम्नलिखित वचनसे इसका किस्सा हो प्रतीय पति, कि रामके बाद इस लङ्काद्वीपमें बहुतसे लोग स्वर्णके लाभकी आशासे जाते थे।—

"मविशन्ति त्वं कानि दरिद्रा वृत्तमानवः।

निरुत्तरास्तु शीघ्रं देवता-देवताय च ॥ ३०

(निष्प्रेषणमिच्छन्ति स्वर्णं ॥ ३१) (बालरत्न २४५०)

—ब्रह्माण्डपुराणमें यह भी निम्न, कि रामके वनवास के लिये उनके पुत्र कुम्भका मलय लक्ष्यमें हुआ था। (बालरत्न २८५० २००२ जी०) इस कुम्भकाके मार्गका 'द्वय' नामक द्वीप रामद्वीप के लिये ही प्रयोज्य पड़ता है।



धीरे-धीरे सुप्त होने लगा। प्रायः ५१ ई० पूर्वार्द्धमें वणिक्पति कुन्तिपन ( कुण्डिन ) सदस्य चीनमन्दिरमें जा उतरे। इन्हीं महात्मानों चीन-समुद्रके कूलपर कम्बोज या वर्तमान कम्बोजिया नामक स्थानमें हिन्दू राजवंश प्रतिष्ठित किया था। कम्बोज देखो।

कम्बोजमें हिन्दू राजवंशकी प्रतिष्ठाके साथ चीन-वासियों द्वारा उत्पन्न आर्य वणिक् दलदलमें कम्बोज-प्राये। इसीसे अतःपर चीना इतिहासमें भारतीय वणिक्गणका कोई सम्मान नहीं मिलता। कम्बोज जातिवाले, कहते—‘रोम’ देशके अन्तर्गत तत्तुशिया नामक स्थानसे पतिनिकट एक धार्मिक राजा राजत्व करते थे। उनके पुत्र सुवराज ‘कुथीङ्ग’ किसी दुष्कर्म पर, राज्यसे निर्वासित हुये। उन्होंने नाना स्थान घूमकर इस स्थानमें पहुंच नूतन राज्य स्थापन किया।\*

अतएव उक्त प्रयादसे समझ पड़ा, प्राचीन हिन्दू-बौद्धा तत्तुशियाके निकटवर्ती जिस स्थानसे उक्त स्थानका गमन हुआ, उसका नाम भी कम्बोज रहा। वे इस दूरदेशमें जाकर भी जलभूमिको भूल न सके थे। इसीसे सन्देश और अजातिके नाम-पर ही उन्होंने इस स्थानका नाम कम्बोज रखा। इस स्थानसे निकली शिलासिपिमें ५१६ ई० तक काष्ठका उल्लेख मिला है। इससे अनुमान हुआ, कि कम्बोज-निवासी हिन्दुबौद्धों ई० पहले पश्चिम शताब्दीके बड़े पूर्व उस स्थानपर उपनिवेश-स्थापन किया था।† इस समय यहां हिन्दुबौद्धों ने रहते पाया उनके भिन्न धर्मकी अवलम्बन करते भी आज असंख्य शिव, विष्णु, हरिश्चर, पार्थवी, ब्रह्मा और शिवनागके प्राचीन मन्दिर विद्यमान हैं। उनमें थोड़े-थोड़ेके चतुर्मुख ब्रह्माका मन्दिर पति चमत्कृत है।

कम्बोजके निकट ही श्यामदेश है। यहांके सभी लोग बौद्ध धर्मावलम्बी हैं। किन्तु मन्दिर और

चैत्यमें इसका बहुतसा निदर्शन मिला, कि एक-काल यहां भी हिन्दुबौद्धों ने जा वास किया था। आज भी बौद्ध मन्दिरोंमें रामलोला अर्पित है। श्यामदेशकी राजधानीके बीच प्रसिद्ध गौतमबुद्धवाले मन्दिरके पार्श्वमें तीन हिन्दुबौद्धों के देवालय देख पड़ते हैं। इन तीनों मन्दिरोंमें हरपार्वती, लक्ष्मी, विष्णु, ब्रह्मा प्रभृति देव-गणकी मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। एक मन्दिरमें प्रकाण्ड शिवमूर्ति है। वह कः हाथमें मो व्यादा कांछी है।\* एक मन्दिरमें केवल गणेशकी ही पूजा होती है। यहांका बटनाक नागमन्दिर भी अतिप्रसिद्ध है। इस मन्दिरमें कभी-कभी दो-एक हिन्दू पण्डे देख पड़ते, जो भक्त हो गेव ब्राह्मण हैं। वे किसी निकटस्थ ग्राममें रहते हैं। वे यताते—हमारे पूर्वपुरुष राम-खरसे यहां प्राये थे। श्याम देशकी राजधानीमें दो-एक दैवज्ञ हिन्दू अवस्थान करते हैं। उनके पूर्व-पुरुष १४०६ ई०में भारतवर्षमें श्याम गये थे।

इसका कितना ही प्रमाण मिला, कि पूर्व-उप-दीपकी छोड़ी भारतमहासागरीय दीपपुच्छ—यहांतक, कि सैलिविय दीपमें भी हिन्दुबौद्धोंका उपनिवेश हो गया था।†

इस स्थलपर सिंहल दीपमें हिन्दुबौद्धोंके उपनिवेश सम्बन्धकी दो-एक बात कहना आवश्यक है।

महाभारतके समय यहां सिंहल नामक चमत्कृत जातिके लोग रहते थे। उसी प्राचीन कालमें इस दीपसे मणिमुक्ता भारतवर्षको भेजे गये। ( महाभारत कथा ११० ) उसके परवर्तिकालमें इस स्थानपर भारतवासियोंके आते-जाते भी कोई सविशेष प्रमाण नहीं मिला, कि उन्होंने वहां उपनिवेश स्थापन किया। महावंश नामक पालिपत्रमें लिखते—बङ्ग-देशके लाङ्ग ( राङ्ग ) राज्यमें सिंहवाङ्ग नामक एक प्रजापुत्र राजा रहते थे। उनके सौष्ठव पुत्र विजय किसी गुह्यतर अपराधपर अदेशसे चिरदिनके जिये निर्वासित हुये। बङ्गराजकुमारने कतिपय बन्धु

\* Die Völker der Oestrichen Asien, Von Dr. A. Bastian, p. 398.

† Journ. Anthropological Society of Bombay, Vol. I, p. 516

\* Crawford's Embassy to the Courts of Siam and Cochin China, p. 119.

† Crawford's History of Celebes, Vol. II, p. 832.

साथ ले समुद्रके पयसे यात्रा की। जनमें धूमते-धूमते वे सागरतीरवर्ती शूर्पारक नामक वन्दरमें जा पड़े थे। किन्तु इस भयसे वे फिर अकूल समुद्रमें चलने लगे,—यहां रहनेसे कोई दूसरा अनिट न पड़े। अफघ्यात् प्रबल तूफानसे विजयका जलयान टूट गया था। विजय और उनके सहचरोंने समुद्रतरङ्गमें डूबते-सकलते एक स्थानपर किनारीकी भूमि पायो। इस स्थानका नाम ताम्रपर्ण (वा सिंहल) था। उस समय उक्त स्थानमें यक्षोंका वास रहा। विजयने कूबेची नाभी एक यक्षिणीके साहाय्यसे इस स्थानकी जीता था। उस समय जो जो व्यक्ति राजकुमारके साथ आये, उनमें कितनों ही ने स्व-स्व नामके अनुसार उक्त द्वीपमें नगर बसाये—जैसे अनुराधपुर, विजितनगर प्रभृति। इसीप्रकार ई० से ५४३ वर्ष पहले सिंहल द्वीपमें सबसे आगे बङ्गाकी उपनिवेश संस्थापित हुआ था। (महाभारत १४ और १५ परिच्छेद) समागत बह्मवासी सकल ही सनातन हिन्दू धर्मावलम्बी थे। किन्तु राजा अशोकके समय कितनों होने बौद्धधर्म ग्रहण किया। (विष्णु देवी)।

अब देखना चाहिये—प्राचीन कालमें हिन्दू भारत-वर्ष छोड़ उत्तर और पश्चिम कितनी दूर तक गये थे। इधर सुदूर एशिया-माइनर प्रदेशके बोघरुई नामक स्थानमें बिंकर नामक जर्मन पुराविदके प्रयत्नपर भूगर्भसे जो सकल प्राचीन निदर्शन निकले, उनके पढ़नेसे हम मालूम कर सके—ईसा जन्मके १५०० वर्ष पहले इस प्रदेशमें वैदिक आर्य सभ्यता फैल गयी थी। कास्य (Kassite) नामक आर्योंने उस सुदूर प्रदेशमें आधिपत्य जमाया। वे भारतीय वैदिकोंकी तरह इन्द्र, वरुण, नासत्य आदि देवताओंके उपासक रहे। बाबिलनके सुप्राचीन इतिहासमें हमें समझ पड़ा—ईसाके १८५० वर्ष पहले कास्य नामक जातिसे बावेरुकी सभामें प्रथम पञ्च परिचित हुआ। पुराविदोंके मतानुसार की अधिक सुदूर पश्चिम में आर्य सभ्यता चेष्टासे युरोप खण्डमें

चीना परिभाजकोंकी वर्णनासे समझ पड़ा, कि ई० छतौयसे पञ्चम शताब्दी पर्यन्त कासीय सागरके तीरपर हिन्दू धर्मका कुछ कुछ निदर्शन रहा, उस समय कथप प्रस्थति सुनिर्वाका आश्रम विद्यमान था। कह नहीं सकते—इस समय वहां हिन्दू रहते हैं या नहीं। यह भी हो सकता, कि विधर्मियोंके प्रभावसे समोने भिन्न भिन्न धर्मको अवलम्बन किया हो। पुराणपुरी नामक एक ऊर्ध्ववाहू हिन्दू सन्तगोष्ठीकी वर्णनासे समझे, कि वे कासीय सागरके तीरपर ज्वाला-मुखी नामक तीर्थको गये थे। उस समय अष्टाकान् और पोरस्यके दक्षिणस्थ खरेक नामक द्वीपमें भी हिन्दू रहे। यद्यतक, कि तुरस्क राजाके बसरा नामक नगरमें अनेक हिन्दू वास करते थे। वहाँ कल्याणराय और गोविन्दराय नामक देवताओंकी मूर्तियाँ विद्यमान थीं। (Asiatic Researches, Vol. V, p. 41—52.)

उक्त पुराणपुरीकी वर्णनासे फिर समझ पड़ा, कि उस समय युरोपीय रुसरारण्यके मस्की नगरमें इन्होंने हिन्दुत्वसे साक्षात् किया था। इस वर्णनाके प्रसूत्रक न ठहरते मानना पड़ेगा, कि एक समय हिन्दुत्वमें युरोपीय रुसरारण्यमें पड़ने उपनिवेश लगाया। निम्नलिखित इतिहास पढ़नेसे सम्भव हैसा समझ पड़ता है, कि अतिप्राचीन कालमें हिन्दुत्वने युरोपमें जा उपनिवेश किया था—

जेनोविया नामक एक सैरीय ईसाईने ई० छतौय शताब्दीकी प्रारम्भनी भाषामें एक इतिहास लिखा था। इस ग्रन्थमें वर्णित है—“देमैतर और किसानों दो हिन्दू राजकुमारोंने राजाके विपक्षमें सानिध की थी। राजाने उन्हें पकड़नेके लिये सैन्य भेजा। अभयने राजदण्डके भयसे स्वदेय छोड़ बल्लभकेय नामक राजाका आश्रय लिया था। उस राजाने दोभोका धीरोन नामक राज्य दे दिया। यहां हिन्दू राजकुमारद्वयने विसर्प (विद्याप) नामक एक नगर बसाया था। उसके बाद पाटिपट्ट नामक स्थानमें पड़ने वे भारत-वर्ष तक स्थापन करने लगे। इसी समय हिन्दू उपनिवेश स्थायी परलोककी गमन किया।

फिर उस देशके राजाने आठहथके तीन पुत्रोंको वह राज्य बांट दिया था। तीनों पुत्रोंका नाम कुमार, मेघती और हरिण था। उन्होंने ख-ख नामके शत्रु-सार ग्राम पत्तन बसाये। कुछ दिन बाद तीनों भाई ख-ख वासस्थान छोड़ एक सुखसेव्य पर्वतपर पहुँचे। उसी जगह उन्होंने अपने पितादेवके आरण्या देभेतर और केगानी नामक दो बृहत् देवालय प्रतिष्ठित किये थे। उन दोनोंकी मूर्ति सुकुट और पीताम्बर पहने हैं। इस समय परमेनियाके अनेक राजपुत्र उसी देवोपासक सम्प्रदायमें मिल गये। किन्तु यह धर्म वहाँ अधिक दिन न टिका। कुछ काल बाद ईसाई धर्म चलानेके लिये सैण्ट जेगरी इस प्रदेशमें पहुँचे थे। इसी समय परमेनिया-वासी हिन्दुओंके साथ ईसाइयोंका घोरतर युद्ध हुआ। अनेक बार युद्ध होनेकेबाद प्रायः चार-पाँच सहस्र देवोपासक निहत्त और हिन्दुओंके नाना स्थानीय देवमन्दिर विध्वस्त एवं चूर्णीकृत हुये। फिर प्राणके भयसे किसी-किसीने ईसाई धर्म अवलम्बन किया था।

प्रकाशानन्द नामक एक प्रसिद्ध ब्रह्मचारी काशीमें रहते थे। उन्होंने सुँहसे किसी-किसीने सुना, कि समुद्रपथसे अरबके मस्काट नामक नगर पर्यन्त उन्होंने गमन किया था। ये कहते कि सफ़्ट नगरमें स्थान-स्थानपर दो-एक हिन्दू रहते थे। किसी-किसीके कथनानुसार अफ़रीकीके पूर्वांशपर जोहूर (सुखतर द्वीप) नामक द्वीपमें काम्याज हिन्दुओंका वास था।

इधर इसका भी प्रमाण मिला, कि सुदूरवर्ती अमेरिका खण्डमें किसी समय हिन्दुओंने जा उपनिवेश किया। जिस समय कोलम्बुसका जन्म नहीं हुआ, जिस समय प्राचीन अरबवासियोंकी अमेरिकाका सन्धान पर्यन्त न लगा, उस समयसे भी बहुत पहले हिन्दुओंका अमेरिकामें जाना जाना रहा। मध्य अमेरिकामें जिन प्राचीन मन्दिरादिका सम्भाव्येष पड़ा है, उनके गठनकी प्रणाली संशयमें दक्षिण-भारत एवं भारत सागरीय दीपस्थित हिन्दू मन्दिरकी तरह है।

भारतकी तरह मेक्सिकोके सितस नामक स्थानमें पर्वत खोदकर बने मन्दिरादि देखनेसे सहज ही माना कि हिन्दुओंने वहाँ जा उस सकल शिल्प-कार्यको सुसम्पन्न किया था। वहाँ प्रस्तर-खोदित अनेक देवमूर्ति भी देख पड़ती हैं। वे अनेकांशमें इस देशकी हिन्दू देवदेवीके सदृश हैं। दक्षिण-अमेरिकाके टिटिकाका झरुके तीरपर भी भारतवर्षीय शिल्प-चातुर्य प्रकटित है। मेक्सिकोवासी गणेशका चित्र खींचते हैं। जिस देशमें पड़ते हस्ती मिलाता न था, उस देशमें इस मूर्तिका कल्पित होना भी संभव नहीं। पानामसे भाविष्कृत बहुतर शिता-फलकमें सूर्यवंशीय 'इन्द्र' उपाधिधारी राजगणका नाम लिखा है। संभवतः अहर्के सूर्यवंशकी कोई-कोई राजकीय शाखा अमेरिका जा 'इन्द्र' नामसे परिचित हुई। यह अमेरिकामें 'रामसीतोपा' नामक महोत्सव करती थी। यह भारतीय प्रसिद्ध उत्सव रामसीताका अनुकरण जैसा समझ पड़ता है।

फिर इसकी प्रमाणका कोई अभाव नहीं, कि उत्त-माग्रा अन्तरीप लांघ तुपाराहत उत्तर महासागरसे भारतीय बन्धु दो सहस्र वत्सरमें भी बहुतपूर्व घेरे हटेन और जर्मनीमें जाकर वाणिज्य चलाते थे। सुप्रसिद्ध रोमक ऐतिहासिक तासीतास्के वर्णित उत्तर देशका इतिहास उद्धार कर—उनके शत्रुवर ग्रीनीने लिखा है—ई० पूर्वं ६० वर्षकी कितने ही भारतवासी वाणि-ज्यके उपलब्धमें समुद्रपथसे वृक्षान द्वारा विताडित हो जर्मन उपकुलपर जा पड़े थे। सुवेवियराजने उन्हें उपहारस्वरूप गलके प्रधान शासनकर्ता मेटेलास्के पास भेज दिया।

अब देखना चाहिये—प्राचीन युरोपीयोंने किस तरह और किस लिये अपने जगन्मृति छोड़ भिन्न भिन्न देशमें जा उपनिवेश स्थापन किया।

जो जाति पूरे कालको युरोपमें फनिक वा फि-निशीय नामसे प्रसिद्ध रहें, वही जाति भारतवर्षमें वैदिक युगपर पवि लही गयी। भारतमें पार्य-वैदिक प्रतिहासे पहले पणि जातिने बहु स्थानपर अधिकार जमा लिया था। प्रायः भारतके उच्च जातिने

\* यह सच ही है अरब नगरों की समक कहते हैं।

सुदूर पैगिया माइनरमें जा उपनिवेश स्थापन किया। उसीके नामांशुसार उपनिवेश भी फिनिसिया कहलाया है। यह वर्धमें विचारित विषय देखो।

जितनी ही फिनिसियामें उसकी संस्था बढने लगी, उसी ही अपना देग छोड़ जलके पथसे नूतन यावास-भूमि ढूँढनेकी धूम पड़ी। क्रमसे उन्हें नूतन-नूतन जनपद देखनेको मिले थे। अपनी वाणिज्यमें सुविधा लानेके लिये जो जो स्थान अच्छा लगा, उसी उसी स्थानमें लोगोंका एक-एक दल रह गया। इसी प्रकार उन्होंने समुद्रपथसे टायर, हियो, हट्टमत, टटिक, तुनिस और फफरीकामें बहुत दूरतक अपना उपनिवेश जमाया था। जिस जिस स्थानमें उन्होंने अधिकार वा उपनिवेश जमाया, वही वही स्थान उनके स्वदेशीय राजगणके शासनाधीन कहाया। फिर काल याकर उनके स्वाधीन बन बैठे। जो व्यक्ति जिस देशमें वाणिज्यके बलसे विलक्षण प्रभावशाली निकला, वही व्यक्ति उस देशमें अपनेको एक स्वाधीन राजा बताने लगा। क्रमसे फिनिसीय वाणिज्यके दर्पमें चूर हो बड़े अत्याचारी बन गये थे। क्रौटके राजा माइनरने उन्हें अपने देशसे एककाल ही भगा दिया। युरोपीय ऐतिहासिकोंके कथनानुसार फिनिसीय जातिने सर्व-प्रथम सरदिनियामें उपनिवेश किया था।

उसी समय कार्थेजके निवासी भिन्न प्रणालीसे उपनिवेश स्थापन करनेकी प्रयत्नरत हुए। ये वाणिज्य फैलाना चाहते न थे। नानादेश जीत जम्माभूमिके पदानत बनाना ही उनका मुख्य उद्देश्य रहा। इसी अभिप्रायसे उन्होंने फफरीका, सिसिली, सैन प्रश्रुति स्थानोंमें पहुँच उपनिवेश लगाया। यूनानियोंके उपनिवेशकी प्रणाली फिनिसियोंसे मिलती है। उन्होंने यहके विवाद, छपिके कर्मकी सुविधा, वाणिज्य व्यवसायके अनुसंधान या राज्यके उद्देश्यसे भिन्न भिन्न स्थानोंमें पहुँच उपनिवेश किया था। यूनानियोंका उपनिवेश द्रव्य युद्धके पीछे पारम्भ हुआ। उन्होंने प्रति प्राचीन कालसे ही हट्टसी, सिसिली प्रश्रुति स्थानोंमें उपनिवेशकी नीप डाल दी थी।

चायेसके राजा कट्टके सरनेपर योन (Ionian =

यवन) जातिवालोंने आटिकासे जा पैसिया-माइनरके पथिमकुलपर उपनिवेश किया। उस समय वही स्थान योन जातिवालोंके नामांशुसार 'योनिया' (Ionia) कहलाने लगा। वहाँ उपनिवेश करनेके पीछे योन जातिवाले सम्पत्ति और समृद्धिमें फूल गये। प्रति पूर्वकालकी रोममें आधारपत्तन प्रवृत्त रहा। उस समय रोमक जो स्थान जीत लेते, उन्हीं स्थानोंमें स्वदेशीयोंको उपनिवेश करने भेज देते थे। फिर जहाँ विजित जातिको बहुत ही दुर्दम्य एवं देशकी अवस्था भी अधिक रम्य न देखते पथवा जहाँ नगरादि कुछ न रहते, वहाँ औपनिवेशक अच्छी जगह ढूँढ नगरादि बसाते और सर्वदा देशकी रक्षाके लिये यत्न उठाते थे। इसी प्रणालीसे उन्होंने गल (Gallia), जर्मनी, रूस प्रश्रुति स्थानोंमें उपनिवेश किया। रोमक, औपनिवेशकोंके मत्वे स्थान-स्थानके शासनादिका भार डाल राजकार्य चलाते थे।

अमेरिका प्राविष्कृत होनेपर युरोपकी सब प्रधान प्रधान जातियोंके लोग एक प्रकार पागल जैसे बन गये। उनमें चंगरेजोंको उपनिवेश अधिक फलप्रद हुआ। अमेरिका देखो।

ई० पञ्चदश शताब्दीकी पोर्तुगीजोंने अफरीका और भारतमें पहुँच उपनिवेश जमाया था।

पोर्तुगीजोंके पीछे ही हालेण्डवासियोंने वाणिज्य फैलानेके लिये नाना स्थानोंमें जा उपनिवेश किया। उनमें उत्तमात्रा अन्तरीप, मलक्का और यवहौप प्रधान है। फ्रान्सीसियोंने कनाडा जा उपनिवेश लगाया। किन्तु यह उपनिवेश अधिक सुविधाजनक न निकला। क्योंकि पूर्व अधिवासियोंसे उनकी विलकुल न बनी। सुतरां सट्टद दुर्ग, परिखा और सेनादिको सर्वत्र सर्वदा सज्जित रखना पड़ता था।

नीचे तासिका लगाते, कि भिन्न भिन्न देशके युरोपीय किस किस स्थानमें उपनिवेशके बाद रह-ठहकर आ जाते थे—

इतिहास उपनिवेश—हट्टिय उत्तर अमेरिका, हट्टिय बेट इण्डिया-होपपुच्छ, दक्षिण अमेरिकाका हट्टिय गुवेगा, साहरा-जिबोम; उत्तमात्रा अन्तरीप, वेस्टइंडीज।

मरिचदीप, सिंहल, ग्रिन्थ, भव बेरुस दीप, सिङ्गापुर, मलका, चट्टेलिया और तास्मानियाका कोई कोई स्थान, वानडाइमनसूलेण्ड, जिब्रालटर, माल्टा और हेलिगोलेण्ड। भारतवर्ष अधिकांश अधिकारभुक्त होते भी अंगरेजोंका उपनिवेश समझा नहो जाता।

फ्रांस्का उपनिवेश—सेण्टपायर, मिगुलन और फ्रांसोसी गुयाडेलोप दीपपुञ्ज, अमेरिकाका फ्रांसोसी गिनी राज्य, अफ्रीकाके उपकूलका सेनिगल तथा पौरी, बुर्वन दीप, भारतवर्षका पण्डिचेरी, करिकाल एवं चन्दननगर, मार्केससदीप, नव कालिदोनिया और फाल्जिरीया।

स्पेनका उपनिवेश—अमेरिकाका क्यूबा, पोर्टोरिको तथा भार्जिन दीप, एशियाका फिलिपाइन दीपपुञ्ज और अफ्रीकाका मेसिडियो एवं गिनी दीपपुञ्ज। मेक्सिको तथा दक्षिण-अमेरिकामें भी पहले स्पेन-वासियोंका उपनिवेश रहा, किन्तु पीछे छठ गया।

पारसीका उपनिवेश—कुराशघो दीप, अमेरिकाके गुयेनाका मध्यवर्ती शुटेक एवं हरिनम नामक स्थान और एशियाके मध्य यवदीपकी राजधानी बटेविया, हरनिठ दीपका कितना हो स्थान, सुमात्रा, मिलि-विस, तिमर और मलका दीपपुञ्ज।

डचमार्गका उपनिवेश—वेष्ट इण्डियाके बोचका सेण्ट-क्रुज, सेण्ट जोहन् एवं सेण्ट टमास और गिनीके उपकूलका लूटानबर्ग।

सितारसैरका उपनिवेश—वेष्ट इण्डियाके मध्यका सेण्ट बार्थोलोमी दीप।

उपनिवेशित (सं० द्वि०) 'उप-नि-विश-णिच्-त्'। लोगोंकी उपनिवेशमें बसानेके लिये ले जानेवाला। उपनिवेशिन् (सं० द्वि०) 'लम्न, पैदायशी, लगा हुआ।

उपनिषत् (सं० स्त्री०) उपनिषीदति, उप-नि-सद्-क्तिप् अथवा सद्-णिच्-क्तिप्। १ समीपसदन, पासका सकान्। २ रक्षय, रक्षु। ३ निर्जन स्थान, सूनी जगह। ४ धर्म। ५ हिजाति-वर्तमान्य तत् विषय। ६ वेदका शिरोभाग। उपनिषद्की ऋषिमुनियोंने वेदका शिरोभाग वा वेदान्त बताया है। क्योंकि

वेदके इस अंशमें ब्रह्मविद्या कीर्तित है। वेदके अन्य अंशमें कर्मकाण्ड द्वारा मुख्यसामका उपदेश है। किन्तु उपनिषद्में ज्ञानकाण्डके द्वारा उसीका उपदेश सुनाते, जिससे नित्य आत्मतत्त्व पतते हैं। शास्त्रकारोंने उपनिषद्के अर्थकी इसप्रकार व्युत्पत्ति लगायी है—“वेदानो नाम उपनिषत्पदम्।” (रिदान्तार)

‘उपनिषद्’ शब्द ब्रह्मविद्याका विषय है। उपनिषद् शब्द प्रत्ययान्त तद्गुण विवरणवत्पदवाचक है। उपनिषद् शब्द धनोऽपनिषदिति रूपे। ततोऽप्यन्तः धनोऽप्यन्तः तच्च सद्गोचरमात्रात् सर्वाङ्गे प्रत्ययान्ति पर्यवसति। नित्यतो विषयवचनः शीघ्रि तत्त्वमेव निश्चितोति तत्रैकत्व-वाच्यं यच्च सामानाधिकरण्यात्। तथात्वात् ब्रह्मविद्यामर्मोनिर्वाचकत्वात् सारतामसं सादयति विषयवति विधिनयतोति वा धर्मवत् बोध्यं प्रत्ययान्तं सादयति नमस्ततोति वा दुःखजन्यप्रवृत्तिद्विषयान्तं सादयत्यन्त-व्यवस्थेति उपनिषत्पदवाचा वैयर्थ्यात् तस्याः प्रमादप्रमायाः वारवभूतः सर्वमात्रादुत्तरमानेव मृदुपदानो यत्राशिरुपकारात् प्रमादमित्युच्यते।

(विष्णुसंहिताटीका)

उपनिषद् शब्द ब्रह्मविद्याके ऐक्यसाक्षात्कारका विषय है। ‘उप’ और ‘नि-पूर्वक’ बन्ध, गति और अवसाद-नार्थक सद् धातुके उत्तर क्तिप् प्रत्यय लगानेसे यह नियम हुआ है। उपशब्द सामीप्यका बोधक है। सद्गोचरके अभावसे इसका अर्थ सर्वोत्तर पदब्रह्मरूप प्रत्येकानामें वर्तित हो जाता है। नि शब्दसे नियम निकलता है। उप शब्दके समानाधिकरणसे तत्त्व-निययरूप अर्थ प्रकाशित होता है। अतएव ब्रह्मविद्यामें संयुक्तचित्त न रहनेवालोंको ‘संसार-धार’ बुझिको नष्ट वा शिथिल कर देनेसे इसका नाम उपनिषद् पड़ा है। अथवा इसके द्वारा परम श्रेयः स्वरूप प्रत्येकानामें अर्थान्तरमात्रा परमेश्वर मिल और दुःखजन्यप्रवृत्ति प्रवृत्ति मूल अज्ञान मिट जानेसे इसको उपनिषद् कहते हैं। यही ईश्वरकी सिद्धिके विषयमें प्रमाण और प्रमाण-स्वरूप है। इसका करवभूत समस्त साक्षात्कृत उत्तर-भागमें सत्पुण्यमान प्रत्येकानामें उपधारसे प्रमाण बताया जाता है।

“कम उपनिषद्वाच्यो ब्रह्मविषयश्चैव।  
तत्त्वसाक्षात्कारार्थं विद्यामिव चत्वरणम्।  
उपोपशब्दः सामीप्यं दर्शयतीति समाप्यते।  
आत्मोपासनात्मक विद्याके आत्मोपासनात्”



निविष्य सदसं विमर्शयति विमेषयन् ।  
उपनीय समाप्ताय ब्रह्मपादये यतः ।  
निष्कस्त्रिणां तन्मयं सकाशमिषयते ।  
इति हि उक्तिरेव उपनीयं चेदुच्यते ।  
यतोऽब्रह्मदेविद्या तन्मातृपनिषद्वत् ।  
यतोऽविद्याविमुक्त्यादयोरपि तदभेदतः ।  
अवेदपनिषदामा समिन् भीषन् यथा ।”

उपनिषद् शब्द एकमात्र ब्रह्मविद्यारूप अर्थ प्रकाश करता है। इसके अर्थवश अर्थकी विद्यामें ही संगति होती है। उप उपसर्गका अर्थ सामीप्य है। तारतम्यकी विद्यान्तिके स्वीय आत्मापर ईश्वर हेतु यह प्रत्यगात्मामें पर्यवसित है। फिर यह निःशब्द एवं सदधातुके नाश, गमन और अवसादन विविध अर्थका विशेषण है। जीवात्मरूप चैतन्यको परमात्म-चैतन्यके निकट पहुँचा ब्रह्मके साथ उसका अद्वयत्व भाव-निष्पादन एवं अविद्या तथा अविद्याका कार्य नाश करनेमें इसे उपनिषद् कहते हैं। अथवा उपनिषद् विद्याका प्रवृत्तिके हेतु समस्त निःशेषको विनाश करनेमें इसका नाम उपनिषद् पड़ा है। समस्त अभेद विद्याका हेतु होनेसे जन्मादि जैसे जीवन कहाता, वेसे ही उपचार वग यह प्रत्यभी उपनिषद् नाम पाता है।

तैत्तिरीय उपनिषद्के आरम्भमें शङ्कराचार्यने भी लिखा है—“रां वेदोक्तं निषचम् ।” उपनिषद्में मोक्षके नामका परम मङ्गल निहित है।

यन्तुतः उपनिषद्को सनातन भारतीय धर्मका मूलस्वरूप कहनेसे भी अत्युक्ति नहीं होती। सनातन धर्मके आजतक अक्षुण्ण रहनेका मूल कारण उपनिषद् ही है। उपनिषद्में हमारे धर्मका मूलतत्त्व रचित है। उपनिषद्के पाठसे ही हमने ज्ञान लिया, कि वर्तमान कालकी अपेक्षा पूर्वतन ऋषियगुणने ज्ञानके यत्न कितना निगूढ़ श्रम तत्त्व आविष्कार किया था।

हमारा सनातन धर्म प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है—प्रवृत्ति धर्म और निवृत्ति धर्म। जो धर्मानुयायी पुण्यकर्मोंदि करनेमें हम इहलोक एवं परलोकमें परम स्वर्गसुख तथा अमोय पुण्य पा सकते हैं, उसे प्रवृत्ति-धर्म कहते हैं। यह धर्म वेदके हिता, ब्राह्मण, आरण्यक

एवं सुख भागमें वर्णित है। ऐसे धर्माचरणको कर्म-काण्ड कहते हैं।

दूसरे जिस धर्मके अनुसार हम नित्य शान्ति, अथवा मोक्षपद पाते, जिस धर्मोपदेशके गुणसे ससार संसारके मायामोहादि सङ्ग ही छूट जाते, जिस धर्मके अनुसार असे परमात्मामें जीवामाका लय साधे और जिस धर्मके उद्यापनसे जन्म-मरण-मरण रूप संसारमें फिर नहीं आते, उसका नाम निवृत्ति-धर्म बताते हैं। उपनिषद् नामक वेदके शिरोभागमें यही निवृत्ति-धर्म वर्णित है। उपनिषद्के अनुयायी आचरणको ज्ञानकाण्ड कहते हैं। इसका अर्थ नाम-ज्ञानयोग भी है।

“यदेव विषया कथीत इदमपि निषदा तदेव बोधयत्तम् ।”

(आन्दोयोगनिषद्)

“उपनिषदा योगिनं मुक्तये मयः ।” (शङ्कराचार्य)

विद्यारण्य स्वामीने बनाये ‘सर्वोपनिषद्वास्तुभूति-प्रकाश’ नामक ग्रन्थमें इन्हीं प्रधान उपनिषद् माना है—

- |                             |                 |
|-----------------------------|-----------------|
| १. ऐतरेय उपनिषत्            | (श्रुतिदीप)।    |
| २. तैत्तिरीय उपनिषत्        | (ब्रह्मसुखदीप)। |
| ३. आन्दोय उपनिषत्           | (सामवेदीय)।     |
| ४. तृण्य उपनिषत्            | (अथर्ववेदीय)।   |
| ५. श्रद्धा उपनिषत्          | (अथर्ववेदीय)।   |
| ६. कौशिकी उपनिषत्           | (श्रुतिदीप)।    |
| ७. तैत्तिरीय उपनिषत्        | (ब्रह्मसुखदीप)। |
| ८. कठकोपनिषत्               | (ब्रह्मसुखदीप)। |
| ९. वेताश्वदर उपनिषत्        | (ब्रह्मसुखदीप)। |
| १०. इन्द्राव्यक्त उपनिषत्   | (ब्रह्मसुखदीप)। |
| ११. तन्मयकार उपनिषत्        | (सामवेदीय)।     |
| १२. शिविहोषारमापनीय उपनिषत् | (अथर्ववेदीय)।   |

सुहृत्कीर्तिवद्धिमें १०० उपनिषद्का नाम दिया है। यथा—

- १ ईश, २ ईश, ३ कठ, ४ मन्त्र, ५ सुहृद्, ६ आश्विन, ७ तैत्तिरीय, ८ ऐतरेय, ९ आन्दोय, १० इन्द्राव्यक्त, ११ मन्त्र, १२ वैश्व, १३ तावत्, १४ वेताश्वदर, १५ ईश, १६ आश्विन, १७ मन्त्र, १८ आश्विन, १९ परमहंस, २० अथर्ववेद, २१ अथर्ववेद, २२ अथर्ववेद, २३ अथर्ववेद, २४ अथर्ववेद, २५ अथर्ववेद, २६ अथर्ववेद, २७ अथर्ववेद, २८ अथर्ववेद, २९ अथर्ववेद, ३० अथर्ववेद, ३१ अथर्ववेद, ३२ अथर्ववेद, ३३ अथर्ववेद, ३४ अथर्ववेद, ३५ अथर्ववेद, ३६ अथर्ववेद, ३७ अथर्ववेद, ३८ अथर्ववेद, ३९ अथर्ववेद, ४० अथर्ववेद, ४१ अथर्ववेद, ४२ अथर्ववेद, ४३ अथर्ववेद, ४४ अथर्ववेद, ४५ अथर्ववेद, ४६ अथर्ववेद, ४७ अथर्ववेद, ४८ अथर्ववेद, ४९ अथर्ववेद, ५० अथर्ववेद, ५१ अथर्ववेद, ५२ अथर्ववेद, ५३ अथर्ववेद, ५४ अथर्ववेद, ५५ अथर्ववेद, ५६ अथर्ववेद, ५७ अथर्ववेद, ५८ अथर्ववेद, ५९ अथर्ववेद, ६० अथर्ववेद, ६१ अथर्ववेद, ६२ अथर्ववेद, ६३ अथर्ववेद, ६४ अथर्ववेद, ६५ अथर्ववेद, ६६ अथर्ववेद, ६७ अथर्ववेद, ६८ अथर्ववेद, ६९ अथर्ववेद, ७० अथर्ववेद, ७१ अथर्ववेद, ७२ अथर्ववेद, ७३ अथर्ववेद, ७४ अथर्ववेद, ७५ अथर्ववेद, ७६ अथर्ववेद, ७७ अथर्ववेद, ७८ अथर्ववेद, ७९ अथर्ववेद, ८० अथर्ववेद, ८१ अथर्ववेद, ८२ अथर्ववेद, ८३ अथर्ववेद, ८४ अथर्ववेद, ८५ अथर्ववेद, ८६ अथर्ववेद, ८७ अथर्ववेद, ८८ अथर्ववेद, ८९ अथर्ववेद, ९० अथर्ववेद, ९१ अथर्ववेद, ९२ अथर्ववेद, ९३ अथर्ववेद, ९४ अथर्ववेद, ९५ अथर्ववेद, ९६ अथर्ववेद, ९७ अथर्ववेद, ९८ अथर्ववेद, ९९ अथर्ववेद, १०० अथर्ववेद।

३८ मोदविन्दु, ३९ भानविन्दु, ४० विष्णु, ४१ योगतन्त्र, ४२ चामुण्डा,  
४३ परित्राज, ४४ त्रिगिष्णु, ४५ सोमा, ४६ चक्र, ४७ निष्ठाच,  
४८ मण्डल, ४९ दक्षिणाक्षि, ५० शरणा, ५१ लब्ध, ५२ मन्त्राचार्य,  
५३ चण्ड, ५४ रामरत्न, ५५ रामतापन, ५६ बामुदेव, ५७ सुदय,  
५८ शाधिवा, ५९ देहान, ६० मिष्ट, ६१ मण्ड, ६२ शरीर, ६३ योग-  
विष्णु, ६४ तुरीयातोत, ६५ श्रमशा, ६६ परमहंसपरिब्रजक, ६७ चच-  
मण्डिका, ६८ चम्पन, ६९ एकाग्र, ७० चक्रपू, ७१ सुष्ट, ७२ चच,  
७३ चक्रान्त, ७४ कुट्टिका, ७५ सावित्री, ७६ चाम्पा, ७७ पाशपत,  
७८ परब्रह्म, ७९ चक्रपू, ८० विपुलापन, ८१ टीवी, ८२ विपुला,  
८३ कठवद, ८४ भावना, ८५ उदय, ८६ योगकुण्डली, ८७ मन्त्राचार्य,  
८८ उद्गाथ, ८९ गणपति, ९० ज्ञानदेव, ९१ तारका, ९२ महाशक्ति,  
९३ पञ्चम, ९४ प्राचाप्रिणी, ९५ गोपानिर्गन्, ९६ ज्ञान, ९७ योग-  
वन्द्य, ९८ ब्रह्मा, ९९ शाखायनी, १०० उदयोच, १०१ दत्तात्रेय,  
१०२ नाच, १०३ कनिष्ठारण्य, १०४ ज्ञानि, १०५ श्रीमान्,  
१०६ सरस्वतीरहस्य, १०७ चच, १०८ तुलिका ।

पञ्चकल प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंके अनुसन्धानसे  
प्रायः २३५ उपनिषद् निकले हैं । इन नवाविष्कृत  
उपनिषदोंमें अनेक अप्राचीन हैं । उनमें पञ्च नामक  
उपनिषद् नितान्त आधुनिक है । शब्दकल्पद्रुममें  
‘पञ्च’ शब्दमें पञ्चोपनिषद्, आद्यवैष्णवसूक्तके नामसे उद्धृत  
है । किन्तु वह सम्पूर्ण भ्रम है । पञ्च देवी ।

अज्ञोपनिषद् नामक ग्रन्थ उपनिषद्, अथवा आद्यवैष्णव  
सूक्त वाद्य हो नहीं सकता । मनोयोगपूर्वक पढ़नेसे  
अनायास ही समझ पड़ता है, कि आधुनिक समयमें ही  
उस ग्रन्थकी किसी इसलामधर्मावलम्बीने लिखा है ।  
इस अपूर्व नव्य ग्रन्थकी देखकर ही सम्भवतः अनेक  
लोग अद्यवैदिक अथवा करते हैं । कोई कोई कहते  
हैं कि अद्यवैदिक कुरान्के अज्ञाका डाल मिलता है ।  
इस अज्ञोपनिषद्के पढ़नेसे ही कदाचित् यह संस्कार  
उत्पन्न हुआ है । इस संस्कारकी दूर करना भी  
अवश्य कर्तव्य है क्योंकि—

अज्ञोपनिषद्के अन्तभागमें लिखा है—

“इहाकर इहाकर इहमेति इहाज्ञः इहा इहाज्ञा अनादिमन्त्रा  
अद्यवैष्णो शान्ता आ श्री गन्तुं पश्य विद्वान् जन्तवर्णान् चरन् कुब  
कुब चरन् ।”

ये जो ऊपर कई एक शब्द लिखे गये हैं, वे संस्कृत-  
भाषामें विलक्षण देख नहीं पड़ते । इहा और चकर  
दोनों प्रकृत अरबी शब्द हैं । अद्यवैदिकोंके जोड़े दीजिये,

किसी वैदिक या लौकिक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें भी  
इनका कहीं प्रयोग नहीं मिलता । विग्रहपतः इसके  
वाद ही ‘रसुर मन्त्रमद’ इत्यादि लिखा है । उसे भी  
लोग सुसप्तमानों कुरान्के कहें ‘रसुर सुहृद’ शब्दका  
उल्लेख मानते हैं । फिर भी न जाने क्यों देशीय  
पण्डितोंने आद्यवैष्णव-सूक्त जैसा इसे समझ लिया है ?  
इसी ग्रन्थमें किसी जगह लिखा है—

“आदित्यवर्णमन्त्रः । अज्ञोपनिषद् । निष्ठाचम् ।”

उक्त शब्दके साथ अद्यवैष्णवसंहिताके दो मन्त्रोंका  
कितना ही आभास मिलता है—

“आदित्यवर्णमन्त्रः । १ ।

अज्ञोपनिषद् । १ ।” ( अद्यवैष्णवसंहिता १।१।१५ )

मालूम होता है, इन दोनों मन्त्रोंमें कितना ही सीमा  
दृश्य रहनेसे ही किसी-किसीने पञ्चोपनिषद्को आद्य-  
वैष्णव-सूक्त जैसा मान लिया है । किन्तु इसे भी उन  
लोगोंका भ्रम ही कहना पड़ेगा । पञ्चोपनिषदोक्त पञ्चा-  
नुक शब्द अद्यवैदिक अथवा अपर किसी प्राचीन संस्कृत  
ग्रन्थमें नहीं आया । अद्यवैदिकप्रतिपाद्यके मतानुसार  
अद्यवैदिकोक्त पञ्चानुक शब्द ‘पञ्चानुक’ हो नहीं  
सकता । फिर पञ्चानुक शब्दका अर्थ भी संस्कृत  
भाषाके अनुसार निश्चय करना कठिन है । अतएव  
इसमें कोई सन्देह नहीं कि किसी संस्कृतज्ञ सुपत-  
मानने ही यह दावण कार्य सम्पादन किया है । उक्त  
ग्रन्थके पाठसे इतना तो अनुमान लगता है कि वह  
अकबर बादशाहके समयमें ही सङ्कलित हुआ था ।  
किन्तु किस व्यक्तिने ऐसा कार्य किया अथवा वह अनु-  
सन्धान करना है ।

सुम्नाथगुरु तजरीख नामक ईरानी ग्रन्थमें बदा-  
उनीने लिखा है—“इसी वत्सर ( ८८३ हिजरी या  
१५७५ ई० ) दक्षिण देसमें शेर भावन नामक एक  
शक्तिवादी भाग्य भाग्य था । वह इसलामधर्ममें दीक्षित  
हुआ । उसीसमय सम्राट्ने हमें अद्यवैष्णव पशुवाद कार-  
नका आदेश दिया । इसलामके धर्मशास्त्रोंसे इस ग्रन्थके  
कितने ही धर्मविरोधका ऐक्य है । पशुवादके समय  
अनेक कठिन स्थल देख पड़े, जिनका भाव शेर भावन  
तक प्रज्ञा न कर सके । हमने यह विषय सम्राट्को



३८ मादन्ति, ३९ ध्यान्ति, ४० विद्या, ४१ योगतत्त्व, ४२ आत्मयोग,  
४३ परित्रास, ४४ निमित्ता, ४५ योगा, ४६ लब्ध, ४७ निर्वोष,  
४८ मन्त्र, ४९ दधिधाम्नि, ५० अरम, ५१ कन्द, ५२ महाभारतवच,  
५३ अरम, ५४ रामरहस्य, ५५ रामतापन, ५६ वासुदेव, ५७ सुदन्,  
५८ माधिराज, ५९ देवस, ६० भिष, ६१ मङ्ग, ६२ शरीर, ६३ योग-  
मिखा, ६४ तुरीयातीव, ६५ मन्त्राव, ६६ परमहंसपरिमाणक, ६७ चप-  
कालिका, ६८ चपक, ६९ एकाग्र, ७० चमपूषा, ७१ हृष्ट, ७२ चप,  
७३ चपक, ७४ कृष्टिका, ७५ सावित्री, ७६ चामा, ७७ पायपव,  
७८ पराग्र, ७९ अरधन्, ८० मित्रातापन, ८१ द्वी, ८२ मित्रा,  
८३ कन्द, ८४ भारता, ८५ हृदय, ८६ योगलुङ्गनी, ८७ महाभारत,  
८८ चपक, ८९ अरधन्, ९० जालदर्शन, ९१ सारसार, ९२ महाभारत,  
९३ पञ्चमङ्ग, ९४ प्राचाप्रिमी, ९५ नीपानतापनी, ९६ जन्म, ९७ वाच-  
वक्ता, ९८ अरधन्, ९९ माध्यामी, १०० अरधन्, १०१ हस्तानेव,  
१०२ माधन्, १०३ कनिसगरक, १०४ माधानि, १०५ बीमाय,  
१०६ सरसतीरहस्य, १०७ अरधन्, १०८ लुङ्गिका।

भाजकस्य प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंके अनुसन्धानसे  
प्रायः २३५ उपनिषद् निकले हैं। इन नवाविष्कृत  
उपनिषदोंमें अनेक अप्राचीन हैं। उनमें अज्ञ नामक  
उपनिषद् गितान्त आधुनिक है। शब्दकल्पद्रुममें  
'अज्ञ' शब्दमें अज्ञोपनिषद् आद्यवैष्णवसूक्तके नामसे उद्धृत  
है। किन्तु यह सम्पूर्ण भ्रम है। अर्थदेखो।

अज्ञोपनिषद् नामक ग्रन्थ उपनिषद् अथवा आद्यवैष्णव  
सूक्त वाच्य हो नहीं सकता। 'मनोयोगपूर्वक पढ़नेसे  
अनायास ही समझ पड़ता है, कि आधुनिक समयमें ही  
उस ग्रन्थको किसी इसलामधर्मावलम्बीने लिखा है।  
इस अपूर्व मध्य ग्रन्थको देखकर ही सम्भवतः अनेक  
लोग अद्यवैष्णवसे अग्रहा करते हैं। कोई कोई कहते  
हैं कि अद्यवैष्णवमें कुरान्के अज्ञाका हाल मिलता है।  
इस अज्ञोपनिषद्के पढ़नेसे ही कादाचित्क यह संस्कार  
उत्पन्न हुआ है। इस संस्कारको दूर करना भी  
अवश्य कर्तव्य है क्योंकि—

अज्ञोपनिषद्के अज्ञाभाषमें लिखा है—

“इहाकवर इहाकवर इहनेति इहाकः इहा इहाहा अनादिमया  
अरधन् मायां अती अनान् पयम् विद्याम् लब्धवान् अहम् इह  
हृदयम्।”

ये जो अरधन् अहम् एक शब्द लिखे गये हैं, वे संस्कृत-  
भाषामें विलक्षण देख नहीं पड़ते। इहा और अकवर  
दोनों प्रकृत अरबी शब्द हैं। अद्यवैष्णवकी कीड़ दोलिये,

किसी वैदिक वा शौकिक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें भी  
इनका कहीं प्रयोग नहीं मिलता। विवेचनतः इसके  
बाद ही 'रघुर महमद' इत्यादि लिखा है। उसे भी  
लोग सुसलमानों कुरान्के कहे 'रसूल मुहम्मद' शब्दका  
उल्लेख मानते हैं। फिर भी न जाने क्यों दोस्तीय  
पण्डितोंने आद्यवैष्णव-सूक्त जैसा इसे समझ लिया है ?  
इसी ग्रन्थमें किसी जगह लिखा है—

“आदमावुक्कमिहकः अनावुक्कम्। निघानकम्।”

सूक्त कविके साथ अद्यवैष्णवसंहिताके दो मन्त्रोंका  
कितना हो आभासा मिलता है—

“आदमावुक्कमिहकम्। १।

अनावुक्कम् निघानकम्। २। ( अद्यवैष्णवसंहिता २०।१५ )

मालूम होता है, इन दोनों मन्त्रोंमें कितना ही सौम्य  
दृश्य रहनेसे ही किसी-किसीने अज्ञोपनिषद्को आद्य-  
वैष्णव-सूक्त जैसा मान लिया है। किन्तु इसे भी इन  
सौम्यका भ्रम ही कहना पड़ेगा। अज्ञोपनिषदोक्त अज्ञा-  
वुक्क शब्द अद्यवैष्णव अथवा अरधन् किसी प्राचीन संस्कृत  
ग्रन्थमें नहीं आया। अद्यवैष्णवसंहिताके मतानुसार  
अद्यवैष्णवसंहिताके अज्ञावुक्क शब्द 'अज्ञावुक्क' हो नहीं  
सकता। फिर अज्ञावुक्क शब्दका अर्थ भी संस्कृत  
भाषाके अनुसार निश्चय करना कठिन है। अतएव  
इसमें कोई सन्देह नहीं कि किसी संस्कृत सुसल-  
मानने ही यह दास्य कार्य सम्पादन किया है। उक्त  
ग्रन्थके पाठसे इतना तो अनुमान लगता है कि यह  
अकवर बादशाहके समयमें ही सङ्कलित हुआ था।  
किन्तु किस व्यक्तिने ऐसा कार्य किया अब यह अनु-  
सन्धान करना है।

मुत्तल्लवुत्तल्लारीख नामक ईरानी ग्रन्थमें अज्ञा-  
वुक्कने लिखा है—“इसी यत्सर ( ६८३ हिजरी या  
१५०५ ई० ) दक्षिण देशमें मीर भावन नामक एक  
मिशितशास्त्रज्ञ आ गया था। यह इसलामधर्ममें दीक्षित  
हुआ। उसीसमय अज्ञावुक्कने इसे अद्यवैष्णव अनुवाद कर-  
नेका आदेश दिया। इसलामके धर्मशास्त्रसे इस ग्रन्थके  
कितने ही धर्मोपदेशका ऐश्वर्य है। अनुवादके समय  
अनेक कठिन स्थल देख पड़े, जिनका भाव मीर भावन  
तक प्रकाश न कर सके। हमने यह विषय अज्ञावुक्कको

वताया या। उन्मोने जूँजी पीर हाथी इजादीमको०  
 पनुवाद करनेके लिये पनुमति दी। इस ग्रन्थका  
 एक स्थान हमारा (कुरान्के करे) 'सा इलाह  
 इलाहाह' (वचन-जैसा) है। अथर्वके 'इस अंशमें  
 जेख भावनेने ग्राह्यपौकी तर्कमें परास्त किया या।  
 पीर इसी मन्त्रके बलमें कितने ही लोगोंने इसलाम  
 धर्मको पकड़ लिया।" (मनुस्मृत तत्परोक्ष २ भा० १११ १०)  
 बदाउनीके उक्त विवरणमें कुछ गूढ़ रहस्य भरा  
 जैसा मानलम पड़ता है। वे जातिके सुसलमान रहे,  
 फिर ऐसे विशेष संस्कृतज्ञ न थे, कि अथर्ववेद-जैसा  
 वैदिक ग्रन्थ पारस्य भाषामें अनुवाद कर सकते।  
 कदाचित् अनुवादके समय दक्षिण देशवासी जेख भावन  
 को उनका दाहना हाथ बने होगे। वे जो कह देते,  
 बदाउनी उहीकी पारस्य भाषामें लिख लेते थे।  
 सम्भवतः भावनेने ही उनसे कहा होगा—अथर्ववेदके  
 किसी अंशमें कुरान्का वाक्य पड़ा है।

पौछे उपनी बात रखनेके लिये भावनेने ही यक्षोप-  
 नियत् या यक्षयष्ट परिषादक अथर्ववेदग्रन्थको बना  
 अथर्वसंहितामें छाल दिया होगा। कैसा भयङ्कर कार्य  
 है। विधर्मी द्वारा दलित हो अथर्ववेदकी क्या दुर्दशा  
 हुई। उही दिनसे सरल भारतवासी अथर्वसंहिताकी  
 कुरान्का अंश समझ बुरा कहनेलगे। भावनेके शास्-  
 त्रमें पढ़े कितनों हीने इसलामधर्म ग्रहण किया था।  
 उमी समय उपनिषद् ग्रन्थमें अकबरका नाम घोषित  
 हुआ। हा। कासविपर्ययसे समातन आर्यशास्त्रका  
 ऐसा परिणाम हो गया। वेद ग्रन्थमें विस्तृत विवरण देखो।  
 उपनिषादिन् (सं० त्रि०) उप-नि-सद-विनि।  
 निकटस्थायी, नजदीक रहनेवाला। (अथर्वशा० २ भा० ११२)  
 उपनिष्कर (सं० त्रि०) उप-नि-स-ज्ञ-से, वि-  
 र्जनीयस्य सः। उदयपथ आगमपथ। या पशुशु। पुरपथ,  
 गाड़ी राह।

उपनिष्क्रमण (सं० त्रि०) उप-नि-स-क्रम करने  
 लुट्, विमर्जनीयस्य सः। १ राजपथ, गाड़ी राह।

२ निष्क्रमण नामक संस्कार। निष्क्रमण देखो। ३ अथर्व  
 देनेका काम।

उपनिहित (सं० त्रि०) उप-नि-धा-त (धा-हि)  
 १ गच्छित, अमानत रखा हुआ। २ स्थापित, रखा  
 हुआ। ३ समर्पित, नज़र किया हुआ।

उपनीत (सं० त्रि०) उप-नी-त। कृतोपनयन,  
 अंगेज पाये हुआ। (रघु ११२८) २ ज्ञानकी लक्षणाके  
 सचिकर्ष द्वारा ज्ञान, अज्ञानके जोरमें समझा हुआ।  
 ३ निकट प्राप्त, नजदीक लाया हुआ। ४ आगत,  
 पहुँचा हुआ। ५ उपस्थापित, जो रख दिया गया  
 हो। ६ आनीत, लाया हुआ। ७ प्राप्त, मिला हुआ।  
 (पु०) ८ कृतोपनयन वालक, जिस लड़केकी अंगेज  
 दिया जा चुका हो।

उपनीतमान (सं० त्रि०) न्यायके मतसे—१ उपनीत  
 तत्त्वादिका विषयकत्व। २ सौक्तिक और पक्षीकिक  
 उभयके सचिकर्षसे उपज्ञान। (आय० की०)

उपनीता (सं० त्रि०) पत्नी, उपनी पीत।  
 उपनीय (सं० अथ०) १ समोप ले आकर। २ अंगेज देखे।  
 उपनीयमान (सं० त्रि०) निकट उपस्थित किया जाने-  
 वाला, जिसको अंगेज दिलाने गुरुके पास ले जाने का।  
 उपनुष्ठ (सं० त्रि०) १ प्रेरित, भेजा हुआ।  
 २ ताड़ित, डट्टाया हुआ।

उपनृत्य (सं० त्रि०) नृत्यगाना, नाचघर।

उपनेतव्य (सं० त्रि०) १ निकट उपस्थित किये  
 जानेके योग्य, जो नजदीक पहुँचानेके लायित हो।  
 २ नियुक्त करने योग्य, भगानेके लायित।

उपनेह (सं० पु०) १ उपनयनकर्ता गुरु, अंगेज  
 देनेवाला। (त्रि०) २ उपटोकनकारी, भेंट बढ़ाने-  
 वाला। ३ प्रापक, ले जानेवाला।

उपनेत्र (सं० त्रि०) उपगत नेत्रम्, आया० समा०।  
 आँखमें लगनेवाला चममा।

उपन्या, उपन्या देखो।

उपन्यस्त (सं० त्रि०) उप-नि-प-स्त-तः। १ विन्यस्त,  
 ऊपर या पास रखा हुआ। २ गच्छित, छोड़ा हुआ।  
 ३ चारख, गुरु किया हुआ। ४ दत्त, दिया हुआ।  
 ५ उन्नित, खिन्ना हुआ।

• हरिन्दककी राजी इजाजतने कासविपर्यय अथर्ववेदकी अनुवाद  
 किया था।



पिता, माता, गुरु, स्नाभ्याय, अग्नि एवं पुत्रका आनन्द  
द्वारा त्याग अर्थात् पुत्रका आत्मकर्म संस्कार न करना,  
छेष्ट पवित्राहित रहते कनिष्ठका विवाह, जीठ या  
कनिष्ठको बन्धादान, पयवा ऐसे ही विवाहमें पौरो-  
हित्य पानना, पद्मनमे कुमारी कन्याकी योनिका विदा-  
रण, हडिकी औषिका, स्त्रीसम्भोगादि द्वारा ब्रह्मचर्य  
व्रतकी श्रुति, तड़ाग स्नान और स्त्रीपुत्रादिका विक्रय,  
१६ वर्ष बीतनेपर भी उपनयन न होना, पित्रव्य प्रभृति  
वाच्योक्तों का त्याग, वेतनमें वेदका अध्यापन, वेतनपाछी  
अध्यापकसे वेदका अध्ययन, पवित्रेय बलुका विक्रय,  
राजाश्रासे सुवर्णादिही अग्नि तथा सेतु प्रभृतिका कार्य,  
चौराधिकी विनाश, भार्यादिका उपपत्ति द्वारा औषिका-  
निर्वाह, श्रेणादि आभिचारिक योग या मन्त्र द्वारा  
निरपराधीका अनिष्टकरण, लसानेके लिये पशुपक्षहृद्य-  
च्छेदन, देवपितादिके चङ्गेशसे व्यतिरेक अपने लिये  
पाकयन्त्रादिका अनुष्ठान, लग्नादि निन्दित खाद्यका  
भोजन, अन्याधान न करना, असत् शास्त्रकी आलो-  
चना, गान एवं वाद्यकी आसक्ति, धान्य ताम्र  
श्रीहादि धातु तथा पशुकी चोरी, मद्यपानिनी स्त्रीके  
पाम जाना, चित्रि, देश, शूद्र तथा स्त्रीहत्या और  
नास्तिकता इन सबकर्ममें प्रत्येकको उपपातक कहते हैं।

आचिन दीयो ।

उपपातकिन् ( सं० त्रि० ) १ उपपातक करनेवाला,  
जो छोटा गुनाह करता हो । २ सिवा प्रथम श्रेणीके  
अन्य किसी श्रेणीका पाप करनेवाला ।

उपपातिन् ( सं० त्रि० ) उप-पत-णिनि श्रियां डीप् ।  
१ ठोठात् आगत, एकाएक आनेवाला । २ अतर्कित  
भावसे उपस्थित, पङ्क्तु हुआ हुआ ।

“उपपातकिन्विभवाः” ( मनुस्मृति )

उपपाद ( सं० पु० ) उप-पद-घञ् । १ उपपत्ति,  
उद्धार । ( त्रि० ) २ पादोपगत, पैरमें पड़ा हुआ ।

उपपादक ( सं० त्रि० ) उपपादयति, उप-पद-घिच्-  
शतृन् । १ उपपत्तिकारक, उद्धारनेवाला । २ सम्पादक,  
करनेवाला । ३ उपपत्ति-गुरु, उद्धार हुआ ।

उपपादन ( सं० क्री० ) उप-पद-घिच्-शतृ । १ सम्पा-  
दन, बनाव । २ मन्त्रक, प्रतिपादन, सामा सुद्ध ।

३ युक्ति द्वारा समर्थन । ४ भीमांसाकरण, तज-  
वीर्यप्राप्ति ।

उपपादनीय, उपपाद दीयो ।

उपपादित ( सं० त्रि० ) उप-पद-घिच्-शतृ । १ युक्ति  
द्वारा समर्थित, तरकीबके साथ उद्धारण हुआ ।

२ सम्पादित, बनाया हुआ ।

उपपादुक ( सं० त्रि० ) १ निज द्वारा उत्पन्न किया  
हुआ, जो अपने करनेसे निकला हो । २ धूर्त पद्धति  
हुआ, गाल बंधा । ( पु० ) ३ देवता, करिगता ।  
४ नरक, दोषज ।

उपपाद्य ( सं० त्रि० ) उप-पद-घिच्-यत् । १ युक्ति द्वारा  
समर्थनके योग्य, तरकीबके साथ उद्धारण ला सकने  
वाला । २ उद्देश्य, जो पैदा किया जा रहा हो ।

उपपाप, उपपातक दीयो ।

उपपापत्र ( सं० पु० क्री० ) १ स्कन्ध, कन्या । २ कथ,  
कोख । ३ सुदृढर चन्त्र, लोटी पसलियां । ४ मण्डप  
पात्र, सामनेकी तर्फी ।

उपपासित ( सं० त्रि० ) रचित, पाला हुआ ।

उपपीडन ( सं० क्री० ) १ भार, दबाव । २ पीडन-  
कार्य, तकलीफ़ेंदिही । ३ पीड़ा, दर्द, मतानेका काम ।

उपपीडित ( सं० त्रि० ) १ पीनट, बरबाद किया  
हुआ । २ पीड़ित, मताया हुआ ।

उपपुर ( सं० क्री० ) उपसमीप पुरम्, प्रादि समा० ।  
नगरका निकटवर्ती गाँवा नगर, गहरके पासका  
छोटा क़स्बा ।

उपपुराण ( सं० क्री० ) व्यासके सिवा अन्य ऋषियों-  
द्वारा छत सुद्रपुराण । यथा—

१ सनतकुमारोक्त आदि, २ नारद्विंश, ३ कुमार-  
भाषित वायवीय, ४ नन्दीगोश मिथुन, ५ दुर्वा-  
ससोक्त दुर्वासा, ६ भारद्वाज, ७ नन्दिदेशर, ८ उग्राश्र, ९  
कापिल, १० वाङ्मय, ११ गार्ग्य, १२ कान्विक, १३  
माहेश्वर, १४ पाद्म, १५ देवी, १६ पराशर, १७  
मारीच और १८ भास्कर ।

कुम्भपुराणके मतमें इन्हें उपपुराण कहते हैं—

“आद्यं सनतकुमारोक्तं नारद्विंशकं पुरम् ।

मरीचं वाङ्मयं कान्विकं नृपतिवृद्धम् ।

चतुर्ध्वजध्वजं साचात्रदीपमाचितम् ।  
दुर्वाससोक्तमाचयेत् नारदोद्यमतः परम् ॥  
कापिलं वासनयेत् तथैव योगनदीरितम् ।  
ब्रह्माय नारदयेव काशिकाश्रममेव च ॥  
साध्वेन तथा शान्तं सौरं सर्वाभ्युपयम् ।  
परमरोक्तं मारीचं तथैव भार्गवाश्रमम् ॥ (सू. १. ५. १०-१०. १०)

१ सनत्कुमारोक्तं चाय, २ नारसिंह, ३ कुमारोक्तं स्कन्द, ४ नन्दोद्यमोक्तं शिवधर्म, ५ दुर्वासः, ६ नारदीय, ७ कापिल, ८ वासन, ९ उग्रना, १० ब्रह्माण्ड, ११ वासन, १२ कालिका, १३ भास्कर, १४ शान्त, १५ सर्वार्थसन्दायक सौर, १६ परमरोक्त, १७ मारीच और १८ भार्गव ।

सचराचर भागवत दो प्रकारका मिलता है—एक विष्णु-भागवत और एक देवी-भागवत । हेमाद्रि प्रभृति शास्त्रविदगणके मतसे प्रकाशित है—

“इहं यत् काशिकाश्रमं सूत्रं भागवतं मतम् ।”

कालिका उपपुराणका मूल पुराण भागवत है । प्रधानतः कालिकापुराणमें देवीका महात्म्य ही वर्णित है । इसलिये देवी-भागवतको ही मूलपुराण वा महापुराण वताने हैं ।

( देवीभागवतपर नीलकण्ठ-ज्ञान टोपीपकमणिका )

कोई कोई विष्णु-भागवतको ही महापुराण कहते हैं । प्रसक्तमें इस विषयपर बहुत कुछ समझ उठता है—कौन उपपुराण और कौन महापुराण है । समझकी बात भी है । क्योंकि दोनों ही भागवत द्वादश स्कन्धमें विभक्त और अष्टादश सहस्र श्लोक-त्मक हैं । पुराणस्कन्धमें बहुत विवरण देवी ।

उपरोक्त पुराणोंकी छोड़ धर्मपुराण, वृद्धर्मपुराण, वृद्धनन्दिविष्णु-पुराण प्रभृति हमारे भी कई उपपुराण हैं ।

पुराण और उपपुराणका लक्षण श्रीमद्भागवतमें इस प्रकार लिखा है—

“मनीषिणाय विमर्शं हसिदचानरायि च ।

इतीं वंशानुचरितं चंदा हितुषाधयः ॥

इदमिहैवचरितं प्रसाधं मणिवो विदुः ।

केचित् पञ्चविंशं ब्रह्मन् महद्भयमवस्थाय ॥

अन्तःकृतपञ्चोपाध्वजसंनिवृत्तीः ॥  
भूतसृष्टेः द्विवाचानां, ह्यन्यः सर्वे सत्ये ॥  
पुष्पापुष्पकोलागमेतेषां वाचनामयः ।  
विलसन्ति समाराधनी भोजनोक्तं चराचरम् ॥  
हंसैर्वापि भूतानां चराचरमचरायि च ।  
कला स्तेनं पुरां वर कामाद्योदनरायि च ॥  
रथायुः साधनारोहा विप्रसन्तु युगे युगे ।  
विदुः सत्यं विदुषेपु इत्यनें देवप्रोदिवः ॥  
नन्वन्तरं सन्तुष्टं वा मनुष्याः सुरेश्वराः ।  
अप्ययोः साधनारायः हरेः चरविभुषाये ॥  
राजां ब्रह्मसत्तायां चरन्ति चरविभुषाये ।  
वैश्वानुचरितं तेषां ह्येवं चरविभुषाये च ॥  
मैत्रिणिकः प्राकृतिको नित्यं चरविभुषाये च ।  
चंदांति चरविभिः शीघ्रयुगोलां स्वभावाः ॥  
हेतुवीं जीयन् सर्वादिप्रियाचरमकारणः ।  
य चादुर्वाचिं प्राकृत्यन्तःकृतसुताये ॥  
मन्त्रिरेवाच्यो यत्नं चापत्यस्यसुप्रसिद्धः ।  
मायामयेतु सद्ब्रह्म लीलाविभुषाये च ॥  
पदार्थं इदं यथा इदं चरानां चराचरम् ।  
योजादिप्रयत्नात् साधनं चरविभुषाये च ॥

( १९ स्क. ७ प. ८—१०. १० )

१ सगं, २ विमर्श, ३ हसि, ४ रथा, ५ अन्तर, ६ अंग, ७ वंशानुचरित, ८ संस्था, ९ हेतु और १० अमाय्य लक्षणात्मा उपपुराण होता है । अधिक और अल्प व्यवस्थाके अनुसार कोई कोई पुराणविद पञ्च लक्षणयुक्त ग्रन्थको भी पुराण कहते हैं ।

१ म चर्मा—प्रकृतिके गुणव्ययमें महान्, समस्त त्रिगुणात्मक पञ्चदश और अष्टादश सूक्ष्म इन्द्रियमय, स्थूल पदार्थसकल एवं तत्तत् पञ्चिदात्री देवताकी उत्पत्ति होनेका नाम सगं है ।

२ विमर्श—जीवके पूर्व जन्म-सम्यग्बोध वासनाजात तथा ईश्वरानुष्ठानके मकल योगमें योजितपत्तिजी तरङ्ग समाहार-रूप चराचरको उत्पत्ति होनेकी विमर्श वा अवान्तर सृष्टि कहते हैं ।

३ हसि—इस संसारमें चराचर प्राणिमयूहकी वास्तविक हेतु एवं मनुष्यादिके स्वभाव, काम या विधिके पर्यं किया जानेवाला लीलाविषय हसि या मयि है ।

४ रथा—युग-युगमें वेदके विदेयी देवोंमें देव,



तिष्ठन्, मनुष्यं चौरः ऋषिगणके कार्दमागका उपक्रमं  
सगने पर नारायणके विमेष विमेष चवतारका होना  
रक्षा कहलाता है।

४२ वचन—मनु, देवतासकल, मनुपुत्रगण, सुरेश्वर-  
गण, ऋषिगण चौर नारायणके चंगावतार जिसमें  
चपने अधिकारपर वर्तमान रहते हैं, उन्नीको छः  
प्रकारका चत्वार वा मन्वन्तर कहते हैं।

४३ वचन—प्रधाने उत्पद्यं श्रावणीय राजाशोकं भूत,  
भविष्यत् चौर वर्तमान सोनो कालोंकी पुरुषपरम्पराके  
वर्णनका नाम चंग है।

४४ वचन—उल्ल सकल राजाशोकं चौर उनके दंग-  
धरोंके चरित्रका वर्णन चंगाशुचरित कहलाता है।

४५ वचन—स्रभावे या ईश्वरकी मायासे विग्रहमें  
पहुँनेवासा भैमिष्ठिक, प्राज्ञतिक, नित्य चौर चात्यन्तिक  
चार प्रकारका विकार ही संस्था वा लय है।

४६ वचन—चक्षानवगतः कर्मकारी जीव इस विग्रहकी  
खटिके आदिका छेत्तु है। यही चतुर्गुणी रहता ही,  
इसे कोई कोई चक्षालत भी कहते हैं।

४७ वचन—जायन्, स्वप्न, सुषुप्ति तीनों अवस्था चौर  
जीव-रूपसे वर्तमान रहनेवाले, मायामय एवं सकलके  
साक्षिस्वरूप चौर समाधि प्रकृतिसे सम्बन्ध भाव  
रखनेवाले मल्लका नाम चपात्रय है। घटादि पदार्थ-  
समूहमें लक्षिकादि द्रव्य एवं रूप चौर नामान्यादिमें  
सत्तामात्रकी तरह जो गर्भाधानसे मृत्युपर्यन्त सकल  
अवस्थापर युक्त तथा अयुक्त रहता है, उसे ही पुराण-  
विद् चपात्रय कहते हैं।

उल्ल सक्षय पुराणका ही सक्षय बताया गया है।  
किन्तु परवर्ती श्लोकमें 'प्राज्ञः क्षुद्रकानि महानि च'  
वचनसे वह उपपुराणका ही सक्षय कैसा समझ  
पड़ता है। विमेषतः पुराण पञ्चमचपाणक ही सकल  
पुराणोंमें प्रसिद्ध है। उल्लेख है।

उपपुष्पिका ( सं० स्त्री० ) उपगता पुष्पिकाम्,  
संज्ञायां कन्-टाप्, पत इत्वम्। क्षुब्धा, जमहाई।

उपवोर्धमास ( सं० चक्ष्य० ) पूर्वमासी, पूर्वमासीके  
दिन।

उपवोर्धमासो, चत्वारिंशत् द्वयोः।

उपपदार्थ ( सं० स्त्री० ) रूपना, निर्देश, रक्षण,  
देखाव।

उपपदान ( सं० स्त्री० ) उप-प्र-टा-ल्युट्। १ सक्षोप,  
रिषयत। २ मन्त्रिके निमित्त भूमि आदिका दान,  
सुनइके मिये जमीन वगैरहकी वखगिय।

“काम चोपपदानं भेदी दण्डनमसतः।” ( रामच० )

३ द्रव्यदान, दौलतकी वखगिय। ४ दानकार्य, देनेकी  
बात।

उपप्रलोभन ( सं० स्त्री० ) उप-प्र-लुभ-णिच्-ल्युट्।  
१ सम्यक् प्रलोभन, पासा लानव। करी लुट्।  
२ समग्र प्रलोभन-योग्य द्रव्य, जो शीघ्र देवनेसे खूब  
लाभ लगता हो।

“उपप्रलोभनं प्रलोभनम्।” ( रामच० )

उपप्रव ( सं० पुं० ) उप-प्र-वप्। १ पाकामे  
उल्लापातादिका उपद्रव, पासमानसे तारे वगैरह  
टूटनेकी बात। २ राहु पक्ष। ३ विग्रह, इत्थाम।  
४ भय, खौफ। ५ अयम, बुराई। ६ विपत्ति,  
आफत। ७ राजविग्रह, गाही भगड़ा। ८ चन्द्रादि  
ग्रहण। ९ उपरिवेष्टन, लटकाव। १० चोपमर्गिक  
नरक-चोड़न। ११ विकल्प। १२ प्रतिबन्ध। १३ शिव।

उपप्रविन् ( सं० लि० ) उप-प्र-णिजि। १ भयपुरु,  
खौफनुदा, डरा हुआ।

“यथा इतिपरितः परितः।” ( रघु ११/७ )

“उपप्रविन् भयपुरुः।” ( मत्स्य )

उपप्रव्य ( सं० स्त्री० ) उप-प्र-पाथि वाहुलकात्  
यत्। विराटके देवकी राजधानी। ( महाभारत, आदि,  
११/१३, अर्जुन ११/१, भीष्म ११/३, द्रुपद ११/१३ )

उपप्रुत ( सं० त्रि० ) उप-प्र-लुट्। १ उपद्रवपुरु,  
गड़बड़में पड़ा हुआ।

“उपप्रुतं पापमयी करोदनीः।” ( गद्य )

२ राहुपक्ष, राहुसे घिरा हुआ। ३ भीत, खौफनुदा।  
४ पोड़ित, तकलीफनुदा। ५ विपद्यन्त, मुसीबत  
भेसनेवाला।

उपप्रुता ( सं० स्त्री० ) योनिरोग, रैडमला फासिद  
इत्यादि। गर्भिणीके जेथपल्लितके पश्चात्तम चौर चर्दि  
एवं ज्ञाम विनियममें वायु क्रुद्ध होकर कफकी योनिमें

सा विगाड़ देता है। फिर पाण्डु, तीक्ष्णवेदना, वा  
श्वेत कफ टपकता है। योनिकी उपप्लुता कफ, घात  
और प्रामयसे व्याप्त रहती है। (चरक)

उपवह (सं० त्रि०) संलग्न, लगा हुआ।

उपवन्ध (सं० पु०) उप-वन्ध-घञ्। १ वस्त्रशर  
वन्धन, दूसरी चीजकी गिरफ्त। २ पञ्चासन।

३ सांख्य विशेषके द्वारा सम्बन्धका प्रतिपादन।

उपवर्ध (सं० पु०) उपवर्द्धते आक्षेप्यते, उप-वर्ध  
कर्मणि घञ् न हृदिः। १ उपधान, तकिया। वर्ध  
हिंसायां भावि घञ् न हृदिः। २ उपपीडन,  
छिड़काव।

उपवर्धण (सं० स्त्री०) उपवर्द्धते कर्मणि घञ्।  
उपवर्धे देखो।

उपवह (सं० त्रि०) कुह, थोड़े।

उपवाधा (सं० स्त्री०) उप-वाध-घ-टाप्। सम्पी-  
डन, खुब तकलीफ़ देनेकी बात।

उपवाह (सं० पु०) उपगतो वाहन्। १ वाह समी-  
पयर्ती पङ्कका भेद। पञ्चेति कीदृशीतक जायका  
हिंसा उपवाह कहलाता है। (अथ०) २ वाहके  
निकट, बाजूकी पास।

उपवर्द्धिन् (सं० त्रि०) अतिरिक्त, जायद।

उपवर्ध (वै० पु०) उपगतः शब्दः, प्रादि समा०।  
अभिपद्य शब्दः। "तावाचो प्रमु रचन उपवर्धः।" (चण् ७१०३१०)  
'उपवर्धे अनिपद्यवर्धे।' (सायण)

उपवर्ध (वै० पु०) १ वाक्, शब्द। (निघण्टु)  
२ व्यवहार। "मदतां मल चायतामुपवर्धः।" (चण् १११६१०)  
'उपवर्धः व्यवहारः।' (सायण)

उपवर्धमत् (सं० त्रि०) शब्दयुक्त, पुरणोर।

उपवह (सं० पु०) उप-भनृज-घञ् कुत्वम्। घट-  
प्रदग्धन, लडाईसे भागाभागी।

उपमाया (सं० स्त्री०) गोण भावा, दूसरी/दरजेकी  
जुवान्।

उपमुक्त (सं० त्रि०) उप-मुञ्ज-क्त। १ व्यवहृत,  
इस्तेमास किया हुआ। २ भवित, छाया हुआ।

उपमुक्तधन (सं० त्रि०) उपनि धनका उपभोग  
करनेवाला, जो अपनी दोलतसे काम लेता हो।

उपमुक्ति (सं० स्त्री०) उप-मुञ्ज-क्तिन्। उपभोग,  
इस्तेमास।

उपमुञ्चान (सं० त्रि०) उपभोग करता हुआ, जो  
मजा ले रहा हो।

उपमृती (सं० स्त्री०) महानीली।

उपभूषण (सं० स्त्री०) उपमितं भूषणेन। घण्टा  
चामरादि उपकरण,वाजी गाजे और पचावलम बगेर  
साजसामान्।

"यथाचामरादिपानौपकरादिभ्यम्।

सदभूषणान्ते ह्याह यथाचामरभूषणम्।" (कानिनाय ६८५०)

उपभृत् (वै० स्त्री०) उप-भृ-क्तिप्। १ काष्ठनिर्मित  
यज्ञपात्र। २ यज्ञकार पात्र। यह यज्ञपात्रसे निर्मित  
और यज्ञमें व्यवहृत होता है।

उपभोक्तव्य, उपभोग्य देखो।

उपभोक्त (सं० त्रि०) उपभोग करनेवाला, जो मजा  
लेता हो।

उपभोग (सं० पु०) उप-भुञ्ज-घञ्। १ निर्वेग,  
मजे,दारी। "विषीपभीषिष्ठे पु कोरी भाग्यविशारदम्।" (रघु १५११)  
२ व्यवहार, इस्तेमास। ३ भक्षण, खवाई।

उपभोगिन् (सं० त्रि०) उपभोग करता हुआ, जो  
मजा ले रहा हो।

उपभोग्य (सं० त्रि०) उप-भुञ्ज-घञ् चयार्थत्वे कुत्वम्।  
१ उपभोगयोग्य, मजा सिये जाने लायक। (स्त्री०)  
२ उपभोगका द्रव्य, मजेकी चीज।

उपभोजनीय, उपभोग्य देखो।

उपभोजिन् (सं० त्रि०) उपभोग करनेवाला, जो  
मजा लेता हो।

उपभोग्य (सं० त्रि०) भोजनमें व्यवहार किया  
जानेवाला, जो खानेमें लगता हो।

उपम (वै० त्रि०) उपमोयते, उप-मा-य। १ उपमेय,  
मिसाल दिये जानेके लायिक। (चण् ११११) उप-मोयते  
समीपे चिद्यते, मि बाहुनकात् ड। २ पत्तिक, मज्ज-  
दीक। (निघण्टु) "उपमोयतां इदमेति दितोऽस्मि।" (चण् ५१२०)

३ पत्तिकसहित, पास पड़नेवाला।

"उपमेता मनीनां शिखं च इवमाचमम्।" (चण् ११११)

(पु०) ४ साधुका पेड़।



लक्ष्यसे मद्योत्सव होता है। कितने ही लोग यहां विवाह करने पाते हैं। प्रवाद है—उपमाकमें विवाह करनेसे स्त्री पतिव्रता और सौभाग्यशालिनी होती है।

उपमाता, उपमाव देखो।

उपमाति (सं० स्त्री०) १ भामन्दप, पुकार। २ उपमा, सुगावहत। (साय०) (पु०) ३ मित्रवत् भागमन, दोस्तकी तरह भानेकी बात। ४ अनुगृहीतावस्था, पक्षसानमन्दी। ५ अग्नि। ६ धन प्रदान, दोस्त देनेका काम। (साय०)

उपमातिवनि (सं० त्रि०) १ मित्रवत् प्रार्थना सुननेवाला, जो दोस्तकी तरह पुकार पर कान लगाता हो।

२ मनुनामक, दुश्मनकी बरवाद करनेवाला। (साय०)

उपमाट (सं० स्त्री०) उपमाता माता। १ धात्री, दाई। २ मादतुल्या स्त्री, माकी बराबर दूसरी औरत, जैसे—मौसी, चाची इत्यादि। (पु०) ३ चित्रकार, सुसज्ज, तस्वीर बनानेवाला शिल्प। (त्रि०) उपमा-टवृत्। उपमा देनेवाला, जो सुगावहत लगाता हो।

उपमाद (वै० त्रि०) उपमादयति, उप-मा भावे, श्रुट्। उपमादक, हर्षजनक।

“उपमादुपमादर्थं ददम्।” (अमरभाष्ये साय० ३।३।५)

उपमाद्रव्य (सं० स्त्री०) उपमामें व्यवहृत होनेवाला वस्तु, जो चीज सुगावहतमें काम आती हो।

उपमान (सं० स्त्री०) उप-मीयतेऽनेन, उप-मा भावे, श्रुट्। १ प्रमाणविशेष, एक सूत्र। २ सादृश्य, बराबरी। उप-मा करणे लुट्। यह तीन प्रकारका होता है—सादृश्यविशिष्ट, पञ्चाधारण धर्मविशिष्ट और वैधर्मविशिष्ट पिण्डज्ञान। (विद्यालक्ष्मीदय) ३ सादृश्यके ज्ञानका साधन, बराबरीकी समझका सामान्। जिसके साथ उपमा देते हैं, उसे उपमान करते हैं।

उपमानोपमेयभाव (सं० पु०) उपमान और उपमेयका सम्बन्ध, जो तात्पर्य सुगावहतकी छोटी और बड़ी चीजमें हो।

उपमारण (वै० स्त्री०) उप-शृ-णिच्-लुट्। यज्ञमें अवधयोदक, निकटसे छूतमें अक्षका निषेध।

(मतपत्रभा० ३।३।५४६)

उपमारूपक (सं० स्त्री०) उपमा भग्नद्वाराका उपचार, सुगावहतकी श्रुत।

उपमालिनी (सं० स्त्री०) पति-शक्ती केन्दका एक भेद।

उपमास्थ (वै० स्त्री०) उपमार्च प्रतिमासमर्थ यत्।

पितृवर्गकी व्यक्तिके लिये प्रतिमास करणीय ग्राह। (अथर्ववेद ११.१।८)

उपमित् (वै० त्रि०) उप समीप मीयते चिप्यते, उप-मि-क्षिप्। १ उपनिष्ठात। २ उपस्थापयिता। ३ उपमा-कारी। (स्त्री०) ४ स्थूणा।

“उपमित् स्थूणा।” (अमरभाष्ये साय० ३।३।१)

उपमित (सं० त्रि०) उप-मा-क्त। सदृश, बराबर, जो मिलाया गया हो।

उपमिति (सं० स्त्री०) उप-मा-तिन्। १ उपमा-लङ्कार, सुगावहत। २ नैयायिकके मतसे—पनुभव-सिद्ध जातिविशेष। (नीलकण्ठी) संज्ञा एव संज्ञाके सम्बन्धका ज्ञान। (नवार्थवच) सादृश्यके ज्ञानकरणका ज्ञान। (आयनचरी)

उपमीमांसा (सं० स्त्री०) अन्वेषण, खोज।

उपमूल (सं० अन्त्य०) मूलपर, जड़में।

उपमेत (सं० पु०) उपमां इतः। गानपुत्र, साधूका पेट।

उपमेय (सं० त्रि०) १ उपमीयतेऽधी, उप-मा-यत्।

सादृश्य-योग, सुगावहतके आविर्भाव, जो किसीमें

मिलाया जा सकता हो। “नैदुना तन्मयीयम्।” (पु०) (स्त्री०) २ उपमाका विषय, सुगावहतकी चीज।

जब दो वस्तुमें उपमा लगते हैं, तब बड़ेको उपमान और छोटेको उपमेय कहते हैं। जैसे—“भूपतिकी कीर्ति इंद्रीकी तरह स्वर्गनदीका भवगाहन करती है” इस वाक्यमें इंद्री उपमान और कीर्ति उपमेय है।

उपमेयोपमा (सं० स्त्री०) पर्यालङ्कार विशेष। इसमें उपमानकी उपमेय और उपमेयकी उपमानसे उपमा दी जाती है।

उपयन् (वै० स्त्री०) उप-यन् उपपदे ह्यत्सि विच्।

विशुद्धि ह्यत्सि। या ४।५०६। पशुयागाह यप्रविशेय।

(मतपत्रभा० १।५।३)

उपयन्ता, यन्तु देखो।

उपयन्तु ( सं० पु० ) उप-यम-लृप् । १ पति, जाति ।

( ति० ) २ संयमनकर्ता, चपनेपर कावू रखनेवाला ।

उपयन्त्र ( सं० स्त्री० ) उपगतं यन्त्रम् । मशीनहरपायं यन्त्रविशेष, जिसमें जुमे काटे वर्गरश्मि निशाननेका एक चोकरा । यह २५ प्रकार होता है—१ रज्ज, २ घेरिका, ३ घट, ४ चर्म, ५ पन्नावल्लभ, ६ सता, ७ वस्त, ८ पट्टोल, ९ चर्म, १० मुदगर, ११ पावि, १२ पादतन्त्र, १३ पट्टलि, १४ जिह्वा, १५ दन्त, १६ नख, १७ सुष, १८ वेश, १९ चर्मकटक, २० ग्राखा, २१ डोवन, २२ प्रवाहचर्य, २३ चयस्कान्त, २४ चार घोर २५ चर्म । देह, देहके प्रत्यङ्ग, मन्त्रि-भ्यान्, कौठ घोर धमनीमें लडा सिगका प्रयोजन पड़े, वहाँ उसीको व्यवहार करे । ( सुकुन द्रव्यम् ७ प० )

उपयम ( सं० पु० ) उप-यम-पृष् । वनः सव्यभिषि च । वा १।१।१ । विवाह, गादी, मंगनी । विवाह शिरो ।

उपयमन ( सं० स्त्री० ) उप-यम-लृट् । निषेधको वाच्य-परमे । वा ३।३।० । १ विवाह, गादी । २ संयमन, रोक । ३ चर्मिका चपन्नायन । करण लृट् । ४ मन्त्र-साधक कुमादि ।

उपयमनी ( सं० स्त्री० ) उपयम्यते, कर्मणि लृट्-लोट् । १ चपन्नाधानाङ्ग मित्रादि, जमानेकी सकड़ो रखनेका पत्थर, मही, कछुड़ वर्गरश्मि टोक । “वोधमनी ने चोचि-वर्जनी । ( धर्मवशा १।१२ ) २ संयमनी, चपनेपर कावू रखनेवाली चोरत ।

उपयट् ( सं० पु० ) उप-यज-लृप् । योद्धा प्रकारके मध्य प्रतिप्रस्थाता नामक ऋत्विग् विधेय ।

( इतरवशा १. पृ॥ १२ )

उपयाचक ( सं० स्त्री० ) उप-याच्-लृप् । अर्थ याचक, गजदीक लाकर मांगनेवाला ।

उपयाचन ( सं० स्त्री० ) उप-याच्-लृट् । देवतादिके निकट चमोटादिकी प्रार्थना, किसीके पास पहुँचकर चपनी मुराटकी दरखान्त ।

उपयाचिका ( सं० स्त्री० ) उपयुक्तके निकट पहुँच मन्त्रोगको प्रार्थना करनेवाली स्त्री, जो चोरत दूधरि मर्दधे गहबतके लिये दरखान्त करती हो ।

उपयाचित ( सं० स्त्री० ) उपयाचनेनेन, उप-याच्-लृप् ।

१ प्रार्थित, मांगा हुआ । २ समर्पित, दिया हुआ । ( स्त्री० ) ३ प्रार्थना, चर्म ।

उपयाचितक ( सं० स्त्री० ) उप-याचित-लृप् । १ चमोटाकी सिद्धिके लिये देवतादिकी देय । १ प्रार्थित, मांगा हुआ । ( स्त्री० ) ३ देवदेव धनु, देवता वा चढ़ाये जानेवाली चीज ।

उपयाच ( सं० पु० ) उप-यज-घञ्, यज्ञाह्वानम् न कुलम् । १ यज्ञाह्वान यामविशेष । यह ११ प्रकारका होता है । “इकादश यज्ञा यज्ञाह्वानाः, एकादशेन यज्ञे यज्ञे योमनाः यज्ञमात्राः ।” ( धर्मवशा १।१८ ) २ यज्ञाह्वानोक्तके ऋत्विग्विशेष । इनके ल्ये उभ्याताका नाम याज्य वा । ( भारत चरित १८८ प० )

उपयात ( सं० स्त्री० ) उप-या कर्तरि क्त । १ आचार्यके समीप यागत, पाया हुआ ।

“उपयातयाचं विधि चोरनोवा ।” ( शिपि )

२ प्राप्त, पहुँचा हुआ ।

उपयात ( सं० स्त्री० ) उप-या-लृट् । निकटमें गमन, पास लवाई । “उपयातयानने न लाले वक्रवर्धेयम् ।” ( शकवच )

उपयाम ( सं० पु० ) उप-यम विकल्पो घञ् । वनः सव्यभिषि च । वा १।१।१ । १ विवाह, गादी । उप-यम-चिच्-पञ् । २ यज्ञाह्वानविशेष, धर्म्यच, छोई । ( इतरवशा ७ प० ) ३ यज्ञाह्वानके पात्रविशेष द्वारा यज्ञ । ४ वेदमन्त्रविशेष । यह यज्ञाह्वानके पात्र विशेष द्वारा योमरम निकालते समय पढ़ा जाता है ।

उपयाचारिक ( सं० पु० ) विचारके रचनार्थ नियुक्त पुद्गल ।

उपयुक्त ( सं० स्त्री० ) उप-युज्ज-क्त । १ योग्य, याज्य । २ मुक्त, लिया हुआ, जो लाया गया हो । ३ रचित, बनाया हुआ ।

उपयुक्तता ( सं० स्त्री० ) योग्यता, सुनासिद्धता ।

उपयुक्तान्त ( सं० स्त्री० ) उपयुक्त कहना हुआ, जो ठीक-ठाक समा रहा हो ।

उपयुक्त्युक्त ( सं० स्त्री० ) नियुक्त करनेवाला, जो जगानेके कर्तव्य हो ।

उपयोक्तव्य ( सं० स्त्री० ) नियुक्त किये जानेंके योग्य, जो जगयावा जा सकता हो ।

उपयोग ( सं० पु० ) उप-युज्जते, युज्ज-घञ् । १ आच-

रण, चालचलन। २ भोजन, खवाई। "प्राप्तिके मदनजन-  
मन्त्रदुपयोगः।" (सुवृत्त) ३ साहाय्य, मददका काम।  
"बनने से सक्रिययोगयोगम्।" (कृष्णार) ४ दृष्टिसिद्धिके लिये  
धर्मकार्य। ५ आवश्यकता, जरूरत। ६ भोग,  
इस्तेमाल। ७ औपधकिया, दवाका काम। ८ औपध-  
सेवन, दवाका इस्तेमाल।

उपयोगवाद (सं० पु०) सिद्धान्त विशेष, एक मकूल।  
उपयोगवादियोंके कथनानुसार मनुष्य ऐसा कोई कार्य  
न करे, जिससे किसी जीवको दुःख हो।

उपयोगिता (सं० स्त्री०) उपयोगिन्-तन्। १ आवश्यक-  
ता, जरूरत। २ कार्यकारिता, आविर्लियत।  
३ साहाय्य, मदद। ४ उपयुक्तता, सुनासयत।

उपयोगिन् (सं० त्रि०) उप-युज-घिण्। युजकोऽर्थवि-  
धयजजमजातिषापवरासुवाभ्योऽनञ्। पा ३।१।४२। १ उपयुक्त,  
सुधाधिक। २ उपकारी, फायदेमन्द। ३ अनुकूल, मिना  
हुषा। ४ योग्य, ठीक। ५ कार्यकारक, कारामद।

उपयोजन (सं० स्त्री०) १ यन्त्रसंस्तीकरण, छोड़ा  
औतनेका काम। २ औत, जोड़ी।

उपयान्य (सं० त्रि०) उपयोगमें लाने योग्य, जो  
काम या सक्ता हो।

उपयोग (सं० अर्थ०) चानन्द। खुशो खुशो।

उपर (सं० त्रि०) उप-करण। १ स्थापित; रखा  
हुषा। "उपरि यदुपराः पवित्रम्।" (अथ० १।४।५) 'उपरा

उपराः स्थापिताः।' (सायब) २ उपरत, बन्द। "उपरा उपरताः।'  
(अथ० १।४।५) ३ उपरि वालोत्पन्न, पिछले  
पक्ष पेदा हुषा। "उपरासः यजमान जगन् उपरुत्पन्नाः।" (सायब)  
(पु०) ४ निम्नप्रस्तर, नीचेका पत्थर। इसपर सोमको  
रख कर दूसरे पत्थरसे पौसते हैं। ५ यन्नके स्थानका  
निम्न भाग। ६ मेघ, बादल।

उपरक्त (सं० पु०) उप-रन्ज-क्त। १ राहु, पुच्छन  
तारा। २ राहुपक्ष चन्द्र वा सूर्य, पुच्छन तारेसे  
दबा हुषा चांद या भाप्ताव। (त्रि०) ३ व्यसन-  
सक्त, बुरी आदतमें पड़ा हुषा। ४ रक्षित, रंगा हुषा।  
५ पीड़ा-युक्त, तकलीफ़जदा।

उपरक्षक (सं० त्रि०) उप-रक्ष-क्षुट्। सेन्यके समो-  
यका रक्षक, फौजके पास पहरा देनेवाला।

उपरक्षण (सं० स्त्री०) उप-रक्ष-क्षुट्। १ रक्ष-  
णार्थ सेन्य स्थापन, रखवालीके लिये फौजका क्याम।  
२ रक्षाकरण, रखवाली। ३ चौकी, पहरा देनेवाले  
सिपाहियोंके रहनेकी जगह।

उपरचित (सं० त्रि०) निर्मित, बनाया हुषा, जो  
तैयार कर लिया गया हो।

उपरक्षक (सं० त्रि०) उप-रक्ष-क्षुट्। उपराग  
कारक, रंग चढ़ा देनेवाला।

उपरक्षन (सं० स्त्री०) उपरागकरण, रंगसाजी।

उपरक्षनीय, उपरक्ष देखी।

उपरक्षर (सं० त्रि०) उपराग योग्य, रंग चढ़ाने लायक।

उपरत (त्रि०) उप-रम-त। १ हटा हुषा, निकला  
हुषा। २ निवृत्त, छुटकारा पाये हुषा। ३ नृत,  
गया-गुजरा।

"विशुद्धं परते पुत्रा विनश्यत्सर्वं विक्रिः।" (काश्याय)

४ उपरतियुक्त, यहवतसे बनग रहनेवाला।

उपरतरास (सं० त्रि०) नृत्य तथा क्रीडामे निवृत्त,  
जो माचकुद बन्द कर रहा हो।

उपरतविषयाभिन्नाय (सं० त्रि०) सांसारिक सुखकी  
इच्छासे निवृत्त, जो दुनियावी पाराम चाहता  
न हो।

उपरतच्छ (सं० त्रि०) इच्छामय्य, लालच छोड़े  
हुषा।

उपरतात् (सं० अर्थ०) मण्डलके मध्य, घेरेमें।

उपरताति (सं० स्त्री०) उपरताय कर्मणि क्तिन्,  
बेदे लख्यः। १ शुद्ध। "उपरतद्वयः पापावृत्तेः, श्रेष्ठपते  
विकीर्णते उपरताति पुङ्गवः।" (सायब) २ मेघकरता द्वारा  
भाच्छाष्य भन्तरीष। "उपरता उपरताति।" (अथ० १।४।५)

उपरतारि (सं० त्रि०) गन्, गन्ध, मयसे दोस्ती  
रखनेवाला।

उपरति (सं० स्त्री०) उप-रम-क्तिन्। १ विरति,  
बन्दी। २ वासनालाग, पाराम छोड़नेका काम।  
३ वेराग्य, दुनियासे मुहन्वत न रखनेकी यात।  
४ मवराग।

"साक्षात्तमन्त्रं उपरतिपरतिवृत्तम्।" (विश्वकर्मणि)

जो वृत्ति किसी प्रकार यहविषयका अवलम्बन

नहीं रहती, यही उपरति है। ५ निवारण, बटा देनेवाला काम। ६ बुद्धि, चक्र। ७ मृत्यु, मौत।

उपरज (सं० स्त्री०) उपमित रश्मिज। गोपरज, दूसरे दरजेका जहाजिर।

“उपरजति बाहय कर्तुं योग्यता सर्वेष्वपि।

मुना वृत्तिभ्या इह पराजति वदन्ति॥

दुष्टा यत्नैः राजानुरागेषु नैव तथा।

विष्णु विजयने श्रीम विदेवीपदसूत्रतः॥” (भारतवाच)

काच, कपूर, प्रस्तर, मुद्रा, गन्धि, गङ्गा इत्यादि उपरज है। उपरजमें रश्मिकी तरह गुण होते भी वे कुछ कम रहते हैं। काच प्रगति देखो।

उपरना (हिं० पु०) १ ऊपरी वस्त्र, दुपटा पहना।

(क्रि०) २ उत्पटाटित होना, चपट पड़ना।

उपरम्भ (सं० स्त्री०) अशक्त उदरगृहकारका उपरि भाग, घोड़ेके पीठवाले गद्देका ऊपरी हिस्सा।

उपरफट (हिं० वि०) अनावश्यक, धैर्यहीन, जो कारामन्द न हो।

उपरफट्ट, उपरफट्ट देखो।

उपरम (सं० पु०) उप-रम-घञ् निपातनात् न वृद्धिः। १ निवृत्ति, बन्दी। २ निवारण, परहेज-गारी। ३ मृत्यु, मौत।

उपरमण (सं० स्त्री०) १ वैराग्य, दुःखवाणी चीन्नेसे तबीयत बूट जानेकी बात। २ निवृत्ति। ३ बन्दी।

उपरव (सं० पु०) उप-व चाधारे घञ्। गर्ताकार प्रदेश, बावाड़का मनुष्य। यह सोमके अभिव-वका एक अङ्ग है। (अनुराधा ३१४—११)

उपरवार (हिं० स्त्री०) उद्योगी, वांछित वस्तु।

उपरस (सं० पु०) उपमितो रश्मिज। गोपरस, उप-धातु, दूसरे दरजेकी कान्ची गे। राजनिघण्टुके मतसे पारद, अश्वत्थ, कद्रु, सिन्दूर, नेरिक, चित्तिल और मेसेवकी उपरस कहते हैं। भावप्रकाश कद्रु, नेरिक, गङ्गा, कामोद, सोडागा, नीलाभ्रज, गन्धि और पराटकी उपरस बताता है। अनेक तरहसे विवर्तित विराज देखो।

उपरदित (हिं०) इरीति देखो।

उपरद्विती (हिं० स्त्री०) द्वैतिय देखो।

उपरांठा (हिं० पु०) परांठा, घी लगा, लगाकर सिर्फ तवेपर सेकी हुई रोटी।

उपरा (हिं० पु०) हठाकार उत्पन्न, गोल गोल कण्डा।

उपराग (सं० पु०) उप-रन्ध्र-घञ्। १ राक्षस-चन्द्र। २ राक्षस-चन्द्र। ३ राक्षस। ४ विमान, छोटा राग। ५ दुर्ग, बंदरगाह। ६ परीवाद, बंद-नामी। ७ पञ्चकलीन, सितारोंकी पहर। ८ पद्मन, पादत। ९ मन्त्र, ताजुक। १० मित्रा, हिजा-रत। ११ प्रवृत्ति, तरगीव। १२ गोपदप, भाई।

उपराचढ़ी (हिं० स्त्री०) अहमदमिका, चढ़ा-चढ़ी, से-दे। जब कुछ मनुष्य कोई काम करने चलते और उनमें सबके सब उत्कर्ष पागेके निधि बाँट मन्तते हैं, तब उस व्यवसायी उपराचढ़ी कहते हैं।

उपराज (सं० पु०) १ राजाके अधीनस्थ राजतुल्य माननीय व्यक्ति, राजप्रतिनिधि, नायक-उन्-मनन, वायसराय। (अव्य०) २ राजाके निकट, बादशाहके पास। (क्रि०) ३ राजतुल्य, बादशाह केसा।

उपराजमा (हिं० स्त्री०) १ उत्पन्न करना, जन्माना। २ निर्माण करना, बनाना। ३ उपार्जन करना, कमाना।

उपराना (हिं० स्त्री०) १ उद्गमन करना, ऊपर चढ़ना। २ प्रकट होना, देख पड़ना। ३ मन्त्रण करना, उत्तराना।

उपरान्त (सं० अव्य०) अन्तार, बाद, पीछे।

उपराम (सं० पु०) उप-रम-घञ् वा वृद्धिः। १ उप-रति, परहेज। २ मृत्यु, मौत। ३ निवृत्ति, बूट-कारा। ४ सवग्राम। (अव्य०) ५ रामसमीप, रामके पास।

उपरामा (हिं० पु०) साहाय्य, मदद।

उपरायटा (हिं० वि०) अभिमान, पकड़वाह, ‘घमण्डमे सर उठाये हूया।

उपराही (हिं० वि०) १ उपरिष्ठ, ऊपरवाला। (क्रि० वि०) २ ऊपर।

उपरि (सं० अव्य०) ऊर्ध्व-रित उपदेशक। “उर्ध्वं च उन्मो रित्पिबन्ती च।” (अ ३१३२२ अति) १ ऊर्ध्व, ऊपर। २ अन्तर, बाद।

उपरिचर ( स० पु० ) पुरुवंशके एक राजा । दूसरा नाम वसु भी है । सदैव अग्न्यासक्त रहते थे । इन्द्रके उपदेश-क्रमसे इन्होंने चेदि राज्यपर अधिकार किया । इन्द्रने इन्हें स्फटिकके बने विमान और वैजयन्तीकी मालाका उपहार दिया था ।

उपरिचर इन्द्रध्वज पूजाके प्रवर्तक हैं । विमानपर चढ़ आकाशपथमें चलने और ऊपर घूमनेसे उपरिचर नाम पड़ा है । इनके महाबलपराक्रान्त १२ वृहद्रथ अथवा महावथ, २५ प्रत्यग्रथ, ३५ कुशाब्ज वा मणिवाहन, ४४ मावेज और ५२ यदु पांच पुत्र हुये, थे । इनमें जो जिस देशमें अभिषिक्त हुआ, वह देश उसीके नामसे पुकारा गया ।

उपरिचरकी राजधानीके निकट शक्तिमती नदी बहती थी । इन्होंने कोलाहल नामक एक पर्वत तोड़ डाला । शक्तिमती नदी पर्वतके उसी विदीर्घ पथसे निकली थी । उसी पर्वतमें एक पुत्र और एक कन्याने जन्म लिया । शक्तिमतीने पुत्रकन्याको उठा राजाके हाथपर रखा था । पुत्र सेनानीके कार्यमें लगा । यथाकालपर गिरिवाला गिरिकाने ऋतुस्राता और शक्ति हो अपनी भवस्था राजासे कही । उसी दिन राजाको पिछलोक्षणधने अग्न्या करनेके लिये आदेश दिया । राजा उनकी आज्ञाके क्रमसे अग्न्यार्थ निकले, किन्तु पक्षीकसामान्या रूपनावलम्बित गिरिकाकी भूल न सके और उसी समय वसन्त कालपर वनमें घुसे । अग्न्याकी बात मनसे उतर गयी थी । गिरिकाके विरहसे नितान्त अधीर हो राजा इतस्ततः घूमते-घूमते किसी तरुमूल पर जा बैठे । उसी स्थानमें इनका रेतशयन हुआ । राजाने यज्ञपूर्वक अपना रेतः शोधनकर एक श्वेनपक्षीकी देते कहा—तुम इसे लेकर हमारी महियोंकी सौंप आओ । श्वेनपक्षी रेतः ले आकाशके पथसे उड़ा और उसी समय किसी ऊपर श्वेनने सञ्चलित रेतःको मांस समझ आत्ममय किया । समयके विवादमें रेतः सञ्चले छूट यमुनाके जलमें गिर गया । मत्स्य-रूपा भद्रिकाने वह रेतः खा लिया । दशमास बाद किसी धीवरने उसी मत्स्यीको पकड़ा था । मत्स्यीके

उदरसे एक कन्या और एक पुत्र दो बच्चे निकले । मत्स्यजीवी यह बहुत व्यापार देख चमत्कृत हुये । उन्होंने कन्या और पुत्र दोनोंको उठा उपरिचरके सम्राट् बना रखा । राजाने उक्त कन्या और पुत्र दोनोंकी ग्रहण किया था । पुत्रका मत्स्यराज और कन्याका नाम मत्स्यगन्धा पड़ा । यह मत्स्यगन्धा व्यासदेवकी जननी थीं । ( भारत भाग ११ व० )

उपरिचित ( स० त्रि० ) ऊर्ध्वपर संयुक्त, ऊपर लगा किया हुआ ।

उपरिज ( स० त्रि० ) ऊर्ध्वपर उत्पन्न होनेवाला, ऊंचा, जो ऊपर निकल गया हो ।

उपरितन ( स० त्रि० ) ऊर्ध्वस्थित, ऊपरवाला ।

उपरिनिहित ( सं० त्रि० ) ऊर्ध्वःस्थापित, ऊपर रखा हुआ ।

उपरिपुत्र्य ( स० त्रि० ) ऊर्ध्वपर पुत्रपुत्र, जिसके ऊपर भर्त रहे ।

उपरिपुत्र ( स० त्रि० ) ऊर्ध्वने भागमन करने-वाला, जो ऊपरसे आ रहा हो ।

उपरिपुत्र ( सं० त्रि० ) भूमिपर उठाया हुआ, जो जमीन पर खड़ा किया गया हो ।

उपरिभाग ( सं० पु० ) ऊर्ध्व पार्श्व, ऊपरी हिस्सा ।

उपरिभाव ( सं० पु० ) ऊर्ध्व भवस्थान, ऊपर रहनेकी हालत ।

उपरिभूमि ( सं० स्त्री० ) ऊर्ध्व भूमि, ऊपरी जमीन ।

उपरिमर्त्य ( सं० पु० ) मानवके ऊर्ध्वपर स्थित, जो पादमौके ऊपर हो ।

उपरिमेखला ( सं० पु० ) गोदके प्रवर्तक एक वस्त्र ।

उपरिहृती ( सं० स्त्री० ) वह दिक हृत्मीच्छा-विशेष । इति शब्दः ।

उपरिशयन ( सं० स्त्री० ) विरामस्थान, पारामगाह ।

उपरिचिह्निक ( सं० त्रि० ) ऊर्ध्व श्रेणीमें रहनेवाला, जो ऊपरी कतारमें हो ।

उपरिष्ट ( सं० स्त्री० ) परांठा, धी लगा लगाकर तबेपर सेकी हुई रोटी ।

उपरिष्ठाज्जोतिषमती ( सं० स्त्री० ) वैदिक इन्द्रोत्पत्तिका एक भेद । अतिमिकी शब्दः ।





उपरिचर (सं० पु०) पुरुवंशके एक राजा। दूसरा नाम वसु भी है। वे सईटा मृगयासङ्ग रहते थे। इन्द्रके उपदेश-क्रमसे इन्होंने चेदि राज्यपर अधिकार किया। इन्द्रने इन्हें स्फटिकके बने विमान और वैजयन्तीकी मालाका उपहार दिया था।

उपरिचर इन्द्रध्वज पूजाके प्रवर्तक हैं। विमानपर चढ़ आकाशपथमें चलने और ऊपर घूमनेसे उपरिचर नाम पड़ा है। इनके महाबलपराक्रान्त १२ वृहद्रथ अथवा महारथ, २५ प्रत्यग्रह, ३५ कुशाब्ज वा मणिबाहुन, ४४ मावेज और ५५ यदु पांच पुत्र हुये, थे। इनमें जो जिस देशमें अभिषिक्त हुआ, वह देश उसीके नामसे पुकारा गया।

उपरिचरकी राजधानीके निकट शक्तिमती नदी बहती थी। इन्होंने कोलाहल नामक एक पर्वत तोड़ डाला। शक्तिमती नदी पर्वतके उसी विदीर्घ पथसे निकली थी। उसी पर्वतमें एक पुत्र और एक कन्याने जन्म लिया। शक्तिमतीने पुत्रकन्याको उठा राजाके हाथपर रखा था। पुत्र सेनानीके कार्यमें लगा। ययाकालपर गिरिवाला गिरिकाने ऋतुछाता और शचि हो अपनी भवस्था राजासे कही। उसी दिन राजाको पिछलोक्षणगने मृगया करनेके लिये आदेश दिया। राजा उनकी आज्ञाके क्रमसे मृगयार्थ निकले, किन्तु पक्षोकसामान्या रूपनावलम्बती गिरिकाकी भूल न सके और उसी रमणीय वनमें कालपर वनमें घुसे। मृगयाकी बात मनसे उत्तर गयी थी। गिरिकाके विरहसे निताप्त मधीर हो राजा इतस्ततः घूमते-घूमते किसी तरुमूल पर जा बैठे। उसी स्थानमें इनका रेतवृत्तन हुआ। राजाने यक्षपूर्वक अपनी रेतः शोधनकर एक श्वेन-पक्षीको रेत कहा—तुम इसे लेकर हमारी सहिष्योकी सौंप जाओ। श्वेनपक्षी रेतः ले आकाशके पथसे उड़ा और उसी समय किसी अपर श्वेनने सञ्चुलित रेतःको मांस समझ आक्रमण किया। समयके विवादमें रेतः खुसे छूट यमुनाके जलमें गिर गया। मत्स्य-रूपा अद्रिकाने वह रेतः खा लिया। दमामय बाद किसी धीवरने उसी मत्स्योको पकड़ा था। मत्स्योके

उदरसे एक कन्या और एक पुत्र दो बच्चे निकले। मत्स्यजीवी यह बहुत व्यापार देख चमत्कृत हुये। उन्होंने कन्या और पुत्र दोनोंको उठा उपरिचरके सम्राट् का रखा। राजाने उक्त कन्या और पुत्र दोनोंको यक्ष किया था। मुद्रका मत्स्यराज और कन्याका नाम मत्स्यगन्धा पड़ा। यह मत्स्यगन्धा व्यासदेवकी जननी थीं। (भारत भाद्र ११ ब०)

उपरिचित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर संश्लेषित, ऊपर लगा किया हुआ।

उपरित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर उत्पन्न होनेवाला, ऊंचा, जो ऊपर निकल गया हो।

उपरितन (सं० त्रि०) ऊर्ध्वस्थित, ऊपरवाला।

उपरिनिहित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वःस्थापित, ऊपर रखा हुआ।

उपरिपुरुष (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर पुरुषयुक्त, जिसके ऊपर मर्द रहे।

उपरिपुत्र (सं० त्रि०) ऊर्ध्वसे आगमन करने-वाला, जो ऊपरसे आ रहा हो।

उपरिवृद्ध (सं० त्रि०) भूमिपर उठाया हुआ, जो जमीन पर खड़ा किया गया हो।

उपरिभाग (सं० पु०) ऊर्ध्व पागर्ज, ऊपरी हिस्सा।

उपरिभाव (सं० पु०) ऊर्ध्व भवस्थान, ऊपर रहनेकी शक्त।

उपरिभूमि (सं० स्त्री०) ऊर्ध्व भूमि, ऊपरी जमीन।

उपरिमर्त्य (सं० पु०) मानवके ऊर्ध्वपर स्थित, जो आदमीके ऊपर हो।

उपरिमेखला (सं० पु०) गोत्रके प्रवर्तक एक ऋषि।

उपरिवृद्धगी (सं० स्त्री०) वह दिक वृद्धीच्छन्दो-विशेष। इति ईको।

उपरिगयन (सं० स्त्री०) विद्यामन्यान, पारामगह।

उपरितोषिक (सं० त्रि०) ऊर्ध्व श्रेणीमें रहनेवाला, जो ऊपरी कतारमें हो।

उपरिट (सं० स्त्री०) परांठा, धी नगा लगाकर तवेपर सेकी हुई रोटी।

उपरिष्ठाज्योतिषमती (सं० स्त्री०) वैदिक जन्मो-ष्ठिका एक मेद। ज्योतिषी ईको।

उपरिष्ठाज्योतिस् (मं० श्लो०) त्रिष्टम् दृष्ट्वा एक भेदः । तत्रैव पश्चिम पादमे पाठ पश्चर रहते है ।

उपरिष्ठात् (मं० पद्य०) ऊर्ध्व-नि० रिष्टातिम् । चर्च-रिम् । अ० ११। १ उपरि, ऊपर । २ पश्चात्, पीछे ।

उपरिष्ठादुत्तरी (मं० त्रि०) वैदिक दृष्ट्योजिव । त्रयमे वार पाठ पङ्क्ति, त्रयमे प्रथममे वारच चौर चरमित्त तोनेमे डेवन पाठ पाठ पश्चर रहते है ।

उपरिम् (मं० त्रि०) उपरि मीदति, मन्द-क्षिप् । १ ऊर्ध्वपर उपयेगन करनेवाला, जो ऊपर रहता हो ।

(पु०) २ राजपुत्रपदमे एक सोमनेत्रक द्रुवधन नामक देवता । “हे देव सोमनेत्र उपरिम्ही द्रुवधनर्षेभ्यः साधो” (तन्त्रः २।१३)

उपरिम् (मं० श्लो०) उपरि-मद भावे बाहुलकात् यत् । ऊर्ध्वपर उपयेगन करनेका भाव, उंचो बैठक । “उपरिम् उपरिचक्रणमात्रे उपरिदम्” (अनुराधाकर्मण्य उरि-मात्रो ३।५।११३)

उपरिम् (मं० त्रि०) ऊर्ध्वपर रहनेवाला, ऊपरी, जो ऊपर ठहरता हो ।

उपरिस्थापन (मं० श्लो०) ऊर्ध्वपर स्थापित किये जानिका भाव, ऊपर रखे जानकी चालत ।

उपरिस्थित (मं० त्रि०) ऊर्ध्वपर दृष्टावयमान, जो ऊपर हो ।

उपरिष्णुम् (मं० त्रि०) उषत किया हुआ, जो चढ़ाया गया हो ।

उपरी (त्रि० श्लो०) १ छोटी गोश कण्ठी । (त्रि०) २ ऊपरी ।

उपरी-उपरा, उत्पत्ती ईको ।

उपरीयक (मं० पु०) श्रृङ्गारबन्धन विमोच, मह-धनदारी एक बैठक ।

“उपरीयकरी इत्यादिनी कथयति”

मन्त्री कथयते काली यन्त्रः साधुपरीयकः ॥” (रत्नमन्त्री)

उपरीय (मं० त्रि०) उप-द्वय-तः । १ पाहत, घिरा हुआ । २ प्रतिद्वय, दबा हुआ । ३ अनुप्रीयित, मत्ताया हुआ । ४ अनुद्वय, समभावा हुआ । ५ रचित, विष्ठागत किया हुआ ।

उपरीय (मं० पद्य०) प्रतिद्वय करके, रोककर ।

उपरीयमान (मं० त्रि०) पाहत, जो घिरा जा रहा हो ।

उपरीय (मं० पद्य०) उपरीय करके, पदकर ।

उपरीयक (मं० श्लो०) उपरिष्ठ कर्तृक । नाट्य विमोच । यह चत्वार्य प्रकारका होता है, यथा— १ नाटिका, २ योडक, ३ गोष्ठो, ४ गच्छ, ५ नाट्य-शासक, ६ प्रस्थान, ७ भाष्य, ८ काव्य, ९ प्रेरक, १० रासक, ११ संलापक, १२ योगिदित, १३ शिष्टक, १४ विमोचिका, १५ दुर्मसिका १६ प्रहारको, १७ हजोग, १८ भाव ।

उपरीय (त्रि० पु०) उपरीय, चहर ।

उपरीय (त्रि० श्लो०) योडको, पिछोरो ।

उपरीय (त्रि० त्रि०) उपरीय, जो पश्चिमे दक्षिण भाग का हो ।

उपरीय (मं० पु०) उप-द्वय-तः । १ पाहर, दहन । २ प्रतिबन्ध, रोक । ३ अनुप्रीय, समभावेकी बात । ४ योडक, तकलीकदिही ।

“कथामानुषीर्षं न दन् कथामोर्षं देहिबन्धः”

तत्रावधुयीर्षं मोषमय नमः ॥” (मनु १।१५)

“उपरीयो भवत्युत्तरीयः कथामोर्षः कथामोर्षः” (मिथुनि)

उपरीयक (मं० श्लो०) उप-द्वय-तः । १ मार्गाग, तहलाना । २ वायव्य, रहनेका भीतरी कमरा । ३ रस । (त्रि०) ४ उपरीयकर्ता, घेरनेवाला । ५ पाहरक, टीकनेवाला । ६ प्रतिबन्धक, रोकनेवाला । ७ अनुप्रीयकारी, तरावो देनेवाला ।

उपरीयक (मं० श्लो०) प्रतिबन्धन, रोक ।

उपरीयिन् (मं० त्रि०) १ प्रतिबन्धन करनेवाला, जो रोकता हो । २ प्रतिबन्ध, दबा हुआ ।

उपरीयित (त्रि०) इतिवैदिक ।

उपरीयितो (त्रि० श्लो०) योडित ईको ।

उपरीय (त्रि० त्रि०-वि०) उपरिष्ठात्, ऊपरको चौर ।

उपरीय (त्रि० पु०) उपरिष्ठ भाग, उपरी पत्रा ।

उपरीय (त्रि० त्रि०) उपरिष्ठ, ऊपरी ।

उपरीय, उपरी ईको ।

उपरीयन (मं० श्लो०) कदाचि समस्थिति, प्राप्य सदाचि ईको ।

उपयुक्त (सं० त्रि०) उपरिक्थित, ऊपर कहा हुआ।  
उपल (सं० पु०) उपलान्ति, उप सा-क अथवा उ-पल-  
अच्। १ पाषाण, पत्थर।

“तिना द्रव्यालुपगमिने विधायादे विधीषांय ।” (मैत्रहूत)

२ रत्न, जायाहिर।

उपलक्ष (सं० पु०) पाषाण, पत्थर।

उपलक्ष (सं० पु०) उपलक्ष देखो।

उपलक्षक (सं० त्रि०) उप-लक्ष-अच्। १ उद्भावक,  
अन्धाज्ञु लगानेवाला। २ उपादानकी लक्षणसे इतर-  
बोधक, जाती आचारसे दूसरेको बतानेवाला। ३ दर्शक,  
देखनेवाला।

उपलक्ष्य (सं० स्त्री०) उप-लक्ष्य करण ल्युट्।  
१ प्रज्ञावृत्त्यायामलक्षणा, शाब्दिक शक्तिविशेष। अपने  
जैसे दूसरे वस्तुको भी बता देना उपलक्षण कहलाता  
है। चन्द्रगुणार्थ देखो। २ अन्यका उद्बोधक लक्षण,  
निशान्। ३ विमोचन, सिद्ध। ४ दर्शन, देख-भाल।

५ ध्यान, ख्यात।

उपलक्षणत्व (सं० स्त्री०) चिह्न रहनेका भाव, निशान्  
पड़ जानेकी हालत।

उपलक्षयितव्य (सं० त्रि०) चिह्नसे समझा जानेवाला,  
जो आचारसे देख पड़ता हो।

उपलक्षित (सं० त्रि०) चिह्नसे प्रकाशित, निशान्से  
समझा हुआ।

उपलक्ष्य (सं० पु०) १ अयलक्ष्यन्, टेक। २ प्रयोजन,  
मतलब। ३ उद्देश्य, असली बात। ४ प्रमाण, सबूत,  
हवाला। (त्रि०) ५ प्रमाण दिये जाने योग्य, जो  
हवाला दिये जानेके लायक हो।

उपलक्षिमिय (सं० पु०) उपलक्षिः प्रियो यस्य। चमर  
नामक जन्तु। चमर देखो।

उपलक्ष्य (सं० त्रि०) उप-लक्ष-ङ्। १ प्राप्त, सिखा  
हुआ। २ प्राप्त, समझा हुआ। ३ विचारा हुआ, जो  
ख्याल करनेके काबिल हो।

उपलक्ष्यसुख (सं० त्रि०) सुख उठाये हुआ, जो चाराम  
उठाये हो।

उपलक्ष्यार्थ (सं० त्रि०) अर्थ समझा हुआ, जो मतलब  
पा चुका हो।

उपलक्ष्यार्थ (सं० स्त्री०) उपलक्ष्यः अर्थो यस्याः।  
आख्यायिका, सच्ची कहानी।

उपलक्ष्यि (सं० स्त्री०) उप-लक्ष-क्तिन्। १ ज्ञान,  
समझ। २ मति, अर्थ। ३ प्राप्ति, हासिल। ४ अनु-  
मान, अन्दाज।

उपलक्ष्यिम् (सं० त्रि०) समझ पड़ने योग्य, जो  
ख्यालमें आ सकता हो।

उपलक्षिम् (सं० पु०) पाषाणभेदक, पथरचटा।

उपलभेद, उपलभेदि देखो।

उपलभेदिन् (सं० पु०) पाषाणभेदो हस्त, पथरचटा।

(Plectranthus aromaticus) वैद्यकशास्त्रके मतसे  
हस्तका पर्यायशब्द—खेता, पलभित्, मिलगभेज, चम्प-  
भेदी, गिनाभेद, नगभिसक, भेदक, चम्पन्न, गिरिभित्,  
भिसयोजिनी और पाषाणभेद है। यह शीतल, तिक्त,  
तीक्ष्ण, कषाय, वस्तिशोधक एवं भेदक होता और चर्म,  
गुल्म, सूक्ष्मकृच्छ्र, मूलाघात, हृद्रोग, पथरी, योनिरोग,  
प्रमेह, झोड़ा, शूल, त्रय तथा वातादिको नाश करता  
है। उपलभेदी हस्त भारतके नाना स्थानोंमें उत्पन्न  
होता है।

उपलभ्य (सं० त्रि०) उप-लभ कर्मणि यत्। १ प्राप्य,  
मिलनेवाला। (रघु० २२८) २ ज्ञेय, समझा जाने  
लायक। (अथ०) ३ ज्ञानके साथ, समझकर।

उपलभ्यमान (सं० त्रि०) समझा जानेवाला, जो  
मालूम किया जा रहा हो।

उपलभ्य (सं० पु०) उप-लभ-घञ्-नुम्। लभेत्।  
भा० १५६०। १ अनुभव, समझ। “मोक्षमरिचिबोधनभाष्य  
चकारंस्त्वितिदभाषतः ।” (बृहत्सं०) २ स्मरण, धारणा।

उपलभ्यक (सं० त्रि०) उप-लभ-घञ्-नुम्-क्तम्।  
अनुभावक, ख्याल करनेवाला।

उपलभ्यन् (सं० स्त्री०) अनुभव, धारण।

उपलभ्यन् (सं० त्रि०) उप-लभ-ल्यत्-नुम्।  
उपलभ्यन् वचनम्। भा० १५६१। १ स्मरण, तारीफ़के काबिल।

२ प्राप्य, मिल सकनेवाला।

उपलभ्योक्त (सं० स्त्री०) गुप्तिगो, सूचकैलने-  
वाली वेश।

उपलभ्य (सं० स्त्री०) उप-लभ-क-टाप्। १ मर्करा,

चोरी। २ बाहुया, शालू। ३ प्रसारण भूमि, पदवीभी भूमि।

उपपत्ति (मं० पु०) दृष्टप्रत्य, वस्तुविषय।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) व्यापार, व्याप।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) राटीमयं, राट्टियामटी।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) उप-पत्ति-पत्र। उपपत्ति, वदतिगुणो।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) उपपत्ति, उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) छोटी मोल कपड़ी।

उपपत्ति (मं० पु०) उप-पत्ति-पत्र। १ मोमयादि द्वारा लेपन, निपाई। २ प्रतिवचन, रोक। ३ मफल इन्द्रियका भवसादन, रुद्ध पद जानकी दानत।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) १ मोमयादि लेपन, लेपने-पोतनेकी चीज। २ लेपनकार्य, निपाई।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) १ लेपनका कार्य देनेवाला, जो उपपत्ति के काम आता हो। २ लेपन करनेवाला, जो लेपता हो।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) कर्णादि धातु विभेय, मोमा तर्पण कानी गे। अर्प, रोष, ताज, नाम, रम, काल, तीक्ष्ण, सुप्राप्त, चट्टा मोह, कांसार और गोपकको उपपत्ति कहते हैं। (देवदत्त)

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उप-पत्ति-पत्र। १ यत्रका उपपत्ति उपपत्ति विविध। यह यत्रके तत्त्वका उपपत्ति करता है। २ मद्रव्य।

‘उपपत्ति-उपपत्ति’ अर्थात् ‘उपपत्ति-उपपत्ति’ उपपत्ति-उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उप-पत्ति-पत्र। १ यत्रका उपपत्ति उपपत्ति विविध। यह यत्रके तत्त्वका उपपत्ति करता है। २ मद्रव्य।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उप-पत्ति-पत्र। १ यत्रका उपपत्ति उपपत्ति विविध। यह यत्रके तत्त्वका उपपत्ति करता है। २ मद्रव्य।

उपपत्ति (मं० पु०) १ विद्यापत्र, व्यापकका पत्र। २ चारहण, मोपेका पत्र।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) उपपत्ति वनिन। १ अनुपपत्ति, छोटा मद्रव्य। २ उद्यान, बाग। ३ उपपत्ति, (उपपत्ति) १ वन समीप, जङ्गल के पास।

उपपत्ति (मं० पु०) १ मद्रव्य। (मि) २ उद्यान-स्थित।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) उपपत्ति चीना, पुन उपपत्ति, पद उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति, उपपत्ति-पत्र।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) उप-पत्ति-पत्र। उपपत्ति, उपपत्ति, उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) उपपत्ति, उपपत्ति-पत्र।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) १ उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति। (उपपत्ति) २ उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० स्त्री०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपपत्ति (मं० पु०) उपपत्ति उपपत्ति, उपपत्ति उपपत्ति।

उपवस्ति (सं० स्त्री) उप-वस्त स्तब्धे भावे क्तिन् ।  
स्तब्ध, खम्भा ।

उपवस्तु (सं० त्रि०) उपवास करनेवाला, जो  
फाँकेसे हो ।

उपवा (सं० स्त्री०) आधान, फूँकफाँक ।

उपवाक (सं० पु०) उप-वच-घञ् क्तुलम् । १ पर-  
स्पर आलाप, बात चीत । “नमस्तन इदमुपवाकनीम् ।” (धन्

११६५१) “उपवाकमुपेय वचनं परस्परवचनम् ।” (सायण)

उप-वा भावे क्तिप् तस्यै कं ललं यत् । २ यव ।

“उपवाकाः यवाः ।” (शतसोपे महीधर १८२०)

उपवाकी (सं० स्त्री०) उपवाक स्त्रियां ङीप् । इन्द्र-  
यव । “वृक्षे उपवाकीभिर्मैत्रेयं तीक्ष्णभिः ।” (समवन्तः २११०)

उपवाक्य (सं० त्रि०) उप-वच कर्मणि यत् क्तुलम् ।  
१ सम्भाषणीय, बात किये, जानिके काविल ।

(धन् १०१६५१२) २ प्रपञ्च्य, बन्दगी किये जानिके लायक ।

उपवाक्य, उपवाक्य देखी ।

उपवाक्यम (सं० स्त्री०) वीजन, पट्टा ।

उपवाद (सं० पु०) उप-वद-घञ् । निन्दा, बदनामी ।

उपवादिन् (सं० त्रि०) उप-वद-णिनि । निन्दक,  
बदनाम करनेवाला । “क्षिप्रतः कवचिनः विपत्ता उपवादिनः ।”  
(चम्पूक ७०)

उपवास (सं० पु०) उप-वस-घञ् । भोजनभाव,  
फाँका, उपवास । “उपवासस्य पवित्रो यय माधो शुभः सः ।

उपवासः न विधेयः सर्वमोक्षविशेषः ॥” (मत्स्यपु०)

सर्वभोग छोड़ पापकी निवृत्तिके लिये दया,  
चाक्ति, धैर्यादि नियमसे रहना उपवास कहलाता है ।

उपवास दो प्रकारका होता है, वैध और अवैध ।  
व्रतादिके लिये विधिपूर्वक किया जानेवाला उपवास  
वैध है । वह चार प्रकारका कहा है—

“साध्याद्यन्तरीक्षीः साधं श्रावय मयम् ।

उपवासवर्गं द्वे भोर्वर्गं मत्स्यपुष्टयम् ॥”

उपवासके दिन अन्न, गोरोचना, गन्ध, पुष्प,  
मावा, फलहार, दण्डधारण, गाव् वा मस्तकसे तेन  
प्रोक्षण, ताम्बूल, दिवानिद्रा, अचकीड़ा, सैयन और  
स्त्रीस्पर्शकी परित्याग करना चाहिये । पुत्रके प्रमाथमें  
पुत्रोत्पत्ति पर्यन्त ऋतुकासकी स्त्रीगमनसे दोष नहीं

सगता । उपवासके पूर्व और पर दिन कासिके पात्रमें  
भोजन, मांसमद्य, सुरापान, मधुसेवन, सोम, मिय्या-  
कया, व्यायाम, स्त्रीसङ्ग, दिवानिद्रा, अन्न, मांस,  
शिलापिष्ट एवं मसूरका भक्षण, पुनरसन, पथभ्रमण,  
यान, परियत्र, द्यूतक्रीडा, तैलमर्दन, पराच, तैल,  
चणक, कोद्व-धान्य, शाक, अधिक घृत और अधिक  
अलपान निषिद्ध है ।

उपवासमें अथमर्घ्य होनेसे प्रतिनिधि देना पड़ता  
है । पुत्र, भगिनी, भ्राता और भार्याके प्रमाथमें  
ब्राह्मण प्रतिनिधि वनता है । ब्राह्मणवर्तके मतसे उप-  
वासमें अत्यन्त अथमर्घ्य पड़ने पर एक ब्राह्मणकी  
भोजन करा देना चाहिये ।

उपवासक (सं० त्रि०) उप-वास-क्युल् । चनाहारी,  
फाँकाकर ।

उपवासन (सं० स्त्री०) उपवास उपसेवायां भावे  
क्युट् । १ उपसेवन, इस्तेमाल । “यदा भगवत्पुत्राणां  
यस्योपवासने कृतम् ।” (अथर्व १०१५१२) २ परिच्छेद, योगाक ।

उपवासिन् (सं० त्रि०) उप-वस-णिनि । चनाहारी,  
फाँका करनेवाला ।

उपवाहन (सं० स्त्री०) उप-वह-णिप् भावे क्युट् ।  
१ समोपगमन, पासकी जवाई । २ से जाने या  
वापस आनेका काम ।

उपवाहिन् (सं० त्रि०) किसीकी ओर जानेवाला,  
जो बहते चला जाता हो ।

उपवाह्य (सं० पु०) उप-वह-क्युल् । १ राजवाहक  
हस्ती, वादगाहकी सवारो । (स्त्री०) २ राजपथ,  
सरकारी सड़क । (त्रि०) ३ निकट पहुँचाया  
जानेवाला ।

उपविद् (सं० स्त्री०) उपविन्दति, विद्-क्तिप् ।

१ प्राप्ति, पहुँच । २ ज्ञान, समझ । “उपविदा उपरेवे

मेव इतीति दैवार्थं न इत्यन्तर्लोकेत्युदात्तम्” (सायण)

३ अन्वेषण, तलाश । (त्रि०) ४ प्राप्त होनेवाला,

जो पहुँच जाता हो । ५ ज्ञाता, समझदार ।

उपविद्या (सं० स्त्री०) गीष विद्या, दूसरे दर-  
जेका इल्ल ।

उपविभाग (सं० अर्थ०) विभागा नदीके समोप ।

उपविरस ( मं पु० ) उपवेगल कारक, बैठकर ।  
उपविष ( मं० स्त्री० ) उपमित विषय । १ लयित विष,  
ममापदे क्षुहर । २ मर, ममोत्ता क्षुहर ।

“उपविरसोऽपि न कश्चिद्विरसिष्यः ।

उपविरसोऽपि न कश्चिद्विरसिष्यः ॥” ( अष्टाध्याय )

उप०, मेदुष्ट, भृश, लाडली, खरवीर, गुप्ता  
घोर सहितेन मातो उपविष्ये ।

उपविषययुक्त ( मं० स्त्री० ) पांच उपविष, पांच तरफका  
ममोत्ता क्षुहर । छुहो, उक्त, करवीर, लाडली घोर  
मुनिनक्षत्री उपविषययुक्त कहते हैं ।

उपविषा ( मं० स्त्री० ) १ रसातिविषा, मान पत्नीम ।  
२ पतिविषा, पत्नीम ।

उपविट ( मं० लि० ) उप-विष कर्तेरिह । पामोन,  
बैठा हुआ ।

उपवीत ( मं० स्त्री० ) उप-वि-व-त । पाम स्तम्भपर  
स्थापित यज्ञपुत्र, जनेक ।

“उपवीतेन वै पापं वीते कालं च कश्चि

उपवीतमुपवीतेन वै पापं वीते कालं च कश्चि ॥” ( अष्टाध्याय )

वीत घोर पामर्त कापमें यज्ञोपवीतका प्रवीजन  
पड़ता है । यज्ञके पामर्तमें यज्ञोपवीतमें यज्ञोपवीतका  
पाप चलता है । यज्ञके भेदमें उपवीतमें भी भेद  
रहता है ।

“उपवीतमुपवीतेन वै पापं वीते कालं च कश्चि

उपवीतमुपवीतेन वै पापं वीते कालं च कश्चि ॥” ( अष्टाध्याय )

भाष्यका लक्ष्मभाष्ये विमुचित कापासके,  
पामिषका मरके छुच घोर वेगका यज्ञोपवीत मरके  
भीममें बसता है । उक्तोपवीत मरके विमुचित विरस दिखि ।

उपवीर ( मं० पु० ) दानवविशेष ।

उपवृक्ष ( मं० स्त्री० ) उरि, वृक्ष ।

उपवृक्षित ( मं० लि० ) उप हनुह-विष् लक्ष्मि ।  
१ उपलक्षित, उरमा हुआ । २ उरित, वृक्ष हुआ ।

उपवृत्ति ( मं० स्त्री० ) उपवर्ण, वरक, दामन-  
कोमल ।

उपवेधा ( मं० स्त्री० ) मदीमिषेय । यह दक्षिण-  
पक्षका हुआ मदीकी एक माथा ममभ पड़ती है ।

“उपवेधः शेषः च वरकः च वरकः ॥” ( अष्टाध्याय )

उपवेद ( मं० पु० ) उपमितः पितेन । वेदमंथन का-  
वेदादि, छोटा वेद । “उपवेदः वेदमंथनोऽपि न वेदः  
उपवेदः वेदमंथनोऽपि न वेदः ॥” ( अष्टाध्याय )

मऊम हो वेदके उपवेद होते हैं । उपवेदका  
प्रागुर्वेद, यजुर्वेदका धनुर्वेद, सामवेदका गानावेद  
घोर उपवेदका उपवेद मममात्र है ।

“उपवेदः वेदमंथनोऽपि न वेदः ॥” ( अष्टाध्याय )

उपवेदः वेदमंथनोऽपि न वेदः ॥” ( अष्टाध्याय )

धर्मवेदिनि प्रागुर्वेद, विनासितमें भगुर्वेद, भारत-  
मुनिने मममंथन घोर विरकाममें मममात्र निहाला  
है । विरुत यजुर्वेद मतमें प्रागुर्वेद उपवेदका  
उपात्र या उपवेद है । यजुर्वेद है ।

उपवेग ( मं० पु० ) उप-विग भावे घम् । १ स्थिति,  
बैठक । उपमितो वेगिन । २ देग, सुधक । ३ धाम,  
ममाव । ४ पुरोपोत्पन्न दारा म्मोकरव, भागे  
वेदनेकी बात ।

उपवेगम ( मं० स्त्री० ) उप-विग भावे कृत् । १ पामन,  
बैठक । यह मेदको वृद्धा घोर वेसा, मीकाममें  
तया सुखको बढ़ाता है । ( अष्टाध्याय )

“उपवेगमः वेदनेकी बात ।” ( अष्टाध्याय )

२ व्यापन, बैठनेकी बात । ३ धाम, ममाव ।  
४ पुरोपोत्पन्न दारा म्मोकरव, भागे बैठनेकी बात ।  
उपवेगि ( मं० पु० ) उप-विग-इन् । यजुर्वेद-मम-  
दायके मममंथन एक पदवि ।

“उपवेगमः वेदनेकी बात ।” ( अष्टाध्याय )

उपवेगित ( मं० लि० ) १ स्थित, बैठक । २ व्यापित,  
को बैठक दिया गया हो ।

उपवेगिन् ( मं० लि० ) उप-विग-विनि । उपवेगम-  
कारो, बैठनेवाला ।

उपवेग ( मं० पु० ) उप-विष मरके घम् । दक्षि  
का मदीममात्र पामर भाग मीकामका काठ ।

“उपवेगः वेदनेकी बात ।” ( अष्टाध्याय )

उपवेध ( मं० स्त्री० ) उपवेध-पप । विरुत-  
मात्र, ममात्र घोर मममंथन ।

उपव्याख्यान (सं० क्ली०) उप-वि-पा-व्या-ख्य-ट् ।  
 माहात्म्य और उपासनादि कथन, तारीफ़की बात ।  
 “बोनिसे तदपरं सर्वं गतोपव्याख्यानम् ।” (भाष्य ३७० १)  
 उपव्याघ्र (सं० पु०) उपमितो व्याघ्रेन । १ चित्रक,  
 चीता । (अव्य०) २ व्याघ्रके समीप, शेरके पास ।  
 उपव्ययम् (सं० अव्य०) उपःकाल वीतनेपर, तड़ुकेके  
 बाद । “उपमि रिगच्छन्त्याम् ।” (अर्थाचार्य)  
 उपग्रम (सं० पु०) उप-ग्रम-अच् । १ इन्द्रियनिपट्ट,  
 इन्द्रियोंकी रोक । २ छपानाग, लालच न रहनेकी  
 बात । ३ रोगोपद्रवशान्ति, बीमारीके बखड़ेका दवाब ।  
 ४ निवृत्ति, छुटकारा ।  
 “जगत्सु ग्रामे जाते मरु तस्मिन्सुखाकुपि ।” (भारत, वन २०५०)  
 उपग्रमक (सं० त्रि०) शान्ति देनेवाला, जो ठण्डा  
 कर देता हो ।  
 उपग्रमकस (सं० पु०) साधारणोपध, मामूलो दवा ।  
 उपग्रमन (सं० क्ली०) उप-ग्रम भावे ल्युट् । १ उपग्रम,  
 दवाब । चिच्-ल्युट् न द्विः । २ निवारण, छटाब ।  
 उपग्रमनीय (सं० त्रि०) शान्त किया जानेवाला, जो  
 दबनेके आविल हो ।  
 उपग्रमशील (सं० त्रि०) शान्त, ठण्डा, जो भड़कता  
 न हो ।  
 उपग्रय (सं० पु०) उप ग्रीह् उपर्गोये अच् । १ समीप-  
 गयन, पासका सोना । “उपग्रयः समीपगमनम् ।” (विज्ञानकी०)  
 २ व्याधि-ज्ञान-हेतु, बीमारीकी पहचानका सबब ।  
 यह खाद्य या औषध विशेषके उपयोगसे देखा जाता है ।  
 “हेतुव्याधिवर्धोऽविपरिणामोऽकारिणाम् ।  
 औषधान्नविहारावास्तपयोऽसुखाचष्टम् ।  
 विषादुपग्रयं व्याधिः स हि ज्ञानमिति व्युत्पत्तिः ।” (भाष्यविदाय)  
 ३ खाद्यादिके द्वारा व्याधिका दूरीकरण, खाना  
 वगैरहके कुरिये बीमारीका छोड़ाना ।  
 उपग्रहद् (सं० अव्य०) ग्रहद् कृतके समय ।  
 उपग्रह्य (सं० क्ली०) उपगतं गत्यम् । ग्रामके ग्राम्तका  
 भाग, गांवके किनारेकी जमीन । (१४ १४६०)  
 उपग्राहा (सं० स्त्री) गोपग्राहा, छोटी हाल ।  
 उपग्रान्त (सं० त्रि०) १ शान्त किया हुआ, जो दब  
 गया हो । २ शान्त, ठण्डा । ३ आसपास, छटा हुआ ।

उपग्रान्तात्मन् (सं० त्रि०) शान्त हृदय, ठण्डे दिलवाला ।  
 उपग्रान्ति (सं० स्त्री०) उप-ग्रम-क्तिन् । १ निवृत्ति,  
 छुटकारा । “उपग्रान्तमप्युपग्रान्ति ।” (१४ १४६१) २ भारोप्य,  
 सेहत । ३ निवारण, छटाब । ४ ज्ञान, कमी ।  
 उपग्रान्तिन् (सं० त्रि०) १ शान्ति रखनेवाला, जो  
 मडक न उठता हो । (पु०) २ यिचित हस्तो, पास  
 हाथी ।  
 उपग्रान्त्वन (सं० क्ली०) शान्त करनेका भाव, जिस  
 हालतमें ठण्डा रहें ।  
 उपग्राय (सं० पु०) उप गो-अच् । अन्तः केने परावि-  
 पा-अन्तः१८६ विग्राय, सो रहनेकी बारी ।  
 उपग्रायिता (सं० स्त्री०) १ रोगकी सुक्तिके साधनका  
 पथ, जो बीज खानेसे बीमारो छूट जातो हो ।  
 २ शान्त करनेका माय, ठण्डे पड़नेको हालत ।  
 उपग्रायिन् (सं० त्रि०) समीप गयन करनेवाला,  
 जो पास ही सेहता है । २ गयनशील, मोनेवाला ।  
 ३ गयनके लिये प्रस्थान करनेवाला, जो सोने जा रहा  
 हो । ४ शान्त कर देनेवाला, जो दवाता हो । ५ निद्रा-  
 ज्ञान, नींद लानेवाला ।  
 उपग्राह (सं० क्ली०) १ गृहके मसोपकी झूटि,  
 मकान्का अड़ता । (अव्य०) २ गृहके मसोप, घरके  
 पास ।  
 उपग्राह्य (सं० क्ली०) गोपग्राह्य, मामूलो इत्य ।  
 उपगिचमाय (सं० त्रि०) गिचि घानेवाला, जो  
 सिखाया जाता हो ।  
 उपगिचा (सं० स्त्री०) गिचामिताय, सोखनेकी  
 खादिय ।  
 उपगिचित (सं० त्रि०) गिचामात, सोखा हुआ ।  
 उपगिह्वन (सं० क्ली०) उप-गिचि-पात्रवि ल्युट् ।  
 १ पात्राय, सुंघार । २ पात्राणोपध, सुंघनेकी दवा ।  
 उपगिथ्य (सं० पु०) गिथ्यका मिथ्य, जो चेहेका  
 चेहा हो ।  
 उपशीर्षक (सं० पु०) १ बालरोग, बच्चोंको बीमारो ।  
 २ कपालरोग, मस्तिष्को बीमारो, चारेंचुरे ।  
 उपशय (सं० अव्य०) कुकुरके समीप, कुत्तेके पास ।  
 उपशोभ (सं० क्ली०) उपमता शोभा माह्वयेन,



अथा० समा० । १ आरोग्यित शोभां, वनाशटी  
वृक्षशर्मा । मन्त्रे-वन्त्रे चौर चोदने-पदमन्त्रो  
वृक्षशर्मा वृक्षे ई । "वृक्षशर्मावृक्षशर्मा" ( २५ )

ਦਫਤਰੀ ਸ਼ਾਮਲ, ਸ਼ਾਮਲੀ ਸ਼ਾਮਲੀ।

अप्यभिहितः (१०० ति०) उप-सूक्त-तः । १ गोमा-  
युक्त, यद्वायुतः । २ यमद्वय, यमा दत्ता, जो महता-  
अप्यभिहितः उप-सूक्त-तः ।

उपभोग ( भ० ति० ) युद्ध का दमना, आ  
धुनः दासता हो।

उपयोगी (मं. हो.) वाप्यादन, दत्तनः श्री वसु  
 किशो वसुधर गोभा बड़ामेख लिये दण्ड दिया  
 जाता हो।

॥०॥ ( ६० पु० ) श्रुयते, उप-श्रु-जिप्; उपगता  
श्रुद यगिम् । यद्यः 'उप-श्रु-जिप्' ( उपगता यगिम् )

कपयुत (मं० ति०) १ शयन कर लिया हुआ, जो  
सुखमय था गया हो । २ चट्टीकृत, भागा हुआ ।

उपपत्ति (नं० सी०) उप-शु-सिन् । १ ममोप  
शुबल, धामार्थं सुमनेकी वात । “उपशु उट् शीष्वा दिवा-  
दुपशु नि ५११” (अथ १११११) २ देवप्रपु, पावाजु शैव ।

\*१५- विहङ्ग एव विदिष्यन्नाहमस्मिन् वपः ।

[illegible]

રાત્રિકી ધર્મીમનસે મમય જો યમાગ્રમ વાવ્ય  
મુન પડ્યા દે, વધો દેવદાસ સમુદિત દે । ૩ મનિથત્  
કવન, પીમોનગોર । ૪ પદ્મીલાલ, મધ્ય રો ।

प्राप्तकर्ता (पृ. ५५५) अर्थात् प्रारम्भ, सप्तमान्तर ।

समन्वित (मं. वि.) श्रम पर सेनाना, जो  
मानवता पर समता हो।

पुस्तक ( मं० शि० ) निम्न प्रकारानुसार, मन्त्रादयः ।

उपदेव (मं० पु०) उप-प्रिय-पुत्र । आधार, आशे-  
यत्ने दत्त देवता । हस्त्यन्त, मन्त्रदीप्ति, आभार-आभार ।

उपदेवद (सं० ज्यो०) 'उप-प्रिय-व्यद'। सामान,  
साधारण और साधेयका वस्तु, जमाव, जगाव।

समय ( भं० ति० ) मन्दसूर, पुणेरी, भो आयाज  
दे रवा हो ।

उपपत्ति ( नं० पु० ) उप-पत्ति-पत्र । १ पत्रिका  
प्रतिरोध, निर पदमोही शिव, दूरी । २ उपपत्ति,

पाण्डवः । १ माधवः, शिवः । २ पाण्डवः, देवः ।  
 ३ पाण्डवः, वीरः । ४ उद्यमः, मरुः ।

उपपत्त्यस्य (मं० वि०) उपपत्त्याभाति, तत्तुम वाक् ।  
पतन-विरोधक, गिरिमे न देहिवाता ।

'दार्ढ्यः दार्ढ्ये दार्ढ्यवत् ।' (अथर्ववेद १२.१०)

કચ્છ ( સં. અખ. ) વા.વા.વા. રૂ.૧૦૦૦.

उपमंयम (२० पु०) उप-मम-यम-च् । १ ध-  
संज्ञार, पातमा । २ ममाश्च नियम, चक्षुः कायः ।

३ नम्रुन, फास ।

वपमंयोग ( म० पु० ) सामीप्येन संयोगः । निवृत्त  
सम्यग्, नृजटीका विद्या ।

उपमरोह ( मं० पु० ) उपगतः मरोहः, प्रादि-समा० ।  
निष्कट मरोह, मिथी-लक्ष्मी भदतो ।

उपसमाद (सं. पु०) उपेत्य पञ्चालाय संवादः।  
पञ्चम्य दारा पञ्चालारपुत्रेण कथन, औनकारः।  
'पञ्च' शब्दः पञ्चम्यः (विद्वान्मनो०)

उपसंख्यान ( नं० स्त्री० ) उपसङ्ग-लोड, शरीर साह।  
 जन्म-सिद्धि-वर्धमानः। वा ११११। परिधानवत्, लोड  
 पङ्कजमेका कथा।

अथमंशत (सं० सि०) पाक क्रिया कृत्वा, जं  
पका किया गया हो।

पद्मचरण (मं० क्ला०) १ निवर्तन, निवृत्ति।  
२ परित्याग, छोड़ना। ३ अङ्गीकरणका प्रभाव, प्रभा-  
कार। ४ आक्रमण, हमला।

प्रथमं चरत् (मं० दि०) र निवर्तनकारो, यम  
 नर मेनेशाभा । २ पादोकार न चरनेषाभा, को  
 मधूर चरमाता न हो । ३ पादावयवोत्तम, यमना  
 मायता रुपा ।

[illegible]

उपसंहारम् (मं० प्रि०) १ परिषद् कारनिवाला,  
आ भी जाता हो ।

उपसंहित ( सं० त्रि० ) १ सम्बन्ध, मित्रा-लुत्ता ।

२ संसन्, लगा हुआ ।

उपसंहृत ( सं० त्रि० ) उप-सम्-हृ-त् । १ समा-  
पित, खत्म । २ सङ्कीकार न किया हुआ, जो माना  
गया न हो । ३ व्यस्य, छोड़ा हुआ । ४ मृत, मरा हुआ ।

उपसंहृति ( सं० स्त्री० ) उप-सम्-हृ-त्किन् । २ विनाश,  
बरबादी । २ सङ्कोच, सिकोड़ ।

उपस ( द्वि० स्त्री० ) दुर्गन्ध, बदबू, गन्दी हवा ।

उपसंहृत ( सं० त्रि० ) उपरिस्थापित, ऊपर बनाया  
हुआ ।

उपसंक्रमण ( सं० स्त्री० ) उप-सम्-क्रम भावे लुट् ।

१ सन्निवेश, जमाव । २ उपगमन, पहुँच ।

उपसङ्क्षेप ( सं० पु० ) १ सार, निचोड़ । २ सङ्ग्रह,  
सुनाव ।

उपसहृयान ( सं० स्त्री० ) उप-सम्-प्रा करणे लुट् ।

१ गणना, ग्यार । २ सङ्ग्रह, सुनाव । ३ विशेषण,  
सिक्त । ४ व्याकरणसूत्रके बहुत वाक्यार्थका वार्ति-  
कादि द्वारा कथन ।

“विभाषाक्षरि कौय्य इत्युपसहृयानम् ।” ( पा १।१।१६ । आर्षिक )

उपसङ्ग्रह ( सं० अर्थ० ) ग्रहण करके, पकड़कर ।

उपसङ्ग्रह ( सं० पु० ) उपसङ्ग्रहानि, उप-सम्-ग्रह-  
भ्यप् । १ पादग्रहण, इच्छुतके साथ पैरोंकी पकड़ ।

२ उपकरण, फरमावरदारो । ३ सम्यक्ग्रहण,  
जोड़ जाड़ ।

“यदुच्यते विनालीनां यद्वेहातीपसङ्ग्रहः ।” ( वाचस्पत्य १।१६ )

उपसङ्ग्रहण ( सं० स्त्री० ) उप-सम्-ग्रह आधारे  
लुट् । १ पादग्रहणपूर्वक प्रणाम, पैर पकड़ बन्दगी  
करनेकी बात । २ सम्यक्सङ्ग्रह, जोड़-जाड़ ।

उपसङ्ग्राह्य ( सं० त्रि० ) पादग्रहणपूर्वक अभि-  
वादन किये जानेके योग्य, जिसे पैर छूकर बन्दगी  
बनाया पड़े ।

उपसङ्घार ( सं० पु० ) कण्ठोपाय, चालाकी ।

उपसत् ( सं० स्त्री० ) आक्रमण, चढ़ाई । २ सङ्ग्रह,  
जोड़ जाड़ । ३ सेवा, खिदमत । ४ संस्कारविशेष ।

यह कितने ही दिन चलती और ज्योतिष्टोम यज्ञका  
अंग समती है ।

उपसत्ता, उपसद् देवी ।

उपसत्ति ( सं० स्त्री० ) उप-सद-क्षिन् । १ सङ्ग,  
साथ, मिल-जोल । २ सेवा, खिदमत । ३ गिफ्ट-  
गमन, पहुँच । ४ प्रतिपादन, साबित करनेकी बात ।  
५ अनुसक्ति, खाद्विष ।

उपसत् ( सं० त्रि० ) उप-सद-लृप् । १ आसन्न,  
या पहुँचा हुआ । २ अनुगत, रहनेवाला । ३ सेवक,  
भौकरी करनेवाला । ‘उपसत्ता सेवकः ।’ ( वेदोपे महीर १७१ )

उपसद् ( सं० पु० ) उप-सद-क्षिप् । १ अग्नि  
विशेष । यह गार्हपत्यादि मुख्य तीन अग्नि के सिवा  
अपर है । ( त्रि० ) २ समीपस्थ, नजदीकी ।

उपसद ( वै० पु० ) उपसीदत्यक्षिन् उप-सद वेदे  
वर्ज्ये क । १ उपसद् यागका दिन । इस दिन यज्ञ-  
कारीको अत्याहार भिस्तता है । ( काण्ठोप० उप० १।१।७१ )

‘असमीकनीयानि आहनि आसन्नानि प्रशास्यमानादीनामुपसदा  
यामाच्यन्ते ।’ ( आदरभाष्य )

२ दान, दक्षिण । ३ समीपगमन, पहुँच । ( त्रि० )  
४ समीप गमन करनेवाला, जो पास जा रहा हो ।

उपसदन ( सं० स्त्री० ) उप-सद-लुट् । १ उपस्थिति,  
हाजिरी, पहुँच । २ उपसेवन, खिदमत । ३ गृह-  
समीप, पड़ोस । ( अर्थ० ) ४ गृहके समीप, मका-  
नूके पास ।

उपसदी ( वै० स्त्री० ) उप-सद् वर्ज्ये क-ङीप् । मृत्तति,  
धारा, हाजिरवाग । उपसदी दो प्रकारकी होती  
है—कालिक और दैमिक । समान एककालिक  
कार्यमात्रके धर्मकी कालिक और विभिन्न कालीन  
घटपटादि कार्यमात्रके वृत्तिधर्मकी दैमिक कहते हैं ।

‘द्वेनामास उपसदां वक्तव्ये ।’ ( अथर्वशा० भाष्य १।४।११० )

उपसद्य ( सं० त्रि० ) उप-सद् कर्मणि यत् । पूजाके  
योग्य, जो परस्मिन् किये जानेके काबिल हो । निकट-  
गमन किये जाने योग्य, जिसके पास पहुँचा जाय ।

उपसद् ( सं० त्रि० ) उप-सद-उणिप् ययान्तादेभ्यः ।  
१ पूजित, ओ पूजा जाता हो । २ सेवक, खिदमत-  
गार । ( अर्थ० १।११ )

उपसद्व्रत ( सं० स्त्री० ) उपसद्विहित जसद्व्रत ।  
केवल सनके मानके यह व्रत करना, पड़ता है ।

उपसद्वर्गिन् ( मं० वि० ) उपसद्वर्ग जत करन-  
वाला । हमें जलमालको परिचित दृष्ट जान, यमा-  
लत भूमिपर गगन पोर ब्रह्मचर्य तदा भीमावस्थान  
करना पड़ता है ।

उपपत्त्या (वि० हि०) १ दुर्गमि जीना, बद्धु देना ।  
२ मजित जीना, बद्धु जाना । (पु०) ३ उपवास, प्याका ।  
उपपत्त्याना (मं० पु०) १ निकट सम्यग्, मज्झिमाशे  
दिहता । २ मज्झि, जीनाद ।

कदमबा ( सं० अक्ष० ) मन्नाखे समय, मामखे पल ।  
 कदमय ( सं० वि० ) कद-मद-श । १ उपसित,  
 पदना हुआ । २ निकटानत, पास पाया हुआ ।  
 ३ कदमेवक, मोहर-पाकर । ४ पुसित, पुत्रा हुआ ।

सपमसता ( मं० श्री० ) मेखण्ड, पङ्कज, पङ्कम ।  
सपमसततम ( मं० श्री० ) दुष्ट प्रपविमेष, चराम  
क्षम ।

उपनयनाश्रम (मं० पु०) त्याग, परित्यक्त, वारतरफो।  
 उपनयनाश्रम (मं० स्त्री०) उप-नयन-पा-धा-श्रुत।  
 १ रामोक्तारथ, टैर भगानिका काम। 'उपनयनाश्रम' शब्दो-  
 क्तारथ। (विशेषः) २ समिधु निधेयपूर्वक लसा-  
 निका यान। 'उपनयनाश्रम' शब्दः, शब्दः उपनयनः।

( चतुर्थऋषिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः श्रुतिः )

उपमाहार्यं ( भं. वि. ) एतत् द्वितीयं ज्ञानं योग्यं,  
तत्र तत्रैव द्वितीयं ज्ञानं यत्।

उपनिषद् ( १०० पृष्ठ ) चम्बिकाठके मनीष, जला-  
नैकी गकसीके पास ।

उपपन्नति ( सं० सी० ) उप-मन्-पद-तिन् ।  
 पमितर मन्नति, पङ्क्य, विषी हास्यपर या  
 ज्ञानकी बात ।

‘सुदृढ’ शब्दों का प्रयोग (विशेषतः)

सप्तमः (मं० वि०) सप्तमः-सप्तमः । १ मातृ.  
माता । २ नत, माता । ३ सप्तमः नत  
(सप्त), सप्तमः नत ।

\*५५३३ मूलकवर्ते विरचयितुं कर्मणि ( अष्ट ३५३ )

उदयश्याम्य (सं० अय०) मात जोकर, पर्वकडे ।  
 उदयश्यामा (सं० अय०) उदय-सम्-माय माये द-  
 दाय् । कायवसा, वसतयेत, होशाना मरमौद ।

“मदस्यैव कुरुतेऽहम्” (विष्णुसंहिता)

उपसर (सं. पुं.) उप-उ-सृ. १ निर्गमक.  
पङ्कज. २ जो प्रागतिष्ठे मर्मापानात् प्रसविता मेघ-  
भाविद्योग, माघ षष्ठे रेवत्या पक्षमा जमन। (ति.)  
३ प्राग होमिशाला, जो पद पङ्कजा हो।

उपमरप (मं. ओ.) मय. म. म. द. । निर्मम,  
महाव. २ मयके पदः निर्ममता मय, मय  
नेनेकी आ पदपनेकी मय ।

उपसर्गः (म० पु०) उप-युज्यमानः । उपसर्गः विभक्त्या  
लोके । क० ग० । १ भूकामादि उत्पातः, उद्योग इत्ये-  
वमुक्ता उपसर्गाः । २ अतिष्ठ, पारये । ३ शीघ्रविज्ञानः ।

सौमरीजा एव । ४ व्याकरणोक्तं प्रवरादि चम्यच मन् ।  
यथा—प्र, वरा, चप्र, सम, चनु, यव, निम्, निव, इव,  
ह्य, वि, पाप्, मि, चमि, यमि, यमि, क, वम, यमि

प्रति, परि शीर चव । ५ योग, ओद । ६ दुःख,  
तकनीक । ७ चपमकुन । ८ पिमावादिर्ज्ञा दावा ।  
९ कालावा । निज, मोमका निमावा ।

उपसर्गह्रस्वि ( मं० वि० ) उपसर्गह्रस्वाच्चावत्त्व इत्यने-  
वाद्या, लो उपसर्गह्रस्वो तत्त्व अस्मत्ता इति ।

उत्पात, वदधिगुमोको जात । ३ पप्रधान, मानवत  
गज्ज ।

विश्व प्रसार : १५००० प्रतियाँ प्रकाशित : १९७०

॥हरिप्रभुप्रसाद—अमागका प्रथमाभिनविर्दिष्ट वा  
वमन्तिगुल पद । ४ पाणिनिमुद्योक्त शब्दमेव ।  
॥ १ ॥ अमागकाप्रसादः प्रसीदति । ॥

उदयगत्य (सं० ति०) साक्षात्कारं समीपमन्वयः ।  
मददको प्राप्त पदं वा जालेति व्यादिष्ट ।  
उदयगते (सं० घ०) प्राप्ति पदं वा ।

चपराचप (मं. सी.) चपराचप भारी मृदु। ममो  
ममम, पाप मृदु चमकी बात।  
‘चपराचप’ (मं. सी.) (चपराचप)

1. (a)  $\frac{1}{2}$  (b)  $\frac{1}{2}$  (c)  $\frac{1}{2}$  (d)  $\frac{1}{2}$  (e)  $\frac{1}{2}$  (f)  $\frac{1}{2}$  (g)  $\frac{1}{2}$  (h)  $\frac{1}{2}$  (i)  $\frac{1}{2}$  (j)  $\frac{1}{2}$  (k)  $\frac{1}{2}$  (l)  $\frac{1}{2}$  (m)  $\frac{1}{2}$  (n)  $\frac{1}{2}$  (o)  $\frac{1}{2}$  (p)  $\frac{1}{2}$  (q)  $\frac{1}{2}$  (r)  $\frac{1}{2}$  (s)  $\frac{1}{2}$  (t)  $\frac{1}{2}$  (u)  $\frac{1}{2}$  (v)  $\frac{1}{2}$  (w)  $\frac{1}{2}$  (x)  $\frac{1}{2}$  (y)  $\frac{1}{2}$  (z)  $\frac{1}{2}$

कदम्ब (शं. कदम्ब.) कर्मोपजाकर, दाह दहर्बनीः

उपसर्ग (सं० स्त्री०) उपसर्गयतिः से उ कर्मणि यत्-टाप् । गर्भयोग्य ऋतुमयी गाय, जो गाय उठी हो ।

उपसर्ग (सं० पु०) सामग्रांय विशेष, बहरका एक हिष्ठा । इसके प्रायः चारो ओर स्थल वेष्टित रहता है ।

उपसर्ग (सं० स्त्री०) वासी बनाना, सड़ा डालना ।

उपसर्ग (सं० स्त्री०) उप-उ अप्रजनार्थे ण्यत् । प्रापणीय, पहुँचा जाने का अधिक ।

उपसि (सं० अथ०) श्लोड्भि, गोदपर ।

उपसुन्द (सं० पु०) निकुञ्ज नामक द्रव्यका पुत्र ।

यह सुन्दका कनिष्ठ भ्राता था । तिलोत्तमाके रूपपर मुग्ध हो उसे पानेके लिये दोनों भ्राता परस्पर लड़े और सुत्युके सुखमें जा पड़े । तिलोत्तमा देखी । २ मरकासुरका सेनापति । इसे छण्डने मारा था ।

उपसूर्यक (सं० स्त्री०) सूर्यसुपगतम्, सूर्य के कन ।

सूर्यके समीप मण्डलाकार परिधि, आपतावका कुर्से ।

उपसुष्ट (सं० स्त्री०) उप-सुष्ठ-ज्ञा । १ मैथुन, डीला ।

(विकारम्) १ शब्दार्थ (स्त्री०) २ उपसर्गप्रक्ष, भगडेमें पड़ा हुआ । ३ विस्फोट, बला । ४ कामुक, चाहनेवाला । ५ व्याप्त, सामूर । ७ युक्त, लगा हुआ ।

उपसेक (सं० पु०) उप-सिच भावे घञ् ।

१ जलादि सेचनद्वारा मृदुकरण, पानी वगैरह टालकर सुखायन बनानेका काम । २ व्यञ्जन ।

उपसेक (सं० पु०) एक द्रव्यपर दूसरा द्रव्य टालनेवाला पुरुष, जो आदमी कोई चीज किसी चीज पर छँडेलता हो ।

उपसेवन (सं० स्त्री०) उप-सिच-लृट् । १ जलसेक, सिंचाई । २ रस, चर्क । (स्त्री०) ३ उपसेककर्ता, सींचनेवाला ।

“नयः कीलाव उपसेवनायः ।” (सं० अ० १।८)

उपसेन (सं० पु०) नृहदेवके एक मिथ्य । नृहने रहने अपने धर्मकी टीका दी थी । (महाभारत २।५०)

उपसेवक (सं० स्त्री०) उप-सेव-ण्यत् । १ उपभोगकारी, मजा उड़ानेवाला । २ परस्त्रीपर पाशक, जो दूसरेकी ओरतसे फँसा हो ।

“वदथादात्मनः परस्त्रीपसेवकः ।” (साधनम् १।१११)

उपसेवन (सं० स्त्री०) उप-सेव भावे लृट् । १ परस्त्रीपर पाशक, दूसरेकी ओरतसे फँसा जानेकी बात । २ निकट रह सेवा करनेकी बात, जो खिदमत नज़दीकसे की जाती हो ।

उपसेवा (सं० स्त्री०) मान, पूजा, परस्तिग, इच्छा ।

उपसेविन् (सं० स्त्री०) उप-सेव-णिनि । १ सेवा करनेवाला, खिदमतगार ।

“इदामा पुनिरवनालोचयेते ।” (सुवर्ण)

उपस्कार (सं० पु०) उप-ल-ण्य समवाये चिति सुट् ।

१ उपकल्प, संहारिकी चीज । “वक्त्रं वा यन्मयं पुत्री सेवकं पुत्रः ।” (मनु १।८०) “उपस्कारं पुत्रीपतिनाम्नं कृतं दशादि ।” (शिवतिलि) २ वेशवार, मसाला । ३ असम्पूर्ण वाक्य-बोधक शब्दका अध्याहार । ४ गृहसंस्कार, घरकी मरम्मत । ५ गुणान्तराधान, दूसरे वस्तुका लगान । ६ यज्ञ, तद्वैर ।

उपस्करण (सं० स्त्री०) उप-ल-ण्य भावे लृट्-सुट् ।

१ भूयय, साज । २ उपकरण, सामान । ३ मङ्गल, मारकाट । ४ गुणान्तराधानरूप संस्कार, दूसरा वस्तु लगानेका काम । ५ विकार, ऐव । ६ वाक्याधार, जुमलेका टिका । ७ हिंसन, कत्त ।

उपस्कार (सं० पु०) उप-ल-ण्य भावे घञ् भूयपादौ सुट् ।

१ भूयय, साज । २ सहाय, मार । ३ प्रतिपक्षरूप संस्कार, तद्वैरका काम । ४ विकार, फर्क । ५ अध्याहार, क्रियाप ।

उपस्तीर्ण (सं० स्त्री०) उप-ल-ण्य हिंसने सुट् ।

हिंसित, जो मारा गया हो ।

उपस्तर (सं० स्त्री०) उप-ल-ण्य भूयपादौ सुट् ।

१ भूयय, सजा हुआ । २ संज्ञित, दबा हुआ । ३ संज्ञित, बना हुआ । ४ विज्ञित, विगड़ा हुआ । ५ अध्याहार, क्रियाप हुआ ।

उपस्तर (सं० स्त्री०) भूयय, साज ।

उपस्तर (सं० पु०) उप-ल-ण्य भूयपादौ सुट् । उपसर्ग, एकड़, टैक ।

उपस्तरक (सं० स्त्री०) उप-ल-ण्य भूयपादौ सुट् । उपसर्ग, एकड़, टैक ।



अपस्थाय (सं० अथ०) निकट, उपस्थित होकर,  
पास पहुँचके।

अपस्थायक (सं० पु०) १-मृत्यु, नौकर। २-बौद्ध  
मतके अनुसार बुद्धका अनुचर, जो बुद्धका साथी हो।

अपस्थायिन् (सं० त्रि०) उपस्थित होनेवाला, जो  
पास खड़ा हो।

अपस्थावर (सं० पु०) अप-स्था बाहुलकात् वरट्।  
१-पुरुषमेव यज्ञके एक अपास्थ देवता। (अथर्वशुः १०११)  
(त्रि०) २-स्थित रहनेवाला, जो सरकारी न हो।

अपस्थित (सं० त्रि०) अप-स्था-क्त। अन्तर्बुद्धिप्राप्त।  
‘वा १०११२८। १ समीपस्थित, जो नजदीक हो। २ समी-

पागत, पास पहुँचा हुआ। “अथर्वबौधनायाय चौपदावुप-  
स्थितान्।” (२३।१४४) ३ प्राप्त, पाया हुआ। ४ वर्त-  
मान, जागिर। ५ प्रकाश, बड़ा हुआ। ६ वेदार्थ-  
युक्त, अनार्य। ‘अपस्थितोऽनार्यः’ (विद्यानकीमुदी) ७ अन्त,  
याद किया हुआ। ८ सेवित, खिदमत किया हुआ।  
(स्त्री०) भाविज्ञ। ९ सेवन, खिदमत।

अपस्थितप्रक्षुब्ध (सं० स्त्री०) अन्तर्विषये। इसमें  
चार पाद और इक्यावन अक्षर होते हैं।

अपस्थितवक्षु (सं० पु०) निपुणवाग्मी, सुग्रगुप्तार  
ःपादमी, बड़ा बोलनेवाला।

अपस्थितसम्प्रहार (सं० त्रि०) युद्धमें प्रहृत होनेके  
लिये सज्ज, जो लड़ाईमें पहुँचके करीब हो।

अपस्थिता (सं० स्त्री०) १ दगाचर-पादक अन्तर्वि-  
शेष, दय दय अक्षरके चार पादका अन्तः। २ एका-  
दगाचर पादक अन्तर्विशेष, ग्यारह ग्यारह अक्षरके  
चार पादका एक अन्तः।

“श्री श्री गुरुदेवसुपस्थिता।” (बन्दीमन्त्री)

अपस्थिति (सं० स्त्री०) अप-स्था-क्तिन्। १ अप-  
स्थान, पहुँच। २ वर्तमानता, मौजूदगी। ३ उपा-  
सना, परस्तिथ। ४ अन्ति, याददाशत। ५ उत्तरण,  
चक्राया।

अपस्थेय (सं० त्रि०) अप-स्था सिवार्थत्वात् कर्मणि  
यत्। अपस्थेय, मूलने लायक।

“अश्वेदेवैर्धर्मिष्वपस्ते देवस्थिता।” (सामवेद ११।४८)

अपस्मृत (सं० त्रि०) अप-स्मृ-क्त। स्मरित, सड़ागला।

अपस्मिन् (सं० पु०) अप-स्मिन्-वच्। १ स्नेह, तरी।  
२ अपसेय, लीप-पोत। ३ खेदयुक्ताभिरम, विकाराई  
मिला हुआ अनालका अर्क।

“श्रुत्युक्तं चरते सन् प्रविश्य कुर्वतेऽनन्तरीम्।” (सुप्रत)

अपस्मय (सं० पु०) अप-स्मृ-य-वच्। १ अर्थ, लक्ष्म।  
२ स्नान, नहान। ३ पाचन।

अपस्मयन् (सं० स्त्री०) अपस्मय भावे अच्। एतन्मर देखो।

अपस्मयिन् (सं० त्रि०) स्मय कर देनेवाला, जो  
हँसता हो।

अपस्मृ, अपस्मयिन् देखो।

अपस्मृय (सं० अथ०) आचमन करके।

अपस्मृष्ट (सं० त्रि०) अर्थ कर लिया गया।

अपस्मृति (सं० स्त्री०) व्यवसायमन्त्रीय गोप  
पुस्तक, कानूनकी छोटी किताब। अपस्मृति अष्टादश  
कही गयी हैं। कृति देखो।

अपस्मृत्य (सं० स्त्री०) अप-स्मृ भावे कृष्ट। सम्यक्-  
चरण, बड़ा, चौरतका मुकुरी इदरार।

अपस्मृत्य (सं० स्त्री०) अपगतं स्मृत्यन्। पाप,  
कायदा, समीन् बगैरदकी लायदादे हासिल  
होनेवाली धामदनी।

अपस्मृत्य (सं० पु०) समाजित्के अतीय पुत्र।  
(चरित्र १८२०)

अपस्मिन् (सं० पु०) अप-स्मिन् करके अच्। १ अन्त्या-  
दिके निकटका ताप, पौसन। भावे अच्। २ अप-  
ताप, गर्मी। ३ स्नेह, तरी।

अपहत (सं० त्रि०) अप-हृन्-क्त। १ पाहत, घोट  
छाई हुआ। २ उत्पातपन्त, तकमीकमें पड़ा हुआ।  
३ तिरस्कृत, झिड़का हुआ। “अतीरकरीपन्तं इदम्भनम्”  
(विपत्त) ४ अशुभ, नापाक। ५ अभिभूत, दबा हुआ।  
६ दूषित, धिगड़ा हुआ। ७ विनाशित, बरबाद  
किया हुआ। ८ प्रतिवह, दका हुआ। ९ विवर्तित,  
पड़ा हुआ।

अपहतक (सं० त्रि०) हृतमाप्य, बदवत्सुत।

अपहतक (सं० त्रि०) अन्त्योक्त, चक्रापोधमें  
पड़ा हुआ।

अपहतधौ (सं० त्रि०) नष्टज्ञान, दोषाना, देवदूत।



उपही (हिं० पु०) अन्यदेशीय पुरुष, गैर सुल्लका  
भादमी।

उपहृत (सं० त्रि०) उप-हृ-क्त सम्प्रसारणे दीर्घः।  
समाहृत, उलाया हुआ।

समाहृति (सं० स्त्री०) उप-हृ- सम्प्रसारणे क्तिन्।  
आज्ञान, प्रकार।

उपहृत (सं० त्रि०) उप-हृ-क्त। १ उपहृत्स्वरूप-  
दत्त, मज्जरानेके तीरपर दिया हुआ। २ पानीत,  
लाया हुआ। ३ पाहृत, हकड़ा किया हुआ। ४ उन्-  
सृष्ट, चढ़ाया हुआ।

उपहोम (सं० पु०) प्रधान यज्ञके समीप अग्नि-  
सोमादि द्रव्य देवताओंमें प्रत्येकके उद्देश्यसे देय  
दशाहुति और द्रव्य दक्षिणायुक्त होमविशेष।  
(अथर्वशा० ११/३/१०-१०)

उपहृत् (वे० स्त्री०) उप-हृ- भाधारे च। १ निर्जन  
स्थान, पोथीदा जगह।

“नरकमुपहृत् नमः” (अथर्वशा० ११/३/१०)

“उपहृत् नमः नमः नमः” (आथर्व)

२ सानीय, पड़ोस। (पु०) २ रथ, गाड़ी।  
४ वक्रता, टेढ़ापन। ५ अवसर्गिणी भूमि, उत्तार।  
६ सोमपात्रकी वक्राकृति।

उपह्वान (सं० स्त्री०) उप-हृ-श्रुट्। १ आह्वान-  
कार्य, प्रकार। २ मन्त्रोच्चारणपूर्वक आह्वान। (वाल्मी-  
यन-श्री० १/३/१८)

उपाय (सं० पु०) उपगता अर्थको यत्न। १ अथ  
विशेष।

“मन्त्रोच्चारणपूर्वकी प्रथाकेन।

किञ्चित्काल विधादुर्गमः स तपः कृतः” (भारविहृत्पाठ)

ईयद् भीष्ट द्विजा धीरे-धीरे मन्त्रोच्चारणपूर्वक जो  
जप किया जाता, यह उपाय कहलाता है। नमः शिवाय।  
२ सोमाहुति विशेष। (अथर्व०) ३ निर्जन, सुपके-  
सुपके। ४ अप्रकाश, छिपकर। ५ अनुसारण, शि-  
खोले। ६ झीन, मन ही मन। (त्रि०) ७ निगूढ़,  
छिपा हुआ।

उपायमौडित (सं० त्रि०) निर्जनमें क्रीड़ा किया  
हुआ, जो तत्कालमें खेला गया हो।

उपायग्राज (वे० पु०) उपाय चतुष्टयो याजः।  
यज्ञविशेष। (अथर्वशा० १/३/११)

उपायवध (सं० पु०) निर्जनवध, पोथीदगामें किया  
हुआ कत्तल

उपाह, उपाठ (हिं०) उपस्य दीयो।

उपाक (वे० त्रि०) १ परस्पर समिद्धित, जुड़ा हुआ।  
‘उपाके परस्पर समीक्यते।’ अथर्वशा० १/३/११  
२ निकट, पासवाला। (निघण्टु, ४/१८)

उपाकचस् (वे० त्रि०) चक्षुके समुप वर्तमान रूपसे  
दृष्टायमान, जो आँखके सामने दृष्टिमान रहता हो।

उपाकरण (सं० स्त्री०) उप-पा-क-सुरट्। १ संस्कार  
पूर्वक श्रुतिपत्र। २ संस्कारपूर्वक पत्रपत्र।  
३ पारम्भ, शुरु। ४ समीपानयन, नजदीक  
लानेका काम।

उपाकर्म (सं० स्त्री०) उप-पा-क-मनिन्। १ उपा-  
करण, संस्कारपूर्वक वेदपत्र। (मनु ३/१/८) उपसर्गदीपो।  
२ पारम्भ, शुरु।

उपाकृत (सं० त्रि०) उप-पा-क-क्त। १ यज्ञमें  
इनके अर्थ लत संस्कार, देवोद्देश्यसे वध्य। २ पारम्भ,  
शुरु किया हुआ। ३ स्थावृत्ति द्वारा प्रेरित।  
४ उपहृत, प्राप्त होनेवाला। (स्त्री०) भावे च।  
५ उपाकरण। ६ यज्ञीय पशुका संस्कार। ७ पारम्भ,  
शुरु। (पु०) ८ देवोद्देश्यसे वध्य पशु। ९ दुर्मांस,  
बदकिष्करी। १० अशुभचक्षु, व्यापार, वादविगुनी।  
उपाच (सं० स्त्री०) १ उपनिषद्, चम्रा। (अथर्व०)  
चक्षुःसमीप, आँखके सामने।

उपास्य (सं० त्रि०) चक्षुके द्वारा प्रेक्षणीय, जो  
आँखसे देखा जा सकता हो।

उपास्या (सं० स्त्री०) उप-पा-स्या भाधे च-टाप्।  
१ प्रत्यक्ष, देख पड़नेवाला। २ शस्त्रादि द्वारा निर्वाचन।  
उपास्यान (सं० स्त्री०) उप-पा-स्या-सुरट्। १ पूर्व  
हस्तात्त कथन, गुजरे हुएका कथन। २ विशेष  
कथन, बहुत कथन।

‘उपास्यानि विना वाच्यं भावः’ शब्दकोश (भारविहृत् १/३/११)

३ उप-पा-स्य, भूटा किया।





उपात्तशस्त्र (सं० त्रि०) शस्त्र ग्रहण करता हुआ, हथियार बन्द ।

उपात्यय (सं० पु०) उप-पति-इन्-प्रच् । १ लोकाचार प्रतिष्ठाम, राष्ट्र-रक्षसे बेपरवाई । २ व्यक्तिप्राम, वेददा काम । ३ माय, बरवादी ।

उपादान (सं० स्त्री०) उप-पा-दा-ङ्घृट् । १ ग्रहण, इस्तेमात् । २ न्यायके मतसे समवायी-कारण, गज-दीकी सबब । जो पदार्थ अवस्थान्तरकी प्राप्त हो अपर वस्तु उपजाता प्रथवा जिससे कुछ बनाया जाता, वही उपादान कारण कहलाता है । जैसे—घटका उपादान मृत्तिका और फलहारका उपादान स्वरूप है । ३ सांख्यके मतमें कार्यसे अभिन्न कारण, कामसे मिसा हुआ सबब । ४ सांख्यके मतसे सिद्ध आध्यात्मिक तत्त्वविशेष ।

“आध्यात्मिक कारण प्रकृत्य उपादानकारणमात्राका । आद्यविषयो परमाणु पञ्च नव तुल्योमित्याह ।”

५ वर्णन, श्रुमार । ६ कथन, श्रुत्तार । ७ सम्मिलन, श्रामिल होनेकी बात । ८ इन्द्रियनिग्रह । ९ अभिप्राय, मतसब । १० दूना प्रथं, दुचन्दमागौ । ११ बौद्ध मतानुसार शरीर वा वाणीकी चेष्टा, जिष्ण या ज्ञानकी कोमिश ।

उपादान कारण (सं० स्त्री०) समवायी कारण, गजदीकी सबब ।

उपादानसमर्थ (सं० स्त्री०) अजहत्स्वार्थारूप सत्त्वप्राविशिय ।

“सुवार्थोत्तरासेवो आध्यात्मिकस्यविशेष ।  
आदानमात्रोऽप्युपादानादिवोपादानसत्त्वका ।” (आधिपदपंच)

उपादिक (सं० पु०) उप-पद-इन् संप्रायां कन् । कीट भेद, किसी किंसका कीड़ा ।

उपादेय (सं० त्रि०) उप-पा-दा कर्मणि यत् । १ आद्य, सेने सायक । २ उत्तम, अच्छा । ३ उत्कृष्ट, बढ़िया । (शान्तिप्रवच १:१९) ४ विधेय, किये जानेंके काविल ।

उपाधान (सं० स्त्री०) उपधान, तक्षिया ।

उपाधि (सं० पु०) उपाधीयन्ते गुणादयोऽनेनेति, उप-पा-धा-कि । उपपद्वं जो: कि: पा १:३:२९ । १ धर्मविज्ञा,

फर्नेकी फिक । २ विशेषण, सिद्धत । ३ कुटुम्ब-व्याहृत, लोगोंका पसली चलन । ४ जाति धर्म प्रभृति परिचायक शब्द । ५ ऊष, धोका । ६ पाधार, टेक । ७ करण, मामूली नतीजेके लिये कोई खास समय । ८ समृद्धि, बढ़ती । ९ न्यायके मतमें जातिसे भिन्न धर्म, जो सिद्धत कौमसे प्रसंग हो । यह दो प्रकारका होता है—सखण्ड और अखण्ड । आकाशवादि सखण्ड और प्रतियोगित्वादि अखण्ड है । (विद्वान-चन्द्रोप) १ व्यभिचारज्ञानद्वारा व्याप्तिज्ञानका प्रति-बन्धक । जैसे—

“यु सुवान् चरिमादावाद् भनमुपाधिः ।” (आयविद्वाननञ्जरी)

धूमवान् यद्धि कहनेसे पाद्रेकोठ उधका उपाधि हो जाता है । यह चार प्रकारका होता है—केवल साध्यव्यापक, पक्षधर्मावच्छिन्न साध्यव्यापक, साधना-वच्छिन्नसाध्यव्यापक और उदासीनधर्मावच्छिन्न साध्य-व्यापक । (वर्चशीपिका) ११ अन्तर्द्वार मतसे जाति गुण क्रियाका यहप्राप्तरूप । १२ सम्मानसूचक शब्द, खिताब ।

उपाधिक (सं० त्रि०) पक्षिक, उपादा, ऊपर ।

उपाधेय (सं० त्रि०) उप-पा-धा कर्मणि यत् । १ अभिनिवेशनीय, समाने लायक । २ आरोपयोग्य लगानेकाविल । ३ उपाधिके योग्य, खिताबके लायक ।

उपाधी (सं० त्रि०) उत्पत्ती, ऊषम उठानेवाला ।

उपाध्या (सं०) उपाचार दीक्षी ।

उपाध्याय (सं० पु०) उपेत्य पथीयतेऽस्मात्, उप-पथि-इ-प्रच् । १ अध्यापक, उस्ताद । २ वेदके एक देशका अध्यापक ।

“एवमेव वेदस वेदाङ्गानि वा पुनः ।  
वीज्यस्यमि इत्यर्थेऽप्युपाध्यायः च उच्यते ।” (अनु २:१:११)

जो व्यक्ति अपनी जोषिकाके निर्वाहके लिये वेदका कोई पंश वा वेदाङ्ग पढ़ाता, वह उपाध्याय कहलाता है । उपाध्याय आचार्यसे छोटा होता है । क्योंकि कल्प एव उपनिषद्के माय सम्पूर्ण वेद पढ़ाना आचार्यका काम है ।

३ काम्यकुञ्ज प्रभृति ब्राह्मण जातिका एक उपाधि । ४ मुक्तसा नामक पंचार राजपूतोंका एक उपाधि ।

उपाध्यायक ( सं० स्त्री० ), उपाध्याय, टीकी  
कहायो ।

उपागत ( सं० लि० ) उप-पा-गम-क । १ स्वयं  
उपस्थित, उद पाकर पहुँचा हुआ । २ अनुमते,  
मान्य किया हुआ । ३ लौकिक, मन्त्रुर किया  
हुआ । ४ घटित, घड़ा हुआ ।

उपागम ( सं० पु० ) उप-पा-गम-पण । उपागमि-  
न्याय । १ स्वीकार, मन्त्रुरी । २ निकट  
गमन, मन्त्रुदीक पहुँचनेका काम । ३ विघटन,  
घाकिया । ४ अनुभव, मन्त्रुरी ।

उपासि ( सं० पद्य० ) पवित्रसमीप, पागके  
पास ।

उपाय ( सं० स्त्री० ) १ मिथ्याके समीप भाग,  
जो हिम्मा मिरसे मगा हो । २ द्वितीय, येथीका अथ-  
यव, दूसरे दरजेका हिस्सा ।

उपायदण ( सं० स्त्री० ) उप-पा-यद-सुगट । संस्कार  
पूर्वक वेदारम्भ, उपाकर्म ।

उपायहायथ ( सं० पद्य० ) अथहायथ मासमें  
पूर्वमासोंके दिन ।

उपाय ( सं० स्त्री० ) उपमिते अङ्गेन । १ तिलक,  
टीका । २ प्रत्यङ्ग, अङ्गका अङ्ग । मधुमि सञ्चयके  
मतमें मस्तक, उदर, घुठ, नाभि, सजाट, मासिका,  
चिपुक, पक्षि एवं घोडा एक-एक, कर्ण, नासा, भ्रू,  
गद, स्कन्ध, गण्ड, कक्ष, स्नान, मुष्क, पाखी नितम्ब,  
कान्ध, बाहु तथा ऊरु दो-दो, चक्षुसि बौध, त्वक् छात,  
कला छात, वक्ष दो, कोप दो, हृदय, ग्रीवा, कुसकुम्भ,  
यकृत, स्तन, पायय छात, अन्ध, द्वार नौ, प्रधान गिरा  
शिराज, कान्ध बारह, कुच छह, रज्जु चार, शिखी छात,  
अस्त्रिमिलनके स्थान पन्द्रह, शीमास्त पन्द्रह, अस्त्रि  
तीन नौ, अस्त्रिचन्द्र दो नौ दण्ड, छात्र नौ नौ,  
चोगी पाँच नौ, मर्मस्थान एक नौ छात, शिरा छात  
नौ, धमनी चौबीस, चौर योगवहा नावो समस्त  
उपाय हैं । १ विद्याका गीच भाग, इत्येका मामूली  
हिस्सा । हमारे भाष्यके अनुसार उपाय चार हैं—  
सुराच, व्याय, मोमांश और धर्मशास्त्र ।

४ अतोन्तर जैन धर्मशास्त्र विधि । अतोन्तर  
जैन १२ उपाय मानते हैं—उपाधी सुत, रायभेनी  
सूत्र, जीवाभिगम सूत्र, पञ्चपासुत्र, जम्बुद्वीपवृत्ति  
सूत्र, अन्धपक्षि सूत्र, सूर्यपक्षि सूत्र, निरियावकी-  
सूत्र, कण्ठ्यासूत्र, कण्ठशङ्खमयासूत्र, पुष्पासूत्र  
और पुष्पसुनियासूत्र । ५ गीच विभाग, छोटा  
हिस्सा । ६ गीच कर्म, छोटा काम । ( पु० )  
७ पित्तक, धोत ।

उपायचिकित्सा ( सं० स्त्री० ) चिकित्सा प्रतीकार,  
लक्ष्यका इलाज । चित्र, मित्र, भय, जन और चक्र-  
मन्त्रके दम्भप्रतीकारको उपाय-चिकित्सा कहते हैं ।  
( वैद्यचिकित्सा )

उपायचरित ( सं० लि० ) १ किसीको सिद्धार्थ मगा  
हुआ, परमानन्ददाता । ( स्त्री० ) २ व्याकरणानु-  
सारमन्त्रिका एक नियम । इसमें ककार और एकारके  
पूर्व विसर्गका सकार हो जाता है ।

उपाचार ( सं० पु० ) १ स्थान, जगह । २ क्रम,  
कायदा । ३ मन्त्रिविधि । इसमें ककार और एका-  
रके पूर्व विसर्गका सकार हो जाता है ।

उपाचार्य ( सं० पु० ) आचार्यका सहायक ।

उपाध्वज ( सं० स्त्री० ) उप-पध्वज-सुगट । १ सेवक,  
शिपाई । "आर्जुनोपाध्वजे गज पुनः पार्थिव वदन्मम ।" ( अ० ३।११ )  
२ गोमयादि द्वारा अनुलेपन, गोबर वगैरेहमें लीपनेका  
काम । ३ पक्षमाधार इत्यादि ।

उपाटना, उपाटना, उपाटना देवी ।

उपात्त ( सं० लि० ) उप-पा-दा-क । १ संशोधित,  
सिया हुआ । २ प्राप्त, मिला हुआ । ३ गुणगुण-  
विवेचित, पण्डित किया हुआ । ४ संशोधित, इका  
किया हुआ । ५ निर्मित, बनाया हुआ । ६ अनुभूत,  
मासूम किया हुआ । ७ पण्यभूत, मामूल किया  
हुआ । ८ व्ययभूत, काममें लाया हुआ । ८ पारथ-  
किया हुआ, जो सरु-हो । १० यथाक्रम-निर्दिष्ट,  
सितवित्तवार गिना हुआ । ११ अनुमोदित, मोटा  
हुआ । ( पु० ) १२ प्रमदगज, जो शयी मत-  
वाला न हो ।

उपासकसंज्ञ ( सं० लि० ) गोप्राप्तानो, अन्ध धर्मशास्त्र ।

उपात्तशस्त्र (सं० त्रि०) शस्त्र ग्रहण करता हुआ,  
हथियार बन्द ।

उपात्य (सं० पु०) उप-पति-इन्-पच् । १ लोका-  
चार पतिश्रम, राह-रस्मसे बेपरवाई । २ व्यक्तिश्रम,  
बेहदा काम । ३ नाश, बरबादी ।

उपादान (सं० स्त्री०) उप-पा-दा-त्स् । १ ग्रहण,  
इस्तेमाल । २ न्यायके मतसे समवायि-कारण, नज्-  
दीकी सबब । जो पदार्थ पचस्यान्तरको प्राप्त हो  
अपर वस्तु उपजाता अथवा जिससे कुछ बनाया जाता,  
वही उपादान कारण कहलाता है । जैसे—घटका  
उपादान वृत्तिका और फलहारका उपादान स्वर्ण है ।  
३ सांख्यके मतमें कार्यसे अभिन्न कारण, कामसे मिला  
हुआ सबब । ४ सांख्यके मतसे सिद्ध आध्यात्मिक  
तत्त्वविषय ।

“आध्यात्मिकतः प्रकृत्युपादानकारणमन्यासाः । बाह्यविषयो परमाणु  
पच नव तुल्योन्मिताम् ।”

५ वर्षण, हमार । ६ कयन, गुफ्तार । ७ सम्मिलन,  
शामिल होनेकी बात । ८ इन्द्रियनिग्रह । ९ अभि-  
प्राय, मतसब । १० दूना अर्थ, दुष्यन्मागी । ११ बौद्ध  
मतानुसार शरीर वा वाणीकी चेष्टा, जिस या जुबा-  
नूकी कीधिय ।

उपादान कारण (सं० स्त्री०) समवायी कारण,  
नजदीकी सबब ।

उपादानसचय (सं० स्त्री०) अजडतुस्तार्यारूप  
सचयवाशिष्ठ ।

“मुद्रार्थं कितरापि वागर्थं न्यवशिष्टम् ।  
सादान्तमोऽप्युपादानादिषोपादानसचयः ।” (साहित्यदर्पण)

उपादिक (सं० पु०) उप-भद-इन् संप्रायां कन् ।  
कीट भेद, किसी किसका कीड़ा ।

उपादेय (सं० त्रि०) उप-पा-दा कर्मणि यत् ।  
१ प्राज्ञ, सीने लायक । २ उत्तम, अच्छा । ३ उत्कृष्ट,  
बढ़िया । (शान्तिप्रवृत्ति १।१२) ४ विधेय, किये जानिके  
काविल ।

उपाधान (सं० स्त्री०) उपधान, तर्किया ।

उपाधि (सं० पु०) उपाधीयन्ते शुचादयोऽनेनेति,  
उप-पा-धा-कि । उपधर्मे जोः कि पा १।१२६ । १ धर्मचिन्ता,

फर्जकी फिक्र । २ विवेचन, सिफत । ३ कुटुम्ब-  
व्याघ्रत, लोगोंका असली चलन । ४ जाति धर्म प्रभृति  
परिचायक शब्द । ५ छल, धोका । ६ पाधार, टेक ।  
७ करण, मामूली नतीजेके लिये कोई खास समय ।  
८ समृद्धि, बढ़ती । ९ व्यायके मतमें जातिसे भिन्न  
धर्म, जो सिफत कौमसे चलन हो । यह दो प्रकारका  
होता है—सखण्ड और पचण्ड । पाकागत्यादि  
सखण्ड और प्रतियोगितादि पचण्ड है । (विज्ञान-  
चन्द्रिका) १ व्यभिचारज्ञानद्वारा व्याप्तिप्राप्तका प्रति-  
बन्धक । जैसे—

“धूमवान् चरि रिक्षाशवाद भगवत्पतिः ।” (भाष्यविज्ञानचन्द्रिका)

धूमवान् बड़ि कड़नेसे चारैकाष्ठ उसका उपाधि  
हो जाता है । यह चार प्रकारका होता है—केवल  
साध्यव्यापक, पचधर्मावच्छिन्न साध्यव्यापक, साधना-  
वच्छिन्नसाध्यव्यापक और उदासीनधर्मावच्छिन्न साध्य-  
व्यापक । (तर्कदीपिका) ११ चलहार मतसे जाति  
गुण क्रियाका यहच्छास्त्ररूप । १२ सम्मानसूचक शब्द,  
खिताब ।

उपाधिक (सं० त्रि०) पधिक, उपादा, ऊपरी ।

उपाधेय (सं० त्रि०) उप-पा-धा कर्मणि यत् ।  
१ अभिनिवेशनीय, लसाने लायक । २ पारोपयोग्य  
लगानेकाविल । ३ उपाधिके योग्य, खिताबके लायक ।

उपाधी (सं० त्रि०) उत्पासी, ऊपम उठानेवाला ।

उपाध्या (हिं०) उपाचार देख ।

उपाध्याय (सं० पु०) उपेत्य उपधीयतेऽस्मान्, उप-  
पधि-इ-पच् । १ अध्यापक, उस्ताद । २ वेदके एक  
देशका अध्यापक ।

“एकदेशेन वेदस्य वेदाङ्गत्ववि वा पुनः ।  
वैशाखापत्ति इत्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते ॥” (मनु २।१।५१)

जो व्यक्ति अपनी जोविकाके निर्वाहके लिये वेदका  
कोई अंश वा वेदाङ्ग पढ़ाता, वह उपाध्याय कह-  
लाता है । उपाध्याय आचार्यसे छोटा होता है ।  
क्योंकि कल्प एवम् उपनिषद्के साथ सम्मर्प वेद  
पढ़ाना आचार्यका काम है ।

३ कान्यकुब्ज प्रभृति ब्राह्मण जातिका एक उपाधि ।  
४ सुकसा नामक पंचार राजपूतोंका एक उपाधि ।

उपाध्याय ( सं० स्त्री० ) उपाध्याय-स्त्रियां टाप् ।  
अध्यापिका, पढानेवाली औरत ।

उपाध्यायानी ( सं० स्त्री० ) उपाध्याय-स्त्री-पाठुक् ।

नमः । इन्द्रवरुणसहस्रदन्तिनाम्बुधरनमस्तुतापानां कामान् । वा

॥१॥२॥ उपाध्यायपत्नी, उपादाकी औरत ।

उपाध्यायी, अध्यापककी स्त्री ।

उपाय ( हिं० स्त्री० ) १ भवनका संख्यान, मकानकी कुरची । २ स्तम्भाधार, पथेकी चौकी ।

उपायः ( वे० त्रि० ) १ मकटमद्वय, माङ्गी-जैसा ।  
२ पियसद्वय, बाप-जैसा ।

उपायत् ( सं० स्त्री० ) उपनयते पादौ चनया, उप-  
नह-क्षिप् पूर्वपदस्य दीर्घः । नदिरतिविधिविधिवर्तिगणिको ।

वा १७॥१॥ चर्मपादुका, चमड़ेकी जूती । “चाथी उपा-  
नया उपनयते ।” ( तैत्तिरीय- ३/११/१४ )

उपायन—हिण्डोल रागका एक भेद ।

उपायहारण ( सं० स्त्री० ) चर्मदिकी पादुका धारण,  
चमड़े पगैरहकी जूतीका पहनाव । यह नेत्रकी  
सुख देनेवाला, आयुष्य बढ़ानेवाला, पादका रोग  
मिटानेवाला, सुख देनेवाला, भोज बढ़ानेवाला, और  
बलवीर्य कानेवाला होता है । क्योंकि नहने पाँव उदा  
चर्मनेमि मनुष्य रोगी, आयुष्यसे होज, हतहन्द्रिय और  
अशक्त हो जाता है । ( चैदम्निष्य, )

उपायान ( हिं० त्रि० ) उत्पन्न करना, बनाना ।

उपायवाक्य ( सं० त्रि० ) उप-चयु-वध्-धात् ।  
१ पचात् उपनयोष्य, पीढ़े कहे जानेके काविस । यह  
शब्द चमिका विशेष है । ( स्त्री० ) २ धेदोक्त वाक्य  
भेद, तैत्तिरीय-मन्त्रिताका एक चर्म ।

उपाय ( सं० त्रि० ) उपगतमन्त्री न । १ निकट,  
समीप, गजदीक । ( स्त्री० ) २ प्राक्तभाग, जंगा हुआ  
हिप्पा । “उपायमानैश्च यो वचनातः ।” ( हकार ) ३ तीर,  
किनारा । ४ चतुष्का कोण, चारुका कोना । ५ एक  
व्यतिरेक पश्चिम पक्षर, जिसे एकके बाहिरी हर्ष ।

उपायवर्ष ( सं० पु० ) अय्यवर्षका पूर्व-वर्ष,  
बाहिरी हर्षके पहलेका हर्ष । जैसे ग्रहम् शब्दमें  
हस्त्य शकारके पहले तासत्य शकारका परवर्ती वर्ष  
शकार उपायवर्ष है ।

उपायसर्षी ( सं० त्रि० ) समीप पागमन करने-  
वाला, जो पास पा रहा हो ।

उपायिक ( सं० स्त्री० ) उप-पाथिके पथिज्ञ,  
प्रादिसमा० । १ निकट, गजदीक । ( त्रि० )  
२ समीपस्थ, पड़ोसी, पास पहुँचनेवाला ।

उपायान्न ( सं० त्रि० ) उप-चय-धात् । निकटवर्ती,  
पास पहुँचनेवाला । ( पु० ) २ चतुष्का कोण, चारुका  
कोना । ( स्त्री० ) ३ नैकस्थ, पड़ोस ।

उपायि ( सं० स्त्री० ) उप-पाय-क्षिप् । प्राप्ति,  
हासिल, पहुँच ।

उपायति ( वे० स्त्री० ) उप-पा-ध्-क्षिप्-तुक् ।  
उत्पन्न विधि कति मुक् । वा १७॥१॥ उपाहरण, गजदीक जानेका  
काम । ( शब्द- १/१७१ ) ‘उपायति उपाहरणे ।’ ( वाच- )

उपाय ( सं० पु० ) उप-पय-भावे चल् । १ उपनम,  
गजदीक पहुँचनेकी बात । २ राजादिके शत्रु समी-  
भूत करनेका हेतु, दुश्मनपर कृतेह पानेका कुरिया ।  
यह चार प्रकारका होता है—साम, दान, भेद और  
दण्ड । किसीके मतमें उपाय सात प्रकारका है—  
साम, दान, भेद, दण्ड, माया, समीप और इन्द्रजाल ।  
श्रीवोक्त तीन उपाय सामान्य समझे जाते हैं । एतद्विष-  
यालङ्कारिक दो प्रकारके दूसरे भी उपाय बताते हैं ।

१ साधन, सबब । यह दो प्रकारका है—  
लौकिक और अलौकिक । घटादि निर्माचके विषे  
चक्रादि लौकिक और स्वर्गममनके पक्षमें दाम-  
यज्ञादि अलौकिक उपाय हैं । ४ उपायन, दोस्त  
हासिल करनेका कुरिया । ५ हस्त, धोखा । ६ प्रति-  
कारका पय, रोककी राह । ७ उपक्रम, विचारविना ।  
उपायचतुष्टय ( सं० स्त्री० ) शत्रुको पराभूत कर-  
नेके लिये साम, दाम, दण्ड और भेदरूप चार प्रका-  
रका उपाय ।

उपायविना ( सं० स्त्री० ) साधनका बिचार, तद-  
बोरीकी निज ।

उपायज्ञ ( सं० त्रि० ) उपायको समझनेवाला, जो  
तदबोरी निजाल होता हो ।

उपायतुरीय ( सं० पु० ) दण्डरूप चतुर्थ उपाय,  
चौथी तदबोरी उपाय ।

उपायत्व ( सं० स्त्री० ) साधन प्राप्त होनेकी स्थिति, तद्वरीर निकल जानेकी हालत ।

उपायन ( सं० स्त्री० ) उप-इन् वा अय-ल्युट् । १ छपटौकन, भेंट । २ निकट गमन, पहुँच । ३ उप-गमन, पास जानेकी हालत । ( अङ् १२५९ ) 'उपायने उपवसने' ( वाय० ) कर्मणि ल्युट् । ४ छपटौकनीय द्रव्यादि, भेंटकी चीज । ५ व्रतादि प्रतिष्ठा ।

उपाययोग ( सं० पु० ) साधनका नियोग, तद्वरीरके वाममें लगाये जानेकी बात ।

उपायान्तर ( सं० स्त्री० ) प्रतीकार, इलाज ।

उपायिक ( सं० त्रि० ) आवहकार, मायल, रज्जू ।

उपायिन् ( सं० त्रि० ) उप-अय-इनि । १ साधन युक्त, तद्वरीर । २ उपगन्ता, डोला लगा लेनेवाला । ( आश्विनश्रीतट्ट १।४।१६ )

उपायु ( सं० त्रि० ) उप-आ-इल लृट् । उपगन्ता, पास पहुँच जानेवाला । ( उल्लसः १।१ )

उपार ( सं० पु० ) उप-अ-वञ् । समीप, पड़ोस । ( अङ् ०।५।६ ) २ प्रमाद, गुलती ।

उपार—बम्बईप्रान्तीय कोल्हापुर राज्यके सङ्गतराज्य । यह दश बारह हजारसे कुछ अधिक ग्रामों तथा नगरोंमें बसते हैं । देशमें उपार कुनबियों या मानियोंसे मिश्रित-लुप्तते हैं । यह देवताकी अपने वशमें रखनेका दावा करते हैं । कभी-कभी उपार नदीके किनारे बैठ माल फेरते और भवसर या खान करनेवालोंका माल-भसन्नाथ से भागते हैं । ये यहाँसे नमक भी बनाते हैं । इनमें विधवा-विवाह होता है । किसीके मरनेपर दस दिन अशौच रहता है । पञ्चायत-से जातिशा भर्गवा मिटाया जाता है । इनमें पड़े-लिखे और समीर पादमी कम हैं ।

उपारण ( सं० स्त्री० ) उप-आ-कृ-ल्युट् । अतृप्तयुक्त स्थान, खराब जगह ।

उपारत ( सं० त्रि० ) उप-आ-रत-लृट् । १ प्रत्या-वृत्त, आने-जानेवाला । २ प्रसन्न, खुश । ३ संसन्न, मथगूल ।

उपारता, उपावसा दीयो ।

उपारस ( सं० पु० ) नियोग, लगाव ।

उपारथ ( सं० पु० ) उप-आ-रथ-लृट्-नुम् । अरथ मित्रोः । पा ०।१।६१ । आरथ, गुरु ।

उपारुद ( सं० त्रि० ) वर्धित, बढ़ा हुआ ।

उपारुदसेह ( सं० त्रि० ) वर्धित मोति रखनेवाला, जो अपने सुहृन्वत् बढ़ा हुआ हो ।

उपार्जक ( सं० त्रि० ) अर्जन कर लेनेवाला, जो काम खाता हो ।

उपार्जन ( सं० स्त्री० ) उप-अर्ज-ल्युट् । १ अर्जनकर लेनेका कार्य, कमाई । २ सेवा, खिदमत । ३ क्षय, खेती । ४ वाणिज्यादिका धनसाध, रोजगार वगैरह-का फायदा ।

उपार्जनीय ( सं० त्रि० ) अर्जन किये जाने योग्य, जो कामलेनेके काबिल हो ।

उपार्जित ( सं० त्रि० ) प्राप्त, कमाया हुआ ।

उपायं ( सं० त्रि० ) अल्प अर्थवाला, नाकाम, जिससे कोई काम न निकले ।

उपासक ( सं० त्रि० ) उप-आ-सक-लृट् । तिरस्कार-पूर्वक निन्दित, जो झिड़का और मुरा कहा गया हो ।

उपासक्य ( सं० त्रि० ) निन्दनीय, जो झिड़काने जानेके काबिल हो ।

उपासक्य ( सं० पु० ) उप-आ-सक-लृट्-नुम् । उपवर्णन लृट् लो० । पा ०।१।६० । १ निन्दापूर्वक तिरस्कार, गाली-मखेल, धाड़फटकार । २ विलम्ब, देर ।

उपासक्य ( सं० स्त्री० ) उपवर्णन दीयो ।

उपासक्य ( सं० त्रि० ) अतिरिक्तरूपसे अल्प किया जानेवाला, जो ज्यादातरमें किया जाता हो ।

उपासि—ब्रह्मदेवके एक प्रिय मित्र । जातिके नापित होनेभी ये ब्रह्मकी कृपासे शाक्यभिक्षुओंमें प्रचलन बन गये थे । बौद्ध विनयको इन्होंने नियमित किया ।

( ब्रह्मविनयसूत्र )

उपाव ( त्रि० ) उपाव दीयो ।

उपावर्तन ( सं० स्त्री० ) उप-आ-वृत्त-लृट् । १ पुनर्वाट भ्रमण, घाघरी । २ भूमिपर लुपटन, जमीनपर लोटने-पोटनेका काम । ३ प्राप्ति, पहुँच । ४ समाप्ति, बन्दी ।

उपावसायिन् ( सं० त्रि० ) अधीनस्थ, मानहत ।

प्रथम, पर्याप्त और उपयुक्ति—एक प्रकारके सिद्ध द्वारा समस्त वेदान्तका तात्पर्य ब्रह्ममें अभिव्यक्ति करना शक्य कहलाता है।

“एतद् अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां उपक्रमोऽवश्यम्। यदा तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादितोऽप्युपासनाः एतद् अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादितोऽप्युपासनाः”

उपक्रम और उपपाद—जिस प्रकारमें जो विषय प्रतिपादन करते, उस प्रकारमें यदि और अन्तर्में उसी विषयके भीतर्गत यथाक्रम उपपादित करते हैं। जैसे ब्रह्मदेव उपनिषद्के पक्ष प्रपाठकमें प्रथमतः “एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म” और यथात् “एतदाकाशमिदं सत्यं” कहा है। यथात् आदिमें ब्रह्मको एक एवं अद्वितीय और अन्तर्में विश्वको ब्रह्मात्मक बता उपक्रमके साथ उपपादित लगाया है।

“अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं अभावात्। यदा तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं प्रतिपादनम्।”

ब्रह्म—प्रकरणके मध्य प्रतिपाद्य वस्तुका पुनः पुनः प्रतीक अभावात् है। यथा उक्त प्रपाठकमें “तत्त्वमसि” यथात् “यह परमात्मा तूही हो” जो बार प्रतिपादित है।

“अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं अभावात्। यदा तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं प्रतिपादनम्।”

पुनः—प्रकरण-प्रतिपाद्य वस्तुके सामान्यताका अभिव्यक्तिपर्यन्त अपूर्णता कहलाता है। जैसे उक्त प्रपाठकमें यथात् “एतद् उपनिषद्के प्रतिपाद्य मुख्यका विषय मूढताह” यह अक्षर प्रकरण-प्रतिपाद्य परब्रह्मकी वेदान्तिक प्रमाण द्वारा अभ्युपगमि दिखाना ही अपूर्णता है।

“अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं अभावात्। यदा तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं प्रतिपादनम्।”

पुनः—प्रकरण-प्रतिपाद्य अनुष्ठानके फलकी श्रुति अथवा अनुमान प्रयोजनका नाम पुनः है। जैसे उसी प्रपाठकमें “आचार्यवान् पुनः” यथात् “पुनः आचार्यवान् है” इत्यादि शब्दों द्वारा परब्रह्ममें आनुष्ठानकी ब्रह्मप्रतिष्ठा फलश्रुति सुनायी है।

“अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं अभावात्। यदा तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं प्रतिपादनम्।”

पर्याप्त—प्रकरण-प्रतिपाद्य वस्तुकी स्थान-स्थानपर होनेवाली प्रमाण पर्याप्त कहलाती है। जैसे उक्त प्रपाठकमें “एतदाकाशमिदं सत्यं” यथात् “तुमने कहा हुआ जिसके श्रुत होनेमें कुछ संशय नहीं रहता” इत्यादि और “अविद्यात् विद्यातम्” यथात् “जिसके ज्ञानमें अज्ञान वस्तु भी विद्या ही जाता है” श्रुत शब्दों द्वारा प्रतिपाद्य परब्रह्मकी प्रमाण को मानी है।

“अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं अभावात्। यदा तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं प्रतिपादनम्।”

उपयुक्ति—प्रकरण-प्रतिपाद्य वस्तुकी सम्भवता ठहरानेके लिये जो श्रुति दी जाती है, वही उपयुक्ति है। जैसे उसी प्रपाठकमें “यदा भौम्यकेन” यथात् “एक श्रुतिविषयमें” इत्यादि और “श्रुतिके लोपमत्ताम्” यथात् “श्रुत्यय पात्रादि भी समझ पड़ते हैं।” विचार और नाम केवल वाक्य मात्र है। श्रुतिका ही यथाय है” श्रुत शब्दों द्वारा अद्वितीय वस्तुके प्रतिपादनमें विकार यथात् जड़ जगत्की आधारमात्रापर श्रुति प्रदर्शित है।

“अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं अभावात्। यदा तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं प्रतिपादनम्।”

मनः—वेदान्तकी चरित्रोपिनी श्रुतिसे श्रुत अद्वितीय परब्रह्म वस्तुकी निरन्तर चित्ताका नाम मन है।

“अक्षरवर्तिनित्यादिना तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं अभावात्। यदा तदात्मनोऽप्युपासनां प्रतिपादनं प्रतिपादनम्।”

निदिष्टा—जड़ पदार्थके विरोधी ज्ञानकी श्रुति अद्वितीय ब्रह्मवस्तुका जो चरित्रोप विज्ञान पड़ता है, उसीकी प्राप्तमें निदिष्टा मन कहा है। मन—अव्यक्त, अनन्त और निदिष्टात्मकी उपमानमें योगमिति होने पर परम पदार्थ परब्रह्म मिल सकता है।

योगमें उक्त अव्यक्त, अनन्त और निदिष्टात्मन मिल होता है। जीवात्मा और परमात्माके भोगकी योग कहते हैं। योगके पाठ पड़ है। यह पद्यात्मक और समस्त विविध विवरण प्रस्तुत है।

“मानं योगात्मकं विधिं योगशास्त्राद्विदुः ।

संयोगो योग इत्युक्तो श्रीवाक्यपरमात्मनः ॥” (योगशास्त्रम्)

ज्ञान योगात्मक है अर्थात् योग ही ज्ञान बनता है। और परमात्माके साथ जीवात्माका संयोग योग कहलाता है। योगके आठ अंग हैं।

“यमश्च नियमश्चैव आसनञ्च तदेव च ।

प्राणायामश्चैव योगिनि प्रत्याहारश्च धारणा ।

ध्यानं समाधिरेतानि योगाङ्गानि वराहदेव ॥”

हे वराहने गामि । यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि आठ योगके अङ्ग होते हैं।

सकल अष्टाङ्गके प्रकारका भेद यह है—

“यमश्च नियमश्चैव दम्पता युवकीर्तिः ।

आसनाभ्युत्तमान्धो चर्यं तैश्च समीपतम् ॥

प्राणायामश्चैव योगिनि प्रत्याहारश्च धारणा ।

धारणं दम्पता श्रीका ध्यानं योगिनि प्रकीर्तितम् ॥

तयनं च तन्माः प्रोक्ता समाधिर्लोककथना ।

वदन्ता केचिद्विद्वान्नि विस्तरेण इत्युक्तं यमु ॥”

यम—अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चौर्य), ब्रह्मचर्य, दया, आर्जव (सारथ्य), क्षमा, धृति, परिमिताहार और शौच इन दश प्रकारका यम होता है। इसमें भी

“एवं भूतिर्हो मोक्षं न दद्यात्प्रतिभावयत् ॥”

सत्य—प्राणियोंका हितकर वाक्य ही सत्य है। केवलमात्र उद्यार्थ भाषणको सत्य नहीं कहते।

—काया, मन और वाक्यसे परद्रव्यके प्रति जो निष्कृष्टा रहती है, उसीको विद्वन्मण्डलीने भक्त्य कहा है।

ब्रह्मचर्य—सर्वत्र, सर्वथा तथा सर्वोपस्थानि काया, मन और वाक्यसे भ्रैयुन छोड़नेका नाम ब्रह्मचर्य है।

—काया, मन और वाक्यसे समस्त प्राणियों पर अनुग्रह रखनेकी इच्छाका नाम दया है।

आर्जव—प्रसूति और निवृत्तिमें जो समभाव रहता है, उसीको योगी आर्जव कहते हैं।

ध्यान—प्राणियोंके प्रिय और अप्रिय सकल विषयोंमें रहनेवाले समभावको ध्यान कहते हैं।

धृति—पर्यंकी धानि, वस्तुका वियोग प्रसूति सकल

शोचनीय विषय पुनः पुनः पड़ते भी विषयों को स्थिरता रहती, उसे विद्वन्मण्डलीं धृति कहते हैं।

प्रत्याहार—मुनियोंको आठ, परस्परवासियोंको सोनह गृहस्थोंकी बत्तीस और ब्रह्मचारियोंको मनमाने पास ग्रहण करनिका विधान है। इसी विहित पासके भोजनको प्रिताहार कहते हैं।

शौच—शौच दो प्रकारका होता है—बाह्य और आन्तरिक। श्रुतिका तथा जलादि द्वारा गान्धादिके शौचको बाह्य शौच और धर्मातुशौचन एवं अश्वत्थ-विद्या द्वारा मनः-शौचको आन्तरिक शौच कहते हैं।

नियम—तपस्या, सन्तोष, आभित्तव, दान, ईश्वर-पूजा, सिद्धान्तग्रहण, सत्ता, भक्ति, जय और व्रत दश प्रकारका नियम होता है।

आसन—स्वस्तिक, गोमुख, पद्म, वीर, सिंह, मद्र, युक्त, मन्दुर प्रभृति कई आसन कहे हैं। आसनसे देह और मनका स्थैर्य सम्पादित होता है।

प्राणायाम—प्राण और वायुके संयोगका नाम प्राणायाम है। प्राणायामके समय रैचक, पूरक और कुम्भक तीन प्रक्रिया करना पड़ती है। प्राणायामके द्वारा प्राणवायुको जीत सकते हैं।

प्रत्याहार—सकल इन्द्रिय स्त्रमावसे हो प्रिय-सम्भोगके लिये धायमान है। उन्हें बलपूर्वक अपने-पुनः प्रियसे हटाकर रखना प्रत्याहार कहलाता है।

धारणा—यम-नियमादि गुणयुक्त हो मनका आत्मामें प्रवस्थान धारणा है।

ध्यान—मनोमध्य परमात्माके स्वरूप-विस्तारको ध्यान कहते हैं।

समाधि—जीवात्मा और परमात्माको समतावस्थाका नाम समाधि है। कौटो कोई कहते हैं, जि समाधिमें सकलकल्प और निर्विकल्पक दो भेद रहते हैं।

ऐसे समस्त उपायों द्वारा परमात्मा परमेश्वरकी उपासना करनेसे अत्यन्त मोक्ष मिल सकता है।

उपासनाय (सं. नि.) उपस्थिति के योग्य, जो हाथियोंके आश्रित हो।



उपासनीय (मं० त्रि०) उपासना किये जाने योग्य, जो परस्मिगके क्रायिन हो।

उपासा (मं० स्त्री०) उप-पास भाषे च-टाप्।

१ उपासना, मज्जदबी मयान। २ सेवा, पिदमत।

(हिं० पु०) १ पय-जस पदप न करनेवाला, जो फाफे ने हो।

उपासादित (मं० त्रि०) उप-पा-सद-निध-त।

१ प्राप्त, हागिन किया हुआ। (स्त्री०) भाषे त।

२ प्राप्ति, हागित।

उपासित (मं० त्रि०) उप-पास-त। १ पूजित,

परस्मिग किया हुआ। २ उपासना करनेवाला, जो परस्मिग करता हो।

उपासितव्य (मं० त्रि०) उपासना किया जानेवाला,

जो परस्मिग किये जानेके क्रायिन हो। २ पुर्ण

किया जानेवाला, जिससे पूरा करणा पड़े। ३ चिन्तनीय, प्यास किया जानेवाला।

उपासित (मं० त्रि०) उपासना करनेवाला, जो

पूजता हो।

उपासी, उपासित शब्दों।

उपासीन (मं० त्रि०) निकट बैठे हुए, जो दस्त

लगाये हो।

उपासीन (मं० स्त्री०) उपासी, गुरुव-पासताय,

गुरुवता लुबना।

उपासीन (मं० चक्षु०) उपासीके समय, पाफ-

ताय गुरुव होनेके पक्ष।

उपासी (मं० स्त्री०) उप-पास-हिन्। १ उपासना,

परस्मिग। २ उप-पास-हिन् (उप-पास-हिन्) (उप-पास-हिन्)

२ सेवा, पिदमत।

उपासा (मं० स्त्री०) उपगतमसाम्। चक्षुषोपकरण,

दृग्दंष्ट्रादि या छोटा दृग्दंष्ट्रादि। गुतादि को उपासा कहते हैं।

उपास्य (मं० स्त्री०) शरीरके चक्षुषस्य चक्षुष केसा

एक पक्ष, शरीर, चक्षुषी या मुखशरीर चक्षुषी।

(Cartilage) उपास्य या चक्षुषस्य भागः लीन

प्रकारका होता है—चक्षुष, शरीर और चक्षुषिक।

शरीरके देहकी प्रथम चक्षुषस्य जो चक्षुषके मदसे देह

पक्ष, शरीर चक्षुषिक है। चक्षुष चक्षुष चक्षुषके शरीर-  
स्थानमें उत्पन्न होनेवाला उपास्य शरीरके चक्षुषका है।  
मज्जदपक्षी निकलनेवाले उपास्यक ममानेका नाम  
चाक्षुषिक है।

उपास्य (मं० पु०) मातृपक्षी एक शरीर, जिसे  
चक्षुषको मज्जती। जिस मातृपक्षी के नाममें चक्षुष  
नहीं रहते, उसे उपास्य कहते हैं।

उपास्य (मं० त्रि०) उप-पास करनेके पक्ष।

१ मध्य, पिदमत किये जानेके क्रायिन। २ चिन्त-

नीय, प्यास किये जानेके क्रायिन। (गुरुव, चक्षुष चक्षुष)

१ माननीय, इज्जत किये जानेके सायक। (चक्षु०)

४ सेवा करके, पिदमत बजाकर।

उपासमान (मं० त्रि०) उपासना किया जाने-

वाला, जो परस्मिग पा रहा हो।

उपासार (मं० पु०) मध्याहार, इनका नाम।

इसमें केवल फल और मिष्टानादि खाते हैं।

उपासित (मं० त्रि०) उप-पा-धा-त। १ पाठ-

पित, लगाया हुआ। (स्त्री०) २ पान्दुप्यास,

भागका भगवत्।

उपास्य (मं० त्रि०) उप-पा-धा-त। १ शरीर,

मज्जका हुआ। २ समर्पित, मज्ज किया हुआ, जो दे

जाना गया हो।

उपेक्ष (मं० पु०) मज्जतके पुत्र और चक्षुष

भाता। (चक्षु० चक्षु०)

उपेक्षक (मं० त्रि०) उप-ईश-दत्त। १ उपेक्षा-

कारक, लापरवा। २ धैर्यगुण, मज्ज करनेवाला।

"उपेक्षको उपेक्षको मज्जतके नाम है।" (चक्षु० चक्षु०)

"उपेक्षः शरीरस्य भागः मज्जतके नाम है।" (चक्षु० चक्षु०)

उपेक्षक (मं० स्त्री०) उप-ईश भाषे मज्जत। १ चक्षु-

ष, चक्षुषी, लापरवा। २ मज्ज, मज्ज, छोड़

केटनेका काम। ३ राज्याका एक उपाय। मज्जतके

उपेक्षकी (मं० त्रि०) उप-ईश-मज्जत। १ चक्षु-

ष, छोड़ दिये जाने क्रायिन। २ मज्जकारको

चक्षुषके चक्षुष, जिसमें शरीरको चक्षुष का नाम मज्ज

"मज्जतके नाम है।" (चक्षु० चक्षु०)

उपेक्षा (मं० स्त्री०) उप-ईश-च-टाप्। १ मज्ज,

तर्क, छोड़ घेठनेकी बात। २ ओदासीन्य, सापरवाइ।  
३ अङ्गीकार, मञ्जूरी। ४ सामान्य उपाय, मामूली  
सदबौर। ५ अनादर, बेइस्ती।

“कुर्वाणुषा इतरीवितेयिन्।” (छ १७३४)

उपेक्षित (सं० वि०) उप-ईक्ष-त्। १ अनादृत,  
खयाल न किया हुआ। २ व्यक्त, छोड़ा हुआ।  
३ अवज्ञात, न सुना हुआ। ४ अवज्ञात, जो मञ्जूर  
किया न गया हो।

उपेक्षितव्य, उपेक्षणीय देखो।

उपेक्ष्य, उपेक्षणीय देखो।

उपेति (सं० वि०) उप-इति-त्। १ उपागत, मञ्जूरी  
दीक पाया हुआ। २ समीप गत, पास पहुँचा हुआ।  
३ प्राप्त, पहुँचा या मिला हुआ। ४ उपनीत, लभित  
किया हुआ। ५ गर्भाधानके लिये स्त्रीके पास गया हुआ।

“गर्भाधानमुपेति ब्रह्मर्षेः बन्धनानि।” (दारि०)

उपेति (सं० स्त्री०) प्राप्ति, पहुँच।

उपेट (सं० वि०) १ समीपगता, पास पहुँचने-  
वाला। २ आक्रामक, हमला-भारनेकी गुरुक्षे  
पड़ा हुआ।

उपेनित (सं० वि०) अन्तर्गत किया हुआ, जो भीतर  
लाया गया हो।

उपेन्द्र (सं० पु०) इन्द्रमुपगतः। १ विष्णु, छोटे  
इन्द्र। वामनावतारमें कश्यपके चौरस और पदितिके  
गर्भसे इन्द्रके पीछे जन्म लेनेके कारण विष्णुका एक  
नाम उपेन्द्र भी है।

“समोपदि उपेन्द्रस्य स्थापितो नोमिरीश्वरः।

उपेन्द्र इति ब्रह्म त्वा वासन्ति दिवि देवताः॥” (हरिवं० ७३३३)  
मान देयो।

२ नागराज विमोच।

उपेन्द्रमन्त्र—उत्कल देशका गुप्तसरके एक राजा।  
उत्कल देशीय कवियोंमें यही सर्वप्रधान रहे। प्रायः  
सवा तीन सौ वर्ष पहले उपेन्द्रमन्त्र विद्यमान थे।

उपेन्द्रव्या (सं० स्त्री०) ग्यारह ग्यारह अक्षरोंके चार  
एक पादका एक छन्द।

“उपेन्द्रव्या लभञ्जाकती रो०” (हरिवं० ७३३३)

उपेष्ठा (सं० स्त्री०) प्राप्तिकी इच्छा, पानेकी चाह।

उपेय (सं० वि०) उप-इत्यच्। १ उपायसाध्य,  
तदवीरसे हो सकनेवाला। २ प्राप्त्य, मिल सकने-  
वाला। (मनु० ११२) ३ गम्य, जाने लायक।

उपेयस (सं० वि०) उपगत, पास पहुँचा हुआ।

उपेना (सं० वि०) मग्न, उड़ा, छोड़ दिया।

उपोट (सं० वि०) उप-उट-त्। १ निकटस्थ,  
पासवाला। २ विवाहित, व्याहृत हुआ। ३ उपगत,  
नजदीक लाया हुआ। ४ सुमज्जित, ठीक किया  
हुआ। (स्त्री०) भावेत्। ५ व्युत्, बँटाव।

उपोती (सं० स्त्री०) उप-उ-ती-डोप। पूतिका,  
पोय। (Basella rubra or lucida) यह गुरु,  
सार और मदद होती है (बद्ध)। उपोती कपाय,  
उष्ण, कटु, मधुर, कष्य और निद्रा, पालय, विट्वा  
एवं हेमकर है। उपोती तीन प्रकारकी जाती है,—  
सामान्य, सुदृढ़ और दमज। रस और धीरेके

विपाकमें दूसरी पहली ही जैसी रहती है। तीसरी  
तिक्त, कटु और रोचन है। (रात्रिचन्द्र) यह प्लाटु,  
पाकरघ, वृष्य, सर, छिन्ध, वक्ष्य, श्लेष्मकर, हिम  
और वात, पित्त तथा मदकी दूर करनेवाली है। (वृहत्)

उपोत्तम (सं० पु०) १ पश्चिमसे मिला हुआ,  
जो पश्चिमीके पास हो। (स्त्री०) २ पश्चिम स्तरमें  
संलग्न धर, जो हर्ष-इक्षत पश्चिमी हर्ष-इक्षतसे  
मिला हो।

उपोयित (सं० वि०) ऊपरकी उठा हुआ, जो  
उठ बैठा हो।

उपोदक (सं० वि०) उपगतमुदकम्। १ उदक-  
समीपस्थ, पानीके पास पहुँचनेवाला। (शब्दरत्नः ११६६)  
(अव्य०) २ उदकके समीप, पानीके पास।

उपोदका, उपोदी देखो।

उपोदकी (सं० स्त्री०) उपगतमुदकम्, डीप।  
विहीरविषयः वा शब्दः। पूतिका, पोय।

उपोदय (सं० अव्य०) सुखोदयके समय, प्रातः-  
ताम निकलते वक्त, तड़के।

उपोदिका (सं० स्त्री०) उपाधिकमुदकमस्याम्,  
उत्तरपदस्थ चैव्य उत्तरपदस्थोदादेग, कपू ततः टापू।  
उपोदकी, पुदीना। इतिहा देखो।

उपोदिकासैल (मं० स्त्री०) सुटरोमका एक सैल।  
पोष, गरमो, भीमही हाम, मोष, लुपट्टेकी रैन और  
फूटकी रैन इन सबकी जमा कर को दूर मध्य  
पानेके साथ तैलमें एकाने और मध्य सबस मिश्रानेमें  
यह पोषक बनता और पाददायीर बनता है।

उपोदोका, उपोदिकासैलो।

उपोदुपट (मं० पु०) उप-उट्ट-दुपट-पट्ट। छान, समझ।

उपोदुघात (मं० पु०) उप-ममोवे उद्वनम, उप-  
उत्-दुग्-पट्ट। १ उदाहरण, मिसाल। २ पारथ,  
गुरु। ३ उपप्लम, दोबाचा।

उपादलक (मं० स्त्री०) हट्ट करनेवाला, जो मनु-  
युत बनाता हो।

उपोदलन (मं० स्त्री०) उप-उत्-वन-लुट्ट। उल्ले-  
खन, उद्घोषन, दस्तककाम, उभार।

उपोष (मं० पु०) उप-उप-वत्। उपवास, काका,  
टिन-रात कुछ न खानेको हानत। उपवास देखा।

उपोषण (मं० स्त्री०) उप-उप-णुट्ट। उपोष देखा।  
“उपोषणं नममाय दस्तककाम दस्तक” (विहित)

उपोषण (मं० पु०) बौद्ध शास्त्रीय उपवास मत।  
इसका उपर नाम पोषण है। शास्त्रमिद्वारे यह मत  
बनाया गया। प्रकृत बौद्ध धर्मावलम्बी मात्र इस  
मतको पालन करते थे। यह उपवासकारको  
ब्रह्मजि अनुसार होता है।

उपोषित (मं० स्त्री०) उप-उप कतरि। १ छतो-  
पशाष, काका किये हुआ। (स्त्री०) २ उपवास,  
काका। (मं० पु०)

उपोष (मं० स्त्री०) उप-उप कतरि धातुयोंमें कर्मबंधा  
विभागात् कर्मवि भावुलयात् वयम्। १ उपाष  
करके रहने योग्य, जो काका करके रहने लायक हो।

“उपोषणं नममाय दस्तककाम दस्तक” (विहित)  
(वयम्) २ उपवास करके, काका के साथ।

उपोषण (मं० पु०) उप-उप कतरि देखा।

उपोष (मं० पु०) सुट्ट काय, लोडार्, जमा  
कराई।

उपोषमाण (मं० स्त्री०) पारथ दिया जानेवाला,  
जो दुरु दिया जा रहा हो।

उप (मं० स्त्री०) उभयतः यन् विवादिय, वज्र-  
१ लुपट्टन, बोया हुआ। २ सुट्टन, लूटा हुआ।  
३ पारिक्त, साफ किया हुआ। ४ विहित, बना  
हुआ।

उपलट्ट (मं० स्त्री०) पीछेके लगन बाद कथित,  
बोकर बोला हुआ।

उपि (मं० स्त्री०) उप-हिन्। वयम्, बोलाई।

उपिबिद् (मं० पु०) उपि-बिद्-जिम्। वयम्  
विधि, बोनेका कायदा समझनेवाला।

“उपोषणमिति नममाय दस्तककाम दस्तक” (विहित)

उपलट्ट (मं० स्त्री०) उप-हिन्-मपू। विहित,  
वज्र-१ लुपट्टन, बोलाई जानेके निमित्त।

उपम (मं० पु०) कार्याय विनीत, जितो किज्जे  
कवास। यह मन्त्राज प्रान्तके तिम्बेरी और काय-  
व्यापार जिलेमें होता है।

उप्य (मं० स्त्री०) यत् बाहुलयात् वयम्। वय-  
मीय, बोया जानेके कथित।

उप्यमान (मं० स्त्री०) वयम् किया जानेवाला, जो  
बोया जा रहा हो।

उपाय—बहार प्रान्तस्थ एमिचपुर जिलेको दरवार  
तहसीलका एक ग्राम। यह पचा० २१° ४०' तथा  
द्रावि० ८०° ३८' १०" पू० पर अवस्थित और माह-  
धवन मन्दिरके लिये प्रसिद्ध है। हिन्दू और मुसलमान  
दोनों एक मन्दिरमें अर्चना करने प्राते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उप्रेता—जाडियापाइके मोटाला शम्भुका एक बन्दर।  
यह पचा० १२° ४४' ४०' तथा द्रावि० ८०° ३०' पू०  
पर लुनागढ़में ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।  
यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उफतादा ( फा० वि० ) खिल, गैरमजबूत, पट्टी।  
उफनना ( हिं० क्रि० ) १ फेन देना, भग्यना,  
फेनाना। २ विवाद करनेपर उद्यत होना, भगड़ा  
करनेके लिये फरार करना।

उफनाना, उफनना देखो।

उफान ( हिं० पु० ) फेन, भाग, उवाल।

उफकना ( हिं० क्रि० ) १ वमन करना, थोकना।  
२ उद्गार छोड़ना, उगल देना।

उफका ( हिं० पु० ) चल प्रस्थि, सरकनेवाली गाँठ  
का फन्दा। यह डोरीकी किनारे लगता है। उफके  
को सरकाके छोटा फाँसते और फिर कसकर कृषिमें  
पानी भरनेकी डालते हैं।

उफकाई ( हिं० स्त्री० ) वमनका उद्गार, कँका उभार।

उफलना ( हिं० क्रि० ) ऊपरको जल फेंकना,  
उलीचना।

उफट ( हिं० पु० ) कुमार्ग, बुरा राह।

उफटन ( हिं० पु० ) अङ्गराग, संघा। यह चने  
या गेहूँके चाटेमें हलदी, तेल आदि मसाला डाल-  
नेसे बनता है। इसमें चमड़ा साफ और सुनायम पड़  
जाता है। विवाह होनेसे पहले कई दिन दूल्हा और  
दूल्हनके उफटन लगता है। विरोजीका उफटन  
बहुत अच्छा होता है।

उफटना ( हिं० क्रि० ) अङ्गराग लगाना, उफटन  
मलना।

उफडुव करना ( हिं० क्रि० ) १ पानीमें डूबना उड-  
कना, गोते खाना। २ पातझ-भरण होना, मरने  
लगना।

उफना ( हिं० क्रि० ) अङ्कुरित होना, जमना।

उफरना ( हिं० क्रि० ) मुक्ति पाना, बच जाना।

उफराक ( हिं० पु० ) तल, सतह।

उफरा-सुफरा ( हिं० वि० ) उच्छिष्ट, बचा-बचाया।

उफनना ( हिं० क्रि० ) उफनना, ऊपरको उठना।

“शिको हथोमें उफा और उफा और उफना” (शेरोजि)

उफसन ( हिं० पु० ) उदसन, जूना, बरतन भाँज-  
नेका छुरा।

उफसना ( हिं० क्रि० ) १ चिक्चप पड़ना, चिपचि-

पाने लगना। २ मसिन होना, मुसा जाना।  
३ शिथिल पड़ना, थकना। ४ पात्र परिष्कार करना,  
बरतन मलना।

उफहन ( हिं० स्त्री० ) मोटो डोरी, पानी खींच-  
नेका रफा।

उफहना ( हिं० क्रि० ) १ शफा निकालना, हथियार  
उठाना। २ जन निष्पे करना, उभोवना। ३ कर्पव  
करना, जोतना। ( वि० ) ४ चनाहत, जूनेसे  
छाकी, नङ्गा।

उफाँत ( हिं० स्त्री० ) वमन, कँ।

उफाई ( हिं० स्त्री० ) लव जानेका भाव, जिस हाक-  
तमें छवने लगे।

उफाना ( हिं० क्रि० ) १ वपन करना, बोना।  
२ उगाना, बढ़ाना। ( पु० ) १ सूत्रविशेष, किसी  
किष्काका धागा। यह वस्तु सुनते समय राहके बाहर  
रख जाता है। ( वि० ) ४ चनाहत, नङ्गा।

उफार ( हिं० पु० ) १ मोच, उद्गार, वचाव।  
२ झूल, चोहार।

उफारना ( हिं० क्रि० ) मुक्तिदान करना, छोड़ना।

उफारा ( हिं० पु० ) पशुके पानी पीनेका कुण्ड।

उफाल ( हिं० पु० ) १ उफान, फेनके साथ ऊप-  
रको उठाव। २ उद्देग, जोय।

उफालना ( हिं० क्रि० ) उष्ण करना, तपाना, पोताना।

उफासी ( हिं० स्त्री० ) उध्वा, जमड़ाई।

उफाहना, उफहना देखो।

उफिटना ( हिं० क्रि० ) १ सुखकर बोध न होना,  
बुरा लगना। अधिक व्यवहारसे प्रायः वस्तु उफिट  
जाता है। २ विरह होना, चकरा जाना।

उफोठना, उफिनना देखो।

उफोषना ( हिं० क्रि० ) १ फँस जाना, उडना पड़ना।  
२ समना, छिदना।

उफोषा ( हिं० वि० ) १ संभल, फँसा हुआ, जो  
गड़ गया हो। २ कष्टकाष्ठ, कंटोना।

उफेना ( हिं० वि० ) चनाहत, नङ्गा, जूने न पड़ने  
हुआ।

उवेरना, उवरना देखो।

उबीता ( हिं० वि० ) उबा हावनेवाला ।

उबीया ( हिं० वि० ) उब उठनेवाला ।

उब्—तुदा० पर० मक० मेट् । यह धातु धातु परने  
को उबीता उबने उठने व्यवहृत होता है । ( उब्, १५१३ )

उबज ( मं० वि० ) उब्-धातु । अलुतामुज, मोधा ।

उबित ( मं० वि० ) धातु दिया हुआ, मोधा बनाया  
हुआ, जो दबा दिया गया हो ।

उभर ( हिं० ) उब उठे ।

उभड़ना, उभा उठी ।

उभय ( मं० वि० ) उभ-उपय । उभाउठने विभक्त ।  
१५१३ । दितविमिट, हर दो, दोनों । यह मण्ड  
द्वित्वबोधक वांति भी विभक्त एकवचन और बहुवचनमें  
पाता है, द्विवचनमें कभी रखा नहीं जाता ।

उभयकण्ठका ( मं० स्त्री० ) मटरहवा, धरो ।

उभयगुण ( मं० वि० ) दोनों गुण रक्खनेवाला, जिसमें  
हर दो भिन्न हैं ।

उभयद्वर ( मं० वि० ) दोनों कार्य सम्पादन करने  
वाला, जो हर दो कामोंको करता हो ।

उभयधर ( मं० वि० ) स्वाम्यधर, दो-उभयधरी,  
जमीन् और पानी दोनों लगव रहनेवाला ।

उभयतः ( मं० अव्य० ) उभय-तन्निम् । १ दोनों दिक्,   
हर दो तर्फ । २ दोनों अवस्थामें, हरदो हालत ।

उभयतःस्थित ( मं० वि० ) उभय-कोटिमत, हर दो  
किनारे रखने वाला, दुधारा ।

उभयतोद्गत् ( मं० वि० ) उभयदलायेषोविमिट, जिसके  
दोनोंकी दो क्षमता रहे ।

उभयतोमुख ( मं० वि० ) उभयतो मुखे स्थित । द्विमुख,  
दो मुख रखनेवाला ।

उभयतोद्गम ( मं० वि० ) दोनों ओर उद्गम कराना,  
जिसके एकमें दो छोटा घर रहे ।

उभयतः ( मं० अव्य० ) उभय समीपस्थाने तः ।  
दोनों दिक्, हर दो तर्फ ।

उभयतोदात्त ( मं० वि० ) १ दोनों दिक् उदात्त  
कराना । २ दो उदात्त करके मिश्रणमें मिश्रण हुआ ।

उभयथा ( मं० अव्य० ) उभय-वाच । १ दोनों  
हरदो तरफ । २ दोनों अवस्थामें, हरदो हालत ।

उभयधुः ( मं० अव्य० ) १ दोनों दिनों, हरदो मुहूर्त  
गोत्र । २ दोनों एवं भविष्यत् दिवस, मने-पाने  
दिन ।

उभयमागहर ( मं० वि० ) १ दो काटमें रक्त मक्षमें  
योष्य, जो दो दिग्में नेता हो । ( स्त्री० ) २ उपर  
एवं अधोमागहर पोष्य, जो दश दश ओर से दोनों  
जाती हो ।

उभयनिश्चिन्तो ( मं० स्त्री० ) निश्चिन्तो, एक चोटा ।

उभयवत् ( मं० वि० ) उभयविमिट, जिसमें दोनों रहे ।

उभयवाहो ( मं० वि० ) धार तथा साम उभय प्रवा-  
हित करनेवाला । यह मण्ड वादित प्रवृत्तिका  
विमेष है ।

उभयविद्या ( मं० स्त्री० ) द्विगुण विद्या, दुगन्धक,  
धार्मिक और धार्मिक विज्ञान ।

उभयविध ( मं० वि० ) दो प्रकारमें प्रकाशित होने-  
वाला, जो दो स्वरों रचता हो ।

उभयविपुला ( मं० स्त्री० ) द्विभोविषय ।

उभयवेतन ( मं० पुं० ) दूतविषय । जो पूर्वस्थानी  
कट्टक नियोजित हो उभय वेतन के निश्चय प्रकाश  
भाष्ये दामकाय वमाता और दोनोंके निश्चय वेतन  
पाता, यही उभयवेतन कहलाता है ।

“उभयवेतने दोवेदवर्द्धकमवेतनेः ।

वेदोऽप्योदितव्यमवतनेः समवतिवत् ।” ( मं० )

उभयव्यञ्जन ( मं० वि० ) दोनों सिद्धके विमल रखने  
वाला, जो हरदो जिनको चलायत रखता हो ।

उभयव्यञ्जय ( मं० पुं० ) विषय, वक्ष्य ।

उभयवृत्तव्यञ्ज ( मं० स्त्री० ) वृत्तविषय दूध विमल,  
वृत्त वृत्तवृत्त वृत्ति । यह दूध वृत्तवृत्त में भी प्रोक्ष  
कोट्टे है । अन्ध, अन्ध, अन्धो प्रवृत्ति रक्त मने  
मन्विषित है ।

उभया ( मं० अव्य० ) दोनों प्रकारमें, हरदो वाच ।

सुभाकि ( मं० वि० ) दोनों प्रकारमें, हरदो वाच ।





थीं। ६४४ ई० की २री नवम्बरको बुधवारके दिन सबेरे किसी मसजिदमें मराजा पड़ते समय एक ईरानी गुलामने इनके तलवार भोंक दी। तीन दिन पीछे ६५ वर्षको अवस्थामें मृत्यु हुई। इन्होंने १० वर्ष ६ मास और ८ दिन राज्य किया था। अफ़्ग़ानोंके पुत्र उसमानको इनकी ख़िलाफ़तका उत्तराधिकार मिला था। किसी अंगरेज़ने लिखा है—‘१८०२ को मैं शीराज़में था। उसी समय ओया ईरानियोंने उमर ख़नीफ़की मृत्युका उत्सव मनाया। उन्होंने एक लम्बा-चौड़ा चबूतरा बनाया और उसपर यथासम्भव अङ्ग-मङ्ग कुरूप एक प्रतिमाको जमाया और फिर उसके सम्मुख हो लोग कहने लगे—सुहृद्दके समान उत्तराधिकारी बनोको तूने खोफ़ न बनने दिया, तूने कीटि कीटि धिक्कार है। अम्तको अब ग़ाली-ग़लौज़की धैली खाली हो गयी, तब एकायक प्रतिमापर पत्थर और लाठीकी मार पड़ने लगी, अम्तको वह चूर चूर हो गयी। प्रतिमाके भीतर शून्य स्थानमें मिटाव भरा था। समवेत दर्शकोंने उसे झूट झूट खा हाला।’

उमर महारानी—एक सुसलमान राज्यकार। १६४५ ई०में इन्होंने ‘हुस्सतुल हिन्द’ नामक पुस्तक लिखी थी।

उमरमिर्जा—अमोर तैमूरके पोत्र और मोरान्गाहके पुत्र। शाहशुह मिर्जसि सड़कर ये चार गये और लख्मी हुये थे। कुछ दिन बाद १४०७ ई०के मई मासमें इन्होंने इस दुनियासे कूब किया था।

उमर शैख़ मिर्जा—१ अमोर तैमूरके २य पुत्र। अपने पिताकी जीते समय यह ईरानके शासक रहे और १५८४ ई० की ४० वत्सरके वयस पर लड़ाईमें मारे गये। उत्तराधिकारी बाक़रमिर्जा इनके एक पुत्र हुए। २ सुलतान् पशुसैद मिरजाके ग्यारहमें एक पुत्र, सुलतान् सुहृद्दके पोत्र और अमोर तैमूरके सड़के मोरान्गाहके प्रपोत्र। दिल्लीके बादशाह बाबर शाह इनके पुत्र रहे। इनका जन्म १४५६ ई०की समरकन्दमें हुआ था। इन्होंने अपने पिताकी जीते अहिन्दु-जान् और फ़रग़ान संयुक्त राज्यका शासन किया था। १४५८ ई०में पिताके मरनेपर भी यह उस राज्यका

प्रबन्ध करते रहे। १४८४ ई० की ८वीं जूनके सोम-वारकी २८ वत्सरके वयसमें २६ वर्ष २ मास राज्य करनेके बाद ये चम्ब बसे। ये मध्य पर छोड़े होकर अपने कबूतर उड़ते देखते थे। उमोतमय मध्य टूटा और इनका प्राण छूटा। इनके पुत्र बाबर ग्यारह वर्षके वयसमें सिंहासन पर बंठाये गये। ‘उन्होंने लड़ीक़होने’ अपना उपनाम रखा था।’

उमर सदज़ान सावज़ी—एक सुमनमान राज्यकार। इन्होंने ‘मसाविर नसोरी’ नामक एक न्याय और तत्व-ज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ लिख सुलतान् सच्चरके वज़ीर नसोदीन्महमूदके नाम उत्सर्ग दिया था।

उमरा (अ० पु०) बहुतसे अमोर, जितने भी धनवान्। उमराई अमोरी, वड्डपन।

उमरा (अमर)—उदयपुरवाली राणा प्रतापसिंहके पुत्र। अपने पिताके स्वर्ग जानेपर ये भिवाड़के राणा बने। अकबरके जीते कीड़े भगड़ा लगा न था। किन्तु उनके उत्तराधिकारी जहांगीरने भिवाड़को पूर्ण रीतिसे अधीन करना चाहा। इसलिये युद्ध होनेपर उमरा राणाने उन्हें दो बार हराया था। फिर जहांगीरने प्रतापके भाई सुगराको उमरासे लड़ानेको ठहराये। सात वर्ष बाद वह स्वयं दूसरेके धर्मका आश्रय लेतेपर गरमाये और उमराको राजधानीका स्वामी बना बानि बजवाये। इससे विद्व जहांगीरने राणापर बहुत बड़ी कीज भेजी। किन्तु वह खामनोरकी घाटोंमें फँस चार गये। फिर जहांगीरने अपने प्रधान सेनापति मन्दावत खान्को भेजा। जब वह भी सफलमनोरय न हुये, तब सैनिक पीछे अजमेरको हटे। १६११ ई०में लड़ते लड़ते राणा उमराने जहांगीरकी अधीनता स्वीकार कर ली। जहांगीरने बड़ा सम्मान किया और सुबराज कर्षसिंहके साथ उन्हें वधाधि तथा उपहार दिया। किन्तु उन्हें अधीनता ‘बच्छा न लगी। इन्होंने अपने पुत्र कर्षसिंहको राज्य दीप भिवाड़को गहो छोड़ी थी। इनके पुत्रका नाम जगतसिंह रहा। १६२८ ई०में अपने पिता कर्षके स्वर्ग जानेपर उन्हें राज्यका उत्तराधिकार मिला था। जगतसिंहके पुत्र राजसिंह १६५४ ई०में मरनेपर बेटे।





स्थान दे डाला था। उस समय यहाँ बियाँ लट्टल दूधरा कुछ भी न रहा। वर्तमान जमीन्दार चन्नी पण्डितकी सन्तान हैं। चन्नी आज भी लोय देग-पाछे' कहते हैं। १७७५ ई० को माधोजी भोंसले उमरेरमें रहे थे। चन्नीने क़िला बनवाया। पहले क़िला ३०० गज लम्बा और ८० गज चौड़ा था। इंटकी दीवार १२ फीट मोटी और ३५ फीट उठी रहनी। पीछे बुर्ज बने थे। चब केवल दो पाखर' अवशेष हैं। किसेमें कितने ही कूये' बने हैं। एक प्राचीन मन्दिरका भी ध्वंसावशेष पड़ा है। उमरेर बल्लभ्यवसायके लिये प्रसिद्ध है। माधोजीके समयसे यहाँ बल्ल बनते पाते हैं। उमरेरकी धोतियाँ बहुत बढ़िया होती हैं। जग देगम्का छोटा और बड़ा दोनों तरहका किनारा बढ़ता है। पूना, नासिक, पण्डुरपुर और बम्बई तक धोतियाँ बिकने जाती हैं। यहाँ कितने ही महाराज और व्यवसायो बणिक' बसते हैं। नगरकी दोनों ओर तालाब है। स्कूल और अस्पताल अच्छा बना है।

उमस ( हिं० स्त्री० ) आन्तरिक उत्साह, चन्दरनी  
गरमी । प्रायः दृष्टि होनिसं पहले उमस पड़ती है ।

સમસના ( હિં. ક્રિ. ) આત્મરિક સત્તાપ ઉઠના,  
અન્દરૂનો ગરમી સ્થમના ।

चमंदना ( हि० कि० ) १ प्रवाहित होना, बह चमना ।  
२ धुत्तेजित पड़ना, जोग खाना । ३ आच्छादन  
करना, छा जाना ।

उमा (सं० स्त्री०) शोडशस्य मा लक्ष्मीरिव तं गिधं  
माति मिमोति वा, उमा-क पञ्जादित्वात् टाप् ।  
१ शिवयत्नी, पत्नी । इहति हिमवान्कं पोरस पोर  
मिनकाकं गर्भसे कष्य लिया था ।

"समिति माता तपसा निविष्टा पदादुभाष्यो समुद्यो गवाम् ।" (कुमार)

माता, भैरवाक '४: मा अधिक्त तपस्या न करो'  
 कर्तव्ये उमा नाम पड़ा है। २५ दुर्गा भी कहते हैं।  
 २ हरिद्रा, हलदो। ३ चतुर्षी, चतुर्षी। ४ कान्ति,  
 नामपरी। ५ कान्ति, चमक। ६ शान्ति, चमक।  
 ७ रात्रि, रात। ८ ब्रह्मविद्या।

वेम उपनिषद्में समाका नाम मिश्रता है। एकबार

ब्रह्मानि देवताधीपर विजय पाया था। किन्तु देवता  
उन्हे परिचित न थे। उन्होंने भग्नि और वायुको  
ब्रह्माका भेद लेनके लिये भेजा। ब्रह्माने कहा—  
तुम कौन हो। एकने भग्निको जलाने और दूसरेने  
छड़ानेशाना देव बतलाया। ब्रह्माने दोनोंमें धामका  
एक तिन्का जलाने और छड़ानेका पादेम दिया।  
किन्तु वायु और भग्नि वह काम न कर सके। इस-  
लिये वह ब्रह्माका भेद बेपाये ही लोट पाये। फिर  
देवोंने इन्द्रसे कहा—ब्रह्माका भेद पूछो। ब्रह्मा इन्द्रकी  
देखते ही संतुष्टित हुये। उसी समय थापायार्थमें उमा  
देवबतों समक्ष उठीं। इन्द्रने पूछा—यह थापा  
किसका है। उमाने उसे ब्रह्मा बतलाया था।

ब्रह्मा भोर देवताओंकी मध्यस्थ उमाको मदुरा-  
चार्यन विद्या माना है। भाष्यकारने कहा है:-  
हिमवान्की सुता गौरी देवी विद्याकी प्रतिमूर्ति है।  
फिर उमाका चर्य गौरी ही है। इसीसे उमा चण्ड  
विद्याकी बोधक है। परमेश्वरकी सोम धर्मात् उमा  
वा विद्याका साधो कहते है। उमा परमा विद्या है।  
ईश्वर उन्हींके साथ रहता है। तैत्तिरीय-पारष्यक  
जगन्माता अम्बिकाको उमा धर्मात् देवी विद्याका रूप  
वतताता है।

उमाकट (सं० सु०) उमाया रजः, उमाकटधु।

अनापूर्तिभोगमानादभ्युदयः पञ्चमः । ( भाषिणी ३।१।१८ )

पतझोको धनि, पतझोका जरा ।

समाकना ( हिं० कि० ) उत्पादन करना, लड़ कोड़ाना,  
उखाड़ना ।

• “શ્રી મહાશયે ચાકામી કિય માનદાન વાપીમનાદા દુખા  
ફેલવાની” । નાં શ્લોકાચ કિમેતદ વચનિત ।” (શ્લોક ૩૧૨)

† “हा ब्रह्मेति शीवाय ब्रह्मणे वै जगद्विश्वे महोदधयामिति ।

समीक एव विद्याधरार भवेति ।" ( वृत्त ३/१/९ )

१. 'नमो भगवते वासुदेवाय' इति मन्त्रादिको वासुदेव उदीयते ।  
 २. भगवन्वा सुतो वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो  
 ३. मन्त्रादिको वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो  
 ४. मन्त्रादिको वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो  
 ५. मन्त्रादिको वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो  
 ६. मन्त्रादिको वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो  
 ७. मन्त्रादिको वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो  
 ८. मन्त्रादिको वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो  
 ९. मन्त्रादिको वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो  
 १०. मन्त्रादिको वसुदेवमनो यथैवैति च मन्त्रादिको भगवन्वा सुतो

उमाखिनी (वि० वि०) उमापति करनी। ता  
उमापति देनी हो।

उमापति (वि० पु०) उमापति गुहा गिता। हिमालय,  
पार्वती के पुरस्कार पत्र।

उमापतिपति (वि० स्त्री०) उमापतिपति, एक देवता।

उमापतिपति (वि० स्त्री०) उमापतिपति, एक देवता,  
सिद्ध देवता के लिये देयायी पति।

उमापतिपति (वि० पु०) उमापतिपति।

उमापतिपति (वि० पु०) उमापतिपति।

उमापतिपति (वि० पु०) उमापतिपति, एक देवता,  
सिद्ध देवता के लिये देयायी पति।

उमापतिपति (वि० पु०) उमापतिपति, एक देवता,  
सिद्ध देवता के लिये देयायी पति।

उमापतिपति (वि० पु०) उमापतिपति, एक देवता,  
सिद्ध देवता के लिये देयायी पति।

उमापतिपति (वि० पु०) उमापतिपति, एक देवता,  
सिद्ध देवता के लिये देयायी पति।

उमापतिपति (वि० पु०) उमापतिपति, एक देवता,  
सिद्ध देवता के लिये देयायी पति।

उमापति (वि०) उमापतिपति।

उमापति—उमापतिपति के लिये देयायी पति।

उमापति—उमापतिपति के लिये देयायी पति।

उमापति (वि० पु०) उमापतिपति।

उमापति—उमापतिपति के लिये देयायी पति।

उमापति (वि० पु०) उमापतिपति।

उमापति—उमापतिपति के लिये देयायी पति।

उमापति (वि० पु०) उमापतिपति।

**उमापति—१** पाकयज्ञनिर्णयग्रन्थके रचयिता। यह धर्मदेवके पुत्र और चन्द्रचूड़के पिता थे। २ दीप-प्रकाशटिप्पण नामक ग्रन्थ-रचयिता। पिताका नाम प्रेमनिधि था। ३ पद्यापथ्यविनियय ग्रन्थके रचयिता। यह तपनके पिता, नरसिंहभूषणके पितामह और विश्वनाथ भूषणके प्रपितामह रहे। ४ कल्याण-कल्पलता भक्तिग्रन्थके रचयिता। ५ प्रतिष्ठाधिकार और शक्तिनिर्णयग्रन्थके रचयिता। ६ ब्रह्ममानाटीकाके रचयिता। ७ वृत्तवार्तिक नामक ग्रन्थके रचयिता। ८ वृत्तप्रदीपिकाटिप्पण ग्रन्थके रचयिता।

**उमापति उपाध्याय**—प्रहार्योदयदिव्यवस्तु; ग्रन्थके रचयिता। इनके पिताका उमापति और माताका नाम रत्नावती था।

**उमापति त्रिपाठी**—एक विख्यात पश्चिमभारतीय पण्डित। इन्होंने बाण्यकालमें काशीमें रह विद्या पढी थी। पीछे अयोध्यामें जाकर त्रिपाठी वास करने लगे थे। संस्कृत और हिन्दी भाषाके इन्होंने अनेक ग्रन्थ बनाये थे। दोहावनो और रत्नावती प्रशस्ति पुस्तक प्रसिद्ध हैं। १८७४ ई.में इनका स्वर्गवास हुआ।

**उमापति दत्त**—एक संस्कृत वैद्यकारण। यह सुमर-मन्दीके समसामयिक थे। गोधोबन्ध और सुवेण्णम इनका वचन उद्धृत किया है।

**उमापति दत्तपति**—केशवपण्डितके पाथयदाता। उक्त पण्डितने प्रह्लादचम्पू लिखा था और उसे दत्तपतिके नामपर उत्सर्ग किया।

**उमापतिधर उपाध्याय**—संस्कृत और मैथिल भाषामें 'पारिजातहरण' नामक नाटक ग्रन्थके रचयिता। यह दरभंगा-जिलेवाले और परगनेके कीदसपुर ग्राममें रहते थे। हिन्दूपति हरिदेव वा हरिहरदेवकी राज-सभामें इनका बड़ा सम्मान था। उमापतिधरने लिखा है—हिन्दूपतिकी तत्सवार यवनोंके लङ्कनको काट कर भयानक यमिकी तरह जला डालती है।

**उमापतिधर मिश्र**—संस्कृतके एक प्राचीन ग्रन्थकार। यह गौडाधिप विजयसेनको सभाके एक रत्न रहे और विजयसेनके प्रगल्भ रचा था। विजयसेनके पुत्र यक्षानसेनने डी बङ्गालके ब्राह्मणों और कायस्थोंमें कुलमर्यादा डाली थी। यक्षानसेनके पुत्रका नाम लक्ष्मणसेन था। उनके प्रामादके फाटकर लिखा था—

“वीरवंश धर की जयदेव उमापतिः।

कविराजधर रत्नानि कविनी लक्ष्मणसेन” (कविराजनिहा)

जयदेवने मोतमोदिन्दके चौथे प्राकमें इनका उल्लेख किया है।

**उमा वाई**—गायकवाड़के खडिगाव सेनापतिकी विधवा पत्नी। पोनाजी गायकवाड़के वधवा ममाचार सुत इन्होंने बदना सेनेकी ठहराये थी। कुछ फौज जोड़ और पोनाजीके पुत्र कांताजी कदम तथा दामाजी गायकवाड़की साथ ले यह चढमदावाद पर चढ़ी। किन्तु सिवा जीवराज नामक राजपूत नेताको मारनेके मराठे कुछ न कर सके और राजा को गये। ८० हजार रुपया चढमदावादके खजानेमें न मिलने पर जीवराज मराठानुका बन्दी रखनेको बात ठहरी। मराठोंने रघुनाथाद दूट एक पच्छा पुस्तकालय बिगाड़ डाला था। फिर उमा-वाई बड़ोदेकी गईं। किन्तु शासक शेरखान बाबो लड़नेको तैयार हुए। उस पर इन्होंने उन्हें लिखा—हमने अभी महाराजसे सन्धि की है, हमें बेरोक टोक निकलनेका अधिकार है।

वाजीरायने स्वर्गीय व्यक्त्तरावके नाबालिग लड़के यशोवन्तरावको सेनापतिका उपाधि प्रदान किया था। उस समय उमावाई उनही रसक बनीं। पोनाजी गायकवाड़ गुजरातके शासक हुए थे। उन्हें सेनापतिकी पोरमें मासवे तथा गुजरातमें पेशवाके खानोंको रचा रखना और अपने शासनाधीन राज्यका शास

शासन पाप शिवमविष नामे।

पुत्र मोहिदिन कह करवचन जयदेव लखन पति वाई १ (४५)

मोहिदिन चलिपुत्र लखन पाउच करहु दहाइ दुःख नामे।

मिहिर सुखि जय देव दहाइ मरुदहवत मरुदहवत १

दुखि उमापति बहि देव करवचन जय देव लखन नामे।

“लखन लखनपति हिन्दुपति विह लखदेहि देव विरामने” १११

\* इनकी कविताका उदाहरण नीचे देखिये—

“वदहू पूषंमि रत्न दयन भलि निमि शरर दीये मया।

मरि मरिचहि विह मरुदह दिवा लखन लखीरच मया॥



उमापति—१. पाकयज्ञनिर्णयघन्यके रचयिता। यह धर्मदेवके पुत्र और चन्द्रचूड़के पिता थे। २ दीप-प्रकाशटिप्पण नामक ग्रन्थ-रचयिता। पिताका नाम प्रेमनिधि था। ३ पथापण्यविनियय ग्रन्थके रचयिता। यह तपनके पिता, नरसिंहमेनके पितामह और विश्वनाथ मेनके प्रपितामह रहे। ४ कश्चा-कल्पसता भक्तिघन्यके रचयिता। ५ प्रतिष्ठाविवेक और शुद्धिनिर्णयघन्यके रचयिता। ६ रत्नसाम्राटीकाके रचयिता। ७ वृत्तवार्तिक नामक ग्रन्थके रचयिता। ८ कूटप्रदीपिकाटिप्पण ग्रन्थके रचयिता।

उमापति उपाध्याय—प्रदार्थोद्यदिश्वचतुः ग्रन्थके रचयिता। इनके पिताका रत्नपति और माताका नाम रत्नावती था।

उमापति त्रिपाठी—एक विख्यात पश्चिमभारतीय पण्डित। इन्होंने बाल्यकालमें काशीमें बड़ा विद्या पढी थी। पीछे प्रयोध्यामें जाकर त्रिपाठी वास करने लगे थे। संस्कृत और हिन्दी भाषाके इन्होंने अनेक ग्रन्थ बनाये थे। दोहावली और रत्नावली प्रसिद्ध पुस्तक प्रसिद्ध हैं। १८७४ ई. में इनका स्वर्गवास हुआ।

उमापति दत्त—एक संस्कृत वैद्याकरण। यह लुमर-मन्दीके समसामयिक थे। गोविन्द और सुपेथने इनका यथन उद्धृत किया है।

उमापति दत्तपति—केशवपण्डितके भाय्यदाता। उक्त पण्डितने प्रह्लादचम्पू लिखा था और उसे दत्तपतिके नामपर उत्सर्ग किया।

उमापतिधर उपाध्याय—संस्कृत और मैथिल भाषा में 'पारिजातहरण' नामक नाटक ग्रन्थके रचयिता। यह दरभंगा-जिलेवाले और परमनेके कौस्तुभ चामरमें रहते थे। हिन्दूपति हरिदेव वा हरिहरदेवकी राज-सभामें इनका बड़ा सम्मान था। उमापतिधरने लिखा है—हिन्दूपतिकी तलवार यवनाके लङ्गनको काट कर भयानक धमकी तरङ्ग जला डालती है।

उमापतिधर मिश्र—संस्कृतके एक प्राचीन ग्रन्थकार। यह गोडाधिप विजयमेनकी समाके एक रस रहे और विजयमेनके प्रगल्भी रचा था। विजयमेनके पुत्र यत्नानमेनने ही यज्ञानके ब्राह्मणों और फायसोंमें कुलमय्याटा डाली थी। यत्नानमेनके पुत्रका नाम लक्षणमेन था। उनके प्रामादके फाटकपर लिखा था—

“शिरःनष्ट इरथो जयदेव उमापतिः।

कविराजस्य रत्नानि सन्निधौ न लब्धव्य च” (कविराजसिद्धा)

जयदेवने गीतगोविन्दके चौथे श्लोकमें इनका उल्लेख किया है।

उमा बाई—गायकवाडके पांडित्य मैनापतिकी विधवा पत्नी। पौनाजी गायकवाडके वधवा समाचार सुन इन्होंने घटना सेनेकी ठहरायी थी। कुछ फौज जोड़ और पोनाजीके पुत्र काताजी कटम तथा दामाजी गायकवाडको साथ ले यह पद्ममदाबाद पर चढ़ी। किन्तु सिवा जीवराज नामक राजपूत नेताको मारनेके मराठे कुछ न कर सकें और राजा लगे गये। ८० हजार रुपया पद्ममदाबादके पञ्जानेमें न मिलने पर जीवन मंद खान्का बन्दे रखनेमें मान ठहरी। मराठोंने रसुताबाद गूट एक पच्छा पुस्तकालय बिगाड़ छाता था। फिर उमा-बाई बड़ाटेकी बट्ठी। किन्तु शासक गेरखान् बाबो मङ्गनेकी तैयार हुये। उस पर इन्होंने उम्हें लिखा—इमने अभी महाराजसे मन्थि की है, तुम-बेरोक टोक निकलनेका अधिकार है।

बाजीरावने स्वर्गीय यशमलारावके माधालिग मङ्गके यशोवन्तरावकी सेनापतिका उपाधि प्रदान किया था। उस समय उमाबाई उनकी रसक बनीं। पौनाजी गायकवाड गुजरातके शासक हुये थे। उम्हें मैनापतिकी पोरमें मानधे तथा गुजरातमें मैगवाके खालोंको रक्षार रखना और अपने शासनचौक राखना था

वाचन बाबु विरचयित नामे।

पुत्र मोहि दिन बर वरवध जम मर सरवर परिष नामे ॥ (५५)

कोहिम चरिपुत्र अजर चातुल्य बराह वराह ॥ नामे ॥

मिरि सरसि जम दीह वराह मरवराह वरन रवराह ॥

मुहवि बमाली जदि कोच वराह नाम औरत वरनामे ॥

“वराह वरवराह विरचयित विरचयित दीह मरवराह ॥ ११५”

• इनकी कविताका उदाहरण नीचे देखिये—

“वराह वरवराह वराह वरन अवि निमि बाहर दीवी मन्दा।

मरि वरिषट् विरचयित विरचयित वरवराह मन्दा ॥

कर मन्त्रीके हाथों राजकीय कौपमें जमा कराना पड़ता था। १०१६ ई० पर उमा-बाईने पौलाजीके स्थानमें दामाजीको गुजरातमें अपना प्रतिनिधि माना। किन्तु यह रंगोजीको अपनी जगह छोड़ दक्षिण गये थे। फिर रंगोजी और कांताजी कदममें विवाद होनेपर उन्हें वापस जाना पड़ा। किन्तु दामाजी कांताजीके लिये चौथका प्रत्यक्ष साध दक्षिणकी ओट गये। यहाँ उमा-बाई पैगवाके विरह भाजिश करती थीं। इन्होंने खाइराय गायकवाड़को अपनी महायताके लिये जुलाया। रंगोजीको उमाबाईने अपना सहायक बना लिया था। १०४० ई०में उमा बाई स्वर्ग गयीं।

उमा-महेश्वर—स्वयं प्राप्तके नामिक नगरका एक मन्दिर। यह सुन्दर-नारायणके मन्दिरसे दक्षिण-पूर्व ७० गज दूर बना है। यह पत्थरको एक दीवारने घिरा हुआ है। सामने दो मकान् छड़े हैं। मन्दिरके सामने काठका एक बड़ा कमरा बना है जिसकी छतपर बहुत अच्छा काम खुदा है। भीतर छाप-प्रस्तरकी तीन मूर्तियां कोई दो फीट ऊँची प्रतिष्ठित हैं। बीचमें महेश्वर, या शिव, दाहिने गङ्गा और बायें उमा या पार्वती हैं। हम सुन पाते हैं, कि कर्णटकसे मराठे यह मूर्तियां लूट लाये थे। १०५२ ई०को श्रृं पैगवा साधवरावके चाचा त्राम्यकाराव अमृतेश्वरने स्थापन रुपये लगा मन्दिर बनवाया था। गवरमनेष्ट वार्षिक प्रायः २०० रुपये मन्दिरको देती है। मन्दिरका प्रत्यक्ष प्राचार्य काजीकरके बंशज करते हैं। बाढ़के समय मन्दिरकी चटान पानीसे घिर जाती है। मन्दिरके सामने नदीमें उत्तरनेकी मिट्टियां बनी हैं।

उमाधन (सं० शी०) गोपितपुर, देवीकोट, एक शहर। उमाधराय (सं० पु०) शहर, पार्वतीके साथी महादेव। उमाधुत (सं० पु०) उमाया सुतः। कार्तिक। उमास्वातिपाचक (सं० पु०) एक प्रसिद्ध वैज्य-कार। इन्होंने प्रगमरतिप्रकरण और तथार्थसुख नामक दो ग्रन्थ बनाये हैं। किसी किसी इन्तुक्रियिने उमाग्रामी भट्टारक नाम लिखा है। बहुतेका मत है कि ये ईश्वरीय सन्मं परिले ओचित थे।

उमाह (हिं० पु०) शीतल, दिनका उभार, धर्म। उमाहना (हिं० क्रि०) १ प्रवाहित होना, बह चरना। २ उत्पन्न होना, छटपटना।

उमाहल, कथा देखो।

उमोचन्द (पमोरचन्द)—एक प्रसिद्ध बणिक। ई० १० गताब्दीके शेषभागमें पमोरचन्द और गोपाचन्द नामक दो शिष्य बणिक बङ्गालमें पाकर बने। लोग समझ न पाये, वही बङ्गालके प्रथम अधिशाही कहाये या उनके पुत्रपुत्र भी किसी समय यहाँ पाये थे।

उन समय बंगलादास और भागिकचन्द सेठ नामक दो बणिकोंने बङ्गालमें बहुविभक्त व्यवसायमें प्रारंभ धनसम्पत्ति कमा विशेष प्रतिपत्ति पायी थी। पमोरचन्द चाते ही उनके पास बालिष्य-विपयक कर्ममें लग गये और कार्यकी कुशलता तथा दक्षताके गुणसे क्रमशः यावन्तौ व्यवसायके अध्वर्य बन गये।

काम करते करते इन्होंने भी अपनी सम्पत्ति बढ़ाये और अन्तको अपनी दुकान खोल दी। छोड़े ही दिनोंमें बङ्गाल और विहार दोनों जगह इनके बालिष्य व्यवसायकी धूम पड़ गयी थी।

उधर बङ्गालमें चंगरेजीका भी बालिष्य लगता था। कलकत्तेमें उन समय चंगरेजी कौलामका अधिकार रहा, चंगरेजीके साथ कामरर पमोरचन्दने कलकत्तेमें बहुत बड़ा मकान बनवाया। पञ्जाबी मुद्रयोका एकदल सर्वदा उपस्थित रहता था।

चंगरेजीको पण्डित्य अधिकारी पमोरचन्द ही पढ़वाते और मुर्शिदाबादके नवाबसे भी अपना काम बनाते थे। नवाब सादरके निकट इनका बड़ा मान रहा।

कम्पनीको रसद देनेमें पमोरचन्द बहुत योग्य होते हुए भी लाभवश अन्यथा उपायोंमें लाभकी चेटा करने लगे। चंगरेजीने अच्छा मान न पा और मराठोंके उत्प्राप्तये छवरा इनसे रसद लेना रोक् दिया। इससे विजय चति पड़ती भी पमोरचन्दने नवाबके साथ अपना कारबार बढ़ाया।

उसी समय पमोरचन्द वीहारे गय्यागत हुये। उनके बीनकी भाषा न रही। बीनीने समझा—नवाबके

दोहव गिराहुँला बहानकी गहोपर बैठेगे। किन्तु ठाकेके नवाब नवाजिस मुहम्मदने गिराजके कनिष्ठ भ्राता सुगदुहोलाके पुत्रको मोद ले लिया था। इसलिये उनकी विधवापत्नीने अपने पोथपुत्रको बहानके सिंहासन पर बिठानेके लिये प्रधान मन्त्री राजा राजवसन्तके साथ मुशिदाबादके निकट गिरि लगाया। उस समय पमीरचन्द भी मुशिदाबादमें ही रहे। राजा राजवसन्तने इनसे और कासिमबाजारके प्रधान बाटस साहबसे वस्तुना बढ़ायी। पीछे स्थिर हुआ—कुमारलखादास सपरिवार धनरत्न लेकर कलकत्ते जायेंगे और चंगरेज तथा पमीरचन्द दोनों वहाँ उन्हें ठिकारेंगे। कलकत्ते पहुँचते ही उनकी पमीरचन्दने सपुत्र वासस्थान दिया था।

१७५६ ई. की ८वीं अपरैककी अर्धरात्रिके मरते ही गिराहुँला सिंहासनपर बैठे। दो-चार दिन बाद ही उन्होंने कलकत्तेके चंगरेज अध्यक्षको लिखा कि—‘पाप यीशु लखादासको समस्त धनरत्नके साथ मुशिदाबाद भेज दीजिये। चर-विभागध्वज राम-रामसिंहके भ्राता स्वयं पादशेका, पत्र ले कलकत्ते आये। पमीरचन्द उन्हें जानते थे। कोमिलमें बात जानपर स्थिर हुआ—‘कासिमबाजारमें जो पत्र भिजा है, उसके अनुसार नवाजिस मुहम्मदके पोथपुत्र और गिराहुँलाके सिंहासन पानेका भगड़ा अभी नहीं मिटपाया है। इसलिये आजकल ऐसा पादेश कैसे चल सकता है! यह समस्त पमीरचन्दकी कल्पना है। उन्होंने हमें डराने और अपना प्रभाव जमानेके लिये मियाँ, पादशेका तथा दून भिजवाया है।’ दूनसे खासी हाथ जानकेलिये कहा गया।

नवाबने जब इस व्यवहारसे असह्य हो कलकत्ते पर आक्रमण मारनेका उद्योग किया, तब रामराम सिंहने अपनी सम्पत्तिकी रक्षा रखनेकेलिये पमीरचन्दको पत्र लिख दिया था। ये पत्र पत्र १२ वीं जूनको पाते ही उस काममें लग गये। चंगरेजोंकी सन्देश हुआ। उन्होंने पमीरचन्दकी अपना गुरु समझ किसमें यश कर लिया था। मकान् पर फौजका डेरा पड़ा। पमीरचन्दके हाथे जङ्गीमन समस्त

विषयका तत्त्वावधान रखते थे। वह भयसे पन्नापुरमें छिप बैठे। दूसरे दिन उन्हें निकासनेके लिये जब चंगरेजी फौज मकान्में घुसी, तब पमीरचन्दके ३०० मखधारी सिपाहियोंने तलवार उठायी। युद्धमें दोनों ओरके पादमो इताइत हुये। अमोदारोंके सरदारने सोचा—‘चंगरेज मेरे प्रभुके परिवारका अपमान करेंगे। इसीसे उसने पन्नापुरमें पाग लगादी, १२ स्त्रियोंकी गर्दन उड़ादी और अपनी हात्तीमें भी तलवार भौंक ली। इसी वीचमें चंगरेजोंके कुछ सिपाही लखादासको किसीसे पकड़ ले गये। चार साखको लूट हुई थी।

नवाबकी फौज कलकत्तेके उत्तर भा पहुँची थी। पमीरचन्दके जमादारने सेनापतिसे जाकर कहा—‘उत्तरागकी अपेक्षा पूर्वदिक्के आक्रमण करनेमें सुविधा है। क्योंकि उधर कोई रणक नहीं है।’ जमादारके कहने पर पूर्वदिक्के नगर आक्रान्त हुआ। फोर्टविनियसमें पाव कील उत्तर-पूर्व बड़े-बाजारमें नवाबकी फौजने पाग लगा दी। दुर्गमें बाहर जो चंगरेजी सिपाही रहे, वह चार दिनतक किसी प्रकार सहे-भिड़े; जेयकी सब भाग खड़े हुये।

२० वीं जूनको सबेर नवाबकी फौजने दून सत्-साहसे दुर्गपर आक्रमण किया था। जो चंगरेज दुर्गके मध्य रहे, वह हालसेहीकी सेनापति बना और बाहर या हटतर बाधा डालने लगे। फिर उन्होंने हालसेल साहबसे पमीरचन्दकी अनुरोध करा राजा मानिकचन्दके नाम एक पत्र लिखाया और सुदीर्घ बातें ही दुर्गके आकारसे मझके मध्य फैलाया। राजा मानिकचन्द दुर्गकी आसन्नता और नवाबकी एक बड़ी फौजके अधिनायक रहे। पमीरचन्दने चंगरेजोंके प्राण और दुर्गकी रक्षाकेलिये उनसे अनुरोध किया था। पत्र उठा तो लिया गया, किन्तु गुरु न दक भवा। दो बजेके समय फिर नवाबकी फौज अने बढ़ी। हालसेल साहबने पमीरचन्दमें दूसरा पत्र लिखाकर फेंका। इसमें भी वही अनुरोध था।

अपराधके समय नवाबने दुर्गमें प्रवेश कर पमीरचन्द और लखादासको बुलाया। यथा समय पाने-



पर नवाबने दोगोघे मद्र प्यवहार किया था। फौज नगर लूटने लगी। यमीरचन्दके भक्तान्सी ४ भाष रपण, कितना ही होरा-मोती और मोदागरीका सामान निकल गया था।

२२० लुत्ताईकी नवाबने यमीरचन्दके साथ सुगिदा-बादकी प्रत्यागमन किया। एक दिन पहले उन्होंने यन्दी चंगरेजीकी श्वादये होड़ अपने-अपने-पावास लाने कहा था। यमीरचन्द होने मध्यस्थ बन और नवाबसे कुछ सुन यह काम कराया था। उधर चंगरेजीका भी सर्वप्र मुटा और खुनेकी कजा ऐसा सक न बचा था। यमीरचन्दने दयाके परवग ही अपने शक्ति पर हकपात न किया और चंगरेजीको शस्त्र-विस्तर साहाय्य दिया।

इस घटनाके बाद चंगरेज समापतिने शराबके नशेमें किसी सुसंस्मृतकी मार खाया था। नवाबने संवाद पाते ही आदेश निकाला—जिस चंगरेजको देखो, उसीको पकड़ कर, कैद करो। चंगरेज फ्रांस और डेगमार्ककी कोठियोंकी भांति और वहाँ भी सुमोता न देव फलतेकी चलते बने। किसीके पास कौड़ी न थी, सुतरां सहा विपद् पड़ी। यन्दीकी जय नवाबकी फौज चंगरेजीका माल घसकाव लट और नवाब यमीरचन्दकी फौजके पशुरोधसे काश्मिरवाजारकी कोठिके घाटम माहवकी होड़ लौट आयी, तब इस देशके लोगोंने माहव या सकल पलातक चंगरेजीकी आहारादि देनेकी ठहरायी थी।

इस समय विपद्का मूलकारण यमीरचन्द मान प्रेसिडेन्सीके चंगरेजोंने उनकी ही शास्त्रिका विधान किया।

उधर जिनोंने फलतेमें साफर आश्रय लिया था, उन्होंने मुहा विपदमें पड़ मिटर मानिकरामकी मेन्नाध्यक्षके सममिप्याहारसे मन्द्राज मेज दिया। यन्दीने मन्द्राजकी कौन्सिलमें पण्ड चंगरेजीकी दुरवस्था बतलायी। वहाँसे पाठमिरन गोफक, वाटसन और करनल क्राइव मद्रासकी तरफ चले। १५ वीं अक्टोबरकी क्राइवका क्राज फलते पड़च गया। मन्द्राजसे जो सकल पत्र लाये, क्राइवने वह कलकत्ते

भेजवाये। उन्होंने फिर वाटसन माहवसे मिल यमीरचन्दकी एक सतव्य पत्र भी लिया। क्राइवके ऊपर आदेश था—यदि नवाब इन सकल विपयोंका कोई प्रतिकार न करे, तो आप सुगिदाबाद और यन्दन-नगरपर आक्रमण करनेकी चटें। यमीरचन्द यह सकल पत्र नवाबके पास भेजनेमें डरे। यमीरचन्द २२० जनवरीको फमान झूटने मानिकचन्दकी फौज मगा कलकत्तेका दुर्ग अपने अधिकारमें कर लिया था। दूसरे दिन वाटसन माहव भी कलकत्ते पाये और मिटर डेक गवरनर बनाये गये।

१०वीं जनवरीको (१८५० ई०) यमीरचन्द सुगिदाबादसे कलकत्ते लौट मिटर ईकसे मिले। यह माघमें अपने दशक पुत्र दयानन्दकी भी ले गये थे। मिटर डेक, करनल क्राइव, पाठ मिरन वाटसन प्रभृति सकल ही कौन्सिलके स्टहमें बैठे। यमीरचन्द सबसे मिल भेंट बात चीत करने लगे।

उस समय युरोपमें फ्रांसोसिघी चार चंगरेजीमें युद्ध हो जानिकी सन्भावना थी। क्राइवने सोचा—इस समय नवाबसे लड़ना अच्छा नहीं किन्तु नवाब कलकत्तेके शयका संवाद सुन बहुत विगड़े थे। सुतरां चंगरेजोंने सेठोंकी मध्यस्थ बनाया। उन्होंने अपने विग्रहा कर्मचारी रथजित् रायको नवाब और क्राइवके बीच बात चीत चलानेके लिये नियुक्त कर दिया।

नवाब लय कलकत्ता जीत सुगिदाबाद वापस गये, तब माघमें यमीरचन्द भी रहे। वहाँ उन्होंने नवाबके निकट प्रियपात्र मणुलालने मिल अपना विग्रह विज्ञापन जमा लिया था। उधर कलकत्तेमें भी यमीरचन्दकी बहुत चोटियां रहीं। इसलिये वह चंगरेजके साथ नवाबका सहाय बढ़ानेके लिये सुगिदाबादकी गये थे।

उधर १० वीं जनवरीकी नवाबकी फौज मद्रासपर हो हुगलीकी और वहाँ और यामीसे चंगरेजीकी रसद रोक्नेका प्रयत्न करने लगी। लोगोंकी आदेश बुझा—कोई यामवासी किसी प्रकारका आयादि मद्र रमें बेश न सकेगा, चंगरेजी फौजका काम कोई कर

न सकेगा और योक्त होनेके लिये कोई घोड़ा या बैल दे न सकेगा।

क्लाइवने यह हाल देख रणजित् रायसे परामर्श लिया। उन्होंने नवाबको पत्र लिखनेके लिये कहा। सद्दुभाषसे पत्रका उत्तर देते भी उनकी फौज कलकत्ते पर झपटनेसे न रुकी। फिर २२ी फरवरीको सन्ध्याकाल नवाब अंगरेजोंके प्रतिनिधिसे बात चीत करनेपर स्वीकृत हुये। किन्तु उक्त समय पर आदेशका कोई पत्र पहुंचा न था। दूसरे दिन सुबेरे देखा गया—नवाब नगरके उत्तरांशमें खोर्नोका दृष्टादि लूट रहे हैं।

मराठा-खाईकी उत्तर सीमापर अमीरचन्दके भागमें नवाबकी फौजने आग्रह लिया था। मिस्टर वाटसन और क्राफ्टन अंगरेजोंकी ओरसे नवाबकी सहाय मिलने गये। पहले उन्होंने राय-दुर्लभसे मुलाकात की। उन्होंने अंगरेजोंसे अग्रह रख देनेकी कहा। किन्तु अंगरेजोंकी राजी न होनेपर वह भरे दरबारमें नवाबकी पास ले गये। अल्प-दिनमें कथा वार्ताके बाद अंगरेज लौटने लगे कि अमीरचन्दने इज्जतसे बताया—तुम्हारे पकड़ लेनेका परामर्श थाया है। इससे उन्होंने नवाबकी अनुमति न ली और चुपके चुपके छावनीकी राह पकड़ी।

परिशेषमें अमीरचन्द और रणजित् रायका मध्यस्थतासे ८वीं फरवरीको एक सन्धि हुई। नवाबने सन्तोषके चिह्नकी तरह भाडमिरल वाटसन और करनल क्लाइवको पदार्थिका उपहार पहुंचाया। उसी दिन अमीरचन्दने अंगरेजोंका सही किया हुआ पत्र नवाबकी सौंपा, किन्तु क्लाइवने इससे कहा था,—नवाबसे अनुरोध कर हमें चन्दननगर पर चढ़नेकी अनुमति दिला दीजिये। फिर नवाबका कोई निवेध पत्र न मिलनेसे १६ वीं फरवरीको क्लाइव फ्रांसीसियोंके विपक्षमें खड़े गये। किन्तु फ्रांसीसियोंने ठीक उसी समय पर तारनम्य लगा नवाबका निवेधपत्र पहुंचाया।

अमीरचन्दके शेष व्यवहारसे समुद्र को अंगरेजोंने उन्हें वाटसन साहबकी सहायकारितामें लगाया।

नवाबने समेन्य भाते समय अग्रहीपमें सुना—अंगरेज चन्दननगरपर चढ़नेका सत्याग कर रहे हैं। उन्होंने फ्रांसीसियोंके साहाय्य रक्ष्या और एक दस सैन्य भेजा। फिर अमीरचन्दसे नवाबने पुछाया—अंगरेज सन्धिके नियमादि माननेकी प्रसन्न हैं या नहीं। अमीरचन्दने उत्तर दिया—अंगरेज किसी प्रकार सन्धि न तोड़ेंगे।

मिराजने इनकी बातपर आग्रह हो कहना भेजा हमने पहले जो फौज भेजी वह फ्रांसीसियोंके साहाय्य नहीं। अंगरेजोंने भी उत्तर दिया—हम नवाबकी सन्धि मित्र फ्रांसीसियोंसे न खटेंगे।

किन्तु क्लाइवने सोचा—चन्दननगर पर आक्रमण मारना एकान्त आवश्यक है। इसलिये नवाबका निवेध रहते भी उन्होंने फ्रांसीसियोंके विरुद्ध फौज बढ़ायी। उस समय अमीरचन्दने अंगरेजोंका विशेष स्तार्थ साधन किया था। इसने नवाबके हिन्दू सेनापतियोंसे कह दिया था—पाप अंगरेजोंसे न सङ्घियेगा। २४ वीं मार्चको अंगरेजोंने चन्दननगर पर आक्रमण किया। फिर नवाबने उसी समय सुना—हमें राज्यभूत करनेके लिये पठानोंकी फौज आती है। उनके भयको दरिखोमा न रही। उन्होंने क्लाइव और वाटसनको समाचार दिया—बिना दिन पायवे मेरी रघनेकी हमारे एकान्त इच्छा है।

अल्प दिनके मध्य हो अंगरेजोंने सुना—प्रधान सेनापति मोरलाफर नवाबके आचरणसे बहुत विरक्त हो गये हैं। क्लाइवने वाटसन साहबका कहना भेजा, कि उस सुयोगमें मोरलाफरके साथ उन्हें बमुल्ल बढाना आवश्यक है।

इधर कितने ही हिन्दू समासद् नवाबकी राजर-भूत करनेके लिये गुप्तके चुपके मात्रिम चलाते थे। अमीरचन्द भी उन्होंने रहे और वाटसन साहबकी कथा-पक्का समाचार देते गये।

२३ वीं अपरेलको उन्होंने नवाबके लक्ष्मी गामक एक सेनापतिकी अपने दममें मिलतो देवा था। उन्होंने बताया—नवाबने बहालसे अंगरेजोंकी निहालनेके लिये कल्पना की है। किन्तु उनके प्रधान-प्रधान

कर्मचारी उनमें लड़नेकी तैयार हैं। इसलिये नवाबके घटने जाने पर चंगरेज सुरगिदाबाद से मक़े में। हम भी चंगरेजोंकी दयोषित साहाय्य देनेपर प्रस्तुत हैं। किन्तु सुरगिदाबाद कीतनपर उन्हें, हमीको नवाब बनाना पड़ेगा।' चमीरचन्दने सेनापतिको यह बात कन्धेके चंगरेज हाकिमोंसे कही। क़ादर हम प्रस्तावपर सम्यक्त हुये। उधर वाटस साहबने मीरजाफरकी भी मिला लिया। चम्पकी खिर बुधा—सुरगिदाबाद कीतने पर मीरजाफर हो नवाब बनें। फिर मीरजाफरने वाटस साहबकी कहला भेजा—'हम साजिगकी बात चमीरचन्दके काममें न पड़े। क्योंकि हमनेसे यह विम्वट खड़ा कर सकती है। वाटस साहब मीरजाफरकी बात मानते भी चमीरचन्दसे सक्त विषय बताने पर बाध्य हुये। उन्होंने सोचा—'हमारा चट्ट पच्छा नहीं। मीरजाफरके नवाब बननेसे वाटस साहबका ही भाग्य लगेगा। चमीरचन्दने चंगरेजोंसे कहला भेजा,—'नवाबके खजानेमें जितना रूपया हो, उसमें सेकुड़े पीछे पांच रूपया और जितना लघाइरात हो, उसका चतुर्थांश हमें देना पड़ेगा। यदि चाप यह बात न मानेंगे, तो हम साजिगकी नवाबके सामने पोल देंगे।' चमीरचन्दकी चमिचमि चाल होती ही वाटस साहब चंगरेज चतिग्रय चिगामें पड़। उन्होंने कलकत्तेकी कोमिंसलकी लिख भेजा—'चमीरचन्द यह दारुण पादमी हैं। उनकी दो चालाकियां मान्म दुर् हैं। एकबार उन्होंने शयदुर्लभके साष्टाभ्यसे नवाबके खजानेका कितना ही रूपया मीरजाफरकी चौपनेकी छेदा की थी। फिर नवाबनेनय चंगरेज दिमाधकोंकी पारितोषिक देनेके लिये विस्तार पर्य दिया, तब उन्होंने चजित् रायसे मिल हमें चामुसात् कर लिया। दोनोंके दलमेंलभ यह काम होतें भी चमीरचन्दने चजित् रायकी छोड़ी न देछाये। उन्हें चामुसा दूना—कहाँ चंगरेजोंकी सुबर न लग जाये। हमीमें चजित् रायका रुंछय तोड़नेके लिये उन्होंने नवाबमें पाठेग भी निकलवाया था।'

फिर चपरापर कार्यक्षि वाटस साहब और मीर-

जाफरने एक सम्मिपत बनाया। उसमें लिखा था—'चंगरेज एक करोड़, हिन्दू १० लाख, चामेनिवत १० लाख और चमीरचन्द ३० लाख रूपया पायेंगे। किन्तु चंगरेज हाकिमोंने हम पक्षमें काट काट लगा। चम्पने लिये ३० लाख रूपया बड़ा दिया। हिन्दुओंकी तोचही लगव २० लाख चरमनिवोंकी टगकी लगव ८ लाख, मिवाइयोंकी माटे २२ लाख और दूसरे लोकरोंकी भी इसी हिसाबसे रूपया मिलना ठहरा। केवल चमीरचन्दके नाम ही शून्य पड़ा। क़ादर प्रकृति मवने परामर्श किया—'चमीरचन्द बड़े धूर्त हैं। उनके साथ भी ऐसी ही चालाकी न करनेसे काम न बनेगा। यह हमें डरा रूपया लेना चाहते हैं। इस दोषकेलिये उन्हें भोगियारोसे धोका देना चाहिये।'

फिर दो पक्ष मिले गये—एक सकेद-चोर एक सास। सकेदमें मीरजाफरकी सम्मिका जान था। उसपर चडमिरल वाटसन और कमिटीके सभ्यगणने हस्ताचर किये। सास कागज चमीरचन्दकी दल्ले लिये रहा। किन्तु हमपर वाटसन साहब और कमिटीके सभ्यगणने चपगी सही न दी थी। केवल क़ादरने ही हस्ताचर किये। फिर क़ादरने सोचा—'गायद-चमीरचन्द वाटसन साहबकी सही न देख यह पक्ष लेनेसे हिलकेगे। इसीमें उन्होंने लुसिडटन नामक किमा कर्मचारीने वाटसन साहबके हस्ताचर बनवा दिये। इतभाय चमीरचन्दने वाटसन साहब और क़ादरकी सही देख सास पक्ष से लिया।

उधर चोरतर साजिग होने लगा। नवाबकी भी उसका चामास मिल गया। चंगरेजोंने नशरकी समुष्ट रूपनेके लिये स्काफटन नामक एक व्यक्तिको नियुक्त किया। उसने नवाबकी मादूम बुधा था—'चंगरेज चिरकान हमारे मिल बने रहेंगे चोर की चनिट न करेंगे।

ऐसी मुहटके समय चमीरचन्द भी चपरा गये। उन्होंने चम्पकीतरह समझ लिया था—'चंगरेजोंकी हमारा विनाश नहीं, वह चनायाच ही पाटा देंगे।' चमीरचन्दने कोमलके गाय नवाबकी सुभादा—'फ़ाग्वीसो चोर चंगरेज मिलकर मोत ही चामे

सहेंगे। यह मंथ देखा इन्होंने अपना प्राण्य ४ साख (जो रूपया कलकत्ते से उनका घर लुट नवाबकी फौज ले गयी थी) और वर्धमानके महाराजको वरण दिया हुआ साढ़े ४ साख रूपया यानिके लिये नवाबने आदेश निकलवाया।

इसीसमय वाटस् साहब अमीरचन्दके लिये बहुत चिन्तित हुये—यह कब क्या उपद्रव खड़ा कर दें। वाटस् और रक्षाफटन दोनोंने परामर्शसे ठहराया—अमीरचन्दको सुरगिदाबादसे इस समय हटा देना ही आवश्यक है। रक्षाफटनने हलसे पाकर कहा—‘इस समय आपको सुरगिदाबाद छोड़ देना चाहिये। क्योंकि यहां गड़बड़ पड़नेसे वाटस् साहब तो छोड़ेपर चढ़ पनायास ही भाग जायेंगे, किन्तु आप हल होनेसे जवद जवद निकल न पायेंगे। इसलिये अविवक्ष्य आपको कलकत्ते जाना पड़ेगा। किन्तु उससमय भी यह नवाबके खजानेसे अपना रूपया धा न सके थे। इन्होंने रक्षाफटनसे भी यह बात बता दी। रक्षाफटनने अमीरचन्दसे कहा—‘यह रूपया न भिक्षुनेसे आपका कोई मुकसान न होगा। नया बन्दोबस्त होते ही आप प्रधान कीर्षाध्यक्ष बनावे जायेंगे।’ इसीप्रकार जाना प्रलीमन देखा यह कलकत्ते पहुँचाये गये।

यथासमय पलाशीके समरक्षेत्रमें गिराजके सोभाग्यका सूर्य चिरदिनके लिये अक्षमित हुआ। अंगरेज बङ्गालके सर्वसमय कर्ता बने। अमीरचन्दने भी समझा, उनका भाग्य खुल गया। शीघ्र ही ३० साख रूपया मिलना क्या कम सुखीकी बात थी! अमीरचन्द झाड़वके साथ सुरगिदाबाद गये। मीरजाफर बङ्गालके नवाब बने। उस समय झाड़वने ‘प्रकृत’ सन्धिपत्रके अनुसार सकल विषय निष्पत्ति करनेकी बात सठायी। मीरजाफरके भवनमें मन्ना भरो। झाड़व, वाटस्, रक्षाफटन, मीरन, रायदुल्लभ और अमीरचन्द उपस्थित हुए। सब लोग यथास्थान बैठे, किन्तु अमीरचन्द कुछ दूर रउते गये।

सफेद कागज़की सन्धिके अनुसार एक-एक कर सकल विषय पूरे किये गये। अब अमीरचन्दकी बारी आयी। ये कितने ही सुखस्त्रर र रहे थे। सब

लोग सोचने लगे कि इस समय कैसे अमीरचन्दको अंगरेज धोका देंगे। इतनेमें ही चतुर-प्रकृति रक्षाफटन साहब भटपट हंसते हंसते हिन्दीभाषामें बोले सठे—‘अमीरचन्द! साखकागुज जानी है। आपकी कुल न मिलेगा।’ इस बातसे अमीरचन्दपर मानो वल्ल टूट पड़ा। साखकागुजकी जानी सुनते ही और अपने नामकी आशा न रहते ही यह निश्चय हो गये। समस्त शरीर कांपने और मत्था घुमने लगा था। यदि उस समय कर्मचारी पकड़ न लेते, तो अमीरचन्द निश्चय भूमिपर गिर संज्ञा छो देते। नौकरोंने बड़े कष्टके साथ इन्हें पालकी पर बैठा कर घर पहुँचाया। फिर कोई एक घण्टे निश्चय रहनेके बाद उन्मादका लक्षण देख पड़ा। उस समयसे अमीरचन्दका मन बहुत बिगड़ गया था। आजीवन यह आक्षेप न मिटा—‘जिसके निम्ने धन, जन, सहाय, सम्पत्ति सब कुछ गंवाया, उसीने हमारी और दृष्टिको न सठाया और धोकेमें भी फंसाया।’ फिर जब यह झाड़वसे मिले, तब साहब पञ्जानपदन हो कहने लगे—‘अमीरचन्द! तुम्हारा मन बिगड़ गया है। अब तुम तीर्थयात्रामें मनमय करो।’ अमीरचन्द झाड़वके कहनेपर तीर्थयात्रा करने निकले। राहमें कभी यह सोते और कभी गाते थे। इस घटनाके डेढ़ वर्ष बाद १७५८ ई० की ५वीं दिसम्बरको इन्होंने इहलोक छोड़ दिया।

अमीर्दी मोलाना—अपने समयके एक बहुत अच्छे कवि। ईई शान्तके तहरान् नगरमें इन्होंने कब लिखा था। याह इसमारत सुनोके कितने ही सम्पीधे इनकी सगिठ मित्रता थी। किन्तु इनसे याह कवासुहीन नूरवख्शी जलते थे। १११८ ई० की किसी रातके समय उन्हींने इन्हें मार डाला था।

अमेठन (हि० ए०) उद्देहन, ऐंठन।

अमेठना (हि० कि०) उद्देहन करना, ऐंठना।

अमेठना (हि० लि०) अमेठना-जैना, ऐंठना, मरोड़दार।

अमेठना, अमेठना ईवी।

अमेत—गुजरात प्रान्तके रवाकाठा जिलेका एक छोटा राज्य। विप्रकल साढ़े ३६ वर्ग मील है। प्रतिवर्ष

चंगरेज सरकार और मायकादको कर देना पड़ता है। उमैत दो भागोंमें विभक्त है। उससे ५ घामोंका एक भाग चंगरेजी राज्यके छोड़ा और दूसरा घामोंका भाग रेशाकांटे जिलेमें पड़ता है।

उमैद कवि—एक दक्षिणभारतके कवि। इनके 'नखविष' की श्लोक बड़ी प्रशंसा करते हैं। यह माहजहापुरके पास किसी गांवमें रहते थे।

उमैतना (हिं० क्रि०) उन्मीलन करना, खोलना, बताना।

उमैश ( सं० पु० ) उमाके पति, शिव।

उमदतुल उमरा—कर्णाटकके नवाब सुदह्मद अपनी खान्दके ल्येठ पुत्र। १७८५ ई०में इन्हें अपने पिताका राज्य मिला था। किन्तु १८०१ ई०की १५वीं जुलाईको यह चल बसे। इनकी मृत्युके बाद कर्णाटकका शासनभार सेनेको चंगरेजोंने छेड़ा लगायी थी। किन्तु इनके उत्तराधिकारी अब्दुलसम चंगरेजोंके प्रस्तावपर सन्तुष्ट न हुये। उमदतुल आहमद अब्दुलसुलेमानकी राजी कौनपर चंगरेजोंने नवाब बना दिया।

उमदतुलसुल्तान—नवाब अब्दुलसम की पत्नीका एक पितामह।

उम्मा, उम्मा एवम्।

उम्पिका ( सं० स्त्री० ) शास्त्रिणां विज्ञेय, किसी कियका चावल। यह मधुर, धिक्क, सुगन्ध, कषाय, रूप और वात, पित्त तथा कफकी नाश करनेवाली है।

( राजनिघण्टु )

उम्बर ( सं० पु० ) उम्-उ-पर। १ देहली, चौखट। २ एक गन्धर्व। ३ उदुम्बर वृक्ष, गूलरका पेड़।

उम्बर गांव—बम्बई प्रदेशके धाने जिलेका एक बन्दर। यह अक्षा० २०° ११' ५५" उ० और द्राधि० ७२° ४१' ४०" पू० पर अवस्थित है। बम्बई प्रदेशके नामा स्थानोंमें यहां माल बाया-जाया करता है।

उम्बर गांव—बम्बई प्रान्तके धाने जिलेका एक ग्राम। यह दहाशु तहसीलमें अगता और सेवजी रिसवेटेमनसे २ कोस पड़ता है। उम्बरगांवसे सेवजी तक पक्की सड़क बनी है। यहां कचहरी, पुलिस, डाक और मसजिदों सुजोना दफ्तर है। यात्रियोंके टिकनेका संयत्ता और जहाजोंके पढ़नेका स्कूल भी यहाँमान है। दक्षिण किनारे पोतंगीज नदी बहती है। १८१८ ई०में

यह बहुत अच्छी इमारत रही। जो तीनोई बरानेका खरर स्थान था। एक कोम दक्षिण धेरो नीर है। यहां १८५६ ई०में मगनबाई नाथी एक पारसी रमणीने मन्दिर्मन्दिर बनवाया था। फिर १८२८ ई०की पारसी स्त्रियोंने बन्दा करके एक शास्त्रिमन्त्र भी खोला था। पारसियोंकी पचावत एक इस्लाम बनाती है, जिसमें जन्म चवत्ताकी विद्या दी जाती है।

उम्बरा—बम्बई प्रान्तका एक ग्राम। पाश्चात्य इसे उमरा कहते हैं। १८१४ ई०में राइकूट-वृत्ति इन्टरमिडियरेनसे उत्पन्न किया है। उक्त विषय नवसारीके ताम्रकेलकोंमें लिखा है।

उम्बिकां, उम्बो शब्द।

उम्बी ( सं० स्त्री० ) उम्-बा-क गोरादिलाल डीप। १ यमानी, अजवायन। २ अर्धपत्र एवं टहके अमलसे संभूत यह तथा मोधूमकी मन्त्रो, गादा।

उम्बजमील—हर्षकी सुता, चम्बु सुकियांकी भगिनी और चम्बुलहर्षकी पत्नी। इनके पति सुहृदसे प्रेमा रखते थे। इन्होंने उसी घृणाको उत्तेजित किया। इसीसे करान्में पति और पत्नी दोनोंके विद्वह एक आपत्ति पायी है।

उम्ब मन्त्री—एक प्रधान सुवत्तमान साधु। इन्होंने गुज्जोमें जन्म लिया था। यह अपने तपोव्रतसे बहुत प्रसिद्ध हुये। सुलतान सुहृदद प्रायः इनसे परामर्श सेने जाते और सन्धानार्थ कनो सामने साधन न लगाते थे। १००० ई०के समय यह विद्यमान रहे। उम्ब मन्त्रिणा—चम्बु उमयकी कन्या और सुहृदकी पत्नी। यह सुहृदकी सब पत्नीयोंसे पीछे १०८ ई०में मरी थीं।

उम्बट ( हिं० पु० ) देगविज्ञेय, एक सुवक्त्र। यह भाकवेमें पड़ता है।

उम्बत ( सं० स्त्री० ) धार्मिक सम्प्रदाय विज्ञेय, एक मनुष्यकी किरक।

उम्बती ( सं० वि० ) धार्मिक सम्प्रदायसुत्र, बिही मन्त्रकी किरकमें मिला हुआ। अग्निवासी या नास्तिहकी 'साधयती' कहते हैं।

उम्बर ( हिं० ) उम्बो शब्द।

उम्मी (हिं०) उम्मी देखो।

उम्मेद (फा० स्त्री०) आशा, विश्वास, तमशा, भरोसा। “यह हम उम्मेद है” (श्रीकृष्ण)

उम्मेद खान—बहालवाली शासक शायस्ता खानके पुत्र।

१६५०-६५ ई०को गायस्ता खानने इन्हे पैदल फौजका नायक बना चटग्राम जीतने भेजा था। इन्होंने पाराकानियोंका कितने ही खानोंपर हरा चटग्रामपर एकाएक अधिकार कर लिया।

उम्मेदवार (फा० पु०) १ आकाही, सुतबन्ना, पास तकनेवाला। २ ययलम्बी, मातहत। (वि०) ३ आगा-विष्ट, जिसे उम्मेद रहै।

उम्मेदवारी (फा० स्त्री०) सृष्टालुता, आरजुमन्दो, चाहना।

उम्मेद सिंह—१ राजपूतानाप्रान्तस्य कोटा राज्यके महाराज। यह १८४५ ई०में गद्दीपर बैठे थे। अजमेरकी ‘मियो कालेज’में इनकी मिथाका कार्य सन्पादित हुआ।

२ राजपूताना प्रान्तस्य कोटा राज्यके एक राजा। इनकी पिताका नाम गुमानसिंह था। उन्होंने देव-लोक चलते समय इन्हे प्रधान मन्त्री जालिमसिंह भालाकी सौंपा। उस समय इनका वयस केवल दस वत्सर ही रहा। १८२० ई०में राज्याधिकार मिला था। जालिमसिंहने मराठोंका उत्पात अपनी प्रजापर करने न दिया। १८६० ई०में करनल मानसन होलकरसे हार कोटी पीछे फिरे थे। किन्तु नानाप्रकार साहाय्य पाते भी वह नगरसे दूर ही रुके गये। कारण उनके वहाँ पहुँचनेसे होलकर विद्ध सकरी थे। १८०४ ई०में अंगरेज गवरनमेण्टने होलकरकी चार परगने जालिमसिंहको दिये, जो पहले उनके ठेकेमें थे। कारण उन्होंने अंगरेजोंकी पूर्ण साहाय्य दिया और सहायके समय मित्रवत् व्यवहार किया था। किन्तु प्रभुमत्त जालिमसिंहने उनकी सनद गवरनर जनरल साईं डेविल्लससे काह महाराज उम्मेदसिंहके ही नाम लिखायी। १८०५ ई०को अन्याय राज्योंके साथ कोटा भी अंगरेज गवरनमेण्टके अधीन हुआ था। सम्प्रत्यक्ष अन्याय

विषयोंके साथ यह भी लिखा गया—कोटाके प्रधान मन्त्रीका पद जालिमसिंहके सन्तानकी छोड़ दूसरा या न सकेगा।

३ राजपूताना प्रान्तस्य बूंदी राज्यके एक महाराज। १८०० ई०में अपने पिता महाराज बुधसिंहके परलोक पहुँचनेसे इन्होंने वसुधामय लोड़ बूंदीपर अधिकार समाया था। उपनि० देखो। किन्तु पारसिक महाराज ईश्वरी सिंहने आक्रमण कर इन्हे मार भगाया। उम्मेद सिंहने होलकरके साहाय्यसे १८०६ ई०में ईश्वरी सिंहको हराया और बूंदी पर दबाया था। इसके उपलक्ष्यमें पाटनका परगना होलकरकी भेंट मिला। फिर लयपुरके महाराज सयायी माधवसिंह बूंदीपर चढ़े थे। किन्तु उन्होंने जो वार्षिक कर ठहराया, वह अगिन्न दिन न चल पाया। १८१६ ई०में यह अपने पुत्र अजितसिंहको राज्य सौंप तोयेंसेवनार्थ चलते बने।

उम्प (सं० स्त्री०) उमराया चतव्या, उमा-यत्। विभातिपल्लवादीनामकः। वा ३/५/४। श्रीमीन, पतला या हरिद्राका चैत्र, अलसी या हल्दीका छेत।

उम्प (सं० स्त्री०) ययम्, शिन। युवकका ‘कम उम्प’ या ‘नो उम्प’, आजीवन क्रेशकी ‘उम्प भरका पैमाना’, हृदकी ‘उम्परोदा’, दाँवजीवनकी ‘उम्पदुह’, जीवनयात्राकी ‘उम्पका प्याल’, आजीवन बन्दोकी उम्पकेदी घोर आजीवन बन्धनकी उम्पकेद कहते हैं।

उम्पबन्द बरवार—उदयपुरके एक दीवान। १०५८ ई०में उम्पेनके पास राजपूतों और मराठोंका युद्ध होनेपर राणा उरमो हारे थे। उदयपुरकी मेधिपारिके चेतनेपर इन्होंने बड़े बुद्धिबल और पराक्रमसे बचाया। उर्—उर० उक्त० मेट् मोत्रधातु। यह गमन करने या चलने-फिरनेके प्रथममें व्यवहृत होता है।

उर (सं० पु०) उर्-ऊ। १ मेष, मिटा, मेढ़। २ एक ऋषि। इन्हे लोग वातवंशीय कहते हैं।

उरः (सं० स्त्री०) उर-पशुन्-किष्ट। १ ययः, हृदय, दिक्ष, छाती। “नरं शय उरो बंकारयि” (अ० १/१/५५) (वि०) २ उत्तम, बढ़िया, अच्छा।

उराचत (सं० स्त्री०) १ उरोप्रप, मोटा लघुप्र, छातीकी चान। २ अयस्य, तपेदिक।

उरःचतुर्कास (मं० पु०) उरःकासरोग, तपेदिकी  
साक्षी।

“उरःचतुर्कासः उरःचतुर्कासः”

उरःचतुर्कासः उरःचतुर्कासः (निरास)

उरःपत्रिका (मं० स्त्री०) उरः सूर्यमय, कन्,  
टाप चत इत्यम्। सुखाहार, छातीपर मटकनेपासे  
भोतिपोंकी माला।

उरःमूल (मं० स्त्री०) वचः, हृदय, दिल, छाती।

उरई (हिं० स्त्री०) १ उमीर, चम। २ युक्तमानके  
जालोन लिसेकी एक तहसील चौर नगरी। यह  
पचा० २५° ५८' ५" उ० तथा द्राधि० ७८° २८' २५"  
पू०में कासपीचे भांसी जानेवासी सड़कपर अवस्थित  
है। पक्षे उरई छोटीसी बसती थी। किन्तु १८२८  
ई०में जालोन लिसेका इंजकाटैर बननेपर यह बहुत  
गोत्र बढ़ गयी। यहां युक्त प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष  
पड़ा है। कपड़ेका गुनाई पधिका होती है। ह्यूयो-  
राजके समय माहिम राजा थे। उरईका मैदान  
मगधर है।

उरक (मं० पु०) गिवका एक परिचर।

उरकना (हिं० स्त्री०) ठिटकना, ठहरना, रुक  
रहना।

उरग (मं० पु०) उरसा गच्छताति, उरस-गम-उ  
मनोपः। “उरसी नोच” (वा ११।१८८ पार्श्व) १ सर्प,  
साप। २ शीपक, सोसा। ३ पशुपागच्छत। “उरस  
निशिताकमर्तौनयपारः” (जीमिन) ४ भागकेसरहृत्त।

उरगवृद्ध (मं० स्त्री०) सर्पवृद्ध, सांपका विल।

उरगवृद्धी (हिं० स्त्री०) भारयटिविमेय, एक सूटी।  
इसके द्वारा जुलाहे भूमिमें ताना जगानेके क्रिये  
बिद्ध बनाते हैं।

उरगप्रतिमर (मं० स्त्री०) वैवाहिक पद्धतीयकके  
स्नानमें सपर रचनेवाला, जो यादीकी रंगडोके बहने  
साप सपेटे हो।

उरगभूषण (मं० पु०) उरगकी चागूयककी भांति  
धारण करनेवाले महादेव।

उरगराज (मं० पु०) उरगके राजा मिय वा बाहुकि।

उरगसता (मं० स्त्री०) आगवली, धागकी मिस।

उरगसारचन्दन (मं० पु०-स्त्री०) चन्दनविशेष, बिहारी  
जिष्मका चन्दन।

उरगस्थान (मं० स्त्री०) उरगाना सर्पाकी आश्रम,  
धातान।

उरगादि, उरगादि दीधी।

उरगाय (हिं०) उरगाय दीधी।

उरगारि, उरगाय दीधी।

उरगाशन (मं० पु०) उरगान् सर्पान् पश्याति, उरग-  
शय-सु। १ सर्पभक्षण गहड़। २ मण्डर।

उरगास्य (मं० स्त्री०) उरगदारणविशेष, किमो बिज्रहा  
कायका।

उरगिनी (हिं०) उरगी दीधी।

उरगी (मं० स्त्री०) नागिनी, सांपन।

उरगीन्द्र, उरगाय दीधी।

उरगीन्द्रसमन (मं० स्त्री०) नागकेसर।

उरङ्ग (मं० पु०) उरसा गच्छति, उरस-गम-उ  
निपातनाम् साधुः। सर्प, साप।

उरङ्गम (मं० पु०) उरस-गम-राष्ट्र। सर्प, साप।

उरङ्ग्य (मं० पु०) युद्ध, रामगर।

उरज (हिं०) उरगे दीधी।

उरजाति (हिं०) उरगे दीधी।

उरभ्रना (हिं० स्त्री०) भ्रंशना, गांठ फाटना।

उरण (मं० पु०) उर-व्यप् धातो-रुच रवाः। उर-  
व्यप्। उर १।१० १ मिय, भेड़ा, मिड़ा। (उर १।१०)

२ मिय, बादल। ३ एक विदोक्त चतुर। उरि इन्द्रने  
मारा था। (उरि १।१०) ४ दहप्रहस, चकोदिया।

(स्त्री०) ५ रोप्य, चांदी। ६ ब्रम्हदेवदेवके पाने  
लिसेका एक नगर। यह पचा० १८° ४२' ४"

उ० तथा द्राधि० ७२° ५८' पू०-पर बम्बई नगरसे  
प्रायः ४ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। यहां

पनेक धनवान् रहते हैं। चिकित्साभय, पाठशाला,  
आकषर, मन्दिर, गिरजा चौर मगजिद विद्यमान हैं।

उरवक (मं० पु०) १ मिय, भेड़ा। २ मिय, बादल।

उरवा (मं० स्त्री०) उरवी, मिपी, भेड़ी।

उरवाध (मं० पु०) उरवप्य मेघपदाधीन पुष्पं वल्ल।  
१ दहप्रहस, चकोदिया। २ पारसपत्र, कटोती।

उरणाधिक, उरणाधिक देखो।

उरणाधिक, उरणाधिक देखो।

उरणाधिक, उरणाधिक देखो।

उरद (हिं० पु०) धान्यविशेष, एक धान। नर देखो।

उरदी (हिं० स्त्री०) १ सुदृढ मांसविशेष, छोटा उड़द।

इसे पायाद मांसमें कोते हैं। पात्रिन वा कार्तिक-

में यह तैयार हो जाता है। बीज कृष्णवर्ण रहता

है। एक तरफकी उरदी तीन पक्षमें ही कटती है।

२ पात्रविशेष, बालीके बीधका मिश्रण। ३ यन्त्र-

विशेष, एक ठप्पा। ४ पुलिस, पलटन या दूसरे मह-

कमेके सिपाहियोंकी पोषाक। ५ लामिविशेष, एक

कीड़ा। यह पशुपति प्रायः चिपट जाता है।

उरध (हिं०) ऊपर देखो।

उरधारना (हिं० वि०) छिटकाना, छटकाना, कीड़ देना।

उरना (हिं०) उर देखो।

उर-तरप (हिं०) उड़प देखो।

उरप्यजी—गुजरातके सैयद सुसन्तमानोंकी एक शाखा।

यह लोग सैयदबुध याकूबके वंशधर हैं। सैयद बुध

सन सुप्रसिद्ध पञ्जारीछो बीरके भतीजे थे, जिनके

कारण पलनेरके तारागढ़ दुर्गपर सबसे पहले (११६५

ई०) इसलामका झण्डा उड़ा। सैयद बुध गुजरातके

सुल्तान अहमदके समय (१५११—१५२१ ई०) जीवित थे।

उरप, उर देखो।

उरवसी, उरवसी देखो।

उरवी, उर देखो।

उरभ्र (सं० पु०) उड़ उलट भ्रमति, भ्रम-ड।

१ मेघ, मेड़ा। २ विषधर कीटविशेष, एक जहरीला

कीड़ा। (सहज)

उरभ्रसारिका (सं० स्त्री०) वातप्रकृति कीटविशेष,

एक जहरीला कीड़ा। इसके काटनेसे वातज रोग उठ

उड़ते होते हैं। (सहज)

उरमना (हिं० स्त्री०) भूमना, लटकना।

उरमाना (हिं० स्त्री०) लटकना, लटकाना।

उरमाल (हिं० पु०) रुमाल, चंगोला।

उररी (सं० ध्य०) उर बाहुलकात् उररी। १ पक्षी-

कार। स्त्रीकार। मधुर। अच्छा! हाँ। २ विस्तार।

बढ़ावा। चलने दो। बढ़ो।

उररीकार (सं० पु०) उररी-क-प्रज्ञ। १ पक्षीकार,

मधुरी, वादा। २ प्रवेग, दम्भ, धृष्ट।

उररीकृत (सं० वि०) पक्षीकृत, मधुरयुक्त। २ विधा-

रित, बढ़ावा हुआ।

उरल (सं० वि०) उर बाहुलकात् कल। १ गति-

युक्त, चलनेवाला। (हिं० पु०) २ मेघविशेष, एक

मेड़ा। इसके दाढ़ी लटकती हैं।

उरला (हिं० वि०) १ पिछला, जो पार्श्व न हो।

२ बहुत, निराशा।

उरल्य (सं० वि०) उरल्य-यः। उरल्य-यः। १ उरल-

सहित, उरल्यमें भरा हुआ (दिगादि)। (पु०) २ एक

पक्ष्य जाति। सम्राज प्रदेशके मध्यवर्ती पक्ष्य

गिरिमें इस जातिके भोग रहते हैं। यह एक स्थानमें

ठहर नहीं सकते। पहाड़ोंमें घूम-घूम कर इन्हीं गिरि

मारना बहुत अच्छा मगता है। माथमें कुङ्कर और

हाथमें धनुर्वीण रहता है। यह मध्वर्षी बड़ी चूषा

रखते और देखते ही दूर भागते हैं। यदि कोई उसे

छू लेता है, तो अपनी जातिसे उसे डाय धोना पड़ता है

और नियमित दण्डके अनुसार अपने क्रियेकी रीत

है। मध्वर्षी लूनेवाली दूसरी जातिकी यह पक्ष्य स्व

सम्भक्त है। पिता और माताके हाथमें सब काम

करनेका भार रहता है। उनकी आदिग मत्तानकी

प्रायः खोते भी पालन करना पड़ता है। यह सम्भवतः

लाजुक और लम्बकृति जाति है। दूसरी जातिमें

यह किसी प्रकार मिलना नहीं चाहते।

उरविज (हिं० पु०) मद्रास, मिराज।

उरग (सं० पु०) एक पति प्राचीन अतपद। पादिनि-

ने तिकादि, भगादि और वदकादि गणमें इस

स्थानका उल्लेख किया है। मत्प (११०४) और

ब्रह्माण्ड (११०४) पुराणमें इस जनपद और इसके

निवासिगणका नाम 'उरग' कहा है। रामपुराणमें

उरग (११०४) और मार्कण्डेय तथा वायुपुराणमें

उरग, उरग, वा उरग आदि नाम मिलता है।

यह स्थान अनुमानसे महाभारतकी 'उरग' देश



उत्तम प्रकृति है। अग्निधार देव मानेपर तबिहटस्य  
उरगके राजाने अग्निमे धाकर युद्ध किया था।

(भाग, कथा २६ पृ०)

मायाय प्राचीन भूमि का टोसेमिने इस स्थानको  
वर्ग (Warga Regio) बताया है। (Ptolemy,  
Geog. VII I, 45) चीना इसे उ-ल-गो कहते थे।  
चीना परिव्राजक युपन् युयङ्ग यहाँ पाये थे।  
उनके समय यह राज्य २०० लि (प्रायः साढ़े तीन  
मी मील) विस्तृत था। प्रधान नगर एक मौसने  
अधिक था। उरग उस समयपर काश्मीर राज्यके  
अधीन रहा। युपन् युयङ्गने राजधानीसे प्रायः  
पाच कोस दूर अगोक्षनिर्मित एक शोध स्तूप देखा  
था। उससे निकट महायाग मतावलम्बी कई शोधरहते  
थे। इस जनपदका नाम बालकस्य 'रग' चलता, जो  
सुजम्बराबादसे पश्चिम प्रकृता है। इस प्रदेशका प्रधान  
नगर मानसर, नोगहर और जलमगध वा इरिपुर है।

इसके पश्चिमासी पश्चिमय वलमासी और दुर्दाल  
होते हैं। जलवायु मनोरम है।

उरखद (सं० पु०) उरो छावने अनेक, उरस्-  
खद-खि-य। कवच, बख्तर।

उरस्, लः ३५।

उरस (सं० त्रि०) १ दृढ़ एवं प्रमत्त वचःशुक्त,  
मज्जुत और चौड़े होनिवाला। (हि० वि०)  
२ नीरस, फोका, जो खादुन हो। ३ वचस्यस्य, चीना।

४ मरनेके दिनका मिला। यह चलभरमें प्रति  
वर्ष राजा मुईयुद्दीन बिर्तीके मरपदिवस पर लगता  
है। यहाँ गुजरात और बम्बईके मोमिन अधिक आते  
हैं। कितनी ही भेंट चढ़ती है। रामको दरगाहमें बह-  
भूय यथा बिना रोमने को जाती है। माना होता  
और चढ़ सकता है। लोग मोल बांधकर अपने गरीबको  
तलशारी तथा कटारोंसे घोटते और दरगाहको आते  
और नाचते कुमते हैं। किन्तु मृत श्राध्दे मतापक्ष  
उनको शोच नहीं लगती। बम्बई प्रांतके घाना नग-  
रमें भी इसी नाम का एक छोटी दरगाहका उरस प्रसिद्ध  
है। वैशाख मासमें कोई एक हजार मोमिन यह मिला  
देखने आते हैं।

उरसना (हि० त्रि०) बहल चीना, बिलना-बहना।  
उरसाना (हि० त्रि०) उद्देग बढ़ाना, बहल बढ़ाना।  
उरसिज (सं० पु०) उरसि वचःखले आदरे, उरस्-  
जन-उ। स्थान, औरतोंकी छाती।

उरसिहृद, उरसिज देवी।

उरसिल (सं० त्रि०) उरस्-दलत्। मोक्षि-दलत्-  
विश्वदलत्-वचःपत्। स ३४७।००। प्रमत्त वचः खलशाहा,  
जिसके भारी या चौड़ी छाती हो।

उरसिलोमा (सं० त्रि०) वचःखलपर रोम रखने-  
वाला, जिसके छातीपर घास रहें।

उरसो (परिमिंद)—उदयपुरके एक राजा। १०११  
ई०में यह अपने पिता राजा राजसिंहके संग्राम  
होनेसे गद्दीपर बैठे थे। किन्तु सरदार लोग इनसे  
विद गये। उन्होंने इन्हें राजस्थान कर वर्गीय राजाके  
सुलुखार-जात रजसिंह नामक पुत्रको गद्दीपर बैठाया  
चाहा। फिर यह युद्ध होने लगा। दोनों दलोंमें  
मराठोंसे साहाय्य मांगा। उन्होंने निकट मुईमें  
राजा हार गये। उदयपुर रचना देखो।

उरखट (सं० पु०) उरः खल्यते आक्रियते अनेक,  
उरस्-खट-क। बालकका यशोपवीत विभेय, जो  
जनेज लड़कोंकी किसी ल्योहार पर आनाको तरह  
पहननाया जाता हो।

उरस्यः (सं० वच्य०) उरसीकादिक्-तवि। लः  
वचः ३४१।११। वचःखलसे, छातीकी तप।

उरस्याव (सं० स्त्री०) उरस्यायते, से करके कृत्। वचः-  
खलको वचानेवाला कवच, छातीका तथा, बख्तर।

उरस्य (सं० त्रि०) उरसा निर्मितः, उरस्-यत्।  
१ हृदयजात, सिंदरिया, छातीसे निकला हुआ। उरस्-  
यत्। २ वचःखलमें संचिहित, छिपेमें लगा, हुआ।

उरस्-य। मोक्षि-दलो वः। स ३४७।०१। ३ हृदययोज-  
कातीका और आहनेवाला। ४ धर्मत्व, पशुत्व।  
५ उत्तम, बढ़िया।

उरस्यत् (सं० त्रि०) उरस्-मत्पु, मज्ज वः। उर-  
मिच, भारी-पूरी छातीवाला।

उरहना (हि० पु०) अचलभन, निक्षेप, किसी  
कारण कामकी निक्षेपत।

उरा (सं० स्त्री०) उरणी, भेड़ी।

उराठ, उराठ देवी।

उराट (हिं०) उर देवी।

उरान (उरान्)—१ बम्बई प्रान्तके याने जिलेका एक नगर।

यह पचा० १८° ५२' ४" उ० तथा द्राधि० ७२° ५८' पू० पर याना नगरसे दक्षिण-पश्चिम ११ कोस दूर करण होयमें अवस्थित है। इससे उत्तर हिंदू कोस मोरे बन्दरमें एक बड़ी चुड़ी और शराबका गुदाम है। यहासे कितनी ही शराब याने तथा कुलासे जिले और बम्बई शहरको भेजी जाती है। नगरमें छाकबर, पीपडासप, स्कूल, गिरजा, मन्दिर और मसजिद बादि हैं। २ बम्बई प्रान्तके याने जिलेको चुड़ीका विभाग। इसमें मोरा, करण और भवा लगता है। समुद्रको राह जायें रुपयेका व्यापार होता है। ३ बम्बई प्रान्तके याने जिलेकी पगबेल तहसीलका एक हीप।

उराय—बम्बई प्रान्तस्य सातसीट और बेडीग जिलेके किसान। इन्हें कोई उराय और कोई वराय कहते हैं। यह पहले ईसाई थे। १८२० और १८२८ ई० को पालसे ब्राह्मण रामचन्द्र बाबा लोयो तथा विद्वत् हरिनाथक वैद्यने इन्हें फिर हिन्दू बनाया। कोई 'उराय' शब्द फ़ारसीके 'उर्फ' और कोई बंगरेजीके 'युरोप' शब्दका अपभ्रंश बतलाते हैं। किन्तु दो में एक बात भी ठीक नहीं। सम्भवतः यह शब्द मराठीके 'ओरपने' या 'वरपने' से निकला है। अर्थ तब कोइसे दागना है। क्योंकि जब यह हिन्दू बने, तब गर्म कोइसे दनी थे। उरायोंको नये मराठा कहते हैं। यह शूद्र वा दास आगरियाँसे भी नौच हैं। उरायोंके पुत्रोहित और नेता स्वतन्त्र रहते हैं। यह दूधरे आगरियोंको तरह हिन्दू देवदेवी पूजते हैं। इनके गोमच, खोज, फरमन, पुताद, मिनेज प्रभृति उपाधिसे ईपाईपन भलकता है। हिन्दू होते समय इन्हें कितना ही रुपया देकर खरप देना पड़ा था।

उरामधि (सं० त्रि०) उरणी मारनेवाला, जो भेड़ी मारता करता हो।

उराय, उराय देवी।

उराय (हिं० पु०) बृहद्योहार, पमिनाय, दिग्मत, बाहना।

उरावन—छोटे नामपुर और पश्चिम बङ्गालके सन्नास धांगड़। यह गांगपुर राज्यमें अधिक मिलते हैं। कारनस डाकटनके कथनानुसार यह गुजरात या कोटनसे आकर यहाँ बसे हैं। ओपनी देवी।

उराय (हिं० वि०) दीर्घ, बड़ा।

उराह (सं० पु०) ईपत पाण्डुवर्ष छप्पत्रह्वाविमिट भय, जो हलके पीले रङ्गका घोड़ा काले पैर रखता हो।

उराहना, उराह देवी।

उरिष, उरिष देवी।

उरिग उरिष देवी।

उरिष्ठ (हिं० पु०) परिट, रोठा।

उरी (सं० अश्व०) उर गती बाहुनकात् ईक।

१ पङ्गीकार। मञ्चर। अश्वः। २ विस्तार, फैलाव। बढावटो।

उरीकार, उरीकार देवी।

उरीछत, उरीछ देवी।

उरीश (सं० स्त्री०) कारवेत्तक, करेती।

उर (सं० त्रि०) छपक, चुतोप-प्रलः। उरों-चुतोपः। उर०१११। मरि उरनः। उर०११२। १ मरान, बड़ा। २ विसीर्य, फैला हुआ। ३ अधिक, ज्यादा। ४ मुख्यवान्, कीमती, बढिया। (हिं०) कर देवी।

उरकास (सं० पु०) उरमंजान् कासः छप्पवर्षः परिषामोऽस्य। मरुकासलता, कास इन्द्रायण।

उरकासक, उरकास देवी।

उरकान् (सं० त्रि०) स्थान प्रदान करनेवाला, जो लगव देता हो।

उरकान् (सं० त्रि०) १ पादविषयबुद्ध, अपने पैरों चलनेवाला। २ उर पदान्वित, ऊँचे दरजेवाला।

“अनं इति उरकानिः सं नी विवररचनः।” (अनं १११८)  
“यस्य विरोदरुप विरोदं च विरुपदेव, भूतनामाचारिणा निरुपनं च विरुः कुरुते।” (१११८९ उरकासे बमव)

३ अयमभेय।

“अरुणि मरुदेवान् नमोर्गोति उरकानः।” (अनं १११९)

उरक्षय (सं० पु०) १ मरुजाय संमीप मरुजाय राजपुत्र। (विष ३० ३१०१०) २ यमस्य भयन, बच्चा-

चोड़ा मकान् । ( ति० ) १ प्रगल्भ स्नानमें रहने-  
वाला, जो मन्त्री चोड़ी जगहमें रहता हो ।

उद्घाति ( सं० स्त्री० ) प्रगल्भ या सुघट भवन,  
कुमादा या आराम देनेवाला मकान् ।

उद्घेय ( सं० पु० ) इच्छाकृत्ययोग्य एक राश । यह  
सङ्गच्छक पुत्र से ।

उद्घम्यति ( सं० ति० ) प्रगल्भ राज्य रखनेवाला,  
जिससे राज्य मन्त्री चोड़ी मननगत रहते ।

उद्घमाय ( सं० ति० ) उद्घ-ने कर्मणि घञ् । १ सर्वत्र  
गैठ, सब जगह तारीफ् पानेवाला । "भीमश्च उद्घमायै  
विषयः" ( अथ ५११, ७ ) "उद्घमिषे" इत्यन्तः बहुव्रीहिर्बु भवा बहु-

व्रीहिर्बु । ( आश्व ) २ दूरगता, दूर पङ्क्त्यनेवाला ।  
३ गमनादिके अर्थे विस्तृत स्थान प्रदान करनेवाला ।

( पु० ) ४ विष्णु । ( आश्व ५११, ७ ) ( स्त्री० ) १ प्रगल्भ  
स्नान, कुमादा जगह ।

उद्घमायमान् ( सं० ति० ) विस्तृत स्थान प्रदान करने-  
वाला, जो राज्य मन्त्री चोड़ी जगह देता हो ।

उद्घमूना ( सं० स्त्री० ) सर्व विग्रेय, एक मांस । ( अथ ३११, १० )

उद्घमक ( सं० ति० ) प्रगल्भ चक्रविमिश्र, सभ्या  
चोड़ा पहिया रखनेवाला ।

उद्घमति ( सं० ति० ) अप्रतिहत गति प्रदान करने-  
वाला, जो मन्त्री चोड़ी चलफिर करने देता हो ।

२ अधिक साहाय्य होनेवाला, जो बड़ी मदद करता हो ।  
( अथ ५ )

उद्घमय ( सं० ति० ) १ सहादर्शन, बड़ी सूरतवाला ।  
( अथ ५११, ११ ) ( पु० ) २ धर्म । ३ मित्र । ४ बहक ।

उद्घमना, उद्घमना दीपी ।

उद्घमन् ( सं० ति० ) बहु भूमिमुख, बहुत जमीन्  
रखनेवाला । ( अथ ५ )

उद्घमय ( सं० ति० ) उद्घ-मि करणे णमुन् । यह  
योग्य, बहुत भण्डनेवाला ।

"उद्घमय उद्घमयति" ( अथ ५११, ७ )

उद्घमि ( सं० ति० ) बहु योग्य, कुमादा और भरनेवाला ।

"उद्घमय उद्घमयति" ( अथ ५ )

उद्घमिरा ( सं० स्त्री० ) विद्याला नदीका प्राचीन  
नाम । ( अथ ५११, ७ )

उद्घम ( सं० पु० ) १ वेदोक्त उपद्रवकारी एक चक्र ।  
( अथ ५११, ७ ) २ योग्यवर्तक एक स्त्री । ( अथ ५११, ७ )

उद्घम ( सं० ति० ) अत्यन्त प्रगल्भ, निहायन रहने ।

उद्घतर ( सं० ति० ) अनेकालत अधिक प्रगल्भ, अत्यन्त  
सभ्या-चोड़ा ।

उद्घता ( सं० स्त्री० ) १ बहुता, प्रदाती, बहुता ।  
२ विस्तार, फैलाव ।

उद्घताय ( सं० पु० ) अधिक उच्छता, बड़ी मांस ।

उद्घधार ( सं० ति० ) बहुवेगसे निःसृत, बड़े क्षेत्र  
बहनेवाला । ( आश्व ५११, ७ )

उद्घय ( सं० ति० ) अधिक विस्तृत, पूर्य देना हुआ ।

उद्घविल ( सं० ति० ) उद्घ उद्घ विभक्त । हर  
चिह्नयुक्त, बड़े देववाला ।

उद्घ ( सं० ति० ) १ बहुजनजनक, पूर्य मांस  
उपजानेवाला । २ उत्तम, बढ़िया । ( अथ ५ )

उद्घमार्ग ( सं० पु० ) दूर पथ, मन्त्री राह ।

उद्घमाय ( सं० पु० ) कलगाक विग्रेय, कमकी एक  
तरकारी । यह फल हंजव, गुह, मीतल, भात, माह,  
रघ, सिन्ध, विटलि और कक तटा मूल बहुविध  
हैं । ( अथ ५ )

उद्घमुष्ट ( सं० पु० ) मधुरा प्रदेशका एक पर्वत ।  
( अथ ५११, ७ )

उद्घमुग ( सं० ति० ) मन्त्रीचोड़ा हल रखनेवाला ।

उद्घमोक ( सं० स्त्री० ) १ अन्तरिक्ष, आसमान । "उद्घ-  
मरिष्यते" इत्यन्तः । ( अथ ५११, ७ ) २ देह लोभ,  
पाप्मी दुनिया ।

उद्घया ( सं० पु० ) उद्घक, उद्घ ।

उद्घविक्रम ( सं० ति० ) गतिगाली, बढ़ावा ।

उद्घविक्रम ( सं० स्त्री० ) मेरुध्वन लड़ी लोका एक  
अतिपाशेल नाम । बुद्धदेव संसार छोड़नेवादा इसी  
स्थानपर प्रथम आत्मनस ध्यान समाकर बैठे थे ।  
वर्तमान नाम बाध-गया है ।

उद्घु ( सं० पु० ) परण्ड मूल, देहोका पेट ।

उद्घु ( सं० पु० ) उद्घ यावति, एक । अथ ५११, ७  
१ परण्ड मूल, देहोका पेट । २ अंतःपरण्ड, मधेदेह ।  
३ उद्घ परण्ड, माह देह । ४ उद्घाति, पेटका बाहर ।

ਚਰਚਾ, ਚਰਚਾ ਦਿਖਾ।

उरुण्यथाः (यै० पु०) उरु-व्यञ्ज-भस्। १ राक्षस।

( वि० ) २ अतिव्यापक, सुव भरा या फैला हुआ ।

( अ० ३।५।१ ) 'अथ कुटादितमसि। चमसोति विम्। उदयः।'

( आश्विन १५११ )

उत्पद्यन् (यै० वि०) १ पतिदूर पर्यन्त गमनशील,  
बहुत दूरतक पहुँचनेवाला । २ विस्तृत स्थानयुक्त,  
सखी चौड़ी जगह रखनेवाला ।

सहज (सं० वि०) विस्तृत राज्ययुक्त, जिसके सभी  
'धौड़ी' सततमत रहे।

उद्योग (वै. वि.) १ उद्योग: स्वयंसे प्रगति करके  
वाता। २ अपने व्यक्तिगतों द्वारा प्रगति। (वाच)

उरुधर्मा ( वै० द्वि० ) संसारमें प्रत्येक स्यामपर  
'शरण्य' पानेवाला ।

बहुधा ( वै० त्रि० ) उरु-सन्-विद्-डा घटे पत्यन् ।  
महादाता, शृणुदानकारी । ( अ०, ११०॥६ )

चहथा (वै. स्त्री.) रसपेक्षा, पनाह देनेकी स्वादिम ।  
(सम्भाषी माधव हावरा)

सकृत् ( व० त्रि० ) दूर स्थानको गमन करनेवाला,  
को सप्तानकी खातिर रखता हो । ( सायब )

સરુસસ્વ ( સં. ત્રિ. ) સદારાબા, સગ્ની, હમદા ।

बहुसंख्य (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, कैलेका पेड़।

सहस्रन (सं. वि०) अत्युच्च, बहुत ऊँचा ।

सरुहार (सं. पु.) यह मूल्य माता, विषहा सेहता।

उद्भूत (सं. पु.) उद्भूत, उद्भूत ।

सद्वर्षी (घै. स्त्री.) प्रतिष्ठापिका स्त्री, दूरतक  
फैली हुई चीज। (आधेद)

સહજ (અ. પુ.) ૧ સમતિ, સઠાન। ૨ શિરો-  
વિન્દ, સિમતરરાસ।

उरुज (चं पु०) पिङ्गल, कःपियावन्दी, कविता  
बनानिका ठंग।

सङ्गस (वे० वि०) दीर्घमासायुत, सखी भाव-  
वासा । (पृ० १११/११)

सदल (सं० मि०) १ स्थानसे प्रीति रखनेवाला,  
जो जगद्वशो पसन्द करता हो। २ हठिका, दण्डुक,  
जो बदना चाहता हो। ३ स्वतन्त्र, बांजाद।

चरुषी ( हिं. स्त्री. ), वृक्षविशेष, एक पेड़। यह आपानमें उत्पन्न होता है। इसमें लो गोंद निष्कासने, उसमें रंग और वारनिर्माण होता है।

७२ ( वि० शि० वि० ) १ सम धोर, पागे । २ दूर,  
फासले पर ।

સરેશ્વના, જરીશ્વના દેશો.

ਚਰੇਫ਼ (ਹਿੰ. ਪੁੰ.) ਚਲੇਫ਼, ਚਿਤ੍ਰਫ਼, ਮਛਾਮੀ ।

उपेक्षा (हिं. कि.) : १ उपेक्षा करना, कममती  
 खींचना । २ रक्षित करना, रंग भरना ।

उरोपह (सं. पु०) । हृदयरोगविमेष, दिलको एक बीमारी । अति अभियन्दि, गुरु तथा चम्पूशक्त पामिय छानेबे चम्पूके साथ गहत् एवं ग्रीवाका मांस सदा ही बढ़ जाता है । फिर यह रोग कफ और मांसको कुचिनें पड़ जाता है । उरोपह धाम पात्र और दक्षिणार्धमें नहीं, नुकसे मध्य बढ़ता है :

जिमका गिरातनुवु बुद्धक पागि रहता, उस रोगको ही सदैव उरोपक कहता है। हममें दौर्बल्य बढ़ता, अग्नि मन्द पड़ता, कार्य लगता, मांसका अभिजा-  
हित चमत्ता और लक्ष्यवर्षल एवं पीतक भी उपजता है। कोई द्विजिह्व-घटय और कोई कक्ष्यमज्जिम रहता है। किरण्वर, परबि, पिपासा और गोयका रोग भी बहुत बढ़ जाता है। (निष्प) ३ हृदय वेदना, सीनेका दर्द।

उरोघात. उरोयह देखो ।

उशेज (सं. पु०) उरसू-जन-ड। मृत, पयोधर,  
भौरतकी छाती। वनस्पति।

उरोभूषण ( घं. स्त्री. ) उरां मूष्यते घनेन, मूष-भुट् ।  
हार, हारतीका गहना ।

चरोत्पत्तौ (बै. श्रौ.) वैदिक हन्धोविमिश्र ।  
यास्कके मतमे यह द्वितीय चरणमे जागतामक होता है ।

चरोदसा (सं० स्तो०) वाङ्मय विमेष, प्रायकी  
एक सहाई। वाङ्मय देवी।

“उत्तेज्यते धारयते पूरयत्येव वरजः सौ।” (भारत, अथा २१ अ०)

उज्जित ( सं० प्रि० ) त्वत्, आदा इया ।

उर्ध्वनाभ (घं० पु०) ऊर्ध्वं शब्दं नामो गमो यत्,  
समाधिं पुनः । ऊर्ध्वनाभ, मरुता । ऊर्ध्वं शब्दं ईषी ।

उर्दू ( मं० फी० ) कर्प-उ. तत्पु. टाप्. कर्पः । १ मिया-  
दिका बीज, भिड़ गगैरुका कर्ण । २ सशाटका  
बीजमधुमासक पिण्ड विरोध । कर्प १५०।

उर्दूगु. कर्प १५०

उर्दू—१ मजमूज धातु । यह दाज और आसाद कर-  
ने के अर्थ में आता है । २ एक भादि- पाय- नेट ।  
यह छोड़ा करने के अर्थ में व्यवहृत होता है ।

उर्दू, कर १५०।

उर्दूपनी ( हिं० फी० ) मायपनी, लूनी उर्दू ।

उर्दू ( हिं० फी० ) १ मेना, फीजी बाजार । २ भाषा  
विशेष, फारसी और अरबी मिली हुई हिन्दुस्थानी  
भाषा । तुर्की भाषा में इस शब्दका प्रकृत अर्थ मिविर है।  
हिन्दु शाहजहान के शासनकाल में उर्दू एक भाषाका  
नाम पड़ा । कारण बादशाही फौज के सिपाही  
फारसी, अरबी, तुर्की और हिन्दुस्थानी थे। यह  
हिन्दो में अपनी अपनी भाषा के शब्द प्रयोग करते थे। यह  
भाषा सुलतानो के शासन काल में दिल्ली के निकली ।  
गुरु-प्रदेश और पञ्जाब में इसका व्यवहार अधिक है।  
यह पहले दिल्ली के बादशाहों और लखनऊ के नवा-  
बों की सभा में चलती थी। आज भी गुरुप्रदेशादिकी  
पदालतों में उर्दू का ही प्रचल देय पड़ता है। भारत-  
वर्ष के सुलतानात इसीका अधिक व्यवहार करते हैं।

बहुत संस्कृत शब्दों के अन्तर्गम्य ही उर्दू निकली है।  
मसफ कियावाचक शब्द संस्कृत के धातु बिगाड़ कर  
बनाये गये हैं। जैसे—वरना, चरना, डरना, भरना,  
मरना, लिपना, पढ़ना, उठना, बैठना, चलना, खिरना,  
डिगना, चुनना, जाना, पाना, गाना, ब्रजाना, बताना,  
सुनाना इत्यादि । इसी प्रकार अनेक भी संस्कृत  
शब्दों में मिलते हैं। जैसे—न, की, धी, म, पर प्रवर्तित।

विचार में हिन्दो और उर्दू में विशेष भेद नहीं  
पड़ता। केवल उर्दू फारसी और हिन्दो संस्कृत के  
अन्तर्गम्य मिली जाती है। जी, सुलतानात अथवा  
भाव प्रकट करने की विशेष शक्ति विशेष फारसी के  
रखते हैं और हिन्दू संस्कृत के शब्दों को भरमार करते  
हैं। किन्तु क्रिया दोनों भाषाओं की एक ही है।  
‘करना’ लिखने के लिये दूना कीर्त शब्द नहीं।

त्रिभुज समय यह भाषा निकली, उस समय सुलतान  
मार्नोका राज्य था। सब लोग इसी भाषा की भरमार  
करके इस कोरसे उस कोरतक लिखते थे। हिन्दो  
बहुत कम मिली जाती थी। इसीमे उर्दू की प्रधानता  
बढ़ी और इनने वही स्थिति कर ली।

लखनऊ की उर्दू प्रसिद्ध है। ऐसा माधुर्य अथ  
प्रदेश की उर्दू में देय नहीं पड़ता। इसका गुण  
कारण लखनऊ की उर्दू में संस्कृत के बिगड़े शब्दों का  
अधिक परिमाण ही समाधि है।

अब छोटे दिनों में भारतवासी हिन्दो लिखने पढ़ने  
लगे हैं। इसीमे उर्दू का दबदबा घट गया है। हिन्दो में  
अपनी अपूर्व मोहिनी मूर्ति सबको देखा दी है।  
लोगों में समझ लिया है,—उर्दू कभी हिन्दो की जा  
नहीं सकती। कारण हिन्दो और उर्दू दोनों की शिगा  
एक ही है। फिर वह क्रिया संस्कृत के धातु बिगड़-  
ने से बनी है। इसलिये उसके साथ संस्कृत के विशेष  
विशेषादि शब्द बहुत अच्छे लगते हैं, फारसी और  
अरबी के शब्द ठीक नहीं पड़ते।

उर्दू बाजार ( हिं० पु० ) १ मेन्-इड, फीजी बाट,  
जो बाजार लावनी में लगता है। २ प्रधान बा-  
रका बाजार।

उर्दू सुवर्ण ( तु० फी० ) १ राजभाषा, पदालतों  
का भाषा । २ दिल्ली का वाग्यवहार, जो महावा-  
दियों में चलता है।

उर्दू ( मं० पु० ) उर्दू-रक। लखविहाल, कर्प-  
विहाल । अर्थात् १५०।

उर्दू ( हिं० ) कर्प १५०।

उर्दू ( मं० पु० ) उर्दूनाम, धारका नाम।

उर्दू ( हिं० ) कर्प १५०।

उर्दूना ( हिं० ) कर्प १५०।

उर्दूना ( मं० पु० ) मनुद्वेज, मनुद्वेजका पात।  
उर्दू—अर्थात् उर्दू-नाम भिन्न । यह धातु दिना का  
ने के अर्थ में आता है।

उर्दू ( मं० पु० ) १ मर्त, पदार्थ । २ मनुद्वेज, कर ।

उर्दू ( मं० पु० ) विहाल सेव, बड़ा धन।

उर्दू ( मं० पु० ) उर्दू-उर्दू-अर्थात् । कर्प, कर्प

उर्वरा (सं० स्त्री०) कृ-पञ्-टाप् वा उर्व-रा-क्रिप् ।  
 १ शस्यगालिभूमि, उपजाऊ जमीन । २ भूमिमात्र,  
 कोई जमीन । ३ तन्तु, ऊर्षा प्रभृतिका संयुक्त समु-  
 दाय, रेशे और ऊन वर्ग रहकी मिली हुई सच्ची ।  
 ४ एक अपरा या परी । ५ कुटिल कैय, घृधरपाले  
 बाल । (त्रि०) ६ अधिक, ज्यादा ।  
 उर्वराजित् (सं० त्रि०) क्षेत्र अधिकार करनेवाला,  
 जो खेत सेता हा ।  
 उर्वरापति (सं० पु०) बीज वपन किये हुये क्षेत्रोंका  
 स्वामी, बोये खेतोंका मालिक ।  
 उर्वराया (वै० त्रि०) उर्वरा भूमिं सनोति, सन्-विट्  
 ङा । भूमिविभागकारी (पुंवादि), जमीन बांटने  
 वाले (सड़के वगैरह) ।  
 उर्वरी (सं० स्त्री०) गणसूत्र, पटसन ।  
 उर्वर्यं (वै० त्रि०) उर्वरायां भवः यत् । शस्य-  
 गालि भूमि-जात, बोये दैतसे पैदा ।  
 उर्वशी (सं० स्त्री०) उर्वन् मङ्गलापि भञ्जुते व्याजोति  
 यगो करोति, उर्व-भञ्ज-क, स्त्रियां ङोप् । खनामख्यात  
 खं धिया, इसी नामसे मगहर विहङ्गकी एक परी ।  
 नारायणका उरु भेदकर निकलनेसे इस अपराका  
 नाम उर्वशी पड़ा है ।  
 "उर्वशी पु इरेः सम्यक् मित्वा विनिर्गता ।" (शब्दि)  
 श्रीमद्भागवतमें लिखा है—नरनारायण बदरिका-  
 न्यमें तपोनिरत रहे । इससे इन्द्र समझि कि उर्वशीका  
 पद लेनेके लिये जर और नारायण वैसी घोरतर तप-  
 स्थामें लगे हैं । फिर उन्होंने तपोविघ्नके लिये कामदेव  
 और अपरोगणकी भेजा । बदरिकाश्रममें पहुँचने  
 ही कार्यक्षमापपर दृष्टि न डाल नरनारायणने पादरके  
 साथ उन्हें धातिपरुषके प्रहण किया । काम प्रभृति  
 ममागत देव बलौकिक गुणसे मोहित हो उनका  
 स्वाध करने लगे । नरनारायणने उन्हें भङ्गुतदर्शन  
 समलङ्कृत रमणो मूर्ति देखायी थी । उसके रूप-  
 सोम्यसे देव श्रीहीन हो गये । नरनारायणने तब  
 उन रमणियोंमेंसे एक लेनेको कहा । पादेयानु-  
 सार देवोंने उर्वशीकी लिया और उन्हें प्रथमपूजक  
 स्नानको गमान किया ।

वेदके मतमें उर्वशीसे वसिष्ठका लब्ध हुआ था ।  
 ब्रह्मदेवताके मतानुसार यज्ञस्थलमें उर्वशीको देखते  
 ही वासतोवर पर मित्रावरुणका रतः गिरा, जितने  
 भगवत् घोर वसिष्ठने लब्ध लिया ।  
 पद्मपुराणमें पढ़ते हैं—किसी समय विष्णुने धर्मके  
 पुत्र वन गन्धमादन पर्वत पर घोरतर तपस्या की  
 थी । इन्द्रने घबराकर तपस्यामें विघ्न डालनेके लिये  
 अपरोगणके साथ काम और वसन्तकी भेजा ।  
 किन्तु अपरायने विष्णुका ध्यान तोड़ न सका ।  
 तब कामदेवने अपने लहरे उर्वशीकी निकाला ।  
 उर्वशी ही केवल उनका ध्यान तोड़ सकी थी ।  
 इससे इन्द्र उर्वशी पर चालना मनुष्ट हुये और प्रहण  
 करनेको चाहने लगे । फिर मित्र और वरुण  
 उर्वशी पर लसवाये । किन्तु उर्वशीने उन्हें प्रत्या-  
 ख्यान किया । मित्र और वरुणने इसमें चबनुष्ट  
 हो उर्वशीकी पमियाप दिया था । उसी थापसे  
 वह मनुष्यभोग्य बन गयी ।  
 हरिवंशका वचन है—उर्वशी ब्रह्माके थापसे मनुष्य  
 लक्ष्मीका प्राप्त हुई । उन्होंने महाराज पुकराके  
 निकट जा पत्नीत्व स्वीकार किया और कह दिया था,  
 'जितने दिन मन्त्र देख न पढ़ेंगे, जितने दिन पकामा  
 पत्नीसे रत न रहेंगे, जितने दिन थाप एक मन्त्रा घृत-  
 भास भोजन करेंगे और जितने दिन दो भेष हमारी  
 गय्याके समीप बँधेंगे, उनने दिन भार्या भावमें हमारे  
 दिन इस घरमें कटेंगे' ; इससे अन्यायीनेवर थाप  
 बूट लायेगा और फिर हमारा कोई पता न पायेगा ।  
 राजा वही स्वीकार कर उर्वशीके साथ परम सुखसे  
 रहने लगे । इसीप्रकार ८५ बखर बीते । छहर मन्त्र  
 उर्वशीके लिये विन्यासित थे । वह थाप ढोढ़ाने  
 और उर्वशीकी स्नानमें फिर जानेका उपाय सझाने  
 लगे । उर्वशी अपने दोनों भेष पुत्रवत् वानगी थीं ।  
 एकदिन विराटवसु नामक मन्त्रवै प्रयाग जा रात्रि-  
 कालमें उर्वशीके पासित दोनों भेष में भारी । उर्वशीने  
 अपने दोनों भेष जाते देप राजासे कहा । तब समय  
 राजा मन्त्र पढ़े थे । उर्वशीके बार बार मीनोंको बात  
 कहनेसे वह मन्त्र ही मन्त्रवर भरपटे । उर्वशी



करना, पीछे रहना। ११ खमा होना। १२ काममें लगना। १३ दोष देखना, मुकताचीनी करना।

उलझाना (हिं० क्रि०) १ शय्य डालना, फंसाना। २ विश्रुतला लगाना, गड़ गड़ मचाना। ३ कठिनतामें खाना, सुश्रिल करना। ४ अमित करना, घुमाना। ५ विवाद लगाना, लड़ाना। ६ बन्धनमें डालना, बांधना। ७ सीना, टांकि मारना। ८ फंदमें फंसाना, जालमें पकड़ना। ९ बन्दी बनाना, कैद करना। १० विवाद या भादो करा देना। ११ खाम देखाना, खालच देना। १२ मोहित करना, फरेकता बनाना। १३ विसम्ब डालना, देर लगाना। १४ थोड़ी देरके लिये पड़ना। १५ रखना, जमा करना। १६ चित्त हटाना, दल घुमाना। १७ विषय पड़वाना, गुमराह करना। १८ कुभाव खाना, ठाक न बताना। १९ कार्यमें नियुक्त करना, काममें लगा देना।

उलझाव (हिं० पु०) १ व्यावर्तन, फेरफार। २ लटि-लल, फसाव। ३ विमता, फिझ। ४ उत्पत्त, गड़गड़। ५ मग्यासमावन, नाकहनी, बसमझ। ६ कलह, झगड़ा। ७ क्रांतिता, सुश्रिल।

उलझेड़ा, उलझाव देना

उलझावां (हिं० वि०) उलझा लेनेवाला, जो फंसा रखता हो।

उलट (हिं० पु०) १ विपरीतता, इनकलाव, पुनट। २ परिवर्तन, तबदीली, बदलाव।

उलटकंबल (हिं० पु०) उलटविशेष, एक पौदा। यह भारतवर्षकी पाई भूमिमें उत्पन्न होता है। बल्कल श्रोतवर्ष, बीर तन्तुयुक्त रहता है। उसे पानोमें भिगाया बेस हो उतार लेते हैं। बल्कलके लिये प्रांत वष दांतोन बार ६ या ७ फीट की गांवा कटती है। उमर १८; संयार जाती है। मूनकी लक्ष प्रदर रोग पर निवन कराते हैं।

उलटकटेरी (हिं० स्त्री०) लटकटेरा।

उलटना (हिं० क्रि०) १ व्युत्क्रम लगाना, फेर देना। २ मोचे-ऊपर करना। ३ पटक देना, चित करना। ४ दमन करना, पीकना। ५ कपय करना, छोटना। ६ पद बदलना, दूसरा मार्ग लगाना। ७ छंडलना,

डाल देना। ८ पान करना, पीना। ९ वापस करना, लौटाना। १० मदीयत करना, मतवाला बनाना। ११ निर्वल बनाना, कमजोर करना। १२ विनाश करना, बरबादोमें डालना। १३ मिथन करना, गुरोव बना देना। १४ छहरव करना, दोहराना। १५ पठन समापन करना, पढ़ जाना। १६ पढ़नेका बहाना करना। १७ विचारना, सोचना-समझना। १८ परि-वर्तन करना, बदलना। १९ अनुवाद करना, तर्जुमा बनाना। २० असत्य समझना, भूठा ख्याल करना। २१ खलीकार करना, न मानना। २२ पात्रामझ करना, बात टालना। २३ काटना, मशुल करना। २४ व्युत्क्रम पड़ना, फिरना। २५ नीचे ऊपर होना। २६ घूमना। २७ धोका पड़ना। २८ खुदना, गुतना। २९ लोट पाना। ३० बदल जाना। ३१ उलट होना, मतवाला बनना। ३२ दुर्दिन पाना, बल्लू बिग-डना। ३३ बिगड़ना। ३४ मरना। ३५ मोटाना। ३६ उर्मडना।

उलट-पुनट (हिं० पु०) व्युत्क्रम, फेरफार।

उलटा (हिं० वि०) विपरीत, पिनल, नाचे ऊपर। “उलटा बाट, पीरवाचो हटि।” (बीकानि) कामे पादमीको “उलटानवा” कहते हैं।

उलटाना (हिं० क्रि०) मोचे ऊपर करना।

उलटा मोन (हिं० पु०) लोकाका पपाद्गमन, लडाऊ-की पीछेकी हटाई।

उलटाव, उलट देना।

उलटी (स्त्री०) लटा दीया।

“लगी धीरवी पीकलाना” (बीकानि)

उलटी-कांगसो (हिं० स्त्री०) व्यायाम विशेष, एक कसरत। मनचुंभमें पंखा उलट, कंगनियां पंखा-जका यह नाम है।

उलटी थड़ी (हिं० स्त्री०) व्यायामविशेष, एक कसरत। मानचुंभमें दोनों पैर पानोमें ठठा पीठपर पड़वानेको उलटी पड़ी कहते हैं।

उलटी-चीन (हिं० स्त्री०) दुर्द्वेकारंग।

उलटी बगली (हिं० स्त्री०) सुगद मीत्रनेकी एक



राधाजी नन्द दीनने ही प्रकाशित की हैं। जिस  
मन्थर शिरोको शीत जलमें रने। राधा दीनी शिरोको  
से हर मन्दन धामे, किन्तु सर्वशक्ति परम न पाधि  
है। सोई जगमहि, कि यह पदमें ही दीनसे सर्वशक्ति  
को होते हैं। मुदापके पीरस पीर सर्वशक्ति मर्मसे  
पाम्, अमावस, शिष्याम्, श्रुताम्, दृष्टाम्, एवं गताम्  
प्राप्त पत जये।

पार्वती ( १०८५ ) एवं श्री और पुत्रराजा  
 वरिष्ठ मित्रता है। आश्विनमे एवं श्री और पुत्र-  
 राजा प्रपञ्चानामासदर 'विष्णुसौम्य' नामक एक  
 मन्त्रक विद्या है।

कृष्णजीतीर्थ ( मं० स्त्री० ) भोमान्नम तीर्थ ।  
( इ. १०, ५५ व. ४० )

[illegible]

गो ( ग = घी ) घीपक, घीसा ।

प्रवाह (गं. पु०) बह-वा-प्रत्यय । प्रवाह, बहती ।  
प्रवाहक (गं० लो०) प्रवाहप्रत्यय, वाहकी प्रत्यय ।

अभिज्ञान ( १०० पंक्तियाँ ) १००० श्लोक ।  
अभिज्ञान, १००० श्लोक ।

तर्हि ( मं० ब० ) दूर, प्रागर्हि पर।  
तर्हि ( मं० ब० ) अर्हि, अतः अतोपि अतएव अतएव।

मादिति कीधु । अथ च तत्र । अथ १५२ । १ सुदिशि,  
अथोम् । "अथ च तत्र" इति । अथ च तत्र । ( १५३ )

२ स्वाम, स्वाम । इसमें आकाशक आरी विभाग  
और जोड़े स्वामका स्वाम गणितित ६ । ३ एक मदी ।

१. सर्वोच्च न्यायालय, दिल्ली, भारत सरकार।

कारण होता था यह नाम पड़ा है ।

पञ्चाङ्ग । २ दीपकान्त ।  
पञ्चाङ्ग (कं० पु०) पञ्चो भागिदत्तम् । १ पञ्चत

दशरथः । १२ वाणी, मादमाद ।

संस्कृत (मं. पुं) कथां विवृति, दृष्ट-दृ, अन्तः ।  
सद, विद ।

सर्वोच्च (सं० पु०) राजा, बादशाह ।  
सम्यक् (वे० वि०) प्रमाण, मूल, देवता, श्री

कर्म (च० पु०) १ मुमक्षुमात्रो योरोहि षण्ण दिव-

सका चातुष्यः । २ शुभसप्तमी पीरोहे मनेहा दिन ।  
चम् (मोक्ष चातु) . पर० सक० विद् । ५ सका फयै

दाह करमा है।  
 उस (पै. पु.) उस कर्मणि शब्दों के। १ मृग-

विद्यय, योह लक्ष्मी आनन्द । २ पण्य बालिका नाम ।  
उत्तम ( वि० वि० ) १ मन्त्र, मन्त्र । २ आनन्दपदार्थम्,  
विद्यय लक्ष्मी ।

સર્વજ્ઞના, સર્વવ્યાપક દેહી)

संघटना (दि० प्रि०) : सज्जन करमा, साधना,  
साह कार्या : ३ स्त्रीकार म कर्मका राम देवा :

उसगाट (हिं. गौ.) सहस्रसंदाई।

उसगना ( हिं० जि० ) उससना, कुदना ।  
 उसगाना ( हिं० जि० ) कुदना, पार लगाना ।

ઉભયગા, જ્યોત્સ્ના સંધેઃ  
ઉભયગા ( દિ. સિ. ) ૨ જગમ્માઃ સિદ્ધિ અરના,

जायगी देना होगा ।  
 लमहा- ( हिं० पु० ) इस द्वारा सेतुमें धीरे जाय-

महा निधमः ।  
 एतद्वाक्यम् । एतद्वाक्यम् ।

एलाइना (रि० डि०) '१ एलिना बीमा, एलना।

३ काटिनाभि पद्मा, शेषा स्रग्मा । ४ विवाद कला,  
भद्रपद्मा । ५ वक्षःस्थलः निशिम कोना, गुरु मरुपद्मा ।

५ सन्तो वचना, अंशमें संख्या । ६ विवाद होना,  
जानकी वदना । ७ सोमों काका कायिक होना ।

८. वृद्धोऽथ गच्छत्यथ कुप्यते, आत्माप्यथ गच्छत्यथ कुप्यते ।  
९. मोक्षोऽथ मोक्षः, मोक्षश्चैव मोक्षः । १०. विद्वत्

1998, 1999, 2000, 2001, 2002, 2003, 2004, 2005, 2006, 2007, 2008, 2009, 2010, 2011, 2012, 2013, 2014, 2015, 2016, 2017, 2018, 2019, 2020, 2021, 2022, 2023, 2024, 2025, 2026, 2027, 2028, 2029, 2030, 2031, 2032, 2033, 2034, 2035, 2036, 2037, 2038, 2039, 2040, 2041, 2042, 2043, 2044, 2045, 2046, 2047, 2048, 2049, 2050, 2051, 2052, 2053, 2054, 2055, 2056, 2057, 2058, 2059, 2060, 2061, 2062, 2063, 2064, 2065, 2066, 2067, 2068, 2069, 2070, 2071, 2072, 2073, 2074, 2075, 2076, 2077, 2078, 2079, 2080, 2081, 2082, 2083, 2084, 2085, 2086, 2087, 2088, 2089, 2090, 2091, 2092, 2093, 2094, 2095, 2096, 2097, 2098, 2099, 2100, 2101, 2102, 2103, 2104, 2105, 2106, 2107, 2108, 2109, 2110, 2111, 2112, 2113, 2114, 2115, 2116, 2117, 2118, 2119, 2120, 2121, 2122, 2123, 2124, 2125, 2126, 2127, 2128, 2129, 2130, 2131, 2132, 2133, 2134, 2135, 2136, 2137, 2138, 2139, 2140, 2141, 2142, 2143, 2144, 2145, 2146, 2147, 2148, 2149, 2150, 2151, 2152, 2153, 2154, 2155, 2156, 2157, 2158, 2159, 2160, 2161, 2162, 2163, 2164, 2165, 2166, 2167, 2168, 2169, 2170, 2171, 2172, 2173, 2174, 2175, 2176, 2177, 2178, 2179, 2180, 2181, 2182, 2183, 2184, 2185, 2186, 2187, 2188, 2189, 2190, 2191, 2192, 2193, 2194, 2195, 2196, 2197, 2198, 2199, 2200, 2201, 2202, 2203, 2204, 2205, 2206, 2207, 2208, 2209, 2210, 2211, 2212, 2213, 2214, 2215, 2216, 2217, 2218, 2219, 2220, 2221, 2222, 2223, 2224, 2225, 2226, 2227, 2228, 2229, 2230, 2231, 2232, 2233, 2234, 2235, 2236, 2237, 2238, 2239, 2240, 2241, 2242, 2243, 2244, 2245, 2246, 2247, 2248, 2249, 2250, 2251, 2252, 2253, 2254, 2255, 2256, 2257, 2258, 2259, 2260, 2261, 2262, 2263, 2264, 2265, 2266, 2267, 2268, 2269, 2270, 2271, 2272, 2273, 2274, 2275, 2276, 2277, 2278, 2279, 2280, 2281, 2282, 2283, 2284, 2285, 2286, 2287, 2288, 2289, 2290, 2291, 2292, 2293, 2294, 2295, 2296, 2297, 2298, 2299, 2300, 2301, 2302, 2303, 2304, 2305, 2306, 2307, 2308, 2309, 2310, 2311, 2312, 2313, 2314, 2315, 2316, 2317, 2318, 2319, 2320, 2321, 2322, 2323, 2324, 2325, 2326, 2327, 2328, 2329, 2330, 2331, 2332, 2333, 2334, 2335, 2336, 2337, 2338, 2339, 2340, 2341, 2342, 2343, 2344, 2345, 2346, 2347, 2348, 2349, 2350, 2351, 2352, 2353, 2354, 2355, 2356, 2357, 2358, 2359, 2360, 2361, 2362, 2363, 2364, 2365, 2366, 2367, 2368, 2369, 2370, 2371, 2372, 2373, 2374, 2375, 2376, 2377, 2378, 2379, 2380, 2381, 2382, 2383, 2384, 2385, 2386, 2387, 2388, 2389, 2390, 2391, 2392, 2393, 2394, 2395, 2396, 2397, 2398, 2399, 2400, 2401, 2402, 2403, 2404, 2405, 2406, 2407, 2408, 2409, 2410, 2411, 2412, 2413, 2414, 2415, 2416, 2417, 2418, 2419, 2420, 2421, 2422, 2423, 2424, 2425, 2426, 2427, 2428, 2429, 2430, 2431, 2432, 2433, 2434, 2435, 2436, 2437, 2438, 2439, 2440, 2441, 2442, 2443, 2444, 2445, 2446, 2447, 2448, 2449, 2450, 2451, 2452, 2453, 2454, 2455, 2456, 2457, 2458, 2459, 2460, 2461, 2462, 2463, 2464, 2465, 2466, 2467, 2468, 2469, 2470, 2471, 2472, 2473, 2474, 2475, 2476, 2477, 2478, 2479, 2480, 2481, 2482, 2483, 2484, 2485, 2486, 2487, 2488, 2489, 2490, 2491, 2492, 2493, 2494, 2495, 2496, 2497, 2498, 2499, 2500, 2501, 2502, 2503, 2504, 2505, 2506, 2507, 2508, 2509, 2510, 2511, 2512, 2513, 2514, 2515, 2516, 2517, 2518, 2519, 2520, 2521, 2522, 2523, 2524, 2525, 2526, 2527, 2528, 2529, 2530, 2531, 2532, 2533, 2534, 2535, 2536, 2537, 2538, 2539, 2540, 2541, 2542, 2543, 2544, 2545, 2546, 2547, 2548, 2549, 2550, 2551, 2552, 2553, 2554, 2555, 2556, 2557, 2558, 2559, 2560, 2561, 2562, 2563, 2564, 2565, 2566, 2567, 2568, 2569, 2570, 2571, 2572, 2573, 2574, 2575, 2576, 2577, 2578, 2579, 2580, 2581, 2582, 2583, 2584, 2585, 2586, 2587, 2588, 2589, 2590, 2591, 2592, 2593, 2594, 2595, 2596, 2597, 2598, 2599, 2600, 2601, 2602, 2603, 2604, 2605, 2606, 2607, 2608, 2609, 2610, 2611, 2612, 2613, 2614, 2615, 2616, 2617, 2618, 2619, 2620, 2621, 2622, 2623, 2624, 2625, 2626, 2627, 2628, 2629, 2630, 2631, 2632, 2633, 2634, 2635, 2636, 2637, 2638, 2639, 2640, 2641, 2642, 2643, 2644, 2645, 2646, 2647, 2648, 2649, 2650, 2651, 2652, 2653, 2654, 2655, 2656, 2657, 2658, 2659, 2660, 2661, 2662, 2663, 2664, 2665, 2666, 2667, 2668, 2669, 2670, 2671, 2672, 2673, 2674, 2675, 2676, 2677, 2678, 2679, 26

करना, पोछे रहना। ११ जमा होना। १२ काममें लगना। १३ दोष देखना, मुकताधीनी करना।

उलझाना ( हिं० लि० ) १ श्रमि डालना, फँसाना।

२ विश्रुला लगाना, गड़ बड़ भवाना। ३ कठिनतामें खाना, मुश्किल करना। ४ भ्रमित करना, घुमाना।

५ विवाद लगाना, झड़ाना। ६ धन्यमें डालना, बांधना। ७ सीना, टाँके मारना। ८ फँदेमें फँसाना, जालमें पकड़ना। ९ बन्दी बनाना, कैद करना।

१० विवाद या 'मादो' करा देना। ११ सोम देखाना, खालव देना। १२ माहित करना, फरेकता बनाना।

१३ विलम्ब डालना, देर लगाना। १४ यादों देरके लिये पढ़ना। १५ रखना, जमा करना। १६ विल चटाना, दल घुमाना। १७ विषय पढ़वाना, गुमराह करना। १८ कुभाव लाना, ठाक न बताना।

१९ कार्यमें नियुक्त करना, काममें लगा देना।

उलझाव ( हिं० पु० ) १ व्यावर्तन, फेरफार। २ जटिलता, फसाव। ३ खिन्ना, फिक्का। ४ उत्प्रात, गड़बड़। ५ सम्यक्सम्भावन, नाकूदमी, बंधमझ।

६ कलह, झगड़ा। ७ कठिनता, मुश्किल।

उलझेड़ा, उलझाव देना

उलझावा ( हिं० वि० ) उलझा खेनेवाना, जो फँसा रहता हो।

उलट ( हिं० पु० ) १ विपरीतता, इनकिलाब, पुलट। २ परिवर्तन, तबदीली, बदलाव।

उलटकंबन ( हिं० पु० ) हृद्यविशेष, एक पीठा। यह भारतवर्षकी आड़े भूमिमें उत्पन्न होता है।

वस्त्रल श्वेतवर्ण और तन्तुयुक्त रहता है। उसे पानोमें भिगा या घेस ही उतार लेते हैं। वनकनके जिये प्रांत वष दांतोन मार है या ७ फीट की माथा कटती है। समन रक्तु तयार होती है। मूलकी त्वक् प्रदर रोग पर नैबन कराते हैं।

उलटकटोरी ( हिं० स्त्री० ) ऊंटकटोरी।

उलटना ( हिं० लि० ) १ व्युत्क्रम लगाना, फेर देना। २ नाचे-ऊपर करना। ३ पटक देना, बिल करना। ४ घूमन करना, घोंकना। ५ कर्षण करना, ओतना। ६ पथ बदलना, दूसरा मानो लगाना। ७ उलटना, उलट देना। ८ घान करना, पीना। ९ वापस करना, लौटाना। १० मदीकत करना, मतवाला बनाना। ११ निर्वस बनाना, कमजोर करना। १२ विनाश करना, बरवादेमें डालना। १३ निर्घन करना, गुरोब बना देना। १४ उलटप करना, दोहराना। १५ पठन समापन करना, पढ़ जाना। १६ पढ़नेका बहाना करना। १७ विचारना, सोचना-समझना। १८ परिवर्तन करना, बदलना। १९ अनुवाद करना, तर्जुमा बनाना। २० असत्य समझना, झूठा प्रमाण करना। २१ खलीकार करना, न मानना। २२ आघात करना, बात टालना। २३ काटना, मच्छुप करना। २४ व्युत्क्रम पड़ना, फिरना। २५ मोचे ऊपर होना। २६ घूमना। २७ धोका पड़ना। २८ खुदना, कुतना। २९ लौट पाना। ३० बदल जाना। ३१ उलझा होना, मतवाला बनना। ३२ दुर्दिन पाना, वस्तु बिगड़ना। ३३ बिगड़ना। ३४ मरना। ३५ मोटाना। ३६ उमड़ना।

उलट-पुलट ( हिं० पु० ) व्युत्क्रम, फेरफार।

उलटा ( हिं० वि० ) विपरीत, खिलाफ, नाचे ऊपर।

“उलटा चोर, ओतवानकी चोटी,” (शेखरि) कासी पादमीकी ‘उलटागवा’ कहते हैं।

उलटाना ( हिं० लि० ) मोचे ऊपर करना।

उलटा मोन ( हिं० पु० ) भौकाका पयादुगमन, जहाज की पोछेकी चटाई।

उलटाव, उलट देना।

उलटो ( स्त्री० ) उलटा देवी।

“उलटो खोरी ली-काम,” (गोबिंद)

उलटो-कांतरी ( हिं० स्त्री० ) व्यायाम विशेष, एक कसरत। मध्यममें पंजा उलट, उगलिया फंसा-नेका यह नाम है।

उलटो खड़ी ( हिं० स्त्री० ) व्यायामविशेष, एक कसरत। मानवमें दोनों पैर पानीसे उठा पोटर पर पड़वानेको उलटो खड़ी कहते हैं।

उलटो-खोन ( हिं० स्त्री० ) हुदका रंग।

उलटो बगडो ( हिं० स्त्री० ) मुगदस भाँजनेकी एक

राजाको मन देखते ही चन्तर्हित हो गईं। फिर मन्त्रार्थ मियोंको छोड़ चले दले। राजा दोनों मियोंको ले घर वापस पाये, किन्तु उर्वशीके दर्शन न पाये थे। पीछे समझे, कि वह अपने ही दीपसे उर्वशीकी ओर बैठे हैं। पुरुरवाके चौरस चौर उर्वशीके गर्भसे पायु, पत्मावसु, विश्वायु, नृतायु, दृढायु, एवं यतायु मात पुत्र हुये।

अश्वेदने (१०:८५) उर्वशी चौर पुरुरवाका परिचय मिलता है। कालिदासने उर्वशी चौर पुरुरवाके उपाख्यानभागपर 'विक्रमोर्वशी' नामक एक नाटक लिखा है।

उर्वशीतीर्थ (सं. स्त्री.) सोमाद्यम तीर्थ। (आर्य, अथ ५०.)

उर्वशीरमण (सं. पु.) उर्वशी रमयते, रम-ण्यु, इ-तत्। चन्द्रवंश-भङ्गुत पुत्रपुत्र पुरुरवा। उर्वशी देवी।

उर्वशीवह्मन, उर्वशीरूप देवी।

उर्वशीसहाय, उर्वशीरूप देवी।

उर्वा (सं. स्त्री.) शीघ्रक, सीसा।

उर्वाह (सं. पु.) पुरु-अ-वप। उर्वाह, ककड़ी।

उर्वाहक (सं. स्त्री.) उर्वाहक, खानेकी ककड़ी।

उर्वाह (सं. स्त्री.) उर्वाह देवी।

उर्विजा, उर्वेश देवी।

उर्विया (सं. अथ.) दूर, प्राप्त पर।

उर्वी (सं. स्त्री.) लघु-कु नसीयो कुल्लह गुणवच-नादिति डीय। अति प्रथम। उर्व १:१२। १ प्रथियो, जमीन। "वचनरत्नमाला" महादेवपुराण। (१३ १:१०)

२ स्थान, जगह। इसमें आकाशके चारो विभाग चौर भौचे उपरका स्थान सम्मिलित है। ३ एक नदी। ४ लहके मध्यका देश, राजाके बीचकी जगह। ५ वैकुण्ठकार मर्मके अन्त्यतम-दो मर्म।

उर्वीजा (सं. स्त्री.) सीता। प्रथिवीसे उत्पन्न होनेके कारण सीताका यह नाम पड़ा है।

उर्वीधर (सं. पु.) उर्वी धरति, ध-धृच्। १ पर्वत, पहाड़। २ शिपनाम।

उर्वीधत् (सं. पु.) उर्वी-ध-क्षिप्-तुक्। १ पर्वत, पहाड़। २ राजा, बादशाह।

उर्वीह (सं. पु.) उर्वा रोहित, र-ह-क, अ-तत्। हथ, पेड़।

उर्वीय (सं. पु.) राजा, बादशाह।

उर्वीति (वे० ति०) प्रकाश ग्रहण देनेवाला, जो बड़ी हिम्माजत रखता हो। (आर्य)

उर्व (पं. पु.) १ मुसलमानी पीरोंके मृत्यु दिवसका उत्सव। २ मुसलमानी पीरोंके मरनेका दिन। उर्व (सौव घात) पर सकं सेट। इसका चर्च दाह करना है।

उर्व (वे० पु.) उर्व कर्मणि धन्ये क। १ भृगु-विशेष, कोई लड़की खानवर। २ एक व्यक्तिका नाम।

उर्वंग (हिं. वि०) १ नग्न, नंगा। २ धारणहीन, जो टका न हो।

उर्वंगना, उर्वंगना देवी।

उर्वंगन (हिं०) उर्वंग देवी।

उर्वंगना (हिं० स्त्री०) १ उर्वंगन करना, लांघना, पार जाना। २ स्वीकार न करना, टाल देना।

उलका (हिं०) उल्का देवी।

उलगट (हिं० स्त्री०) उलङ्घन, फँदाई।

उलगना (हिं० स्त्री०) उलङ्घना, फँदना।

उलगाना (हिं० स्त्री०) फँदाना, पार कराना।

उलङ्घना, उलङ्घना देवी।

उलङ्घना (हिं० स्त्री०) १ इतस्ततः निक्षेप करना, हाथसे फेंका देना।

उलङ्गा (हिं० पु०) इस्त द्वारा क्षेत्रमें बीज डाल-नेका नियम।

उलङ्गारना, उलङ्गना देवी।

उलभन (हिं० स्त्री०) उलभन देवी।

उलभना (हिं० स्त्री०) १ उदित होना, फँसना।

२ कठिनतामें पहना, चबरा उठना। ३ विवाद करना, झगड़ना। ४ इत्यस्ततः निक्षेप होना, गड़ बड़पड़ना।

"उलभना पाठान् उलभना कृत्विक्।" (अ-शेष)

५ मन्दी बनना, कंठमें फँसना। ६ विवाद होना, झगड़ना। ७ प्रेसमें पहना, चायिक होना।

८ प्रयोग्य सम्बन्ध बढ़ना, नाजायबताहक पहना।

९ मोहित होना, मोहक रह जाना। १० विस्तार

करना, पीछे रहना । ११ जमा होना । १२ काममें लगना । १३ दोष देखना, मुकृताधीनी करना ।

उलझाना ( हिं० क्रि० ) १ ध्वनि डालना, फंसाना ।

२ विशुद्धता लगाना, गड़ बड़ मचाना । ३ कठिनतामें लाना, सुश्रिक्त करना । ४ भ्रमित करना, घुमाना ।

५ विवाद लगाना, लड़ाना । ६ बन्धनमें डालना, बांधना । ७ पीना, टांके मारना । ८ फंदेमें फंसाना, खालमें पकड़ना । ९ बन्दी बनाना, कैद करना ।

१० विवाद या भादा करा देना । ११ लाभ देखाना, खालव देना । १२ माहित करना, फुरेफुरा बनाना ।

१३ विषय डालना, देर लगाना । १४ याड़ी देरके लिये पहनना । १५ रखना, जमा करना । १६ चित्त चटाना, दल घुमाना । १७ विषय पट्ट चाना, गुमराह करना । १८ कुभाव लाना, ठाक न बताना ।

१९ कार्यमें नियुक्त करना, काममें लगा देना ।

उलभाव ( हिं० पु० ) १ व्यावर्तन, फेरफार । २ लटि-लख, फसाव । ३ चिन्ता, फिक्र । ४ उत्पात, गड़बड़ । ५ मिथ्यासम्भावन, नाफहमी, बेसमझ ।

६ कलह, झगड़ा । ७ कठिनता, सुश्रिक्त ।

उलझेड़ा, उलभाव देना

उलझाई ( हिं० वि० ) - उलझा लीनवासा, जो फंसा रहता हो ।

उलट ( हिं० पु० ) १ विपरीतता, उलझाव, पुलट ।

२ परिवर्तन, तबदीली, बदलाव ।

उलटकंदन ( हिं० पु० ) वृक्षविशेष, एक पीटा ।

यह भारतवर्षकी आर्द्र भूमिमें उत्पन्न होता है ।

बहुल शोभायुक्त और तन्तुयुक्त रहता है । इसे पानोमें

मिठाया जैसे हो उतार लेते हैं । बन्कनके लिये

प्रति वर्ष द्वा-तीन बार ६ या ७ फीट की शाखा कटती

है । समन रक्तु तयार जाती है । मूलकी त्वक प्रदर

रोग पर सेवन कराते है ।

उलटकटेरी ( हिं० स्त्री० ) लटकटेरा ।

उलटना ( हिं० क्रि० ) १ व्युत्क्रम समाना, फेर देना ।

२ मोचे-ऊपर करना । ३ पटक देना, चित्त करना ।

४ घटन करना, चोक्ना । ५ कर्षण करना, जोतना ।

६ पद बदलना, दूसरा मानो लगाना । ७ उलझना,

डाल देना । ८ पान करना, पीना । ९ वापस करना,

लौटना । १० मदोन्मत्त करना, मतवाला बनाना ।

११ निर्वल बनाना, कमजोर करना । १२ दिनाग

करना, बरवादेमें डालना । १३ निर्धन करना, गरीब

बना देना । १४ उल्टर कराना, दोहराना । १५ पठन

समापन करना, पढ़ जाना । १६ पढ़नेका बहाना

करना । १७ विचारना, सोचना-समझना । १८ परि-

वर्तन करना, बदलना । १९ अनुवाद करना, तर्जुमा

बनाना । २० असत्य समझना, झूठा ख्याल करना ।

२१ असौकार करना, न मानना । २२ पाश्चात्तर

करना, वात टालना । २३ काटना, मशुल्क करना ।

२४ व्युत्क्रम पड़ना, फिरना । २५ नीचे ऊपर होना ।

२६ घूमना । २७ धोका पड़ना । २८ खुदना, लुटना ।

२९ लोट पाना । ३० बदल जाना । ३१ उन्मत्त होना,

मतवाला बनना । ३२ दुर्दिन पाना, बर्षात बिग-

डना । ३३ बिगड़ना । ३४ सरना । ३५ मोटाना ।

३६ उमड़ना ।

उलट-पुलट ( हिं० पु० ) व्युत्क्रम, फेरफार ।

उलटा ( हिं० वि० ) विपरीत, विनाश, नाच ऊपर ।

“उलटा चोर, चोतवाचो चोटी ।” (लोकोक्ति) कान्हे पादमोकी

‘उलटानवा’ कहते हैं ।

उलटाना ( हिं० क्रि० ) मोचे ऊपर करना ।

उलटा मोव ( हिं० पु० ) नौकाका पयाद्गमन, लड़ाज-

की पोर्किकी चटाई ।

उलटाव, उलट देना ।

उलटी ( स्त्री० ) उलटा देवी ।

“एनटी ओरही बी बाटन” (लोकोक्ति)

उलटो-कांगरी ( हिं० स्त्री० ) व्यायाम विशेष, एक

कसरत । मनुष्यमें पंजा उलट, उंगलियां फंसा-

नेका यह नाम है ।

उलटी पड़ो ( हिं० स्त्री० ) व्यायामविशेष, एक

कसरत । मानवमें दोनों पैर पानेधे चठा पीठपर

पड़ जानेको उलटी पड़ो कहते हैं ।

उलटो-पीन ( हिं० स्त्री० ) दूधका रंग ।

उलटो बगलो ( हिं० स्त्री० ) सुगन्ध मांजरीके एक

कसरत। पहले वचःपर सुहर भाते भी इसमें सुधी गोचे नहीं पड़ती।

उलटो-कमाली (हिं० स्त्री०) मुगदलकी एक कसरत। इसमें मुगदल भाग को भोंक मारते हैं।

उलटो सरसों (हिं० स्त्री०) टेरो, मोचेकी मुंह-वाली कलियोंकी सरसों। इसे अभिचारमें व्यवहार करते हैं।

उलटो-सवाई (हिं० स्त्री०) नौ-शुद्धाविशेष, लड़ाईकी एक लड़ाई। जमीने गोचे सबदरा इससे बंधता है।

उलटो (हिं० स्त्री० वि०) व्युत्क्रमसे, खिलाफ तौरपर।

उलहना, उलटना देखो।

उलहना, उलटना देखो।

उलया (हिं० पु०) १ चतुवाद, तर्जुमा। २ मृत्यु विशेष, किसी किछका नाच। इसमें तासपर उल-सते जाते हैं।

उलयाना, उलटना देखो।

उलद (हिं० स्त्री०) उलटेल, गिराव।

उलदना (हिं० स्त्री०) उलटना, गिराना।

उलप (उ० पु०) वस्त्र, वस्त्र-कपः सम्प्रसारणत्। १ विस्तारण, फैलनेवाली वस्त्र। २ कोमल लण, मुलायम घास। ३ गुल्म, भ्रातृ। ४ वस्ती। ५ शर। ६ कलापिके एक शिथ।

उलप्य (उ० पु०) रुद्ध विशेष। (उल पयः १६१२) (त्रि०) १ उलप-उलप्योय, भाड़ने सरोकार रखनेवाला।

उलप्यत (उ० स्त्री०) १ मैत्री, दोस्ती। २ प्रेम, प्यार।

उलपना (हिं० स्त्री०) उलपलप्यन लेना, झुक पड़ना, लटक जाना।

उलरना (हिं० स्त्री०) रुदना, फांदना, झुकटना।

उलहवा (हिं० पु०) गाड़ीकी उलरने न देनेवाली एक लकड़ी। यह पीछेकी ओर लगता है।

उललना (हिं० स्त्री०) १ गिरना, पड़ना, उलटना। २ उलट पड़ना, पलटा खाना।

उलली (हिं० स्त्री०) १ मत्स्यविशेष, एक मछली।

इसके पक्षी सरस निकलता, जिसका व्यापार चलता है। (उ० वि०) २ र्जगति, विहंगी।

उलसना (हिं० स्त्री०) उलसित होना, धमकना।

उलसना (हिं० स्त्री०) १ प्रफुल्लित होना, फटना, निकलना। २ प्रफुल्लित होना फूल जाना। (पु०) ३ निम्नवाद, गिकायत।

उला—बङ्गालके नदिया जिलेका एक गण्डग्राम वा नगर। कहते हैं—उलू वनसे बाकोर्ष विस्तृत भूमि बावाद होनेसे ही उला नाम पड़ा है। यहां पहले पनेक कुलीन ब्राह्मण और कायस्थ रहते थे। जल-वायु बहुत अच्छा था, परन्तु पीछे बिगड़ गया। कोई पचहत्तर वर्ष बीते मसैरियाने पदापेय कर इस नगरको श्रमग्रस्त कर दिया था। यह एक प्राचीन स्थान है। उलाकी चण्डी देवी प्रसिद्ध है। प्रतिवर्ष बैशाखी पूर्णिमाकी बड़े समारोहसे उनकी पूजा होती है। कितने ही बंगला मुस्लिमोंमें इस नगरका उल्लेख है। चण्डीमण्डपका सूक्ष्म शिल्पकार्य देखनेसे बङ्गालके प्राचीन शिल्पनेपुण्यका परिचय मिलता है। इसे बीरनगर भी कहते हैं। कारण—प्रायः सत्तर वर्ष हुए एक बार रातकी कितने ही पञ्चावारी दस्यु किसी धनिके घर घुसे थे। किन्तु यहांके लोगोंने बीरत्वप्रकाशपूर्वक उनमें कितनों-हीको हताहत किया। इसीसे तत्कालीन जिला-मजिस्ट्रेट एलियट साहबने 'बीरनगर' नाम रखा था। आजकल यहांके मुख्योपाधाय बापू बड़े धार्मिक क्रियावान् हैं। प्रतिवर्ष श्रद्धालु, ज्ञान-यात्रा, जगद्वालिपूजा प्रभृति उत्सव होते हैं।

(हिं० स्त्री०) २ मेमना, भेड़का बच्चा।

उलाकादी—बङ्गाल प्रान्तके मेमनसिंह जिलेका एक नगर। यह मेमना नदीके तीरपर अवस्थित है। लवण और शक्का व्यवसाय अधिक होता है।

उलाटना, उलटना देखो।

उलार (हिं० वि०) पश्चात् दिक्में भारपस्त, पीछेकी ओर दर्शो हुई। यह शब्द गाड़ीका विशेषण है।

उलारना (हिं० स्त्री०) उत्प्रेषण करना, ऊपरकी फेंकना।

उलारा (हिं० पु०) पदविशेष। इसे पोतालके चमत्तमें आते हैं।

ता (हि० पु०) उपालम्भन, शिकवा, शिकायत।  
ता, उल्लोचना देखो।

(सं० पु०) वल-किन्दः सम्प्रसारणम्।  
किन्द देग। २ शिव।

ता (हि० क्रि०) जलनिक्षेप करना, हाथ या  
दूधरी चीजसे पानी फेंकना।

(सं० पु०) १ शाश्वतपत्रयुक्त सता, डाल चार  
पत्ती धन। २ कीमलवृक्ष, सुनायम घास।

(सं० पु०) शिथल, सूख।

तया—१ बङ्गाल प्रान्तके हवड़ा जिलेकी एक  
नदी। इसमें उल्लुवेड़िया, आमता, बाघनान और  
चार चार याने लगते हैं।

हवड़ा जिलेका एक नगर। यह हुगली नदीके  
दो पक्षों २२° २८' उ० तथा द्रावि० ८८° ८'  
पूर्व पर अवस्थित है। उल्लुवेड़िया मेदिनीपुरकी  
पड़ता है। १६८६ ई० पर्यन्त यह स्थान  
गर्मों मिला था।

(सं० स्त्री०) यमानी, भजवायन।

(सं० पु०) उल्ल-उल्लि। हडिस्त्रक शब्द  
), गुराहट।

(सं० पु०) वल-उक् सम्प्रसारणम्। उल्ल-  
उल्लु०। १ इन्द्र। २ पेशवा, उल्लू। ३ उल्लुखल,  
नी। ४ दुर्योधनका एक दूत। ५ विश्वामित्रके  
दूत। ६ एक जनपद। (महा० पु० १८३०) यह  
भारतके उत्तराखण्डमें अवस्थित है। अर्जुन  
यज्ञके समय यहाँ आये थे। उस समय हवन्त  
देशके राजा रहे। (महा० पर्व १६५०) कहीं इसे  
(महा० पर्व ७५१) और कहीं कुन्त (महा० पु० १५७१)  
हवा है। आजकल इसे कुव कहते हैं। ज्वाल-  
तीर्थके उत्तर विषासो तटसे यह जनपद लगता  
हमकी प्राचीन राजधानी नगरकोट थी। वर्त-  
मान राजधानी मुलतानपुर है। ७ बह्मामका एक  
नगर। (अरिष्ट, बह्माम १५७०)

उल्लुवेड़िया। यह साङ्गुनहीन एकजातीय  
है। इसका पर्व शरीर काला रहता, केवल  
हाथ भू सफेद पड़ता है। अर्धे अधिकांश मनुष्यकी

तरफ होते हैं। उल्लुख सीधा चलता और उमा करता  
है। यह 'उल्लक, उल्लक' बोलनेसे त्रीहृद्, पाषाण  
प्रभृति पक्षियोंमें उल्लक कहलाता है। बैठनेसे यह एक  
फीट ऊँचा देख पड़ता है। चौटी और मऊड़ी वर्ग-  
रह इसके खानेकी चीजें हैं। फिर वृषका पत्र और  
उपादेय फल भी इसे पक्का लगता है। यह गोम  
फंदमें नहीं पड़ता। शीतकालमें ही यह एकड़ा  
जाता, क्योंकि उस समय वृष छोड़ भूमिपर सोनेकी  
उतर पाता है। वृषपर पकड़ा जानसे पाहार-जन  
कोड़ता और इहसंसारसे मुँह मोड़ता है। किन्तु  
बड़े शीघ्र ही हिल जाते हैं।

उल्लुखपाद (सं० पु०) पञ्चपादरोग विमेष, छोड़के  
पैरकी एक बीमारी। कूँचको आवर्तन कर जहाँमें  
उत्पन्न होनेवाला शीघ्र उल्लुखपाद कहलाता है।

उल्लुखयातु (वे० पु०) वेदोक्त भस्म विमेष। यह  
भस्म उल्लुखी घृतमें रहता है। (अष्टा० १०३११)

उल्लुकाश्रम (सं० पु०) इन्द्रका भवन, इन्द्रके रह-  
नेकी जगह।

उल्लुख (सं० स्त्री०) कर्ध्वं खड्गमुर्ध्वं प्रयोदरादित्वात्  
ला-क। १ धान कूटनेका काष्ठ वा पाषाणमय पात्र,  
खल। २ गुमा तु, गुगुल।

उल्लुखलक, उल्लुख देखो।

उल्लुखलसन्धि (सं० पु०) कचावहण दगनसन्धि।

उल्लुखनसुत (वे० पु०) उल्लुखन द्वारा अभियुक्त  
सोमरस। (अष्टा० १११)

उल्लुखलिक (सं० त्रि०) उल्लुखनमें कूटा कृपा, जो  
खलमें साफ किया गया हो।

उल्लु (सं० पु०) क्षातिविमेष।

उल्लुत (सं० पु०) उल्लति दिनस्ति यः, उल्लु वाहुल-  
कात् उल्लुत्। १ पञ्जर वर्ष, बहुत मोटा और बड़ा  
साँप। २ जनपद विमेष, एक वन्यती।

उल्लुप उल्लु देखो।

उल्लुपी (सं० पु०) १ मिथकमत्स्य, सूय। (श्लो०)

२ ऐरावत कुलके कौरव्य नामक नागराजकी  
कन्या। पाण्डुनन्दन अर्जुन वनवासके समय गङ्गा-  
द्वारेके निवृत्त इन नागकन्या द्वारा आकर्षित

ही नागलोक पहुँचे थे। वहाँ उलूपीकी प्रायनाके अनुसार उन्होंने विशाह किया। उलूपीने अपनी मनस्कामना मिष्ट होने पर उलूनीको घर दिया था—तुम समस्त जलचरोंको जीत सकोगे। (भारत, भाद्र ११०५०) उसी समय मणिपुरणति उलूनीपुत्र वज्रबाहन पिताके प्रायमनकी वार्ता सुन अभ्यर्थना देने गये। उलूनीने अपने पुत्रको विना युद्धकी सच्चा भाते देख अत्यन्त विरक्त हो विस्तर भर्त्सना बतायी थी। वज्रबाहन उपरस दुःखित न हुये। किन्तु उलूनीने पास जा उन्हें पितासे लड़नेको भड़काया था। उलूपीकी मायासे वज्रबाहनने उलूनीको मार डाला। फिर उलूपीके दिव्य दिव्य मणिके प्रभावसे ही वह जिये थे। (बादमेतिह १८६०) कुमिला और त्रिपुराके राजा अपनेका उलूपी और उलूनीके वंशीय बताते हैं।

उलटना. उलटना देखो।

उलटना उलटना देखो।

उलटना (१०००) उलटना, ठाकना।

उलका (१०००) १ आल्हाद, दुःखी। २ उन्नति, उच्च, वाढ़। (वि०) ३ अविश्व, विरामक।

उलटना, उलटना देखो।

उल्का (१०००) शोधति, उप प्रकारस्य नत्व क ततः टाप्। शब्दकोशः। उत्तर १०१२। १ तेजःपुच्छ, खाला, ज्ञाना, लपट। “उल्का आकाशमग्नः।” (सुप्ति) २ आकाशसे पतित अग्नि, आकाशमग्न गिरी भाग।

किन्तु ही नाग समझते, आकाशसे जो उल्का-काण्ड पड़ते, उन्हें टूटा तारा कहते हैं। गणनातीत कालसे इस आकाशमें उत्पन्न होते पाये हैं। फिर अग्नि प्राचीन कालसे इस प्रभावनीय नैसर्गिक घटनाको देव लोग नामप्रकार कल्पना भी लगाते रहे हैं।

पैक्षिक अथ उल्काको अग्निका चंग जानते थे। “अग्निरथ उल्कामिव सीः।” (अथ १०१४१०)

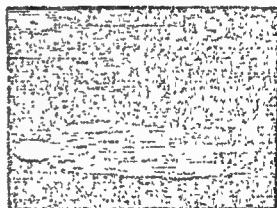
देगके प्राचीन ज्योतिर्विदोंने इसे अष्ट उपपदके मध्य गिना है। उपर देखो। सनका मत इस प्रस्ता-वके उपसंहारकालमें विवृत होगा।

युरोपीय वैज्ञानिक ज्योतिर्विद बहुत दिनसे उल्का

का निगूढ़ तत्त्व समझनेके लिये विस्तार यत्न लगा रहे हैं। किन्तु वस्तुतः वह भाज भी उल्काका निगूढ़ तत्त्व विशेष रूपसे ठूट नहीं मके। जो नाग मत चलते, उनका संक्षिप्त विवरण नीचे लिखते हैं—

किछीकी समझमें टूटनेवाले नक्षत्र (Shooting stars), अग्निके गोलक (Fire-bell) उपनक्षत्र (Asteroids) प्रथमि दीप्तिमान् वस्तु ही उल्का हैं। पृथिवीके निकट आनेसे वह हमें देख पड़ते हैं। युरोपके प्राचीन ज्योतिर्विद कहते कि वायुमण्डलके जर्ध्वभागमें नक्षत्र जैसे कितने ही दीप्तिमान् वस्तु समय समय पर देख पड़ते और गगनमार्गमें द्रुत वेगसे चलते; फिर शीघ्र अन्धकारमें क्षिपते हैं। कभी कभी क्षतिपूर्व वृद्धाकार वस्तु भी दृष्टिमाधुर हो जाते हैं। वायुकी गतिसे उनमें विपर्यय पड़ता है। कोई अल्प-परिचर पथमें फिरते फिरते उल्लव पासीक एवं धूम छोड़ता, कोई दी-तीन खण्डमें टूटता और कोई गभीर गर्जनके साथ फट कर भूमितलपर गिरता है।

उल्का पृथिवीपर नागप्रकारके आकारमें गिरते देख पड़ते हैं। कभी विनकुल निव न रहते गभीर



आकाशमें उल्का।

गर्जनसे उल्कापात हुआ है। कभी निर्मल आकाश पर अल्प समयके मध्य में अकाल अन्धकार अथा और भीषण शब्दके साथ प्रस्तर पड़ा है। कभी आकाशमें अल्प अल्प सर्पाकारसे भ्रमक गभीर गर्जनके साथ उल्का गिरी है। उल्कामें जो प्रस्तर वा लोह रहता है, वह पार्थिव प्रस्तर वा लोहसे नहीं मिलता। किसी उल्काके लोहमें सेकड़े पीछे ८५ भाग द्रवणीय लोह होता है। कहीं कहीं धातव लोहका प्रभाव भी रहता है। लोह ६५।

उल्काका प्रस्तर कभी सुद्राकार कभी लुहदाकार होता है। मङ्गलीयोंके विश्वासानुसार चीन देगके पश्चिमांशमें पोत नदी किनारे, जो ४० फीट उच्च पर्वत पड़ा, वहाँ आकाशमें ही टूटकर पड़ा है।

उक्त नाना आकारोंमें गिरनेसे युरोपीयोंने प्रथम उल्का सम्बन्धपर चार प्रकारका अनुमान बांटा था।

१म—तरल पदार्थसे जैसे धूम उठता, वैसे ही उल्का-सम्बन्धीय द्रव्य भी अतिशय सूक्ष्म आकारमें पृथिवीसे वायुमण्डलके उच्चस्थ सेधपर जा लुटता और रासायनिक क्रियासे मिलकर अपने शुक्लके अनुसार नीचे गिरता है।

२य—उल्काके सकल प्रस्तर पहले आग्नेय गिरिसे निकल अपने गतिके अनुसार आकाशमण्डल पर बहुत दूर पर्यन्त चढ़ते और अवशेषमें फिर प्रथम वेगसे पृथिवीपर गिर पड़ते हैं।

३य—किसी किसी समय पर चन्द्रमण्डलके आग्नेय गिरिसे इतने वेगमें धातु निकलता, कि पृथिवीके निकट आ लगता और पृथिवीकी शक्तिसे खिंचकर भीचे गिर पड़ता है।

४य—सकल उल्का उपग्रह हैं। यह सूर्यके चारों ओर अपने अपने कक्षमें घूमती हैं। सकल कक्ष पृथिवीके वार्षिक गतिके पथमें एक भागसे उत्तीर्ण होते हैं। कभी पृथिवी इन कक्षोंके समान पड़ जाती है। उस समय कक्षके उल्का नामक उपग्रह पृथिवी पर गिरते अथवा पृथिवीके वायुमण्डलमें घुस आकर धूमको शक्तिके प्रभावसे अवशेषमें भूमिपर आ पड़ते हैं।

उक्त चारों मतोंपर बहुत दिन तक वादविवाद चला था। अन्तकी प्रसिद्ध युरोपीय ज्योतिर्विद् हरशेन साइबने स्थिर किया—सकल तारकावर्गके चारों ओर दृष्टिविद्भूत अति सूक्ष्म सुद्रा-मोहरिका तारा (Nebula)की तरह सूर्यके दूर-दूर भी मोहरिका-वत् पदार्थ (Nebulous matter) की राशि घिरी है। उल्काप्रस्तर (Nebulorlic stone) और तारापात (Shooting stars) नामसे दोनोंका भेदगर्क काण्ड मोहरिकावत् पदार्थका विकास मात है।

जब घटनाके क्रमसे भूमिपटल उक्त पदार्थ-राशिके पास पहुँचता, तब वह पृथिवीके चारों ओर घूर्णन-शील चन्द्रवत् (Satellite) समझ पड़ता और पृथिवीके साथ चन्द्रवत् सूर्यके चारों ओर घूम सकता है। वह सुद्रावत् होने भी चन्द्रवत् सूर्यको आलोकसे भक्तक देखनेमें आ जाता है। अनेक उल्का अतिशय सूक्ष्म, कतिपय लुहदाकार हैं। पृथिवी ऐसे अनेक सुक्ष्मों या चन्द्रोंसे घिरी है। इनमें एक एक इतना लुहत् और कठिन रहता, कि सुक्ष्म सूर्यका आलोक भक्तकता है। यह जब पृथिवीके अतिनिकट आता, तब अल्प समयके लिये चर्मचक्षुसे देखा जाता, फिर पृथिवीकी छाया पड़नेमें सम्पूर्ण ग्रहण हो पटना सुंदर लिपाता है।

उसके बाद पेटिट साइबने गणनामें ठहराया—उल्कावर्गमें एक लुहदाकार प्रस्तर है। वह द्वितीय चन्द्रवत् पृथिवीके साथ घूमता है। उल्का कक्ष भूमध्यसे ५०० मील और भूके मध्यभागमें ८०० मील दूर अथवा चन्द्रसे २४ मील समीप है। वह पृथिवीकी चारों ओर १० घण्टे २० मिनटमें एकवार घूमता, अतः प्रतिदिन सात बार पृथिवीकी परि-क्रमा देता है।

अपने देगके प्राचीन ज्योतिर्विद् ज्योतिर्गिरि कहते हैं।

“याज्ञी जतिर्विद् अथैव दक्षिण मया साकारका मन्त्रमयेवर्गमिति दृष्टेः  
निर्गति या अतिशयैवमन्त्रमया साकारकावर्गमिति निर्गति मन्त्रमयावर्गः  
श्रीतारकमन्त्रमयावर्गमयावर्गमिति निर्गति मन्त्रमयावर्गमिति निर्गतिः  
पूर्वमितिः निर्गतिमयावर्गमयावर्गमिति निर्गति मन्त्रमयावर्गमिति निर्गतिः”

जिनकी आकाशगति गणितशास्त्रमें समझ पड़ती और जिनकी अवस्थिति समस्त गगनचारी ज्योतिष्कीसे अति दूर लगती, उन्हें विश्वमण्डली तारका कहती है। फिर जिनकी गतिका निश्चय नहीं रहता, उन्हें ज्योतिर्विद् तारा कहता है। वह जोड़े जोड़े अथवा चन्द्रके अथोभागमें ठहरती हैं। उनमें चन्द्रकी तरह जल भरा है। वह सूर्यके किण्वसे अमक स्फुरित होती हैं। उनका संख्यान पावक और प्रवह दो भाग-तोंके सम्बिलितमें है। फिर क्षीयित भाव प्राप्त होते हैं वह शुक्लके कारण पूर्वपदनमें भूमिके किसी स्थलपर गिर पड़ती हैं।



वराहमिहिरके मतानुसार—सर्गसे शुभफल भोग जो गिर पड़ते, उल्काके रूपका नाम उसका रखते हैं। धिष्णा, उल्का, अगनि, विद्युत् और तारा पाँच भेद हैं। उल्का तथा धिष्णाका पन्द्रह, अगनिका पैंतालीस और विद्युत् एवं ताराका फल छह दिनमें मिलता है। ताराका चतुर्थीय, धिष्णाका चर्वांश और विद्युत्, उल्का एवं अगनिका सम्पूर्ण फल है। अगनिकी प्राकृति चक्राकार है। वह गभीर, गद्गदके साथ मनुष्य, हस्ती, चर, गृह, हथ और जन्तु प्रभृति पर गिरती है। विद्युत् कुटिलाकार एवं विरलत रहती और सहसा कड़कड़ाहटके साथ गिर जीवोंका विनाश करती है। धिष्णा क्षय, अल्पपुच्छविगिष्ट, प्रष्टवन्तित अक्षर-तुल्य और हस्तद्वय परिमित है। तारा एक हस्त प्रमाण, दीर्घाकृति, एवं शूल अथवा ताम्रवर्ण लगती और आकाशमें ऊर्ध्व-प्रधः वा वक्ष-भावसे चलती है। उल्काका गिरीभाग अधिक विरलत रहता और गिरनेसे बढ़ चलता है। पुच्छ क्षय एवं आकार दीर्घ है। यह उसका नानाप्रकारकी होती है। (अनुसंधिता ११ प०)

कलकत्तेके असायस घर (Museum)-में अनेक उल्काप्रस्तर रखे हैं। उनके मध्य एक १८६१ ई०की १२ वीं मईको गोरखपुरमें मिला था। उसका वजन दो मनसे अधिक है। सिवा इसके यमोहर, बाँकुड़ा, प्रभृति जिलोंमें भी वृहत् वृहत् उल्काके प्रस्तर संग्रह किये गये हैं।

उल्काके लोहमें अपर धातु मिलानेसे नानाप्रकारके यन्त्रादि यन सकते हैं। सुनते—ईरान्के बादशाह और तिब्बतके साम्राज्य उल्काके लोहसे बनी तलवार रखते हैं।

उल्कानि (सं० पु०) उल्केयानिः। उल्का, आसमान्से टूटनेवाला तारा।

उल्काचक्र (सं० स्त्री०) १ अमन्त्रका शुभाशुभप्रापक चक्रविशेष। “उल्काचक्रं सर्वत्र भवतीति विदितं” (वटवामन)

२ विप्र, गढ़वट। ३ उपद्रव, इसस्य।

उल्काजिह्वा (सं० पु०) उल्केय जिह्वा यस्य। रामायणोक्त प्रसिद्ध राक्षसविशेष।

उल्काधारी (सं० स्त्री०) मंगलधारी, फुलीतेवाला।

उल्कापात (सं० पु०) उल्कानां पातः। १ तामस उल्कापात विशेष, आसमान्से तारोंका टूटना। २ विप्र, सुरार्ह।

उल्कामत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, क्षत।

उल्कामासी (सं० पु०) मिवके एक मत्स्य।

उल्कामुख (सं० पु०) उल्केय मुखं यस्य। १ प्रेतविशेष।

“आकाशात्कामुखः येनो विनो धर्मात् सबाधः” (मृग १५०१) २ इष्टाकृति एक वंशज।

उल्कामुखी (सं० स्त्री०) शृगाली विशेष, लोमड़ी। इसका पर्याय शृगालिका, लोमालिका, दीप्तजिह्वा और लिखि है।

उल्कपुपी (सं० स्त्री०) उल्का दाहेन क्षयति, क्षुप-क-लौप्। १ उल्का, तारिका टूटना। “अमिहिर प्रथमोऽनुशातः प्रादुर्भितोऽयं उल्कपुपी यतोऽयः” (अथर्वशां ११५०.११) ‘उल्कपुपी उल्का’ (भाष्य) २ मंगल, फुलीता।

उल्कपुपीमान् (सं० पु०) उल्काविगिष्ट, तारिके टूटनेसे सरोकार रखनेवाला। “अथ प्रादादि यम् उल्कपुपीमान्” (अथर्ववेद ३१०४)

उल्का, उल्का दीप्तिः।

उल्का, उल्का दीप्तिः।

उल्का (सं० स्त्री०) उल्का-लौट् श्लेषण इति साधुः। उल्काद्वयः। अथ ४८३। १ अरायु। २ गर्भवेष्टनचर्म। ३ गर्भ, कमल।

“आत्मना” विगोपीनवात्तम् ईश्वरार्थेना।” (आम्रट, उल्काध्वान १५०)

“अर्धो वरायुधस्तः सर्वत्र जगति क्षयः” (अथर्वशां १८११)

उल्काध्व (सं० स्त्री०) उल्का-ध्व-पच् प्रयोदादित्वात्

साधुः। १ प्रयत्न, जोरावर। २ उद्गट, पकड़।

३ व्याप्त, भरा हुआ। ४ झुट, खिसा हुआ।

“इन्द्रोऽथर्वनामोऽपराधान्तराभावात्” (भाष्यदिशम) ५ तीक्ष्ण, तेज।

६ प्रकाशित, लाहिर। ७ निर्वाण, बिछटका।

“तन्वादीन्द्रोऽथर्वनामः कादरेव इति” (रघु ३११) (स्त्री०) ८ शरीरस्थित घात अथवा पिसके प्रकोपका रोग।

(पु०) ९ अगिष्टके एक पुत्र।

उल्क्य (सं० स्त्री०) १ शरीरस्थित घातपिस या कलका

आधिक्य। २ विषद, आफत।

उल्लुक् (सं० स्त्री०) ओपतीति, उपदाह उल्लुक् दर्वीति निपातनात् यस्य लः मुक् प्रत्ययः । १ ज्वरद्वार, जलतो हुई लकड़ी या कोयला । “अथाह्वं पचनादुल्लुक् नादाय” (शतपथभा० १११०) २ अश्विर्वशीय एक राजा । भारत, सभा १२११) ३ बलरामके एक पुत्र ।

उल्लुक् (सं० पुं०) उल्लुके भवं यत् । १ अग्नि, भाग । “अथ ईह उल्लुकोम दहति” (शतपथभा० १२१११-१२) (त्रि०) २ अङ्गार-सम्बन्धीय, जलतो लकड़ीसे सरोकार रखनेवाला ।

उल्लकसन (सं० स्त्री०) रोमाध, रोंगटोंका खड़ा होना ।

उल्लग्न (सं० पुं०) किर्षी स्थानविशेषका लग्न ।

उल्लह्न (सं० स्त्री०) उत्-लघि-ल्युट् । अतिक्रमण, लांघाई, पार जवाई ।

उल्लह्ना, उल्लह्ना देखो ।

उल्लह्नीय (सं० त्रि०) अतिक्रमणयोग्य, जो लांघा जानिके काबिल हो ।

उल्लङ्घित (सं० त्रि०) अतिक्रमण किया हुआ, जो लांघा गया हो ।

उल्लङ्घितासन (सं० त्रि०) आशान माननेवाला, नाफुरमांवरदार, बलवाई ।

उल्लङ्घिताध्वन् (सं० त्रि०) मार्गके ऊपरसे गुजरा हुआ, जो राह पार कर चुका हो ।

उल्लङ्घ्य (सं० त्रि०) उत्-लघि-यत् । उल्लह्नके योग्य, लांघने लायक ।

उल्लम्फ (सं० स्त्री०) उत्-रन्फ-ल्युट् । कूद-फांद, छला ।

उल्लम्बित (सं० त्रि०) दण्डायमान, सीधा, खड़ा ।

उल्लल (सं० त्रि०) उत्-लल्-लच् । १ बड़बोम-गुल्ल, मोटे बालोंसे ढका हुआ । २ कम्पायमान, झिलता हुआ, जो कंप रहा हो ।

उल्लसत् (सं० त्रि०) १ कम्पायमान, झिलता हुआ । २ अनियमित रूपसे चलायमान, जो बेकायदे सरक रहा हो ।

उल्लसित (सं० त्रि०) उत्-लल्-लङ् । १ उल्लसित, जो चल चुका हो । २ तरलित, बहता हुआ । ३ कम्पित, कंपनेवाला ।

उल्लस (सं० त्रि०) १ प्रकाशमान, चमकीला । २ सज्ज,

सज्ज । २ वहिर्गमन करनेवाला, जो निकल रहा हो ।

उल्लसत् (सं० त्रि०) १ क्रीड़ा-वा नृत्य करनेवाला, जो नाचकूद रहा हो । २ दीप्त, चमकीला । ३ स्वेच्छा-चारी, मनमोजी ।

उल्लसता (सं० स्त्री०) १ दीप्ति, चमक । २ प्रसन्नता, खुशी ।

उल्लसन (सं० स्त्री०) उत्-लल्-ल्युट् । १ हर्षजनक व्यापार, खुशी पैदा करनेवाला काम । २ रोमांच, रोंगटोंका खड़ा होना ।

उल्लसनक, उल्लसन देखो ।

उल्लसित (सं० त्रि०) उत्-लल्-लङ् । १ स्फुरित, फड़कने वाला । २ उदगत, उठा हुआ । ३ चानन्दित, खुश ।

उल्लसित-हरिण-केतन (सं० त्रि०) जिसके हरिणका भण्डा फहराये ।

उल्लाघ (सं० त्रि०) उत्-लाघ-ल निपातनात् । १ नीरोग, जिसके कोई बीमारी न रहे । २ दृढ, शोमियार । ३ शुचि, पाक-साफ़ । ४ छट, मजबूत । (पुं०) ५ मरिच, मिर्च ।

उल्लाघ (सं० पुं०) उत्-लघ्-लच् । १ शोक, अफसोस । “अनीलापः शोकाः अथवापि महात्मापराः” (मनुस्मृति १११) २ कष्ट-स्वरके साथ आशान, जोरकी पुकार ।

उल्लापक, उल्लापि देखो ।

उल्लापन (सं० स्त्री०) उत्-लघ्-लघि-ल्युट् । १ प्रतिप्रभृति द्वारा आत्माकी प्रकृत व्याख्याका करना, समझा समझा कर कहना । २ सुशामदो बातें, ठकुरसीछाती ।

उल्लापिक (सं० त्रि०) वर्चन करनेवाला, जो सुशामदकी बातें कहता हो ।

उल्लापिन् (सं० त्रि०) आशान करनेवाला, जो जोरसे पुकार रहा हो ।

उल्लाघ्य (सं० स्त्री०) उत्-लघ्-लघि-यत् । प्रेम पर दाम्पत्यविषयक नाटकविशेष । यह स्मरणीय घटनापर बनता है । सङ्घामुक्ता हो वर्चन अधिकारी होता है । हास्य, कदवा प्रकृति रस-योर सङ्गीतसे उल्लाघ्य बना रहता है । नायक उदात्त शुद्धचरित्र होता है ।

किन्तु यह एक ही जगता है। किसी-किसीके कथना-नुसार सप्ताष्टमें तीन यह और इत्सी शिल्पकाइ यहुंते हैं। सप्ताष्टके मध्य 'दिवीमहादेव' नामक संस्कृत पात्र्य प्रसिद्ध है।

समान (मं० पु०) कन्दोविशेष। इसके प्रथम एवं  
द्वितीयमें पन्द्रह और द्वितीय तथा चतुर्थादमें तेरह  
मात्रा नगती हैं।

उष्णाला ( हि० पु० ) हृन्दोपिग्रेयः । इसके छरणक  
चरणम केवल तरङ्ग मात्रा लगती हैं ।

उत्तास (मं० पु०) उत्-सन्-घञ् । १ अन्य विग्रह-  
का परिच्छेद, किसी किताबका बाध । २ पाखाद,  
खुशी । ३ प्रकाश, रौशनी ।

“मौदित्यवयवोद्भाषणद्वयप्रतिपादितम् ।” ( भाट्टित्यवयव )

अनुभावक और विषयके भेदानुसार एक वस्तुका बहुप्रकार वर्णन यानिसे उल्लेखालङ्कार होता है।

४ वर्णन, वयान्।

उल्लेख ( सं० स्त्री० ) १ वसन, कौ। २ खनन, खोदाई।

“सम्पत्तौ भोपाधनेन रेकेनोन्नते खनेन च।

यथाच परिवर्तिते भूमिः यथापि पथभिः ॥” ( मनु ३।१२४ )

३ उच्चारण, तत्त्वकफुज्ज।

“सावपचरिधौनाय निमित्तानाथ चर्चतः।

उल्लेखनमकुर्वाणो न तस्य फलमायु भवेत् ॥” ( तिष्यादिताम्र )

४ कौतूहल, गवाई। ५ निर्देश, देखाई। ६ चित्रकारी, सुसज्जरी।

उल्लेखनीय, ( सं० त्रि० ) उल्लेख दीखी।

उल्लेख्य ( सं० त्रि० ) उल्लेखित-यत्। उल्लेखके योग्य, लिखने लायक।

“नदीनत् सिद्धये सन्धे रापीलेष्य ददाति ते।” ( कथावर्णि )

उल्लोच ( सं० पु० ) ऊर्ध्व लोचते, पथया ऊर्ध्व लोचति, उत्-लोच-घञ्। चन्द्रातप, तम्बू, चंदोषा।

उल्लोप्य ( सं० स्त्री० ) उत्-लुप-यत्। गीतविशेष, एक गाना।

उल्लोच ( सं० पु० ) उल्लोहोति, उत्-लोह-णिच्-घञ्। हृत्पुत्ररङ्ग, बड़ौ लहर।

उल्ल, / उल्ल दीखी।

उल्लण, उल्लव दीखी।

उल्लट—प्रसिद्ध वेदभाष्यकार। इन्होंने शुक्लयजुर्वेदकी काण्डशाखाका भाष्य और ऋग्वेदीय ‘शौनकाप्रतिशाख्यभाष्य’ नामक ग्रन्थ बनाया है। यजुर्वेदमन्त्रभाष्य पढ़नेमें समझते हैं कि उल्लट अल्लटके पुत्र और आनन्दपुरके अधिशासी थे। यथा—

“आनन्दपुरवासभाष्ययज्ञाश्रमक वसुना।

समभाष्यमिदं कर्तुं यदुवाचतेः पुनिचिन्ते ॥”

किश्कीक मतानुसार ई० एकादश शताब्दीमें भोजराजके समय यह अवन्तिनगरमें विद्यमान रहे। भविष्यभक्तिसाम्राज्य नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखते हैं कि उल्लट काशीर देगमें रहते और मन्थतया कैयटके समसामयिक थे।

“उल्लटी मन्थट्टी केयटकेति ते यथा।

केयटो माण्टीकाहृदयटी वेदभाष्यकर्तुः ॥” ( भक्तिमा० ३।८५० )

सुननेमें आया है कि ऋग्वेदीय शौनकाप्रतिशाख्य-भाष्य लिखने बाद उल्लटने ऋग्वेदभाष्य बनाया था।

उल्लटा ( हिं० स्त्री० ) उल्लित होना, मिथन पाना।

उल्लनि ( हिं० स्त्री० ) उल्लय, उल्लान, निकास।

उल्लङ्घ्य ( सं० पु० ) लुपतिविशेष, एक राजा।

उल्लत् ( सं० त्रि० ) वग-गल्ल। पाकाङ्गाकारो, खाङ्गिमन्द, चाहनेवाला।

उल्लती ( सं० स्त्री० ) वग-गल्ल-डोप् सम्प्रसारणम्।

१ पाकाङ्गिची, चाहनेवाली। २ धमल्ललवाण्य, बुरी बात।

उल्लघक ( वै० त्रि० ) अभिजाप रखने और दहन करने वाला। ( लापव )

उल्लना ( वै० घञ्० ) अभिजापने, पुरीमें, जन्म।

उल्लनाः ( सं० पु० ) वग कान्तौ कान्ति गृह्यादि-त्वात् सम्प्रसारणम्। वनेः कान्तिः। उल्ल० १२०। देखगुह्युल्लानाचार्य।

“आलासोमनसः पुतायनाद्युत्तरवाक्याः ॥” ( भात, चर्च )

यक दीखी।

उल्लवा ( सं० पु० ) लल्ल विशेष, एक पेड़। इसका मूल रत्नशोधक है। खुन् विगड़नेमें प्रायः लोग उल्लवा पीते हैं।

उल्लाना ( वै० स्त्री० ) वग-पानम्। लाण्य-वाचकोरपन-महिषु पानम्। ला ३।१।१८। पथतज्ञात यन्नीय सोपधिविशेष, होममें लगनेवाली एक पहाड़ी वृत्। “नदीवागना लाण्य-विविशेषे ॥” ( इतरवगः ३।१।१६ )

उल्लिक् ( सं० त्रि० ) उल्लते, वग-इभिः-कित्। वन, वन, उल्ल० १०१। १ कमनीय, चाहा जाने लायक, उम्दा। २ मिठाई, होमियार। ( निष्य १।११ ) ( पु० ) ३ पणि, पाग। ४ छत, घों। ( स्त्री० ) ५ कश्चि-वान्की माता।

उल्लित ( सं० त्रि० ) अभिलषित, चाहा हुआ।

उल्लो ( सं० स्त्री० ) वग-दे सम्प्रसारणम्। अभिजाप, पाङ्गिम।

उल्लोक्, उल्लिक् दीखी।

उशीर ( सं० पु० ) उशीरदी वाष्पामदी नरो यत् ।

१ गन्धार देश । २ गन्धार जनपदवासी चतयि ।

“उशीरश्च चवित्रश्च पुष्पिताचारः शीतः ।

शोणित्वं न विदुः कदाचित् चवित्रमपि ।

इत्येतं चवित्रं प्राक्चानुसन्धेयम् ॥” (भारत, चतु १३११)

३ चन्द्रवंशीय एक राजा । यह गिवि राजाके पिता और महाभारतके पुत्र थे । इनके चरित सम्बन्ध में कहा है—

“एक समय इन्द्र और अग्निने उशीरका धर्मबल देखनेके लिये ध्येन एवं कपोतकी भूति बनाई । और अग्निने भयने कपोतने राजाके लक्ष् देशमें जाकर आश्रय लिया । तब अग्नि कहे लगे—अपने भय कपोतके आपूना आश्रय पकड़नेसे मैं भोजनाभावसे अत्यन्त कातर हो रहा हूँ ; अतएव उसे देकर अपना धर्म बचाइये । राजाने उत्तर दिया—इस कपोतने तुम्हारे भयने घबड़ाकर ही हमारा आश्रय लिया है, इसको छोड़ना हमारा धर्म नहीं, क्योंकि गरुडगताका त्याग विम, गो और माछइत्यादि तुल्य पातक है । अग्नि बोला—आहारके लिये ही सब प्राणी बने और आदरसे ही सब जीव पले हैं ; अन्त्याय सकल विषय छोड़ विरकाज की सकते हैं, किन्तु आहार न मिलनेसे ही लोग मरते हैं—आहार न पानेसे मेरा प्राण कैसे बचेगा और मेरे मरनेसे ओपुत्रोंका ठिकाना कहाँ लगेगा । इसलिये एक कपोतकी रक्षासे बहु प्राणी नष्ट होते हैं । अतः धर्मसे विरोध रखनेवाला धर्म कुधर्म है । इन दोनोंके साथ कुछ लघु देव उचित कर्तव्य निर्धारण कीजिये । राजाने कहा—अग्नि ! अपनी बातसे धर्मस ममक पड़ते भी तुम क्यों अधार्मिककी तरह ऐसा अनुरोध करती हो ? सुधा मिटानेके लिये कपोतकी छोड़ अतः ओ पाहो, कहते हो पावोने । इसपर अग्निने कपोतकी बराबर राजाका मांस मागा था । राजाने अविवक्षित चित्तसे यही मांस कपोत परिमित मांस देने देने क्रमसे सब गरीर काट डाला ।

(भारत २२ १११ २०)

उशीर ( सं० पु० क्री० ) यग-ईरन्-कित् । २८ विष्णु ।

२८५११ । सुगन्धिमूलक, खस ।

संस्कृत पर्याय—अभय, नसद, मेघ, चन्द्रपाल, जलामय, कामकक, लघु, लघु, अवदाह, इटकापय, उषोर, नृपाल, लघु, लघु, अवदान, इटकापय, इन्द्रगुप्त, जलपाल, हरिमय, योर, योरक, समगन्धिक, रणमय, योरतर, गिगिर, शीतमूलक, विताममूलक, ललमेद, सुगन्धिक, सुगन्धिमूलक और कथु है ।

खसका छत्र ५।६ फीट पर्यन्त बढ़ता है । मूल पीताभ पांशुवर्ण, गन्ध तीव्र और आघात कटु है । यह भारत और ब्रह्मदेशमें उत्पन्न होता है । इसको लड़की पक्षे और टहोमें लगाते हैं । पाजकल इसे युरोपमें कितनेही लोग सुगन्धि द्रव्यकी तरह व्यवहार करते हैं । सबको लक्षके साथ बाँटकर मत्तपर लगानेसे तरावट जाती है । वैद्यकके मतसे उशीर चर्म, दौर्गन्ध, दाह, रक्तपित्तका रोग, मोह, भ्रम, क्वर तथा पित्तको दवाता और सुगन्ध बढ़ाता है । यह शीतल, लघु, तिक्त एवं पाचक है ।

उशीरक ( सं० क्री० ) उशीर खाँचें कन् । उशीर देशी ।

उशीरगिरि ( सं० पु० ) पर्यंत विमेष, मैनाक पहाड़ ।

उशीरवोज ( सं० पु० ) १ उशीरका वीज, खसका तुल्यम् । २ मैनाक पर्यंत, हिमालयके उत्तर एक पहाड़ ।

उशीरस्तम्भ ( सं० पु० ) खसका गड्ढा ।

उशीरादिचूर्ण ( सं० क्री० ) चूर्ण विमेष, एक चुकनी ।

उशीर, तगरपादुका, गुण्डो, काकसा, श्लेत्तचन्दन, रत्नचन्दन, लवङ्ग, पिप्पलीमूल, पिप्पली, एला, नान्दीवर, सुप्तक, यष्टिमधु, कर्पूर, वंगनोचन और तेजःपत्र सबकी बराबर ले कूट-पीसे । फिर समुदाय चूर्णके समान लवङ्ग चगुहका चूर्ण छान चट गुप्त शर्करा मिलानेसे यह प्रसृत होता है । उशीरादि चूर्ण बाधा तोला लेनेसे रक्त वमन, विपासा और गाददाहका रोग मिट जाता है । इस औषधके सेवन बाद दो तीनों गुलरका रस छेड़ तोला चोनी मिलाकर पीना चाहिये ।

उशीरादि पाचन ( सं० क्री० ) पाचन विमेष, एक काढ़ा । उशीर, वाला, सुप्तक, धान्यक, गुण्डी, बराकाला, मोक्ष एवं मेसगुण्डी चार-चार पानेभर ले पाच केर लक्षमें पकाये । पाच पाच लक्ष लक्षते-ब्रजते बचने पर उतार कर पाचनको ज्ञान सेना चाहिये । इसे

पीनेसे श्रुचि, पतिग्रय वेदमायुक्त विषह घर्षा, च्वा-  
तिसार और रक्तातिशार प्रभृति रोग प्रशमित होते हैं ।

उशीरासव ( सं० स्त्री० ) आसव विशेष, एक दवा ।  
उशीर, वाला, पद्ममूल, गन्धारीत्वक्, नीलोत्पल,  
प्रियङ्गु, पद्मकाष्ठ, ओषध, कुड़, मन्दिषा, दुरासभा,  
पर्क, चिरायता, छटुम्वरत्वक्, राठी, चैत्र-पापड़ा,  
पटोलपत्र, काञ्चनत्वक्, चमरुदकी छाल, तथा मोचरस  
आठ-पाठ तोले, द्वाधा १६० तोले, घायके फूस १२८  
तोले, चीनी छाने सेर, मधु सवा छह सेर और जल  
आठ सेर किसी नूतन पात्रमें डाल मुँह बांध कर एक  
महीने रख छोड़ें । फिर इस आसवको उपयुक्त माचमें  
शेवन करनेसे रक्तपित्त प्रमेह प्रभृति अनेक रोग विनष्ट  
होते हैं । इस आसवको राखनेका पात्र प्रथमतः  
जटामांसी और मरिच चूर्ण द्वारा धूपित कर लेना  
चाहिये ।

उशीरिक ( सं० पु० ) उशीर-छन् । विषयादिभ्यः ङप् ।  
पा ३।१।११ । १ उशीरका व्यवसायी, खसका रोजगार  
करनेवाला । ( त्रि० ) २ उशीर सम्बन्धीय, खसका  
वना हुआ ।

उशीरी . ( सं० स्त्री० ) उशीर स्त्रियायें ङीप् । कोटे  
केशि । इनका संरक्त पर्याय मिथि, गुण्डा, चम्पला,  
नीरज और गर है । यह मधुर एवं शीतल और पित्त,  
दाह तथा क्षयरोगनाशक है । ( राजनिषध )

उशीर्य ( सं० त्रि० ) उशीर-केन्द्र । लकारेण तर्केन केन्द्रकेत्वत्तः ।  
पा ३।१।१४ । कसनीय, खूब घुरत, चाहाजाने काविल ।  
“ वा यो मावीरुगो अमिठि ” ( अष्ट, ७।१८ )

उष् ( धातु ) सक० भ्वा० पर० सेट् । इसका चयं  
दहन और बध करना है ।

उष ( सं० पु० ) उष-ज्ञ । १ चारमुत्तिका, खारी  
मही । २ प्रमात, सवेरा । ३ रात्रिका मेघ समय  
रातका आखिरी वक्त्र । ४ कासी, गङ्गवतपरम्प ।  
५ गुग्गुलु, गुग्गुर । ( स्त्री० ) ६ पाण्डुर सक्षप ।  
उषह् ( सं० पु० ), संहारकर्ता मङ्गेश्वर ।  
उषथ ( सं० स्त्री० ) उष बाहुलकात् ण्युन् वा ।  
१ मरिच, मिर्च । २ शण्डी, सोंठ । ३ चविका ।  
४ पिप्पलीमूल, पिपलमूल ।

उषथा ( सं० स्त्री० ) उषथ-टाप् । १ पिप्पली, पीपर ।  
२ शण्डी, सोंठ । ३ चविका ।

उषथादिचूर्ण ( सं० स्त्री० ) चूर्णादिविभिय, एक वृकनी ।  
मरिच, पिप्पलीमूल, मूस्तक, पतिविषा, वासकत्वक्,  
गोक्षुर, हड्डी, कण्टकारी, यष्टिमधु, मूर्वामूल,  
ब्राह्मणयष्टिका, मोवा, वंगलोचन और यवधार  
बराबर एक साथ कूट-पीस कपड़ ज्ञान करनेमें यह  
चूर्ण वनता है । उषथादिचूर्ण एक मासा जलके साथ  
खानेमें लोहितज्वर, पिस्कोटक, रोमान्तिका, जीर्णज्वर,  
और मसूरिका रोग अच्छा हो जाता है ।

उषत् ( सं० पु० ) यदुर्वशीय एक राजा । इनके  
पिताका नाम सुयज्ञ और पुत्रका मिनेयु था ।

उषती ( सं० स्त्री० ) उष-गृह-ङीप्, भागमविधेरनित्य-  
त्वाम् नुमभावः । अमङ्गलवाक्य, नागवार जुबान,  
निज बातसे दूसरेका दिल दुखे । “ यथाश वाचा पर उरिभ्रम  
न तां वदेदुषतीं पापशोचाम् । ” ( भारव, अदि १।८०, ८ )

उषदगु ( सं० पु० ) यदुर्वशीय एक राजा । यह  
स्वाहि राजाके पुत्र थे ।

उषद्रय ( सं० पु० ) पुर्वशीय एक राजा । यह  
तिगिष्ठके पुत्र और उमोनरके भ्राता थे । ( एरिव २।५० )

उषय ( सं० पु० ) शोपतीति, उष दाहे कपन् ।  
उत्तिष्ठतिश्रितचिन्तितः कपन् । उष् ३।१।११ । १ अग्नि, भाग ।  
२ सूर्य । ३ चितावृक्ष, चीतका पेड़ ।

उषवृध् ( सं० त्र० ) प्रत्युपमं उठनेवाला, जो  
तड़के जागता हो ।

उषवृध् ( सं० पु० ) उषधि बुध्यते, उषस्-बुध-क ।  
१ अग्नि, भाग । “ श्रुत्य शेषवादिनाम् ईषा उषवृधः । ” ( अष्ट  
१।१०८ ) २ रक्तचिता, सासचीत । ३ ज्ञानक, ब्रह्मा ।

उषस् ( सं० स्त्री० ) शोपति दिनस्मरत्यन्वकारमिति,  
उष-धमिप्रत्ययः स च कित् । उषः विन् । उष्, ३।१।११ ।  
प्रत्युपकाम, सवेरा, तड़का । “ वापीतमन्दिनाम् उषः-  
रिक्तेष्विति । ” ( एष १।५१ )

उषसी ( सं० स्त्री० ) उषं दिवसं स्थिति विनाशयति, उष-  
सी-क-ङीप् । सङ्घाकाश, ग्राम ।

उषसत ( सं० पु० ) पाण्डुर सक्षप, सोमी मीका  
जमक ।

उपस्त ( सं० पु० ) साक्षात्पश्यति । "तो दोनल्लसायप  
उपस्तान् ।" ( अमरकोशः १४/१११ )

उपस्ति, उपस्त देखो ।

उपस्य ( सं० द्वि० ) उपस्यन् । पाण्डुरित्तिको २१ । पा  
१/१११ । प्राभातिक, सहैरेवासा ।

उपा ( सं० स्त्री० ) उपा स्त्रियां टाप् । १ वेदोक्त देवता,  
वेदकी एक देवी । ऋक् और सामसंहिताके अनेक  
मन्त्रोंमें इन देवीकी नुति की गयी है ।

ऋक्संहिताके मतमें—यह षाकाशकी कन्या  
( ऋ. १/१४०/१८ ) भग एवं वहवकी भगिनी ( अथ  
१/१११/१४ ) और रात्रिकी बड़ी सद्योदर ( ऋ. १/१११/१८ )  
है । रात्रि और उपा दोनों कई जगह साथ साथ  
भगिनी कही गयीं—“भगो वस, उपावसतम्” । यह सूर्यकी  
प्रणयिनी है । उपा मनुष्योंका आयु दिन-दिन घटा  
प्रकाशित होती है ।

वेदमहितामें जिम भाषमें इनकी बताया है, उसका  
उदाहरण नीचे दिया जाता है—

“उपा उपायौ भगिनीम् उपा उदन्, एवं उपां आतिरिच्येत् ।  
चौनरती है अति कतिन कतिनो मनुका पुत्रम् ।  
ईदुपात्तुपमयतीगादयतीनां प्रकृतिषा मन्त्रिण ॥२॥  
उपा दिवि दुहिता अन्तरि ओतिमान्ता सवसा पुत्रमान् ।  
अन्तर पन्तमर्षि ति गात्र प्रजापतीम् न दिवि निमार्ति ॥३॥  
उपो अन्तरिधु को न बको ओषा इतिरिक्त निमार्ति ।  
अदन्त मन्त्रो बोधमो अन्तरमन्त्रान् पुनर्दुहोन्ताम् ॥४॥  
पुन अन्तर मन्त्रो अन्तर मन्त्रो अन्तरमन्त्रान् पुनर्दुहोन्ताम् ॥५॥  
पुन अन्तर मन्त्रो अन्तर मन्त्रो अन्तरमन्त्रान् पुनर्दुहोन्ताम् ॥६॥”

( ऋ. १/१०, ११० १० )

अग्नि के समिध द्वारा जन उठनेसे उपा अन्त-  
कारकी चाहमें सूर्योदयको तरह बहुत ज्योति प्रकाश  
करती है । वह देवव्रतकी अभिप्रेतकारिणी और  
मनुष्यकी आयुःस्यकारिणी है । अतीत तथा नित्य  
उपा सकलके समान और आगामां उपा सक्षमके  
प्रथम रहती है । उपा ने खुतिसाम किया है । उपा  
सर्गकी दुहिता है । ज्योतिःद्वारा घिर पूर्व दिक्में  
कलसे वह देग पड़ती है । आगे सूर्यका अभिप्राय  
समझ कर ही वह उनके पथमें घूमती है । वह कभी  
दिमाओंकी हिंसा नहीं करती । सूर्यकी तरह वह

अपना वयः देपाती रहती है । गोधा ऋषिके समान  
अपना म्रियवसु दुन्दुभेके सिधे उपा ने भी अपनेको  
आविष्कार किया है । ऋषियों की तरह उठकर उपा  
जगत्में सबको जगाती है । यह अभिप्रेतकारिणीमें  
सबसे आगे पाती है । यह षाकाशके पूर्व भागमें  
निकल दिमाओंको चेतन्य करती है । यह जनक-  
स्यामीव सगे और पृथिवीके पङ्क्तिमें बैठ दोनोंको  
भरपूर फैलाती है ।

“उदनीरप उदनीरिपु को दोधे दन्ते उदन्त भागः ।

अनन्तमर्षिदन्त दोनमाने कैशा कन्तुं कतिरिचि सयः ॥” ( ऋ. १/१११/१८ )

जैसे दो पाज वैसे दो कस भी यह उपावदा  
है । प्रतिदिन उपा वहव एवं सूर्यकी अभिसिन्धितके  
स्थानसे १० योजन आगे रहती है । एक एक उपा  
उदयकाल पर ही गमनागमनरूप धर्म निर्वाह किया  
करती है ।

इन्ने ही उपाको उत्पत्ति किया है—“यः शुः व  
उदन्तं जगन्, ” ( ऋ. १/११० ) फिर इन्द्रको उपाको विनष्ट  
भी करते हैं ( ऋ. १/११०/११ ) ।

निघण्टुमें उपाके यह नाम मिले हैं—विमावरी,  
सूररी, भास्वती, चोदती, चित्रामया, पञ्जनी, याजिनी,  
याजिनीयती, सुखावरी, अण्मा, द्योतना, गोत्या,  
अरुषी, सृजता, सृजतायता, सृजतावरी । ( नि. ५, १८ )

पूर्व कालमें ग्रीक और रोमक उपा देवीकी पूजा  
करते थे । ग्रीक उपादेवीको एफोस (Eos) और  
रोमक चरोरा (Aurora) कहते थे । यह ज़ाएपेरियन  
एवं घेवरकी कन्या, इजिप्टन तथा मिस्रकी भगिनी  
और टिटान अश्विपत्नी पत्नी थी । रोमरने उपाको  
दिवादेवी सिखा है ।

२ प्रस्य, मधेरा । ३ याव राजाकी कन्या और  
अनिहृदकी पत्नी । अनिहृद इन्नेके पितृत्वं विवरण देधी ।

उपाकस ( सं० पु० ) उपादा कलः मन्त्रो यध्य, बहुमी ।  
कुक्षुट, मुर्गा ।

० वाचपाशके मन्त्रोंके अन्तर्गत ३०१८ उपाकी पत्नी १०८  
०८ कोष्टकमें है । ३०१८ उपाकी पत्नी १०८ कोष्टकमें  
पत्नी उपाका उदय होता है ।

उपापति ( सं० पु० ) उपायाः पतिः स्वामी, ६-तत् ।  
अनिरुहः । यह कृष्णके पौत्र और प्रद्युम्नके पुत्र थे ।  
उपा और अनिरुह शब्द देखो ।

उपामानता ( सं० स्त्री० ) प्रत्युप एवं रात्रि, सबेरा और  
धंधेरा ।

उपति ( सं० त्रि० ) वस वा उप-कृत । १ पशुपति, रात  
वितरि कृपा । २ दम्ब, जमा हुआ । ३ निविष्ट, पड़ुं चा  
हुआ । ४ खरित, जन्ट ।

उपितङ्गयोन ( सं० त्रि० ) उपिता अवस्थिता गावो  
यव । गौमणसे खाया हुआ, जहां गावोंने खाया हो ।

उपीर ( सं० पु० स्त्री० ) उप-कीरच् । चोर देखो ।

उपीय ( सं० पु० ) उपाया ईयः पतिः, ६-तत् ।

उपाके ईय अनिरुह ।

उपोदेष्य ( सं० त्रि० ) प्रत्युपकामको देयता  
मानने वाला ।

उट्ट ( सं० पु० ) उप-ट्टन्-कित् । उपविष्टिर्वा कित् ।  
उपगारः । पशुविशेष, जट । संस्कृत पर्याय—क्रमल,  
क्रमलक, मय, मडाक, दीर्घगति, बली, करभ, दासिक,  
धूमर, लम्बोष्ठ, वरष, महाजङ्घ, लवी, जाटिक, दीर्घ,  
शृङ्खलक, महात्, महापीव, महानाद, महाधग,  
महापृष्ठ, वलिष्ठ, दीर्घलङ्घ, पीयो, धूमक, शरभ,  
कण्टकायन, भोलि, बहुकर, अध्वग, मरुदोष, वक्रपीव,  
वाचस्त, कुलनाथ, कुयनामा, मरुमिय, हिककुत्, दुग्गे-  
लङ्घन, भूतज्ञ, दासिक, दोघपीव और वलिवीर्य हैं ।  
संस्कृत क्रमेण भिन्न, भिन्न भाषावांके शब्दांसे मिलता है—  
जैसे संस्कृत 'क्रमल', हिब्रू 'गमेल', ग्रीक 'कामिनस्',  
रोमक 'कमेलस्', इटलीय 'कमेलो', स्पेनीय 'कमेलो',  
जर्मन 'कमेलु', फ्रांसीसी 'कसु', (Ochameau) संग-  
रेजी 'कैमेल (Camel) अरबी 'जमेल' । इनके सिवा  
फारसीका शतर शब्द धूसर जेमा मान्य पड़ता है ।

यह चरव, ईरान्, दक्षिण तुर्कस्थान, उत्तर-पश्चिम  
भारत, इजिप्तसे मरितानियातक चक्रीक, मध्य  
सागर तथा सिनियल नदी तीरके मध्यवर्ती प्रदेश और  
कनारी द्वीपमें पाए जाता है ।

उट्ट तोन जातिके होते हैं—हिगुरन, धेकेती और  
रलहीरी । हिगुरन सबसे बड़ा होता और १५ मन

तक भार होता है । धेकेती हिगुरनसे छोटा पड़ता  
है । पृष्ठमें ककुदाकृति दा कुप रहते हैं । इनके  
बीच द्रव्यादि रखनेसे जिमी दिक् गिर नहीं मरते ।  
८ । ८ मन भार लाटता है ।

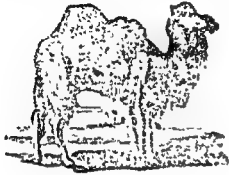
इलहीरी चरव जातीय उट्टसे खर्ब पड़ते भी भारके  
पड़नमें सबकी चपेला पट्ट है । ऐसा बहुकालज्यापो  
हुतगामी पशु कहीं नहीं । इस जिस परदार घोड़े का  
गल्ल सुनते, उसे हुतगति अनुध्यान करनेमें इलहीरी  
हो समझते हैं । चरबी कवियोंने इसकी जोभर प्रशंसा  
की है । इलहीरी पाठ दिनमें प्रायः ४५० कोस  
चफरीकाका दुर्गम मरुपथ तय करता है ।

उट्ट—रोमन्यक कहलाता पर्यात् भुक्त वस्तु उट्ट-  
गौरवपूर्वक फिर चलाता है । किन्तु दन्तकी संख्याके  
अनुसार चरव रोमन्यक पशुओंने इसका लक्षण भिन्न है ।  
चरव रोमन्यक पशुके क्षेत्र नीचेको टंठमें छिदन-दन्त  
कमते, उनके ऊपर पशुभागमें नहीं निकलते । परन्तु  
उट्टके नीचे ऊपर दोनों टंठ बह रहा करते हैं । मोनह  
ऊपर और चहारह नीचे कुल १४ दांत होते हैं ।  
ऊपरी टंठमें २ स्रक्ष, २ तीक्ष एवं १२ पेषण-दन्त और  
नीचे ६ स्रक्ष, ८ तीक्ष तथा १० पेषणदन्त होते हैं ।  
ऊपरके स्रक्ष अधिकांश तीक्ष दन्त-श्रेणि में रहते हैं ।

चरव रोमन्यक पशुवांसे उट्टका दूसरा लक्षण भी  
भिन्न है । घन और गोकाकार गुम्फके चरु (Tarsus)  
पक्षग चलन रहते हैं । फिर चरव रोमन्यकीकी  
तरफ खुर दिखिष्ट नई लुढ़े होते हैं । पाठ  
शयककी तरफ छिदे होते हैं । चरुके गोमक्ष प्रति  
हफ्त पड़ते और कोटरके उपयुक्त नहीं धँसते । नासि-  
का बक और मूत्रोपनके योग्य लगती है । मस्तक  
हलु होता है । पीवा पीव और दीर्घ रहती है ।  
पृष्ठ देग कुल होता है । ऊह तथा कडाका दीर्घ  
अपरिमित रहता है । पद स्थूल और दो मात्र नय-  
विशिष्ट होते हैं । पदका तल प्रमत्त रहनेसे मरुके  
मध्य चलते समय वातुकामें नहीं धँसता । ऊपरका  
चोट शयककी तरफ होनेसे उट्ट वातुकायुक्त चरुस्थित  
कण्टकमय गुच्छादि प्या सकता है । नासिका बक  
और सहोदरन योग्य रहनेसे यह मरुभूमिमें 'सिनुम'



नामक साक्षात् सामान्यक वायुकाका प्रवाह तथा जाता है। यात्राके कालपर जब 'निमुम' नामक वायु चलने लगता, तब उष्ट्रमें नीचे उतर महीमें सुँड़ मुनेट्ट रखने पर पति कटने पारोहियोंका प्राण बचता है किन्तु इसका काम सामान्य मौसिका मिथोइनेमें ही बन जाता है।



उष्ट्र।

उष्ट्रकी पाकस्थलीमें यद्वा चमत्कार है। यह चपर मऊल जन्तुकी पाकस्थली में भिन्न होती है। पहले यह एक चोखनी जैसी समझ पड़ती है। पद्यात् दिक् दो घर रहते हैं। यह मध्यमें एक कठिन पंक्ति द्वारा विभक्त है। यह चंग भचमानोवासे छिद्रपथके दक्षिण पार्श्वमें दबते गया है। इस चोखनीमें जलका पोसरा रहता और पाचनशक्ती पढ़नेसे उष्ट्र फिर जल पी सकता है। किसी किसी घरकी ऐतिहासिकने यद्वातक कह दिया है कि जब सुदृग्मदने टावक जगर-की युनानियोंके विपक्षमें गमन किया, तब सैन्यके सामन्तीनि साधारण एवं पानीयके समावेशे अत्यन्त विपक्षमें पड़ अपने अपने ऊँटकी मार पाक-स्थलीका जल पिया था। (Salis Koran, p. 161.) किन्तु युरोपके वर्तमान प्रादितत्वविद् उक्त घटना नहीं मानते।

इसे वगैरा कष्टप्रयत्न जाना अच्छा लगता है। पद्याधिक साधारण न मिलते भी उष्ट्र कातर चयवा भार वहनमें अचम नहीं पड़ता। अधिक दिन उपयुक्त साधारण न मिलते पर इतकित खजुदके रक्त मांसमें प्रतिपालन कार्य सम्पादित होता है।

पति पुरुषाक्षमें उष्ट्र मानवके व्यवहारमें लगता है। पनेक प्रमाण मिलते हैं कि वैदिक समयके

साथे ऊँटपर चढ़ते थे। (श्व. ११.१८-२१) यह पारकी तरह युद्धमें भी इसका व्यवहार करते थे—

“यदा वच द्रो न दोतोवचः।” (श्व. ११.१८)

वैदिक समयमें ही (श्व. ११.१८, ११.२१) राजा चम गो एवं घनादिकी तरह उष्ट्रदान (भाल, गला) करते पाये हैं।

पशुधान और गोयानकी तरह पूर्वकालमें उष्ट्र-यानका भी व्यवहार रहा (मनु ११.१०)। उस समय ब्राह्मण उष्ट्रयानपर चढ़ न सकते थे। कारण—उष्ट्र-यानपर चढ़नेमें ब्राह्मणकी पाप लगता है—

“उष्ट्रयानं समावृत्तं परवान्मन्त्रात्।

कामा न विप्रो शिवायः प्रावायानेन परवान्मन्त्रः” (मनु ११.१०)

ब्राह्मण यदि अपने इच्छामें उष्ट्रयान चयवा गर्दभ यागपर चढ़ता, तो विपक्ष महा प्रायायाम करनेमें शुद्ध होता है।

यात्रामें उष्ट्रके मांसका भक्षण निषिद्ध है—

“शेषे यष्ट्रघोरेषु सर्वं पचयन् तथा।

कपारं कृष्णं दातुं इषोऽयं सर्वं पचयन्” (दण्डविदा १०.१)

गोष्ठ, झाड़ी, ऊँट, पांचमरुका पशु और मानाभी गाँवका सुगाँ खानेमें सर्वत्र प्रयत्नकरना चाहिये।

बाइबिलमें भी उष्ट्रका मांस अमच्छ-अंश निषिद्ध है—“Because he cheweth the cud, but divideth not the hoof; he is unclean unto you.” (Leviticus, xi. 4.)

उष्ट्र तुम्हारे पक्षमें अशुचि है। शीति जुगाभी चमते भी इसके चुर फटे नहीं होते।

परम देगके कवियोंमें इस पशुकी ‘परख्योत’ केना वर्णन किया है। उष्ट्र उष्ट्रें प्राप्ते अधिक प्रिय है। वह इसके मांस और दुग्धमें जीवन धारण करते हैं। आंशसे यदा वनता और गिरिर्के प्रयुक्तपरपका उपादान मिलता है। यह पशु उत्तरपश्चिम पक्षमें किसी किसी स्थानपर विजता है। विनायतमें उष्ट्रके भोममें कृत्रिम तैयार जाता है। उष्ट्रका मन परम देगमें जलानेके काम जाता और धूमसे निमादन बन जाता है।

वैद्यक मतमें उष्ट्रका दुग्ध मधु, म्याद, मधुसूदा-

एवं दीपन होता और क्षमि, कुष्ठ, शनाह, शोथ तथा उदररोगको दूर करता है।

उद्भ्रुका घृत दीपन और वातश्लेष्मनाशक है। यह पुराना हो जानेसे कट्ट हो जाता है। इसको पीनेसे शोथ, विष, कुष्ठ, क्षमि, गुष्म और उदररोग नष्ट होता है।

उद्भ्रुका मूत्र श्वास, कास और अर्शरोगको मिटानेवाला है।

उद्भ्रुकण्टकभोजनन्याय ( सं० पु० ) उद्भ्रुके कण्टक भोजनका न्याय, ऊँटके काँटा खानेकी चाल। अतसे वह दुःख सहते भी उद्भ्रु जैसे सामान्य भोजनको दृष्टिके सुखकी शमी कण्टक खा जाता, वैसेही मनुष्य भी यत्सामान्य सुखके पागथसे बहुतसा संसारिक दुःख उठाता है। क्षणभङ्गुर सुखके लिये भावो अनन्त दुःखका ध्यान न रखना उद्भ्रुकण्टकभोजनन्याय कहलाता है।

उद्भ्रुकर्ण ( सं० पु० ) जलपदविशेष। यह सिन्धुनदसे उत्तरस्थित एक क्षेत्र देश है। यूनानी ऐतिहासिकोंने इसे अष्टकणि ( Astaceni ) कहा है।

उद्भ्रुकर्णिक ( सं० पु० ) १ दक्षिणदिक्स्थ यवन देश। २ उक्त देशके लोग। उद्भ्रुदेवके दिग्विजयवर्णनपर कहा है—

“नभोनामवर्षादेव कश्चिदागुहकश्चिकान्” ( भारत, उषा )

उद्भ्रुकाण्ठी ( सं० स्त्री० ) उद्भ्रु एवं काण्डोष्ठ, जातित्वात् ङोप्। पुण्यविशेष, ऊँटकटारी। इसका संस्कृत पर्याय—रक्तपुष्पी, करभकाण्डिका, रत्ना, कोदितपुष्पी, और कर्णपुष्पी है। उद्भ्रुकाण्ठी तिष्ठरस, उष्णवीर्य, रुचिकारक एवं हृद्दोगनाशक होती है। बीज मधुर है। शीतल रस उष्ण करनेसे गुणकारी, शोथवर्धक और सक्तार्पणजनक ठहरता है। ( राजनिघण्टु )

उद्भ्रुकीर्णी ( सं० स्त्री० ) उद्भ्रुकी भांति शब्द निकालनेवाला, जो ऊँटको तरह बोलता हो।

उद्भ्रुगीयुग ( सं० स्त्री० ) उद्भ्रुघ्न, ऊँटका जोड़ा।

उद्भ्रुवीय ( सं० पु० ) भगम्बररोग विशेष। प्रकीर्णित पित्त द्वारा वायु पचःप्रेरित होता है। वहाँ उससे ठहरनेसे रक्तवर्ण, सूज, उदत उद्भ्रुवीशकार पिडका पड़ जाती है। उसमें तपकनेकी तरह वेदना

पड़ती है। फिर प्रतिक्रियामें वह पक जाती है। ( उद्भ्रु ) माधवनिदानमें इसका नाम ‘उद्भ्रुमिरोधर’ लिखा है। भगम्बर रोग।

उद्भ्रुधूसरपुच्छिका ( सं० स्त्री० ) उद्भ्रुधूसरः पुच्छ इव पुच्छः मन्त्ररो यस्याः। कश्चिकानी, विपुषा।

उद्भ्रुपक्षी ( सं० पु० ) हुतगामो एक मृचर पक्षी, यतुर-सुगं। ( Struthio camelus ) इसकी चोंच मंभीनी, फंजी और भीतरकी गान होती है। मत्स्या छोटा और गला नम्रा पड़ता है। दोनों पेर अधिक हड़त् और बलिष्ठ रहते हैं। पेरमें दा-दो तलवे होते हैं। उनमें एक भीतर और एक बाहर खगता है। भीतरसे व्यादा बड़ा और स्पष्ट होता है। बाजने यह उड़ नहीं सकता। किन्तु दोड़नेमें बड़ी सुविधा होती है। बाजू और पूँछमें मुलायम पर रहते हैं।

यतुरसुगं अपर सकल पक्षियोंकी अपेक्षा बड़ा ठहरता है। इसलिये ‘पक्षिराज’ कह सकने है। यह चारसे छह हाथतक ऊँचा निकलता है। क्षीणान्ति एककाल प्रायः १० पण्डे देतो है। फिर एक एक पण्डा मुरगीके २४ पण्डोंकी बराबर बैठता है।

पक्षि नरका काला और चिकना तथा माटे या बसोका पालक काला पचप कबरा—बीच-बीच मकेद रहता है। बाजू और पूँछके बड़े-बड़े पर मकेद होते हैं। बीच-बीचमें काले धब्बे टेप पड़ते हैं। बहुत पतिगय तीक्ष्ण और उष्ण रहते हैं। इसे अधिक दूरके द्रव्यादि सहजमें हो देखायी देते हैं। यह बहुत बलवान् होता है। घटनाक्रममें पाक्ष-मण पड़नेपर यह पदके पाषातमें व्याघ्रादि शत्रुओंको हरा सकता है। प्रति घण्टे यतुरसुग २० कोसमें अधिक जानेकी शक्ति रखता है। पतिगय भ्रष्टरनेमें यह सहज हो जाय नहीं लगता। दक्षिण पक्षीकाके लोग यतुरसुगका जो चमड़ा पहन यतुरसुगके पाते पहनते हैं। यह उन्हें भी यतुरसुगें समझ गज्जदोक खानेसे नहीं राकता। इसी उपायमें वह निरुद्ध आ और विषाक्त तीक्ष्णसा हमें मार जानते हैं।

यतुरसुगें परब और चक्रोकाथी मरुभूमिमें रहता है। इसे शीघ्र खणा नहीं लगने। दो-चार दिन

वाट कर यथातं देयायी देता, तब मरुभूमि में मध्यमे  
निकास यह कभीदि या घरबुजका जल वो नेता है।  
सुधा पाने पर कम छोटा पयो बानका दाना तोड़  
तोड़ चुगता, घेंसेही गुत्तुरमुगं बड़े बड़े पछार, मोहेके  
टुकड़े, जट्टड़, काँचके बरतन, ताँबेके मिर्के और टूटे  
सूते निगलने लगता है। चफ़रोकाकि भोग इसके  
चण्डे पाते हैं। प्राधेन कामसे विमाधनमें इसके  
परका भवा आदर है। पाननेसे गुत्तुरमुगे दिय  
जाता है। किन्तु अपरिचित व्यक्तिसे निकट पाते  
देख यह प्रायः पाकमन करता है। बाइबिलमें  
गुत्तुरमुगंका नाम निविहठहरा है। (Leviticus, xi. 16.)

उट्टपाटिका (मं० स्त्री०) मदगमालिनी, चमीली।  
उट्टगान (मं० स्त्री०) उट्ट द्वारा बहन किया जाने-  
वाला गान, कंठगाड़ी।  
उट्टगिरीधर (मं० स्त्री०) भगन्दर रोगविनेय।  
उट्टग्यान (मं० स्त्री०) उट्टस्य स्थानम्, ६-तत्। उट्टके  
पावासका स्थान, कंठके रहनेकी जगह।  
उट्टगमिका (मं० स्त्री०) उट्टस्येव चामिका चाध-  
नम्। उट्टासन, कंठकी तरफ बैठनेकी हालत।  
उट्टिव। (मं० स्त्री०) उट्टस्य आकृतिरिव आकृति-  
यस्याः। १ मृण्मय सुगन्धित विनेय, गराब रखनेकी  
एक महीका बरतन। उट्टप्य स्त्री, उट्ट-कन्-टाप् चत  
इत्यम्। २ उट्ट, कंठगी।

“यु० ह० वि० वि० वि० वि० वि० वि०” (भाषा १७:११)

उट्ट (मं० स्त्री०) उट्ट-ट्ट-टोप्। उट्टिका देवी।  
उट्टा (मं० पुं० स्त्री०) उट्ट-नक्ष्। उन्निहोडोत्तविना  
००। ७२१२। १ धीम, गरमोका मौसम। २ पातप,  
धूप। ३ पलायु, व्याज। ४ उष्मा, जलन। ५ चमि,  
आग। ६ सूर्य, पाकताव। ७ नरकविशेष। ८ पित्त,  
मफ़रा। ९ कौस्तुभस्य वर्षविशेष। (त्रि०)  
१० चमीतम, गर्म। ११ तीव्र तेज। १२ जलनघ,  
पुरनीला।

यैवक मतसे उट्टा वीर्य द्रव्य पितामकोपकारी, मनु  
एवं वातदेवतागक होता है।

उट्टक (मं० त्रि०) उट्टा कायं यत्, उट्ट-कन्।  
१ चमकारी, पुरनीला।

उट्टकटिवन्म (मं० पुं०) कर्कट कामि और मकर-  
कामिसे मध्यका स्थान, मिश्रमंजारा, गर्म चण्ड।  
यह उट्ट प्रशस्त है। उट्टकटिवन्ममें सूर्यकी किरणें  
भीषी पड़नेमें उष्णता अधिक रहती है।

उट्टकर (मं० पुं०) उट्टाः करः किरणो दत्त,  
अथवा उट्टां करोति, उट्ट-क-पच्। १ सूर्य, पाक-  
ताव। (त्रि०) २ उट्टकारी, गर्म करनेवाला, जो  
गरमी लाता हो।

उट्टकाम (मं० पुं०) उट्टावाभी कामस्य, कामधा०।  
धोसकाम, गरमीदा-मौसम।

“तत्र नैव गर्म उपाय नीचपाथि न दुर्यते।” (सुव्रत)

उट्टग (मं० पुं०) धोसकाम, गरमीका-मौसम।

“विषं रक्षि न धीम नदीदुनमिरोचत।” (रामायण ३:११:१५)

उट्टगु (मं० पुं०) उट्टाः गौः किरणो यत्, मोका-  
रय्य प्रसत्तम्। सूर्य, पाकताव।

उट्टाहरण (मं० त्रि०) उट्टां करनेवाला, जो नाम  
करता हो।

उट्टाता (मं० स्त्री०) पातप, गरमी।

उट्टात्य (मं० स्त्री०) उट्टाता, गरमी।

उट्टादोषिनि (मं० पुं०) उट्टा दौषिनयः किरणो  
यत्। सूर्य, पाकताव।

उट्टानदी (मं० स्त्री०) उट्टा नामो नदी चेति,  
नित्यकामधारयः। बंतरनो नदी।

उट्टाप्रवच (मं० स्त्री०) गमकुण्ड, गर्म पानीका  
भरना। जिस प्रवचमें उट्टा जल निकलता अथवा  
जिस स्थानका जल गर्मदा उट्टा रह बहता, उसका  
नाम उट्टाप्रवच पड़ता है।

वृत्तिके माना स्थानोंमें उट्टाप्रवच विद्यमान है।  
भारतवर्षमें जो स्थान उट्टाप्रवच रहनेमें तीर्थ  
समझे जाते, उनके नाम नीचे दिये जाते हैं—

धीरभूमिमें बलेश्वर नामक पवित्र तीर्थस्थान है।  
इस पुराने भूमिमें श्रृंगारिक ८ प्रवचन चलते हैं।  
उनमें श्रृंगकुण्ड नामक प्रवचन प्रधान है। उट्टा होने  
भी सूर्यकुण्डसे जलमें मत्तापें दयना करती है। जलके  
उत्पन्न भागमें उट्टाप्रवचानी प्रायः डूरी और पधा-  
भायमें होनेवाली अधिक तापके कारण पोती पड़

जाती है। उभयकी तापमानान्तरसे देखने पर १४४° से ८०° पर्यन्त ताप भिन्नता है।

याना: जिलेके भिवन्दी तालुकमें प्रायः १५० उष्ण कुण्ड हैं। उनमें कितने ही याना जिलेकी देतरवी नदीके निकट पड़ते हैं। उक्त कुण्ड प्रतिप्राचीन कालसे तीर्थकी तरह प्रसिद्ध हैं। पिण्डी पर्यन्तके पास अर्धनकुण्ड है। उसमें ११° ताप रहता है। कितने ही सुद सुद भी उष्णप्रस्त्रवण हैं। उनके कटंभसे धूम उठता है। सिन्धु प्रदेशमें अनेक उष्ण प्रस्त्रवण हैं। उनमें मध्य हिन्दकी निकट भीलगिरिके गिरपर देशपर एक अतिगद्य उत्तम प्रस्त्रवण है। उसके जलमें चाय डाल नहीं सकती। सिन्धु प्रदेशके लखौ नामक ग्राममें तप्त गन्धकके कई प्रस्त्रवण हैं।

पञ्जाबके उत्तरांगमें हिमालय पर्वतके पास पार्वती नदी किनारे मणिकर्ण नामक तीर्थ है। इस पर्वतप्रय प्रदेशमें अनेक उष्ण प्रस्त्रवण देख पड़ते हैं। इस समझते हैं, कि ये सकल पवित्र प्रस्त्रवण ही पूर्व-कालमें उष्णोष्ण नामसे प्रसिद्ध थे।

“यद्यपि उष्णं च पुष्पाय” भगवद् च यत्तम्।

उष्णीषः च कीर्णं च लाघवः सहस्रं च ४” (भास्कर, ११४५०)

मणिकर्णके लोग उष्ण प्रस्त्रवणके तापसे रन्धनकाये चलाते हैं। उन्हें जलानेके लिये काष्ठका प्रयोजन नहीं पड़ता।

काश्मीरके उत्तर लाघव प्रदेशमें अनेक सुद उष्ण-प्रस्त्रवण हैं। चट्टाममें चन्द्रनाथ गिरिपर सोनाकुण्ड नामक एक पवित्र प्रस्त्रवण है। पूर्वकालसे यह कुण्ड हिन्दुओं और बौद्धोंके पवित्र तीर्थस्थानकी तरह प्रसिद्ध है। इस कुण्डसे धूम निकलता है।

उष्णरश्मि (सं० पु०) उष्ण रश्मिर्दृश्य, बहुप्र०।

१ सूर्य, चाफताम। २ पक्षहस्त, पक्षाड्डिका पक्ष।

उष्णरश्मि, उष्णरश्मि देखी।

उष्णमारण (सं० पु०-क्षी०) उष्णं चातपं वायव्यति,

उष्ण-ह-विन्-त्य। ऊर्ध्व, छाता।

“उदकेनभीरति, चकारकम्” (कुमार ३३१)

उष्णवायु (सं० पु०) १ तप्तवायु, गर्म भाव। २ अन्तः प्रायः।

उष्णवीर्य (सं० पु०) उष्णं वीर्यं यस्य, १ शिथिलार,

सहमाही, सुष्ठः। (त्रि०) २ तीक्ष्णवीर्यं, गर्म तामीर रखनेवाला। ३ बलवान्, ताकतवर।

उष्णवेताली (सं० स्त्री०) एक देवी।

उष्णा (सं० स्त्री०) उष्णते वध्यते यया, सप यधे मक्षः टाप्। १ अघरोग, तपेदिक। २ सन्ताप, गरमी।

३ पित्त, सफुरा।

उष्णांसु (सं० पु०) उष्णा चंगयो यस्य, बहुप्र०। सूर्य, चाफताम।

उष्णागम (सं० पु०) उष्णः चागमो यत्र। शोध-काल, गरमीका मौसम।

उष्णाभिगम, उष्णागम देखी।

उष्णानु (सं० त्रि०) उष्ण-पातुर्।

१ उष्णप सङ्ग करनेके लिये चमसूर्य, जो गरमी बरदाश्त कर न सकता हो। २ पातपक्षात्, गरमीसे घबराया हुआ। ३ शीतलप्रिय, जिसे ठण्डक अच्छी लगे।

“उष्णानुः शिथिले निषादति मरुभूभावनवाग्ने शिथी” (विद्युत् १०)

उष्णासह (सं० पु०) उष्णं चातप चासङ्गते यत्र, उष्ण-चा-सह-यच्। १ ईमन्तकाल, जाड़ेका मौसम।

(त्रि०) २ उष्णाप सह न मुक्तनेवाला, जो गरमी बरदाश्त कर न सकता हो।

उष्णक् (सं० स्त्री०) उत्-छिह-क्षिप्। सप्तापर उष्णी-विशेष, सात पहरका एक छन्द। “आरवाचरुत्तृत्” (बन्धोतबो) यह छन्द तीन प्रकारका होता है—मधुमती, कुमारलक्षिता और मदसेवा।

उष्णिका (सं० स्त्री०) दृश्यमवस्यमान्, यस्य चक्षुष्ये निपातनात् यस्यगद्व्य उष्णाट्टिमः, टाप् चत-इत्। यवान्, महेरी।

उष्णिमा (सं० पु०) उष्णाप, गरमी।

उष्णीगङ्गा (सं० स्त्री०) उष्णोन्मुता गङ्गा यस्य। भृगु-पर्यन्तस्य तीर्थविशेष। (भास्कर, ११४५०) उष्णापय देखा।

उष्णोय (सं० पु०-क्षी०) उष्णां ईपते दिनदि। उष्ण-ईय-क। १ शिरोघटन, पगड़ी, चाफा। यंपक्षे मतसे उष्णोयका चारण कानिजनक, हेमपक्षे, चायुवंधक, धूमि-शीत-उष्ण-निवारक, प्रतिप्राय तथा शिरःशूलप्रसमके चौर चर्व-नेत्र-चर्म-बंधक है।

२ सुकुट, ताज। ३ चिह्नविशेष।

उद्योगपारी (सं० पु०) उद्योग धरति, उद्योग-धृ-  
विनि। उद्योग धारण करनवाला, श्री पण्डी या साक्षा  
दीधता श्री।

उप्योयो (मं० त्रि०) उप्योयं चत्वार्यस्य, उप्योय-इति ।  
१ उप्योयधरो, पगडी या साफा बांधनेवाला । (पु०)  
२ महादेव ।

“अथर्वीयं सुवर्णं वारुणा विष्णुसंस्तुताः” (भारतम्, यजु १०४०)

उष्णोदक (मं० स्त्री०) उष्ण तत् उदकचेति, कर्मधा० ।  
 कषायत्रय, गर्मपायी । यह पर्वीवर्णिय, त्रिपादाश्रयिष्य ।  
 अतृपांशवर्णिय भेदसं पनेन प्रकारका होता है ।  
 साधारणतः कुक्ष काल तथा कर मो उदक व्यवहार  
 किया जाता है । यैद्यकोष्ठ भाषापर उष्णोदक शोष-  
 दितकर, काम, व्यर, विरह कफ, वात एवं पायका  
 प्रगमक, मेदविनाशो, भस्महोपक्ष और वक्षिपरिगोधन  
 है । शोषमें पर्वीवर्णिय, गरमूकान्तमें एकांशवर्णिय,  
 हेमन्त, शीत एवं वसन्तकालमें पर्वीवर्णिय और सर्वा-  
 कालमें अष्टमांशवर्णिय उष्णोदक पीना चाहिये ।  
 पादाश्रयिष्य पिताविनाशक, पर्वीवर्णिय पातप्रगमक और  
 त्रिपादाश्रयिष्य उष्णोदक कफनाशक है । (आयुर्वेद)

दिनको जो तपाया जाता, वह अन्न रातको शुभ हो जाता है। इसलिये दिनका उष्ण जल रातको व्यवहार नहीं करते। रातको नया जल उष्ण कर काममें माना चाहिये। उष्ण जलका ध्यान भी विशेष उपकार साधक है। किन्तु मनुष्यपर उष्णोदक टोड़ना न चाहिये। उससे शैत्य और चतुर्दो उपकार पहुँचता है।

उद्योपगम ( मं० पु० ) उद्यो उद्यम्यति यच्च, उद्यो-उप-  
गम-चप्र । दीपश्चात्, गरमोक्षा मोक्षम् ।

उच्च (सं० पु०) उप-मङ्गल । १ पीपलशाक, गरमोज्ञा  
मीसम । २ उताप, धूप । ३ नीपता, तिष्ठो । ४ क्रीड,  
मङ्गल । ५ म, प, स पीर इत्यादि ।

उपस्थित (मं. पु.) उपस्थित। शीघ्रकाल, गरमोष्ण  
योग्य।

उपज (मं० त्रि०) उपज, गरमोसे पेदा होनिवाला।  
(पु०) २ सुद्विषादि, गरमोसे पेदा होनिवाला  
कोडा। अर्थ—गन्ध, घटमल बरेरव।

उद्यता ( सं० स्त्री० ) उद्यत्ता भावः, उद्यत्तात् । उद्यत्ता,  
गरमी ।

उत्पत्त्या ( मं० पु० ) उत्पत्त्यां विवर्ति, उत्पत्त्या-विपत्त्या ।  
१ विपत्त्योक्त विवर्ति । २ उत्पत्त्यानकारो तत्पत्तिविपत्ति ।

“सुखानिमो भविष्यत्तु यथा वा नृपादया ।” (अ. ११)

उद्यमान् (मं० पु०) सूर्य, चाक्रताव ।

उपपत्तम् ( भं० त्रि० ) उपप-मत्तप्, मत्तयः । उपपत्तिगिर,  
गमम् । “उपपत्तयोपपत्तौ षडित्” ( सुबुध )

उपस्रोद ( मं० पु० ) उपस्यसो स्रोदयेति, कर्मधा० ।  
उपस्रोद, गर्म प्रमोक्षा । नोद शेषो ।

उष्मा ( स० पु० ) प्रय-मनिन् । १ पीपकान, गरमोजा  
मोगम । २ छत्ताप, गरमी । उष्म द्वीपः ।

उष्णागम ( मं० पु० ) उष्णा आगम्यते यत्न, आ-गम-  
पप । औषकाल, गरमोका मौसम ।

सप्तान्वित (मं० त्रि०) उत्तेजित, भद्रका दृष्टा ।

उत्थाय . नामधातु ) उत्थायमुदमति, उत्थान्-काङ् ।  
इसका अर्थ उत्था उदमन करना या प्राग उगलना है ।

उत्थाय च ( स० प० ) चोक्षकाल, गरमोष्ण मौसम ।

ਭਾਗਵਤ, ਭਗਵਤ ਦੀਆਂ ।

उद्यत (मं० की०) चारपाईया टीका ।

सम (हिं० सर्व०) तत्त्व लक्ष्य। यह शब्द 'वह' का  
रूपांतर है। विभिन्न जगत्में 'वह' की त्यागमें 'उस'  
वादेश होता है। जैसे—उसमें, उसको, उसी, उसका,  
उसमें, उसपर। 'उस' वस्तु सुस्पष्ट है एकवचनका रूप  
है। बहुवचन 'उन' है।

समय (दि० पु०) १ नवम, जूना, वरतन मीनमेका  
 मान या पयान वगैरे रज्जा मुद्रा । २ उभार, उठाव ।

समयना, लक्षणा हिमो ।

समस्याना, उमखादना, नमना दीयो ।

સુસગન (દિ.) અમરકન દેવો ।

उपसर्ग ( हिं० लि० ) १ उदासर्ग । २ मांडर्ग, पाणो  
ढालकर गंधर्ग ।

समना ( हिं. दि० ) उवाच। दृष्ट्वा, गमै कृत्वा दृष्ट्वा ।  
त्रिम पात्रलको घातोर्मै हान उवाचते पौर भूषी  
निहासते, समे समना नाममे पुकारते. ई ।

उसलाना ( हिं० क्रि० ) १ उसलवाना, गर्म करवाना ।

२ मंडवाना, पानी उलाकर सुंघवाना ।

उसनीस ( हिं० ) उखीर देखो ।

उसधा ( हिं० ) उसधा देखो ।

उसनुपत्नी—बम्बई प्रान्तके प्राचीन पुण्याष्ट प्रदेशका एक ग्राम । महाराज सिंहरवर्माके राज्य पानेसे ११ वत्सर बाद इन ग्रामके अधिवासियोंको एक शासन-पत्र सुनाया गया था । उस महाराज सम्भवतः विष्णु-गोप वर्माके बड़े भाई रहे । विष्णुगोप वर्माने ही उस संस्कृत शासनपत्र निकाल यह ग्राम विष्णुहार मन्दिर पर उत्सर्ग किया । वह परमभागवत थे । सेनापति विष्णुवर्माने कण्डूकूट ग्राममें विष्णुहारका मन्दिर बनवाया था ।

उसमा ( हिं० पु० ) उसमा, उसटन ।

उसमान ( य० पु० ) सुदृश्यके एक सखा या साथी ।

उसरना ( हिं० क्रि० ) सरकना, चलन करना ।

उसरु—युक्तप्रदेशस्थ राज्यविशेष ।

उसरीड़ी ( हिं० स्त्री० ) पचि विशेष, एक बिड़िया उसनना, उसरना और उसरना देखो ।

उसवदात—बम्बई प्रान्तके एक प्राचीन शक नृपति ।

यह अपने शहर नहपानके ( १०० ई० ) लौकिक और दार्शनिकमें प्रतिनिधि रहे । इनके कारल और नासिकवाले ताम्रफलकोंमें सोमनाथ पत्तन, भडोव, सोपारे और गोवर्धनके उत्सर्गकी बात मिली है । दाहनुवदर इन्होंने एक घाट बनवाया था । सुपर-कमें उसवदात द्वारा निर्माण कराये विश्रामाक्ष और भोजनालय थे । नासिकके १० म, १२ ग और १४ ग मिमालिपिमें लिखा है, कि उसवदातका विवाह उसरात उसप नहपानकी दसमिमा नाभी कन्यासे हुआ था । इनके पिताका नाम दमौक रहा । यह जातिके शक थे । संस्कृत श्रवणदत्तका अपभ्रंश उसवदात है । इन्होंने तीन सहस्र गोदान किये थे । उत्तर गुजरातमें पाण्डू स्थानके निकट बनारामें सोनेका सोपान उसवदातने दिया । १६ ग्राम ब्राह्मणोंकी भेंट बढ़ाये थे । यह प्रति धर्म साखों ब्राह्मण विमानवासे थे । दक्षिण आठिपावाड़के प्रभासपेतमें इन्होंने पाठ खिया ब्राह्म-

णोंको व्याखी थीं । ३२ सहस्र नारियलके पेड़ उसवदातने पुरोहितोंको सहस्रमें दिये । पुष्कर तीर्थमें जाकर इन्होंने तीन सहस्र गो घोर एक ग्राम दान किया था । यानिके पास चौबनमें उसवदातने ब्राह्मणोंको कितना ही दान दिया था । यानिके दहान ग्राममें इन्होंने ७० सहस्र कार्याण्य वा २ सहस्र सुवर्ण ब्राह्मणोंको बांटे थे । उसवदात निर्मित अस्थिका, पार, दमनगन्ना, तासी, कावेरो, दाहानु नदियोंके घाटोंपर यात्रियोंको उतरार देना पड़ती न थी । नदियोंके दोनों किनारे विश्राम स्थान घोर सोपान, भी इन्होंने बनवाये । उसवदातने बीहोंको भी दान दिया था । उस भारतमें सम्भवतः इन्होंने बौद्ध धर्मका प्रवक्तृत्व किया । उसवदत्तके कितने ही मिनाफलक मिले हैं । यह अपने समयके एक कर्ष रहे ।

उससना ( हिं० क्रि० ) १ उसरना, सरकना । २ घास पड़प करना, सांस निकालना ।

उसांघ, उसांघ देखो ।

उसाना ( हिं० क्रि० ) पकोरना, फटकारके साथ झूठी चलन करना ।

उसारना ( हिं० क्रि० ) १ बिनाग करना, मिटाना ।

२ समापन करना, पूरे उतारना ।

उसारा ( हिं० पु० ) उषाष्ठादित दारप्रकोष्ठ, बरामदा, कक्षा । “नेवकी बाहर बाहर लोहीकी उसारा ।” (जी० कि०)

उसाकना, उकारना देखो ।

उसास ( हिं० स्त्री० ) १ उषास, राह । २ श्वास, सांस ।

उसासना ( हिं० क्रि० ) १ श्वास पड़प करना, सांस लेना । २ उषास छोड़ना, राह भगना ।

उसानी ( हिं० स्त्री० ) श्वास पड़प करनेका समझ, दम लेनेका शक्त ।

उसिनना, उसनना देखो ।

उसीजना ( हिं० क्रि० ) मन्द-मन्द गत होना, धीरे-धीरे पुरना ।

उसोसा ( हिं० ) उखीर देखो ।

उसोसा ( हिं० पु० ) १ मोयंस्थान, मिरदाना ।

२ उसवान, तक्षिया ।

उसुवाना ( हिं० क्रि० ) सुखना, फूलना ।



## ऊ

ऊ (दीर्घ) संस्कृत तथा हिन्दी स्वरवर्णका यह अक्षर। इसको उच्चारणस्थान ओष्ठ है। वर्णोद्धार तन्त्रमें लिखा है—ऊकारका रूप उल्ल सकारसे प्रायः मिला है। और विशेषता यह है, कि ऊकारके नीचे एक दूसरी वक्र रेखा नीचेकी तरफ अधिक जाती है। समस्त रेखा में यम, अग्नि और मरुत अवस्थित हैं। ऊर्ध्वगत भावाको सद्यो वा सरस्वती कहते हैं। इसका तन्त्रोक्त नाम—ऊ, कण्ठक, रति, शान्ति, क्रोधन, मधुघदन, कामराज, कुजेश, महेश, वामकर्णक, चर्याध, भैरव, सूक्ष्म, दीपघोषा, सरस्वती, विलासिनी, विप्रकर्ता, लक्ष्मण, रूपकपिथी, महाविद्येश्वरी, यष्टा, यण्डोम्, और कान्यकुलज है। २ धातुका अनुबन्ध विशेष। “अरुषेयः।” (अवि० ३) (अ०) वेङ्-क्षिप्। १ सम्बोधन—ए। ओ। परे। २ वाक्यारम्भ—हां। कहिये। ३ दया—रहम—राम राम। ४ रक्षा जिफाजुत—जाहि जाहि। (पु०) भवति रक्षति, अय-क्षिप्-ऊट। स्वरान्वित्यादिभेद-प्रापय। पा०। १। १०। १ महादेश। २ चन्द्र। ३ रत्नक, मुष्माक्षिप्।

ऊपना (हि० क्रि०) उदय होना। निकलना। ऊपायाई (हि० वि०) निरर्थक, बेकार्यदा। ऊप, उच और ईप देखो। ऊंग ऊं देखा। ऊंगना (हि० पु०) पशुभोग विशेष, चौपायी की एक बीमारो। इस रोगमें पशु कुछ नहीं खाता-पीता। शरीर शीतल लगता और कान बह चलता है। ऊंगा (हि० पु०) चणामार्ग, भट जोरा। ऊंगी (स्त्री०) ऊंगा देखा। ऊघ (हि० स्त्री०) १ निद्रावैश, नींदका दोष, भ्रमकी। २ गन्ध सूत्रकी बनी एक गंधुरी। यह

पड़िये की घुरीमें लगती है। इसमें पड़िया मटा रहता और घुरकी कीलकी रगड़में कटा नहीं करता। ऊंघन (हि० स्त्री०) निद्रागम, भ्रमकी। ऊंघना (हि० क्रि०) निद्रागम होना, चांस भ्रमकाना। ऊंच, ऊंचा, (हि०) उच देखा। ऊंचाई, उचना देखा। ऊंचे (हि०) उच देखा। ऊंछ (हि० पु०) राग विशेष। ऊंछना (हि० क्रि०) बान भाडना, कंठी करना। ऊंट (हि०) उच देखा। ऊंट कटारा (हि० पु०) उट्टकण्ठ रूप, एक पीटा। इस भाड़ीमें कांटे होते हैं। पत्र भी दीर्घ एवं कण्ठकाकार हैं। गाछा तुमनेवाने तन्तुघोसे गुल रहती हैं। यह प्रस्तरमय तथा अनुवरा भूमिमें उपजता है। उट्टका यह म्रिय जाय है। इसका मूल जलमें रगड़ कर देनेसे गर्मियोंकी सुखमय होता है। किसी-किसीके मतानुसार ऊंटकटारा बन्वर्धक भी ठहरता है।

ऊंटकटोरा, ऊंटकटारा देखा। ऊंटगाड़ी (हि० स्त्री०) ऊंटके महारि चमनेशकी गाड़ी। इसमें पायः दो पण्ड होते हैं। रात दिनमें ऊंट गाड़ी २० कोसमें कम नहीं चलती। ऊंटवान् (हि० पु०) उट्टमवाचक, ऊंटकी हाक-नेशासा। ऊंडा (हि० पु०) १ पात्र विशेष, एक बरतन। इसमें रुपया पैसा और गटना-नीठ भर भूमिमें मख गाड़ते हैं। २ तहखाना, चहबदा। (वि०) ३ गमोर, गहरा। ऊंदर, उच देखा। ऊंधा, चौका देखा।



छंङ् (हिं० धृ०) नेव, नहीं, कभी नहीं, हो नहीं सकता ।

छक (हिं० पु०) १ चक्का, गड़ाव-साकित, टूटता तारा । २ चनि, पाग । (स्त्री०) ३ चक, किसी बात या कामका भूल जाना ।

छकना (हिं० क्रि०) १ चूकना, भूलना, भ्रममें पड़ना । २ ताप देना, जलना ।

छल (हिं० स्त्री०) दृष्ट, देख । १५ देखी ।

छलम (हिं०) १५ देखी ।

छलल (हिं० पु०) सङ्खल, काँड़ी, हावन । यह काष्ठ वा प्रस्तरनिर्मित एक गभीर पात्र है । इसमें डालकर धान आदिकी भूसी सूखलेंके सहारे निकालती है ।

छगना (हिं० क्रि०) जमना, जड़ पकड़ना, चञ्चुरा फूटना ।

छगरा (हिं० पु०) उख्य छाथ, समला हुआ खागा ।

छगू—युक्तप्रदेशके उनाव जिल्लाका एक नगर । यह समान भूमिपर उनावसे ग्यारह घोर फतेहपुर-चौरासी-से ढाई कोस दूर अवस्थित है । कभीजके पंवार राजपूत उपसेनने इसे बसाया था । ई० १५ वीं शताब्दी तक समके वंशज छगूमें राज्य करते रहे । पीछे जौनपुरके इमादौम शरफीने उन्हें एक युद्धमें पराजित किया था । राजपूतोंका प्रभाव घटने पर कुमवियोंने इसे अपनी हाथ लिया । छगूमें कई मन्दिर बने हैं । राजमासाद और न्यायालयका भवसावशेष भी देख पड़ता है । वर्षमें एक बार मेला और सप्ताहमें दो बार बाज़ार लगता है ।

कहते हैं—राजपूतोंके समय एक कवि छगू गये थे । किन्तु उनका उचित सत्कार न हुआ । उन्होंने उससे अपसव हो गाव दिया था—

“कहूँ बाधबाध दारिद्री होने बिरे दोरत बहोने बिरे नौकी घरबाबो ।”

छज (हिं० पु०) छप्पात, बसेड़ा ।

छजड़ (हिं० वि०) जमघुम, धाली, जो बसान हो ।

छजर (हिं० वि०) १ छजना, साफ, जो मेला न हो । २ छजड़, बीरान ।

छजरा, जम देखी ।

छटना (हिं० क्रि०) १ अभिमान करना, मन बढ़ना । २ विचारना, सोचना, खुदानमें लाना ।

छटपटांग (हिं० वि०) थंडथंड, बाहियात, खराब ।

छड़ा (हिं० पु०) १ न्यूनता, घटो । २ विनाश, बरबादी ।

छड़ो (हिं० स्त्री०) यन्त्र विग्रह, दुतकला । यह लुलाहोंके सेठोंमें सटो रहती है । इसपर वह लिपटे सूतकी पट्टीमें फिर-फिर लगाने जाते हैं । २ यन्त्र विग्रह, एक घरखो । इसपर रेगमके लच्छे डाले और एक तरही परेतोमें निकाले जाते हैं । ३ दुपकी, गोता । ४ पनदुब्बी ।

छड़ (सं० क्रि०) बह-ज । १ विवाहित, ब्याहा । २ बहन किया हुआ, जो उठाया गया हो । ३ धृत, पकड़ा हुआ । ४ अङ्गीकृत, माना हुआ ।

“भाष्ये तमवस्थाव मखे सोमिनेऽसकी ।” (भट्टि)

छड़कडट (सं० क्रि०) छड़ो धृतः कड़टो येन । वमंयुक्त, सूजा या फूला हुआ ।

छटना (हिं० क्रि०) चिन्तन करना, सोचना, पनुमान लगाना ।

छटमार्य (सं० पु०) छड़ा भार्या, येन, बहुव्री० । विवाहित, ब्याहा ।

छटवधम् (सं० पु०) युवापुत्रप, नौजवान् मर्द ।

छड़ा (सं० स्त्री०) छड़-टाप् । १ भार्या, जोड़ू । २ विवाहिता कन्या, ब्याही लड़की । ३ नायिका-भेद । जो ब्याही स्त्री निज पतिको छोड़ अन्य पुरुषसे आसक्त रहती, उसे जनता छड़ा नायिका कहती है ।

छटि (सं० स्त्री०) बह-तिन् । १ बहन, दोबई । २ विवाह, मादी ।

छोतेजम् (सं० पु०) एक सुह ।

छत (सं० क्रि०) वैश्व प्रथवा ऊँची तमसुप्ताने, ज-ज । १ छतत्रयन, सुना हुआ । २ प्रयित, गूँथा हुआ । ३ सूत, सीया हुआ । ४ रचित, द्विधाप्रत किया हुआ । ५ विख्यात, मशहूर । (हिं० वि०) ६ पुत्रहीन, जिसके लड़का न रहे । ७ सूँधी, गंधार । (पु०) ८ भूत प्रेताला ।

छतर (हिं०) छतर देखी ।

छतला (हिं० वि०) छतापला, जम्दबाज ।

जतातार्द्ध (हिं० वि०) वे समझ, चजड़, कटप-  
टांग काम करनेवाला।

जति (सं० स्त्री०) अव-तिन् कट, वे-तिन्। १ रक्षा,  
हिंसाजत। २ वयन, बुनायट। ३ सिलाई, सीनेका  
काम। ४ सीला, तमाया। ५ घरणा, चुवाई। कर्तरि  
क्तिच्। ६ रक्षाकर्त्ता, रक्षवाली करनेवाली। ७ पुरा-  
णोंके दशविध लक्षण में कर्मकी वासना।

“मन्त्रमारावि यन्मं कतयः कर्मवासनाः।” (मातृगण ५।१५। ४)

जतिम् (हिं०) वयन देखो।

जद (अ० पु०) १ अगुरु हल, अगुरका दरखूत।  
२ अगुरुकाष्ठ, अगुरकी लकड़ी। ३ वादित विगेष,  
वरधत बाजा। (हिं०) ४ उडिहाल, जद बिलाव।

जदग, जदग देखो।

जदवती (हिं० स्त्री०) धूपवती। यह अगुरुका-  
ष्ठसे दासिणात्यमें प्रस्तुत की जाती है। पूजापाठके  
समय धूप देने, और सुगन्ध लेनेकी इसे सुलगाते हैं।

जदबिलाव (हिं०) उडिहाल देखो।

जदल (हिं० पु०) १ वृक्ष-विगेष, गुलबादल। यह  
ब्रह्म, दासिणात्य और हिमालयके नीचे वनमें अधिक  
उपजता है। इसका तन्तु बहुत हड़ होता है। उससे  
बहुत मोटी रज्जू बनती है। २ उदयतिंड। यह  
पाल्हाके छोटे भाई थे। जदल मछोडेशके नृपति-पर-  
मालके मुख्य सामन्तोंमें एक थे। बाप्य बालमें ही  
इन्होंने माइव परचढ़ अपने बापका दांव लिया।

पृथ्वीराजसे भी इन्होंने कई बार युद्ध किया था।  
अन्तकी बेलाके गोनेमें पृथ्वीराजके अन्त्यतम और छोड़ाने  
इन्हें मार डाला। जदलकी वीरता भारतप्रसिद्ध है।

जदा (हिं० वि०) १ रक्तवर्ण मिश्रित लक्षणवर्ण,  
सुरखी-बानेन काला बैंगनी। (पु०) पद्मविगेष, एक  
घोड़ा। यह रक्तवर्ण मिश्रित लक्षणवर्णका होता है।

जदी-सीम (हिं० स्त्री०) केशव।

जधन् (सं० स्त्री०) जधस् प्रयोदस्तात् सख्य नः।  
पद्मका स्तन, चौपायेका घन।

“हताहं नमस्त्वयि नै दिवा सलाह भव जधनि।” (सङ् ७।१०५०)

जधम्य (सं० स्त्री०) जधनि भयम्, जधन्-यत्।  
दुग्ध, दूध।

जधम (हिं० पु०) उन्मात्त, बखेड़ा, भगड़ा।

जधमी (हिं० वि०) उषद्वगी, भगड़ालू, बखेड़िया।

जधर् (सं० स्त्री०) जधस् प्रयोदस्तात् सख्य रः।  
पद्मस्तन, चौपायेका घन। “जधर्नया भवते।” (अथ  
मध १२)

जधव (हिं०) उधव देखो।

जधस् (सं० स्त्री०) जन्-पसन्, जन्-स्य जधादेयः।

पद्मस्तन, चौपायेका घन। (अथमध १०।१। १४)

जधस्य (सं० स्त्री०) जधसि भयम्, जधन्-यत्।

१ दुग्ध, दूध। (वि०) २ दुग्धकर, दूध पैदा करनेवाला।

जधस्यती (सं० स्त्री०) जधस्-मतप्, मस्य यः स्त्रियां  
लोपः। अपने स्तनमें अधिक दुग्ध रखनेवाली गो,  
जो गाय अपने घनमें लपटा दूध रखती हो।

“विषिपुः कं मजान् यवः परलोषस्तोमुं वा।” (मातरन १।१। १५)

जधी (हिं०) जधव देखो।

जन् (घातु) पदा० चुरा० पर० मक० घट्। “जन्तुव  
परिचरे।” (अरि० ६) मूल बनाना, काम करना, घटाना।

जन (सं० त्रि०) जनन्-घञ् पदवा अत्र-नञ्-उट्।  
अपविशरोत्पत्तिको वट्। उट् १।१। अत्रापिबन्धविगेषविनि। वा  
१।१। १ हीन, छोटा। २ न्यून, कम। ३ अर्धपूर्व,  
मातृमाम। “जन् न वनेष्वपि वीर्यते।” (रघ ५।१५)

(हिं०) ४ जर्षा, चौपायेका गर्म रोया। भारतमें  
हिमालयके मेयका रोया उत्तम होता है। काश्मीर  
तथा तिब्बत जर्षाके लिये विख्यात है। पद्मगानिद्यान-  
की भेड़ भी अच्छा जन देती है। जर्षाका तन्तु बहुत  
सूक्ष्म, दीर्घ, हड़, कोमल और होत निरुतना है।

जनक (सं० त्रि०) जन स्यात् जन्। हीन, छोटा।

जनवत्सारिण (सं० त्रि०) जनवत्सारिणतः पूरणा,  
उट्। सत्सारिणसे एक संख्या मूल, संवासीध, एक  
कम चासीध, ६८।

जनता (हिं० स्त्री०) मूलता, कमी।

जनदिग्गत् (सं० त्रि०) जनतीति, १८।

जनदिग्गति (सं० त्रि०) उद्योव, १८।

जना (हिं० वि०) मूल, कम, छोटा।

जनि (सं० त्रि०) घटाया या कम किया हुआ।

जनी (हिं० वि०) १ जन्निर्मित, जनका बना

इषा। ( स्त्री० ) २ न्यून, थोड़ी। ३ न्यूनता, घटी, कमी। ४ थोड़ी, छोटी।

ऊनीहरतातप ( सं० पु० ) कैवल्यविशेष। इसमें प्रत्यक्ष एक-एक आस भोजन कम करते हैं।

ऊप ( हिं० पु० ) अन्नमाल, अनाजका सूद। लघुका बोनेके लिये महाजनसे अथ उधार लेते और खेत कटनेपर मन पीछे ११४ सेर अधिक दे देते हैं। डेवड़ा या सयाया ऊप भी उठता है।

ऊपना ( हिं० क्रि० ) व्याजपर अन्न कृष्ण देना, सूदपर अनाज उठाना।

ऊपर ( हिं० उप० ) १ उपरि, वर, पर। ( क्रि० वि० ) २ ऊर्ध्व, धारी। ३ अधिक, व्यादा। “जितना ऊपर उठना भी नही।” ( श्रीकौटिलि ) ४ पचास, पीछे। ५ प्रतिफल, खिलाफ।

ऊपरसे ( हिं० क्रि० वि० ) ऊर्ध्वसे, सरपर।

“निलोके लीला नरे” ऊपरसे टूट जाड।” ( श्रीकौटिलि )

ऊपरी ( हिं० वि० ) १ उत्तरिष्ठ, बाहरी। २ अगभीर, उथला। ३ अत्रिभ, बनावटी। ४ अन्यसम्बन्धीय, पराया। ५ अपरिचित, अजनबी। ६ विदेशीय, जो अपने मुल्लका न हों। ७ मिथिल, ढोला। ८ अयोग्य, नाकामिल।

ऊम ( सं० स्त्री० ) १ उद्देग, घबराहट। २ अरुचि, नफरत। ३ उत्साह, होसका।

ऊमट ( हिं० पु० ) गोपमार्ग, बड़ी राहके पासकी गली।

ऊमड़वाड ( हिं० वि० ) उच्च-नीच, नाहमवार, लंचा-नीचा।

ऊमना ( हिं० क्रि० ) १ उद्दिग्ध होना, घबरा जाना, उकसाना। २ घृणा या नफरत करना।

ऊपरना, उथला देखो।

ऊम ( हिं० वि० ) १ उच्च, ऊंचा। ( स्त्री० ) २ व्याकुलता, घबराहट। ३ घृणा, नफरत। ४ उषा, गरमी। ५ उत्साह, होनसा। ६ आमारोग, दमिकी बीमारो।

ऊमना ( हिं० क्रि० ) १ दण्डायमान होना, उठना। २ उद्दिग्ध होना, घबराना। ३ मोक्ष मोक्ष निखास छोड़ना, रोकना।

ऊमा ( हिं० पु० ) गत, गङ्गा।

ऊमासांघी ( हिं० स्त्री० ) उद्देग, घबराहट।

ऊम् ( सं० अव्य० ) ऊय-मुक्। १ कीबोसि, मारो। २ जिघासा, क्या। क्यों। कैसे। ३ निन्दा, की। की।

४ अर्धा, इतना। ऐसा।

ऊम ( सं० स्त्री० ) अवतीति, अव-कित्-मन्। १ नगर, ग्रहर। २ देशविशेष, एक मुल्ल। ( विशालकोटसे )

३ रचक, रचवाना।

ऊमक ( हिं० स्त्री० ) उत्साह, वाद, उभाड़, भूषण।

ऊमट ( हिं० वि० ) चात्रियोंकी एक जाति, मालधके ठाकुर।

ऊमना ( हिं० क्रि० ) उठना, बढ़ना, उभरना।

ऊमर ( हिं० पु० ) १ उदुम्बर, गूलर। २ वणिक् जातिका एक भेद।

ऊमरकोट—१ सिन्धु प्रदेशके थर और पारथर जिलेकी एक तहसील। चावर तहसीलकी लेते भूमिका परि-

माण ११०५ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ८० हजार होगी। २ उक्त तहसीलका एक नगर। यह

अक्षा० २५° २१' उ० तथा द्रावि० ६८° ४६' पू०पर अवस्थित है। पूर्व मरुभूमिके टीले इधर उधर

खड़े हैं। नहर नगरमें बायी है। ऊमरकोटमें देवरावादीकी सड़क लगी है। नगरमें कपहरी, अदा-

सत, थाना, डाकखाना, अस्पताल, स्कूल, तारघर, धर्मशाला और पिंजरापोख सभी हैं। ५०० वर्ग-

कोटका एक किला बना है। तालपुरवाले मोरोंके समय उसमें ४०० सिपाही रहते थे। आजकल सर-

कारी इमारतें किलेमें ही हैं। घी, ऊंट, गाय, बैल, तम्बाकू, ऊँट, धातु, रंग, सुलेफन, तेल, कपड़े और

ऊनका व्यवसाय चलता है। लुनाई ऊंटकी भूमों और मोटे कपड़े बुनते हैं। १५४२ ई०की ऊमर-

कोटमें ही अकबर बादशाहने जन्म लिया था। पहले यहां राजपूतोंका राज्य रहा। किन्तु १८१९ ई०में

तलपुरके मोरोंने इसपर अधिकार किया था। फिर १८४३ ई०में ऊमरकोट अंगरेजोंके हाथ लगा।

ऊमरखिड़—वरार प्रान्तके बासिम जिलेकी पुराने तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० १८° १६' उ०

एवं द्राघि० ७०' ४५' पू० पर अवस्थित है। १८१८ ई० की यहाँ छातकर सरदार और निज़ामकी सेनामें युद्ध हुआ। १८८५ ई० में निज़ामने जमरखेड़ परगना १७६४ ई० का युद्ध समाप्त होनेपर पेयवाकी दे डाला था। पूनामें हारनेपर पेयवा १८१८ ई० की युद्धकी और भागते यहाँ ठहर गये। ब्राह्मण साधु महा-राजकी विताके स्थानपर एक भक्तासा मन्दिर बना है। सुप्रसिद्ध गोमुख स्वामीका भी यहाँ मठ था। वह प्रतिवर्ष एक चेलीके साथ इधर-उधर दोरेपर जाते और प्रायः २ लाख रुपया मांग जाते, जिसे पुष्प-कार्यमें लगाते थे। उन्होंने अपने मन्दिर तथा कूप बनवाये। दूर-दूरसे लोग यहाँ मानता करने पाते हैं। १८८१ ई० में गोदावरी किनारे महाजाने इहलोक छोड़ा था। मठमें स्वामीका समाधि प्रतिष्ठित है।

जमरगढ़—युक्तप्राप्तके पठा जिलेकी जलेश्वर तहसीलका एक नगर। यह जलेश्वर नगरसे साढ़े चार कोस दक्षिण-पूर्व सेगरमदीके वामतटपर अवस्थित है। पहले यहाँ यदुवंशियोंकी राजधानी रही। एक पुराना किताब खड़ा है। उसमें उक्त वंशके प्रतिनिधि रहते हैं। जिलेके चारों ओर एक गहरी खाई खुदी थी। आजकल वह पुर गयी है। मकान भी टूटे फूटे हैं। ठाकुर बहादुरसिंहके समय मराठोंने मैथियाँ के अधीन जमरगढ़ लूटा था। नीलकी दा कीठियाँ चलती हैं। उनमें एक यदुवंशियों और एक सुरोपीयोंके अधीन है। जिलेकी दीवारोंके पासपास पासके चन्दा बागू सगे हैं।

जमरपुर—विहार प्रांतके भागलपुर जिलेकी बंका तहसीलका एक नगर। यह द्राघि० २५' २' २३" स० तथा द्राघि० ८६' ५०" पू० पर अवस्थित है। यहाँ जिलेके दक्षिणमें उत्तम्य शासि प्रभुति धाम्य एकत्र किये और गुंजर एवं सुसतानुगजकी राह पूर्वकी ओर दिये जाते हैं। एक बड़े तानावर शाह-गुलाकी मसजिद बनी है। हुमराँव कीर्ति पाथ कोस उत्तर पड़ता है।

जमर, जमर देखो।

जमरना, जमरना देखो।

जमा (हिं० खी०) यव वा गोधूमकी हरित मधुरी, गेहूँ वर्गे रहकी ताड़ी घाव।

जय (घातु) भा० भाव० मुक्त० भेट्। "वरीह-रत्ने"। (अभिधर्मसूत्र) खीना, टांकना।

जर (सं० पु०) धान्यवपन नियमविशेष, धान बोनेकी एक चाल। जड़घन लगानेका नाम जर है। बैंगन एक महीने बाद छछाड़ कर जब उसमें भरे रेतमें बोया जाता, तब जर कहलाता है।

जरज (हिं०) जर्ज देखो।

जरध (हिं०) जर्ध देखो।

जररी (सं० पथ्य०) जय बाहुलकात् ररीक्।

१ विस्तारध, बढ़कर। २ अज्ञोकार, हाँ, ठीक है।

जररीकृत (सं० त्रि०) खीकृत, माना हुआ।

जरव्य (सं० पु०) जरोजातः जर-यत्। ब्रह्माका जरजात, वैष्ण, अनिया।

जरी (सं० पथ्य०) जर बाहुलकात् रीक्। १ विस्तारध, फैलाकर। २ खीकार, मज्जूर, हाँ। (हिं० खी०) ३ यन्त्रविशेष, एक खोजार। लुनाहे इसे दुतकना या सनाका भी कहते हैं।

जरीकृत (सं० त्रि०) जर्री-कृत। १ अज्ञोकृत, माना हुआ। २ विस्तृत, फैला हुआ।

जर (सं० पु०) कर्णयति पाच्छाद्यते, कुः मुनोपय। कर्णविशेष। उच० १११। जानुका उपरिभाग, टांगका उपरी हिस्सा, राम।

जरघाट (सं० पु०) जर-घट्नाति स्मृति, जर-यह-पण्। जरघाटशरीर। जरघ देखो।

जरग्यानि (सं० खी०) जरकी निर्बलता, रामकी कमजोरी।

जरज (सं० पु०) जरोजातः, जर-जन-डः। १ बैंगन, अनिया। २ अशुर्वंशिय बोध नामक मुनि।

"जरज हयका चंद्र बहुरिक्तवर्णः"। (निष्ठा १।४।४)

जरजया, जरज देखो।

जरदघ (वे० त्रि०) जर-दघप्। जरपरिमित, रानुके बराबर।

"जरदघ विनोदी कानुदघः"। (अनुरा १७।११)

जरदघय, जरदघ देखो।

ऊरुपर्वा (सं० पु०) ऊर्वाः पर्व्व, ५-तत् । जानु, पुट्टा ।  
ऊरुफलक (सं० स्त्री०) ऊर्वाः फलकमिय, ६-तत् ।  
नित्यवेद्य, सुरीन्, पुष्टा ।

ऊरुमिय (सं० त्रि०) ऊरुमें छिद्र रखनेवाला, निमके  
फटो रान् रहे ।

ऊरुरी (सं० अथ०) ऊरु-उरीक । ऊरी ईको ।

ऊरुमश्व (सं० पु०) ऊरोः मश्व उत्पत्तियस्य,  
बहुव्री० । १ येय्य, अनिया । (त्रि०) २ ऊरुसे  
उत्पन्न होनेवाला, जो रान्से निकलता हो ।

ऊरुस्तम्भ (सं० पु०) ऊरु स्तम्भाति, ऊरु-स्तम्भ,  
अण् । ऊरुरोगविशेष, रान्की एक बीमारी । वैद्यकके  
मतमें शीतल, चण्य, द्रव्य, शुष्क, गुरु तथा स्निग्धकर  
यन्तु प्रतिरिक्त बरतने, अधिक परियम करने, विशेष  
चमने किरने, दिनको सी रहने और रातको जगने  
प्रवृत्ति कारणसे सञ्चित वात, दोषा, मीद एवं पित्त  
भट्क उठता है । उस समय अस्थि दोषपूर्ण रहनेसे  
दोनों ऊरु स्तम्भ, शीतल, अचेतन, स्थानान्तर गमन वा  
पदस्थापनके लिये अशक्त और प्रतिग्रह व्यथित हो जाते  
हैं । उसीसे मोह, पद्ममर्द, चाट्टवस्त्रके अवलुपठन  
जैसे अनुभव, तन्द्रा, वमन, अरुचि और ज्वरका वेग  
बढ़ता है । प्रतिनिद्रा, पतिमुग्धता, अलसता, ज्वर,  
शोमर्च्य, अरुचि, वमन और लडा एवं ऊरुद्वयकी  
अवसयता इस रोगका पूर्व्वरूप है । जिसके ऊरुस्तम्भमें  
दाह उठता, घेदना एवं सूचिविषयत् छोटाका वेग  
बढ़ता और सब शरीर कांपता, उसका मृत्यु या  
पङ्कजता है । उष्ण उपद्रवग्रन्थ और स्रव्यदिनोत्पन्न  
ऊरुस्तम्भकी विकित्सा करना चाहिये । कोई कोई  
इसी आध्यावात भी कहते हैं । (आयुर्विज्ञान)

ऊरुस्तम्भमें छेदक्रिया, रक्तसाह, वमन, विरेचन  
और वस्तिकमें सम्पूर्ण निषिद्ध है । इस रोगमें वही  
विकित्सा बलाये, जो दोषाकी हटाये और वायु न  
मड़काये । पहले उष्ण क्रियासे काफको ग्रास्त कर  
देते, पीछे वायुके प्रथमका कार्य जायमें लेते हैं ।  
श्यायाम, उच्च स्थानको सम्पन्न प्रदान, शीतके प्रतिकूल  
समारण प्रवृत्ति कार्य बल सकनेसे कफप्रयत्नके लिये  
उपकारी है ।

विनिष्ठा—सर्प और दोमककी मही मधुके साथ  
पीम प्रलेप लगाना चाहिये । विफला, चण्य, मोठ  
एवं पिपरांमूल अथवा चांभला, हर, बहेड़ा, मोठ,  
पीपल और मिर्चका घर्षण बराबर मधुके साथ घाटनेसे  
ऊरुस्तम्भ रोग दबता है । इस रोगपर 'अष्टकटूरतेम'  
विशेष उपकारी है । उसको इसप्रकार तैयार करते  
हैं—सूक्ष्मित सर्पपतेन ४ सेर, तप्त पीने १ सेर, दधि  
४ सेर, पिपरांमूल २ पल और मोठ २ पल एक साथ  
पका लेन अथर्व्वेय रहने जान लेते हैं । यह अष्टकटूर  
तेम ऊरुस्तम्भकी जड़से चम्पाद डालता है ।

ऊरुस्तम्भा (सं० स्त्री०) ऊरोरिय स्तम्भास्तित्यस्याः ।  
'कदलीवृक्ष, केसेका पेड़ ।

ऊरुद्वय (सं० त्रि०) ऊरुसे उत्पन्न, जो रान्से  
निकला हो ।

ऊर्ज (धातु) शुरा० पर० अक० सेट् । १ जीवित  
होना, जिन्दगी पाना, जी उठना । २ बलिष्ठ होना,  
ताकत हासिल करना । "यो ह्येवावर्तते स प्राप्तिर्न तन्मूर्-  
तिः" (शतपथब्रा० ३५।१।१८) (स्त्री०) ऊर्ज-क्तिप् ।  
१ बल, ताकत । ४ अमृततरस नामक अक्षका भार-  
भूत रस । (स्त्री०) ५ अक्ष ।

"ततः स्रुत्वावर्तितमयैवावर्तौ अवर्तं प्रवितप्रकाशम् ।" (महि)

ऊर्ज (सं० पु०) ऊर्जयति उत्साहयति श्रमन्, ऊर्ज-  
णिच्-अच् । १ कार्तिक मास, कार्तिकका महीना ।  
२ उत्साह, होसला । ३ बल, शौर । ४ द्वितीय  
मन्वन्तरके सप्तयुगोंमें एक ऋषि । ५ निग्रास, दम ।  
६ जीवन, जिन्दगी । ७ वीर्य ।

"सूक्ष्मतं चन्द्रं निच" अर्जुनं च वक्षति ।" (मनु १।६।६)

(स्त्री०) ऊर्ज्यते अनेन, ऊर्ज-घञ् । ८ जल, पाय ।

"नमः ऊर्जं हरे अथाः पतये शम्भरेतये ।

वृत्तिहास च लोभायां नमः शम्भरेतये ॥" (भाद्रपद ३।१०।१८)

८ आध्यात्मद्वार विशेष ।

ऊर्जयत् (सं० त्रि०) १ बली, ताकतवर । २ अल-  
दायक, ताकत देनेवाला ।

ऊर्जयोमि (सं० पु०) ऋषिर्निगोप । (भारत, १५०।१८)

ऊर्जवाह (सं० पु०) मुनिके एक पुत्र ।

ऊर्जव्य (सं० पु०) ऋग्वेदीय एक राजा । (अथर्व्व १।१।१०)

कर्जस् (सं० स्त्री०) कर्ज-पशुन् । १ बल, बोर ।  
२ भवरस विशेष । (भारत, अनु० ११२ व०)

कर्जरानि (सं० पु०) बलदायक, शक्त देनेवाला ।

कर्जस्तम्भ (सं० पु०) द्वितीय मन्वन्तरके सप्तर्षिमें एक ऋषि ।

कर्जस्वत् (सं० त्रि०) शक्तिशाली, ताकतवर ।

कर्जस्वती (सं० स्त्री०) १ दधकथा तथा धर्मपत्नी ।  
२ प्रियव्रतकी कन्या और उग्रनाकी पत्नी । ३ प्राणकी पत्नी ।

कर्जस्त्री (सं० स्त्री०) कर्जस्-विन् । १ बलद्वार-  
विशेष । जिससे पतिगय बलद्वार भलकता, उसे  
कवि कर्जस्त्री बलद्वार कहते हैं । (चि०) पति-  
शक्ति कर्जस्त्री बलमस्यास्ति । २ पतिगय बलवान्,  
बड़ा जोरावर । ३ तेजस्वी ।

कर्जा (सं० स्त्री०) कर्ज भावे च-टाप् । १ बल,  
जोरावरी । २ उत्साह, सौज । ३ हडि, छटान ।  
४ भवरसकी विकृति विशेष ।

कर्जानी, कर्जादीची ।

कर्जावान् (सं० त्रि०) कर्जा प्रस्थाप्ति, कर्जा-मनुष्य  
मध्य वः । १ बलवान्, ताकतवर । २ हृदियुक्त, बड़ा  
हुषा । क्षिर्वां क्षीप् । कर्जावती ।

“कर्जावती” महाशुक्ल मनुजती विषमं नाम् ।” (भारत, अनु० १६५)

कर्जित (सं० त्रि०) कर्ज-क्त । १ बलशाली, ताकत-  
वर । २ हृदियुक्त, उमरा हुषा । ३ विख्यात, मगधर ।  
४ तेजस्वी । ५ उत्साहित, होसलेमन्द ।

“उपरिमर्जिताश्रयम् ।” (बिषय)

कर्जिताश्रय (सं० पु०) श्रेष्ठ, बड़ा, दिग्गदार ।

कर्जी (सं० त्रि०) खाद्यविशेष, जिसके पास कुछ  
ग्वाना रहै ।

कर्ण (सं० त्रि०) कर्णा प्रस्थाप्ति, कर्णा भग्न  
पादित्वात् षच् । मेघनोमनिर्मित, कर्णी, जनका  
बना हुषा ।

कर्णदेश—एक प्राचीन जनपद । (भारत, अ० ५।१।८)  
यह जनपद बैलास और हिमालयके मध्य अवस्थित  
है । इसमें पूर्व रावण-ऊट, और उत्तरपश्चिम साधक  
प्रदेश है । नीतिघाट नामक एक पथ द्वारा यह

स्थान तिब्बतसे स्वतन्त्र हुषा है । उक्त पथ प्रायः  
अर्ध मील विस्तृत है । छद्मिदादि अधिक नहीं उभ-  
रते । स्थान-स्थान पर केवल झुपाकार प्रस्तर पड़े हैं ।

शतद्रु नदी पार करनेपर देव नामक स्थानमें कुछ  
उत्तर पर्वतों पर कई सुन्दर ग्राम अवस्थित होते हैं ।  
यह नामा यण और नामा भावसे स्थापित है । पहले  
देव नामक राजा प्रोक्तानामें यहीं आकर रहते थे ।  
कर्णदेशमें यही स्थान पति मनोरम है । योड़ी दूर  
आगे गिरिमातासे सुवर्ण निकलता है । सुन्दर  
पर्वत घनाइट प्रस्तरके बने हैं । उसके बीच-बीच  
पकीक-ऊँचे पत्थरके टुकड़े भी देखनेमें आते हैं ।  
यहाँ के लोग स्त्रोतके जलसे धो स्वर्णकणोंको पाहरण  
करते हैं ।

कर्णदेशमें शमक बहुत हैं । उनके पिल्ले पैर  
और सोम बड़े होते हैं । गो, चर्र और गर्दम प्रायः  
देख पड़ते हैं । हरण-जैसा एक जानु होता है । वह  
इन्दुर जैसा लगता है । दोनों जान बहुत बड़े होते  
हैं । किन्तु पूरका पता नहीं चलता । जिस जागके  
लोमसे मांस बगता, वह यहाँ देखनेको मिलता है ।

पहले यह जनपद सूर्यवंशीय पतिवर्षी अधिकारमें  
था । एक बार नाभकके उभ प्रकृति तातारोंने यहाँके  
राजाको मार डाला था । राजवंशीयोंने चीन-मन्दा-  
ट्से साहाय्य-मांगा । कुछ काल यह चीन-मन्दाट्की  
रक्षाधिलक्षमें पड़ा था, पीछे तिब्बतवासे इनके  
लामाके हाथ लगा ।

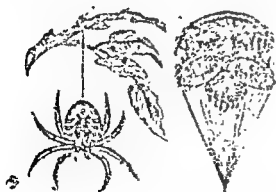
यहाँके अधिवासियोंकी जनिया कहते हैं ।

कर्णनाभ (सं० पु०) कर्णके मनुष्योंमें यध्य, नामे-  
रूपद्वयानमिष्यत् कृतः । वयोः संज्ञादन्तर्गतम् । १।१।१।  
कीटविशेष, मकड़ा । चपर नाम ज्ञाता, मनुष्य और  
मकंठक है । यह नामा ज्ञानीय रहता और नामा  
श्रेणीमें विभक्त पड़ता है । इतिवर्षीके प्रायः महान  
देशोंमें कर्णनाभ मिलता है । किन्तु क्रान्तिमनुष्य-  
पर ही इसका रहना अधिक है । विदेशतः कर्कट  
क्रान्तिका कर्णनाभ छद्मकार होता है । यह बैलास  
ऊट सुन्दर कोट आकर हो मनुष्य नहीं रहता, मध्य  
आकर कोटे कोटे पविर्ग पर भी आक्रमण करता है ।

मनुष्य और उदरवासी उपरिभागके व्यवधानमें बादाभ-जैसा एक कठिन फलक निकलता है। उदर-उभमें मिला रहता है। फिर उदर पोला और लम्बा नर्म भी होता है। पेट बाँट रहते हैं। हर एक पेटमें सात गठि पड़ती है। बाहिरी पेटमें खंघीकी तरहके दो काँटे निकलते होते हैं। मधुसूक्ता जवड़ा पतङ्ग-जैसा नहीं होता। वह सखल दिक्को झुक सकता है। जबड़ेके अन्तमें तीक्ष्ण काँटा लगता है। निकट ही एक अति सूक्ष्म छिद्र पड़ता है। उसी छिद्रसे विषाल तरल पदार्थ निकलता है। दोनों जवड़ोंके मध्य छिद्रा होती है। वह मुखके वहिरिन्द्रिय-जैसी देखायी देती है।

सरासर इसके ८ चक्षु होते हैं। किसी किसीके छह और अति अल्प संख्याके दो चक्षु रहते हैं। उदरके उपरिभाग पर ऊपर उधर दाग पड़ जाते हैं। फिर किसीके उसी स्थानपर अति परिप्लत घनावृत धर्म चढ़ा होता है।

ऊर्णनाभके फेफड़ेमें दो चयवा चार छिद्र रहते, जो उदरके तल भागपर पड़ते हैं। मज्जहारके निकट तन्तुत्पादक ग्रन्थ रहता है। उसपर भी सूक्ष्म सूक्ष्म छिद्र होते हैं। उनके बीचसे अति सूक्ष्माकार तन्तु निकलते हैं। वही सूक्ष्मतन्तु एकत्र हो जाकमें स्रुते स्रुते-जैसे देय पड़ते हैं। तन्तुत्पादक ग्रन्थसे प्रथम एक प्रकारका विषविषा पदार्थ छूटता है। वही पदार्थ वायुके अग्रसे तन्तुके आकारमें परिणत हो जाता है।



ऊर्णनाभ

तन्तुमें निकलनेपर यह माना 'कारपोसि' ज्ञात बनाता है। कोई ज्ञातमें रहता, कोई ज्ञानसे कीट

पतङ्ग एकड़ जीविका निर्वाह और कोई ज्ञात बना-अपर कीटादिके आश्रितकी सुविधा करता है। किसी-किसी ऊर्णनाभकी लीनेन गतमें रहते देखा है।

प्रायः सभी मकड़े गेद-जैसी कोयिके बीच-अपना अण्डा रखते और अण्डा परिपुष्ट पड़नेपर कोयिके काटा करते हैं। जबतक फूटनेका समय नहीं आता, तबतक कोई उस डिम्बाधारकी अपने पृष्ठपर डाल चढ़कर लगाता, कोई छातीपर चढ़ाता और कोई उदरपर अति यत्नसे रख विप्रबाधा बचाता है। एक-एक गोलेमें प्रायः २००० पंडे होते हैं। गोलेसे बाहर निकलने पर वही पंडे अपने अपने माताके समस्त शरीरमें सुद्राकार विपट जाते हैं।

मकड़ियाँ (ऊर्णनाभकी स्त्रियाँ) नाना प्रकारकी होती हैं और प्रायः सभी पुरुषकी अपेक्षा बड़ी निकलती हैं। स्त्री-पुरुषका सहवास बड़ा भयानक होता है। यदि पुरुष स्त्रीका मन नहीं रिझाता, तो वह उसके हाथों मारा जाता है।

सकल ही-देयोंमें मकड़े नाना प्रकार और नाना प्रकारके देख पड़ते हैं। फिर सभी मकड़े 'पतङ्ग' अथवा सुद्र जीवकी एकड़ मार डालते हैं। गङ्गातीरस्थ मुहुरे नगरके निकट कभी कभी एक बड़ा, काला चार-कास मकड़ा मिलता है। उसका ज्ञान देखनेमें उल्लस हरितवर्ण रहता और छह बारह हायतक लम्बा होता है।

हिमालयके निकट समेद-जाल रङ्गके बड़े-बड़े मकड़े होते हैं। कहते हैं, उनके जालमें पक्षी तक फँस रहते हैं। जालमें या जालमें बहुरस्यक ऊर्णनाभ मिल जुग उसे खा डालते हैं।

सिंहल द्वीपमें एक जातिका मकड़ा, देश पड़ता, जिसका पेट अति कठिन होता है। छिप-कसी पदमे उसी पदमें फँस जाती है।

किसी स्थानपर घत पड़नेसे मकड़ेको भगाने पर रहसाय रुकता है। विस्मायतमें मकड़ेका ज्ञान ज्योतिष-शास्त्रीय दूरबीक्षणयन्त्रके तारकी तरह व्यव-हृत होता है।

ऊर्णनाभि, ऊर्णनाभ देखो।

ऊर्णपट (सं० पु०) नूता, मकड़ा।

ऊर्णन्द (सं० त्रि०) ऊर्णमिव न्दीयः, ऊर्ण-  
न्दीयम् निपातनात्। कम्बलादिके समान कोमल,  
कम्बलकी तरह सुलायम।

“ऊर्णन्दं प्रथमः।” (भौमिच० २१।११०)

ऊर्णवाभि, ऊर्णनाम देवो।

ऊर्णा (सं० स्त्री०) ऊर्ण-ड-टाप्। ऊर्णति क्तः। उप् १।१०।

१ मेपादिका लोम, पशु, जन। मम देवी। २ भूद्वयके  
मध्यवर्ती मृणालध्रुवके समान सुस्त रोमराजीका चिह्न  
विशेष। यह चिह्न होनेसे मनुष्य चक्रवर्ती राजा वा  
महायोगी होता है। ३ चित्ररथ मन्थर्वकी पत्नी।

ऊर्णापिण्ड (सं० पु०) ऊर्णका गोला।

ऊर्णामय (सं० स्त्री०) ऊर्णा विकारार्थे मयद्। मय-  
लोमनिर्मित सुबादि, ऊनी धामा वर्गैरह।

“ऊर्णामयं कौमुद्वन्तम्।” (कुमार)

ऊर्णायु (सं० पु०) ऊर्णा अस्त्वस्य, ऊर्णा-युस्, सित्वात्  
चाता न लांपः। १ मेषलोम-निर्मित कम्बलादि,  
ऊनी कम्बल वर्गैरह। २ मेष, भेड़। ३ ऊर्णनाभ,  
मकड़ा। ४ उपमह। ५ किसी मन्थर्वका नाम।

ऊर्णायु (सं० त्रि०) ऊर्णानिर्मित, ऊनी।

ऊर्णान्न (सं० त्रि०) ऊर्णा अन्नादि, ऊर्णा-यन्नच्।  
१ ऊर्णायुक्त, ऊनसे भराहुपा। २ मेपादिलोमनिर्मित,  
ऊनी। “ऊर्णादिनिमित्तं बह्वक्षरं नाम्निम्।” (मत्तपत्रा० ५।१।११३)

ऊर्णावल (सं० त्रि०) ऊर्णायुक्त, ऊनी।

ऊर्णासुल (सं० स्त्री०) ऊर्णा यस्य सुलम्। मेपादि लोम,  
ऊन। “ऊर्णाद्वेद्यं बह्वक्षरं नाम्निम्।” (मत्तपत्रा० १।१।१००)

ऊर्णासुपा (सं० त्रि०) ऊर्णायुक्त, ऊनी, भेड़ वर्गैरहके  
बालका बना हुपा।

ऊर्णास्तुका (सं० स्त्री०) ऊर्णास्तवक, ऊनकी सलकी।  
ऊर्णं (धातु) धदा० उभ० सक० सिट्। “ऊर्णं मय पाश्चाददे”  
(चरित्रकट्टम्) पाश्चादन् करमा, टांकना। “ऊर्णं नाव न दन्ती-  
य नरापामोर्जिनीम्।” (महि १।१।२)

ऊर्णत (सं० त्रि०) पाश्चादित, टका हुपा।

ऊर्णवान् (सं० त्रि०) पाश्चादन् करनेवाला, जो  
टांकता हो।

ऊर्ण (सं० त्रि०) ऊर्ण-चप्। क्रीडायुक्त, खेलाड़ी।

ऊर्णर (सं० पु०) ऊर्जेन दृणाति विदारयति, ऊर्ज-  
यस् चप् वा। ऊर्जं दृणातिरूपी पूर्वपदात्तप्रत्ययः। उप् १।१०।  
१ धीर, बहादुर। २ राक्षस। ३ धान्यादि रखनेका  
एक पात्र, कुशूल।

ऊर्ध्व (सं० त्रि०) उत्-हाङ्-ठः प्रमोदरादित्वादूर्वा-  
देयः। १ उच्च, ऊँचा। २ उत्तुल्लट, उभृदा। ३ उप-  
रिस्थ, उपरी। ४ पनमत्तर, पिछला। ५ परित्याग,  
कूटा। ६ उत्पाटित, उखाड़ा। (लो०) ७ उपना,  
ऊँचापन। ८ ऊर्ध्वदेश, उपरी सुक्त। ९ नृद्वज्र  
विशेष, किमी किछका टोम या तबला।

ऊर्ध्वक (सं० पु०) ऊर्ध्वः सन् कायति गम्यायति,  
ऊर्ध्व-कै-क्। नृद्वज्रविशेष, किमी किछका टोम या  
तबला।

ऊर्ध्वकथ (सं० त्रि०) ऊर्ध्वा उत्पाटिताः कथा यस्य,  
बहुव्री०। ऊर्ध्वगत कैय रखनेवाला, जो बाम मोचा  
या उखाड़ा जा चुका हो।

ऊर्ध्वकण्टा (सं० स्त्री०) ऊर्ध्वकण्टः कण्टकी यस्याः,  
बहुव्री०। महाधन्वावर, बड़ी सुतावर।

ऊर्ध्वकण्ठ (सं० त्रि०) ऊर्ध्वः कण्ठो यस्य, बहुव्री०।  
प्रोवादेश उच्यत किये हुपा, जो गर्दन ठढाये हो।

ऊर्ध्वकर्ण (सं० त्रि०) काम खुड़े निये हुपा।

ऊर्ध्वकर्म (सं० स्त्री०) ऊर्ध्व ऊर्ध्वदेशमात्रार्थे  
कर्म। नृत्यव्यक्तिके उद्देश्यसे किया जानेवाला सकल  
याबादि।

ऊर्ध्वकाय (सं० पु०-स्त्री०) कायस्य ऊर्ध्वम्। १ यदि-  
देशसे उपरिस्थ अवयव, ऊपरसे उपरका जिण। ऊर्ध्व  
उच्यतः कायो यस्यः बहुव्री०। उच्यत देहवाला, जो  
ऊँचा पुरा जिण रखता हो।

ऊर्ध्वक्षयन (सं० त्रि०) येनाता हुपा, जो धाम  
छोड़ रहा हो। यह सोमका विशेषण है।

ऊर्ध्वकेतु (सं० त्रि०) ऊर्ध्व उच्यत केतुर्ध्वस्य यत्र वा।  
उत्थित ध्वजावाला, जिससे ऊँचा गुड़ा रहे। २ उद्यतो  
ध्वजावाला, जिसमें झण्डा फहराता देगे। (पु०)  
३ जनकवर्गीय एक राजा।

“ऊर्ध्वकेतु उच्यतः केतोः उच्यते।” (मत्तपत्रा० १।१।१११)

ऊर्ध्वकेश (सं० पु०) ऊर्ध्व उच्यतः केशो यस्य, बहुव्री०।



१ अतिगामोक्त सुगमय द्वाद्यष्ट। (त्रि०) २ उद्यत  
वेग रपनेवाला, जिसके चढ़ा बाल रहें।  
अर्धक्रिया (सं० स्त्री०) अर्ध० क० दी।  
अर्धग (सं० द्वि०) अर्ध गच्छति, अर्ध-गम-ह।  
१ अर्धगामी, अर्ध जानेवाला। २ स्वर्गगामी।  
१ मत्पयावनम्बी, अर्धो चाल पकड़नेवाला। (पु०)  
४ गिरीरोग, सरकी बीमारी।  
अर्धगत (सं० द्वि०) ऊपर गया हुआ।  
अर्धगति (सं० स्त्री०) १ उद्यगति, अर्धो  
चाल। २ उद्यत स्थानपर आरोहण, अर्धो जगहकी  
चढ़ाई। ३ स्वर्गारोहण। (त्रि०) ४ उद्यगतिप्राप्त,  
ऊपर पहुँचा हुआ। ५ मुक्त।  
अर्धगुर (सं० स्त्री०) १ पाकागस्य गृह, पासमानो  
मकान्। २ पुर नामक बसुरका घर। ३ हरियन्द्र  
राजाको पुरी।  
अर्धगम (सं० पु०) अर्ध गति दीखी।  
अर्धगमन (सं० स्त्री०) अर्ध गति दीखी।  
अर्धगामी (सं० द्वि०) अर्ध-गम-णिनि। अर्धगमन  
करनेवाला, जो अर्ध जाता हो।  
अर्धवरण (सं० पु०) मोमलताको दवानेके लिये  
प्रसार उठानेवाला।  
अर्धवरण (सं० द्वि०) अर्धवरणो यस्य। १ अर्धगत  
वरणवाला, पैर उठाये हुआ। (पु०) २ अर्धवरण  
गरम। इस मिँहके चार वरण उठे होते हैं।  
१ उद्यत पदसे तपस्या करनेवाले साधु। २ यह भूमिपर  
मद्भक्त जमा दार्थिके सद्धार उठते हैं।  
अर्धवित् (सं० द्वि०) संपद करता हुआ, जो ढेर  
समा रहा हो।  
अर्धजानु (सं० द्वि०) अर्ध जानुनी यस्य, बहुरी०।  
उद्यतजानु, अर्धे घुटनीवाला।  
अर्धघ (सं० द्वि०) अर्ध जानुनी यस्य, निपातनात्  
साधुः। अर्धजानु, अर्धे घुटनीवाला।  
अर्धघ (सं० द्वि०) अर्ध जानुनी यस्य, घे जानुनोर्धुः।  
अर्धनिपात। वा ३४५। १ अर्धजानु, अर्धे घुटनीवाला।  
“अद्यतजानु अर्धघं दृष्टम्।” (अन)

अर्धतन (सं० द्वि०) अर्ध उत्पन्नः, अर्ध-तन।  
उपरिस्थ, ऊपरी।  
अर्धता (सं० स्त्री०) उद्यता, अर्धार्।  
अर्धतास (सं० स्त्री०) तानविशेष, अर्ध तास।  
अर्धतित्त (सं० पु०) विरायता।  
अर्धतिलकी (सं० द्वि०) अर्धमुद्यत तिलकं यस्यास्ति,  
अर्ध-तिलक-द्विनि। उद्यततिलकविशिष्ट, छद्दा टीका  
लगाने हुआ।  
अर्धया (सं० अव्य०) अर्ध-यात्। १ अर्ध प्रकारसे,  
अर्धे तौरपर। २ अर्धमें, ऊपर-ऊपर।  
अर्धदंष्ट्रकेम (सं० पु०) अर्धदंष्ट्रकानां ईशः पतिः,  
इ-तत्। मछादेव।

“नमोर्धदंष्ट्रकेमाय दृष्टयावनताय च।” (भारत, भाषि)

अर्धदृष्टि (सं० द्वि०) अर्ध दृष्टिरस्य, बहुव्री०।  
१ अर्धदेगपर दृष्टि निषेधकारी, जो अर्धो जगहपर  
नज़र डालता हो। २ अर्धनेद, अर्धो पाँसवाला।  
(स्त्री०) १ अर्धदृष्टको मध्यवर्ती दृष्टि, भीषोर्धो बीचकी  
नज़र। ४ उत्तम दृष्टि, उठो या चढ़ो निगाह।  
५ मृत्युकाशीन दृष्टि, मरते वक्तकी नज़र। ६ योग-  
विशेष।  
अर्धदेव (सं० पु०) अर्ध उत्कृष्टवासो देवयेति,  
कर्मधा०। १ परमेस्वर। २ विष्णु।  
अर्धदेश (सं० पु०) अर्धवासो देवयेति, कर्मधा०।  
उपरिभाग, ऊपरी हिस्सा।  
अर्धदेह (सं० पु०) अर्ध उत्तरपालीगयासो देह-  
येति, कर्मधा०। मरणान्तर प्राप्त होनेवाला शरीर,  
जो निम्न मरनेके बाद मिलता हो।  
अर्धद्वार (सं० पु०) १ उद्यत द्वार, अर्धो दरवाजा।  
२ द्वारस्थ।  
अर्धनमा (सं० पु०) अर्ध नमो यस्य, बहुव्री०।  
पाकागका मध्यदेगस्य वायु, पासमान्क बीचकी हवा।  
अर्धनयन (सं० पु०) गरम।  
अर्धन्दस (सं० द्वि०) अर्धन्-दम्-पच्। अर्धस्य,  
ऊपरी।  
अर्धपथ (सं० पु०) पाकाग, पासमान्, ऊपरी राह।  
अर्धपातन (सं० स्त्री०) अर्धपात।

अर्धपात्र ( स० स्त्री० ) अर्ध नेतृत्वं पात्रम्, मध्य-  
पदलोपी समा० । चट्टाख्य प्रभृति यश्चपात्र ।

अर्धपाद ( स० पु० ) अर्धाः पादा यस्य, बहुव्री० ।  
१ शरम नामक मृगविशेष । जलक्षीः । ( त्रि० )  
२ अर्धदेगमें पाद रखनेवाला, जिसके ऊपरी हिस्सेमें  
पैर रहे ।

अर्धपुण्ड्र ( स० पु० ) अर्ध उत्ततः पुण्ड्र इत्युत्तरिण ।  
चन्दन आदिसे लसाटपर लगाया हुआ लम्बा तिलक ।  
ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है—ब्राह्मणको अर्धपुण्ड्र,  
क्षत्रियको त्रिपुण्ड्र, वैश्यको चर्धचन्द्राकार एवं  
शूद्रको वर्तुलाकार तिलक लगाना और सप्त, सृष्टिका,  
भस्म तथा चन्दनसे अर्धपुण्ड्र लगाना चाहिये । देवी-  
भागवतमें नारायणने कहा है कि वैदिक अर्थात् वेदनिष्ठ  
ब्राह्मणको अर्धपुण्ड्र, विशूल, वर्तुल, चतुष्कोण वा  
चर्धचन्द्राकार प्रभृति कोई तिलक लगाना मना है ।  
फिर ब्रह्माण्डपुराणके मतसे चण्डवि, चनाचारी एवं  
पापविनाशकारी व्यक्ति भी अर्धपुण्ड्र लगानेसे शुद्धता  
पाता और चण्डालतुल्य चनाचारी ब्राह्मण अर्ध-  
पुण्ड्राङ्कित अवस्थामें मरनेसे स्वर्ग चला जाता है ।  
अनेक पुराणोंको देखते जय, होम, दान, वेदाध्ययन  
और पित्रकार्यमें अर्धपुण्ड्रधारण निषिद्ध है । किन्तु  
कुलाचारमें ऐसा नहीं होता । इसलिये व्यासोक्त  
वचनके अवलम्बनसे निश्चित होता है कि—ग्राह्यादिके  
समय गन्ध वस्तुद्वारा अर्धपुण्ड्र लगाना मना है,  
अपरापर बहुतने जगानमें कोई बाधा नहीं ।

अर्धपुण्ड्रक, अर्धपुण्ड्रक्षीः ।  
अर्धपुर ( स० अश्व० ) क्षिनारि तक भरकर ।  
अर्धदृष्टि ( स० पु० ) अर्धाः दृष्टयो विन्द्वो यस्य,  
बहुव्री० । पक्ष विशेष, एक चौपाया ।  
अर्धवर्षी ( स० त्रि० ) अर्ध प्रागण्यं बहियेषाम्,  
बहुव्री० । पितृलोक ।  
अर्धवाल ( स० त्रि० ) षड्दे बानोवाला ।  
अर्धबाहु ( स० पु० ) अर्ध अर्धगतयासौ बाहु-  
यति कर्मधा० । १ उत्तोलित हस्त, उठा हुआ हाथ ।  
२ पश्चिम मन्वन्तरके सात षट्पिंडोंमें एक षट्पिंड ।  
३ मन्वाक्षी सम्प्रदाय विशेष । जो साधु एक वा

समय बाहु अर्धदिक् उठाये रहते, उन्हें अर्धबाहु  
कहते हैं । मिथाके द्वारा जीविकानिर्वाह करने हैं ।  
कोई दिग्भ्रमर वेग रखता और कोई केवलमात्र गैरिक  
वस्तु पहनता है । ५ षट्पिंडके एक पुत्र । ( रिचुडः ११०११ )  
( त्रि० ) ६ बाहु उत्तोनन किये हुआ, जो हाथ  
उठाये हो ।

अर्धबुध्न ( स० त्रि० ) अर्ध-वन्धन, अर्धबोधन ।  
अर्धहृत्ती ( स० स्त्री० ) हृत्तीविशेष ।  
अर्धभाक् ( स० त्रि० ) १ अर्धभाग लेनेवाला, जो  
ऊपरी हिस्सा पाता हो । ( पु० ) २ बहुरानस्य ।  
अर्धभाग ( स० पु० ) अर्ध उपरिस्थी भागः, एकदेगः  
कर्मधा० । उपरिभागा, ऊपरी हिस्सा ।  
अर्धम् ( स० अश्व० ) उत्-हं हस्त, उरादेगः । उपरि,  
ऊपर । “अर्धं भाषा च नृकामि हस्तः श्रद्धिर्वापदिनि ।” ( मनु )  
अर्धमनु ( स० पु० ) पुराणोक्त जनपदविशेष ।  
( ब्रह्माण्डपुराण ४०४०, मनुस्मृत्यु ११०४० )  
अर्धमन्यो ( स० पु० ) अर्ध उत्तराश्रमं मयाति,  
मन्य-णिनि । नैष्ठिक ब्रह्मचारी, श्रीप्रसङ्गने विनकुल  
अश्रम रहनेवाला ।  
अर्धमान ( स० स्त्री० ) अर्धभारोप्य मीयते अनेन,  
अर्ध-मा-श्रुत् । १ प्रस्तर वा मोहनमिश्रित तीलनेका  
वांट । २ ऊपरी परिमाण ।  
अर्धमायु ( स० त्रि० ) अश्वगृहकारो, जो लंबी  
आवाज देता हो ।  
अर्धमाहत ( स० स्त्री० ) देहस्य वायुका ऊपरो दबाव ।  
अर्धमुख ( स० त्रि० ) अर्ध मुखं यस्य, बहुव्री० ।  
१ ऊपरको मुख रखनेवाला ।  
“अर्धमुखं हस्तेन्दुर्धः ।” ( मनु )  
( पु० ) २ अग्नि । ( स्त्री० ) १ मुखका अर्धभाग,  
मुखका ऊपरो हिस्सा । ४ अत्यंत मुख, लंबा मुख ।  
अर्धमुखी ( स० पु० ) मन्वादिपौका एक सम्प्रदाय  
यह अपना मुख ऊपरको हो रखते हैं ।  
अर्धमूल ( स० स्त्री० ) सगत्, दुनिया ।  
अर्धमोक्षतिष्ठ ( स० त्रि० ) कुछ कामके बाद  
शोभना, जो थोड़ा देरके बाद पा पड़ना हो ।  
अर्धरेखा ( स० स्त्री० ) अर्धवृत्तिविशेष । यह एक

चित्रोर्मि एक है। चट्ट ह तया उसकी निकटभी  
चट्ट निरं मध्ये यह रेखा एकीतक पट्टवती है।  
इसके नीचे मनुष्य पञ्चावतारी समझा जाता है।  
राम, हृष्य प्रभृति विष्णुके अवतार इस रेखासे  
युक्त हैं।

अर्धरेता (मं० पु०) अर्ध अर्धगं रेतो यस्य, बहुव्री०।  
१ महादेव। २ मन्कादि मुनि। ३ तपस्वी विप्र।  
४ भीम। ५ हनुमान्। (त्रि०) ६ रेतःपवन-  
रहित, जो कभी थोड़े गिराता न हो।

अर्धरोमा (सं० पु०) अर्धानि रोमानि यस्य, बहुव्री०।  
१ यमदूत प्रभृति। २ कुम्होपस्य पर्वतविशेष।  
(त्रि०) ३ अघत रोमवाला, जिसके खड़ा रोंगटा रहे।  
अर्धनिद्रा (मं० पु०) अर्धं निद्रां यस्य, बहुव्री०।  
महादेव।

अर्धनिद्रा, अर्धनिद्रा दी।

अर्धलोका (सं० पु०) अर्धं चासौ लोकश्चेति, कर्मधा०।  
१ स्वर्ग, विहित। २ पाकाग, चासमान्।

अर्धवात (मं० पु०) अर्धा वातः, कर्मधा०। अर्धगत  
वायु, ऊपर चढ़ी हुई हवा।

अर्धवायु, अर्धवात दी।

अर्धवृत्त (सं० स्त्री०) अर्धवृष्टनेन वृत्तः, इ-तत्।  
अर्ध दिक् चावर्तित यत्रोपवेत, ऊपरकी घूमा हुआ  
जनेक। “आर्धगुपरीतं लोभस्त्रीर्धनं तिरम्” (मनु ३।४।४)

अर्धवृत्ती (सं० स्त्री०) अर्धोपवेति।

अर्धगान (सं० त्रि०) ऊपर उठनेवाला।

अर्धमायो (सं० त्रि०) अर्ध-श्री-णिनि। १ उत्तान-  
मायो, षित लेटनेवाला। (पु०) २ महादेव।

अर्धशोधन (मं० स्त्री०) वमन, की।

अर्धशोध (सं० वय०) अर्धः सन् शोधति, अर्ध-  
वसुन्। उपरिस्थ शोधय हास, ऊपर ही सूख जानेसे।

अर्धशाम (सं० पु०) अर्धं चासौ शामश्चेति, कर्मधा०।  
१ दोषशाम, समी मांस। २ अस्वकाशोन शास, मरते  
वाहकी मांस।

अर्धशायु (मं० पु०-स्त्री०) अर्धं च तत् शायु चेति,  
कर्मधा०। पयसादिका उपरिस्थ समतल प्रदेश, पहाड़  
वगैरहके ऊपरका समथार स्थान।

अर्धस्थ (सं० त्रि०) अर्ध, ऊपरवाला।

अर्धस्थित (सं० त्रि०) ऊपर रहनेवाला।

अर्धस्थिति (सं० स्त्री०) अर्धा स्थितिर्यस्य, बहुव्री०।  
१ पञ्चकाष्टदेश, घोड़ेकी पीठ। (त्रि०) २ अर्धस्थ,  
ऊपर।

अर्धस्त्रोता (मं० पु०) अर्धं अर्धगतं स्त्रोतो यस्य,  
बहुव्री०। १ अर्धरेता मुनि। २ हृषादि, पेड़ वगैरह।

अर्धह (सं० पु०) मस्तक, सर।

अर्धाङ्गुलि (सं० वय०) अंगुली उठाकर।

अर्धाकर्षण (सं० स्त्री०) अर्धं को भाकर्षण, ऊपरकी क्षिति।

अर्धायाम (सं० पु०) अर्धं आश्रायते, अर्ध-आ-  
कर्मणि घञ्। वेदमार्गसे प्रतिरिक्त बोधक एक तन्त्र।

इसमें शुद्धमति, विष्णुके दशावतार, गौराङ्ग-माहात्म्य-  
कीर्तन, श्रीकृष्ण-पूजाविधि, नारायणस्तव एवं गद्या  
माहात्म्या प्रस्तुतिका वर्णन है। नारद अर्धायामके  
वक्ता तथा व्यासदेव श्रोता हैं।

अर्धायन (सं० त्रि०) अर्धं अयनं गमनं यस्य, बहुव्री०।

१ अर्धगत, ऊपर जानेवाला। (पु०) २ ब्रह्मोपस्य  
पार्श्वविशेष, एक चिड़िया। (स्त्री०) ३ अर्धगति,  
ऊपरकी चाल।

अर्धवर्त (सं० पु०) अर्धं आवर्तते कत्र, अर्ध-  
आ-वृत्त-घञ्। १ पञ्चवृत्त, घोड़ेकी पीठ। २ आवर्त-  
विशेष, एक घेरा।

अर्धसित (सं० पु०) अर्धं ऊपरभागे पतितं  
यस्य, बहुव्री०। १ कारवेष्ट, करेला। (त्रि०) अर्ध  
मासितं येन। २ अर्धपविष्ट, ऊपर बैठे हुआ।

अर्ध (सं० पु०) अर्धगति, ऊपरकी चाल।

कर्मि (सं० पु०-स्त्री०) अर्धयतीति, अर्ध-मि करारदेश्य।  
चतुरस्र। अर्धः। १ तरङ्ग, लहर, उभार। २ प्रकाश,  
रोशनी। ३ वेग, भण्ड। ४ भद्र, दृढ़। ५ पीड़ा,  
तकलीफ़। ६ पैदवा, दर्द। ७ उत्कण्ठा, चाहिम।

८ शोक, मोह, जरा, मृत्यु, दुःख और विपत्ति।  
९ अर्धकी एक गति, घोड़ेकी मछरिया चाल।

१० भाति, भूल। मद्र, माय। ११ समूह, जगुरी।

१२ शोधता, जलदी। १३ पद्मरीय, पंशुगतरी।

१४ कण्डिका गुणाव। १५ निकन, वन।

कर्मिका (सं० स्त्री०) कर्मि स्त्रायें कन्-टाप्, कर्मि-  
रिव कायति, कर्मि-कै-टाप् । १ बहुरीयक, शंगुडी ।  
२ अमर गुच्छन, भोरिकी गुञ्जल ।

कर्मिन् (सं० त्रि०) कर्मिरक्ष्यस्य, कर्मि-इनि ।  
कर्मियुक्त, लहरदार, लहरी ।

कर्मिमत्ता (सं० स्त्री०) १ भङ्गुरता, टूटापन ।  
२ वक्रता, टेढ़ापन ।

कर्मिमान् (सं० त्रि०) कर्मिरस्तुक्ति, कर्मि-मनुप् ।  
१ तरङ्गयुक्त, लहरदार । २ वक्र, मेहराबदार ।

कर्मिमात्रो (सं० पुं०) कर्मिणां मात्रा विद्यते यस्य,  
कर्मि-मात्रा-इनि । समुद्र, लहर-प्राजम् ।

“बन्धुं मनुजोर्मिरिमात्रो” (१३ श्रु०१)

कर्मिन्ना (सं० स्त्री०) लक्ष्मणकी पत्नी । यह  
जनककी भोरस कन्या थीं ।

कर्म्य (सं० त्रि०) कर्मि भवः, कर्मि-यत् । १ तर-  
ङ्गोत्पन्न, लहरसे निकला हुआ । (पुं०) २ वक्र विशेष ।

कर्म्या (सं० स्त्री०) रात्रि, रात ।

“तिरहसो हरमं कर्म्याह” (शब्द० १३५०१)

‘कर्म्याह रात्रिम्’ (सायण)

कर्व (सं० पुं०) १ जलपात्र, डोज । २ मेघ, बादल ।  
३ पान्नस स्थान, घिरी जगह । ४ कारागृह, कैद-  
खाना । ५ शीर्षकी पिता । ६ बड़वानल ।

कर्वरा, कर्वरा देखो ।

कर्वशर (सं० पुं०) भरतवंशीय महावीर्यके सुत ।

कर्वशी, कर्वशी देखो ।

कर्वशीव (सं० स्त्री०) कर्वश्च पक्षीयन्ती च, समाहार-  
इन्द्र । कर्वश्च पक्षी, रान और घुटना ।

कर्वशी (सं० स्त्री०) करी चविता, प्रयोदशदिवसात्  
साधुः । कर्वशी देखो ।

कर्वशी (सं० स्त्री०) करीरस्थि, हड्डी । कर्व-  
देगका हाड, रानकी हड्डी ।

कर्वी (सं० स्त्री०) कर्वदेगका मध्यस्थ ।

“कर्वमर्थे कर्वी नाम तव कोटिनचदम्बु कर्वन्विभोवः”

(सुसुत कर्तार)

कर्व्य (सं० पुं०) कर्व भवः, कर्व-यत् । बड़वानल-  
विहात्री देवता, इन्द्र ।

कर्व्य (सं० स्त्री०) कर्व्याः पृथिव्या कर्वमिव ।  
गोमयकृत्रिका । इसका संस्कृत पर्याय—दिसोर,  
मिलीभुक, वगरीरुध पीर गोमास है । (शारंगी)

कर्वी (सं० स्त्री०) देवताहक लक्ष ।

कर्व—युक्तप्रदेशकी एक नदी । यह माहजडापुर जिलेमें  
पचा २८ २१' उ० तथा द्रावि ८० २०' पू० से  
निकलती थीर दक्षिणमें पूर्व ७ मील बह कर पचा २८ २२' उ० एवं द्रावि ८० २८' पू० पर खेरी जिलेमें  
जा पहुँचती है । फिर सोतापुर जिलेमें जल पचा २० ४२' उ० तथा द्रावि ८१ ११' पू० पर चौकामे  
मिलती है । पूरी लम्बाई १५ कोठ है । इसमें बाढ़  
पानिका बड़ा डर रहता है । कर्वी कर्वी जल दिस-  
कुल घुल जातो है । चनीगंज एवं गांसे थीर खगोम-  
पुर तथा सिचोके डोब इसपर पुन बंधा है । यह नाम  
सजान या खेतमें पानी पहुँचानेके काम नहीं आती ।

कर्वंग (हिं० स्त्री०) एक चाय ।

कर्वजजल (हिं० वि०) १ कटपटांग, बाहियात ।  
२ मूख, गड़बड़िया । ३ समर्थ, गंवार ।

कर्वर (हिं० स्त्री०) काश्मीरका छद् विशेष, काश्मी-  
रकी एक मीन । यह खूब लम्बी चाड़ी है ।

कर्वुपी (सं० पुं०) १ कर्मजन्तु विशेष । एक पानीका  
जानवर । २ मत्स्य विशेष, एक मछली । कर्वुपी देखो ।

कर्वुक (सं० पुं०) कर्वुक, उलू ।

कर्वट, कर्वट देखो ।

कर्वथ (सं० स्त्री०) पर्वथे उदरका नदका हुआ लक्ष ।

कर्व (धातु) मादि० पर० सन्० मीट् । “कर्व०”  
(विचलपुन) घीडा देना, तक्रनोफ़ पहुँचाना ।

कर्व (सं० पुं०) कर्व-व । १ शारंगिका, शारी  
मछो । २ कर्वरन्त्यु, कानका डेढ़ । ३ समद एवंत,  
चन्दनादि । (स्त्री०) ४ प्रत्यक्षकान, तहका । ५ यक्ष, वीर्य ।

कर्वक (सं० स्त्री०) कर्व अर्थां कर्ग । प्रत्यक्ष समद,  
सवेरा ।

कर्वथ (सं० स्त्री०) कर्व-व्यट् । १ मरिच, मिर्च ।  
२ यष्टो, शीठ । ३ पित्रशमूल । ४ पीत ।

कर्वका (सं० स्त्री०) कर्वक-टाप् । १ दिपकी,  
पोपक । २ चविक ।

जयपुट (घं० श्लो०) कागुम्में छिपटा नमकका दागा।  
जयर (घं० श्लो०) जयं चारमुत्तिकां राति उदाति,  
जयर पयदा जय-रा-क। नोना स्यान्, रैहकी जगह।

"जय रिदा न बहना दुर्ग बोधनितोरे।" (मनु १११)

जयराज (घं० श्लो०) जयराज् जायते, जयर-जय-रज्।  
१ पांशुलपय। २ रोमक नामक जयस्कान्त विधेय।  
जययान् (घं० श्लो०) जयो विद्यतेऽस्य, जय-मनुष्य  
मस्य वः। नोना स्यान्, रैहकी जगह।

जया, जय दीयो।

जय, जय दीयो।

जयज (घं० श्लो०) जयोऽस्तारस्य, जय-ज। जय-  
युक्त, गर्म।

जयज्ज (घं० श्लो०) जय निवारणीयत्वेन जय्याति,  
जय-ज-यत्। जयनिवारक, गर्मी दूर करनेवाला, ठण्डा।

जयन् (घं० पु०) जय-मनिन्। १ ग्रीक, गरमी।  
२ ताप, धूप

जयप (घं० श्लो०) गर्म, भोजनका वाष्प खींच लेनेवाला।

जयपर (घं० श्लो०) जयन्के घटले घड़नेवाला।

जयप्रकृति (घं० श्लो०) जयन्के निकला हुआ।

जयवत् (घं० श्लो०) तप्त, गर्म।

जयान्त (घं० श्लो०) जयन्में समाप्त होनेवाला।

जयान्तास्य (घं० पु०) पथं स्वर, जो पूरा स्वर न हो।

जयोपगम (घं० पु०) उच्चापका आगम, गर्मीकी  
धामद।

जयन (घं० पु०) जयविशेष, तरमिरा, जेवा। इसी  
मर्पवकी भांति यव तथा गोधूमके साथ बोते हैं।  
जयनका तेल जलाते चौर खेती गाथीं तथा भैंसोंकी  
पिलाते हैं।

जयर (घं० श्लो०) जय दीयो।

जह् (धातु) ज्हा० धाम० सक० शेट्। "जह रिहै।"  
(हरिवंशपुराण) सम्येहसे तर्क करना, बहस से बहस छेड़ना।

जह (घं० पु०) जह-घञ्। १ वितर्क, बहस।  
२ पथ्याहार, द्विपाथ। १ परीक्षा, कांच। ४ भवनविन  
विमर्श लिङ्गकी जोड़ भन्वययोग्य विभक्त्यादिकी  
कल्पना। ५ भारीप, जगाव। ६ सिद्धिविधेय।  
७ अनुमान, फर्ज।

जहगान (घं० श्लो०) धामगानका एक प्रत्यय।

जय दीयो।

जहन (घं० श्लो०) वितर्क, बहस।

जहनी (घं० श्लो०) जह-लुट्-होय्। सम्प्राजर्णो।

जहनीय (घं० श्लो०) तर्क, बहसके कानिबल।

जहा (घं० श्लो०) जह-टाप्। जह दीयो।

जहापोह (घं० श्लो०) जहस्तर्कः प्रयोहः प्रयगतो  
यत्, बहनी०। १ तर्कशून्य, बहस। २ तर्कद्वारा

संग्रह मिटाये हुआ, जो बहससे शक मिटा हुआ हो।  
३ पथ्यानादिमें संग्रहहीन, सबकुमें शक न रखने-  
वाला। ४ सुबुद्धादि प्राप्तिविषयमें कृतनियय, दास्त  
मोहकी सुनाकात ठहराये हुआ। ५ दानादिमें  
द्विधा मतशून्य, बहसक देनेवाला।

जहित (घं० श्लो०) जह-त्त। १ तर्कित, बहस  
किया हुआ। २ पथ्याहृत, द्विपा हुआ। ३ अनुमित,  
फर्ज किया हुआ। ४ सम्भावित, सुमकिन।

जहा (घं० श्लो०) जह-लुट्। १ तर्कहीन, बहसके  
कानिबल। २ व्यर्थकार्य, जगनेवाला। (श्लो०)  
१ सीमांसा-प्राप्तोक्त जह विधेय।

जहगान, जहगान दीयो।

कृट ( सं० पु० ) १ स्वरवर्णका सप्तम अक्षर । ऊह, दीर्घ और द्रुत मंदसे यह तीन प्रकारका होता है । उच्चारणस्थान मूर्धा है । निपुनकी प्रणालीमें ऊर्ध्व देगपर एक वक्र रेखा दक्षिण जायेगी और वामदिक्षि आरम्भ कर एक त्रिकोणाकृति बनानेमें आयेगी । फिर दक्षिण दिक्षी अवोगामी रेखा पढ़ेंगे । माया परामात्रि-जैसी विख्यात है । उसमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर अवस्थान करते हैं । कृटकारका तन्मात्र नाम पूर, दीर्घमुष्ठी, ह्रस्व, देवमाता, त्रिविक्रम, भारभूति, क्रिया, क्रूरा, रोचिका, नासिका, ह्रस्व, एकपादगिरि, माता, मण्डला, शास्त्रिणी, क्षण, कर्ष, कामलता, मिथ, निवृत्ति, गणनायक, रोहिणी, शिवदूत, पूर्ण-गिरि और सप्तमी है । ( वर्षादारण ) २ धातुका अनुवन्ध-विशेष । "कृचकृत्तम् ।" ( कविकल्पद्रुम ) ३ स्मर, विहिष्ठ । ४ तपन । ( स्त्री० ) ५ देवमाता अदिति । ( अथ० ) ६ हास्य परिहास, जोनो ठोना । ७ गिन्दा, क्षी-क्षी । ८ माय, वात । ९ प्राप्ति, जामिनी । १० वाक्शक्ति । ( धातु ) स्वा० पर० सक० अनिट् । ११ गमन करना, जाना । १२ प्राप्त होना, पहुँचना । "य गतो शपथे च ।" ( कविकल्पद्रुम ) अदा० पर० सक० अनिट् । १३ गमन करना, जानना । "य इरान वयाम् ।" ( कविकल्पद्रुम ) लुङ्गो० पर० सक० अनिट् । १४ गमन करना, जान पड़ना । "य रति वयाम् ।" ( कविकल्पद्रुम ) स्वा० पर० सक० अनिट् । १५ हिंसा करना, मारना । "य रति हिंसे ।" ( कविकल्पद्रुम ) कृक् ( सं० स्त्री० ) कृचन्तो स्तुयन्ते अमया देवाः । कृच्-क्लिप् । १ कृच्येद । इसको माया एकविंशति है । २ कृच्येदोक्त मन्त्र । ३ स्तुति, तारीफ़ । ४ पूजा, परमार्थ । ( द्वि० ) ५ तप्त, गर्म । कृक्कृस् ( सं० अथ० ) कृक्कृस् । चक् ।

कृचक्य ( सं० द्वि० ) कृच-कृ, धृषोदरादित्वात् वक्तव्यः । कृच, कटा कृपा । कृच्य ( सं० स्त्री० ) कृच्-स्तुतो चक् । कृच्येदिति-विधिविभाषकः । उच्चारण १ धन, दोस्त । २ स्वर्ण, कुर । ३ उत्तराधिकारस्यसे मिलनेवाली प्राप्ति प्रभृति की सम्पत्ति, जो लायदाद वरासतसे दानित हो । कृच्यद्वर ( सं० द्वि० ) कृच्येद्वरति, कृच्य-कृ-चक् । अंगमागो, हिष्णेदार, वरासतसे प्राप्त पानेवाला । कृच ( सं० पु० स्तो० ) कृच-म-क्ति । कृचि-म-क्ति । कृचि । उच्चारण । १ मन्त्र, सितारा । "जोडा मन्त्रे चोडा रोशफिय, कृच, मन्त्रानः ।" विषयावाचोक्तः कृचमेवा इत्यन्वयः ।" ( अदीति वेदाङ्क-१८ ) २ राशि । ( १७ १५१२ ) युरोपके ज्योतिष शास्त्रमें कृच नामक स्वतन्त्र राशि है । नाम सर्वो मेजर ( Ursa major ) रखते हैं । यह उत्तर राशियोंमें एक समझा जाता है । इस राशियमें सात तारा रहते हैं । विशेषता यह पड़ती—इसमें कितनी ही हितारा और नीहारिका लगती है । कृच-चक् । ३ पर्वत विशेष, एक पहाड़ । यह सात कुलाचलके मध्य पड़ता है । कृचच रीतो । इस पर्वतके मध्य गर्मदा नदी प्रवाहित है । "कृचचन" विरिच इत्यन्वयो वर्मदा विरन् । वर्मर्वाचार्थवर्तित्वं वा मान्यं कृचः ।" ( रामायण १११० ) इसी कृचशब्द पर्वतकी प्राचीन प्राच्य ऐतिहासिक टवेमिने 'ओरेटन' ( Ouxeton ) लिखा है । वर्तमान विश्व पर्वतका दक्षिण-पूर्वो में पर्वत 'कृच', 'कृचवान्' इत्यादि नामसे पुकारा जाता था । "मन्दराज्यमें कर्को रवौ पतिवर्तमान् ।" ( पुराण ११११ ) "कृचरन्" इति लिखा पतिवर्तमान् च ।" ( पुराण १११२ )

हृदयि मर्मदाके फूलपर पड़ूँच सुनिबावसी  
मगरीपर चधिकार किया और चरुचगन्ध पर्वतको जीत  
यह मिमोसि डेरा डाल दिया।

चरुचगन्धी और चरुचगन्धी देवी।

२ भङ्ग, मादु, रीह। ३ गोचक हृष, एक पेड़।

४ पुष्पगोय चरुचगन्धी राजाके पुत्र। ५ पोरव विट्ट-  
रयके पुत्र। ६ पुष्पगोय चरुच राजाके पुत्र। ७  
मिहके निकटस्थ एक पर्वत। (मि०) ८ क्षतवेधन,  
मारा हुआ।

चरुचगन्धा (सं० स्त्री०) चरुचस्यैव गन्धो यस्याः,  
युष्मी०। हृषदारक हृष, एक पेड़। दूसरा नाम  
कागलासी, चावैसी, हृषदारक, लुङ्ग, युगाचिगन्धा,  
लंगला, मङ्गाग्रामा, लाङ्गली, जीर्णवृक्षल, कोटरपुष्पी,  
चरुचगन्धा, कागलासी, चन्नी, लुङ्गा, लंगली, लुङ्गक,  
ग्रामा, कागलान्धिका, दीर्घवाङ्गिका, हवा, और  
चलासी (Argyria speciosa, Swell) है।

यैद्यक मनुष्य यह रसायन, यायुनागक, बलकर  
नया पिच्छिल रहता और शीघ्र, कामवात, कास, श्वास  
एवं प्थरोगपर चरुच है। बीजादि चरुच करना  
चाहिये। माता दो माया है। यह हृष भारतवर्षके  
पश्चिमाञ्चलमें बहुत होता है। २ चरुचजाडुलहृष।  
३ चौरविदारी हृष।

चरुचगन्धिका (सं० स्त्री०) चरुचगन्धा रस्यै कन्दोऽप्यु-  
पत इत्येष। हृषामृमिहुकाष्ट, कामा विलारी  
कन्द। संस्कृत पर्वत चौरविदारी, मङ्गाग्रामा और  
चौरिका है।

चरुचगिरि (सं० पु०) चरुचयाय गिरिचेति, कर्मधा०।  
ममपुलाचलके मध्यका एक पर्वत। यह पहाड़  
गण्डोयाना देगमें पड़ता और चैतक पर्वतमें निकलता  
है। चरुचगिरि।

चरुचगोय (सं० पु०) एक विभाग।

चरुचगन्ध (सं० स्त्री०) चरुचायां चक्रम्, ६-तत्।  
रागिचक्र।

चरुचचक्र (सं० पु०) कुष्ठरोग विमोच, किष्कि चक्रिका  
कोट। इसमें चैतना बहुत बढ़ती है। चरुच-चरुच चक्र  
और मध्यमें पीत मिश्रित हृष चरुच रहता है। चरुच

चरुचसे यह चरुच मगता है। चरुचति चरुचकी  
जिह्वा-श्रेणी होती है।

चरुचगन्ध (सं० पु०) चरुचायां गन्धः, ६-तत्। १ नक्ष-  
त्रेय चरुच, चांद। २ लाङ्गवान्। यह हृषपत्री  
लाङ्गवर्णकी पिता ये।

चरुचनेमि (सं० पु०) विष्णु।

चरुचपति, चरुचगन्ध देवी।

चरुचर (सं० पु०) चरुच-कर्मन्। तद्विभाग चरुचन्।  
चरुचर। चरुचिक् चरुचगन्ध।

चरुचराज (सं० पु०) चरुचायां राजा, चरुच-राजन्-  
टम्। चरुचः चरुचगन्ध। चरुचराज। १ चरुच, चांद।  
२ लाङ्गवान्। (चरुच १११८)

चरुचला (सं० स्त्री०) चरुच-मन्त्र गुचाभायः। गुचाभा-  
स्थित माटी।

चरुचलन्त (सं० स्त्री०) चरुचासुरकी राजधानी।

“चरुचायां चरुच निहन्तासुरराजम्” (चरुच ११८)

चरुचवान् (सं० पु०) चरुच मनुष्य मन्त्र चः। चरुचगिरि देवी।

चरुचविभाग (सं० स्त्री०) चरुचकी गन्धा।

चरुचविल (सं० पु०) चरुचो मर्मन्त्र पर्वतका एक  
हृषन् गन्धर। चरुचमातादि वागर बीताको टूटते  
टूटते चरुच सादर वष भूमि है। (गन्धर्व) चरुच कल  
चिह्नकोपमें पादमन्त्र पर्वतके निकट इसके रहनेका  
चरुचमन्त्र मगता है।

चरुचचरीहर (सं० स्त्री०) चरुचो और चरुचके प्रभु।

चरुचक (सं० स्त्री०) चरुच हृष, चरुच हृषार्थ। भङ्गकके  
समान चिह्न लम्बी लामवर रीह-मैसा चरुच चरुच है।

चरुचग (सं० पु०) चरुचायां गन्धः, ६-तत्। चरुच, चांद।

चरुचगि (सं० स्त्री०) चरुचविमोचमात्रित चरुच, मध्य-  
पदकोपी। चरुचविमोचके चरुचमन्त्र किया जानेवाला  
एक यज्ञ।

चरुचोद (सं० पु०) पर्वत विमोच, एक पहाड़।

चरुचमोच (सं० स्त्री०) चरुच द्वारा चरुचमन्त्र किया  
हुआ।

चरुचमन्त्रिता (सं० स्त्री०) चरुचा मन्त्रिता, ६-तत्।

चरुचमन्त्र।

चरुचमन्त्र (सं० स्त्री०) चरुचा मन्त्र, ६-तत्। चरुचमन्त्रेण।

ऋक्साम (सं० स्त्री०) ऋक् ऋक्साम च द्वयोः समाहारः, समाहारश्च । ऋक् चौर सामका मिलन ।

ऋक्सामश्रुत (सं० पुं०) विष्णु ।

ऋगयन (सं० स्त्री०) ऋक्सामयनं यत्नं, यज्ञश्रीः ।

ऋक्-पारायण ग्रन्थ विशेषः ।

ऋगयनादि (सं० पुं०) पाणिनि कथित एक ग्रन्थः ।

इसके अन्तर्गत व्याख्यान, ऋन्दोगान, ऋन्दोभाषा, ऋन्दो-विचिन्ति, न्याय, मुनरुह, निरुह, व्याकरण, निगम, वास्तु-विद्या, अन्नविद्या, अन्नविद्या, विद्या, उत्पात, उत्पाद, उद्याय, सन्वत्सुर, सुहृत्, उपनिषद्, निमित्त, शिक्षा चौर भिन्ना है ।

ऋगायान (सं० स्त्री०) ऋक् भाषानं घनम्, इ-तत् । वेद पठति समय अर्धं ऋक् प्रश्नति पूर्व परके भाषा सम्मिलन ।

ऋग्गाया (सं० स्त्री०) ऋक्सामि गाय, उप० । लौकिक गीतिवेद ।

ऋग्भाक् (सं० द्वि०) ऋक् का भाग लेनेवाला ।

ऋग्मत् (सं० द्वि०) ऋक् अस्त्वय, ऋक्-मत्पु । १ स्थावक, तारोफ करनेवाला । २ पूज्य, परमेश्वर के काबिल ।

ऋग्मन् (सं० द्वि०) ऋक् अस्त्वयि, ऋक्-मिनि । स्त्रीता । तारोफ करनेवाला ।

‘निर्दिष्टमिनि यः’ (चू० १०५/१४६)

‘अग्निः स्त्रीतारः’ (साय०)

ऋग्गुःसामवेदी (सं० द्वि०) ऋक्, यजुः चौर सामवेद जाननेवाला ।

ऋग्विधान (सं० स्त्री०) ऋग्वेदोक्त मन्त्र द्वारा व्रतविशेषका विधान । इसमें यज्ञो वर्णन चलता, ऋग्वेदका कौन मन्त्र जपनेसे क्या फल मिलता है । फिर ऋग्विधान पढ़नेसे जानने, जगत्के पादिग्रन्थ चौर महाधर्मग्रन्थ ऋग् वेदयात्रि मन्त्रादि प्राचीन ऋषि किस प्रकार सन्धान एवं पुस्तकप्रद मानते थे ।

अग्निपुराणमें इततरङ्ग ऋग्विधान लिखा है—

‘जसके मध्य अथवा होमके समय प्राणायामपूर्वक गायत्री जपनेसे अमोघसिद्धि होती है । जो निम्ना-मोकी जो दमस्तस्त्र गायत्री जप करता, उसका सफल

पाप छूट पड़ता है । इतिहास खा लक्ष गायत्री मन्त्र जपनेवाला मोक्ष प्राप्तका अधिकारी है ।

चौद्वार परब्रह्म है । प्रपन्नके जपनेसे सर्वपाप छूटता है । जो नाभिमात्र जसमें ठहर शतवार चौद्वार जपता, उसको देखते ही पाप कपता है ।

तीन मात्रा, तीन वेद, संत महाव्याप्ति चौर सप्त-लोक उत्सेखपूर्वक होम करनेसे सकल जपका पाप छूटता है । जसके मध्य महाव्याप्ति चौर परमा गायत्री जपनेको अथमर्षण कहते हैं । जो सङ्गदेवत “अग्निमेव उपासितम्” (११/११) सूक्त यथाविहित एक वत्सर जपता, उसे सकल-इष्ट मिलता है । निधाकामी ‘गदस्वप्न’, स्तुत्य निवारयिष्णु, ‘यमःस्वप्न’, यत्न, एवं विघ्न दमनाभिलाषी ‘तिर्यग्वत्’, पारोक्ष्यकामी अथवा रोगी ‘मल्लज्योत्स्नम्’, आसनकी सिद्धिका इच्छुक मध्याह्नकालकी ‘अथमन्त्रम्’, अर्ध ऋक् तथा ‘उत्तरवायु रचाय’ जैनः पूर्वं ऋक्, सूर्यास्त होनेपर गुरुसे परि-त्रायिष्णु, ‘नवरथ’, मोक्षकामी ‘आत्मविद्योः च’, वस्त्र-कामी ‘न’ कोम’ चौर पुण्यकामी मध्यवेनामं ‘आयः कीर्त्तय’ इत्यादि कामनाशुभायौ ऋक् यथाविहित जपनेसे सर्वप्रकार सिद्धि लाभ करता है । प्रसवके समय ‘अग्निम्’ सूक्त जपनेपर गर्भवेदना पशुभाव न कर गर्भिणी सुखमें प्रसव कर सकती है । अर्धपञ्चाल, जपनकाल एवं छेदनकालपर सूक्त द्वारा इन्द्रादि देवगणकी उपासना करनेसे सकल कर्म पमोघ पड़ता चौर छात्रिके कार्योंमें उत्कृष्ट बढ़ता है । ‘विद्योः स्तुतिः’ सूक्त जपनेसे मृत्युर्गम स्त्रीका गर्भ भग्यायस निश्चल होता है । (अग्नि० १०५/१०)

ऋग्गुः (सं० पुं०) ऋग्वेदः । प्रथम वेद । यह संहिता, ब्राह्मण, पाररूप चौर सूत्रवेदसे चार प्रकारका है ।

ऋक्मन्त्रिज्ञाकी माना गायत्री है । महापुराणादिमें उल्लेख किया—छप्पदेवायन वेदव्यासने वेद मान-कर ऐतकी ऋग्वेद दिया था ।

“अग्निः अग्निं विदं विदं दत्तम्”

इन्द्रजनेपे द्वारा दत्तम् अग्निं दत्तम् ।

चतुर्दश विदेवत दत्तम् विदं दत्तम् ।

रोगविघ्नो वती मृत्यु विदेवत दत्तम् ।





२५३०३४ तथा वातस्त्रिष्वकी पदसंख्या १८८६ एवं  
वर्गसंख्या १०६।—

“ऋग्वेदस्य गुणाः सुरवर्धितिर्यङ्मात्राः।”

कोई कोई ऋग्वेदकी ग्राखा २१ बताता है,  
किन्तु वास्तविक यह नहीं। प्रधानतः पाँच ही ग्राखा  
हैं। जो लोग २१ बताते, वह प्रमाणा भी मिलाते हैं।  
ऋक्संहिताका पारायण दो प्रकार होता है—  
प्रकृतिरूप और विकृतिरूप। फिर प्रकृति रूप भी  
रुढ़ और योगभेदसे दो प्रकारका पड़ता है। जैसे  
‘अग्निमीषे पुरोहितम्’ इत्यादि रुढ़ और ‘अग्निं देवे पुरोहितम्’  
इत्यादि योग है।

विकृतिरूप पाठ प्रकारका है। यथा—

“जटा नाभा शिखा शिखा ध्वजो दधो रवी ध्वजः।

पटो विजतयः शोभाः कमपूर्या मरुतिभिः॥”

जटा, नाभा, शिखा, शिखा, ध्वज, दधु, रय और  
ध्वज पाठ प्रकारका विकृतिक्रम महर्षिगणने कहा है।

जटा दधति दधेव दधे देवो।

ऋक्संहितामें जिस-जिस देवताका नाम लिया  
अथवा जिस जिस देवता और ऋषिका देवता रूपसे  
स्ताव किया, उसका नाम नीचे दिया है—

अश्वकितवः। अथा। अन्नायी। अग्निः, (पादुगोय,  
जातवेदा, निमर्य, रघोहा, वैश्वानर और शोचिक)।  
अद्विरस अत्रि। अदिति। अधिवक्त्र चर्म वा हरियन्द्।  
अधीता। अन्तरिच। अथ। अपानपात्। अपरा।  
अक्षा अहि। अग्निगाय। अरण्यागो। अर्यमा।  
अरक्षीनाय। अर्या। अग्निहव्य। असमाति। अदिशुभ।  
अशुनीति। अश्वरात्र। आत्मा। आदित्यगव्य। आप,  
(अपानपात्, गाव, सोम)। आप। आप्रिय। आसी।  
आयी। आमन्। इम। इन्द्र। इन्द्र (कपीछल-  
रूपी, वैकुण्ठ)। इन्द्रायी। इन्द्राय। इसा। इशुगव्य।  
अपुषि। इष्या। उपमन्त्रवा। मित्रातिथि पुत्र।  
उपाध्याय। उर्वशी। उत्सुख। उग्रता। उपा (वा-  
सुवर्ममा)। अथ। अतु। अतिक्। अशुगव्य।  
ओमभि। क। कवच। कश्यपेय। काल सम्पत्सुखाया।  
कृत्स्। कुरङ्। कुरङ्गव्य माधदक्षु। हवि। केयी।  
कोरपाव। क्षेत्रपति। गङ्गा। गर्वमार्पायी। गो।

गङ्गा। गायव्य। चन्द्रमाः। चित्र। ज्ञान। ज्ञा।  
तनूपात्। तार्क्ष्य। तिरिन्द्रि। पारमव्य। तमदक्षु।  
त्वटा। दक्षिणा। दक्षिणा। दम्योत। दासम। दिक्।  
दुःखप्रनागन। दुन्दुभि। द्यावा पृथिवी। द्यावाभूमि।  
द्यौः। द्रविणोद-द्रुघव्य। दारदेवो। धाता। नक्ता।  
नदीगव्य। नरायंस। निर्वर्ति। पथि। पण्याक्षति।  
परमात्मा। पर्जन्य। पर्वत। पवमान। पिङ्गव्य।  
पितृमेघः। पुरीषा। पुरुमौद् घेददद्या। पुहव्य।  
पुकरव्यः ऐल। पूषा। पृथिवी। पुत्रि। प्रजापति।  
प्रतोद। प्रस्तुख। पृष्टिः। हपुत्तवा। हव्यति।  
नद्या। नद्यगव्यति। भग। भारती। भावपव्य।  
भावहस। भूमि। मण्डूक। मन्त्रु। महद्गव्य। मित्र।  
मृत्यु। मृत्युविमोचनी। यक्ष्मनायन। ययानिपात।  
यम। यमी। यूप। रति। रय। रयगोपा। रग्नि।  
राका। रात्रि। रुद्र। रादधी। रामया। निहोत्र-  
देवता। वनस्पति। वरुण। वसिष्ठ। वसिष्ठपुत्रगव्य।  
वसुक्त। वाक्। वापाभूषा। यामदेव। वायु।  
वाक्षीपति। विम्वक्ष्मा। विम्वामिद। विम्वःपुह।  
विम्वदेव। विष्णु। हवाकपि। वेद्य। वृषिनी। मधो  
पोतोमो। शाकधूम। शुक्। शुन। शुनाधि। उरेन।  
अश। शानु। सदवम्पति। समित्। सरण्यु। सरमा।  
सरस्वती। साध्यगव्य। साहदेयं सामन्त। मिमोवासी।  
मित्रु। सुवन्तु। सूर्य। सूर्यो। सोम (पवमान वा  
पूषा)। स्वाहाकृति। हरि। हरियन्द् प्रजापति।  
हविर्धान। हप्ता। होत्रा।

ऋक्संहितामें कहीं ३३ देवता और कहीं  
३३१८ देवता उल्लेख है।

ऋक्संहिताके ऋषिगणका नाम—पंडेहृद्  
वामदेव्य, पञ्चटा मावा, पगव्य, पगव्यका  
कता, अग्नि, अग्निवाद्युय। अग्निनायक, अग्नि-  
पावक, अग्निमविहसदके पुत्र, अग्निरेवानर,  
अग्निगोषीक, अग्निपुत्र सौर, अग्निमर्ष मधुच्छन्द,  
अङ्गु औरव, अत्रमोद् सोहाव, अत्रि मय, अत्रि मोम,  
अत्रि माव्य, अदिति, अदिति दाहायवी, अनामन्-  
पाहच्छेपि, अग्निम वातायन, अग्निगु व्याशर्मि,  
अपाका आतेयी, अमनिरय ऐन्द्र, अमिनया और,



तियि काण्व, यन्मनाग्न प्राजापत्य, यत्नत आत्रेय,  
यज्ञ प्राजापत्य, यम वैवस्वत, यमी, यमी वैवस्वतो,  
ययाति नाहुष, रघोहा द्राघ, राहुगण आङ्गिरम,  
रातहव्य आत्रेय, रात्रि भारद्वाजी, राम जामदग्न्य,  
रेणुं वैश्वामित्र, रेभ काश्यप, रोमगाः, नव ऐन्द्र,  
लुग धानाक, लोपामुद्रा, वत्स आत्रेय, वत्स काश्य,  
वत्सप्रि भालन्दन, वस्त्र वैखानस, वरु आङ्गिरम, वरुण,  
वसि आत्रेय, वस यज्ञ, वसिष्ठ मैत्रावरुणि, वसिष्ठ-  
मुत्तम, वसु भारद्वाज, वसुकर्ण वासुकि, वसुकिद वासुकि,  
वसुकि ऐन्द्र, वसुकि वासिष्ठ, वसुकपत्री, वसुमना  
रौहिदश, वसुश्रुत आत्रेय, वसुयव आत्रेय, वाग्  
आश्विनी, वातजुति वातरशन, वामदेव गौतम, विन्दु  
आङ्गिरस, विप्रजुति वातरशन, विप्रवन्तु गोपायन वा  
गोपायन, विभ्राट् सौर्य, विमद ऐन्द्र, विरूप आङ्गिरस,  
विवस्वान् आदित्य, विवस्वा काश्यप, विश्वक कार्ष्णि,  
विश्वकर्मा भीमन, विश्वमना दैवज्ञ, विश्ववारा आत्रेयी,  
विश्वसामा आत्रेयी, विश्वामित्र गादिन, विश्वावसु  
देवगन्धर्व, विष्णु प्राजापत्य, विहव्य आङ्गिरस, वीतहव्य  
आङ्गिरस, वृषजार, वृषगण वामिष्ठ, वृषाकपि ऐन्द्र,  
वृषास्व वातरशन, वृष भागव, वृषजाम (शत), व्यग्र  
आङ्गिरस, व्याघ्रपाद वामिष्ठ, ग्रंथु वाचस्पत्य, शकधृत्  
नार्मेध, शक्ति-वासिष्ठ, शङ्ख यामायन, शची पीलीभी,  
शतप्रभेदन वैरूप, शवर काचीवान्, शमकण काण्व,  
शश्वत्याङ्गिरस, शर्याति मानव, शर भारद्वाज,  
शिखण्डिनी, शिवि चीमोनर, शिरस्मिष्ठ भारद्वाज,  
शिशु आङ्गिरस, शुनःश्रेय आनिगर्ति, शुनहोत्र  
भारद्वाज, श्वावाग्र आत्रेय, श्लेग आत्रेय, श्रदा  
कामायणे, श्रुतकक्ष आङ्गिरस, श्रुतवन्तु गोपायन वा  
गोपायन, श्रुतिविद् आत्रेय, श्रुष्टि काण्व, श्वगन  
आङ्गिरस, संवरण प्राजापत्य, सव्यत आङ्गिरम, सद्गुह  
यामायन, सत्यधृति वाङ्मि, सत्ययवा आत्रेय, सदाष्टग  
आत्रेय, सप्रि वैरूप, सध्वंस काण्व, समधि, समशु  
आङ्गिरम, समधि आत्रेय, सति वाजश्वर, समय  
भारद्वाज, सरमा देवगनी, सव हरि ऐन्द्र, सव्य आङ्गि-  
रस, सस आत्रेय, सहदेव-वार्पागिर, साधन भीमन,  
सारिश्वा माङ्ग, सार्यराशो, सिकता निवापरी,

सिन्धुचित् प्रेयमेघ, सिन्धुहोप चाम्परीय, सुकथ  
आङ्गिरस, सुकोर्ति काचीवान्, सुतभर आत्रेय,  
सुदाम् पेजवन, सुदोति आङ्गिरस, सुपर्ण कवर,  
सुपर्ण तार्प्यपुत्र, सुवन्तु गोपायन, सुमित्र कीर्तुष, सुमित्र  
वाध्याय, सुराधा वार्पागिर, सुवेदा शैरीयि, सुहस्त  
घोषिय, सुहोत्र भारद्वाज, सुतु पार्मव, सुयौ सावित्री,  
सोमरि काण्व, सोम, सोमाहुति भागव, स्तम्भमित्र  
गाङ्ग, सुमरस्मि भागव, स्वप्तरात्रेय, हरिमन्त्र  
आङ्गिरस, हर्यत प्रागाय, हविर्धान आङ्गिरस, हिरण्य-  
गर्भ प्राजापत्य, हिरण्यस्तूप आङ्गिरम।

ऋक्संहिता पदद्वये आर्यजातिका आदिम इति-  
हास, प्राचीन आचार-व्यवहार, धर्म मत एवं विज्ञान  
प्रभृति सकल पदव्या ज्ञातव्य विषय समस्त पङ्क्ताः ।

आर्य इत्येवम् ।

निर्णय करनेका कोई उपाय नहीं, ऋक्संहिता  
किस समय रंग्हीत हुई थी। मन्थवतः जिस समय  
आर्य सभ्यता चारों ओर फैलने और सुदृश्य आर्य-  
मण्डली पश्चिमीय प्रचार करनेके लिये नाना देश  
घुमने लगी, उसी प्राचीन काल केपरेके श्रेष्ठभागपर  
ऋग्वेदपायनके हाथ प्रथम वेदकी संहिताके संपादकी  
नीव पड़ी। मोक्षमूलर प्रभृति युरोपीय पण्डितोंने  
कयनानुसार ऋग्वेदका कन्दर्प भाग ईनाकी उत्-  
पत्तिके १००० वर्षपरसे पूर्व बना था। उन्होंने भी कुछ  
समयमें ऋक्संहिताकी समग्र सभ्य-समृद्धि आदि  
पद्वि माना है। वेद-सभ्यते विस्तारित विवरण देखो।

“One thing is certain : there is nothing  
more ancient and primitive, not only in  
India, but in the whole Aryan world, than  
the hymns of the Rig-veda.” (Max Müller's  
Origin and growth of Religion, p. 152)

किसी समय ऋग्वेदकी प्रतिगाथाके ब्राह्मण, पार-  
श्वक, सूत्रादि प्रचलित थे। किन्तु अब वेदम ऐत-  
रेय ब्राह्मण, शाङ्खायन ब्राह्मण एवं श्रौतपूर्व, आगमना-  
यन श्रौत और ब्राह्मण ही मिलते हैं।

ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, श्रीसूक्त, महासूक्त इत्यादि इत्यादि ।  
ऋषा (सं० की०) ऋ-यन्, गुप्ताभासः। हिंसा,  
नारने-काटनेकी लवीयत।

कवावान् (ये० वि०) कवा कवस्, कवा-मनुष्य, मय्य वः। हिमक, सुं पार। "कवीर्यु जगत्तम्" (क० १११२२) "कवा-मनु वि० वः" (क० १११२२)

कव (धातु०) तुदा० पर० सक० भेट्। "कव कवन्" (क० १११२२) मुति करना, तारीफ, वताना।

कव (सं० पु०) एक राजा। यह सुनीकके पुत्र थे।

कवम (सं० वि०) कव-कमुन्। स्तोता, तारीफ, करनेवाला।

कवमि (सं० पद्य०) कव-कमिन्। मुति करनेके दिने, तारीफ वतानेके वाद्ये।

कवमा, कव० शी०।

कवपीक (सं० पु०) कव-ईकम्। १ सविताविशेष। यह दिवके पुत्र थे। २ समदमिके पिता कव-मुनि। ३ देवविशेष, एक मुक्त।

कवपीप (सं० ती०) १ भ्राष्ट, तथा। (पु०) २ नरक विशेष।

कवपीपम (सं० पु०) कवा स्तुत्या समः, निपातनात् ईत्वं प्रत्ययः। १ इन्द्र। (वि०) २ कवमिषयेके समान गुणविशिष्ट।

कवपीय (सं० पु०) पुरुवंशीय राजा रौद्राग्रेके पुत्र।

कवप् (धातु०) तुदा० पर० सक० चकच भेट्। १ गमन करना, चमना। २ सुगंध होना, फूँफूँता बनना। ३ कठिन होना, मुद्रिकल पड़ना। कीर्दे कीर्दे मोहित होनेके ल्यामने विनीत पड़नेका अर्थ लगाते हैं।

कवप् (वि०) कव शी०।

कवप्ता (सं० की०) चमिषाप, पाद्विष।

कवप्तरा (सं० की०) कवप्ति पात्रोति परपुरुषम्, कवप्तरा वि० टाप्। कव० १११। १ शिष्टा, रण्डी। २ धर्मन, भेड़ी।

कवन् (धातु०) भादि० पाक० सक० चकच भेट्। १ स्थिर रहना, ठहरना। २ सीमा। ३ बलवान् होना। ४ क्षमाता। भादि० पाक० सक० भेट्। "कवन् कवन्" (क० १११२२) १ भूजना।

कवप्य (सं० वि०) कवप् पात्रोति गच्छति, पाप्-यत् प्रयेदरादित्यात् साधुः। मरुतगामी, सीधा चलनेवाला।

कवपिषा (सं० पु०) कवपिषो एक राजा।

कवपीक (सं० वि०) कव-ईकम्-कित्। क० १११। १ रक्षित, रंगा हुआ। २ मिश्रित, मिश्रा हुआ। ३ उपपत्त, विगडा हुआ। (पु०) ४ इन्द्र। ५ धूम, धूँवाँ। ६ साधन, तदवीर। ७ परमविशेष, एक पहाड़।

कवपीति (सं० पु०) कवप् गच्छति, कवप्-इ-विष्, प्रयेदरादित्यात् साधुः। १ कवपिगामी साध, सीधा जानेवाला तीर। (वि०) २ मन्वन्ति, जसता हुआ।

कवपीप (सं० पु०) कवपि रणोष्मात्, चर्म-इ-पन् कवादेयम्। क० १११। १ भ्राष्ट, तथा। २ नरकविशेष। ३ नीरस सोममताका। चूर्ण। ४ धूम। ५ सोममता-निःसृत रस।

कवपीयम् (सं० वि०) १ भवतने या एकड़नेवाला। २ नीरस सोममताके चर्चसे बना हुआ।

कवप् (सं० वि०) कवपि वि० साधुः। कवपि वि० कवपि वि० क० १११। १ कवक, सीधा। मन्वन्ति पर्याय चजिष्ठा, मगुच, पाण्डल और भरम है। २ कवपि, सुवाक्त्रि। ३ इन्द्र, चूर्णवृत्त। (पु०) ४ वसु-देवके एक पुत्र। "कवप् कवपि मः कवपि कवपि" (धातु १११२२)

कवपुकाय (सं० वि०) कवप् कायो यस्, कवपि०। १ चकचदेह, सीधे निगमना। (पु०) २ कवपिमुनि।

कवपुक्रत (ये० वि०) कवित कार्य करनेवाला, ओ ईमान्दारीसे चमता हो। (क० १११)

कवपुग (सं० वि०) कवप् यथा क्तात् तथा गच्छति, कवप्-गम-क। १ मरुत-व्यवहार, सीधा करताव करनेवाला। २ मरुतगामी, सीधा चलनेवाला। (पु०) ३ साध, तीर।

कवपुगाय (सं० वि०) कवप् गान करनेवाला, जो ठीक गाता हो।

कवपुता (सं० की०) कवपीभावः। १ मरुतता, सीधा-पन। चकचता, चकचकी। २ चकचपय, ईमान्दारी।

कवपुदाम (सं० पु०) कवदेवके एक पुत्र।

कवपुधा (सं० पद्य०) कवक भाषण, सीधे, ठीक तीरपर।





ऋतुवैषम्य ( सं० स्त्री० ) ऋतुचर्याका विपरीताचरण, मौसमके विस्फाफ काम ।

ऋतुगः, ऋतुग ईको ।

ऋतुशूल ( सं० स्त्री० ) ऋतुकाल पर रजोरोधसे उत्पन्न शूलरोग, महीने पर हेज्ज बन्द होनेसे पैदा हुआ दर्द ।  
पुष्पके वातादिसे मारे जाने पर यह शूल उठता है ।  
शोणित रिच्छल, घम एवं सिन्ध रहता और बहुत गिरता है । योनि और नाभिमें परम दारुण वेदना होने लगती है । ( रसरत्नाकर )

ऋतुपट्क ( सं० स्त्री० ) हिम-गिगिर-वमन-शीत-शरत्, छहो मौसम ।

ऋतुषा, ऋतुषा ईको ।

ऋतुसन्धि ( सं० पु० ) ऋतोः सन्धिः, १-तत् । ऋतु-द्वयका मिलनकाल, दो मौसमोंके मिलनेका बन्ध ।  
वर्तमान ऋतुके सात अन्तिम और आगामी ऋतुके सात प्राथमिक दिवस ऋतुसन्धि कहलाते हैं ।

“ऋतोऽन्त्यादि समाप्ततुर्वन्तिरिति ऋतुः ।” ( श्रमन्त )

ऋतुसमय, ऋतुकाल ईको ।

ऋतुसम्पिता ( सं० स्त्री० ) सुनिश्चिन्तिका, बढ़िया पिष्ट खजूर ।

ऋतुसागर ( सं० स्त्री० ) ऋतुके ऋतुकाल भोजनादि, मौसमके सुवाफिक खाना बगैर रह ।

ऋतुसिन्धु ( सं० स्त्री० ) ऋतुपु सिन्धुः । ऋतुके भेदानुसार व्यवहार करने योग्य, जो मौसमके सुवाफिक काममें लाने लायक हो । सुद्धतके मतानुसार वर्षाकालकी प्राचीका शरीर क्लिप्त एवं पान्न मन्द पड़ जाने और वातादि मकल दोष उठ खड़े होनेसे क्लेटविशेषक तथा दोष-संचारक कषाय, तिक्त एवं कटुविगष्ट, घन, अधिक सिन्धु वा अधिक रक्त न होनेवाला पदार्थ और उष्ण एवं अग्नि-उद्दीपक भोज्य आहार करना चाहिये । ऐसे समय हृदिका ही रुल पैना सर्वोत्कृष्ट रहता, नतुवा उष्णकल मधु मित्राकर सेवा पड़ता है । भूमध्यस्थ वायु बचानेके लिये खाट या तपन पर सेटना उचित है ।  
अतिरिक्त जलपान, हिमसेवा, मैथुन, चातप, व्यायाम, दिवानिद्रा और रजोनिर्जर मौसम छोड़ देते हैं । शरत्-कालकी कषाय, मधुर एवं तिक्त, दुग्ध, मिट्टाय, मधु,

मयप्रकार तण्डुलादि, जाह्नवमांस और नदी-साग-पुष्करिणी प्रभृतिका जल हितकारी है । एतद्विषयितप्रगमनकारक मकल हो द्रव्य व्यवहार करना चाहिये । तोषणोर्ध्व-उष्ण-उष्ण-आर द्रव्य, दिवानिद्रा, रौद्र, रात्रिजागरण और मैथुनसे जागि होती है ।  
हेमन्त एवं गिगिरकालकी भवण, चार-तिक्त-पान, तथा कटु रस, तैज, घृत, उष्ण पच, तीक्ष्णपान, माय, आक, टण्डि, मिट्टाय, नूतन तण्डुल, मकल-प्रकारमांस, मद्य और मैथुन प्रभृतिके व्यवहारसे कोई अनिष्ट नहीं पाता । नहानेके लिये उष्ण जल हो कहा है ।

ऋतुस्त्रोम ( सं० पु० ) एक दिवस माध्य यज्ञविधि ।

ऋतुस्थना ( सं० स्त्री० ) असरोविधि, एक परो ।

ऋतुस्था ( सं० स्त्री० ) उचित ऋतुपर नियत, जो मुना-मिव मौसम पर बंधा हो ।

ऋतुघाता ( सं० स्त्री० ) ऋतो ऋतुकाल-विहित-चतुर्थदिवसे खाता, ७-तत् । ऋतुके चतुर्थ दिवस शुद्धि के लिये खान करनेवाली स्त्री ।

“पूर्व पक्षे ऋतुघाता शास्त्रं नरनृजम् ।” ( तुल्य )

ऋतुघाता स्त्री पक्षमें जैसा पुरुष टैपती, वैसा जो पुत्र उत्पन्न करती है ।

ऋतुसान ( सं० स्त्री० ) ऋतो ऋतुकालविहितदिने खानम्, ७-तत् । ऋतुकालीन चतुर्थ दिवसका खान, महीनेके सात चौथे दिनका नहान ।

ऋतुशरीतकी ( सं० स्त्री० ) ऋतुके मीदने द्रव्यविशेषके साथ मिश्रित करीतकी, मौसमी हर । भावप्रकाशमें लिखा—वर्षामें सैन्धव, शरत्में शर्करा, हेमन्तमें श्योचूर्ण, गिगिरमें जोरकचूर्ण, वमन्तमें मधु और शीतकालमें गुड़के साथ करीतकी खानसे उत्कृष्ट रसायन होता है ।

ऋते ( सं० चण्ड० ) १ पृथक्-पृथक्, वमन-वमन ।

२ विना, बगैर रह ।

“ऋतेऽपि नोऽप्यनं दृष्टव्यम् ।” ( १३४११ )

ऋतेकर्म ( सं० चण्ड० ) १ त्यागकर, छोड़ के । २ विना, बगैर ।

ऋतेजा ( सं० स्त्री० ) ऋते जायते, ऋते-जन्म-विद् ।  
यज्ञके लिये उत्पन्न, जो व्यवस्थाके लिये मन्त्रा हो ।



कालेय (मं० ६०) । कपिलिभिः । यद् यद्दर्श  
पुरोहितं यः । ३ यद् यद्दर्श । (अथर्व)

शशोष्ठि ( जं० लि० ) मध्यभाष्य, राष्ट्रगोई ।

परमोत्तम (मं० श्लो०) परम-वद-वदम् । सत्यवाक्य, सत्य  
वात ।

साधना ( मं० पु० ) अनुशासकी ममात्रि, मरीनेता  
परमैर ।

जातिः ( सं० पु० ) जगो यजते, जगत्-यज्-दित्.  
निपातनात् साधः । १ परोदित, येट्ङे मसोमि यजते

कार्यशास्त्र कागर्भधाना । भण्डित पर्याय दाजक, भरत,  
कद, वागयत, तत्तुर्दी, यत्तुयक, मरुत, मदाध और

ਦੇਖਦਾ ਹੈ। ਜਦ ਸ਼ਹਿਰੀਜ਼ੁ ਪੁਰਾਣਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਤਾਂ ਹੀਮਾ,  
ਬਹਾਨਾ, ਦੁਖਦਾਈ ਖੋਲ੍ਹਦਾ ਹੈ। ਕਿਸ ਕਰਕੇ ਮਨੋਰੰਜ

यही पाठ और कहा सोमहनक परलिक् रहते है ।  
गया—सादासाक्षी सोमलोका संगतकण पति

प्रप्याता, पोता, प्रतिहर्ता, चक्रवाक, मिटा, चम्पीध,  
मयमय, मायमय और त्रयेता । ३ पाशोऽस्य मायकता

धर्ममहायपिमेय । "नतिम्, इतिवचः, कृष्णं हविष्यायममसा वने,"  
( साहित्यः २०३१ )

भट्टसिंह ( वै० सि० ) पट्ट-पद्म । पद्मिनी । वा ११११११ ।

काशोत्पद्य, मोनममं पैदा हुआ। ३ ब्राह्मकाशका

४ निपदिन, पावन्द : ( ली० ) ५ वस्तुनाम, धोतके  
संज्ञिकता नष्ट ।

अस्तिपाठः ( गै. ति. ) अस्तिपमप्राप्तोति, अस्तिप-  
मप्राप्तः प्राप्तः सः सौम्यः । \* अस्तिपमप्राप्तः सः सौम्यः ।

शङ्कका पैदा करगें नाहीं हो । २ व्याख्यानद्वय, १५००० ।

शरणा ( ये० शि० ) शरणागत धामः तत्र भवः वा, शरणा-

भारतम् ( १०५० ) मद्रास राज्य, कन्नड साहित्यम्

मध्य भोजः । १ मीम । ( ति० ) २ मृदु-चदरविमिष्टः ।  
प्रत्यायमः पितृणां । भया ।

सायना (धे० पु०) १ अर्धनपाती । २ ममनपाती ।

१. दूरवासी । २. मममेधी, जोहू फोहमेवाला । ३. मममेधी । ४. दूधमेटी । (गृध्र ८१)

सद्वृत्तः, अथ (५०)

જાહે ( મં. સ્તો. ) જરૂર-જ. ૧ મંડા થામ્ય, જો વગાજ-  
મૂળીએ વગાજ કર દિયા ગયા જા. ૨ વિદ્યામ્ય.

कोश । ३ छह, युद्धम् । ४ समृद्ध, शोभातमम् ।  
५ सम्यक्, युष्म ।

प्राडि (सं. लो.) प्राड-शिल्प । १ मुद्रि, वृद्धि ।  
२ सम्पत्ति, दोनत । ३ मिद्रि, प्रशामात । ४ दार्यती ।

१ मन्थी । २ देवताविमेष । ३ पेश्यतीति सद्वर्त्मने  
यत्तार्गत्योपधि विमेष । ४११ स्त्रीत प्रायः पदविभक्ति

करते हैं। यह नताजाल, मरभूत और मोत  
नोमावित होती है। कृषि क्षेत्रों में गुणवत्ति समान

नगती धीर वामावर्तम फलतां हि । (वाग्भियः)  
गुणमै यद् नृपतिं तस्य हि । अहि मया विज्ञेयम् ।

गुजरात, मध्य प्रदेश, गुजरात एवं पश्चिम बंगाल के अलावा अन्य राज्यों में भी  
तथा राजस्थान के हर जिले में है। (अ. १५५५५५) ए. १५५५५५

यावन्मौ. मोरलसुगुडी । ८ कुवैरपल्ली ।  
प्राविहाम ( सं. वि. ) मम्मल्लि या चम्पदपहा चमि-

मार्गो, श्री अर्पणी मदतो वाहता हो ।  
मृदुभा (मं० श्री०) : मर्मगथा, नागदेवता ।

२. मन्त्रराष्ट्रा, सप्तपूजा गिनोप ।  
कृद्भिमत (भा० सि०) कृद्भिन्दासोति, कृद्भिन्दास ।

१ हविष्यम्, यदा दृष्टम् । २ मम्यतिगामो, दौलतगम् ।  
३ मिश्रितम्, करामातो ।

सहस्राक्षानुक्रिया (मं० क्षी०) यमोक्षित मलिका  
प्रदमेन, यमोक्षी लालकला काम ।

स्वर्णिनिधि (मं० ग्री०) सुवर्णमयिनि, टाटवाट, धूम-  
धाम, धामन-धैर।

वाधु (पाण्डु) दिया० आदि० घर० यज्ञ० भेद० अदिन  
इति । "दण्डिगो" (कविशाय) तदि पाणा, यदना ।

कायक (सं० चय०) १ गच्छ, गच्छ, विगच्छ । २ शिरीष, चयन-चयन । ३ गोष्ठ, जपद, पोरन । ४ निवृत्त ।

साम, कशेरु । ५ सायनपर, घटकर ।  
 कृष्ण (मं० वि०) स्वयं-नय । यथित श्रीनयना,

श्री प्रद रहा ही ।

अधवार (वे० वि०) १ धपना ऐश्वर्य वढानेवाला, जो धपना मान बढ़ा रहा हो। २ यथाभिन्नपित सम्पत्तिवाली, मनमानो दोनत रखनेवाला। (भाष्य)

अधुक् (सं० वि०) न्यून, कम, छोटा।

अधिया, अधनी (हिं०) अधी देगी।

अध् (धातु) तुटा० पर० सक० सेट्। “अध् म दाने दानं हि भानिदाओ।” (अधिकरणद्वय) १ दान करना, देना। २ प्रमंसा करना, तारोक् वताना। ३ चिंसा करना, मारना। ४ निन्दा करना, बुराई वताना। ५ युद्ध करना, लड़ना।

अध्वीस (सं० क्तो०) अध्-प्रच् प्रथोदरादित्वात् साधुः। १ पृथिवी, जमीन्। २ पृथिवीय अग्नि, जमीन् की पाग। ३ सन्धि, दराज।

अधु (सं० पु०) अदि देवमातरि अदितौ भवति, अध्-भू-डु। १ देवता। २ मेधावी, आत्मीन। ३ यज्ञ-देवता। ४ देवगण विगेष। यह वैश्वस्य मन्त्रस्तरके देवता हैं। ५ सुधन्वाके पुत्र। अध् संहितामें अधु शब्द इन्द्र, अग्नि और आदित्यके नामान्तर रूपसे व्यवहृत हुआ है। पुराणमतसे अधु ब्रह्माके पुत्र हैं। इन्होंने तपोवससे विषय ज्ञान लाभ किया था। पुनः स्वपुत्र निन्दाघ्नके शिष्य रहे। पौराणिक मतसे यह चार कुमाराँमें एक थे। आह्निरसगोत्रीय सुधन्वाके तीन पुत्र रहे। यह तीनों वेदमें ‘अध्वरः’ पर्यात् अधुगण कहे गये हैं। प्रत्येकका धृक् नाम १म अधुवा (अधु), २य विभु और ३य वाज था। भाष्यकार भाष्यपाचार्यके मतसे अधुगण सूर्यमण्डलमें रहते और सूर्यके रश्मिस्पर्शसे प्रमकते हैं। अध् संहिताकी देखते अधुगण अतिशय कार्य कुशल रहे। इन्होंने इन्द्रके रथ और अश्वगणकी गोमान्वित किया था। उससे सन्तुष्ट हो इन्द्रने इनके पितामाताको पुनर्दोषन दिया। मोघमूर्ख साहबने येदिक अधु और प्राचीन यूनानी देवता अफियस (Orpheus) में सादृश्य स्थापन करनेकी चेष्टा लगायी है। ४ एक मुनि। ५ एक निष्ठत जाति। ८ संघमोद।

अधुच (सं० पु०) अध्वः चिपन्ति वसन्ति यत्, अधु-चि-ड। १ सर्ग, विहित। २ वयः। ३ इन्द्र।

अधुवा (सं० पु०) अधुवः स्वर्गः यत् वा अस्त्यस्य, अधुव-इनि-‘वा’ आदेशः। अदिमल्लमुक्तान्। वा ४। १२। १ इन्द्र। २ मरुत्। ३ अधु। ४ तीन अधुवाँमें रहने अधु। अधुवी (सं० पु०) अधुवः स्वर्गः यत् वा अस्त्यस्य, अधुव-इनि। इन्द्र।

अधुवीन् (सं० वि०) अधुवीव पावर्ति, अधुविन्-क्षिप्-दोर्घः। अदुवाँसिहल द्विभक्तः अर्द्धति। वा ४। ४। १२। इन्द्रके न्याय आधारविगिट, जो इन्द्रकी तरह काम-काज करता हो।

अधुमत् (वे० वि०) १ चतुद, होमिगार। २ अधु-सम्बन्धीय। ३ अतिगण दोत, दूर दूर तक अमकने-वाला। (भाष्य)

अध्व (वे० वि०) अहभूर्-अध्व, उवाट(ादित्वात् साधुः। १ अहमे अन्वय. रान्ने निरुता हुआ। २ आत्मात्मक, समसावर। ३ व्याप्त, भरा या दूरतक फैला हुआ। ४ चतुद, होमिगार।

अध्वन् (वे० वि०) १ आत्मात्मक, समसावर। २ अतिशय प्रदीप्त, दूरदूर तक अमकनेवाला। (भाष्य) अध्वम्, अध्वन्-इति।

अध् (धातु) तुटा० पर० सक० सेट् सुवादि। वध करना, मार डालना।

अध्वक (सं० पु०) आदिष्व विगेष वजानेवाला, एक वालीवाला।

अध्वरी (सं० क्तो०) आदिष्व विगेष, एक बाजा। अध् (धातु) मोठ० पर० सक० सेट्। १ ममन करना, जाना। २ धृति करना, मोचना।

अध्व (सं० पु०) अध्व-अध्व। १ अगविगीर, एक द्विरन। यह बित्तन या ग्रेतमर्षे पदविनिष्ट होता है। मांस कषाय, मधुर, वातघ्न, पित्तघ्न, हृद्य, तीक्ष्ण और वस्तिघोषण है। (सङ्घ)

अध्वय (सं० क्तो०) अध्व-यः। १ अध्व-यः। २ अध्वयविगट देवादि, निध देमने विहित अग रहे। ३ चिंसा, गिहार।

अध्वयन्तु (सं० पु०) विमर्कन्तु, अनिदर। अध्वयद (सं० पु०) अध्व-यन्ति चिंसा ददानि, अध्व-या-च। क्षुप, गहा। इध्वे द्विरनको धातुकर प्रकृत है।



लगे। उनका सुन्दर देह मलमूत्रसे धावधुन हुआ था। किन्तु पाशुर्यका विषय यह ठहरा, कि विष्टाने दुर्गन्धका नाम भी न रखा। इसीप्रकार वह नाना स्थान घूमने लगे। कुछ काल घूम-फिर ऋषभदेवने देह छोड़ना चाहा था। उस समय वह कीडूण, वेष्टट, कुटक और दक्षिण कर्पाटक देगे जा पहुँचे। वहाँ कुटकाचल उपवनके निकट कितनी ही सुदृशिता उठा उन्होंने सुवनें डाली थीं। फिर ऋषभदेव उन्मत्तके श्वाय घूमने लगे। देवात् वनेमें दावानल भड़का था। उसी घनजमें वह जल गये।

भागवतमें ऋषभदेवका धर्ममत इसप्रकार कहा है।

मानव देह या मनुष्यको समुचित आचरण करना चाहिये। जो सकलका सुदृढ़, प्रगल्भ, क्रोधहीन एवं सदाचार रहता और सब पर समान दृष्टि रखता, वही महत् ठहरता है। जो धनपर स्त्रुष्टा तथा पुत्र कलदादि पर प्रीति नहीं रखता और ईश्वरपर निर्भर कर चलता, वही मनुष्योंमें बड़ा निकलता है। इन्द्रियको दृष्टि ही पाप है। कर्मस्वभाव मन ही शरीरके बन्धका कारण बन जाता है। स्त्री-पुरुष मिलनेसे परस्परके प्रति एक प्रकार प्रेमाकर्षण होता है। उसी आकर्षणसे महामोहका जन्म है। किन्तु उस आकर्षणके टलने और मनके निवृत्ति-पथपर चलनेसे संसारका पहङ्कार जाता तथा मानव परमपद पाता है।

भागवतमें लिखते, कि ऋषभदेव स्वयं भगवान् और केवल्यपति ठहरते हैं। योगचर्या उनका आचरण और आनन्द उनका स्वरूप है। (भाष्यन ३७, ५, १०)

जैनेोंने इन्हें ऋषभदेवको अपना तीर्थंकर या आदिनाथ माना है। जैनधर्मशास्त्रके मतानुसार—ऋषभदेवने सर्वार्थसिद्धि नामक विमानमें उत्तरायणादा नक्षत्रमें धनुःराशिपर चैत्रमासकी अष्टाष्टमी तिथिकी इच्छाकुटुम्भीय नामिके चौरस चौर मन्दवैकी गर्भमें विनीता गरीमें जन्म लिया था। यह जो मान चार दिन गर्भमें रहे। गरीरका परिमाण ५०० धनुः रहा। भङ्गकी कामिता उपवर्णमात्र थी। ऋषभदेव इतुरस पीकर श्रेयसिके निकट ४०० साधुवैकी माघ

चैत्राष्टमीको दीक्षित हुये थे। फिर एक वर्षतक नाना स्थान घूम पुरिमत्तल नामक स्थानपर यह पहुँचे। वहाँ फाल्गुन मासके अष्टपक्षकी तीन दिन उपवासके पीछे इन्होंने ज्ञानसाम किया था। इनके ८० गणपर, ८४००० साधु, १००००० साध्वी, ८००० पवधिशामी, १०००० केवली, १५०००० श्रावक, ५५४००० श्राविका, ४०५० चतुर्दशपूर्वी और १२०५० मनपर्याय थे। प्रथम गणधरका पुष्टरीक और प्रथम आर्याका नाम ब्राह्मी था। आशुका परिमाण ८४ नक्ष पूर्व कहते हैं। ऋषभदेवको अष्टपद नामक स्थानपर चैत्रमासको अष्टावयोदशीके दिन पद्मासनमें मोक्षपद मिला था।

(जैनविश्व ८ सर्व, आदिनाथपुत्राय पर्व जैनतत्त्वार्थ १८-१० ११)

ऋषभक ( सं० पु० ) वैद्यकीका अष्टवर्गान्तर्गत औषध-विशेष, एक जड़ी। चरम हैवी।

ऋषभकूट ( सं० पु० ) ईमकूट पर्वत, एक पहाड़। ऋषभगजविनसित ( सं० स्त्री० ) पौड्याचर इन्दी-विशेष, मोलह मोलह चररोडे चार पादोंका एक इन्दी।

“अनिर्देशेऽन्यथा ऋषभगजविनसितम्। ( १०२४४४ )

ऋषभतर ( ( सं० पु० ) भारवहनाममर्थ उप, जो बैल बोझ दो न सकता हो।

ऋषभदायी ( सं० स्त्रि० ) हृदयदान करनेवाला, जो बैल देता हो।

ऋषभदेव ( सं० पु० ) भगवान्के एक अवतार। चरम हैवी।

ऋषभहोप ( सं० पु०-स्त्री० ) ऋषभहृदय मृतः होपः, मध्यपदहोपो कर्मधा०। जैतहोप/ किमी मुल्लका नाम।

ऋषभध्वज ( सं० पु० ) ऋषभो ध्वजयिद्धमस्य ध्वजे यस्य वा, यद्धमी०। १ महादेव, पत्नये भक्त्यैर्भक्तैः निगान् रक्षनेवान् महार। २ एक बोधभंगामी।

ऋषभो ( सं० स्त्री० ) ऋषभ जाती होय्। १ नराकृति भी, मर्दकी शूरत-महान् रणनेत्रामो चौरत। २ कविकवृत्तता, कवि। ३ विधवा, देश। ४ गिराणा।

ऋषि ( सं० पु० ) ऋषिनि गच्छति संसारपाशम्, ऋष-इन्-कित्। अरुण-विन्। चर १११८। १ आनन्दे द्वारा संसारपाशगत समिद्धादि। २ साक्षात्पतिः। संसृज पर्याय सत्यतत चौर मापाय है। ऋषि मातृकार

रोति है—महर्षि, परमर्षि, देवर्षि, ब्रह्मर्षि, श्रुतर्षि, राजर्षि और काण्डर्षि। प्रत्येक मन्वन्तरके सप्तर्षि-गणका नाम इसप्रकार है—स्वायम्भुव मन्वन्तरमें मरीचि, ऋषि, चक्षि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वशिष्ठ; सारोचि मन्वन्तरमें ऊर्ध्व, स्तम्भ, प्राण, दत्तोत्रि, ऋषभ, निरार तथा चार्धवीर; उत्तम मन्वन्तरमें वशिष्ठके प्रमदादि सप्तपुत्र; तामस मन्वन्तरमें ज्योतिर्धामा, पृथु, काव्य, चैत्र, अग्नि, वनक एवं पौरव; वैवत मन्वन्तरमें हिरण्यरोमा, वेदशो, ऊर्ध्वबाहु, वेदबाहु, भूधामा, पर्जन्य तथा वशिष्ठ; चाक्षुष मन्वन्तरमें सुमेधा, विरजा, हविषान्, उन्नत, मधु, अतिनामा और महिषु; वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तरमें ऋषि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, भरद्वाज एवं कश्यप; सावर्णिक मन्वन्तरमें गालव, दीप्तिमान्, परशुराम, अश्वत्थामा, कृप, ऋष्यशृङ्ग तथा व्यास; दक्षमावर्षिक मन्वन्तरमें मेधातिथि, वसु, सत्य, ज्योतिष्मान्, द्युतिमान्, सरन्न एवं इक्ष्वाकुन; ब्रह्मसावर्षिक मन्वन्तरमें प्राण, भूति, हविषान्, सुहृतो, सत्य, नामाग और वशिष्ठके पुत्र अप्रतिम; धर्मसावर्षिक मन्वन्तरमें हविषान्, वरिष्ठ, ऋषि, आरुणि, निरार, अनघ एवं विष्टि; रुद्रसावर्षिक मन्वन्तरमें द्युति, तपस्वी, सुतपा, तपोभूति, तुणोरति तथा तपोभृति; देवसावर्षिक मन्वन्तरमें धृतिमान्, अथर्व, तत्त्वदर्शी, निरुत्सुक, निर्मोह, सुतपा एवं निष्कम्प; इन्द्रसावर्षिक मन्वन्तरमें अश्वीन, अग्निबाहु, शुचि, सुह, माधव, द्रुत और अजित।

मार्कण्डेयपुराणके मतसे इन्द्रसावर्षिक मन्वन्तरका नाम 'भौत्य' है। पुराणान्तरमें उक्त सप्तर्षियोंके नाम-पर भी मतभेद पड़ता है।

ज्योतिषयाज्ञाको देखते वशिष्ठकी पत्नी अरुन्धतीके साथ वर्तमान मन्वन्तरके सप्तर्षि मघा नक्षत्रपर अवस्थान किया और सघाके उदयमें उदित हुआ करते हैं। काशीखण्ड गणिलोकके ऊर्ध्व और ध्रुवलोकके अधो-देशमें इनकी अवस्थिति बताता है।

१ वेद। ४ किरण। ५ शशु प्रसूति महर्षिसन्तान। ऋषिक (सं० पु०) ऋषेः पुत्रः, ऋषि संघायां कन्,

पृषोदरादित्वात् दीर्घः। १ ऋषिपुत्र, ऋषिके लड़के। २ ऋषियोंके राजा। (लो०) ३ लताविशेष, एक वेल। ऋषिका (सं० स्त्री०) नदी विशेष, एक दरया। ऋषिकुल्या (सं० स्त्री०) ऋषीणां कुल्या कृत्रिमास्थ-सरित् इव। १ गङ्गा। २ ऋषियोंका कृत्रिम जला-गय। ३ तीर्थविशेष। ४ सरस्वती। ५ भारतवर्षकी एक नदी। "४ एव-देववर उन्मृशन्ती विजोत्तमाः।

ऋषिकुल्यां वसामाघ दक्षिणोदधिमानिनौ॥" (अनुष्टुप् १५०)

यह नदी उत्तकालके गुमसर और गङ्गामप्रदेशमें प्रवाहित है। याज्ञकन इसे ऋषिकुलिया कहते हैं। ६ भूमिकी पत्नी और उदगीधकी जननी।

ऋषिर्ग्व (सं० वि०) १ उत्तंजना देनेवाला, जो मड़काता हो। २ उपस्थित होनेवाला, जो अपनी यकल देखाता हो। (साधव)

ऋषिगण (सं० पु०) ऋषिसमूह, ऋषियोंका झुण्ड। ऋषिगिरि (सं० पु०) मगधदेशीय पर्वतविशेष, बिहारका एक पहाड़। यह पर्वत सुद्र और राजगृहके निकट अवस्थित है।

"एव पापं महान् माति पशुमादिबन्धुमान्।

निरासवः सुवेदीयो निवेद्यो नागवः धमः॥

दिशो विपुलः देवो वराहो हरमहाः॥

१ वा ऋषिगिरिस्थानं समाधेयः कथयन्माः॥" (भारत, समा १०५०)

ऋषिगुप्त (सं० पु०) बौद्धविशेष।

ऋषिग्राम (सं० स्त्री०) वीरभूमके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह मानसेपी नदीके तटपर अवस्थित है।

"कान्तरीय नदीपादे ब्रह्मदावीनरेति च।

ऋषिर्ग्वं शकं नामकं व्यासपुत्रिणं ववतः॥" (म० ब्रह्मवर्ष १०१०१)

ऋषिवोदन (सं० वि०) ऋषिको वनेजित करनेवाला, जो गान्धिवालेका होसचा बढ़ाता हो।

ऋषिब्राह्मण (सं० पु०) ऋष्यव्यास दीक्षो।

ऋषिब्राह्मणक (सं० पु०) ऋष्यव्यास दीक्षो।

ऋषिब्राह्मणकी, ऋष्यव्यास दीक्षो।

ऋषिब्राह्मणला, ऋष्यव्यास दीक्षो।

ऋषिब्राह्मणिका, ऋष्यव्यास दीक्षो।

ऋषितर्पण (सं० स्त्री०) ऋषीणां तर्पणम्, ६-तत्।

ऋषियोंके उद्देश्यसे दी जानेवाली जलाह्वलि।

अर्थितोर्थ (सं० पु०) काठियावाड़का एक तीर्थ।  
(प्रवासपत्र २१७५११)

अर्थितोया (सं० स्त्री०) जूनागढ़के निकट बहनेवाली एक छोट नदी। इसी नदीके उपकूलपर प्रभासखण्डोल सञ्चलनगर है। उन्नतनगर देखो।

अर्थित्व (सं० स्त्री०) अर्थिकी व्यवस्था वा नियमावली।  
अर्थित्व (सं० त्रि०) किसी बुद्धका नाम।

अर्थित्व (सं० त्रि०) उत्तेजित कविसे होय रचनेवाला।  
अर्थित्वज्ञौ (सं० स्त्री०) अर्थीणां सप्तर्षीणां पञ्चमी, इ-तत्। व्रतविशेष। यह व्रत भाद्र शुक्लपक्षमीकी होता है। सप्तर्षियोंकी प्रतिमा बनाकर पूजा जाती है। पूजाके बाद अष्टभूमिज्ञात शाकमात्र खानेका विधान है। इसी प्रकार सात वत्सर पर्यन्त यह व्रत किया जाता है। फिर अष्टम वर्ष सप्त अन्नसंस्थित प्रतिमामें सप्तर्षियोंकी पूजा यथाविध मन्त्रद्वारा १०८ तिलोंका होम करना पड़ता है। अन्तको द्वाप्रथ भोजन देना चाहिये।

अर्थित्व (सं० स्त्री०) वाराणसीस्थित बौद्धोंका एक पवित्र स्थान। (अवदानमाला ७६) वाराणसी देखो।

अर्थित्व (सं० पु०) दमनहृष, देवनेका पेड़।

अर्थित्व (सं० त्रि०) अर्थियोंकी गिचा पाये हुआ।

अर्थित्व (सं० स्त्री०) अर्थिमिः प्रोक्ता भेषज्याय इति शेषः, इ-तत्। मापवर्णो ह्ययः। मापवर्ण देखो।

अर्थित्व (सं० पु०) अर्थिः वन्दुरस्य, वडुमी०। १ शरभ नामक अर्थि। २ अर्थिमित्र। (त्रि०) ३ अर्थिवर्गीय।

अर्थित्व (सं० पु०) अर्थिमित्र-इव मनोऽस्य, मध्य-पदनीवी०। अर्थिके ग्याय सर्वायं दर्शो, जो अर्थिकी तरह सब मतसद समझता हो।

अर्थित्व (सं० स्त्री०) किसी अर्थिके बनाये मण्डकका चारभ।

अर्थित्व (सं० पु०) अर्थित्वेय्यको यज्ञः, मध्यपद-नी०। अर्थित्वके कर्तव्य पक्षयज्ञके मध्य एक यज्ञ। अध्ययन मात्र ही इस यज्ञमें करना चाहिये। मनुके मतमें यह पक्षयज्ञ अर्थित्वयज्ञकी अवस्था पालनीय है—

“अर्थित्वेय्यं देवर्षे मूलपदक संपन्न।

द्वयम् अर्थित्वय्यं यज्ञोऽस्ति न चान्यत् ॥” (मनु ३।१०)

अर्थित्व (सं० पु०) अर्थीणां लोकः, इ-तत्। सप्तर्षियज्ञकी अवस्थितिका स्थान, अर्थित्वोंकी दुनिया। काशीखण्डके मतमें यह स्थान गगनलोकसे ऊर्ध्व पौर ध्रुवलोकसे अधः अवस्थित है।

अर्थित्व, अर्थित्व देखो।

अर्थित्व (सं० त्रि०) अर्थिकी वृद्धन करने या ले जानेवाला।

अर्थित्वानर—एक संस्कृतग्रन्थ पण्डित। इन्होंने ‘अर्थित्व-दशविभङ्गटीका’ बनायी थी।

अर्थित्व (सं० स्त्री०) अर्थिमिः कर्तव्यं ग्राहम्, मध्यपदनी०। अर्थित्वोंका कर्तव्य ग्राह। इसमें कार्यकी अपेक्षा आडम्बर अधिक रहता है।

“अर्थित्वेय्यं अर्थित्वेय्यं यज्ञोऽस्ति न चान्यत् ॥” (मनु ३।१०)

अर्थित्वः अर्थित्वेय्यं यज्ञोऽस्ति न चान्यत् ॥” (मनु ३।१०)

अर्थित्व (सं० पु०) १ पुण्डरीक हृष, कमलका पेठ। २ अर्थि।

अर्थित्व (सं० स्त्री०) १ अर्थि। २ हृषि। यह एक चोपधि है।

अर्थित्व (सं० त्रि०) अर्थिकी उत्तेजित करनेवाला। यह अर्थित्व सोमका विशेषण है।

अर्थित्व (सं० त्रि०) १ अर्थित्वारा पाकपित्त। २ अर्थित्वारा पूजित। (मातृ)

अर्थित्व, अर्थित्व देखो।

अर्थित्व (सं० पु०) पुराणोक्त एक राजा।

अर्थित्व (सं० त्रि०) अर्थिमिः मृतः, पाप्यत्वात् पतम्। १ अर्थित्व द्वारा मृत किया हुआ। (पु०) २ अर्थि, पाग।

अर्थित्व (सं० पु०) सबसे उत्तम अर्थि, जो सबसे अच्छा अर्थि हो।

अर्थित्व (सं० पु०) अर्थीणां संगः, इ-तत्। अर्थित्व आदिमातृसार अर्थित्वोंकी राटि।

अर्थित्व (सं० स्त्री०) अर्थि, एक ऋषी।

अर्थित्व (सं० पु०) एक दिवस-मात्र यज्ञ विशेष। इसमें अर्थित्वोंका स्तव होता है।

अर्थित्व (सं० पु०) अर्थिमिः मृत्युंते मृत्युते, अर्थि-

सूत्रम्। ऋषिगणका स्तुतिपात्र, जो ऋषियों द्वारा प्रशंसा किया गया हो।

ऋषी (सं० स्त्री०) ऋषि-डीप्। ऋषिपत्नी।

ऋषीक (सं० पु०) १ ऋषिपुत्र। २ काश्लवर्ण, कांस।

ऋषीतत (सं० त्रि०) ऋषियों द्वारा प्रसिद्ध किया हुआ, जिसकी ऋषियोंने मशहूर किया हो।

ऋषीवत् (सं० त्रि०) ऋषिः स्तोत्रत्वेन अस्मास्ति, ऋषि-मत्तुप्, मस्य वः दीर्घश्च। बृहदारः। पा० ११। १।

१ ऋषिस्तुत, ऋषियों द्वारा प्रशंसा किया हुआ।

२ ऋषिस्तोता, ऋषियोंकी प्रशंसा करनेवाला।

ऋषीवन् (बै० त्रि०) १ ऋषितुल्य, जो ऋषियोंके बराबर हो। २ जिसके साथ ऋषि रहे।

ऋषीवह (सं० त्रि०) ऋषीन् वहति, ऋषि-वह, पचा-द्यच् दीर्घश्च। ऋषिवाहक, ऋषियोंको ले जानेवाला।

ऋषु (बै० पु०) ऋप्-कु। १ अनवरत गति, कभी बन्द न होनेवाली चाल। २ सूर्यरश्मि, आफ़तावकी रोशनी। ३ अङ्गार, अंगारा।

ऋष्टि (सं० स्त्री०) ऋप्-हिंसायां णिन्। १ खड्ग, तलवार। २ साधारण अस्त्रमात्र, कोई भामूली हथियार। ३ दीप्ति, चमक। (त्रि०) ४ गमनागमन-शील, चाने-जानेवाला। (पु०) ५ धर्मसावर्णिक मन्वन्तरके एक ऋषि। ६ पट्टदीप। ७ अशुभ, बुराई।

ऋष्टिक (सं० पु०) देशविशेष, एक कुल्ह। यह दक्षिणात्यमें अवस्थित है। (वाल्मीकीय रामायण)

ऋष्टिमत् (बै० त्रि०) खड्गयुक्त, तलवार या भाला बांधे हुआ।

ऋष्टिविद्युत् (बै० त्रि०) १ विद्युत्के न्याय खड्ग चलानेवाला, जो बिजलीकी तरह बरसती भारता हो। २ अस्त्र द्वारा प्रकाशमान, जो हथियारोंसे चमकता हो। (सायण)

ऋष्य (सं० पु०) ऋप्-यस् निपातनात् सिद्धम्। ऋग्विशेष, एक चिरन। इसका वर्ण मौल और मांस मधुर, दलकारक, तिग्ध, उष्ण एवं कफपित्तजनक होता है। (भाष्यकृतम्)

२ कुशवंशीय देवातिथिके एक पुत्र। (स्त्री०) ३ श्वेतः कुष्ठ, सफेद कोढ़।

ऋष्यक (सं० पु०) ऋग्विशेष। सप्त श्वो।

ऋष्यकेतन, ऋष्येश्वर देवो।

ऋष्यकेतु (सं० पु०) ऋष्यः केतौ यस्य, बहुव्री०। अनिरुद्ध।

ऋष्यगता (सं० स्त्री०) ऋप् ण ऋषिसमूहेन गता ज्ञाता, इ-तत्। १ शतमूली, सतावर। २ मापपर्णी। ३ अतिबला।

ऋष्यगन्धा (सं० स्त्री०) ऋष्यस्य ऋगस्य गन्ध इव गन्धो यस्याः, बहुव्री०। १ ऋषिजाङ्गला। २ अति-बला। ३ चौरविदारो। ४ श्वेतशर्करकन्द, सफेद शर्करकन्द। ५ रक्तशर्करकन्द, लाल शर्करकन्द।

ऋष्यगन्धिका, ऋष्यगन्धा देवी।

ऋष्यजिह्व (सं० स्त्री०) महाकुष्ठ रोग, बड़ा कोढ़। यह पौष्टिक, ऋगको जिह्वके न्याय खरशर्कर और पाथ्यन्तरिक लघ्वाविशिष्ट होता है। अल्पदिनके मध्य ही ऋष्यजिह्व पककर फट जाता है। फिर इसमें क्षमि पड़ने भी देर नहीं लगती। (सूत्र)

ऋष्यजिह्वक, ऋष्यजिह्व देवी।

ऋष्यपुष्पी (सं० स्त्री०) अतिबला, मारियारो।

ऋष्यपौष्ठा (सं० स्त्री०) १ श्वेतवाट्यालक, सफेद बरियारो। २ शतमूली, सतावर। ३ महाशतावरी, बड़ी सतावर। ४ महाबला, बड़ी बरियारो। ५ कंठि-कच्छुलता, केवाँच। ६ पीतवाट्यालक, पौली बरियारो। ७ मापपर्णी।

ऋष्यभूक (सं० पु०) एक पर्वत। रामायणमें लिखा, कि रायणके सीताहरण करने पर नाना स्थान धूम-फिर रामचन्द्रका एक पर्वतपर जाना हुआ था। वहीं कदम्ब नामक दानवोंने सनसे कहा—'पम्पा नदीके तीर ऋष्यभूक पर्वत पर सुधीव रहते हैं। वह भापकी सीताका संवाद बता सकेगे।' (पृष्ठ ७१ पं०) तुलसीदासने भी रामचन्द्रके ऋष्यभूक पर्वतको जानिका उल्लेख किया है—

“बाहे नहि बहुरि उचरई। चरन्तु पर्वत नियरई।”

प्रथमतः समझना चाहिये—पम्पानदी कहाँ है। पम्पा नदीकी वर्तमान अवस्थिति ठंहरा सकनेपर ऋष्यभूक पर्वतका पता बनायाच हो भग जायेगा।

पश्चात् एक विलसन साहबके मतानुसार पम्पा नदी  
चर्यामूक पर्वतसे निकल भगानुपडीके निकट तुङ्गभद्रा-  
में जा मिली है। (Wilson's Mackenzie-Collection, p. 138.)

वेगलर साहब पम्पाको अवस्थिति मध्यप्रदेशमें  
बताते हैं। उसका वर्तमान नाम राम्य है। (Archaeo-  
logical Survey of India, Reports, Vol. XIII. p. 57)

उक्त दोनों ही मत भौगोलिक समझ पड़ते हैं।  
रामायणमें कहा है—

“एव राम गिरः पञ्चा वनं नै पुष्पिणी द्रुमः।

प्रतीची दिशिमाधिव प्रकाशने मनोरमाः ॥२॥

जम्बु पियात्रपनसाम्यदीपप्रतिपुङ्गवाः।

अनन्ताः कर्णिकाराध चूनावागे च वाटवाः ॥३॥

अथना नादवाच तिलका मन्मथकाः।

नीमागोकाः कदम्बाश्च करवीरश्च पुष्पिताः ॥४॥

अप्रिपुङ्गाः अगोकाश्च सुरकाः पारिमृकाः।

अज्ञमनी वरान् गेवान् देवाण्यर्धं नै वनावनम् ॥१॥

ततः पुष्परिचीं चोरी दम्पो नाम मणिपथः।

अथकैरातविषं चो समतीर्णामैवपान् ॥२॥

राम सञ्जलवाङ्मूकः समभीतपुष्पीमिताम्।

तव ईमाः प्रवाः कीचाः कुराराचैश्च रावच ॥३॥

अथसुखानि कृन्ति पम्पासिन्धुनिकराः ॥४॥ (चर्या ७१ वर्ग)

हे राम ! ( पम्पाके ) पश्चिम दिग्दर्शनमें प्रदेश  
जानिकी यद्यो पय मङ्गलकर है। इसको चारो ओर  
पुष्पयुक्त मनोहर जम्बु, पियात्र, पनच, वट, कुच, तिलक  
अथत्य, कर्णिकार, चाम्ब, धव, नागकेशर, करञ्ज,  
तिलक, नील, अशोक, कदम्ब, करवीर, रक्तचन्दन, रक्त  
अशोक, पारिजात और अन्त्याश्च हृद्य प्रकाशित हो रते  
हैं। हे वीरहय ! चाप एक पर्वतसे दूसरा पर्वत और  
एक वनसे दूसरा वन—चनेक पर्वत एवं चनेक वन नाच  
पद्मसमूहमें समाकीर्ण पम्पा नदी पर पड़ेंगे। उनमें  
कंकड़ और संवारका कछों नाम लहों, वागुका भी  
तथा येत एवं नील पद्मिनी खिली है। हंस, मण्डक,  
कोष्ठ और कुरार एसी मनोहर चारसे बोना करते हैं।

अपारस्यानमें निवसते हैं—

“अथचर्या पम्पायाः दुराण्य पुष्पिणी द्रुमः।

दुःसादीरचैश्च विटवाभिराधिवः ॥१॥

Vol. III. 113

उपारी मङ्गला चैव पूर्वकादिभिर्मितम् ॥२॥

दुरारोहण, नागगिण-समाकुल, पूर्वकासपर मङ्गला  
चारा निमित्त और पुष्पित-हृद्य-भोमित चर्यामूक पर्वत  
उसी पम्पा नदीके समुद्रत है।

“अथकोर तु पूर्वोक्तः पर्वतो वागुपुष्पितः ॥१॥

चर्यामूक इति स्यात्सिन्धुविजयसदः ॥” (चर्या ७१ वर्ग)

इसी नदीके तीरपर विविध धातुमण्डित एवं  
पुष्पित हृद्यसमूहमें समाकीर्ण पूर्वोक्त चर्यामूक  
पर्वत है।

रामचन्द्रके समय चर्यामूक पर्वत पर यह उद्भिद्  
उपजते थे—

“भोमित एव पम्पाया दक्षिणे गिरिसावु।

पुष्पिता कर्णिकारश्च वटि वरनयीमिताम् ॥ ७१॥

अथिचं मे वरनामोदं वागुपुष्पितं विभुषितः।

विचितं वृजने रेणुं वागुपुष्पितम् ॥ ७२॥

विचित्राणां नीतिर्बः मरुतः सन्धुपुष्पितः।

मिषयः मरुती रभेः वटो ॥ ७३॥

सुपुष्पिताः नाचैश्च वटो गिरिसावु।

कैतवीर्यानाचैश्च गिरिः सिन्धुना चराः ॥ ७४॥

नाचयः किंवाटैश्च वटः पुष्पकासकाः।

विचित्रा मन्मथानाच अन्त्याः कदम्बान्मा ॥ ७५॥

विजयाभिराधैश्च नाचैश्च पुष्पिताः।

पुष्पिताम् पुष्पिणाभिराधैश्च विचित्रा ॥ ७६॥”

(विच ७१ वर्ग)

हे सुमित्रानन्दन ! पम्पाके दक्षिण भागपर गिरि-  
सानुमें परम भोमित सुपुष्पित कर्णिकारके हृद्य दक्षिणे।  
यह गेवराज गेरियादि धातुसमूहमें विभुषित हो  
वागुवेगमें विपुषित रेणु उत्पन्न करने हैं। गिरि-  
सानुकी चारो ओर पुष्पित वटकीन किंगुल समक  
रहे हैं। सुचक्रन्द, चजुन, कितक, उदामक, गीरीच,  
मिगवा, धव, आश्वतो, किंगुल, रक्तकुन्दक, तिलक,  
करञ्ज, चन्दन, अश्वत्थ, विजयान, पुष्पाय और तिलक  
प्रभृति पुष्पित हृद्य केम सुहायने लगते हैं।

फिर रामायणको देखते चर्यामूक और मलय  
उभय पर्वत निकटस्थ हैं। चर्यामूक मलयका पश्चि-  
मदिशर्तमें पडते हैं।



“सद्यश्चाम्, इदम्वा यत्ता तं मन्त्रं गिरिः ।

आपचये नदी शीरो वसिष्ठाय रायवी ॥ १ ॥”

(कथिन्ना १ वर्य)

इन्मान्ने कथय्यशृङ्गसे मलयगिरिपर पङ्च कपि-  
राज सुयोधमे रघुवीरदयका हतान्त बताया था ।

वर्तमान मन्दाज प्रदेशके अन्तर्गत विशाखोड नामक  
राज्यमें एक ‘पम्पे’ नदी पड़ती है । जिम पर्वतसे यह  
नदी निकलती, उसकी संज्ञा पश्चिमघाट या अनमलय  
है । यही नदी रामायणोक्त ‘पम्पा’ मानो जाती है ।  
इसीकी उत्पत्तिका स्थान कथय्यशृङ्ग है । आजकल  
अनमलय वा इन्तिगिरि कहते हैं ।

रामायणमें कथय्यशृङ्ग पर्वतके उल्लासिका जो  
विषय पड़ता, उसका अधिकारिग अथवापि इस अन-  
मलय गिरिपर मिलता है । वास्तविक ऐसी सर्वरा  
स्थली दक्षिणापथ पर प्रायः देखनेमें नहीं आती ।

हण्टर साहबने इस गिरिके सम्बन्धमें लिखा है—

“The soil supports a flora of extraordinary  
variety and beauty; while the climate  
equals in salubrity that of any sanitarium,  
and.....any plantation of Southern India.”  
(Hunter's Imp. Gaz. India, 2nd Ed. Vol. I, p. 269.)

अतएव हमारे मतमें अनमलय पर्वत ही कथय्यशृङ्ग  
ठहरता है ।

कथय्यशृङ्ग ( सं० पु० ) कथय्य शृङ्गस्य शृङ्गमिव शृङ्गमस्य,  
बहुव्री० । १ कोई सुनि । रामायण और महाभारतमें  
इनका हतान्त इसप्रकार कहा है—विभाण्डक नामक  
एक महातेजा क्षत्रपर्वगीय ऋषि रहे । किसी समय  
अपरा सर्वगीकी देखनेसे जलके मध्य उनका रेतः  
गिर गया था । एक शृगी वह जलमिश्र रेतः पीकर  
मर्मिणी हुई । यह शृगी भी श्रापभ्रष्टा कोई देवकन्या  
थी । यथाकास शृगीने एक पुत्र प्रसव किया ।  
शृगीके गर्भसे उत्पन्न होनेपर उसके एक शृङ्ग  
निकला था । इसीसे लोग उसे कथय्यशृङ्ग कहने लगे ।  
पिता भित्र अपर व्यक्ति कभी देख न पड़नेसे उसका  
मन सिवा ब्राह्मचर्यके अन्य विषय पर चलता न था ।

इसी समय दशरथके बन्धु अङ्गेश्वर लोमपादकी  
किसी अपराध वगैरा अपराधोंने छोड़ रखा था । उनका

यज्ञकार्यादि विगड़ा और इन्द्रके सन्तुष्ट रहनेसे  
राज्यपर जल भी न पड़ा । फिर लोमपादने विव्रत  
हो किसी प्रकार ब्राह्मणोंकी परितुष्ट कर इस विपद्से  
वचनेका उपाय पूछा था । उन्होंने कथय्यशृङ्गको लानेकी  
वात कही । उसीके अनुसार राजाने हम दुष्कर  
कार्यपर कितनी ही वेश्यावैकी लगा दिया । जल-  
पयसे लानेका परामर्श कर नौकायोगमें तयोजनके  
समीप वह पङ्च की और दूर ही नौका खड़ी रख कथ-  
य्यशृङ्गके निकट गये गे । नानारूप भावभङ्गी देखा,  
विचित्र मास्य एवं विविध वस्त्रादि पहना और नाना-  
प्रकार सुखादु पेयादि पिला उन्होंने कथय्यशृङ्गकी क्रमशः  
कामोत्सव किया, फिर नौकाका पद लिया । पीछे  
विभाण्डकने वहाँ पङ्च की और ऐसी अवस्था देख  
पुत्रको नाना प्रकार साखलना दी थी । किन्तु तपन्याय  
उनके पुनर्वा गमन करते ही वेश्यावै का और  
कथय्यशृङ्गकी नौकापर बैठे पतिसत्वर लोमपादके पास  
उपस्थित हुई । लोमपादने सन्तुष्टचित्तसे उन्हें अन्तः-  
पुरमें रखा था । उनके आते ही समस्त राज्यमें  
प्रभूत वर्षण पड़ा । फिर लोमपादने कृतकृत्यार्थ ही  
विभाण्डकके अभिशापसे बचनेके लिये मित्र दशरथकी  
शान्ता नाभी कन्या, कथय्यशृङ्गको सौंप दी । इधर  
विभाण्डकने आश्रममें पङ्च की और पुत्रके पदार्थनमें  
ध्यानस्थ ही समुदाय देख लिया था । वह क्रोधसे  
प्रवृत्तित हो लोमपादके राज्यमें आये । उनके  
आगमनसे, सब लोग भय खा कथय्यशृङ्गका राज्य बताने  
लगे । फिर विभाण्डकने कोपकी छोड़ दिया और  
पुत्र तथा पुत्रवधूकी श्राद्ध प्रदर्शनपूर्वक आश्रमके  
प्रति प्रत्यागमन किया था । कथय्यशृङ्ग पत्नीके साथ  
उसी राज्यमें रहने लगे ।

इन्हीं कथय्यशृङ्गने दशरथ राजाका पुत्रेष्टिपत्र  
किया, जिसके फलसे रामादि ब्राह्मवत्पुत्र्यने जन्म  
लिया था । यह पतिशय प्रतापवाली एवं यज्ञनिष्ठ  
रहे । २ सावर्णिक मन्वन्तरके एक ऋषि ।

कथ्याङ्ग ( सं० पु० ) प्रयुक्तके पुत्र अनिरुद्ध । अनिरुद्ध शरीर ।  
कथ्यादि ( सं० पु० ) कथिरादिरस्य, बहुव्री० । वेदिक  
मन्त्रके अवश्य ज्ञातव्य ऋषि प्रभृति पाँच विषय । पाँचों

विपरीते नाम यह है—पार्थ, हृन्, देवत्व, विनियोग और ब्राह्मण । (योगिनां)

अध्यादिन्यास ( सं० पु० ) अध्यादीनां न्यासः, ६-तत् । तन्मोक्ष न्याससमूहः । मन्त्रकर्म अध्यास, मुखमें हन्तेन्यास, हृदयमें देवतान्यास, गुह्यदेशमें बीजन्यास, पादहृदयमें शक्तिन्यास और सर्वाङ्गमें कीनकन्यास करना चाहिये । (तन)

अथ ( सं० त्रि० ) अथ-व निपातनात् साधुः । १ वृहत् । बडा । २ महत्नाम, मगहर ।

अथर्व ( सं० त्रि० ) वृहत् और्वो द्वारा वसा हुआ ।

अथर्वजस् ( सं० त्रि० ) महद्बलविशिष्ट, बड़ी ताकत रखनेवाला ।

अथर्व ( सं० त्रि० ) रह-यत् धृपोदरादित्वात् साधुः । सर्वशक्ति, छोटा, कमजोर ।

श्रु

श्रु—१ हिन्दी और संस्कृतके स्वरवर्णका अष्टम अक्षर । इसके उच्चारणका स्थान मूर्धा है । उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे ऋ वर्ण तीन और अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो प्रकारका होता है । इसके

लिखनकी प्रणाली प्रायः ऊर्ध्व ऋकारके न्याय रहती है । देवना ऊर्ध्व ऋकारके नीचे एक रेखा दक्षिण दिक्से चारध जो वक्रभावमें वाम दिक् पट्टप कुक्षित पड़ती, फिर दक्षिण दिक्को चमती है । (चर्चोद्धारण) इसका तन्वयास्त्रोक्त नाम क्रोध, चतियोग, वापी, वामनो, गो, श्री, छति, कर्धसुखी, निगमाय, पद्म-माना, विनष्टधी, शगिनो, माषिका, ग्रेष्ठा, देवमाता, प्रतिष्ठाता, एकदण्डाक्षय, माता, हरिता, मिथुनोदया, कोमला, श्यामला, मेघी, प्रतिष्ठा, पति, चटमो, पावक और गन्धर्वपिपी है ।

२ नासिका, नाक । ३ धातुका एक अनुवन्ध ।

“अथर्वजस्त्वयं” (अथर्वकद्रुम)

(धातु) प्रादि० क्रादि० पर० सक० सेट् ।

४ वायुशब्द करना, बोलने जगना । ५ रक्षा करना, बचाना । ६ निन्दा करना, बुरा बताना । ७ भय देवना, धोक् दिताना । ८ गमन करना, जाना । (क्रो०)

अ-जिप् । ९ वधः, छाती । (हो०) १० दानवमाता ।

११ देवमाता । १२ स्मृति, याद । १३ गमन, जान ।

(पु०) १४ दनुज । १५ भैरव, महादेव ।

“अथर्वजस्त्वयं” (अथर्वकद्रुम)

श्रु

श्रु—१ स्वरवर्णका अष्टम अक्षर । इसके उच्चारणका स्थान दन्त है । यह वर्ण ऊर्ध्व, दीर्घ एवं द्रुत भेदमें तीन, अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो और उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे चारतीन प्रकारका होता है । कामधेनुतन्त्रमें लिखा, कि लृकार कुण्डला-कृति और ग्रेष्ठ देवता है । यह पञ्चगुण और चतुर्धनमय रहता है । लृकारमें ब्रह्मादि देव सर्वदा वास करते हैं । इसका प्राय पाँच, मुख तीन, विन्दु तीन और वर्ण पीत विद्युज्जता सेवा होता है । लिपन-प्रणाली पर चधोदेयको कुण्डलाकृति रेखा दक्षभावेमें दक्षिणमें वामदिक् जाती है । लृकारमें चगि, महादेव और वायु रक्षा करते हैं । (चर्चोद्धारण)

इसका तन्मोक्ष नाम व्याण, ओधर, यर, मेघा, धूम्रावक, वियत्, देवयोगि, दक्षगण्ड, महेय, कोम, रुद्रक, विज्जेश्वर, दीर्घजिह्वा, महेन्द्र, नाहमि, परा, चन्द्रिका, वाधिंव, धूम्रा, दिदभत, कामधर्धन, दक्षि-क्षिता, नवमो, कान्ति, पात्रातकेरर, विष्णाकर्षिणी, काय और यथोयकुलहृदरी है ।

२ धातुका अनुवन्धविशेष । यह अनुवन्ध पड़नेमें धातुके उत्तर सुह् विभक्ति पर चट् जगता है ।

“नृकृत्” (अथर्वकद्रुम)

(अथर्व) १ देवमाता । ४ भूमि । ५ पर्वत ।

श्रु—१ स्वरवर्णका अष्टम अक्षर । इसके उच्चारणका स्थान दन्त है । यह वर्ण दीर्घ एवं द्रुत तथा अनु-

“एषमुक्तं इत्युक्तं नृणां स भवति निरिहः।

अथर्ववेदो नदी च विरागाय राखी ॥ १॥”

(विष्णु ५ मं०)

इतमान्ने कथ्यशृङ्गसे मलयगिरिपर पहुँच कपि-  
राज सुषोमसे रघुवीरदयका वृत्तान्त बताया था।

वर्तमान मद्राज प्रदेशके पन्तर्गत त्रिपाट्टोड़ नामक  
राज्यमें एक ‘पम्पे’ नदी पड़ती है। जिस पर्वतसे यह  
नदी निकलती, उसकी संज्ञा पश्चिमघाट या अनमलय  
है। यही नदी रामायणोक्त ‘पम्पा’ माने जाती है।  
इसीकी उत्पत्तिका स्थान कथ्यशृङ्ग है। आजकल  
अनमलय या कृष्णगिरि कहते हैं।

रामायणमें कथ्यशृङ्ग पर्वतके छिद्रादिका जो  
विषय पड़ता, उसका अधिकारी अर्थात् इस अन-  
मलय गिरिपर मिलता है। वास्तविक ऐसी चर्वरा  
स्वकी दक्षिणापथ पर प्रायः देखनेमें नहीं पाती।

इष्टर सांझने इस गिरिके सम्बन्धमें लिखा है—

“The soil supports a flora of extraordinary  
variety and beauty; while the climate  
equals in salubrity that of any sanitarium,  
and……any plantation of Southern India.”  
(Hunter's Imp. Gaz. India, 2nd Ed. Vol. I, p. 269.)

अतएव हमारे मतमें अनमलय पर्वत ही कथ्यशृङ्ग  
ठहरता है।

कथ्यशृङ्ग (सं० पु०) कथ्यशृङ्गशृङ्गमिव शृङ्गमस्य,  
बहुव्री०। १ कोई सुनि। रामायण और महाभारतमें  
इसका वृत्तान्त इसप्रकार कहा है—विभाण्डक नामक  
एक महातेजा क्षत्रपयंत्रीय कृपि रहे। किसी समय  
असुरा उधैरीकी देखनेसे जलके मध्य उनका रेतः  
गिर गया था। एक स्त्री वह जलमिश्र रेतः पीकर  
गर्भिणी हुई। यह स्त्री भी शापवृष्टा कोई देवकन्या  
थी। यथाकाल स्त्रीने एक पुत्र प्रसव किया।  
स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न होनेपर उसके एक शृङ्ग  
निकला था। इसीसे लोग उसे कथ्यशृङ्ग कहने लगे।  
पिता भिन्न अपर प्यक्ति कभी देख न पड़नेसे उसका  
मन सिवा ब्रह्मचर्यके अन्य विषय पर चलाता न था।

इसी समय दमरयके वसु षष्ठेश्वर लोमपादकी  
किसी अपराध वगैराहणोंमें छोड़ रखा था। उनका

यज्ञकार्योदि विगड़ा और इन्द्रके सन्तुष्ट रहनेसे  
राज्यपर जल भीन पड़ा। फिर लोमपादने विमंत्र  
हो किसी प्रकार ब्राह्मणोंकी परितुष्ट कर दस विपद्से  
वचनेका उपाय पूछा था। उन्होंने कथ्यशृङ्गको खानेकी  
बात कही। उसीके अनुसार राजाने इस दुष्कर  
कार्यपर कितनी ही वेष्टाओंकी सहा दिया। जल-  
पयसे खानेका परामर्श कर नौकायोगमें तपोवनकी  
समीप वह पहुँची और दूर ही नौका खड़ी रख कथ्य-  
शृङ्गके निकट गयी थीं। नानारूप भावभङ्गी देखा,  
विचित्र माल्य एवं विविध वस्त्रादि पहना और नाना-  
प्रकार सुखादु पेयादि पिला उन्होंने कथ्यशृङ्गकी क्रमशः  
खामोशता किया, फिर नौकाका पथ लिया। पीछे  
विभाण्डकने वहाँ पहुँच और ऐसी पवस्था देख  
पुत्रकी नाना प्रकार सात्वता दी थी। किन्तु तपस्यायें  
उनके पुनर्वाट गमन करते ही वेष्टायें या और  
कथ्यशृङ्गकी नौकापर बैठ पतिवत्तर लोमपादके पास  
उपस्थित हुईं। लोमपादने सन्तुष्टचित्तसे उन्हें धन्वा-  
पुरमें रखा था। उनके पाते ही समस्त राज्यमें  
प्रभूत वर्षण पड़ा। फिर लोमपादने कृतकृतार्थ ही  
विभाण्डकके भविष्यपक्षे बचनके लिये मित्र दमरयकी  
गान्धा नाकी कन्या, कथ्यशृङ्गकी लौप दो। इधर  
विभाण्डकने पात्र्यमें पहुँच और पुत्रके पदगमनमें  
ध्यानस्थ हो समुदाय देख लिया था। वह क्षीणसे  
प्रवृत्तित ही लोमपादके राज्यमें पाये। उनके  
प्रागमनसे सब लोग भय खा कथ्यशृङ्गका राज्य बताने  
लगे। फिर विभाण्डकने कोपकी छोड़ दिया और  
पुत्र तथा पुत्रवधूको बादर प्रदर्शनपूर्वक पात्र्यमें  
प्रति प्रत्यागमन किया था। कथ्यशृङ्ग पत्नीके साथ  
उही राज्यमें रहने लगे।

इन्होंने कथ्यशृङ्गने दमरय राजाका पुत्रेष्टियत्र  
किया, जिसके फलसे रामादि भ्रातृवत्पुत्रयने जन्म  
मिया था। यह पतिव्रत प्रतापमानो एवं यज्ञनिष्ठ  
रहे। २ सावर्धिक मन्वन्तरके एक कृपि।

कथ्याङ्ग (सं० पु०) प्रमुखके पुत्र अनिश्वर। अनिश्वर १०।

कथ्यादि (सं० पु०) कृपिणादिरस्य, बहुव्री०। वैदिक  
मन्त्रके पञ्चम ज्ञानस्थ कृपि प्रवृत्ति पाँच विषय। पाँचो

विषयोंके नाम यह है—पाप, हृन्द, देवत्व, विनियोग और साक्षात् । (योगिवा०)

कृष्यादिन्यास ( सं० पु० ) कृष्यादीनां न्यासः, इ-तत् । तन्मोक्ष न्यासमसूह । मस्तकमें कृषिन्यास, मुण्डमें हृन्दोन्यास, हृदयमें देवतान्यास, गुह्यदेगमें बीजन्यास, पादहयमें शक्तन्यास और सर्वाङ्गमें कौलकन्यास करना चाहिये । ( मन्त्र )

कृष्य ( सं० त्रि० ) कृष्य-व निपातनात् साधुः । १ हृत् । बड़ा । २ महत्नाम, मगहर ।

कृष्योरी ( सं० त्रि० ) कृष्य जीवों द्वारा बसा हुआ ।

कृष्योजम् ( धे० त्रि० ) महदलविगिट, बड़ी ताकत रखनेवाला ।

कृष्यम् ( सं० त्रि० ) रह-ग्रह प्रपोदरादित्वात् साधुः । वर्षाकृति, छोटा, जमजोर ।

श्रु

श्रु—१ हिन्दी और संस्कृतके स्वरवर्णका अष्टम अक्षर । इसके उच्चारणका स्थान मूर्धा है । उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे ऋ ऌ ऒ तीन और अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो प्रकारका होता है । इसके

लिखनकी प्रणाली प्रायः ऋ ऌ ऒकारके न्याय रहती है । किञ्च ऋ ऌ ऒकारके नीचे एक रेखा दक्षिण दिक्से पारश्व हो वक्रभावमें वाम दिक् पट्टं कुञ्चन पड़ती, फिर दक्षिण दिक्को चमती है । ( वर्णशास्त्र ) इसका सम्बन्धमोक्ष नाम क्रोध, अतिशय, वाषी, वामनो, गो, यी, धृति, अर्धसुखी, निगानास, पञ्च-मौला, विनष्टो, जगिनो, माचिका, ग्रेहा, देवमाता, प्रतिष्ठाता, एकदण्डाग्र, भाता, हरिता, मिथुनीदया, कोमला, श्यामला, मिथी, प्रतिष्ठा, पति, अटमो, पावक और गन्धर्विणी है ।

२ भासिका, नाक । ३ धातुका एक अनुबन्ध ।

“कृष्यपञ्चोपश्रवः” ( अविबन्धन )

( धातु ) प्रादि० क्कादि० पर० सक० सैट् ।

४ वाक्पारश्व करना, बोलने जगना । ५ रक्षा करना, बचाना । ६ निन्दा करना, बुरा बताना । ७ भय देगना, खौफ़ दिलाना । ८ गमन करना, जाना । ( क्ली० )

श्रु-किप् । ८ वधः, काती । ( स्त्री० ) १० दानवमाता ।

११ देवमाता । १२ धृति, याद । १३ गमन, पाण ।

( पु० ) १४ दनुज । १५ भैरव, महादेव ।

“कृष्यपञ्चोपश्रवः” ( अष्ट )

लृ

लृ—१ स्वरवर्णका नवम अक्षर । इसके उच्चारणका स्थान दन्त है । यह वर्ण ऋ, दीर्घ एवं झुत भेदने तीन, अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो और उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे फिर तीन प्रकारका होता है । कामधेनुतन्त्रमें लिखा, कि लृकार कुण्डना-कृति और श्रेष्ठ देवता है । यह पञ्चगुण और चतुर्गुणमय रहता है । लृकारमें प्रज्ञादि देव सर्वदा पाश करते हैं । इसका प्राय पांश, शुच तीन, विन्दु तीन और वर्ष पीत विद्युज्जता सेवा होता है । लिखन-प्रणाली पर अधोदेयको कुण्डनाकृति रेखा-वक्रभावमें दक्षिणमें वामदिक् जाती है । लृकारमें अग्नि, महादेव और वायु रक्षा करते हैं । ( वर्णशास्त्र )

इसका तन्मोक्ष नाम साय, ओधर, मर, भिधा, धूम्रावक, वियत्, देवयोगि, दक्षगण्ड, महेय, कोल, रुद्रक, विष्णुमर, दीर्घजिह्वा, महेन्द्र, माद्रमि, परा, चन्द्रिका, पाथिंश, धूम्रा, दिदभा, कामवर्धन, दक्षि-जिता, नवनी, कामि, आम्नातकेय, विष्वाकर्षिणी, काम और छतीयकुलसुन्दरी है ।

२ धातुका अनुबन्धविशेष । यह अनुबन्ध पड़नेसे धातुके उत्तर लृङ् विभक्ति पर पड़-सगता है ।

“लृङ्-कृप्” ( अविबन्धन )

( पद्य० ) ३ देवमाता । ४ भूमि । ५ पर्यंत ।

लृ—१ स्वरवर्णका दशम अक्षर । इसका उच्चारण स्थान दन्त है । यह वर्ण दीर्घ एवं झुत तथा अनु-

नासिक-धोर निरनुनासिक भेदसे द्विविध, फिर उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध रहता है। काम-धेनुतन्त्रके मतसे नूकार पूर्णचन्द्रतुल्य, पञ्चदेव एवं प्राणायामक, तीन गुण तथा तीन बिन्दु विगिट, चतुर्वर्ग-प्रद धोर परम कुण्डली है। इसकी लिखनप्रणालीमें रेखा छल्ल लूकारके छोड़ तुल्य लगती है। इस रेखा को वैष्णवी कहते हैं। फिर इस रेखामें दुर्गा, वाणी धोर सरस्वती रहती है। (चर्चाधारतन) तन्त्रशास्त्री नाम कामना, हर्षा, द्वयोक्तेश, मधुव्रत, सूक्ष्मा, कान्ति, वामगण्ड, चद्र, कामोदरी, सुरा, गान्तिजल, स्वस्तिका, यम, मायावी, लोतुप, वियत्, कुम्भी, सुखिर, माता-

नीलपीत, गजानन, कामिनी, विष्णवा, काल, निर्या, शुभ, यच्च, कृती, सूर्य, धैर्योत्कर्षिणी, एकाकी धोर दनुजप्रसू है।

पाणिनि लूकारका दीर्घत्व नहीं मानते। किन्तु वार्तिक सूत्रके अनुसार आवश्यक स्थलपर लूकारके स्थानमें लूकार लगा लेना पड़ता है। “लृ ति नू ना।” (वार्तिक) इसलिये ‘तन्त्र धोर’ सुमधोष-व्याकरणमें खोजत नूकार विरुद्ध नहीं ठहरता।

(अव्य०) २ देवनारी। ३ नार्याम्। ४ माता। (स्त्री०) ५ दैत्यस्त्री। ६ दनुजमाता। ७ कामधेनु-माता। (पु०) ८ सर्व। ९ महादेव।

## ए

ए—१ स्वरवर्णका एकादश अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान कण्ठ धोर तातु है। एकार दीर्घ एवं मृत तथा अनुनासिक एवं निरनुनासिक भेदसे द्विविध धोर उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध होता है। कामधेनुतन्त्रके मतसे यह परम, दिव्य, ज्ञान-विष्णु-शिवायामक, रत्ननी-कुसुमतुल्य, पञ्चदेवमय, पञ्चप्राणायामक, बिन्दुत्रयविगिट, चतुर्वर्गप्रद धोर परम कुण्डली है। लिखनकी प्रणालीमें वामदिक्से एक क्षुण्णित रेखा दक्षिण दिक्को जा अधोगत पड़ती, फिर वहाँसे वाम दिक्को चलती है। इस रेखामें अग्नि, महादेव धोर वायु रहते हैं। (चर्चाधारतन) एकारका तन्त्रशास्त्री नाम वास्तव, शक्ति, क्रिष्ण, सोष्ट, भग, महत्, सूक्ष्मा, भूत, धर्मकीर्षी, ज्योत्स्ना, यज्ञ, प्रमर्दन, भय, ज्ञान, लया, धीरा, लज्जा, सर्वसमुद्रय, बक्ति, विष्णु, भगवती, कुण्डली, मोहिनी, वम, योयित्, आचारगति, त्रिकोणा, ईश, सन्धि, एकादशी, भद्रा, पद्मनाभ धोर कुलाचल है। खोजवर्षाभिधानमें वाम-गण्डान्त, मोक्षवीज, विलया धोर पोंछ कई नाम अधिक लिखे हैं। मित्राके अनुसार यह सन्धिका अक्षर लगता धोर अक्षर तथा इकार मिलनेसे बनता है।

२ धातुका अनुबन्ध विशेष। “ए द्विवि चटः।” (हरिवंशपुराण)

(अव्य०) १ स्मृति, याद। ४ अक्षया, नाक्षत्री।

५ अनुग्रह, मिह्रवानो। ६ भामन्त्रण, न्योता, बुलावा। ७ आदान, पुकार।

(पु०) एति प्राप्नोति सर्वं विघ्नम्, इष्-चच्। ६ विष्णु।

(हिं० सर्व०) ७ यह।

एंच (हिं० स्त्री०) १ न्यूनता, कमी। २ विलम्ब, देर। ३ जमीन्दारोंके भामदगी देनेका महाजनी नियम। एंचना (हिं० क्रि०) १ रेखा निर्माण करना, सतर खींचना। २ लिखना, खींच देना। ३ निकालना। ४ काँची देना। ५ शृङ्खल करना, सुखाना। ६ लेना। ७ रखना। ८ लगाना।

एंचपेच (हिं० पु०) १ आवृत, घेरफेर। २ वक्र-गति, टेढ़ी चाल।

एंचाताना (हिं० वि०) वक्रदृष्टि, तिरका देखने-वाला। “धीवर पुत्रा इकार पर काला मरा काचवर एंचाताना।” (लोकोक्ति)

एंचातानी (हिं० स्त्री०) १ युद्ध, लड़ाई। २ कठि-मता, सुत्रिकन। ३ खींचखांच, धर-एकड़।

एंड, एंडकी।

एंडाईड़ा (हिं० वि०) उघनीच, छलटपुलट।

एंडी (हिं० स्त्री०) कौट विशेष, एक कीड़ा। यह रेशमका कीड़ा परण्डके पय भक्षण करता है। पूर्ववत् तथा आसाम इसका मित्रासुखान है। नव-

अथ, फरवरी और मई में एंडी अच्छा रोगम देती है।  
किन्तु एंडीकी पपेला मूंगेका रोगम बढ़िया होता  
है। २ चंडी, एंडीका रोगम। इस रोगमकी बनी  
चट्टरकी भी चंडी ही कहते हैं।

एंडुवा (हिं० पु०) बौभके नीचे रखनेकी तकिया,  
गोदुरी। मज्जूर बौभ गिरपर साटते समय इसे नीचे  
रख लेते हैं। एंडुवा गिरकी रक्षा करता है। इसमें  
बौभ हलका मालूम पड़ता और गिर कम दुखता है।

एक (सं० त्रि०-सर्व०) एतौति, इण्-कन्। १५भीष-  
वाक्यवर्तिनर्षिणः। १५ ११३२। १ प्रधान, राजा, बडा।  
२ अन्य, दूसरा। ३ केवल, अकेला। ४ चादि, शीवल।  
५ अद्वितीय, निराला। ६ सत्य, मन्ना। ७ समान,  
बराबर। ८ अन्य, छोडा। ९ प्रथम, पहला।  
१० बौद्ध। ११ एकसंख्याविशिष्ट, जो एक ही पद-  
का हो।

“एक चण्डा बह भी गन्दा।”

एक पय का कान।”

“एक ही रंगीके बने रहे।” (भीषजि)

(पु०) १२ परमेश्वर। १३ विष्णु। १४ वेम-  
वंगीय एक राजा। (भावकन ४११२) १५ अग्नि।  
१६ सूर्य। १७ देवराज। १८ यम।

परमात्मा, विध, चित्त, गणेशदेव और श्रद्धवस्तु  
एकसंख्यावर्धबोधक शब्द है।

एकंग (हिं० वि०) एकाकी, अकेला।

एकंगा (हिं० वि०) एक दिक्स्थ, जो एक ही  
ओर हो।

एकंगी (हिं० स्त्री०) गष्टिका विशेष, एक माछो।  
यह सहृद्दार होती है। सम्बार् ४१४ हाथ रहती है।  
एकङ्गनेके लिये सुठिया लगा दी जाती है। एकंगीमें  
संकटही छिन्ते हैं। यह मार और बचाव दोनों काम  
पाती है। एकंगी एक प्रकारका बडा गदका है।

एकङ्गिया (हिं० वि०) १ एक अष्टयुक्त, जो एक  
ही गांठका हो। (पु०) २ एक अष्टकोपयुक्त अथ  
वा हथभ, जिस बेल या घोड़ेके एक ही फोता रहें।  
३ एक गांठका सहस्रन।

एकंत (हिं०) वषाव देवी।

एकक (सं० त्रि०) एक-कन्। अमहाय, अकेला,  
जिसके साथी न रहे।

“विश्वैकवचनपरिचयम्।” (२१३ ११३६)

एककन्द (सं० पु०) पानीयानुक, कन्दगाक।

एककपान (सं० त्रि०) एक ही पावमें रहनेवाला,  
जो एक ही वरतनमें हो।

एककर (सं० त्रि०) एक करतातोति, एक-ह-ट।  
दिक्प्रधानिर्देशः। सं० ११३२६। एकमात्रकारक, अकेला  
करनेवाला।

एककर्ण—भारतवर्षके अन्तर्गत जनपदविशेष। उत्तर-  
पश्चिम सीमास्तरमें अवस्थित है। (मज्ज ११०११, १०१० १०१०)

एककर्मकारक, एककर्मकारी देवी।

एककर्मकारी (सं० त्रि०) एक कर्म करोमीति, एक  
कर्म-ह-निनि। एक कार्यकारक, हममेंगा, एक ही  
काम करनेवाला।

एककार्य (सं० त्रि०) एक समान कार्य यध्य, बहुव्री०।  
१ समागकार्यकारक, वही काम करनेवाला। (स्त्री०)  
२ प्रधान कर्म, वही काम।

एककाल (सं० पु०) एकसमय कालय, कर्मभा०।  
१ एक समय, समकाल, वही काल। (अन्व०)  
२ एक ही समय पर, एकवारगी।

एककालभोजन (सं० स्त्री०) किणो नियत समय एक  
ही बारका भोजन, जो पाना किसी प्रकार बह, पर  
एक ही भरतया खाया जाता हो।

एककालीक (सं० त्रि०) १ केवल एक बार भोजि-  
वान्ना, जो प्रिय एक ही भरतया पड़ता हो। २ दिनमें  
एक बार भोजनेवाला, जो रोज एक भरतया गुजर  
जाता हो।

एककालीन (सं० त्रि०) एककाल-युक्त। १ सम-  
कालीन, सम-धर। २ एक ही समय उत्पन्न भोजि-  
वान्ना, जो सभी वस्तु वेदा हो।

एककालीनता (सं० स्त्री०) एककालीन-तत्त्व। सम-  
कालीन भाव वा धर्म, सम-धर्म।

एककुष्ठल (सं० पु०) एक कुष्ठल यध्य, तद्वत्।  
१ बराराम। २ जूरेर। ३ गियनाग।

एककुष्ठ (सं० स्त्री०) सुदृक्कुष्ठमद, एक म मन्ना रोड।

इससे गरीर क्षण्य और चरुण पड़ जाता है। एककुष्ठ चमाम्ब होता है। (टुम्ब)

एककाष्ठि ( सं० त्रि० ) एककोष्ठ चूर्णमय आधार पर प्रयत्नान् करनेवाला, जो एक ही कोष्ठमें रहता हो। गिरःपदो, कटल मत्स्य, चर्गोनट, विलेम, नाइट, चक्रोपम प्रभृति प्राची एककोष्ठि हैं।

एकघोर ( सं० स्त्री० ) एक ही धात्रीका दुग्ध, चमो प्रसा धग्गेरुका दूध।

एकगम्य ( सं० त्रि० ) एकत्वेन गम्यः, एक-गम-यत्।

एकमात्र सभ्य, पकेला भिलनवाला। २ एकमात्र निर्मिकल्पक ज्ञान द्वारा प्राप्त होनेवाला।

एकगाछी ( हिं० स्त्री० ) केवल एक हज्जद्वारा निर्मित भौका, जो नाप एक ही पैरसे बनी हो।

एकगुह ( सं० पु० ) एकौ गुरुयस्य, बहुमी०। सतीर्थ, एक ही उस्तादका भागिदं।

एकगुत्तक, एकगुह देखो।

एकग्राम ( सं० पु० ) एकगाँवो ग्रामयेति, कर्मधा०। पवित्र ग्राम, वर्षी गांव।

एकग्रामोप ( सं० त्रि० ) एकग्रामिन् ग्रामे भवन्, एक-ग्राम-पञ्च। एक ही ग्रामका अधिवासी, जो उसी गांवमें रहता हो।

एकग्रामोप ( सं० त्रि० ) एक-ग्राम-छ। महादिग्धयः। या ११।१२८। एकग्रामवासी, उसी गांवका वाशिन्दा।

एकचक्र ( सं० स्त्री० ) एकं चक्रं यस्य, - बहुव्री०। १ हरिश्चंद्र वा शुभपुरो नामक एक पुरी।

“एकचक्रं हरिश्चंद्रं दृग्भुजं वर्तमानम्” ( विक्रमोपनिषद् ४।११ )

यहां हरिश्चंद्र और शुभ एकचक्रका पर्याय-लैसा सूचित हुआ है।

अध्यापक विलसन प्रभृति कुछ पाश्चात्य पण्डितोंके मतमें शुभ ( एकचक्रा ) का वर्तमान नाम सम्बलपुर है। किन्तु यह बात ठीक नहीं। वर्तमान सम्बलपुर महाराष्ट्रको एकचक्रा नगरी कैसे हो सकती है।

एकचक्रा देखो।

( त्रि० ) २ एकाको विवरण करनेवाला, जो पकेले चमता हो। १ एकमात्र राजविगिट, जो उसी सत्तनतमें हो। ( पु० ) ४ मृत्यु देवका रथ। ५ एक

पट्टर। महाभारतमें इस पट्टरका नाम प्रतिविम्बा लिखा है। ( भारव, समा ५७११ )

एकचक्रवर्तिता ( सं० स्त्री० ) एक चक्रवर्तिनी भावः, एक-चक्रवर्तिन्-तन्। समय प्रयुक्तिका शासनकर्तृत्व, कुल जमीन की सत्तनत। भूमण्डलके एकचक्राकी तरह राजत्व करनेका भाव या धर्म एकचक्रवर्तिता कहाता है।

एकचक्रवर्ती ( सं० पु० ) समय प्रयुक्तिका शासनकर्ता, तमाम सुल्लका वादगाह।

एकचक्रा ( सं० स्त्री० ) महाभारतीमें एक प्राचीन नगर। ऋतुगृहदाहके बाद, पञ्च पाण्डव कुशीको से गुप्त भावसे गङ्गा तीर गये थे। वहांसे नौकापर बैठ वह गङ्गा पार हुये और क्रमागत दक्षिणामित्युप चलने लगे। फिर वह एक गभीर चरखमें पड़ गये। इसी वनमें भोमने छिहिव्व नामक राक्षसकी मारा। उसके बाद नाना स्थान परतिक्षम कर पञ्चपाण्डव व्यासदेवकी आज्ञासे एकवक्त्रा नगरीमें राक्षसके घर जा बसे। ( भारत, बाद १४८—११० प० )

अब देखना चाहिये—एकचक्रा कहाँ है। एकचक्रा नगरी पर बहुत दिनमें गड़बड़ उठ रहा है। कुछ ब्रह्माक्षी कहते—एकचक्रा मेदिनीपुर जिलेमें गढ़वेता ग्रामके निकट रही, जहां आज भी वक राक्षसकी छड़ी पड़ी है। फिर पश्चिमाञ्चलके लौंग रस नगरीकी अवस्थिति गाहाबाद जिलेमें बतायी है। मोमांवा करना भावग्रक जाता, किसका मत प्रकट देखाता है।

बोना परिग्राजक सुपन्न सुपन्नने अपने भ्रमण-हत्तान्तमें लिखा, कि गात्रीपुर ( चैन शु ) से महासार ( मो-ही-स स्त्री ) नामक ग्रामको उगना जाना हुआ था। इस ग्रामके भागे पड़ुं च कर उल्लंगे सुना—यहां पड़ने एक नरभोजी राक्षस रहा, जिसके उत्पातसे सबको विषद्वयक्त होना पड़ा; सुबदेवने फिर उसे शासन किया।

उक्त महासार ग्रामका वर्तमान नाम मासार है। वह गाहाबाद जिलेमें पारा नगरके निकट अवस्थित है। अतएव सङ्ग हो अनुमान करते, कि बोना परिग्राजक महासार ग्रामसे पारा नगर पड़ गये थे।

भाजकल पारामें मोग कहते, कि पञ्चपाण्डव जननी कुम्भीके साथ उसी स्थानमें जा कर रहे। वहाँ तक राक्षसका याग था, जिसमें भीमने मार डाला। सुतरां इस स्थानको महाभारतोक्त एकचक्रा नगरी-जैसा समझ सकते हैं। यह प्रवाद बहुकालसे सुनते—विशेषतः पहले यहाँ नरसामभञ्जक राक्षस रहते थे। चीना परित्राजककी वर्णना पढ़नेसे यह बात समझ पड़ती है।

वर्तमान पाराका दूसरा प्राचीन नाम चक्रपुर है। इसके पार्श्वपर ही बकरी नामक एक सुदूर ग्राम-पड़ता है। यहाँके लोगोंको विश्वास है—इसी बकरी ग्राममें एक राक्षस रहता था। महाभारतमें भी लिखा—एकचक्राके निकट एक राक्षसका वास रहा।

“समीपे नगरस्यास्य बक्री भवति राक्षसः।” (वादि १६०३)

यहाँ ब्राह्मण कहा करते—भीम मङ्गलवारके दिन एक राक्षसको मार चक्रपुर लाये थे। इसीसे चक्र-पुरका नाम पारा पड़ गया।

महाभारतके पाठसे समझा गया, कि एकचक्रा नगरोसे अनतिदूर वैद्यकीयगृह नामक एक नगर रहा—

“वैद्यकीयगृहे राजा भाव नयमिच्छास्वितः।

उपायं ते न कुरुते वञ्चाश्वि च मृगयोः॥

चनार्धे जलमात्रे वै न व्याघ्र प्रायतम्।

रतादृशं वधं नूनं वधामो दुर्बलस्य वै॥

विषये निन्दतुहिताः कुराजानामुपदिवाः।

ब्राह्मणः क्षत्र बालमाः क्षत्र्यः वा वन्द्यारिणः॥”

(वादि ११५८-११)

इस नगरमें अनतिदूर वैद्यकीयगृहमें एक राजा रहते हैं। वह नहीं समझते—न्याय किसकी कहते हैं। वह नितान्त अविषय हैं। इस नगरपर उनका कुछ भी शक्त नहीं। वह ऐसी कोटि चेष्टा भी नहीं करते, जिससे हमारा भला हो। हम भनामयके पात्र हैं। किन्तु चक्रमेव दुर्बल राजाके राजत्वमें पट हम सर्वदा ही उद्विग्न रहते हैं। अतएव ब्राह्मणोंको यहाँ किसीकी बात सुनना और किसीके दृष्टाधोन मन चलना पड़ता है।

उक्त वर्णना पढ़नेसे समझते—महाभारतके समय एकचक्रा नगरी वैद्यकीयगृहवासी राजाके अधिकारमें रही, पीछे एक राक्षस उसे दबा डेठा।

वर्तमान पारा नगरसे दक्षिण-पूर्व ११० कोम दूर ‘विता’ या ‘वेता’ नामक एक प्रतिप्राचीन सुदूर ग्राम है। यह ग्राम भगवान्गच्छके ठोक उत्तर पार्श्वपर पुनपुन नदी किनारे अवस्थित है। यहाँ प्राचीन बौद्ध स्तूपका निदर्शन मिलता है। (Archaeological Survey of India, Rept. Vol. VIII p. 19.) बौद्ध होता—बौद्धोंके अभ्युत्थानसे पहले यहाँ हिन्दू राजाओंका राजत्व रहा। यह ‘विता’ या ‘वेता’ ग्राम ही महाभारतोक्त वैद्यकीयगृह-जैसा समझ पड़ता है। इसमें घोड़ी दूर पुनपुन नदी है। चपर पारपर पाराके निकट दूसरा विता ग्राम है। इससे अनुमान लगता—प्राचीन वैद्यकीय राज्य पुनपुन नदीके पूर्व-पारसे वर्तमान पारा नगर तक विस्तृत था।

एकचत्वारिंश (४० वि०) इकतासोमश, जो इकतासोस की जगह पड़ता हो।

एकचत्वारिंशत् (४० वि०) इकतासोस, चार द्वादश और एक एकाई रत्ननेशाना, ४१।

एकचर (४० पु०) एकः सन् चरति, एक-चर पचादश। १ गण्टक, गेंडा। २ सर्वादि विंशक जन्तु, साँव वगैरह गुंजार जानवर। (वि०) ३ एकाकी विचरण करनेवाला, जो चर्हना घुमता हो। ४ एक जो अनुचर रत्ननेशाना, जिसके दूसरा साथी न रहे। ५ साथ-साथ चलनेवाला। ६ मृगचारी, मोलमें रहनेवाला।

एकचरप (४० पु०) एकचरपो यक्ष, बहुशो०। १ एकपदविमिश्र सन्तुष, एक पैरका चादमी। २ जनपदविमिश्र, एक वर्तते। (वि०) ३ एकपदविमिश्र, एक पैरवाला।

एकचर्यो (४० क्षी०) एकचर्यो चर्यो, चर भावे वृष्ट-टाप। एकाकी गमनको अत्रया, पड़ेने चलनेको दान्य।

एकचारी (४० वि०) एकः सन् चरति, एक-चर-गिति। १ एकाकी विचरण करनेवाला, जो चर्हना



भुमता हो। (पु०) २ बुद्धदेवके एक सहचर।

१ प्रत्येकबुद्ध।

एकचारिणी (सं० स्त्री०) सती, साध्वी, पतिव्रता, नैकवर्ण्यतबी।

एकचित्त (हिं०) एकचित्तदेव।

एकचित्त (सं० त्रि०) एकमेकविषयासक्तं चित्तं यस्य, बहुव्री०। १ अग्न्यचित्त, असाहिदा ज्ञान न रखनेवाला। २ अभियचेता, एक ही बात सोचने-वाला। (स्त्री०) ३ किसी विषयके ध्यानकी दृढ़ता, स्थायानकी पावन्दी।

एकचित्तता (सं० स्त्री०) ध्यानकी दृढ़ता, स्थायानकी जमापट।

एकचित्तन (सं० त्रि०) एक ही विषयकी चिन्ता रखनेवाला, जिन दूसरी बातका ध्यान न रहे।

एकचूर्ण (सं० पु०) एक मुनि। यह तैत्तिरीय ब्रह्मसूत्रके भाष्यकर्ता थे। सायणाचार्यने अपने बनाये दैदके भाष्यमें एकचूर्णिका नाम लिखा है।

एकचेतः (सं० त्रि०) अभियुक्तदय, एकचित्त।

एकचोदन (सं० स्त्री०) एक वचनका वर्णन, प्रकीर्तनी बात। (त्रि०) २ एक नियमपर पाबित, जो एक ही कायदे पर टिका हो।

एकचोषा (हिं० पु०) एक ही चोषका शीमा, जो जैरा एक ही धर्मके मजहब पड़ा हो।

एकच्छाय (सं० त्रि०) एका अवच्छिन्ना छाया आच्छादनं यत्, बहुव्री०। एक आच्छादनविशिष्ट, सिर्फ साया रखनेवाला, जो बिलकुल धुंधला हो।

एकच्छाया (सं० स्त्री०) अधर्मणका सादृश्य, कर्णदारकी बराबरी।

“एकच्छाया प्रतिबलां दायी दलब हृदये।” (आत्मन)

एकदश (सं० त्रि०) १ एक ही दश रखनेवाला, जिसके दूसरा मानिक न रहे। (अव्य०) २ अभियमानमें, प्रत्येकी दृढ़मत पर। (पु०) ३ चनन्यमान, पूरी दृढ़मत।

एकज (सं० त्रि०) एकस्मात् जायते, एक-जन-ड। १ एक हीमें उत्पन्न, जो एक हीमें पैदा हो। २ एकसा उत्पन्न होनेवाला, जो दूसरेके साथ पैदा न हो।

१ एकाकी बहनेवाला, जो एकसा ही जगता हो।

४ अपने प्रकारका प्रकृति, जो अपनी क्रियमें निराला हो। ५ एकप्रकार, जो दूसरी क्रियाका न हो।

(पु०) ६ शूद्र। ७ राजा।

एकजटा (सं० स्त्री०) एका एजमंथका सुरया या जटा यस्याः, बहुव्री०। १ उद्यतारा। ध्यानमें इनकी मूर्ति चतुर्भुज और कृष्णवर्ण वर्णित है। सुष्ठुमाना ही वाग्युष है। दक्षिण हस्तद्वयके मध्य कर्ध्व इन्तमें खड्ग और अघोहस्तमें इन्द्रेवर विद्यमान है। वाम-हस्तद्वयमें कर्तौ एवं खर्पर है। मस्तक पर गगनसर्गो एक जटा खड़ी है। मस्तक एवं गलदेशमें मुण्डकी माला पड़ी है। वक्षःदेगपर सर्पका डार है। नयन पारत हैं। कटिदेगपर व्याघ्रचर्म और कृष्णवस्त्र पचने हैं। वामपद गवके हृदय और दक्षिण पद सिंहके घटपर विन्यस्त है। यह अट्टहास किया करती हैं। गर्जन भीषण और मूर्ति भयङ्कर है। इनकी अष्ट योगिनियोंके नाम यह हैं—महाकाली, वज्रपाणी, उषा, भीमा, घोरा, भ्रामरी, मज्जरात्रि और भैरवी।

(अभिज्ञान ११ व०)

नैपालके बौद्ध इन्हें देवीकी एकजटा-प्रायतारा-देवीके नामसे पूजते हैं। बौद्ध ग्रन्थमें यह बात लिखी, कि अवलोकितेश्वरने वज्रपाणि बोधिसत्वने एकजटा देवीको पूजा कही थी। (ताराचोम(मन्त्रालोक) २ रावण द्वारा नियुक्त एक विकटाकार राक्षसी। (रामायण ३१२।६)

एकजटा कामदेव (सं० पु०) उत्कल देशके गङ्गा-संगीय एक राजा। यह गङ्गादेवके पुत्र और गङ्गा-संगीय प्रथम राजा बौद्धगङ्गाके पीत रहे। गङ्गादेव किसी कार्यके महापापमें निमग्न हुये थे। इसीमें उनकी पत्नीने उन्हें मार एकजटा कामदेवकी सिंहासन पर बैठाया। इन्होंने राज्य भित्ति पर अनेक उत्तुकार्य किये थे। एकजटा कामदेव पुरीका प्राचीन मन्दिर तोडा उसी स्थानपर नूतन मन्दिर बनवाने लगे, किन्तु निर्माणकार्य पधरा रहते ही अकाल कालके लवणमें जा पड़े। लवण और अम्ल के लिये। इनके पुत्रका नाम मदनमहादेव था। इसीके किसी प्राचीन

इतिवृत्तमें एकजटा कामदेवका एकजटा महादेव और किसी ग्रन्थमें कामदेव नाम लिखा है।

एकजन्मा (सं० पु०) एकं सुखमद्वितीयं वा अथ यस्य, बहुव्री० । १ राजा, बादशाह । २ शूद्र । उपनयन संस्कार न होनेसे शूद्र द्विजोंकी ओरसे विभिय रहता है।

एकजात (सं० त्रि०) एकजातु जातः, १-तत् । १ सहीदर, एक ही मा बापसे पैदा । २-एक वस्तुसे उत्पन्न, जो दूसरी चीजसे पैदा न हो।

एकजाति (सं० पु०) एका जातिर्जन्म यस्य, बहुव्री० । १ शूद्र।

"आश्रयः कश्चित् ईश्वरस्यैवार्थं विनाशयः।

चतुर्थे एकजातिश्च शब्दी नास्ति तु पञ्चमः ॥" (मनु १.१०४)

(त्रि०) २ सामान जाति, एक ही कौमवाला।

३ एक बार उत्पन्न होनेवाला, जो दोबारा पैदा न हो।

एकजातिप्रतिबंध (सं० त्रि०) केवल एक जन्मसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो दोबारा पैदा न हो।

एकजातीय (सं० त्रि०) एकः प्रकारः, एक-जातीयः । प्रकारबन्धने जातीयः वा शरीरगतः । १ एकप्रकार, एक-जैसा । २-एक ही जातिसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो दूसरी कौमसे सर्वोत्कार रहता न हो।

एकजीकृष्टिब (सं० वि०=Executive) कार्य-निर्वाहक, कारगुहार । कार्यक्षम शासनकी एकजीकृष्टिब आचारिणी, विधायक अधिकारीकी एकजीकृष्टिब आक्रिष्टर, निष्पादक समितिकी एकजीकृष्टिब कमिटी और अनुष्ठान-निष्ठ सभाकी एकजीकृष्टिब कार्यमिन कहती है।

एकजीववाद (सं० पु०) वेदान्त दर्शनका एक पाद । इसमें जीव एक-जैसा माना गया है।

एकज्वा (सं० स्त्री०) १ चापकी ज्वा, कमान् की छोर । २ व्यामार्धका चिह्न, निस्क कुतरका निशान् ।

एकज्योतिः (सं० पु०) एकं प्रधानं सर्वाभिव्यक्तर ज्योतिरस्व, बहुव्री० । शिव।

एकज्वर (सं० पु०) ज्वररोग विमेष, किसी क्षिप्र का मुखार । मर देवी।

एकट (सं० पु०=Act) व्यवस्था, विधि, कानून । एकटंगा (हिं० वि०) एकपदविग्रिट, संगड़ा, जिसके एक ही पैर रहें।

एकटकी (हिं० स्त्री०) निपटन दृष्टि, टकटकी, लमो हुई निगाह।

एकड़ा (हिं० वि०) एकत, लमा हुआ।

एकठा (हिं० स्त्री०) लोका विग्रित, किसी क्षिप्रकी नाव । यह एक ही काठ या लकड़ी खोदकर बनायी जाती है।

एकड (सं० पु०=Acres) भूमि मापनेकी एक परिमाण । यह १ बोधे १२ बिघे पड़ता है।

एकडान (हिं० वि०) १ अभिय, एक जैसा । (पु०) २ पक्ष विग्रित, किसी क्षिप्रका छुरा । जिस छुरेमें फल और बेंट एक ही लोहेके टुकड़ेका रहता, उसे सब कोई एकडान कहता है।

एकन (सं० पु०) १ देवविग्रित । २ मुनिविग्रित । (हिं० वि०) १ एकव, लो पसग न हो।

एकतः (सं० पञ्च०) एक-तत्त्वम् । १ प्रथमतः, पहिले । २ एक पार्श्वपर, एक तरफ़ । ३ एकत्रे । ४ एक पक्षमें, एक ओरसे । ५ एक दिक्, एक निम्न । ६ पक्षे, एक-एक।

"यानि कर्तव्यादिचरं कर्तव्यानीम्।

कारिण्यं तावन्तु एवम एकतोऽर्थः ।" (बहुव्री०)

एकतत्त्वे (सं० त्रि०) एकतत्त्वमव्याप्तीति, एक-तत्त्व-इति । समानकर्म, वरावरका काम करनेवाला।

एकतम (सं० त्रि०) एक-इतमम् । एक-एक । १ बहुके मध्य एक, बहुतामें धरेला । २, दोनों एक । ३ एक ।

"एकतमं नो कर्तव्यं वा बहुतमं कर्तव्यम् ।" (अनन्य)

एकतर (सं० त्रि०) एक-इतरम् । १ दोनों एक । २ बहुतामें एक ।

एकतरफा (सं० वि०) १ एकपक्षमें सम्बन्ध रखनेवाला, जो दूसरी ओरका न हो । २ पक्षनातुम्, तरफ़दारोवाला । ३ पार्श्वस्थ, बगुमी।

एकतरा (हिं० पु०) एक दिनमें प्यारी चढ़नेवाला ज्वर, जो मुखार एक दिन उठर कर जाता हो।

एकता (सं० स्त्री०) एकस्य भावः, एक-तन् टाए ।

१ ऐश्वर्य, वरदत्त, मेखजोस । २ समिपता, बराबरी ।

३ मुक्तिविशेष । (फ्रा० वि०) ४ पद्धितीय, चनोष्वा ।

एकताम (सं० त्रि०) एकेन भावनेन तन्मते, तन-  
भच् । १ एकाग्र, एक ही काममें लगा हुआ ।

२ एक स्वर तथा एक तानविशिष्ट, जो दूसरा स्वर

या तान रखता न हो । (पु०) ३ एक ही विषयपर

नियोजित ध्यान, जो ख्याल एक ही बातपर लगा हो ।

४ स्वर एवं तान की एकता, गाने-बजानेका मेल ।

एकतार (सं० त्रि०) एका तारा यत्र, बहुव्री० ड्रवः ।

केवल एक ताराविशिष्ट, सिर्फ एक ही सितारा

रखनेवाला । नभकी एकतार देखनेपर नारद मुनिका

ध्वरण करना चाहिये ।

एकतारा (हिं० पु०) एक तारवाला मितार-जैमा

क्षव्वा बाजा । कद्दीनी तौथीका सुँह चमड़ेसे मढ़ा

बाँसका एक डण्डा लगा देते हैं । डण्डेके ऊपरी

हिस्सेपर एक खूँटी रहती है । खूँटीसे मढ़े चमड़े

पर लगी छोड़ियाके नीचे तक एक लोहे या पीतलका

तार चढ़ता है । चनेक मिष्ठुक एकतारा बजा बजा

भीष मांगते घूमते हैं ।

एकताल (सं० पु०) एकः समानस्थानो यत्र, बहुव्री० ।

१ तानविशिष्ट, तालसे मिला हुआ । (पु०) २ तान-

विशिष्ट गीतवाद्यादि, सुरीला गाना । ३ एकमात्र

तालवृत्तका पर्यंत ।

“एकताल इत्युक्तान्तरमिति विधिः ।” (एव १३१२)

एकताला (हिं० पु०) एकतालका गीतवाद्यादि, दूसरे

तालकी जुद्धरत न रखनेवाला गाना-बजाना । इसमें

१२ मात्रा और १ पाछाव है । खानी ताल नहीं

पड़ता । तबले या ढोलकसे निकलता है—

रिन् रिन् बा, धा रिन् बा, मारेन् बादि भेरे बटे रिन्ता बा ।

हिन्दीस्थानी गाने-बजानेवाले प्रायः पल्लकी दादर

एकतालेमें गाया करते हैं ।

एकतामिका (सं० स्त्री०) एक रागिणी ।

एकतामी (सं० स्त्री०) एक तालका बाजा ।

एकतामोम (हिं० वि०) एकत्वसारिण्यत्, चासीस और

एक, चार दहाई और एक एकाईमें बना हुआ, ४१ ।

एकतीर्थी (सं० वि०) एकं यमं तीर्थं पात्रमोपलब्ध,

इति । १ सतीर्थ, उषो ठिकानेवाला । (पु०) २ एक

ही गुरुका शिष्य, उषो वस्तादका श्यागिंद ।

एकतोष (हिं० वि०) एकविंशत्, तीस और एक,

तीन दहाई और एक एकाई रखनेवाला, ३१ ।

एकतेजन (सं० त्रि०) एकमात्र काण्डविशिष्ट, एक

ही छण्डा रखनेवाला ।

एकतेग्वर—बंगाल प्रान्तके बांकुड़ा जिलेका एक प्राचीन

ग्राम । यह बांकुड़ा नगरसे दक्षिण-पूर्व १ कोस

द्वारिकेश्वर नदीके तीरे अवस्थित है । एकतेग्वर

नामक शिवमन्दिर देखने योग्य है । मन्दिरमें महा-

देवके निहकी एक मूर्ति है । निहकी एकतेग्वर

कहते हैं । मन्दिरकी बनावट बहुत अच्छी है । ऐसी

दृढ़ भित्ति इस अञ्चलमें कहीं देख नहीं पड़ती ।

मन्दिर पतिप्राचीन है । खाल बिक्रीसे पत्थर जड़ा

है । बीचमें दो तीन बार संस्कार हुआ है ।

एकतोदग् (सं० त्रि०) एकतो दन्ता यस्य, बहुव्री०

टन् प्रादेगः । एकपाटी दन्तयुक्त, जो एक ही ओर

दांत रखता हो ।

एकत्व (सं० अश्व०) एक-तन् । अवस्थात्वात् वा ३३११ ।

१ एक ही स्थानमें, वही जगहपर । २ एकछद्म,

एक साथ, मिल-जुलकर ।

एकत्रा (हिं० पु०) निरवशेष, जमा, ओड़ ।

एकत्रिंश (सं० त्रि०) एकविंशत् संप्रसारिण्यत्,

एकतोषवर्ष ।

एकविंशत् (सं० त्रि०) एकतोष, तीन दहाई और

एक एकाई रखनेवाला, ३१ ।

एकविक (सं० पु०) यत्रविशेष ।

एकवित (सं० त्रि०) एकवप्राप्त, एकट्ठा, जमाया

हुआ ।

एकत्व (सं० स्त्री०) एकस्य भावः, एक-त्व । १ एकता,

तौहीद, एकाई । २ अभेद, मेल । ३ धाम्य, बराबरी ।

४ मुक्तिविशेष । व्याकरणमें एकवचनको एकत्व

कहते हैं ।

एकत्वभावना (सं० स्त्री०) एक की चिन्ता, एक का

ख्याल । जैन धर्माधि एकत्वपर ध्यान महान्तिका

यह नाम रखते हैं। उनके मतानुसार एकाकी जीवका मायी केवल कर्म है।

एकदंष्टा (हिं० पु०) कुशतीका एक पेश।

एकदंता (हिं० पु०) १ एकदन्तविभिन्न दन्ति, एक दांतका दण्डो। २ एक दांतवाला।

एकदंष्ट्र (सं० पु०) एका दंष्ट्रा यस्य, बहुव्री० क्लृप्तः। गण्य।

एकदण्डी (सं० पु०) एकः केवलो दण्डोऽस्मासीति, एक-दण्ड-इति। मध्याह्नविशेष। जय हृदयमें सनातन मन्त्रमात्रका नियम जमता, तब मध्याह्नी एकमात्र दण्ड पकड़ता है। चतुर्विध मध्याह्नियोंमें ईश्वरेश्वरीवालोंके ही दण्डधारणको व्यवस्था है। मन्त्रको देखो।

एकदन्ता (सं० पु०) गण्य। किसी समय गर्ण्यको शरपात्र बना गिवसे दुर्गा कथोपकथन करती थीं। उसी समय परशुरामने गिवसे दर्शनको आ गण्यसे द्वार छोड़नेको कहा। इनके भस्मीकार करनेपर दोनोंमें तुल्य युध होने लगा। परशुरामके कुठाराघातसे गण्यका एक दन्त टूटा था। उसी समयसे इनका नाम एकदन्त पड़ गया। (ब्रह्मवैवर्तपुराण)

एकदरा (हिं० पु०) एक दरवाजा, जो दालान एक ही दरवाजा रखता हो।

एकदली (फा० स्त्री०) कुशतीका एक पेश। इसमें महुनेवालेका बायां हाथ अपने बायें हाथसे घुमा कर एकदले और दाहिनेसे बाँधे थोड़े निकल जाते हैं। यह पेश कुशती नाड़नेमें सबसे पहली सिंघाया जाता है।

एकदा (सं० अव्य०) एकाधिन् काले, एक-दा। नैवाचरिं यनदः काले वा। १ एका ही समयपर, फौरन्। २ एकबार, एक सरतवा, कभी-कभी। ३ किसी दिनको। ४ एक समय पर।

एकदिक् (सं० स्त्री०) १ एक स्थान, वही जगह। २ एकपाश, एक वृत्त। जैन शास्त्रमें दिक्मुख्योप निर्धारित नियम निर्वाचनेको एकदिगा—परिभाषाति-क्रमण कहते हैं। श्रावकको प्रतिदिन चारो दिशाकी दूरी ठहरा चमना पड़ता है। उक्त नियम तोड़नेपर यह पतिचार मगता है।

एकद्वन्द्व (सं० द्वि०) सदासुभूति रखनेवाला,

इमदं, जो दूसरेके दुःखमें दुःखी और सुखमें सुखी रहता हो।

एकदृक् (सं० पु०) एकमभिव पश्यतीति, एक-दृग्-क्तिप्। १ मन्त्रादेवः। २ तत्त्वज्ञानो। ३ मन्त्र-ज्ञानो। ४ काक, कौवा। राम वाचसे कौवेको एक पाल फूट गयी थी। (त्रि०) ५ काना। ६ एक-पक्षाग्र्यी, तरफदार।

एकदृग् (सं० द्वि०) चकेला देखने योग्य, जो तनहा देखे जानिके काबिल हो।

एकदृष्टि (सं० स्त्री०) एका एकविपयिषो दृष्टिः, कर्मधा०। एकमात्र विषयपर दृष्टि, जो मजूर निक, एक ही बातपर लट्टी हो। (पु०) एका दृष्टिर्यस्य, बहुव्री०। २ काक, कौवा। (त्रि०) ३ काना।

एकदेव (सं० पु०) एकः प्रधानो देवः, कर्मधा०। परमेश्वर।

एकदेवता (सं० द्वि०) एका देवता यस्य, बहुव्री०। एक ही देवताकी दिया हुआ, जो एक ही देवताको चढ़ाया गया हो।

एकदेवता (सं० द्वि०) एका श्रेष्ठा देवतामर्हतीति, एकदेवता-यत्। श्रेष्ठ देवतापूजक, जो एक ही देव-ताको मानता हो।

एकदेश (सं० पु०) एकस्थानो देश्येति, कर्मधा०। १ एक स्थान, वही जगह। २ पंथ, दिशा। (त्रि०) ३ एक स्थानका अधिकारी, जो एक ही जगह रहता हो। (अव्य०) ४ कुल कुल।

एकदेशविभावितन्याय (सं० पु०) एकदेशः साध्यस्य विभावितो येन स चानो न्यायस्येति, कर्मधा०। तर्क विग्रह, किसी किछाकी दलील। इनमें प्रमाणादिक साध्यका एकदेश चक्षुजन होता है।

एकदेशस्य (सं० द्वि०) एक ही मानपर अवस्थित, जो सभी जगह पर हो।

एकदेशो (सं० द्वि०) एकोऽभिधा देसो प्रायतान-त्वेनाभ्यस्यतीति, इति। १ एक देशवासी, सभी मुख्य-का रहनेवाला। २ देशोंमें विजय, जो देशोंमें फैला हो।

एकदेशीय, वहीही देशी।

एकदेह (सं० पु०) एकी सुत्रो देहो यस्य, बहुव्री० ।  
 १ बुधप्रह, दशैर-प्रसक्त । एकः तुल्यो देहो यस्य ।  
 २ वंग, सुदान् । १ दम्बती, स्त्रीपुरुष । (वि०)  
 ३ एकशरीर, मित्र एक लिङ्ग रञ्जनेवाला ।  
 एकद्वयः (सं० पु०) एकेन परमाण्वना दिव्यति,  
 दिव-लिप्-उट् । केवल परमाण्वित्तक आत्माराम  
 नामक एक ऋषि । यह नीधःके पुत्र ये ।  
 एकद्वार (सं० पु०) गुजरात प्रदेशके मध्यास्थित बट-  
 तीर्थके निकटस्थ एक प्राचीन तीर्थ । (भाष्य)  
 एकधन (सं० स्त्री०) एकमेव धनम्, मध्यावदसोपी,  
 कर्मधा० । १ एक मातृधन, चकेसो दीक्षित । एक-  
 मधुगम धनं धीरमानसुदकं यस्य, बहुव्री० । २ मधुगम  
 मध्यक कलस, चकेसा घड़ा । ३ त्रैलोक्य, बड़ी दोनत ।  
 (वि०) ४ एकमात्र धनशाली, चकेसा दीक्षितमन्द ।  
 एकधनवित् (सं० वि०) १ एकधन नामक कनस  
 प्राप्त करनेवाला । २ उत्तम वलि प्रानेवाला ।  
 एकधर्म (सं० वि०) एकसुखी धर्मोऽस्यास्तीति,  
 एक-धर्म-इति । समान धर्म विशिष्ट, इम मज्जइव ।  
 एकधा (सं० अव्य०) एक-धा । श्रुतायो विभक्तौ वा ।  
 पा ३।१।१ । १ एक प्रकार, साध-साध । २ साधारणतः,  
 चकेली । ३ एक बार, फौरन ।  
 एकधुर (सं० स्त्री०) यानविशेष, एक गाड़ी ।  
 एकधुर (सं० वि०) एका धुर्यस्य, एक-धुर-च ।  
 मधुपुरम् : एकाग्रतये । पा ३।१।२ । १ केवल एक प्रकार  
 भार वा धुरके योग्य, जो सिर्फ एक पिछके बोझ या  
 सुदके काबिल हो । २ भारविशेषवाची, कोई बोझ  
 देनेवाला ।  
 एकधुरा (सं० स्त्री०) एका न द्वितीया धूः, कर्मधा० ।  
 एक भार, वही बोझ ।  
 एकधुरावह (सं० वि०) एक धुरायाः वहः, इ-तम् ।  
 एक भारवाहक, वही बोझ देनेवाला ।  
 एकधुरीच (सं० वि०) एकधुरां वहति यः, एक-  
 धुर-च । एवमुक्तम् । पा ३।१।३ । एक भारवाहक,  
 सिर्फ एक बोझ देनेवाला ।  
 एकजटय (सं० स्त्री०) एकं जटयं यस्य, बहुव्री० ।  
 १ एक तागविशिष्ट मत्त । चाट्टा, चिवा पीर

स्त्राति नचत्त एकतारामय है । २ चमान्वा । १ एक  
 नचत्त, चकेसा सितारा ।  
 एकनट (सं० पु०) एकी मुखो नटः, कर्मधा० ।  
 प्रधान नाट्यप्रवर्तक, कथाप्राण, पास सेलाड़ी ।  
 यह प्रस्तावना सुनाता है ।  
 एकनयन (सं० वि०) एकं नयनं यस्य, बहुव्री० ।  
 १ काना । (पु०) २. काक, कौया । ३ कुबेर ।  
 एकनवत (सं० वि०) इवयानवेवा ।  
 एकनवति (सं० स्त्री०) एकेन चधिका नवतिः,  
 मध्यवदसोपी कर्मधा० । इवयानवे, नौ दवाई पीर  
 एक एकाईकी संख्या, ८१ ।  
 एकनवतितम, एकनव दशो ।  
 एकनाथ (सं० पु०) एकः प्रधानं नाथः, कर्मधा० ।  
 १ प्रधान राजा, पास मालिक । (वि०) २ एक प्रभु  
 युक्त, जिसके एक ही मालिक रहे ।  
 एकनाथ भट्ट (सं० पु०) एक प्रसिद्ध चण्डकार ।  
 दाक्षिणात्यके प्रतिष्ठान (पैठान) नगरमें इनका जन्म-  
 हुआ था । इन्होंने चण्डयार्थप्रकाशिका नाम्नी एक  
 चण्डाईकी टीका बनायी है ।  
 एकनाथक (सं० पु०) एकः प्रधानं नाथकः, कर्मधा० ।  
 महादेव ।  
 एकनाथकशण्डतत्त्व (सं० स्त्री०) एक ही राजाके  
 मतानुसार निर्वाहित राज्यशासनका कार्य, जो हुक्म-  
 मन्तनतमें एक ही वादशास्त्रके ऋद्धने पर चलता हो ।  
 एकनियय (सं० पु०) १ साधारण स्वीकृति वा  
 कल, मामूली मञ्जूरी या गतीजा । (वि०) २ एक  
 ही प्रस्ताव को प्राप्त, जो वही मतसब रखता हो ।  
 एकनिष्ठ (सं० वि०) एका एकविषयिची निष्ठा  
 यस्य, बहुव्री० । १ एकाग्र, एक ही से लगा हुआ ।  
 एकनीड (सं० वि०) १ केवल एक स्थान रखने-  
 वाला, जिसके एक ही बैठक रहे । २ साधारण-  
 गृह रखनेवाला, जो मामूली मकान रखता हो ।  
 एकनीत (सं० स्त्री०) रय, गाड़ी । (भाष्य) ३।१।३ ।  
 एकनेत्र, एकरूप देवी ।  
 एकनेमि (सं० वि०) एक मण्डकविशिष्ट, एक ही  
 द्वारा रखनेवाला ।





सिर्फ एक मर्द रखनेवाला। एक: पुरुषो भोक्ता यत्र। ४ एकपुरुषभोग्य, एक मर्दके काममें आने लायक।

एकपुष्कल (सं० पु०) एक पुष्कलं मुखं यस्य, बहुव्री०। काहल नामक वाद्यविशेष, एक बाजा।

एकपुष्पा (सं० स्त्री०) एकं पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। वृक्षविशेष, एक पेड़। इसमें एकमात्र पुष्प आता है।

एकपृथक्त्व (सं० स्त्री०) भेदाभेद, लगाव और अलगाव।

एकपेक्षा (फ्रा० वि०) १ एक ही पेच रखनेवाला, जो एक ही वस्तुका हो। (पु०) २ किसी किसीकी पतली पगड़ी।

एकप्रकार (सं० द्वि०) अभिप्रेक्ष्य, वैसा ही।

एकप्रत्य (सं० द्वि०) अत्यन्त तुल्य, विलक्षण बराबर।

एकप्रभुत्व (सं० स्त्री०) सान्त्वय, समतनत्र।

एकप्रयत्न (सं० पु०) शब्दकी एकमात्र चेष्टा, आवाज-की एकैसी कोशिश।

एकप्रत्य (सं० पु०) परिमाणविशेष, एक तोल। यह ३२ पल या २ सेरका होता है।

एकप्राथम्योग (सं० पु०) एक ग्राहका संयोग, एक ही सांसका मिला।

एकफर्दा (फ्रा० वि०) एक ही फलसवाला, जो एक ही बार फलता या फल देता हो।

एकफल (सं० द्वि०) केवल एक अभिप्राय रखनेवाला जिसके एक ही नतीजा या मतलब रहे।

एकफला (सं० स्त्री०) एक फलमय्याः, बहुव्री०। टापू। चोपधि विशेष, एक बूटी।

एकफली (सं० स्त्री०) एक फलमय्याः, स्त्री०। चोपधिविशेष, एक बूटी।

एकफुल्ला, एकदर्रा ईलो

एकबंदी (हिं० स्त्री०) दो बांधेवाला जंगल। इससे नाप रोकी जाती है। (द्वि०) २ एक रज्जु विभिन्न, जो एक ही रङ्गीका हो।

एकबारगी (फ्रा० द्वि० वि०) १ एक ही बारमें, साथ-साथ। २ एकदम, एकएक। ३ सम्पूर्ण रूपसे, विलक्षण।

एकवाल (सं० पु०) १ भाग्य, किस्मत। २ पट्टी-कार, मंजूरी। राजीनामकी एकवाल-दावा कहते हैं।

एकवृत्ति (सं० द्वि०) १ एक ही ध्यान रखनेवाला, जो सभी स्थानका हो। (पु०) २ मण्डक विशेष, एक मेंढक। पक्षतन्त्रमें इसकी कथा मिली है।

एकभक्त (सं० स्त्री०) एक भक्त भोजनं यत्र, बहुव्री०। १ व्रतविशेष। इस व्रतमें रात्रिका आहार छोड़ दियेको दोपहरके समय केवल एकबार भोजन

करते हैं। जो व्यक्ति विष्णुका भक्त रहता, सर्व जनों-पर अहिंसा रखता, एकबार भोजन करता और प्रत्यह 'वासुदेवाय नमः' मन्त्र पढ़े बार लपता, उसे पतिरात्र यज्ञका फल मिलता है। ऐसे ही नियम से जो संवत्-

सर काल प्रतिपादित करता, वह पौष्परीक यज्ञके फलका अधिकारी बनता और दस सड़क वर्ष स्वर्ग भोग पुण्यपत्र होनेपर फिर मत्स्या आने भी माहा-

त्मासे रहता है। (विष्णुर्वाच) (द्वि०) एकमेव भजते। २ एकमात्र व्यक्ति का अनुसरण, जो एक ही आदर्शको पालन करता हो। ३ एकमात्र परमेश्वरका भक्त।

४ प्रधान भक्त।

एकभक्तव्रत (सं० स्त्री०) एकभक्त व्रतं।

एकभक्ति (सं० स्त्री०) एका चतन्यविषया भक्तिः, क्रमंभा०। १ एकमात्र विषयमें भक्ति, एक ही बात-की मुहब्बत। २ केवल एक बारका भोजन। (द्वि०)

एका चतन्यविषया भक्तियंस्त्र, बहुव्री०। २ नितात्न भक्त, निहायत तावेदार।

एकमहीनय (सं० पु०) एकामिहृदयो भट्टोमधि-स्तव नयः, मध्यपदलोपी कर्मभा०। न्याय विशेष, एक दलील। एकदम बहु विषयोंके मध्य किसी स्थानमें

एक की प्रगति पड़ने पर इस व्यापकमें ऐसे ही अन्य विषयोंकी भी प्रगति लग सकती है।

एकभाय (सं० पु०) एका भायं यस्य, बहुव्री०। उदाहरणः १ एक पत्नीवाला पुरुष, जिस मर्दके दूसरी पत्नी न रहे। (द्वि०) एकेन भायः। २ एक जन द्वारा प्रतिपाद्य, जो एक ही मत्स्यकी परवरिद पानेके आदिष्ट हो।



एकभाषा ( सं० स्त्री० ) एकस्यैव भाषा, १-तत् ।

भाषा, प्रतिप्रता, नेत्रवत्त सीधी ।

एकभाव ( सं० पु० ) एकयामौ भावयेति, कर्मधा० ।

१ एक सभाय । २ एक चमिमाय । ३ चमिद,

तोष्टोद । ४ समभाव, बराबरी । ५ एक विषयमें

चनुराग, एक ही बातकी चाह । ६ एकका चमिमाय ।

७ एक रूप । ( त्रि० ) ८ एक प्रतिविम्बा, जिसमें

दूसरी बात न रहे ।

एकभुक्त ( सं० त्रि० ) १ एक बार भोजन करने-

वाला, जो एक ही मरतवा खाता हो । २ एक साथ

भोजन करनेवाला, जो भनग खाता न हो ।

एकभूत ( सं० त्रि० ) १ चमिमा, मिमा दुषा, जो

टात हो । २ एक दिपयासक्त, एक ही काममें

लग्न हुआ ।

एकभूम ( सं० पु० ) एकाभूमिर्धत, बहुव्री० । एक-

तना गृह, एक मंजिला भूकान् ।

एकभोजन ( सं० स्त्री० ) १ केवल एक बारका

बाहार, सिर्फ एक मरतवा खाना । २ एक साथका

भोजन ।

एकमत ( सं० त्रि० ) एक मात्र मत विगिट, हमराय ।

एकमति ( सं० स्त्री० ) एका चनन्यदिपया मतिः,

कर्मधा० । १ एकविषयासक्त मन, एक ही बातमें

लग्न हुआ दिग । ( त्रि० ) एकधिनू विषये मति-

यंथ, बहुव्री० । २ एक विषयमें चिन्तागोल, एक ही

बात सोचनेवाला ।

एकमनाः ( सं० त्रि० ) एकधिनू विषये मनोऽस्य,

बहुव्री० । एकापचित्तसं चिन्ताकारी, दिग्न लगाकर

सोचनेवाला ।

एकमप ( सं० त्रि० ) एकसं युक्त, जो एक रचता हो ।

एकमात्र ( सं० त्रि० ) एका भाषा यस्य, बहुव्री० ।

एक मात्राविगिट, जो दूसरी मात्रा रचता न हो ।

एकमायिक, चक्रवर्त्त देवी ।

एकमुंहा ( त्रि० वि० ) एकमात्र मुणुविगिट, सिर्फ

एक मुंहा रचनेवाला । एकमुंहा टहरिया एक गहना

होता है । यह पूज या समिने बनता और भीष

जातिकी क्षीयोंके पहननेमें लगता है ।

एकमुण ( सं० त्रि० ) एकं मुणं यस्य, बहुव्री० ।

१ एक द्वारविगिट, एक दरवाजिशाला । २ एक ही

खानकी ओर मुण मुकाये हुआ, जो किसी एक ख-

नकी मुंहा फेरे हो । ३ एकमात्र प्रधान रचनेवाला;

जिसके एक ही चर्मकर रहे ।

एकमुषी, चक्रवर्त्त देवी, एकमुषी रुद्राक्षमें फाँकती

रंगा एक ही रहती है ।

एकमूर्धा, चक्रवर्त्त देवी ।

एकमूल ( सं० पु० ) पुण्डरीकवृक्ष, मफेद कमलका पेड़ ।

एकमूला ( सं० स्त्री० ) एकं मूलं यस्याः, बहुव्री० ।

१ भासपर्ची । २ पतची, पल्लो ।

एकव्या—ब्रह्मस मानकी पुरनिया जिनेका एक ग्राम ।

यह चला २५ ५८ ७ और दाहि ८० १६ ३

पू० पर अवस्थित है । एकव्या अपने मिलेके व्य-

सायका एक प्रधान खग है । पक्ष, गन्धद्रव्य, वस्त,

चर्म प्रभृतिका काम होता है । बाजार बराबर

लग्न रहता है ।

एकयटि ( सं० स्त्री० ) मुक्ताकी एकमात्र यटि,

मोतियोंकी सबसे लड़ी ।

एकयटिका ( सं० स्त्री० ) एका यटिरिव, उपमि० ।

कुलों या मोतियोंकी सबसे लड़ी ।

एकयोगि ( सं० त्रि० ) एका समीचीनार्तिरंथ,

बहुव्री० । १ एकजाति, हमकीम । २ एक खानमें

सत्य, जो एक ही जगहमें पैदा हो ।

एकरंग ( त्रि० वि० ) १ तुल्य, बराबर । २ निरुद्ध,

दूसरी बात न रचनेवाला ।

एकरज ( सं० पु० ) एको सुखो रजः रचनद्रव्यम्,

कर्मधा० । सुद्राज । चक्रवर्त्त देवी ।

एकरदन, चक्रवर्त्त देवी ।

एकरन्ध्र ( सं० पु० ) नदीघट ।

एकरस ( सं० पु० ) एकोऽन्यविषयको रसः, कर्मधा० ।

१ एकामिमाय, चक्रेला मतलब । २ एक विषयमें

चनुराग, एक बातकी चाह । ( त्रि० ) एको रसो यत ।

३ चमिमा सभाय, सभी मित्रानयाला । एकरस नाट-

कादिमें मूढारादिके चनमूर्त फौर एकमात्र रस

पक्ष और यन्त्राव्य रस पक्षीमूत रहता है ।

एकरसिक (सं० त्रि०) एकमात्रविषयमें अशुद्ध,  
जो एक ही बातमें व्यग्र रहता हो।  
एकराज (सं० पु०) १ प्रधान राजा। २ एकोजी।  
एकोजी देखो।  
एकराट् (सं० पु०) एक-राजकुटुम्ब। गणतन्त्र व्यवस्था।  
राजशाही। १ प्रधान राजा, बड़ा बादशाह। (त्रि०)  
२ एकाकी प्रकाशमान, जो अकेले ही रोशन हो।  
एकरात्र (सं० स्त्री०) १ एकमात्र रात्रि, एक रात।  
२ उत्तम विधेय। यह एक ही रात रहता है।  
एकरात्रिक (सं० त्रि०) एकरात्रिके अर्थ पर्याप्त,  
जो एक रातके लिये काफी हो।  
एकरार (सं० पु०) १ अङ्गीकार, मंजूरी। २ वचन,  
कौन। प्रतिज्ञापत्रको एकरारनामा कहते हैं।  
एकराशि (सं० पु०) एकचामी राशि, कर्मधा०।  
१ सिपादिके मध्य एकराशि। २ किसी वस्तुका एक  
स्तूप, ढेर। ३ आधिपत्य, बढ़ती।  
एकराशिभूत (सं० त्रि०) एकत्र, एकठा।  
एकरिकथी (सं० पु०) एकस्य पितुः रिक्त्यमस्त्वस्य,  
एकरिक्त्य-इति। १ पिताकी सम्पत्तिका एक अंश  
पानेवाला, जो अपने बापकी जायदादका वारिस हो।  
२ तुल्यधनी, बराबरका दीनान्तमन्द।  
एकरूप (सं० त्रि०) एक समान रूप यस्य, बहुव्री०।  
१ समानरूप, समग्रह। "यद्यप्येवमुक्तं वातः शीतः" (मनकी)  
(पु०) २ एकमात्र रूप, एक सुरत, एक विषय।  
एकरूपतः (सं० अव्य०) एकमात्र रूपमें, बगैर तद्व-  
दीकी।  
एकरूपता (सं० स्त्री०) १ तुल्यता, बराबरी।  
२ सायुज्यसुक्ति।  
एकरूपी (सं० त्रि०) समान रूप रखनेवाला, समग्रह।  
एकरूप्य (सं० त्रि०) एकस्मात् रूपतः, एक-रूप्य।  
इन्द्रमुनेर्भोजनार्थं रूपः। पा ३।१८। १ एक स्थानमें आगत,  
वही जगहमें आया हुआ। २ एकमात्र रीत्यविधि।  
एकरोन (Ekron)—फिलिस्तीनका एक राजनगर।  
यह रामसेपथे ५ मील दूर फिलिस्तीया और शारोंके  
मैदानकी पृथक् करनेवाली उस भूमिके दक्षिण टांग  
भागपर अवस्थित है। कारवारी राजधे एकरोन

पथग है। समूहके समय सम्भवतः यह स्वतन्त्र  
रहा। फिलिस्तीयाके सिनायेसिमें विदित हुआ, एक-  
रोनके राजा पाछे यहसे ऐजिप्तीयासे जुदाके  
अधोन रहे। किन्तु सेना चेरिक्का जुदापर दबाव  
पड़नेसे सन्धेने स्वाधीनता पायो थी। सन् ७० ई०को  
इसमें यहूदो आकर बसे। मकान् महीके इने है।  
प्राचीनताका कोई लक्षण नहीं मिलता। आसपासकी  
भूमि सर्वदा है।  
एकर्च (सं० पु०) एका षट्क्, कर्मधा०। १ एक-  
षट्क्। (स्त्री०) २ एक षट्क्पुत्र पुत्र। (त्रि०)  
३ एक षट्क् पाराध्य।  
एकल (सं० त्रि०) एक-ना-क। एताकी, अकेला।  
एकलंगा (त्रि० पु०) कुश्तीका एक पंच। एकलंगा-  
डंड, एक प्रकारकी कसरतका नाम है।  
एकलत्तीकापारी (त्रि० स्त्री०) कुश्तीमें ऊपरसे चित  
करनेका एक पंच।  
एकलव्य (सं० पु०) एका बहुनिर्घृष्ट्या शुद्धलक्षि-  
त्वेन द्विधा यस्य। निपादराज हिरण्यधनुके पुत्र।  
हरिवंशके मतसे इनके पिताका नाम नृतदेव था।  
किन्तु निपाद द्वारा प्रतिपादित होनेसे यह निपादके  
सुत्र-संघे परिचित रहे। अभाधारण शुद्धमति देखा  
एकलव्य अपनी कौर्त्ति स्थापनकर गये है। महाभारतमें  
लिखते, कि एकलव्य अश्वमेधाकी द्रोणाचार्यके पास  
पहुँचे थे। किन्तु द्रोणाचार्यने उन्हें निपादका सुत्र समझ  
गिया न बताया। फिर एकलव्यने किसी चरित्रमें  
जा द्रोणाचार्यको एक काष्ठमय प्रतिमूर्ति प्रस्तुत की  
थी। यह अनन्धमनसे उसकी चाराधना कर योगके  
बल अश्वमेधा करने लगे। योगबल अथवा शुद्ध-  
मतिसे वाचस्पत्योगमें एकलव्यको समुद्रमत्ता उत्पन्न  
हुई। कोरव और पाण्डव अपने शुद्ध द्रोणके साथ  
उसी वनमें खूबदा मारने गये थे। उनका एक कुत्ता  
हठात् एकलव्यका मलिन देह, लक्ष्मिन् और कटा-  
पाय देख भूँकने लगा। एकलव्यने प्रति समुद्रका  
सम कुत्तेके मुँहमें मात मण्डभेदी वाच मार्ये। यह  
शरपूर्व वदन लिये पाण्डवोंके निश्चय का पड़ा।  
कोर वाचपेवकारीकी भुदयो प्रमदा करने लगे और

उन्नीं चपेला हमको गिनाका कतुर्घर्ष देण सजित  
 दूध। फिर टूटने-टूटने निकट पहुँच उन्नीं एक-  
 लव्यमें परिचय पूछा गा। उन्नीं कहा—मैं हिरण्य-  
 धनुका पुत्र और द्रोणाचार्यका मित्र हूँ। कौरवों  
 और पाण्डवोंमें क्याममय झोट थापातेसे सब मत्ता  
 दिया। फिर निरन्तरमें मिन चतुर्गुने द्रोणाचार्यसे  
 कहा—चापने सुमि चपना सबसे चहुँदा मित्र बसाया  
 गा; किन्तु निपादकुमार ऐसे कौन निकले? द्रोण यह  
 प्रश्न चपकाल और चतुर्गुनी से एकलव्यके निकट  
 गये। एकलव्य भी निरतिग्रह भक्ति-महत्कारने उनका  
 चर्चणादि सम्पादन कर बोली—मैं चापका मित्र हूँ।  
 गुरुने उत्तर दिया—यदि तुम प्रकृत रूपमें हमारे  
 मित्र हो, तो हमारे दक्षिण दे छागो। एकलव्यने  
 कहा—गुरी! वतनारथ क्या दक्षिण दूँ, कोई भी  
 वस्तु चटये नहीं। एकलव्यकी यह बात सुन द्रोणा-  
 चार्यने कहा—यदि तुम दक्षिण देना चावग्रक  
 समझो, तो चपने दक्षिण हस्तका चहुँद उतार दो।  
 एकलव्यने गुरुकी ऐसी आज्ञा पर भी चविचलित  
 बिना हमी-पुगी चपना चहुँद काट दिया गा।  
 उसमें उनका वागप्रयोग एकद्वारकी डी न रुका सही,  
 किन्तु वह लज्जितता लाते रह्यो। (भाष. भा. ११५०)

एकला (सिं० वि०) एकाकी, अकेला।

एकलङ्ग (सं० क्री०) एकं निद्रं यत्, बहुव्री०।  
 १ निद्रिके भाषणका स्थान। चाँच कोसके बीच जहाँ  
 चप्य निद्र नहीं रहता, उसे ही सब कोई एकलङ्ग  
 मानता है। ऐसा स्थान अनिग्रह सिद्धिप्रद है।  
 (पु०) एकं निद्रं पुंस्त्वादि यस्य। २ एकलङ्गक  
 शब्द, अजहनिङ्ग। अजहनिङ्गक शब्दका विशेषण  
 बनने भी इसका भिन्न नहीं बदलता। एकं विद्वज्ज-  
 नेतृत्वं विद्वं यस्य। ३ कुबेर। अविद्वि ३मी।

४ मेवाड़वासे राजपूतोंके प्रधान उपाध देव। सदय-  
 पुर राजधानीमें ४ कोस उत्तर गिरिपथमें एकलङ्ग  
 देवका मन्दिर बना है। चारो पार्श्वपर गजनागों  
 निरतिग्रह है। उनमें चमक सुनिमेष निर्भर चविराम  
 गतिमें प्रकाशित है। इस गिरिमाणाके सकल सुख  
 एकलङ्ग देवके नामपर उत्पन्नोक्त है। इनका

मन्दिर माधारण शिवके मन्दिर-जैसा है। निद्रतत्त्व  
 सेत सरसर पथरमें चमकत है। मन्दिरका चप्यत्तर  
 भाग स्तम्भके समूहमें मोमसाग है। मध्यमें चंदा-  
 रूपी महादेवकी मूर्ति है। बड़ी एकलङ्ग नामपर  
 बहु कानसे विख्यात है। निद्रके मध्यस्थ सुदृढ़  
 मन्त्रोंकी मूर्ति है। एकलङ्ग देववासे मन्दिरके  
 प्राङ्मुखी चारो ओर चप्यस्थ देवताओंके भी मन्दिर  
 बने हैं।

एकनिद्रभाक् (सं० त्रि०) एक सातोय केसर विमिष्ट  
 पुण्ययुक्त, जो एक ही जैमे फल रमता हो।

एकनु (सं० पु०) एकं सुनाति, लू-जिप्। अवि-  
 विगेष।

एककी (सिं० पु०) तासका एका।

एकमोता (सिं० वि०) एकाकी, अकेला। यह  
 शब्द 'पुत्र' का विशेषण है।

एकवक्त्र (सं० पु०) एकं भोवत्वेन मुख्यतमं  
 वक्त्रं यस्य, बहुव्री०। १ असुर विगेष। (क्री०)  
 २ एक सुषी वक्त्रात्।

एकवचन (सं० क्री०) एकनेत्रकं उच्यते चनेन,  
 वच् कार्यं स्मृतं। व्याकरणोक्त एकावचनक विभक्ति,  
 वाक्यिक। ए, तम्, त्वा, ते, त्वि, त्वत्, चोर हि सात  
 विभक्ति एकवचन भाषक है। हिन्दीमें भी जिनमें एक  
 पदार्थका बोध होता, वही एक वचन है। किन्तु  
 चनेक स्थानोंपर एकवचन और बहुवचनके रूपमें भेद  
 नहीं पड़ता, जैसे—एक मनुष्य आया, दोस मनुष्य  
 आये। प्रायः हिन्दीके विद्वान संस्कृत शब्द न  
 बिगाड़ एकवचन और बहुवचन दोनोंमें समान  
 रूपमें रचते हैं।

एकवत् (सं० त्रि०) एकोऽप्यास्ति, एक-मनुष्य, मध्य  
 कः। १ एकसंख्याविमिष्ट, अकेलो पद रचनेवाला।  
 (अव्य०) एकस्येव, एक-वति। २ एकके न्याय,  
 एककी तरह।

एकवद्भाव (सं० पु०) एकेन तुल्यो भावः भवन्मु,  
 इ-तत्। शब्दमिष्ट एकवचनाभावरूप कार्य, बहुव्री०का  
 मन्त्रमुत्पा।

एकवचं (सं० त्रि०) एको वच् यत्, बहुव्री०।

१ एकमात्रवर्णविशिष्ट, सिर्फ एक वर्ण रखनेवाला।  
 २ ब्राह्मणादि जातिभेद शून्य, जो ब्राह्मणादि जातिका भेद रखता न हो। यह कसिकात्रकी श्रेष्ठ भवस्याका बोधक है। १ एकस्वरूप, समगुण। (पु०) एक एव वर्णः। ४ मुक्तादिके मध्य एक वर्ण, एक रंग।  
 ५ अष्टवर्ण, बहिरा रंग। ६ ब्राह्मणादिके मध्य एक जाति। ७ एक अक्षर। ८ अष्ट जाति।  
 ९ वीज-गणितोक्त तुल्य वर्णविशिष्ट सजातीय द्रव्य विशेष।  
 एकवर्णवत् (मं० प्रथ०) एक वर्णके न्याय, एक वर्णके सुताधिक।  
 एकवर्णसमीकरण (मं० स्त्री०) एको वर्णः तुल्यरूपो समी क्रियते अनेन, छन्दुट्। बीजगणितोक्त बीज चतुष्टयके मध्यका एक बीज।  
 एकवर्णिक (मं० त्रि०) एकः वर्णं गच्छति, एकवर्ण-ठक्। असाधारण, एक ही रंग या कौमवाला।  
 एकवर्णी (मं० स्त्री०) एकमेव शब्द वर्णयतीति, एकवर्ण-अच्, गौरादित्वात् ङीप्। वाद्यविशेष, कर्ताल।  
 एकवर्णिका (मं० स्त्री०) एको वर्णो यस्याः, एक वर्ण-वान्-टाप्, अत इत्त्वञ्। एक वत्सर वयसकी बहिरा।  
 एकवसन (मं० त्रि०) एकं वसनं यस्य, बहुव्री०।  
 १ उत्तरीय-वस्त्र शून्य, सिर्फ एक धोती रखनेवाला। (स्त्री०) एकश्च तत् वसनञ्चेति, कर्मधा०। २ केवल मात्र परिधेय वस्त्र, सिर्फ पहननेका कपड़ा। ३ एक वस्त्र, कौट्ट कपड़ा। ४ एक जातीय वस्त्र, किसी कृपाका कपड़ा।  
 एकवस्त्र, एकरसन ईधो।  
 एकवस्त्रता (मं० स्त्री०) एक मात्र वस्त्र रखनेकी स्थिति, जिस हालत में एक ही कपड़ा रहै।  
 एकवस्त्रसंवीत (मं० त्रि०) एक वस्त्र धारण किये हुआ, जो सिर्फ एक ही कपड़ा पहने हो।  
 एकवस्त्राद्यसंवीत (मं० त्रि०) चाधा वस्त्र पहने हुआ, जो निरूप योगात् पहने हो।  
 एकवाज (मं० स्त्री०) काकवन्ध्या, एक ही बधा देनेवाकी घोरत।

एकवाक्य (मं० स्त्री०) एकं एकाद्यै वाक्यम्, कर्मधा०।  
 १ एक पर्यबोधक वाक्य, जिस बातसे दूसरा मानो न निकले। २ अविसम्बादी वाक्य, रायकी बात। (त्रि०) एकं अविसम्बादि वाक्यं यस्य, बहुव्री०।  
 ३ एकमतानुसारो वाक्यमुक्त, एक-जैसी बात कहने-वाला।  
 एकवाक्यता (मं० स्त्री०) एकवाक्य-तम्-टाप्। वाक्यका ऐश्व, बातका मेम।  
 एकवाद (मं० पु०) एकोभिन्नस्वरो वादः वाद्यम्, कर्मधा०। डिण्डिम नामक वाद्य विशेष, बिना-किष्का ठोक।  
 एकवाद्य (मं० स्त्री०) एकमभिन्नस्वरं वाद्यम्। टिण्डिम, जिसो किष्का ठोक।  
 एकवाद्या (मं० स्त्री०) चुड़ैल, डारन।  
 एकवार (मं० प्रथ०) एकवारगो ही, एकाएक, फौरन्।  
 एकवाम (मं० त्रि०) एकमात्र दृष्टयुक्त, जिसके एक ही सकान् रहै।  
 एकवामम् (मं० पु०) एकं वामोऽक्ष, बहुव्री०।  
 एकमात्र वसनयुक्त, जिसके एक ही पोशाक रहै।  
 एकविंश (मं० त्रि०) एकविंशतेः पूरकम्, एक विंशन्-छट्। मन्त्र १८८। १ एव विंशतिका पूरक, इकोनकी भरनेवाला। २ इकोनशः। ३ एकविंश-स्त्रीम सम्प्रत्यये। (पु०) ४ एकविंशसाम। ५ इह छत्र स्त्रीममें एक स्त्रीम।  
 एकविंशक (मं० त्रि०) इकोनशः, जो इकोन रखता हो।  
 एकविंशत्, एकविंशति ईधो।  
 एकविंशति (मं० स्त्री०) एतेन पञ्चिका विंशतिः, मध्यपदनी०। इकोन, बीस और एकको मंथ्या, २१।  
 एकविंशतिगुणम् (मं० पु०) कृत्तरीय नामक गुणन विशेष। चित्रक, त्रिकना, त्रिकुट, भोरा, कामा भोरा, वन, मेम्बर, पतोल, कुठ, चण्ड, इना यषी, ययचार, विड्ड, अजनायन, अजमाद, मोषा तथा देवदाह बराबर बराबर में सबके सम भाग गुणन हाजे और घीमें छोट मोमी बनाये। यह बोधक प्रातः कास भोजनके समय पाना चाहिये।

यष्टिगतिताम ( मं० ति० ) एक-विंशति तमट् ।

[illegible]

यह विंगतिधा (नं० अष्ट०) एक विंगति प्रका-  
शते धा। अन्तर्गत विंगति धा। वा ३२०३। एक विंगति  
प्रकाश, इष्टीय गन्ता।

एकविंशत् ( मं० ति० ) एक विंशत्योम-सम्ब-  
न्धीय ।

एकविंशत्याम (मं० पु०) एकविंशत्यामी श्रीमय,  
कर्मधा०। एकविंशति मन्त्र परिमित भागवेदीनां  
प्रवृत्तादि नामस्य एक स्तव।

एकविध (मं० त्रि०) एक विधा प्रकारोऽस्य, बहु-  
त्री० ज्ञातः । एकप्रकार, साधारण, सामूली ।

एकविमोचन (मं० ति०) एकं विमोचनं चतुर्थं च,  
 ब्रह्मी० । १ काना । (पु०) २ जनपद विमोच, एक  
 वसती । ३ कुपेर । ४ वि० १६० । ५ काक । (स्त्री०)  
 ५ एक पाप ।

एकविधये ( भ० त्रि० ) एको विषयोऽस्यास्तोत्रि,  
द्वि। १ एकमात्र विषयस्य चासक्त, जो सिर्फ एक ही  
बात पकड़े हो। २ एकमात्र विषयविशिष्ट, जो सिर्फ  
एक ही बातका हो।

एककोषपत्रिक (मं० वि०) चतुर्दशपत्रिक समय केवल एक पत्र द्वेनेवाला, जो कोषम फूटते पत्र निक पत्र ही पत्ती देता हो। चंगरेजीमें इसे 'मनोकटि-जिह्व' (Mono-cotyledon) कहते हैं।

पञ्चवीर ( सं० पु० ) १ हथ विधेय, एक पेड़। इसका सर्व्वभूत पर्याय महावीर, सख्खीर, चीर सखीरक है। यह मदकारक, पतिशय तथा एवं कटु होता चीर बिदना, बाग, खटिपूतानियत बातव्याधि तथा पचा-पातको नाश करता है। ( राजनिय )

पक्षधर ( म० जी० ) वसुधाका कटो, ककुपी ककड़ी ।  
यह तिळ, बति सवा सय मासघ्न होतों और पचाघात  
तथा घुसकटो मसको दूर करतों है । ( देवद विरच्य )

एकपीराजस्य ( मं० पु० ) तत्ताविधिः । दशभिः पीरा-  
चार्यैः चाराधा देवताया रक्षस्य सप्त है ।

एकहृत् ( मं० पु० ) एकी हृत्पद्वत् बहुमी० । १ क्वाग-  
निमित्त, एक जगत् । चार कोमके बीच जहाँ दूसरा

हृदय गर्हो रहता, सब स्वामको मय कोरे एकहृद  
काहता है। २ एकमात्र हृदय, रहेमा पंडु।

एकहृत् (सं० स्त्री०) एकपक्ष वर्तते, ह्रत कर्तरि  
 जिप् तुगागमः । १ एकद्वय वर्तमान, एहमेवा दात ।  
 एकधा वर्तते वत्, पाधारे जिप् । २ सार्गलोक । एक  
 भेद वर्तते, भावे जिप् । १ एकद्वय पायतन, एक-  
 लोका प्रमाव ।

एकहृद् ( सं० पु० ) सुश्रुतोक्त कण्ठगत सुषरोर  
विशेष, मसिकी एक बीमारी । कण्ठके मध्य गोला-  
कार, उच्चत एवं दाह तथा कण्ठ विभिन्न लो-  
जोय-पठता, उसका नाम एकहृद् पड़ता है । यह  
कठिन-भ्रूय, मुख और पचाकी होता है । इस  
रोगमें प्रथमतः किसी उपायसे रक्त मोचय कराना  
चाहिये । फिर दाह हरिद्रा, नीम तथा गान-  
धुसकी काल और रज्जुय पाध पाध गोला पाध  
भर जलमें पका पाधपाव रङ्गनेमें लायकी सेवन कराते  
हैं । पचवा कुटकी, भनोम, देवदार, निर्धियी, मोवा  
तथा रज्जुय बार-बार पागे पाधधेर गोमूत्रमें एका  
पाध पाव रङ्गनेमें पिलाते हैं । ( स्तो० ) २ एकरायि ।  
एकहृप ( सं० पु० ) एकोद्विंशति ह्यः, कर्मधा० ।  
एक हृप, भनोषा खेल । ( त्रि० ) एकी हृपो यत्न,  
यद्ग्री० । २ एकमात्र हृप रचनेवाला, जिसके एक  
ही खेल रहै ।

एकवेदि, बहुरैनी दिखी ।

एकविंशो ( स० बी० ) एकौभुता संस्काराभावेन  
जटावत् संज्ञितायां सेचोः कर्मधा० । १ प्रोषित-  
भर्तृकायां सेचोः, विद्योन्निनीको जटः । २ प्रोषित-  
भर्तृका, जपनां व्याविन्दुं शुंस्फुरन्तिं दण्डनासी  
शोरतः ।

एकदेश (च० स्त्री०) एकैवापिष्ठितं देशं गृह्यते,  
कर्मधा० । एकमात्र प्राणीके रक्षितका गृह, त्रिग  
घरमें एकने लपटा पादमी न रहें ।

एकव्यसायी ( सं० पु० ) एकमात्र व्यसाय करमे.  
पाला पदप. को मध्यम मर्हो रोजगार करता हो ।

एकत्रात्य (मं० पु०) यथान वा मुत्या प्रात्य ।

एकाः ( सं० द्यः ) एक-एक, चक्षुः ।

एकशत (सं० श्लो०) १ एक सौ एक, १०१। (त्रि०)  
२ एकशत संख्यायुक्त, एक सौ एकवा।

एकशतक (सं० त्रि०) एकशत परिमाणमस्य, एकशत  
कन्। १ एकशत परिमाणविशिष्ट, सौ रखनेवाला।  
(श्लो०) स्वार्थे कन्। २ एकशत, सौ, १००।

एकशततम (सं० त्रि०) एकाधिकशत संख्याविशिष्ट,  
एक सौ एक रखनेवाला।

एकशतधा (सं० द्वा०) एकशत-धा। १ एकशत-  
प्रकार, एक सौ एक तरहसे। २ एक सौ एक गुणा।

एकशफ (सं० पु०-श्लो०) एकः शफः खुरो यस्य,  
बहुव्री०। १ शफ, घोड़ा। २-एक खुर जन्तुमात्र,  
फटे खुर न रखनेवाला कोई जानवर। खर, शफ,  
शफतर, गौर, गरम और चमरीको एकशफ कहते हैं।

(भाववचन)

एकशफधीर (सं० श्लो०) अहिभागखुर पशुका दुग्ध,  
फटे खुर न रखनेवाले जानवरका दूध। यह लघु,  
लघु, घातकर, घात, ईप्सु स्वभाव और जड़ताकर होता  
है। (शामट्टीका ईमादि)

एकशरण (सं० श्लो०) एकमात्र आश्रय, वकिली  
पनाह। यह शब्द प्रधानतः देवताके लिये प्रयुक्त  
होता है।

एकशरीर (सं० त्रि०) एकमात्र शरीर वा रक्तने  
सम्बन्ध रखनेवाला, जो उसी खूनका हो।

एकशरीरान्वय (सं० पु०) सगोत्रता, सपिण्डता,  
कुरावत, बिरादरी।

एकशरीरारम्भ (सं० पु०) पिता और माताके संयोगसे  
सगोत्रताका प्रारम्भ, मा मापके जिससे कुरावतका  
शुरू।

एकशरीराशयव (सं० पु०) सगोत्र, सम्बन्धी, कुरावते,  
रिश्तेदार।

एकशरीराशयवत् (सं० श्लो०) सगोत्र सम्बन्ध, कुरा-  
वती रिश्ता।

एकशास्त्र (सं० पु०) एका शास्त्रा यस्य, बहुव्री० कृष्णः।  
१ वेदकी तुल्य शास्त्रावाले ब्राह्मण। २ एक शास्त्र-  
विशिष्ट हर्षादि, एक शासका पेड़ वगैरह।

एकशाल (सं० पु०) शामविशेष, एक गाँव। भरत

राजशब्दसे चयोध्या पाने समय इस घामने पहुंचे थे।  
यह स्थान स्वर्णमती नदी किनारे अवस्थित है।

“एकशाले स्वर्णमती” (विनये शीतली) नदीम्। (शामाव १:०१११६)

एकशिला (सं० श्लो०) घाटा, निरविशो।

एकशितपाद (सं० पु०) एकः शितिः कृष्णः पादो-  
ऽस्य, बहुव्री०। अश्वविशेष, एक घोड़ा। इसका  
एक पैर सफेद रहता है। इसे चाममेव यज्ञमें ब्रह्म  
देवताके सहोदरसे चढ़ाते हैं।

एकशीर्ष (सं० त्रि०) एक ही स्थानको चोर मुख  
सुमाये हुआ, जो उसी जगहको तर्फ मुँह करे हो।

एकशीलसमाचार (सं० त्रि०) एक ही प्रकारसे  
जीवन चरितवाहित करनेवाला, जो वही चाम-चमन  
रखता हो।

एकशङ्ख (सं० त्रि०) एकमात्र कोशयुक्त, जिसमें एक  
शङ्ख न रखनेवाला।

एकशङ्ख (सं० पु०) एकं शङ्खं यस्य, बहुव्री०। १ विष्णु।  
स्वायम्भूव मन्वन्तरमें अकासप्रलय पानेमें विष्णुने  
एकशङ्खविशिष्ट मत्स्यका रूप धारण किया था।  
(अभिषेकपर्व ११५०) २ मण्डक, गेंडा। ३ एक शङ्खका  
पद, जिस जानवरके एक ही सींग रहे। ४ पिदगण  
विशेष।

एकशङ्खा (सं० श्लो०) पिदगणको एक कन्या। यह  
अभिषेकसे उत्पन्न हुई थीं।

एकशङ्खी—श्रीरामका एक चापिकुमार। काम्ययज्ञ  
कीर्त्य और हरिचौके गर्भमें अश्वशङ्खकी तरह इनका  
भी जन्म हुआ था। मरुतकवर एक शङ्ख रहनेमें यह  
नाम पड़ा। काम्यपराजको कन्यासे एकशङ्खका  
विवाह हुआ। शेषिष्ठयावदान कल्पलताके मतमें  
यही बुद्ध थे। (जन्मोत्पत्ति)

एकशेय (सं० पु०) एकः शेषोऽश्विष्ठो यज्ञ, बहुव्री०।  
१ इन्द्रसमाप्त विशेष। इस समागमें दो या दो से  
अधिक शब्दोंमें केवल एक रहता और द्विचयन वा  
बहुवचन जगता है, जैसे—माता च पिता च विनयो।  
एकः शेषः मूलमस्य। २ एक मूलवृक्ष हर्षविशेष,  
जिस पेड़के एक ही लड़ रहे।

एकशैल (सं० श्लो०) बरह्मलका मासीन नाम।

एकश्रुत (सं० ति०) एकवार श्रवण किया हुआ, जो एक ही मरतवा सुना गया हो।  
 एकश्रुतवार (सं० ति०) एकवार श्रवण किया हुआ विषय धरत रचनेवाला, जो एक मरतवा सुनी बात झूलता न हो।  
 एकश्रुतधरत (सं० लो०) एकवार श्रवण किया हुआ विषय धरत रचनेको स्थिति, जिस दासतमें एक ही मरतवा सुनी बात याद रखे।  
 एकश्रुति (सं० ति०) एका श्रुतिर्यस्य, बहुव्री०। १ उदास, अनुदास और सरित—विषिध सर मित्यित, जो जंघी, मोघी और बराबरको पावाजुमें हो। (सो०) २ एकमात्र सरकी श्रुति। ३ एक वेद। ४ एककर्णविमिट, जिसके एक ही कान रहे।  
 एकश्रुति एकमात्र पाद्या पालन करनेवाला, जो एक ही वृक्ष मानता हो।  
 एकघट (सं० ति०) एकघट्याः पूरणम्, एकघटि-कट्। एकघटि संख्या पूरण करनेवाला, एकघट्या।  
 एकघटि (सं० लो०) एकेन अधिका घटिः, मध्य-पदलो०। साठवी चषिचा एक संख्या अधिक्, एकघट, ६१।  
 एकघटितम, रचन देखो।  
 एकघट (हिं० पु०) एकघटि, दह दहार्ध और एक एकार्ध, ६१।  
 एकगतावाद (सं० पु०) वादविशेष, एक दलील। इसमें सत्ता ही मुख्य मार्गी गयी है। चसम् कुछ भी नहीं। युरोपमें परमेशीजने यह मत फैलाया था।  
 एकगत (सं० ति०) एकगतियुक्, एकहजारवा।  
 एकगतति (सं० लो०) एकाधिका गततिः। सत्तर और एक, एकहत्तर, ७१।  
 एकगततितम, रचन देखो।  
 एकगम (सं० पु०) एका गमा यस्य। १ जगदीश्वर। (ति०) २ एकगमाविमिट, एक मजलिमबाना।  
 एकगर (हिं० ति०) १ एकाको, साधमें दूसरा न रखनेवाला। २ एकहरा, जो दोहरा न हो। (सं० वि०) ३ सम्पूर्ण, पूरा।  
 एकगर्ग (सं० ति०) एकधित् विषये सर्गो

निययो यस्य। एकाघचित, एक ही बातपर मुक्ता हुआ।  
 एकघट्ट (सं० ति०) एकमहत् एकाधिक महत्त्वं वा परिमाणमय। १ एक महत्त्वं परिमाणविमिट, हजारवा। (लो०) २ एक हजार, १०००। ३ एक हजार एक, १००१।  
 एकसा (सं० वि०) १ सुख, धरावर। २ गम, हमवार, जो नीचा-ऊँचा न हो।  
 एकसाधित (सं० ति०) एकमात्र साची रखनेवाला, चलेलिका देखा हुआ, जो दूसरा गयाद रखता न हो।  
 एकसायं (सं० ध्या०) साय-साय, मित्र-सुनकर।  
 एकस्य (सं० पु०) एकं सुखं यस्य, बहुव्री०। हम-साय, हमरु। यह एक सुखी बनाया जाता है।  
 एकस्यु (सं० ति०) एकोऽद्वितीयः सुनुर्यस्य, बहुव्री०। १ एकमात्र पुत्र रखनेवाला, जिसके एक ही सहका रहे। (पु०) कर्मधा०। २ एकमात्र पुत्र, एकसोता बीटा।  
 एकस्रोम (सं० पु०) सोमयज्ञविशेष। इसमें एक ही सोम होता है।  
 एकस्य (सं० ति०) एकस्मिन् तिष्ठति, स्था-क्। एकस्यानमें स्थित, दकडा, साध की वड़ा हुआ।  
 एकस्याम (सं० लो०) एकमात्र स्याम, बही लगव।  
 एकहंस (सं० लो०) एकः श्रेष्ठो हंसो यत, बहुव्री०। १ तीर्थविशेष, एक सरोवर।  
 "एकहंसो यतः कदा शिवसुखं च ज्ञेयम्" (भारत, अम ६१ च०)  
 (पु०) २ जोबाबा, दह। ३ एक हंस।  
 एकहत्तर (हिं० वि०) एकगतति, सत्तर और एक, ७१।  
 एकहत्ती (हिं० लो०) मालपत्रकी एक कघरत। एक हाथको छनटा कमरपर रखते और दूसरे हाथमें एकद मालपत्रपर चढ़ते हैं।  
 एकहत्ती हूट (हिं० लो०) मासपत्रकी एक कघरत। इसमें एक ही हाथकी मापसे वृद्धान भरते हैं।  
 एकहत्ती पोटकी वृद्धान (हिं० लो०) मासपत्रकी एक कघरत। इसमें पोटके गड़ारे चढ़ते हैं।  
 एकहत्ती इल्लूक (हिं० पु०) कुम्होका एक पंच।

एक पक्षवान् दूसरेकी गर्दन हाथसे सपेट दूसरे हाथसे तान खीता और टांग लगा चित फेंक देता है।

एकहरा (हिं० वि०) एकमात्र स्तरयुक्त, एकपरता, जो दोहरा न हो।

एकहरी (हिं० स्त्री०) कुम्भीका एक पेश। इसमें एक पक्षवान् दूसरेकी हाथ पकड़ अपनी दक्षिण और भटकारता, फिर दोनों हाथोंसे रानकी खोंच पटक मारता है।

एकहरी (सं० स्त्री०) पाशकी शोभन वस्त्राका एक भेद, छोड़ेकी एक लगाम।

एकहाथ (सं० पु०) नृत्यविशेष, किसी किराका नाच।

एकहायन (सं० पु०) एको हायनो वयोमानं यत्न, बहुव्री०। एक वत्सरका वत्स, एक सालका बछड़ा।

(स्त्री०) २ एक वत्सरका समय, एक सालका घरवा।

(त्रि०) एक वत्सरवाला, एक-साला।

एकहायनी (सं० स्त्री०) एकहायन-डीप्। हलन्त-मात्रा। या ३।१।२०। १ एकवर्षीय गाम्भी, एक सालकी बहिया। २ छद्मिद्विगेष, एक पेड़। जो पेड़ एक ही वर्षमें छपज और फल-फूल भरता या मर जाता, वह एकहायनी कहाता है।

एकहृदय (सं० त्रि०) एकमभिधं हृदयं यस्य, बहुव्री०। १ अभिधहृदय, एकदिल। २ एकाधचित्त, दिलकी एक ही जगहपर लगाये हुआ।

एका (सं० स्त्री०) एक-टाप्। १ दुर्गा। जैसे स्फटिक विविध वर्णकी प्रभा प्राप्त होनेसे विविध समझ पड़ता, वैसे ही एकमात्र देवीका रूप भी गुणके वश अनेक प्रकार भिन्नकता है। (देवीउपाच ३१ १०) २ अक्षितीया, चंगोड़ी। ३ एकाकिनी, बकेली।

(हिं० पु०) ४ ऐक्य, मिल।

एकई (हिं० स्त्री०) एकल, बहदत, एककी जगह या हाजत। २ नियमित मान विशेष, कोई आप-ओख—जैसे रुपया, पैसा, खैर, लट्ठाक, गज, छुट इत्यादि। मचानके प्रथम स्थान या पहली भी एकई कहते हैं।

एकाएक (हिं० त्रि० वि०) एककाल, अतिप्रसूति। एकाएकी, एकाएक देखे।

एकांग (सं० पु०) एक एव अंगः, कर्मधा०। एक भाग, एक हिस्सा।

एकाकार (सं० त्रि०) एकसुख पाकारो यस्य, बहुव्री०। १ समान पाकारविशिष्ट, समस्त, वही यत्न रखनेवाला। २ मिश्रित, मिना हुआ।

एकाकी (सं० त्रि०) एक-साक्षिनश्च। एकतन्त्रिनावादे। या ३।१।२१। असहाय, तनहा, चकेला।

एकाक्ष (सं० पु०) एकमक्षि यस्य, एक-पक्षि-वत्।

एकरी वत्सवत्सः या ३।१।२२। १ काक, कौवा। यमगमनके बाद वित्रकृत पत्रपर रहने समय एकदा राम सीताके कान्छे में सेटे थे। उसी समय किसी कामुक काकने सीताके कुवदेगमें तोख लग मार दिया। रामने दुष्ट काकपर ऐसे पावरबने क्रुद्ध हो मर्यादा फेंका था। काकने प्राणके भयसे जाना स्थानोंपर धनैक देवताओंसे पाश्र्व भागा।

किन्तु अपने प्राणगायकी पायदाहि कोई उसे पाश्र्व दे न सका। फिर काकने विधाताका पाश्र्व टूटा था। विधाताने स्वयं पाश्र्व देनेमें असमर्थ हो उसे रामके गरपमें ही जानीकी मियाया। उसी उपदेगमें अनुसार काक प्राणके भयसे विषय चवत्याने रामके निकट ला पड़ा। सीताने दुब-साथे दगनमें खड़ा रामसे उसका जीवन बचानेकी चतुरोष किया।

रामने भी कदवाहि पादों ही एक चतु मात्र वाच-भीष्य बना उसे छोड़ दिया। २ मित्र। ३ एक दानव।

(त्रि०) ४ एकनेत्रविशिष्ट, काना। ५ सुन्दरनेत्रविशिष्ट, समदा बाँध रखनेवाला। ६ एकमात्र पक्षाधिविष्ट, जो एक ही पुरा या मोखड्डा रखता हो।

एकाधिविज्ञान (सं० त्रि०) कुपेर।

एकाक्षर (सं० स्त्री०) एकमक्षितोयमचरन्, कर्मधा०। १ एक स्वरवर्च। २ पाँकार। (त्रि०) एकमक्षरं यस्य, बहुव्री०। ३ एक पक्षरविशिष्ट, जो एक ही दर्ज रखता हो।

एकाक्षरकोष (सं० पु०) अभिधानविशेष, कोषका एक ग्रन्थ। इसमें रचयिता पुरपोषण देते हैं।

भकारादि क्रमसे एक-एक अक्षरको बहूदृक् अक्षर-बान लिखा गया है।



एकादशी (सं० ति०) एक पक्षमासा, जो एक ही पक्ष रचता हो।

एकादशीमास (सं० पु०) एकमास पक्षमासा सम्पादन, संयोजन, हस्त, मघा।

एकाध (सं० ति०) एक पक्ष पुरोमत प्रेयमन्त्र, बह्वी०। १ पक्षमन्त्रित, एक ही बातपर लगा हुआ। २ पक्षानुष्ठान, जो पक्षमासा न हो। ३ प्रसिद्ध, मशहूर। ४ एकमास विद्युत्सुप्त, जो एक ही मोड़ रचता हो। (पु०) ४ विभक्त प्रतिष्ठितिके विस्तृत बाहुला सम्पूर्ण भाग।

एकाधपिता (सं० ति०) एकाध एकविधयासक्त चित्त दण्ड, बह्वी०। एकमासा, एक ही बातपर दिन लगाये हुआ।

एकाधतः (सं० पञ्च०) पवित्रचित्तसे, पूरे तोर पर दिन लगाकर।

एकाधता (सं० स्त्री०) एकाधस्य भावः, एकाध-तन्-टाप्। १ एक विषयमें पासनि, एक ही बातपर झुकाव। २ त्रिगुणात्मक चित्तमें सर्वगुणका सट्टेक और रक्तः एवं तमोगुणका विरोध। तन्मादिका समाप्त पक्षनेपर विषयान्तरके चक्षुस्स्वरूप संसर्ग के मुख्य चित्तका धर्मविशेष एकाधता कहाता है।

एकाधत्व (सं० स्त्री०) एकाध-त्वं। मय भारण-वी। १ भाग। २ एकाधता, दिसदिष्टी।

एकाधदृष्टि (सं० ति०) एकप्रियेय चक्षुः पुरोमते दृष्टिरस्य, बह्वी०। १ एकमास विषयपर दृष्टि लाभनेवाला, जो एक ही चीज मजूर बढ़ाये हो। (स्त्री०) कर्मधा०। २ एक विषयमें दृष्टि, एक ही चीजपर पक्षनेवाली मजूर।

एकाधमताः (सं० ति०) एकाध एकविधयासक्त मता मन्त्र, बह्वी०। १ एकाधचित्त, दिनको एक ही चीज पर लगाये हुआ। (स्त्री०) २ मन्त्रचित्त, संज्ञा हुआ ध्यान।

एकाध (सं० ति०) एक पक्ष मन्त्र, बह्वी०। एकाध, एक ही चीज पर लगा हुआ। इसका संस्कृत पदार्थ एकता, समानता, एकाध, एकसं, एकाध और एकाधमता है।

एकाधो (सं० स्त्री०) वाचविशेष, एक तोर। इससे एक ही चीज भरता है। महाभारतमें निष्ठा—एकमे कर्षको पक्षने कवचके साय पक्षुर्नृके भारनेकी पक्ष वाच सोया पा। किन्तु भीषण मगरमें कर्षने की घटोत्कच पर ही छोड़ दिया।

एकाध (सं० पु०) एक पक्षमेव मुख्य पक्ष-मन्त्र, बह्वी०। १ पुष्यपक्ष। (स्त्री०) २ चन्द्र, मन्दस। ३ एक पक्ष, पक्षमा पक्षो। ४ मन्त्रक, दमाग।

एकाधवात (सं० पु०) १ पक्षपथ रोग, पाथे जिष्ममें कोनेवाला लक्षण। २ पक्षका एक वातव्याधि रोग। इसमें एक कर्ष बढ़ता, पक्ष शरीर शुष्क पक्षता और पक्ष शुल रचता है। (मरुत) ३

एकाधिका (सं० स्त्री०) चन्द्रमसे वननेवाली एक वामपक्षी।

एकाधो (सं० स्त्री०) १ सुरामांसी, एक पुष्प-दार चीज। यह कट एवं कपाय लगती और भ्रम, झूठा, लज्जा, विष तथा दाहको दूर करती है। (शान्तिमन्त्र) (वि०) २ एक पक्ष-मन्त्रभीष, एक-तरफा।

एकाध (सं० पु०) एकमण्डलस्य, बह्वी०। एक हृष्यविशिट पक्ष, एक कोनिका घोड़ा। जिन घोड़ेका एक मुष्क बढ़ जाता, वह एकाध कहाता है।

एकाधत (सं० ति०) एकपक्ष, पक्षवर्ती।

एकाधता (सं० स्त्री०) एकाधमाका भाव, दुनियामें एक रुढ़ रहनेका मन्त्र।

एकाधवादी (सं० ति०) एक एवं पार्थिवि ब्रह्म शोभमन्त्र, बह्वी०। वेदान्तके मतका पक्षमात्री। वेदान्तमें ब्रह्म चरितोय माना गया है।

एकाध (सं० पु०) एकोऽभिष पार्था, कर्मधा०। १ चरितोय पार्था, एक रुढ़। (ति०) २ पार्थिव-हृदय, एकदिन। ३ एकदय, सममल। ४ महाय-मुख, मजूर।

एकाध (सं० ति०) पक्ष पार्थिका दग, मन्त्रपद-स्त्री०। १ दग्धे एक संख्या पक्षिक, स्तर, ११। २ एकाधको पूर्ण करनेवाला, मारदवा।

एकादशक (सं० वि०) एकादश परिमाणस्य ।  
१ एकादश परिमाणविशिष्ट, ग्यारहवां । २ एका-  
दश, ग्यारह, ११ ।

एकादशकृतः (सं० व्यञ्ज०) एकादशकृतवस्तुश्च ।  
संख्यायाः द्वादशगतिवत्त्वे हस्तवृत्तः । वा शाश्वतः । एकादश-  
वार, ग्यारह भरतवा ।

एकादशतम (सं० पु०) एकादश तनयो यस्य, बहुव्री० ।  
महादेव । एकादश वार भिन्न भिन्न मूर्तिके परि-  
ग्रहसे शिवको एकादशतमसु वा एकादश रुद्र कहने  
हैं । एकादश नाम यह है—चक्र, एकपात्, चन्द्रिन्द्र, पु-  
ष्पाक्षी, भवराजित, वरगन्धर्व, महेश्वर, वृषाक्षि, वि-  
श्व, हरण और ईश्वर ।

एकादशतम (सं० वि०) एकादशक, ग्यारहवां ।  
एकादशहार (सं० स्त्री०) एकादश हाराणि रत्नानि-  
प्लव्य, बहुव्री० । गरीर, जिह्वा । गरीरके मध्य दो  
चक्र, दो कर्ण, दो भ्रूमांश, मुख, ब्रह्माण्ड, नाभि,  
गुह्य और मेढ्र सब मिलाकर एकादश हिस्से होते हैं ।  
साधारणतः ब्रह्माण्ड और नाभिको छोड़ लोग नव-  
हार ही मानते हैं ।

एकादशशतिका महाप्रसारिणी तैल (सं० स्त्री०) वात  
व्याधिका एक तैल । कायार्थ समूलपत्रमात्र गन्ध-  
भञ्ज सादे १२ शरावक ; भिण्डी, गुड़ूची एवं एरण्ड-  
मूल प्रत्येक २५ शरावक ; राधा, गिरीपत्तक, देवदाह  
तथा केतकीका मूल प्रत्येक ६० शरावक से ६४०० शरा-  
वक जलमें पकाये और ६४ शरावक जैष २४नेसे छतारि ।  
काजी ६४ शरावक, दक्षिमण्ट १६ शरावक, गुह्य  
१६ शरावक, कागमांस ८ शरावक एवं जल ६४ शरा-  
वक छाल चहासे और १६ शरावक जैष २४नेपर  
छतारि । दसुरम १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक और  
पिच्छिलफल, कर्कटशुद्धी, जोषनीय द्रव्यक वा चटवर्ग,  
कायोनी, मण्डूका, चीरकाकी, कौषकी जड़, कोटी  
हलायची, कर्पूर, सुषाग, सरनकाष्ठ, कुडुम, जटामांभी,  
नखी, कण्ठागुरु, नीलोत्पल, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा,  
कटोक्ष, नागेश्वर, चूसकी जड़, गुह्यलक्ष्म, सुषारी,  
कायफल, सताकमुनी, शतमूलो, औषधामा, देवदाह,  
श्रीतचन्दन, वध, शूलज, संश्व, त्रिकारस, सुसाक,

गन्धमद्राका मूल, पुनर्वर्षा, मातुका, गन्धगटी, गन्ध-  
नाभि, टमसूल, मेनफल, प्रियद्रु, शाम्भ, केतकी, तमर-  
मूल, चम्पकान्धा, वाला, रीतुहा, रसाक्षत, मेमरका,  
सुसरा, कटफल, चमूक, श्यामाभता वा चम्पकमूल,  
कुष्ठमन्नातककी मुष्टि, त्रिफला, शुनफा, पद्मदीप्यर,  
नवद्व और त्रिकटु प्रत्येक १ पल कीहनेसे यह औषध  
बनता है । (प्रयोगसूत्र)

एकादशायाम (सं० पु०) ग्रहचक्रिके अधिकारका एक  
औषध, बटकी एक दवा । आरित मोह, पारद, गन्धक,  
ताम्ब, स्वर्णमाचिक, चम्ब, चिद्रुन, पुद्रुम, पोतुरा-  
मणि, शीप, पित्तल, विडङ्ग, त्रिफला, चिद्रु, यमानो,  
जीरक, कण्ठागौरक, पियालफल, वया, ककटशुद्धी,  
मरिच, पिप्पली, राजपिप्पली, चने, दुराजभा और  
विलकमूल बराबर-बराबर पादार्थके सममें भावना  
देनेसे यह औषध बनता है ।

एकादशाष्ट (सं० पु०) एकादशानां अष्टा समाहारः ।  
एकादश-पञ्चन-टच् । एकादश दिनका समाहार,  
ग्यारह रोजका घरमा । २ एकादश दिवस माध्य  
यज्ञ । १ ब्राह्मणोंका एकादश दिवसमें कर्तव्य ग्राह ।  
इस दिन मृतकके अर्चे ह्योत्सर्ग, महाभास्त्रभोजन  
और ग्राह्यादानादि होता है ।

एकादशग्न (सं० वि०) एकादश संख्या परिमाण-  
मन्याक्षीति, एकादश-हनि । एकादश संख्या परिमित,  
ग्यारह पददवाना ।

एकादशी (सं० स्त्री०) एकादशानां प्राची, एकादशग्न-  
हट्ट-होप् । १ तिथि विशेष । इस तिथिकी दक्षिण-  
पर सूर्यमण्डलमें चन्द्रमण्डलकी एकादश निर्गत और  
लक्ष्यपक्षपर सूर्यमण्डलमें चन्द्रमण्डलकी एकादश  
कला प्रविष्ट होती है । इसका पृथिव्याक्षीक नामान्तर  
हरिदिन और हरिवासर है ।

तन्त्रको व्यवस्थानि मेष्टव, सपुष्टव, गृहो, रिमे-  
पतः ब्राह्मणकी कथा एकादशी पर उपवासका निम्न  
अधिकार है । वेष्टव और उगडे-येसे पन्थाय्य व्यक्ति  
हरिश्चयनके मध्यवर्ती समयमें कथा एकादशीका इन  
बराबर कर सकते हैं । अष्टवक गृहोको यह एक-  
दशोके समय उपवास कर्तव्य है । काम्य उपवासमें

एकाक्षरी (सं० त्रि०) एक अक्षरवाला, जो एक ही ध्वनि रखता हो।

एकाक्षरीमात्र (सं० पु०) एकमात्र अक्षरका उत्पादन, सञ्चेष, इक्षु, समेट।

एकाग्र (सं० त्रि०) एक अग्र पुरोगत ज्ञेयमस्य, बहुव्री०। १ अनन्यचित्त, एक ही बातपर लगा हुआ। २ अनाकुल, जो घबराया न हो। ३ प्रसिद्ध, मगझर। ४ एकमात्र विन्दुमुक्त, जो एक ही नोक रखता हो। (पु०) ४ विभक्त प्रतिलिपिके विस्तृत बाहुका सम्पूर्ण भाग।

एकाग्रचित्त (सं० त्रि०) एकाग्र एकविषयासक्त चित्त यस्य, बहुव्री०। एकमग्नः, एक ही बातपर दिल लगाये हुआ।

एकाग्रतः (सं० अथ०) अविभक्त चित्तसे, पूरे तौर पर दिल लगाकर।

एकाग्रता (सं० स्त्री०) एकाग्रस्य भावः, एकाग्रतन्त्र-टाप। १ एक विषयमें आसक्ति, एक ही बातपर भुकाव। २ त्रिगुणात्मक चित्तमें सत्वगुणका सट्रेक और रजः एवं तमोगुणका विक्षेप। तन्त्रादिका अभाव पहनेपर विषयान्तरके अवलम्बनरूप संसर्गसे शुद्ध चित्तका धर्मविशेष एकाग्रता कहाता है।

एकाग्रत्व (सं० स्त्री०) एकाग्र-त्व। तत्त्व भावसतही। या शास्त्ररत्न। एकाग्रता, दिलदिही।

एकाग्रदृष्टि (सं० त्रि०) एकस्मिन्नेव अग्रे पुरोगते दृष्टिरस्य, बहुव्री०। १ एकमात्र विषयपर दृष्टि डारनेवाला, जो एक ही ओर नजर लगाये हो। (स्त्री०) कर्मधा०। २ एक विषयमें दृष्टि, एक ही चीजपर पहनेवाली नजर।

एकाग्रमनाः (सं० त्रि०) एकाग्र एकविषयासक्त मनो यस्य, बहुव्री०। १ एकाग्रचित्त, दिलको एक ही ओर लगाये हुआ। (स्त्री०) २ स्थिरचित्त, संघा हुआ ध्यान।

एकाग्र (सं० त्रि०) एक अग्र यस्य, बहुव्री०। एकाग्र, एक ही ओर लगा हुआ। इसका संस्कृत पर्याय एकतान, अनन्यवृत्ति, एकाग्र, एकसर्ग, एकाग्र और एकाग्रगत है।

एकाग्रो (सं० स्त्री०) वाणविशेष, एक तीर। इससे एक ही वीर भरता है। महाभारतमें लिखा—इन्द्रने कर्णको अपने कवचके साथ बलुनके मारनेको यह वाण सौंपा था। किन्तु भीषण समरमें कर्णने इसे छोटोवृक्ष पर ही छोड़ दिया।

एकाग्र (सं० पु०) एकं सुन्दरत्वेन सुखं अग्रमस्य, बहुव्री०। १ सुखग्रह। (स्त्री०) २ चन्दन, सन्दल। ३ एक अग्र, अकेला अग्रो। ४ मस्तक, दमाग।

एकाग्रवात (सं० पु०) १ पचवध रोग, आधे जिह्ममें होनेवाला लकवा। २ अश्वका एक वातव्याधि रोग। इसमें एक कर्ण बढ़ता, अधः शरीर शुष्क पड़ता और अश्व शून रहता है। (अथर्व) १

एकाग्रिका (सं० स्त्री०) चन्दनसे बननेवाली एक सामग्री।

एकाग्रि (सं० स्त्री०) १ सुरासाँची, एक खुशबूदार चीज। यह कटु एवं कषाय लगती और भ्रम, मूर्छा, लब्धा, विष तथा दाहको दूर करती है। (राजनिषध) (वि०) २ एक अग्र-सम्बन्धीय, एकतरफा।

एकाग्र (सं० पु०) एकमण्डमस्य, बहुव्री०। एक वृष्याविशिष्ट अश्व, एक फीतेका घोड़ा। जिस घोड़ेका एक मुक्क बढ़ जाता, यह एकाग्र कहाता है।

एकाग्रपत्र (सं० त्रि०) एकच्छद, चक्रवर्ती।

एकाग्रता (सं० स्त्री०) एकाग्रताका भाव, दुनियामें एक-रुढ़ रहनेका मकूल।

एकाग्रवादी (सं० त्रि०) एक एव आश्रयति वस्तु शीलमस्य, बहुव्री०। वेदान्तके मतका अवलम्बी। वेदान्तमें ब्रह्म अद्वितीय माना गया है।

एकाग्र (सं० पु०) एकोऽभिन्न आत्मा, कर्मधा०। १ अद्वितीय आत्मा, एक रुढ़। (त्रि०) २ अभिन्न-हृदय, एकदिल। ३ एकरूप, समगत्त। ४ सहाय-शून्य, तनहा।

एकाग्र (सं० त्रि०) एकेन अधिका दय, मध्यपद-नी०। १ दशमें एक संख्या अधिक, ग्यारह, ११। २ एकादशकी पूर्ण करनेवाला, ग्यारहवां।

एकादशक (सं० त्रि०) एकादश परिमाणमय ।  
१ एकादश परिमाणविशिष्ट, ग्यारहवाँ । २ एका-  
दश, ग्यारह, ११ ।

एकादशकत्वः (सं० षष्ठ्य०) एकादशन्-कत्वसुच् ।  
संज्ञावाः द्विषाम्भक्तिरचने कत्वसुच् । वा शब्दः १० । एकादश-  
वार, ग्यारह सरतवा ।

एकादशतनु (सं० पु०) एकादश तनवो यस्य, बहुव्री० ।  
महादेव । एकादश वार भिन्न भिन्न मूर्तिके परि-  
ग्रहसे शिवको एकादशतनु वा एकादश रुद्र कहते  
हैं । एकादश नाम यह हैं—पञ्च, एकपात् पक्षिग्रधू,  
पिण्णकी, अपराजित, ब्रह्मवृक्ष, मङ्गेश्वर, हृष्यायणि,  
शम्भु, हरण और ईश्वर ।

एकादशतम (सं० त्रि०) एकादशक, ग्यारहवाँ ।  
एकादशहार (सं० स्त्री०) एकादश हाराणि रज्ज्वा-  
ण्यस्य, बहुव्री० । शरीर, जिह्वा । शरीरके मध्य दो  
चक्षु, दो कर्ण, दो नासिकारज्जु, मुख, ब्रह्मरज्जु, नाभि,  
गुह्य और मूत्र सब मिलाकर एकादश हिस्से होते हैं ।  
साधारणतः ब्रह्मरज्जु और नाभिको छोड़ लोग गव-  
हार ही मानते हैं ।

एकादशमतिक महाप्रसारिणी तेषां (सं० स्त्री०) यात  
व्याधिका एक तैल । कायार्थ समूलपत्रमाद्य गन्ध-  
मद्भा साङ्गे ३२ गरावक ; किण्टी, गुडूची एवं परण्ड-  
मूल प्रत्येक २५ गरावक ; राक्षा, गिरोपलक, देवदारु  
तथा केतकीका मूल प्रत्येक ६० गरावक से ६४०० गरा-  
वक जलमें एकाग्र और ६४ गरावक श्रेय रङ्गनेसे उत्तरे ।  
काजी ६४ गरावक, दक्षिमण्ड १६ गरावक, ग्रास  
१६ गरावक, क्षागर्मास ८ गरावक एवं जल ६४ गरा-  
वक क्षास छवासे और १६ गरावक श्रेय रङ्गनेपर  
उत्तरे । इक्षुरस १६ गरावक, दुग्ध १६ गरावक और  
पिङ्गकान्त, कर्कटगुडी, जीवनीय दमक वा पटवर्ग,  
काकोनी, मज्झास, सौरकाकीनी, कौषधी जड़, छाटी  
हलायची, कर्पूर, सुयान, मरुतफाष्ठ, कुटुम्ब, जटामांघी,  
गन्धी, क्षण्डागुरु, नीलोत्पल, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा,  
कट्फोल, नागेश्वर, खसकी जड़, गुह्यवृक्ष, सपारी,  
कायफल, क्षताकस्तुरी, शतभूजो, शोषास, देवदारु,  
शोतकन्द, वध, ग्रीसज, शैत्य, गिलारस, मुद्गाक,

गन्धमद्राका मूल, पुनर्षा, शालुका, गन्धगटी, मृग-  
नाभि, दमभून, मेनफल, त्रिवृद्ध, शाल, केतकी, तगर-  
मूल, चम्रगन्धा, वाला, रीसुका, रमाधन, मेमरका,  
सुसरा, कटफल, पशुगु, श्यामानता वा पनसमूल,  
कुष्ठमज्जातककी मुष्टि, त्रिफला, शुनफा, पञ्चनागेश्वर,  
सबडू और त्रिकटु प्रत्येक ३ पल छोड़नेसे यह औषध  
बनता है । (संघोषावली)

एकादशायस (सं० पु०) दध्नष्टिके पक्षिकारका एव  
औषध, यदकी एक दवा । जारित मोह, पारद, गन्धक,  
तान्त्र, स्वर्णमाचिक, चम्प, चिद्रुम, कुटुम्ब, पोपुरात्र-  
गचि, शोष, पित्तल, विहङ्ग, त्रिफला, चिद्रु, यमानो,  
जौरक, क्षण्डाग्रीरक, पियानजन, बवा, ककटशुद्धो,  
सरिच, पिप्पली, राजपिप्पली, चवी, दुराकमा और  
चित्तकमूल बराबर-बराबर पादार्थके रसमें भावना  
देनेसे यह औषध बनता है ।

एकादशह (सं० पु०) एकादशार्थ पञ्चा ममाहारः,  
एकादश-पञ्च-टप् । एकादश दिग्गजा समाहार,  
ग्यारह रोजका परता । २ एकादश दिवस माध्य  
यज्ञ । ३ महाप्रोक्ता एकादश दिवसमें कर्तव्य ग्राह ।  
इस दिन मृत्युके चर्ये ह्योत्सर्ग, महाप्राज्ञचमोजन  
और गत्यादानादि होता है ।

एकादशिन् (सं० त्रि०) एकादश मन्त्रा परिमाण-  
मस्यास्तोत्रि, एकादश-जिनि । एकादश मन्त्रा परिमित,  
ग्यारह अददशाना ।

एकादशौ (सं० स्त्री०) एकादशार्थ पुरषो, एकादशन्-  
कट्-टीप् । १ त्रिविध विषय । इस त्रिविकी शुद्धपक्ष-  
पर शुद्धमण्डनमें चन्द्रमण्डनकी एकादश निमत और  
लक्ष्मणपक्षपर शुद्धमण्डनमें चन्द्रमण्डनकी एकादश  
कला प्रविष्ट होती है । इसका धूमिमासोक्त नामान्तर  
हरिदिन और हरिवासर है ।

तन्त्रकी व्यवसायसे वेत्तर, गुरुपूज, मरी, विदे-  
पतः ब्राह्मणकी कृपा एकादशो पर उपासका निम्न  
पक्षिकार है । वेत्तर और उनके-के पन्थाय मन्त्रि  
हरिगणनके मध्यवर्ती समयमें लप्ता । एकादशोका वन  
बराबर कर सकते हैं । चतुर्विध मरीकी सकल एका-  
दशोके समय उपवास कर्तव्य है । काव्य वनवाग्नि

सभी समान अधिकार रखते हैं। नित्य उपवासमें रवि शुक्रादिका दोष मानना आवश्यक नहीं। षष्ठम वर्षसे पणोति वत्सर पर्यन्त मानव इस उपवासका अधिकारी है। विधवा समुदय एकादशी पर नित्य अधिकार रखती है। उनके लिये मलमासादि कोई दोष बाधा नहीं देता।

एकादशीके उपवासका विधि—पारणके दिन द्वादशी मिलनेसे पूर्ण ऋतु छुड़ा एकादशीमें गृहीको उपवास करना चाहिये। किन्तु वषा न होनेसे गृही पूर्णके एवं दूसरे और विधवा जानीवाले दिन उपवास करें। जो एकादशी उदयके दो दण्ड पहले लगती, उसीकी पूर्ण सन्ना पड़ती है। पूर्व दिन दशमी और पर दिन द्वादशी युक्त रहनेसे परदिनकी ही उपवास कर्तव्य है। ऋषोदय कालपर दशमी होनेसे विहा एकादशी कहाती है। विहा एकादशीको उपवास करना न चाहिये। ऐसी अवस्थामें द्वादशीको उपवास रख ऋषोदशीको पारण करना उचित है।

हरिमिथिवासके मतसे उपवासकी व्यवस्था—वैष्णवकी उपवासके पूर्वदिन प्रातःस्नान कर श्वेतवस्त्र परिधान प्रभृति सुश्रेय करना चाहिये। उसके बाद—

“दशमीदिनमात्रमन्त्रिणोऽत्र तत्र।

मिदिनं द्विदेवेन निर्दिष्टं कुह केशव॥”

इ देवदेवेन केशव। मैं दशमीसे तुम्हारा व्रत करूंगा। इन तीन दिनों मुझे निर्दिष्ट रहो।

उक्त मन्त्रको पढ़ गृहीतृष्वके सहकारसे सङ्कल्प करना चाहिये। हरिदिनको चारलवण छोड़ एकवार मात्र हविष्यान्न खाते, श्रुत्तिकाशयनपर सो जाते और श्लोसङ्गसे दूर रह प्रुषोत्तमका धारण करते अवस्थान लगाते हैं।

स्कन्दपुराणमें दशमीको धास्यपात्र, मांस, मत्सर, मधु, मिथ्यावाक्य, दो बार भोजन, परित्यग और पारणके दिन न किया जानीवाला सक्ल कार्य निषिद्ध कहा है।

दशमीके उपवासके दिनका कर्तव्य—उत्तरायण होने पर जल-पूर्व छद्मस्वरपात्र ग्रहणपूर्वक निम्नोक्त मन्त्रपाठ सह-

कारसे तीन भक्षित पुण्यदान एवं मन्त्रपूत जलपान कर उपवास रखना चाहिये। मन्त्र—

“एकादश्यां निराहारी जित्वाभयपरिहृति।

शोचामि पुनरीवाप्य मर्यं मे वराच्युत॥”

इ पुण्डरीकाक्ष भण्युत। मैं एकादशीको निराहार रह परदिन भोजन करूंगा। तुम मेरे प्रायश्च बनो।

दोनों पक्षकी एकादशीको निराहार रह, समाहितचित्त बन, सम्यक् विधानके अनुसार स्नान कर, स्नानके पन्तमें धौत वस्त्र पहन, जितेन्द्रियता एकड़ और पुण्य, धूप, दीप, नैवेद्य, बहुविध उपहार, जल, होम, प्रदक्षिण, स्तोत्र, मनोरम नृत्यगोत एवं वाद्यादि सहकारसे यथाविधि विष्णुको पूज रात्रिसे समय जागरण रखना चाहिये। स्कन्दपुराणमें भी रात्रिके जागरणको व्यवस्था इसी प्रकार लिखी है। विशेषतः रात्रिके प्रत्येक प्रहर हरिकी पारति करनेका विधान है।

पारणके दिन कर्तव्य-सम्बन्धमें कात्यायनके मतानुसार प्रातःकाल स्नान और ओहरिकी पूजा समापन कर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ना चाहिये।

“वज्रानतिमिराश्वस्य त्रैलोक्येन केशव।

प्रसीद सुखी माय प्राणहृदिप्रदो भव॥”

इ नाथ केशव। इस व्रतके द्वारा प्रसन्न हो तुम वज्रानतिमिराश्वको प्राणहृदि दो।

यही मन्त्र पढ़ उपवास समर्पण करते हैं। उसके पीछे हरिकी धारण कर व्रतकी सिद्धिके लिये पारण कर्तव्य है। जो व्यक्ति पारणके दिन द्वादशी पतिक्रम कर त्रयोदशीको खाता, वह व्रतजन्म पर्यन्त नरकवास पाता है। द्वादशी पक्षरक्षण स्थायी रहनेसे ऋषोदयकी और पत्न्यस्य होनेसे निर्गोय कालके बाद पारण करना चाहिये। स्कन्दपुराणमें यह सकल द्रव्य द्वादशीको निषिद्ध कहे हैं—मधु, मांस, सुरा, तैल, व्यायाम, क्रोध, मेथुन, पराध, कांस्यपात्र, ताम्बूल, होम, निर्मास्यसहज, मिथ्यावाक्य, प्रवास, दिवास्त्रप, पञ्चन, शिलापिष्ट द्रव्य, मत्सर, द्यूतश्रीड़ा, हिंसा, चना, कोरदूपक और शोषध।

एकादशीको उपवासमें अथमर्त्य होनेपर पुत्र पथवा

अपर ब्राह्मणमें उपवास कराना चाहिये। यथाशक्ति ब्राह्मणोंको दान देनेमें भी एकादशी कृत्तनेका दीप मिट जाता है। (शुद्धपत्र)

मार्कण्डेयके मतानुसार बालक, हठ और पातुर एकवार शौहार पयवा फलमून खा कर एकादशी रह सकते हैं। किन्तु गृहपुराण ग्रथन, उत्थान, पार्श्वपरिवर्तन और फलमूनाहारको एकादशीके व्रतमें कर्तव्य नहीं ठहराता। तत्त्वसार एकादशीकी तरह अपर कोई पुण्यकार्य प्रसन्न मानता है। यह खर्ग, मोघ, राख्य और पुत्र देनेवाली है।

गृहपुराणके लेखानुसार भक्तिवृत्तकारोंसे एकादशी व्रत करनेपर मनुष्यको विष्णुभक्त और विष्णुस्वरूप प्राप्त होता है।

जाना पुराणमें एकादशीके षड्विंश नाम कहे हैं, यथा—अपराधघ्नकी लक्षा १ उत्पत्ता, शक्ता २ मोक्षा, पौषकी लक्षा ३ सफला, शक्ता ४ पुत्रदा; माघकी लक्षा ५ परित्या, शक्ता ६ जया; फाल्गुनकी लक्षा ७ विजया, शक्ता ८ प्रामदकी; चैत्रकी लक्षा ९ पाप-मोचनी, शक्ता १० कामदा; वैशाखकी लक्षा ११ बद्धिनी, शक्ता १२ मोहिनी; ज्येष्ठकी लक्षा १३ अपरा, शक्ता १४ निर्जला; भाद्रपदकी लक्षा १५ योगिनी, शक्ता १६ पद्मा; आश्विनकी लक्षा १७ कामिका, शक्ता १८ पुत्रदा; माद्रकी लक्षा १९ प्रजा, शक्ता २० वामना; आश्विनकी लक्षा २१ इन्दिरा, शक्ता २२ पापाहुश्रा, कार्तिककी लक्षा २३ रमा, शक्ता २४ प्रसाधिनी और मलमासकी शक्ता २५ सुमद्रा तथा लक्षा एकादशी २६ कमला कहाती है।

धृतिशास्त्रमें लक्षा एकादशीकी माताप्रिताके यादकी व्यवस्था है। किन्तु हरिमन्त्रविसासके मतमें वैष्णवकी यह करमा न चाहिये। उनको व्यवस्थामें एकादशी तिथिकी यादका दिन चानेसे उस दिन नहीं—द्वादशीकी याद किया जाता है। ब्रह्मवैवर्तके मतानुसार एकादशीको याद करनेमें दाता, भोक्ता और भेतकीक मरकट्य होता है।

एकादशीकी जन्म सेनेसे मनुष्य पत्न्या क्रोधो, क्रोधघट, सुमापी, यक्षकारी, ध्वजनप्रतिपासक, महा-

मति, देवता तथा गुरुजनका मिय और दृष्टवेता निरु-जता है। (कोशे-दीप) (त्रि०) २ एकादश संख्या-विगिष्ट, ग्यारह चददवाला।

“एकदशो धान्ते कोटयः स्रवणम् ॥” (भार०, भोच १६११) एकादशीतत्त्व (सं० को०) धृतिशास्त्रका एक पंथ। इस पंथमें एकादशीका विषय वर्णित है।

एकादशीन (सं० त्रि०) एकादश मध्यमीय, ग्यारह-से शरोकार रखनेवाला।

एकादशीमत (सं० को०) एकादशीमधिश्रव्य मतम्, मध्यपदको०। एकादशी तिथिका उपवासादि धर्म-कार्य। एकादशी देखो।

एकादशेन्द्रिय (सं० त्रि०) ग्यारह इन्द्रिय। श्रोत्र, स्पर्श, रसना, घ्राण, वाक्, पाणि, पायु, उपस्थ, पाद और मन ग्यारहको एकादशेन्द्रिय कहते हैं। इनमें पहिले पांच ज्ञानेन्द्रिय और पीछे कर्मेन्द्रिय हैं। एकादशीमत (सं० पु०) शिव। ग्यारह इन्द्रिय प्रधान रहनेसे शिवको एकादशीमत कहते हैं।

एकादि (सं० त्रि०) एक आदिर्यस्य, बहुमी०। एकसे परार्ध पर्यन्त संख्या-विगिष्ट।

कविकल्पतरुमें एकादि संख्यावाचक कितने ही मन्त्र संघटीत हैं। यथा—१ एक, ब्रह्म, इन्द्रहस्तो, इन्द्राग्र, मयैवदन्त, यक्षवत्सु। २ द्वय, पद्म, नदी-कूट, पविधारा, रामनन्दन। ३ त्रय, काल, पद्मि, भुवन, गङ्गासागर, ईशदत्, गुण। ४ चतुर, वेद, ब्रह्माण्य, जाति, समुद्र, हरिवाह, विराजदन्त, विनाह, लपाय, याम, युग, आयुषम्। ५ पञ्च, पाण्डव, ब्रह्मण्य, इन्द्रिय, स्वर्गतत्त्व, एत, पद्मि। ६ षष्ठ, वसुधैव, त्रिशिरोनेत्र, तर्काङ्ग, दर्शन, चक्षुर्गो, कार्तिकेशाय, गुण, रस। ७ सप्त, पातान्न, भुवन, मुनि, होय, शूरार्ज, वार, समुद्र, तृण, राजाङ्ग, मोदि, वज्र, मिषादि। ८ अष्ट, योगाङ्ग, वक्ष, ईशमूर्ति, दिग्गज, सिंह। ९ नव, पञ्च, दार, मूलपञ्च, क्षिप्रवाच्य मन्त्रक, व्याघ्रो-स्तन, सुराकुण्ड, मेघवि, पद्म, रस, पद्म। १० दश, हस्ताङ्गुलि, मधुबाह, रावणमोहि, लक्ष्मणाग्र, दिक्, विदेवेश, पद्मना, वन्द्य। ११ एकादश, दद, कुहराजधन। १२ द्वादश, सूर्य, शक्ति, संक्रान्ति,

कार्तिकेयबाहु, शरीरकोष्ठ, कार्तिकेयनिव, राज-  
मण्डल। ११ त्रयोदश, ताम्रयून, गुण। १४ चतुर्दश,  
विद्या, मनु, विदित, राजा, भुवन, भवतारका।  
१५ पञ्चदश, तिथि। १६ षोडश, चन्द्रकला। १८ अष्टा-  
दश, दीप, विद्या, पुराण, स्मृति, धान्य। २० विंशति,  
रायचक्षुः, अङ्गुलि। १०० शत, धृतराष्ट्रपुत्र, शत-  
भियक्त्वारका, पुरुषायुः, रायबाहुनि, पद्मदल, इन्द्र-  
यज्ञ, समुद्रयोजन। १००० सहस्र, आष्टवीषय, अनन्त-  
गोध, पद्मदल, रविबाण, अर्जुनहस्त, वेदशाखा,  
इन्द्रवज्र।

एकादिक्रम (सं० त्रि०) एकादिकप्रभृतिः क्रमो  
यस्य, बहुव्री०। आनुपूर्विक, सिनसिलेवार।

एकादिवीर (सं० पु०) एकवीर वृक्ष।

एकादेश (सं० पु०) एकशाखी आदेशय कर्मधा०।  
१ व्याकरणीत समय शब्द वा स्थान अष्टाक्षर एकमात्र  
आदेश। २ एक आश्रय, अकेला दुका।

एकोद्विंशति (सं० त्रि०) एकेन नविंशतिः,  
एक-अष्टक-अनुनासिकी विकल्पः। एकोनविंशति,  
वद्वीम, १८।

एकाधिपति (सं० पु०) एकः प्रधानोऽधिपतिः।  
सम्राट्, बादशाह, बड़ा मालिक।

एकाधिपत्य (सं० स्त्री०) प्रधान आधिपत्य, बड़ा  
इच्छतिपार।

एकांशा (सं० स्त्री०) एकोनः अंशो यस्याः, बहुव्री०।  
पार्श्वी। हरिवंशमें लिखा, कि यशोदाके गर्भमें  
योगमाधाने यही नाम अष्टाक्षर जन्म लिया था।

एकानुदित (सं० त्रि०) एकमनुदितम्। १ अन्त्येष्टि-  
क्रियाके भोजकी छोड़ा हुआ। २ अन्त्येष्टिक्रियाके  
भोजका भाग सेनेवाला। (स्त्री०) १ एकके उद्देश्यसे  
प्रदत्त आह।

एकांस्त (सं० स्त्री०) एकप्रियेव अन्तः समातिदेश्य,  
बहुव्री०। १ एकमात्र समाप्ति, अकेला निशाना।  
२ निगूट स्थान, छिपी जगह। ३ एककी भक्ति, सिर्फ  
एककी परस्मिन्। (त्रि०) ४ एक विषयकी ओर  
आसित, जो एक ही बातपर लगाया गया हो। ५ एक  
की सेवा करनेवाला, आसिद्ध एक ही को मानता

हो। ६ अतिमय, बहुत लयादा। ७ निर्जन,  
निराला। (अव्य०) ८ पूर्णरूपसे, पूरे तौरपर।  
९ अवश्य, योग्य। १० सुसरीतिसे, द्विपकर।  
११ अत्यन्त, बेशुद्ध।

एकान्तकण्ठ (सं० त्रि०) अतिमय लघुवातु, निहायत-  
रहीम।

एकान्तकैवल्य (सं० स्त्री०) मुक्तिविशेष।

एकान्तचारी (सं० त्रि०) एकान्त-चर-णिनि। निर्जन-  
में भ्रमणकारी, निरालेमें घूमनेवाला।

एकान्ततः (सं० अव्य०) १ पूर्णरूपसे, बिलकुल।  
२ प्रत्यक् रूपसे, अलग।

एकान्तता (सं० स्त्री०) १ अतिमय, बहुतायत।  
२ निर्जनता, तनहाई।

एकान्तत्यागवाद (सं० पु०) बौद्धोंका एक वाद।  
बहुव्री० एकस्वरूपताके सम्बन्धमें त्याग-प्रतिपादक  
वादको एकान्तत्यागवाद कहते हैं।

एकान्तदुःखमा (सं० स्त्री०) दुष्टा समा वर्षः दुःखमा,  
एकान्त दुःखमा, २-तत्। बोधकल्पित कालविशेष।  
यह सुवर्षापीठके छठे और उत्तरविंशतीके पहले  
अरका नाम है।

एकान्तभूत (सं० त्रि०) एकाकी रहनेवाला, जो  
अकेले रह गया हो।

एकान्तमति (सं० त्रि०) एक ही विषयमें लगा हुआ,  
जो एक ही बात सोचता हो।

एकान्तर (सं० त्रि०) एकमन्तरं व्यवधानं यस्य,  
बहुव्री०। १ एकान्तरवर्ती, एकके फर्कवाला। २ एक  
दिन व्यवधानके भोजनसे सम्बन्ध रखनेवाला। ३ एक  
दिनके व्यवधानसे पानेवाला।

एकान्तराट् (सं० पु०) किसी बोधिसत्त्वका नाम।

एकान्तवास (सं० पु०) निर्जन स्थानका अवस्थान,  
निरालेकी रहपथ।

एकान्तवासी (सं० त्रि०) निर्जनमें निवास करनेवाला,  
जो अकेला रहता हो।

एकान्तविहारी (सं० त्रि०) एकाकी विपरण करने-  
वाला, जो अकेला घूमता हो।

एकान्तसुपमा (सं० स्त्री०) राष्ट्र, समा वर्षः सुपमा

एकान्तं सुप्रमा, २-तत् । शोध मत्तानुयायी  
कासविशेष । चैवसर्दिषीके प्रथम चौर उत्सर्पिणी  
कासपक्षके पठ धुरकी एकान्तसुप्रमा कहते हैं ।

एकान्तस्थित (सं० त्रि०) धृक् पड़ा हुआ, जो  
भकेसे ठहरा हो ।

एकान्तस्वरूप (सं० त्रि०) एकान्तस्थित, अलग  
रहनेवाला ।

एकान्तिक (सं० त्रि०) पन्थिम, फलस्वरूप, पाछिरी,  
नतीजेवाला ।

एकान्तित्व (सं० त्रि०) एकान्त्य, निराशापन ।

एकान्ती (सं० त्रि०) एकान्तमस्यास्ति, एकान्त-  
हानि । १ पतिग्रययुक्त, बहुत बढ़ा । (पु०) २  
विष्णुभक्त विशेष । यह एकान्तमें बैठ विष्णुको  
भजते हैं ।

एकाक्ष (सं० त्रि०) एक एककाक्षपक्ष अर्थात् यत्र,  
बहुव्री० । १ एकवार भोजन करनेवाला, जो दूसरे  
मरतवा खाता न हो । (स्त्री०) २ एकमात्र भोजन,  
वही एक खाना । (पु०) ३ सहजभोजी, साय-साय  
खानेवाला ।

एकाक्षमुक् (सं० पु०) सहजभोजी, जो वही चीज  
खाता हो ।

एकाक्षविंशति (सं० त्रि०) एकेन विंशतिः चादृक्  
चतुर्नादिकथ । एकोनविंशति, सत्तीस, १८ ।

एकाक्षदौ (सं० त्रि०) केवल एक व्यक्तिका दिया  
अथ खानेवाला, जो एक ही आदमीके साथे खाने-  
पर बसकर करता हो ।

एकाब्दा (सं० स्त्री०) एकवर्षकी गाम्भी, एक खानकी  
बहिया ।

एकास्वरमाय सोमयात्री—एक संस्कृत ग्रन्थकार ।  
काम्यवती-परिचय, वीरभद्रविजय चौर सत्यपरिचय  
नामक काव्य इनोंने लिखा है ।

एकान्त (सं० त्रि०) एक पवित्र तीर्थस्थान । पाश्चा-  
त्यक एकमात्र हथ रहनेसे यह नाम पड़ा है । यह हथ  
पतिग्रय सच, सुन्दर माथाविष्ट, चौर नव नव  
किशलय तथा पक्षधर भरा रहा । उसका फल—धर्म,  
धर्म, काम चौर मोक्ष था । उक्त गोपनीय हथकी

स्वयं मुरारिने खगाया था । यहां भगवान् सुवनेश्वरकी  
विद्वत्सूति प्रतिष्ठित है । अर्थ-न देवो ।

एकायन (सं० त्रि०) एकमयनमात्रयो यस्य, बहुव्री० ।  
१ एकाग्र, एकही की चौर भुका हुआ । २ एक हीके  
गमन करने योग्य, जिससे दूसरा चस न सके । (स्त्री०)  
एकमयनं स्थानम्, कर्मधा० । १ एकस्थान, निरासो  
जगह । ४ भिन्नस्थान, इकड़ा होनेका सुकाम ।  
५ विचारयोग, ख्यातीका भिन्न । ६ एकपरायणता,  
उसीका सहारा । ७ वेदकी एक भाषा ।

एकायनगत (सं० त्रि०) एकस्मिन्पतेन गतं स्थानमात्र,  
बहुव्री० । १ एकाग्र, एक ही बातपर भुका हुआ ।  
२ एकस्थानगत, उसी जगह पहुँचा हुआ ।

एकायु (सं० त्रि०) १ सम्पूर्ण जीवोको एकत्र करने-  
वाला, जो सब जानवरोंको इकट्ठा करता हो । २ प्रथम  
जीवधारी, पहली जिन्दा होनेवाला । ३ प्रायुष्य  
भोजन प्रदान करनेवाला, जो निश्चायत समूदा स्थाना  
देता हो ।

एकार (सं० पु०) स्वरवर्षका एकादश चचर । १६० ।

एकार्ष्य (सं० पु०) जलप्राशनविशेष, एक पूजा ।  
इसमें घर-बाहर सब जगह पानी भर जाता है ।

एकार्य (सं० पु०) एकः चरितीयः चर्यः, कर्मधा० ।  
१ एकप्रयोजन, वही मतसब । २ एक परिधेय मन्द,  
वही सफुज्ज । ३ एकपदार्थ, वही चीज । (त्रि०)  
एकोर्द्यो यस्य, बहुव्री० । ४ एकप्रयोजनयुक्त, वही  
मतसब रखनेवाला । ५ एक परिधेय, वही माने  
रखनेवाला ।

एकार्यक, एकार्यदेवो ।

एकार्यता (सं० स्त्री०) एकार्यत्व भावः, एकार्य-तत्त्व-  
टाप । चर्य वा सहजकी अभिचता, माने वा  
मतसबका भिन्न ।

एकार्यसमुपेत (सं० त्रि०) एकार्येन अभिचार्त्वेन  
समुपेतं शुभम्, १-तत् । १ एक चर्यविष्ट, वही  
माने रखनेवाला । २ एक सहजयुक्त, वही मतसब  
रखनेवाला ।

एकार्यीभाव (सं० पु०) एक चर्यका भाव, वही  
माने रखनेकी बात ।



कार्तिकेयबाहु, शरीरकील, कार्तिकेयनेत्र, राज-  
मण्डल। १३ त्रयोदश, ताम्बूल, गुण। १४ चतुर्दश,  
विद्या, मनु, त्रिदिव, राजा, भुवन, ध्वस्तारका।  
१५ पञ्चदश, तिथि। १६ षोडश, चन्द्रकला। १७ अष्टा-  
दश, दोष, विद्या, पुराण, स्मृति, धान्य। २० विंशति,  
रायपहस्त, पद्मनि। १०० मत, छतराष्ट्रपुत्र, यत्त-  
भिषक्सारका, पुरुषायुः, रायपाङ्कज, पद्मदल, इन्द्र-  
यज्ञ, सद्गुद्वयोजन। १००० सहस्र, जाड्यौषध, चनस्त-  
गोर्ध, पद्मदल, रविवाण, अर्जुनहस्त, वेदशाखा,  
इन्द्रवज्र।  
एकादिक्रम (सं० त्रि०) एकादिकेकप्रभृतिः क्रसो  
यस्य, बहुव्री०। चानुपूर्विक, सिलसिलेवार।  
एकादिधौ (सं० पु०) एकवौर हृत्।  
एकादेश (सं० पु०) एकशासौ आदेशय कर्मधा०।  
१ व्याकरणीत सभय शब्द वा स्यान् अक्षरकार एकमात्र  
आदेश। २ एक आज्ञा, अकेला हुका।  
एकोद्विंशति (सं० त्रि०) एकैग नविंशतिः,  
एकचतुक् चतुर्नामिको विकल्पः। एकोनविंशति,  
सप्तौस, १८।  
एकाधिपति (सं० पु०) एकः प्रधानोऽधिपतिः।  
सम्राट्, बादशाह, बड़ा मालिक।  
एकाधिपत्य (सं० स्त्री०) प्रधान आधिपत्य, बड़ा  
इश्वरियार।  
एकाग्रंश (सं० स्त्री०) एकोनः अंशो यस्याः, बहुव्री०।  
पार्श्वी। हरिधंशमें लिखा, कि यशोदाके गर्भसे  
योगमायाने यही नाम अक्षरकर जन्म लिया था।  
एकानुद्विष्ट (सं० त्रि०) एकमनुद्विष्टम्। १ चन्त्येष्टि-  
क्रियाके भोजकी छोड़ा हुआ। २ अग्नयेष्टिक्रियाके  
भोजका भाग लेनेवाला। (स्त्री०) ३ एकके सहैश्वर्यसे  
प्रदत्त आश।  
एकान्त (सं० स्त्री०) एकछिन्नेव अन्तः समाप्तिर्दृश्य,  
बहुव्री०। १ एकमात्र समाप्ति, अकेला निगाना।  
२ निगूढ स्थान, छिपौ जगह। ३ एककी भक्ति, सिर्फ  
एककी परमेश्वर। (त्रि०) ४ एक विषयकी चौर  
आसित, जो एक ही बातपर लगाया गया हो। ५ एक  
ही सेवा करनेवाला, या सिर्फ एक ही को मानता

हो। ६ पतिग्रय, बहुत लपटा। ७ निर्जन,  
निरासा। (अव्य०) ८ पूर्णरूपसे, पूरे तोरपर।  
९ अवग्रह, धैर्यक। १० गुस्तीरितसे, छिपकर।  
११ अत्यन्त, बेहद।  
एकान्तकक्षेप (सं० त्रि०) अतिग्रय लपटु, निहायत  
रहीम।  
एकान्तकौशल्य (सं० स्त्री०) मुक्तिविशेष।  
एकान्तचारी (सं० त्रि०) एकान्त-चर-णिनि। निर्जन-  
में भ्रमणकारी, निरासेमें घूमनेवाला।  
एकान्ततः (सं० अव्य०) १ पूर्णरूपसे, बिलकुल।  
२ प्रयत्न रूपसे, अन्तग।  
एकान्तता (सं० स्त्री०) १ आतिग्रह्य, बहुतायत।  
२ निर्जनता, तनहाई।  
एकान्तत्यागपाद (सं० पु०) बौद्धोंका एक वाद।  
यसुकी एकस्वरूपताके सम्बन्धमें त्याग-प्रतिपादक  
वादको एकान्तत्यागवाद कहते हैं।  
एकान्तदुःखमा (सं० स्त्री०) दुष्टा समा ययः दुःखमा,  
एकान्त दुःखमा, २-तत्। बौद्धकल्पित काश्चित्विशेष।  
यह भुवसरिणीकी छठे चौर अत्सर्विणीके पहले  
अरका नाम है।  
एकान्तभूत (सं० त्रि०) एकाकी रहनेवाला, जो  
अकेले पढ़ गया हो।  
एकान्तमति (सं० त्रि०) एक ही विषयमें लगा हुआ,  
जो एक ही बात सोचता हो।  
एकान्तर (सं० त्रि०) एकमन्तरं व्यवधानं यस्य,  
बहुव्री०। १ एकान्तरवर्ती, एकके फर्कवाला। २ एक  
दिन व्यवधानके भोजनमें सम्बन्ध रखनेवाला। ३ एक  
दिनके व्यवधानसे चानेवाला।  
एकान्तराट् (सं० पु०) किसी शोधिपक्षका नाम।  
एकान्तवास (सं० पु०) निर्जन स्थानका अवस्थान,  
निरासेकी रहपक्ष।  
एकान्तवासी (सं० त्रि०) निर्जनमें निवास करनेवाला,  
जो अकेला रहता हो।  
एकान्तविहारी (सं० त्रि०) एकाकी विचरण करने-  
वाला, जो अकेला घूमता हो।  
एकान्तसुधमा (सं० स्त्री०) सद्गु, समा ययः सुधमा

एकान्तं सुषमा, २-तत् । बौद्ध मतानुयायी काशविशेष । भैरवर्षिके प्रथमं चौरं चतुस्रिंशो काशचक्रके पठ भुरको एकान्तसुषमा कहते हैं ।

एकान्तस्थित ( सं० द्वि० ) प्रत्यक् पड़ा हुआ, जो पकड़े ठहरा हो ।

एकान्तस्वरूप ( सं० द्वि० ) एकान्तस्थित, चमक रहनेवाला ।

एकान्तिक ( सं० द्वि० ) अन्तिम, फलस्वरूप, आखिरी, अन्तीजवाला ।

एकान्तित्व ( सं० स्त्री० ) एकान्त्य, निरालापन ।

एकान्ती ( सं० द्वि० ) एकान्तमस्यासि, एकान्त-इति । १ भक्तिप्रययुक्त, बहुत बढ़ा । ( पु० ) २ विष्णुभक्त विशेष । यह एकान्तमें बैठे विष्णुको भजते हैं ।

एकान्त ( सं० द्वि० ) एकं एककाशपक्षं चर्यं यत्, बहुव्री० । १ एकवार भोजन करनेवाला, जो दूसरे मरतवा खाता न हो । ( स्त्री० ) २ एकमात्र भोजन, वही एक खाना । ( पु० ) ३ सज्जनभोजी, साध-साध खानेवाला ।

एकान्तभुक् ( सं० पु० ) सज्जनभोजी, जो वही भोज खाता हो ।

एकान्तविगति ( सं० द्वि० ) एकेन नविगतिः चादुक् अनुनादिकथ । एकोनविगति, सचोच, १८ ।

एकान्तादी ( सं० द्वि० ) केवल एक व्यक्तिका दिया पक्ष खानेवाला, जो एक ही आदमीके साथे खाने-पर बसर करता हो ।

एकान्दा ( सं० स्त्री० ) एकवर्षकी गाम्भी, एक सालकी बहिया ।

एकाग्रनाथ सोमयाजी—एक संस्कृत शब्दकार । काव्यवृत्ती-परिचय, वीरभट्टविजय चौरं मत्तपरिचय नामक काव्य इन्होंने लिखा है ।

एकान्त्र ( सं० स्त्री० ) एक पवित्र तीर्थस्थान । आग्रका एकमात्र हथ रहनेसे यह नाम पड़ा है । वह हथ भक्तिप्रय सध, सुन्दर मायाविशिष्ट, चौरं नव नव किमलय तथा पक्षवर्ष भरा रहा । समका फल—धर्म, धर्म, काम चौरं मोक्ष था । वह गोपनीय हथकी

स्वयं सुरारिने लगाया था । यहां भगवान् भुवनेश्वरकी विहङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है । मन्त्रे नर इकी ।

एकाग्रन ( सं० द्वि० ) एकमग्रनमाग्रयो यस्य, बहुव्री० ।

१ एकाग्र, एकही की चौरं भुका हुआ । २ एक हीके यमन करने योग्य, जिससे दूसरा चल न सके । ( स्त्री० ) एकमग्रनं स्थानम्, कर्मधा० । ३ एकस्थान, निरालो लग्न । ४ मिलनस्थान, इकट्ठा होनेका सुखम् । ५ विचारयोग, म्यान्तोका मिल । ६ एकपरायणता, सचीका सञ्चारा । ७ वेदकी एक शाखा ।

एकाग्रनगत ( सं० द्वि० ) एकप्रिययने गतं प्रानमस्य, बहुव्री० । १ एकाग्र, एक ही बातपर भुका हुआ । २ एकस्थानगत, सची लग्न बहुला हुआ ।

एकाग्र ( सं० द्वि० ) १ सम्पूर्ण जीवोंकी एकत्र करने-वाला, जो सब जानवरोंको इकट्ठा करता हो । २ प्रथम जोवधारी, पहली जिन्दा होनेवाला । ३ पशुसम भोजन प्रदान करनेवाला, जो निहायत समृद्धा खाना देता हो ।

एकार ( सं० पु० ) एकरवर्षका एकादश चर । १ इकी : एकार्यव ( सं० पु० ) लक्षणावनविशेष, एक बड़ा । इसमें घर-बाहर सब लग्न पागे भर जाता है ।

एकार्य ( सं० पु० ) एकः पहिलीयः धर्मः, कर्मधा० । १ एकप्रयोजन, वही मतनव । २ एक परिश्रेय शब्द, वही लक्ष्म । ३ एकपदार्थ, वही चीज । ( द्वि० ) एकोर्वी यस्य, बहुव्री० । ४ एकप्रयोजनपुत्र, वही मतनव रहनेवाला । ५ एक अभिप्रेय, वही माने रहनेवाला ।

एकार्यक, एकां इकी ।

एकार्यता ( सं० स्त्री० ) एकार्यस्य भावः, एकार्य-तत्-टाप् । धर्म या लक्ष्मकी अभिरता, माने या मतनवका मिल ।

एकार्यसमुपेत ( सं० द्वि० ) एकार्येन अभिचार्येन समुपेतं युक्तम्, ३-तत् । १ एक धर्मविशिष्ट, वही माने रहनेवाला । २ एक लक्ष्मसमुप, वही मतनव रहनेवाला ।

एकार्यीभाव ( सं० पु० ) एक चर्चका चारय, वही माने रहनेकी बात ।

एदायन ( सं० ति० ) एद-कम् ।

एकायय ( सं० ति० ) एकमभियमनययं यय्य, यय्यो० ।

१ एकमरीरविगिट, वरी क्रिया रचनेवाला । २ तुल्य-

मरीर-विगिट, वरावर क्रिया रचनेवाला । ( की० )

कर्मधा० । ३ एकमात्र यत्न, यत्निका यत्नो ।

एकायना ( सं० स्त्री० ) एका देखा पावनी माला,

कर्मधा० । १ एक सरसाला, एकलङ्का चार । २ अन-

द्वारविशेष ।

“पूर्वो ग्री” प्रति (विन्दयनेन परं वरम् ।

सुखमिदोपमे वा दिन माण्डेकाने रिता ।” (भातिन्दरंज)

पुमे पुं पदमे प्रति पर पर पदका विज्ञेयपदपमे

स्यापि वा परिवृत्ता रोगा एकायनी अनद्वार धाताता

है । ३ एकदश गचारकी एक छन्दोवृत्ति ।

एकायीत ( सं० ति० ) इकायीवां, आ इकायीति

रयानपर हो ।

एकायीति ( सं० स्त्री० ) एकीनामिन प्रगतिः, मध्य-

पदनी० । इकायां, प्रगो धीर एक, पर ।

एकायीतिम, एकायीति देता ।

एकायीतिपद ( सं० स्त्री० ) एकायीतिः पदान्तर,

गद्यो० । प्रथम गृहकारका वा गृहप्रथमेति ममय वान्तुकी

पुत्राकी वा या जनिवाला मण्डल । दूसरे तिर्थ

एवं ऊर्ध्व प्रदेशपर एक रत्नाय इकायो कील स्वीचि

जाते हैं । भाष्यार्थ देता ।

एकायन ( सं० पु० ) निर्दोष स्थान, निरानी लयत ।

एकायय ( सं० ति० ) एक पाथय गाथारी अथवायने

वा यय्य, यय्यो० । १ समन्दगति, एक ही मसारा

पकटनेवाला । २ एक कार्यायलमो, वही काम करने-

वाला । ( पु० ) कर्मधा० । ३ एक पाधार, यकीना

मसारा ।

एकायित ( सं० वि० ) एकमायितम्, -तम् । १ एककि

ग्रन्थगत, समोदी यमनायने पदवा दया । २ अनय-

गति, जो दूसरी चाल चलता न हो ।

एकायितगुण ( सं० पु० ) एकमिन् पदार्थे थायितो

गुणः । एकवृत्तिधर्म । मिश्रान्तसुखायनीमें रूप, रस,

गन्ध, स्पर्श, एकत्व, एकद्वयकत्व, परिमाण, परत्व,

अपरत्व, इति, सप्त, दुःख, दुःख, द्वेष, यत्न, सुख,

द्वयत्व, खेद, संस्कार, चट्ट पीर गणकी एकवृत्ति-

धर्म कहा है ।

एकायका ( सं० स्त्री० ) १ माघ भागकी कल्याणो,

माघ वदी पटिमो । २ माघ भागकी कल्याणोकी

क्रिया जमिवाला आद । ३ श्रवो । ( यय्यो० ) ४ प्रका-

यतिही एक कल्या ।

एकायो ( सं० स्त्री० ) १ क्षार्पिनी, क्षपान । २ क्षार्पि-

नी-कोष, क्षपानकी बोहो ।

एकायोका ( सं० स्त्री० ) पाठा, निरविनी, दर-

ज्योरी ।

एकायोका ( सं० पु० ) एकमस्ति नाति, ना-क ।

यन्त्रहच, मोगसिरोका पेड ।

एकायोका ( सं० स्त्री० ) १ यन्त्रहच, मोगसिरी ।

२ पाठा, पारी, जरज्योरी ।

एकायनिक ( सं० वि० ) एकायनप्रायम्, एकायन-

पक्षन् । एकायनके छपगुण, एक हो बैठक रचनेवाला ।

एकाह ( सं० पु० ) एकमपः, एक चट्ट-टुच ।

उन्मोखाय । वा प्रकाट । १ एक दिन । २ एक दिन

साध्य जमिटीमादि यय । ( वि० ) १ एक दिनवाला,

जो एक ही दिनमें हो । ( यय्य० ) ४ एक दिनमें ।

एकाहयस ( सं० पु० ) एकाहय गम्यते, गम कर्मवि

प्रच । एक-दिनच-गम्य स्थान, एक राधाभा सन्दर ।

एकाहार ( सं० पु० ) एकः पक्षितोय पाहारः,

कर्मधा० । दिनमें एकवारका भोजन, दिनमें एक

सरनकाका लाना । ( वि० ) २ एकाहारो, दिनमें

एक ही सरतथा खानेवाला ।

एकाहारी ( सं० वि० ) एकाहारोऽस्याक्ति, एक-

पाहार-इति । एकवार हो भोजन करनेवाला, जो

एक ही सरतथा खाता हो ।

एकाहिक ( सं० वि० ) एकाह-ठन् । एकदिन-

साध्य, एक रोजमें हो जानेवाला ।

एकाह्या ( सं० स्त्री० ) एकवर्षीय गाभी, एक भागकी

बहिया ।

एकीकरण ( सं० स्त्री० ) एक-यमृत-तदभावे वि-ल-

सुट । एककीकरण, एकहा करनेका काम ।

एकीकृत ( सं० वि० ) मिश्रित, एक किया हुआ ।

एकीभय ( सं० लि० ) मिश्रित, जो एक बन गया हो ।  
एकीभाज ( सं० पु० ) एक-चतुर्भुजतद्भावे त्रिभु-  
जश्च । १ संगोच, मिश्रण । २ साधारण प्रकृति या  
साधुति, सामान्यी कृपण या ज्ञायदाट ।  
एकीभावी ( सं० लि० ) सरसि मेरुके समन्वय स्थाने-  
वाला ।  
एकीभूत ( सं० लि० ) एकज, दण्डा, जो तीन  
गया हो ।  
एशीय ( सं० लि० ) एकस्थान निवृत्तीति, एक-ए ।  
१ एकपद, एकवर्ष । २ एक सम्बन्धीय, एकते गुणा-  
न्वित् । ३ सहाय, साथी ।  
एकेक्षण ( सं० पु० ) एकमोक्षणं यस्य, वृद्धी० ।  
१ काक, दौघा । २ काना । ३ गुणाचार्य । पुराणम  
गुणाचार्यके एक-नेत्रपर निरुद्धा, वनिराजने रूप  
गुणाचार्यका निषेध न मान्य सामन्तेशको विषाद  
भूति देनेका कथोक्त किष्वा, तत्र वृद्धेति प्रत्ययान्ति-  
रूप दान चरित्त ठहरायेके अभिप्रायने सूत्रग्रन्थमें  
जगपादका सुषा रोक दिया था । किन्तु बानन्तेश  
यह बातसे सन्नत भये । उन्होंने जगपादका पित्र  
वृद्धके वृद्धके सुषा सुषाचार्यका एक भय फाट  
डाला ।  
एकैन्द्रिय ( सं० पु० ) १ इन्द्रियका मात्रको जोर  
नियत । इन प्रत्ययों इन्द्रियको मनो जोर भुक्त  
दोनों बातोंमें प्रत्यय स्थित हैं । २ एकमात्र इन्द्रिय-  
युक्त जीव । हैन जनोष्ठादि जीवोंको एकैन्द्रिय मानते  
हैं । कारण, उनके शिवा तन्मूर्ति दूसरा इन्द्रिय  
नहीं रहता ।

एकैका ( स० वि० ) एकौद्धिनीय ईशाः । १ प्रथम  
 पतिपति, बड़ा मानिक । २ एकाकी, गनडा, पतिना ।  
 एकैक ( स० वि० ) १ एकाकी, पतिना । ( दस० )  
 २ पतिने, एक-एक ।

एकैकतर ( मं० ति० ) एकाकी, धकेला ।  
 एकैकवृत्ति ( मं० ति० ) प्रत्येक एकाकीमें धवद्यान  
 करनेवाला, या एक-एकमें रहता हो ।

एकैकगः (सं० चय्य०) एकैक-गम् । पुयक्-पुयक्,  
चसग-चसग, एक-एक ।

एतेकथ (मं. लो.) १ पञ्चाङ्गी सिद्धि, तत्तदा  
 ज्ञानतः । (दश०) २ दृक्-पृक्, एत-पञ्च ।  
 एकैषिकथैव (मं. लो.) तत्त्वामर तैव, एकैषिक  
 तैव । यद् एतन्, विनष्टं दौर्भाग्यं यद् दान्तादानी-  
 यान्ता होता है । (मन्त्रार्थ)

एकपिशा ( सं० प्रो० ) १ यक्षपुष्पजल, गो-  
मिर्चिता पेड । २ पाना, चरुपात्र । ३ विट्ठल ।  
दशना तेन भागुर, यति गीत, विजय, रातकोपन  
शौर श्रेष्ठार्पण शोभा ॥ ( दृश्य )

पदार्थो ( मं० स्त्री० ) पाना, ४१३५०२१ ।

एनोन्ति (मं० स्त्री०) गहमाय वयस, पथेना  
लकड़।

[illegible]

एकोतरमी (दि० वि०) एकापारमन, एकमी पत्र ।  
 एकोतरा (दि० पु०) १ हवें मेळटोना घाव ।  
 (वि०) = एक दिवस घमरमे घामेराभा, तो एक  
 येजुडे फुर्जे घाव हो ।

एकोनर (मं० द्वि०) एक संज्ञा अधिक रूपसे-  
बान्ना, ओ एकमे वदता है।

एकोत्तरिका ( सं० स्त्री० ) बीबीका चतुर्थ पागम ।  
 एकोदक ( सं० पु० ) एक तुल्यसुदक यक्ष, बह्व्री० ।  
 एकगोत्रज ऊर्ध्वतन सप्तम पुरुष ।  
 एकोटर ( सं० पु० ) एक अभियं सदर ज्ञानचय  
 यक्ष, बह्व्री० । १ सद्योदर, एक ही पेटसे पैदा होने-  
 वाला । ( स्त्री० ) २ तुल्य सदर, बराबर पेट ।  
 एकोदास ( सं० त्रि० ) एकमात्र उदास स्वरयुक्त ।  
 एकोद्दिष्ट ( सं० स्त्री० ) एकः प्रेत एव उद्दिष्टो यक्ष,  
 बह्व्री० । प्रेतोद्देशसे किया जानेवाला एक आह ।  
 यह आह मृत व्यक्तिके उद्देशसे प्रति वर्ष किया जाता  
 है । इसे मध्याह्नकालपर करना चाहिये । क्योंकि  
 पूर्वाह्नको देविक, अपराह्नको पार्वण और मध्याह्नको  
 एकोद्दिष्ट आह करनेकी व्यवस्था है । यथा—

“पूर्वाह्ने देविकं आह्नमपराह्ने तु पार्वणम् ।

एकोद्दिष्टं तु मध्याह्ने मातर्हस्तिनिष्कम् ॥” ( मनु )

कुतपके प्रथम भाग और भावर्तनके निकटवर्ती  
 कालपर एकोद्दिष्ट आराध्य करना चाहिये । पश्चिम-  
 दिग्वर्धित छाया पूर्वदिक् जाने समय भावर्तनकाल  
 होता है । एकोद्दिष्टके समय कोई विघ्न पड़नेसे अन्य  
 मासमें क्षण्य एकादशी तिथिकी ग्राह किया जा सकता  
 है । पिता और माताके आहका पुत्रको ही अधिकार है ।  
 पुत्रके अभावमें पत्नी और पत्नीके अभावमें सद्योदरपर  
 पिच्छजलदान करनेका भार पड़ता है । पुत्र शब्दके  
 द्वारा दादय प्रकार पुत्रोंके आहधिकारी होनेकी  
 सम्भावना रहने भी कस्मिं अन्य पुत्रका निषेध लगने-  
 से औरस और दत्तक पुत्र ही समझा जायेगा । याज्ञ-  
 वल्करके कथनानुसार पुत्र, पोत्र, प्रपोत्र, दोहिव, पत्नी,  
 आता, आतुप्पुत्र, पिता, माता, पुत्रवधू, भगिनी,  
 भागिनिय, सपिण्ड तथा गोदकमें पूर्वपूर्वका अभाव  
 जानेसे उत्तरोत्तर व्यक्ति आहका अधिकारी होगा ।  
 किन्तु जहाँ पिताके बाद पितामह मरता, उस स्थलमें  
 पितामहके दत्तकादि पुत्र न रहनेसे पोत्रको अधिकार  
 मिलता है । दासिजात्य अन्तर्में लिप्य, कि पत्नी तथा  
 दोहिव उभय विद्यमान रहते पत्नी, दोहिव एवं  
 आतुप्पुत्र उभय विद्यमान रहते विभक्ताक्षमें दोहिव  
 तथा पवित्रताक्षमें आतुप्पुत्र और आता एवं आतु-

प्पुत्र उभय विद्यमान रहते कनिष्ठ होनेसे आता  
 तथा प्येष्ठ होनेसे आतुप्पुत्रको आह करना चाहिये ।  
 एकोद्देश ( सं० पु० ) एकव्य उद्देशः, ६-तत् । एकका  
 उद्देश, एक ही बातकी हिदायत ।

एकोम ( सं० त्रि० ) एककम, जिसमें एक कम पड़े ।  
 यह शब्द विंशति, त्रिंशत् प्रथति दशकके पादिमें  
 आता है, जैसे—एकोनविंशति, एकोनत्रिंशत् प्रथति ।  
 एकोमिका ( सं० स्त्री० ) एका सुप्या उमिका कम-  
 नोया, कर्मघा० । पाठा, छरछोरी ।

एकोष ( सं० पु० ) अविच्छिन्नप्रवाह, बन्द न होने-  
 वाला बहाव ।

एकोषिका, एकोषिका देवी ।

एकोषमृत ( सं० त्रि० ) एकमात्र समूहमें एकड़ा  
 हुआ, जो मिलकर टेर बन गया हो ।

एकोभा ( हिं० वि० ) एकाकी, तनहा, दूसरेकी  
 साथ न रखनेवाला ।

एकोतना ( हिं० त्रि० ) बालका फूटना, दाना पड़ना ।

एका ( हिं० पु० ) १ यानविशेष, एक गाड़ी । इसमें  
 एक ही अश्व वा हयम जोता जाता है । २ अद्वितीय  
 वीर, अनोखा बहादुर । ३ बड़ा सुदगर । यह दोनों  
 जायसे उठता है । ४ आभूषणविशेष, एक जेवर ।  
 इसमें एक ही नग लगता है । एकेको लोग बाँझपर  
 बाँधते हैं । ५ किसी कृष्णका गमादान । इसमें  
 एक ही वस्ती जलती है । ६ एक ताम्र । इसमें एक  
 ही बूटी रहती है । ७ पशुविशेष, अपने भुण्डकी लोड़  
 पसग रहनेवाला जानवर । ( त्रि० ) ८ एकसम्बन्धी,  
 जो दूसरेसे सरोकार रखता न हो । ९ एकाकी,  
 चकेला ।

एकावान ( हिं० पु० ) एका हाकिमवाला पुरुष, जो  
 शब्दस एका चलता हो ।

एकावानी ( हिं० स्त्री० ) १ एका चलानेका काम ।  
 २ एकेकी मजदूरी ।

एकी ( हिं० स्त्री० ) १ तागका एक पत्ता । यह  
 अपने रंगमें सधसे बड़ी पड़ती और इरेककी काट  
 सकती है । २ एकमात्र हयमविगिट गकट, एक  
 बैलकी गाड़ी ।

एकशानवे ( हिं० वि० ) १ एकनवति, नव्वे और एक, ८१। ( पु० ) २ एकनवति संख्या, एकशानवे शब्द।

एकशान ( हिं० वि० ) १ एकप्रशान्त, पचास और एक, ५१। ( पु० ) एकप्रशान्त संख्या, पचास और एक मिलकर बननेवाली शब्द।

एकशान ( हिं० वि० ) १ एकशान्ति, असी और एक, ८१। २ एकशान्ति संख्या, असी और एक मिलकर बननेवाली शब्द।

एकशान ( चं० पु० = Exchange ) व्यापारस्थान-विशेष, सोदागरीकी एक जगह। यहाँ व्यापारी और शिपिक् आदान-प्रदान तथा क्रय-विक्रयके लिये जुटते हैं।

एकशान ( चं० पु० = Expose ) १ समुच्च या निकट स्थापन, सामने या पास रखनेका काम। जब किसी वस्तुका प्रभाव अन्य द्रव्यपर पहुँचाना चाहते, तब उसे उसके पास एकशान करती है। फोटो छतारते समय सेसका सुख उद्घाटित करना भी एकशान की कहाता है।

एकशान ( फ्रा० स्त्री० ) धूप, मोरबा। एकशान मांसमें भी होती है।

एकशान ( फ्रा० स्त्री० ) १ एक, इससे। २ सुदृढ़ भाव, दोस्ती।

एकशान ( फ्रा० वि० ) सुदृढ़, मेली।

एक ( सं० धा० ) भा० आत्म० भक० सेट्। "एक, रोगी।" ( बरिचलङ्ग ) १ दौंसि पाना, समझना। भा० पर० सक० सेट्। "एक, बच।" ( बरिचलङ्ग ) २ कम्पन देना, कंपाना।

एक ( सं० वि० ) कम्पित कर देनेवाला, जो कंप देता हो।

एक ( सं० स्त्री० ) चैतन्य वा सजीव वस्तु, चलती-फिरती या जीती-जागती चीज।

एक ( सं० वि० ) १ कम्पनशील, जो कंप रहा हो। ( पु० ) २ कीटविशेष, एक कीड़ा।

एक ( सं० पु० ) एक पायू। कम्प, कंपाई।

एक ( सं० स्त्री० ) एक भावे, झुट्। कम्पन, कंपाई।

एक ( सं० वि० ) एक-इन्। शतरोगप्रदा, जिसके गठियेकी बीमारी रहे।

एक ( सं० वि० ) कम्पित, हिलता हुआ, जो झेल गया हो।

एक ( सं० वि० ) कम्पित किया जानेवाला, जो हिलाये जानेके काबिल हो।

एक ( सं० वि० ) कम्पित करनेवाला, जो झिनाता हो।

एजेंट ( चं० पु०-स्त्री० = Agent ) प्रतिद्वन्द्व, प्रतिनिधि, गुमास्ता, कारिन्दा—जैसे पोलिटिकल एजेंट, काम-गान एजेंट।

एजेंसी ( चं० स्त्री० = Agency ) १ प्रतिनिधित्व, मुनीबी, पाठन, सेवाकारी।

एज ( सं० वि० ) पा-यन्-वयप्। सम्यक् रूप धारणीय, अच्छी तरह चढ़ाया जानेवाला।

एटा—१ युक्तमानका एक जिता। यह पचा० २०' १८' ३२" तथा २८' १' १८" ७" और द्वावि० ७८' २०' २४" एवं ७८' १८' २१" पु० पर अवस्थित है। दक्षिण सीमापर गङ्गा बहती है। क्षेत्रफल १०१८ वर्ग-मील है। कासगंज नगर व्यवसायका केन्द्र है। कामो-नदी गङ्गामें गिरती है। यह जिलेमें उष्ण बहुत कम है।

बहने—प्राचीन समयकी कालीकी उपत्यकामें बड़े बड़े नगर बसते थे। ५वीं और ७वीं ई० शताब्दीके चीना परिमाणक भी उष्ण विषयका वर्णन लिख गये हैं। एटा जिलेमें उष्ण समय अनेक मन्दिर और मठ बने थे, जिन्हें देखते छत्रं बुझ गये। पतरासीके मष्टभट्ट श्रुतिकाथयने लगे कीचनका शक्ति सम्बन्ध रहा। सन्धतः १४ शताब्दी १०म शताब्दी पर्यन्त पचीरी और भारीका राज्य बना, फिर राजपूतोंकी अधिकार मिला। १०१० ई०को कबोज पर बहने समय महमूद गजनवीने एटेवर बहने बहने केरा किया। फिर दो शताब्दी बाद यमुनाकी दोषोंमें राठौर जयचन्द्रसे बहने जाने सुहृद्द गौरीकी फौज रही—जिसके निकली होगी। उनी समयमें एटा सुसज्जमानोंके अधीन बना जाता है। यहसे पटियाकी प्रधान नगर और हाथुकीका घर था। १२०० ई०की

सुलतान बन्धुने उनके पत्न्याचारकी बात सुनी।  
 उन्होंने स्वयं पटियाली जा और जङ्गलमें बड़ी फौज  
 जमा करवायकी राह खोजी थी। १५ वीं शताब्दीकी  
 बार बार सुलतानोंका आक्रमण पड़ते समय एटकी  
 बड़ी दुर्दशा हुयी थीर दोनों ओरकी मार महाना  
 पड़ी। एकवरने इसे अपने कब्रान, कोयल और  
 बटायुके सरकारोंने मिनाया तथा मेनपुरीके कहर  
 हिन्दुओंने मङ्गनेको पछड़ा बनाया था। फिर अन्तकी  
 घेरा पर लखनऊके नवाबका अधिकार रहा।  
 १८०१-२ ई०को उन्होंने पन्थ देगके साथ इसे भी  
 पंगरेलीके हाथ खोया। १८४५ ई०को एटके इधर  
 उधर परगनोंकी परालकता पर सरकारकी दृष्टि पड़ी  
 थी। इसीसे पटियालीमें एक डिपुटी कलेक्टर और  
 जाइण्ट मजिस्ट्रेट रख गया। फिर १८५६ ई०को  
 ईट कार्टर एटा गाँवमें ठठ थाया। इसी एटा गाँवके  
 नामपर जिला भी एटा कहाया है। १८५० ई०को  
 जलौगढ़में बनबेका समाचार आते ही एटाको मारी  
 फौज बुधके चल हुई थी। कासगंजकी रक्षाके लिये  
 बड़ी घेरा को गयी, किन्तु सफलता न मिली।  
 उस समय एटाके राजा धामड़ सिंह जिविके दक्षि-  
 चांगमें सतन्य गांवक बन बैठे। किन्तु फर्रुखाबादके  
 नवाबने उन्हें मार भगाया और कुछ मासके लिये  
 अपना अधिकार जमाया था। १५वीं दिसम्बरकी  
 लगरल घीघड़की फौजने विद्रोहियोंपर आक्रमण मार  
 कासगंजकी उधर किया। १८०८-०९ ई०को रोग  
 और दुर्भिक्षका प्रादुर्भाव रहा। इस-जिलेमें कितने ही  
 सामान्यजल आप्रण लमोन्दार हैं। सेकड़े पीछे ७०  
 पादमी खेतीके सहाय रहते हैं। मन्दिर और मठ-  
 जद बहुत कम हैं। टिहरी अधिक निजलती है।  
 वर्षामें बाढ़से भी बड़ी हानि होती है। १८६०-६१  
 ई०को दुर्भिक्षके समय लोगोंने खासपात खाकर प्राण  
 बचाया था। उत्तराग्रेमें चीनी तैयार होती है। सगकी  
 रण्णी और मोरी बनती है। सोरेमें प्रतिवर्ष गन्ना  
 खानका मिना लगता है। एटाने मिर्कोहाबादको  
 पछे सड़क गई है। कासगंज और टुंडवारगंजसे  
 रानी पाँच नाम पर साद कर माल बाहर भेजा जाता

है। जलवायु शुष्क और स्वास्थ्यकर है। किन्तु  
 चीष जटुमें प्रायः प्रत्यह बाम् और धूमिका गुफान  
 आया करता है। खुर और शीतलाका प्रकोप रहता  
 और कभी-कभी पैसा भी जोर पकड़ता है।

२ युक्तप्रान्तके एटा जिलेकी तहसील। यह कासी  
 नदीसे पश्चिम पड़ती है। मिथगढ़ा नहरकी तीग  
 शाखा सीधका काम देती है। भूमिका परिमाण  
 ४८१ वर्गमील है।

३ युक्तप्रान्तके एटा जिलेका प्रधान नगर। यह  
 पचा० २०° ११' ५०" उ० तथा द्रावि० ७८° ४२'  
 २५" पू० पर कासी नदीसे ८ मील पश्चिम अवस्थित  
 है। पहले यह छोटासा गाँव था, किन्तु १८५६ ई०को  
 पटियालीसे कचहरो वगैरह ठठ आनेपर गहर बन  
 गया। दिनचुण रायका मन्दिर बहुत ऊँचा है।  
 तालाबकी भीमा देखकर लौ प्रसन्न हो जाता है।  
 नगरसे उत्तर संघामसिंह चौकानका किन्ना है। इसे  
 बने कोई ५०० वर्ष होती। संघामसिंहके संग्रह पहले  
 राजा कहाते और किलेके पास-पास दुर्कगत चलाने  
 थे। किन्तु घियाही विद्रोहके समय राजा धामड़-  
 सिंहके पचा छठाने पर सरकारने उनका माल  
 प्रसवाव सब खीन लिया और उन्हें राज्यसे निकाल  
 बाहर किया। नगरमें मछीके मकान बहुत हैं।

ए० ( स० घा० ) आ० आन० सक० सेट।  
 "पदक" अपने ।" ( बरिजहम ) बाधा छानना, रोकना,  
 हिड़ना।

एड ( स० पु० ) इस स्वप्ने प्रच, डगदीरेष्यम्, चयवा  
 पा-इड-घञ्। १ भयविगेय, किन्ती कियका भिड़ा।  
 ( वि० ) २ अधिर, बहारा, जिसे सुन न पड़े।  
 ( हि० की० ) ३ पार्थिव, एडो।

एडक ( स० पु० ) एड भाष्ये कान्, एड् कान्, वा।  
 १ घृष्ट-युद्ध भय, भिड़ा। २ वनचुगल, अंगली  
 बकरा। ३ लघुविगेय, पतेर। ४ मखिछा, मज्रोठ।  
 एडकघृत ( स० स्त्री० ) एडकके नयनीतति स्थित  
 घृत, भिड़के मकनका घी। यह बुद्धि पाटव और  
 बनकी बढ़ाता है। अति गुद होनेसे सुकुमारोंकी  
 एडकघृत खाना न चाहिये। ( मन्त्रिष्य )

एडका ( सं० स्त्री० ) एडकस स्त्री, टाप्। भैंसी, भेड़।

एडकाख्य, एडक देखो।

एडगल ( सं० पु० ) एडो मेघ एव गजी यस्य मध्य-  
कत्वात्। १ चक्रमंदक, चक्रवर्द्ध, चक्रीडिया। इसका  
संस्कृत पर्याय चक्रमंद, प्रपुष्पाट, ददुघ्न, मियलोचन,  
पद्मट, चक्र घोर पुष्पाट है। ( Cassia Tora ) यह  
कट्ट पड़ता घोर वायु, कफ, कुष्ठ, त्वग्दोष, गुल्म,  
उदररोग एवं चर्मरोगों का कारण होता है। चक्रमंद देखो।  
२ वन्य पत्ता, लंगसो इलायचो।

एडगजा ( सं० स्त्री० ) एडगज देखो।

एडमूक ( सं० त्रि० ) एडवत् मूक्य, कर्मधा०।  
१ यक्षिण, बहुरा, जिसे चुन न पड़े। २ वाक्शुति-  
वर्जित, बहुरा घोर गूंगा, जो कदचुन न सकता हो।  
३ शठ, प्रतारक, बदमाश, पासी।

एडहस्ती ( सं० पु० ) चक्रमंद, चक्रीडिया।

एडिटर ( सं० पु० = Editor ) लेखक, मोहतमिम-  
तवा, तरमीम करके छापनेवाला।

एडिटरी ( हिं० स्त्री० ) लेखकका कार्य, मोहतमिम-  
तवाका पोहदा या काम।

एही ( हिं० स्त्री० ) पार्थिव, एह।

एहीकांग ( सं० पु० = Aid-de-camp ) सेनापतिका  
सहायक, फौजके पक्षधरका सुपाडिव। यह सेना-  
पतिके पादेशका प्रचार करता है। समय लगनेपर  
सेनापतिकी ओरसे पत्र व्यवहार और शरीर रक्षणका  
कार्य भी एहीकांगकी ही करना पड़ता है।

एडूष ( सं० स्त्री० ) ईडू-ऊक इयोदरादित्वात् ऋषः।  
ऊकू-ऊकषव। एषू, ऋषः। १ चक्रमंदक चक्रि, भीतरकी  
बड़ही। २ चक्रमंदक कठिन द्रव्य, भीतरकी कड़ी  
चीज। ३ चक्रि-ऊकष कठिन द्रव्यसे निर्मित भक्षण,  
जो मकान् बड़ही जैसी कड़ी चीजसे बना हो। ( त्रि० )  
४ यक्षिण, बहुरा।

एडूक, एडूक देखो।

“एडूकान् पुनरिदमिदं वर्तते” ( भाट्ट, पृष्ठ १८५१ )

एडूक, एडूक देखो।

एड्रेस ( सं० पु० = Address ) १ अभिसन्धायक,

सम्बोधन, गुजारिय, तक्रीर। २ नेपुण्य, मुन्दी।  
३ नामधाम, सरनामा, ठिकाना।

एडा ( हिं० वि० ) बाध्य, बसो, ताकतवर।

एष ( सं० पु० ) एति द्रुतं गच्छतीति, १ वाह्यमात्  
य। १ हिरण्य, हिरणा। २ लघुमृगविशेष, कर्मजयन।  
इसका मांस कषाय, मधुर, द्रव्य, बन्ध, धारक, हृदि-  
कर घोर रक्त, पित्त, कफ तथा वातको दूर करनेवाला  
है। ( सुश्रुत, कर्मजयन ) विशेषतः स्वरमं एषका मांस  
प्रयुक्त रहता है। ( चक्रवर्ति ) यह मृग लघुवर्ण होता  
है। बहुत सुन्दर और पद ध्वनि रहने है। ज्योतिषमें  
मकरको एष कहते हैं।

एषक ( सं० पु० ) एष स्वाधे कम्। १ हिरण्य,  
हिरणा। २ लघुमांस, कर्मजयन।

एषतिनक ( सं० पु० ) एषो मृगस्तिनकमिव पश्य,  
बहुमी०। मृगाह, चांद।

एषट्क ( सं० त्रि० ) एषस्य दृगिव दृक् एषुर्वस्य,  
बहुमी०। १ मृगनेत्र, चांद चरम। ( पु० ) २ मकर कर्म।  
एषभत् ( सं० पु० ) एषं विभक्तिं, एष-भ-क्तिप्  
मुगागमः। चन्द्र, चांद।

एषाजिन ( सं० स्त्री० ) एषस्य पञ्चिनं चर्म, इ-तत्।  
मृगचर्म, मृगहाला।

एषीदाह ( सं० पु० ) एक प्रकारका मन्त्रिपात-  
स्वर।

एषीपचन ( सं० स्त्री० ) एषो पृथते पच, पच-  
तुरट्। १ देगविशेष, एक मुण्ड। २ जातिविशेष,  
कोई लोग। जो लोग पचप्य भो-पचकी बत्था कर  
खाते, वह एषीपचन कहते हैं।

एषीपद ( सं० त्रि० ) एषोः पादाविव पादो पच्य,  
बहुमी०। मृगोको भाति पद रचनेवाला, जो हिर-  
ण्योको तरह घेर रचता हो। ( पु० ) मन्त्रसे चर्म,  
कीड़ियाला मांस।

एषीपदी ( सं० स्त्री० ) एषास्य कृताभिद, विभो-  
क्तिप्रका जहरोला कीड़ा।

एत ( सं० त्रि० ) एत-रथ-त्तः। १ आगत, आया  
हुआ। २ नामाविष वर्णमुष्ण, रंगदार, रियमं कदं  
तरहसे रंग रहें। ( पु० ) या मृगमेघ, ज्योति,



पान-इ कर्तेरि। ३ मृग, हिरन। ४ मिश्रित वर्ण,  
मिना कृपा रंग। ५ छोटक, छोड़ा।

एतकाट (सं० पु०) दृढ़ निश्चय, विश्वास, दिस-  
क्रमर।

एताव (सं० पु०) १ विचित्र पक्ष, अनोखा छोड़ा।  
२ साधारण पक्षमात्र, कोई छोड़ा। (त्रि०) ३ विचित्र,  
अनोखा।

एतज्ज (सं० त्रि०) इसमें उत्पन्न, जो इससे निकला हो।

एतत् (सं० त्रि०) इत्, अतोऽदिः तुहागमय।  
पदेकर १। अ० १।१११। यह। एतत् शब्द अथवर्ति-  
बोधक सर्वनाम है।

एतत्काल (सं० पु०) वर्तमान समय, जमाना ज्ञान।

एतत्कालीन (सं० त्रि०) वर्तमान काल-सम्बन्धीय,  
जमाना-ज्ञानसे सरोकार रखनेवाला।

एतत्कथात् (सं० अर्थ०) इस कथने, कथने।

एतत्तुल्य (सं० त्रि०) एतेन तुल्यः, ०-तत्। इसके  
तुल्य, ऐसा ही।

एतत्प्रथम (सं० त्रि०) प्रथमतः कार्यकारी, पहले  
पक्ष काम करनेवाला।

एतत्सम (सं० त्रि०) एतेन समः तुल्यः, १-तत्।  
इसके समान, ऐसा।

एतद्, एतद् द्वि०।

एतदतिरिक्त (सं० त्रि०) एतत्कादतिरिक्तोऽधिकः,  
५-तत्। इसकी अपेक्षा अधिक, जो इससे अलग हो।

एतदनन्तर (सं० अर्थ०) एतत्कादनन्तरम्, ५-तत्।  
इसके अनन्तर, इसके पीछे।

एतदन्ता (सं० त्रि०) एषो अन्ताः अवसानं यस्य,  
बहुव्री०। इसमें समाप्त होनेवाला, जो इसतरफ  
अन्त हो।

“एतदन्तात् अतो अन्तात् अनुवर्तते।” (अ० १।११०)

एतदपेक्षा (सं० अर्थ०) इसकी अपेक्षा, इसकी  
बलिसबत।

एतदर्थ (सं० पु०) १ यह विषय, यह बात।

(अर्थ०) २ इसके निमित्त, इसनिष्ठे।

एतदवधि (सं० अर्थ०) एषः अवधिः सीमा यस्य,  
बहुव्री०। इस पर्यन्त, यहां तक।

एतदवश्य (सं० त्रि०) एषा अवस्था यस्य, बहुव्री०-  
हस्तः। ऐसी अवस्थाकी प्राप्ति, इन ज्ञानतत्वात्।

एतदारभ्य (सं० त्रि०) एष आत्मा अभावो यस्य तत्त्व-  
भावः, भावार्थ अर्थ०। एतद्वृत्ता, ऐसी दान्त।

एतदादि (सं० त्रि०) एष आदियस्य, बहुव्री०। इसमें  
आरम्भ होनेवाला, जो इसतरफ शुरू हो।

एतदान (सं० पु०) १ एतद्गतस्य, बराबरी। २ राग-  
विशेष।

एतदितर (सं० त्रि०) एतत्कादितरः, ५-तत्। इससे  
भिन्न, दूसरा।

एतदोय (सं० त्रि०) एतस्य इदम्, एतद्-कः। एतत्-  
सम्बन्धीय, इसमें सरोकार रखनेवाला।

एतदुत्तम (सं० त्रि०) एतत्कादुत्तमः, ५-तत्। इसकी  
अपेक्षा श्रेष्ठ, इससे अच्छा।

एतदेव (सं० अर्थ०) एतद् एवः। यही, दूसरा नहीं।

एतदुगत (सं० त्रि०) एतन्निगु गतः प्रविष्टः, ०-तत्।  
इसका मध्यवर्ती, इसमें पहुँचनेवाला।

एतदेनीय (सं० त्रि०) इषी देगवाला, जो दूसरे  
मुखसे सरोकार रखता न हो।

एतद्वितीय (सं० त्रि०) इसमें भिन्न अथवा  
कार्यकारी, जो इसे छोड़ दूसरे मरतवा कोई काम  
करता हो।

एतदेतुक (सं० त्रि०) एष ऐतुर्यस्य, बहुव्री० अर्थ०।  
इस कारणसे विनिष्ट, जो इस सबबसे बना हो।

एतदभिव (सं० त्रि०) एतत्कात् भिवम्, ५-तत्।  
इयक्, दूसरा।

एतद्योने (सं० त्रि०) इसमें स्थित, इससे निकलनेवाला।

एतद्वृत् (सं० त्रि०) एतदेव कर्णं स्वर्णं यस्य। इस  
कथना, ऐसा।

एतद्वत् (सं० त्रि०) एतद्-वत्पु। एतद्विनिष्ट,  
ऐसा। (अर्थ०) २ इस प्रकारसे, ऐसे।

एतन (सं० पु०) आत्-इ-तन। १ निष्ठा, मांसका  
छोड़ना। २ मत्स्यविशेष, एक मछली।

एतन्मध्य (सं० अर्थ०) इसके मध्य, इसके बीच।

एतन्मय (सं० त्रि०) एतद्विनिष्ट, ऐसा, इससे बना  
हुआ।

एतन्मात्र (सं० वि०) एतद्-मात्रम् । इत्यादि इत्यन्तम्  
मात्रम् । वा ३।५।१० । इस परिमाणवाला, इतना ।

एतन्नार (अ० पु०) मित्रास, भरोसा, ठिकाना ।

एतन्नाय (अ० पु०) आपत्ति, भगड़ा, कहा-सुनी ।

एतद्दि (सं० अर्थ०) इदम्-दिस् एतादेवम् ।

इतनेदि । वा ३।५।११ । एते तो एकीः । वा ३।५।१२ । सम्प्रति,  
अध, इस समय पर ।

एतवार, इतवार देकी ।

एतवारी (हिं० वि०) एतवारवाला, जो इतवारकी हो ।

एतम् (सं० पु०) इत्-तम् । इत्तमन्तम् ।

एत्, वा ३।५।१८ । ब्राह्मण ।

एतम्, एतम् देकी ।

एतसं (सं० पु०) इत्-साहुलकात् तसन् । ब्राह्मण ।

एता (सं० स्त्री०) १ हरिणी, हिरनी । (हिं० वि०)

२ इस परिमाणवाला, इतना ।

एतादृक् (सं० वि०) एतदिव दृश्यते, एतद्-दृग्-  
किन् । इस प्रकारवाला, ऐसा ।

एतादृश्च (सं० वि०) एतदिव दृश्यते, एतद् दृग्-  
कश् । इस प्रकारवाला, ऐसा ।

एतादृग् (सं० वि०) एतदिव दृश्यते, एतद्-दृग्-  
टक् । १ एतद्दृग्, ऐसा । २ इस प्रकार निर्मित,  
ऐसा ही बना हुआ ।

एतावत् (सं० वि०) एतद्-वत् । वा ३।५।१३ । वरि  
जाने वत् । वा ३।५।१८ । १ इस परिमाणवाला, इतना  
ज्यादा । (अर्थ०) २ इस प्रकारसे, ऐसे ।

एतावन्मात्र (सं० वि०) केवल इसी परिमाणवाला,  
इतना ही ।

एतिक (हिं० वि०) इस परिमाणवाली, इतनी ।  
यह मन्त्र सदा कीलित्वमें ही व्यवहृत होता है ।

एदर (ईदर)—गुजरातके भाहीकटि प्रान्तका एक  
राजपूत-राज्य । इस राज्यसे उत्तर सिरोही तथा  
उदयपुर, दक्षिण एवं पश्चिम बम्बई प्रान्त और  
पूर्व हुंजरपुर है । लोकसंख्या ठारि सातुमें अधिक  
निकलती है । उसमें कोई ११ हजार मील हैं ।

कोल जातिकी संख्या जो विमोक्ष है । किन्तु  
म्राह्मण, चरिय, वंश और कुलकी प्रगतिकी भी कोई

कमी नहीं । कहीं कहीं सुसमाग और जैन रहते  
हैं । दो एक घर पारसियोंके भी हैं ।

पूर्वकाल पर यहाँ कांल जातिका राजत्व रहा ।  
राजाका उपाधि भन्धुर कोल पड़ता था । इस  
वंशके ग्रेष राजाका नाम शम्भुल रहा । वह पतिव्रत  
सम्पट और पापाचारी थे । उनके मनमें हमसे  
सोनग रावकी बुलाया । उन्होंने यहाँ का शम्भुलको  
विनाश और ईदर राज्य अधिकार किया था । सोनग-  
रावसे १२ पुरुष बाद जगन्नाथ राव ईदरके राजा  
बने । उस समय मुराद बख्श गुजरातके गवर्नर थे ।  
१६५६ ई० को मुरादके दोराम्भसे जगन्नाथ राज्य  
छोड़ भनी । पीछे मुरादने यहाँ एक देगार् (सचकारी)  
नियुक्त किया था ।

१०२८ ई० की घोषपुर राज्यके दोनों भाइयों  
पानन्दसिंह और रायसिंहने कितने ही चम्पारोही  
सेन्यके साथ स्वखायासमें ईदर जय किया था । उसी  
समयमें ईदरमें राजपूतोंका अधिकार जमा ।

ईदर राज्यमें प्रधानतः सात जिने हैं—१ ईदर,  
२ बहमदनगर, ३ मोराना, ४ बायाड़, ५ हरमोल,  
६ परान्तिज और ७ बीजापुर । सिवा इसके दूसरे  
पाँच जिने ईदरके करद राज्य समझे जाते हैं ।

राजपूतोंका अधिकार होनेके कई वर्ष पीछे पूर्वोक्त  
देगार्ने अपना छानराज्य फिर पानकी साम्राज्यमें  
मिश्रवाको-मड़काया था । उन्होंने बाहारी नूबासी  
नामक एक व्यक्ति ईदर जय करनेकी रीत । उसी  
समय बाहारी ईदर राज्यमें था पड़-थे थे । सुदीग  
देख जगन्नाथ रावने कितने ही राजपूत-क्षत्रियों  
उनके साथ जोलिये । बुद्धमें पानन्द सिंह सारे गये  
थे । बाहारीकी कीत हुई । वह-कितने ही भैरव  
सामन्त छोड़ पदमदासको जल दिये । पीछे राय-  
सिंहने सेन्यसे पद कर ईदर राज्य धोता । पानन्द-  
सिंहके पुत्र शिवसिंह राजा और रायसिंह पति-  
भावक बने थे । १०६६ ई० को रायसिंह मरे ।  
इसके कुछ दिन पीछे पेमराने ईदर राज्यके परान्तिज,  
बीजापुर, मोराना, बायाड़ और हरमोलका पाशा मान  
रहा किया था । वहमिद पाशा पद मानकराईके

हाथ लगा। किन्तु उन्होंने एकदम अधिकार न जमा गिरमिन्दके साथ करका प्रवन्ध डाला था। प्रति वर्ष ईंटरके निमित्त २४०००) और चहमदनगरके निमित्त ८६५०) रु० धार्य हुआ। १०८१ ई० को गिरमिन्द मरे थे। उनके पांच पुत्र रहे। ज्येष्ठ भगमिन्द राजा बने थे। किन्तु चहमदनिके साथ ही परभोज जानेपर उन्हें दशवर्षवाले यालक पुत्र गन्धीर राय गिरमिन्द पर बैठे। उस समय राज्य विस्तृत हो गया था। गिरमिन्दके दूसरे पुत्रोंमें कोई चहमदनगर से स्वाधीन बना और कोई मोरसापुर प्रभुति अधिकार कर कुछ काल तक भोगविश्राममें पड़ा। गिरमिन्दके द्वितीय पुत्र रघुनामिन्दके मरने पर उनके पुत्र करणसिन्दकी उत्तराधिकारसूत्रसे चहमदनगर मिला था। १८२५ ई०को इहलोक छोड़नेपर करणसिन्दके पुत्र भक्तसिन्द उत्तराधिकारी बूये। १८४० ई०को उन्हें फिर थोथपुरका राज्य मिला गया। उस समयसे भक्तसिन्द थोथपुरमें रहने लगे। किन्तु उन्होंने चहमदनगरका स्वत्व छोड़ा न था। १८४६ ई०को ब्रिटिश गवर्नरसिन्धके प्रत्यक्षसे चहमदनगर, मोरसा और बायाड़ फिर ईंटर राज्यमें सम्मिलित हुआ। उस समय चंगरेज-भक्त महाराज गुवानसिन्द (K. G. B. I.) ईंटरके राजा रहे। १८६८ ई०को वह मर गये। १८८२ ई०को उनके पुत्र कैमरीसिन्द ईंटरके महाराज बूये। यही दण्डमुण्डके कर्ताबि। इनके सम्मानार्थ १५ तोपकी सलामो बंधी। पात्र भी ईंटरके महाराज गायकबादकी १०५०) रु० कर देते हैं।

२ ईंटर राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २१°५०' उ० और द्राधि० ७२°४' पू०के मध्य अवस्थित है। सांकरसंस्था यह इज्जारेसे अधिक निकलेगी। ईंटरमें साकवर और थोथधान्य विद्यमान है। एदिधिःपुपति (सं० पु०) पवित्रादिन ज्येष्ठ भगिनोको कागड भगिनोका स्वामी, देव्याही बड़े बहनको छोटी बहनका आविन्द।

एध् (सं० धा०) भा० भाज० अक० मंड०। "एध्, एतो" (अधिलक्षण) हवि, पात्रा, बढ़ना।

एध (सं० पु०) इन्धन करनेवाला, इध-धन्, निपातमात् साधुः। १८४१ वा १९११। इन्धन, जलानेकी लकड़ी।

एधतु (सं० पु०) एध-वतुः। अतिरक्षितः। १८५१ वा १९११। १ पुरुष, मर्द। २ अग्नि, भाग। (ति०) १ हवि-युक्त, बढ़ा हुआ।

एधनीय (सं० त्रि०) हवियोग्य, बढ़ाया जानेके काबिल।

एधमान (सं० त्रि०) एध-मानच्। वर्षमान, बढ़नेवाला।

एधमानद्विष (ये० त्रि०) वर्षमान अयोग्य व्यक्ति-योंमें सेव रखनेवाला, जो बढ़नेवाली बुरे लोगोंमें नफ-रत रखता हो। (भावः)

एधा (सं० क्री०) एध-घ-टाप्। सम्बन्ध, बढ़तो।

एधाहार (सं० पु०) इन्धन एकत्र करनेवाला, जो जलानेकी लकड़ी एकत्र करता हो।

एधित (सं० त्रि०) एध-तः। हविप्राप्त, बढ़ा हुआ।

एधितव्य, अर्पणीय इत्थी।

एधिता (सं० त्रि०) वर्षमान, बढ़नेवाला।

एधः (सं० क्री०) एति गच्छति प्रायश्चित्तादिना, इध-असुन्नुङागमय। १ पाप, गुनाह। २ अपराध, जुर्म। ३ निन्दा, बदनामी, बुराई। ४ गाय, बढ़-बढ़तो।

एधश्, एधश् इत्थी।

एधो (सं० क्री०) १ नदी, दर्या। (त्रि० क्री०) हव-विगीय, एक पिट्ट। यह दाहिनात्यके पश्चिमपाटमें अव-लती है। काठ हट तथा पीत मिश्रित धूसर वर्णका रहता और यह एव यन्त्रके निर्माणमें लगता है।

एधा, एधा इत्थी।

एम (सं० त्रि०) इध कर्मणि म। १ माघ विषय, मिलने लायक वस्तु। (पु०) २ मार्ग, राह।

एमन् (सं० क्री०) इध-मनिन्। १ पय, राह। २ अवस्थितिलक्षण, सुकाम। ३ गमन, गयानो।

एमन (त्रि० पु०) रागविशेष। यह औरागका पुत्र समझा और रात्रिके प्रथम बहर गाया जाता है। मर तोत्र मध्यम रहता है। एमन कल्याण और केदारके योगमें बना है।

एमनकल्याण ( हिं० पु० ) रागविशेष । यह एमन  
घोर कल्याणके योगसे बना है ।

एमनो ( सं० स्त्री० ) श्रीरागकी स्त्री ।

एरंड खरवृक्षा ( हिं० पु० ) पपीता, रेंड खरवृक्षा ।

एरंडसफेद ( हिं० पु० ) बागवरेड़ा, मोगसो ।

एरंडी ( हिं० स्त्री० ) हृद्यविशेष, तुंगा, आमो । यह  
हिमालय तथा सुलेमान पर्वतपर उपजती है । वल्कल,  
पत्र, एवं काष्ठ चमड़ा सिक्कानेमें लगता है ।

एरक ( सं० स्त्री० ) १ हृद्यविशेष, पतवार । २ किसी  
नामका नाम ।

एरका ( सं० स्त्री० ) हृद्यविशेष, एक घास । इसका  
संस्कृत पर्याय—गुन्द्रमूला, मिष्ठी, गुन्द्रा और गरी  
है । एरका शीतल, शुक्रवर्धक, चक्षुके लिये हित-  
कारी, वायुकोपक और मूत्रवृद्ध, अमरी, दाह  
तथा रक्तपित्तनाशक है । ( राशनिचर ) चक्रदत्तकी  
टीकाकारमें एरका-का चयं पतवार लिखा है ।

एरङ्ग ( सं० पु० ) एरति सम्यक् भ्रमतीति, पा-र-र-  
चक्रच् । मत्स्याविशेष, एक मछली । यह मधुर,  
स्निग्ध, पिष्टशी, खानेसे पेट फुलानेवाला, शीतल और  
गुरुपाक होता है । ( भावप्रधान )

एरङ्गी ( सं० स्त्री० ) एरङ्ग की ।

एरण ( एरन )—मध्यप्राप्तिके मागर जिसका एक नाम ।  
यह पचा २४ ५ १० ०० और द्रावि ०८ १५  
पू० पर, मागर नगरमें ४८ मील पश्चिम अवस्थित है ।  
एरन राजा भरतके चैत्यसम्बन्धो कीर्तिभूतके लिये  
प्रसिद्ध है । एरनमें विष्णु भगवान्की एक वराहमूर्ति  
है । चबूता १० फीट है, गरीपर अनेक सुद्राकृति  
बनी हैं । उन मूर्तियोंके ऊपर छोटे और दोषियां लंबी  
हैं । कण्ठके चारो ओर बाजिशर्माकी मूर्तियां खुदी हैं ।  
जिह्वाके अग्रभागपर एक मनुष्य खड़ा है । पक्षपर  
गिलासेप है । दाहिने दांतसे बाहुके पास एक छोटी  
मटक रही है । बाह्यकी एक और चतुर्भुज देव  
पड़े हैं । यह १२ फाट लंबे हैं । कटिमें मेघना  
पड़ी है । गिर पर लंबा दोषी बनो है । घोषसे  
पाददेम तक समलक्षित माना मटक रही है । इस  
मूर्तिके सम्मुखीन आभीपर यज्ञोपवीत बनाते मनुष्य,

कुटिसाकार सर्पो, ब्रह्मिणी, विषल निवी, बेटे कुंदा,  
वनदेयतायोंके सर्पो और अन्य कल्याण-वातुयोंके  
चित्र हैं । दबकर बैठे तीन मिहोंके चित्र भी देखने  
योग्य हैं । उनके सम्मुख एक स्तम्भ और एक मन्दिर  
खड़ा, जो पाषा मूर्तिमें गड़ा है । छंटेकी चोटो,  
२ फीट लंबी कुरसीकी भांति है । कुरसीपर दो  
मखेवानो चतुर्भुज मूर्ति खड़ी है । इस स्तम्भपर  
जो गिलासेप मिला, उसमें भगवत्के गुप्तयोग राजा  
सुवर्गुमका पता चला है ।

एरण्ड ( सं० पु० ) एरति वायुम्, पा-र-र-चक्रच् ।  
हृद्यविशेष, रेंडका पेड़ । ( Ricinus communis )  
इसका संस्कृत पर्याय—प्यात्रमुच्छ, गन्धर्वहस्त, उदबुध,  
बहुक, चित्रक, चक्षु, पञ्चाङ्गल, मण्ड, वर्धमान, व्यङ्ग-  
म्यक, रुचुक, रुक, अमण्डा, आमण्ड, व्यङ्ग्यन्, काण्ड,  
तक्ष, रुक, वातारि और दोषघ्नक है । ( राशनिचर )

एरण्ड मंत्र और मोहित भेदमें दिविष होता है ।  
आमण्ड, विष, गन्धर्वहस्त, पञ्चाङ्गल, वर्धमान, दोष-  
घ्न, चदण्ड, वातारि, तक्ष और बहुक मंत्र  
एरण्डके बोधक हैं । उदबुध, रुचुक, प्यात्रमुच्छ, चक्षु  
और चत्तानपत्रक मन्त्र रक्त एरण्डके वादक हैं ।

भारतवर्षमें प्रायः भेद जो एरण्डके उद्बुध  
होता है । बाजारमें दो प्रकारका एरण्डमंत्र मिलता  
है—छोटा और बड़ा । छोटे बीजमें उत्तम तेज  
निकलता और दोषघ्नक व्यवहारमें लगता है । बड़े  
बीजका तेज भारतवर्षी पदोपमें जनते हैं ।

एरण्डका पत्र वातघ्न, क्षमि एवं भूमिभूतनाशक  
और वितरक-प्रभावक है । कर्म पत्रमें शुष्क, ब्रह्मि-  
गुन्, कफ, वात, क्षमि, और मन्त्रविष हृदिरोग  
दूर होता है । एरण्डका फल चतुर्भुज उष्ण, कटु,  
अमरुहोपक और गुण्य, मूत्र, वायु, यक्ष्म, शोथ,  
उदर तथा अग्निरोगनाशक है । एरण्डकी भाज्यामें  
भो उन्नत सकल गुण मिलते हैं । यह भिदर और  
वातघ्नोप लक्ष्य उदररोगनाशक होती है ।

एरण्डकी परकीमें 'विरवा' और कारतीमें 'विद-  
पचो' कहते हैं । इसीमें सेत और रक्त एरण्डके  
मन्त्र रक्त एरण्ड की चर्चित फलदायक है । १० बीजी

काकसद होमि नगर विमकुम बिगड् थोर सजड गया था। गालि स्थापित होत ही फिर चमत्कार बढने लगा। १८०० ई०को किसेमि मीमा बढी गो। १८०० ई०को किमा गिराया गया। यहाँमि रुई, मिर्च, मोरा थोर चावल बाँहर भेजा जाता है। कादर, पैरुदराय थोर मरिचुरकी पकी मडक लगी है। नगरमे डेढ़ मील पूर्य कावेरो नदीपर १५१६ फीट लंबा मरुतीरोका पुल बंधा है।

एवंक (सं० पु०) था-ईर-क्रिप्, एर हथोति बारयति था, डक-डक। १ कर्षोटोमता, फूट। इसका संस्कृत पर्याय—व्यालपत्री, लोमगा, म्युला, मोयकला, इक्षि-दलजला थोर कर्कोटी है। यह खादु, मोमल, ईपत् चार, कफ एवं वायुकारक, ईपत् पित्तजर, रुचिकारक, पाच्युदीपक, टाढनामक, शुद्धाक थोर विटम्बी होता है। एक एवंक दाढ़, छप्पा थोर क्लान्तिको नाम करता है। (हाथीन थोर चर)

एन (सं० पु०) १ एला, इलायची। २ एनवातुक, एक गुगुडूदार चीन। ३ संख्याविशेष, एक चदद। (चं०) ४ चंगरेजी गज। यह ४५ इंचका होता थोर रंगमी कपड़े मापनेका काम देता है।

एनक (सं० पु०) एनति चिपति वसिष्ठमेव आमानम्, एन-एन्। १ मेष, भेड़ा। (हिं०) २ भेड़ा चालनेकी चलनी।

एलकेमी (हिं० एलो०) रंगालका एक पेगल।

एलगिन—भारतवर्षके एक गवरनर जनरल थोर राज-प्रतिनिधि। (James Bruce, Earl of Elgin and Kincardine) इन्होंने १८११ ई०को लण्डन नगरमें जनपदपत्र किया था। १८१२ ई०की विषाकि चलने एलगिन एस० ए० परीक्षामें उत्तीर्ण हुये। इन्होंने १८४१ ई०को राजकीय कार्यमें प्रयोग किया था। १८४२ ई०के मार्च मासको यह जर्मिकाकि शासनकर्ता बने। वहाँ इनकी कार्यदक्षताके गुणमें सब लोग मुग्ध हो गये। पस्य दिन बाद ही मिस्टरों पत्र दो डेटने लार्ड एलगिनकी कनाडाका गवरनर-जनरल बनाया था। कनाडामें इन्होंने राजनीति थोर शासनका जो जोमल दियाथा, वह किसी गवरनरके हाथ होवे

सुननेमें न पाया। शासनमें मुग्ध हो बहुत बड़े मत मो इनके बगोभूत हुये। इन्होंने प्रथम कनाडामें स्थायतशासनकी प्रणाली निपिबद्ध की थी। इन्होंने समयमें इटिम चमेरिकाके साथ युनाइटेड स्टेटसका वाणिज्य-व्यवहार प्रचलित हुआ। १८५५ ई०को एलगिन कनाडासे वापस गये। उसी समय यह काइफ्रायरके लार्ड सेक्रेटिनेण्ट नियुक्त हुये। १८५० ई०को चीन राज्यके काण्टन नगरमें चंगरेजी थोर चीनारोंमें युद्ध छिड़ा था। लार्ड एलगिन गम्पूर्ण चमत्तायात दूत (Plenipotentiary Extraordinary) हो सभेस्य काण्टनके चंगरेजीको माहाय्य करने चले। यथमें इन्हें भारतवर्षके सिपाही विद्रोहका समाचार मिला था। इन्होंने उसी समय लार्ड कानिहामके माहाय्यकी चपला सैन्यदल भेज दिया। फिर १८५८ ई०की सिपाही विद्रोह मिटनेपर लार्ड एलगिन चीनमें जा पहुँचे। तिनमिन मोमक स्थानमें प्रान्तीयो दून बेरन-पसके मजबूतगोषे सन्धि हुई। सन्धिपत्रके अनुसार चंगरेज निर्बिवाद थोर बिना व्यय वापिस करने लगे। चीनसे वापस पानेके पहले इन्होंने जापानमें सन्धि की—चंगरेज योड़े मजबूतपर जापानमें वापिस चला सकेगी। उक्त घटनाके कुछ दिन पीछे लार्ड एलगिनकी टुकु दुर्गके चंगरेजीमें संवाद दिया—यहाँके चीन विद्रोहघातकता खर हमारे खपर गोला-गोली फेंकने लगी है। यह सैन्यके साथ बर्बा जा पहुँचे। फिर चीनकी राजधानी पेकिंगमें अभिपन्न स्थावरित हुआ थोर सब मजबूत मिट गया।

इधेर लार्ड कानिहाका शासनकाल पूर चला। १८६१ ई०को १२ वीं मार्चकी लार्ड एलगिन राज-प्रतिनिधि थोर गवरनर-जनरल बन भारतवर्ष पाये। १८६३ ई०की ५वीं फरवरीकी इन्होंने कलकत्तेमें मुक्त-प्रदेगकी थोर यात्रा की। पागरेमें दरबार लगा था। मुक्तप्रदेगके राजाओंमें इनका यथैत सम्मान किया। बर्बासे वापस चलते समय यह घोड़ित हुये थे। १८६३ ई०की २० वीं नवम्बरकी हिमा-लयकी एक धर्मशासामें इनका प्रादवायु निधन गया।

एलङ्ग (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह मधुर, हृद्य, घाही, कफ-वातघ्न, भेवाग्निपुष्टिकर, शीतल और गुरु होता है। (राशनिघट्ट)

एलचो (सु० पु०) राजदूत, सरकारी भेदिया से जानिवाला।

एलचीगरी (फ्रा० स्त्री०) दूतका काम।

एलङ्ग (सं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, एक चटद।

एलबाल, एलबालुच ईंधी।

एलबालु (सं० स्त्री०) ऐलेव चलने, एला-बल-उप।

गन्धद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज।

“क्षेमवास्तुपरिवेष्टन लोचः।” (वाल्म्य)

एलबालुक (सं० स्त्री०) एलबालु सार्धे कम्। गन्धद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज। इसका संस्कृत पर्याय—ऐलेय, सुगन्धि, हरिबालुक, बालुक, हरिबालुक, बालुक, एलबालुक, कपिलत्वक्, गन्धत्वक् और कुष्ठगन्धि है। यह प्रतिमय छप, कषाय, प्रतिमय रुचिकारक और कफ, वायु, मूर्च्छा, क्ष्वर, दाह, कफ, म्रण, कर्द, पिपासा, काष्ठ, चर्बि, दन्तोग, विष, विषा, रक्त, कुष्ठ, मूलरोग एवं क्षमिनागक होता है। (चैच)

एलबिल (सं० पु०) कुवेर।

एला (सं० स्त्री०) इल-चच्-टाप्। श्रावको ईंधी।

एलाक (सं० पु०) एक मुनि।

एलागन्धिक (सं० स्त्री०) एलबालुक, एक खुशबूदार चीज।

एलादिगण (सं० पु०) गणविशेष, इलायची वर्गे रह कुष्ठसुगन्धि चीजें। इसमें एला, तगर, पाटुका, कुष्ठ, जटा-मांसी, गन्धद्रव्य, दालचीनी, तेजपत्र, शालिपत्र, मिर्च, ऐणक, पद्मलो, गन्धिनी, गुठुवा, सरसकाष्ठ, गुडत्वक्, औरपुष्पो, बाला, गुग्गुलु, धूना, गिलारस, चन्दुहपीटो, चगुह, गन्धकना, सुमकी लड़, देवदारु, कुडुम और पुष्यापुष्प द्रव्य रहते हैं। यह गन्ध वायु, कफ एवं विषकी ह्वाता, शरीरका रक्त बढ़ाता और कष्ट, पिङ्गला रक्त को रोगको दूर भगाता है।

एक औषध।

एक एक तोले,

तथा

द्राचा एक-एक पल चूर्ण कर मधुके माय रगड़ दो दो तोलेकी गोली बनाये। इसके नेत्रमें रक्तपित्तादि बहुत रोग दूर होते हैं। (नारकोमते)

एलादिचूर्ण (सं० स्त्री०) कर्दिका एक औषध। इलायचीकी त्वक्, मरिच, गुठ्ठी, पिप्पली और नाग-केसरका चूर्ण यथोत्तर भागहस्ति चीनी पराबर छाज-नेपर यह औषध तैयार होता है। (राजसंकर)

एलादितैल (सं० स्त्री०) एक तैल। एला, मुरा-मांसी, सरसकाष्ठ, तेजपत्र, देवदारु, ऐणक, औरपुष्पो, गठो, जटामांसी, चम्पकनी, नागकेसर, पन्थिज्वर, गन्धरस, गृहासी, तेजपत्र, समीरमूल, चन्दन, कुन्दु-खांटी, नखी, बालक, गुडत्वक्, कुष्ठ, काशायुक, सुप्तक, सासुद्रकर्कट, गंतपद्मन, सन्धिषा, क्षातीकन, कुडुम, पिङ्गिपुष्प, गिलारस एवं चगुह दो-दो तोले दुग्ध १६ घरावक, दधि १६ घरावक, बाघ्यालक काव १६ घरावक, पाप्पलक छाड़े १२ घरावक, जल ६४ घरावक तथा तिलका तैल ४ घरावक छान एक हांडीमें तपाये और १६ घरावक श्रेय रहनेपर आगमें नीचे उतारें। यह तैल लगानेसे वातपित्तादि दूर होता है।

एलादिमन्त्र (सं० पु०) यस्या रोगका एक औषध। एला, यमानी, चामलक, हरीतकी, विमोतकी, खदिर-सार, जिम्ब, पीतमान, माज, विडुह, भोजानकाजि, विन्नकमूल, त्रिबटुक, मुद्गरक एवं पट्टपर्वटी पाच पल १६ घरावक जलमें निरकर योगे ४ घरावक श्रेय रहने पर बलमें जान से। फिर इसको ३२ पल घृतमें पका यकंरा १० पल, चंदकोषण ६ पल और मधु १२ पल मिला मयानीसे मयनेपर यह औषध बगता है।

(चतुर्विंश)

एलाग (सं० स्त्री०) पलविशेष, नागनी। कश्च। एलाग द्रव्य, सर, उष्ण, गुरु एवं वातघ्न और पक्षा-शीतल, बलकृत् तथा वातविनाशक होता है। (गन्धर्व)

एलापव (सं० पु०) एलापवमिष पाहारी द्रव्य, बहुमी०। गर्पविशेष, एक औषध। महाभारत पर पुरावादिमें लिखा, कि कथ्यपदे और च और लङ्क गर्भमें एलापवका कक ह्वा पा। शीतद्रव्यमें भी एलापव आगराज रूपसे परिचित है।

मोटेटेगीय बीच एनपत निघने—बुद्धदेव जब सुचित नामक मोरुम रहे, तब एनपत दो चोक कहि से। बुद्ध एनपत पछने कीई बह न्नोक पद न पवता था। बुद्धप्रमाण नामक एक नागराज बहो चोक तथामिलायामी एनापतको टिपाकर बोले—तुम गर्वत गमन करो; जो इसका पर्य भगा मंकेगा, समको एक लाख रुपया मिलेगा। एनापत उनको बातपर माना थान धूम वाराचको छेपिपत्तन नामक एक मनोरम स्थानमें उपस्थित हुये। वहाँ मन्द नामक किसी व्यक्तिने बुद्धके साथ टोकका चर्कोके मुखमें पर्य श्रवण किया था। पीछे एनापतने उनका पर्य मन्दके मुखमें सुना। पर्य सुनते ही इनके ज्ञानबलु एकीकृत हुये। बुद्धके निर्वाण पीछे बौद्धोंके कई दल चल्याचारसे पीड़ित हो गाथार राज्यको जाते थे। एही समय मोट-केन्का एक दल भिल्लुकोके पीछे जग गया। बौद्ध भिल्लुके किसी ऊदके किनारे पड़ गये थे। एही जगह नागराज एनापत हथ मनुष्यका घेय बना उनके समुदा देण पड़े। वह अपना अपना दुःख बता बोले—हम अपनी जीवन रचा और जीवन निर्वाहके लिये गाथार राज्यको जाते हैं। एनापतने कहा—इस स्थानी गाथार ४५ दिनका पय है; तुम्हारे पास १५ दिनका पय देण पड़ता, अवशिष्ट दिन कैसे पति-पाहित करीने। भिल्लुकोने समझा समूह विपद है। फिर सब ही चार्तनाद करने लगे। एनापत सबको दादय देकर बोले—तुम मत रोषो, धर्मके लिये हम जीवन दे सकत हैं; इस ऊदपर हम भेतु बग कर रहेंगे, तुम चनायाम चलय दिनमें ही गाथार पहुँच जावोने। फिर एनापत हठदाकार संपका घेय बना हमो ऊदपर भी गये। भिल्लुक चनायाम उनको पीठके सहारे एसीके हुये। एही चरस्थान एनापतने पाप छोड़ा था। ऊदके राय जाने पर उनका देह पर्वतप्रमाण बन गया।

भीम-पतिप्राज्ञ का-द्विषाण और सुत्त-पुद्गले तथामिलायामी एनापतऊद टिपा था। (P. K. N. 1, XXXV, 81-V. K. E. III.) कश्चित्काम भाइयने वर्तमान इस-ऊदके 'दावावली' नामक प्रत्यक्ष

बौद्ध प्राचीन एनापत नामका ऊद स्थिर किया है। (Archaeological Survey of India, Vol. II, p. 100.)

एनापती (सं० स्त्री०) १ हथविनय, एक पैर; २ राधा।

एनापुर—एक प्राचीन गिरि वा गिरिदुर्ग। प्राचीन शिलालिपिके अनुसार इस दुर्ग वा गिरिमें पल्लवराज कथ्य रहते थे। इसीके निकट जयभूमिन्दिर भी रहा। कनिंङम साइवके मतसे वर्तमान सीमनाय पत्तनका चवर नाम एनापुर है। (Ancient Geography of India, p. 319) किन्तु पुरातत्त्वविद् फिट्के मतसे यह स्थान उत्तर कनाड़ेके पत्तनगत है। चात्र-कल इस एनापुर कहते हैं। यह अक्षांश १४° १८' उ० और द्राधिं ७४° ४०' पू० पर अवस्थित है। (Indian Antiquary, Vol. XI, p. 824)

एनापस (सं० स्त्री०) १ एलवातुक, एक सु, गवुदार चीज। २ राधूकहच, मोलचरीका पैर।

एलावातुक, एलावक ईश।

एलावू (सं० स्त्री०) अलावू, लोकी।

एलायुम (सं० स्त्री०) सूक्ष्म तथा सूक्ष्म एना, छोटी और बड़ी दोनों इलायची।

एलानु (सं० स्त्री०) एलवातुक, एक सु, गवुदार चीज।

एलावती (सं० स्त्री०) एला प्रसवस्थेन असाय्या-एला-मत्पू मत्पू वा। एलामता, एलायचोकी धन।

एलाऊ (सं० स्त्री०) एलवातुक, एक सु, गवुदार चीज।

एलिचपुर—१ बरार प्रान्तका एक जिला। यह अक्षांश १०° ५०' १०" तथा ११° ४६' १०" उ० और द्राधिं ७६° ४०' एवं ७८° १४' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २६२९ वर्गमील है। उद्योगों पट्टाक्षिपी और पाटिघोमी मश है। बेराटका पर्वतश्रृंखला समुद्र-तलसे ६८८० फीट ऊँचा है। दक्षिणीय समतल है। अनेक सुद नदी बारावा और पूर्वीय भाकर गिरी हैं। एलिचपुर नगरमें अमरावतीको पडो सङ्ग गयी है। देवी राई और पण्डित्या बरगातमें मन्द रहती हैं। पट्टाक्षिपीर बोमी, मन्वारि और मूभयटकी राइ गाड़ी चलती है। इस जिलेमें आमके बाग बहुत हैं। कोक-संज्ञा प्रायः उपा तोन बाक है। शिन्नुगिरी मेवीका

प्राधान्य देख पड़ता है। गेहूं बहुत अच्छा होता है।  
ऊँईकी उपज अधिक है। मेलघाटमें चाय भी बोई  
जाती है। प्रधान नगर एलिचपुर, चंजनगांव, परत-  
वाडा और करलगांव है। सितम्बर और फरवरी  
मास रोगका घर होता है।

२ बरार प्रान्तके एलिचपुर जिलेकी तहसील।  
भूमिका परिमाण ४६८ वर्ग मील है। ३ बरार  
प्रान्तके एलिचपुर जिलेका प्रधान नगर। यह पचा-  
२१° १५' ३०" उ० और द्रावि० ७७° २८' ३०" पू० पर  
व्यवस्थित है। किसी समय यह एलिचगुड नगर  
रहा। ४०००० मकान बने थे। निजामके दिवोंमें  
अपना सम्बन्ध तोड़ खतख्त शासक बननेसे पहले  
एलिचपुर स्थानीय सरकारकी राजधानी रहा। फिर  
मुंबईदारके हाथ पड़नेसे अवनति होने लगी। नगरमें  
कितने ही सुन्दर भवन हैं। बीघन नदीके किनारे  
छत्ता रहमानकी दरगाह है। आयः ४०० वर्ष हुए  
किसी शाहजही राजाने उसे बनवाया था। सलावत  
खान् और इब्नाइल खान्का बनवाया बड़ा राजप्रासाद  
धीरे-धीरे गिर रहा है। कुछ नवामोंको कबरे बहुत  
छन्दा हैं। सुलतानगढ़ी नामक दुर्ग और ममदेन-  
शाह नामक कूप भी देखने योग्य है। नगरमें २ भीख  
बीघन नदीपर परतवाडा छावनी है।

एलिचपुर इतिहासप्रसिद्ध नगर है। मुगलोंने  
आया—किसी दिन राजाने बहमाँवके निकटस्थ खान-  
जाम नगरसे प्या १०५८ ई०को एलिचपुर बसाया था।  
दाक्षिणात्यकी राजधानी रहते समय यहाँ सुघल-  
मानोंकी बड़ी धूम पड़ी। दिनोंसे चलन होनेपर  
निजामने एलछान्की पक्ष शासक नियुक्त किया  
था। उन्होंने १०२४में १०२८ तक राजत्व बसाया,  
फिर राजावत खान्का समय (१०२८-१०४० ई०)  
आया। उन्होंने मराठे शिवजी मगसेमें बेर बढ़ाया  
और भूगर्भके समर्थ अपना भाग गंवाया था। शिव-  
जीने एलिचपुरका खजाना लूट लिया। १०४१में  
१०५२ ई० तक अलीखान्ने शासन बसाया था।  
किन्तु अपनी बराबरी करने देखा निजामने उनका पद  
हटाया। पीछे निजामने लड़के फकीरशाह बहादुर

शासक बने थे। किन्तु उन्होंने अपना काम प्रति-  
निधिद्वारा किया। सलावत खान्ने शासकका पद  
पानेपर इस नगरकी बड़ी उन्नति की दी। उन्होंने  
राजप्रासादकी बढाया, सर्वसाधारणके लिये एक बाग  
लगाया और प्राचीन जनमार्गको ठोक करवाया। यह  
बड़े शीघ्र रहै। निजाम और टीपू सुलतानके मध्य  
युद्ध पारलभ्य होने की वृत्ति मेंगामें व्यवस्थित होनेका  
आदेश मिला था। सलावत खान्ने इस युद्धमें बड़ा  
नाम पाया। सलावत खान्का उत्तराधिकार इनके  
लड़के नामदार खान्के हाथ लगा था। पीछे नामदार  
खान्के भतीजे इब्नाहीम खान् १८४५ ई० तक शासक  
रहै। १८५३ ई०को बरार-प्रान्तके साथ एलिचपुर  
जिन्सा भी चंगरेली राज्यमें मिलाया गया।

एलिफण्टा—बम्बई बन्दरका एक द्वीप। यह पचा-  
१८° ५०' उ० और द्रावि० ७३° पू० पर बम्बई नगरसे  
३ कोस दूर व्यवस्थित है। जिस्सायाना और तहसील  
पानवेल है। परिधि चार मादे चार मील पड़ता है।  
दो पर्वतश्रेणियोंके मध्य घटोई उपत्यका था गई है।  
भूमिका परिमाण प्यार-भाटेके हिस्सेमें चारों ओर  
मील तक लगता है। पोर्तुगोनोंने पहले बहादुर  
उतरते समय पत्थरका एक हाथी देख 'एलिफण्टा' नाम  
रखा था। हाथी ११ फीट २ इंच लम्बा और ७ फीट ४  
इंच लंबा रहा। किन्तु १८१४ ई०को गिर धीरे लुप्त  
टूटा था। १८६४ ई०को यह उठाकर बम्बईमें रिप्लो-  
रिया गार्डमें रखा गया। दोनों पर्वतके मध्यपर  
प्रधान गुहामें एलिचपुर की छोटी दूर एक छोटी भी  
मूर्ति थी। दूरमें देगनेपर कोई कष्ट न मका, कि  
यह समीप न रहा। उध मूर्ति यह देगनेमें नहीं  
पानी। नहीं मालूम—उसे कौन उठा ले गया। पर्वत  
भाटोंमें टँके और पान, पवित्रा तथा करणदेव  
कर्म हैं। किनारा बालू और कोयलें भरा है।  
सम्भवतः १५वीं ई०म अताबुदके मध्य यह द्वीप एक  
तीर्थस्थान रहा। गुहा देखने योग्य है। प्राचीन  
नगरके धंसावमेंमें कितनी ही टूटी-फूटी चीजें हाथ  
पाई हैं। अनेक दमक गुहा देखने लाभा करने  
हैं। १८८०-८१के समय यहाँ १४०० गुहा थीं।



गुहा पश्चिम पक्षमें समुद्रतलसे २१० फीट लंबे  
पश्चिम है। पहातमें उत्तरमें पर धीम मोम टेढ़ा-  
दिहा चलता पड़ता है। गुहाका द्वार उत्तरको है।  
उत्तरमें दक्षिण घोर पूर्वमें पश्चिम दोनों घोरकी मझाई  
११० फीट है। पक्षसे २६ मूत्रा घोर ६ उपप्लान  
में है, जिनमें पाठ टूट गये। विमूर्तिता काहकाय  
प्रमंनमोय है। गढ़को बहा, विष्णु घोर गिरके  
कर्मों देखाया है। चमता १० फीट १० इंच है।  
१८६५ ई०को किमो दुटने विमूर्तिके दो मुगको नाक  
तोड़ जाती थी। पोंडे भी दूसरी भूमिगीवर पत्था-  
नार दोनोंमें घरकारने कड़ा पहाड़ा मेठा दिया है।  
विमूर्तिके रवाक की द्वारपाल है। एक १२ फीट ८  
इंच घोर दूसरा ११ फीट ६ इंच लंबा है। किन्तु  
दोनों प्रतिमानें सुन बिगड़ गये हैं। जितने की  
कमरे बहुत उमड़ा बने हैं। अनेक प्रतिमा अनोखी  
देख पड़ती हैं। दूसरी गुहाका द्वार उत्तर-पूर्व है।  
मझाई की ११० फीट पड़ती है। उत्तर किनारे  
मन्दिर बना है। किन्तु यह गुहा विमृक्त टूट फूट  
गयी है। 'बीता बाईको दोवाल' दूसरी पहाड़ीवर  
है। पक्षसे फाटकपर मरमरकी बहुत चरदा मिष्ट-  
राव बनो थी। गुहाके निर्माणकी समय ठहराना  
कठिन है। कोई पाण्डवों, कोई बापासुर घोर  
कोई मिलन्दरका नाम लेता है। मिलासेष कहीं  
नहीं। गिरासिकी यहाँ बड़ा मेला लगता है।  
देवी नाम गाढापुरी है। गढ़पुरी देखो।

एथीका (मं० लो०) पा-ई-ई-कन्-टा-ए। सुष्प मा,  
कोटी इनायथो।

एथीय (मं० पु०) एल-वाभुक्त, एक भृगुद्वार भोज।  
एत (मं० लो०) मंत्ताजिमेय, एक चदद।

एथुई (मं० लो०) इल-वक्त। एलवाभुक्त, एक  
भृगुद्वार भोज।

एथुकाप्या (मं० ति०) एह-ई-कः।

एथुग (मं० पु०—Alth.) कुमारीरघोद्वार भोज,  
बहा, मित्र, सुचम्बर।

एथुइ, एथु-ई-कः।

एलेनबरा (Edward Law Ellanborough)—भारत-

पण्डे एक गवर्नर-जनरल। यह प्रथम बार एलेन-  
बराके लोठ पुत्र रहे। १८८० ई०को रकनि जल-  
पक्ष किया था। १८८८ ई०को रकनि लोठ उपाधि  
मिला। फिर लूक चय वेनिट्टनके शासनकाल  
एलेनबरा बार्ड-एव-कन्ट्रीवरके महापति हो गये।  
१८८२ ई०को माननका भार उठा यह भारत चले  
ये। जो सुख्याति लोठ पार्लेमेंटके भाष्यमें ल रहे,  
इन्हीं वही सुख्याति पानेके लिये भेठा लो। एलेनबरा  
चाहते थे—निर्विवाद एवं सुखानन्दके कार्य चल  
लाये, किन्तु इनके भाष्यमें ऐसा न हुआ। १९वीं  
मार्चके दिन एलेनबराने प्रधान मन्त्रिपतिकी भिन्ना  
या—“पंगरेजीके गोरवकी रक्षा करना जाना। अपनी  
सामरिक सयादा फिर जमागा पड़ेगा। जिनके लिये  
पंगरेजी मेल्य बखान कामके कवलमें चला घोरजिनके  
हाथों पंगरेजी नरनारियोंको बन्दा बन चपमान तथा  
दुःख उठाना पड़ा, उन दुष्ट चपकामोंकी शासन  
करना है। असावावाद, मन्त्री, विमलविमली घोर  
कन्दाहारकी पंगरेजी मेल्य चपना चपना कार्य कर  
बावन चाये। फिर चपकामस्यामें ठमके रहनेका कोई  
प्रयोजन नहीं। जिन राजा (माचदुजा) जो हमने  
चपकामस्यामें सिंहासनपर बैठाया था, वही अब  
अपने नजातियोंके निकट उपपुत्र देव नहीं पड़ते।”

उस समय चपकामस्यामें बचका बाघ चलता  
था। उत्तरभागमें पंगरेजीके जपनादमी भूमि घरघर  
काय छठी। फिर दक्षिणभागमें पंगरेजीकी हाडाकार  
धनिधि मद्रत राज्य प्रगाढ़ समझता था। एलेन-  
बराने प्रधान मन्त्रिपतिकी निधने पोंडे की सुना, जि  
धन घोर दोनके समरकोमनमें असावावादमें  
पंगरेजी मेल्यने जय पा लिया। किन्तु दक्षिणमें बड़ो  
विपद रहो। भिनावनि इन्डि-एथ विमान उपपुत्रकामे  
हिलकजई प्रदेयकी राह जाते थे। उगो चपानपूर्व  
स्यामें बड़ विपदके हाथ छार गये। मुईमें इनके  
१०० मिपाई मरे। यह कुगतामें बावन या घोर  
काईरना अपने इनमें पाकरचा करते थे।

एलेनबराका मत बदला। इन्हीं कलका भेजा  
या—“१९वीं मार्चकी इन्डि-एथ विमान असावावाद

‘रूपमें’ प्रतिपक्ष दुष्या। अब सेनापति नट समेख पापम, जो उनके सेनाटनको यथाशीघ्र भारतके संक्षिप्त निरापद स्थानमें पहुँचाये।’

सेनापति पोलक और नट साहब अक्षम साहससे चक्रवातोंको मार रहे थे, गवरनरका आदेशपत्र देख लभय समीपत दुष्ये। किन्तु उक्त दोनों और भग्नोत्साह होनेवाले लोग न थे। इङ्ग्लैण्ड प्रभृति अन्य सेनाध्यक्षोंको भी यह समाचार मिला था, किन्तु सिपाहियोंसे किसीने न कहा। कारण सेनापतियोंको विश्वास रहा—सिपाही यदि यह संवाद पायेंगे, तो भाग जानेंगे तो चलायेंगे और विग्रह न हो जायेंगे। विशेषतः यथासमय रमद वगैरह न मिलनेसे सम्भवतः राहपर भयको विपदमें पहुँचा होगा। वह जिस छिवे चक्रवातस्थानमें रहे, वही कार्य सोच-समझ करते गये। एलेनबराने अपना मत फिर बदला न छोड़ा, किन्तु बात समझते आ गये—यदि चंगरेज, चक्रवातस्थान छोड़ पापस पायें, वन्दो चंगरेज मुक्ति न पायें और चक्रवात रैतिक अनुसार शासित किये न जायें, तो भारतवर्षके राजनीतिक एवं सामरिक सकल ही व्याप्ति हमें तथा चंगरेज गवरनेष्टकी छुणाका प्राप्त बनयें। फिर भी यह हम समय कहने लगे थे—‘भारतवर्ष छोड़ दूर देगमें सैन्यसामान्य बहुत दिन रहनेसे काम न चलेगा। हमसे भारतका पण्डित होगा और हमारे राज्यकार्यमें भी व्याघात लगेगा। सकल प्रकार पण्डित होनेसे पहले भारतवर्षकी रक्षा करना ही हमारा प्रधान कार्य है।’

उधर जिनके लिये चक्रवातस्थानमें गुह होता था, वहीं ग्राह दुशाओ कई लोगोंने मिलकर मार डाला। पोलक और नट साहब आता स्थानोंमें जीतने लगे। इन्हीं जनपदोंके दिन एलेनबराने नट साहबको लिखा था—‘चक्रवातस्थानकी सामरिक और राजनीतिक अवस्था देख हमने आपसे आपस पानिको कहा था। किन्तु आपकी सैन्यसामान्यकी स्थिति अच्छी समझ पड़ती है। अब हमारा मत अतन्त्र है। आप को अच्छा समझें, वही करें। यदि आप गजनी, आबुल और जकाबाबाद जाना चाहेंगे, तो यथैष्ट परिमाणसे रहद।

मकट और चर्च पायेंगे। हमारी सब बागा है—हम यह महाव्रत उद्यापन कर सकें। हमें हरदय एवं इस सुदूर एसियाखण्डमें क्या मित क्या व्यय समीप निष्कट हम अपना सुख देना चाहेंगे। किन्तु ऐसा निष्कल लानेसे निःसन्देह सर्वभाग होगा। हम समय विशेष सावधानतासे कार्य करना पड़ेगा। हमें लाभसे हानि अधिक है।’

सुविष्ट एलेनबरा हमीयकार दोनों पाप छुड़े रहे। विफल होनेसे सेनापतिगैरका ही दाप ठपरेगा। फिर सकल होनेपर एलेनबराकी मनःकामना सिद्ध होगी और सुख्याति मिलेगी।

उसी दिनमें सब भाग समझ गये—एलेनबराका मनोभाव बदला है। हमने पाटंग पपार दिया—‘यदि आप लोग आबुलनसे गजनी और आबुल शीत तथा इन्दुविष्टो चुनना सुन्दरदका लभसे उनकी याद और सोमनाथ-मन्दिरका सुवर्णहार लडा का सकेंगे, तो समस्त ही भारतवासियों समझेंगे—आप लोगोंका वीरत्व चलोम और आप लोगोंकी कीर्ति चिरस्मरणीय है।’

हम दिनकी लार्ड एलेनबरा भारत पाये थे। यथायं हो उनका भाग्य सुप्रसन्न रहा। जिस रङ्ग-भूमिमें लार्ड चक्रेलुट निष्कल ही बताया चत्वारध सन्मानकी प्रत्याग करनेपर उत्पन्न दुष्ये, लार्ड एलेनबराने उसी स्थानपर बैठे-बैठे चुना—चक्रवात राज्य लय हुआ, चंगरेजी सैन्य छूट गया और मनका अभिलाष पूरे पड़ा है। वारी और त्रयपदि होने लगी। चंगरेजी सैन्य लडा समारोहमें भीटा था। लार्ड एलेनबराने मेनिटोंकी चर्चर्चना कर पयोधिग सन्मान प्रदान किया। उन्होंने सटसूदको कर्तव्य सिंहदार ला बड़े लार्डको भेजा था। लोगोंने पोषका की—सोमनाथका सिंहदार फिर भारत लौट वाया। साधारणको भी हम शानवर विमान ही गया। किन्तु हम विषयपर सन्देह होता—वह दार सोमनाथका सिंहदार है या नहीं। ऐतिहासिक विभारिज वाहवने क्या लिखा, कि वह दार सोमनाथका नहीं। ०

दसमानकानका मन्त्रक मिटने भी साठ एलेन-  
बरा फिर रह न सके, सिन्धुप्रदेस के ऊपर उनके बहुत  
पड़े। एलेनबरा की सिन्धुप्रदेस के समीर चंगरेजों के  
विजहावरण करने पाते थे। मध्य में नाई मिथो के  
साथ सन्धि होनेपर सिन्धुप्रदेस में एक रैसीट्टर रखा  
गया। फिर समीरों के विरुद्ध रैसीट्टर के समान  
पर बाह्यमय मारा गया। उनकी दबाने के विधि  
पर चार्ल्स मैथियर प्रधान मेनापति की सिन्धुप्रदेस  
भेजे गये। १८४१ ई० की २४वीं मार्च की समीर  
सम्पूर्ण पराजित हुये। सिन्धुप्रदेस चंगरेजों के अधि-  
कार में आया।

होके सभी समय ग्यालियर राज्य में गृहविवादका  
सुलपात हुआ था। १८२१ ई० की जनकजी चंगरेजों  
गये। उनकी लघोदय वर्ष की विधवा पत्नी ने निकट-  
सम्बन्धीय भगौराय राय नामक एक बालक को गोद  
लिया था। फिर मामा साहब नामक जनकजी के एक  
पियल रहे। चंगरेज रैसीट्टर के साथ उनकी कुछ  
घनिष्ठता थी। रैसीट्टर के साहाय्य से वह भगौराय  
राय के अधिभाव्य बन ग्यालियर में राज्यशासन करते  
रहे। इधर मछारानी ने किसी चीर कटान कर न  
सकने से उसी की चेष्टा लगाई, जिसने राज्य में विगृहता  
पार्। दो पक्ष हो गये। एक मछारानी चीर दूसरा  
मामा साहब की चीर रहा। विवाद चोड़ों में हो मिटा  
न था। मध्य की राज्य के मध्य में एक ही युद्धोपपा  
की। गृहविवाद के साथ ही साथ ग्यालियर के चतु-  
र्दिक्ष दूर राखों की भी शान्ति भट्ट होने लगी।  
नाई एलेनबराने बोपा—इस चरित्र में मनीषा की  
होना उचित है, नहीं तो भविष्य में चीर अनिष्ट  
पार् की सम्भावना है।

समय समय यह कार्य समस्त ग्यालियर के समिन्धु  
चरणर दृष्टि से। २१ वीं दिन ग्यालियर की ग्यालियर के  
निकट मछारानी नामक स्थान में विधिलेखों में सामना  
पकड़ा। चंगरेजों चीर ग्यालियर के मेन्स में घोरतर  
हुए हुये। प्रधान मेनापति मन्त्र पर विरुद्ध चीर  
मिलिपायें तथा रैनिम प्रकृति दूरी चंगरेजों मेनापति  
उपलब्ध से। विरुद्ध मेन्सना के पीछे चंगरेज कीने।

उधर चंगरेज मेनापति के साहब ग्यालियर की दक्षिण-  
पश्चिम मोमा आंच रहे थे। सभी समय १९००  
मछारानी मेन्स १४ तोपों के साथ सुदिवार नामक  
स्थान में था पहुँचा। किन्तु चंगरेज के सामने उसे  
भी परास्त होना पड़ा।

एलेन चंगरेज ग्यालियर की एक व्यापक राज्य  
ममभूति से। किन्तु एलेनबराने कुछ दिन उसे अपने  
करतमगत माना। ग्यालियर की मछारानी प्रतिभोगी  
बनी थी। नाई एलेनबरा के पादिसवे ग्यालियर की  
राजकीय समता चंगरेजों के साथ था गई। नाम  
मात्र की एक बालक मिन्हासन पर बैठते थे। इधर  
एलेनबरा का हृदय ग्यालियर राज्य के समस्त पर आहत  
रहा, उधर विसायत में कीट-चंगरेज-हारेक्टर ने काट  
पड़े समुपयुक्त समस्त एलेनबरा को भारतवर्ष में हटा-  
ने का प्रयत्न किया। इनके चमत्कृत मोमनापहार की  
बात विसायत में राष्ट्र हुई। समस्त सब लोगों ने समस्त  
मिया—एलेनबरा की पवित्रता विधासयोग्य नहीं।  
विधेयतः हारेक्टरों ने उसे भी पचाप ही माना,  
जो इन्हीं सिन्धुप्रदेस के समीरों का दोषारोप से सताया  
था। सिवा इसके सकल ही विषयों में हारेक्टरों से  
इनका मतभेद पड़ने लगा।

१८४४ ई० की २१वीं अपरेल की इन्हीं दिनों के प्रधान  
मन्त्री सर राबर्ट पील ने लिखा था—“गत सुपशर की  
मछारानी के कोर्ट पर हारेक्टर का पत्र आया, कि  
चार्ल्स के समुधार उन्हें जो समता मिली, सभी समता के  
बल उन्होंने का प्र दृष्टान्त भारतवर्ष के मन्त्रर जन-  
रक्ष की बाधन पाने का पादिस लगाया है।”

एलेनबरा के समुत्तर ग्यालियर भेदा लगा था।  
इनकी सामा, राजनीति, विधायन चीर मोमन सब  
मार्ग गया। समय ग मोतने ही इन्हीं स्थानसुप-  
विसायत की यात्रा की। वहाँ १८४१ ई० की यह  
कल्पुष विभाग के प्रधान सचिव (First Lord of the  
Ailmiralty) हुये थे। किन्तु १८४६ ई० की एलेन-  
बराने उक्त पद से हटाने की दृष्टि दी। उनके पीछे  
जिनने दिन यह बोये, जिनने दिन पार्लियामेन्ट-  
की कार्य समिति सभी सभी भारतवर्ष की बात हटा

आसीधना करते रहे। १८० ई० के दिसम्बर मास  
साई एलेनवरा मर गये।

एलेनावाद्—पश्चादके सिरसा जिल्लाका एक नगर। यह  
अक्षा० २८° २६' ४०" और द्रावि० ७५° ५४' पू० पर  
घाघरा नदी किनारे सिरसा नगरसे २३ मील पश्चिम  
अवस्थित है। १८६५ ई० को डिप्टी कमिश्नर मिटर  
पोलियरने एलेनावाद् बसाया। कारण ४० वर्ष  
पहले बीकानेरके उपनिवेशकीका प्रतिष्ठित खरियाल  
नामक घाम लसझायनसे गूट हो गया था। साधारण  
खोग इसे आज भी खरियाल ही कहते हैं। खोऊ-  
संख्या बढ़ती है। बीकानेरके साथ देगल दूध  
और लवणका व्यवसाय चलता है। मोटा जनी  
कपड़ा बुना जाता है। म्युनिसिपलिटि है। याना  
और दवाखाना बना है। प्राचीन खरियालका  
ध्वंसावशेष घाघराके सप्त पार पड़ा है।

एलोर—१ मन्द्राज प्रान्तके गोदावरी जिल्लाको एक तह-  
सील। क्षेत्रफल ७२८ वर्ग मील है। इस तहसीलमें  
सुसलमानोंकी मंथ्या अधिक है। चारो ओर जंगल  
खड़ा है। एलोर नगरसे राजमहेंद्री तक नहरें  
लगी हैं। २ मन्द्राज प्रान्तके गोदावरी जिल्लाका एक  
नगर। यह अक्षा० १६° ४२' ३५" और द्रावि०  
८१° ८' ५" पू० पर तमिलेर नदी किनारे अवस्थित है।  
विजयनगरसे निकली नहर एलोरमें विजयनगर नहरके  
मिलती। और गोदावरी तथा लक्ष्मीधारा एक होकर  
चलती है। एलोरमें चिचापेटकी गंधी नहर ४० मील  
लंबी है। जनो काभीम और गोरा तैयार किया  
जाता है। पहले यहाँ मत्तार-मरकारकी राजधानी  
रही। असलमें एलोर बेगी राज्यका भाग है। १४८०  
ई० को सुसलमानोंने इसे अधिकार किया था। विजय-  
नगर राज्यके उद्यतिकाल एलोर फिर हिन्दुओंके हाथ  
पड़ा, किन्तु १६ वें शताब्दीके पारश्वमें ही गान-  
कुण्डके कुतुबशाहने इसे फिर जीत लिया था। राज-  
महेंद्रीके राजपूतों और समीपस्थ देगलके रेड्डियों तथा  
कोर्योंके मजम पाकमय निष्फल युधि। योडे देगी  
राज्यो और प्रामोसियोंका यहाँ राज्य रहा।  
पन्नाको एलोर अंगरेजोंके हाथ आया। नगरके

समीप प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष आज भी देखा पड़ता  
है। यह दुर्ग चालुक्य राजधानी के गीर्धे सामान्य  
बना था। इस नगरमें गरमी बहुत होती है।

एलक (अं० पु०—Elk) हरिद्वारमें, बारह सिंहा।  
यह युरोप और एशियामें रहता है। चीरा छोटी  
होनेसे इसे भूमिका टाप चरनेमें कट पड़ता है।  
उपके पत्रादि खा यह जीवन धारण करता है। गमन  
करते समय इसका पद ठीक नहीं जाता। दाढ़नें  
और कूटनेमें बड़ी शक्तिवा लगती है। गरीर विनाश  
जाता है। यह सूँघकर दूरस्थ पदार्थ समझ लेता है।  
एल्व, 'एल्वानुव देवी।

एल्ववास्तुक, एल्वानुव देवी।

एल्ववास्तुक, एल्वानुव देवी।

एव (अं० अक्ष०) एव-यन्। एव-यन्। एव-यन्। एव-  
यन्। १ साम्य, इसीप्रकार, ऐमे। २ साहज्य, बरा-  
बर। ३ चक्रोकार, बेगल, हा। ४ निधोग, जगा-  
तार। ५ वाक्यपूरण। ६ दूतप्रयोग। ७ विनिवह।  
८ पानिधोग। ९ परिभव। १० ईवदर्थ। ११ अक्ष-  
योग-व्यवच्छेद। १२ प्रयोगव्यवच्छेद। १३ पक्ष्य-  
योग व्यवच्छेद। इसका संस्कृत पर्याय एव, तु-सुन-  
और वा है। (वि०) १४ गमनकारो, चलनेवाला।  
(स्त्री०) १५ गमन, चाल।

एव (अं० अक्ष०) १ साम्य, बराबर। २ साहज्य,  
ऐमे ही। ३ चक्रोकार, हा। ४ परंप्रद। ५ पर-  
कति। ६ निधोग। ७ देवी प्रचार, ऐमे ही।  
८ पनुप्रद। ९ निधोग, बेगल। १० निधोग।

एवंदव (अं० वि०) एवंदवमय, बहुमै। १ इस  
प्रकारका, जो देवी निधोग का ही। (स्त्री०) २ देवा  
दव, ऐमे ही चल।

एवंवाद (अं० पु०) इस प्रकारका कथन, ऐमे बात।  
एवंकोय (अं० वि०) ऐमे कावशाला, ऐमे ताकत  
रखनेवाला।

एवंहता (अं० वि०) ऐमे काट करमेंशका, जो ऐमे  
ऐमे जाता हो।

एवंहति (अं० वि०) ऐमे हतिवाला, ऐमे बर-  
वार करनेवाला, जो ऐमे चलता हो।

एवकार (मं० एव०) एव प्रकार, ऐसे को।  
 एवकार (मं० ति०) ऐसे एवसे कि यावदवासा,  
 जो ऐसे प्रकारों का जोड़ रखता हो।  
 एवजुत (मं० ति०) ऐसी दशादि पड़ा हुआ।  
 एवजुत (मं० ति०) एवजुको यत्न, बहुमी०। ऐसे  
 को गुनने युक्त, जो ऐसा हो बन्ध रखता हो।  
 एवजु (मं० पु०) १ परिवर्तन, बदला। २ प्रति-  
 फल। ३ बदलो। एवजुसे स्थानपर जो लिखित्वाक  
 लपट चलता, यह एवजु कहलाता है।  
 एवमी (मं० पु०) क्यावाचक, किसीकी जगहपर  
 कुछ बहलक काम करनेवाला।  
 एवमुःपद (मं० ति०) मध्य करनेको ऐसा बुरा,  
 जो मध्यमें दसतरह प्रकार हो।  
 एवमवयव (मं० ति०) इसप्रकार अवस्थित, जो ऐसे  
 टिका या जमा हो।  
 एवमादि (मं० ति०) ऐसे प्रकारवाला, जो इस-  
 तरह युक्त हो।  
 एवमाद्य, एवमादि ईषी।  
 एवमप्रकार (मं० ति०) ऐसा, जो इस तरहका हो।  
 एवमप्राय, एवमप्रकार ईषी।  
 एवमभाष (मं० ति०) ऐसी शक्ति रखनेवाला, जो  
 ऐसा कोशपर हो।  
 एवस्मिन् (मं० ति०) एवं विधा प्रकारों यत्न, बहुमी०।  
 ऐसा, जो इस तरहका हो।  
 एवभूत (मं० ति०) एवं भवतीति, भू कतरि ज।  
 ऐसा, जो इस तरहका हो।  
 एवभूतवत् (मं० ति०) ऐसे ही पदार्थमें युक्त, जो  
 इसी तरहकी चीज रखता हो।  
 एवभूमि (मं० ति०) इस प्रकारका स्थान, ऐसी जगह।  
 एवदा (मं० ति०) एवं एवं एवसे या याति, या-जिप्  
 ह्योदादित्वात् मायुः। एवक, एवशाला।  
 एवदागवत् (मं० पु०) एवदा एवको मध्य रख,  
 बहुमी०। एक जदि।  
 एवदावत् (मं० पु०) या-वतिप्, एवदा एवप्रकारका  
 दावा। १ एवक, एवशाला। २ एवद। ३ एवो-  
 प्रकार समझने, ऐसे ही करनेवाला।

एवद (मं० पु०) एवं एवदकृति, एव-एव। सोम-  
 विधि।  
 एवदद (मं० पु०) एवमवमावदति, एव-वा-वद-एव।  
 आत्मविशेष।  
 एविषा, एविषा ईषी।  
 एविषादि (मं० ति०) एविषादि मध्य रखनेवाला,  
 जो एविषाका हो।  
 एव (धातु) भादि चाम० गक० भिद। 'एवही'।  
 (चरि-एव) समझ करता, चम देना।  
 एव (मं० पु०) एव भाषे जिप्। १ गति, चाम। २ एवका,  
 मारती। ३ एववर्ती पुनय, चागे एवनेशना मयुम।  
 एवव (मं० पु०) एव-एवद। १ लोचनमिति वाच,  
 लोचका मोर। २ समझ, चाम। ३ एववेष, चोह।  
 ४ एवका, एविषा। ५ मलकी लघ।  
 एववा (मं० ति०) एव-विष्-भाषे युप्। १ एवका,  
 एविषा। २ एववा, तरुण।  
 एववाममिति (मं० ति०) एव भोजनका चो-  
 कार, एवसे चामेका सेना। जेन ४२ पदार्थ दीवर्जित  
 मानने चोर खाते है।  
 एवविका (मं० ति०) एवमैतयेति, एव-एवद मायं  
 मन् टाप्, चत इत्यप्। १ काटा। २ एवविशेष।  
 एववी ईषी।  
 एवविन् (मं० ति०) एवमेव वा पिता करनेवाला,  
 जो तमाग या कोमिग करना हो।  
 एववी (मं० ति०) एव-एवद-कोप्। १ एवविशेष  
 परिमाणकी तुला, मोमा बगैर तोलनेकी तराजू।  
 २ एवविशेष एवविशेष, एक जतर। इस पदार्थकी  
 लपट मध्य जगा पूयादि द्याव कराने है। कुछदम  
 केपुर्षे मृग-जमा रहता है। मापारव कोमोम ईम  
 जमाका कहते है।  
 एववीय (मं० ति०) एव वा एव-परीदत्। १ मध्य,  
 एवमैतयेति। २ विषाद्य, जतर जमाने कादिब।  
 ३ एवमैतयेति, एवमैतयेति।  
 एववीय, एववी ईषी।  
 एवा (मं० ति०) एव-वा-टाप्। १ एवका, एविषा।  
 २ एववर्ती को, एववर्ती चोर।

एषावीर ( सं० पु० ) एषायां प्रतिष्ठापित्वावीरः,  
७-तत् । स्थानाख्यान विवेचनागुण्य प्रतिष्ठापक निन्दित  
ब्राह्मण ।

एषिता ( सं० द्वि० ) इष-यञ् । अभिलाषयुक्त,  
चाहनेवाला ।

एषित् ( सं० द्वि० ) इष-णिनि । इच्छुक, चाहियमन्द ।

एष्ट्य ( सं० द्वि० ) इष्टु-तथ्य । वाञ्छनीय, चाहने  
लायक ।

एष्टा ( सं० द्वि० ) अभिलाषयुक्त, चाहियमन्द ।

एष्टि ( सं० स्त्री० ) आ-यज-इष वा श्तिन् । १ अभि-  
यजन । २ अभिकामना, चाहिय ।

एष्य ( सं० द्वि० ) इष कर्मणि श्वात् । १ वाञ्छनीय,  
चाहने लायक । २ गम्य, पहुँचने लायक । ( स्त्री० )  
भावे श्वात् । १ सुश्रुतोक्त अष्टविध गम्य कर्मणि एक  
कर्म । अन्त्यन्तरस्य गम्यादिके पञ्चोपपन्न करनेको ही  
एष्य कर्म कहते हैं । यह कर्म पुनः काष्ठ, वंश, नल,  
गाड़ी और सुखो तीर्थी प्रभृतिमें भोजन पड़ता है ।  
४ पदचलायंसाध्य एक रोग ।

एष्यत् ( सं० द्वि० ) भविष्यत्, चाहियन्दा, चाहनेवाला ।

एष्यत्कानीय ( सं० द्वि० ) भविष्यत्काल सम्बन्धाय,

चाहियन्दा जमानेमें सरोकार रखनेवाला ।

एष्या ( सं० स्त्री० ) आमलकी वृक्ष, चावलीका पेड़ ।

एषिड ( सं० पु० = Acid. ) चम्पू, तेजाब ।

एशिया—पृथिवीके चार महाद्वीपोंमें एक महाद्वीप ।  
यह यूरोप और अज़र अफ़्रीकाके पूर्वमें प्रमान्त  
महासागरके उपर्युक्त पर्यन्त विस्तृत है ।

अति पूर्वकालको इस महाद्वीपका नाम एशिया  
न रहा । उस समय इस विश्वीय भूमिखण्डको चार  
अथि सदृश भागवा अस्तुद्वीप कहते थे । एशिया  
नाम यवन-प्रदत्त है । यूरोपीय भूगोलवेत्ता बतावा  
करते, कि वर्तमान एशिया-माइनरके एक छोटे  
जिसेकी पूर्वकाल 'एशिया' कहते थे । योनि देशके  
यवन इसी स्थानमें पूर्वकी ओर विजयका पदचर  
हुये । एशिया-माइनरकी पूर्व ओर अज़रने की देश  
या स्थान जो अब ओर जान पाया, उस समय भूभागका  
नाम 'एशिया' बताया था । आज पाकर यह विश्वीय

महाद्वीप एशिया नामसे प्रसिद्ध हो गया । एशिया  
नाम नितान्त प्राचिनिक नहीं । योनि के आदिप्रति  
होमरने इस नामका उल्लेख किया है ।

किसी-किसी लोक-भाषावित् पण्डितके कथनानुसार  
होमरने जिस 'एशियाम्' शब्दका उल्लेख किया, उसके  
पाठसे बोध न हुआ—एशिया नामक कोई भूभाग  
उनका समझा था । अज़रने 'एशियाम्' ( Asia )  
नामसे निदीय देशके राजाका उल्लेख किया है । इस  
सम्बन्ध पर हम बादानुवाद करना नहीं चाहते ।  
सत्य समयका विचार यूरोपीय पण्डित ही करेंगे ।  
फिर योनि के प्राचीन कवि हिमियदके पुस्तकमें भी  
एशिया नाम मिलता है । उनके मतमें एशिया किसी  
अफ़रिका नाम है । यह ओशनम् ( Oceanus ) एवं  
टेटिय ( Tetys ) की कन्या और प्रमियिडम् ( प्रमन्य )  
की भार्या रहें । हिरोदोताम्ने निवा—ओक नागांके  
मतसे प्रमियिडम्को पेन्नोके नामानुसार एशिया  
शब्दका नाम पड़ा है । किन्तु निदीयन यह मत  
नहीं मानते । उनके कथनानुसार कोटिय ( Cotys )  
पुत्र एशियाम् ( Asia )-ने एशिया नाम पना है ।  
अपना मत समसाध करनेको वह फादिगको एशियांन  
जानिका उल्लेख किया करते हैं । ( Herodotus  
Melpomene, XLV. ) ऐतिहासिक हेरोडोके मतमें  
निदीयाका प्राचीन नाम एशिया है । यनेन अनुमान  
पीके भाषाके तत्प्रतिदिने निषय किया,—एशिया  
शब्दका अर्थ सूर्य एवं एशियांन शब्दका अर्थ सूर्यको  
वासी अर्थात् पूर्वादिक्वासी है ।

ऐपना चाहिये—प्राचीन लोक और रोमक एशिया  
का विषय केला समझते थे । होमरको वर्णनामें  
अमल पड़ता—इस युद्धमें बहुत पहने एशिया और  
युरोपमें संस्तर था । किन्तु उस समय अनुमान  
नहीं, बारनर प्रसिद्धता और विषय प्रभावका  
पाठ्य रहा । प्राचीन लोक एशिया-माइनर तक  
जानते थे । उसी स्थानमें आ आयातय पीक लप-  
निषय करते थे । बड़ा प्राचीन हिन्दुओंके निबट  
यवन लेख परिचित रहे ।

हैरा-मथोइके अन्वेष १२० वर्ष पहने पाठ्य-

[illegible]

समसामयिक लिनीफर्मेन्सम्माट, कार्बनिके साय  
रहं पारस्व साक्षात्पका पनेक विवरण संयुक्त किया  
या। उनके बनाये पन्नेन उसका विनचण परिचय  
मिलता है। महावीर विकन्दरने एशिया खण्डके  
पनेक देय जीते थे। उन्होंने जिस विस्तोर्ण भूभागके  
मध्यमे सुइयाता की, डिमियाकंस नामक सन्तीके  
सगर-सङ्गहरने एक मानचित्र खींच उसके देय, प्रदेश,  
नगर, धाम, नद प्रभृतिकी वर्णना दी है। उसी  
समय विकन्दरने पन्पेन नौ-सैनापति नियुक्तसुकी  
मध्यमे मोहनोरी रउछेतिस मदीकी भेज दिया।  
नौ-सैनापतिकी वसयात्रामे पीक लोग पनेक  
भूतनाम लान सके।

फिनिसोय बलिपूर्वकालसे ही एसिया-  
समुद्रमोर्ख्य अनेक स्थानोको वाणिज्यके लहे  
यातायात करतें थे। सुगंधकी प्राचीन जातियांस  
फिनिसीयोको बलि- एसियाखण्डके माना  
देगोका विषय पद- यह  
जिस जिस देग जाने  
भाषासि सिधद्व कर बना  
नमरने फिनिसोय बलिकोका  
मकदूनिया-मोर्खे टायर नगर ध्व

‘श्वेतकृष्णिया’ नगरमें जा बसने लगे। उनमें एसिया खण्डके प्रधान वंदरोंका संवाद सुन पनेक शौक बसिक। सलपयने गमनागमन किया करते थे। क्रमशः इजिप्टके लोग भी सलपयने मसलवार, सिंहल प्रशुति जनपदोंमें पड़ूँष वापिज्य चलाने लगे। किन्तु वह सिंहल सांघ वझोपसागरमें घुसनेकी साहसी न थ्ये। सिंहलवासियोंमें उन्हें कलिङ्ग प्रशुति भारतके पूर्व उपकुलस्य जनपदोंका सन्धान मिला था। उन्हें बलि-कोने इजिप्टके शौक भोगोंकी रत्नपद्म भारतवर्ष कीर सिंहल होपका परिषय दिया।

सिकन्दरके पीछे सिरीय अधिपति सलूजस्, जिन्होंने गङ्गा नदीके तीररक्ष सकल जनपद अधिकार करनेको प्रयासो किये। उन्होंने मेगस्थेनिस नामक एक व्यक्तिको मगधराज चन्द्रगुप्तकी सभामें दूतकी भांति भेजा था। उस समय भारतवर्षके अधिकांश स्थान चन्द्रगुप्तके अधिकारमें रहे। मेगस्थेनिसने बहुत दिनों मगधकी राजसभामें रह कर भारतवर्षके जनपदादिका विवरण संश्रुति कर एक भूतन्त्र बनाया। पीछे योग बन्धी युक्तक पद भारतवर्षका विवरण कुछ-कुछ समझ सके।

यौकोने एशियामें या एनेक नगर पौर जनपदा-  
 दिका नाम बघनी भायामें रखा या । फिर रोमक  
 प्रवक्ष हो यौकोका प्रतिष्ठित मकल राज्य ध्वंस करम-  
 सगे । सम दउक्रेतिस पौर ताइयोस नदीके  
 उपजून-प्र । पर्वतमाथा तक रोमक  
 मिथिदलेगई सङ्गति समय  
 सैक पदुवा । पदले  
 या । समोने

एकत्र कर भूगोल प्रसार किया। उनमें चनेकीके पुस्तक लोप हो गये हैं। केवल ट्रेको, ग्लिनि एवं टलेमि प्रभृति लोगोंके ग्रन्थ हमें देखनेकी मिलते हैं। टलेमिसे पहले पायात्वा प्राचीन भौगोलशास्त्र भारत-महासागरके भूभागस्थित होपमसूत्र एवं पायात्वा महासागरके निकटवर्ती किसी होपका विषय जानते न थे। टलेमिके ग्रन्थमें उनमें कई होप उक्त हैं।

उनके परवर्ती कालपर सुसलमान एसियाका भू-हस्तात्वा संघट्ट करनेकी यत्नयान् हुये। जब सुदृग्द और उनके शिष्यगणके प्रभावसे एसियावासे अनेक स्थानोंके लोगोंने इसलाम धर्म पकड़ा, तब नूतन धर्मसे दीक्षित व्यक्ति साधने सहाके दर्शनकी प्रति पुण्यकर्म समझा था। इसीसे कितने ही लोग दूर देशान्तरसे पथ पर्यटन कर सकी जाते रहते। गमनकालकी अनेक नूतन स्थान उनकी दृष्टिमें पड़ते थे। विषयगण व्यक्ति उन स्थानोंका विवरण संघट्ट कर लेते। यात्रकन उनके ग्रन्थ भी सुप्रमाण हैं। फिर जो हैं भी, उनका संघट्ट करना दुष्कर देखते हैं। इन सकल ग्रन्थोंमें इब्न ऐकल, एदरिसे, इब्न बतूता प्रभृति कई लोगोंके ग्रन्थ ही हमें पढ़नेकी मिलते हैं। विशेषतः इब्न बतूताके भ्रमच-हस्तात्वामें इस राज्यके युराल पर्वतसे दक्षिणकी सिंधुन होप पर्यन्त अनेक स्थानोंका भूहस्तात्वा लिखा है। भिनिश-देशीय प्रसिद्ध भ्रमचकारों मार्को-पोलो ई० १२५५ गताब्दकी मुगल-सम्राट् कुबलाई खानकी राजसभामें बहुत दिन रहे। वह उक्त सम्राट् द्वारा दूतरूपसे एसियाके नाना स्थानोंकी भेजे गये थे। उन्होंने तातार, मङ्गोलिया, चीन, जापान, तिब्बत, पेगु, बङ्गाल, महाचीन, सन्तालीपुञ्ज, सिङ्गल, मलय-वर, चम्पै, अदन प्रभृति नाना स्थानोंका विवरण लिखा है। वर्तमान युरोपीय भौगोलिक सर्वेक्षों समय एसिया महादीपका आविष्कारकर्ता बताया करते हैं। उनके पीछे पोर्तुगीज, दिनेमार, चोलन्दाज, फ्रांसीसी और अंगरेज क्रमान्वयसे एसियामें आने लगे। उन्होंने नाना स्थान अधिकार किये, नाना स्थानोंमें उपनिवेश स्थापित और अनेक स्थानोंके भू-हस्तात्वा लिखे।

चीन—एसियासे उत्तर उत्तर-महासागर, पूर्व प्रमान्त-महासागर, दक्षिण भारत-महासागर और पश्चिम युरोप, लक्षसागर, आर्क्टिकसेना, भूमध्यसागर एवं सोडितसागर हैं। उत्तर-पूर्वके प्रान्त-सागर परिरुद्ध प्रणाली द्वारा कामस्कटा और उत्तर-अमेरिका अन्तर्गत हुआ है। इसी प्रकार दक्षिण-पश्चिम सुदृग्द नहर द्वारा एसिया और अफ्रीकामें प्रवेष्ट पड़ा है। भारत-महासागरीय होप एकत्र कर लेनेमें समस्त एसिया लक्ष्म प्रायः चतुष्काय देव पड़ता है। भूमिका परिमाण कोई १४८१८००० वर्गमील और लीकर्मत्वा १०२००००००० है।

यह महादेश चार सकल महादीपोंमें बायतनमें जैसे ब्रह्म, वेने हो अन्तर्गत, आश्व और उर्वरता प्रभृतिमें भी गेष्ट है। एसियाका प्राकृतिक दृग्द ग्रन्थमें भिन्न लगता है। हमको प्राकृति अफ्रीका, युरोप और अमेरिकासे नहीं मिलती।

मध्यभागकी समतलभूमि समुद्रतलमें अधिक उच्च है। फिर समतल भूमिकी चारों ओर निम्न भूमि और बीच-बीच पर्वतमाला विद्यमान है। पर्वत प्रति उच्च एवं ब्रह्म चोटों भी समतलभूमिके बायतनानुसार बांटे हो समझ पड़ते हैं। एसियाको अन्तर्निष्ठ समतलभूमि नहीं निम्न और नहीं उच्च है। पूर्वभागमें तिब्बतकी उर्वरा भूमि और गोबोकी मरुभूमि ४००० से १०००० फीट तक लंबी पड़ती है। पश्चिममें ईरानकी उर्वराभूमि ४००० फीटसे अधिक उच्च नहीं। उक्त समतलभूमिसे उत्तर-पश्चिम टरस, काकेशस एवं एलबर्ज पर्वत और कास्पिय-सागरकी तान् भूमि है। उत्तर माइदरियाका अन्तर्गत पर्वत और उत्तर-पश्चिम दोरिया नामक पर्वत प्रदेश है। पूर्व चीनराज्य-मध्यवर्ती तुवार गिरिमाता तथा दक्षिण हिमालय पड़ा है। पश्चिम बलूचिस्थानकी गिरिमाता और पारसीपसागरका निकटस्थ लक्षण पर्वत है। अल्प पर्वत श्रमणः उत्तर-पश्चिम तुष का टरस और आभिन्न गिरिमाता है। इसी अन्तर्गत माइदोम और दक्षिण में निम्न है। समतलभूमिसे दक्षिण हिमालय गिरि दक्षिण



सबसे पर्वतोंमें उच्च है। यथा—धवलगिरि २०६००, काश्मिरगुह २०१०८, गोर्खास्थान २००००, यमु-  
नोत्तरी २५६६८, नन्दादेवी २५६८६, धमत्सारि  
२६८२८, जेमिनि २१६०० और एशियाईके मध्य उच्चतम  
गुह टैबेट २८००२ फीट उंचा है।

एशियाईके उत्तरांगमें साइबेरिया नामक विस्तीर्ण  
समतल भूमि है। यह स्थान समस्त युरोपण्डकी  
पश्चिमा बड़ा है।

ईरानकी उर्वरा भूमि तीन भागोंमें विभक्त है—  
ईरान, परमेनियाका पार्वत्यप्रदेश और एनाटोलियाकी  
समभूमि। प्रथम भाग पर्याप्त ईरान १०० फीट उच्च  
है। अधिकांश भूमि कंकड़ और बालूने भरा जलप-  
क्षेत्र है। चारों ओर गिरिमाला प्राचीर रूपसे घेरे  
हैं। द्वितीय भागमें परमेनियाका गिरिराज्य, कुर्दि-  
स्थान और अजरबैजान है। इसी भूभागमें प्रसिद्ध  
पारास पर्वत पड़ा है। तृतीय भागमें एनाटोलिया  
है। यह भूभाग जलवायुकी दृष्टिसे पर्वतमालासे  
दक्षिण-पश्चिम तरफ पर्वततक गिरिगुह द्वारा सीमा-  
बद्ध है। जलवायुकी दृष्टिसे कोरुई कीर्ई स्थान  
यनाहिमे परिचित देश पड़ता है।

भारतवर्षके दक्षिणपथकी उर्वराभूमि १५०० से  
२००० फीट तक उच्च है। यह पश्चिम समथर  
उपजाऊने पश्चिमघाट पर्वत द्वारा विभक्त है। इसके  
अतिरिक्त भारतमहासागरीय द्वीपगुहमें भी उर्वरा-  
भूमि मिलती है।

एशियामें कुछ निम्नभूमि प्रधान है। १म उत्तरकी  
साइबेरियाकी निम्नभूमि है। यह पलटाई और  
यूरास पर्वतके उत्तरांगमें पारम्भ हो उत्तर-महासागर-  
के उपजाऊ पर्वत विस्तृत है। अनेक स्थान शीत-  
प्रधान, अन्धकारमय और ऊपर हैं। २य बुखाराकी  
निम्नभूमि काश्गीर सागर और पारास नदीके मध्य  
है। इस भूभागमें केवल कंकड़ भरा है। ३य सिरीय  
और अरबी निम्नभूमि है। दक्षिण अंग शुष्क मरु-  
भूमि देश पड़ता, किन्तु उत्तरांगमें युद्धतिष्ठ और  
नाइजीर नदीका जल मिलता है। ४य भारतवर्षकी  
निम्नभूमि है। इसके मध्य ४०० मील विस्तृत मरु-

स्थली एवं मरुदेमका विस्तृत उर्वर क्षेत्र है। ५म  
काश्गीर, श्याम और मरुसागरका दरावती-प्रवाहित  
भूभाग है। ६ठ चीनकी निम्नभूमि प्रायः २१००००  
वर्गमील है। यह चेकिन नगरके पूर्वमें पारम्भ हो  
दक्षिणकी कर्कटक्रान्ति पर्वत विस्तृत और पश्चिम  
उर्वरा है। चीना इस स्थानको जगत्का उद्यान कहा  
करते हैं।

एशियागुहमें निम्नलिखित देश और तटस्थान  
प्रधान नगरादि विद्यमान हैं।

तुरुष्क या तुर्की—अज़रबायजान, आर्सेने, दामास्कस,  
जेरुसलेम, यमुदाद, मोशल, बसरा, देवजगुह।

अरब—(तुरुष्क पश्चिम) मद्रा, मदीना, जेद्दा।

„ (स्वाधीन) मस्कट, अदन, मोषा,  
रियाध, दराया।

अफगानिस्थान—काबुल, कन्दहार, हिरात, यदुप्रान्।  
बलूचस्थान—खिस्त।

भारतवर्ष—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, मुरगिदा-  
बाद, ढाका, पटना, काशी, पलाहाबाद, कानपुर,  
लाहौर, सूरत।

मद्रा—मद्रास, भावा, अमरपुर, रङ्गून, अतेशान,  
मोलमीन, मारगूर, मलय, त्रिङ्गापुर।

श्याम—बहाहा।

काश्गीर—सेगा।

थानाम—द्विष्ट, केगो।

सियम—लखन।

चीन—पेकिंग, नानकिंग, मद्राई, निङ्गपो, चामय, कापुङग।  
तिब्बत—मासा।

स्वाधीन तातार—बोखारा, खोवा, सुगधर, इर-  
कन्द, सुतन।

रुस (साइबेरिया)—तोथमदूर, कर्कटक, समर-  
कन्द, यु.कन्द, वटम, कारम, पार्दाहान।

जापान—जोडो, योकोहामा, टोकियो।

फिलिपाइन द्वीपगुह—मानिला।

यवदीप—बटविया।

सुमात्रा—पाथोन।

दक्षिण अफ्रीका—नारिया, अरने, अरने मन्दी, दीवी।

चलरोप—वेरिङ्ग प्रपातोके निकट पूर्व चल्तरोप, माइवेरियाके उत्तर मेरेरो, कामस्कट्काके दक्षिण लोपटका, चीनके पूर्व मिङ्गो, चानामके दक्षिण कम्बोडिया, मलयके दक्षिण रोमानिषो, भारतवर्षके दक्षिण कुमारी, चमङ्ग प्रपातोके मध्य ममिन्दम और चरबके पूर्व रम्बलट्ट चल्तरोप है।

रोप—साइपस, रोडम; बोरनिषोसे पूर्व मेनिविम, मेनिविमसे पूर्व मलकास या स्याइस होप, बोरनिषोसे उत्तरपूर्व मानिहा होपपुच्छ, भारतमहासागरमें बोरनिषो, यह एवं सुमात्रा, भारतवर्षमें दक्षिण मिङ्गम, बङ्गोपसागरमें चान्दामान तथा निकोबार, भारतवर्षसे दक्षिण-पश्चिम माछा एवं मानहोप, चीनसे दक्षिण डेनान तथा इङ्ककङ्ग, चीनसे पूर्व फरमोसा, चुसाम, एवं लुबुहोप, चीन तात्तारसे पूर्व जापान तथा कामस्कट्काके मध्य युराइन और नव-माइवेरिया।

उत्तरोप—एसिया माइनर, चरब, भारतवर्ष, पूर्व-उपरोप, मलय प्रायोहोप, कोरिया और कामस्कटका।

पश्चिम—यूरास, काकेशस, चरमेनिया, टरस, सेबे-नन, कोरेब, सिनाई, एनबर्ग, हिन्दूकुग, कोइबावा, हिमालय, काराकोरम, यामोर, चीन-गिरिमाना, तियानसन, सलटाई और यबजोनर्ग।

उर—कासीय, चारस, लंबनर, बसलम, केकाम, मरु, बाण, उरमिया और पसटो।

नदी—जखर्तस ( साइपस ), ओकसम ( चाम्ब ), सेना, चोबी, एनसी, य्फ्रेतिस, तारफिस, गङ्गा, सिन्धु एवं ब्रह्मपुत्र नद, दराबती, सेलुएन ( सेलुएन ), मिनाम, कम्बोडिया, होयाङ्गची, इयङ्गमिकियङ्ग विहो, चुकियाङ्ग ( कपङ्ग ) और चामूर ( सेपेलियन )।

विदेशीय अधिकार—चाङ्कस एसियाके नामा स्थान विदेशियोंके अधिकार किये हैं। भारतवर्ष, इज्र, यिनाङ्ग, मलय, सिङ्गापुर, चान्दामान, निकोबार, मिङ्गल, सेलुपान होप, चरबका बदन बन्दर, वेरिम होप, इङ्ककङ्ग और साइपस होप अंगरेजोंके अधिकारमें हैं। जापानी दक्षिण कम्बोज और भारतवर्षके पण्डिचेरी, मद्रास, तथा चन्दननगरकी दबायें हैं। रुमासाके दक्षिणार्ध, यह, मेकिविम और साकाकास

होपपर सोमदाओका अधिकार है। भारतवर्षके गोवा और पम्बोमपर पोर्तुगोल अधिकार रखते हैं। फिमिपाइन होपपुच्छको अमेरिकानि जेनमे सङ्के होम लिया है।

एसियापुच्छमें नामाधिकार उद्भिद् और ओपनगु देख पड़ते हैं। माइवेरिया, चीन, भारतवर्ष, चारस, चरब उच्च बन्दे चरने-चरने ईदके उद्भिद् और ओपनगु का अधिकार दितां।

जाति—एसिया पण्डमें नामा जाति या बगती है। युरोपीयोंने इन जातियोंको तीन प्रधान जेपिदिमि बांटा है—मोगलीय, चाय और मिमितिङ्ग।

चरब, सेबेनोप और सेबेनोप बन्दे देखी।

जिह इन जातियोंकी भाषाके उच्चारणानुसार दूमरे भी कई विभाग हो गये हैं।

१म तिम्बत, चीन, जापान, कोरिया और पूर्व-उपरोपके उत्तरार्धमें जो जातियां रहती, वह एकाक्षर भाषा व्यवहार करती हैं। २य मध्य एसिया तथा उत्तरार्धमें कुछ दूरतक तुह्यत, मुगल और तुङ्गम जातिका बास है। इनकी भाषाओं परबो चरब और अनेक परबो गण्य चलते हैं। ३य कामस्कट्काकी रहनेवालों मोसाइड जाति एक प्रकारकी गतस्थ भाषा व्यवहार करती है। ४य भारत-महासागरीय मलय एवं पमिनेसीय जातिमें मलय चरब मलयमिगित भाषा चलती है। ५म चाय जातिकी मूल भाषा मङ्गल है। कोई-कोई पारण्य चरब चरमनी मिगित भाषा बोलती है। ६थ काकेशस जातिकी भाषाका तत्त्व पाल भी भनो भांति मयभमें नहीं पाया। ७म दक्षिणाय जाति तामिस, कमांटी, तेनङ्ग और मिङ्गो भाषासे चरमा काम निकालती है। ८म मेमितिङ्ग जातिमें यङ्गटो और चरबो भाषाका व्यवहार है।

९—एसियापण्डमें जेने नामा जातिका बाग, वेम हो नामा धर्मका प्रचार भी है। भारतवर्षका ब्राह्मणधर्मोपलब्धो है। चीनके लोग बुद्ध, कमपुओ और माघोचोको उपासना करती हैं। तिम्बतके डोड दनाई नामाके पूजक हैं। चरब, दंगान और भारतवर्षके सुवसमान इबलाम धर्मको मानते हैं। चरमे-निदा, जिरीदा, कुर्दस्थान और भारतवर्षके ईफाई

पृथ्वी धर्मात्मन्त्री है। साहचरियावाली चीक मतको मानते हैं। एसियाके सम्राज्यवासी जड़ोपासक हैं।

हिन्दू, बौद्ध, जाय, सुषन्ध वगैरि मन्त्र दीये।

एशियाके मध्य एसियाके लोग प्रथम सुषन्ध हुये थे। समस्त पार्यों में ही गपनातीत खानमे समधिक उपति और मन्त्रि लाभ को है। पार्य दीये।

सिन्धु—चीनने एसियाके पूर्वमें और जापानकी सम्यता बनाई है। किन्तु मन्त्रोलिया, तिब्बत, ग्वाल, कम्बोडिया और मन्त्रोलिया पर भारतीय सम्यताका प्रभाव अधिक पड़ा है। फिर भारतके बौद्ध धर्मने चीनको भी अपने जम्हागत कर लिया है। इस-नामका प्रभाव चीनपर अधिक नहीं पड़ा। पहले बाबिलोनिया और मिस्रीयामें अधिक उपति हुई थी। किन्तु ई०पू० ७०० वर्ष पहले उसका डाम डूबा और पारस्य साम्राज्य बन गया। ई० ७म शताब्द तक उस साम्राज्य मन्त्र रहा, पीछे सुषन्धमानोंने अपना छद्म किया। एसियामाइनरके हिताहत और अमीरोदिवीका फास मालूम नहीं।

ई०पू० ४००० वर्ष पहले सिन्धुमाइनर बाबिलोनियाको प्राक्रमणकर राजा बने थे। प्रायः ई०पू० २२८५ वर्ष पहले बाबिलन नगर समुद्रकी राजधानी रहा। ई०पू० ८०० या ८०० वर्ष पहले असुरीयोंने बाबिलनके अधीन अपनी बड़ी उपति की। किन्तु ई०पू० ६०६ वर्ष पहले ईरानियोंके समुद्र उन्हें नीचा देपना पड़ा था।

सम्भवतः ई०पू० १००० वर्ष पहले चीना एसियामें आ हीपाइंकी नदी किनारे चीनमें पहुँचे थे। ई०पू० २२० वर्ष पहले वर्तमान चीन-साम्राज्य सङ्गठित हुआ। फिर तातारोंने विवाद चलते रहा। बीच-बीच यह साम्राज्य टूट-फूट जाता था। किन्तु ज्ञान और सुषन्धमने इसे दो बार जोड़-जाड़ ठीक किया। ई०पू० ११वें शताब्द सुगन कुबसाई खानने चीनको जीता था। १०० वर्षों के काम राज्यकर सुगन देश मिट्टीके अधीन हुआ। फिर १६४४ ई०को मन्त्रोंने मिट्टीको दबा अपना अधिकार जमाया था।

जापानमें पहले हिन्दू रहते थे। ई०पू० ६४ शताब्द

वहाँ चीन-सम्यता और बौद्ध धर्मका प्रभाव पड़ा। ई०के ८म शताब्द जापानियोंका वैभव बढ़ा था। प्रथमतः फुजीवारा येम उसका दुषा, फिर तेरा और मिनामोतो लोगोंने विवाद होते रहा। ११८२ ई०को मिनामोतो नाममात्रकी राजा बने, किन्तु सुषन्ध अधिकारी औरवर गोगुन थे। जापानपर कभी किसी विदेशीयने प्राक्रमण नहीं किया। कुबसाई खानका प्राक्रमण ध्वस्त गया था। २०० वर्ष तक गोगुनके वंशजोंने राज्य किया। उन्हें कानाकौगसको बड़ी उत्तीर्ण दी थी। ई०के १६वें शताब्द पचास वर्ष तक पराजयता की धूम रही। गोगुन जापानमें आ पहुँचे थे। फिर हिदेशीमी नामक एक जापानी साहसिकने कोरिया विजय किया और चीनके प्राक्रमण पर भी ध्यान दिया। १६०३ ई० १८६८ ई० तक ईपूने जापान की धार्मिक और सामाजिक स्थिति सुधारी थी। डचोंके प्रतिरिक्त सकल विदेशियोंको जापान जानेका निषेध रहा। १८५४ ई० १८५८ ई० तक युनाइटेड स्टेट्स और यूरोपीय गतिवोंने जापानमें व्यवसाय करनेको अपना स्वत्व देपना था। यह-विवाद बहुतों पर मेकाडोको पुनरधिकार मिला। १८५५ ई०को जापानने चीनको परास्त किया और दस वर्ष पीछे रूसको भी हरा दिया। जापानमें रहनेवाले विदेशियोंको जापानो कायूनके समुद्र की वसना पड़ता है। जापान सुषन्धमानोंके प्राक्रमणने बन रहा है।

कोरियामें भारतीय और चीना दोनों वर्धमानों वनती हैं। चीन और कोरियाकी भाषा तथा रीति-नीतिमें प्रभेद है। ई०के १६वें शताब्द जापानियोंने कोरिया को अधिकार किया था, किन्तु १८८५ ई०को कोरिया स्वतन्त्र हुआ।

भारतमें प्रथम प्रादिम एसियामी लोग एवं सन्धान, द्राविड तमोल-कगाड़ी और पार्य लोग प्रकारके लोग रहते हैं। गौतम बुद्धके प्रभुदयम ब्राह्मणोंका प्रभाव पड़ गया था, किन्तु गदराचार्यने बौद्ध धर्मको बाहर निकाल द्ये फिर प्रचल किया। ई०पू० १२६ वर्ष पहले सिक्खोंने पञ्जाबपर प्राक्रमण मारा, किन्तु

कोई फल न पाया। पशोकके समय मौर्य साम्राज्य  
अफगानस्थानसे मन्द्राज तक विस्तृत था। ५० ई०  
कनिष्कने भारत आक्रमण कर उत्तर भारत और  
कश्मीरमें राज्य लगाया। गुप्त साम्राज्य ई०के  
५म शताब्द उत्तरीय प्रतिवागियोंके आक्रमणसे भङ्ग  
हुआ था। ६०६ से ६४६ ई०तक उत्तरभारतमें हर्षका  
राज्य रहा। कन्नौज नगर उसकी राजधानी था। ७२२  
ई०के समय परबियोंने सिन्धु विजय किया। फिर  
ई०का ११म शताब्द समाप्त होने समय उत्तर-भारत  
मुसलमानोंके अधीन हुआ था। मुसलमानों राजधानि-  
योंके निकट इसलाम धर्म लुप्त हुआ, किन्तु राज-  
पूताने और मन्द्राजने हिन्दू धर्म लेशेका तैसा बना  
रहा। १५२६ ई०को मुगलोंने दिल्लीका सिंहासन  
हीन लिया। अकबर और शाहजहाँ बादशाह बड़े  
नामी हो गये हैं। १७०७ ई०को मुगल साम्राज्यकी  
अवनति हुई। मध्य भारतमें मराठोंका प्रभाव बढ़ा  
था। फिर धीरे-धीरे पंगरीजी राज्य स्थापित हुआ।  
भारतका प्राचीन इतिहास बहुत कम मिलते भी  
हममें कोई सन्देह नहीं, कि भारतीय धर्म, साहित्य  
और शिल्पने ईरानसे जायास तक संमग एसिया  
खण्डपर अपना प्रभाव डाला है। भारतमें देखो।

ईरानियोंकी भाषा और धर्मप्रवृत्ति वैदिक भाषोंमें  
मिलती जुलती है। ई०से बहुत शताब्द पहले जर-  
बुजने ईरानी धर्मको सुधारा था। उसी समय ईरान  
(पारस्य) एसिरीयाकी अधोगतिमें भी छूट गया।  
ई० ६४४ शताब्दसे ईरानी अपने आसपासके राज्य जीत  
एक साम्राज्य बनाने लगे। बाबिलोनियोंसे मन्थिजर  
उन्होंने जिनवेष्टकी विनाश किया था। ५० वर्ष पीछे  
काहूरमने बाबिलन ली लिया। उनके पंगज २०० वर्ष  
तक राज्य करते रहे। लक्ष साम्राज्य पूर्व ओक्सस  
एवं सिन्धुसे पश्चिम घुँस और दक्षिण मिसरतक विस्तृत  
था। ई०से ६२८ वर्ष पूर्व निकटमें श्व दारुमकी  
जीता। मन्थुकी नामक सीध राजवंशमें पारस्य  
ग्रासन किया। बकटिया स्वतन्त्र हुआ था। ई०से  
२५० वर्ष पूर्व सुरागानमें पर्सकेमियोंके अधीन पार-  
सीय साम्राज्य बन पड़ा। पारसीयोंने रोमकोंका

शामना सफलतापूर्वक किया और भारतमें गिरीयातक  
अपना प्रभाव फैला दिया। किन्तु समानोयोंने उन्हें  
नोचा देखाया और ४ शताब्दतक राज्य बनाया था।  
उन्होंने जरबुसीय धर्म प्रतिपालन और पूर्व रोमक  
साम्राज्यसे युद्ध सम्पादन किया। ई०के ७४० शताब्द  
हरेक्रियमने उन्हें हराया था। फिर कुछ दिन पीछे  
ही सुमनमानोंने उनको विनाश किया और ईरानमें  
इसलाम धर्म बना दिया। अज्यास गाहके समय  
(१५५५-१६२८ ई०) ईरानमें एकता और सद्दि बढी  
थी। किन्तु पक्षगनोंका आक्रमण होनेसे फिर विन्-  
हता पड़ी। १७८८ ई०से तुर्कमन पंगका राज्य हुआ।

यहूदी परबियोंसे मिलते जुलते हैं। वह एक  
जगह न बस इधर-उधर घूमते फिरते थे। फिर मिसर-  
के किनारे यहूदी जा कर कुछ दिन ठहरे। ई०से  
१३०० वर्ष पूर्व यह मिसरमें उत्तरकी भागी थे। सुले-  
मानके पधोम उन्होंने एक छोटा राज्य स्थापित किया,  
किन्तु एसिरीया और बाबिलनके आक्रमणोंने उसे  
टिकने न दिया। ई०से ७२० वर्ष पूर्व गालमनेउरने  
उत्तर राज्य मिटाया और यहूदियोंको पश्चिमे भार  
मगाया। फिर यहूदियोंका कहीं पता लगा न था।  
ई०से ५८८ वर्ष पूर्व मन्थुहनेनर यहूदियोंकी बन्दी  
बना ले गये। किन्तु ई०से ५३८ वर्ष पूर्व ईरानके  
बाबिलोनिया जीतनेपर उन्हें पसेष्टारन-जोटीनकी पाछा  
मिली। बाबिलोनिया बहुत दिनतक यहूदियोंका  
केन्द्रस्थल रहा। ७० ई०को टोटमने कीदसमका  
मन्दिर तोड़ा था। धीरे धीरे यहूदी सिरीया, एमिया-  
मादनर, पोथ और इटलीमें बस गये। फिर जगका  
प्रसार समय युरोपमें हुआ। ई०के १५५ शताब्द  
खेनेम निकाले जानेपर यहूदी पूर्वकी ओर बढ़े।  
पाञ्चकस पूर्व युरोपमें सबसे अधिक यहूदी देख पड़ते  
हैं। एमियावासियोंके साथ अधिक मिलजोल होने भी  
यहूदी युरोपियोंके साथ रहना पसन्द करते हैं।

इसलामके आन्दोलन पहले परबियोंका कोई  
इतिहास नहीं मिलता। उनमें ईरानी, ईराई और  
यहूदी सम्मता था गई है। सुमनमानोंका आन्दोलन  
होनेसे पारसी भी बढ़े बढ़े। उन्होंने पूर्वमें भारत एवं

मध्य-एसिया और पश्चिम में जिन तथा मोरोको पर मरसतापूर्वक प्रारम्भ मारा या। पाश्चिमी पूर्व में दामास्कस के समुद्र तट और बगदाद के पश्चात्तौ श्रमी के मध्य बनी रहे। किन्तु कोई प्रधान साम्राज्य न था। कुछ लोग खाद्योन्नत बन बैठे और कुछ तुर्की पशुधन दिये। दोनों के समीप शर्मस मारटेनने जैन में परबियों को निकाला था। परबियों का धर्म और साहित्य पाश्चिमी भी पश्चिम एसिया के पश्चिम, उत्तर पश्चिमी और कुछ कुछ पूर्व युरोप में अपना प्रभाव जमाये है। ई.पू. ६४० गताब्द को पारोनि सिद्ध-मं होइधर्म फैलाया। १४०८ ई.पू. को चीनावों ने उस पर प्रारम्भ मारा। फिर १५५५ ई.पू. युरोपीयों का भावा होने लगा। पश्चिमी योर्तुगोज और पोर्तुगेज राजा बने। १०८६ ई.पू. को चंगरेजों ने उर्बों को सिद्धमं निकाल दिया था।

ब्रह्म, ग्रीस, कम्बोडिया और चनाम आदिको इन्दो-चीन कहते हैं। कम्बोडिया पूर्व में भारतीय सभ्यता प्रबल है। लोग भारतीय वर्षमासा लिखते और बौद्ध धर्म पर चलते हैं। चनाम और पैगु में मन-चनामकी भाषा चलती है। चनामवासी फ्रांसीसियों का अधिकार होने से पहले चीनावों से लड़ते मिड़ते रहे। कोचिन-चीन में पहले चम्पाका राज्य रहा। ब्रह्म-वासियों और तनेहों में भी पूर्व और युद्ध हुआ था। १०५० ई.पू. को पलोप्परा ने तनेहों का अधिकार अङ्ग कर जो राज्य बनाया, यह १८८५ ई.पू. को चंगरेजों के हाथ आया। कम्बोडियावासी मन-चनाम भाषा बोलते हैं। उनका राज्य फ्रांसीसियों के अधीन है। ग्रीस-वामे एकाक्षर चीना भाषा व्यवहार करते हैं। किन्तु वर्तमान में भारतीय है।

मलयवासी मलय-प्रायद्वीप, यह, सुमात्रा, बोर्-निषो, फिलिपाइन, मलय-द्वीपसमूह के अन्य द्वीप और मादामास्कर में रहते हैं। फिर म्यूजीसेड, इवाई और दक्षिणभाग के अन्य द्वीपवासों भी मलय-मिश्रित भाषा व्यवहार करते हैं। पहले मलयवासी पश्चिम रहे। फिर हिन्दू सभ्यता का विकास हुआ। ई. १६ वें गताब्द में पहले मुसलमानों का प्रभाव पड़ा।

पाश्चिम मलय में परबो और यह, सुमात्रा प्रभृति द्वीपों में भारतीय पक्ष चलते हैं।

मिश्रित पार्वत देव है। सुमलमान यहां कभी नहीं पहुँचे। दमाई नामा बौद्ध धर्म के गुरु है। मिश्रित चीन के अधीन होते भी च्यतन्य है। सभ्यता का दंग निराला है।

मद्रोनिआवासियों को सभ्यता चीना और भारतीय सभ्यता से मिलकर बनी है। यह लोग मैटोरोप धर्मप्रचारकों को चामोत सैन्यप्रवासी का अनुसरण करते हैं।

पाश्चिम—इन्दा-चीन, मिश्रित, मद्रोनिआ, कोरिया और मद्रुरिया का साहित्य भारत तथा चीन के साहित्य से बना है। चीना, संस्कृत, पासी, परबो और फारसी का मौखिक एवं मौखिक साहित्य मिलता है। पानी में बुझी बातें बहुत अच्छी लिखी गयी हैं। मुसलमानों का साहित्य परबो और फारसी है। किन्तु चंगरेजों के भारत और जर्मनी तथा फ्रांसीसियों आदि के एसियाध्य प्रभु देव अधिकार करने से युरोपीय साहित्य का चमत्कार यहां बढ़ गया है। वर्तमान युरोपीय सहायक समाप्त न होने से एसियामें कैम कहा जा सकता—कहाँ लिखता राज्य रहेगा। कारण जर्मनी का कियावाक बन्दर आपानियों और चंगरेजों ने चीन मिया है। इधर मैनेपोटेमियामें भी चंगरेज पाये गढ़ रहे हैं। फिर रुसको द्वार होने से तुर्कों को कुछ पूर्व युरोप में नया अधिकार प्राप्त हुआ है।

एसिया-माइनर—तुर्क साम्राज्य का एक प्रायद्वीप। इसमें उत्तर लण्णमागर, पश्चिम ईजिप्ट, दक्षिण मूल्य सागर और उत्तर-पश्चिम बोस्पोरस तथा दारटेनेलिस है। एसिया-माइनर में पूर्व एसिया कोरें ग्यान नहीं, जो योमा माना जा सकता है। यह उत्तर-दक्षिण ७२० मील मंदा और पूर्व-पश्चिम ४२० मील चौड़ा है। युद्धेतिम नदी के पूर्व परमनी तथा कुटिफ्रानी अन्य भूमि से निकल तरंग पर्वतचोने ईजिप्ट सागरतक चली गई है। मिश्रित गिज़र की उन्नता १०५०० फीट है। बोयम, ईरिस, चिके-रेड इरमक, ईजिप्ट, सहायिप एवं बिबे इरमक इत्यादि

सागर और रिन्देकस तथा सासियतम नदी मारसोरा समुद्रमें गिरती है। यानिकस, और स्क्रामान्दर योदकी प्रधान नदी है। दूसरी नदियोंके नाम हैं—कोकस, हरसस, केंद्रस, सेमदेर, इन्दस, स्क्रान्दस, सेद्रस, यूरिमिदन, सेनस, केलिकेस, सिधमस, मारस और पिरिसस।

एशिया-माइनरके प्रधान ऊँट यह हैं—तुजगून, हुमदुरगूल, अकीतुजगून, बागिहरगूल, इगिदि-गूल, इमनिकगूल, एवजिबोगुल और मनिवमगूल। इनमें पक्षी तीन खारी हैं।

यह प्रायोदीप अपने लष्ण और चाकरज प्रसवर्षोंके लिये प्रसिद्ध है। उनमें प्रधान यह हैं—यनोवो मूसा, चितको, तरगी, एमकीगहर, तुजवा, चम्मा, इलिना, सीरायोमिस, अनावाहर, तेरजिलो इलाम, इस्कासिब, बोनी और खवसा।

कारादार्सि परगाहम् तक पान्थेयगिरिमासा खड़ी है। किन्तु पाजकान समस्त पन्नि नहीं निकलता। क्वि मेदानमें जाड़ा बहुत टिमक रहता है। उत्तर प्रांतपर वरक अधिक गिरता है। उत्तर तटपर सुमलधार पानी बरसता है। पश्चिम-तटपर लववायु मम रहता है। बीच तटमें उत्तर वायु मध्याह्निक सायंकाल पर्यन्त बला करता है। एशिया-माइनरमें फिटकरी, सुरमि, भंक्रिये, कोथिले, तमि, मडान्, सोन, कोष्टे, सेमि, मिक्कानोसी कोष्टे, पारे, लमक, पांदो, गन्धक, जलो वगैरहकी खानि है। हवादि लववायु, मूमि और लघताके चतुर्भार विभिन्न हो गये हैं। उत्तरके पर्यन्त हवामें ठूरे भरे हैं। चंगूर बहुत उपजता है। मेह, नामपातो, बैर, नीबू, नारंगी, गन्ध, रुई, अफीम, चावल, केसर और तम्बाकूकी कोई खमी नहीं। मित्रास विस्वायतका गेहूं बहुत अच्छा होता है। मूसा और अमासियाके निकट देशम टेरका टेर उपजता है। पशुओंमें खरब पछ पन्थ देख पड़ते हैं।

एशिया-माइनरमें खालीन, नारदे, रुई, तम्बाकू, लज, शमस, साबुन, मराम और चमड़ेका काम बनता है। चनाक, रुई, बिलोस, सूया कल, चोपध द्रव्य,

सुपारी, पफीम, चावल, खालीन, गारियन, कच्चा-पड़ा चमड़ा, लज, शमस, शमसी कपड़ा, नरदा, मोम, पशु और पन्निज पदार्थ बाहर भेजते हैं। कच्चा, रुईका कपड़ा, काँचकी बीज, मोहामंगह, दोयापमारे, महीका तेल, लमक, बोनी वगैरह बाहरमें मंगते हैं।

एशिया-माइनरमें पड़ा महुके बहुत काम है। किन्तु मेदानमें हरेक जगह इनकी गाड़ी चल सकती है। हैदरपागमे इममिट, एमकी गहर एवं चमोरे, मुदमियेमे मूमि और एमकी गहरमे पशुनकरदिमार, कोलिये तथा बुनगुरनाकी रेलगाड़ी जाती है। लज रेलवे जर्मनीके प्रबन्धमें चलती है। फिर गिरनामि एटोन एवं दिमोर, मरमिमासि मारमस तथा पादाने को जो चंगरेको रेलवे लगी, वह फ्रान्कोसियाके पधिकारमें पड़ी है। कोई जति एशिया-माइनरके पश्चिमियेकी पाक्रमणकर निकाल भगा नहीं सकती। प्रधानतः यहाँ सुमलमान, ईसाई और यहूदी रहते हैं।

एशिया-माइनर गुराय और एशियाके बीच तुल-जैसा बना है। पूर्व और पश्चिमके लोग यहाँ प्राचीन समयसे बहुत पाये हैं। पहले पादिम पश्चिमी एशिया-माइनरके पधिकारी रहे। उनके धर्म, भाषा-व्यवहार और सामाजिक कार्यमें कोई प्रभेद न था। फिर फिलिस्तीनका राज्य हुआ। बोगत्र-बिकर उनके वेमवका केन्द्रमन था। उनके बहुत बित्त और गिनामिष गिरना और एजिप्टमके मध्य कई स्थानोंमें मिले हैं। ई०पू० ११५ एवं १०५ म शताब्दीके मध्य युरोपमें पादोंका दूसरे टिममें जाकर बसना बन्द हो रहा था। फ्राइजियामें पादोंने एक राज्य मंज्यागिन किया। उसके बिछ पनेक मिना-ममासिया, दुर्मी, लगरा और बीच गुरायमें मिलते हैं। ई०पू० ८५ म या ८५ म शताब्दी मिये रोमि फ्राइजिय मजिका भूत किया था। फिर मियेरोय बल तटनेपर मोदिपा राज्य बना, जिसका केन्द्र मरदिममें रहा। मियेरोयोने दिमोयवार पाक्रमण मार मापा मोदिपा राज्य बिभट किया, किन्तु ई०पू० ६१० वर्ष पूर्व अनादनीने उनके एशिया-माइनरके निजाल दिया। अन्तिम म्वमि

कोइसमूने मीटियाको मोमा हेसिम् तक पहुँचाई यो। मागरतटके चौक सपनिदेस सनके अधीन रहे। फिर ई०पू० ५४६ वर्ष पूर्व काइरसके सरदिम अधिकार करनेपर छत्र चौक सपनिदेस ईरानके हाथ गये। ईरानियोंके राज्यकाल चौक अपने नगर शासन करती थी। मीतरी प्रांतकी कितनी ही जातियोंके भी अपने अपने राजा रहे। ई०पू० ५००-४८४ वर्ष पूर्व योकीने अपने स्वाधीनता पानेको चेष्टा की थी, किन्तु सफलता न मिली। ई०पू० ३३४ वर्ष पूर्व सिकन्दरने एसिया-माइनर पाकमप किया। सिकन्दरके मरनेपर यह प्रायद्वीप मल्लुक राजाओंके हाथ लगा था, किन्तु उनमें कोई सम्युक्त देश था न सका। रोइसने प्रजातन्त्र पड़ा और दक्षिण एवं उत्तर मागरतट तक अधिकार हाजिरके टसेमियोंको मिल गया। ई०पू० २८३ वर्ष पूर्व परगामसमें एक स्वाधीन राज्य प्रतिष्ठित हुआ, जो ई०पू० १९३ वर्ष पूर्व पत्तालसके रोमकीको अपना उत्तराधिकारी बनाने तक चला। गियोनिया स्वाधीन-साम्राज्य हो गया और कप्पादोनिया तथा पाकलागोनिया देसी राजाओंके अधीन आसित हुआ। दक्षिण एसिया-माइनरमें सल्यूकियोंने अन्तिचोक, चपासिया, पत्रालिया, सावो-दीनियस और मल्लुकियस नगर प्रतिष्ठित किया था। ई०पू० २०८-२०८ वर्ष पूर्व गालिक लोगोंने कोस-घोरस तथा हेलेस्पन्तकी पार कर मध्य एसिया-माइनरमें किलिज गति जमा दी। ई०पू० १८८ वर्ष पूर्व मानलियसने उक्त गतिकी भीषा देवाया। गालिक धरमासमूने अधीन हो गये। ई०पू० १८० वर्ष पूर्व मेगनेसिडानमें अन्तिचोकसके इरानेपर एसिया-माइनर रोमकीके अधीन हुआ। फिर मियट्टेमोके महारि पोतयसुजो गति बढ़ी थी। किन्तु पाप्ये द्वारा निकाल बाहर किये जानेपर ई०पू० ६३ वर्ष पूर्व यह मर गयी। फिर भीरे भीरे ईसाई धर्म फैला था। ई० ६३ गताब्दात् एसिया-माइनरमें धर्म और वैभव बढ़ा। ६३६ ई० ६३६ ई० तक ईरानी योअने बिना रोमशाह इस प्रायद्वीपपर बाधा मारा और २४ सुलतानने कोस-घोरस बिनाई अपना देश आया। किन्तु

हेरेकियसके जीतनेपर सुलतानकी भागना पड़ा था। फिर ६६८ ई०को अरबियोंने कन्स्टान्तिनोपल पर लिया। किन्तु प्रतिमा भङ्ग करनेवाले सम्राटोंने परकी पाकमप व्यर्थ किया था। ई०के १०९ गताब्द परकी एसिया-माइनरमें निकाल बाहर किये गये। १०६० ई०को सलजुक तुर्कोंने कप्पादोनिया और मिनसियाकी उजाड़ा था। १०७१ ई०को रुमोंने रोमानस दीपोगीनस सम्राटकी बन्दी बनाया और १०८० ई०को निकेइयापर अपना अधिकार जमाया। उनकी एक शाखाने हमसाम्राज्य प्रतिष्ठित किया और पहले निकेइया तथा पीछे इकोनियसमें राजधानीको बसा दिया। १२४३ ई०को मुगलोंने हमके सुलतानकी हरा उक्त साम्राज्य छीन लिया था। सुलतान बड़े खानके अधीन हुये। सलजुक सुलतान बड़े विद्या-प्रेमी रहे। उनके बनाये भवन बहुत सुन्दर देख पड़ते हैं। सेटिन राजावके सिनियाममें परमनियोंकी साहाय्य देनेसे कोटा परमनी राज्य बन गया था। किन्तु १४०५ ई०की इजिप्तके सुलतान मामि-लुकने धर्म सिधोकी बन्दी बना उक्त राज्यको दबा दिया। १४०० ई०की १२ सुलतान बेसीदका अधिकार मुझे तिसरे पक्षम समय एसिया-माइनर पर फैल गया, किन्तु १४०२ ई०को तैमूरने उन्हें हरा रंजियन मागरतट तक सम्युक्त देश जीत लिया। तैमूरके मरनेपर बहुत लड़ाई भगड़ेके पीछे उसमाग अलीका प्रभुत्व फिर प्रतिष्ठित हुआ। २४ सुलतानने १४५१ ई० १४८१ ई० तक लरमनिया इजिप्तकी अपने राज्यमें मिला लिया था। १४०१ ई०। १८१२-१८१३ ई०की इजिप्तकी कोजने हताहोम वागाके अधीन मिनसिया-की राज कीनिया और कुताइया तक धावा मारा। एसीयादो (हि० पु०) देवविषय। जैन मतानुसार यह वाचस्पत्य नामक द्वेष्टके पन्नागत है। एफरटो (प० सा०) भाषाविशेष, एक ज्ञान। यह ज्ञान अल्पित भाषा मुराफमें चलती है। एड (म० सि०) चा-ई-ए-एम्। १ सम्युक्त चेष्टासूक्त। खासि कोयिम करनेवाला। (पु०) २ कोष, पुष्पा। (हि० सर्व०) १ पय, पय।

एहत्तमाम ( ए० पु० ) निरोधण, दस्तियाज, देखेमाल।  
 एहत्तियात ( ए० स्त्री० ) १ दक्षता, चौकशी। २ पण्य, परहेज।  
 एहत्तान ( ए० पु० ) कृतज्ञता, कियेका मानना।  
 एहत्तानमन्द ( ए० वि० ) कृतज्ञ, एहत्तान माननेवाला।

एहि ( सं० स्त्री० ) पा-इह-रन्। १ सम्यक् चेष्टा-गोल स्त्री, खुब कोमिल करनेवाली चोरत। ( सर्व० ) २ एय, यह।  
 एहोई ( सं० स्त्री० ) 'एहि ईहे' मन्दोधारणके साथ मारना होनेवाला कर्म।  
 एहो ( हिं० प्रथ० ) हे, ए, परे, ओ।

## ऐ

ऐ—१ संस्कृत और हिन्दीकी वर्णमालाका द्वादश अक्षर। इसका उच्चारणस्थान कण्ठ और तालु है। यह दीर्घ और भुत भेदसे द्विविध एवं उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध रहता है। फिर अनुनासिक और निरनुनासिक दो उच्चारण अधिक होती हैं। ऐकार परम, दिव्य, महाकुण्डलिनी, कोटिचन्द्रतुल्य, विन्दु-तययुक्त और पञ्चमाण, सद्गा, विष्णु, ब्रह्म एवं सदा-श्रियमय वर्ण है। ( वाङ्मय-तुलना ) ऐकारके दक्षिण भागमें मध्यदेगसे एक लघ्वेगत वक्ररेखा लगाना पड़ती है। इस समस्त रेखामें चन्द्र, रन्ध्र और सूर्य रहते हैं। इसकी भाषा दुर्गा, वाची और सरस्वती त्रिविध शक्ति है। ( वाचोच्चारण ) तन्त्रमें ऐकारको लज्जा, भौतिक, काल, वायवी, मोहिनी, विषु, दक्ष, दामो-दरमन्त्र, अक्षर, पिङ्गलमुखी, चरामक, लगद्वयोलि, पर, परिनिबोधकारी, ज्ञान, अमृता, कण्ठिन्धो, पीठिय, अग्नि, समाद्यक, त्रिपुरा, मोहिता, रात्री, वाग्भय, भौतिकासन, महेश्वर, द्वादशी, विमल, सरस्वती, काम-कोट, वामजानु, पञ्चमान, विजय और जटा कहते हैं। बीजवर्णभिधानोक्त नाम दत्ताना और योनि है।

२ धातुका अनुबन्धविशेष। ऐकार अनुबन्धयुक्त यजादिगणके मध्य पठित है। उसमें ऐ सकल धातुकी लिट् प्रकृति विभक्तिपर सम्प्रसारण पाती है। ( प्रथ० ) एतोति, पा-इप्-विष्। १ पाछान, पुकार, ए, ओ, परे। ४ चामन्त्रण, बुलावा, चाहये। ५ स्मरण, याद। ६ सम्बोधन। ७ दूरस्थ अनुबोधक। ( पु० ) एति प्राप्नोति सर्वम्। ८ महेश्वर।

ऐं ( हिं० प्रथ० ) १ क्या, सुन न पड़ा, फिर कहो। २ पायर्थ, ताल्लुब।

ऐंचना ( हिं० क्ति० ) १ चाकर्य करना, खोजना।

ऐंचाताना ( हिं० वि० ) किसी दूर चीपवाना।

ऐंचातानी ( हिं० स्त्री० ) चाकर्यण, विंचाय, मोचपमोट।

ऐंटना ( हिं० क्ति० ) केम परिष्कार करना, कंधो देना, झाड़ना।

ऐंठ ( हिं० स्त्री० ) १ बल, लपेट, मरोड़। २ अस्मि-मान, पक्षर। ३ चकड़, जोर। ४ हिंसा, हमद।

ऐंठन, ४३६की।

ऐंठना ( हिं० क्ति० ) १ घुमाना, फिरना। २ बल-पूर्वक घड़ना करना, खे मीना। ३ हलसे लेना, ठगना। ४ घुमना, फिर जाना, बल खाना। ५ अस्मि-मान करना, चकड़ना।

ऐंठवाना ( हिं० क्ति० ) ऐंठनेका काम दूसरेसे लेना, घुमवाना।

ऐंठा ( हिं० पु० ) १ यमविगीय, एक चीमार। हमसे रन्धुकी पावेदन करते हैं। यह एक साहका बनता, जिसके मध्य द्विद रहता है। द्विदमें एक लहरदार दूसरी लकड़ी डालते, जिसके धोरमें दोरतक एक मिलिब रन्धु बांधते हैं। फिर हमके मध्य पावेदनकी जंजेबाधी रखी जाती है। लकड़ीके किसी हिस्से में गहर पड़ता है। द्विदकी लकड़ी केनेमें पावेदनकी लानेवाली रन्धु ऐंठ जाती है। २ मट्ट, बीजा।





पक्षवर बादगाहने ऐकतान-वादनकी उच्चतिके लिये अपने जमाये खरमें दो सौधे अधिक गते तैयार की थीं। उनके सामने पनेक सुविष्ट सङ्गीतज्ञ व्यक्ति पराजय मान लेते थे। विशेषतः भोग कहते—पक्षवर नकरा वजानमें सातियय विचक्षण प्रसिद्ध थे।

पासिरीय और बाबिलोनीय लोगोंके देवपूजन और मङ्गलकार्यमें सङ्गीत विशेष रूपसे व्यवहृत होता था। उन देवोंकी खोदित प्रतिमूर्ति और नेमुकाहनेजारकी प्रतिष्ठित सुवर्ण-निर्मित बल देवताके निकट समङ्गीत उपासनादिका प्रचुर प्रमाण मिलता है। यथा—

“उस समय किसी राजदूतने उद्योत्तरसे कहा—  
हे मानव ! जब तुम धर्मो प्रभृति गुणिर, वीषा प्रभृति तत, ठका प्रभृति पानद और घण्टा प्रभृति घन यन्त्रका वाद्य सुनोगे, तब महाराज नेमुकाहनेजारद्वारा प्रतिष्ठित स्वर्णमूर्ति बल देवताके निकट सकल प्रणत होमे।”

( Daniel, III, 4, 5 )

उक्त दोनों देवोंके राजा राजप्रभामें भी सङ्गीत चर्चा करते थे। कारण सुननेमें आया है—जब सिद्ध-चमीय राजा दरायुसने भविष्यज्ञा दानियासकी सिद्ध-मन्त्रमें डाल प्रासादकी प्रत्यागमन किया, तब पनाहार रह और ऐकतानवादनादि न सुन रात्रिका समय बिता दिया था। ( Dan, VI, 18 ) इससे स्पष्ट प्रतीयमान होता, कि सन्ध्याकी उनके सामने ऐक-तानिक सकल यन्त्र बजते थे।

पासिरीयों और बाबिलोनीयोंकी भांति जेडसनमकी राजप्रभामें भी ऐकतानिक सङ्गीत होता था। दाजद और सुलेमान दोनों राजाओंके समय यह सुविषय प्रचलित रहा। उनमें दोनोंके मन्दिरस धर्मसम्बन्धीय बहुसंख्यक वादकों तथा गायकोंकी कुछ राजकीय ऐकतान भी था। दाजदके पुत्र सुलेमानने पाविष भोगविज्ञासकी पसारना और अम्यायितापर अपने ऐकतानका उल्लेख किया,—“हमने नाना प्रकारके सङ्गीतयन्त्रोंकी भांति पुं-गायकों, स्त्री-गायिकाओं एवं उत्कृष्ट यन्त्रव्यवसायियों द्वारा नानाप्रकार पानन्द उठा लिया है।” ( Eccles, II, 3 )

प्राक्कल पारस्य ( ईरान ) देवमें हार्प ( Harp )

यन्त्र देख न पड़ता सही, किन्तु प्राचीनज्ञान वह ऐकतानिक यन्त्रमें उच्च श्रेणीका समझा जाता था। सर रबर्ट कर-पोर्टर ( Sir Robert Ker-Porter ) जी फुवानशाह नगरके निजटम्ब टहिबोस्तान् पठनपर ऐकतान-सम्बन्धीय कितनों ही प्राचीन खोदित मूर्तियों मिली थीं। कहते—यह ई० १४ शताब्दे ग्रीको पारस्य देगोय राजा गु.मर परवीजकी व्यापित है। उनमें कई मूर्तियां दो लंबे मेहराबों पर बनी हैं। पासिरीयोंकी खोदित प्रतिमूर्तियोंकी भांति दूसरी कई स्त्रियां भी नावपर बैठ बाधयन्त्र बजा रही हैं। बर्षिङ्ग साहबने भी पारस्यदेगोय वीषाके ऐकतान-वादन ( Harp concert ) पर बहुत कुछ लिखा है। ( Bunting's Historical and Critical Disser- tation on the Harps in his "General collec- tion of the Ancient music of Ireland." )

उपर जो कहा, कि ई० के १४ शताब्द पारस्य देगमें ऐकतानवादन प्रचलित रहा। एतद्व्यतिरिक्त उन मूर्ति-योंमें एक प्यान-पादप बजाने देख पड़ती है। इस यन्त्रका नाम भारतवर्षीय प्राचीन सङ्गीतमें 'नागवह' लिखा है। पासिरीयों, यहूदियों, रोमकों और गुनानियोंकी भी उक्त यन्त्र चबगत था।

हिरौदोत्स ( ई० ४८४ वर्ष पूर्व ) निघने—  
मिसरीयोंके देवदेवसे यातुपरिक पर्वोह समूहके मध्य बुबलिस नगरमें दायाग देवोंकी पूजाके निघे मिला लगता था। मिसामें जोपुद्वय मोकापर चढ़ जनवद घूमते रहे। फिर वहां समग्र कुछ पुद्वय धर्मो और कुछ जो चढ़ ठका युगवत् बजाते थे। परमिट जोपुद्वय करतानिने पानन्दयन्त्रक माधमङ्गी प्रकाश करते रहे।

प्राचीन मिसरमें वीषा ( Harp ), तंबूरे और बंदो प्रभृति यन्त्रके सहयोगसे ऐकतानवादनकी प्रथा प्रच- लित थी। बरनिम और बिदेन नगरकी चित्रशास्त्रमें इसका एक खोदित दृश्य चित्रमाण है। सेप्लियन् बताने, कि प्राचीन मिसरमें केवल कुछ धर्मियोंके द्वारा ही ऐकतानवादन बजाने में था। ( Lepsius's Egyptian Antiquities ) यहीही ऐकतानका एक खोदित दृश्य

मित्र-विशमित्रदे तन्मित्रं समाधिमे मित्रा है ।  
ऐक्यमाम्ने मतमें उक्त हय है २००० यत्पर  
पुण्या होना ।

ऐक्य ( सं० च० ) १ एक ही काम, माय-माय ।  
( स्त्री० ) २ समस्तका संयोग, यज्ञका मेल ।

ऐक्य ( सं० स्त्री० ) एकपतेर्भावः, धर्मः । एक-  
वर्तित्व, पुरी बादमाही । २ एकाधिपत्य, चाना  
इन्तिदार ।

ऐक्यदिक ( सं० द्वि० ) एकस्मिन् पदे भवः, एक-  
पद-ठम् । १ एकपदम्, किमी मामूली सङ्गुचे  
भित्तनशाता । २ एकस्यानोगुणः, समी जगद्वे  
पेदा । ( स्त्री० ) ३ यावद्विधेय ।

ऐक्यपद ( सं० स्त्री० ) एकपदम् भावः, एकपद-  
च० । मन्त्रीका संयोग, लक्ष्मीका मिलान ।

ऐक्यभाव ( सं० स्त्री० ) एकी भावी यद्यत्त्व भावः,  
एकभाव-च० । एकभावता, रुदरतका एकपना ।  
ऐक्यमय ( सं० स्त्री० ) एकं मतं येमां तेषां भावः,  
एकमत-च० । १ एकद्वय समिप्राय, मकुलिका मेल ।  
२ समान मयति, मिलती-जुलती राय । ( द्वि० )  
एकमत्यमवाप्ति, च० । ३ एकमतयुक्त, वही राय  
देनेवाला ।

ऐक्यारण्य ( सं० स्त्री० ) ऐकराजस्य भावः, ऐकराज-  
च० । एकाधिपत्य, बादमाही ।

ऐक्यव्य ( सं० पु० ) एकव्यः चपयम्, एकव्य-च० ।  
एकव्य नामक वरधिकं पुत्र ।

ऐक्यवाच्य ( सं० स्त्री० ) एकवाच्यस्य भावः, एक-  
वाच्य-च० । १ एकवाच्यता, वही बोली । २ एक  
विषयमें बहुजनके मतकी एकता, किमी बातपर  
बहुतमे लोकोकी रायका मिलना ।

ऐक्यवर्तित्व ( सं० द्वि० ) एकमतमवाप्ति, एकमत-  
ठम् । एकमतमवाप्ति वस्तु रूपनेवाला, भित्तके पास  
१०१ चौक रहे ।

ऐक्यव्य ( सं० द्वि० ) एकव्यपत्त इदम्, एकव्य-  
च० । १ कुत्रे कुत्रके पदमें सम्यक् रूपनेवाला, जो  
मन्त्रे कुत्रवासे आनरमें गरीबार वसता हो । ( स्त्री० )  
२ गर्भो-पुत्र, समीका पी ।

ऐक्यव्य ( सं० स्त्री० ) एका वृत्तिदेव यद्य भावः,  
ऐक्यव्य-च० । रुद्रात्, समुदास एवं वारित विविध  
वरके अधिकपेका मन्त्र, एक हो जेमी वस्तु पदने-  
वाली चावाज ।

ऐक्यव्यवृत्ति ( सं० द्वि० ) एकव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्य ( सं० स्त्री० ) वारकी एकता, चावाजका  
एकपना ।

ऐक्यव्यवृत्ति ( सं० द्वि० ) एकव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्य ( सं० द्वि० ) एकाव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्य ( सं० स्त्री० ) एकाव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्य ( सं० स्त्री० ) एकाव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्य ( सं० स्त्री० ) एकाव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्य ( सं० स्त्री० ) एकाव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्यवृत्ति ( सं० स्त्री० ) एकाव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्यवृत्ति ( सं० स्त्री० ) एकाव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

ऐक्यव्यवृत्ति ( सं० स्त्री० ) एकाव्यव्यवृत्ति, एक-  
व्यवृत्ति-ठम् । एकव्यव्यवृत्ति संख्याक मन्त्रयुक्त, १००१  
चौक रूपनेवाला ।

समय विपरीत उच्चारण करनेवाला, जो पढ़ते बल, उल्टा बोलता हो।

एकाग्र्य (सं० स्त्री०) एकाग्र्यस्य भावः, एकाग्र्यञ् । अर्थात् एकाग्र्य, मानेकी तोहीद।

एकाग्रिक (सं० त्रि०) एकाग्रि भवम्, एकाग्र-ठक् ।  
१ एक दिन साध्य, एक रोजमें होनेवाला। २ एक दिनके अन्तरमें उत्पन्न, जो एक रोजके फलसे पैदा हो।

एकाग्रिक ज्वर (सं० पु०) एकाग्रिभवे ठक्, एकाग्रिको ज्वरः, कर्मधा० । एक दिन छोड़के होनेवाला ज्वर, जो गुणार एक रोज रहकर चढ़ता हो। काक-जड़ा, बला, श्यामा, मरुदण्डी, कृताश्रुनि, दृष्टिपर्षी, अपामार्ग या शृङ्गराजला मूल पुष्पानक्षत्रमें यत्नपूर्वक उखाड़ लास सतसे रोगीके गले या हाथमें बांध देनेपर एकाग्रिक ज्वर छूट जाता है।

ऐक्य, एवट ईधी।

ऐक्टर (सं० पु० = Actor) नाटकका पात्र, खांगका खेसाड़ी।

ऐक्य (सं० स्त्री०) एकस्य भावः, एक-व्यञ् । १ एकता, तोहीद। २ सादृश्य, बराबरी। ३ भेद। ४ परमात्मा और जीवात्माका संयोग। ५ संयुक्त राशि। ६ गुणोंके देख्य और गान्धीयका गुणनकम।

ऐक्य (सं० त्रि०) ऐक्यविकारः, ऐक्य घण् ।  
१ ऐक्य उत्पन्न, जसमें सरोकार रखनेवाला। (स्त्री०)  
२ ऐक्यविकार, गुहादि, चीनी बगैरह।

ऐक्य (सं० त्रि०) ऐक्य-सम्बन्ध, जसमें पैदा।

ऐक्य (सं० त्रि०) ऐक्य साधु, ऐक्य-ठक्, निपातनात् साधुः । १ ऐक्यवर्क, जसके निधे घट्ठा। २ ऐक्य उत्पन्न करनेवाला, जो जस उपजाता हो। (पु०) ३ ऐक्य बहनकारी, जस से जानेवाला।

ऐक्यभारिक (सं० त्रि०) ऐक्यभारं वहति, ऐक्यभार-ठक् । ऐक्यवाहक, जसका बोझ होनेवाला।

ऐक्याग्र्य (सं० पु०) ऐक्याग्र्यस्यम्, ऐक्याग्र्य-पप् । १ ऐक्याग्र्यका समान। मुहकृत्य और दमरव को ऐक्याग्र्य कहते हैं। (त्रि०) २ ऐक्याग्र्य-संगीय, ऐक्याग्र्यसे ताबुज रखनेवाला।

ऐक्याग्र्य (सं० पु०) ऐक्याग्र्यका समान। तिमर और रामको ऐक्याग्र्य कहते हैं।

ऐगन (हिं०) अग्रप ईधी।

ऐगन—चीन साम्राज्यस्य उत्तर मंचूरियाके चीमू-क्रियद्र प्रांतका एक नगर। यह चमूर नदीके दक्षिण तटपर अवस्थित है। निकटस्थ भूमि उर्वरा है। पनास, तेस और तम्याकूका व्यवसाय होता है। १८०० ई०को बाकुर-युद्धके समय ऐगन सामरिक कार्योंका केन्द्रस्थान था। लोखंडिया प्रायः २०००० है। यो दो ही सुसज्जमान भी रहते हैं। पहले यह चमूर नदीके वाम तटपर अवस्थित रहा, किन्तु १६८४ ई०को वहांसे छटा दक्षिण तटपर बसाया गया। १८५० ई०को इस नगरमें चीनार्थी और रुसियोंमें एक सन्धि हुई थी। उसीसे चमूर नदीका वाम तट रुसियोंके अधीन हुआ।

ऐगन—बम्बई प्रांतस्य कनाडा जिलेके मन्दिर-परिचारक। यह पकोला तहसिलमें पाये जाते और अपनी उत्पत्ति कम्पन तथा वसिष्ठसे बताते हैं। मन्त्रातः ऐगन कोटपसे पा कर बसे हैं। कारवारके कोटपोंमें विवाहादि होता है। तिरपतोंमें पिडटरमय इनके कुलदेवता हैं। यह कोटपों और कनाड़ी दोनों भाषाओं बोलते हैं। जंगलमें फूल तोड़ मन्दिरोंमें पड़-चाग इनका काम है। गीविन्दरामवहनस्य तेनद्र रामानुज ब्राह्मण तातयाचारो इनके दीपामुख हैं। इनमें विधवा-विवाहकी प्रथा नहीं। सब जलाया जाता है। सामाजिक विवाद मन्दिरके मुपिया निबटारें हैं। कुछ लोग घघमें मड़के स्नान भिजते, जहां वह कनाड़ी पढ़ते हैं। भाइ फूंक और काटू टोमिपर इन्हें विग्राम है। गोकर्ण भिच दूरसे य्दानीय तापोंको यह यात्रा नहीं करती। ऐगन बड़ो सत्कारमें रहते हैं।

ऐहद (सं० स्त्री०) ऐहदाः ऐहम्, ऐहदी-पप् । १ ऐहदी हथका फल। इस फलमें जो तेज निजलता, वह ऋषियोंके व्यवहारमें चलता था। (पु०) २ ऐहदी हथ। (त्रि०) ३ ऐहदी हथमें उत्पन्न।

ऐच्छिक (सं० त्रि०) ऐच्छया निजं ताम्, ऐच्छा-ठक् । ऐच्छाबोध, मन्त्रिमें होनेवाला।

ऐज़न ( सं० पद० ) तया, येता जो । मरमा  
चाटिसे किमो विषयको बार-बार न लिख सक्यो बार  
लिखि कोर समझ मोहि ऐज़न रहति है । इसी  
अन विषय बार बार लिखा समझा जाता है ।

ऐङ ( सं० पु० ) एङा पदार्थ, एङा-पद । १ एङा  
मध्यमक पदार्थ या पदार्थक । २ एङाके पुन पुन-  
रथा । ( ति० ) ३ यन्त्रकारक पदार्थगुण । ४ एङा  
मध्यगुण ।

ऐङ्क ( सं० पु० ) ऐङ्क कार्य पद । १ मीमाकार  
प्राविनीय, किमो क्रियाका मीमा । ( ति० ) २ मीम-  
कार्यभूय, ऐङ्क पदमे प्रत्यय ।

ऐडमिरल ( सं० पु० = Admiral ) मोहेनाका अध्यक्ष,  
कहाती फौजका बड़ा अध्यक्ष ।

ऐडमिड ( सं० पु० ) १ कुपेर । २ दमरय राजाके  
एक पुत्र ।

ऐडवोकेट ( सं० पु० = Advocate ) न्यायालयमें वरार्थ-  
यन्त्रा, सुपानार, वकील ।

ऐडवोकेट-जनरल ( सं० पु० = Advocate-general )  
जाइकोर्टका बड़ा वरकारो वकील ।

ऐङ्क ( सं० ति० ) ऐङ्क एक, कार्य पद । यल्लि  
यनं तृप्त द्रव्यकी मिति, इसी कोर कुङ्केकी दोवार ।

ऐष ( सं० ति० ) ऐषय इदम्, ऐष-पद । १ मृग-  
धन्यगीय, काले हिरनमे पेश ।

ऐषिक ( सं० ति० ) ऐषं मृगं कृति, ऐष-ठक ।  
मृगहन्ता, काले हिरनका शिकार करनेवाला ।

ऐषोपचम ( सं० ति० ) ऐषोपचमदेमप्रयः, ऐषोपचम-  
पद । ऐषोपचम देमोय । ऐषोपचम देमोय ।

ऐषेय ( सं० ति० ) ऐषया इदम्, ऐषो-टक । १ कृष्णमार  
कालीमे प्रत्यय, काली हिरनमे पेश । ( पु० ) २ कृष्ण-  
मारयण, काला हिरन । ( लो० ) ३ इतिव्यवस्थियेय ।

ऐषियक ( सं० लो० ) ऐषयालुक ।

ऐषियेय ( सं० पु० ) ऐषकी एक माया ।

ऐषदाय्य ( सं० लो० ) ऐष पदार्थ या प्रधानता  
रखनेका भाव ।

ऐषरीय ( सं० पु० ) ऐषरीयकी एक माया । ऐष-  
कार्यके मतमें मरिदाय ऐषरीय नामक एक कार्य

इस मायाके प्रयोजक है । कालोव्यवस्थियद्वयं मिय  
दिया, कि मरिदाय ऐषरीयमे पूर्वज्ञान नाम दिया था ।

माध्यकार मरिदायकार्यके मतमें 'ऐषरादा-पदार्थ'  
ऐषरीयः' पर्याप्त ऐषरीयके पदार्थको ऐषरीय कहति है ।

माध्यकार्यके ऐषरीय-माध्यकार्यके भाषको उपप्रम-  
पिहामें मरिदाय ऐषरीयका परिचय इस प्रकार दिया है—

"ऐषी मरिदायके पदार्थ पदार्थी रहते । उनमें  
एकका नाम ऐषरादा था । उनके मरिदाय नामक एक

पुन हुआ । 'ऐषरादा' कहते हैं 'मरिदाय  
ऐषरीय' कहा है । मरिदाय ऐषरीयको बहुत चर्चने,

किन्तु मरिदायके दूर रहते थे । किमो यज्ञसमामें  
उनमें मरिदायको उपेक्षा कर ऐषरीय पुन मोद पर

बैठा नियो । ऐषरीयके पुनका यानमुख ऐष  
कुमदेवता भूमिमें मरिदाय की थी । उसी समय भूमि-

देवता दिवाभूमिमें धारण कर यज्ञसमामें धारिभूत  
हुए । उनमें मरिदायको दिव्य मरिदायमर बैठा

कर दिया था—तुम सकल पुनोकी उपेक्षा अधिक  
परिष्कृत होमो ऐषरीय-माध्यकार्य पतिभाषण कर

होगी ।" आजकल ऐषरीय-माध्यकार्य ऐषरीय-माध्यकार्य,  
ऐषरीय-धारणक ऐषरीय 'उपनिषत्' पुनक

मिलता है ।

ऐषरीयक, ऐषरीयकार्य है ।

ऐषरीयमाध्यकार्य ( सं० लो० ) ऐषरीयका एक माध्यकार्य ।  
उनमें जोताका कार्य निर्दिष्ट है । ऐषरीय माध्यकार्यके

४० पदार्थ ८ पदार्थके विभाग हैं । ११ और मध्यकार्य है ।

ऐषरीय ( सं० पु० ) ऐषरीय-माध्यकार्य पदार्थका ।

ऐषरीयोपनिषद् ( सं० लो० ) ऐषरीय पारमार्थिककी एक  
उपनिषद् ।

ऐषरा ( सं० पु० ) मरिदायकी एक सुनि । इसमें जो  
'ऐषरा मरिदाय' नामक ऐषरीय पदार्थ बनाया था ।

ऐषरायन ( सं० पु० ) ऐषरीयके मतमें ।

ऐषराव रुट—ऐषरीय पारमार्थिक मतारा क्रिमेडा एक  
नाम । यह नामक मरिदायके मतमें मरिदाय ऐषरीय

ऐषरीय ० मोल पदार्थ है । मरिदायके ऐषरीय  
ऐषरीय माध्यकार्यकी १०१ मरिदाय ऐषरीयकी

भूमिदाय दिया, उनमें इसका नाम भी दिया है ।

इस विषयका ग्रन्थालेख कोल्हापुर राज्यके सामान्यद्वयमें मिला है। उसमें ऐतावाह-खुर्द चतुर्गर्ग, को हुई भूमि की उत्तर सीमा बताया गया है।

ऐतिहासिक ( सं० पु० ) इतिहास्य षट्पेरपत्यम्, इतिहास-फक्। इतिहास षट्पिके सन्तान।

ऐतिहासिक ( सं० पु० ) इतिहास्य षट्पेरपत्यम्, इतिहास-फक्। इतिहास षट्पिके सन्तान। यह एक संस्कृतके प्राचीनविद्वान् थे। मोमांसासूत्रमें इनका नाम आया है।

ऐतिहासिक ( सं० वि० ) इतिहासादागतः, इतिहास-ठक्। १ इतिहास ग्रन्थसे समझ पड़नेवाला, जो तारीखसे मालूम हो। २ इतिहासवेत्ता, तारीखको जाननेवाला। ३ इतिहासवाचक, तारीख पढ़नेवाला।

ऐतिहासिक ( सं० स्त्री० ) इतिहासार्थे स्त्री। चरित्राचरित-मेवमात्रः। वा ३५१२। पारम्पर्यं उपदेश, पुराणो नवीकृत। जो बात बहुत दिनसे सुननेमें आती, वह ऐतिहासिक कहलाती है।

‘ऐतिहासिक’ नाम प्राचीनदेशीय शब्दः। ( परक )

ऐतिहासिकोंके मतमें ऐतिहासिक एक प्रमाण है। लटके हथमें यन्त्रियों रचनेका परम्परागत उक्त वाक्य ही ऐतिहासिक प्रमाण है।

ऐदंयुगो ( सं० वि० ) अग्निं युगे साधुः, ऐदंयुग-धञ्। इस युगके उपयोगों।

ऐध् ( सं० स्त्री० ) अग्निमिच्छा, लघट।

ऐध् ( सं० पु० ) ऐध्, ऐधो।

ऐन ( सं० वि० ) १ उपयुक्त, दुरुस्त, ठीक। २ पूर्ण, पूरा। ( हिं० ) अपन और ऐनो।

ऐन-उद्-दीन—बीजापुरके एक श्रेष्ठ। इन्होंने ‘सुलहनात’ और ‘किताब-उल्-सनवार’ नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं। उक्त दोनों ग्रन्थोंमें भारतके समय सुलहनात-गायकोंका इतिहास है। सुलहनात चला-उद्-दीन हसन वाह-मनीके समय यह विद्यमान रहे।

ऐन-उल्-मुल्क—१ मीराजके एक अधिवासी। इनका उपाधि इकीम रहा। बादशाह एकवरके समय यह एक लख पदवर प्रतिष्ठित थे। इनकी कविता बहुत रचोसी होती थी। उपनाम ‘बक्श’ रहा। १५८४ ई०को इकीम साहब इस दुनियासे चलते गये।

२ दिल्लीवाले बादशाह सुलतान मुहम्मद शाह तुगलक और सुलतान कीरोज शाहके एक दरबारी। इनका उपाधि यद्वाला रहा। इनसे बनाये ‘तरसीन ऐन-उल्-मुल्क’ और ‘फतेहनामा’ नामक दो पुस्तक विद्यमान हैं। फतेहनामामें इन्होंने सुलतान चला-उद्-दीनके विजयका वर्णन किया है।

३ बीजापुर-नवाब बादशाह शाहके भाई इम्मादुलक एक रिसालदार। १५८२ ई०को बुरहान निजाम शाहकी हरा बादशाहने दक्षिणकी ओर कर्णाटक और मनहार पर आक्रमण मारा था। किन्तु अपने भाई इम्मादुलकके वनवा करने पर उन्हें छोड़े भीटना पड़ा। कुछ हीनेपर मीराजकी कौन इम्मादुलक मिल गई। बेतगायको भेजी कोन जिना बाघाके बीजापुर भेज आयी थी। ऐन-उल्-मुल्क भी अपने १० हजार फौजके साथ उसमें मिले और राजधानी पर आक्रमण मारने को आगे बढ़े। किन्तु यह युद्धमें मारे गये। १५८२ ई०को भी इन्होंने बीजापुर चेर लिया था, किन्तु विजयनगर-नरैयके भाई धेहटादिने इन्हें युद्धमें परास्त किया। यह रातको रथ छोड़ अहमदनगर भाग आये थे। बीजापुरमें भूख बादशाह-पुर-काटकवे १५०० गज दूर ऐन-उल्-मुल्ककी बत्त बनी है।

४ गुजरातके एक श्रेष्ठदार। इनका उपाधि सुलतानी रहा। उससे आनेके जानेसे गुजरातमें सुलतानी इकूमत चल गई थी। बंशवा दशानका कमान-उद्-दीनके भेजे सुवारक गिनती बढ़ाईमें काम आये। किन्तु १५८० ई०को ऐन-उल्-मुल्क गूजतानीमें बड़ी फौजके साथ पड़ोस गांठि स्थापित की थी। १५०३ ई०के समय यह मानदेह प्राप्त कर रहे। उसी समय इन्होंने प्रान्तकर बगावटों निवेशने दिवागिरिके रामचन्द्रने उपद्रव उठाया था। चला-उद्-दीनने बगवाज मन्त्रिक आखूरकी एक साथ फौज के साथ दक्षिणार्ध दशाने भेजा। राजमें इन्होंने भी अपने फौज उनको उदायताके बिधि साथ कर दो।

ऐनक ( हिं० स्त्री० ) उपदेश, चमत्।



ऐन्द्रगर्भि (सं० पु०) ऐन्द्रगर्भोऽपत्यं पुमान्, इज्। ऐन्द्रगर्भा राजाके पुत्र।  
 ऐन्द्रगिर (सं० पु०) ऐन्द्रविशेष, एक जायो।  
 (सामाज्य १७०-१७१)  
 ऐन्द्रसेनि (सं० पु०) ऐन्द्रसेनस्य अपत्यं पुमान्, इज्। ऐन्द्रसेन नामक नरपतिके पुत्र।  
 ऐन्द्रात्म (सं० त्रि०) ऐन्द्रात्मो देवते भस्व, भष्।  
 १ ऐन्द्राग्नि-सम्बन्धीय। २ ऐन्द्र एवं भस्मिके सहेग्रसे  
 प्राप्त।  
 ऐन्द्रानेष्टत (सं० त्रि०) ऐन्द्र एवं निष्टतसे सम्बन्ध  
 रखनेवाला।  
 ऐन्द्रापोष्य (सं० त्रि०) ऐन्द्रापूर्वापो देवते भस्व,  
 भष्। उपधा चतो लोप्य। १ ऐन्द्र एवं सूर्य-सम्ब-  
 न्धीय। २ ऐन्द्र और सूर्यके सहेग्रसे प्राप्त इतिः प्रकृति।  
 ऐन्द्रावाहस्य (सं० त्रि०) ऐन्द्र और सहेग्रतिसे  
 सम्बन्ध रखनेवाला।  
 ऐन्द्रामावत (सं० त्रि०) ऐन्द्र और भवतसे सम्बन्ध  
 रखनेवाला।  
 ऐन्द्राधुधु (सं० त्रि०) ऐन्द्रप्रदत्तं आधुधं यस्य,  
 बहुव्री०। १ ऐन्द्रप्रदत्त भस्मविशिष्ट। २ ऐन्द्रके धनु-  
 र्वाणसे सम्बन्ध रखनेवाला।  
 ऐन्द्रावहण (सं० त्रि०) ऐन्द्र एवं वहणके निमित्त  
 पवित्र।  
 ऐन्द्रावेष्य (सं० त्रि०) ऐन्द्रविष्णु देवते भस्व, भष्।  
 ऐन्द्र एवं विष्णु सम्बन्धीय।  
 ऐन्द्रासोम्य (सं० त्रि०) ऐन्द्रसोमो देवते भस्व,  
 भष्। ऐन्द्र एवं सोम-सम्बन्धीय।  
 ऐन्द्रि (सं० पु०) ऐन्द्रस्वापत्यं पुमान्, ऐन्द्र-इज्।  
 १ ऐन्द्रमुख, जयन्त। २ अर्जुन। ३ कालि बानर।  
 ४ काक, कौवा।  
 ऐन्द्रिय (सं० त्रि०) ऐन्द्रियेय प्रकाशने, ऐन्द्रिय-  
 भष्। १ ऐन्द्रिय-सम्बन्धीय। २ ऐन्द्रिय द्वारा प्राप्त, य,  
 मानस पड़नेवाला। (स्त्री०) ३ ऐन्द्रियघाम।  
 ४ आधुधेदका चर्मविशेष। इसमें ऐन्द्रियोंका जो  
 विषय वर्णित है।  
 ऐन्द्रियक (सं० त्रि०) ऐन्द्रियेय अनुमूलने, ऐन्द्रिय-

वुज्। १ मत्स्य, समझ पड़नेवाला। २ ऐन्द्रिय-  
 याद्य। (पु०) ३ ऐन्द्रियायित व्याधिविशेष। मन्दादि  
 विषयके मिथ्यायोग, अभियोग वा भ्रमयोगसे जो रोग  
 हो जाता, वह ऐन्द्रियक कहलाता है। (१८४)  
 ऐन्द्रियेधी (सं० त्रि०) केवल ऐन्द्रियसुखकी धिता  
 रखनेवाला।  
 ऐन्द्रो (सं० स्त्री०) ऐन्द्रस्य इयम्, ऐन्द्र-भष्-स्त्रीप्।  
 १ मघी, ऐन्द्रकी पत्नी। २ दुर्गा। ३ ऐन्द्रवाहणी,  
 ककड़ी। ४ पूर्वदिक्। ५ दशा, द्वापयो। ६ गौरा-  
 ककटी।  
 ऐन्द्रोफंस (सं० स्त्री०) ऐन्द्रवाहणीफंस, ककड़ी।  
 ऐन्द्रोरसायन (सं० स्त्री०) रसायनविशेष। यद्य ऐन्द्रो,  
 मत्स्याची, ब्रह्मसुवर्णा तथा गङ्गसुयो तौग-तौग यस्य,  
 स्वर्ण दो यस्य और विष एक तिल एवं घृत एक पल  
 भाकनेसे बनता है। (१८५)  
 ऐन्धन (सं० त्रि०) ऐन्धनस्य इदम्, ऐन्धन-भष्।  
 ऐन्धन-सम्बन्धीय, जलानेकी लकड़ीमें शोकार  
 रखनेवाला।  
 ऐन्धायन (सं० पु०) ऐन्धस्य जपेरपात्यं पुमान्,  
 कक्। ऐन्ध नामक ऋषिके सम्मान।  
 ऐन्ध (सं० त्रि०) ऐन्धे सूर्ये क्षामिनि वा भयः, इन्-एज्।  
 १ सूर्यमय। २ क्षामिभव।  
 ३ निवृत्त्येधीकी एक जाति। यह लोग दासिपात्यके  
 कुर्गप्रदेशमें रहते हैं। बहुत और शोकारका काम  
 इनके शीघ्रका-निर्वाहवा दार है। आबार-ब्यवहार  
 कोइनों-केसा रहता है।  
 ऐपन (सं० पु०) आबल और एकदोकी एकसाथ  
 घोसकर बनाया हुआ भेदन। यह माहुरिक द्रव्य  
 समझा और देशार्थमें खरबा जाता है। इनसे  
 जलस्य आदिपर घासें लगाने हैं।  
 ऐव (सं० पु०) १ दोषः, बुराई, खराबी। २ ख-  
 गुप्त, बुरी पादत। हिद्राभ्येषण करनेवालेको 'द्विद्वेष्ट'  
 और हिद्राभ्येषणको 'द्विद्वेष्टाई' कहते हैं।  
 ऐवारा (सं० पु०) १ दिवादि रखनेवाला ज्ञान, जिस  
 बाहेमें भेड़ समूह रहते। २ गोपाह, सज्जनों बान-  
 बरोके रखनेकी जगह।



चन्द्रवंशीय राजा थे। ( हिं० पु० ) २ जलप्राप्त, वाद। ३ आघात, बढ़ती। ४ कोलाहल, हल्ला।  
 ऐनक, एनक देखी।  
 ऐलव ( सं० पु० ) कोलाहल, शोर, हल्ला।  
 ऐलवकार ( सं० त्रि० ) १ कोलाहलकारी, शोर मचानेवाला। ( पु० ) २ रुद्रका कुत्ता।  
 ऐलहद ( सं० त्रि० ) खाद्य सानिवाला, जो खाना खाता हो।  
 ऐलवालुक ( सं० स्त्री० ) एलवालुक स्त्रायें भण्।  
 एलवालुक, एक अंतर। एलवालुक देखी।  
 ऐलविल ( सं० पु० ) इलविलाया भपत्य पुमान्, इलविल-भण्। इलविना-पुत्र, कुवेर।  
 ऐला ( सं० स्त्री० ) मदीविशेष। ( महाप्रतिभ० बदरीमा० २१७० )  
 ऐलाक ( सं० त्रि० ) ऐलाकस्य कावः भण्, यण्, शोपः। ऐलाकसे विद्या-पढ़नेवाला।  
 ऐलिक ( सं० पु० ) इलिका भवः, ठक। तंस नामक राजा। यह इलिकीके पुत्र और दुषन्तादिके पितामह थे।  
 ऐलूय ( सं० पु० ) कवचके भपत्य।  
 ऐलिय ( सं० स्त्री० ) १ एलवालुक, एक अंतर। २ नलुका, नाड़ीका शाक। ( पु० ) इलाया भपत्य पुमान्। ३ पुतरवा। ४ मङ्गल।  
 ऐलालु, एलवालुक देखी।  
 ऐश ( सं० त्रि० ) ईशस्य इदम्, भण्। १ ईश-सम्बन्धीय। ( अ० पु० ) २ सुख, पाराम।  
 ऐश—एक सुसलमान् कवि। यह बादशाह शाह आलमके समय विद्यमान रहे। प्रकृत नाम सुहृद्दाद असकरी था।  
 ऐशमूल ( सं० स्त्री० ) लाङ्गलीमूल, एक जड़ी।  
 ऐशान ( सं० त्रि० ) १ शिवसम्बन्धीय। ( पु० ) २ ईशान कोणका वायु। यह कटु और शीतल होता है। ( भावप्रकाश )  
 ऐशानी ( सं० स्त्री० ) ईशानस्थेयम्, ईशान-भण्-डोप। १ ईशानकोण। २ शक्तिविशेष। ३ दुर्गा।  
 ऐशिक ( सं० त्रि० ) ईशस्य अयम्, ईश-ठक्। १ ईश्वर-सम्बन्धीय। २ शिवसम्बन्धीय। ३ राजसम्बन्धीय, बादशाहसे सरोकार रखनेवाला।

ऐशी ( सं० स्त्री० ) ईशस्य इयम्, भण्-डोप। १ ईश्वर-सम्बन्धीनी। २ दुर्गा।

ऐशी—एक सुसलमान कवि। १६७५ ई० की इन्होंने 'हफ्त-पख्तर' नामक एक मसनवी लिखी थी।

ऐशु ( हिं० पु० ) पशुरोगविशेष, जानवरोंकी एक बीमारी। इसमें पशु सुख रुक जानेसे जुगाली नहीं करते।

ऐश्वर ( सं० त्रि० ) १ प्रभु-वा ईश्वरसे उत्पन्न। २ शक्तिशाली, शालीशान्। ३ ईश्वर-सम्बन्धीय। ४ सबसे बड़ा। ५ शिव-सम्बन्धीय।

ऐश्वरिक ( सं० पु० ) आस्तिक, ईश्वरवादी।

ऐश्वरी ( सं० स्त्री० ) ईश्वरस्य इयम्, भण्-डोप। ईश्वरसम्बन्धीनी।

ऐश्वर्य ( सं० स्त्री० ) ईश्वरस्य भावः, ईश्वर-व्यञ्ज। १ ईश्वरका धर्म। इसका पर्याय—विभूति और भूति है। ऐश्वर्य षष्टविध होता है—१ अणिमा, २ लघिमा, ३ प्राप्ति, ४ प्राकाम्य, ५ महिमा, ६ ईशित्व, ७ वशित्व और ८ कामावसायिता। २ सम्पत्ति, दौलत। ३ प्रभुत्व, मिलकियत। ४ शासनकर्तृत्व, हुक्मरानी।

ऐश्वर्यकर्मा ( सं० पु० ) ऐश्वर्य कर्म यस्य, बहुव्री०। ईश्वर-कर्मयुक्त, बड़े-बड़े काम करनेवाला।

ऐश्वर्यवत् ( सं० त्रि० ) ऐश्वर्यमस्तस्य, ऐश्वर्य-मत्पु-मस्य भः। ऐश्वर्यविशिष्ट, बड़ी ताकत रखनेवाला।

ऐषमः ( सं० अज्य० ) अस्मिन् वत्सर इति निपा-तनात् साधः। अयः पञ्चमसरेष्वम इत्यादि। या शाश्वर। वर्तमान वत्सरमें, इससाल।

ऐषमस्तान ( सं० त्रि० ) ऐषमो भवः, ऐषमस्-तन। ऐषमोहः-बड़ी इच्छाशान्। या शाश्वर। ऐषमसम्बन्धीय, इस सालसे सरोकार रखनेवाला।

ऐषमस्थ ( सं० त्रि० ) ऐषमो भवः, ऐषमस्-त्यप्। वर्तमान वत्सर-सम्बन्धीय, इस सालसे सरोकार रखनेवाला।

ऐषावीर ( सं० त्रि० ) दुर्बल, यत्निहीन, कमजोर।

ऐषिका ( सं० स्त्री० ) १ पाठा। २ विद्वता।

ऐषीक ( सं० स्त्री० ) ह्यीकमेव, स्त्रायें भण्। १ महा-भारतोक्त एक पर्वत। २ अस्त्रविशेष। ३ गेह देखी।

ऐयुकारि (सं० पु०) इयुकारस्य चपत्यम्, इयुकार-  
इष्ट्। पाषाणिर्माताका पुत्र, तीर बनानेवासेका बैठ।  
ऐयुकारिभक्त (सं० स्त्री०) ऐयुकारिणी विषयो देवः,  
ऐयुकारि-भक्तत्। भीरुवापैव बालादिभ्यो विभक्त्यन्तर्ही। वा  
गध० १। ऐयुकारिविषय। २ ऐयुकारि देव, जिस  
सुखमें तीर बनानेवाले रहें।

ऐयुकार्यादि (सं० पु०) पाणिन्यास्त गणविशेष। इसमें  
ऐयुकारि, सारस्वत्यायन, चान्द्रायण, इशायायण, ताराचा-  
यण, भीष्मायन, जौनायन, खाडायन, दासमित्रि,  
दासमित्रायण, गौडायण, दासायण, गायण्डायन,  
ताड्यायण, गौभ्रायण, सौवीर, सौवीरायण, गयण्ड,  
गोण्ड, गयाण्ड, वैश्यमानव, वैश्यपेनव, गङ्ग, तुण्डदेव,  
विश्वदेव और सापिण्डि गण्ड पड़ता है।

ऐष्टक (सं० स्त्री०) याज्ञिक ईंटोंका ढेर।  
ऐष्टिका (सं० पु०) इष्टि-ठक्। १ इष्टिके व्याख्यानका  
ग्रन्थ। २ यज्ञके हितका विषय। ३ अन्तर्वेदिक कर्म-  
विशेष। (वि०) ४ यज्ञके साधनमें समर्थ। ५ यज्ञ-  
सम्बन्धीय।

ऐष्टिकपौर्तिक (सं० वि०) इष्टापूर्त-सम्बन्धीय।  
ऐसा (हिं० क्रि०-वि०) इस प्रकारसे, इस तीरपर।  
ऐहलौकिक (सं० वि०) इहलोकके भवः, इहलोक-  
ठक्। १ वर्तमान जन्मसम्बन्धीय। २ भर्त्सलोक  
सम्बन्धीय, इस दुनियासे सरोकार रखनेवाला।

ऐहिक (सं० वि०) इह भवम्, इह-ठक्। १ इह-  
लोक-जात, इस दुनियासे पैदा। २ इहलोक-सम्बन्धीय,  
इस दुनियासे सरोकार रखनेवाला।

ऐहिकदर्शी (सं० वि०) इहलोकके कार्य निरीक्षण-  
करनेवाला, जो इस दुनियाके काम देपता हो।

ऐहोल—अम्वईमानके बीजापुर जिलेका एक ग्राम।  
यहां जो गिलासिया मिला, उसमें २५ पुनर्देशिका  
परिचय पड़ा है।

ओ

ओ—परवर्षका तयोदग चर। इसके सधारणका  
स्वांग मछल और ओष्ठ है। यह वर्ष दोषे पूर्व कुत  
शेदरी दो प्रकारका होता है। कामधेनुतन्त्रमें कहा,  
कि ओकार पञ्चदेवमय, रजविद्युताकार, त्रिगुणाकार,

ईश्वर, पञ्चमापमय, देवमाता और परमकुण्डली है।  
सिन्धुमें यह वाम दिक्से कुण्डली बन दक्षिण दिक्  
मध्यस्थानमें सिक्कुहेगा, उसके पीछे षोडशमें पुनर्वा  
यामदिक्की चलेगा। इसकी सकल रूपाधर्में मद्रा,  
विष्णु और महेश्वर चरमान करते हैं। इसकी माता  
मद्राद्विषी मद्राशक्ति है। (बर्वाहामय)

तन्त्रशास्त्रोक्त ओकारका नाम—धन्य, पीयूष, पवि-  
मास्य, श्रुति, सिरा, सखीजात, वासुदेव, गायत्री, दोष-  
जंघक, चाप्यायनी, ऊर्ध्वदन्त, लम्बी, बाची, मुण्डी, हज्र,  
सहस्रदर्शक, तीव्र, कंसास, वधुपाचर, प्रणवाग,  
मद्रास्व, भजिग, सर्वमङ्गला, तयोदगो, दीर्घनामा,  
रतिनाथ, दिगम्बरा, त्र्यंशोदविजया, प्रसा और प्रीति-  
ओजादिकारिणी है। मातृकाश्यामके अनुसार ऊर्ध्व  
दन्तकी पंक्तिपर ग्रास किये जानेसे यमिषानमें  
ओकारका एक नाम 'ऊर्ध्वदन्तपंक्ति' भी है।

२ धातुका एक अनुबन्ध। "ओर्ध्वदन्तः सः" (अष्टाध्याय)

(अध०) ३ सम्बोधन। ४ पाठान्त। ५ अरथ।

६ अनुबन्ध। (पु०) ७ मद्रा।

ओ (सं० अध०) १ ओहार, प्रचय। २ ओशकी।

३ तयाशु, धामोन्, बहुत अच्छा।

ओरहना (हिं० स्त्रि०) बारना, मदके, या ओरहार  
करना।

ओकना, ओकना देवी।

ओगना (हिं० स्त्रि०) मकटके पसिमें तेल देना,  
गाड़के धुरमें तेल लगाना। ओगनेमें मकटका चक्र  
बैठके चलता है।

ओगा (हिं० पु०) चपामांग, लटजोरा।

ओटना, ओटना देवी।

ओठ (हिं०) ओठ देवी।

ओड़ा (हिं० वि०) १ गमौर, गहरा। (पु०) २ मार्ग,  
गहरा। ३ सेंध।

ओष (हिं० पु०) रज्जुविदेय, एक रस्सी। रणये हारन  
पूरी करनेको सज्जिया बांधी जाती है।

ओषा (हिं० पु०) इष्टो पञ्चदशमार्ग, बांधी  
पांसर्निका गहरा।

ओषाक (सं० अध०) १ अमनदे देवका दन्त, कंठ

जोरकी पावाजु । २ एकविंशतः, किसी किसका बगला । ३ एकविंशतका अव्यक्त शब्द, किसी बगलेकी बोली ।

भोई ( हिं० स्त्री० ) हलविशेष, एक दरख्त ।

भोक ( सं० स्त्री० ) उच-क निपातनात् साधुः । १ गृह, घर । २ आश्रय, ठिकाना । (यु०) ३ पक्षी, चिड़िया । ४ गृह, घर ।

भोकः ( सं० स्त्री० ) उच्यते समवेति पश्चिन्, उच-पसुन् । १ आश्रय, ठिकाना । २ गृह, घर । ३ स्थान, सुकाम ।

भोककान—१ निम्नप्रदेशस्थ पैगू प्रान्तके हन्तावाड़ी जिलेकी एक नदी । यह पैगू-योमा पर्वतसे निकल मागोनके समीप हलैंगमें जा गिरती है । भोककान नदी बहुत छोटी है । किन्तु वर्षाके समय भोककान प्रान्तका इसमें बड़ी-बड़ी जलें चल सकती हैं । साथ ही दूसरी जगहोंके बड़े इसमें बहाकर हलैंग पहुँचाये जाते हैं । २ निम्न प्रान्तके हन्तावाड़ी जिलेका एक ग्राम । यह हलैंग नदीसे ५ मील पश्चिम अवस्थित है । इसमें दो सराय और दो बर्गाकार निर्मित बौद्ध मन्दिर हैं । सुगनेमें आया, प्रायः १०० वर्ष हुए किसी तेलहनने इसे बसाया था ।

भोककेतु—बम्बई प्रान्तस्थ मालखेड़वाले राष्ट्रकूट राजा-वोंके छत्रका चिह्न । सिरुके शिलालेखमें लिखते, कि भोमोवर्षके तीन राजच्छत्र रहे—यह, पालिध्वज और भोककेतु ।

भोकण ( सं० पु० ) केयकीट, जू ।

भोकपि ( सं० पु० ) मत्तकृण, खटमल ।

भोक्ताई खान्—पञ्जीख खान्के बड़े लहके । १२२० ई०को इन्होंने अपने पिताके राज्य तातार और उत्तर-चीनका उत्तराधिकार मिला था । १२४२ ई०को यह अधिक शराब पीनेसे मर गये । भोक्ताई खान् बड़े सम्राट् रहे । यह अपनी प्रजाको निरपेक्ष भाव और न्यायसे शासन करते थे । इनकी वीरता और बुद्धिमत्ता प्रसिद्ध है । भोक्ताई खान् बड़े दानी थे । राज्यका उत्तराधिकार इनके पुत्र याकूब खान्को मिला ।

भोकना ( हिं० क्ति० ) १ वसन करना, धे निकासना । २ सहिषण्वत् शब्द करना, भैसकी तरह बोलना ।

भोकनी ( सं० स्त्री० ) शोकवि देवी ।

भोकपति ( सं० पु० ) सूर्य वा चन्द्र, भाफताव या माहताव ।

भोकरा ( सं० स्त्री० ) राजगृहके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम । भविष्यव्रह्मखण्डमें लिखा है—

कलियुगके मध्य यहाँ शशजैवी कृपक वास करेगी । कलिकासमें भोकराका नारीगण वेष्टा और द्विजगण वेष्टास्तपिरायण होगा । यहाँके लोग पापके कारण सर्पाघातसे विनष्ट होंगे । ( भ० ब्रह्मखण्ड १५५०-५२ )  
भोकाई ( हिं० स्त्री० ) १ वसन, धे । २ वसनेच्छा, धे करनेकी चाहिष ।

भोकार ( सं० पु० ) 'भो', भो बचर । भो देवी ।

भोकारान्त ( सं० त्रि० ) अन्तमें भोकार रखनेवाला, जिसके पक्षीरमें 'भो' रहे ।

भोकिवस् ( सं० त्रि० ) उच-कसु । समवेत, एकत्र, मिला हुआ ।

भोकी, भोकाई देवी ।

भोकुल ( सं० पु० ) उच-उलच् निपातनात् साधुः । अर्धगन्ध, थपक मोक्षम । वैद्यक मतसे यह शुद्ध शक्तवर्धक, मधुर, बलकारक, स्निग्ध, रुचिकारक, मत्ततावर्धक और रक्त एवं वायुनाशक होता है ।

भोकीदनी ( सं० स्त्री० ) भोकः आश्रयस्थानमदनं यस्याः, बहुव्री० । मत्तकृण, खटमल ।

भोकीदधानी ( सं० स्त्री० ) प्राचीर, दीवार ।

भोक्थी ( सं० स्त्री० ) भोच-कण-अच्-डीप् । मत्तकृण, खटमल ।

भोख ( सं० त्रि० ) १ गृहवासोके निमित्त उत्तम, जो घरमें रहनेवालेके सुवार्त्तिक हो । ( स्त्री० ) २ प्रस-वता, खुशो । ३ सुविधानक स्थान, आराम देने-वाली जगह । ४ विद्याभगार, मकान् ।

भोखट ( हिं० स्त्री० ) भोषण, दवा ।

भोखरी, भोखरी देवी ।

भोखल ( हिं० पु० ) १ कपड़, पड़ती जमीन् । २ उद्-खल, भोखली ।

चौखलहांगा—युक्तप्रदेशके कुमायूँ जिल्लाका एक ग्राम ।  
यह पश्चात् २८° १४' २०" उ०, तथा देगा ७८° ३८'  
पूर्व पर सुरादाबाद और नलमोहके मध्यवर्ती पथमें  
कोमोला नदी किनारे अवस्थित है । इस स्थानमें  
अति उत्कृष्ट चावल होता है ।

चौखली ( हिं० चौ० ) छद्मफल, कांडी । यह काष्ठ  
या प्रस्तरकी होती है । इसमें घान्यकी छोड़ और  
मूलसमे कूट मूलो निक्षालते हैं । हिन्दुस्थानमें प्रायः  
भूमिको खोद और पत्थर जोड़ चौखली बना लेते हैं ।  
चौखा ( हिं० पु० ) १ व्याज, बहाना । ( वि० )  
२ शष्क, छाया । ३ कुटिल, टेढ़ा, खराब । ४ दूषित,  
खोटा । ५ चिरल, ली गाढ़ा न हो ।

चौखामण्डल—काठियावाड़ प्रान्तका एक छोटा जिला ।  
यह पश्चात् २२° एवं २२° २८' उ० और देगा ६८°  
५८' तथा ६८° १२' पू०के मध्य अवस्थित है । चौखा-  
मण्डलसे उत्तर कच्छकी खाड़ी, पश्चिम अरब-समुद्र  
और पूर्व तथा दक्षिण रान या नाना दलदल पड़ता,  
जो इसे नवानगर जिलेसे घेरकर करता है । अरबमें  
यह एक द्वीप है । क्षेत्रफल २५० वर्गमील है । कहीं  
कहीं पहाड़ी देख पड़ती है । यूरका जंगल बहुत  
है । यहाँ गोमती नदी छोटी है । भीमगञ्ज भीमसे  
एक पहाड़ी नामा भी निकला है । बरवाना, बरदिया  
और पोमितराम रैतोना पत्थर बहुत होता, जो मकान  
बनानेमें काम देता है । मूसवागर, मूसधन और  
सामलासरमें बड़े-बड़े तालाब हैं । घर-घर और  
खेत-खेत ऊँचे बने हैं । पानी प्रायः खारी है । समुद्र-  
के किनारे कुछ नहीं उपजता । किन्तु भीतरी भूमि  
जुबरा है । दक्षिणायकी पक्षिया उभारागमें दूनी बीज  
होती है । वनका प्रभाव है । कहीं कहीं बबुल और  
इमलीके वृक्ष लगे हैं । बम्बई, मूल, कराची और  
अंजोमारके साथ व्यवसाय होता है । बानरो, तिन,  
चो, घास, चूना और लकड़ बाहर भेज जाता है ।  
चावल, चना, गेहूँ, ज्वार, कपासका बीज, बीनी,  
मसाला, चास और खपड़ा बाहरमें जाता है । रुपन  
और धैत बंदर है । रुपन द्वारकासे १ मील उत्तर  
पड़ता है । आड़ोमें पानीके भीतर द्विप पहाड़ हैं ।

अज्ञानोंकी धृष्ट वृत्ति रहना पड़ता है । यहां साम्राज्य  
और सोहाने मन्दाजन हैं । पहले यहांके लोग चावल,  
मोद और काल मौन चोपेमें विभक्त थे । किन्तु चावल  
और मोद सब देख नहीं पड़ते । काल जातिमें वर्तमान  
वाघेरीकी उत्पत्ति है । पहले मोरछने यहां अपना  
राज्य स्थापित किया था । किन्तु चौखामण्डलके भाट  
वर्षन करते हैं—ई० २४ गताब्दके मध्य काल  
मोगलोंने इसे फिर जीत लिया । गिरीयाके और सुन्दर  
क्षेत्रमें भी चौखामण्डल अधिकार किया था । किन्तु  
द्वारकाके समुद्रमें डूब जानेसे वह अपनी राजधानी  
गोविंदाको छोड़ ले गयी । पोलि सिरोयाके दूसरे पार  
मिहम-गुदुकी सुन्दर क्षितिजको मार अपना राज्य  
समाया । अन्तको काल मोगलोंने फिर चौखामण्डल  
जीता था । ई० १८ गताब्दके समय काठियावाड़के  
बाबू राजपूतोंने प्राकमप किया और जानी या  
वाघेरीकी युद्धमें निकाल दिया । अचयराज राजा  
बने थे । फिर उनके पुत्र भूवराय और भूवरायके  
पुत्र जयसेन सिंहासनादरुद्धे । जयसेनने भी बाबूटा-  
पादर नगर बनाया और एक बड़ा तालाब बनाया  
था । मूलशहर भीलमें उनके समयका एक पत्थर  
मिला है । जयसेनका उत्तराधिकार उनके भाई जग-  
देवने पाया । जगदेवके पुत्र मन्जनको पथमें पितःके  
मृत्यु होने बाद कुछ वर्ष ली कर मर गयी । उनके  
लड़के देवजदेव फिर राजा बने । देवजदेवके बाद  
उनके लड़के जगदेव सिंहासनपर बैठे, जिनके अन्त-  
धन और अन्तदेव दो पुत्र रहे । अन्तधनने दो  
'अन्तधन' बनाई, जो पीछे 'वसाई' कहाई । प्राचीन  
कालपर यह पूरी चौखामण्डलके व्यवसायका केन्द्र  
बन गया । वर्तमान समय केवल एक ग्राम रह गया  
है । अन्तधनके बनाये बड़े-बड़े लेन-मन्दिर बूटे-  
फूटे पड़े हैं । अन्तदेव द्वारकामें राज्य करते थे ।  
उनके प्योय होनेसे परमार या कुतोरा राजपूतोंने  
अपना अधिकार जमा लिया । किन्तु बाबू और  
उनमें युद्ध होने लगा । उपर द्वारकाकी और  
अज्ञानों दो राठौर राजपूत कोचदुरसे निरःश्रम दिष्ट  
गये थे । वह क्षितिजों की ओरके बाद द्वारका प्राये ।

फिर चावटोंसे मिल उन्हें एकबार हरोलीको भोज दिया। सब लोगोंने भोजनपर बैठ जानसे राठोरीकी मन्त्रणाके अनुसार चावटोंने घोड़ेसे आ उनमें कितनों कीकी मार डाला था। फिर राठोरीने चावटोंको भी नीचा देखाया। अपने भीषण कार्यके उपलक्षमें दोनों भाइयोंने 'वाधेत' उपाधि ग्रहण किया था। राठोरीका राज्य धीरे धीरे बढ़ा। वैरावलजीने कुछ सेनासे काठियावाड़ काक्रमण और सोमनाथपाटन अधिकार किया था। उन्होंने परामदेमें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की। राज्यका उत्तराधिकार पुत्र विक्रमसीको मिला था। कच्छके राव जियाजीने अपनी कन्या उन्हें ब्याह दी। विक्रमसीके बाद नौ रात्रि १२० वर्षतक राज्य करते रहे। १०वें राना सांगनजी परामदेके राजावोंने बड़े शक्तिशाली निकले। उन्होंने अपना राज्य खम्भालिया नगरतक बढ़ा लिया था। किन्तु उनके पुत्र भीमजीने राज्य बनने पर मका जानिवाले कितने ही जहाज लूटे। इससे अपसय हो अहमदाबादके सुलतान अहमदने उन्हें दवाना चाहा। उसी समय भीमजीने सैयद सुय्यदका जहाज लूटा और उन्हें दो दुश्मुह लड़कोंके साथ जहाजमें छोड़ा। उनकी स्त्री कैद कर परामदे भेजी गयी थी। इसपर सुलतान की फौज बढ़ला लेने आयी। सुसलमानोंने हारका नृती दी। भीमजी भाग गये। किन्तु उन्होंने थोड़े ही दिनों बाद आ सुसलमानोंकी मार भगाया था। भीमजी और हमीरजीके वंशज मानकोंमें हारकाके अधिकार पर झगड़ा हुआ। मानकोंने वाधेरीके साहाय्यसे हारकाकी अधिकार किया। भीमजीने भी अपना पक्ष सफल न देख सन्धि कर ली। १५६२ ई०की परामदे के वाधेल राजा शिव राजाने गुजरातके सुलतान मुजफ्फरकी शरण दिया। कारण अहमदाबादके सुवेदार खान्-भाजूमसे काठियावाड़में हार वह भीरामण्डल भाग आये थे। किन्तु खान् भाजूमकी फौज उनके पीछे रही। वाधेलोंसे युद्ध होनेपर शिवराना मारे गये। शिवरानाके पुत्र सांगनजी काठियावाड़की आगे थे। इधर हारकाके सामल मानकने अपने भाई मल्ल मानकसे कहा—

किसी न किसी प्रकार सुसलमानोंको यहांसे निकाल बाहर करना चाहिये। मैं सांगनजीको दूँने जाता हूँ। तुम सुसलमानोंसे लड़ो और उन्हें शान्तिसे बैठने मत दो। सात वर्ष बाद वह सांगनजीको ले लौटे थे। फिर चोर युद्ध होने लगा। अन्तकी सुसलमान हारे और भीरामण्डल छोड़ भागे। सांगनजी परामदेमें सिंहासनावृद्ध हुये थे। सांगनजीके बाद उनके पुत्र सांगमजीने राज्यका उत्तराधिकार पाया और कुछ वर्ष राज्यका सुख उठाया। फिर बखेरजी राजा बने थे। उनकी बहनका विवाह नवानगरके जामसे हुआ। १६६४ ई०की बखेरजीके मरनेपर भोजराजजीने उत्तराधिकार पाया था। उनके एक लड़की और सात लड़के थे। लड़कीका विवाह कच्छके रावसे हो गया। ज्येष्ठपुत्र वाजेराजजी अपने भाइयोंसे लड़ा-भिड़ा करते थे। इसीसे उन्हें पोसितरा नगर पलंग दे दिया गया। १७१५ और १७१८ ई०की परामदेके वाधेल राजा हारकावाले वाधेरीके साथ काठियावाड़में कितनी ही बार लड़े। किन्तु नवानगर, गोंडल और पोरबंदरकी फौज उनपर चढ़ी थी। इससे उन्हें बड़ी हानि उठाना पड़ी। एक राजा हारका और बसाईमें राज्य करने लगे। १८०४ ई०की डाखुवोंने एक बम्बईका जहाज लूट लिया। मन्हाह और मुसाफिर पानीमें फेंके गये। अंगरेज सरकारने जो लड़ाईका जहाज शक्ति देनेकी भेजा, वह खामी हाथ लौटा था। क्षतिपूर्व मांगा जानेपर वाघेर भस्मीकार कर गये। किन्तु १८०७ ई०की करनल वाकर समसे क्षतिपूर्व लेने फौजके साथ हारका पहुँचे थे। वाधेल और वाघेर राजा एक साथ दण्ड हज़ार रूपया देनेको समत हुये। किन्तु १८१० ई०की उन्होंने फिर लूट मार मचायी थी। बड़ोदेके रेवीडण्ड कप्तान कारनकने हारका कुछ सवार भेज भगड़ा मिटाया। किन्तु डाका पड़ता ही रहा। १८१७ ई०की १८वीं नवम्बरकी अंगरेज सरकारने हारका और वेयत तीर्थस्थान समझ गायकवाड़के अधीन किये थे। गायकवाड़ने इसके बदले भीरामण्डलके राजावोंका सुमाना और

अंगरेजी फौजके बटनेका खर्च हाज दिया। १८१८ ई०को पतमस मानकके पचीस कुछ राजा बिगड़े थे। किन्तु स्थानीय सेनाने उन्हें जीत ही दया दिया। १८१८ ई०को बाघेरोनि विद्रोह उठा मिटर हेल्लोकी घोरबन्दर भगाया था। १८२० ई०को बम्बई सरकारने करनल टागडोपकी लट्टने भेजा। उन्होंने पकछात् हारका अधिकार कर राजावाँकी शीशा देखाया था। इस युद्धमें कपतान मोरियट मार गये। हारका-नरिय मूलमानक घोर उनके छोटे भाई वरसी मानक भी धरागायी हुये। शान्ति संघाम-की पकड़ कर घुरत मेसी गये। किन्तु कच्छके रावने जमानत दे उन्हें छोड़ा लिया था। फिर शान्ति स्थापित हुई। १८५० ई०को बाघेरोनि काठियावाड़ पर आक्रमण मारा था। सेफ्टिमण्ट बरटनने हारका जा इस उपद्रवका कारण पूछा। वह बाघेरोनि अच्छा शासक-वसन रखनेकी जमानत ने बड़ीदे खोत चाये। दूसरे वर्ष यमार्थके बाघिर राजावाँने खुले मैदान बलवा कर घेत होय घोर उनके माघी सिबन्धियोंने दुर्गकी अधिकार किया था। मांडवीसे कपतान कैले कुछ सेना ले घेतमें जा उत्तर-घोर दुर्गपर भण्ट पड़े, किन्तु दुर्ग सट्ट रहनेसे कुछ कर न सके। रातकी बाघिर खर्च दुर्ग छोड़ बसाई भाग गये। फिर बड़ीदेके मन्त्रियोंने सरकार अंगरेजमें असल रहनेकी कष्ट बसाई आक्रमण किया था। बसाईकी क्लिष्टसे मजबूत रहनेसे कई बार युद्ध हुआ। अन्तयो बड़ीदेके गायकवाड़ने बाघेरोनि सन्धि-कर भगड़ा मिटाया। दूसरे वर्ष फिर उपद्रव उठा था। गायकवाड़ने लड़ने-भिड़नेका सब काम अंगरेजीको सौंप दिया। बाघेरोनि आक्रमण मार हारका घोर घेत होय अधिकार किया था। जोधा मानक घोषा-मण्डलके राजा बने। फिर करनल डोनोवन कुछ सेना ले घेत पकड़े थे। युद्धमें न हारने भी बाघेर किंसा छोड़ हारका भाग गये। कपतान डोनोवनने शीघ्र ही हारकाको जा आक्रमण किया घोर बाघेरोनी केगलमें पड़े दिया। अन्तको उन्होंने श्रीधामगडल छोड़ अभयपुर-पहाड़में पार खोद डरा हाजा था।

१८५८ ई०के दिसम्बर मास करनल शानने कितने हो फौजके साथ आक्रमण मार उन्हें बहासि भी निकाल बाहर किया। कुछ बाघेर राजावाँने गिर पहाड़की राह ली थी। बाको अपने हथियार रख श्रीधामगडल बोटनेकी छगल हुये। छपर जोधा मानकके मर जानेसे गिर पहाड़के बाघेर भी पकड़े गये। १८६२ ई०को बौदे किये बाघेर निजम भी घोर श्रीधामगडल पहुँच उपद्रव उठाने बने। काठिया-वाड़में कई वर्ष लूट मार होनी रही। १८६० ई०की मंजर रेनोलडनने उन्हें परास्त किया था। युद्धमें मंजर रेनोलडस बाहल घोर पोलिटिकल एजण्टके सहकारी कपतान ड्रिस्ट एवं लाटूय हत हुये। हमपर बाघेर शान्त पड़े घोर फिर कभी जोरने न लड़े।

योग ( हि० पु० ) कर, मद्यभुज, लगान।

योगय ( सं० वि० ) चवगलते, चव-गय कर्मणि क सम्प्रसारणम्। चवगल, मकरत किया हुआ।

योगर—एकप्रकार मयामी। यह अपनेकी पडपड़ योगी भी कहते हैं। हाथमें रणोनि निपटी हुई हठी रहती है। योगर यज्ञोपवीत नहीं पहनते। मरनेपर देह जलाना मना है। मयका देह समाधिपर लिया जाता है। मिथुनदेसमें दो-एक योगर योगी देख पड़ते हैं।

योगरना ( हि० लि० ) चवगरण शीमा, चूना, पसीजना, पनियाला।

योगल ( हि० पु० ) १ ऊपर, पड़नी जमीन। २ कूपविशेष, एक कुवाँ।

योगीयम् ( सं० वि० ) उद्य, चालन निवृत्ती।

योग ( सं० पु० ) लघु-चण्ड द्वयोदरादिरात् साधुः।

१ मज्ज, टेर। २ नदीधेग, पागोडा बहाल, बाढ़।

१ वग्य्या, पुरानी बाल। २ वददेस, नदीहल।

३ दुनचल, दुर्गति नाथ। ४ नदी, दरया।

योगदेस ( सं० पु० ) आर्यन गिनालिधि-धर्मन लच्छु-भ्यके एक महाराज। इनकी पत्नी कुमारदेवी थी।

(Inscriptionum Indicarum, Vol III. p. 119.)

योगरय ( सं० पु० ) एक राजा। यह श्रीधामगडल जयन्ति के पुत्र घोर श्रीधामगडल भगता थे।

फिर चावटोंसे मिल उन्होंने एकबार हरोलीको भोज दिया। सब लीकोंके भोजनपर बैठ जानेसे राठोरीको मन्त्रणाके अनुसार चावटोंने चोकेसे था उनमें कितनों कीको मार डाला था। फिर राठोरीने चावटोंको भी नीचा देखाया। अपने भीषण कार्यके उपलक्षमें दोनों भाइयोंने 'वाधेत' उपाधि ग्रहण किया था। राठोरीका राज्य धीरे धीरे बढ़ा। वेरावलजीने कुछ सेना ले काठियावाड़ आक्रमण और सोमनाथपाटन अधिकार किया था। उन्होंने भरामदेमें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की। राज्यका उत्तराधिकार पुत्र विक्रमसीको मिला था। कच्छके राव जियाजीने अपनी कन्या उन्हें ब्याह दी। विक्रमसीके बाद नी राने १२० वर्षतक राज्य करते रहे। १०वें राना सांगनजी भरामदेके राजाओंमें बड़े शक्तिशाली निकले। उन्होंने अपना राज्य खम्भालिया नगरतक बढ़ा लिया था। किन्तु उनके पुत्र भीमजीने राज्य लगने पर भक्ता जानेवाले कितने ही जहाज लूटे। इससे अप्रसन्न हो अहमदाबादके सुलतान महमूदने उन्हें दबाना चाहा। उसी समय भीमजीने सैयद सुहृदका जहाज लूटा और उन्हें दो दुश्मुंके लड़कोंके साथ जहाजमें छोड़ा। उनकी स्त्री कैद कर भरामदे भेजी गयी थी। इसपर सुलतान की फौज बढ़ा लेने आयी। सुसलमानोंने हारका लूटी थी। भीमजी भाग गये। किन्तु उन्होंने थोड़े ही दिनों बाद था सुसलमानोंको मार भगाया था। भीमजी और हमीरजीके वंशज मानकोंमें हारकाके अधिकार पर झगड़ा हुआ। मानकोंने वावरेके बाह्याख्यसे हारकाको अधिकार किया। भीमजीने भी अपना पक्ष सबल न देख सन्धि कर ली। १५८२ ई०को भरामदे के वाघल राजा शिव रानाने गुजरातके सुलतान मुजफ्फरको शरण दिया। कारण अहमदाबादके सूबेदार खान्-भाजमसे काठियावाड़में हार वह शोखामण्डल भाग आये थे। किन्तु खान् भाजमकी फौज उनके पीछे रहने लगे। वाघलोंसे युद्ध होनेपर शिवराना मार गये। शिवरानाके पुत्र सांगनजी काठियावाड़को भागे थे। दूर हारकाके सामल मानकने अपने भाई मल मानकसे कहा—

किसी न किसी प्रकार सुसलमानोंको यहाँसे निकाल बाहर करना चाहिये। मैं सांगनजीको ढूँढ़ने जाता हूँ। तुम सुसलमानोंसे लड़ो और उन्हें शान्तिसे बैठने मत दो। सात वर्ष बाद वह सांगनजीकी ले लौटे थे। फिर घोर युद्ध होने लगा। अन्तको सुसलमान हारे और शोखामण्डल छोड़ भागे। सांगनजी भरामदेमें सिंहासनारुढ़ हुये थे। सांगनजीके बाद उनके पुत्र संग्रामजीने राज्यका उत्तराधिकार पाया और कुछ वर्ष राज्यका सुख उठाया। फिर अखिरजी राजा बने थे। उनकी बहनका विवाह नवानगरके जामसे हुआ। १६६४ ई०को अखिरजीके मरनेपर भोजराजजीने उत्तराधिकार पाया था। उनके एक लड़की और सात लड़के थे। लड़कीका विवाह कच्छके रावसे हो गया। ज्येष्ठपुत्र वाजीराजजी अपने भाइयोंसे लड़ा-मिड़ा करते थे। इसीसे उन्हें पोसितरा नगर पलग दे दिया गया। १७१५ और १७१८ ई०को भरामदेके वाघल राजा हारकावाले वावरेके साथ काठियावाड़में कितनी ही बार घुसे। किन्तु नवानगर, गोंडल और पोरबंदरकी फौज उनपर चढ़ी थी। इससे उन्हें बड़ी हानि उठाना पड़ी। एक राजा हारका और वसाईमें राज्य करने लगे। १८०४ ई०को डाकुने एक बम्बईका जहाज लूट लिया। मलाह और मुसाफिर पानीमें फेंके गये। पंगरेज सरकारने जो लड़ाईका जहाज शक्ति देनेकी भेजा, वह खाली हाथ लौटा था। क्षतिपूर्व मांगा जानेपर वावरे अस्वीकार कर गये। किन्तु १८०७ ई०को करनल वाकर उनसे क्षतिपूर्व लेने फौजके साथ हारका पहुँचे थे। वाघल और वावरे राजा एक साथ दण्ड हजार रूपया देनेको सममत हुये। किन्तु १८१० ई०को उन्होंने फिर लूट मार मचायी थी। बड़ोदेके रसीडण्ट कप्तान कारनकने हारका कुछ सवार भेज भगड़ा मिटाया। किन्तु डाका पड़ता ही रहा। १८१७ ई०की १८वीं नवम्बरको पंगरेज सरकारने हारका और वेयत तीर्थस्थान समझ गायकवाड़के अधीन किये थे। गायकवाड़ने इसके बदले शोखामण्डलके राजाओंका सुर्माणा और

भंगरेजी फौजके चढ़नेका खर्च छाल दिया। १८१८ ई०का पन्ध्रमस मानकके अधीन कुछ राजा विगड़े थे। किन्तु स्थानीय सेनानि उन्हें जीत ही देवा दिया। १८१८ ई०को वाघेरीनि विद्रोह उठा मिष्टर हेण्डलीको पोरबन्दर भगाया था। १८२० ई०को बम्बई सरकारने करनल छालहोपको लड़ने भेजा। उन्होंने पकक्यात् हारका अधिकार कर राजावोंको नीचा देखाया था। इस युद्धमें कपतान मोरियट मारे गये। हारका-नरम भूलमानक और उनके छोटे भाई परसी मानक भी घरागायी हुये। राणा संग्राम-जी पकड़ कर सूरत भेजी गये। किन्तु कच्छके रावने जमानत दे उन्हें छोड़ा लिया था। फिर शान्ति स्थापित हुई। १८५७ ई०को वाघेरीनि काठियावाड़ पर आक्रमण मारा था। लेफ्टिनेण्ट बरटनने हारका जा इस उपद्रवका कारण पूछा। वह वाघेरीसे अच्छा शास्त्र-चलाक रखनेकी जमानत ले बड़ोदे सौट चाये। दूसरे वर्ष बसाईके वाघेर राजावोंने खुले मैदान चलवा कर वैयत हीपर उनके साथी सिबन्दिनी दुर्गकी अधिकार किया था। मांडवीसे कपतान वेल्ले कुछ सेना ले वैयतमें जा उत्तरे-पौर दुर्गपर भूषट पड़े, किन्तु दुर्ग सहज रहनेसे कुछ कर न सके। रातको वाघेर स्वयं दुर्ग छोड़ बसाई भाग गये। फिर बड़ोदेके भन्निवोंने सरकार भंगरेजसे असह रहनेकी कह बसाई आक्रमण किया था। बसाईको किलेवन्दी मजबूत रहनेसे कई बार युद्ध हुआ। अन्तको बड़ोदेके गायकवाड़ने वाघेरीसे सन्धि-कर भगड़ा मिटाया। दूसरे वर्ष फिर उपद्रव उठा था। गायकवाड़ने लड़ने-भिड़नेका सब काम भंगरेजीको सौंप दिया। वाघेरीनि आक्रमण मार हारका और वैयत हीपर अधिकार किया था। जोधा मानक शोखा-मण्डलके राजा बने। फिर करनल डोनोवन कुछ सेना ले वैयत पहुँचे थे। युद्धमें न हारते भी वाघेर किला छोड़ हारका भाग गये। कपतान डोनोवनने शीघ्र ही हारकाको जा आक्रमण किया और वाघेरीको जंगलमें खदेर दिया। अन्तको उन्होंने शोखामण्डल छोड़ अमरपुर-पहाड़में खाई खोद डेरा डाला था।

१८५८ ई०के दिसम्बर मास करनल छानरने कितने ही फौजके साथ आक्रमण मार उन्हें बसाई भी निकाल बाहर किया। कुछ वाघेर राजावोंने गिर पहाड़की राह ली थी। बाको अपने हथियार रख शोखामण्डल सौटनेको समत हुये। उधर जोधा मानकके भर जानिसे गिर पहाड़की वाघेर भी पकड़े गये। १८६२ ई०को कौद किये वाघेर निकल भगे और शोखामण्डल पहुँच उपद्रव उठाने लगे। काठिया-वाड़में कई वर्ष लूट मार होते रहने। १८६७ ई०को मेजर रेनोलडसने उन्हें परास्त किया था। युद्धमें मेजर रेनोलडस आहत और पोलिटिकल एजण्टके सहकारी कपतान हेवर्ट एवं काटूय हत हुये। इसपर वाघेर शान्त पड़े और फिर कभी जोरसे न लड़े।

योग (हिं० पु०) कर, मजसूल, लगान।

योग्य (सं० त्रि०) अवगच्छते, अव-गण कर्मणि क सम्प्रसारणञ्। अवगण्य, नफरत किया हुआ।

योगर—एकप्रकार सन्नासी। यह अपनेकी पठबड़ योगी भी कहते हैं। हाथमें रखीसे लिपटी हुई लड़ी रहती है। योगर यज्ञोपवीत नहीं पहनते। मरनेपर देह जलाना मना है। शवका देह समाधिस्थ किया जाता है। सिन्धुप्रदेशमें दो-एक योगर योगी देख पड़ते हैं।

योगरना (हिं० त्रि०) अवगरण होना, चूना, पसीजना, पनियाना।

योगल (हिं० पु०) १ ऊपर, पड़ती जमीन।

२ कूपवियेय, एक कुवाँ।

योगीयम् (सं० त्रि०) उप, पालन तेजस्वी।

शोध (सं० पु०) उच-धन् प्रपौदरादित्वात् साधुः।

१ समुद्र, डेर। २ नदीवेग, धानीका बहाव, बाढ़।

३ परम्परा, मुरानी चाल। ४ उपदेश, नवीकृत।

५ द्रुतवृत्त्य, फुर्तीला गाय। ६ नदी, दरया।

शोधदेश (सं० पु०) प्राचीन गिलाखिपि-वर्णित

उच्छकल्यके एक महाराज। इनकी पत्नी कुमारदेवी थीं।

(Inscriptionum Indicarum, Vol III. p. 119.)

शोधरथ (सं० पु०) एक राजा। यह शोधवान्

नृपतिके पुत्र और शोधवतीके भ्राता थे।



शोधवर्त ( सं० लि० ) शोधः जलवेगादिरस्तास्य,  
शोध-मसुप, मस्य वः । १ जलवेगादियुक्त, जोरसे बहने-  
वाला । ( पु० ) २ एक राजा । यह शोधवर्तके  
पिता थे । ( भारत, पृष्ठ १५० )

शोधवती ( सं० स्त्री० ) १ महाभारतोक्त शोधवान्  
राजाकी कन्या । इन्होंने स्वामीके आघातानुसार दिन-  
रूपधारी प्रतिविधर्मको अपना शरीरतक दे डाला  
था । धर्मने परितुष्ट हो उन्हें वर प्रदान किया ।  
उसीसे यह लोकोपकारार्थ 'शोध' देहसे नदी बन  
गयी । ( भारत, पृष्ठ १५० ) २ कुश्चिन्नकी एक नदी ।

( भारत, शोध० )

श्रीह्वार ( सं० पु० ) श्रीम्-कार । १ प्रथम । पहले  
श्रीह्वार उच्चारण कर, पीछे वेद पढ़ते हैं । ब्रह्माके  
कण्ठकी कीड़ प्रथम श्रीह्वार और मध्य शब्द निकला  
था । इसीसे यह दोनों शब्द सामाजिक सम्मति जाते  
हैं । श्रीम् देवी । २ शारम्भ, शुरु । ३ सप्त समा-  
वयवका प्रथम अवयव । ४ एक लिङ्ग । 'श्रीह्वार' प्रथम लिङ्ग'  
रितोयम् त्रिजीवमम् ।' ( काशीखण्ड )

श्रीह्वारभट्ट—एक प्राचीन संस्कृतग्रन्थकार । भूगोलसार  
नामक पुस्तक इन्होंने लिखा था ।

श्रीह्वारमाध्याता ( सं० पु० ) मध्यप्रदेशमें नौमाड़  
ज़िल्लेके अन्तर्गत नर्मदा नदीका मध्यवर्ती एक द्वीप ।  
यह अक्षा० २२° १४' ४०" और देशा० ७६° १७' ५०" पर  
अवस्थित है । चलिंत नाम माध्याता है । श्रीह्वार-  
मूर्तिधारी महादेवका मन्दिर रहनेसे इस स्थानकी  
श्रीह्वारमाध्याता भी कहते हैं । माध्याताका प्राचोन  
नाम 'वैदूर्यग्रीव' था । स्कन्दपुराणके वैवाखण्डमें लिखा  
है—राजा माध्याताने श्रीह्वारके निकट प्रायणा की,  
जिससे सन्तुष्ट हो उन्होंने वैदूर्यग्रीवके बदले माध्याता  
संज्ञा रख दी ।\*

इस द्वीपका अवस्थान अति सुन्दर है । इससे  
थोड़ी दूरपर नर्मदाकी कावेरी नाम्नी एक शाखा  
बहती है । फिर इसी नामकी एक छोटी नदी नर्मदा-  
से अलग रह माध्याताके निकट कावेरीमें जा मिली  
है । एक ही स्थानमें दो सङ्गम हैं । ऐसा पवित्र  
तीर्थ भारतवर्षमें अति विरल है । पुराणादिका तीर्थ-  
माहात्म्य देखते ऐसे तीर्थमें वास वा स्नान करनेसे  
अग्नेय पुण्यलभ होता है ।

यहां नर्मदाके सम्यगपर हरे रङ्गका पहाड़  
देख पड़ेगा । पहाड़के मध्य जहां नदीका प्रवाह  
चलता, वहां जल गभीर, स्वच्छ और शान्त रहता है ।  
जलमें अंसंख्य कच्छप और मत्स्य खेलते फिरते हैं ।  
वह इतने निर्भीक और विस्वासी रहते, कि घाट  
किनारे रुकाई छोड़ देनेसे निर्भय आ छाया करते हैं ।  
द्वीपका परिमाण प्रायः एक वर्ग मील है ।

श्रीह्वार लिङ्ग आधुनिक नहीं । स्कन्द, शिव,  
पद्म प्रभृति पुराणोंमें श्रीह्वारका नाम उल्लेख  
है । शिवपुराणमें लिखा है,—“किसी समय महर्षि  
नारद लोकमें तीर्थमें विन्ध्यपर्वतको आये थे । यहां  
विन्ध्यने बड़े सन्मानसे उनकी पूजा की । पहले  
नारदको विन्ध्यसे रहना—विन्ध्यपर्वतके पास सब  
कुछ है, किसी वस्तुका अभाव नहीं ; इसीसे विन्ध्य  
अहङ्कार करते—हमारे सब है । अतएव नारदने  
निन्धाले छोड़ा था । विन्ध्यने समझ सजनेपर  
पूजा,—भगवन् । मैंने क्या दोष किया, जो आपने  
निन्धाले छोड़ दिया है ।” नारदने कहा,—“विन्ध्य  
तुम्हारे पास सब कुछ है । किन्तु तुम्हारे ऊपर देवता

तत्त्व तत्त्वचर्च सुता माध्यातः परमेष्ठिनः ।

उवाच नरकः देवी माध्यातारं महीपतिम् ॥

सर्वमित्युक्तं पदेन मत्प्रसादादविष्मति ।

यन्मे कीर्तं महोपास्य हृष्टादयत्नवान्मम ॥

तदा प्रथमि माध्याता वैदूर्यं शीयते गिरिः ।

अथ तीर्थेण माध्यातामाध्यातममुवाच श्रुवा ।

सर्वकामसमापनां शीघ्रं कीदृशमिच्छते ।

श्रुत्वापि कीर्तनादायि हयमेघकनं समम् ॥”

(स्कन्दपुराण, वैवाखण्ड ११५०)

माध्याताशाय ।

यदि तुष्टोऽसि देवेन वरे दातुं त्वमिच्छसि ।

वैदूर्यं नाम मेदेवो माध्याता स्यात्तुमेतन् ॥

देवस्यानसमं ह्येव तत् त्वमप्रसादादविष्मति ।

अप्रदानं तवः पूजा तथा प्रायविधयेनम् ॥

शे कुर्वन्ति नरास्तं वा विष्मतीकविचारिका ॥

नहीं रहते। मेरे तुम्हारी प्रीति उच्च है। उसमें देवता वास करते हैं।' यह कहकर नारद लहसि आये, वहाँ चले गये। पीछे विन्ध्य अपनेकी धिक्कार दे परित्याग करने लगे और शिवकी पूजनेकी इच्छासे आजकल जहाँ श्रीह्वार विद्यमान है, वहाँ आकर पहुँच गये। यहाँ उन्होंने श्रुतिकाके एक शिव बनाये और एक स्थानमें रह अचल भावसे, हृष्ट मास शिवके ध्यानमें बिताये थे। प्रायतोष प्रसन्न हुये और विन्ध्यकी सम्बोधन कर कहने लगे,—'अपनी इच्छाके अनुसार वर मांगो।' तब विन्ध्य आतुरकण्ठसे बोल उठे,—'हे देवादिदेव। यदि आप प्रसन्न हुये हैं, तो मेरी इच्छाके अनुसार शरीर बढ़ादिये। प्रभो! आपका जो व्योतिर्मय रूप (श्रीह्वार) सकल वेदोंमें वर्णित है, उसी भक्तवाञ्छित रूपसे मुझे दर्शन दीजिये। महादेवने भक्तकी वाञ्छा पूरी की और भगोभाव प्रकाशकर यह बात कह दी,—'व्या करे', अश्रम वरदान श्रमकी दुःखजनक होगा सही, तथापि तुम्हारी इच्छा हमने पूर्ण की।' इसी समय देवों और ऋषियोंने शिवका पूजन किया और उससे वहाँ उसी रूपमें रहनेकी कहा। महादेव मानवके सुखकी वहाँ ठहर गये। इसी प्रकार एकमूर्ति श्रीह्वार और पार्थिव लिङ्ग दो भागमें विभक्त हुआ। श्रीह्वारमूर्तिको सदाशिव और पार्थिव लिङ्गका नाम अमरेश्वर है।<sup>१</sup>

आजकल हीपके मध्यभागमें श्रीह्वारलिङ्गका और नदीके दक्षिण-भागमें अमरेश्वरका मन्दिर है। स्थानोय पूर्वक श्रीह्वारको आदिनिङ्ग कहा करते हैं। रेवा-खण्डमें भी श्रीह्वारको आदिदेव बताया है।

"श्रीह्वारमूर्तिदेव ये वै ज्योतिर्निष्कः।" (२१५०)

तीर्थयात्री द्वादश ज्योतिर्निङ्ग दर्शन करनेकी इच्छासे या पड़ने श्रीह्वारमाध्याता और पीछे शिवके पार्थिवलिङ्ग अमरेश्वरका दर्शन लेते हैं। पश्चिमके शास्त्र पण्डित इसे श्रीह्वारमूर्तिको ईश्वरका प्रकृत लिङ्ग मानते हैं।

जिस समय देवदेवो सुततान् महामूढने सोम-नायका मन्दिर तोड़ा, उस समय भी श्रीह्वार और अमरेश्वरका भाव भोड़ा न था। उक्त दोनों मन्दिरोंके पतिरिक्त अनेक लिङ्ग और मन्दिर विद्यमान रहे। उन सकल प्राचीन मन्दिरोंमें विषमो सुखसमानोंके उत्पत्तसे कई एककाल ही नष्ट हुये, कई ध्वंसाव-शेषमें पड़े और कई बङ्गहीन अवस्थामें खड़े हैं। किसी

इति विधिष्व तत्रैव श्रीह्वारं वन्दते स्वयम्।

ज्ञात्वा चैव पुनराय पार्थिवो मित्रमूर्तिकाम् ॥ ३६

आरत्तयं तथा मधुं चत्वारोच निरुत्तरम्।

न चत्वारं तथा द्वादशान्धिव्यागरेतदय ॥ ३७

अमरेश्वरं तथा मधुं कृत्वा चैव नमस्कृतम्।

तत्रैव दर्शयामास दुर्गम् श्रीविनायकि ॥ ३८

अथ यद्योक्तं वेदेषु महात्मनोचिन्तितम्।

यदि प्रसन्नो दीपेय इति धेहि वपेन्मृतम् ॥ ३९

किं करोमि वदा मेन प्रियते दीपये मया।

न दुष्टं परदुःखाय वरदानं नमाद्यमम् ॥ ४०

तथापि दशधास्य वपेन्मृतिं तथा पुनः।

एवं च समये देवा आरत्तयं तथात्मनाः ॥ ४१

अपुनश्च इन्द्रं तत्र आराधयन्मिति आशुपुनम्।

तत्रैव ज्ञानाय देवी सोक्तानी मुखरितये ॥ ४२

श्रीह्वारं चैव दत्ते ये निद्रमेकं तथा पुनः।

पार्थिवे च तथाप्ये निद्रमेकं तथा पुनः ॥ ४३

एवं वदं समुत्पन्नं निद्रमेकं रिधा कृतम्।

मूढने श्रीह्वारं ज्ञानायैव च सदाशिवः ॥ ४४

पार्थिवे चैव दत्तायं महाशिवमरेतः ॥ ४५

(मित्रपुराण, आनन्दपुराण ३६५०)

+ "श्रीह्वारं वदा ज्ञानायैव तथा च यथा पुनः।

कश्चिद्विन्ध्यं समये चान्न नारदो भवत्सदा ॥ ३९

श्रीह्वारं चैव मित्रं महा आगतो विन्ध्यकैत्ररम्।

तत्रैव पुनितान् च महामातुः परम् ॥ ४०

अपि सर्वेषु विद्येते न त्वम् हि वदापनम्।

इति नामं तथा श्रुत्वा नारदो नामहा तथा ॥ ४१

निश्चयं संस्थितस्तत्र श्रुत्वा विन्ध्योऽप्यौचित्यम्।

किं श्रुत्वा तथा दृष्टं अपि निश्चासकपम् ॥ ४२

तच्छ्रुत्वा नारदो वास्तवतया च यथा पुनः।

सपि तु विद्यते सर्वं मेकदन्तरे पुनः ॥ ४३

देवेष्वपि विनागोऽप्य न तथापि वदापनम्।

इत्थं च नारदस्तत्र अगाम च यथापनम् ॥ ४४

विन्ध्यं परितो वी विन्ध्यं जौतितादिष्वम्।

विदेवैरं तथा मधुं चत्वारोच ज्ञानायैव ॥ ४५

स्थानपर गगनस्पर्शी मन्दिरकी चूड़ा टूट गई है। कहीं अवलुप्त मन्दिरभवन विध्वस्त हो जानेसे कुङ्कु-  
म्भालकी वासगुमि बना है। कहीं भग्न देवदेवीकी  
मूर्ति भूमिमें गड़ी पड़ी है। उक्त दृश्य धर्मनिष्ठ हिन्दु-  
योंके प्राण व्यथित कर डालता है। पर्वतके ऊपर  
सिद्धेश्वर महादेवके सुरम्य मन्दिरका भग्नावशेष  
देखनेमें आता है। इस मन्दिरकी चारो ओर चार  
हार हैं। प्रत्येक हारके सम्मुख १४ फीट उच्च एवं  
१४ स्तम्भविशिष्ट हारप्रकोष्ठ खड़ा है। मन्दिरकी  
भित्तिके प्रसारमें पंक्ति-पंक्तिपर हाथी अङ्कित हैं। आज-  
कल केवल दो हाथी प्रकृत आकारमें देख पड़ते,  
अपर विकृत हो गये हैं। इस मन्दिरसे थोड़ी दूर  
गौरी-सोमनाथका मन्दिर है। इसी मन्दिरकी अवस्था  
अति शोचनीय है। किन्तु मन्दिरमें दर्शन करने  
कितने ही लोग आते हैं। देवाखण्डमें लिखा है,—

“सोमनाथं ततो विद्धि कल्याण तीरमाश्रितम्।

सोमिनाराधितं तीर्थं मुक्तिमुक्तिफलप्रदम्॥” (८५०)

सोमनाथ नर्मदा नदीके तीर विद्यमान है। चन्द्रने  
इस तीर्थकी आराधना की थी। यह तीर्थ भोग और  
मोक्षफलदायक है।

स्थानीय पूजक कहते, पहले सोमनाथ श्वेतवर्ण थे।  
सुसलमानोंके ध्वंस करने आने पर यह मूर्ति प्रति-  
विधित हुई। उसी प्रतिविम्बमें शूकरका वक्त्र देख  
पड़ा था। फिर वही विधर्मी सुसलमान क्रोधसे  
अधौर हो और सोमनाथकी अग्निमें फेंक चल दिये।  
उसी समयसे सोमनाथ कृष्णवर्ण बन गये हैं।

सोमनाथ मन्दिरके सम्मुख है पत्थरकी एक  
हृष्ट नन्दीमूर्ति है। सुसलमानोंने उसका मत्था  
तोड़ डाला है।

मान्याता दीपमें प्रायः समस्त ही शिवमन्दिर हैं।  
किन्तु इससे थोड़ी दूर उत्तर नर्मदा किनारे शिव-  
मन्दिर व्यतीत होनेके विष्णु और जैन देवदेवीके मन्दिर  
बने हैं। नर्मदा द्विधारा होनेकी जगह सुखपर अनेक  
बड़े-बड़े मन्दिर विद्यमान हैं। उनमें २४ वसुभुज  
विष्णुमूर्ति हैं। इसके अतिरिक्त विष्णुके दशवतारकी  
मूर्ति भी देख पड़ती है। एक मन्दिरमें विष्णुकी

हृष्टदाकार महावराहमूर्ति है। उसी मन्दिरमें १२४६  
ई०को एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित हुआ था। उससे  
थोड़ी दूर रावण-नाचा है। इस नालेके मध्य साढ़े  
अष्टारह फीट उच्च काले पत्थरकी एक मूर्ति है। इस  
मूर्तिके दाय दाय ओर एक मुण्ड है। कोई-कोई इसे  
रावणकी मूर्ति बताया करते हैं। किन्तु वह बात  
ठीक नहीं। क्योंकि रावणकी मूर्ति रहनेसे सम्भवतः  
दस मुण्ड और बेश ह्रास होते। यह शिवसङ्गिनी  
महाकालीकी मूर्ति है। वक्षःस्थलपर वक्षिक, वाम  
पार्श्वपर इन्दुर और पादद्वयपर नग्न शिव पड़े हैं।

नदीसे थोड़ी दूर दूसरे भी कई जैन-मन्दिर विद्य-  
मान हैं। इन सबके मन्दिरोंमें जैन देवदेवीकी  
कितनी ही मूर्ति देख पड़ती हैं। मन्दिरोंपर जैन  
धर्मके चक्रादिकी प्रतिष्ठाति खुदी है।

पहले यह स्थान भील राजाओंके अधिकारमें रहा।  
मान्याताकी एक राजा भारतसिंह नामक चौहान  
राजपूतकी अपना आदिगुरुप बताया है। ११४५  
ई०को उन्होंने नाथू भीलकी डर मान्याता अधि-  
कार किया था। उन्होंने नाथू भीलकी कन्यासे  
फिर विवाह कर लिया। आज भी बोद्धारसे थोड़ी  
दूर पहाड़के उत्तर कई प्राचीन मन्दिर नाथूके वंश-  
धरोंके अधीन हैं। नाथू भीलके समय दुर्जयनाथ  
नामक एक गोसाईं बोद्धारकी पूजा करते रहे। यहाँ  
प्रवाद है—उस समय कालभैरव और महाकाली दोनों  
नरनाम खाते, उसी भयसे तीर्थ-यात्री यहाँ आते न  
थे। यात्रियोंके हितार्थ दुर्जयनाथने तपोबलसे काली-  
देवीकी रिक्ता गुहाके मध्य स्थापित किया। किन्तु  
कालस्वरूप कालभैरव सहजमें हस हँसे न थे। दुर्जय-  
नाथने उनके सन्तोषार्थ नरवल्लिका प्रबन्ध कर दिया।  
फिर कालभैरव नरवल्लि लेने आते रहे। भयग्रेष  
१८२४ ई०की थंगरेलू कर्मचारियोंके यत्नसे यह प्रथा  
बन्द हुई। दुर्जयनाथके शिष्य परम्परासे बोद्धारकी  
पूजा करते चले आते हैं। प्रति वर्ष कार्तिक मासमें  
बोद्धारकीका महीतसव होता है।

बोद्धारा (सं० स्त्री०) बुद्धगतिविशेष।

बोद्धारेश्वर—वर्म्हदे प्रान्तके पूना नगरका एक शिव-

मन्दिर। यह सुथा नदी किनारे सोमवार-महल्ले में अवस्थित है। १७४० और १७६० ई०के बीच कृष्णली-पत्त चितरावने इसको लोमोसे चन्दा करके बनाया। भाज साधव या सदाशिवराव चिमनाजीने मन्दिर बनते समय कुछ वर्षतक एक हजार रुपया मासिक दिया था। द्वार पूर्वाभिमुख है। फाटककी दीवार बहुत मजबूत बनी है। प्राङ्गणकी चारो ओर साधु-सन्तके विद्यामार्ग कमरे हैं। मन्दिरसे नदीतक सिद्धियां लगी हैं। प्रतिवर्ष होम होता है। मन्दिरके पास ही अश्वान रश्मिसे पूजाके लोग भय खाते हैं। सरवार हजार रुपये साल होमके लिये देती है। यहां नदीकी स्मृति भति विशाल है।

भोजिल—१ मन्द्राजप्रान्तके नैसूर जिलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल ७८७ वर्गमील है। इसके लम्बे-चौड़े मैदानकी भूमि बहुत अच्छी है। फसल खूब उपजती है। नदीके रक्षपथमें कूप बने हैं। ताजाव बहुत कम है। जङ्गल भी कहीं देख नहीं पड़ता।

२ मन्द्राज-प्रान्तके नैसूर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १५° १०' २०" उ० तथा देशा० ८०° ५' १०" पू०में मूसी नदी किनारे अवस्थित है। १८७६-७७ ई०की यहां म्युनिसिपलिटि पड़ी थी। वस्तुतः यह नगर मण्डपति-वंशके राजाओंकी राजधानी रहा। वह सदा बेहटगिरिके नरेशोंसे लड़ा-भिड़ा करते थे। मण्डपति नरेशोंने विद्याको बड़ा उत्साह दिया। इसीसे भोजिल अपने पण्डितोंके लिये आसपास प्रसिद्ध है। अन्ततः बेहटगिरिके राजाने मण्डपति नरेशोंकी दवा दिया था।

भोजिला, जं बना दीकी।

भोजा ( हिं० वि० ) १ तुच्छ, इकौर, छोटा। २ उथला, छिछला, हलका। ३ शक्तिहीन, कमजोर। ४ कम पड़नेवाला, जो लंबा न हो। "जहां बड़ी ईवा वहां भोजा पड़े।" ( लोकोक्ति )

भोजार् ( हिं० स्त्री० ) तुच्छता, हलकापन, कम पड़नेकी क्षमता।

भोजापन ( हिं० पु० ) भोजार् दीकी।

भोज ( सं० पु० ) भोज-अच्। १ मेघादि हादस

राशिके मध्य अयुक्त राशि। २ अयुक्तमात्र, ताक, जमा। ( हिं० ) भोजः दीकी।

भोजः ( सं० स्त्री० ) उद्य भोजवे असुन, वसोपच। उक्तं रंसे वसोपच। अ० १२८। १ बल, जोर। २ दीति, चमक। ३ अवलम्बन, सहारा। ४ प्रकाश, रोशनी। ५ मेघादि हादस राशिके मध्य १म, २य, ५म, ७म, ८म एवं ११य राशि। ६ समासवाङ्मय एवं पदा-कुम्भरताका काव्यगुण। इस गुणयुक्त रीतिका नाम गौड़ी है। ७ मन्त्रादिका लोचन, उधियार वगैरहका इत्थ। ८ ज्ञानेन्द्रियगणकी पटुता। रसादि सप्तधातुके सारभागसे पैदा एक धातु। वैद्यकके मतसे यह सर्वशरीरस्थ, स्निग्ध, शीतल, स्थिर, ग्लानवर्ण, कफात्मक और बलपुष्टिकारक है। अमरके फल-पुष्पसे मनु सख्य करनेकी तरह माना धातुसे भोजः इकट्ठा होता है। भूमिघात, चय, कोप, शोक, विन्ता, परित्यक्त और क्षुधासे भोजः घट जाता है। भोजः व्यापक पड़नेसे स्वाभ्यासल, मात्रका शुद्ध, वर्णभेद और स्वादि, तन्त्रा तथा मित्राका वेग बढ़ता है।

भोजत—काठियावाड़की एक छोटी नदी। यह गिर पहाड़के उत्तर प्रायण्यसे निकलती और दक्षिणकी ओर बह चसती है। वनधालीमें नगरके समीप भोजत उबने नदीसे मिल गयी है।

भोजना ( हिं० स्त्री० ) अवरोध करना, रोकना।

भोजसीन, भोजन दीकी।

भोजस्तर ( सं० स्त्री० ) भोजोधातुवर्धक, देवानी कुन्वत बढ़ानेवाला।

भोजस्तर ( सं० स्त्री० ) अधिक भोजोधातुयुक्त, जिसके देवानी कुन्वत ज्यादा रहे।

भोजस्थ, भोजन दीकी।

भोजस्त ( सं० स्त्री० ) भोजोपस्थादि, भोजः-वचच्।

१ तेजस्वी, शान्दार। २ बलवान्, जोरावर।

भोजस्त्रिता ( सं० स्त्री० ) भोजस्त्रिनी भावः, भोजस्-तल्-टाप्। १ बलवत्ता, जोरावरी। २ तेजस्त्रिता, शान्-भोजित।

भोजस्त्री, भोजन दीकी।

भोजित, भोजन दीकी।

श्रीजिष्ठ (सं० त्रि०) श्रीज-इष्टन्। अतिशय-वर्धन-प्रदो-  
म श्राव्यः। वलवान्, तेजस्वी, दीप्तिशाली, जोरावर,  
गान्धार, रौयन।

श्रीजीयम् (सं० त्रि०) श्रीज-इयसन्। दिवसो विमन्योप-  
दत्तरोयसुनो। पा ३११।५०। तेजस्वी, वलवान्, दीप्त, ताकृत-  
वर, रौयन।

श्रीर्जोदा (सं० त्रि०) श्रीजोधातु प्रदान करनेवाला,  
जो क्षीर देता हो।

श्रीजोन (अं० पु० = Ozone) वायुविशेष, एक लतीफ  
हवा। इसमें कोई रङ्ग नहीं रहता। गन्ध अपने  
टङ्कका मिलाता होता है। १७८५ ई०को वान-मारम  
(Van marum) ने इस पदार्थको जांचा था। अधिक  
श्रीतप्त करनेसे यह नीलके पानीकी तरह बहने लगता  
और बड़े क्षीरसे भट्क उठता है। आक्सीजनमें इसका  
अंश पाया जाता है। यह पानीमें बहुत कम मिल  
सकता है। जलको निष्कल बनानेमें इसे अधिक  
व्यवहार करते हैं। ग्रामोंके वायुमें इसका जितना  
अंश रहता, उतना नगरोंके वायुमें नहीं मिलता।  
श्रीजोनका घनत्व आक्सीजनसे थोड़ा बैठता है। उष्ण  
होनेसे यह आक्सीजन बन जाता है। इसमें गन्ध  
मिटानेका गुण विद्यमान है।

श्रीजोन-पेपर (अं० पु० = Ozone-paper) वायुकी  
परीक्षा देनेका एक पत्र, जवाकी जात्रिका, कागज।  
इससे वायुमें श्रीजोन नामक वायुका रहना न रहना  
मासूम होता है।

श्रीजोनबक्स (अं० पु० = Ozone-box) सम्पुट-  
विशेष, एक सन्दूक। इसमें श्रीजोन-पेपरकी रफ  
वायुपर श्रीजोनका रहना न रहना देखते हैं। इस  
सम्पुटकी बनावट धनोष्णी होती है। वायु मिला प्रका-  
शदि द्रव्य इसमें प्रवेश कर नहीं सकती।

श्रीजोवका (सं० स्त्री०) श्रीज मतानुसार शोधितमकी  
एक शक्ति।

श्रीजमा (सं० पु०) वज्र-ह-मनिप। १ प्रेरक,  
मेजने या पट्ट पानेवाला। (पु०) २ शक्ति, ताकत।  
३ वेग, तेज चास।

श्रीभ (हिं० पु०) १ उदर, भ्रिकम, पेट। २ पन्थ, पांश।

श्रीभइत (हिं० पु०) मन्त्रसे प्रेतादि बाधा हटाने-  
वाला, जो भ्राह्मण क करता हो।

श्रीभर (हिं० पु०) १ उदर, पेट। पेटको घेली,  
मैदा। इसमें भोजन करनेसे खाद्य द्रव्य जा कर  
एकत्र होता है।

श्रीभरतामबत—बम्बई प्रान्तके नासिक जिलेकी एक  
नहर। यह एक पुरानो नहर रहे, जो १८७१ ई०की  
बढ़ा और सुधारकर खोली गयी। इसमें गोदावरीकी  
शाखा वाष्पगङ्गा और पालखेड़ नहरसे पानी आता  
है। लंबाई दो मील है। इसमें होलकर महाराजका  
प्रायः ५८१६) और बंगरेज सरकार १८२०) रु० लगा  
था। सोमाके परिवर्तनमें होनकरने इसे बंगरेज सर-  
कारकी सौंप दिया।

श्रीभरी (हिं० स्त्री०) श्रीभर देखो।

श्रीभल (हिं० स्त्री०) १ छाया, परछाई। २ भाइ,  
परदा, पोटा। "श्रीभल पडा श्रीभल।" (श्रीकीर्ति)  
(वि०) ३ गुप्त, छिपा।

श्रीभला (हिं० पु०) बचेका दूधको, श्रीभर उगलना।

श्रीभा (हिं० पु०) १ मन्त्रादि द्वारा संप्रदष्ट भूत-  
वस्तु प्रभृति रोगियोंको चारोप्य करनेवाला, जो भ्राह्म-  
ण कसे सांपके काटे या भूतके सारे बीमारको अच्छा  
कर देता हो। २ भूतप्रेत उतारनेवाला। "गण श्रीभा  
ना चयन।" (श्रीकीर्ति) ३ वैद्यज्ञानिक, बाजीगर।  
४ मेथिल ब्राह्मणोंका एक उपाधि। यह लोग मध्य-  
प्रदेशके चांदी, रायपुर, दुमड़ाबाद प्रभृति स्थानोंमें  
रहते और भाट, गायक, चयवा भिक्षुके वेशमें देख  
पड़ते हैं।

श्रीभाई (हिं० स्त्री०) श्रीभाका कार्य, अभिचार,  
भ्राह्मण क, बाजीगरी।

श्रीभायन (हिं० स्त्री०) श्रीभाकी पत्नी।

श्रीभार—१ बम्बई प्रान्तके पूना जिलेका एक ग्राम।  
यह लुधारेसे ६ मील दक्षिणपूर्व कुकची नदीके वाम  
तटपर अवस्थित है। यहां गणपतिका एक भयतार  
हुषा था। ग्रामसे पश्चिम गणपतिका मन्दिर बना  
है। फाटककी राह बहुत अच्छी है। दोनों ओर  
हारपालकी सुन्दर मूर्ति हैं। हारापकाठकी श्रीभा

चार गायकी मूर्ति बढ़ाती हैं। सब मूर्तिपर चमकीला रंग पड़ा है। ब्राह्मणमें दो दीपकस्तब्ध हैं। सात तौरणकी परिक्रमा बनी है। ग्रामका प्राय मन्दिरमें लगा है। इनमन्दार प्रथम करते हैं।

२ बम्बई प्रान्तके पञ्चमदनगर जिलेको एक नदी। इस नहरका मुँह सङ्गमनेर नगरसे १० मील नीचे भोभर ग्राममें प्रवरके घास तटपर अवस्थित है। लंबाई १८ मील है। २७०८८ एकर भूमि इससे सींची जाती है। १८०८ ई०को यह पूरे तौरपर बनकर तैयार हुयी थी। भोभरपर पुल बंधे और पेड़ लगे हैं।

श्रीकृष्णाल गौड—मध्यप्रदेशके गौडोंकी एक शाखा। राजपूतानेके चारणोंकी तरह यह लोग भी बोधा बजा-बजा स्वाजातीय औरपुरुषोंका यश गाते फिरते हैं। हाथमें मोरका पंख रहता है। श्रीकृष्णाल चकोर और धनेशका चमड़ा घेघते हैं। लोगोंके विज्ञानानुसार धनेशका चमड़ा घरमें रहनेसे घन और सौभाग्य बढ़ता है। इसीसे वह बड़े भादरके साथ क्रय किया जाता है। इनकी स्त्रियाँ दूसरी हिन्दू-रमणियोंके हाथमें गोदना-गोद-देती हैं। यहाँकी हिन्दू स्त्रियोंके विचारानुसार इनसे हाथमें गोदना गोदानेपर वैधव्यकी दशा भोगना नहीं पड़ती।

दूसरी स्त्रीके श्रीकृष्णालोंको माना कहते हैं। यह दूसरी गौडोंके साथ बैठकर नहीं खाते, कारण अपनेको बहुत बड़ा समाने हैं।

श्रीभैती, बोभाई देखो।

घोट (हिं० स्त्री०) १ अवरोध, रोक, बाड़।

“तिनकेको घोट द्वाड़” (श्रीकृष्ण) २ काया, परछाहीं। ३ गुप्तस्नान, छिप कर बैठनेकी जगह। ४ घूँघट। ५ विरोध, वचाव। ६ अवशथ, संहारा।

घोटन (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेषका दण्ड, चरखी का डंडा। यह दो रहतीं और कपाससे बिनीलेकी बनाने करती हैं। पहले हिन्दुस्थानमें घर घर घोटनसे काम लिया जाता था। किन्तु अब मिल या गुंतलीघर चलनेसे इसका व्यवहार अधिक देख नहीं पड़ता।

घोटना (हिं० क्रि०) १ कपासकी चरखीपर लगा बीज

छोड़ना, कपासका बिनीला निकालना। २ बीचमें ही रोक लेना, पकड़ना। ३ दायी बनना, सर्वावदीह होना। ॥ पुनः पुनः कथन करना, अपनी ही बात नाचना।

घोटनी (हिं० स्त्री०) कपास परिष्कार करनेका एक यन्त्र, कपास साफ करनेकी चरखी। इससे कपासका बिनीला निकाल रुई तैयार करते हैं।

घोटल (हिं० स्त्री०) व्यवधान, परदा, बाड़।

घोटा (हिं० पुं०) १ पाखंड-भित्ति, बगली दोषार, बाड़। “घोष्टू घोटा नरे मोटा।” (श्रीकृष्ण) २ घरके सामनेका चबूतरा। ३ कपास घोटनेकी चरखीपर रखा जानेवाला मट्टोका लौटा। इससे चरखी अपनी जगह नहीं छोड़ती। ४ चरखी चलानेवाला।

घोटो, घोटनी देखो।

घोट (हिं०) बोल-देको।

घोठगना (हिं० क्रि०) धान्य पकड़ना, किसीके सट्टरी बैठना या लौटना।

घोड़ (हिं० स्त्री०) घोट, बाड़।

घोड़क, चोरदेको।

घोड़वा (हिं० पुं०) १ काठपात्रविशेष, काठका एक बरतन। इससे खैरका जल सौंघते हैं। २ बेंड़ी, दोरी। इससे निम्नस्थलका जल खैरमें पहुँचाया जाता है। यह गहरो टोकरी जैसा रहता है। दोनों ओर दोरी लगा दी पादमो इसे चलाते हैं।

घोड़का, बोभाई देखो।

घोड़न (हिं० स्त्री०) १ अवरोध, रोक। २ टाक, वचावकी शक्ति।

घोड़ना (हिं० क्रि०) १ अवरोध लगाना, बीचमें ही रोक रखना। २ विस्तारित करना, फैला देना।

घोड़व (सं० पुं०) रागविशेष। इसमें स, ग, म, घ और नि—पांच ही स्वर लगते हैं।

घोड़ा (हिं० पुं०) १ टोकरा, खांचा। २ गर्त, गड्ढा। ३ संघ। (वि०) ४ गमीर, गहरा।

घोड़ाशहर—एक संस्कृत शब्दकार। यह सुधाकरके पुत्र और शक्तिरके पीत थे। शब्दविधानधर्मकुसुम और स्मृतिधुंधार नामक पुस्तक इनके लिखे हैं।

भोड़िका ( मं० स्त्री० ) धान्यविशेष, नीवार। यह शीघ्र, रुच, कष्ट-वायु-हृदिकर और पित्तनाशक होती है। ( राजवल्लभ )

भोड़ी, भोड़िका देखो।

भोड़ ( सं० पु० ) आ-उन्दी-रज्, दस्य डत्वम्।  
१ जवाकुसुमवृक्ष, गुड़हरका पेड़। यह संघाही और क्षेयहित होता है। ( भावप्रकाश ) इसके सेवनसे मल और मूत्र रुकता है। ( राजवल्लभ ) भोड़ कटु, उष्ण, इन्द्रियतृप्तकर, विच्छर्दिजन्यजनक और सूर्यराशन है। ( राजनिषध ) २ उड़ीसा मुक्त। उत्पन्न देखो। प्रायः उत्कलकी उत्तरांशको भोड़ कहते हैं। ( त्रि० ) ३ उत्कल देशका अधिवासी, उड़िया।

भोड़काख्या, भोड़का देखी।

भोड़द्वय ( सं० पु० ) उत्कल, उड़ीसा।

भोड़पर्याय ( सं० पु० ) सूर्यकान्तपुष्पसुप, गोड़हरका पेड़।

भोड़पुष्प ( सं० स्त्री० )। भोड़श्च तत् पुष्पश्चेति, कर्मधा०। १ जवाकुसुम, गुड़हरका फूल। २ जवाकुसुमवृक्ष, गुड़हरका पेड़।

भोड़पुष्पा ( सं० स्त्री० ) जवावृक्ष, गुड़हरका पेड़।

भोड़काख्या ( सं० स्त्री० ) भोड़काख्या यस्य, बहुव्री०। जवापुष्प वृक्ष, गोड़हरका पेड़।

भोड़ ( सं० त्रि० ) आ-वह-क्त। सम्यक् रूपसे वहन किया हुआ, जो अच्छी तरह ढोया गया हो।

भोड़न ( हिं० स्त्री० ) भोड़ाई, लिफ्टकी वज्रसे टांकनेका काम। ३ वज्र विशेष, भोड़नेका कपड़ा।

भोड़ना ( हिं० क्ति० ) १ लपेटना, वज्रसे देह टांकना। २ भोड़ना, रोक रखना। ( पु० ) ३ देहाच्छादन-वज्र, लिफ्ट टांकनेका कपड़ा। ४ विस्तारकी चद्दर।

“सायका भोड़ना पत्नीका रेशीना” ( श्रीकोटि )

भोड़नी ( हिं० स्त्री० ) कौटो चहर या पिछोरी। यह छियोंके ही काम आती है।

“भोड़नी को बताव सबो।” ( श्रीकोटि )

भोड़र ( हिं० पु० ) छल, वहाना, धोका।

भोड़वाना ( हिं० क्ति० ) आच्छादित करवाना, भोड़ानेके कामपर किसी दूसरेको भेजना।

भोड़ाना ( हिं० क्ति० ) धन्यकी आच्छादित करना, दूसरेको टांक देना।

भोड़ापल्लवा ( सं० स्त्री० ) गोरखमुण्डी, गोरखमुंडी।

भोषि ( सं० त्रि० ) गुण-इन्। १ अपनयनकारी, वचा देनेवाला। ( पु०-स्त्री० ) २ सीमरस प्रसुत करनेका एक पात्र। इसके दो भाग होते हैं। ३ स्वर्गमर्त्य, जमीन आध्यान्। ४ रक्षा करनेवाली शक्ति, जो ताकत बरकरार रखती हो। ५ रक्षा, डिफेंस।  
भोषी ( सं० स्त्री० ) भोषि देखी।

भोत ( सं० त्रि० ) आ-वेज्-क्त। १ अन्तर्ध्यात, भीतर भरा हुआ। २ बुना हुआ। ३ कपड़ेके तानेका सूत। ( हिं० स्त्री० ) ४ सुख, वियाम, फुरसत, चाराम। ५ आलस्य, सुस्ती। ६ काम, कायदा। ७ स्वल्पव्यय, किफायत। ८ अवशिष्टांश, बचत।

भोतपीदरम्—मन्त्रालय प्रान्तकी तेनिक्का जिलेकी एक तहसील। इसका परिमाण १०८५ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः तीन लाख निकलेगी। तूतकुंडी नामक प्रसिद्ध मन्दिर इसी तहसीलमें लगता है। भोत-पीदरम् ही प्रधान नगरका भी नाम है।

इसीमें इत्तियापुरम् की जमीन्दारी भी पड़ती है। भूमि काली और बराबर है। कहीं कहीं इमलीके बाग़ लगे हैं। रुई अधिक होती है। समुद्र किनारे श्वेतबालुका भरी है। उसमें ताड़ और बबूल होता है। साठव इण्डियन रेलवे मद्रास से इस तहसीलमें आती है। मरियाची जलप्रपात और तूतीकोरिन-टर्मिनस है। भोतपीदरम् नगरोंमें तहसीलदारी है।

भोतभोत ( सं० त्रि० )। १ परस्पर समुद्रित, एक दूसरेसे खगा हुआ। ( पु० ) २ ताना-बाना। ३ वियाह विशेष, किसी किष्मकी शादी। इसमें एक-दूसरेकी सहकी सड़का दोनों देते हैं।

भोता ( हिं० वि० ) उस परिमाणवाला, उतगा।

भोत ( सं० पु० स्त्री० ) भवति रश्मि गृहमाधुभ्यः, भव-तुन्-कट्। विगतविद्वान्निमित्तपरिचाय, अ-विशेषम्।  
उत्। १००। भवत्येवमिति। या १०००। १ विहाय,

विज्ञाव । २ बनविडाल, जङ्गली बिल्ली । ३ प्रति तन्त्र, दाना, भरनी ।

ओदर—बम्बई प्रान्तके पूना जिल्लाका एक नगर । यह अक्षा० १८° १३' ०", तथा देशा० १४° ३' पू०में कुसमावलीके घामतटपर अवस्थित है । जुन्नरसे ओदर १० मील उत्तरपूर्व है । बाजूर बड़ा और मारी है । नगरसे २ मील पश्चिम पर्वत है । रोडि-कड, नागपुर और जुन्नर तेल. फाटक हैं । यहां एक दुर्ग और नदी किनारे दो मन्दिर है । मोर्गेके आक्रमणमें नगर बचानेकी जुन्नर दरवाजेके पास उक्त दुर्ग बनाया गया था । मन्दिरोंमें एक सुप्रसिद्ध तुकारामके मुख केशवचैतन्यका और दूसरा कपर्दिकेश्वर महादेवका है । यावणके अन्तिम, सोमवार का मेला लगता है । सरकार मन्दिर की कुछ साहाय्य देती है ।

ओती ( हि० वि० ) उतना ।

ओत्ता ( हि० पु० ) १ दरी बुननेकी पटरीका पावा । ( वि० ) २ उतना ।

ओद ( सं० पु० ) १ अन्न, पनाज । ( हि० पु० ) २ भाईभाव, तरी, मौलापन । ( वि० ) ३ भाई, नम, गीली, जो चुरवा न हो ।

ओद(ओड)—१ बम्बई प्रान्तके खेड़ा जिल्लाका एक नगर । यह अक्षा० २२° ३०' ०" और देशा० ७६° १०' पू०पर अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः साढ़े नौ हजार है । २ बम्बई प्रान्तके कच्छ जिल्लाकी मोमिया जाति । ओदीका काम भूमि खोदना है । यह काठियावाड़में भी मिलते हैं । ओद अपनेकी सगरसुत भगीरथके वंशसे उत्पन्न होनेवाले व्यक्ति बताते हैं । राजमात्राके वर्षानुसार सिहराजनी, मानवेसे कुछ ओदीकी सचस्त्रिज्जुद्ध खोदने पाठन बोलाया था । किन्तु ज्ञानानात्री एक ओदस्त्रीसे उनका प्रेम बढ़ा और उसकी वन्दे रानी बनाने कहा । उसने इस बातसे अचम्भित हो भागनेकी चेष्टा लगायी थी । सिहराजने उसका पीछा किया और उसे पकड़ लेनेपर कितने ही ओदीकी जानसे मार दिया । ज्ञानाने आत्महत्या कर शाय दिया था—तुकारे इदमें कभी जल न रहेगा ।

किन्तु मायो नामक एक टहकी बलि देनेसे शाय छूट गया । ओद इधर-उधर काम टूटते घूमा करते है ।

ओदती ( सं० स्त्री० ) छाया, सबेरा ।

ओदन ( सं० पु० स्त्री० ) उन्म-युव नलोपय ।

उन्म नलोपय । उन्म, उन्म । १ भक्त, भात । २ भण्ड, पनाज

ओदनपात्री ( सं० स्त्री० ) ओदनस्य पाकइव पाकी यस्याः, बहुव्री० । १ नीलभिण्डी । २ ओपधिविग्रय ।

ओदना, ओदनिका देकी ।

ओदनाइया ( सं० स्त्री० ) ओदनस्य आद्या इव आद्या यस्याः, बहुव्री० । १ महासमझा, ककई । २ वाद्यालक, बरियारी ।

ओदनाइया, ओदनिका देकी ।

ओदनिका ( सं० स्त्री० ) १ महासमझा, ककई । २ वाद्यालक, बरियारी ।

ओदनी ( सं० स्त्री० ) ओदन इव पाचरति, ओदन-किप् छीप् । ओदनिका देकी ।

ओदनीय ( सं० वि० ) ओदन-यत् । विभावकविप्रपूपादिभ्यः । पा ३।१।० मध्य वस्तु, खाने लायक चीज ।

ओदस्वरी ( ओदस्वर ) उत्तर गुजरातके ब्राह्मणोंकी एक शाखा । ७० ई०को जिनमें ओदस्वरियोंको कच्छके लोग बताया था । १५० ई०को टेलिमिने इनके प्रधान नगरका नाम ओरबादरी ( Orbadari ) लिखा, जो सिन्धुसे पूर्व रहा । लोग वर्तमान राधनपुरकी उक्त नगर समझते हैं ।

ओदर ( हि० ) उदर देकी ।

ओदरना ( हि० कि० ) चटखना, फटना, बरबाद होना ।

ओदा ( हि० वि० ) भाई, तर, जो सूखा न हो ।

ओदारना ( हि० कि० ) ओदना-ओदना, फाड़ डारना, महीमें मिलाना ।

ओदर—दाक्षिण्यकी एक असभ्य जाति । ओदरीका दूसरा नाम बुद्ध है । यह अतिशय बलिष्ठ और मांसप्रिय होते हैं । बराह एवं इन्दुरका मांस इन बहुत अच्छा लगता है । शारीरिक परिश्रममें ओदर अतिशय पटु होते और जो काम पावे, उसीको कर डालते हैं । किन्तु दूसरी जातिवासे लोगोंके साथ इन कोई काम करना अच्छा नहीं लगता । यह अजातिवालोंमें मिस्रजल



छापिकायं चनाते और पय-शूष प्रभृतिके निर्माणमें हाथ लगाते हैं। पहले शोधर भूतमेत पुजते थे, पीछे वेष्टव बन गये। फिर भी पेशाम देवताका भय और प्रेम पाज भी कुछ कम नहीं। बहुविवाहकी प्रथा प्रचलित है। क्योंकि अधिक स्त्री रहनेसे भाय भी बढ़ जाता है। स्त्रियां शारीरिक परिश्रम द्वारा धर्म-पार्जन करती हैं।

शोध (सं० पु०) उन्ध भावे मन् नलोपः गुणश्च।  
शोधे शोधप्रत्ययस्त्वयः। वा ४।३।१२। क्लृप्, तरी, गीसापन।

२ प्रवाह, बहाव।

शोधन् (सं० क्लो०) उन्ध-मनिन् नलोपश्च। शोध देवो।  
शोधना (हिं० क्लि०) ध्वंसनमें पड़ना, लग जाना, भटकना।

शोधस् (सं० क्लो०) पशुस्तन, जानवरका बाखू या श्रायन।

शोधे (हिं० पु०) स्वामी, मालिक।

शोनचन (हिं० स्त्री०) पदवायन, खाटके पायताने लगनेवाली रस्सी। इसको कसनेसे चारपाई कड़ी पर जाती है।

शोनचना (हिं० क्लि०) पदवायन कसना, खाटके पायतानेकी रस्सी कड़ी करना।

शोनचना, चनना देखी।

शोना (हिं० पु०) जलके उद्गमनका पथ, पानी निकलनेकी राह।

शोनाह (हिं० वि०) शक्तिशाली, ताकतवर।

शोनामा (हिं० क्लि०) सुनना, कान लगाना।

शोनामासी (हिं० स्त्री०) श्रीं नमः सिंघम्, विद्या-रश्मिके समयका एक मङ्गल वाक्य।

शोन्दन (सं० पु०) १ मङ्गल। २ कनिष्ठ।

शोप (हिं० स्त्री०) १ गोमा, खूबसूरती, चमक।  
२ रंग, कलर।

शोपची (हिं० पु०) कवच धारण किये हुआ और, जो सिपाही बख्तर पहने हो।

शोपना (हिं० क्लि०) परिष्कार करना, रंगना, मसना।

शोपनी (हिं० स्त्री०) परिष्कार करनेका वस्तु,

सफाईकी चीज। खड़गादि परिष्कार करनेवाले इटका-छण्डकी शोपनी कहते हैं।

शोपय (सं० पु०) १ शिरोभूषण, शृङ्ग, शींग। (सायण)

शोपशी (सं० स्त्री०) सुन्दर केशयुक्त, सु-दर्शिता, जो बालोंको बनाये-धुनाये हो।

शोपोसम (सं० पु० = Opossum) पशुविशेष, एक चौपाया। यह उत्तर अमेरिकाके संयुक्तराज्य, कालि-फोर्निया, टेक्सास और दक्षिण अमेरिकामें मिलता है। इसमें अन्य पशुके पक्ष पातकांपर टूट पड़नेका विशेषत्व विद्यमान है। यह कई प्रकारका होता है। दांत और घंगुठे घनीछे देख पड़ते हैं। कोई छूट जूझा छोटा और कोई बिलो जैसा बड़ा रहता है। स्त्री जाति वसन्त ऋतुमें कृष्य मोलह बच्चेतक उत्पन्न करती है। चौदह या सत्रह दिनमें बच्चे छोड़-यार हो जाते हैं। दक्षिण अमेरिकामें बच्चे मांकी पीठपर चढ़े और उसकी पूंछसे अपनी पूंछ कचे रहते हैं।

शोक (सं० ध्य०) शरी, हाथ, बाप दे बाप।  
शोदरी (हिं० स्त्री०) सुद्र गृह, छोटा, मकान, शोपड़ी।

शोम् (सं० ध्य०) अवति रक्षतीति; पय-मन् टिनोपः उट्च। अवतिनोपश्च। उच् १।१।३। श्वरविद्यादि। वा ४।३।१०। प्रणय। योगसूत्रकारने लिखा है—

“तस्य वाचकः प्रथमः।” (१।१०)

ईश्वरका वाचक प्रथम उद्हरता चर्यात् ॐ कहनेसे ईश्वर समझ पड़ता है।

शव देखना चाहिये—किम शब्दके व्याकरणसे ही ईश्वरका स्वीक्षण और ईश्वरकी महिमाका प्रकाशन होता, श्रुति तथा स्मृतिमें उद्यो ॐ गण्डका किम प्रकार भाव पाया जाता है।

युक्तयजुर्वेदकी माध्यन्दिन-शोषामें सर्वप्रथम ‘प्रणय’ शब्दका उल्लेख मिलता है—

“प्रचरेः शोषायां वदन्ववता शोमा शोपयति।” (१।१२१)

“शोकविधिः।” (३।११)

फिर छण्डयजुः प्रभृति शास्त्राके संहिता-भागमें ॐ

अथवा प्रथम शब्दको उल्लेख है। इससे समझ पड़ता—  
वेदकी संहितां अर्थात् प्राचीनतम भागके साथ साथ  
भोम्का प्राविर्भाव हुआ है। उसी मन्त्रांतोत कालसे  
ऋषियोंने षोडशरत्न प्रचार करनेको उद्योग लगाया।  
ऋग्वेदके ऐतरेय ब्राह्मणमें लिखा है—“भोमिन् यः  
प्रतिर एव तथेति वाचाया भोमिति नै देवं तथेति साधुचमम्।” (५१८)

सकल वेदोंको प्रायः सकल ही उपनिषदोंमें भोम्  
पर कुछ न कुछ लिखा और समके पाठसे कई प्रकार  
भोम्का गूढ़ार्थ प्रतिपादित हुआ है। यथा—

१म—संतु। अथर्ववेदकी संहितामें भोम् ‘संतु’  
जैसा निर्दिष्ट है। (१।१८, ५४) २थ—मन। (कण्ठोप)  
३थ—काय। (हृदयोप) ४थ—रथं। (मैत्रेय ५१६)  
५म—उद्युम्। (मैत्रेय २१८) ६थ—उद्योय। (हृदयोप ११२)  
७म—इति। (हृदयोप ७१) ८म—भूमिन् ९म—तेजः।

“मैत्रेय प्रथमोऽपराधमासीत्। तत्रैकोऽनेनैवोभित्त्वं तदनुपति।”  
(मैत्रेय ५१६) १०—ज्योतिः। “श्रीचण्डोम्, ज्योतिः प्रकाशना-

ज्योतिः। प्रकाशप्रदीपसारमण्यो भोमिन्द्रो विजयी विभक्त्युपेक्षो  
मरतोन्मेषं छाह।” (मैत्रेय ५१६) ११—वाक्। १२—शब्द।

(हृदयोप ५१६) १३—रस। (मैत्रेय ५१६) १४—जल।

“श्री ज्योतिरलोचनं ब्रह्मसूत्रं च सतीम्।” (मैत्रेय ५१६)

१५—मिथुन। (हृदयोप ११६) १६—क्षेत्र। (योगशास्त्र)

१७—युष्मत्। “कोट्यो युष्मत्।” (शाखाधिकोप ५१६) १८—सर्व।

“भोमिति ब्रह्म। भोमितीदं सर्वम्।” (मैत्रेय ५१६)

ऊपरों अर्थोंसे स्पष्ट समझ पड़ता, कि वही  
विश्वात्मा है।

१९—आरम्भ। २०—स्वीकारवाक्य। २१—पद-  
मति। २२—अप्राप्ति। २३—अस्वीकार।

ब्रह्मकी महिमा प्रकाश करनेकी ‘भोम्’ शब्द  
नाना अर्थोंमें व्यवहृत हुआ है। भिन्न भिन्न उप-  
निषदमें इस विषयका विस्तार प्रमाण मिलता है।

“भोमिन् तदपरतुद्रोयमुपेक्षोति।

भोमिति सु द्रावति सद्योपवाच्यामम्।” (हृदयोप ५१६)

“भोमिन् तदपरतुद्रोयः तथा एतन्निष्ठं भवितुं शक्यः साम वराक-  
श्च प्रापयत् च साम च।” (हृदयोप ५१६)

अक्षरस्वरूप उद्गोप ‘ऊ’की उपासना करना  
चाहिये। क्योंकि ‘ऊ’ अक्षरसे ही आरम्भ कर साम

प्रवृत्ति गये जाती है। इसीसे षोडश हो उद्गोप  
है। षोडशकी व्याख्या करना कठिन है। (५१६)

वाक्य ही ऋक्, प्राण ही साम और ‘ऊ’ अक्षर ही  
उद्गोप है। वाक् एवं प्राण ऋक् तथा सामका कारण  
होनेसे ऋक् और साम शब्द वाक्य मिथुन है। (५१६)

“तथा यद्यपि भोमिन् तदपरतुद्रोयः कथ्यते यदा नै निप नी  
सामाख्येय आपयती है तावन्मोक्ष कामम्।” “आपयिताऽने कामानां  
भवति य एतदेव विज्ञानचतुष्टयमुच्यते।” (हृदयोप ५१६)

जैसे स्वरूपके परस्पर मिलनेसे कामवृत्ति उत्पन्न  
होती, वैसे ही जब वाक्यरूप स्त्री और प्राण-  
रूप पुंस्यका मिथुन अर्थात् मिलन गठता, तब  
उनकी परस्पर काम मिलता है। (५१६) जो  
विद्वान् व्यक्ति इस मतको देख उद्गोप षोडशकी  
उपासना करता, वह जब जो चाहता, वही फल पा  
जाता है। (५१६)

तत्सिरीय उपनिषदमें लिखा है—

“भोमिति ब्रह्म। भोमितीदं सर्वम्। भोमिन् तदनुपतिं च वा  
पयो वाक्येना आपयति। भोमिति ज्ञानाणि वायति श्री भोमिति  
यस्यापि अर्थः। भोमिन् तदनुपतिं प्रतिगच्छति। भोमिति ब्रह्म  
प्रसीति। भोमिन् तदनुपतिं प्रतिगच्छति। भोमिति प्राणश्च प्रकाशश्च।  
महोपायः भोमिति ब्रह्म को प्राप्ति।” (५१६)

षोडश ही ब्रह्म है। इस संसारमें सकल ही  
षोडश है। सकल कार्यांकी पाठिमें षोडश प्रयोग  
करना चाहिये। कोई वैदिक विषय सुनानेमें प्रथम  
ही षोडश उच्चारण करना पड़ता। षोडश प्रयोग  
पूर्वक सामगान किया जाता है। गात्र पदनेमें  
प्रथम ‘ऊ’ गो वाक्य बोलते हैं। अथर्वको मन्त्र  
पदने समय पहले ‘ऊ’ उच्चारण कर लेना चाहिये।  
ब्रह्म कमरारम्भसे पूर्व ‘ऊ’ शब्द बोलना पड़ता है।  
‘ऊ’ शब्द उच्चारण कर अग्निहोत्र याग करते हैं।  
षोडश उच्चारणपूर्वक वेदाध्ययन करनेसे वैदिक्या  
और ब्रह्मविद्या दोनों मिलती हैं।

“परब्रह्म ब्रह्म यदोडशकारिदानीदेवयतने नैवतत्त्वमिति। १।  
य यद्येकमवर्तिनायोत स तेनैव संवेदितम् अनेन जगत्सामिदमपदं।  
तथैव अनुपत्तिस्तदनुपत्तिम्। य तम तपसा ब्रह्मपदं च ग्रहणा समदो नदि-  
मानं मनुष्यमिति। २। यद्येव विनाशं नमसि सत्यं चोदय रश्चं यन्मि-  
द्वोयते। योम योमं च योमतीके विदुः किमुप्यु पुनरावर्ते। ३।

मः पुनरेतन् विमर्शयेद्वीक्ष्यते तौ वाचस्पतिः यः पुनश्चमन्त्रिणां योतिः स तेजो विष्णुः स पृथः । यथा पादोदरस्य मितुं यति एवं च ते स पायसा विनिर्मुक्तः स सामन्त्रिकोऽथ ब्रह्मलोकः स एतस्माच्चैव यन्मातुं पराजयं पुरिषां पुनश्चमन्त्रे नदीतो शोको भवति । ३ । विधौ माता मुनिमन्त्रः प्रोक्ता चमोदयता चमविमुक्तः । कियत्तु वाचाभ्यामनमस्यमायुः सम्यक् प्रवृत्ता न भवेत्तः । ४ । अत्र विरते यजुर्मिरत्नरिषः स सातमियंस्तु खयौ वेदयन् । तमोदरं भायतने भावेति विद्वान् यत्तु ह्यस्यमात्रमनमः सतमप्रयं परवेति । ५ । ( प्रदीपनितम् ३ प्रथम )

चोद्धार ही पर और अपर ब्रह्म है । विद्वान् इस चोद्धार ( चोद्धारकी उपासना ) द्वारा पर और अपर ब्रह्मकी प्राप्ति होती है । २ । जो व्यक्ति एकमात्रा-विशिष्ट अकारकी उपासना करता, वह पति सत्त्व ही पृथिवी पर जन्म पाता है । चोद्धारकी प्रथम मात्रा ऋग्वेदस्वरूप है । प्रथम मात्रा ही उपासककी मनुष्य-लोक पहुँचती है । ( प्रथम मात्राकी उपासना करनेसे मनुष्यलोक मिलता है । ) इस मनुष्यलोकमें वह उपासक ब्रह्मचर्य एवं यज्ञाभ्यास ही नामा-विध मन्त्रिमा अनुभव करता है । ३ । जो व्यक्ति द्विमात्रा विशिष्ट चोद्धारकी उपासना करेगा, वह यजुर्वेदस्वरूप द्विमात्रा द्वारा अन्तरिक्ष लोक पहुँच-वेगा ; फिर तिस्रोमन्त्रमें नामाविध विभूति अनु-भव कर इहलोककी चलेगा । ४ । जो व्यक्ति त्रिमात्राविशिष्ट चोद्धार द्वारा उस परमपुरुषकी ध्यान करता, वह सूर्यरूप तेजःसम्पन्न बनता है । जैसे सूर्य प्राचीन चर्म छोड़ कटसे छूटता, वैसे ही उक्त उपासक भी सामरूप चोद्धारसे ब्रह्मलोक पहुँचता और जीवसमष्टिरूप हिरण्यगर्भसे उत्-पन्न सर्व शरीरानुप्रविष्ट परब्रह्मकी देख सकता है । उसी चोद्धारकी भूतिमयी तीन मात्रा—अकार, उकार और मकार है । वह तीनों आत्माके ध्यानकी क्रियामें लगा करती है । उक्त तीनों मात्राका परस्पर सम्बन्ध विद्यमान है । उनका प्रयोग एकही विषयमें होता है । किसी क्रियामें उनका उपयोग नहीं पड़ता, किन्तु समुदाय वाद्य, आभ्यन्तर और मध्यविध क्रियामें प्रयोग चलता है । जो व्यक्ति चोद्धारका विभाग विशेषरूपसे जानता, वह कभी विचलित नहीं होता । ५ । त्रानो ऋक्स्वरूप प्रथम मात्राद्वारा इहलोक,

यजुःस्वरूप द्वितीय मात्रा द्वारा अन्तरिक्ष एवं सामरूप तृतीय मात्रा द्वारा ब्रह्मलोक और चोद्धाररूप साधन द्वारा जरा-मृत्युविहीन आन्त परब्रह्मपद पाते हैं । ७ ।

“ओमिदं तदपरमिदं सर्वं तन्मोपस्थात्मानं भूतं मन्त्रदमिदमिति सर्वचोद्धार एव । सहास्रसिद्धान्तोऽसौ तद्विद्वोद्धार एव ।” “सर्वं चोद्धार ब्रह्मस्य नामा ब्रह्म ओद्धारमा चतुर्धा ।” ( भाग्युक्तोपनिषत् )

यह समुदाय ही ब्रह्म है । हमारा जो जीव आत्मा है, वह भी ब्रह्म है । उसी आत्माका अभिन्न ब्रह्म चार चरममें विभक्त है ।

जैसे रत्न प्रसूति संपत्ति विवर्त और अधितीय ब्रह्म विग्रहप्रपञ्चका अधिष्ठान ठहरता, वैसे ही चोद्धार समु-दाय वाक्प्रपञ्चका एकमात्र आधार पड़ता है । ( अर्थात् इस चोद्धारमें ही समुदाय वाक्य परिकल्पित है ) वह चोद्धार ब्रह्मस्वरूप है, क्योंकि चोद्धार ब्रह्मका अभि-धायक है । ( अभिधायक शब्द अभिधेयसे भिन्न नहीं ) चोद्धार विवर्त शब्दाभिधेय प्राण और वृत्तादि सत्त्व ही आत्माका धर्म है । किन्तु उक्त प्राणादि अभिधायक वाक्यसे भिन्न नहीं । इसीसे लिखा है—

“आचारवाचं विचारो नामचैवम् ।”

अर्थात् वाक्य द्वारा आरब्ध वस्तुमात्र नाममात्र है । सुतरां अक्षरात्मक चोद्धार परिदृश्यमान समुदायसे अभिन्न है । “चोद्धारकी समुदाय” मान उपासना करनेसे ब्रह्मप्राप्ति होती है । अर्थात् चोद्धारकी उपासनावि-जय चित्त निर्मल रहेगा, तभी ब्रह्म स्वरूपसे समझ पड़ेगा । फिर ब्रह्मपद मिलनेमें विलम्ब नहीं होता । यह चोद्धार ब्रह्मज्ञानकी प्राप्तिका उपाय होनेसे ब्रह्मका निकटवर्ती है । अतः, भविष्यत् और वर्तमान—हमारा सब ज्ञानमय चोद्धार ही है ।

“ओद्धारमात्राश्च चरमोद्धारोऽपि नामा” पादमात्राभावात् नामा चकार उच्चारो भवति इति । १ । आभिव्यक्त्याने चोद्धारः । प्रथमा मात्रा—र-दिनमात्रायांति ह ने चोद्धार नामान्द्रिच भवति यः एवं वेद १८ । अत्र आन-कोजम् उच्चारो द्वितीया मातृमृच्छादुपमत्तारीतुक् भवति ह ने आनमन्त्रि-समाप्त्य भवति त्रयया ब्रह्मविभुद्धि भवति स एवं वेद २० । सुप्रसन्नः प्रादो भवति सुप्रोक्ता मातृमन्त्रिभूतिनेति विनोति ह ने इदं सर्वमतीति-भ-भवति स एवं वेद २१ । अमात्रचतुर्दशपर्यायः प्रदीपनितः मिनेरेव एवोद्धार आचार्य भ-विष्यमात्रायांति स एवं वेद २२ ।

वह आत्मा अक्षरकी अधिष्ठार कर अवस्थित है ।

फिर आत्माके पादस्वरूप अकार, उकार और मकार-को अधिकारकर अचर ( ओङ्कार ) सर्वदा अवस्थित है। आत्माका पाद ही ओङ्कारकी मात्रा है। ८। जिस स्थानसे प्राणो जागरित होते, उसी स्थानको वैश्वानर पदवाच्य अकार बोलते हैं। यह अकार ही ओङ्कारकी प्रथम मात्रा है। जो व्यक्ति व्यापित एवं आदिमत्त्व द्वारा अकार तथा वैश्वानरकी साम्य उपासना उठाता, वह समस्त अमोघ फल पाता और समुदायका आदि बन जाता है। ९। स्वप्नस्थान तैजस ही ओङ्कारकी द्वितीय मात्रा उकार है। जो व्यक्ति इसको उक्त एवं प्राप्त विश्वका मध्यस्थ समस्त तैजस हाटि द्वारा उपासना करता, उसका ज्ञान बढ़ने लगता, शुद्ध मित्र उभय उसके पक्षमें, समान पड़ता और उसके वंशमें कोई ब्रह्मज्ञानविहीन नहीं रहता। १०। प्राज्ञ नामक सुषुप्त स्थान ही तृतीय मात्रा मकार है। मिति एवं अपीति द्वारा मकार तथा प्राज्ञको साम्य उपासना करनेसे अधिकारी जगत्की प्रकृत अवस्था देख पाता और ब्रह्मस्वरूपमें लीन हो जाता है। ११। जो तुरीय ब्रह्म है, वह किसी व्यवहारका विषय नहीं। वह प्रपञ्चविहीन और सङ्कलमय है। वही 'एकमेवाद्वितीय' महावाक्यका लक्ष्य और ओङ्कार-स्वरूप है। वह समुदायमें जीवात्माके भावसे विराज रहा है। जो उसका प्रकृत तत्त्व समझ सकता, वही स्त्रीय जीवात्मा द्वारा परमात्माके साथ मिलता है। १२।

अथर्वशिरोके मतमें—

“इदि तन्मसि यो निलः तिक्वो माताः परणु सः।”

जो हृदयमें नित्य रहते, उन्हें आपकी प्रथम 'अ-उ-म्' तीन मात्रा कहते हैं। उन्हीं इदिस्थित पुनवका उत्तरभाग ओङ्कार है। ओङ्कार ही सर्वव्यापी, अनन्त, तारक, शुद्ध, सूक्ष्म, विद्युत् और ब्रह्म है। जो ब्रह्म है, वह एक है। वही रुद्र, वही ईशान और वही महेश्वर है।

अनन्तर अथर्वशिरो निर्देश करती है—

“अथ कणादुवाते ओङ्कारः यन्मादुवाते माथ एव माथान् जन्मसु-  
कामयति तन्मादुवाते ओङ्कारः। अथ कणादुवाते प्रथमः यन्मादुवाते माथ

एव अथुयुःसामाधर्वाविरवः ब्रह्म आदित्यः प्रथमयति मानयति च  
तन्मादुवाते प्रथमः।”

अथर्वशिरोपनिषद्में ओङ्कारका स्वरूप, विशेष वर्णित है।—

“ओमित्येतदपरमादौ प्रयुक्तं ध्यानं ध्यायितव्यम्। ओमित्येतदपरस्य  
पादधरा देवधरा देवधराः। अतुपादेतदपरं परं ब्रह्म पूर्णं  
माता शुद्धिमाधारः स अमृतिं सर्वं देव ब्रह्म वसवो मायवो मार्गपथः।  
द्वितीयान्तरिचतुकारः स यनुमिषं जुर्वदो विष्णुपदासिष्टुप, दक्षिणाभिः।  
तृतीयो ह्रींकार स सामभिः वामवेदी विष्णुपदासिष्टुप, दक्षिणाभिः।  
चारुणादेत्य अतुर्वर्णमाता सा तुममकारः कोऽर्द्धहेमन्त्ययवः स वृत्त-  
कोऽर्द्धमन्त्ये विराट्के क्षितिः।” इत्यादि।

प्रथमतः 'ओ' अक्षर लगा ध्यान करना चाहिये। ओं अक्षरके पाद चार हैं। चतुष्पादविशिष्ट पद अक्षर ही परब्रह्म है। इसकी अकारस्वरूप प्रथम मात्रा पृथिवी है। ऋक् मन्त्रद्वारा उपलक्षित होनेसे इसे ऋग्वेद कहते हैं। इसके देवता ब्रह्मा, वसु, मायवी और गार्हपत्य हैं। द्वितीय पाद उकार अन्तरिक्ष है। वह यजुर्मन्त्र द्वारा उपलक्षित होनेसे यजुर्वेद कहाता है। उसके देवता विष्णु, रुद्र, त्रिष्टुप् और दक्षिणाग्नि हैं। तृतीय पाद—दो मकार हैं। साममन्त्र द्वारा उपलक्षित होनेसे सामवेद नाम पड़ता है। देवता विष्णु एवं आदित्य हैं। जगती षावहनीय है। ओङ्कारके अन्तमें जो अर्द्धमात्रा रहती, वही सुप्त अकार है। इसका विराम कोप हो जानेसे अष्ट समस्त नहीं पड़ता। आयर्वण मन्त्र द्वारा संयोजित होनेसे इसको अथर्ववेद कहते हैं। इसके देवता संवर्त्तक अग्नि, वायु विराट् और एक ऋषि नामक अग्नि हैं।

ओङ्कारके शिरोभागकी मात्रा अतिरमणोय, दीप्तिमान् और स्वरकाय है। ओङ्कारकी प्रथम मात्रा ( अकार ) रक्तवर्ण है। इसमें सर्वदा ब्रह्मा अवस्थान करते हैं। ब्रह्मा ही इसके अधिष्ठात्र-देवता भी हैं। द्वितीय मात्रा ( उकार ) शङ्खवर्ण है। इसमें रुद्र रहते हैं। रुद्र ही इसके अधिष्ठात्र-देवता भी हैं। तृतीय मात्रा ( मकार ) कृष्णवर्ण है। इसमें विष्णु अवस्थान करते हैं। इसके अधिष्ठाता भी विष्णु ही हैं। चतुर्थ मात्रा ( लृट् )

मय है। इसमें विद्युत् विराजमान है। ईश्वर इसका अधिष्ठाता-देवता है। इस ओझारके चार पद और चार गुण हैं। नादसंज्ञक सुप्त भकाररूप अर्धमात्रा इस ओझारकी चतुर्थ मात्रा है। इसकी सृज्य मात्रा कश्चते हैं। स्थूलमात्रा कृष्ण, दीर्घ तथा पुन भेटसे तीन प्रकारकी होती है। 'छं' एकमात्रा विगिट होनेसे कृष्ण, द्विमात्राविगिट ( चों चों ) होनेसे दीर्घ और त्रिमात्रा ( चों चों चों ) विगिट होनेसे पुन कश्चता है। चतुष्पदरूप यान्तभावापन्न स्वप्रकाश चतुर्थमात्रा पुन प्रयोगमें अभिव्यक्त पड़ती, वह किसी शब्द द्वारा समझपर नहीं चढ़ती। ओझार एकवार मात्र उच्चारित होनेसे मनके साथ सकल प्राण-वायुकी पट्टचक्रमेदपूर्वक सपुष्पा नाड़ी द्वारा ऊर्ध्व देग ( शिरोदेग ) में उतक्रामित करता है। इसीसे इसको ओझार कहते हैं।

सकलप्राणवायुकी मन्त्रता और कुम्भकादि द्वारा गतिरोध करनेसे ओझारकी 'प्रणय' कहते हैं। ओझार चार भागमें अवस्थित होनेसे चार देवता ( ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु और ईश्वर ) रखता और चार वेद ( ऋक्, यजुः, साम और अथर्व ) का उत्पत्तिस्थान ठहरता है। पकार, लकार प्रकृति ओझारके जो चार पाद होते, ध्यानके समय उन्हें छोड़ना न चाहिये। किन्तु पकारादि विगिट ओझारकी ही ध्यान करना उचित है। वेंसा होनेपर पकारादिके ( अधिष्ठाता ) देवता समुदाय दुःख और भयसे उपासकको अवश्य ही त्राण करेंगे। त्राणकारी होनेसे हो स्वयं विष्णुने ओझार और उसकी मात्राको ध्यान किया था। इसीसे वह पशुरोंकी ज्ञात सक्ती। इन्द्रिय संयत रख ओझारकी ध्यान करनेसे हो पितामह ब्रह्मा ( सहज ) धन पर्याप्त ब्रह्मा जगत्सृष्टि करनेमें समर्थ हुये थे।

योंकि ईश्वर ही समुदाय सृष्टिका कर्त्ता है। इसीसे विष्णुने ओझारात्मक नादात्म ग्रास्य ब्रह्ममें मन लगा उसी ओझारात्मक जगदीश्वरकी ध्यान किया। ओझारात्मक परमेश्वरने ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र एवं पञ्चभूतके साथ समुदाय इन्द्रियकी बनाया था। वह सकल कारणका सृष्टिकर्त्ता और एकमात्र महत्समय

एवं प्रमुखतिसम्पन्न है। यही सकल जीवोंकी मध्य एक भावसे अवस्थान करता है। फिर उसीने हम अपरिच्छिन्न आकाशकी बनाया है। उक्त नादात्म प्रणयके ध्यान कालपर समझना यहैगा—इसमें ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और शिव पांचो देवता विद्यमान हैं। अधिक ग्रन्थ करनेसे अधिक फलप्राप्तिकी भांति पञ्चावयव ओझारकी स्थिर चित्तसे अव्यक्तान भी ध्यान करनेसे ज्ञात भवत यज्ञका पुण्य मिलता है। समुदाय ज्ञान, योग और ध्यानमें यह महत्समय ओझार ही एकमात्र अवलम्बन है।

जितने वैदिक याग-यज्ञ कहाते, उन सबकी छोड़, ओझार अध्ययन करने पर द्विज नियम ही गर्भवाससे छूट जाते हैं, फिर गर्भवास-जनित कष्ट नहीं उठते।

“आत्मानमरवि” ज्ञाप्य प्रवरपासराचिम् ।

ध्याननिर्ममवाभ्यासादेवं पदमिन्द्रियम् ॥” ( ब्रह्मोपनिषद् )

आत्माको परवि ( निर्मम्य काष्ठ ) और प्रणयकी उत्तरारवि बना पुनः पुनः ध्यानरूप निर्मम्यन द्वारा गूढवस्तुकी भांति परमात्माको देखना चाहिये।

पहले ही कहा जा चुका—ओझार ही ब्रह्म पदंवासनका एक मात्र उपाय है। इसीसे उपनिषद्में ओझारका स्वरूप विशेष वर्णित है—

“योनिर्ये काचरे ब्रह्म यदुक्तं ब्रह्मविदिभिः ।

अतोरे तस्य वषादि ज्ञात्वा” काचरे” उच्यते तथा ॥

तस्य दैशिकस्यः शीतोऽनीका वेदात्मयोग्यः ।

तिथौ मन्वाद्यं मासाश्च मासवत्स मितस्य च ।

अनुवेदो मासं पण्यं श्रुतिर्वा ब्रह्म रश्च ॥

अकारात्प्येतोरेण व्याख्याते ब्रह्मविदिभिः ॥

अशुभं दोषान्निचयं दृष्ट्वा चित्तसर्वं च ॥

विषय भवशान्तिं च उपायः परितोषितः ॥

सन्निवेशावा शेषात्पश्यतीत्यर्थः च ॥

ईश्वरः परमा देवी मकारः परितोषितः ॥

सूक्ष्मं मन्त्रमनिकायापकारः महानमयः ।

उकारात्पदमहात्मस्य नमो व्यथितः ॥

मकारात्पिपदः को विष्णो विष्णुनीलः ।

निष्ठा मातासहा मे वा योमश्च योनिनेतवः ॥

• शिव की काष्ठोंकी परात्पर मध्य करनेसे यदि उपजता, उनमें योनिस्थिता परवि और उत्तरादिका चतुर्गुण नाम पड़ता है।

मित्राभा दीपचन्द्राया शक्तिर परिचरते ।

अथ माता तु सा ज्ञेया प्रथमस्त्रीपरिमिता ॥

सांक्षय्यद्विनादनु यथा नोवति शान्तये ।

श्रीदामो तथा योग्यः शान्तये सर्वनिष्ठया ॥” (ब्रह्मविद्योपनिषत्)

ब्रह्मवादी जिस 'ॐ' अक्षरको ब्रह्म मताते, उसका शरीर, स्थान, काल और लय सुनाते हैं। इस मङ्गल-मय ओङ्कारके तीन देवता, तीन लोक, तीन वेद, तीन अग्नि और साठे तीन माता हैं। ऋग्वेद, गार्ह-पत्याग्नि, इष्टिवी और ब्रह्माको ब्रह्मवादियोंने प्रकारका शरीर कहा है। यजुर्वेद, अन्तरिक्ष, दक्षिणाग्नि और भगवान् विष्णु उकारका शरीर हैं। सामवेद, स्वर्ग, पादवनेय, और ईश्वर मकारका शरीर है। सूर्यमण्डल-सदृश दीप्तिमान् अकार शब्दके मध्य और चन्द्रसदृश दीप्तिमान् उकार उक्त अकारके मध्य विराजता है। भूभरहित अर्थात् पतियय दीप्तिगाली, अग्निसदृश एवं विद्युद्गम जेसा, शोभमान मकार है। उक्त ओङ्कारकी तीनों माता क्रमसे चन्द्र, सूर्य और अग्निके तुल्य तेजःसम्पन्न हैं। इससे दीप-सदृश शिखा और दीप्ति कमौ विभुक्त नहीं होती। ओङ्कारके उपरि भागमें रहनेवालीको अर्धमात्रा कहते हैं। कांक्ष और चण्डाके शब्दकी तरह ओङ्कारके उच्चारणसे भी चित्तमें शान्ति आती है। इसलिये समुदाय इष्टफल पानिको इच्छा रखनेवालेको सर्वदा ओङ्कार उच्चारण करना चाहिये।”

लिङ्गपुराणमें ओङ्कारको उत्पत्ति इस प्रकार वर्णित है—

‘किसो समय भगवान् विष्णु प्रलयपयोधिके मध्य शेषकी प्रयापन सोये थे। ब्रह्माने उन्हें निकट जाकर जगा दिया। विष्णुने उठकर हंसते हंसते कहा— ‘वत्स ब्रह्मन् ! तुम्हारा कुशल तो है ? वत्स ! तुम्हारा मङ्गल तो है ?’ ब्रह्माने ऐसा सम्बोधन मन ही मन कुछ मुरा समझ विष्णुसे भर्त्सनापूर्वक पूछा था— ‘बड़ा भावयै है ! मैं सृष्टि, स्थिति और प्रलयका कर्ता हूँ। आप किम कारण मुझे, वत्स-वत्स कह कर पुकारते हो ?’ इसी प्रकार अनेक वाक्वितण्डा होते होते अन्तकी हाथापाही की नीवत पा गयी।

घोरतर युद्ध चल हो रहा था, कि दोनोंके सम्मुख एक बहुत ज्योतिर्मय लिङ्ग आविर्भूत हुआ। उस समय दोनों युद्ध छोड़ अनुसन्धान करने लगे—यह ज्योतिर्मय लिङ्ग कहाँसे आया है। विष्णु बराहमूर्ति धारण कर अधोगामी होते भी उस ज्योतिर्लिङ्गका मूल देख न सके थे। दधर ब्रह्मा हंसका रूप बना महाविगसे ऊपरको उड़, किन्तु लिङ्गके अन्ततक न पहुँचे। गैँछे दोनों आन्त और क्कान्त हो ज्योतिर्लिङ्गकी प्रणाम करते खड़े रह गये। दोनों ही साचने लगे—यह क्या है, यह क्या है। दूसरे क्षण ही लिङ्गके मध्यसे शब्द निकला था। दोनोंने भी भाँ भी उच्चारित सुन सार सुना। ब्रह्मा और विष्णु साचते साचते खड़े हो गये थे—यह महाशब्द क्या है, यह महाशब्द क्या है ! फिर दोनोंने देखा—लिङ्गके दक्षिण आद्यवर्ण अकार, उत्तर उकार, मध्य मकार और ऊपर नादविन्दु है। उसके ऊपर समुदायका समवायरूप ओङ्कार शोभित है। दक्षिण दिशाका अकार सूर्यमण्डल, उत्तरस्थित उकार अग्नि और मध्यवर्ती मकार चन्द्रमण्डल जेसा तेजोमय है। ऊपर देख पड़नेवाला यह स्फटिकको भांति तेजःसम्पन्न है। यह तृतीय ज्ञानिसे विद्युत्वातीत, अमृतस्वरूप, निष्कल, निरुदर, इन्द्रहीन, केवल, शून्य, बाह्याभ्यन्तररहित, भीतर और बाहरका स्वरूप, आदि, मध्य एवं अन्तरहित तथा पानन्दकारण है। अकार, उकार एवं मकार तीन मात्राके तथा नाद अर्धमात्राके रूपसे अवस्थान करता है। यहो शब्द ब्रह्म है। ऋक्, यजुः एवं साम तीनों वेद अकार, उकार तथा मकार तीनों मात्राके रूपसे अवस्थान करते हैं। यहो शब्दब्रह्म विज्ञात्मा है। इसी समयसे अतीन्द्रिय प्रकाशक वेद आविर्भूत हुये। इसी वेदसे निखिल जगत्का मङ्गल बनता है। विष्णु, इसी वेदवाक्य द्वारा परमेश्वरको समझ सके थे। फिर यजुर्वेदने कहा—भगवान् रुद्र पवित्र्य हैं। एकाक्षर प्रणव उन्हींका वाचक है। वह एकाक्षर-वाक्य रुद्र ही परमकारण, अमृतस्वरूप, ऋतुस्वरूप, सत्यस्वरूप, आनन्दस्वरूप, और परात्पर परम ब्रह्म-स्वरूप है। शब्द-ब्रह्मरूप एकाक्षरसे अकार-स्वरूप

ब्रह्मा उत्पन्न हुये है। इसी प्रकारसे उकार-स्वरूप विष्णु और मकारस्वरूप रुद्र निकले हैं। इसके मध्य प्रकारस्वरूप ब्रह्मा सृष्टिकर्ता, उकाररूप विष्णु पालन-कर्ता और मकाररूप इन दोनोंके प्रति अनुग्रह-कारी है। इसमें प्रकाररूप ब्रह्मा बीजस्वरूप, उकाररूप विष्णु योनिस्वरूप और मकाररूप रुद्र निपेक्षकर्ता है। बीज, योनि, निपेक्ष और शब्द-ब्रह्मरूप चारो प्रणयामक हैं। शब्द ब्रह्मरूप निपेक्ष-कर्ता मईश्वरके इच्छानुसार अपनेको सृष्ट कर अपनेस्थान करती है। इसी शब्द ब्रह्मस्वरूप ईश्वरके लिङ्गमें प्रकारस्वरूप बीजकी उत्पत्ति हुयी थी। यह बीज फिर उकाररूप योनिमें पड़ बढने लगा। पीछे उसमें सोनेका एक अण्डा निकला था। सङ्ख वर्ष बीतने पर मईश्वरकी इच्छाके अनुसार दिखण्ड होती उससे हिरण्यगर्भ उत्पन्न हुये। उसके ऊर्ध्व-भागसे स्वर्ग और अधोभागसे पाताल निकला। प्रकार रूप जो ब्रह्मा उपजे, यही सर्वलोकिके सृष्टि-कर्ता है। उर्ध्वमें सत्त्व, रजः और तमः गुणत्रयके भेदसे तीन मूर्ति धारण की है। (विष्णु० ५०५०)

भगवान् मनुके मतसे—

“वकाराद्यादुच्चारणं लब्धत्वा प्रजापतिः।

वैदमवान् निरुद्धन् मृत्युं वसतिमि जिह्वा” (१०६)

वकार, उकार एवं मकार और मूः, सुवः, खः व्यावृत्तित्रयकी प्रजापति ब्रह्मने यथाक्रम तीनों वेदसे उच्चार किया था।

अक्षर निघण्टुमें लिखा है—

“वीहारी वृत्तलारी विन्दुः शक्तिरिदं यता

प्रकृती लक्ष्मणं पश्येद्यो भुवः दिवः ॥

ललाटं परमं बीजं मूकमाद्यं तारकः।

त्रिनादि व्यापकी व्यञ्जः परं ज्योतिषं संविदः ॥”

बीहार वृत्तल, तारक, विन्दु, शक्ति, त्रिदेवता, प्रपञ्च, मन्त्रगर्भ, पश्येद्यो, भुवः, दिवः, चादिमन्त्र, परमबीज, मूल, व्यापतारक, त्रिनादिव्यापक, व्यञ्ज, ज्योति, ज्योतिः और संविद है।

यह ॐ शब्द मन्त्रविशेष है। यह मन्त्र भगवान्की अति प्रिय है।

“ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धियो रजः।

धियो यो नो प्रचोदयात् ॥” (प्रा० १)

मन्त्रादीनि य एतन्मन्त्रं यद्विदुः प्रजापतिः।

प्रवर्तते विधानात्। यतः तं ब्रह्मविद्वान् ॥

तद्विद्वान्मन्त्रात् यत्तं यद्विदुः प्रजापतिः।

तद्विद्वान्मन्त्रात् यत्तं यद्विदुः प्रजापतिः ॥

यथा वै यथापत्तिं च सविद्ये तन्मन्त्रं यद्विदुः।

यत्तमे कर्मणं तथा यत्तमे यत्तं यद्विदुः ॥”

(गीता १०५० ११-१२ प्री०)

परमात्मा ब्रह्मके तीन नाम हैं—ॐ, तत् और सत्। इसीसे ब्रह्मवादी षोडशके उच्चारणसे यज्ञ, दाम और तपस्यादि क्रिया संभेदा अनुष्ठान करती है। मोक्षा-काङ्क्षी ‘तत्’ शब्दके उच्चारणसे फलाकाङ्क्षाहित तप, यज्ञ और दानादि कार्यका अनुष्ठान किया करती है। ‘सत्’। ‘सत्’ शब्द साधुभाव बनानेको बोला जाता है। इसके अतिरिक्त यज्ञ, तपस्या और दानादि प्रगस्त कार्यमें भी सत् शब्दका प्रयोग होता है। (ॐ-तत्-सत् त्रिविध ब्रह्मका नाम उच्चारण करनेमें ही सकल कार्य सिद्ध हो सकता है)।

योगशास्त्रके मतसे ॐ मन्त्र जप न करनेसे किम प्रकार योगी निष्ठ हो सकता है। यह मन्त्र जप करनेसे परम साधुगणिक भगवान् भक्तोंके चित्तको एकाग्रतासाधक शक्ति देते हैं। योगसूत्रकारने कहा है—“तत्त्वप्रसादसेवायम्। ततः प्रत्यक्षैव तत्त्वमिदं प्राप्नुयान्मन्त्रात् ॥”

उस प्रणवका जप तथा अर्थ भावना करनेसे ईश्वरतत्त्व देख पड़ता और व्याधि, अकर्मण्यता, संग्रह, अनवधानता, आलस्य, इन्द्रियके विषयकी प्रवृत्तता प्रशुति अन्तराय भगता है।

भगवान् मनुने कहा है—

“मातृकुमारं वृत्तं पादोन्मत्तं पवित्रं देव पतिः।

मातापतेरिति। पूज्यं च योऽक्षरमर्हति ॥” (१०६)

कुक्कुट गुण पुरोभिमुख रख, उनके ऊपर स्रं और दोनों हाथमें कुण्ड से पवित्र होना चाहिये। फिर पञ्चदश क्लृप्तस्वर उच्चारणके उपरान्त समयमें तीन बार प्राणायाम द्वारा गूढ़ होनेपर अधिकारी प्रणवोच्चारणके योग्य बनता है।

किन्तु योगी त्रिस भावने षोडश जप करते, यह

अधिक सहज नहीं। योगी प्रथम केवल अकार लपते हैं। शैतिके अनुसार अभ्यास हो जानेसे पीछे दूसरा अक्षर सञ्चारण करना पड़ता है। ओकारके सञ्चारणकी प्रणाली च २४में देखो।

श्री योगियोंका प्रधान भयलब्धन है—

“श्री योगशिखां प्रवक्ष्यामि सर्वमविदुः श्रीयोगनाम् ।

यदा तु ध्याते मनः नावकथोऽभिजायते ॥१

आसनं पद्मं च ध्या यथावदपि शेषते ।

कृपां प्राप्नुयद्दृष्टि इक्षी पादौ च भङ्गौ ॥२

मनः सर्वत्र संवृत्तं ओङ्कारं तदा चिन्तयेत् ।

ध्याते सततं प्राप्नोति कृत्वा परमैरिदम् ॥३” (योगशिखीपणिपत)

सर्वथैव योगशिखां कहते—मन्त्रके ध्यानकाल मात्रकाल उपस्थित होता है। पद्मासन भववा अन्य कोई अभिलपित आसन भ्रमा और हैस्त, पद, एवं मनःसंयमपूर्वक हृदयमें परमेश्वरको बैठा प्राप्न ओङ्कार चिन्ता किया करती है।

फिर योगशिखामें देखते हैं—

“तयो लोकास्त्रयो वेदास्त्रयः सध्यास्त्रयः सुराः ।

तयोऽष्टौ गुणास्त्रयो स्थिताः सर्वे तयाचरे ॥४

तथासाधुरे प्राप्ते ओङ्कीतेऽप्राप्तं मन्त्रम् ।

तेन सर्वमिदं भागं लब्धं तत् परमं पदम् ॥५

पुष्पमध्ये यथा गन्धः पयोमधोऽपि समिधम् ।

तिलमध्ये यथा तैलं पात्राद्येष्वपि कञ्चनम् ॥६

इतिस्थाने स्थितं पद्मं तत्र भद्रमपीदृशम् ।

लब्धं नाप्यसौविमुक्तस्य मध्ये स्थितं मनः ॥७

अकारे शोचितं दसमुकारेष्वपि भिद्यते ।

मकारे लभते नान्यमप्यत्रानु निषङ्गा ॥८

इहल्लटिक्कट्ठकम् किञ्चित् शूद्रमपीदृशम् ।

ममते योगमुक्तासा पुद्गलीमत्तमपरः ॥९”

तीन लोक, तीन वेद, तीन सम्प्रदाय, तीन देवता, तीन अग्नि और तीन गुण—समस्त ही ‘ओ’के तीन अक्षरमें सन्निवेशित है। जो व्यक्ति यह तीनों अक्षर पाठकर पीछे अर्ध अक्षर पड़ता, उसे परम पद मिलता है। पुष्पके मध्य गन्ध, दुग्धके मध्य घृत, तिलके मध्य तैल और पाषाणके मध्य काश्चनकी भांति हृदयमें अघोसुख लब्धनाल पद्म रहता, जिसमें मन बसता है। अकारके द्वारा शोचित और अकारके द्वारा भिन्न हो पद्म मकारमें शब्द लाभ करता है। अर्धमात्रा निखल

है। ईश्वरतत्पर योगी सूर्यकिरणकी भांति यह स्फटिक तुल्य कोई पदार्थ या जाते हैं।

“श्री अकारो दक्षिणः पञ्च सञ्चारस्ततः कृतः ।

मकारस्तस्य पुच्छं वा अर्धमात्रा गिरस्तथा ॥१

आर्धे वी प्रथमा मात्रा भावयैवा भवानुवा ॥२

मातुमण्डलसदृशा भवेन्मात्रा तयोपरा ।

परमा आर्धमात्रा च सार्धौ तौ विदुः वा ॥३

कृत्वा त्रयानना वापि तासां मात्रा प्रतिष्ठिता ।

एव ओङ्कार बाष्पान्तो चारवाभिर्मनोभूतः ॥४” (मादमिन्दु उपनिषत्)

अकार दक्षिण एवं उकार उत्तर पक्ष, मकार पुच्छ और अर्धमात्रा उसका मस्तक है। प्रथमाकी आर्धेयी, द्वितीयाकी वायव्य, तृतीयाकी मातुमण्डल-समा और अर्धमात्राकी पण्डित वायव्य कहते हैं। उक्त मात्रावांके मध्य कलकयानना मात्रा प्रतिष्ठित है। इसी समुदायका नाम ओङ्कार है। ओङ्कारका बोध चारबाजे होता है।

“भूमिभागे सती रक्षा सर्वदीपविभक्तिः ।

ज्ञाता मनोमयी रक्षा कदा वैराग्य वचनम् ॥१०

पद्मकं ललितं वापि भद्रासनमवापि वा ।

यथा योगमन्त्रं सत्यमुपराभिमुखः स्थितः ॥११

वाक्त्रिपाटुमन्त्रं कदा पिपादेकेन सावतम् ।

आह्वय चारवेदभिः सन्दर्भेनाभिषिक्तयेत् ॥१२

शोभिते वाचरं तत्र शोभिते केन रचयेत् ।

द्विहमन्त्रे च बहुधा कुर्यादात्मनश्च तम् ॥१३” (वसन्तविन्दु-उ०)

सर्वदीपशून्य समतल भूमिभागमें मनोमयी रक्षा विधान कर मण्डल रूप बनाये। अनन्तर पद्मक, स्फुटिक भववा भद्रासन नामक योगासन लगा उत्तर-मुख उपवेशनपूर्वक एक अङ्गुलि द्वारा नासागुटकी आच्छादन कर अपर नामागुटसे वायु आकार्यणपूर्वक अग्नि शब्द चिन्ता करना चाहिये। (उक्तके पीछे) एकाक्षर ब्रह्मस्वरूप श्रीम् शब्दसे रचक निकाम दिव्य-मन्त्रके द्वारा आवाहयि करे।

“सर्वमयात्मिका ज्ञेते रचकपूरकशुभकाः ।

उ एव प्रथमः शीघ्रः प्राचायामय सत्ययः ॥” (श्रीतौ वाचस्पत्यम्)

रचक, पूरक और कुम्भक तीन यणोत्तक होते हैं। फिर उक्त तीनों वर्ण प्रणवात्मक हैं। इसीसे प्राचायाम प्रपूर्वमय रहता है।



घोरना ( हिं० पु० ) फासी, बाड़।

घोरमना ( हिं० क्रि० ) घबरावजन एकड़ना, लटक पड़ना।

घोरमा ( हिं० स्त्री० ) स्मृतिभेट, किसी किसीकी मिनाई। इससे कोरीकी जोड़ाई होती है। पड़से दो चरकीकी टांक पीछे गोठ लगानेकी घोरमा कहते हैं।

घोरवना ( हिं० क्रि० ) स्थानमें दुग्ध उत्तरना, पेट बड़ना, ध्यानेका वल या पड़ना। यह शब्द प्रायः पशुके लिये ही व्यवहृत होता है।

घोरहना, वलना शब्द।

घोराना ( हिं० क्रि० ) चुकना, निवटना।

घोराहना, वलना शब्द।

घोरिया ( हिं० स्त्री० ) १ घोलती। २ छूटोके पामकी लकड़ी।

घोरी ( हिं० स्त्री० ) १ घोलती। २ माता। (प्रत्य०) ३ सस्योधन शब्द। इसे प्रायः माताकी बोलानमें व्यवहार करते हैं।

घोरीता ( हिं० पु० ) पत्त, चुकती।

घोरीती ( हिं० स्त्री० ) घोलती, कपारसे बरसातका पानी निकलनेकी जगह।

घोरी ( हिं० पु० ) एक प्रकारका बांस। यह बहुत बड़ा होता है। उत्पत्तिका स्थान ब्रह्मदेश तथा आसाम है। लम्बाई ४० फीट चौड़ाई घोल गजतक बैठती है। इसे गड़ तथा शकटके निर्माणकार्यमें लगाते हैं।

घोल ( सं० वि० ) पाठ-उद्-कः प्रयोदशदित्वात्। १ पाठ, पाला, गीला। (पुं०) २ मूलविशेष, लमीकंद। इसका संस्कृत-पर्याय शूरप, कन्द, कन्दल घोर वर्गीकृत है। घोल अमृतद्रोणक, हच, कपाय, कण्टकारी, फट्ट, विटग्नी, विगद, रुचिकारक, वर्गी-नामक, सप्त घोर श्रेष्ठगुणनामक होता है। यह वर्गीरोगपर विशेष हितकर घोर समग्र कन्दमाकके मध्य जोड़ समझा जाता है। (शरवचन) दह, रक्त-पित्त घोर कुष्ठरोग रक्षमेंसे घोलभक्ष्य निषिद्ध है। इसे हिन्दीमें लमीकन्द, तामिसल कहव घोर तिलगु

भाषामें सुप्ताकन्द कहते हैं। घोलका पेड़ दोसे चार हाथ तक बढ़ता है। पत्तों में दोसेसे दस-पन्द्रह सेर तक यह वजनमें निकलता है। बगरी लमीकंद लमावतः किनकिना रहता, किन्तु बोया हुआ येसा नहीं उठरता। भारतवर्षमें सर्वत्र ही यह उपजता घोर भोजनके व्यवहारमें लगता है। सिंहल, ब्रह्म, मासाकास प्रभृति स्थानमें भी घोल होता है। (हिं० स्त्री०) ३ लोड, गोद। ४ व्यवधान, पाड़। ५ रक्षा, हिफाजत। ६ जमानत।

घोलन्दाज—यूरोप देशान्तर्गत हासिएण या गैदरलेण्डके अधिवासी। यह हासिएणमें शब्दका प्रभंश है। बंगरीजीमें लच कहते हैं। लच शब्द जर्मन शब्दके मुख्य अर्थका वाचक है। घोलन्दाज इन्दी-जर्मन बंगरी उत्पन्न है। बंगरीजीसे इनकी भाषा बहुत कुछ मिलती है। इन्होंने इस यातकी साक्ष्यता सम्पादन की है, कि अथर्वसायके पागे कुछ असाध्य नहीं। हासिएणके अनेक स्थान समुद्र-जन्म निमग्न रहते थे। इन्होंने बांध बना उस उपद्रवसे देशकी बचाया घोर समुद्रकी बहुत दूरतक ढाया है। इसी प्रकार वायुकापूर्ण वेलाभूमिको भी क्रम-क्रम घोलन्दाजोंने ग्रस्यगालिनी बना बासा है। इन्होंने अग्निगवादिके लिये लघुपूर्ण गोष्ठ निर्दिष्टकर गाईक्ष्य पशु जातिको जैसी उचित साधन की, येसी कहीं देण न पड़ी। क्विप एवं मित्यविद्यामें यह विशेष पारदर्शी घोर वला-वयन तथा नौ-निर्माण प्रभृति कार्यके लिये सर्वत्र प्रसिद्ध हैं।

घोलन्दाज वत्सलभाषावत् होते हैं। यह लच पितामाताका विशेष सम्मान करते घोर इसीसे सारस पक्षीपर भी बड़ा प्रेम रखते हैं। यह मित्यविद्या घोर साहसके लिये अधिक विख्यात न होते भी स्थावली हैं। विद्याकी चर्चाके लिये यह सुविद्यात हैं। इनके विज्ञविद्यालयोंमें धर्मशास्त्रोंका कोई उपद्रव नहीं। सब लोग इच्छानुसृत्य शास्त्रको अनु-गोचन कर सकते हैं। धर्मशास्त्रक सख निर्दिष्ट स्थानोंके लोगोंको ही धर्ममंतकी शिक्षा देते हैं। घोल-न्दाज साधारणतः मोटेष्टाष्ट हैं। ईसाई ६०।

ई०के १६वें शताब्द युरोपमें धर्ममतपर तुलना आन्दोलन उठा था। उसी समय मार्टिन लूथरने धर्मसम्बन्धमें सर्वतोभावे से रोमके पोपोंकी प्रभुताको अस्वीकार किया। भोलन्दाज भी उनके मतमें मिल गये। इसीसे इनपर राजाके कोपकी दृष्टि पड़ी थी। स्वेनराज २५ फिलिप हालेण्डके अधीश्वर रहे। वह कष्टर कायलिक थे। इसीसे फिलिप प्रजावर्गको अपने मतका विरुद्धवादी या लूथरके शिष्योंको सताने और "दीवानुसन्धान" नामक विचारालयकी प्रतिष्ठाकर प्रोटेस्टाण्टोंको जीवन्त अवस्थामें ही जलाने लगे। इस कार्यसे सकल ही प्रजा उनपर विरक्त हो गयी। क्रमसे प्रजाविद्रोह भूलक उठा। एक ओर युरोपीय तात्कालिक प्रवसपरक्रान्ति नरपति, युद्धविद्या-विचारद संनापति एवं, सेनानी और दूसरी ओर दीन, दरिद्र तथा सहायहीन प्रजामण्डली थी। बहुकालतक यह युद्धचला। एक समय फ्रेंचरेजोंने भोलन्दाजोंको कुछ सहाय भेजा था। उससे लुटफ्रेसका युद्ध और सर फिलिप सिडनीका मृत्यु हुआ। इस तरह कहीं कभी कुछ सहाय मिलते भी भोलन्दाज अन्धवसायके बल ही फिलिपसे प्रतियोगिता कर सके थे। यह शतवार, परास्त और पर्युद्धस्तं हुये, किन्तु पीछे न हटे। अन्तकी यही जीते थे। फिलिप गत चेष्टा करते भी हालेण्डकी वशमें ला न सके। हालेण्डमें साधारणतन्त्रको शासनप्रणाली प्रतिष्ठित हुयी। फिलिप १६वें शताब्दीके शेष भाग पोर्तुगालके अधीश्वर बने थे। उस समय केवल पोर्तुगोज ही भारतवर्षमें वाणिज्य करते रहे। भोलन्दाज उनसे द्वेष से युरोपके सकल स्थानोंमें फैलते थे। इससे भी इन्हें प्रभूत लाभ होता था। भोलन्दाजोंको दवानिके लिये फिलिपने पोर्तुगोजोंके साथ वाणिज्यका होना रोक दिया। किन्तु यह भग्नोत्साह न हुये। इन्होंने एकादिक्रमसे भारतवर्षके साथ वाणिज्य बनाना मनःस्थ किया। एक वणिक्-समितिने करनेलियस् हुटमानको ४ लहाजोंका अध्यक्ष बना भारतवर्ष भेजा था। करनेलियस्ने मिर्च वगैरह मसाला लाद स्वदेशको प्रत्यावर्तन किया और आकर कह दिया—पोर्तुगोज सर्वत्र

दृष्टित और अमाङ्गल हुये हैं। यह बात सुन १५८८ ई०को भान-नेक चाट लहाजोंके साथ भारतवर्ष भेजे गये। आमदरदमके वणिकोंने उन्हें यवहीपमें एक कोठी खोलनेकी भी अनुज्ञा दे दी। भाननेकके कृतकार्य ही स्वदेश लौटने पर कितने ही लोगोंने ईर्ष्या-परवश भारतवर्षमें वाणिज्य करनेकी उद्योग लगाया। उस समय सकल भोलन्दाज वणिकोंके वाणिज्य कोपकी बाधका हुये थे। किन्तु गवरनमेण्टने इस विषयमें हस्तक्षेप कर सकल विवाद मिटा दिया। सकल दलका एकत्र ईष्ट-इण्डिया-कम्पनी नाम रखा था। वणिकोंको पूर्व देशके वाणिज्य स्थानोंमें सब विषयोंकी चमता मिली अर्थात् स्नाधिकृत देगके मध्य वह आवश्यकतानुसार कामनू बना और जित देग अधिकारमें रखनेको पूर्व देशके राजावीसे युद्ध वा सन्धि चला सकते थे। इसी प्रकार भोलन्दाजोंकी ईष्ट-इण्डिया-कम्पनीका स्तम्भपात हुआ। इसमें नूतनत्व यह था—उस समय पोर्तुगोज केवल स्वदेशकी गवरनमेण्टके आदेशानुसार चलते, किन्तु भोलन्दाज इस देशमें एक साधारणतन्त्रप्रणाली लास स्वतन्त्रताके लिये हालेण्ड गवरनमेण्टके समीन होते भी अपने कार्यक्षेत्रमें एक प्रकार स्नाधीन रहते थे।

यह और परिश्रमसे ही फललाभ होता है। भोलन्दाजोंने भी शीघ्र शीघ्र यव और मसालाम प्रभृति हीपोंमें यथेष्ट प्रतिपत्ति स्थापन की थी। पोर्तुगोज सर्वत्र ही इनसे परास्त होने लगे। एडमिरल पोयारिकने १४ जहाजोंके साथ यवहीप पहुँच बटेविया नगरकी पत्तन किया। मसालेके कारवारसे १८२२ ई०को पोर्तुगोज एकबारगी ही विदूरित हुये थे। पोयारिकने जापान, फिलिपाइन प्रभृति हीपोंके साथ वाणिज्य-सम्बन्ध स्थापन किया, बटेविया नगर शीघ्र ही भोलन्दाजोंके यावतीय वाणिज्य-स्थानोंका केन्द्र बन गया। १६७६ ई०से पूर्व भोलन्दाजोंने बंगालके साथ वाणिज्यकार्यमें लित होनेको चेष्टा की न थी। १६७६ ई०को इन्होंने प्रथम 'बु' 'हु' 'ड'में महाजनों कोठी खोली। इससे पहले ही भोलन्दाजोंने मिहल प्रभृति स्थान पोर्तुगोजोंके हाथसे निकाले और मसयवर छप-

कूनमें खोचिन प्रगति स्थान भी अधिकारकी संभासे थे। उस समय जोग खोलन्दाजोंका सम्मान करते रहे। यह स्थान देवल इनके साहस वा युद्धकी निपुणताके लिये ही गया। यह सत्य और न्यायकी इतना देणकर काम करने, कि किसी स्थानके लोगोंमें चमत्कृत होने पर वहाँसे अपना कोठो उठा चलेते बने। उधर पोर्तुगोज् पहलेसे ही भारतवासियोंके प्रति निष्ठुर व्यवहार करते रहे। सुतरां भारतवासी ग्रीव ही खोलन्दाजोंकी मददमें सुख हो गये। किन्तु समयके परिवर्तनन सत्यप्रिय खोलन्दाजोंकी भी प्रबल सत्यप्रिय और अत्याचारी बना डाला। अंगरेजोंके अभ्युदयमें ग्रीव ही इनका पात हुआ।

१६१८ ई०की अंगरेजोंके साथ खोलन्दाजोंका सद्गुण लगा। तत्पूर्व ही अंगरेजोंने भारवर्षमें वाणिज्य चलाया, किन्तु इनके साथ प्रतियोगितासे मसालेके काममें विशेष कुछ कर न पाया था। ऐसे ही समय इङ्ग्लैण्ड और डालेण्डकी गवर्नमेंण्टने मध्यस्थ बन दोनों कम्पनियोंके लोगोंकी एक सत्वरशिथी सभा स्थापित कर दी। उससे ग्रीव ही सब गडबड़ मिट गया। किन्तु सभामें खोलन्दाज सम्प्रदायी संस्था अधिक रही। सुतरां उसके द्वारा यह इच्छामत समस्त कार्य करने लगे। १६२२ ई०की उक्त सभाने इनके विरुद्ध साजिश करनेके अपराध पर दस अंगरेजों और दस अपर व्यक्तियोंकी फाँसी दी। विचारसे सबने प्राणदण्ड पाया। इस घटनासे अंगरेज अत्यन्त विरक्त हुये। दोनों जातियोंके मध्य भयानक विद्वेषानल लल उठा। अनेक दिन-पर्यन्त समामान्य रहने पीछे १६५४ ई०की अंगरेजोंने इनसे ८५००००) रु० क्षतिपूरण पाया था। किन्तु विवाद न मिटा। १६६० ई०की अंगरेजोंके साथ खोलन्दाजोंका युद्ध उपस्थित हुआ। इन्होंने अंगरेजोंके वाणिज्यमें विशेष क्षति डाली थी।

अपनीपक्षी फ्रांसीसी विद्रुव चारम्भ होनेसे इनका प्रताप घटा। अंगरेजोंने मिहल प्रगति अधिकार कर अन्त्या स्थानोंमें भी इनकी प्रतिपत्ति बिगाड़ी

थी। उस समयतक खोलन्दाज कियत्परिभाषसे हतयो हुये।

१६८० ई०की इन्होंने अंगरेजोंकी बग़लामसे निकाला और भारतमहासागरीय क्षेत्रोंमें मसालेका काम चतुष्प बना डाला था। १६८० ई०की डालेण्डके विम विनियम इङ्ग्लैण्डके राजा हुये। इससे समय जातिके मध्य मोहार्थ स्थापित हुआ। किन्तु वाणिज्य विषयमें इन्होंने प्राधान्य बना रखा। १६८५ गताब्दके ग्रीव भागमें ही खोलन्दाजोंकी समता घटते पायी। १७१० ई० तक युरोपमें जो विदेशवाणिज्य भभका, उससे इनका वाणिज्य विशेष बिगड़ा न था। फिर इन्होंने संग्रामसे अंगरेजोंकी निकालनेके लिये मीरजापुरके अनु-रोधपर बटेवियासे सान जंगी जहाज़ भेजे। किन्तु उन्हीं द्वार कर यह काम छोड़ दिया। अगोच १७८८ ई०को फ्रांसीसी राष्ट्र-विद्रुव उपस्थित हुआ। फ्रांसीसी सेनापति पिचैपुने डालेण्ड अधिकार किया था। फिर यह फ्रांसीसियोंके शासनाधीन बने। उधर अंगरेज इनके वाणिज्यस्थान अधिकार करनेकी सचेष्ट हुये। मिहल प्रगति स्थान इनके हाथ लगे थे। १८०२ ई०की पामिन्स-सन्धि द्वारा अनेक विदेशीय अधिकार पुनः पाते भी इन्हें मिहल और केप-कोलोनी अंगरेजोंके लिये छोड़ना पड़ा। जेयोनियनके फ्रांसवशा सम्राट् बननेपर डालेण्ड प्रथमतः उनके भ्राता लुईके अधीन और पीछे फ्रांसीसी साम्राज्यके अन्तर्भूत हुआ। ऐसे ही समय इन्होंने इङ्ग्लैण्ड आक्रमणके लिये भी विशेष चेष्टा लगायी और भारतमहासागरमें अंगरेजोंके वाणिज्यकी विशेष क्षति पहुँचायी थी।

१८११ ई०की अंगरेजोंने यह उपद्रव निवारण करनेके लिये बटेवियाकी आक्रमण सार उद्गतत किया। उसी समयसे यह हतयो हो गये। १८१५ ई०की पारिसकी सन्धि द्वारा उक्त स्थान पुनः पाते भी यह पूर्ववत् प्रबल बन न सके।

आजकल खोलन्दाजोंकी अवस्था उन्नत नहीं, स्थितियों पड़ी है। भारत-महासागरके सावपुष्पमें पाल भी यह मसालेका काम करते हैं। बटेविया

प्रधान स्थान है। वहाँ एक गवरनरजनरल और मन्त्रि-समाजके कई सदस्य रहते हैं। किन्तु गवरनरजनरल अपने इच्छापर मन्त्रिसमाजके मतसे विरुद्ध कोई कार्य कर नहीं सकते। दीपवासी श्रीलन्दाज जातीय भावसे कुछ दीन हो गये हैं। विद्याकी चर्चाका प्रभाव-जैसा है।

श्रीलंदी ( हिं० वि० ) हालैंड देशीय, हालैंड मुल्कसे सरोकार रखनेवाला।

श्रीलंवा ( हिं० पु० ) उपालम्भ, श्रिकवा, उरचना।

श्रीलंभा, श्रीलंवा देखो।

श्रीलकन्द ( सं० पु० ) १ शूरवीर, जर्मोर्कंद। २ वनौल, जंगली जर्मोर्कंद।

श्रीलवा, श्रीलवा देखो।

श्रीलवी ( हिं० श्री० ) फलविशेष, आलू, बालू, गिलास।

श्रीलज ( सं० धातु० ) स्वादि पर० सक० सेट्।

श्रीलज करना, फेंकना। "श्रीलज सेपे।" ( कविचलद्रुम )

श्रीलड ( सं० धा० ) शुरा० उम० सक० सेट्।

"श्रीलडि उल्लेपे।" ( कविचलद्रुम ) उत्प्रेष करना,

उठाकर फेंक देना।

श्रीलती ( हिं० श्री० ) १ छप्परसे पानी बहनेकी जगह। २ जिस जगहसे छप्परसे पानी बहे।

श्रीलना ( हिं० क्रि० ) १ गोपन करना, छिपाना। २ व्यवधान डालना, धाड़ लगाना। ३ सहन करना, सह लेना। ४ भाँक देना।

श्रीलमना ( हिं० क्रि० ) सटकना, झुकना, सजारा लेना।

श्रीलहना, उरचना देखो।

श्रीलपाद—बम्बई प्रान्तके सुरत जिलेकी एक तहसील।

इससे उत्तर कीम नदी, पूर्व बड़ीदेका बसरावी विभाग, दक्षिण ताप्ती और पश्चिम खम्बातकी खाड़ी अवस्थित है। क्षेत्रफल ३२६ वर्गमील है। समुद्र किनारे बालूकी पट्टाड़ी है। बीचमें मैदान पड़ा है। बरागाहीमें बम्बईके पेड़ पाये जाते हैं। यहाँ शीघ्र ऋतुमें भी शीतल वायु चलता है। कहते—यहाँसे रावणकी जीत रामचन्द्र नासिकके पास पञ्चवटीमें पहुँचे थे। यहाँसे

बड़े गुजरातके दक्षिणपेठ गये। सरम यामके समीप सुरतसे १५ मील उत्तर-पश्चिम उन्हीं एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित किया था। उसीकी आजकल सिद्धिनाथ कहते हैं। फिर होम हुआ। रामने भूमिमें तीर मार जल निकास था। जिस स्थानसे जल निकास उसका नाम रामकुण्ड है। उसी समय उन्हीं वहाँ एक राक्षस मारा। राक्षसके शिर गिरनेका स्थान गिरम और उर गिरनेका स्थान उरपातन या श्रील-पाट कहाया।

श्रीला - ( हिं० पु० ) १ करका, वर्षीफल, भाला, पत्थर, असमानने गिरनेवाला बरफका टुकड़ा। २ मिट्ट खाद्यविशेष, एक मिठाई। यह चीनीका गोला-गोल बनाया और गर्मीमें खाया जाता है। श्रीला पानीमें पड़ते ही घुलने लगता है। ३ व्यवधान, परदा, धाड़। ४ भेद, छिपी बात। ५ दृष्टविशेष, एक किस्मका बज्र। ( वि० ) ६ शीतल, ठण्डा। ७ खेत, सफ़ेद।

श्रीलाना ( हिं० क्रि० ) भ्रमना, भेकना, धोकरना।

श्रीलिक ( हिं० श्री० ) व्यवधान, परदा, धाड़।

श्रीली ( हिं० श्री० ) १ कोड़, गोद। २ अक्षल, दामन, पत्ता। ३ भोली।

श्रीलोना ( हिं० पु० ) १ उदाहरण, मिसाल। ( क्रि० ) २ दृष्टान्त देना, मिसाल मिलाना।

श्रील ( सं० पु० ) शूरवीर, जर्मोर्कंद।

श्रीलकन्द, श्रीलकन्द देखो।

श्रीवर ( अ० = Over ) जीता, चढ़ता। क्रिकेटमें पाँच बार गेंद फेंकनेपर खेलकी बारी श्रीवर होती है। फिर इस श्रीवरके खिलाड़ी उस श्रीवर खेल जाते हैं।

श्रीवरकोट ( अ० = Overcoat ) लबादा, शरीरपर पहना जानेवाला धोगा।

श्रीवरसियर ( अ० = Overseer ) अधिकारी, पञ्च, नाज़िर, क्षत्री काम देखनेवाला।

श्रीवा, श्रीवा देखो।

श्रीशाम—काठियावाड़ प्रान्तका एक पर्वत। उँचाई १००० फीट है। इस पर्वतमें चटानें बहुत देख

पड़ती है। गिपरपर ओमाष्टमाताका मन्दिर एवं प्राचीन दुर्ग दण्डायमान है। शोधामने कामा और भुधना काच होता है। ओम छमे कोरव और पाण्डव युद्धके रक्तका चिह्न बताते हैं।

योगिष्टहन् ( सं० पु० ) अति शीघ्र प्रहार करनेवाला, जो बहुत जल्द मारता हो।

शोध ( सं० पु० ) छप दाढ़ि घञ् । १ दाढ़, जलन । २ पाक, पकनेकी क्षमता । ३ शोभता, तेजी ।

शोधण ( सं० पु० ) छप-ण्ट । कटुरम, भस्म, चरपराहट ।

शोधधि, शोधधेयो ।

शोधघी ( सं० स्त्री० ) शोधघ-ङीप् । पुरातिगाक, एक मन्त्री या तरकारी। यह कफ और वायुकी नाश करती है। (रत्नप्रम)

शोधध ( सं० स्त्री० ) शोधध, दवा ।

शोधधि ( सं० स्त्री० ) शोधधीयतेऽत्र, शोध-धा-कि । छिद्रद्वितीय, एक षोढा । फल पकते ही जो छिद्र खुल जाते, वही शोधधि कहते हैं। शोधधोपयोगी कतिपय शोधधिका लक्षण जगा सुश्रुतने नामभेद किया है, यथा—

जो शोधधि कपिल वर्ण, विविध मण्डकविगिट, सर्पतुण्ड, पक्ष पत्रयुक्त और परिमाणमें पक्ष चरत्रि परिमित रहती, उसे विद्वन्मण्डनी भजगवी कहती है। १। निम्न, स्वर्णवर्ण, दो चङ्गुन परिमित मूल-विगिट, सर्पाकार और मान्दगर्भ रक्तमायुक्त शोधधिका नाम श्वेतकापोती है। २। दो पत्रमात्र विगिट, मूलमें चरुवर्ण एवं मण्डलमें लक्षणवर्ण, दो चरत्रिपरिमित और गंगासिकाकृति शोधधिक्षो गोगवी कहते हैं। ३। अधिष्ठ सारयुक्त, रोमस, चटु, दृष्टरस-मह्य रसविगिट और चक्षुकी भांति प्राकृतिपुक्त शोधधि लक्ष्मकापोती कहती जाती है। ४। लक्षण-सर्पाकृति और कन्दमन्त्र शोधधिक्षी भंज्रा वाराही है। ५। एक पत्रयुक्त, महाबोधि और पञ्चनतुण्ड लक्षणवर्ण शोधधिका नाम कृता पड़ता है। ६। कन्द-मन्त्र और रसोभयविनायक शोधधिक्षी भंज्रा अतिहता रजुते है। ७। कृता एवं अतिहता सम्य

शोधधि जराश्रुत्य निवारक और श्वेतकापोतीकी भांति प्राकृतिविगिट होती है। मनोरम-प्राकृति, मयूरके पक्षकी भांति पत्रविगिट, कन्दोत्पन्न और स्वर्णवर्ण सारयुक्त शोधधिका नाम कृता है। ८। अतिमय औरयुक्त, गङ्गाकृति मूलदेगविगिट, हस्तिकर्ण और पद्माङ्गके पत्रकी भांति केवल दो पत्रयुक्त शोधधिक्षी करिणु कहते हैं। ९। कामीके मूलकी भांति मूल-भागयुक्त, अधिष्ठ सारविगिट, गुल्फकी भांति प्राकृति-युक्त और गङ्ग कन्द प्रभृतिकी तरह पाण्डुवर्ण शोधधिक्षी भंज्रा भजा है। १०। श्वेतवर्ण, विचित्रपुण्ड्रयुक्त और काकमाचीकी तरह शोधधिक्षी भंज्रा चक्रजा पड़ती, जो जराश्रुत्य दूर करती है। ११। प्रमस्त मूलयुक्त, केवल पक्ष रक्तवर्ण सुकोमल पत्रविगिट और सूर्यके भ्रमणानुसार परिवर्तनशील शोधधि पादित्य-परिणी कहती जाती है। १२। स्वर्णवर्ण, सघोर और पद्मिनी-तुल्य शोधधि मङ्गलसुवर्णना कहती, जो चारों ओर चकर लगाती है। १३। चरत्रिपरिमित, गुल्फा-कार, दो चङ्गुन परिमित पत्रयुक्त, नीलीतुपलसमपुण्य एवं पञ्चनवर्ण फलविगिट, स्वर्णवर्ण-और औरयुक्त शोधधिका नाम श्यावणी पड़ता है। १४। श्यावणीकी भांति श्यावाण्य गुणयुक्त और पाण्डुवर्ण शोधधिक्षी महाश्यावणी कहते हैं। १५। शीमयुक्त द्विविध शोधधियोंके नाम गोनीमी और चक्रनीमी हैं। १६, १७। मूलमसुह्रव और विच्छिन्नपत्रयुक्त शोधधि हंसपादी कहती है। १८। चरपर शोधधिक्षी तरह द्रव-युक्त और गङ्गसहस्र पुण्यविगिट शोधधिक्षी भंज्रा गङ्गपुत्री है। १९। अतिमय वेगयुक्त सर्पनिर्मिककी तरह प्राकृतिविगिट शोधधि वेगवती कहती है। २०। शीमसम शोधधिका नाम शीम है। २१। अश्वहा-शाली, पलस, कृतघ्न और पापकर्मा व्यक्ति इन शोधधियोंकी उपाङ्ग नहीं सकता। प्रयसोक्त मात-प्रकारकी शोधधि कष्टाहने में निर्योक्त मन्त्र पड़ना पड़ता है—

“महेश्वराम्बिकायां वारवाणीं वामवि ।

तथा तीक्ष्णं यदि वामार्धं दिशे ॥”

वामनाकाशकी आदित्यपत्नी, दयाकाशकी चक्रगवी

एवं गोनघी, काश्मीरदेशीय सुद्रक मानस नामक दिव्य सरोवरमें करेण, कन्या, क्षत्रा, पतिहत्या, गोलोमो, भजलोमी, तथा मङ्गती आषणो, कौशिकी नदीके पूर्वपार बल्लोकाख्यात योजनत्रय भूमिमें खेतकापीती और बल्लोकाके शिखरदेश, मलयपर्वत तथा नक्षत्रेतुमें वेगवती मिलती है।

श्रीधरिगण (सं० पु०) रासायनिक श्रीधरिका गण, कुक्ष जङ्गी-वृष्टियोंका जखीरा।

श्रीधरिगर्भ (सं० पु०) श्रीधरिनां गर्भ उत्पत्तिर्यस्मात् बहुव्री०। १ चन्द्र, चांद। २ सूर्य, चाफताव।

श्रीधरिज (सं० त्रि०) श्रीधरिभ्यो जायते, श्रीधरिजन-ज। १ श्रीधरिगणके मध्य निवास करनेवाला, जो जङ्गी-वृष्टियोंमें रहता हो। २ श्रीधरिसे उत्पन्न, जो जङ्गी-वृष्टियोंसे निकला हो। (पु०) ३ श्रीधरिसे उत्पन्न भनि।

श्रीधरिपति (सं० पु०) श्रीधरिनां पतिः, इ-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफूर। ३ सोमसता। ४ वैद्य, इकीम।

श्रीधरिप्रस्य (सं० पु०) श्रीधरिवङ्कुलं प्रस्यं सानुर्यं बहुव्री०। १ हिमालय। अधिकांश श्रीधरि-उत्पन्न होनेसे हिमालयका यह नाम पड़ा है। २ हिमालयस्य नगरविशेष, हिमालयका एक शहर।

“यस्य महागिपायिता पुरा नक्षत्रपुरम् यथा।

श्रीधरिप्रकनगरस्याहरे सानुर्यतः॥” (कालिकापुराण ३१५ः)

श्रीधरि (सं० स्त्री०) श्रीधरिहोयः। १ श्रीधरि, जङ्गीवृष्टो। २ सप्तहृष, छोटा पिड़।

श्रीधरिपति (सं० पु०) १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफूर।

श्रीधरिमान् (सं० त्रि०) श्रीधरि-सम्बन्धीय, जङ्गी-वृष्टियोंसे सरोकार रखनेवाला।

श्रीधरिग (सं० पु०) श्रीधरिनां ईगः, इ-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफूर।

श्रीधरिसंगित (सं० त्रि०) श्रीधरि द्वारा आयत्त, जङ्गी वृष्टियोंसे तहरौक किया हुआ।

श्रीधरिसूत्र (सं० स्त्री०) सूत्रविशेष, वेदका एक मन्त्र।

श्रीधम् (सं० ध्व०) धय-धम्। श्रीध-श्रीध, बारम्बार, जल्द-जल्द, फौरन।

श्रीधित (सं० त्रि०) धयमेयं धितिशयेन, श्रीधो, श्रीधोन् इहन्। धितिशयेन तपस्विनो। या ३।३।३३। धितिशय दाहकारक, बहुत जलन पैदा करनेवाला।

श्रीधितदाषा (सं० त्रि०) धिति श्रीध प्रदान करनेवाला, जो बहुत जल्द देता हो।

श्रीधितान् (सं० त्रि०) धय-धम् तदस्यास्तीति धितिः। दाहकारी, जलन पैदा करनेवाला।

श्रीध (सं० पु०) धयते दह्यते, धय धर्मे धय-धम्। धयिधितियस्यम्। धय ४४। दन्तच्छद, होंठ। इसका संस्कृत पर्याय—रदमच्छद, दशनवास, दन्तवास, दन्त-वस्त्र और रदच्छद है। दोनोंका धर्ष निकल सकते भी श्रीध शब्द जपरी होंठके लिये व्यवहृत होता है।

श्रीधक (सं० त्रि०) श्रीधे प्रसितम्, श्रीध-कम्। काठेयः धितिः। या ३।३।३३। श्रीधमें ध्यात, होंठकी खुर रखनेवाला। यह शब्द समासके अन्तमें आता है।

श्रीधकर्णक (सं० पु०) जनपद विशेष, कोर जगह। कहते—श्रीधकर्णकमें निवास करनेवालोंके होंठ और कान पास हो पास रहते हैं।

श्रीधकोष (सं० पु०) श्रीधस्य कोपो यत्र, बहुव्री०। श्रीधरीय द्वीप।

श्रीधज (सं० त्रि०) श्रीधसे उत्पन्न, धक्ती, होंठसे निकलनेवाला।

श्रीधजाह (सं० स्त्री०) श्रीध-जाहच्। तस्य पात्रवृक्षे वीजप्रद-वर्षादिषु लघुधातवो। या ३।३।३३। श्रीधमूल, होंठकी जड़।

श्रीधवर (सं० पु०) श्रीध, होंठ।

श्रीधपन्न (सं० स्त्री०) श्रीध, होंठ।

श्रीधयाक (सं० पु०) श्रीधजन, होंठका जलम्।

श्रीधपुट (सं० स्त्री०) श्रीधोपाटनजात विवर, जो गूहा होंठ खोलनेसे पड़ा हो।

श्रीधपुष्प (सं० पु०) श्रीध इव रत्नसं पुष्पं यस्य, बहुव्री०। १ वस्तुनोवपुष्पत्रय, दुपहरियेके फूलका पेड़। (स्त्री०) चांद इव पुष्पम्। वस्तुनपुष्प, दुपहरियेका फूल।

घोष्ठप्रकोप ( सं० पु० ) घोष्ठप्रकोपी यत्न, बहुव्री० ।

घोष्ठप्रकोप देखो ।

घोष्ठप्राण ( सं० पु० ) सूक्ष्मभाग, सुंढका कोना ।

घोष्ठफला ( सं० स्त्री० ) विम्बोसता, कुंदरु ।

घोष्ठभा, घोष्ठवना देखो ।

घोष्ठरोग ( सं० पु० ) घोष्ठगतो रोगः, मध्यपदलोपी० ।

घोष्ठगत रोग, होठकी बीमारी । वेद्यक मतसे यह रोग घाट प्रकारका होता है—वायुजन्य, पित्तजन्य, कफजन्य, माघिपातज, रक्तज, मांसज, मेदोज और अमिघातज चर्यात् पागन्तु । वातज घोष्ठरोगमें घोष्ठ कर्कश, कम्पयुक्त, स्तब्ध और वातज वेदनाविग्रहित रहता है । इस रोगमें घोष्ठ फट, जानसे उत्प्रापित होनेकी तरह यातना मानस पड़ती है । पित्तज घोष्ठ रोगमें घोष्ठ पीतवर्ण, वेदनायुक्त और सुद सुद पिङ्गकासे ध्यात रहता है । फिर उक्त पिङ्गका एक जानिसे पत्यन्त दाह उठने लगता है । श्रेष्ठज घोष्ठ रोगमें घोष्ठ-समवर्ण और वेदनाहीन पिङ्गका पड़ती है । दोनों होठ पिच्छिन, शीतलस्पर्श और शुद्ध भगते हैं । सन्निपातजन्य घोष्ठरोगमें बहुविध पिङ्गका उठती और घोष्ठद्वयके किसी स्थानपर लक्षणवर्ण, किसी स्थानपर पीतवर्ण एवं किसी स्थानपर स्तवर्ण देख पड़ती है । रक्तज घोष्ठरोगमें खर्जर-फलवर्ण पिङ्गका निकलती है । उसकी दबानिसे रक्त टपकता है । घोष्ठद्वय रक्तवर्ण पड़ जाते हैं । मांसज घोष्ठरोगमें घोष्ठद्वय शुद्ध, स्थूल और मांसविष्टकी भांति उद्यत भगते हैं । घोष्ठदेहमें कौट उत्पन्न होते हैं । मेदोज घोष्ठरोगमें घोष्ठद्वय घृतमण्ड तुल्य, कण्टुविग्रित और शुद्ध हो जाते हैं । फिर उनमें निर्मल स्फटिक-तुल्य स्त्राव निरन्तर निकला करता है । अमिघातजन्य घोष्ठरोगमें घोष्ठ विदीर्घ भयवा उत्प्रापित हो जाता है । यह ग्रन्थ पारोग्य लाभ नहीं करता । वायुजन्य घोष्ठरोगमें तारवीगके तेल, भोजन, गुग्गुलु, यटि-मधु और देवदाहका प्रमेय चढ़ाना चाहिये । पेशिकमें सर्वप्रथम विरिषक घोष्ठधका प्रयोग आवश्यक है । फिर तिष्ठ रसपान एवं तिष्ठ-रस उपचरवर्णके साथ भोजनकी व्यवस्था करना चाहिये । इसपर-प्रथमतः

लजीका द्वारा रक्तमोक्षण कर गर्भरा, शीत, मधु एवं चतुस्तमूत समभाग भयवा धूमकी लहू, रक्तचन्दन और औरकाकोली दुग्धमें रगड़ प्रमेय चढ़ाने हैं । रक्त एवं अमिघातजन्य घोष्ठरोगमें भी पित्तजन्य रोगकी चिकित्सा कर्तव्य है । कफजन्य होनेसे रक्तमोक्षणकर त्रिकटु, गर्जिषार तथा यवचार सम-भाग मधुमें मिला प्रमेय लगाया चाहिये । मेदोजन्य घोष्ठरोगमें मियदू एवं त्रिकला पोम मधुके साथ प्रमेय देने हैं । केवल तिफलाधूण और मधुके साथ प्रमेय करनेपर भी उपकार पड़ जाता है । भयप्रकार घोष्ठ-ग्रन्थ स्फुटित होनेसे लोबान, धतूरेके फल और गेहूँके साथ तेल किंवा घृत पका व्यवहार करना चाहिये ।

घोठा, घोठी देखो ।

घोठागतप्राण ( सं० स्त्री० ) घोष्ठवीरागताः प्राणा यन्त्य, बहुव्री० । मृतप्राय, जो मर रहा हो ।

घोठाधर ( सं० पु० ) घोष्ठय पधरय तो, दण्ड । घोष्ठद्वय, दोनों होठ ।

घोठी ( सं० स्त्री० ) घोष्ठ इव पाचरति, घोष्ठ-किप, धब्-झीण । विष्वक्कल, कुंदरु ।

घोठीपमकला ( सं० स्त्री० ) घोठीपमानि फलानि यस्याः, बहुव्री० । विम्बिका, कुंदरु ।

घोठीपमकलिका, घोठीपमकला देखो ।

घोठा ( सं० स्त्री० ) घोठे भवः, घोठ-यत् । घोठने उत्पन्न होनेवाला, जो होठने निकलना हो ।

घोठावीनि ( सं० स्त्री० ) घोठा गच्छति उत्पन्न, जो गच्छती पायजुमें पैदा हो ।

घोठावर्ण ( सं० पु० स्त्री० ) घोठापात्रो वर्णदेति, कसेंवा० । घोठवे उत्पन्न होनेवाला वर्ण, वर्ण-गच्छती, जो वर्ण भवति निकलता हो । उ, ल, पो, पो, प, फ, भ और म पधर उच्चारण-स्थान घोठ रहने घोठा-वर्ण कहाता है ।

घोठास्थान ( सं० स्त्री० ) घोठ द्वारा उद्घातित, जो होठने बीना जाता हो ।

घोष्प ( सं० स्त्री० ) घा-उष्पः । दंष्ट्र उष्प, घोठा गर्भ ।

घोस ( हिं० स्त्री० ) पवध्याय, मधुम, मौल, वातकी

आसमानसे जमीनपर धीरे-धीरे गिरनेवालो तरी। यह एक प्रकारका वाष्पीय जल है। रात्रिके समय शीतलतासे भारी पड़ घोस ध्रुविषीपर गिरती और विन्दु-विन्दु उधर उधर जमी देख पड़ती है। आकाश सेधाच्छन्न रहने और प्रबल वायु चलनेसे घोसका घन घट जाता है। गहरी घोसका ही पाला कहते हैं। इसका प्रभाव घास-पूस पर अधिक पड़ता है।

“घोसके बाटे प्यास नहीं बुझती।” (लोकोक्ति)

जो द्रव्य देखनेमें बहुत अच्छा लगता—किन्तु स्थायी नहीं रहता, उसका नाम ‘घोसका मोती’ पड़ता है। घोसना (हिं० क्रि०) मांड़ना, शूंधना, पानी डालके कचरना। यह शब्द पाटेके लिये आता है।

घोसर (हिं० स्त्री०) गर्भधारण करने योग्य गाय या भैंस, जवानीपर आई हुई पड़िया या बलिया। जो गाय या भैंस गामिन होने लायक बन जाती, वह घोसर कहलाती है।

घोसरा (हिं० पुं०) १ भवसर, समय, वक्त।

घोसरिया, घोसर देखो।

घोसरी (हिं० स्त्री०) पयसर, वारी, बदली, दांव।

घोसवाल (हिं० पुं०) जैनेंकी एक शाखा। प्रधानतः जैन ध्यवसायिणी और महाजनोंकी घोसवाल कहते हैं।

घोसाई (हिं० स्त्री०) १ घोसानेका काम, मांड़े हुये भनाजकी उड़ाई। मांड़े हुये गन्नेकी टोकरीमें भर हवा चलते समय धीरे धीरे पपनी बराबर उठा नीचे गिराते हैं। इससे पैरोके पास दाना जमा हो जाता है। हवासे भूसा उड़ प्रसृत जा सकता है। २ घोसानेका पारिश्रमिक, गन्ना उड़ानेको मजदूरी।

घोसान (हिं०) घोसा केर घोसान देखो।

घोसाना (हिं० क्रि०) उड़ाना, हवामें फेंकना। यह शब्द मांड़े हुये भनाजकी उड़ानेके लिये आता है। घोसार (हिं० पुं०) १ प्रधान, बरामदा, दाखान। २ हप्तर, सायमान।

घोसीला, (हिं०) घोसीला देखो।

घोसीसा (हिं० पुं०) १ सराहना, बिस्तर या चारामकी जगहका ऊपरी हिस्सा। २ उपधान, तकिया।

घोसल (हिं०) गमन देखो।

घोसेका (हिं०) घोसीका देखो।

घोसोरा, घोसरा देखो।

घोसीनी, घोसरी देखो।

घोड (सं० पुं०) आ-वह-क सम्प्रसारणश्च। १ सम्यक् वहन, अच्छे तरह ले जानेका काम। (त्रि०) २ वाहक, ले जानेवाला। ३ प्रापक, पहुंचानेवाला। (हिं० प्रत्य०) ४ अरे, यह क्या हुआ। ५ दुःख, अप्सोख, हाथ। ६ जाने दो, कोई परवा नहीं।

घोडका (हिं० सर्व०) उसको, उसे।

घोहट (हिं० स्त्री०) व्यवधान, धाड़।

घोहते (हिं० सर्व०) उससे।

घोहदा (सं० पुं०) आश्रय, स्थान, रतना, यड़ी जगह।

घोहदेदार (सं० वि०) स्थानाधिकारो, बड़ो जगहवाला।

घोहदेदारी (सं० स्त्री०) कार्यकर्तृत्व, घोहदेदारोका काम।

घोहद्वारा (सं० पुं०) जह ब्रह्मयुक्त, पूर्ण ब्राह्मण, ज्ञानी ब्राह्मण। (गिरधर ११११)

घोहमा (हिं० सर्व०) उसमें।

घोहर (हिं० प्रत्य०) उस पार, उस तरफ़।

घोहरना (हिं० क्रि०) ऊपरसे नीचे घाना, घट जाना।

घोहरी (हिं० स्त्री०) क्षान्तभाव, सुस्ती, थकावट।

घोहखा (हिं० पुं०) घोहार, आहार, परदा।

घोहस् (सं० स्त्री०) आ-कङ्-पसुन्। वहनसाधन स्तोत्रादि, सच्चा खुदात्त।

घोहा (हिं० पुं०) जघन, गोद्वान, गायका घन।

घोहान (सं० वि०) विचारगोल, मोचने-समझने-बाना, जो ख्याल कर रहा हो।

घोहावी (बह्दावी)—सुसज्जमानोंका एक धर्मसम्प्रदाय। सुहृद इवन भवदुल वहुहाव इव सम्प्रदायके प्रवर्तक रहते। इन्होंने १६८१ ई०की परबी मेजद प्रदेशके एन चायना नामक ग्राममें जयप्रवृत्त किया था। सभीके गिण्य वहुहावी कहते हैं।



बहुहावी कहर इसलाम धर्मावलम्बी है। यह एक ईश्वर मित्र किसी दूसरेको नहीं पूजते। इनके मतमें सुसम्पन्न ईश्वर-प्रेरित मनुष्य थे। यह धर्म-प्रचारके लिये दृष्टियोग्य था। अतएव वह साधारण मनुष्य ही ठहरते हैं। उनका मत ग्रहण करना अवगत है। किन्तु उन्हें पूज नहीं सकते।

बहुहावके प्रधान शिष्य भाषा दामने अपने तत्त्व-चारके औरसे समस्त यमन प्रदेशमें यह मत फैलाया था। बहुहावके मरनेपर उनके पुत्र चम्पूच चलोत्रने फिर पिछमतकी प्रायः समस्त परब देशमें प्रचार किया। १८०३ और १८०४ ई०को बहुहावियोंने मक्का और मदीना शहर जोन समस्त धनसम्पत्ति ह्त की थी। ऐसीही समय लखनऊमें भी अज्ञेयता की मक्का प्राचीन गोरखान ध्वंस कर डाले। १८११ ई० पर्यन्त इनका प्रभाव बहुत बड़ा। फिर सुसम्पन्न चलोत्र पागाने बहुहावियोंके लवलमे मक्के और मदीनाको उबार किया। किन्तु यह इनपर आसन बना न सके। १८१४-१८१५ ई०को उन्होंने इन्हें दमानके लिये आयोजन किया और कायरोसे अपने पुत्र इनाबीस पाशाको सहज्य भेज दिया था। इनाबीसके आक्रमणसे यह चीनवीर्य हो गये। इनके प्रधान नायक चम्पूच इतना आहत हो गये। फिर कितने ही बहुहावी भारतवर्ष आ अपना मत प्रचार करने लगे। अनेक विषय सुसम्पन्नानोंने यह मत ग्रहण किया था।

ई० १८२२ गताब्दके शेष भाग बहुतमी लोग बहुहावी सम्प्रदाय-सुख हुये। १८ वें गताब्दके मध्य-भाग यह पटनेमें लुटे थे। उन्होंने जाना खातीने अपने सीमाकी रक्षा कर अंगरेजोंके विपक्ष युद्धका फैला बनाया। धर्मरक्षाके लिये युद्ध होते हुए कितने ही सुसम्पन्नानोंने इनका साथ दिया था। कोई चले पाया और कोई बाढ़ द्वारा साहाय्य करने लगा। सब लोग पटनेमें सिताना गिरिमुखको अवरुद्ध हुये। १८२६ ई०को सभी लखनऊ और सुख बना था। लखनऊमें अनेक सम्पन्न अंगरेज ऊर्ध्वारो और विस्तार अवरुद्ध सेनिक मारे गये। कुछ समय पटनेके

बहुहावी मोलवियोंने सुसम्पन्नानोंके साहाय्यार्थ कितनी ही अवरुद्ध और बुद्धिमान भेजे थे। कहीं भी धर्मशुद्ध अवस्थित होनेपर यह धाम-धाम और पक्षी-पक्षी भूमि गुप्त भावमें इसलाम धर्मावलम्बी लोगोंने यथेष्ट साहाय्य से सकते हैं। इनका परिचय बहुहावी, फराजी, शिदायती, मरहदी और नये सुसम्पन्नान ग्रन्थोंसे मिलता है।

बोहार (हिं० पु०) भूत, परदा, टाकनेका कपड़ा।  
बोहे (सं० चय०) सम्बोधनपूर्वक शब्द, परे, ए। समवयस्क या समुगुर्भेद न रखनेवाले व्यक्ति को ही इस शब्दसे सम्बोधन कर सकते हैं।

बोहेना (हिं०) चरहेना देखी।  
बोही (हिं० चय०) हँसी, चही, भी भो, ११, बाहा। इस शब्दसे विषय और आनन्द प्रकट होता है।

## भी

भी—स्वरवर्धका चतुर्दश अक्षर। इसके अक्षरवर्धका स्थान चोह और कण्ठ है। 'भी' दीर्घ एवं भूत भेदमें द्विविध और उदात्त, अनुदात्त तथा कारित भेदसे त्रिविध होता है। फिर अनुनासिक और अनुनासिक दो भेद कर पड़ते हैं। कामधेय तत्त्वके मतमें बोहार रत्नविद्युत्ताकार, कृष्णधी, पञ्चमाष एवं सदागिन मय, ईश्वर संयुक्त और चतुर्वर्गकलप्रद है। इस वर्णमें मन्त्रादि देव सदा अयसाग करतें हैं। इसके निवर्तकी प्रवासी—बोहारके मध्यस्थलमें दक्षिण-दिक्में एक रेखा लब्धगत हो किपित् वामदिक्की लुके जाती है। इन सकल रेखाओंमें मन्त्रा, विष्णु और महेश्वर रहते हैं। मध्यगत रेखा गति है।

(बोहारवर्ण)

बोहारका तत्त्वज्ञान नाम शक्ति, माद, तेजस, धाम-लक्षण, मनु, लब्धचरम, मनुकर्म, सदागिन, पञ्चोदक, कण्ठोह, सदावर्ग, सारस्वती, आत्मा, लब्धसुखी, मातृ, व्यापिनी, प्रकृत, पयः, धनम्, अविनाशिकी, चतुर्दशी, रतिप्रिय, ज्ञान, धाम, अविनाशिकी, निम्न और अगु है।

श्रीर सत्यान्त दो नाम अधिक लिखे हैं। मातृका-  
न्यासमें अधोदन्तन्यास करनेको विधान रहनेसे  
'अधोदन्त' भी कहते हैं। २ धातुका एक अनुबन्ध।  
"श्रीरक्षि" (कविचन्द्र)

(अथ०) ३ आद्यान्त, पुकार, धरे, ए। ४ सव्यो-  
धन। ५ विरोध। ६ निर्णय। ७ शूद्रोंका प्रथम।

"चतुर्दशस्रो श्रीरा श्रीराकाररक्षितः।

स चानुसारमादायां शूद्राणां सेतुवन्ति॥" (काविकापुराण)

श्रीकार नामक चतुर्दश स्वर अनुस्वार स्वर-  
विशेषसे शूद्रोंका सेतु कहाता है।

(पु०) ८ भनन्त। ९ निखन। (श्री०)  
१० पृथिवी।

श्रीकांत (हिं०) श्रीकांत देखो।

श्रीगङ्गा (हिं० पु०) गङ्गाविशेष, किसी किस्मका  
लंगूर। इसका निवासस्थान सुमात्रा द्वीप है। पीत  
वर्णमें मौस वर्षाकी कुछ आभा भलकती है। श्रीगङ्गा  
अपनी मादाको कभी नहीं छोड़ता। पदकी पङ्क्तुलि  
संयुक्त रहती है। स्वभाव क्रोधालु और भीरु है।  
किन्तु इसकी पटुता जगत्प्रसिद्ध है। यह गिन्नन  
जातिके भन्तर्गत पड़ता है।

श्रीगन्गा (हिं०) श्रीगन्गा, तेल देना।

श्रीमी (हिं० श्री०) मीन, खमीरी, चुप।

श्रीध (हिं० श्री०) श्रीधारे, गौद धानकी डालत।

श्रीधना (हिं०) श्रीधाना, मिट्टाके धमीभूत  
होना, गौदसे पांछे खोलना-मूदना।

श्रीधाना, श्रीधना देखो।

श्रीधारे, श्रीध देखो।

श्रीजनना (हिं०) श्रीजनना, उकताना।

श्रीटन (हिं० पु०) १ पङ्कटा, चारा काटनेकी  
झकड़ीका एक टुकड़ा। २ श्रीटाई, भागपर चढ़ा दूध  
बनोर च गाढ़ा करनेका काम।

श्रीटना (हिं०) १ उलटना, भागके क्षीरसे  
खोलना। २ जलना, क्षीरसे भस्मीभूत होना।  
३ धवाना, जलाना, भागपर चढ़ा किसी पतली  
चौलकी गाढ़ा बनाना।

श्रीठ (हिं० श्री०) मुंठाया चढ़ा हुआ क्षीर, उठो  
हुई किनारी।

श्रीड़ (हिं० पु०) बेलदार, जमीन खोदनेका पेघा  
करनेवाला।

श्रीडा (हिं० वि०) गमीर, गहरा, खुदा हुआ।

श्रीडाई (हिं० श्री०) गाश्चीय, गहराई।

श्रीदना (हिं०) १ उमदाना, मस्त बन जाना।

२ धवराना, होश न घाना। ३ खाना, उड़ाना।

श्रीदाना (हिं०) उकताना, धवराना।

श्रीध—१ बम्बर प्रायस्के सतारा जिलेका एक छोटा  
राज्य। यह मघा १८८६ ई० एवं १८८७ ई०  
७० और देमा ७४ ई० १५ तथा ७४ ई० ५२ ई०  
पू० के मध्ये अवस्थित है। क्षेत्रफल ४४८ वर्ग मील  
है। लोकसंख्या प्रायः ५८ हजार है। गेहूँ, ज्वार,  
दाल, रुई, गुड़, ची और तेलकी उपज है। राजा  
महाप्रथ है। लोग उन्हें पत्य-प्रतिमिधि कहते हैं।  
उत्तर तथापि सिवाजीके समयसे चला आता है। बम्बर-  
सरकार श्रीधके राजाकी दक्षिणवाले १२ त्रैवीकी  
सरदारों में समझती है। २८० पै दल और सवार  
रहते हैं। राजाकी गोद लेनेका अधिकार है।

२ उत्तर राज्यका प्रधान नगर।

श्रीधना (हिं०) श्रीधना, मुंठके बल  
पड़ना। २ श्रीध कर देना, मुंठके बल डालना।

श्रीधा (हिं० वि०) १ विपरीत, उलटा, मुंठके  
बल पड़ा हुआ। "श्रीधा नवीन दृष्टि करत।" (श्रीधति)

२ भग्न, टूटा। (हिं० वि०) १ विपरीत भावमें,  
उलटकर। (पु०) ४ मूर्ख, भ्रमज्ज्ञ। ५ बीठा,  
हकी, दवेधिया।

श्रीधाना (हिं० श्री०) १ उलटाना, मुंठके बल  
गिराना। २ खाली करना, उलटाना।

श्रीधी—मध्य-प्रदेशके चंदा जिलेकी महप्रुरी तहसीलका  
एक राज्य। क्षेत्रफल २१ वर्ग मील है। इसमें खोई  
२५ गांव बसते हैं। लोकसंख्या १० हजारसे अधिक है।

श्रीना-श्रीना (हिं० वि०) १ चतुर्थांशरहित, चार  
भागे कम।

श्रीरा, श्रीरा (हिं०) श्रीरा देखो।

शौच, शौचक देखो।  
 शौचर (हिं० स्त्री०) शौचक, बख्खेडा, उल्लाव।  
 शौचक, शौचक देखो।  
 शौकृत (सं० पुं०) १ समय, वक्त, मौसम।  
 २ यज्ञ, हेतियत।  
 शौकान (हिं० पुं०) लांक, खेतके कट्टे हुये चनाजका  
 टेर।  
 शौकास (हिं०) शौचक देखो।  
 शौकयिक (सं० त्रि०) उक्त्यं सामाख्यवमेदं वेत्ति  
 शोधते वा, शौक्य-ठक्। उक्त्य नामक सामवेदके  
 चक्रका प्रथेता। २ उक्त्य विघ्नाता।  
 शौक्यिक्य (सं० स्त्री०) उक्त्य पाठ। सामवेदमें उक्त्य  
 नामक चक्रके पढ़नेका नियम।  
 शौच (सं० स्त्री०) उच्छां वृषाणां समूहः, शण्  
 टिलोपय। उप-समूह, बेलोंका मुण्ड।  
 शौचक (सं० स्त्री०) उच्छां समूहः, उचन-पुञ्।  
 मोमोद्योत्पन्नमेति। पा ४।२।१८। उपसृष्ट, बेलोंका  
 लुहोरा।  
 शौचगन्धि (सं० स्त्री०) एक अप्सरा।  
 शौच्य (सं० त्रि०) १ उपसम्बन्धीय, बेलसे सरोकार  
 रखनेवाला। (पुं०) २ उच्छाके मोत्रापत्य।  
 शौचद (हिं०) शौच देखो।  
 शौचल (हिं० पुं०) नराकृष्ट भूमि, जो जमीन  
 नये सरसे जोती गयी हो।  
 चाखा (हिं० पुं०) मोचर्म, गायका चरसा या चमड़ा।  
 शौखी (हिं० स्त्री०) असम्य भाषा, टेढ़ी बात।  
 शौखीय (सं० त्रि०) उखेन मोक्षमधीते, शण्।  
 उल्लिखित ब्राह्मणाध्यायो, उल्लिखिका वनाया  
 ब्राह्मण पढ़नेवाला।  
 शौख्य (सं० त्रि०) उच्छायां निष्पन्नम्, उच्छा-यत्  
 स्वार्थे यञ्। १ सखीमें पाक किया हुआ, जो बरतन-  
 में बनाया गया हो। यह शब्द पचादिका विशेषण  
 है। (स्त्री०) २ नगरी विशेष, एक शहर।  
 शौख्यक (सं० त्रि०) उच्छायां जातम्, उच्छा-ठकञ्।  
 चण्डादिभ्यो षञ्। पा ४।३।२३। ख्यालीपक, बरतनमें  
 पकाया हुआ।

शौगद (हिं० वि०) शनोखी रीतिसे गढ़ा हुआ,  
 निराली बनावटवाला।

शौगत (हिं० स्त्री०) १ दुर्गति, बुरी हालत। (वि०)  
 २ शयगत, जानकार।

शौगल (हिं० स्त्री०) चादता, नमी, जमीनके  
 नीचेकी तरी।

शौगाह (हिं० वि०) गभीर, गहरा।

शौगाहना (हिं० क्ति०) संभोग, सुगम।

शौगी (हिं० स्त्री०) १ सात हाथका चाबुश।  
 २ दिल्लीके जूतेकी कारबोशी। ३ हाथी-फंसानेका  
 गद्दा। ४ चपटो। ५ बैलगाड़ी हांकनेको बड़।

शौगुन (हिं०) शौचक देखो।

“पुन शौचके शौगुन शौखी।” (शौकीति)

शौगुनी (हिं० वि०) १ सुपरहित, जो कोई बख्ख,  
 रखता न हो।

शौपसेनि (सं० पुं०) उपसेनस्यापत्यं पुमान्, उप-  
 सेन-इज्। उपसेनका पुत्र कंस।

शौपसेन्य, शौपसेनि देखो।

शौपसेन्य (सं० पुं०) शुभाश्लोष्टिका एक उपाधि।

शौम्य (सं० स्त्री०) उपमाव, खुंखारी।

शौच (सं० पुं०) शौच स्वार्थे ण्य। जलसमूह,  
 बाढ़।

शौचट (हिं० वि०) दुस्तर, मुश्किल, ठासू, मुनसान।

“शौचट नये न शौचट विरे।” (शौकीति)

शौचड़ (हिं० वि०) १ चदच, चनाही। (पुं०)  
 २ अपयकुन, बदमिगुनी। ३ शयक देखो।

शौचर (हिं० वि०) १ विपरीत, उलटा। २ चाख-  
 जनक, शकीव।

शौचक (हिं० क्ति० वि०) शचानक, धोकेसे।

शौचट (हिं० क्ति० वि०) १ शचानक, भटपट।  
 २ धोकेसे। (स्त्री०) ३ शकुचित स्थान, तह्र जगह,  
 फंसान।

शौच्य (सं० पुं०) उत्तयस्यापत्यं पुमान्, शण्।  
 श्रयोदरादित्वात् साङ्। उत्तय श्रयिके पुन शौच्य।  
 इनका नाम दीर्घतमा था।

शौचित ( हिं वि० ) विस्तारहित, खुर न रखनेवाला ।

शौचितो ( सं० स्त्री० ) उचितस्य भावः, उचित-  
थल्-डोप् यतोपः । इनचितवत् । पा १।३।१५० ।  
१ शौचित्य, उपयुक्तता, सुनासिवत् । २ सत्य, राखी,  
सचाई ।

शौचित्य ( सं० स्त्री० ) उचितस्य भावः, उचित-थल् ।  
१ उपयुक्तता, सुनासिवत् । २ सत्य, सचाई ।

शौच ( सं० पु० ) उच्यस्य भावः, उच्य-अथ् । उच्यता,  
मुचंदी, उंचाई ।

शौच्य ( सं० स्त्री० ) उच्य-थल् । उच्यता, उंचापन ।

शौचेऽश्वस ( सं० पु० ) उच्येऽश्वसं स्तार्ये अथ् ।  
इन्द्रका अथ् । अश्वस देखो ।

शौक ( हिं० पु० ) दाहहरिद्राका मूल, दाहहृदीकी  
जड़ । इससे नारङ्गो रंग निकलता है ।

शौज ( अ० पु० ) १ शीघ्रविन्दु, सबसे ऊंचो जगह ।  
२ पद, स्थान, वतया ।

शौजकमाच ( अ० पु० ) रागभेद, किसी निम्नका  
गाना ।

शौजड़ ( हिं० वि० ) बदह, गंवार ।

शौजसं ( सं० स्त्री० ) शौजस स्तार्ये अथ् । जल,  
सेना । शौज देखो ।

शौजसिका ( सं० त्रि० ) शौजसा वर्तते, शौजसूठक् ।  
१ तेजस्वी, शानदार । २ बलवान्, जोरावर । ( पु० )  
३ शूरवीर, बहादुर ।

शौजस्य ( सं० स्त्री० ) शौजसो भावः, शौजस-थल् ।  
१ तेजस्विता, शानदारी । २ उग्रता, जोरावरी ।  
( त्रि० ) ३ बलकारी, ताकत देनेवाला ।

शौजार ( अ० पु० ) यन्त्र, हथियार ।

शौजयनक ( सं० त्रि० ) उज्जयिन्या इदम्, उज्ज-  
यिनी-बुज् । उज्जयिनो उज्जयिनी, उज्जैनसे सरोकार  
रखनेवाला ।

शौजगारि—सुन्दरमित्येके मोक्षापत्य । भमिराममणि  
नाटकमें इनका यचन उद्धृत है ।

शौजिहानि ( सं० पु० ) उज्जिहानस्य अपत्यम्,  
उज्जिहान-इज् । उज्जिहानके पुत्रादि ।

शौजिहायनक ( सं० पु० ) शौजिहायका एक  
पाठ्याना ।

शौज्वस्य ( सं० स्त्री० ) उज्ज्वसस्य भावः, उज्ज्व-  
स्य । १ उज्ज्वलता, सफाई । २ दीप्ति, चमक ।

शौभक ( हिं० त्रि० वि० ) एकाएक, एकवारगी,  
भूपसे ।

शौभड़ ( हिं० स्त्री० ) १ भाघात, प्रहार, झिड़की,  
घका । २ पंजा, खात । ( त्रि० वि० ) ३ भटखेडे  
साथ, घड़से, चखालकर ।

शौटन ( हिं० स्त्री० ) १ गर्म करनेकी शक्त,  
उवाह देनेकी बात । २ तमासपत्र कर्तनकी छुरिका,  
तम्बाकू काटनेका चाकू ।

शौटना ( हिं० त्रि० ) १ उवाचना, पागपर चढ़ा  
गाढ़ा करना । २ उवाचना, शौटना, जलना ।  
३ क्रीधसे भस्मीभूत होना, गुच्छेसे जलने लगना ।  
४ अमण करना, घूमना-फिरना ।

शौटनी ( हिं० स्त्री० ) शौटी जानेवाली चीजके  
चलानेका शौजार ।

शौटा ( हिं० वि० ) खोला, उबला, जो पागपर रखने-  
से जलकर गाढ़ा पड़ गया हो ।

शौटाई ( हिं० स्त्री० ) शौटनेका काम ।

शौटाना ( हिं० स्त्री० ) शौटनेका काम दूसरेसे लेना ।

शौटावनी ( हिं० स्त्री० ) दूध उवाचनेकी मड़ीका  
बरतन, दुदहंडी ।

शौटी ( हिं० स्त्री० ) १ दुग्धवर्धक शौवविशेष,  
दूध बढ़ानेवाली एक दवा । यह शौटकर बनायी  
शोर ध्याने पर गायको खिलायी जाती है । २ उच्छ,  
इसुरस विशेष, उवाला हुआ गन्धेका फल । इसमें  
शौटते समय पानी मिला देते हैं ।

शौड़ ( सं० त्रि० ) उच्छ-क, भतोपः यच्छ छः स्तार्ये  
अथ् । भाड़, तर, गीला ।

शौड़वर, शौड़वर देखो ।

शौड़व ( सं० पु० ) शौड़व स्तार्ये अथ् । पञ्चम  
स्वरमित्यत्र राग । शौड़ देखो ।

शौड़वि ( सं० त्रि० ) १ शौड़वमनुजोन्नयति, शौड़व  
इज् । शौड़व रागका अनुशीलनकारो, जो शौड़वको

मातायजाता हो। (पु०) २ चत्त्रियजाति विशेष, एक नडाका कौम।

भौद्धवीथ (सं० पु०) भौद्धवि चत्त्रिय जातिके एक राजा।

भौद्धपिक (सं० त्रि०) उद्दुपेन प्रवेन तरति, उद्दुप-ठक्। १ उद्दुप द्वारा पार गया हुआ, जो नावसे पार पहुँचा हो। उद्दुपस्य इदम्। २ उद्दुप-सम्बन्धीय, नावसे सरोकार रखनेवाला। (पु०) ३ उद्दुपका यात्री, नावका मुसाफिर।

भौद्धस्वर (सं० कौ०) १ कुष्ठरोग विशेष, किसी किस्मका कोढ़। यह कुष्ठ भौद्धस्वर जैसा रक्तवर्ण, दाहयुक्त एवं कण्डुविशिष्ट होता है। कुष्ठग्रस्त रक्तो लिक्षा देखा। २ ताम्र, ताँबा। ३ ताम्रप्रान्त, ताँबेका बरतन। (पु०) ४ चतुर्दश यमान्तर्गत यम विशेष। ५ एक तपस्वी। ६ पञ्चावयवार्थवर्ती एक छनपद। (त्रि०) ७ उद्दुस्वर काष्ठ-सम्बन्धीय, गूलरकी लकड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

बाह् लोमि (सं० पु० कौ०) उद्दुलोमोऽपत्यम्। उद्दुलोमाके पुत्रादि।

भौद्ध (सं० पु०) भौद्धदेशानां राजा, भौद्ध-भण्। १ भौद्धदेशके राजा। २ भौद्धदेशवासी।

भौद्धपुष्प (सं० कौ०) जवापुष्प, गुड़हरका फूल।

भौद्धलोमी—एक संस्कृत दर्शनग्रन्थ। ब्रह्मचूतमें इनका बचन बहुत है।

भौद्ध (हिं० वि०) उच्छृङ्खल, वेढ्य, छटपटांग।

भौथक (सं० कौ०) वैदिक गीतविशेष, वेदका एक गाना।

भौतस (हिं०) बसंत देखो।

भौतह (सं० त्रि०) उत्तह-सम्बन्धीय। उत्तह देखो।

भौतय (सं० पु०) दीर्घतमाका एक उपाधि या नाम।

भौतरमा (हिं० त्रि०) भवतार सेना, परमेश्वरका पृथिवीपर किसी जीवके आकारमें प्रकट होना।

भौतार (हिं० पु०) भवतार, परमेश्वरका जीवरूप धारण। यह शब्द प्रधानतः विष्णु भगवान्‌के चौबीस भवतारोंका द्योतक है।

भौत्कण्ड (सं० कौ०) उत्कण्डा स्त्रायं थ्यञ्।

उत्कण्डा, खाद्यिम, चाइ।

भौत्कण्डवान् (सं० त्रि०) उत्कण्डित, खाद्यिमन्।

भौत्कर्ष (सं० कौ०) उत्कर्षस्य भावः, उत्कर्ष-थ्यञ्। उत्कर्षता, सबकृत, बढ़ाई।

भौत्कञ्च—१ एक संस्कृतज्ञ कवि। इनका बनाया पद्यावली नामक ग्रन्थ विद्यमान है। २ उत्कण्ठदेशभव।

भौत्तमि (सं० पु०) उत्तमस्यापत्यम्, उत्तम-रथ्।

१ उत्तमके पुत्र एक मनु। यह तीसरे मनु थे।

(त्रि०) २ उत्तमसम्बन्धीय, उत्तमसे सरोकार रखनेवाला।

भौत्तमिक (सं० त्रि०) आकाशके प्रधान देवतादेवै, सम्बन्ध रखनेवाला।

भौत्तमेय (सं० पु०) उत्तम-ठक्। भौत्तमि देखो।

भौत्तर (सं० त्रि०) उत्तरति अस्मात्-उत्-तृ-भण्-स्त्रायं भण्। १ उत्तीर्णकारी, पार, लगानेवाला।

२ उत्तरवासी, जो शिमाक्षमें रहता हो।

भौत्तरपयिक (सं० त्रि०) उत्तरपथेन गच्छति, उत्तर-

पथ-ठक्। उत्तर-पथसे गमनकारी, शिमाक्षकी राहसे

जानेवाला। उत्तरपथेन आहतम्। २ उत्तरपथ-

द्वारा आहत, जो शिमाक्षी राहसे लाया गया हो।

(पु०) ३ उपासक विशेष।

भौत्तरपदिक (सं० त्रि०) उत्तर पदं गच्छति, उत्तर-

पद-ठक्। उत्तरपद-ग्रहण करनेवाला, जो आखिरी

सफ्ज पकड़ता हो।

भौत्तरवेदिक (सं० त्रि०) उत्तर वेद्यां भवः, उत्तरवेदी-

ठक्। उत्तरवेदीसे उत्पन्न, उत्तरकी वेदीसे सम्बन्ध

रखनेवाला।

भौत्तराधर्य (सं० कौ०) उत्तराधराणां भावः, उत्तरा-

धर-थ्यञ्। अर्धनिश्चयता, जंघा-नीचापन, जंघा-

खालो।

भौत्तराह (सं० त्रि०) उत्तरादिन् भवः, उत्तर-आहञ्।

उत्तरादाहञ्। या भाषा-३। (भाषिन्) उत्तर आह्लादि-

उत्पन्न, जो आगे जानेवाले दिनसे सरोकार रखता हो।

भौत्तरीय (सं० पु०) उत्तराया भण्यं पुमान्, उत्तरा-

ठक्। अभिमन्युकी पत्नी उत्तराके पुत्र, परीक्षित्।

भौत्तानपाद (सं० पु०) उत्तानपादस्य भण्यं पुमान्,

उत्तानपाद-भण्। १ उत्तानपाद राजाके पुत्र, भूय।

श्रीतानपादि (सं० पु०) उत्तानपाद-रत्न । श्रीतानपाद देखो ।  
श्रीतपस्विक (सं० त्रि०) उत्पत्त्या पवित्रयुक्तो, उत्तपस्वि-  
ठक । १ नित्य, असन्तो । २ स्वाभाविक, जातो,  
पैदायगी ।

श्रीत्पात (सं० त्रि०) उत्पातस्त्र-इदम्, उत्पात-  
पण । १ उत्पात-सम्बन्धीय, नष्टसतसे सरोकार  
रखनेवाला । २ उत्पातप्रापक, बदफालो फ्राहिर  
करनेवाला ।

श्रीत्पातिक (सं० त्रि०) उत्पाते भवः, उत्पात-ठक ।  
१ दैवविपत्ति-जन्य, बदफालीसे पैदा । २ उत्पात-  
सम्पादक, बदफाल, मनहस । (स्त्री०) १ दैवविपत्ति,  
बदफाली ।

श्रीत्पाद (सं० त्रि०) उत्पादं तदाधिकप्रत्यं वा वेत्ति  
अधीते वा, पण । १ उत्पादवेत्ता, पैदायगको जानने-  
वाला । २ उत्पादकप्रापक सन्याधायी, पैदायग बताने-  
वाली कितान पढ़नेवाला । ३ उत्पादजन्य, पैदायगी ।

श्रीत्पुट (सं० त्रि०) उत्पुटेन निष्ठं तमं, उत्पुट-  
पण । उद्घातिभ्यः । पा ३।१।३१ । प्रकुल, प्रस्फुटित,  
मिश्रकुला, फूला, खिला हुआ ।

श्रीत्पुटिक (सं० त्रि०) उत्पुटेन हरति, उत्पुट-  
ठक । उद्घातुवर्गादिभ्यः । पा ३।१।३१ । सधु वा सुख द्वारा  
हरणकर्ता, चींच या सुँहसे खींचनेवाला ।

श्रीत्र (सं० त्रि०) रूत्र, भद्रा, मोटा ।

श्रीत्स (सं० त्रि०) उत्सं भवः, उत्स-पण । १ प्रस-  
वपक्षे उत्पन्न, भरनेसे निकला हुआ । उत्सस्य इदम् ।  
२ उत्स-सम्बन्धीय, भरने या कृषिसे सरोकार  
रखनेवाला ।

श्रीत्सङ्गिक (सं० त्रि०) उत्सङ्गेन हरति, उत्सङ्ग-  
ठक । मोड़ द्वारा हरण किया जानेवाला, जो  
पुड़ेपर रखा हो ।

श्रीत्सर्गिका (सं० त्रि०) उत्सर्गस्य भावः, उत्सर्ग-  
ठक । १ सामान्य विधियोग्य, सामूली कायदेमें  
पानेवाला । २ देवपूजादिके श्रेष्ठमें उत्सर्ग-सम्बन्धीय ।  
३ प्राकृतिक, कुदरती ।

श्रीत्सर्गिकत्व (सं० स्त्री०) विविक्ती सामान्यता,  
कायदेकी कुञ्जियत या समुमियत ।

श्रीत्सायन (सं० पु०) उत्ससायनं पुमान्, उत्स-  
फल् । अत्रादिभ्यः कल् । पा ३।१।१० । उत्स ऋवि-  
वंशोय, उत्सके वंशे वर्ग रह ।

श्रीत्सुक्क (सं० स्त्री०) उत्सुकस्य भावः, उत्सुक-  
यल । १ उत्सुकता, इच्छायाक, गहरी चाह । २ चिन्ता,  
चफूसोस । ३ अन्तहार शास्त्रीक एक ध्यमिवारी भाव ।

“इदानीं श्रीत्सुक्यं वाच्यं पाठयिष्यामि ।

चित्रतापस्यरासे दशोर्ष निश्चिन्तादिहम् ॥” (वाचिस्पद० ३।१।६)

प्रियजनकी अपातिसे श्रीत्सुक्य उठता है । इसमें  
कासक्षेप, भवेयं, मनस्ताप, व्यस्तत्व, खेदोदगम और  
दीर्घनिश्चांस प्रत्यति प्रकाशित होता है ।

श्रीथरा (हिं० वि०) पगसीर, उथला ।

श्रीदक (सं० त्रि०) उदकेन पूर्णं तदव्याप्ति उद-  
कस्य इदं वा, पण । १ जलपूर्णं कुम्भपुत्र, पानीसे  
भरा चढ़ा रखनेवाला । २ जमीय, घाबी, पानीसे  
सरोकार रखनेवाला ।

श्रीदकज (सं० त्रि०) जमीय वृक्षोसे उत्पन्न, जो  
पानी पीनेसे पैदा हो ।

श्रीदकि (सं० पु०-स्त्री०) उदकस्यापत्यम्, उदक-  
इज् । उदक नामक ऋषिके पुत्रादि, उदककी  
पौसाद ।

श्रीदहि (सं० पु०-स्त्री०) उदहस्यापत्यम्, उदह-  
इज् । १ उदह ऋषांयके पुत्रादि, उदहकी पौसाद ।  
२ सत्रियजाति विगेष ।

श्रीदह्वीय (सं० पु०) श्रीदहि जातिके एक राजा ।

श्रीदहायनि (सं० पु०) उदहस्यापत्यम्, उदह-  
किज् । त्रिवादिभ्यः किज् । वा ३।१।१३१ । उदह ऋषिके  
पुत्रादि ।

श्रीदहन (सं० त्रि०) उदह्यते उत्सिष्य ध्रियतीतिन्  
इति उदहनो जनाधारस्तस्य इदम्, पण । जनाधार-  
स्थित, घड़ेमें भरा हुआ ।

श्रीदहनक (सं० त्रि०) उदहन-पुज् । उदहन-  
निधेति । वा ३।१।५० । जनाधारके निकटस्थ, घड़ेके पास  
पढ़नेवाला ।

श्रीदक्षवि (सं० पु०-स्त्री०) उदक्षोरपत्यम्, इज् ।  
उदक्षु ऋषिके पुत्रादि, उदक्षकी पौसाद ।

श्रीदक्षि ( सं० पु० स्त्री० ) उदक्षस्यापत्यम्, इत् ।  
उदक्ष ऋषिके पुत्रादि, उदक्षकी श्रीलाद ।

श्रीदक्षिण ( सं० द्वि० ) श्रीदक्षिणं शिष्यमस्य, श्रीदक्षि-  
णत् । सुपकार, पाचक, नानावार्ध, दाल-रोटी बनाने-  
वाला । २ नियत समयपर श्रीदक्ष प्राप्त करनेवाला,  
जिसे वंशे वत्स पर दलिया मिले ।

श्रीदक्ष्य ( सं० पु० ) सुष्ठुभ ऋषि ।

श्रीदक्ष्य ( सं० पु० ) श्रीदक्ष्यस्यापत्यं पुमान्, श्रीदक्ष्य-  
इत् । श्रीदक्ष्य ऋषिके पुत्र ।

श्रीदक्षान ( सं० द्वि० ) उदक्षानादागतः, उदक्षान-पण ।

श्रीदक्षिणीय ( सं० स्त्री० ) १ राजघाट, वादघाटको  
दिया जानेवाला । २ उदक्षान प्राप्तसम्बन्धीय । ३ जल-  
धरसम्बन्धीय, जो कुबेरा भरनेसे निकाला गया हो ।

श्रीदक्षिणीय ( सं० द्वि० ) उदक्षिरेदिम्, उदक्षि-कः ।

श्रीदक्षिणीय ( सं० द्वि० ) उदक्षिरेदिम्, उदक्षि-कः ।

श्रीदक्ष्यक, श्रीदक्ष्यि देख ।

श्रीदक्ष्यिक ( सं० द्वि० ) उदक्षे लक्ष्मकाले भवः, उदक्ष-  
ठक् । १ लक्ष्मकाशोत्पन्न, प्रकृते उदक्षसे सम्बन्ध रख-  
नेवाला । ( पु० ) २ हृदयकी एक भावना । पहले  
किये हुये कर्मों से हृदयमें उपजनेवाले सङ्कल्प-विकल्प-  
को जैन 'श्रीदक्ष्यिक' कहते हैं ।

श्रीदक्षिक ( सं० द्वि० ) उदक्षे प्रसितः, उदक्ष-ठक् ।  
१ कुक्षित, भूखा । २ उदक्षमात्र पोषक, सिर्फ पेटको  
भरनेवाला, पेठ ।

श्रीदक्ष्य ( सं० द्वि० ) उदक्षे भवः, यत् ततः स्तार्यं  
पण । १ उदक्षस्थित, जो पेटमें हो । २ पश्चन्तर-  
प्रविष्ट, भीतर घुसा हुआ । ( स्त्री० ) ३ तान्त्र,  
ताबा । ४ मदनफल, मेहनफल । ५ उदुखेर फल,  
गुलर ।

श्रीदक्ष ( सं० पु० ) १ ऋषिविशेष । यह चिकि-  
तादि छह प्रकारके ऋषियोंमें एक रहे । २ सामविशेष ।

श्रीदक्षायि ( सं० पु० स्त्री० ) उदक्षायस्यापत्यम्, उदक्षाय-  
इत् । उदक्षायिके पुत्रादि, उदक्षायकी श्रीलाद ।

श्रीदक्षायीय ( सं० द्वि० ) श्रीदक्षायिरेदिम्, कः । श्रीद-  
क्षायि-सम्बन्धीय ।

श्रीदक्षायि ( सं० पु० ) उदक्षायस्यापत्यम्, उदक्षाय-

इत् । १ ऋग्वेदियोंके तर्पणीय एक ऋषि । २ उद-  
क्षायिके पुत्रादि ।

श्रीदक्षित ( सं० स्त्री० ) उदक्षित्-पण । उदक्षितो  
न्यतरस्याम् । पा ३।३।१८ । १ भवे जलपुत्र धीन, पाषा  
पानी मिला मट्ठा । ( द्वि० ) २ धीन-निर्मित, जो  
मट्ठेमें बनाया गया हो ।

श्रीदक्षित्य ( सं० स्त्री० ) उदक्षित्-ठक्, ठक् कः ।  
उदक्षित्यात् कः । पा ३।३।१९ । भवे जलमिश्रित 'धोस',  
पाषा पानी मिला मट्ठा-या छेव ।

श्रीदक्ष ( द्वि० पु० ) पणयग, वदनामो ।

श्रीदक्ष ( द्वि० स्त्री० ) दुर्भाग्य, आपत, तकलीफ ।

श्रीदक्ष्यान ( सं० द्वि० ) उदक्ष्यानं श्रीलमस्य, य ।  
उदक्ष्यानो यः । पा ३।३।२० जलवासश्रील, पानीमें रहनेवाला ।

श्रीदक्ष ( द्वि० ) पणयग देखो ।

श्रीदक्ष ( द्वि० ) पणयग देखो ।

श्रीदक्ष्य ( सं० स्त्री० ) उदक्षस्य भावः, उदक्ष-पण्य ।

१ उदक्षरता, सङ्कोचत, वाजिज खर्चमें हाथ न लकनेकी  
हालत । २ वाक्पक्षा एक गुण, वातकी बड़ाई ।  
वाक्पक्षे धर्म गौरवको श्रीदक्ष्य कहते हैं । ३ सात्विक  
नायकका एक गुण । शोभा, कान्ति, दीप्ति, माधुर्य,  
पौर धैर्य सात गुण नायकके स्वाभाविक हैं । निरन्तर  
विनीत भावका ही नाम 'श्रीदक्ष्य' है । ४ वेदान्तोक्त  
एक मनोवृत्ति । मनोवृत्ति शान्त, घोर और सूद  
द्विविध होती है । फिर वैराग्य, क्षान्ति और  
श्रीदक्ष्यको घोर मनोवृत्ति कहते हैं । ( पण्यको )

श्रीदक्षीन्य ( सं० स्त्री० ) उदक्षीनस्य भावः, उदक्षीन-  
पण्य । १ उदक्षीनता, लापरवाही । विपद् और  
सम्पदसे उपेक्षा रखनेका नाम श्रीदक्षीन्य है । २ अनु-  
रागकी निवृत्ति, शोककी भद्रममौजूदगी ।

श्रीदक्ष्य ( सं० स्त्री० ) उदक्षस्य भावः, उदक्ष-  
पण्य । १ वैराग्य, जमका मधला । २ अनुरागादि  
शून्यता, सु.शो वगैरहको भद्रम-मौजूदगी । ३ पमनो-  
योग, लापरवाही । ४ उपेक्षा, भद्रम-तनदिही ।

श्रीदीक्ष—गुजराती ब्राह्मणोंको एक ऋषी । श्रीदीक्ष  
११ प्रकारके होते हैं—१ सिद्धपुरी, २ सिद्धोरी, ३ तो-  
लकी, ४ कुनविया, ५ मोचिया, ६ दरजिया, ७ गन्धर्वी,

८ कोलिया, ८ माडवारी, १० कच्छी और ११ राग-  
दिया। इनमें धनेक पौरोहित्य करते हैं। जो श्रीदौच्य  
नीच जातिके पुरोहित होते, उनके हाथका जल पर्यन्त  
मन्थाल लोग नहीं पीते। यह कच्छ, गुजरात और  
खव्सात उपसागरके उपजलमें रहते हैं। श्रीदौच्य  
प्रायश्चित्तता पढ़नेपर सकल प्रकारका कार्य करने  
लगते हैं। इनमें पड़लो तीन शाखा ही जातिके  
पंथमें ये छ हैं। क्योंकि यह नीच जातिका यजन  
नहीं करती। श्रीदौच्योंमें शाखाके भेदसे परस्पर  
विवाहादि प्रचलित है।

श्रीदुस्वर ( सं० त्रि० ) उदुस्वर-पञ्च । शशिरक्त-  
दिग्भाङ्ग । ज। भा। ११३० । यज्ञदुस्वर-सम्बन्धीय, गूजरका  
बना हुआ । २ ताम्रसम्बन्धीय, जो ताँबेका हो ।  
( पु० ) उदुस्वरस्य विकारः, उदुस्वर-पञ्च । ३ उदु-  
स्वर-पात्र, गूजरका बरतन । ४ उदुखल, पोखली ।  
उदुस्वराः सम्यक्सिन् देशे । तक्षिलजलौनि देशे तत्रापि । पा  
११४० । ५ उदुस्वरयुक्त देश, गूजरका मुल्ल । ( भारत,  
वर्षा ११।१२ ) वराहमिहिरकी वर्षणसे अनुमान होता,  
कि श्रीदुस्वर देश पञ्चाशमें था । फिर किसीके मतमें  
पञ्चाशके कागड़ा जिलेकी नूरपुर तहसीलका माघोन  
नाम दहस्यरे वा श्रीदुस्वर रहा । ( *Unnaingham's*  
*Archaeological Survey of India, Vol. XIV. p. 116* )

पूर्वकालपर भारतवर्षमें श्रीदुस्वर नामका दूसरा  
भी जनपद था । प्राचात्य भौगोलिक रेगिझास् इस  
स्थानका नाम मोम्बरस् ( *Mombaros* ) लिख गये  
हैं। इस जनपदका रहना वर्तमान कच्छ देशमें  
अनुमान किया जाता है। ६ यमकी एक मूर्ति ।  
७ उदुस्वरहचकी शाखा । ( स्त्री० ) ८ यज्ञदुस्वरकाष्ठ,  
गूजरकी लकड़ी । ९ यज्ञदुस्वरफल, खानेका गूजर ।  
१० एग मडाकुठ । ऊ० देशी । ११ ताम्र, ताँबा ।  
श्रीदुस्वरक ( सं० पु० ) उदुस्वरस्य विषयी देशः, उदु-  
स्वर-पुत्र । १ उदुस्वरविषय देश, उदुस्वरके रहनेका  
मुल्ल । ( स्त्री० ) उदुस्वरानां समूहः । उदुस्वरसमूह ।  
श्रीदुस्वरच्छद ( सं० पु० ) दम्तोष्ठव, दाँताका पेड़ ।  
श्रीदुस्वरपि—प्रतनिर्णय नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता ।  
श्रीदुस्वरायण ( सं० पु० ) उदुस्वरस्य अपत्यं पुमान्,

उदुस्वर-पत्न्य । १ उदुस्वरवंशीय । २ किसी देया-  
करणका नाम ।

उदुस्वरि ( सं० पु० ) उदुस्वरस्यापत्यं पुमान्, उदुस्वर-  
इव् । १ उदुस्वरवंशीय । २ उदुस्वरोंके एक राजा ।  
श्रीदुस्वरो ( सं० स्त्री० ) उदुस्वर-पत्न्य-स्त्री । १ उदु-  
स्वर-शाखा, गूजरकी डाल । २ क्षमिमेद, एक कोड़ा ।  
श्रीदाव ( सं० स्त्री० ) उदुगातुर्धर्म्यम्, उदुगाष्ट-पत्न्य ।  
१ उदुगाता नामक षट्त्विका कर्म । ( त्रि० ) २ उदु-  
गातासम्बन्धीय ।

श्रीदुगाहमानि ( सं० पु० ) उदुगाहमानस्य अपत्यं  
पुमान्, उदुगाहमान-इव् । उदुगाहमान-वंशीय ।

श्रीदुपमण ( सं० त्रि० ) उदुपमणाय माधुः, उदुपमण-  
पण् छान्दसत्वात् इत्यभः । १ ऊर्ध्वपहणके उपयुक्त,  
दीर्घामें जोरसे पढ़नेके योग्य । ( स्त्री० ) २ दीर्घामें  
उच्चेःस्वरसे पढ़ा जानेवाला मन्त्र वा वाक्य ।

श्रीदण्डक ( सं० त्रि० ) उदण्ड-पुत्र । उदण्डका  
निकटवर्ती ( देगादि ) ।

श्रीदान, श्रीदानक देशी ।

श्रीदानक ( सं० स्त्री० ) उद्दालेन सञ्चितम्, उद्दाल-  
पण् संज्ञायां कन् । १ बलोककोटसञ्चित मधु,  
दीमकका इकड़ा किया हुआ गहद । बलोकमध्यस्थ  
कपिलवर्णकोट पत्र कपिलवर्ण जो मधु सद्य करत,  
उसे श्रीदानक मधु कहते हैं। यह कपाय, छप्प,  
कट और कुष्ठरोग-विनाशक होता है। ( *मान्यत्र* )  
२ तीर्थक्षेत्र । इस तीर्थमें स्नान करनेपर सर्वपापसे  
मुक्तिनाम होता है ।

श्रीदानकमकरा ( सं० स्त्री० ) श्रीदानक-मधुक्रत यकंरा,  
दीमकके गहदका चीनो। यह कुष्ठदि दाँपोंकी  
दूर करती और सर्वसिद्धि देती है। ( *राजनिघण्टु* )

श्रीदानकायन ( सं० पु० ) उद्दालकस्यापत्यं पुमान्,  
उद्दालक-पत्न्य । उद्दालक षट्त्विक-वंशीय ।

श्रीदानकि ( सं० पु० ) उद्दालकस्यापत्यं पुमान्, उद्दाल-  
क-पत्न्य । उद्दालकपुत्र, गौतम षट्त्विक ।

श्रीदेशिक ( सं० त्रि० ) उद्देशस्य इदम्, उद्देश-ठक् ।  
१ उद्देश-सम्बन्धीय, बाहिर करनेवाला । २ निर्देश  
करनेवाला, जो दिशाव बताता हो ।



भौदत्य (सं० स्त्री०) उदितस्य भावः, उदित-व्यञ् ।  
अविनीत भाव, छुटता, गुस्ताफी, चकलड़पन ।

भौद्यारिक (सं० त्रि०) उद्याराय प्रभवति, उद्यार-ठञ् ।

१ उद्यारकें लिये दिया जानेवाला, भौरुस होनेके  
कागिज, जो छिस्से से सरोकार रखता हो ।

“विपरीतारिकं दीपनीकायश्च प्रधानतः ।” (सुत्र ५।१३०)

भौद्यस्य (सं० स्त्री०) हर्षयुक्ता उत्तेजना, खुशीसे  
भरा हुआ कोश ।

भौद्यारि (सं० पु०) उद्यारस्य षट्पेरपत्यम्, इज् ।  
उद्यार षट्पिके मूत्र, खण्डिक ।

भौद्विज (सं० स्त्री०) उद्-भिद्-जन-ङ स्त्रार्थे ण् । १ पांशु-

लवण, शोरा । २ शाश्वरि लवण, सांभर नोम । भौद्विश्चो ।

भौद्विद (सं० स्त्री०) उद्विद स्त्रार्थे ण् । १ पांशु-

लवण, शोरा । २ शाश्वरिलवण, सांभर नमक । यह

लवण स्वयं ही भूमिसे उत्पन्न पर्यात् खनिज होता

है । भौद्विदलवण लघु, तीक्ष्ण, उष्ण, वमनकारक,

वायुका प्रसुतोमक, तिक्त, कटु एवं कोष्ठवृद्धता, पानह

घोर शूलनाशक है । २ जलविशेष, भरनेका पानी ।

निष्कभूमिसे ऊपरको उत्थित अर्थात् जलामयस्य

जलको भौद्विद कहते हैं । यह समुद्र, पित्तनाशक

घोर पविदाही होता है । समुद्रतले वर्षाकालमें ठण्डिके

जलका अभाव पड़नेसे इसका व्यवहार विहित बताया

है । ४ उद्यादिजात द्रव्य, पेड़ वगैरहसे पैदा होने-

वाली चीज । उद्यादिसे उत्पन्न होनेवाली भूल,

वस्त्रक, काष्ठ, निर्यास, डंठल, रस, पल्लव, चार, चीर,

फल, पुष्प, भस्म, तैल, कण्टक, पत्र, कन्द और

बहुतरका नाम भौद्विद है । वेद्यकमें उक्त सकल द्रव्यके

वहणका विधि विद्यमान है । (चरक)

(त्रि०) ५ निर्गमशील, निकलनेवाला । ६ विजयी,

राष्ट्र निकासनेवाला ।

भौद्विदजल (सं० स्त्री०) १ उद्विदजात जल, पेड़से

निकलनेवाला पानी । २ प्रस्तरसलिल, पहाड़से

भरनेवाला पानी । निष्कभूमिको फोड़ धारावाहिक

रूपसे वहनेवाला जल भौद्विद कहलाता है । यह

पित्तघ्न, पविदाही, अतिशीतल, शीघ्रन, समुद्र, वस्त्र,

ईशत्वातकर और सद्य होता है । (आयुर्वेद)

भौद्विदद्रव्य (सं० स्त्री०) धृषिषीको फोड़ उत्पन्न  
होनेवाला पदार्थ, जो चीज जमोन्को फोड़ कर पैदा  
हो । वनस्पति, जल आदिको भौद्विदद्रव्य कहते हैं ।

भौद्विद्य (सं० स्त्री०) उद्विदो भावः, उद्विद-व्यञ् ।

१ उद्यादिको उत्पत्ति, पेड़ वगैरहकी पैदायश ।

२ जिष्णुता, फलैहमन्दो, जौतकी राह निकासनेका

काम ।

भौद्याव (सं० त्रि०) उद्यावस्व व्याख्यातो धनः

उद्यावे भवो वा, उद्याव-ण् । १ उद्यावकी व्याख्या

करनेवाला, जो मेलका वयान करता हो । २ उद्याव-

जात, कोड़ेसे पैदा ।

भौद्योगिक (सं० त्रि०) चैष्टा सम्बन्धीय, कोशिके

सुताक्षिक, जो उद्योगसे सम्बन्ध रखता हो ।

भौद्याहिक (सं० स्त्री०) उद्याहकाले सम्बन्ध, उद्याह-

ठञ् । १ विवाहमें प्रातः स्त्रीधन, शादीमें घोरतको

मिलनेवाली दौलत । इस धनमें शातिगणका अंश

नहीं रहता । पित्रधनको सति न पढ़वा जो स्वयं

कमाया अथवा मित्रसे या उद्याहकालमें पाया जाता,

उसमें शातिगणका अंश नहीं आता ।

“पित्रदद्याद्विवाहो न यद्वधुः स्वयमर्जयेत् ।

नैवभीत्यादिबन्धो व दत्तासना न यद्वधुः ।” (याज्ञवल्क्य)

भौध (हिं० पु०) १ अवध, अयोध्याके उत्तर-उत्तर या

मुख । चरक श्लो । (स्त्री०) २ अवधि, बंधा हुआ वस्त्र ।

भौधनीहरा (हिं० पु०) मस्त्रक उन्नतकर गमनशील

हस्ती, जो हाथी सर उठा कर चलता हो ।

भौधस (सं० त्रि०) उधस-इदम्, उधस्-ण् । १ उधस्-

सम्बन्धीय, औपायेकी बाख्से सरोकार रखनेवाला ।

(स्त्री०) २ पशुदुग्ध, औपायेका दूध ।

भौधस्य (सं० स्त्री०) उधसि भवम्, उधस-व्यञ् ।

पशुदुग्ध, औपायेका दूध ।

भौधि (हिं०) अवधि श्लो ।

भौधिया (हिं० पु०) तस्कर, चोर ।

भौनत् (हिं०) अवधत घोर चरति श्लो ।

चौनापोना (हिं० वि०) १ प्रायः तीन अंशमुख, कोई

तीन हिस्से रखनेवाला । (त्रि० वि०) २ तीन अंश-

पर, तीन हिस्सेमें, कुछ काम, मुकसान उठाकर ।

शौनीत (सं० स्त्री०) अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। गुरुभोजन, अमिषान्दि आसन्नहण और अश्वोसेवा-वर्जनसे स्वस्थान-च्युत शुक मेहनमें मारा जाता है। उससे मूत्रकण्डू सपन्नता है। फिर कुपित शोषित मेहनमें भ्रून उठता है। मेहन क्रिय, पक्ष, कण्डूवत् पिड़कायुक्त तथा मक्षिकाहत रहता और अपने स्थानमें प्रवेश नहीं करता। (अप० ८)

शौन्दूर (सं० स्त्री०) ताख, ताबा।

शौचत्य (सं० स्त्री०) उन्नतस्य भावः, उन्नत-त्यज्।

१ उन्नति, तरकी। २ उन्नता, उंचाई।

शौच्य (सं० स्त्री०) उच्येतुः कर्म भावो वा, उच्येष्ट-अण्। १ उच्येय, उत्सोहन, उच्येताका कार्य, उठाव, चढ़ाव। २ उच्येद्वत्।

शौचार्थिक (सं० त्रि०) उपकार्यं भवः, उपकार्य-ठक्। कार्यके समीप उत्पन्न, कौनके पास रहनेवाला।

शौचकलाप्य (सं० त्रि०) उपकलापे भवन्, उप-कलाप-अण्। कलाप-समीपवर्ती, हलकेके करीब रहनेवाला, जो वरिष्ठों के पास हो।

शौचकायन (सं० पु०) उपकलापत्यं पुमान्, उपक-फक्। उपकथ्यशीय, उपकका लड़का वगैरह।

शौचकार्य- (सं० स्त्री०) १ गृह, मकान्। २ पट-मण्डप, डेरा, रायटी।

शौचकुर्वाणक (सं० त्रि०) उपकुर्वाण-सम्बन्धीय, ब्रह्म-चर्याश्रमसे गृहस्थाश्रममें जानिवाले ब्राह्मणके सुताजिक।

शौचकूलिक (सं० त्रि०) उपकूलस्य इदम्, उपकूल-ठक्। उपकूल-सम्बन्धीय, साहित्यके सुताजिक, किनारेसे सरोकार रखनेवाला।

शौचकर्मिकनिर्जरा (सं० स्त्री०) जेनशास्त्रानुसार निर्जरा-भेद। 'जेन दो निर्जरा वा कर्मचय मानते है। शौचकर्मिक निर्जरामें तपस्याके प्रभावसे कर्मको उठा चय कराते है।

शौचगव (सं० पु०) उपगोवपत्यं पुमान् उपगोविदं वा, उपगु-अण्। १ उपगुका-पुत्र, उपगुवशीय। २ उपगु-सम्बन्धीय, उपगुसे सरोकार रखनेवाला।

उपगु गोप जातिका नामान्तर है। अक्षयार्णव द्वारा उसके पुरोहितका भी पर्यं निकलता है। को

कि जो जिस वर्णका याज्ञक होता, उसमें उसीका वर्णत्व पा जाता है।

“व वर्णं यागवेद यत्तु स तत्तर्जनमाहुः शान्।” (श्रुति)

शौचगवक (सं० पु०) उपगवानी समूहः, उपगव-वुक्। गोपगोवपति वा भा० ४२। १ शौचगव समूह, शौचगवोंका मजमा। (त्रि०) २ शौचगव-सम्बन्धीय। ३ शौचगव-पूजक।

शौचगवि (सं० पु०) उपगवस्य गोपतिरपत्यं पुमान्, उपगव-इक्। १ गोपतिपुत्र। २ गृहस्थतिष्ठान रहव।

शौचगवस्तिक (सं० पु०) उपगवस्य आसक्तस्य भूतः, ठक्। गृहस्थ, राहुपक्ष चन्द्र वा सूर्य, कुक्षु।

शौचगविक (सं० पु०) उपगव-ठक्। राहुपक्ष चन्द्र वा सूर्य।

शौचगारिक (सं० पु०) १ उपचार, रसाई, पट्टा। (त्रि०) उपचारस्य इदम्, ठक्। २ उपचार-सम्बन्धीय, रसाईके सुताजिक। ३ साजदार, रंगीन, नवनी।

शौचगुण्डसिक (सं० वि०) उपगुण्डस्यानिर्गतम्, उपगुण्ड-ठक्। १ मियवाक्य द्वारा निश्चय, मोक्षी बातसे निकला हुआ। (स्त्री०) २ मात्राहृतविशेष।

“वर्गं विभेदं इति सन्धिः कलापान् चमे सु चर्चिरत्तराः।

न यानापरान्तरे। कलापेतालीयेऽपि रक्षी गृहः।

पर्यंको शौ तर्जं न वे शौपण्डसिकं शौपण्डसिकम्।” (अनुरा० ४८)

विषय अर्थात् प्रथम एवं द्वितीय पादमें ३ मात्रा और सम अर्थात् द्वितीय तथा चतुर्थ पादमें ८ मात्रा रहने और समस्त मात्रा केवल लघु वा केवल दीर्घ न लगने, प्रत्येक सम अर्थात् द्वितीय, चतुर्थ एवं षष्ठ मात्रा द्वितीयादि मात्राके आश्रित न पडने और परि-शेषको रगण (अन्धवर्ण लघु और उसके संभय पार्श्वस्थ दो गुरुवर्णविशिष्ट अक्षरद्वयका नाम रगण है), एक लघु और एक गुरु वर्ण लुङ्गनेसे वेतानोय छन्द होता है। फिर ४८ वेतानोयवासि प्रतिपादके गेय भागपर रगण (आद्यक्षर लघु और परवर्ती अक्षरद्वय-गुरु होनेसे रगण कहलाता है) और रगण रहनेसे

श्रीपञ्चानुक्तिक वृत्त वगता है। ३ पुण्यिमाया नामकं छन्दः। प्रप्तिमाया दीप्तिः।

“पुण्यिमायाभिर्यै विनिर्देश्यन्तस्त्रिभिः” (उत्तरभाष्य)

श्रीपञ्चानुक्त (सं० त्रि०) उपपञ्चानुक्तानुक्तस्यैव भवः, उपपञ्चानुक्त-ठक्। जानुका समीपवर्ती, घटनीके पास या ऊपर रहनेवाला।

श्रीपञ्चानुक्ति (सं० पु०) उपपञ्चानुक्तिपत्यं पुमान्, उपपञ्चानुक्ति-रञ्। उपपञ्चानुक्ति के पुत्र, राम नामक एक ऋषि।

श्रीपद्देशिक (सं० त्रि०) उपपद्देशिक जीवति, उपपद्देश-ठक्। वेतनादिभ्यो जीवति। वा ३।३।१। १ उपपद्देशोपजीवो, नसीहतसे जिन्दगी बसर करनेवाला। २ उपपद्देशानुसार प्राप्त, नसीहतसे मित्रा हुआ।

श्रीपद्भक्ति (सं० त्रि०) उपपद्भक्तमधिकृत्य कृतः, उपपद्भ-ठक्। उपपद्भक्त-सम्बन्धीय, पाधारसे सरोकार रखनेवाला।

“वयात् श्रीपद्भक्तिमयाय” व्याख्यासामः। (उद्युत)

श्रीपद्भट्ट (सं० पु०) उपपद्भट्ट स्वार्थं यञ्। १ पद्भक्तियै यत्नीय देवविशेष। (स्त्री०) २ साक्षी रहनेकी स्थिति, जिस जालतमें गवाह रहें। ३ निरोधण, देख-भाल।

श्रीपद्भक्त्य (सं० त्रि०) उपपद्भक्त्यै इदम्, उपपद्भक्त्य-यञ्। १ उपपद्भक्त्य-सम्बन्धीय, इनका या कुफु की मुतासिक। (स्त्री०) स्वार्थं यञ्। २ उपपद्भक्त्य, इनका, कृष्ण। ३ गोप्य धर्म, इसको नेकी।

श्रीपद्भक्ति (सं० त्रि०) क्ली०, बोकाबाज।

श्रीपद्भक्तव (सं० पु०) उपपद्भक्तवपत्यं पुमान्, उप-धेनु-भण्। धन्वन्तरिके शिष्य एक ऋषि।

श्रीपद्भक्त्य (सं० त्रि०) उपपद्भक्त्यै टक्। इतिरूपवि-षयेऽङ्। वा ३।३।१। १ रयका एक श्वयय, गाढीका पहिया। (त्रि०) २ रयके श्वयय विशेषका कार्य देनेवाला, जो गाढीके पहियेमें किसी हिस्से पर लगाता हो।

श्रीपञ्चानुक्तिक (सं० त्रि०) उपपञ्चानुक्तं प्रयोजनमर्थे, उपपञ्चानुक्त-ठक्। उपपञ्चानुक्तिक अथवा उपपञ्चानुक्त-ठक्। १ उपपञ्चानुक्तिक प्रयोजनीय, जनेजमें लगनेवाला। उप-

पञ्चानुक्तिक इति। २ उपपञ्चानुक्तिक, जनेजमें सरोकार रखनेवाला।

श्रीपञ्चानुक्तिक (सं० त्रि०) उपपञ्चानुक्तिक भवः, उपपञ्चानुक्तिक-ठक्। नासिकाके समीप उत्पन्न, नाकके पास निकलनेवाला।

श्रीपञ्चानुक्ति (सं० त्रि०) उपपञ्चानुक्ति स्वार्थं टक्। १ उपपञ्चानुक्ति नासिकागत भावसे रखा जानेवाला द्रव्य, धरोहर। २ भोग करनेको प्रोत्तिपूर्वक दिया जानेवाला द्रव्य, काममें लानेके लिये प्यारसे दी जाने-वाली चीज। (त्रि०) ३ उपपञ्चानुक्ति-सम्बन्धीय, धरोहरसे सरोकार रखनेवाला।

श्रीपञ्चानुक्ति (सं० त्रि०) उपपञ्चानुक्ति जीवति, उप-पञ्चानुक्ति-ठक्। उपपञ्चानुक्ति उपपञ्चानुक्ति के अनुसार जीविका निर्वाह करनेवाला।

श्रीपञ्चानुक्ति (सं० पु०) उपपञ्चानुक्ति-यञ्। १ उप-पञ्चानुक्ति मात्रका वेद्य परमात्मा। २ उपपञ्चानुक्ति के उपपञ्चानुक्ति आधारण करनेवाला। (त्रि०) ३ ब्रह्म-प्रतिपादक। ५ उपपञ्चानुक्ति द्वारा प्रतिपादित। ६ उप-पञ्चानुक्ति की व्याख्या करनेवाला।

श्रीपञ्चानुक्ति, श्रीपञ्चानुक्ति देखो।

श्रीपञ्चानुक्ति (सं० त्रि०) उपपञ्चानुक्ति नौविषमोपे भवः, उपपञ्चानुक्ति-ठक्। नौविषम समीपवर्ती, नारके पास रहनेवाला, जो कमरके नजदीक पड़ता हो।

श्रीपञ्चानुक्ति (सं० त्रि०) १ उपपञ्चानुक्ति-सम्बन्धीय, वनावटी किछोसे सरोकार रखनेवाला। २ उप-पञ्चानुक्ति की योग्य, जो वनावटी किछोसे लिफनेके लायक हो। ३ विलक्षण, अनोखा।

श्रीपञ्चानुक्ति (सं० त्रि०) उपपञ्चानुक्ति इदम्, उपपञ्चानुक्ति-यञ्। बाहुमूल सम्बन्धीय, बगलो, जो काँखमें रहता हो।

श्रीपञ्चानुक्ति (सं० त्रि०) उपपञ्चानुक्ति कृतम्, उपपञ्चानुक्ति-ठक्। युक्तियुक्त, जाजिर, मतलब निकास देनेवाला। निरङ्गशरीरको श्रीपञ्चानुक्ति कहते हैं।

श्रीपञ्चात्मिक (सं० त्रि०) उपपञ्चात्मिक संसृष्टः उप-पात-ठक्। गोपवादि उपपञ्चात्मिक-मिश्र, जो काँख-इनका गुनाह वार चुका हो। (स्त्री०) २ किसी जेन उपपञ्चात्मिक नाम। अंग देखो।

श्रीपपादुक् (सं० त्रि०) उपपादुक् इदम्, उप-  
पादुक्-ठक् । १ देवदेह-सम्बन्धोय । २ नारकिदेह-  
सम्बन्धोय । ३ अपने आप उत्पन्न किया हुआ, जो  
खुद-वखुद निकाला गया हो ।

श्रीपवाहयि (सं० पु०) उपवाहोरपत्वं पुमान्, उप-  
वाह-ठक् । उपवाह बंधोय, उपवाहके खान्दानमें  
पैदा होनेवाला ।

श्रीपभृत् (सं० त्रि०) उपभृता पावेषे सन्ति,  
उपभृत्-थञ् । १ भक्ष्य काष्ठके यज्ञपात्रमें सन्ति,  
पौष्टिकी लकड़ोके लयवर्तमें इकट्ठा किया हुआ ।  
२ उपभृत्-सम्बन्धोय ।

श्रीपमन्यव (सं० पु०) उपमन्योरपत्वं पुमान्, उप-  
मन्य-थञ् । १ उपमन्यके पुत्र । २ महायाल  
जायलका एक नाम । ३ प्राचीन-याल । ४ एक प्राचीन  
वैयाकरण । यास्कने इनका वचन उद्धृत किया है ।

श्रीपमिक (सं० त्रि०) उपमया निर्दिष्टः, उपमा-ठक् ।  
उपमा द्वारा निर्दिष्ट, मिसालका काम देनेवाला ।

श्रीपम्य (सं० त्रि०) उपमा एव, स्त्रायें थञ् ।  
'साहय्य, वरावरो । इसको संस्कृत पर्याय चतुकार,  
भनुहार, साम्य, तुला, उपमा, कच और उपमान है ।  
एकसे दूसरेके साहय्यका प्रकाशन श्रीपम्य कहता  
है । (चरक)

श्रीपयज (सं० त्रि०) उपयज इदम्, उपयज-थञ् ।  
उपयज-सम्बन्धोय ।

श्रीपयिक (सं० त्रि०) 'उपायेन ज्ञानः, उपाय-ठक्  
'कृत्स्नय । १ न्याय, वाजिब । २ उपयुक्त, दुरुस्त,  
ठीक । (श्लो०) स्त्रायें-ठक् । ३ उपाय, तद्बोध ।  
"चित्तौपरिकं गरीयसीम् ।" (भारवि १।५२)

श्रीपयोगिक (सं० त्रि०) उपयोगः प्रयोजनमस्य,  
उपयोग-ठक् । उपयोग-सम्बन्धोय, लगानेसे सरोकार  
रखनेवाला ।

श्रीपर (सं० त्रि०) दण्ड्यंशोय, दण्डके धरानमें  
पैदा होनेवाला ।

श्रीपराजिक (सं० त्रि०) उपराज-ठक् । कण-  
दिग्दर्शनो । वा ३।१।१६ । उपराज-सम्बन्धोय, वाद-  
शास्त्री अगह काम करनेवालेके सुताज्ञिक ।

श्रीपराधय (सं० त्रि०) उपराधस्य कर्म भावो वा,  
उपराधय-थञ् । गुणजननाप्रवादितः कर्मणि च । वा ३।१।१७ ।  
उपसेवकता, नौकरी-चाकरी ।

श्रीपरिट (सं० त्रि०) उपरिष्ठात् भवः उपरिष्ठ-  
थञ् । ऊपरसे उत्पन्न, जो ऊपर हो ।

श्रीपरिष्ठाक (सं० त्रि०) कामसूत्रका एक अंग ।  
इस शृङ्गारप्रिय ग्रन्थको वात्स्यायनने लिखा था ।

श्रीपरैधिक (सं० पु०) उपरैधः प्रयोजनमस्य, उप-  
रैध-ठक् । पौलुदण्ड, पौलका डंडा ।

श्रीपरैधिक (सं० पु०) उपरैधः प्रयोजनमस्य, उप-  
रैध-ठक् । १ पौलुदण्ड, पौलकी लकड़ोका मोटा ।  
(त्रि०) २ उपरैध-सम्बन्धोय, रोक टोकसे सरोकार  
रखनेवाला । ३ छपासे होनेवाला, मेहरवानीसे  
सुताज्ञिक ।

श्रीपल (सं० त्रि०) उपलदागतः, उपल-थञ् । उल्लिख-  
दिशोऽप्य । वा ३।१।१८ । १ उपलसे आगत, पत्थरसे उगाहा  
या बटोरा हुआ । २ प्रस्तर-सम्बन्धोय, पथरीला ।

श्रीपवमधिक (सं० त्रि०) उपवसये भवः, उपवसय-  
ठक् । १ उपवसय-सम्बन्धोय, उपवसयमें किया जाने-  
वाला । उपवसय दीपो । (श्लो०) २ सामवेदका परि-  
शिष्टविशेष ।

श्रीपवसय (सं० त्रि०) उपवसये भवः, उपवसय-  
थञ् । १ उपवसयमें कर्तव्य । २ उपवसय-सम्बन्धोय ।

श्रीपवस्त (सं० त्रि०) उपवास, नक्षत्र, फाका, न  
खानेकी क्षान्त ।

श्रीपवस्त (सं० त्रि०) उपवस्त-थञ् । १ उपवास,  
फाका । २ उपवासके उपयुक्त खाद्य, फाकेमें खाने  
लायक चीज ।

श्रीपवस्तज (सं० त्रि०) उपवासजे उपयुक्त खाद्य,  
फाकेमें खाने लायक चीज ।

श्रीपवास (सं० त्रि०) उपवासे दीयते, उपवास-  
थञ् । अर्घ्यदिशोऽप्य । वा ३।१।२० । १ उपवासके व्रतमें  
देय, जो फाकेमें देने लायक हो । उपवासस्य इदम् ।  
२ उपवास-सम्बन्धोय, फाकेके सुताज्ञिक ।

श्रीपवाधिक (सं० त्रि०) उपवासे माधुः, उपवास-  
ठक् । अर्घ्यदिशोऽप्य । वा ३।१।२१ । उपवासके उपयोगी,

फाँके के लायक। उपवासाय प्रभवति। २ उपवास-  
समय, पाका कर सकनेवाला।

श्रीपवास्व ( सं० स्त्री० ) उपवास स्वार्थे ण्यत् । उप-  
वास, फाँका। (सायक ३०० पः)

श्रीपवाद्या ( सं० पु० ) उपवाद्या स्वार्थे ण्यत् ।

१ उपवाहन, रथादि, सवारी, गाड़ी वगैरह। ( त्रि० )

२ सवारी के लिये खींचा हुआ। ३ सवारी के लिये  
बनाया हुआ।

श्रीपविन्द्वि ( सं० पु० ) उपविन्द्वोरपत्यं पुमान्, उपविन्दु-  
ह्यत् । उपविन्दुपुत्र, उपविन्दु नामक ऋषिके लड़के।

श्रीपवैशि ( सं० त्रि० ) षड्भ्यंके गोत्रापत्य ।

श्रीपवैशिक ( सं० त्रि० ) उपवैशेन जीवति, उपवैश-  
ठक् । वैशके द्वारा जीविका निर्वाह करनेवाला, वृष्ट-  
इयिषा।

श्रीपग्रमिक ( सं० त्रि० ) उपग्रमक, ठण्डा कर  
देनेवाला।

श्रीपशिवि ( सं० पु० ) १ उपशिवके गोत्रापत्य ।

श्रीपशैविक ( सं० त्रि० ) उपशैवेण निवृत्तः, उप-  
शैप-ठक् । उपशैप-सम्बन्धीय, लम्हके सुतात्मिक,  
मैत्री। सिद्धान्तकौमुदीमें चिविध आधारे लिखा  
है,—श्रीपशैविक, वैशयिक और अभिव्यापक।

श्रीपसंक्रमण ( सं० त्रि० ) उपसंक्रमणे दीयते, उप-  
संक्रमण-ण्यत् । उपसंक्रमणमें देने या कर लेने योग्य।

उपसंक्रमण देखो।

उपसंस्थानिक ( सं० त्रि० ) उपसंस्थानस्य इदम्,  
उपसंस्थान-ठक् । १ उपसंस्थान-सम्बन्धीय, एक  
हीमें कहा हुआ। २ परिशिष्ट, त्रयोमयी।

श्रीपसट ( सं० पु० ) उपसत् शब्दोऽस्मात्प्रसृज् उपसद-  
ण्यत् । विष्वादिमोऽयः, वा ३/४/११। १ उपसद शब्द-  
मुक्त आध्याय वा अनुवाक। उपसद समीप स्थानं तत्  
अस्यास्ति। २ हन्त, जोड़ा। ३ एकाह यज्ञविशेष।

श्रीपसर्गिक ( सं० पु० ) उपसर्ग-ठक् । १ सचि-  
पातन रोग, सरणाम को बीमारो। वैद्यक मतमें कफ  
अनुकोम वायु और पित्तसे मिल रोगोत्पादन करता  
है। उस समय रोगीके स्नेह चलता और शीतलताका  
वेग बढ़ता है। फिर वायु-प्रतिलोम पड़नेसे कुछ

स्वास्थ्य भी बोध होता है। २ रसोका नाम श्रीपसर्गिक  
वा सचिपातन रोग है। सुश्रुतके कथनानुसार पूर्वोत्-  
पन्न व्याधिके निदानादि द्वारा जो अपर रोग भावमें  
लग जाता, वही श्रीपसर्गिक कहाता है। यह रोग  
उपद्रवसे उठता है।

“श्रीपसर्गिकरोगश्च क्लृप्तमिति नराधरम् ।” ( भावप्रतिपत्ति टीका )

२ पापरोगादि। १ भूतादिके पापविशेष उत्पन्न  
रोग। ( त्रि० ) ४ उपसर्ग-सम्बन्धीय, सुफुल्लम् ।  
५ विषदका सामना कर सकनेवाला, जो प्राप्त भोग  
मकता हो। ६ परिवर्तन-सम्बन्धीय, तथैव लके सुता-  
त्मिक। ७ साथ लगा हुआ। ८ अदभुत, अजीब।

श्रीपसौर्य ( सं० त्रि० ) उपसौर्यकृत्, उपसौर-जः ।  
अभोगलभ्यः, वा ३/४/१०। १ साक्षात्कोत्पन्न, हस्तसे निकला  
हुआ। २ साक्षात्के निकटस्थ, उसके पास रहनेवाला।

श्रीपस्थान ( सं० त्रि० ) उपस्थानं ग्रीवमस्य, उप-  
स्थान-ण्यत् । कदादिश्रीः, वा ३/४/१२। उपस्थानग्रीव,  
उपासक, शत्रुवशात्, खिदमतगार।

श्रीपस्थानिक ( सं० त्रि० ) उपस्थानेन जीवति, उप-  
स्थान-ठक् । सेवाध्यवसायी, खिदमतगारोसे जिन्दगी  
बसर करनेवाला।

श्रीपस्थिक ( सं० त्रि० ) उपस्थेन जीवति, उपस्थ-ठक् ।  
कारकमेंजीवी, जिनासे जिन्दगी बसर करनेवाला।

श्रीपस्थिका ( सं० स्त्री० ) वैश्या, रंडी।

श्रीपस्थ्य ( सं० त्रि० ) स्थूणांका समीपवर्ती, सिद्धान्तके  
मजदूरी रहनेवाला।

श्रीपस्थ्य ( सं० स्त्री० ) उपस्थ्याङ्गम्, उपस्थ-ण्यत् ।  
जननेन्द्रियस्य सुखादि, जिनाकारोका मला।

श्रीपहारिक ( सं० त्रि० ) उपहाराय साधुः, उपहार-  
ठक् । १ उपहारके उपयोगी, नजरके काबिल,  
औ भेंट करने लायक हो। ( स्त्री० ) २ उपहार,  
भेंट।

श्रीपाधिक ( सं० त्रि० ) उपाधि-ठक् । १ उपाधिकृत,  
शरती। २ उपाधि-सम्बन्धीय, निम्नवर्ती।

श्रीपाध्यायक ( सं० त्रि० ) उपाध्यायादागतः, उपाध्याय-  
ठक् । विद्याप्रेमिसम्बन्धीय इत्यम्, वा ३/४/००। उपाध्यायसे  
साम क्रिया जानेवाला, जो उस्तादसे हासिल हो।

श्रीपानह ( सं० पु० ) उपायनाह-ज्य । १ मुञ्च, मूँज ।  
२ चर्म, चमड़ा । ( त्रि० ) ३ जूता बनानेके काममें  
लगनेवाला । ४ बाँधा जानेवाला ।

श्रीपायिक ( सं० त्रि० ) उपायेन जातः, उपाय-ठक ।  
१ न्याय्य, याजिव । २ उपयुक्त, ठेक ।

श्रीपावि ( सं० पु० ) उपावस्यापत्यं पुमान् । १ उपाव  
ऋषिके पुत्र । २ जानश्रुतेयके वंशज ।

श्रीपासन ( सं० त्रि० ) उपासना विवाहान्निः तन्न  
भवा, उपासन-पण् । १ विवाहान्नि-सम्बन्धीय ।  
२ उपासना-सम्बन्धीय, परस्तिथके मुतात्तिक । ३ विवा-  
हान्नि । ४ विवाहान्निमें नैत्यिक कर्तव्य होमादि ।  
यह होम प्रत्यह प्रातः एवं सन्याकालको करना  
पड़ता है । प्रथम सार्यकालको हो आरम्भ करना  
उचित है । आरम्भ-रात्रिको ८ घटिका प्रतीत हो  
जानेसे हम रात्रिको आरम्भ न कर दूसरी रात्रिको  
आरम्भ करते हैं । होमारम्भसे पहले ही विवाहान्नि  
बुझ जानेपर विधानानुसार स्याश्रीपाक कर आरम्भ  
करना पड़ता है । प्रातःकालको सूर्योदयसे पूर्व एवं  
चन्द्र उदित रहते रहते होम कर्तव्य है । अन्निके  
वचनानुसार होमका मुख्य काल सवेरे सूर्यमूर्ति  
भूमिसे एक हाथ उलित न मालूम पड़ने और  
रात्रिको प्रदीपकाल चलने तक रहता है । इस  
होमके अकारण-सम्बन्धमें गर्गने कहा है—दारपरिधह  
करने बाद क्षणकाल मात्र भी अन्निको छोड़ना न  
चाहिये । क्योंकि अन्न विना अवस्थान करनेसे पतित  
होना पड़ता है । ज्ञान, सन्या, वेदाध्ययन प्रवृत्तिकी  
भाति उपासना भी अवश्य कर्तव्य है । जो व्यक्ति  
विवाहान्नि छोड़ अपनेको गृहस्थ समझता, उसका  
अन्न खानेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है ।

श्रीपीन ( सं० क्ली० ) उष्यक्षेत्र, बोने लायक  
खेत ।

श्रीपोदिति ( सं० पु० ) उपोदितस्यापत्यं पुमान्, उपो-  
दित-इज् । उपोदित ऋषिके पुत्र ।

श्रीम् ( सं० अष्ट० ) श्री देखो ।

श्रीम ( सं० त्रि० ) श्रीम देखो । ( हिं० ) श्रीम देखो ।

श्रीमक ( सं० क्ली० ) उमाया विकारः, उमा-बुज् ।

उमोशोर्वा । पा ४।१।५८ । १ शृणुका विकार, सन की  
चौज । ( त्रि० ) २ श्रीम, मनोला ।

श्रीमायन ( सं० क्ली० ) उमाया निमित्तं संयोगः उत्-  
पातो वा, उमा-फज् । १ शृणुका संयोग । २ शृणुसे  
उठनेवाला उत्पात ।

श्रीमिक, श्रीमक देखो ।

श्रीमीन ( सं० क्ली० ) उमानां भवनं क्षेत्रं वा, उमा-खज् ।

विभाषाविजयामोमेति । पा ४।१।४ । १ अतसीपूर्ण गृह, सनसे  
भरा हुआ घर । २ अतसीक्षेत्र, समका खेत ।

श्रीर ( हिं० त्रि० ) १ अन्य, दूसरा । २ क्षेपक, सिर्फ ।

“इयथा है श्रीर मतमप ।” ( लोकोक्ति ) ३ अधिक, ज्यादा ।

“श्रीरपरी श्रीर अनाया ।” ( लोकोक्ति ) ( पु० ) ४ अन्य

व्यक्ति, दूसरा शब्द । “हृके श्रीर न हृके श्रीर ।” ( लोकोक्ति )

( अष्ट० ) ५ वा, श्री, पर, श्री । ६ किन्तु, लेकिन,

इसपर भी ।

श्रीरग ( सं० क्ली० ) उरगस्य इदम्, उरग-पण् । १ पक्षेपा-  
नघट । ( त्रि० ) सर्पसम्बन्धीय, सांपके मुतात्तिक ।

श्रीरंग—वस्युद्वेगान्तके सूरत जिलेकी एक नदी । यह  
धर्मपुर पर्वतसे निकल पश्चिमदिशि ८ मील दक्षिण  
समुद्रमें जा गिरती है । समुद्रसे ६ मील तक इस  
नदीमें ५० टनकी नावें चल सकती हैं । बलवारके  
पास पुल बंधा है ।

श्रीरङ्गजिव—दिल्लीके एक सुसंश्राम वादगाय । ये  
शाहजहाँके तीसरे पुत्र और जहांगीरके पौत्र थे ।  
इनकी माताका नाम सुलताना कुदसिया था ।  
सुलतानो १०२८ हिजरीके, ११ जेल्दद महीनेमें  
( १६१८ ई०के अक्टूबर महीनेमें ) श्रीरङ्गजिवका  
जन्म हुआ । पहले इनका नाम सुहृद या  
जह्दकपनमें ही असाधारण औरत्व प्रकाश करनेके  
कारण प्रसन्न होकर शाहजहाँने इनका नाम  
श्रीरङ्गजिव अर्थात् सिंहासनका आभरण रख दिया ।  
इसके निवा इन्होंने स्वयं ‘बाघा-आकान्’ उपाधि  
ग्रहण किया । इनके और भी दो नाम जगन्नाथगं  
प्रसिद्ध हैं । एक नाम महीउद्दीन् अर्थात् धर्मका  
उद्धारकर्ता और दूसरा आलमगौर अर्थात् विश्व-  
विजयी है । ये १६५८ ई०को बादायफ मरे ।

द्वितीयोत्तर वर्ष राजत्व करनेके बाद ८८ वर्षकी उम्रमें १००० ई०के फरवरी मास इन्होंने इहलोक परित्याग किया।

प्राज भी जिन श्रीरङ्गजीवका नाम सुनकर सुमन-मानोका कलेजा कांप पड़ता श्रीर हिन्दुओंके नेत्रोंमें पशु चलने लगता, सैकड़ों वर्ष बीते इनका निखन्द प्रेतगरीर इक्षोराकी अधित्यकामें मो रहा है। शाहजहाँके दुश्चरित्रके कारण सात वर्षकी उमरसे ही ये, इनके बड़े भाई दारा और गुला और छोटे भाई सुराद अपने पितामह जहांगीरके पास कैद थे। यदि शाहजहाँ पुनर्বার अपने पिताके साथ असदृश्यवहार करते, तो इन लोगोंके प्राण कभी न बचते। जहांगीरके मृत्यु अनन्तर दस वर्षकी उम्रमें श्रीरङ्गजीव पिताके निकट पागरे लौट आये।

१६१३ ई०को बुन्देलोंके राजा जगत्सिंह और शाहजहाँके साथ विरोध पट खड़ा हुआ। उस समय श्रीरङ्गजीवकी उम्र चौदह वर्षसे अधिक न थी। जिस युगकी प्याससे भूखे सिंघकी तरह यह सर्वदा घूमते फिरते रहे, यहाँ तक, कि अपने भाइयोंकी भी नहीं छोड़ा, उस दारुण पशुवृत्तिका सृजपात यहाँ हुआ। श्रीरङ्गजीव मासिके खूबदार नसरतके साथ बुन्देलखण्ड गये। एकादिक्रमसे दो वर्ष युद्ध हुआ। जगत्सिंहने देखा,—अब रक्षा नहीं, दिन दिन सैन्यसय हुआ जाता है। अन्तमें घोड़ेपर सवार हो कई अनुचरोंके साथ वे भागकर नर्मदाके उस पार किसी जङ्गलमें जा छिपे।

घोड़ेकी पीठपर वे लोग बहुत दूर निकल आये, न तो कुछ खाने और न सोने पाये थे; इसलिये घोड़ोंकी पीठोंमें बांध सक्के छुम धूलमें लेट गये। नौद या गई, उस वनमें चारो ओर अशुभ आदमी थे। ये भीपण्डे रहते, वनमें आखेट करते, पशुचर्म पहनते, उनके फल-मूल और मद्य मांस ध्याते, राजभोग, राजभूषण जानते न थे। वनमें घोड़ोंकी हिनहिनाहट सुनकर वे लोग देखने आये। आकर देखा,—पीठोंमें कई घोड़े बंधे हैं, उनकी पीठपर बेगकीमती जड़ाऊ लीन पड़े हैं और कई सुगुरुप भूमिपर मो रहे हैं। उनके सर्पाङ्ग भी मणिमाणिक्यसे सजे थे। नीच लोगोंके

नीच प्रवृत्ति होती है। मनमें लोभ पाया। लोभ ही पाप है। उन लोगोंने निद्रावस्थामें ही जगत्सिंह और उनके अनुचरोंको मार डाला, परन्तु पापका घन भोग न कर सके। श्रीरङ्गजीव और नसरतने जाकर उन डाकूओंकी वध किया। जगत्सिंहके खजानेमें सोना, चांदी, हीरा, मोती सब मिलाकर तीस लाख रूपयेकी सम्पत्ति थी। उस सम्पत्तिको ली जाकर श्रीरङ्गजीवने पिताके पादपद्मपर रख दिया।

संसारमें विजयका डड्डा बजा। श्रीरङ्गजीवके युद्धमें पदार्पण करते ही सोभाग्यलक्ष्मी पताका लेकर आगे आगे चलती थीं। उस समय उज्जयिनी और ईरानी प्रसिद्ध रण पण्डित थे। संग्राममें श्रीरङ्गजीवने उन लोगोंको भी परास्त किया। पुत्रका पसाधारण साहस और रणनेपुण्य देखकर शाहजहाँके पाल्हादकी सीमा न रही। परन्तु दारा ज्येष्ठपुत्र थे। ज्येष्ठपुत्र ही राज्यका अधिकारी होता है। अतएव श्रीरङ्गजीव यह बात मनही मन समझते थे—सम्राट् दाराको पतिक्रम कर और किसीको राजपदपर अभिषिक्त न कर सकेंगे। इसकी सिया दारापर भी उनका आन्तरिक प्रेम था। इसलिये श्रीरङ्गजीवने यहो स्थिर किया, बिना विषेय कीमल किये राजसिंहासन भिनना कठिन है। इसीसे लड़कपनसे ही ये कपट धार्मिक बनते रहे। परन्तु दारासे इनका विद्वेष दिन दिन बढ़ने लगा। निकटका रहना असुगुन होता है, इसलिये सामान्य वदना पाकर ये पिताको आश्रामे दासिणात्यके शासनकर्ता होकर चले गये। यहाँ गोलकुण्डा राज्यके सेनानायक मीरजुमला अपने स्वामीको परित्याग कर श्रीरङ्गजीवसे आ मिले। उस समय हैदराबाद गोलकुण्डाके राजाकी अधिकारमें था। मीरजुमलाको साथ लेकर श्रीरङ्गजीवने हैदराबाद छूट लिया। गोत्र ही गोलकुण्डा अधिकार करनेका भी इच्छा थी, परन्तु इसवार इनकी चिरकालकी दुरमिस्त्रिकी पूर्ण होनेका अवसर न आया।

शाहजहाँ बीमार हुए। जीवन संकटापन्न हो गया। पीछे कहीं राज्यमें अनिष्ट न हो, इसलिये दारा सम्राट्का कार्य निर्वह करने लगे।

शुजा बंगालमें थे। उस समय वे बंगालके शासनकर्त्ता थे। वड़े भाईके सम्बाट होनेका समाचार पाते ही क्रोधसे उनका शरीर जल उठा। शीघ्र हो लड़ाईकी तयारी करके उन्होंने दिल्लीको यात्रा कर दी।

शौरङ्गजीव अत्यन्त क्रूर थे। लडकपनसे ही वे कपटधार्मिक बने हुए थे। इस गोलमालके समय इन्होंने अपनी शान्ति प्रकृतिसे घेर घेर अपनी दुरमि-सन्धिके सिद्ध करनेका उपाय स्थिर कर लिया। छोटे भाई सुराद उस समय गुजरातके शासनकर्त्ता थे। शौरङ्गजीवने उनके पास लिख भेजा,—“भाई! पिताका तो मृत्युकाल निकट है। हमारे दोनों बड़े भाई अन्नस, इन्द्रियपरायण और विलासी हैं। इस विशाल राज्यको शासनमें रखनेके योग्य वे नहीं हैं। मेरी बात तुमसे कुछ क्षिणो नहीं है। क्या कहें, परमेश्वर पिताका अशुभोप है, इसीसे कामकाज देखता हूँ, नहीं तो संसारमें तिलाई भो खड़ा नहीं है। जो हो, इस समय सद्युक्ति यही है, कि तुम्हारे हाथमें राज्यका भार सौंप मैं मक्के चका जाऊँ; अतएव आइये, इस दोनों आदमो सेना लेकर आगरे चले”।

छत्रोंके कुक्षममें देवता पड़ जाते हैं, मनुष्योंको कौन गिनती है। शौरङ्गजीवकी मायाजालमें सुराद फँस गये। वे आकर नर्मदाके किनारे शौरङ्गजीवसे मिले। शाहजहाँशा जीवन संकटापन्न था, परन्तु रतने दिनोंमें रोगका प्रकोप बहुत कुछ कम पड़ गया। निर्विवाद दाराने पिताका सिंहासन छोड़ दिया। परन्तु शुजा प्रसूतिको इस बातका विस्वास न हुआ। उन लोगोंने समझा—लोग जो पारोग्य होनेका समाचार फैला रहे हैं, वह केशल जनरल है; इसमें भी दाराकी कोई चातुरी है। इसलिये युद्ध करना ही उन लोगोंका हृदय संकल्प हुआ। दीपहरके पहले ही दाराकी “शुजाकी दुरमि-सन्धिका समाचार मिल गया था, इसलिये उन्होंने अपने पुत्र सुलेमान और राजा जयसिंहको प्रयागकी ओर भेज दिया। परन्तु सम्बाटकी इच्छा न थी, कि घरमें फूट फैसली। इसलिये शाहजहाँने सुपचाप जयसिंहको कहला भेजा,—शुजाको समझा बुझाकर

फिर बंगाल भेज दें, विरोधका कोई प्रयोजन नहीं। सुलेमान और जयसिंह कागो पड़ेंगे। उस पार शाहजुजा थे। सम्बाटकी आशुतापार उन्होंने शुजाको बहुत प्रमत्ताया बुझाया—भाई भाईमें विरोध होनेसे राज्यका चणित होगा। शुजाने भी इस बातको समझा। वे निर्विवाद बंगाल लौट जाते, परन्तु सुलेमान सहज हो छोड़नेवाले आदमो न थे। बड़े सवेरे हो सेना लेकर वे गुझावार गये। शुजा उस समय सो रहे थे। उसी निद्रितावस्थामें सुलेमानने उनकी सेनापर आक्रमण किया। नागकर शाह-शुजाने बढ़ी देर तक युद्ध किया, परन्तु अन्तमें परास्त होकर सुहरे भाग गये।

उधर उज्जैनमें महाराज यशवन्तसिंह छायनी डाले पड़े थे। वे सम्बाटके पक्षकी सेनानायक थे, शौरङ्गजीव और सुरादको गति रोजनेके लिये भेजे गये थे। नर्मदाके उस पार युवराज शौरङ्गजीव बैठे हुए सुरादके पानेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। दोनों सेना मिल गईं, घोर युद्ध होने लगा। यशवन्त परास्त हुए। उसके बाद खयं दारा छोटे भाइयोंका दण्ड देनेके लिये आये, परन्तु हार मानकर वे भी भाग गये।

श्यामिसे यशवन्त अपने राजधानीको चले गये, लौटकर बादशाहके पास जानेका साहस न हुआ। परन्तु इधर घरमें स्त्रियोंका तिरस्कार सहनेसे तो मृत्यु हजार गुना श्रेय था। गिरफ्त पड़ चुके छोटे महारानी दरवाजा रोककर धमकीकी साथ कहने लगी,—“हमलोग घोरकन्या हैं, शौरपुरुषको दण्ड करती हैं; शौरपुरुषको जयमाल पहनाता है। कापुरुषके साथ विवाह करना राष्ट्राकुल-कन्याओंको अभ्यास नहीं है। राजपूत प्राणकी अपेक्षा मानका गौरव अधिक करते हैं। युद्धमें परास्त होना नई बात नहीं है, परन्तु रणक्षेत्रसे भाग पाना राजपूत-धर्ममें आज नया देख पड़ता है। मालूम होता है—तुम मेरे वह पति नहीं हो; कोई ठग हो, बदनाम करके दरवाजेपर पुकार रहे हो। मेरे जो पति हैं, वे आज समरक्षेत्रमें वीरमर्यादा सोये हैं। दुर्भागि! दरवाजा छोड़ दे। मैं पिता जसाकर पतिका अनुगमन करूँ।”



राजपुत्र-वीरमहिष्मतीकी इतनी सखी, वीरत्वका इतना आधार ! उनकी रंग रंगमें गर्म छून दीड़ा करता था। रघोबन्धु प्राण-पुत्रकी युवका नाम सुनते ही नाच उठती थी। पात्र कालकी गतिसे सब निर्व्याण हुआ जाता है।

जो ही, शौरङ्गजीवके बड़े भाई एक प्रकार शान्त हुए। जयसिंह प्रभृति जो लोग सदावीर दाराके प्रधान सेनापति थे, बारबार बिहीरी और खूब भेज भेज कर शौरङ्गजीवने सनका भय तोड़ दिया। सेनापतियोंने भी सोचा, दाराका अब क्यापन नहीं है। शाह-जहाँके भी दिन पूरा पाये हैं। यह विशाल साम्राज्य शौरङ्गजीवके ही हाथमें जायगा, इससे सेनापति और विपक्षी सब दाराने भयाव्य हो गये।

सम्प्रति सिंहासनके प्रधान कण्ठक स्वयं सम्राट् ही है। सुराद और एक प्रतियोगी है। इन दोनोंको शान्त कर देनेसे ही मनोरथ सिद्ध हो सकता है। यशके लिये पसाध्य कुछ भी नहीं है। शौरङ्गजीवने विचार कर देखा, अभी बलप्रयोग करनेका समय नहीं आया। अभीष्ट सिद्ध करनेके लिये कौमस ही एकमात्र उपाय है। इसलिये सुरादकी साथ साकर उन्हें पागरीके पास कान्ही डाल दो। किलेमें सम्राट् थे। शौरङ्गजीवने एक विश्वासी दूत द्वारा सम्राट्की यह कहना भेजा,—“मैं जमीन छूकर कहता हूँ, मैंने जो काम किया है, वह सन्तानके अयोग्य है, किन्तु उसमें मेरा दोष नहीं है, दोष दाराका है। जो ही, आपने कठिन रोगसे छुटकारा पाया है, यही महान्त है। अब यदि पुत्र-जानकर इस दासकी सभा करते, तो हृदय शीतल होता।

घरने जाकर सम्राट्से शौरङ्गजीवका संदेश कह। हृदयस्थानमें मुझ मारी जाती है, जो ही तो भी पिता रहे। शाहजहाँ अपने लड़केकी अच्छी तरह पचवाने थे। शौरङ्गजीवके मनमें यह ज्ञानसा लड़कपनसे लगी थी, पचसर पाकर भोगसाराज्यका सम्राट् होना होगा। दूसरे लोग-चाहे न समझते, परन्तु शाहजहाँ इस दुरभिसन्धिकी बहुत दिनोंसे समझ गये थे। भीतरी बात क्या है, यह खबर लेनेके लिये

उन्होंने अपनी कन्या जहाँनाराकी लड़कीके सेमेंमें भेज दिया।

जहाँनारा पहले सुरादके सेमेंमें गई। गत युद्धमें उनका शरीर घावोंसे भर गया था। वे कातर होकर रो रहे थे। उसी समय जहाँनारा वहाँ पहुँची। सुराद जानते थे, कि वह मनसे दाराकी ओर रहती। इसलिये उन्होंने उनका कुछ भी समादर न किया, वरं अपने कड़ी कड़ी बातें कहकर अपमान किया। इतने जाकर शौरङ्गजीवसे इन बातोंको सुन-चाप कह दिया।

शौरङ्गजीवके सब कामोंका वीजमन्त्र कुचक था। क्रोध करके अब जहाँनारा चल खड़ी हुई, तो दोड़कर शौरङ्गजीव उनके पास गये। खुशकी हृदयमें विष और सुँघमें मधुरता भरी रहती है। इतने जहाँनाराका हाथ पकड़कर कहा,—“बहिन ! यह क्या ! मैं क्या तुम्हारा कोई नहीं हूँ ? जब पा गई हो, तो भाई समझकर एकबार समाचार तो लेना चाहिये। क्या इतने दिन विदेशमें रहनेसे भूल गई हो ? पिता इतने बीमार हो गये थे, बादलों भेजकर खबर तो दे देना था।” इस तरह खुगामद करके शौरङ्गजीवने जहाँनाराको अपने तन्मयमें ले जाकर कहा,—“बहिन ! क्या कहें, लोगोंका रक्त टूट देणकर मेरे मनमें उदासीनता छा गई है, तुम पितासे मेरा यह सातुनय निवेदन करना—मैं एकबार उनके पद-सरोजका दर्शन कर इस संसारसे सम्बन्ध तोड़ देना चाहता हूँ। अतएव और विलम्बका काम नहीं, परन्तु उनके दर्शन करनेकी इच्छा है।”

जहाँनाराके जाने बाद शौरङ्गजीव पिताकी काराखाना करनेकी चेष्टा करने लगे। शाहजहाँ भी समझ गये, कि गठकी इतनी भक्तिमें सुललपन नहीं है। उन्होंने दाराके पास लिख भेजा,—“दो दिनोंके बाद शौरङ्गजीव आकर मेरो घरण लेगा। सुरादसे यह विरक्त हो गया है। जो ही, चुसका विश्वास नहीं। तुम सैन्यसामन्थ लेकर शीघ्र पागरे आओ। शौरङ्गजीवकी गिरफ्तार करना होगा।”

दारा उस समय दिखीमें थे। पाघीरातके समय

सम्राट् ने नसीबहीन नामक किसी विद्यापीठी नौकरको पत्र सौंप विदा किया। किन्तु उस जगह शायस्ता खांका गुप्तचर उपस्थित था। उसने शायस्ताखांसे जाकर पत्रकी बात कह दी, परन्तु उसमें जो लिखा था, सो वता न सका। इसके पहले बादशाहने शायस्ताखांकी प्राणदण्डकी आज्ञा दी थी। उसी क्रोधमें उन्होंने कई गुप्तचरों को भेज चुपचाप नसीबहीनको पकड़ मंगाया। पत्र पढ़कर देखा गया, तो उसमें शौरङ्गजीवकी बात मिली। शीघ्र ही इनके द्वारेमें जाकर उन्होंने इन्हें खत दे दिया। शौरङ्गजीव स्थिरचित्तके साथ उस पत्रको आदिसे अन्ततक पढ़ गये, परन्तु बोले कुछ भी नहीं; केवल नसीबहीनको एक गुप्त स्थानमें छिपा रखा।

भेंट करनेका दिन आया। ससेन्ध द्वारा चापङ्कृत—क्यों वे नहीं आये। शौरङ्गजीव भी मुनाकात करने न गये। इन्होंने सम्राट्को यह पत्र लिखा,—“बाप जानते हैं, कि मैं पुराधी हूं। अपराधीके मनमें सदा भय और सन्देह रहता है। इसीसे सहसा आपसे मिलनेमें पांशुका होता है। अतएव पहले कुछ शरीररक्षकोंके साथ अपने सड़के मुहम्मदको आपके पास भेजूंगा। वहां जाकर जब मुहम्मद मेरे पास यह समाचार भेजगा, कि किलेमें एक भी हथियारबन्द सिपाही नहीं है, तब मैं आपके पास आनेका साहस कर सकूंगा।”

पत्र पाकर शाहजहाँ बड़ी देरतक सोचते रहे। मांघ विचारकर अन्तमें शौरङ्गजीवके प्रस्तावपर ही सम্মत हुए। परन्तु कुछ स्थानको गिरफ्तार करना उचित था। इसलिये किलेमें स्थान स्थानपर कुछ अस्त्रधारी सिपाहियोंको बादशाहने छिपा रखा। इसके सिवा उसके अन्तःपुरमें कई तातारी बांदियाँ थीं। वे सब योद्धाहस्त थीं। सम्राट् ने उन्हें भी अस्त्र-शस्त्र दे तैयार कर रखा।

इधर शौरङ्गजीवने सड़केको सब बात सिखा पढ़ाकर शाहजहाँके पास भेज दिया। किलेमें जाकर मुहम्मद एकबार चारों ओर देख भाये, परन्तु कहीं कोई न देख पड़ा। इन्होंने पास जाकर देखा, तो वहां

बहुतसे अस्त्रधारी सिपाहियोंको छिपा पाया। उन्होंने बादशाहसे साफ ही कह दिया,—“इन बादशहियोंको देखकर मुझे सन्देह होता है। ये लोग किलेमें रहेंगे, तो बाबा न आ सकेंगे।” शाहजहाँके शिरपर दुर्भति सवार हुई। उन्होंने उन लोगोंको भी किलेसे बाहर कर दिया। मुहम्मदने देखा—चारों ओर साफ हो गया है, अब किलेमें बादशाहसे हमारे ही बादमी अधिक हैं।

शौरङ्गजीवके पास समाचार गया। शीघ्र ही बादमीने चापस आकर कहा—शाहजहाँ तैयार हैं, अभी आकर मुलाकात करेंगे। सम्राट् उनकी प्रतीक्षामें बंटे रहे। थोड़ेपर सवार होकर शौरङ्गजीव अपने शरीररक्षकों और पारिषदोंको साथ लिये एकबार किलेकी तरफ भाये; कुछ दूर अकबरकी कब्रकी ओर चले गये। यह सुन शाहजहाँने प्रोधके साथ मुहम्मदसे कहा,—“जब तुम्हारे पिता ही यहां न भायेगे, तो तुम यहां क्या करने भाये जा ?” इसपर मुहम्मदने विमोतभावसे उत्तर दिया,—“महाशय ! मैं किलेका भार आपसे लेने आया हूं। मुझे भाण्डारको चाबो दीजिये।” सम्राट् ने देखा—अपने कन्देमें मैं चाप ही फँस गया हूं, अब और कोई उपाय नहीं। साधार मुहम्मदके हाथमें चाबिका गुच्छा फेंक दिया।

पिताको कौदकर शौरङ्गजीवने मुरादसे कहा,—“भाई ! इतने दिनोंमें मेरा अभिलाष पूर्ण हुआ। आजसे तुम दिल्लीके सम्राट् हुए। अब मेरी यही भिला है, तुम मुझे कुछ धन दो। मैंने जाकर मैं कुछ देनसे दिन बिताऊँ।” मुराद इस बातपर राजी हो गये।

शौरङ्गजीवके बाहरमें तो ऐसे घमनिडा, परन्तु अन्तःपुरमें जलाल भरा था। यह मन ही मन मुरादके विनाश करनेकी चेष्टा करने लगे। इसी बीचमें समाचार आया—दराने दिशामें बहुत सी सेना इकट्ठी की है, शीघ्र ही आगे आकर शाहजहाँको मुक्त करेंगे। मुरादको साथ से शौरङ्गजीव उसी वक्त दिल्लीकी ओर चले। दोनों बादमी

मयुरा पड़ूँ। यहाँ मुरादके पारिपदोंने कहा,—  
“पाप सब शौरङ्गजीके साथ न रहिये। गठ बड़े  
काठिन्य होते हैं। वह पापके प्राचनार्थ करनेकी  
चेष्टामें है। हम लोगोका परामर्श यही है, कि पाप  
पहले ही उसे विनष्ट कर डालिये, नहीं तो शौर  
जिष्कृति नहीं।”

बाहिर यही ठहरा, शौरङ्गजीके मार डारना  
चाहिये। मुरादने अपने बड़े भाईको निमन्त्रण  
किया। पासके तन्त्रमें कुछ चादमी छिपा रखे  
गये, इशारा पाते ही वे शौरङ्गजीका गिर उतार  
लेते। स्वभावतः, मुराद चकपट उदार पुरुष रहे।  
शत्रु, मित्र सबके साथ वह समान व्यवहार करते  
थे। इसीसे शौरङ्गजी, व निःशत्रु निमन्त्रण पूर्ण करने  
गये। दोनों भाई भोजन करने बैठे थे। उसी समय  
भाजिरने पाकर मुरादके कानमें कुछ कहा। खल-  
विश्यामें शौरङ्गजी, व दृष्टगुह थे। दोनोंका रङ्गदण्ड  
देखकर इनके मनमें सन्देह उठ खड़ा हुआ। इनोने  
कानरताके साथ मुरादसे कहा,—“भाई! आज  
चामोद न होगा। मेरे पेटमें बहुत दर्द हो रहा  
है। तुम सब तय्यारी कर रखना, मैं कस फिर  
पाऊँगा।” इतना कह ये भटपट तन्त्रसे बाहर  
निकल अपने शरीर रक्षकोंके पास चले गये।

बहाना करके शौरङ्गजी, व तीन चार दिनतक  
चारपाईपर पड़े रहे। पेटपोड़ाकी चिकित्सा होने  
लगी। मुरादका मन सरल था; उन्होंने समझा—  
‘सबसुख हो दर्द हुआ है, इसमें कोई बातुरी नहीं है।  
तीन चार दिनमें दर्द दूर हो गया। शौरङ्गजी, वने  
मुरादको कहसा भैया,—“भाई! उस दिन वेसे  
सद्योममें मैंने व्याघात लगा दिया था। इसलिये मेरे  
मनमें अत्यन्त कष्ट हुआ है। जो हो, आज मेरे यहाँ  
तुम्हारा निमन्त्रण है। कई सुन्दर-सुन्दर भाचने शौर  
गानेवासी चाहें हैं। उनका रूपयौवन स्वर्गकी  
विद्याधरीसे भी अधिक है।”

मुरादके पारिपदोंने बहुत ममभाव्या—निमन्त्रणमें  
जानेसे, विपद् जायोहाय है। परन्तु मुरादने किसीकी  
भी न सुनी। शरीररक्षक बाहर रहे, मुराद चार

प्रधान प्रधान सरदारोंकी साथ से शौरङ्गजी, वके खेमें  
गये। नाच गान होने लगा। परन्तु इन सब चामोदों-  
का एक प्रधान चक्र सुरा है। शौरङ्गजी, वने इन चायो-  
जनमें दृष्टि न की थी। तन्त्रमें चानन्दकी घटा उमड़  
छठी। मुराद इतचेतन, उनके पारिपद इतचेतन  
शौर शरीररक्षक नगमें मतशसे हो गये। यह सुयोग  
या शौरङ्गजी, वने अपने भाईकी बांधकर चागरे भेज  
दिया। कहते हैं, चागरा पड़ूँवनेपर मुरादका गिर  
काट लिया गया था।

शौरङ्गजी, वने देखा—यदि अभी सिंहासन अधि-  
कार नहीं करता, तो फिर लोग पूरे तौरसे सुभने न  
मानेंगे, अनेक चादमी अनेक प्रकारकी बात कहेंगे।  
पारिपद भी समझ गये—शौरङ्गजी, व को रात दिन  
घर्मकी दुहाई दिया करते हैं, यह केवल पापण्ड है;  
पिता शौर भ्राताओंको राज्यसे वंचित करना ही  
उनका अभिप्राय है, अतएव मनमानी करनेसे ही  
वे सन्तुष्ट होंगे। यह सोच सब कोई इनसे यथाविधान  
राज्यमें अभिविहित होनेकी अनुरोध करने लगे। पहले



शौरङ्गजी, व चादमी।

उदासीन भाविकी बहुत कुछ पापपति करके पीछे  
इन्होंने कहा—“देखता हूँ, तुम लोग अपने सुख-चैनकी  
जिये सुभने संसार त्याग करने न दोगे। पच्छा, न दो;  
संन्यासी लोग निजंन गिरिगुहामें बैठकर जो शान्ति-  
सुख प्राप्त करते हैं, ईश्वर करे, इस राजसिंहासन  
पर बैठ मैं भी यही सुखभोग करूँ। यह बात  
सच है, कि राजकाज देखनेमें ईश्वरकी विन्ता  
करनेका अवसर न मिलेगा, परन्तु कामसे काम है।

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं, कि दिल्लीका अधीश्वर हो मैं बहुत सत्कर्म कर सकूंगा। लोगोंको इस तरह समझा हुआ १६५८ ई०को दूसरी अगस्तको दिल्लीके निकटवर्ती एक सुन्दर उद्यानमें शौरङ्गजीव यथाविधान राजसिंहासनपर अभिषिक्त हुये।

शौरङ्गजीवके बादशाह होनेकी खबर बङ्गदेशमें पहुँचो। शाहशुजा पुनर्बारे समरसज्जाकर प्रयागके पास प्रस्थान हुये। शौरङ्गजीव ससेन्य उनकी गति रोकने आये। एक घाममें घोर युद्ध हुआ। उस दिनके युद्धमें यदि शाहशुजा थोड़ा और सुस्थिर रह जाते, तो भीमाशक्त्यो उन्हींपर प्रवृत्त होतीं। शौरङ्गजीव जिस हाथीपर चढ़कर युद्ध कर रहे थे, अन्नाघातसे उसका पैर टूट गया। शुजाका हाथी भी घायल हुआ। दोनों पादमी अपने अपने हाथीसे उतरकर दूसरेपर चढ़नेका उपक्रम करने लगे। उसी वक्त भीरलुमलामे शौरङ्गजीवसे कहा,—“प्रभो! इस समय हाथीसे उतरनेमें राज्य गया ही समझिये।” शौरङ्गजीव न उतरे; परन्तु शुजा हाथीसे उतर चोढ़ेपर सवार हुए। सिपाही लोग मालिककी न देख इधर उधर भाग गये।

शुजा बङ्गदेश कीट आये। किन्तु शौरङ्गजीवके बड़े लड़के सुहृद्द और वजीर भीरलुमलामे उनके पीछे पड़ बङ्गदेशसे भी उन्हें खदेड़ दिया। भारतमें भागनेका दूसरा कोई स्थान नहीं था। जहाँ जाते, वहाँ शौरङ्गजीवकी पताका फहराती हुई पाते। अन्तमें बहुत कुछ सोच विचार कर शुजा अराकान गये। उनके साथ बङ्गमूल्य रत्न और प्रायः डेढ़ हजार पादमी थे। किन्तु अराकानकी वायव्या बङ्गाल ही खराब होनेसे डेढ़ हजार पादमियोंमें धीरे धीरे प्रायः सभी मर गये। केवल शाहशुजा, उनकी दूसरी स्त्री, दो लड़की, तीन लड़कियाँ और चालीस नौकर जीते बचे। विप्राताके विमुख होनेपर चारों ओरसे विपद् उमड़ आती है। अराकानके राजा एक तो शौरङ्गजीवके डरसे सदा शक्ति रहते थे, दूसरे शुजाकी रूपवती कन्यापर उनकी दृष्टि पड़ी; तीसरे साथमें बङ्गमूल्य जो हीरा मोती थे, उन्हें भी खान खानेका

लोभ पैदा हुआ। इसीसे उनके प्रकारका घडाना बताना प्रशस्त राजकुमारको उन्होंने अपने राज्यसे निकाल दिया। शुजाने अपने परिवार और अनुचरवर्गके साथ पर्यंतके एक खड्गमें लाकर आश्रय लिया। वह स्थान अत्यन्त दुर्गम था। दोनों ओर पहाड़ और बगलमें खड्ग था। नौसे वेगवती नदी कस कस करती हुई बह रही थी। उसी दुर्गम स्थानमें अराकानके राजाकी सेना आकर शुजा और उनके साधियोंपर बाणवृष्टि करने लगे। किसी किसीने पहाड़परसे बड़े बड़े पत्थर लुटका दिये। शाहशुजाने बहुत देरतक प्राणपणसे युद्ध किया, अन्तमें एक बड़े भारी पत्थरके टुकड़ेको चोटसे अभिभूत हो गये। राजाकी सिपाहियोंने उन्हें और उनके दो अनुचरोंको एक छोंगीपर चढ़ाकर बीच नदीमें छोड़ दिया। प्रवृत्त स्रोतमें वे लोग तैर कर बाहर न जा सके, दो एक बार अङ्ग आस्फालन कर अन्तमें डूब गये।

उसके बाद सिपाही लोग शुजाके अन्त्यानु अनुचरोंको विनष्ट कर उनको छी, तीनों कन्याओं और दोनों पुत्रोंको एकत्र राजाके पास पहुँचाया। राजाने स्त्रियोंको अन्तःपुरमें रखा था। किन्तु हतमाय्य दोनों बालक मारे गये। शुजाकी पत्नी सुसतामा प्यारी-बानो परम सुन्दर थीं। वे उस समयके रमणकुलकी अलङ्कार-स्वरूप थीं। तेमूर-कुलवधू और तेमूर-कुलकन्याके चरित्रमें कलह लगनेसे मृत्यु ही अच्छा था। किन्तु मृत्युकी विना मारे मर जानेमें मरनेकी मर्यादा ही क्या। इसलिये प्यारी बानोने अपने कपड़ेमें एक छुरी छिपा रखी। यथावृत्ति राजाके आनेपर उसने वस्त्र उन्हा प्राय विनष्ट करना चाहती थीं। परन्तु स्त्रियोंको किसी तरह यह भेद मालूम हो गया। उन्होंने छुरी खीन ली। फिर और कोई उपाय न रहा। इसलिये उन्होंने अपना सुँह नोब डाला। मुखमन्दरा सोमर्थ्य कम पड़ गया। उसके बाद एक पत्थरपर शिर पटक पटक कर प्यारी बानोने प्राणत्याग कर दिया। शुजाको दो लड़कियाँ बचि खाकर मर गईं। बाकी एक लड़की भी अधिक दिन जी न सकी।

गुजाको दुर्दशाका समाचार या शौरङ्गजीव सुन-  
कित हो गये। परन्तु इनके मनमें एक दिनके लिये भी  
सुख उत्पन्न न हुआ। शाहजहाँ हवाबख्शाने पाठ  
वर्ग कोट रहे। इस गद्दासे यह मर्दाना उद्दिग्ध रहते  
थे—पीछे कहीं उनके समुगत मित्राधी उपद्रव न  
मपाये। फिर दारा भी जीते थे। उनके पुत्र सुलेमानने  
श्रीनगरमें जाकर आश्रय लिया। शवभर पानेपर  
वे लोग भी उपद्रव मचा सकते थे। सिवा इसकी  
पिताको बाराह कर राज्यसामका जो सङ्ग  
श्रीमल इन्होंने दिखाया, इनके पुत्रकी भी वही  
श्रीमल कीच नैनमें विद्यमान हो गया था। राजा-  
श्रीका मन सर्वदा सन्दिग्ध रहता है। गतिमान्  
मनुष्य उनके चक्षुमूल होते हैं। यपभी ही छाया  
देखकर राजाश्रीका मन ईर्ष्यासे जन उठता है।  
इसलिये सब आशङ्काधर्मि निरुद्देश्य होनेके लिये  
इन्होंने अपने बड़े लड़के मुहम्मदको खालियरके  
किल्लेमें यावज्जीवन बाबंद कर दिया। मुहम्मदसे  
एक अपराध भी हो गया था। बङ्ग-युद्धके समय  
शाहजहाँकी कन्याके रूपलावण्यापर सुन्ध हो  
उन्होंने उसके साथ विवाह कर लिया। इसलिये  
पिताका पक्ष छोड़ उन्होंने कुछ मन्त्रशुका पक्ष  
पकड़ा था। शौरङ्गजीवने विशेष कोशल कर उन  
लोगोंमें विच्छेद डाल दिया।

दाराने नाहोर और अजमेरमें कई बार युद्धका  
आयोजन किया था, परन्तु शौरङ्गजीवसे परास्त हो  
गये। अन्तमें और कोई उपाय न देख उन्होंने सोचा,  
कि वन दुःसमयमें ईरान जाकर आश्रय लेना ही  
श्रेष्ठ था। इसीसे अनुचरोंकी सहाय से उन्होंने  
ईरानकी राज पकड़ी। सिन्धुगर तातारोंके निकट  
पहुँचने पर उनकी स्त्री नादिरा बानो बहुत बीमार  
हो गई। तातारोंके सरदारका नाम जहान-खाँ था।  
पहले दो बार वे खुशी सुपुर्झमें पड़ी थी। प्रधान  
विचारपतिके यहाँ उनका अपराध प्रभावित हुआ।  
सम्पाद शाहजहाँने उनकी सारी सम्पत्ति कुर्क करके  
प्रायदण्डकी पाशा दी। किन्तु केवल दाराके  
अनुरोधसे जहान खाँ दोनों बार कुटकारा पा गये

थे। इसीमें दाराने सोचा—ऐसी बिपत्तिके समयमें  
मेरे उपलब्ध सुहृद् अवश्य ही दोवार दिनके लिये  
सुक्ति आश्रय देंगे। अफगानों आश्रय दिया। यहीं  
सुलताना नादिरा बानाका मृत्यु हुआ।

दारा भीविद्योगमें कातर हो रहे थे। उसी समय  
उन्होंने सुना, कि शौरङ्गजीवके सेनानायक राजा  
सुलतानमें उन्हें पकड़ने का रहे थे। घबराकर दारा  
जहानमें बिदा हुए। वे तातार नगरमें आध हो  
कोस दूर गये थे, कि देखा—पीछे जहान पाश एक  
ज्वार झुड़मवार सेना लिये चले आते हैं। दाराने  
स्थिर किया—मेरे साथ अधिक आदमी नहीं, जो हैं  
वे भी रोग और पथभ्रममें कातर हो रहे हैं, इसलिये  
मुझे ईरानगत पहुँचा देनेके लिये जहान साथ  
आते हैं।

किन्तु जहानको ऐसा अभ्यास न था। गुरुसे यह  
पाठ लेना जहान भूल गये—उपकार करनेसे कृतज्ञ  
होना चाहिये। वे पर्यंथा ही साधारण्य अधिक  
समझते थे। लोभमें पड़कर उन्होंने दारा और  
उनके भ्रमले लड़केका पकड़कर आशङ्किके इवाले  
किया—इनको गिरफ्तार कर लेनेपर शौरङ्गजीवसे  
पुरस्कार मिलेगा।

दाराकी उस समय बड़ी दुर्दशा थी। शरीर पर  
फटे हुए कपड़े और गिरपर कैदों पगड़ी। उनके  
पुत्रकी भी परखा बेशी हो रही। खाजहाँ उन लोगोंको  
हाथीपर सदावर दिल्ली में गये। दाराकी दुरवस्था  
देखकर नगरके पण्यपत्री भी रोने लगे। परन्तु शौरङ्ग-  
जीवका मन न पसीना। बड़े भाई और भतीजेको  
दुर्दशा प्रभावगर्क दिखलानेके लिये इन्होंने एकवार  
उन लोगोंको नगरका प्रदण्ड कर एक गिर्जन  
स्थानमें बंद कर दिया। दारा जानते थे—मृत्यु  
निश्चित है। उन्होंने पहले ही वे एक छुरी, एक  
कलम, एक दावात और कुछ कागज अपने कपड़ेमें  
छिपा रखा। कारागारमें बैठकर कलम बजाते  
और दुःखों की कविता लिखते थे। जब शोकका वेग  
उमड़ उठता, तो लड़केका मसा पकड़ कर रोने  
लगते।

श्रीरङ्गजी वका दरबार लगा। दारा बड़े थे, वे चटपट राजा होने चले थे, उन्हें क्या दण्ड देना उचित था ? अनेक आदमियों ने कहा—इन्हें यावज्जीवन खालियरके क्लिनेमें कैद रखना मुनासिब है। परन्तु श्रीरङ्गजी वकी वेशी इच्छा न थी। यही समझकर दो एक सभासद बोले,—“दारा नास्तिक है। नास्तिकका प्राणवध न करना मुहम्मदके प्रतिष्ठित धर्मका विरुद्धाचरण है।” यह बात समकी लायक हुई। श्रीरङ्गजी वने कहा,—“यह बात ठीक है। दाराको जो मेरी इज्जत करनी हो करे। मैं उसे सह सकता हूँ, परन्तु नास्तिकता असह्य है।” अतएव उसी रातको दाराके प्राणविमष्ट करनेका भार नाजिर और सफ़ी नामक दो पफगान सरदारोंको सौंपा गया।

प्राचीरातका समय था। दाराके कमरेके पास बड़ा पक्षीकी भ्रमभ्रमाष्ट सुनाई दी। बदमशीब शाहजादेके दुःखकी कुछ रात जागनेमें बीत गई, कुछ काकनिद्रामें बीतनेवाकी रही। आंख लगती जाती थी। उसी समय कानमें पक्षीकी भ्रमभ्रमाष्ट पड़ी। वे चौंक उठे और समझ गये—आज अन्तिम काल उपस्थित है। नङ्का सी रहा था, उसे उन्होंने जगाया। घातकोंने दरवाजा खोला। दारा कलमताराश कुरीको ले एक कोनेमें जा खड़े हुए। दुष्टोंने दाराके लङ्केकी वगल-वाले एक कमरेमें बांध दिया। पहले उन लोगों ने खयाल किया—गला चोटकर दाराकी मार डालेंगे। किन्तु इसप्रकार प्राणदण्ड पाना राजपुत्रके लिये अपाकर था। इसलिये असीम विक्रमके साथ दाराने एक घातकके क्लिनेमें अपनी कुरी घुसेड़ दी। आचार अन्तमें उन लोगों ने तलवारसे दाराका गिर काटा। दाराका पुत्र अपने पिताकी लहड़े लपपथ लाशको गोदमें लिये रातभर रोता रहा। नाजिर कटे हुए गिरको लेकर चले गये।

उस दिन सारी रात श्रीरङ्गजी वका नींद न आई। बड़े भारीका नृत्यमुख देखनेसे, उन्हें शान्ति होता। प्रातःकाल होनेके पहले ही नाजिर दाराका लहड़े भरा, वीथी और विषय गिर लेकर आ पहुँचे।

सम्राट् देखकर उसे पहचान न सके। कुछ देरतक लल में भिगाकर अपने हाथके रुमानसे खून पीछ डाला, फिर अच्छी तरह उसे पहचाना। श्रीरङ्गजी वने कहा,—“हाँ, यही मेरा दुष्टदृष्ट भाई दारा है।” इस तरह कहते कहते पल्लर फटकर दो बूंद पार्श्व निक्षल गये। इसके बाद सुलेमान और दाराका संभ्रमा लङ्का खालियरके क्लिनेमें कैद किया गया। श्रीरङ्गजी वके संभ्रमे लङ्के मुहम्मद मुवज्जम टलि-पासुनमें थे। श्रीरङ्गजी वने इनलिये उन्हें अपने पास बुला लिया—क्या मालूम पोछे कहीं वह कोई उपद्रव न मचावे।

श्रीरङ्गजी वके राज्यसाभका कौगल यही था। किन्तु इसमें निष्ठुरता भिन्न बुद्धिमत्ताका परिचय कुछ भी नहीं है। पितासे पुत्र, भाईसे भाई और प्रभुसे धृत्यको काम पड़ता है। अभी अविश्वास रहता, फिर कुछ रीनेपर तुरत ही खेह, समता और विम्लास आ जाता है। ऐसे स्थलमें जो अधिक पापण्ड होता, उसीको जय मिलता है।

कुकर्या लोग अपना अपना कलङ्क छिपानेके लिये एक एक संतुकर्य करते हैं। श्रीरङ्गजी व भी एक कौशलकी अच्छी तरह समझते थे। एकवार सारे भारतवर्षमें भ्रमाला पड़ गया। राजकीयसे धन लेकर इन्होंने प्रजाको भलाई की। यत्नपूर्वक विद्या सीखना हमारे देशके राजपुत्रोंके भाग्यमें प्रायः नहीं रहता। उन लोगोंका लङ्कपन प्रायः आनन्द सुखमें ही कट जाता है। परन्तु श्रीरङ्गजी वने विद्याभ्यासमें कभी आलस न किया था। परन्तु और फारसी भाषाके यह अच्छे पण्डित रहे। इसके अतिरिक्त भारत-वर्षके अनेक स्थानोंको भाषाओंमें यह चिट्ठे लिख सकते थे और उन्हें बोल भी सकते थे। सर्वप्रथम विद्यातोषणाका उत्कर्ष साधन करनेके निमित्त इन्होंने अनेक पाठ-शालाये स्थापन कीं। किन्तु केवल विद्यालय रहनेसे ही काम नहीं बनता। तत्त्वावधान न होनेसे विद्या-लय स्थापन करना निष्फल है। इसलिये इन्होंने कई चतुर और कृतविद्य तत्त्वावधायक नियुक्त कर दिये।

सुसलमान सम्राटोंमें प्रायः सभी विद्यावी और

पपय्ययी रहे। परन्तु श्रीरङ्गजीवमें ऐसी दीप न थे। मधरापर यह मामाज्य वस्त्र पहनकर, रहते। विवाह पादि सभाओंके सिवा अनर्थक नाच तमाशमें इनका पर्य नष्ट न होता था। इन्होंने भारतवर्षके नाना म्मानों में पधिकोंके लिये आश्रय बनवा दिये। एग आश्रयमें भोजनकी सामग्री भी सज्जित रहती थी। प्रजाप्राय सम्पादके पास जा सकती थी। विचारालयमें यदि किसीपर अन्याय होता, तो यह स्वयं सम्पादके जाकर कह देता। इसलिये विचारपति घस न ले सकते थे।

द्वेषमें सम्पाद, सुपुरुष न थे, परन्तु प्रतिगम्य मिष्ट-भाषी रहे। नित्य प्रातःकाल उठ यह ज्ञान आश्रित करते थे। उसके बाद एक प्रहृतक राजकाज संभासते। एक प्रहरके बाद भोजनका समय निर्दिष्ट था। भोजनके बाद श्रीरङ्गजीव छापी, छोड़ा और बाघ आदिको लड़ाई देखते। यही इनका आद्याद-प्रसाध था।

प्राद्याद-प्रसोदके बाद दीयान-पाममें बैठ यह समा करते थे। इसी समय चमौर उमरा और विदेशके राजपूत आदि आकर इनसे मिल जाते। शुकवारको दरबार बन्द रहता था। ईसाइयोंके लिये जैसे रविवार, मुसलमानोंके लिये जैसे ही शुकवार है। इसीमे सम्पाद शुकवारके दिन काम काज न देखते थे। प्रायः सम्पादोंका चन्तःपुर बसंख्य रूपवर्ती रमणियां परिपूर्ण रहता है। श्रीरङ्गजीवके चन्तःपुरमें भी चमैक दासियां थीं। परन्तु वे सब केवल राजमादाकी शोभाके लिये ही रहतीं। फलतः विवाहिता स्त्री भिन्न यह कभी दूसरी स्त्रीका मुंह न देखते थे।

चतस्र श्रीरङ्गजीवका गुणराशि दोषके ठीक विपरीत था। एक और पूर्णचन्द्रकी हिमधारासनी वीर्यप्राप्ति मोन्द्येसे हृदय शीतल रहता, दूसरी और चमावस्थाका निविड़ अत्यकार—निष्ठुरताका कठिन हृदय देवनेसे प्रायः काप रहता था। जो हो, इनका दुषारित ही मोगल साम्राज्यके घनका प्रधान कारण है। प्रजा चमत्तुट होनेसे राजा नहीं रहता,

इन्द्रका इन्द्रत्व भी छोन उठता—कृष्टिम राजनीति एवं चन्द्रवन मिथ्या है। श्रीरङ्गजीव चपली गठता क्षिपानेके लिये सधको धार करते थे। पहले जो लोग इनके सिरोघो रहे, उनके साथ भी यह छेद रहते थे। परन्तु लोग समझ गये—यह भौगन भिन्न और कुछ नहीं है। इनलिये हिन्दुओंकी कौन कहे, मुसलमान भी सम ही मन इनके गन्, थे। एगके प्रेममें पड़ना काले सापके साथ रहनेके समान है, विषद, पा जानमें देर नहीं लगती।

यह तो हुई साधारण लोगोंकी बात। हिन्दू इनके पात्यन्त विरक्त हो गये थे। यह हिन्दुओंकी सुसम्मान बनानेके लिये उत्प्रेषण करते थे। इसीमे जिन राजपूत वीरोंके बाहुबलसे तैमूरवंशकी हतमी प्रतिपत्ति हुई थी, चन्तमें उन लोगोंने भी सम्पादको छोड़ दिया। श्रीरङ्गजीवकी हवायसामें जब चारो ओर विप्लव उपस्थित हुआ, तो उस दुःसमयमें किसीने इनको पोर न देया। उधर मधाराष्ट्र देशमें शिवाजी भयके भीतर अग्निस्तुनिककी भांति क्षिपे थे। क्रमसे प्रधुमित होकर उन्होंने चकाण्डका कुण्ड जला दिया, मोगल साम्राज्यका मनीतक काप उठा। श्रीरङ्गजीवका उत्तमा तेज, उत्तमा चयम,— फिर कुछ भी न रहा। वह खलन्त दीपशिखा बुझने लगी। इन्होंने पहले जा दुष्कर्म लिये थे, उन्होंने पापोंके कारण हृदयमें भइसा विच्छेदके काटनेको खाना उठ एड़ी हुई। यह लोगोंके सामने चपला मुंहतक दिखा न सके। क्रमसे चतु-तापमें जोष, क्षिष्ट और जरजर हो पायी प्राण पशुभूत गरोरसे निकल गये।

अन्तिम अवस्थामें श्रीरङ्गजीव प्रायः दासिप्राय प्रदेशमें ही रहते थे। चइमदमगरमें इनका मृत्यु हुआ यहाँ चमैक प्रकारके समाधोमें इनका चतदेह रक्षित किया गया। वीहे इलोरा और गोदावरीके मयिकट राजा नामक स्थानमें यह समाहित हुये। कहते हैं, इन्होंने एक प्रकारको टोपी बनाई थी। उसीको विकाशे इनके समाधिका अग्र निर्धार किया गया।

श्रीरङ्गाबाद—१ दक्षिणात्यके हैदराबाद राज्यका एक नगर। यह अक्षां १८° ५४' उ० तथा देशां ८२° २२' पू० पर कीम नदी किनारे अवस्थित है। नांदगांव रेलवे स्टेशन ५६ मील पड़ता है। १६१० ई० को अयोधोनियाके मलिक अम्वर या सीदी अम्वरने इसे बसाया था। अनेक भवनों का अंशभावशेष पड़ा है। श्रीरंगजी, बका बनाथा प्रामाद बिलकुल टूटफूट गया है। नगरको चारो चार दोवार उठी है। पहले इसका नाम 'किरको' रहा। श्रीरंगजी, बकी प्यारी बीवीका अति-मन्दिर आगरेके ताजमहलसे मिलता जुलता है। नगरसे २ मील पश्चिम 'हरखल' ग्राम का अंशभावशेष है। राहमें श्रीरंगजी द्वारा यात्रियोंके लिये बनाया पत्थरका एक मकान खड़ा है। श्रीरंगाबादसे पूर्व कुछ दूर अरमेनियाके लोगों को ५० कंठे तकनी हैं। शिलालिख यहूदी भाषामें हैं। नगरसे १४ मील दूर रोजामें मलिक अम्वरकी कब्र और १ मील पश्चिम कावनी है। फिर २ मील उत्तर ३ गुफा हैं। उनमें दो बौद्ध गुफा संभल पड़ती हैं। पहले यह नगर व्यवसायका केन्द्र रहा, किन्तु हैदराबाद राजधानी होनेसे वह महत्व घट गया। फिर भी गेहूँ, रुई, कपड़े और लाहलंगडका काम खूब होता है।

२ युक्तप्रदेशके खेरी जिल्लाका एक परगना। क्षेत्रफल ११६ वर्ग मील है। सोतापुरमें शाहजहाँपुर जानेवाली पक्की सड़क इसी परगनेमें पड़ी है। पूर्व सीमापर कथना और पश्चिम सीमापर गोमती नदी बहती है।

३ युक्तप्रदेशके खेरी जिल्लाका एक नगर। यह अक्षां २८° ४८' उ० तथा देशां ८२° २८' पू० पर सीतापुरसे २८ मील दूर अवस्थित है। श्रीरंगजी, बकी नामपर इसका नामकरण हुआ। नवाब सेयद खुरमने श्रीरंगाबाद बसाया था। टूटे फूटे महलमें आज भी सेयद खुरमके वंशज रहते हैं। किना बिलकुल बिगड़ गया है। कहीं कहीं दीवारें खड़ी हैं। पहले पिछानौसे भोगरी तक सेयद राज्य करते थे। किन्तु गौर सन्निधिसे उन्हें परास्त कर लोहा दिखाया। सुसलमान को यहाँ बड़े जमोन्दार है।

४ युक्तप्रदेशके सोतापुर जिल्लाका एक परगना। क्षेत्रफल ६० वर्ग मील है। दक्षिण और पश्चिम सीमापर गोमती नदी बहती है। सुसलमानों की जमोन्दारी बहुत है। श्रीरंगजी, बकी पहले पंवार राजपूतोंका अधिकार रहते भी अब कोई बड़ा राजपूत-जमोन्दार देख नहीं पड़ता।

५ युक्तप्रदेशके सोतापुर जिल्लाका एक नगर। बहादुर बेगका श्रीरंगजी बने यहाँ जागोर दो थो। इसीसे नगरका नाम श्रीरंगाबाद पड़ा। उनसे वंशज ताकतदार कहलते हैं। समाज में दो बार बड़ा बाजार लगता है। यह और नमकका काम होता है। जनवायु स्वास्थ्यकर और भूमि उबरा है।

६ बिहार प्रान्तके गया जिल्लाकी एक तहसील। यह अक्षां २४° २८' एवं २५° ८' उ० और देशां ८४° २' ३०" तथा ८४° ४६' ३०" पू० पर अवस्थित है। क्षेत्रफल १२४६ वर्ग मील है। इसमें श्रीरंगाबाद, दाजदमगर और नवीनगरको पुलिसका थाना लगता है।

७ बिहार प्रान्तके गया जिल्लाका एक ग्राम। यह अक्षां २४° ४५' ६" उ० और देशां ८४° २५' २" पू० पर अवस्थित है। यहाँ सरकारी मकान, स्कूल, चौपड़ाजय और कंदखाना बना है। अमाज, सलहण, चमड़े, गोम, बसी, कपड़े, मसाले, मट्टीके तेल और नमकका काम होता है।

श्रीरङ्गाबाद संघद—युक्त प्रदेशके बुलन्दशहर जिल्लाका एक नगर। यह बुलन्दशहर नगरसे १० मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। डाकखाना, स्कूल और बाजार मौजूद है। श्रीरंगजी, बकी पाससे संघद अबदुल अजीजने उदण्ड जगोनीयों को दबा यह नगर बसाया था। इससे चारङ्ग, बकी नामपर श्रीरङ्गाबाद कहाया। संघद अबदुल अजीजके वंशज आज भी यह नगर और १५ दूसरे ग्राम अपने अधिकारमें रखते हैं। संघद अबदुल का कन्नूर इलाक़ा मेंता लगता है। नगरको चारो चारो तानाब भरें हैं।

श्रीरत (अ० खी०) १ खो, आगार। "श्रीरत" उगना अच्छा नहीं। (निबोध) २ पद्मा, बोधो, जे



शौरभ ( सं० पु० ) शरभस्य मेषस्य इदम्, शरभ-  
शब्दः । १ कस्यन, मोटे कनरी बीरे । संस्कृत पर्याय  
छपाए, चाविक शौर राक्षस है । २ चन्द्रमार्तिके  
अन्यतम मेषः । ३ मेष, भेड़ । ( स्त्री० ) ४ मेष-  
मांस, भेड़का गोشت । यह हृत्पत्र, पित्त एवं देह-  
वर्धक शौर गुरु होता है । ५ मेषदुग्ध, भेड़का दूध ।  
यह मधुर, घिन्ध, गुरु, पित्त-कफवर्धक शौर कासके  
निये हितजनक है । ६ कर्णावसा, कनरी कपड़ा ।  
७ मेषमसूत्र, भेड़का सूत । ( त्रि० ) ८ मेषमख्यश्वीय,  
भेड़के सुताक्षिक ।

शौरभ—एक प्राचीन वैद्यकग्रन्थ रचयिता । सुदृढ़ शौर  
चन्द्रमते इनका यवन सङ्गत किया है ।

शौरभक, शौरभदो ।

शौरभिक ( सं० त्रि० ) शौरभः पण्यमस्य, शरभ-  
ठञ् । १ मेषविप्रयोगजौयो, भेड़ वैचकर चपना काम  
चलानेवाला । २ मेष-सम्बन्धीय, भेड़के सुताक्षिक ।

( पु० ) ३ मेषपालक, गढ़रिया ।

शौरभ ( सं० पु० ) शरभजनपदवाची, शरभका  
वाग्विन्दा । वरम देखो ।

शौरभ ( सं० पु० ) शरभा उत्पादितः, शरभ-पण्य ।  
१ समान जातीय विवाहित भायोंके गर्भसे उत्पादित  
पुत्र, असील लड़का । दादश प्रकार पुत्रके, मध्य  
खटो पुत्र श्रेष्ठ होता है । ( नव दशरत्न ) २ असमर्थ  
भायोंके गर्भसे उत्पादित पुत्र ।

“अथलक्ष्मणं नृपायि निवर्तं पुत्रशौरभम् ।” ( भारत, भीष्म ६१५० )

( त्रि० ) ३ हृदयोत्पन्न, असील ।

शौरभक ( सं० त्रि० ) उत्तम, अच्छा ।

शौरभ-शौरभ ( हिं० वि० ) १ समस्य, हमवार, बरा-  
बर । ( क्रि० वि० ) २ चारो शौर, चौतरफ़ ।

शौरभता ( हिं० क्रि० ) ३ म न रणनी, विसर्ज पड़ना,  
विगड़ना ।

शौरभिक ( सं० स्त्री० ) शरभ स्वार्थ ठञ् । यक्ष, द्वासी ।

शौरभ्य ( सं० पु० ) शरभो मयः, शरभ-यस्य स्वार्थ  
अप् । १ शौरभपुत्र, असील लड़का । ( त्रि० ) २ गर्भज,  
असील । ३ यक्षःसहस्रात, दियो ।

शौरभ—युद्धप्रान्तके उगाय जिल्लाका एक ग्राम । यह

अक्षां २६° १४' उ० तथा देशां ८०° ११' पू०में उगाय-  
से सडौना जलानालो सड़क पर अवस्थित है । सताहमें  
दा बार बाजार लगता है । अमाज, तम्बाकू, गारू,  
शौर देशी तथा विनायती कपड़ेका काम होता है ।  
महाके वरतन शौर शनि-चांदोके ल्ले बनते हैं ।

शौरिण ( सं० स्त्री० ) १ मृत्तिकात्मक, महीका नमक ।  
२ यवचार, जशखार ।

शौरोशौरी ( हिं० स्त्री० ) शारलो-वायलो, पगलो,  
बेवकूफ़ शौरत ।

शौरछयस ( सं० पु० ) उरुछयःके पुत्र ।

शौरवुध ( सं० स्त्री० ) परखडतैल, रंझीका तैल ।

शौर्य ( हिं० पु० ) १ कुटिल गमन, टेढ़ी चाल ।  
२ वक्र कर्तव्य, तिरछा तराय । ३ जटिलत्व, फंसाव ।  
४ जटिल विषय, पेचीदा बात ।

शौर्या—१ युद्धप्रान्तके इटावा जिल्लाकी एक तहसील ।  
यह यमुना, चम्पल शौर काली नदीके दोनो किनारे  
विस्तृत है । कितने ही माले बड़ा करते हैं । क्षेत्रफल  
१०८ वर्गमील है ।

२ युद्धप्रदेशके इटावा जिल्लाका एक नगर । यह  
अक्षां २६° २८' उ० तथा देशां ७८° ११' १५'  
पू०में इटावे शौर कालपीकी सड़क पर अवस्थित है ।  
खालियर शौर भाषीके साथ बड़ा व्यवसाय होता है ।  
तहसीली बहुत अच्छी बनी है । १ सराय, २ बड़े  
तानाब, ३ उम्दा मछनद शौर कितने ही मन्दिर  
विद्यमान हैं । सुननेमें पाया, कि सिपाही विद्रोहके  
समय कुछ महाजनोंने विद्रोहियोंको उत्कोच-  
स्वरूप कितना ही धन दे लूट जानेमें चपना प्राय  
बयाया था ।

शौर्य ( सं० त्रि० ) कर्णायाः विकारः, कर्णा-अप् ।  
मेषलोभ-ज्ञात, कनो ।

शौर्यानाम ( सं० त्रि० ) कर्णनामस्य इदम्, कर्णनाम-  
अप् । कर्णनाम र्वाचीय, कर्णनामके चाम्दानमें  
पेटा हुआ ।

शौर्यानामक ( सं० त्रि० ) कर्णनामार्थे बसा हुआ ।

शौर्यावाध ( सं० पु० ) १ कर्णबाधिके गोद्यापत्य ।  
२ वेवाकरपवित्रेय ।

शौर्यावाम—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। यास्कने इनका वचन उद्धृत किया है।

शौर्यावत ( सं० त्रि० ) ऊर्णवतोऽयम्, षण्। ऊर्णावतश्चोय।

शौर्यिक ( सं० त्रि० ) ऊर्णया निमित्तं संयोग उत्पन्नो वा, ऊर्णा-ठञ्। मेघनोम-जात, ऊर्णो।

शौर्यकालिक ( सं० त्रि० ) ऊर्णकाले भवः, ऊर्णकाल-ठञ्। १ ऊर्णकालोत्पन्न, पिछले वस्त्र, पंदा हुआ। २ ऊर्णकाल-सम्बन्धीय, पिछले वस्त्रके सुताक्षिक।

शौर्यदेह ( सं० स्त्री० ) ऊर्णदेहस्य इदम्, ऊर्णदेह-षण्। अग्न्येष्टिक्रिया, अरयोका काम-काज।

शौर्यदेहिक ( सं० त्रि० ) ऊर्णदेहाय साधुः, ऊर्णदेह-ठञ्। १ मरणान्तर-शास्त्रोक्त कार्यादिसे सत्यत्व रखनेवाला। मृत्युके दिनसे सुपिण्डोत्तरण पर्यन्त पिण्डदानादि प्रभृति जो कार्य किया जाता, वह शौर्यदेहिक कहलाता है। ( स्त्री० ) २ अग्न्येष्टिक्रिया, अरयोका काम-काज।

शौर्यदेहिक ( सं० त्रि० ) मृत्युके बाद प्रेतादिशसे किया जानेवाला।

शौर्यन्दमिक ( सं० त्रि० ) ऊर्णन्दमे भवः, ऊर्णन्दम-ठञ्। ऊर्णन्दमोत्पन्न, जो ऊपरसे पैदा हो।

शौर्यसदृश ( सं० स्त्री० ) सामविशेष।

शौर्यस्रोतसिक, शौर्यस्रोतसिक देखो।

शौर्यस्रोतसिक ( सं० त्रि० ) ऊर्णस्रोतसि आसक्तः, ऊर्णस्रोतस-ठञ्। शैव, शिवका भक्त।

शौर्य ( सं० स्त्री० ) उर्व्या भवम्, उर्वी-षण्। १ उद्भिद-लवण, नवातातो नमक। २ सृजिका लवण, मटोका नमक। ३ यवचार, लघाहार। ( त्रि० ) ४ भूमिजात, कानो, कमीनसे खोदकर निकाला हुआ। ( पु० ) उर्व-कटिपरपत्यम्। ५ उर्व कटिपके पुत्र। ६ वसिष्ठके एक पुत्र। ७ शृगुर्वशीय एक ऋषि। ८ बाहुवानस।

भारतमें बाहुवानसकी उत्पत्ति-कथा इसप्रकार लिखी है—अत्रियोंके हाथों शृगुका अपमान होने बाद उर्व ऋषि गर्भमें रहे। उसी समय अत्रिय शृगुकी पत्नीका गर्भ भाग करनेकी छयत हुये। किन्तु उर्व उर्वमेद पूर्वक ऊर्ण से उसी प्रतिहिंसा-साधनके लिये

तपस्या करने लगे। उस सप्त तपस्यामें सर्व प्राणियोंका विनष्ट होना समझ पिटलोकसे पिटपुरुषोंने उनके निकट जा क्रोध छोड़नेकी अनुरोध किया था। किन्तु अत्रियगणकी उस हिंसाकी धारण कर उर्व किसी प्रकार क्रोध छोड़नेपर स्वीकृत न हुये। तब पिटगणने कहा था—'जस सर्वलोकमय है। जसमें ही सर्वलोक रहते हैं। सर्वलोकविनाशके लिये उत्पन्न अपना अग्नि जलमें ही छोड़ दी। उससे तुम्हारी प्रतिष्ठा पूर्ण हो जायेगी।' इसप्रकार अनुरोध होनेपर उर्वने समुद्रके ही मध्य बह्म क्रोधान्न डाल दिया। वहां उर्वत् अश्वमुखरूपी वन पौर सुसुहारा अन्न लगत अग्नि लक्ष पीने लगे।

शौर्य—संस्कृतके एक प्राचीन कवि।

शौर्य ( सं० त्रि० ) उर्वश्या इदम्, उर्वशी-षण्। १ उर्वशी-सम्बन्धीय। ( पु० ) उर्वश्या अपत्यं पुमान्। २ उर्वशीके पुत्र, पञ्चमवरात्मगत एक मुनि।

शौर्येय ( सं० पु० ) उर्वश्या अपत्यम्, उर्वशी-ठञ्। अगस्त्य मुनि। अगस्त्य देखो।

शौर्यानल ( सं० पु० ) बहुवानस। शौर्यदेहा।

शौल ( सं० स्त्री० ) १ श्वेत शूरप, सफ़ेद कमीकन्द। ( हिं० ) २ वन्य ज्वर, लंगली बुखार।

शौलपि ( सं० पु० ) उत्तपप्य अपत्यम्, उत्तप-इज। उत्तप-पुत्र, उत्तपके लड़के।

शौनवी ( सं० पु० ) उत्तपेन प्रोक्तं हन्दीश्वीते, उत्तप-णिनि। उत्तप-लिखित हन्दीपत्रका पाठक, उत्तपकी बनायी किताब पढ़नेवाला।

शौलवीय ( सं० पु० ) शौलपि-नरेश, शौलपियोंके राजा।

शौन-शौल ( हिं० पु० ) १ शिन्धागर्भ भाषा, गाछी-गुफ्त। २ अनर्थवाद, झकझक।

शौलाद ( सं० स्त्री० ) सन्तति, नसल, बीन। यह शब्द 'वल्ह' का बहुवचन है।

शौलान, ( सं० स्त्री० ) अवसम्बन्, सझारा, टेक।

शौलिया ( सं० पु० ) सिद्धजन, दरवेश।

शौली ( हिं० स्त्री० ) प्रत्ययाय, टटकी वाल। सर्व प्रथम क्षेत्रसे आनोत हरित एवं अमिनव मध्याकी शौली कहते हैं।



वैद्यशतमें श्रीषध तीन भागमें विभक्त है। कितने ही श्रीषध कुपित दोष दुष्यके प्रथमक, कितने ही उसके गोषध और कितने ही स्वस्थ अवस्थामें उपयोगी होते हैं। पिचकारोमें देय, विरेचक एवं वमनकारक द्रव्य और दैहिक रोगमें साधारणतः तेज, हृत् तथा मधु श्रीषध उपयोगी है। मानस रोगमें बुद्धि, धर्म और आत्मज्ञान ही श्रीषध है।

जिस स्थानपर हस्त नहीं चलता एवं हृद् हृत्पादि नहीं रहता, और जो स्थान स्निग्ध, मृदु, स्थिर, समतल, क्षण्य, गौर प्रथवा मोहितवर्ण लगता, उसी स्थानका श्रीषध लेना पड़ता है। यस्त्राक, अग्रगान, देवमन्दिर और बालुकामय, गत वा प्रसार विविष्ट तथा निष्कोक्त स्थानमें उत्पन्न ज्ञानेशा श्रीषध उपयोगी नहीं। पूर्वोक्त स्थानज्ञान होते भी यदि श्रीषध कीटजुष्ट प्रथवा पक्षा, ज्ञातप, वायु, अग्नि, जल प्रभृतिके आघातसे मर जाये, तो उसको ग्रभो जाय न लगाये। फिर नरम, परिपुष्ट और श्रुतिकाको बड़दूर पर्यन्त भेद करनेवाला मूल ही प्राप्ति है।

कोई कोई कहता—प्राण्ट, यर्षा, शरत्, हिमन्त, वसन्त एवं आषाढानको यथाक्रम मूल, पञ्च, खन्, चौर, सार तथा फल लेना पड़ता है। किन्तु सुश्रुतने उसमें दाघ लगा कहा—सोम्य ऋतुमें साम्य और आग्नेय ऋतुमें आग्नेय श्रीषध संयोज्य करना उचित है। वीर्यवान् और एक वत्सर पतिक्रम न करनेवाला श्रीषध ही रोगनाशक जाता है। केवलमात्र मधु, घृत, गुड़, पिप्पली और पिङ्गल द्रव्य पुरातन पड़नेसे उपकारप्रद है। पृथिवी एवं जलगुणाधिक स्थानका विरेचक, अग्नि, आकाश तथा वायुगुण-भूयिष्ठ स्थानका वमनविरेचन-कारक और आकाशगुणबहुल स्थानका प्रशामक श्रीषध अधिक गुणशाली जाता है।

मूल मूलका काष्ठ छोड़ वस्त्र और सूक्ष्म मूलका काष्ठ और वस्त्र समस्त ही ग्रहण करना चाहिये। बटादिका वस्त्र, बीजादिका सार, तालिशादिका पत्र, तिफला प्रभृतिका फल, चित्रकका मूल, खोलका कन्द, धातकीका पुष्प, खटिरादिका सार, और कण्टकारोका समस्त पत्र लेना पड़ता है। वनका

कच्चा और सोनाल्का पक्का फल याह्य है। श्रीषधके स्थान विशेषका उल्लेख न रहनेमें मूल ही लेना पड़ता है। योगविशेषमें श्रीषधका परिमाण जो लिखा जाता, कच्चा या मोला श्रीषध छाननेमें उससे द्विगुण देना उचित आता है।

विषय समस्त व्यवहार कर सकनेसे श्रुत तुल्य फल मिलता—किस प्रकार कौन अवस्थामें क्या श्रीषध चलता है। नहीं तो विषय वस्तु प्रभृतिकी भांति श्रीषध अपकार साधन करता है। नाम, रूप और गुण—साधारणतः तीन ज्ञानस्थ विषय समस्त लेनेसे ही श्रीषधका पूरा ज्ञान नहीं आता। उक्त समस्त ज्ञानस्थके साथ श्रीषधके सामको प्रयत्नी समझना भी विशेष आवश्यक है। क्योंकि योगविशेषमें विषय भी श्रुत वन जाता है।

उपवासकी पीछे जनपान करने, शोण रहने, अजीर्ण मालूम पड़ने, आहार ले चुकने और पिपासा लगने पर समोषन प्रभृति कोई श्रीषध सेवन करना न चाहिये। साधारणतः असह्य श्रीषध सेवनको ही व्यवस्था है। उससे श्रीषधका अधिक वीर्य प्रकाश पाता और निःसन्देह रोग नष्ट हो जाता है। किन्तु बालक, हन, युवतो और मृदु व्यक्तिके लिये ऐसी व्यवस्था करना न चाहिये। इससे उन्हें पातल स्तानि लगतो और इनकी जानि पड़ती है।

आहारसे कुछ पहले उन्हें श्रीषध सेवन करना चाहिये। उससे श्रीषध प्रनाहत होनेपर आरम्भ मुखमें चढ़ नहीं चलता, परिपाक भी गोत्र पड़ता और फलस्य नहीं लगता। श्रीषध परिपाक होनेपर वायुका अनुनाम, स्वास्थ्य, चुवाहण्याका प्रकाश, मनमें आनन्द, शरीरका हलकापन, सज्जन इन्द्रियका ज्ञात और शुद्ध उद्गार आता है। श्रीषध संयुक्त शोष न पड़ते प्रथवा आहार सम्यक् परिपाक न होने श्रीषध सेवन करनेसे पाठाकी शान्ति न होने पर अन्यान्य रोगको भी उत्पत्ति होती है। सम्यक् रूप श्रीषध परिपाक न होने से शान्ति, दाह, प्रवसता, श्वम, मूर्च्छा, शिरःपीडा, प्रसृष्टशोष और वनस्पतिका शोष बढ़ता है।

शौलू (हिं० वि०) १ नवीन, नया, अनोखा।  
२ असाधारण, गौरवमूलो। ३ कठिन, नागवार,  
भारी। ४ विचलित, बेचैन। (पु०) ५ नवीनता,  
नयापन। ६ काठिन्य, भारोपन। ७ दकल्य, बेचैनी।  
शौलूक (सं० स्त्री०) उलूकानां समूहः, उलूक-  
जम्। उलूक-समूह, उलूकियोंका झुंड।

शौलूक्य (सं० पु०) उलूकस्य अपत्यं पुमान्, उलूक-  
यज्। गर्गदिभ्यो यञ्। पा ३।१।१०। १ उलूक कृत्रिके  
पुत्र कणाद। यज्ञो वैशेषिक दर्शनके प्रणीता ये।  
२ वैशेषिक दर्शनम्।

शौलूयदर्शन (सं० स्त्री०) वैशेषिक दर्शन।

शौलूखल (सं० त्रि०) उलूखले लुप्तम्, उलूखल-  
अण्। १ उलूखनमें कुदित, ओखनी में कूटा हुआ।  
२ उलूखलोत्पन्न, ओखनीसे निकला हुआ।

शौले (हिं० वि०) ठगोंका एक शब्द। ठग किसी  
अपरिचित व्यक्तिसे मिलनेपर इस शब्दको व्यवहार  
करते और हिन्दूसे 'शौले भाई राम राम' तथा सुसल-  
मानसे 'शौले खान् सनाम' कहते हैं। इसका  
तात्पर्य उसकी ठग होने या न होने की पूछताछ है।  
यदि वह ठग होता, तो अपनो बोलोंमें उन्हें बता देता  
है। फिर इस शब्दका प्रकृत अर्थ न समझ सकने  
पर ठग उसे अपने फंदेमें लाने की चेष्टा लगाते हैं।

शौलाकना (हिं० स्त्री०) अवलाकन करना, देखना-  
भासना।

शौलवण्य (सं० स्त्री०) आधिक्य, कमरन, बहु-  
तायत।

शौवल (सं० वि०) १ प्रथम, पहला। २ श्रेष्ठ,  
बड़ा। ३ अतिशय उच्च, सबसे उमदा। ४ प्रस्तावना-  
रूप, तमबोदी। (क्रि० वि०) ५ प्रथमतः, पहली,  
शुरुमें। (पु०) ६ आरम्भ, शुरु।

शौवेणक (सं० स्त्री०) गीतविशेष, एक गाना।  
याज्ञवल्क्यने सात प्रकारके गीत कहे हैं—१ अप-  
रास्तक, २ लोपाय, ३ मद्रक, ४ प्रकरी, ५ शौवेणक,  
६ सरोविन्दु और ७ उत्तर।

शौयन, शौयनश्चो।

शौयनस (सं० स्त्री०) उगनसा शलोष प्रोक्तम्, उगनस्-

अण्। १ शक्राचार्य-प्रणीत ग्रन्थ, शक्राचार्यकी 'वनाई'  
किताब। २ उपपुराण विशेष। ३ तीर्थविशेष।  
(त्रि०) उगनस इदम्। ४ शक्राचार्य-सम्बन्धीय।  
शौयनसा (सं० स्त्री०) उगनसा इत्यस्त्री। शक्रा-  
चार्यकी कन्या, देवयानी। राजा ययातिने इनका  
परिणय हुआ था।

शौमि (हिं०) श्वशुरश्री।

शौमिज (सं० पु०) उगिन् स्वार्ये अण्। प्रसदिभ्यः।  
पा ३।३।२८। १ इच्छायुक्त, खादिशमन्द। (पु०) २ पञ्च  
प्रवरास्तमंत कृत्रिविशेष।

शौमोनर (सं० पु०) उगोनरस्यापत्यं पुमान्, उगोनर-  
अण्। उगोनरकी पुत्र शिवि प्रवृत्ति। उगोनरकी  
पांच भार्याओंके गर्भसे पांच बेटे पुत्र हुये थे—नृगाके  
गर्भसे नृग, क्रमोके गर्भसे क्रमि, नवाके गर्भसे नव,  
देवाके गर्भसे द्रुत और द्रुपदतीके गर्भसे शिवि।

शौमोनरि (सं० पु०) उगोनरस्यापत्यम्, उगोनर-  
इज्। उगोनरपुत्र, उगोनरकी लड़की।

“शौमोनिः पुनरीकः श्रुयतिः शरमः पुदि।” (भारत, समा ८५०)

शौमीर (सं० पु०-स्त्री०) वश-ईरन् स्वार्ये अण्।  
१ शय्या, बिस्तर। २ आसन, बैठनेकी चीज। ३ चामर,  
सुरखल। ४ चामरदण्ड, सुरखलकी डंडी। (त्रि०)  
५ उमीरन, समका बना हुआ।

शौमीरिका (सं० स्त्री०) १ चक्र, चापन। २ आधार,  
पात्र, दस्तन।

शौमण (सं० स्त्री०) उद्यम्य भावः, उद्यम-अण्।  
१ कटुरम, कड़वाहट, चरफरापन। २ मरिच,  
कोला मिर्च।

शौमणशौण्डी (सं० स्त्री०) शौमणे कटुरसे शौण्डी  
विख्याता, ३ तत्। शूण्डी, सीठ।

शौमदक्षि (सं० पु०) शौमदक्षस्यापत्यम्, शौमदक्ष-  
इज्। शौमदक्ष राजाके बहुमान् नामक पुत्र। यह  
यथातिके दीहिव थे। (भारत, भादि २१ ५०)

शौमध (सं० स्त्री०) शौमधेरिदं शौमधेरिववा, शौमधि-  
अण्। शौमधेरिकी। पा ३।३।२०। रोगनाशक द्रव्य, दवा।  
इसका वैद्यकीक पर्याय भैषज, भैषज्य, भगद, जायु,  
जैत, चायुर्योग, मंदाराति, पशुत और चायुर्द्रव्य है।

चैत्यकमतेषु औषध तीन भागमें विभक्त है। कितने ही औषध क्षुपित दोष द्रव्यके प्रथमक, कितने ही उसके गोपध और कितने ही स्वस्थ अवस्थामें उपयोगी होते हैं। पिचकारोमें देय, विरेचक एवं वमनकारक द्रव्य और दैहिक रोगमें साधारणतः तैल, घृत तथा मधु औषध उपयोगी है। मानस रोगमें बुद्धि, धर्म और आध्यात्मन ही औषध है।

जिस स्थानपर हल नहीं चमकता एवं हड़प्प हृत्पादि नहीं रहता, और जो स्थान क्षिप्त, शृङ्ग, स्थिर, समतल, कृष्ण, गौर अथवा क्षोदितवर्ण लगता, उसी स्थानका औषध लेना पड़ता है। यक्ष्मोक्ष, अग्निमान, देवमन्दिर और वायुकामय, गतं वा प्रसृत विशिष्ट तथा निम्नोक्त स्थानमें उत्पन्न जानेवाला औषध उपयोगी नहीं। पूर्वोक्त स्थानजात होते भी यदि औषध कौटुम्बिक अथवा अक्षत, आतप, वायु, अग्नि, जल प्रभृतिके आघातसे मर जाये, तो उसको कभी दाय न लगाये। फिर गरम, परिपुष्ट और श्रुतिकाको बहुत दूर पर्यन्त भेद करनेवाला मूल ही प्राप्ति है।

औई-कोई कष्टता—प्राष्ट, यर्षा, शरत्, कैमन्त, यस्त एवं यासकाशको यथाक्रम मूल, पत्र, त्वक, और, सार तथा फल लेना पड़ता है। अंगु सुशुतने उसमें दाप लगा काड़ा—सोम्य वृत्तुमें साम्य और आग्नेय वृत्तुमें आग्नेय औषध संयोज्य करना उचित है। बोधवाग् और एक वत्सर अतिक्रम न जानेवाला औषध ही रोगनाशक होता है। कृष्णमात्र नष्ट, घृत, गुड, पिप्पली और विट्क द्रव्य पुरातन पड़नेसे उपकारप्रद है। पृथिवी एवं जलगुणाधिक स्थानका विरेचक, अग्नि, आकाश तथा वायुगुण-भूयिष्ठ स्थानका वमनविरोधन-कारक और आकाशगुणवहुल स्थानका प्रथमक औषध अधिक गुणशाली जाता है।

मूल मूलका काष्ठ छोड़ बल्लक और सूक्ष्म मूलका काष्ठ और यस्त्रल समस्त ही ग्रहण करना चाहिये। सटादिका बल्लक, बीजादिका सार, तालिशिादिका पत्र, त्रिफला प्रभृतिका फल, चित्रकका मूल, भोलका कन्द, घातकीका पुष्प, खदिरादिका सार, और कण्टकारोका समस्त अंश लेना पड़ता है। बेलका

कक्षा और मोनालका पक्का फल प्राप्ति है। औषधके स्थान विशेषका उल्लेख न रहनेमें मूल ही लेना पड़ता है। योगविशेषमें औषधका परिमाण जो लिखा जाता, कक्षा या गोला औषध ढाकनेमें उससे द्विगुण देना उचित पाता है।

विषय समझ व्यवहार कर सकनेमें प्रसृत तुल्य फल मिलता—किस प्रकार कौन अवस्थामें क्या औषध चमकता है। नहीं तो विषय वस्तु प्रभृतिको भांति औषध अपकार साधन करता है। नाम, रूप और गुण—साधारणतः तीन ज्ञानय विषय समझ लेनेसे ही औषधका पूरा ज्ञान नहीं होता। वस्तु समस्त ज्ञानयके साथ औषधके योगको प्रशानी समझना भी विशेष आवश्यक है। क्योंकि योगविशेषमें विषय भी प्रसृत बन जाता है।

उपवासके पीछे जननपान करने, ओष रहने, यक्षीण मालूम पड़ने, आहार ले चुकने और विपास लगने पर संगोपन प्रभृति कोई औषध सेवन करना न चाहिये। साधारणतः असह्य औषध सेवनको ही व्यवस्था है। उससे औषधका अधिक योग्य प्रकाश पाता और निःसन्देह रोग नष्ट हो जाता है। किन्तु बालक, वृद्ध, युवतो और शृङ्ग व्यक्तिके लिये ऐसी व्यवस्था करना न चाहिये। इसमें उन्हें अत्यन्त स्थानि लगतो और बनकी जानि पड़तो है।

आहारसे कुछ पहले उन्हें औषध सेवन करना चाहिये। उससे औषध अनाहत होनेपर वारम्बार सुखमें चढ़ नहीं रुकता, परिपाक भी गीम पड़ता और दलचय नहीं लगता। औषध परिपाक होनेपर वायुका अनुनाम, स्वास्थ्य, सुधाश्लेष्माका प्रकाश, अग्निमान, शरीरका हलकापन, सकल इन्द्रियका मोक्ष और शुद्ध उद्गार होता है। औषध संपूर्ण होय न पड़ते अथवा आहार सम्यक् परिपाक न होने औषध सेवन करनेसे पाड़ाकी शक्ति न पाने पर अन्यान्य रोगको भी उत्पत्ति होती है। सम्यक् रूप औषध परिपाक न होने क्लान्ति, दाह, अवसन्नता, अश्व, मूर्च्छा, शिरःपीडा, मधुशोष और वल्लानिका सेव बढ़ता है।

श्रीपथके सेवनमें मावाका कोई नियम निर्दिष्ट नहीं। दोष, अग्नि, वज्र, वयस, व्याधि, द्रव्य और कोष्ठको देख मात्रा ठहराना पड़ती है।

श्रीपथ-वरीषा प्रथम अन्त्य विषयको परिगणना देखो।

२ विष्णुका नामान्तर। ( त्रि० ) १ श्रीपथिजान, जड़ीबूटीसे बना हुआ।

श्रीपथकाल ( सं० पु० ) श्रीपथसेवनका समय, देवा खानिका वस्तु। यह दस प्रकारका होता है, निर्भक्त, प्राग्भक्त, अधोभक्त, मध्येभक्त, अन्तराभक्त, समक्त, सामुद्र, सुहृत्सुहृत्सि और आसान्तर। वे खाये निर्भक्त, खानेसे पहले प्राग्भक्त, खानेके बाद अधोभक्त, खानेके बीच मध्येभक्त, दोनों समय खानेके बीच अन्तराभक्त, खानेमें मिलाकर समक्त, खानेके पहले और पीछे सामुद्र, बेछाये या खाये बारबार सुहृत्सुहृत्सि और, कौरकौर पर लिया जानिवाला श्रीपथ नामान्तर कहाता है। निर्भक्त वीर्य बढ़ाता, प्राग्भक्त शीघ्र पक्ष पचाता, अधोभक्त बहुविध रोग मिटाता, मध्येभक्त मध्य रूचके रोग दवाता, अन्तराभक्त दवाता माता और समक्त सब रोगियोंके लिये पथ समझा जाता है।

श्रीपथजीव ( सं० त्रि० ) श्रीपथेन चालीवर्त, श्रीपथ-चा-जीव-अच्छ। श्रीपथविशेता, दवाफरोश, जो दवा बेचकर अपना काम चलाता हो।

श्रीपथालय ( सं० पु० ) श्रीपथानां आलयः, ६-तत्।

श्रीपथमाण्डार, दवाखाना। जिस स्थानमें नागविष श्रीपथ विक्रयके लिये मर्द्धा प्रसृत रखते, उसे श्रीपथालय कहते हैं।

श्रीपथ ( सं० स्त्री० ) आ-श्रीपथिः। १ सम्यक् श्रीपथि, अच्छी जड़ी-बूटी। २ गुहृची, गुर्घ। ३ राखा। ४ दूर्वा, दूब। ५ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब। ६ हरितीकी, हर। ७ मय, शराब। ८ श्रीपथ, देवा। ९ फलपाकान्त घृहादि, फल पकते ही मर जानिवाला पोटा।

श्रीपथिगन्ध ( सं० पु० ) आन्नापसे त्वरादिकर श्रीपथिका मन्त्र, जिस जड़ी-बूटीकी सुगन्धसे बुद्धार वगैरह बीमारी लगे।

श्रीपथिप्रतिनिधि ( सं० पु० ) न मिलनेवाली श्रीपथिके स्थानमें समगुण द्रव्यान्तरका प्रत्यय, हासिल न होनेवाली जड़ी-बूटी की जगह दूसरी चीजका लिया जाना। मिदाके अभावमें पाशगन्धा, महामेदाके अभावमें शारिवा, जीवकपर्पभकाके अभावमें गुहृची, चित्रकके अभावमें दन्ती या अपामार्गका चार, धन्व्यासाके अभावमें दुरालभा, तगरके अभावमें कुष्ठ, सुर्याके अभावमें जिह्मिनीत्वक्, अहिंसा-लक्षणके अभावमें मानकमयूग्मुष्क, वज्रुलके अभावमें कल्हा-रोतुपक्षपक्ष, नीलरोतुपक्षके अभावमें कुसुद, जातीपुष्पके अभावमें लवङ्ग, चर्कादिबीरके अभावमें उनके पत्रका रस और पुष्करमूल एवं लाङ्गलकी ग्रन्थिके अभावमें कुष्ठ डालते हैं। ( भावप्रकाश ) फिर चर्विका न मिलनेसे गजपिप्पली, सोमरानो न मिलनेसे चक्रमर्दफल, दार्वी न मिलनेसे हरिद्रा, रसाज्जन न मिलनेसे दार्वाकाय, सोराष्ट्रमृत् न मिलनेसे फटिकारी, तालीश न मिलनेसे स्वर्णताली, भार्गी न मिलनेसे तालीश वा कण्टकारी-मूल, रुचक न मिलनेसे पाण्डुलवण, यष्टीमधु न मिलनेसे धातकीपुष्प, अश्ववेतस न मिलनेसे चुक्र, द्राक्षा न मिलनेसे गांधारीपुष्प, गांधारीपुष्प न मिलनेसे पीतशालपुष्प, मख न मिलनेसे लवङ्ग, कसुरो न मिलनेसे काकोली, काकोली न मिलनेसे जातीपुष्प, कर्पूर न मिलनेसे ग्रन्थिपर्णी वा सुगन्धि-सुस्तक, कुङ्कुम न मिलनेसे कुष्ठम्ब, शोखण्डचन्दन न मिलनेसे कर्पूर, शोखण्डचन्दन एवं कर्पूर दोनों न मिलनेसे रक्तचन्दन, मधु न मिलनेसे जीर्णगुहृ, पुरातन गुहृ न मिलनेसे यामचतुष्टयशष्क गुहृ, चार न मिलनेसे मौह मासुररस, शर्करा न मिलनेसे खण्ड, शालि न मिलनेसे पटिक, दाडिम न मिलनेसे घृहास्त्र, सोराष्ट्रमृत् न मिलनेसे पक्षपण्टी, लौह न मिलनेसे लौहका मल, चण्डगजपिप्पली न मिलनेसे पिप्पली-मूल और सुष्ठुतिका न मिलनेसे तालमुस्त या मासुफल प्राप्य है। ( परिभाषाप्रदीप )

श्रीपथिवीय ( सं० स्त्री० ) श्रोतोष्णादिद्रव्य श्रीपथिका वीर्य, जड़ीबूटीकी ताकत। यह शीत, उष्ण, रुच, क्षिप्त, तीक्ष्ण, मृदु, पिच्छल, तीव्र और विषद होता

है। श्रीपथि बोयें बल एवं गुणके उत्कर्षसे रसको दबा अपना काम करता है। (सहव)

श्रीपथी, श्रीपथि देखो।

श्रीपथीपञ्चामृत (सं० क्ली०) अमृत जैसी पांच श्रीपथी, बहुत समृद्ध पांच जड़ी-बूटी। गुड़ूची, मोक्षुर, सुप्ली, सुखो और शतावरी पांचोंको श्रीपथीपञ्चामृत कहते हैं।

श्रीपथोपति (सं० पु०) श्रीपथीका राजा सोम।

श्रीपथीय (सं० त्रि०) शाकलता-सम्बन्धीय, नवातानी, जड़ीबूटीसे सरोकार रखनेवाला।

श्रीपथेनव—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। सुश्रुतने इनका वचन उद्धृत किया है।

श्रीपथ (सं० क्ली०) सपरे भवम्, उपर-पथ्। १ पंशु-लवण, शोरा। २ मृत्तिका-लवण, रेहका नमक। ३ सैन्धवलवण। यह चार, तिक्त, वातकफघ्न, विदाही, पित्तहृत्, याही और मूत्रशोधक होता है। (राजनिघण्टु)

श्रीपथक श्रीपथ देखो।

श्रीपथ (सं० त्रि०) उपसि भवः, उपस्-पथ्। १ उपा-कालोत्पन्न, जो सबेरे पैदा हो। २ उपासम्बन्धीय, सहरी, सिद्धीसी।

श्रीपथिक (सं० त्रि०) उपसि भवः, उपस्-पथ्। उपा सम्बन्धीय, सहरी, सिद्धीसी।

श्रीपथस्त (सं० त्रि०) उपस्तेरिदम्, उपस्ति-पथ्। १ उपस्ति ऋषि-सम्बन्धीय। (कौ०) २ काम्दोय उपनिषत्का उपस्ति-परित नामक ब्राह्मणकाण्ड।

श्रीपथ्य, श्रीपथ देखो।

श्रीपथि (सं० त्रि०) उपसि भवः, ठक्। १ उपा-कालोत्पन्न, सबेरे पैदा होनेवाला। २ उपाकालको भ्रमण करनेवाला, जो सबेरे बाहर निकलकर टहलता हो।

श्रीपथिज (सं० त्रि०) इच्छुक, आह्वयमन्त्र।

श्रीपथिज, श्रीपथि देखो।

श्रीपथ (सं० त्रि०) उष्ट्रस्य इदम्, उष्ट्र-पथ्। उष्ट्र-सम्बन्धीय, ऊँटसे सरोकार रखनेवाला। २ उष्ट्रयुक्त, ऊँटोंसे भरा हुआ। (कौ०) ३ उष्ट्रप्रजाति, ऊँटकी कुदरत या जात।

श्रीपथक (सं० क्ली०) उष्ट्राणां समूहः, उष्ट्र-उज्। श्रीपथीराजस्यनेति। वा ३५१२८। १ उष्ट्र-समूह, ऊँटका समूह। (त्रि०) उष्ट्रस्येदम्। २ उष्ट्रसम्बन्धीय, ऊँटसे सरोकार रखनेवाला।

श्रीपथीचौर (सं० क्ली०) उष्ट्रोदुग्ध, ऊँटनीका दूध। यह रुच, उष्ण, किञ्चित् खवणरस, स्वादु, लघु और शीघ्र, गुल्म, उदर, भयः, क्षमि, कुष्ठ एवं विषविनाशक है।

श्रीपथक (सं० क्ली०) उष्ट्रो-दुग्ध-जात घोर, ऊँटनीके दूधका मट्ठा। यह विरस, शुष्क, हृद्य, दोषघ्न और पीनस, खास तथा कासके लिये हितकारक होता है। (चैतन्यनिघण्टु)

श्रीपथनयनीत (सं० क्ली०) उष्ट्रीदुग्धजात नयनीत, ऊँटनीके दूधका मखन। यह लघुपाक, शीतल और मृण, क्षमि, कफ, रक्तदोष, वात एवं पित्तघ्न है। (राजनिघण्टु)

श्रीपथमूत्र (सं० क्ली०) उष्ट्रमूत्र, यतःका पियाव। यह उन्माद, शोक, भयः, क्षमि, मूत्र और उदर व्याधि हूर करनेवाला है। (चैतन्यनिघण्टु)

श्रीपथय (सं० त्रि०) उष्ट्रयस्येदम्, उष्ट्रय-पथ्। यमपूर्ववत्। वा ३५११९। उष्ट्रय सम्बन्धीय, ऊँटगाड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

श्रीपथिचि (सं० पु०) शुक्, उन्माद, मिथ्याने-पदानेवाला।

श्रीपथयथ (सं० पु०) उष्ट्रस्यापथ्यम्, उष्ट्र-पथ्। उष्ट्रवर्गीय।

श्रीपथिक (सं० त्रि०) उष्ट्रे भवः, उष्ट्र-ठक्। उष्ट्रजात, ऊँटसे पैदा।

श्रीपथ (सं० त्रि०) श्रीपथदाकारोऽस्त्यस्य, श्रीपथ-पथ्। श्रीपथके आकारसदृश, होठ-जैसा बना हुआ।

श्रीपथ (सं० त्रि०) श्रीपथे भवः, श्रीपथ-यत् श्रायें पथ्। १ श्रीपथजात, होठसे निकलनेवाला। (कौ०) २ श्रीपथके द्वारा उद्यायें वर्ष, होठसे निकलनेवाला द्रव्य। उ, क, ची, पी, प, फ, ब, म और म वर्ष श्रीपथ है।

श्रीपथ (सं० क्ली०) उष्णस्य भावः, उष्ण-पथ्। १ उष्णता, गरमी। २ उत्साह, धृप। ३ सन्ताप-दुष्कार।

श्रीपथिज (सं० क्ली०) उष्णिज स्वायें पथ्। १ पगड़ी,



साफ़। (त्रि०) २ पगड़ी या साफ़े से सरोकार रखनेवाला।

श्रीणिह (सं० त्रि०) उष्णिह भयः, उष्णिह-भयः। उष्णिह-भयः। १ उष्णिक् छन्दोजात। २ उष्णिक् छन्दः सभ्यभ्योय। ३ उष्णिक् छन्दोद्वारा स्तव किया जानेवाला।

श्रीणीक (सं० त्रि०) उष्णीये शोभते, उष्णीय-धन। १ उष्णीयधारी, पगड़ी बांधनेवाला। २ उष्णीयधारी नृपति, पगड़ी बांधनेवाला राजा। ३ उष्णीयधारी देव, जिस सुकृते पगड़ी बांधनेवाले लोग रहते।

श्रीण्य (सं० स्त्री०) उष्णस्य भावः, उष्ण-भयः। उष्ण-भयः। १ उष्णता, गर्मी। २ उष्णता, गर्मी। यह तेल और पित्तका स्वाभाविक गुण है।

श्रीष्य (सं० स्त्री०) उष्णो भावः, उष्ण-भयः। १ उष्णता, गर्मी। २ उष्णभयः, समूह-गर्मी। तेजोगुण-बहुल पदार्थ मात्रमें श्रीष्यकी उपलब्धि होती है। पार्थिव शरीरके स्पर्शसे जो श्रीष्य मालूम पड़ता, वह शरीरका नहीं ठहरता। क्योंकि मृतशरीरमें रूपादि समस्त गुण रहते भी श्रीष्यका होना असम्भव है। इसलिये शरीरिक श्रीष्यकी शास्त्रने जीवात्माका गुण निर्दिष्ट किया है।

श्रीषक (हिं० स्त्री०) रोग, बीमारी।

श्रीषत (च० पु०) १ मध्यमावस्था, सरासरी, पड़ता, सबसे बड़े और सबसे छोटेके बीचकी अदत। कई स्थानोंकी संख्याका श्रीषत लगानेमें पहले सबको जोड़ डालते हैं। फिर उस जोड़में जितने स्थान होते, उतनेसे भाग देते हैं। इस क्रियासे जो उपलब्धि पाती, वही श्रीषत कहाती है। (वि०) २ गम्य, जाने सायक, बीचवाला।

श्रीसन (हिं० स्त्री०) १ उष्णता, गरमी। २ सड़न। ३ व्याकुलता, घबराहट। ४ पकाव।

श्रीसना (हिं० स्त्री०) १ उष्णता, पाना, गर्मी बढ़ जाना। २ सड़ना। ३ व्याकुल होना, घबराना। ४ पकना।

श्रीसर (हिं०) सरर देखो।

श्रीसान (हिं० पु०) १ घेय, होय, बंधा खायन। २ अवसान, पखीर।

श्रीसाना (हिं० स्त्री०) पाक करना, पकाना, पान डालना।

श्रीसर (हिं० स्त्री०) १ विलम्ब, देर। २ बिम्बा, खोज। ३ दुःख, तकलीफ।

श्रीहत (हिं० स्त्री०) शकान-मृत्यु, दुर्दशा, बुरा हाल। श्रीहाती (हिं० स्त्री०) सधवा, सोभाग्यवती, जिस औरतके स्वाविन्द रहते।

श्रीहास (हिं०) सरहाय देखो।

पं

पं—१ तत्त्वके मतसे पञ्चकार सरवर्ष। इसका नाम पनुसार है। इस वर्षका पञ्चर समाप्ताय, सुखमें नहीं लगता। किन्तु धनपत्नका कार्य निर्वाह करनेसे पाणिनिके मतमें इसे प्रयोगवाह कहते हैं। सुषोषके मतसे इसका नाम 'पु' है। प्राकृति विन्दुमात्र रहती है। इसे पनुमा... वर्ष कहते हैं। 'न' और 'म'के स्थानसे इसकी उत्पत्ति होती है। कामधेनुतन्त्रके मतमें—पञ्कार विन्दुयुक्त, पीतवर्ण विकृतसुख, पञ्चप्राणात्मक, ब्रह्मादि देवसम, सर्वज्ञानसम और विन्दुवययुक्त है। 'पं' के लिखनको प्रणाली—पकारके ऊपर दक्षिण दिक्को एक विन्दु-मात्र है। रेखाके समूहमें ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र रहते हैं। विन्दुमयी रेखाका नाम प्राध्यायति है। (सर्वोदात्तक)

इसका तन्त्रोक्त नाम पञ्कार, चतुष, दत्त, घटिका, सममुद्रक, प्रद्युम्न, योमुख, मोति, वोज्योनि, ठपध्वज, पर, गंभी, प्रमाणीय, सोमविन्दु, कलानिधि, पञ्कर, चेतना, नादपूर्ण, दुःखहर, मित्र, महत्समय, शम्भु, नरेय, सुखदुःखप्रवर्तक, पूर्णिमा, रेवती, शुद्ध, कल्याणर, विद्यद्वि, अमृतकापिणी, शून्य, विशिष्टा, व्योमरूपिणी, केदार, रात्रिनाश, कुम्भिका और मुद्गमुद है।

(स्त्री०) २ परवर्ष। ३ महेश्वर।

"विन्दुविन्दुसमुच्चयः त्रयः सर्वोदयः पञ्चः" (भारत, पञ्च १०।१५)

अः

अः (ः)—१ विभक्ति, दो विन्दुमात्र। तन्त्रके मतसे यह जोड़य स्वरवर्ण है। अकारके सञ्चारणसे इसका सञ्चारणस्थान भी कण्ठ है। पाणिनिके मतमें यह वर्ण अयोगवाह है। सुन्धबोध इसका नाम 'विः' लिखता है। स और रके स्थानसे इसकी उत्पत्ति होती है। कामधेनुतन्त्रके मतसे—अकार परमेश, रत्नवर्ण, विद्युत्तुल्य, पञ्चदेवमय, पञ्चप्राणमय, सर्वज्ञानमय, आत्मादितत्त्वसंयुक्त, स्मृतिमान् कुण्डली, विन्दुत्रय-विशिष्ट एवं शक्तित्रययुक्त है। यह अक्षर शक्ति किमोरवयस्का शिवपत्नी समझ पड़ता है।

इसके लिखनकी प्रणाली—अकारकी दिक् ऊर्ध्व और अधः दो विन्दु लगाना है। इसकी सकल रेखाओंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर अवस्थान करते हैं। मात्रा शक्ति और विन्दुद्वय-युक्त रेखा आध्यात्मिक है।

(वर्णोच्चारण)

इसका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम—अः, कण्ठक, महासेन, कलापूर्णा, अश्रुता, हरि, इच्छा, भद्रा, गणेश, रति, विद्यामुखी, सुख, द्विविन्दु, रसना, भोम, भनिष्ठ, दुःखसूचक, दिगिह, कण्ठक, वज्र, सर्ग, शक्ति, निष्कार, सुन्दर, सुयशा, अनन्ता, गणनाथ और महेश्वर है।

(पु.) २ महेश्वर।

## क

क—व्यञ्जन वर्णोंका प्रथम अक्षर। इसकी वाम रेखा ब्रह्मा, दक्षिण रेखा विष्णु, अधो रेखा रुद्र, मात्रा सरस्वती अक्षुण्णकार रेखा कुण्डली और मध्यस्थ शून्य स्थान सदाशिव है। (वर्णोच्चारण) ककारका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम भोषी, ऐश, महाकाशी, कामदेव, प्रकाशक, कपाली, तेजस, शक्ति, वासुदेव, जय, अनन्त, चक्रो, प्रजापति, छटि, दक्षिणस्कन्ध, विसाम्प्रति, अनन्त, पार्थिव, विन्दु, तापिनी, परमात्मक, वर्गाद्य, सुखी, ब्रह्मा, सखाद्य, अन्धः, शिव, जल, माहेश्वरी, तुला, पुष्पा, मङ्गल, चरण, कर, गित्या, कामेश्वरी, सुख्य, कामरूप, गलेन्द्रक, श्रोत्र, रमण और रङ्गकुसुमा है।

कामधेनुतन्त्रमें इस प्रकार ककारतत्त्व कहा है—'ककारकी वामरेखा जवापुत्र्य एवं अलङ्कृत वर्ण, दक्षिण रेखा शरत्तन्त्र तुल्य, अधोरेखा भरकत-प्रभ, मात्रा शङ्खकुन्दसदृश एवं साक्षात् सरस्वती, अक्षुण्णकति कुण्डली कोटिविद्युत्तत्वाकी भांति अकार-विशिष्ट और मध्यदेशका शून्यस्थान सदाशिव कोटि-

चन्द्र समवर्ण है। शून्यके गर्भमें कैवल्यप्रदायिनी काशी अवस्थान करती है। ककारसे हो समस्त काम, कैवल्य, अर्थ और धर्म उत्पन्न होता है। ककार ही सर्व वर्णोंकी मूल प्रकृति, कामदा, कामरूपिणी, अव्यया, कामनीया प्रकृति सुन्दरी और सर्व देवगणकी माता है। ककारके ऊर्ध्व कोणमें कामा नाम्नी ब्रह्म-शक्ति, वाम कोणमें व्योम्हा नाम्नी विष्णुशक्ति और दक्षिण कोणमें विन्दुनाम्नी सञ्चाररूपिणी रौद्रशक्ति रहती है। ककारके देवोंमें ब्रह्मा इच्छाशक्तिमान्, विष्णु ज्ञान-शक्तिमान् और रुद्र क्रिया-शक्तिमान् हैं। आत्मविद्या, मङ्गल और मन्त्रका अवस्थान सर्वदा ककारमें देख पड़ता है। जवा, अलङ्कृत, एवं चिह्नरसम रत्नदर्पा, चतुर्भुजा, त्रिनेत्रा, कदम्बकोरकाकति-भूतद्वयविशिष्टा और रत्न, कङ्कण, केशूर, अङ्गद, रत्नहार तथा पुष्प-हारदिगोमिता कामिनीको ध्यानकर दम्पति ककार जपनेसे दृष्टसिद्धि होती है।

२ धातुका अनुवन्धविशेष। 'क' अनुवन्ध रहनेसे धातु श्रुति गण्यो समझा जाता है। अक्षरः।

( कविचन्द्रन ) चुरादिगणीय घातके उत्तर स्वार्यमें निष् पाता है।

१ प्राणिके व्याकरणका प्रत्ययविशेष। कक, कन्, कप् प्रत्यति प्रत्ययोंका 'क'ही अवशिष्ट रहता है।

( स्त्री० ) कायति शब्दं करोति, जीवो यस्मिन् मतीति शेषः, कै-ह। अन्वेष्यति इत्यने। पा शाखा११०।

४ मस्तक, मत्था। ५ छल, पानी। ६ सुख, धाराम।

७ केग, गाल। ( पु० ) कचंति दीप्यते स्नेन ल्योतिपा, कच्-छ। ८ मद्गा। ९ विष्णु। १० प्रजापति। ११ दक्ष। १२ कन्दर्प। १३ पानि। १४ वायु।

१५ यम। १६ सूर्य। १७ आत्मा, रुद्र। १८ राजा, बादशाह। १९ प्रत्य, किताम। २० मयूर, मोर।

२१ मन, दिल। २२ शरीर, जिम्मा। २३ काल, वक्त।

२४ घन, दौलत। २५ शब्द, आवाज। २६ प्रकाश, रौशनी। २७ पक्षी, चिड़िया। २८ रुद्र। २९ पर-

मोक। ३० किरण। ( त्रि० ) ३१ कील, क्या।

ककृत ( हिं० स्त्री० ) पाख, किनारा, तरफ़।

कक्या, बरत देखी।

ककई ( हिं० वि० ) अनेक, कितने ही।

ककपा, बोध देखी।

ककड, खोर देखी।

ककण ( हिं० वि० ) कई एक, कुछ, थोड़े। यह

शब्द बहुवचनमें ही पाता है।

कक ( हिं० ) बन् देखी।

ककधा ( हिं० पु० ) १ दूरस्थ विद्युत्का प्रकाश, दूरकी

विजलीका-उजाला। ककधा होना वर्षाका पूर्व-

लक्षण है।

ककई—नदी विशेष, एक दरया। यह नेपालकी पूर्वांशमें

अवस्थित है। शक्तिम और नेपालमें इसीकी दोनों

राष्ट्रोंकी बीचकी सीमा माना है।

ककड़ ( हिं० पु० ) ककई, चर्खखण्ड, सहरौला,

बजरी। यह माटे चूनेका पत्थर है। भारतमें कई

स्थानपर भूमि छोड़नेसे ककड़ निकलता है। युक्त-

प्रदेश ही इसकी उत्पत्तिका प्रधान स्थान है। यह

श्याम, खेत, चादि कई रंगका होता है। कोई

कोटा-कोटा रहता है। इससे चूना बनाते हैं। सड़क

पर भी कंकड़ खूब कूटा जाता है। कितने ही लोग

इसका साजन बनाते हैं।—पहले अच्छे घोर मंझोले

कंकड़ धो डालते हैं। फिर उन्हें धैर्यसे लपेट घी

या तेलमें तलते हैं। अच्छी तरह एक जानीसे उन्हें

गम मसाला छोड़ भीमी पाचमें कुछ देर रख छोड़ते

हैं। यह साजन-खानेमें बहुत सौधा लगता है।

२ सुदृढपत्थरखण्ड, रोड़ा। ३ कठोरांग विशेष, एक

कड़ा छिस्सा। ४ पौनेकी एक तंबाकू। यह वे तंबके

चटती है। ५ रुद्र, लघाहिरात। यह सुदृढ निर्माण-

रहित घोर चखनीव रहता है। अठ्ठारह कंकड़से

होनेवाला लड़कोंका एक खेल 'अठ्ठारा कंकड़ा'

कहता है।

कंकड़ी ( हिं० स्त्री० ) १ सुदृढकंकरी, छोटा कंकड़।

२ सुद्रांग विशेष, छोटा टुकड़ा।

कंकड़ीला ( हिं० वि० ) कंकरीयुक्त, जिसमें कंकड़ रहें।

कंकन ( हिं० ) ककब देखी।

कंकरी, ककब देखी।

कंकरीट ( हिं० पु० = Concrete ) गृहनिर्माण-द्रव्य-

विशेष, घर बनानेका एक मसाला। इसमें टूटा पत्थर,

बालू और चूना रहता है। पानीमें छत्ता द्रव्य रासा-

यनिक प्रक्रिया द्वारा मिसानेसे यह तैयार होता है।

कंकरीट एक प्रकारका बनावटी पत्थर है। इसमें

कोई भी मिला देते हैं। इसकी धुंवांकश, लहरे और

होव बनते हैं। दीवारों पार गघोंमें यह बहुत लगता

है। लोग इसे कंकड़-पत्थर, ईंट और लकड़ीसे

बच्छा समझते हैं।

कंकरीला, कंकरीलादेखी।

कंकरीत ( हिं० वि० ) १ कंकरीला, जिसमें कंकड़

रहें। ( पु० ) २ कंकरीट, नकली या बनावटी

कंकड़-पत्थर।

कंकस ( हिं० ) ककब देखी।

कंकाली ( हिं० पु० ) जाति विशेष, एक कोम।

कंकाली लोग एक प्रकारके नट हैं। यह किंगरी

बलाकर मोक्ष मांगते हैं।

कंकरी ( हिं० पु० ) ताम्बूल-विशेष, किसी किंसका

पान। यह कटु लगता है।

कंखवारा (हिं० स्त्री०) कंखका कड़ा फोड़ा। यह बड़ी तकलीफ देती है।

कंखौरी (हिं० स्त्री०) १ कंख। २ कंखवारी।

कंग (हिं० पु०) कण्ठ, वस्त्र।

कंगण (हिं० पु०) १ लोहचक्रविशेष, सोहका एक चक्र। इसे अकाली सिख अपने गिरपर रखते हैं। २ कङ्कण। कहण देखो।

कंगान (हिं०) कहण देखो।

कंगना (हिं० स्त्री०) १ हृणविशेष, किसी किस्मकी घास। यह पर्वतके समतलपर अधिक उत्पन्न होती है। इसमें कंगनाको बड़ी प्रीतिसे आहार करते हैं। (हिं० पु०) २ कङ्कण। ३ गीतविशेष, एक गाना। इसे विवाहादि उत्सवपर कहण बांधने या खोलनेमें स्त्रियां गाती हैं।

कंगनी (हिं० स्त्री०) १ सुदृढ़ कङ्कण, छोटा कंगना। २ कंगर। यह हस्तके नीचे दीवारमें रहती है। ३ कपड़ेका छत्ता। यह नेचमें मुँहनासके पास लगायी जाती है। ४ दानेदार घेरा। यह बाघ सीमापर दन्तयुक्त वा तोष्याप शिखरविशिष्ट होती है। ५ कङ्क, एक पनाज। भारत, ब्रह्म, चीन, मध्य एशिया और युरोप इसकी उत्पत्तिका स्थान है। इसकी एवं शब्द भूमिमें कंगनी बहुत पनपती है। यह दो प्रकारकी होती है—रक्त एवं पीत। चोना कंगनीको चैत्र-वैशाखमें बोते और ज्येष्ठ मासमें काट लेते हैं। किन्तु साधारणतः पाषाण-आवण वानि और भाद्र-भाद्रपद काटनेका समय है। सीवनेकी बार-बार आवश्यकता पड़ती है। कंगनी सांघावे सुदृढ़ और बहुत रहती है। मज्जरी सुदृढ़, पीतवर्ण एवं सघन रामयुक्त होती है। यह पक्षियोंको बहुत दी जाती है। जपका इसका भात खाते हैं। कंगनीका पुराना चावल रागीके लिये पण्य है।

कंगनी-दुमा (हिं० वि०) १ धनियुक्त पुच्छ-विशिष्ट, गांठदार पुच्छ रखनेवाला। (पु०) २ हस्तिविशेष, किसी किस्मका हाथी। इसकी पूँछमें गांठ रहती है। लोग कंगनी-दुमको पशु समझते हैं।

कंगल, कंग देखो।

कंगला, कंगल देखो।

कंगलापन (हिं० पु०) टैन्यभाव, गरीबी, जिस हासतमें कौड़ी कौड़ीका मुहताज रहें।

कंगली (हिं० स्त्री०) फांस, गंठाव, फंदा। इसमें हस्त द्वारा पंजा फांस मालशुंभपर उड़नेको 'कंगली की उड़ान' कहते हैं।

कंगडो, कंगी देखो।

कंगारू (अंग० पु० = Kangaroo) पशु विश्व, एक जानवर। यह पशु कोई चूहे जैसा छोटा और कोई भेड़ जैसा बड़ा होता है। शरीरकी अपेक्षा थिर सुदृढ़ पड़ता है। देहका पर्याप्त भाग हृष्ट रहनेसे चारो पेरसे चलते समय कंगारू अच्छा नहीं लगता। यह कूदते चला करता है। पुच्छ दीर्घ एवं हट रहता है। दर्शन, अवयव एवं प्राणशक्ति तीव्र होती है। घगले पंजोंमें पांच उँगलियां निकलती हैं। मध्य कुटिल एवं हट लगते हैं। पिछला पैर बलि दीर्घ, सङ्कोर्ण एवं शङ्खुङ्कीर्ण होता है। दन्त चौंतीस रहते हैं। पाकस्थली विस्तृत होती है। कंगारू घास-पात खाता है। किन्तु सुदृढ़ जातिवाले मूल भी व्यवहारमें आ जाते हैं। यह भौद एवं आत्मरक्षण न करनेवाला होता है। अधिक सतार्ये जानीपर कंगारू पपनी रचा जरंगा। कभी-कभी यह घगले पंजे पकड़ कुत्तेको मार डालता है। कंगारू चड़े-लिया चार तसमानियामें रहता है। यह पशुकी रक्षित हण पर जाता है। लोग इसकी मांस खाने और हण बचानेके लिये मारा करते हैं। न्यूगो-निया और निकटस्थ द्वीपोंमें भी कुछ कंगारू होते हैं।

कंगाल (हिं० वि०) दरिद्र, निर्धन, गरीब, मुहताज।

कंगाल-बांका (हिं० पु०) कंगालगुंडा, जिस बदन-मांसके पास पैसा न रहे।

कंगाली (हिं० स्त्री०) दरिद्रता, गरीबी, मुहताजी। कंगुरिया (हिं० स्त्री०) कनिष्ठिका, सघने छोटी उँगली।

कंगूरा (हिं० पु०) १ दुग्धको भित्तिमें छपर बना हुआ छोटा दार, मुँह। २ प्रासादाप, मङ्गलकी

चोटी। ३ शिखा, चोटी। ४ मुकुटमणि, ताजका जवाहर।

कंगूरेदार (हिं० वि०) शिखायुक्त, चोटोदार।

कंघा (हिं० पु०) १ कटुत, याग, ककवा। इसमें एक ही ओर दांत रहते हैं। २ यन्त्रविशेष, बोला, एक भोजार। इससे जुलाहे करघेमें भरनीके तांगे कसते हैं।

कंघी (हिं० स्त्री०) १ कटुतिका, छोटा शाना, ककई। इसमें दोनो ओर दांत होते हैं। २ यन्त्र-विशेष, एक भोजार। यह बांसकी खपाघोंसे तैयार होती है। दो पतली ओर गज-डेढ़-गज लंबी खपाघें चारसे आठ बड़ोले अन्तरपर आसने-सामने रखते हैं। फिर उनके ऊपर बहुत छोटी, पतली ओर चिकनी खपाघें मिला मिलाकरे बांधते हैं। बीचमें केवल एक तांगेके निकलनेकी जगह रहती है। पहले तानिका एक तार इनके बीचसे निकालते हैं। बाना बुननेमें यह राखके पहले रखा जाता है। तानिमें बाना पड़ जानेसे कंघीको जुलाहे अपनी ओर खींच लेते हैं। इससे बाना सीधा तथा बराबर हो ओर गंज जाता है।

३ हथविशेष, अतिबला, एक पौदा। यह पांच-छह हाथ बढ़ता है। पत्र पान-जैसे और मुकीले होते हैं। किनारे पर दागा रहता है। वर्षा किश्ति हरित एवं धूसर होता है। पुष्प पीतवर्ण लगते हैं। पुष्प पतित होनेपर मुकुटाकार ढंढ निकलते हैं। उनपर कंगनी चढ़ी होती है। पत्र तथा फल दोनों छद्म, घन एवं नटु रोमसे आच्छादित रहते हैं। फल जब पक जाता, तब एक एक कंगनीमें कितना ही कासा दाना निकल आता है। वस्त्रका सूत्र दृढ़ होता है। सूत्र, पत्र और बीज औषधमें पड़ता है। यह बसवर्षक और शीतल है।

कंघो-चोटी (हिं० स्त्री०) किशमण्डन, बालोंका संवार।

कंघेरा (हिं० पु०) कटुतनिर्माता, कंघा तयार करनेवाला।

कंघनिया (हिं० पु०) छोटा कचनार। इसके पत्र एवं पुष्प छद्म होते हैं।

कंघनी (हिं० स्त्री०) वेष्टा, रंडी।

“गंधे कंघनी तबला डगधे खडरा सके सरतिन गार।” (बाला)

कंघुरि (हिं०)

कंघुवा (हिं० पु०) कुरता, चोसना।

कंघेरा (हिं० पु०) काचपरिष्कारक, कंघका काम करनेवाला। यह एक जाति है। कंघेरे साधारणतः सुसज्जमान होते हैं। फिर कहीं-कहीं हिन्दू कंघेरे भी देख पड़ते हैं।

कंघेली (हिं० स्त्री०) हथविशेष, एक पौदा। यह पंजाबकी ओर उत्पन्न होता है। उष्णता मध्य श्रेणीको रहती है। काष्ठ श्वेतवर्ण और सुदृढ़ निरुलता है। इसे स्ट्रुनिर्मणमें लगाते और लपियन्त्रके व्यवहारमें भी लाते हैं। पत्र कंघेलीके पत्र जैव खाते हैं। वर्षा ऋतुमें इसका बीज पड़ता है।

कंघा (हिं० पु०) कोमल गान्धा, हलकी डाल, खस्रा।

कंघई (हिं० वि०) १ धूस्रवर्ण, धूरे-जैसा, धाकी। (पु०) २ वर्षाविशेष, खाकी-रंग। ३ प्रखविशेष, किसी ज़िम्माका घोड़ा। इसके चत्तुर्धूस्रवर्ण रहते हैं।

कंघड़ (हिं० पु०) १ जातिविशेष, एक कीम। इस जातिके लोग तुर्कस्तानमें बहुत देख पड़ते हैं। कंजर सन, कई ओर चमड़ेकी रस्सी बनावते, जिससे अपना काम चलाते हैं। यह लोग सिरकी भी तैयार करते हैं। साथ पकड़ पकड़ के खाना इनका काम है। कंघड़ोंके साथ कुसे प्रायः रहते हैं। यह गांवोंमें भोंख भी मांगा करते हैं। २ मेला और छरपाक बादमी। ३ भड़वा। कंघड़को श्लोकी कंघड़ी या कंजरिम कहते हैं।

कंघा (हिं० वि०) १ धूस्रवर्ण, कंघई, धाकी। (पु०) २ कंघो भांख रखनेवाला। ३ हथविशेष, एक पौदा।

कंघास (हिं० पु०) मल, कूड़ा।

कंजियाणा (हिं० स्त्री०) मन्द पड़ने लगना, मुकठाना, अंवा जाना।

कंजुवा (हिं० पु०) गन्धरोगविशेष, पनाजकी बालमें होनेवाली एक बीमारी। इससे दाना सूख जाता है।

कंजूस ( हिं० वि० ) कपच, बचोल, कम खर्च करनेवाला ।  
 कंजूसी ( हिं० स्त्री० ) कपचता, बचीसी, कम खर्च करनेकी दायता ।  
 कंठवास ( हिं० पु० ) वंशविशेष, किसी किसानका वास । यह कण्टकाच्छन्न रहता है । भीतर दोस होनिसे लोग इसका लठ बहुत प्रसन्द करते हैं ।  
 कंठर ( हिं० पु० ) काचपात्र, करावा, सीना । यह शब्द घंगरीकी डिक्काण्टर (Decanter) का अपभ्रंश है ।  
 कंठा ( हिं० पु० ) काष्ठविशेष, एक लकड़ी । यह पौन द्वाय लंबा रहता है । इसमें एक छोर चपरेका टुकड़ा लगा देते हैं । कंठसे चूड़ी बनानेवाले चूड़ियाँ रंगा करते हैं ।  
 कंठारन ( हिं० स्त्री० ) १ कुङ्कुम, छारन । २ दुष्टा स्त्री, बदमाश औरत ।  
 कंठाप ( हिं० पु० ) भारयुक्त वपमाग, भारी सिरा ।  
 कंठाल ( हिं० ) कच्चा देको ।  
 कंठिया ( हिं० स्त्री० ) १ चूद कोलक, छोटी कोल । २ छोड़की पतली और टेढ़ी भंगुरी । इससे मछली मारते हैं । ३ छोड़की टेढ़ी और पतली भंगुरियोंका एक गुच्छा । इससे जूयेंमें गिरी चीजको फासकर निकालते हैं । ४ अलङ्कारविशेष, एक गहना । यह गिरपर धारण की जाती है ।  
 कंठोला ( हिं० वि० ) कण्टकयुक्त, कांटेदार, जिसमें कांटे रहें ।  
 कंठनमेंट ( अंग० पु० = Cantonment ) सेनावास, छावनी, जौनके रहनेकी जगह । सेनावासकी शासकको कंठनमेंट मजिस्ट्र (Cantonment-magistrate) कहते हैं ।  
 कंठेला ( हिं० पु० ) कदलीविशेष, किसी किसानका केश । इसकी फल बहुत और बड़ा रहते हैं । कंठेला भारतमें प्रायः सब जगह होता है । इसे कच-केला या कठकेला भी कहते हैं । कदली देको ।  
 कंठोप ( हिं० पु० ) किसी किसानकी टोपी । इससे गिर और कर्ण प्राच्छादित रहते हैं । कंठोप आहेंमें पहना जाता है ।

कंठेक ( अंग० पु० = Contract ) नियम, पण, ठेका ।  
 कंठेकर ( अंग० पु० = Contractor ) पणकर्ता, ठेकेदार ।  
 कंठदाव ( हिं० पु० ) गलेकी दावसे किया जानेवाला कुश्तीका एक पेश । इसमें पहलवान दूसरेके गलेपर थपकी देता और उसी थोरका पैर धपने दूसरे दायसे छठा लेता है । फिर भीतरी घडानी टांग लगा वह उसे चित मारता है ।  
 कंठला ( हिं० पु० ) बाभूषणविशेष, एक गहना । यह बच्चोंको पहनाया जाता है । इसमें नजर-पट्ट, दावके नख और ताशीन सूतमें गुंथे रहते हैं ।  
 कंठहरिया ( हिं० स्त्री० ) कण्ठी, छोटा कण्ठहार ।  
 कंठा ( हिं० पु० ) १ कण्ठगत चिह्नविशेष, गलेका एक निशान । यह शूकादि पक्षियोंके कण्ठकी चारो ओर पड़ जाता है । २ कण्ठभूषणविशेष, गलेका एक गहना । इसमें सोनी, मोती या रुद्राक्षके बड़े बड़े दाने रहते हैं । ३ पुष्पमाला, फूलोंका छार । ४ कुरते या भंगरखेके गलेपर लगनेवाला जूरी या साड़ी बेलका घुमावदार काम । ५ पत्थर या ईंटका एक हिस्सा । यह छपान और कारनिसे कीव पड़ता है ।  
 कंठी ( हिं० स्त्री० ) १ छोटे छोटे दानोंका कण्ठा । २ तुलसी आदिकी माला । इसकी गुरिया छोटी-छोटी होती हैं ।  
 कंठरा ( हिं० पु० ) कन्दल, मूली और सरसों बगैरहका मोटा कंठल । इसमें पुष्प लगता है । यह साग और चचारमें व्यवहृत होता है । कितने हो लोग कंठरा कच्चा हो खा जाते हैं ।  
 कंठा ( हिं० पु० ) १ गोबरका पाया हुआ लंबा टुकड़ा । यह पाग लगानेमें काम आता है । छोटे और मोठे कंठेको सपरो कहते हैं । जो गोबर जंगलमें पड़े-पड़े सूख जाता, वह 'मिथुवा कंठा' कहाता है । कंठेकी पाग बहुत अच्छी होती है । पहले इसवाई भट्टीमें कंठा को सुनगाते थे । कण्ठेकी पांवसे बना हुआ खाद्य पत्थर सुखाद होता है । २ शूकमल, मोटा । ३ काष्ठ, सरकंठा । यह चिक, कलम और मोटा बनानेमें लगता है ।

कंठारी ( हिं० पु० ) १ कण्ठधारी, मांझी, नाय  
चलानेवाला ।

कंठाल ( हिं० पु० ) १ नरसिंहा, तुरही, करमाय ।  
यह बाबा पीतलकी नलीसे बनाया और मुँहसे  
फूँककर बजाया जाता है । २ यन्त्रविशेष, एक  
झोझार । यह कैंची सेबा बनता है । इसमें दो  
मरकंडे बराबर बराबर एक साथ बांधे जाते हैं ।  
इसके बाद सरकांडेकी तिरछा लगा चामने-  
सामनेके छिछोंको पतली छोरीसे तागतें हैं । ऊपरी  
सिरोंपर तागा बांधते और नीचेके सिरोंको भूमिमें  
गाड़ते हैं । इसीप्रकार कई कंठाल दूर-दूर रखते हैं ।  
जुलाहे इसपर ताना लगा पाई चलाने हैं ।

कंठी ( हिं० स्त्री० ) १ छोटा कंठा, लंबी छपरी ।  
२ शुष्कमल, गोटा । ३ कंठी, छोटा छार । ४ एक  
टांकीरी । यह लंबी और गहरी होती है । पहाड़ी  
जोग इसे प्रायः व्यवहार करते हैं ।

कंठील ( हिं० स्त्री० ) कन्डील, लालटेन । यह  
मही, कागज या अबरककी बनती है । कंठीलका  
मुँह ऊपर खुला रहता है । देवताओंकी प्रकाश  
पहुँचाने लिये इसमें दीपक जलाकर रखते हैं । फिर  
कंठील एक गड़े बाँधपर रखीके सहारे चढ़ा दी  
जाती है । कारीगर इसमें कागजकी घूमती लसपौरे  
लगा देते हैं । इससे कंठीलकी शोभा दूनी देख  
पड़ती है ।

कंठीलिया ( हिं० स्त्री० ) प्रकाशगृह, रोशनी करनेका  
जंघा धरहरा । समुद्रमें जहाँ शिलाघण्ट निछत  
रहते, वहाँ इसे प्रतिष्ठित करते हैं । इसका प्रकाश  
पाकर जहाज, उक्त शिलाघण्टोंको बचा देते और  
अपना निष्कण्टक मार्ग पकड़ लेते हैं । कंठीलिया  
पर रहनेसे जहाजोंके शिलाघण्टोंपर टकरा और-चूर  
हो जानेका भय रहता है ।

कंठुवा, कंठुवा देखो ।

कंठरा ( हिं० पु० ) ऊर्ध्वमाजक, धनिया, बेचना ।  
पहले इस जातिके लोग धनुर्वीण निर्माण करते थे ।

कंठोरा ( हिं० पु० ) १ कंठुवा, बालयाही घनाजकी  
एक बीमारी । २ कंठा पायनेकी जगह । ३ कंठाँको

टेर । ४ गवा-गुजरा, बादमी, जो गधूस किसी  
कामका न हो ।

कंठोरा ( हिं० पु० ) १ गोहरौर, कंठा पायनेकी  
जगह । २ गोठीला, कंठा रखनेका घर । ३ बडिया,  
कंठाँका टेर । इसके ऊपर गोबर लसट देते हैं ।

कंठ ( हिं० पु० ) १ पति, गोहर । २ प्रभु, मासका ।  
यह शब्द संस्कृत 'कान्त'का अपभ्रंश है ।

कंति ( हिं० पु० ) एक प्राचीन राजधानी । इसका  
ध्वंसावशेष मिर्जापुरमें पश्चिमकी ओर गङ्गा किनारे  
पड़ा है । वहाँ इसी नामका एक ग्राम भी विद्यमान  
है । कंतिमें मियावाहदेवकी राजधानी रही ।

कंथ, कंठ देखो ।

कंठला ( सं० पु० ) १ सोने या चांदीका तार ।  
२ सोने या चांदीकी सलाख । ३ कण्ठल, किसी  
किम्बका लघुगार । सोने-चांदीके तारका कारखाना  
कंठला-कचहरी और तार खींचनेवाला 'कंठलेकश'  
कहता है ।

कंठा ( हिं० पु० ) १ गुदेदार और बेरिया जड़ ।  
२ बोल, जमीकन्द । ३ शकारकंठा । ४ मुद्रया,  
अरुई ।

कंठीत ( हिं० पु० ) देवगणविशेष । यह जैन शास्त्रानु-  
सार वाणव्यस्तरके प्रसंगमें हैं ।

कंठील ( सं० स्त्री० ) १ कंठील, बाँधके ऊपर लशाकर  
पड़ाई जानेवाली लालटेन । २ जहाजमें डगने-मूमने  
और गहाने-धोनेकी जगह ।

कंठुवा, कंठुवा देखो ।

कंठूरी ( फ़ा० पु० ) एक प्लाना । इसमें सुसंलमानोंमें  
बीबी फ़ातमा या किसी दूसरे पीरका फ़ातिहा  
होता है ।

कंठेव ( हिं० पु० ) वृक्षविशेष, एक पेड़ । यह  
पुष्पाग-जातीय वृक्ष है । उत्तर एवं पूर्व वृक्षमें कंठेव  
उपजता है । काष्ठ सुदृढ़ रहता और गौकाके स्तम्भमें  
लगता है ।

कंठेला ( हिं० वि० ) अपरिष्कार, गंदा, मेला ।

कंठोरा ( हिं० पु० ) कठिवन्धनविशेष, एक करधनी ।

कंध ( हिं० पु० ) १ गायका, हार । २ स्तम्भ, कंधा ।

कंधनौ ( हिं० स्त्री० ) किछ्णी, कमरका एक गहना। कंधनौ बशोंको अधिक पहनायो जाती है। इसमें घुघरू लगे रहते हैं।

कंधा ( हिं० पु० ) स्तम्भ, शाना, मोटा।

कंधार ( हिं० पु० ) १ अफगानस्थानका एक प्रदेश।

२ अफगानस्थानका एक नगर। कन्धार देखो। ३ कर्णधार, मलाह।

कंधारी ( हिं० वि० ) १ गांधार देशसम्बन्धीय, कंधारसे तात्पर्य रखनेवाला। २ गांधार देशका अधिवासी, कंधारका रहनेवाला। (पु०) ३ कन्धारका घोड़ा। ४ कर्णधारी, मांभी।

कंधावर ( हिं० स्त्री० ) १ तुषभके स्तम्भपर पड़नेवाला जूयका भाग। २ चद्दर, कंधेका दुपट्टा। यह विवाहमें पहनी जाती है। वरको मसौ भालि वस्त्र पहना करसे एक दुपट्टा डाल देते हैं। इसका एक किनारा बायें कंधेपर रहता और दूसरा किनारा भी पीछेसे घूम और दाहिनी बगलके नीचे जाकर बायें ही कंधेपर पड़ता है। यही दुपट्टा कंधावर कहलाता है। ३ ताशिकी रस्सी। इसीको गलेमें डान ताशा छातीपर लटकाया और बजाया जाता है।

कंधियाना ( हिं० क्रि० ) कंधा देना, कंधेपर रखना।

कंधेना ( हिं० पु० ) स्त्रियोंके कंधेपर रहनेवाला साड़ीका हिस्सा।

कंधेली ( हिं० स्त्री० ) पर्याण विशेष, किसी किसका पालन या खोजीर। गाड़ोंमें जोतनेके समय यह घोड़ेके गलेमें डाली जाती है। कंधेली बगलकार मेखना-जैसी होती है। नीचे एक मुलायम और गुलगुली गद्दी रहती है। इससे बाड़ेका कंधा नहीं लगता।

कंधैया, कंधेवा देखो।

कंधेपी ( हिं० स्त्री० ) कम्म, थरथराहट, डोलाव।

कंधना ( हिं० क्रि० ) कम्पित होना, थरथराना, हिलाना-डोलना।

कंपनी ( इंग्लिश ) १ व्यापारियोंका दल, सौदागरीका गिरोह। २ इष्ट इच्छिया कंपनी, १६० ई०को इङ्ग्लैण्डमें बना हुआ व्यापारियोंका एक

उद्द। रागी एलिजबेथने इसे भारतवर्षमें जा व्यापार करनेको आज्ञा दी थी। कंपनीने प्रथम भारतवर्षमें विशाल भवन बनाये। फिर इसने कितनी ही भूमि क्रय की। अन्तको कंपनीने कई प्रान्तोंपर अधिकार किया था। भारतमें इसीने अंगरेजी राज्यकी जड़ जमायी है। प्रामिसरी नोटको 'कंपनी कागज' कहते हैं। ३ सैन्यविशेष, एक फौज। इसमें कपतानके नीचे ६० से १०० तक सिपाही रहते हैं।

कंधा ( हिं० पु० ) लाघेदार बांसकी पतली छपाच या नौमका चीका। इससे पची पकड़ते हैं। किसी पेड़पर पक्षियोंके खानेकी कोई चीज रख चारों ओर कंधे लगाते हैं। जैसे ही पची खानेकी पाता, वैसे ही उसके परमें यह चिपट जाता है। फिर पची नीचे गिर पड़ता और उड़ नहीं सकता। २ बांसकी एक लंबी छड़। इसकी भी सिरेपर सासा लगा रहता है। बहलिये पक्षीको बैठा देख धोकेसे परमें इसे कुवा देते हैं। फिर पची या तो छड़में ही चिपटा रहता था परमें सासा लग जानेसे नीचे गिर पड़ता है।

कंधाई, कंधेकी देखो।

कंधाना ( हिं० क्रि० ) १ हिलाना, डोलना, उधर उधर चलाना। २ भयभीत करना, डर देवाना।

कंधाम ( इंग्लिश ) = Compass १ दिङ् निर्णय-यन्त्र, कुतुबनुमा। एक छोटी छब्योमें चुंबककी सूई लगी रहती है। समतलपर रखनेसे सूईका सुई उत्तरको पड़ता है। इससे लेग उत्तर दिक् पहचान लेते हैं। फिर दूसरी दिशाओंका पता लगनेमें कोई कठिनता नहीं आती। कंधामसे समुद्रकी नाविकों और खलके भाषकों तथा देशालेखियोंको बड़ा लाभ पहुंचता है। २ परकार। ३ राइटिंग। इससे पैमायश करनेमें देखा लगाने समय समकोष ठहराया जाता है।

कंधिल ( हिं० पु० ) मगरविशेष, एक गहर।

द्रोपदीका स्वयम्बर इसी नगरमें हुआ था।

कंधिल और कंधिल देखो।

कंधू ( हिं० पु० ) १ सेनावास, छावनो। २ मिलिर, डेरा। 'कंधू बनारस उदय कपतान खरे।' (पद्मावर) २ युद्ध-



चीजके नाममें पहिले 'क' पक्षर रहै। रत्नपिप्पले फटुक, कालयाक, कुषाण्ड, कर्काटी, कर्कसु, कर्काटक, कलिङ्ग, करमद, करोर, कतक, कशेरु और काष्ठिक वर्य है। (भाष्यभाष्य)

ककुद्भिन्नो (सं० स्त्री०) ज्योतिष्मतीक्ष्णता, रतमजोत। ककुद्भल (सं० पु०) कं जलं कूजयति याचते, क-कूज-प्रत्यय-ध्रुवोदरादित्वात् मन्, कृत्वश्च। चातक-पक्षी, पक्षीह।

ककुद्भला (सं० स्त्री०) बड्भल दीक्षी।

ककुद्भक (सं० पु०-स्त्री०) बालरोग विशेष, बच्चोंकी एक बीमारी।

ककुत् (सं० स्त्री०) कं सुखं कारयति प्रापयति, गृहस्थान्निति शेषः, क-कृ-षिष्-क्षिप् तुगागमः कृत्वश्च ध्रुवोदरादित्वात्। १ हृषिके गृहदेशका अवयव विशेष, बैलके कंधेका कुब्जह। २ भ्रज, निमान्। ३ कृत्-नामरादि राजचिह्न, बादशाही ठाटबाट। ४ पर्यंत-गृह, पहाड़को चोटो। ५ दर्वीकर सर्पभेद, किसी किष्कका सांप।

ककुत्सल (बे० स्त्री०) ककुद् नामके स्थल अवयव-विशेषः ध्रुवोदरादित्वात् साधुः। १ ककुद् नामक वृषावयव, बैलका कुब्जह।

ककुत्स्य (सं० पु०) ककुदि तिष्ठतीति, ककुद-स्थ-क। सूर्यवंशीय पुरन्ध्रय नामक एक राजा। इनके पिताका नाम शशाद रक्षा। पुरन्ध्रयके राज्यशासनकाल स्वर्गमें देवीने देवीसे द्वार विष्णुका आश्रय पकड़ा था। विष्णुने उन्हें पुरन्ध्रयसे साहाय्य लेनेकी सिखाया। उनकी प्रशुसार देवतावीने इनसे प्रार्थना की थी। यह भी सम्प्रत दुष्टे और हृषिकपी इन्द्रके ककुद् स्थलपर चढ़ युद्धकी चले। इन्होंने उन युद्धमें समय देत्याका इराया था। इसीसे देव-तावीने प्रीत हो इनका नाम ककुत्स्य रख दिया।

(भाष्यभाष्य)

ककुद्, बड्भल दीक्षी।

ककुद (सं० पु०-स्त्री०) कं सुखं कीति घृणयतीति, क-कृ-क्षिप्-पुक्। १ हृषिका अवयवविशेष, बैलका कुब्जह। २ प्रधान, मुखिया। ३ राजचिह्न, शाही

ठाट-बाट। ४ पर्वताग्रभाग, पहाड़ को चोटो। ५ दर्वीकर सर्पभेद, किसी किष्कका सांप।

ककुदकाव्यायन (सं० पु०) ब्राह्मणविशेष, किसी ब्राह्मणका नाम। यह शास्त्रमुक्तिके चार प्रतिद्वन्द्वी थे।

ककुदाच (सं० वि०) ककुदं राजचिह्नं भव्योतिः। राजचिह्नधारक, शाही निमान् रखनेवाला।

ककुदावर्त (सं० पु०) ककुदि पावर्तः, कर्मधा०। हृषिके ककुद-स्थलका रोमावर्तविशेष, बैलके कुब्जहका भौरो।

ककुद्भत् (सं० पु०) ककुदस्थस्य, ककुद-भत्पु०। १ हृष, बैल। २ पर्वत, पहाड़। ३ वृषभक नामक वैद्योक्त द्रव्यविशेष, एक लड़ो-वूटो। ४ कर्मों, कहर। (वि०) ५ हृत्पुक्, कांचा, चढ़ता हुआ। ६ ककुद-युक्त, कुब्जह रखनेवाला।

ककुद्भती (सं० स्त्री०) ककुदिव अभिगयितो मांघ-विण्डीस्थस्याम्, ककुद-भत्पु०-डोप। १ नितम्ब, चूतड़। २ कन्दोविशेष।

ककुद्भान्, बड्भल दीक्षी।

ककुद्भिन् (सं० पु०) ककुदस्थान्ति, ककुद-भिनि। १ हृष, बैल। २ पर्वत, पहाड़। ३ विष्णु। ४ रैवत राजा। इनके पिताका नाम रैवत रक्षा। बलदेव ककुद्भीके जामात थे।

ककुद्भिन्ता (सं० स्त्री०) ककुद्भिन् रैवतस्य सुता, इ-तत्। रैवती, कल्याणन वनदेवीकी भार्या।

ककुद्भत् (सं० पु०) हृषभ, कुब्जहवाला बैल या भैंसा।

ककुद्भती (सं० स्त्री०) प्रद्युम्नकी भार्याका नाम।

ककुद्भान्, बड्भल दीक्षी।

ककुद्भर (सं० स्त्री०) कक्ष्य ग्रोरस्थ कुं अवयव-विशेष हुणाति, ककुद-वृष-नुम्। १ नितम्बस्थलके समवयवस्थ गतंदय, कूलेके गट्टे। २ हृषविशेष, पेड़। यह क. तिक्त, च्चरत्त, उष्णकृत् और रक्त एवं कफदाहक दोष मिटानेवाला होता है। ककुद्भरका भाद्रं मूल मुखमें रखनेसे मुखके सब रोग नाश हो जाते हैं। (वेद्यविशेष)

ककुद्भत्, बड्भल दीक्षी।

ककुप् (सं० स्त्री०) क-क्षुभ-क्षिप्। १ दिक्, पोर,

तरफ़। २ कोई रागिणी। इसका अपर नाम 'कुङ्कु' है। दामोदर मिश्रने कहा है—

ककुमाका मङ्ग सुन्दर, वर्धित और रतिके रससे मण्डित है। सुख चन्द्रके तुल्य मलकता है। चम्पक-माला परिशोभित है। यह रागिणी देखनेमें परम रमणीय, मनोहर, दानशील और कटाक्षयुक्त है।

“सुपोषिताको रतिमण्डिताको चन्दानना चम्पकदामयुक्ता।

कटाक्षिणी स्यात् परमाविमिता दामेन युक्ता, ककुमा मनोभावा”

(चतुर्तदध्याय)

“वैभवापहृष्यात् सप्तुषो ककुमा मता।

वर्तुषे मृच्छन्तीपुष्पा मङ्गाररसमधिका”

सम्पूर्ण ककुमा रागिणी धवतके अंश तथा द्वितीय मृच्छन्तीसे उत्पन्न है। इसे गङ्गावर रसमें गाना चाहिये। यथा—ध नि स रि ग म प ध।

१ दलको एक कन्या। यह धर्मकी पत्नी रहें।  
४ घोभा, खूबसूरती। ५ चम्पकमाला, चंचेका हार।  
६ शास्त्र। ७ प्रियेणै, बालोकी बांकड़ी।

ककुम्, कङ्कषीको।

ककुम् (सं० पु०) कस्य धायोः कुः स्थानं भाति अस्मात्, क-कु-भा-क प्रयोदरादित्वात्; कं वार्तं स्वभाति विस्तारयतीति वा, क-स्व-भ-क। १ यर्जन नामक वृक्ष विशेष, अर्जुनका पेड़। वैद्यकके मतसे यह वृक्ष शीतके होता और भग्न, चत, लय, विष, रक्तदोष, मेघ, मेद, व्रण एवं हृद्रोगको होता है। अर्जुन देखो। २ वीणाके प्रान्तदेशका वक्र काष्ठ, धरम। इसका अपर संस्कृत नाम प्रसेवक है। ३ वीणाके उपरि देयका अंशविशेष। ४ वीणिकी पलानु या तबो। ५ रागविशेष। ६ शिव। ७ पत्तिविशेष, एक चिड़िया। ८ तीर्थविशेष। यहाँ कश्यपादि वास करत हैं। (निर्णय० ४८५०) ९ प्रेत, शैतान्। १० पर्वतविशेष, एक पहाड़। (ति०) ११ उत्कृष्ट, बढ़िया।

ककुमत्वक् (सं० स्त्री) अर्जुनवृक्षका वस्त्रक, अर्जुनकी छाल।

ककुमभाषा (सं० स्त्री) भार्गो, एक बड़ी-बूढ़ी।

ककभा (सं० स्त्री) १ दिक्, ओर, तरफ़। २ एक

रागिणी। यह मालकोसकी पांचवीं रागिणी है। ककुमा सम्पूर्ण जातिकी होती है। दिनके दूसरे पहर यह गायी जाती है। कङ्कषीको।

ककुमादनी (सं० स्त्री) नलीनामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

ककुमादिचूर्ण (सं० स्त्री) हृद्रोगाधिकारोक्त वैद्यक औषध, छातीकी बोमारीमें दा जानेवाली एक दवा।

अर्जुनको छाल, वच, रासा, दला (खुरेटी), गोरल-चक्रकुण्या, खुरेतकी, गठो (कचूर), कुष्ठ, पिप्पली और गुण्ठी—प्रत्येकका चूर्ण सम भागमें मिला आध तोले उपयुक्त परिमाणसे घृतके साथ सेवन करनेपर हृद्रोग प्रयमित होता है।

ककुम्भती (वे० स्त्री) वैदिक ऋन्धोविशेष।

“एकविंश पर्वते वन्यः यद्वनरी वृद्धे ककुम्भता।” (वाचस्पत्य)

ककुह (सं० स्त्री) कस्य सूर्यस्य कुं स्थानं जिह्वेति अतिस्नातमतीव, क-कु-हा-क। १ अतिमय उन्नत, निहायत ऊँचा। २ महत्, बड़ा। (पु०) ३ रथका एक पहलू, गाड़ीका कोई हिस्सा। सम्भवतः गाड़ीवान् की बैठकको ककुह कहते हैं।

ककूक, ककूक देखो।

ककूषक (सं० पु० स्त्री) शिशुके नेत्रवर्त्मका एक रोग, बच्चेके पपोटैकी एक बोमारी। ककूषक चौर-दोपसे शिशुके नेत्रवर्त्ममें उपजता है। इसमें अण्डर स्त्रवण होता है। फिर शिशु मलाट, अचिक्छूट और नासा धर्मण किया करता है। यह न तो सूर्यको प्रभा देख और न वर्त्म खान सकता है। (नायननिदान)

ककूल (सं० पु० स्त्री) १ गोग्रहादि चूर्णसन्ताप, गोबर वगैरहके चूरकी भाँव। २ अपूपपाथनाई अथवा पात्र, पूरी पकानेको बड़ोका बरतन।

ककंडा (हिं० पु०) कर्कटक, बिचड़ा। इसका फल साँप-जेसा होता है। ककंडेका शाक बनाते हैं।

ककिलक (सं० पु०) एकप्रकार काट, किसी किम्वत्ता कीड़ा। यह काट पाकसन्धीमें उत्पन्न होता है।

ककैया (हिं० स्त्री) सखावरी टेंट, सखीरो। यह कंधी-जेसी होती है। कोई सो यहाँ पड़ेसे रुई-टंकी भारतमें बड़ी बात थी। इसीको विष-विष पण्डे

मकान् बनते रहे। किन्तु भाजकस्य मोटी ईंटके सामने इसका व्यवहार बिलकुल उठ गया है।

ककीरा—युक्तप्रदेशके यदाक्ष जिल्लाका एक थाम। यह यदाक्ष नगरसे कुछ कोस दूर गङ्गानदीके तटपर अवस्थित है। प्रति वर्ष कार्तिक मासकी पूर्णिमाको मछीवृष होता है। कामपुर, दिल्ली, फर्रुखाबाद और रोहिलखण्डके नाना स्थानोंसे प्रायः लाखों लोग आते हैं। यहाँ मुख्यतः मिला गङ्गामें तण्डुल और चयगाछनादि कार्य सम्पन्न कर व्यवसायमें लगते हैं। उही समय वालार भी जमता है। भारतवर्षके नाना स्थानोंसे चीजें बिकने पाया करते हैं। गृहस्थकी आवश्यकताकी अनुसार सकल ही द्रव्य मिला जाते हैं।

कक (धातु) स्वा० पर० षक० सेट्। “कक वाचि।”  
(कविचक्रदत्त) हास्य करना, हँसना।

ककट (सं० पु०) कक-घटन्। नृगविशेष, अश्वमेध यज्ञमें यह नृग आवश्यक आता था।

ककड़ (हिं० पु०) किसी किछकी बनी हुई तम्बाकू। तम्बाकूके पत्तोंकी सेंक धूर करते और उसमें पीनेकी तम्बाकू मिला छोटी चिलममें भरते हैं। इसीका नाम ककड़ है। कई लोगोंके बैठकर तम्बाकू पीनेकी जगहको ‘ककड़खाना’, बहुत तम्बाकू पीनेवालेको ‘ककड़वाल’, और ऐसा से कर बुद्धा पिसानेवालेको ‘ककड़वाला’ कहते हैं।

कक्का (हिं० पु०) १ केकय देग, एक मुक्क। यह कश्मीरके अन्तर्गत है। कक्काके अधिवासियोंको ‘कक्करवासी’ या ‘गक्कर’ कहते हैं। २ दुन्दुभि, नकारा। ३ एक प्रकारके सिङ्ग। इन लोगोंमें कच्छ, कड़ा, कट्टा, कट्ट और केम—पाँच कक्कार व्यवहृत हैं। ४ काका, पीती। प्रायः पिताके लघु स्नाताको ‘कक्का’ कहते हैं।

कक्कम (सं० पु०) कक-सप्तच्। वक्रसप्तच, मौल मिर्रीका पेड़।

ककोल (सं० पु०) ककते प्रकामते, कक्-क्षिप्; कोनति मन्ध्यायति, कुक्षज्जलादित्वात् च; कक् चासौ कोलयेति, कर्मधा०। १ गन्धद्रव्यविशेष, शीतलघीनी।

इसका संस्कृत पर्याय कोशक, कोमफल, कतफल, कटुकफल, हृष्य, सूक्ष्मरिच, ककोलक, माधवोषित, काल, कटफल और मरिच है। यह हृद्य, तीक्ष्ण, चण्य, तिक्त, द्रव्य, रुचिकारक और सुषुप्तुर्गन्ध, द्रोण, कफ, वायुज्वर रोग तथा नेत्ररोगनाशक है। (भाष्यकार) २ गन्धघटी, एक जड़ी-बूटी।

ककोलक (सं० स्त्री०) ककोलस्य इदम्, ककोल स्वार्थे कन्। १ गन्धद्रव्यविशेष, शीतलघीनी। २ ककोल या शीतलघीनीका पत्र। १ गङ्गाकीहीपके पत्र-गंत सप्तम वर्ष पर्वत। (विचित्र० १४४ च०)

कककक (सं० पु०) गुणचन्द्रके गोदापत्य।

कक्क् (धातु) स्वा० पर० षक० सेट्। “कक्क् वाचि।”  
(कविचक्रदत्त) हास्य करना, हँसना।

कक्कट (सं० स्त्री०) कक्कतेतीति, कक्क्-घटन्। १ हास्ययुक्त, हँसीझ, हँसनेवाला। २ कठिन, कड़ा। (पु०) ३ खटिका, खड़िया मट्टी। ४ वृक्षविशेष, पाटका पेड़।

कक्कटपत्र (सं० पु०) कक्कटानि प्रकाशान्वितानि, पत्राणि यस्य, बहुव्री०। वृक्षविशेष, पाटका पेड़। (Corchorus olitorius) इससे पाट या सून लपजता है। संस्कृत पर्याय पट्ट, वाजगन्ध, शाणि और चिम है।

कक्कटपत्रक, कक्कटपत्र देवो।

कक्कटी (सं० स्त्री०) कक्कतेति प्रकाशयति घर्षणेन वर्णान्, कक्क्-घटन्-ङीप्। खटिका, खड़िया मट्टी। इसका संस्कृत पर्याय खटिका, वर्णकैद्या, कठिनो और खटी है। कविता देवो।

कक्क (सं० पु०) कक्कतेति, कक्-स। कक्कविशेष-विशेषः च० ७७ श० १२१। १ यादुमूल, दगल, काँच। २ लण, घाम। ३ लता, बेल। ४ शुष्क लण, सूखी घाम। ५ कच्छ, कक्षार। ६ शुष्क घन, स्या अंगल। ७ प्राप, गुमाह। ८ घन, अंगल। ९ रुद्र। १० भित्ति, दीवार। ११ पाण्ड, चोर। १२ प्रकोष्ठ, कमरा, घर। १३ कक्षारोग, कक्षरघार। १४ काँच, साँग। १५ अक्षय, पीठपर पड़नेवाला टुपहेका

पक्षा । १६ परेगणकी भ्रमणका पथ, चितारोंके घूमने-  
की राह । १७ प्रतियोगिता, विरोध, हसद । १८ नौ-  
काका एक अवयव, नावका एक हिस्सा । १९ कसर-  
वन्द, पेंटा । २० राजान्तःपुर, शाही ज्ञानखाना ।  
२१ महिष, भैंसा । २२ बहेड़ा । २३ जन्तुगणका  
शब्द, जानवरोंकी बोली । २४ समता, बराबरी ।  
२५ परिमाणविशेष, रस्ती । २६ भारतोक्त जाति-  
विशेष । २७ छद्म द्वार, फाटक । २८ तुला, तरा-  
लका पक्षा । २९ गोट, किनारी । ३० घट, नक्षत्र ।  
कचका ( सं० पु० ) सर्पविशेष, एक सांप । यह  
राजा जनमेजयके सर्पयज्ञकालपर दत्त हुआ था ।  
कचतु ( सं० पु० ) कच इव तन्वते, कच-तनुः ।  
वृक्षविशेष, एक पेड़ ।  
कचधर ( सं० स्त्री० ) कचा धारयति, कचा-धृ-धच्  
प्रयोदरादित्वात् ङलः । सुश्रुतोक्त वृक्ष और कच-  
देशके मध्यका मर्मस्थान, कंधेका जोड़ । यह मर्म  
विह्वलितसे पक्षाघात लगता है ।  
कचप ( सं० पु० ) कचै जलप्रायदेशे पिबति, कच-  
पा-क । कच्छप, कलुषा ।  
कचरुहा ( सं० स्त्री० ) कचै जलप्राये रोहति,  
कच-रुह क । नागरमोया । यह जलप्राय देशमें ही  
अधिकतम उत्पन्न होती है ।  
कचशाय ( सं० पु० ) कचै शुष्कस्थले श्येते, कच-  
शो-य । कुकर, कुत्ता ।  
कचशायिनी ( सं० स्त्री० ) कच-शो-शो-लोप् । कुतिया ।  
कचशायु ( सं० पु० ) कचै श्येते, कच-शो-उण् ।  
कुकर, कुत्ता ।  
कचसेन ( सं० पु० ) १ कोई राजा । यह पगी  
चित्तके पुत्र और भाविचतके पौत्र थे । २ कोई क्षत्रिय ।  
इसके पुत्रका नाम अभिप्रतारी था ।  
कचस्य ( सं० त्रि० ) पाश्वर्य पर अवस्थित, पुष्टपर  
बैठा हुआ ।  
कचा ( सं० स्त्री० ) कच-टाप् । १ हस्तीके यन्त्रनकी  
रस्सु, हाथी बांधनेकी रस्सी । २ चन्द्रहार । ३ पकाउ,  
कोठरी । ४ भित्ति, दीवार । ५ मास्य, बराबरी ।  
६ रथका एक पहलू, गाड़ीका कोई हिस्सा । ७ काष्ठ,

साम । ८ विरोध, भगड़ा । ९ मध्यदेश, दरमियानी  
जगह । १० राजाका चन्तःपुर, शाही ज्ञानखाना ।  
११ अक्षर, दुपट्टेका पक्षा । १२ रोगविशेष, कांछमें  
निकलनेवाली गिलटी । सुश्रुतके वचनानुसार वामपार्श्व  
और वमूलमें घेदनायुक्त जो क्षणवर्ष स्फोटक निकल  
पाता, यही कचा कचमाता है । यह पित्तज रोग है ।  
इसमें पित्तसे उत्पन्न विरूपोंकी भांति चिकित्सा  
करनेका उपदेश दिया गया है । कचापर पक्षके  
वृषाक्षसे संलग्न कटर्म, गुल्म और शक्तिकी पीस  
भयवा पहाड़ी मट्टोंमें वी हान प्रलैष चढ़ाना चाहिये ।  
घटके मूल, सुस्तक, कदलीके मूल और पक्षके वृषाक्ष-  
की पत्थि पीस तथा शतघौत घृतके साथ मिला प्रलैष  
लगानेसे भी उपकार होता है । ( चरक )  
कचान्तर ( सं० स्त्री० ) पन्तःपुर, ज्ञानखाना, भीतरी  
या घराक कमरा ।  
कचापट ( सं० पु० ) कचाकारः पटः वक्षम् । कौपीन,  
काँडा ।  
कचावान् ( सं० पु० ) कचा साम्यमस्यास्तीति, कचा-  
मनुष्य मस्य वः । सुनिविशेष ।  
कचावेषक ( सं० पु० ) कचाया चपेक्षः, ६-तत् ।  
१ अन्तःपुरपालक, लक्षुकी, ज्ञानखानेका मुहान्निज ।  
२ प्रधानपालक, बागवान् । ३ मास्यकारक, तमाग  
करनेवाला । ४ कवि, मायर । ५ सम्पद, जिनाकार ।  
६ हाररक्षक, दरवान् ।  
कचो ( सं० त्रि० ) कचं पापमस्त्राप्य, कच-रिनि ।  
पापी, गुनहवार ।  
कचीकृत ( सं० त्रि० ) कच-चि-कृत । पायनीकृत,  
पघील, मातहत, दबाया हुआ ।  
कचोवान् ( सं० पु० ) कचविशेष । इनके पिताका  
दीर्घतमा और माताका नाम उचिञ् या । इन्हें  
पक्षिय भी कहते हैं ।  
कचेषु ( सं० पु० ) रौद्राश्वके पुत्र । द्रव्य पक्षगवोंके गर्भसे  
रुद्राश्वके द्रव्य पुत्र उत्पन्न हुये थे । उनमें घनाचीके  
गर्भसे जो पुत्र उपजा, उसका नाम कचेषु पड़ा ।  
कचोत्था ( सं० स्त्री० ) कचात् कच्छभूमिः उत्तिष्ठति,  
कच-उत्थ-स्त-क-टाप् । मद्रमुष्ठा, नागरमोया

कच्छ (सं० स्त्री०) कच्छाये साम्याय भवम्, कच्छा-  
यत् । १ पात, प्यामा । २ रयाङ्गविशेष, गाढोका  
एक हिम्मा । (पु०) १ रुद्र । ४ उत्तरीय वस्त्र,  
चदर । ५ मकोष्ठ, कोठा । ६ साहज्य, बराबरी ।  
७ राजान्तःपुर, गाढो सुनान्ध्याना । ८ पार्श्वभाग,  
बगुली हिम्मा । (त्रि०) ८ कच्छपूर्णकारक, बगुल  
भर देनेवाला । १० कच्छोत्पन्न, बगुलसे निकला  
दुषा । ११ गच्छ लघ्यादियुक्त, गाढी या सुखी घाससे  
भरा दुषा । १२ गुप्त, घोसीदा । १३ वधोपूर्णकारक,  
हलकेको पूरा करनेवाला ।

कच्छाप (सं० त्रि०) वधोपूर्णकारक, तंगको पूरा  
करनेवाला । यह गच्छ अस्त्रादिका विशेषण है ।

कच्छा (सं० स्त्री०) कच्छे भवा, कच्छ यत्-टाप ।  
१ चर्मरज्ज, चमड़ेकी रस्सी, गाढ़ी । २ हस्तोपस्थनकी  
चर्मरज्ज, हाथी बांधनेकी चमड़ेकी बन्नी । इसका  
संस्कृत पर्याय बुया, बरता, तुषा, ह्या पार कच्छा है ।  
३ मकोष्ठ, भांगन । ४ मङ्गल, इमारत । ५ चन्द्रहार ।  
६ साहज्य, बराबरी । ७ उद्योग, योग्यता । ८ सुहृत् ।  
९ उत्तरीय वस्त्र, पोड़नी, भूला । १० चन्द्रहार  
बांधनेका धागा । ११ शुष्का, रसी । १२ चन्द्रजि,  
उंगली । १३ कमरपट्ट । १४ झोड़ा, घमारी ।  
१५ घोड़ी । १६ तंग, छोड़ा कसनकी चमड़ेकी बन्नी ।  
कच्छावान् (सं० पु०) कच्छा अस्त्रास्य, कच्छा-मत्तुप्  
मव्य वः । १ हस्तो, हाथी । (त्रि०) २ वधोयुक्त,  
तंग रखनेवाला ।

कच्छाविच्छक, कच्छविच्छ दीवो ।

कच्छवाली (हिं० स्त्री०) कच्छारोग, ककराली,  
बगुलसे निकलनेवाला कड़ा फोड़ा । कण दीवो ।

कच्छोरी (हिं० स्त्री०) १ कच्छा, कांछ । २ कच्छवाली ।

कच्छा (सं० स्त्री०) कच्छ-यत्-टाप । कच्छा दीवो ।

कगदहो (हिं० स्त्री०) कागज गोरह बांधनेका  
धन्ना ।

कगर (हिं० पु०) १ उच्च तट, ऊँचा किनारा ।  
२ चौड, बाट । ३ सीमा, छाड़ । ४ कारनिम, कतकी  
नीसे दोवार को समरी हुई मेंड । (क्रि० वि०) ५ तट-  
पर, किनारे । ६ पृथक्, अलग ।

कगार (हिं० पु०) १ उच्चतट, ऊँचा किनारा ।  
२ नदीका करारा । ३ भूमिका उच्चत भाग, टीला ।

कगित्य (सं० पु०) कपित्थक, केदा ।

कगोड़ी (हिं० स्त्री०) कच्छविशेष, एक पेड़ । यह  
भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र उत्पन्न होती है । इसका  
काष्ठ गृहनिर्माणकार्यमें नहीं लगता ।

कङ्क (सं० पु०) कङ्कते' सङ्गच्छति, कङ्क-पच्-  
नुमच् । १ कौञ्चपक्षी, बगना, बूढोमार । इसका  
संस्कृतपर्याय कौञ्चपुच्छ, सट्गवदन, खर, रथानहरण,  
मूर, भामिषमिय, परिष्ट, कालपुष्ट, किंशार, कौञ्-  
पुष्टक, दीर्घपाद और दीर्घपात् है । कङ्कका मांस  
हृत्, वीर्यविवर्धन और कफहर है । (चरित्रहिता)

२ यमराज । ३ कङ्कवेगी ब्राह्मण, यमा दुषा ब्राह्मण ।

४ युधिष्ठिर । पद्मातशरके समय युधिष्ठिर 'कङ्क'  
नामसे विराटराजकी सहाय्य बने थे । ५ कंसासुरके  
भ्राता । ६ क्षत्रिय । ७ शास्त्रमौल्योपकी धन्तर्गत

पञ्चम वर्ष पर्यंत । ८ चूत नामक राजा । ९ सुदेवके  
कनिष्ठ । १० जनपदविशेष, एक बस्ती । (मातृश्रवण)

११०) महाभारतमें लिखा, कि राजसूययज्ञके समय  
कङ्कके लोगोंने राजा युधिष्ठिरको उपहार ले जा कर

दिया था । अनुमान होता, कि यह जनपद नेपाल  
अथवा तिब्बतकी पूर्वार्धमें अवस्थित है । ११ कङ्कोसकी

एक छोटी जमीन्दारी । १२ महाभारतचूत, किंहीं  
किष्का नाम । १३ चन्दन ।

कङ्कचित् (सं० त्रि०) संसृष्टमें एकत्र किया हुआ,  
लौ टेरमें समेटकर लगा दिया गया हो ।

कङ्कट (सं० पु०) कं देहं कटति पाह्योति, क-कट-  
भाच, कङ्क-पटन् या । कर्णादिभ्योऽट् । उच् १।८।

१ कवच, बध्तर । २ पट्ट, भाङ्ग । ३ गदिर,  
गेरका पेड़ ।

कङ्कटक (सं० पु०) कङ्कट सार्धं कन् । बरह दीवो ।

कङ्कटो (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी ।

कङ्कण (सं० स्त्री०) कं इति कपति, कम्-कण्-पच् ।  
१ हस्तभरणविशेष, हाथमें पहननेकी एक चूड़ी ।

संस्कृत पर्याय करभूषण और कोपुक है । २ हस्तपुत्र,  
हाथमें बाँधा जानेवाला धागा । यह प्रायः हरिद्रादि

रंगा जाता है। विवाहमें वर और कन्या दोनों एक दूसरेका कङ्कण छोरते हैं। कङ्कण छोर न सकनेसे सुखता प्रमाणित होती है। ३ भूषणमात्र, कोई गहना। ४ शेखर, चोटी। ५ हस्तोके पदका एक भूषण, हाथीके पैरका कङ्का।

कङ्कणपुर (सं० स्त्री०) नगरविशेष, एक गहर।  
कङ्कणवर्षसे कङ्कणपुर नाम पड़ा है।

कङ्कणमिय (सं० पु०) मियके एक अनुचर।

कङ्कणभूषण (सं० वि०) असह्यारादिसे विभूषित, चमकदार गहने पहने हुए।

कङ्कणमणि (सं० स्त्री०) करभूषणका रत्न, चूड़ीका मणी।

कङ्कणवर्ष (सं० पु०) १ रसज्ञविशेष, एक कीमयागर।  
२ राजा हेमगुप्त।

कङ्कणिन् (सं० त्रि०) कङ्कणसे विभूषित, जो चूड़ी पहने हो।

कङ्कणी (सं० स्त्री०) कङ्का गमने अणति शब्दायते, कङ्क-अण-अच्-ङोप्; कं इति कणति, कम्-कण्-पचाद्यच्-ङोप् इति वा। सुद्रवण्डा, सुष्टु।

कङ्कणोका (सं० स्त्री०) पुनः पुनः कणति, कण यङ् (लुक्)-ईकन् धातोः कङ्कणादेशश्च। १ सुद्रवण्डा, सुष्टु। २ कटिभूषणविशेष, करधनी। इसमें चांदीके छोटे-छोटे सुष्टु रत्ने रहते हैं।

कङ्कत (सं० स्त्री०) कङ्कते शिरोमलं प्राप्नोति, ककि-अतच्। १ केयमार्जन, कंचा, ककवा। यह धूलि, जल, मल, कण्डू और शिरोरोगको दूर करता है। कंचो कान्ति बढ़ाती, कण्डू मिटाती, मूँ रोग हटाती, कीम बढ़ाती और रक्षोजन्य मल छोड़ाती है। (राजवज्ज) २ हस्तविशेष, एक पैर। ३ अल्पविष प्राणिविशेष, एक कुहरोला जानवर।

कङ्कतदेही (सं० पु०-स्त्री०) प्राणिविशेष, एक जानवर। अंगरेजी भाषामें इसका नाम सिडिप (Cydippe) है। प्राकृति देवपिण्ड-जैसी होती है। फिर उसपर कङ्कतकी भांति रेखायें रहती हैं।

कङ्कतिका (सं० स्त्री०) कङ्कत-ङोप् स्त्रायं कन्-ङञश्च। १ केयमार्जनी, कंचो। संस्कृत पर्याय

प्रसाधनी, कङ्कतो, कङ्कत, प्रसाधन, केयमार्जन, फली, फलिका और फलि है। कङ्कत देवी। २ अतिवला, बरियारी। ३ नागवला।

कङ्कतो (सं० स्त्री०) कङ्कत-ङोप्। प्रसाधनी, कंचो।  
कङ्कतोका कङ्कतिका देवी।

कङ्कवोट (सं० पु०) कङ्कवत् वोटयति, कङ्क-वोट-णिच्-पच्, कङ्कात् पचिविशेषात् प्राप्मानं धातोति वा, कङ्क-वोट-वटन् छपोदरादिवात्। १ वनस्थ भक्ष्य, एक मछली। २ वृद्धिग मत्स्य।

कङ्कवोटि (सं० पु०) कङ्कस्य वोटिरिव वोटिष्ठस्युपस्य, मध्यपदलो०। कङ्कवोट देवी।

कङ्कट (सं० स्त्री०) सुवर्ण, सोना।

कङ्कपच (सं० स्त्री०) कङ्कस्य पचम्, क्ष-तत्। कङ्क-पचोका पालक, बूटीमारका पर।

कङ्कपत्र (सं० पु०) कङ्कस्य पचिविदेपस्य पत्रमिव पत्रं यस्य। १ वाण, तोर। २ कङ्कपचोका पत्र, बूटीमारका पर।

कङ्कपची (सं० पु०) कङ्कस्य पत्रमक्षरास्नोति, कङ्क-पत्र इति। वाण, तोर।

कङ्कपर्वा (सं० पु०) कङ्कवत् पर्व यस्य। सर्पविशेष, एक साँप।

कङ्कपुरो (सं० स्त्री०) कं सुखं कायति सुषयति, कर्मधा०। काशीपुरो, वाराणसी।

कङ्कपुरीप (सं० स्त्री०) कङ्कविद्या, बूटीमारकी मंगनी। यह व्रणदारण होता है। (वृद्ध)

कङ्कमोजन (सं० पु०) कचुनं हञ्च।

कङ्कमाना (सं० स्त्री०) कङ्कं करवापस्यं मलत्तं धारयति, कङ्क-मल-अच्-टाप्। करतात्री।

कङ्कमुख (सं० पु०) कङ्कस्य मुखमिव सुखं यस्य। १ सन्देह, समी। २ बलियमें प्रविष्ट शम्भुके वटारका एक यन्त्र, हड्डोमें लगा तोर बगैरह निवासनेका एक भोजार। इस यन्त्रका अग्रभाग कङ्कपचीके मुख-जैसा होता है। मधुराकृति फीतकद्वारा कङ्क-मुख आवृत रहता है। मुद्रामें अग्न्यान्त्र यन्त्रोंकी अपेक्षा इस यन्त्रका उत्कर्ष वर्णित है—कङ्कमुखयन्त्र सहजमें हो भीतर हुए मध्यपदव-पूर्वक निरुद्ध जाता

घोर संस्थानपर उपयोगी होनेसे सकल यन्त्रोंकी उपयोगिता प्रोक्त समझा जाता है। १ वाष्पविशेष, एक तीर।

“मार्गसंशुद्धयान् वायान् वाहकवस्तुसंग्रहः” (शान्तपत्र ६:७२ च०)

कहर (सं० लि०) कं सुखं विरति चियति, क-क-पच् । १ सुस्थित, खराब। (ली०) कं जलं सोरंति चय, क-क चाधारे चप् । २ घोल, मट्टा। ३ शत नियुक्त संख्या, दण करोड़। (हिं० पु०) ४ कंकड़, एक खनिज पदार्थ। (Modular limestone) भारतवर्षमें इन स्थानोंपर कहर मिलता है—पल्लोमट्ट, पलाहाबाद, पन्तमहर, खस्यात, चम्पारन, चंटीसी, गिरीया, गुजरात, हैदराबाद, हरीक, खान्देश, कोयास्वा-तूर, ठाका, धोलपुर, डटावा, जयपुर, जासमर, जौनपुर, भालाबाड़, खेरी, सुधियाना, सुंमैर, सुस्तान, सुहिंदाबाद, मधरा, मुजफ्फरपुर, हिसार, नरसिंहपुर, पयोध्या, प्रतापगढ़, पटना, पेशावर, पुरनिया, सहारनपुर, सारन, शाहाबाद, शाहजहाँपुर, सियालकोट, सिंघूम, सीतापुर, सुस्तानपुर, तिनैवली, उत्तरोला, बरघा, बलिया, बांदा, बांका, बसती, बिजनौर, बीकानेर, बदायूँ और बुलन्दशहर।

कहराल (सं० पु०) पिष्टोका पेड।

कहरोल (सं० पु०) कट्ट इव कोरुयधल; लसराः। १ निक्षोचक छत्र, पकोल, टैर। २ क्षता-विशेष, एक विल।

कहकोय (सं० ली०) कट्ट इव कोयते, थानोयते, कट्ट-कोड-यत्। चिखोटकमूल, एक जड़ी। यह सुद, पक्षीपंकारी और गीतल होता है।

कहवाल (सं० पु०) कट्टस्य वाज इव वाजः पक्षी इत्य, मध्यपदकी०। १ कट्ट-पत्र नामक वाष्पविशेष, एक तीर। २ कट्टका पत्र, बगैकेला बाजू।

कहवाजित (सं० पु०) कट्टस्य वाजी जातोइत्य, कहवाज-इत्यच्। कट्टक कहाने शारवादिम इत्यच्। वा ३:१५:४।

कट्टपत्रमुक्त माष, एक तीर।

कहयत, (सं० पु०) कट्टस्य गतः, ६-तत्। इन्द्रिपर्णी, वलन। प्रयोगः शुभार इव-उक्तिद्वारा कट्टपत्रो विनष्ट होता है।

कट्टमाय (सं० पु०) कट्ट इव मीरे, कह-यो-च। कुहर, कुत्ता।

कट्टा (सं० ली०) १ उदसेनकी कन्या घोर खंमकी भगिनी। २ गोपीर्षवन्दन, किसी किम्बत्ता सम्बन्ध। ३ उत्पन्नगन्धिका।

कट्टाल (सं० पु०) कं गिरं फालयति धिपति, कम्-कल-विषय-चच्। १ शरीरासि, ठठरी। इचका संज्ञकत पर्याय कहर घोर पस्त्रिपञ्चर है। कट्टाल या पस्त्रिपञ्चर देहका सार होता है। त्वक्मांस विनष्ट होने भी पस्त्रि मट्ट नहीं होता। इससे कहा गया है—

“कट्टालं गतिः सारं यथा तिष्ठति मुनयः।

अस्मिन्मरणा देहा द्विपक्षे दिष्टिना मुनयः।

तत्कालिनिमट्टे तु त्वक्मांसि चरीरिवात्।

कलीनि न विनश्यति शरार्यो तानि दिष्टिनाम्।

मरिण्यन्व निश्चयानि विरामिः काटुमिसरा।

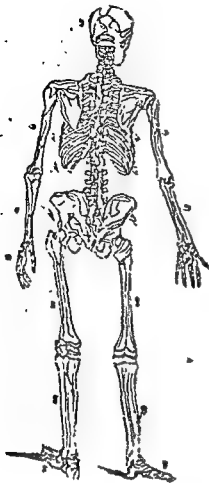
“कलीमांसवर्णं कलान् न गोपेनो पतति वा” (वृहव)

छत्र जैसे अश्वत्थारस्य सारके संहारी डटा रहता, वैसे ही पस्त्रिसारके संहारी सुसुप्त देह धारण करता है। शरीरस्य त्वक्, मांस प्रभृति मट्ट होने भी पस्त्रिका विनाश नहीं होता। पस्त्रि समस्त देहका सार है। समस्त शिरा और छाया द्वारा मांस गह रहता है। पस्त्रिके पवनमयनसे ही मांस मोर्ष वा पतित नहीं होता। (वहर)

चरकके मतसे—“तत्त्वमांसविरहितः कट्टालस्यः शरी-रस्त्रिपञ्चः कट्टालस्यो गतिः। ४ च कट्टालः वृद्धो गतिः यथा श्राव्यमधु गच्छेत्तत्त्वमांसं च” तिर इति।” (चरक)

त्वक् एवं मांसदि रचित तथा स्वस्थान पर पच-सित देहका पस्त्रि सुसुप्त कट्टाल कहा जाता है। यह छत्र चर्ममें विभक्त है—चार भागा, पश्चिम मध्याङ्ग और पश्चिम मध्यक। ऊर्ध्व भागाद्वयको यादु और पश्चिम भागाद्वयको सकृय कहते हैं।

युगोपेय शरीरतत्त्वविदोंने भी कट्टालको प्रमाणतः तीन चक्षुमें विभक्त किया है—१ उत्तमः पृष्ठ वा मध्यक (Head), मध्याङ्ग वा स्कन्ध (Trunk) और भागा (Extremities)।



मनुष्यका ।

१ चित्रित अंश मस्तक, २ मध्य, ३ कर्ण और ४ पञ्चमाखा है ।

मनुष्य सृष्टिके मतसे पश्चि पाँच प्रकारका होता है—कपाल, रुचक, तक्षण, वलय और मलकास्थि । जाल, नितम्ब, पंख, गण्ड, तालु, शङ्ख एवं मस्तकका पश्चिखण्ड वपान कहा जाता है । दन्तके पश्चिखण्डका नाम रुचक है । नासिका, कर्ण, शीषा तथा चक्षुकीयके पश्चिकी तक्षण कहते हैं । हस्त, पाद, पाश्वर, वृष्ठ, चद्र और वक्षःस्थानका पश्चि वलय है । फिर पञ्चशिष्ट सकल पश्चिकी संज्ञा मलकास्थि है । (१)

मनुष्य सृष्टिके लेखानुसार वेदेष पश्चिकी संख्या ३०३ बताते हैं । किन्तु शब्दतन्त्रके मतमें ३०२ ही पश्चि होते हैं । यथा—

(१) “कपालरुचकतक्षणवलयमलक” इति । तेषां जालनितम्ब-कपालगण्डमध्यः पञ्चमाखा दन्तगण्ड रुचकानि श्लोकचर्चोपादिनां तु तद्वर्णानि । पश्चिपादपाश्वरशीषीवरीहस्त वक्षःपश्चि वक्षःपश्चि । (२) (वृष्टम) ।

प्रत्येक पादाङ्गुलिमें तीन-तीन	...	१५
पदमल और शुष्कमें	...	१०
एङ्गीमें	...	१
जङ्गामें	...	२
जालुमें	...	१
कुरुदेशमें	...	१
इसी प्रकार अपर पादमें	...	३०
दोनों हाथोंमें तीस-तीस	...	६०
कटिदेशमें	...	१
मलहारमें	...	१
योनिदेशमें	...	१
दोनों नितम्बोंमें	...	२
दोनों पाश्वरमें क्षत्तीस-क्षत्तीस	...	७२
वृष्ठमें	...	३०
वक्षमें	...	८
हस्ताकार पञ्चक नामक	...	२
शीषादेशमें	...	८
कण्ठदेशमें	...	४
दोनों तालुमें	...	२
दन्तमें	...	३२
नासिकामें	...	२
तालुमें	...	१
गण्ड, कर्ण और सायु प्रत्येकमें दो-दो	...	६
मस्तकमें	...	६

सब मिलाके ३०२

सरकने पश्चिकी संख्या ३६० लिखी है—दन्तगण्ड अर्थात् दन्तमूलमें ३२, दन्तमें ३२, मध्यमें २०, मलकाकामें २०, पञ्चङ्गुलिमें ६०, पाश्वरमें २, कर्णके गोचे २, हस्तकी मणिमें ४, पदके शुष्कमें ४, पश्चिमें ४, जङ्गामें ४, जालुमें २, कुरुदेशमें २, कर्णमें २, बाहुमें २, कण्ठके गोचे २, तालुमें २, नितम्बदेशमें २, योनि वा निद्रामें १, वक्षदेशमें १, वृष्ठदेशमें १, वृष्ठमें ३५, शीषामें १५, जङ्गुमें २, वृष्टुमें १, वृष्टुके मूलवन्धनमें २, मलकाकामें २, वृष्टुमें २, मण्डल्यमें २, नासिकामें २, वक्षः पाश्वरके पञ्चरमें दोनोपके द्विषावधि ४८, पञ्चरको शोषाकार स्थावि-



कामें २४, मलाटमें २, मस्तकमें ४ और पचदेयमें १० पस्य होते हैं। इसी प्रकार शरीरके सब पस्य १६० हैं।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे नरकंकालमें सब मिला कर २२३ पस्य रहते हैं। यथा—कपाममें ८, सुलमण्डलमें १४, कर्षाभ्यन्तरमें ८, कशेरुकांमें २३, पचमें २६, वस्तिदेशमें ११, कर्षाभाषा वा बाहुमें ६८ और अधोभाषा वा सकृधिन ६४ पस्य हैं।

कशेरु मेरुदण्डरूप है। इसमें २४ पस्य होते हैं। ऊपर जिसमें ७ पस्य रहते, उसे प्रोवा-कशेरुका (Cervical vertebrae) कहते हैं। मध्यमें १२ पस्य रहनेवालीका नाम दृढकशेरुका (Dorsal vertebrae) है। अधोभागमें ५ पस्ययुक्त देग कटिपशेरुका (Lumbar vertebrae) कहाना है। कशेरु वा मेरुदण्डके तलभावका त्रिकास्य (Sacrum) ऊपर पड़ता है। त्रिकास्य वस्तिके पस्यका रंग कहाने भी मूलत रूपसे मेरुदण्डका ही मसिहित पस्य माना जाता है। यह पस्य त्रिभीषाकार देख पड़नेसे त्रिक (Sacrum) कहाना है। यह ५६ दृढ कशेरुकांमें गठित रहता है। नाम त्रिक कशेरुका (Sacral vertebrae) है। मेरुदण्डमें सबसे नीचे पचःकशेरुका (Coccyx) जाती है। यह पच पादिके साङ्ग धर्म पस्यरूपसे मिलती है। मानवके पचमें वैया नहीं। मानव जातिकी पचः-कशेरुकाके पस्य पुद्ग, स्वत्यागतन और चारपांश्वे अधिक नहीं होते। वस्त्रास्यके उभय पार्श्व और मध्य ख शोषिकलकास्य (Os Innominato) रहता है। फिर यह पस्य तीन भागमें विभक्त है—कटिका पस्य (Ilium), कटुका पस्य (Ischium) और उपपला पस्य (Pubis)।

मेरुदण्डका प्रमाण रंग वचाःस्थल (Chest or Thorax) है। इसके पयादुभागमें दृढकशेरुका, धनुःभागमें बुझास्य और उभय पार्श्वमें बारह-कारण पर्यंका तथा उनके उपपस्य हैं। पर्यंका मेरुदण्डसे कुछ धृक्-धृक् रहती है। यह केवल

ऊपरी उभय पार्श्वपर मात्र बुझास्यमें एक-एक बार स्तनस्थभावमें मिमित है। यह सातो प्राभावित पर्यंका और नीचे उभय पार्श्वके ५ पस्य कृत्रिम पर्यंका हैं। यथोक्तका बुझास्य १, पुत्रका २ और मिश्रका पस्य उभय भी पस्यिक, रंगोंमें गठित है। यौवनकालको जब बुझास्य दो पस्य रहता, तब उसके ऊपरी खण्डका विद्वान् मुष्टि (Mannubrium) कहता है। यथोक्तके समय बुझास्य एक ही जाता है। इसके अधोभागमें उपरिभाग पड़ले सीधा और फिर मोटा देख पड़ता है। मध्यमें एक-एक कोमलास्य रहता है। उसे पञ्चाकार कोमलास्य (Ensiiform or xiphoid cartilage) कहते हैं। नरकपानकी करोटीमें १ मलाटास्य (Frontal bone), २ पार्श्व-कपालास्य (Parietal bone), १ पयात् कपालास्य (Occipital bone), १ कीनकास्य (Sphenoid), २ गङ्गास्य (Temporal bone), और १ शोषिरास्य (Ethmoid) रहता है। सुलमण्डलमें २ नासास्य (Nasal bone), २ माध्यस्य (Superior maxillary), २, तास्यस्य (Palate), २ गण्डास्य (Malar), २ चक्षुजननास्य (Lachrymal), २ अधोशेठनास्य (Inferior Turbinated), १ फालास्य (Vomer) और हन्वस्य (Inferior Maxillary) पाते हैं।

कपल और सुल देखो।

कंकालकी कर्षा शालांमें रसकलकास्य (Scapula), कल्यस्य (Clavicle), चक्रादण्डास्य (Radius), प्रकीटास्य (Ulna), मचिवन्ध (Carpus), करम वा हस्ततल (Metacarpus) और सकल पङ्क्त्यस्य होते हैं। इनमें रसकलकास्य और कल्यस्य शोषिकलकास्यके मिलते हैं। हस्तमें मचिवन्ध, करम और पङ्क्त्यस्य रहते हैं। इसके मध्य मचिवन्धमें सब मिलाके ८ पस्य दो तहपर पड़ते हैं। पहले तहमें चारोंके नाम मलास्य (Scaphoid), पञ्चलमण्डास्य (Semi-lunar), कोपास्य (Cuneiform), और वतुसास्य (Pisiform) हैं। दूसरे तहके चारों समदिपास्य (Trapezium), वतु-

कोणास्थि ( Trapezoid ), स्त्रालास्थि (Osmagnum) और वट्टिगास्थि ( Unciform) कहते हैं ।

अङ्गुलिके सकल पक्षिको अङ्गुल्यस्थि ( Phalan-  
ges ) कहते हैं । प्रत्येक अङ्गुल्यमें दो और चार  
अङ्गुल्यमें तीन पक्षि रहते हैं । इनमें प्रत्येक चार  
पर्यं एवं करतलसे पक्षिसे प्रत्येक पड़ने पर स्वाधीन  
भावसे बढ़ सकता है ।

अधःशास्त्रमें ऊर्ध्वस्थि ( Femur ), जानुफलकास्थि  
( Patella ), जङ्घास्थि ( Tibia ), नलकास्थि ( Fibula ),  
गुल्फ ( Tarsus ), प्रपद ( Metatarsus ) और पद-  
तल ( Toes ) होता है ।

अङ्गुलिके पक्षियोंमें ऊर्ध्वस्थि सबसे बड़ा है । इसका  
शिरोभाग त्र्योणिककलास्थिसे घृयक् पड़ जाता है ।  
जङ्घास्थि पदके समुच्च और अन्तर्भागमें रहता है ।  
इसका शिरोभाग अन्य भागसे बड़ा होता है । ऊपर  
बादामी रंग भक्तता है । दो बादामी तर्जोपर ऊर्ध्व-  
स्थिकी गाँठ ( Condylus ) पड़ती है । नल-  
कास्थि जङ्घास्थिके दोक पाखं और पदके वहिर्भागपर  
स्थापित है । यह देखनेमें दीर्घ, चौण, अधिकांश  
तीन पाखं युक्त और शिप दिक्को घर्षित रहता है ।  
जानुफलकास्थि ( Patella Kneo-pan ) प्रायः त्रि-  
कोणाकार देख पड़ता है । इसका अधोभाग बहुत  
ढालू, अपभाग कुछ टेढ़ा तथा देखनेमें तन्तु-जैसा और  
पदाङ्गभाग अधिकांश कोमल एवं मध्यपर एक पानि  
द्वारा दो भागमें विभक्त है । गुल्फ ७ पक्षिसे निर्मित  
है । यथा—१ गुल्फास्थि ( Astragalus ), २ पाष्ठास्थि  
( Os calcis ), ३ नावास्थि ( Navicular ),  
४ घनास्थि ( Cuboid ), ५ अन्त्यन्तर-कोणास्थि  
( Internal Cuneiform ), ६ मध्यकोणास्थि ( Middle  
Cuneiform ) और ७ बाह्यकोणास्थि ( External  
cuneiform ) ।

प्रपद एवं पदाङ्गुलिके पक्षिकी गठनप्रणाली प्रायः  
करभ तथा अङ्गुलिके पक्षि-जैसे ही रहती है ।  
पदाङ्गुलिके पक्षि दीर्घ, छद्म, ऊपर और करङ्गुलिके  
पक्षिसे घटन होते हैं । पदके दोनों उपाङ्गुलोंकी  
छोड़ दूसरे छोटे पड़ते हैं ।

एकद्विध शरीरमें दूसरे भी पक्षि कोमल उपास्थि  
वा तरुणास्थि विद्यमान हैं । शरीरके छद्म एवं सबल  
अङ्गुल्यस्थि द्वारा निर्मित हैं । मणिवन्ध और गुल्फ  
प्रकृति स्थानोंमें अस्थि वा तुद्रास्थि होते हैं ।  
समस्त पक्षि अन्तर्भाग और वहिर्भागमें भिन्नोपे  
वेष्टित हैं । किन्तु इनके सम्मिलानोंपर भिन्नोका पादा  
देख नहीं पड़ता । सम्मिलान सूक्ष्म उपास्थिमें वेष्टित  
रहता है । पक्षिका गर्भ पोतवणं छेदविशेषमें पूर्ण  
है । सभीको मज्जा कहते हैं । पक्षि-समूहमें कहीं  
गर्तवत् खास और कहीं उच्चभाव रहता है ।

देहके पक्षिमय गर्त (Acalabulum) कपासास्थि  
द्वारा निर्मित है ।

कहलालकेतु ( सं० पु० ) एक दानव ।  
कहलालमरवन्ध ( सं० स्त्री० ) तन्तुपाखविशेष ।  
कहलालमानिनी ( सं० स्त्री० ) कहलालमानिनी-डोरा  
काली ।  
कहलालमानी ( सं० पु० ) कहलालानी माना पक्ष्यादि,  
कहलाल माना इति । शोकादिपदः क ४१११२ । मर देव ।  
कहलालय ( सं० पु० ) कहलाल वाति, कहलाल-या-क ।  
देवः शरीर, जिज्ञा ।  
कहलालवर ( सं० पु० ) वाचविशेष, बड़डोका तोर ।  
कहलालाक्ष ( सं० स्त्री० ) पक्षविशेष, एक द्विपार ।  
यह बड़डोका बनता था ।  
कहलालिनी ( सं० स्त्री० ) १ महाकालोमूर्ति ।  
कहाणे देवा । २ ककशा, भगड़ा करनेवाली ।  
कहलाली ( सं० स्त्री० ) कहलाल-डोरा । १ महाकालो-  
मूर्ति । कमटी राज्यके अन्तर्गत बारिया नामके ७  
मील उत्तरपश्चिम एक पक्षि प्राचीन दुर्ग अवस्थित  
है । दुर्गको अवस्था पक्षि मोचनोय है । चारो दिक्  
भूमिसात् है । यत्प्रामाण्य पक्ष पश्चिम दिक्ष पड़ता  
है । इसी दुर्गमें कहलाली देवीका प्रसारमूर्ति प्रति-  
ष्ठित है । देवीके १८ हाथ हैं । उनमें गरकपात्र  
घनुयांवादि पक्ष-यक्ष विराज रहे हैं । देवीके निष्ठ  
विभूषणारी शिवकी मूर्ति पड़ोई है । उन्हींके निष्ठ  
गणेशमूर्ति है । यह दुर्ग और कहलाली देवीकी मूर्ति  
बहु प्राचीन है । दोनों प्रायः ८८० वर्षके होते हैं ।

दुर्गने मकरध्वज ( चेदि संवत् ००० ), गोपाल-  
देव ( चेदि संवत् ८४० ) और यमोराज ( चेदि संवत्  
१११० ) प्रथमि कई लोकोका मिथानुगासन निकसा  
है । ( हिं० ) २ कर्कगा, सहने-भगहनवाको । ३ नोच-  
वातिविशेष, एक कमीना कोम । कङ्काली किंगरी  
बला-बला भीष मांग करत है ।

कङ्कामीज ( सं० स्त्री० ) गोमोय-चन्दनका योज ।

कङ्किरात ( सं० स्त्री० ) कुसुपटक, लाल भाङ्ग ।

कङ्क ( सं० पु० ) बहुत सतत प्राप्ति, कङ्क-उन् ।

१ लघुसैनिक पुत्र और कंसके आता । कंसके  
पाठ आता है—सुनामा, लघोच, कङ्क, गङ्क, सुङ्क,  
राष्ट्रपाल, छ'ट और छ'टमाण । २ छणविशेष,  
एक घास ।

कङ्कट ( सं० स्त्री० ) कङ्कः मन्त्रीति तिष्ठति, कङ्क-स्या-  
क पत्यव । १ पार्श्वीय मृत्तिकाविशेष, जिसो विस्त्री  
पहाड़ी मही । इसका संस्कृत पर्याय कालकट,  
विरङ्ग, रङ्गायक, रचक, पुष्क, मोषक और काल-  
पालक है । भावप्रकाशके मतमें हिमालयके सिपर-  
में यह मृत्तिका उपजती है । कङ्कट द्विविध  
होता है—नालिक रीप्यवर्ण और रणुक स्यावर्ण ।  
दोनोंमें एक ही अधिक गुणशाली है । कङ्कट शुद्ध,  
सिद्ध, विरचक, तिष्ठ, कट्ट, छण एवं वर्षकारक और  
क्षाम, शोध, दहराधान, गुन्म, आनाह तथा कफ  
नाशक जाता है । २ हिमालयके पादाङ्गुरमें उत्पन्न  
होनेवाला दूरतान-केसा एक पत्तार ।

कङ्कट ( सं० पु० ) ककि-जयन् । आभ्यन्तर देह,  
शरीरका आभ्यन्तर प्रदेश, लिप्यका भीतरी हिस्सा ।

कङ्कट ( सं० पु० ) कङ्कतं भीषं प्राप्नोति भक्षणयेति  
देवः, ककि-एव । १ काकविशेष, एक कौवा ।

२ बक पक्षी, बगला ।

कङ्कन, कङ्कन देवो ।

कङ्कमि ( सं० पु० ) कं सुखं तदर्थं केनियते, कङ्कमो- ।

चमोक हथ ।

कङ्कन ( सं० पु० ) ककि-एव । बाष्पक भाक,  
बट्टा ।

कङ्कति ( सं० पु० ) कङ्क वाहुकत् एति, एषो-

दगदित्वात् वाङ्मः । चमोक हथ । चमरमे रस  
यष्टको धोनिद्रु माना है ।

कङ्कन ( सं० पु० ) १ भागराजविशेष । २ 'मय-  
पत्यागधन' नामक ग्रन्थप्रणेता । ३ क्षमाप्रदान एक  
सुगन्ध यष्टद्रव्य, शीतल-चीनी । इसका फल सुहृत्  
और कठिन होता है । कङ्कन शोध और तेजादि-  
में पड़ता है । यह कट्ट, तिष्ठ, छण, सुगन्धद्रव्य,  
दीपन, पाचन, रुच्य और कफनाशक है । ( चरित्रवृत् )

कङ्कालक, कङ्कन देवो ।

कङ्कालको ( सं० स्त्री० ) कङ्कालवृक्ष, शीतलचीनीका  
पेड़ । यह तिष्ठ, पाही, छण, रुचिकर, मन्नावृक्ष-  
कर, पित्तन एवं चर्मरौप्य होती और कफ, प्रमेह,  
कुष्ठ तथा मन्तुको विनाश कर देती है । ( चरित्रवृत् )

कङ्कालतिष्ठ, कङ्कन देवो ।

कङ्क ( सं० स्त्री० ) कं सुखं मूलति चनेन, कं-मूल  
वाहुकत् उ । पापभोग, सजा ।

कङ्क ( सं० पु० ) क्षोम, कंकड़ा ।

कङ्क ( सं० स्त्री० ) कं सुखं पश्यति, कं-पति-विष-  
कु । छणधान्यविशेष, एक चनाज । इसका संस्कृत  
पर्याय विषङ्क और विषङ्ग है । भावप्रकाशके मतमें  
यह धान्य चार प्रकारका होता है—ऊण्य, रत्न,  
म्रेत और पोत । पोत कङ्क सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है । यह  
मन्मन्मानकारक, वातवर्धक, हृदय, गुग्गु, पुष्पमेघ-  
नाशक और चमरके लिये विशेष उपकारक है ।

कङ्कता ( सं० स्त्री० ) कङ्क साधे मन् टापू । धान्य-  
विशेष । कङ्क देवो ।

कङ्कणी ( सं० स्त्री० ) १ महाज्योतिषमी मता,  
रतनत्रोत । २ छणधान्यविशेष, एक जंगली चनाज ।

कङ्कणी, कङ्कणी देवो ।

कङ्कणीय ( सं० पु० ) कङ्कणीना देवो ।

कङ्कणीयता ( सं० स्त्री० ) पण्यन्ता नाम छणविशेष,  
एक घास ।

कङ्कनी ( सं० स्त्री० ) कङ्कनीयते कङ्कमन्दनं प्रायते,  
कङ्कनी वाहुकत् उ-टोपू । १ छणधान्यविशेष, एक  
चनाजो घास । शुद्धपदार्थमें इसे भासकांगनी कहते  
हैं । संस्कृत पर्याय ज्योतिषती, कटभो, वड्ड, रुचि,

चिणक, ज्योतिका, पारायतपदो, पञ्चालता, पीत-  
तण्डुला, सङ्गमारी और कुकुन्दनी है। कङ्कनी  
धातुशोधक, पित्तद्वेषनाशक, रुच, वायुवर्धक, पुष्टि-  
कारक, गुह और मन्दसन्धानकारी होती है। (राजवल्लभ)  
कङ्कनीका (सं० स्त्री०) कङ्कणीधान्य, एक भनाजी घास।  
कङ्कनीपत्रा (सं० स्त्री०) कङ्कन्याः पत्रमिव पत्रमस्याः,  
मध्यपदनी०। पञ्चान्या भामक लणविशेष, एक घास।  
कङ्कन (सं० पु०) कङ्कं लाति गृह्णाति चनेन, कङ्क-  
ला-क। हस्त, हाथ।

कङ्क, कङ्क देवी।

कङ्कुर (सं० पु०) कङ्कं लाति चनेन, कङ्क-सा-क-  
लस्य रः। हस्त, हाथ।

कच- (सं० पु०) कचते शोभते शिरसि, कच पदाद्वय्।  
१ केश, बाल। २ शृङ्ग व्रण, सूखा जखम। ३ मेघ,  
बादल। ४ बन्ध, पट्टी, लपेट। ५ शोभा, ज्वलन्ती।  
६ बालक, बच्चा। ७ दत्त, बहडा। ८ परिच्छेदका  
छोर, पोशाकका किनारा। ९ हृदयतिपुत्र।  
महाभारतमें कचका चरित्र इस प्रकार वर्णित है—

देवासुरयुद्धके समय देवनिहत असुरकी दैत्यगुरु  
शुक्राचार्य सञ्जीवनी विद्याके बचसे फिर जिला लेते  
थे। देवगुरु हृदयतिमें यह विद्या न रहनेसे देवगणने  
पत्यन्त भीत हो गुरुपुत्र कचकी शुक्राचार्यसे यह  
विद्या सीखनेके लिये अनुरोध किया। कच भी  
देवकार्य साधनके लिये शुक्राचार्यका गिण्यत्व ग्रहण  
कर निरतिशय भक्तिसे सेवामें लगे थे। क्रूरमति  
असुरोंने कचकी अभिप्राय समझ क्रमशः दो बार बार  
हत्या। शुक्रकन्या देवयानीने खेदवश पितासे अनुरोध  
कर उन्हें दोनों बार जिलाया था। तीसरे बार दैत्यानि  
कचका देह खण्ड-खण्ड कर मयक साथ शुक्राचार्यकी  
शिक्षा दिया। उस समय भी देवयानी उनके जीवनके  
लिये पितासे पत्यन्त अनुरोध करने लगीं। शुक्राचार्यने  
कन्याकी अनुरोधसे उन्हें जितानेकी इच्छा कर  
पूछा था—कच कहाँ हो। कचने—उदरकी भीतरसे  
अपना उच्छ्वास बताया। फिर शुक्राचार्यने निरुपाय  
हो कहा था—कचकी बचानेमें हमें मरना पड़ेगा,  
नतुवा उदरसे वह कैसे बाहर निकलेगा। देवयानीने

उत्तर दिया—दोनोंका विच्छेद मेरे लिये कष्टदायक  
है; इस लिये वही विधान कीजिये, जिसमें दोनोंका  
प्राण बचे। फिर शुक्राचार्य बोल उठे—कच। तुम  
देवयानीका खेदक्षाम कर सिद्ध बन गये हो; हम  
तुम्हें सञ्जीवनी विद्या देते हैं, तुम निकलकर हमें  
जिला देना। इसी प्रकार कचने सञ्जीवनी विद्या  
लाभ कर उदरसे निगमनपूर्वक शुक्रकी जिलाया था।  
अनन्तर देवयानीने उनसे विवाह करना चाहा, किन्तु  
उन्होंने स्वस्थ-दोषसे इनका कहा न माना। देव-  
यानीने उससे व्यथित हो अभिप्राय दिया था—  
तुम्हारी विद्या निष्फल जायेगी। कचने भी देवयानीको  
'तुम चरित्रपक्षी होगी' अभिप्राय दे कहा—तुमने  
अन्याय अभिप्राय दिया है; इसलिये हमारी विद्या  
निष्फल जाते भी किसी सिखायेंगे, उसे इस विद्यामें  
सिद्ध पायेंगे। यही कष्टकर वह देवपुरीकी चर चुये।

(भाग, अध्याय १६ च०)

(हिं० वि०) १० कक्षा। यह शब्द समासमें  
आता है। (पु०) ११ शब्दविशेष, एक आवाज।  
जब कोई चीज किसी चीजमें घुसती, तब 'कच' की  
आवाज निकलती है। कुचलनेका शब्द भी 'कच' ही  
कहाता है।

कचक (हिं० स्त्री०) आवातविशेष, एक चोट।  
दबने या कुचनमें 'कचक' होती है।

कचकच (हिं० पु०) वितण्डावाद, व्यक्तक, विवाचित,  
वातोंका भगडा।

कचकचाना (हिं० क्ति०) १ वाक्युद्ध करना, बातोंका  
भगडा भगाना, कचकच भवाना। २ झूठ होना,  
टाँत पीटना।

कचकड़ (हिं० पु०) १ कच्छपकपाक, कछुवेकी  
खोपड़ी। २ कच्छप वा छेले मत्स्यका पछि, कछुवे  
या—छेले मछनीकी हड्डी। चीना और जपानी  
कचकड़के छिन्नोने बनावते हैं।

कचकडा, कचक देवी।

कचकना (हिं० क्ति०) १ किसी मारी चोकर मोचे  
पड़ना, दुटना, कुचलना। २ आवात लगना, टोकर  
बैठना।



कचपाश, कचप देवी।

कचपेन्द्रिया (हिं० वि०) १ चम्रोदतल, जिसके कच्चा पेदा रहे। २ हीनमति, जटपटांग बननेवाला, जो बातका पक्का न हो।

कचवची (हिं० स्त्री०) सितारा, बुंदी। स्त्रियां इसे अपने मस्तक और कपोलपर देखानेके लिये लगा लेती हैं। कचवची खूब चमकती है।

कचमाल (सं० पु०) कचं कचवत् कान्तिं मसते धारयति, कच-मल-भण्। धूम, धूमां। कोई कोई 'खतमाल' भी कहता है।

कचरई भसीवा (हिं० पु०) भसीवेका एक रंग। इसमें हरेरी रहता है। कचरई भसीवेको लोग अधिकार्थ सुगन्धके लिये पसन्द करते हैं। धनी व्यक्ति इसी रंगका भित्तवा रजाईमें लगाया करते हैं। प्रथमतः वस्त्र हरिद्रासे रंगा जाता है। फिर उसे हरके जोमादिमें डाल देते हैं। अन्तको उसे कशौथमें डुबो अन्तर्क क्षिप्तके जोमादिमें रंगनेसे कचरई भसीवा होता है। इसके तीन भेद हैं—संदलो, खुफियानी और मलयगिरी।

कचरकचर (हिं० पु०) १ वाक्युद्ध, कचकच। २ अपक्व फल खानेका शब्द, जो पावाज, कच्चा फल खानेसे निकलती हो।

कचरकूट (हिं० स्त्री०) मारपीट, लात-जुता।

कचरघाम (सं० पु०) १ कमबख्खड़ा, बेजा लमाव। २ सन्तानसन्ततिकी हृष्टि, बीलादकी बढ़ती। ३ प्रवृत्तता, जोर। ४ मारकूट, पीटपाट।

कचरगा (हिं० स्त्री०) १ पददलित करना, दबाना, रौंदना। २ भली भांति भोजन करना, अच्छीतरह खाना, खूब पेट भरना।

कचरपचर (हिं० पु०) १ गिचपिच, भरा और विगड़ा हुआ। २ कचपच, बतचकर। ३ कौबड़, कांदा।

कचरा, कचरा देवी।

कचराई (हिं० स्त्री०) दवाई, रौंदाई।

कचरिपुफला (सं० स्त्री०) कचस्य रिपुः फलमस्याः, बड़ही। शमीठव, बिड़ुर।

कचरी (हिं० स्त्री०) १. सेधिया, पिहटा। यह एक वेल है। कचड़ीकी भांति कचरी खेतोंमें फैल जाती है। फल चण्डाकार एवं पोतवर्ष रहता और खानेमें बहुतमिठा लगता है। कचरी कचरीकी सुखा कर धीमें भूननेसे अच्छी तरकारी बनती है। इसको सोंठ डालनेसे चटनी भी बहुत अच्छी होती है। इसे युक्तप्रदेशमें कचेनिया कहते हैं। लांग प्रायः इसे सुगन्धके लिये हाथमें रखते और बहुत कम खदते हैं। २ शुष्क कचरीका भाक। ३ रुईका त्रिकोला। ४ छिलकेदार दाल।

कचलम्पट (हिं० वि०) व्याभिकारो, जिनाकार, जो लंगोटेका सच्चा न हो।

कचला (हिं० स्त्री०) १ काली और चिकनी मटो। इससे युक्तप्रदेशमें मजानको कचरी दोवार उठाया जाती है। यह मटो बहुत मजबूत होती और पागो पड़ने भी अपना गुण नहीं खोती। २ कौबड़, कांदा।

कचलू (हिं० पु०) हवविशेष, एक पेड़। यह पावंत्य वृक्ष अनेक प्रकारका होता है। भारतवर्षमें इसके चादह भेद पाये जाते हैं। काष्ठ समान रहने भी पत्रोंमें भेद पड़ता है। काष्ठ मृत्त, कठोर तथा आवर्तयुक्त निकलता है। यत्नानि पूर्व हिमानपर ५००० से ८००० फीट ऊंचे तक कचलू मिलता है। यह अति सुन्दर वृक्ष है। मिशिरमें पतभार होता है। मशोन पत्र वसन्तसे पड़ले हो फूट जाते हैं। इसके तख्ते मजान और चन्दूक तैयार करनेमें लगते हैं।

कचलोदा (हिं० पु०) कच्चा लोदा, कचे चाटिका पेड़ा।

कचलोम (हिं० पु०) लवणविशेष, किसी क्षिप्तकी नमक। यह कचलोको मटोंमें जड़े हुये चारों तरफ तैयार किया जाता है। कचलोम जन्ममें जलद नहीं घुलता।

कचलोहा (हिं० पु०) १ कच्चा लोहा। २ टोखा प्रहार, पधरा वार, मलगनेवाला हाथ। (स्त्री०) कचलोही।

कचलोह (हिं० पु०) मचसे छूटनेवाला पानी, जो पगला जलूमध पड़ता हो।

कचवांसी (हिं० स्त्री०) खेतकी एक नाव । २०  
कचवांसीकी एक सिखानी होती है ।

कचवाट (हिं० स्त्री०) १ विराम, उखाट । २ घुषा,  
परतप, छिद्र ।

कचवाही (हिं० स्त्री०) १ न्यायान्वय, अदामत ।  
२ कार्यान्वय, कारग्रामा । ३ टफ़्फ़र, आकिस । ४ राज-  
भमा, दरबार । ५ गोछी, यारोंकी मज्जिम, लमघट ।  
कचवदा (सं० पु०) कचानां वस्तुः समृद्धः, १-तत् ।  
किममृद्ध, बालोंका गुच्छा ।

कचा (सं० स्त्री०) कच्यते कच्यते शृङ्गनादिभिरिति  
श्रियः, कच-कच्-टाप् । १ हस्तिनी, हथिनी । २ गोमा,  
गु, बसुरती । ३ मन्थिप्युति, ओठकी छट । ४ दण्ड,  
भङ्गा । ५ यष्टि, छडी । ६ लघ्विश्रिय, एक घास ।

कचाई (हिं० स्त्री०) १ कचापन, न एकनेकी छायात ।  
२ अनुभव-राहित्य, मातलबेकारी ।

कचाकचि (सं० ध्व०) कचेपु कचेपु शरीरत्वा  
प्रवृत्तां युद्धम्, कचोच्चारं इच् पूर्वटोछंघ । अपरस्पर  
केगाकर्तृपूरक युद्ध, लडाओटो । २ विवाद, झगडा ।

कचाकु (सं० स्त्री०) कच इव चकति वस्तुं गच्छति,  
कच-चक्-कन् । १ दुःशील, बदमिजाज । २ पसप्रा,  
नापाविज-घरदायत । (पु०) ३ छप, माँघ ।

कचाभित (सं० स्त्री०) कचेः चाधुनायितकेगैराचित्य  
व्याप्तः, १-तत् । १ चमत्कृत केग द्वारा व्याप्त, जिसे  
उल्लिखन रहीं ।

कचाट्टर (सं० पु०) कचवत् निष्ठ इव फटति शून्ये  
भ्रमति, कच-चट-ठरच । पक्षिविग्रेय, एक चिहिया ।  
हमका मंजुत पर्याय गितिकण्ड, दास्यद और काल-  
मह है ।

कचाना (हिं० स्त्री०) कचे पड़ना, हार घेठना,  
हिरन होना ।

कचामोद (हिं० स्त्री०) कचामोद, कचामोद

कचार (हिं० पु०) तटस्थ जन, किमारेका पानी ।  
कचारमें कीचड़ बहुत रहता और बबूना पड़ता है ।  
हमपर नौका भी नहीं चलती ।

कचाम् (हिं० पु०) १ गुह्या, बंटा । २ पाद-  
विग्रेय, एक पाट । कचासे कचे पान् पाट नामक  
मिर्च मिमाकार खानेमें कचाम् कहलाते हैं । चमरुद,  
ककडो, खीरा चमुरके छोटे छोटे टुकड़े नामक-  
मिर्च और मसानेके साथ बनाकर पानेमें भी कचाम्  
ही कहे जाते हैं ।

कचावट (सं० स्त्री०) आमकी एक गुटार । कचे  
आमकी कूटपीस चमावटकी भांति जमानेमें यह  
तैयार होती है ।

कचाय, कचार देखो ।

कचिया (हिं० स्त्री०) चंभिया, काटनेका एक योगार ।

कचियाना (हिं० स्त्री०) १ उताय होना, हिरन  
होना, हार मान जाना । २ भयभीत होना, जोड़-  
खाना । ३ लज्जा मानना, शर्मिन्दा होना, सज्जना ।

कचिरो (हिं० स्त्री०) हचविग्रेय, एक पेड़ । (Arum  
fornicatum) यह कचुजातीय वृक्ष है । पुष्करिणीके  
तीर कचिरो देव पड़तो है ।



मध्यभागमें हन्तसे मिला जाते हैं। पत्तों पर चारों ओर कोणविग्रित होता है। कसु फूलकी भांति यह भी त्रिजातीय है। फूलका छंठल ऊपरी भागपर क्रमशः मोटा पड़ते जाता है। फूलका वहिर्वावरण छंठलकी तरह समान रहता है। इसमें दो-तीन बीज उत्पन्न होते हैं।

कची (सं० स्त्री०) कुचायिवीज, एक तुल्यम्।

कचीची (हिं० स्त्री०) १ क्षत्तिका मचल, कचपविया।

२ दंष्ट्रा, दाढ़। किचकिचानेकी 'कचीची बटना' और दांत बैठ जानेकी 'कचीची बंधना' कहते हैं।

कसु (सं० स्त्री०) कन्दविशेष, सुइया, भरवी। (Colocasia antiquorum) यह भेदक, गुरु, कटु, पिच्छिल और श्याम, वायु एवं पित्तकारक होती है। अतिशयस्त्रिंशत्तमे मत्तसे दुर्गोत्सवकी अवधिकांमें कसु परिगणित है।

कसुमें फूल लगता, किन्तु फल नहीं पड़ता; इसीसे बीजमें चङ्कुरका अभाव रहता है। पुरातन हथ निकास डालनेपर मट्टीमें जो रेशेदार लड़ वचती, उसीसे चङ्कुरोत्पत्ति चलती है। हथ न निकालते भी चङ्कुर आता, किन्तु फल पड़ जाता है। यही चङ्कुर पोदकर लगा देते हैं। छटि होनेसे ही चङ्कुर फूटता है। पुरातन कसुका सुख चार या छह इंच परिमाण काट छांट कर लगा सकते हैं। यह स्थान अपने घरमें इसीप्रकार दो-चार हथ बनाया करते हैं। फटे-छटे चङ्कुरको कसु बहुत बड़ी होती है। कसुकी क्षति करनेवालोंके लिये मूलका बीज लगाना ही युक्ति-सङ्गत है। खेत गहरा जोतना पड़ता है। क्योंकि मट्टी जितनी ही दूरतक बनी-बुनी रहेगी, कसु उतनी ही बड़ी निकलेगी। इसकी जगह कुदालसे मट्टी खोद लेना अच्छा है। मट्टीकी बारीक बना लेना और घास-फूस फेंका देना चाहिये। फिर खेत-पर मट्टी चलायी और दो फीट या छेड़ हाथके अन्तर चङ्कुरकी कतार लगायी जाती है। प्रत्येक चङ्कुरके मध्य भी दो फीट या छेड़ हाथका अन्तर रहना आवश्यक है। चङ्कुर प्रति सुद्रे होते भी लगाया जा सकता है। खेतकी नियत परिष्कार और हथका

आधार बीच बीच प्रत्येक कर देना उचित है। खाकको खाद अच्छी रहती, क्योंकि उससे कसु खूब बढ़ती है। किन्तु पत्थरके कोयलेकी खाक हथकी बना देती है। इससे उसको कसुके खेतमें नहीं डालते। काष्ठ, लकड़, लता, पत्त, चावजंजा और गोमय जना खाक बना लेना चाहिये। कसु गोबर या दूसरी खाद देनेसे यह अधिक नहीं बढ़ती और खानेमें किन-किनी पड़ती है। इस लिये ऐसी खाद डालनेसे कोई फल नहीं मिलता। नदी किनारे कसु लगानेसे बहुत लंबी होती है। इसीसे पल्लोपाममें सुन्दरियो या नासे किनारे यह स्थान इसे लगा देते हैं। घरमें लगानेके लिये एक हाथ गहरा और एक हाथ चौड़ा गड्ढा खोदे। फिर उसमें मट्टी और खाक भर एक चङ्कुर लगा दे। इसी प्रकार कई हथ लगा सकते हैं।

इसे दो वत्सर बाद खोदते हैं। चार पाँच वर्ष पीछे खोदनेसे बड़ी कसु नहीं निकलती।

इससे कितने ही व्यञ्जन प्रति सुन्दर बनते हैं। कसुको उबाल और काल निकासकर पाते हैं। यह भारत, सिङ्गल, सुमात्रा और मलयके कितने ही देशोंमें स्थायित्व उत्पन्न होती है। कसुका रस रक्तस्थान है। उषानी और लोनी कसुकी तरकारी बहुत अच्छी बनती है। पत्तियोंको भी उबाल कर खा सकते हैं। किन्तु किनकिनाहट निकालनेके लिये अच्छे तरह उबाल लेना चाहिये। कसु भूनकर भी गायी जाती है।

कसुका (हिं० पुं०) बीड़े पे' देका कटोरा।

कचूर (हिं० पुं०) १ जंगली गुलर। २ कुचला, एक प्रकार। यह कुचलकर बनाया जाता है। ३ कुचलो हुयी चीज़।

कचूर (हिं० पुं०) १ कचूर। यह इनदीके पोदे-जैसा देख पड़ता, किन्तु मूलमें भेद रहता, जो मेल लगता और कचूरकी भांति सहकता है। कचूर समय भारतवर्षमें लगाया और हिमालयकी तराईमें खायं पाया जाता है। २ कटोरा।

कचूरक (सं० स्त्री०) कचूर, हरयां।



कचैरा ( हिं० पु० ) कांचका काम बनानेवाला ।

कचैरक ( सं० पु० ) कशेरु, एक पौदा ।

कचैर ( सं० स्त्री० ) कच्यते वध्यते अनेन, कच-  
यस्य । सेख्यपत्र बोधनेका सूत्र, जिस डोरसे हाथकी  
लिखी किताब बांधी जाये ।

कचैररी, कचैरी देखो ।

कचोना ( हिं० क्रि० ) कचसे जुमाना, धंसा देना ।

कचोर ( सं० पु० ) कचूर, कचूर ।

कचोरा ( सं० स्त्री० ) १ शालिधान्यविशेष, किछो  
किछमका चावल । यह पित्तको नाश करती है ।

( चरित्रचिन्ता ) ( हिं० पु० ) २ कटोरा, प्याला ।

कचौरी ( हिं० स्त्री० ) कटौरी, प्याली ।

कचोड़ी, कचौरी देखो ।

कचौरी ( हिं० स्त्री० ) पिष्टकविशेष, दाल-पूड़ी ।

संस्कृतमें इसे पूरिका कहते हैं । भावप्रकाशके मतसे  
उड़दकी भिंगोकर पीसी हुई दालमें लवण, आर्द्रक  
एवं चिड़ु, मिला और उसे आटेके पेड़े बीच लगा  
पूड़ीकी तरह बेल लेते हैं । फिर उपरोक्त द्रव्य छत  
वा तैलमें अच्छीतरह तलनेसे कचौरी बनती है ।  
छोटो कचौरी दाल भरा आटेका पेड़ा हो वो या तेलमें  
पकानेसे तैयार हो जाती है । तेलकी कचौरी सुख-  
रोचक, मधुर, शुक, स्निग्ध, बलकारक, रक्तपित्त-  
जनक, पाकमें उष्ण और वायु तथा चक्षुके तैलकी  
नाश करनेवाली है । किन्तु अनेक मनुष्य इसे खाकर  
बीमार पड़ जाते हैं । छतपक कचौरी चक्षुके लिये  
हितकारक, रक्तपित्तनाशक और तैलपककी भांति  
अन्यान्य गुणविशिष्ट है ।

कचट ( सं० स्त्री० ) कु कुक्षितं चटति, कु-टप्-अच्  
वाहलवात् कोः कदादेशः । जलपिप्पली, पानीकी  
पोपल ।

कचर ( सं० त्रि० ) कु कुक्षितं चरति, कु-चर-अच्  
कोः कदादेशः । १ मलिन, मैला । २ कुत्सित,  
खराब । ( स्त्री० ) केन जलेन चर्यते भयद्वयते ।  
३ तक्र, मठा । ४ दुष्ट, बदमाश ।

कचा ( हिं० वि० ) १ अपक, जो पका न हो । गर्म-  
पात होनेको 'कचा जाना' और सार बैठनेको 'कचा

खाना' कहते हैं । २ अन्नमें न पका हुआ, जिसको  
अच्छी खांच खाने न हो । ३ अपरिपुष्ट, जो मजबूत  
न पड़ा हो । ४ अप्रसृत, जो तैयार न हो । ५ अ-  
संस्कृत, साफ न किया हुआ । ६ अस्थायी, कमजोर ।  
७ अयुक्त, सुवृत्त न रखनेवाला । ८ न्यून, कम ।  
९ अपूर्ण, जो काट-काटकी जगह रखता हो । १० नियम-  
रहित, बेकायदा । ११ आर्द्र सृत्तिका-निर्मित, गीली  
मटोका बना हुआ । १२ अपठ, जो होशियार न  
हो । १३ अनभ्यस्त, महाबरा न रखनेवाला । ( पु० )  
१४ धागा, डोम, दूर-दूरकी सोवन । १५ खाका,  
टांचा । १६ मसविदा । १७ जखोंका जोड़, चौं ।  
१८ दंष्ट्रा, दाढ़ । १९ तामिका एक छोटा सिक्का ।  
२० पैसा, चाचा पैसा । २१ एक दिनके लिये एक  
रुपयेका सूद । न चाँटे हुये कागज, तथा रजिष्टरी  
न की हुयी दस्तावेजकी 'कचा कागज' झूठे चलने-  
सितारके कामकी 'कचा काम', खान एवं गरमकी  
'कचा कोढ़', झूठे गोटेकी 'कचा गोटा', पावमें न  
पके हुये तथा खेर चढ़ेकी 'कचा चढ़ा', सखे वृत्तान्त  
की 'कचा चिड़ा', पानीमें न बुझी कलीकी 'कचा  
चूना', सूखे, हठो या पीछे पड़नेवाले पादमीकी 'कचा  
जिन', रंगिने जोड़की 'कचा जोड़', या 'कचा टांका',  
कते और न बटे तामेकी, 'कचा तामा' या 'कचा  
धागा', नीलबरीकी 'कचा नील' ( कोठीमें मथने पीछे  
गोंद मिला डोजमें नील छाड़ते हैं । नील नीचे बैठ  
जानेपर पानीको डोजके छेदसे निकाल देते हैं । फिर  
नीलका जमा हुआ माठ या कोचड़ कपड़ेमें बांध  
नीचेके गल्लेमें रातभर लटकया जाता है । सबेरे  
उसे राखपर फेंका धूपमें सुखानेसे कचा-नील बनता  
है । ) न चलनेवाले पैसैको 'कचा पैसा', रेशमके  
न बटे डोरे या कचप न किये हुये रेशमी कपड़ेको  
'कचा बाना', झूठे गोटे-पट्टेकी 'कचा मास', धुंधला  
देख पड़नेको 'कचा मोतियाविंद', उबालो बोनो  
मटोके खारे पानीमें जमनेवालीको 'कचा शोरा' और  
काममें अच्छी तरह न चलनेवालीको 'कचा हाथ'  
कहते हैं ।

कश्चित् ( सं० पद्य० ) काम्यते, काम-विच्, चीयते

निधीयते, चि-किप् पृषोदरादित्वात् मस्य दत्वम्; कश्च चिच्च द्वयोः समाहार इति वा। १ प्रय, क्या, कीन, क्यों। २ हर्ष, खुशी। ३ मङ्गल, भलाई। ४ स्वीय अभिलाष प्रकाश, अपनी चाहिशका इच्छार।

कश्चिदध्याय (सं० पु०) महाभारतका एक अध्याय। इसमें भस्मीकरणसे नारदने राजनीतिका उपदेश दिया है। (भारत, स० ५ ख०)

कश्ची (हिं० स्त्री०) १ न पक्षी हुयी, जो पक्षी न हो। २ खुरी, दाल-भात या रोटी दाल। जो रसोई ची या दूधमें पकायी नहीं जाती, वह 'कश्ची' कहलाती है। पुरी-तरकारीका नाम 'पक्षी' है। कान्यकुब्जादि प्राञ्च्य अपने सम्बन्धियोंके प्रतिरिक्त दूसरेके हाथकी कश्ची नहीं खाते। अधिक दिन न चलनेवाले काम-धामको 'कश्ची भसमी', न खुली कली या प्रपाम-योजना एवं पुरुषसे समागम न करनेवाली स्त्रीको 'कश्ची कली', न पकनेवाला या प्राची राह चल चुकने वाली बीसरकी गोटीको 'कश्ची गोटी', न पकी हुयी महीकी गोलीको 'कश्ची गोली', दिनके ६०वें भाग या २४ मिनटको 'कश्ची घड़ी', खुरी चांदीको 'कश्ची चांदी', गलाकर खूब साफ न की हुई शकरकी 'कश्ची चीनी', ठीक तीरसे न बिके हुये मालके लेन-देनकी बहीको 'कश्ची जाकड़', सरकारी कानूनके विरुद्ध घराज रीतिमें सादे कागजपर उतारी हुयी नकल-को 'कश्ची नकल', पक्षी पेशीको 'कश्ची पेशी', किसी दुकान या कारखानेका नादुरस्त हिसाब रखनेवाली बहीको 'कश्ची बही', पक्षी मितेसे पहली पहने या रुपये मिलने तथा चुकनेवाले दिनकी 'कश्ची मिति', केवल जलसे बने भोजनकी 'कश्ची रसोयी', प्रतिदिनके आयव्यय लिखे जानेकी बहीको 'कश्ची रोकड़', राबसे लूरी निकासकर बनायी हुयी चीनीको 'कश्ची शकर', ककड़-पत्तारसे न पिटो हुयी सड़कको 'कश्ची सड़क' और दूर दूर डोम रखनेवाली सिलाईकी 'कश्ची सिलाई' कहते हैं। किताबके सब धरमें एकही साथ सीये जानेका नाम भी कश्ची सलाई ही है।

कश्चू (हिं० स्त्री०) कश्चु; परवी, मुड्या।

कश्चूर (सं० पु०) कश्चु नामक कन्दमाक, मुड्या, बंहा।

कश्चे-पक्षे दिन (हिं० पु०) षष्ठके सम्बिका समय, मौसम सबदील होनेका वक्त। इन दिनों स्वल्प प्राहार करने और ब्रह्मचारी रश्चनेसे मनुष्य सुख पाता है।

कश्चे-बन्धे (हिं० पु०) छोटे-छोटे सड़के, बहुतसे बन्धे।

कश्चोर (सं० स्त्री०) गठी, कश्चूर।

कच्छ (सं० पु०) केन जलेन क्षृणाति दीप्यते क्षायते वा, क-क्षे-क। शालीश्रुतम् कः। वा १। १ जलका निकटवर्ती स्थान, कक्षार, पानेके पासकी जगह। २ नदी वा सरोवरका प्रान्तभाग, दरया या तालाबके सामनेका मैदान। ३ नदी पर्वतादिका समीपस्थान, दरया पहाड़ वगैरहका पड़ोस। ४ गौकाका भव-यवविशेष, नावका एक हिस्सा। ५ परिधानवस्त्रका पञ्चल, धोतीकी काष्ठ। ६ तुलकद्रुम, तुलका पेड़। ७ नन्दीवृक्ष। ८ जलमय देश वा स्थान, पानेमें भरी हुई जगह। ९ प्राचीन राजधानीविशेष, एक पुराना शहर। १० कच्छपका भवयवविशेष, कजुवेका एक हिस्सा। (वि०) केन जलेन क्षृणाति दीप्यते वा, क्षृ-ड। ११ जलप्राप्तीय, पानीको जगहसे सरोकार रखनेवाला।

"नदी कश्चीर्ध्वं काचक्षुषि, नै जलसन्निभम्।" (भारत, स० १० ख०)

(हिं०) १२ कन्दोविशेष, एक छप्पय। इसमें ५१ गुद, ४६ लघु, ८८ वर्ष और १५२ मासा रहती हैं। १३ कच्छप, कजुवा।

१४ भारतवर्षके पश्चिम प्रान्तका समुद्रतीरवर्ती एक प्रदेश। यह अक्षा० २२°४६' से २४° ०' और देशा० ६८° २२' से ७१° १' पू०के मध्य अवस्थित है। इससे उत्तरपूर्व एवं दक्षिणपूर्व रण, दक्षिण कच्छका उप-सागर, पश्चिम अरब-सागर और उत्तरपश्चिम कोरी या कच्छपत नदी है।

रण या जली हुयो उपरभूमिमें सड़ियेका होप, पच्छिम और बसो नामक भूभाग विद्यमान है।

कच्छके प्रधान विभाग यह हैं—१ पावर, २ गरद, पयक; ३ भवडासा, ४ कुपु, ५ कांठा वा काठी, ६ मियाणी एवं ७ बागड़।

पावर विभागमें ही पड़ले काठी जातिकी राजधानी रही। यह स्थान देघमें ५० एवं प्रथमें २० मील विस्तृत और रणके दक्षिण किनारे अवस्थित है। इसकी दक्षिण सीमापर चावड़ गिरिमाळा है। पावरका प्रधान नगर मुज है। १६०५ संवत्की खज्जानि उसे स्थापित किया था।

जाम चवड़ाके नामानुसार चवड़ासा विभागका नाम पड़ा है। यह विभाग चावड़ गिरिमाळा और चरवसागरके मध्य अवस्थित है। मियाणी विभाग पावरसे पूर्व लगता है। मौना जातिसे इस स्थानका यह नाम पड़ा है।

प्राजकल जिसे लोग कच्छ उपसागर उसीको पड़ले काठी कहते थे, पाद्याल्य भौगोलिक टोलेमिने उक्त उपसागरका नाम रखा। (Ptolemy's Geog. Bk. VII. Ch. I.)

पेरिप्लसने बारक नामसे इस उपसागरका उल्लेख किया है। उसकी वर्णनासे समझ पड़ता, कि कच्छमें बारक नामक एक द्वीप रहा। कोई कोई स्थानीय कछामण्डलकी पेरिप्लस-वर्णित बारक द्वीप मानते हैं। किन्तु हमारी विवेचनामें बारक द्वारका शब्दका अपभ्रंश मात्र है। रामाधी भाषामें द्वारकाके स्थानपर बारववा या वरववा शब्द चलता है। प्राजकल भी जैन वणिक कहीं कहीं मागधी भाषा बोलते हैं। अतएव बोध होता—पेरिप्लसने किसी वणिकसे सम्मान ले बारक नामसे द्वारका उल्लेख किया है।

टोलेमि-वर्णित उक्त कांथी या काठी उपसागरके नामसे ही कच्छ प्रदेशके कांठी विभागका नाम चला है।

इतिहास—कच्छ प्रदेशका प्राचीन विवरण नहीं मिलता। महाभारतमें इस जनपदका नाममात्र लिखा है। (मारा भीष्म २५६, जैन इतिहास १५६८)

सोनोमें प्रवाद है—पड़ले कच्छ प्रदेशका तेज नामक प्राचीन नगर सुराष्ट्र राज्यकी राजधानी रहा। तेजकण नामक एक राजाने उसे बसाया था। (Asiatic Researches, Vol. IX. 231.) विलसन साहबके मतमें द्राघो यचित सिगर्तिन (खोर्गर्त)

नामक जनपदका वर्तमान नाम कच्छ है। (Ariana Antiquae, 2-2) ई०से ११४ वर्ष पड़ले मिनान्दरने यह स्थान जीता था।

ई०से ६०में चीना परित्राजक युप्रन-सुयन यहां आकर दयावतारके अनेक मन्दिर देख गये थे। उन्होंने लिखा—यह जनपद मालवराज्यके अन्तर्गत आता और यहां अनेक धनवानोंका वास पाया जाता है।

पूर्वकासको कच्छ देशमें काठी और चहोर जातिका प्राधान्य रहा। उसी समय काठियौनि पावरगढ़में दुर्ग दुर्ग बनाया था। कच्छके दक्षिण भाग पर्यन्त उनका अधिकार रहा। प्रव्रतत्वविदोंने काठियोंको शक या जिस् जातिकी एक शाखा ठहराया है। सम्राटोंके बढ़नेपर काठियोंका प्रताप घटा। फिर ई०के १५५५ शताब्द आम चवड़ेने काठियोंकी एक-कालही कच्छ प्रदेशसे भगा दिया।

तारीख्-उस्-सिन्द नामक मुसलमानों इतिहासमें लिखा है—

खाकीरके मरनेसे देशके सब मान्यमण्य सन्थान् व्यक्ति अमरके पुत्र एवं पृथुके पौत्र दूदाको सिंहासन देनेपर एकमत बने। अमियेकका कार्य सम्पन्न हुआ था। किसी दिन सिंघार नामक एक जमीन्दार कर देने आये। दूदासे उनका आलाप परिचय हुआ। सिंघारने दूदाको भय देखा कहा था—कच्छ प्रदेशकी शम्भा जाति स्थान स्थान पर आक्रमण करनेको आती बढ़ रही है, अब आपकी तैयारी हो जाना चाहिये। संवाद मिलते ही दूदा सचेतन कच्छ प्रदेश पहुँचे। यहांके सब लोगोंने उनकी वश्या मानी थी। फिर शम्भा जातीय साषा नामक एक व्यक्ति राजदूतके रूपमें कच्छके घोटकादि उपहार ले दूदाकी राजसभामें उपस्थित हुये। दूदाने धन, रत्न और वस्त्रादि द्वारा राजदूतका सम्मान रखा (ई० १२५५ गगान्)।

शम्भा या जाडेला राजा अपनेकी श्रीकण्ठ और यादवगणके बंधुधर बताते हैं। उनकी बंशावली पढ़नेसे समझते—श्रीकण्ठपुत्र नरकाधुरके पुत्र वाषाधुर और उनके बंधुधर गोवितपुर तथा मिसरमें

राजत्व करते थे। इसी वंशके जाम तरपति नामक एक राजकुमार तीन भार्योंको साथ ले मिसरसे भाग पाये। उन्होंने उमीर नामक बन्दरमें लंगर गिराया और सुराष्ट्रके शोथम् नामक गिरिपर अवस्थान लगाया था। इसी जगह उनके ज्येष्ठभ्राता गजपति सुसनमान हो गये। कनिष्ठ भ्राता गजपति बहुत दिन सुराष्ट्रमें रहे। आज भी सुराष्ट्रके चूड़ागम्भा-वंशीय अपनेकी गजपतिका वंशधर बताते हैं।

तरपति एक वीरपुरुष रहे। उन्होंने फीरोजशाहकी मार खम्बान अधिकार किया था। उन्होंने पुत्र शम्भारहे। यही शम्भारोंके पादिपुरुष हैं। शम्भाने मकवान्नी जातिकी कृतुवा नाम्नी एक सुन्दरीसे विवाह किया था। उन्होंने गर्भसे तीजकरनने जन्म लिया। तीजकरनने प्रसार-रमणीकी पालिशग्रहण किया था। इन्हीं रमणीसे उनके जामनेत नामक एक पुत्र उत्पन्न हुये। जामनेत बड़े वीरपुरुष रहे। किसी राठौर कन्यासे उन्होंने अपना विवाह किया, जिनके गर्भसे नौतियारने जन्म लिया। नौतियारने पुत्रका नाम जाम उधरावद था। उधरावदके प्रवीर जाम भवडा रहे। इन्हीं कच्छका भवडासा विभाग स्थापन किया। इनके पुत्र जामलाखियार रहे। वह सिन्धु प्रदेशके नगरसामई नामक स्थानमें राजत्व करते थे। लाखियारने एक शोधी-रमणीकी रूपसे सुध हो अपनी बहुलक्ष्मी बनाया। उनके पुत्र लाखा-सुरारा (घोडार) रहे। लाखाके पुत्रका नाम उनड था। उनडकी दो कनिष्ठ भ्राता रहे—मोड़ और मनाई। गम्भा जातीय सत्त कई व्यक्ति सिन्धुप्रदेशमें एक-एक नायक थे। उनडकी पिताका राज्य मिला, जो उनके दोनों भाइयोंकी अच्छा न लगा। दोनोंने मिलकर उन्हें मार डाला था। किन्तु देशके सब लोग उनसे विरक्त हुये, इसीसे मोड़ और मनाई कच्छ प्रदेशकी भंगे। उस समय दोनों भाइयोंके कुटुम्बीय वागमथावड़ा कच्छप्रदेशमें राजत्व करते थे। दोनोंने वागम थावड़ेकी भी यसासय पट्टा और सात प्रकारके ससेकीकी अपने वयमें ला कच्छप्रदेश दबा लिया। पाँच पुरुषोंके राजत्व बाद इस वंशका जोष हुआ।

सत्त पाँच राजावर्गमें ४४ लाखा फुजानीका नाम ही कच्छ-प्रदेशमें प्रसिद्ध है। वह ई०के १४४४ गताब्दको विद्यमान रहे। काठियावाड़के पादकोट नामक स्थानमें लाखा फुजानीकी पालिया पड़ी है।

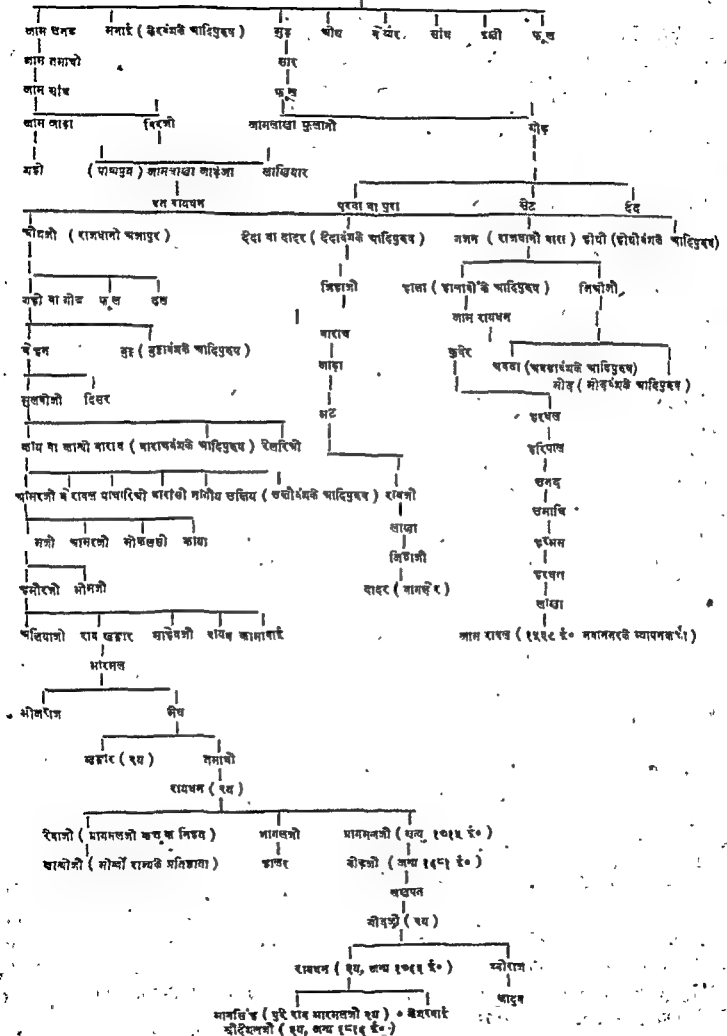
१५०६ विक्रमाब्दको माखा फुजानी खेड़कोटमें राजत्व करते थे। उन्होंने काठीजातिकी दूरा काठियावाड़का कियदेश जीत लिया। दोई कछता—पादि-कोटमें लाखा फुजानीका मृत्यु हुआ। फिर दूधरोके कथानुसार उनके जामाताने ही उन्हें मार डाला था। १४०१ संवत्को फुजानीके आतुष्य पुवगहानी राजा बने। किन्तु अल्प दिनके राजत्व बाद उसके हाथसे वह मारे गये। उसकी पत्नी राजी विधवा हुई। राजीने लाखा जामको कच्छदेश मोला भेजा। लाखा जाम बिरजीके पुत्र और जाम लाड़ाके पोष्यपुत्र थे। १४०६ संवत्को उन्हें विंढावन मिला। फिर साँवके पुत्र लाड़ा राजा हुये। उन्होंने लाड़ेजा वंगकी उत्पत्ति है। प्रायः १४२१ संवत्को लाखाके पुत्र रतरायधन राजा बने। उनके चार पुत्र रहे, जिनमें तृतीय पुत्र गजन कच्छका पश्चिमांगस्थित बारा नामक भूखण्ड शासन करते थे।

१५२५ ई०की भीमजीके पुत्र जाम हमोरजीने शासनका भार उठाया। किन्तु १५३० ई०की वह जाम बारन हालके हाथों मारे गये। बारन हालकी भी देग छोड़ भागना पड़ा था। उन्होंने काठियावाड़ जा नवानगरको पत्तन बनाया।

सत्त घटनासे पूर्व ही हमोरजीके पुत्र पंगार जन्म-भूमि छोड़ पञ्चमदावाद भाग गये थे। वहाँ महमूद शाहके साहाय्यसे १५४८ ई० (१६०५ संवत्)की उन्होंने पिछराव्ये उद्धार किया। भुज नगरमें उनकी राजधानी स्थापित हुई थी। फिर पाँच राजावर्गके राजत्व बाद महाराव श्रीप्रागमसजो राजा बने। उन्होंने राज्यप्रारम्भसे अपने भ्राता बेरजीकी मार डाला था। प्रागमसजोके दूधरे भ्राता भागसजोने कीतारा, कोटरो, नंगर, मोदरा प्रभृति नगर दबाये। पवड़ा-सेकी लाड़ेजा जातिके हलासी रनों नामसजोके बंधु, घर हैं। लाड़ेजावंशीय भाजा मापावोंमें विभक्त हैं।

# कच्छको जाड़े जा-राजवंशावली ।

साखा गोड़ारा ।



बहुतेरे इसलामधर्म ग्रहण किया है। किन्तु पुर्वातुकमसे जो उपाधि चला आया, उसे किसीने नहीं गंवाया। ६१४ ईसमें काफे आराधनायकी देखो।

कच्छ प्रदेशमें काठो, चहौर और जाड़ेजा वंशको छोड़ निम्नलिखित जातियां भी रहती हैं—कोली, सोना, चावड़ा, बघेला राजपूत, भंसांली, ओहना या लवाना, संहार, भाटिया, बारड़, भंविदा, ह्मगर, दल, भाला, खांडागरा, मायड़ा, कनडे, पगवा, पेडा, मोकलसी, मोका, रैलडिया, बरंगसी और बरारी राजपूत। ब्राह्मणोंमें ओदीच, सारस्वत, पुकरना, नागर, सचोरा, योमालो, गिरनाड़ा, मोड़ और राजगुरु अधिक हैं। सिन्धी, कंदौई, मोनी, सराठिया, मूड़ और बारड़ा नामक वैष्णवसम्प्रदाय मिलते हैं। चारण तीन प्रकारके हैं—कच्छेला, मरुना और तुर्वेल।

कच्छके अनेक ब्राह्मण और राजपूत सुसलमान हो गये हैं। उनमें नाना श्रेणियां चलती हैं। यथा—मेहमन, मोहरा, भागरिया, चागा, भाण्डारी, भडि, दराड़, मंगरिया, घटार, पड़ियार, फूल, राजड़ा, रायमां सेड़ात, देहन, हासीपुत्रा, नारंगपुत्रा, मोड़, हिंमोरा और हिंमोराजा।

आजकल कच्छप्रदेश चंगरेजीके अधिकारमें है।

भूतल—यह प्रदेश गिरि एवं मैदानी है। केवल दक्षिण भागपर सागरप्रान्तमें सर्वरा भूमि पड़ी है। यहाँका एक-एक गिरि स्वतन्त्र है। उनमें कोई पूर्वाभिमुख और कोई पश्चिमाभिमुख चला है। रण किनारे कितनी ही दुर्गम गिरिमांसा खड़ी हैं। इन पर्वतोंमें बिलोरी पत्थर, कोयलेका स्तर, खैटकी मट्टी, खैट और चूना आदि द्रव्य मिलते हैं।

कच्छके दक्षिण भागमें भी पर्वत हैं। यह पर्वत भामन (गिरिके उपादानसे गठित हैं)।

इस प्रदेशमें नदी बिलकुल नहीं। नदीके बदले नाले बहते हैं। वर्षाकालको पारो और जलमय होमपर नालोंमें जन निक्षल समुद्रमें ला गिरता है।

कच्छक (सं० पु०) कच्छ संज्ञायां कन्। तुलक-द्रुम, तुलका पेड़।

कच्छकाण्डन (सं० पु०) पञ्चत्य वृक्षमेव, वीरक-का एक पेड़।

कच्छटिका (सं० स्त्री०) कच्छ कच्छस्थानं प्रकृति प्राप्नोति, कच्छ-घट-पत्र संज्ञायां कन् चत इत्व। कच्छ, लांग, कांछा। इसका संस्कृत पर्याय कच्छ, कांछा, कच्छा, कच्छोटिका और कच्छाटिका है।

कच्छदेश (सं० पु०) देशविशेष। कच्छ देश। कच्छनाग—एक नाग जाति। यह लोग नागा पर्वतमें रहते हैं। नाना देशों।

कच्छप (सं० पु०) कच्छे चतुर्पदे प्रामाणं पाति रक्षति, कच्छं प्रामाणो सुलभस्य टं पातीति वा, कच्छ-या ड। कूर्म, चंगुगुत, ककुषा। इसका संस्कृत पर्याय कूर्म, कमठ, गूढाङ्ग, धरणीधर, कच्छेष्ट, वल्लभावायु, कठिनपृष्ठक, पञ्चसप्त, क्रोडाङ्ग, पञ्चनख, शुद्ध, वीरर और जलगुह्यम् है। वेदमें कच्छपको पक्षुपार कहते हैं। निरुक्तकार यास्कने लिखा है—

“कच्छने प्रायशः कच्छने इत्यसौ न कृपयच्छतीति। कच्छः कच्छं यति कच्छेन पातीति वा कच्छं न विवर्तते वा। कच्छः कच्छं कच्छः। चतुर्पदी नारीकच्छं वल्लभादेव ककुषं तैलं वापते।” (निरुक्त ३।८)

चंगरेजीमें स्थलकच्छपको टोर्टोइस (Tortoise) और समुद्रकच्छपको टर्टल (Turtle) कहते हैं। इसका युरोपीय वैज्ञानिक नाम चेलोनिया (Chelonia) है।

पृथिवीके नाना देशोंमें अनेक प्रकारके कच्छर होते हैं। चरिष्टटन्ने ग्रीक भाषामें तीन प्रकारके कच्छर कहे हैं। यथा—स्थलकच्छप, जलकच्छप और समुद्र-कच्छप। फिर युरोपीय प्राणितत्त्वविदोंने कच्छप-जातिको पाँच श्रेणियोंमें बाँटा है। यथा—स्थल-कच्छप (Testudo), जलकच्छप (Emys), कठिन भावरचयुक्त कच्छप (Chelydos), समुद्रकच्छप (Chelonia) और त्रिकोमल कच्छप (Trionyx)।

फ्रान्सीसी प्राणितत्त्वविद् दुमेरोने कच्छरको इन कई भागोंमें विभक्त किया है; यथा—चारसिङ्ग (Chersites) वा स्थलकच्छप, एलोदियान (Elo-dites) वा जलकच्छप, पोटेमियाण (Potamites)

वा नदीकच्छप और थालसियान (Thalassites) वा समुद्रकच्छप।

सकल कच्छपोंके मुख सर्पादि सरीसृपकी भांति एक अस्थिसे निर्मित होते हैं। किन्तु करोटि मय नासिकी समान नहीं पड़ती।

खलकच्छपका मस्तक चण्डाकार, अधभाग विषम और दोनों क्षुर्वीका व्यवधान कुछ अधिक रहता है। नासिकाका द्विद्व बड़ा और पश्चात् भागपर चपटा पड़ेगा। कलकोटर गोलाकार और हृत् स्वरूप होता है। पार्श्वके कपालका अस्थि पश्चात् केशिकके मध्य भुक्त जाता है। उभय पार्श्वको दो हृत् शृङ्गास्थि पड़ती हैं। इन्हीं दोनोंके मध्य मस्तकके बड़े स्तरास्थिका अंत रहता है।

वच्छपके उत्तमाङ्गमें नासिका अस्थि नहीं होती। सजीव अवस्थापर नासिकाके द्विद्वमें सूक्ष्म पत्रोंकी भांति सकल अस्थि झलकती हैं। नासिकाका अस्थिमय द्विद्व एक और दीर्घ रहता और फलास्थि मायास्थि, हृन्वस्थि तथा दो ललाटास्थिसे बनता है।

जलकच्छपको मस्तक चपटा पड़ जाता है। इसका नलाट समुख विस्तृत होती भी अचके कोटर पर्यन्त नहीं पहुँचता।

कीमल वच्छपका मुख सामने बैठा और पीछे झुका रहता है। इसके पार्श्वकपालका सूत्रास्थि, ललाटका पश्चाद्भाग है। शृङ्गास्थि और गण्डास्थि परस्पर संलग्न है। कीमल कच्छपका मुख चपर वच्छपकी अपेक्षा छोटा, अचकोटर कितना ही लंबा और नासिकाका द्विद्व अति सूक्ष्म होता है।

वच्छपके नीचेका मुखकोण कुम्भोरके मुखकोण जैसा लगता है। किसी किसी प्राणितत्त्ववित्के मतमें यह पक्षीके मुखकोणसे बिलकुल मिलता है। सकल अस्थि पक्षीके अस्थिकी भांति अविकसित रहते हैं।

जलकच्छप मांस्यके विशेष कार्यमें नहीं आता। वह देगके कुछ नीच लोग इस कच्छपको खाते हैं। किन्तु समुद्रकच्छपसे मानवजातिका अनेक उपकार होता है। कोई उसे खाता और कोई अस्थिसे कड़ा बनाता है।

खलकच्छप भी जलमें बहुत प्रसन्न रहते हैं। यह एककालही अधिक जल पी लेते और जीवड़में शरीर सुखे देते हैं। सागरवेष्टित द्वीपसमूहमें खलकच्छप अधिक होते हैं। यह बहु संख्यक एकत्र दल बांध घूमा करते हैं। जहाँ प्रसन्नवप चलता, वही स्थान कच्छपको अच्छा लगता है। यह नाना स्थानोंमें गर्त बना लेते हैं। अधिक पथमें जल न पानेपर उसी गर्तसे जलका सन्धान लगा सकते हैं।

जम महाभारतमें गजकच्छपका सुष्ठु पद विष्मृत हो जाते हैं। किन्तु वर्तमान चाखाम द्वीपके कच्छपका विवरण सुननेसे वह घटना असम्भव समझ नहीं पड़ती। डाहड़न साहबने चाखाम द्वीपमें अति हृदयाकार कच्छप देखा था। फार्किंसेलेगो द्वीपसमूहमें बहुत बड़े-बड़े कच्छप विद्यमान हैं। उनमें एक-एक वच्छपका केवलमात्र मांस वज्जुनमें प्रायः दाईं भग बैठता है। सन्देह करते—एक कच्छपकी सात-आठ पादमी उठा सकते हैं या नहीं। स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषका लाङ्गुल भी लंबा पड़ता है। यह कच्छप जय जल-शून्य स्थानमें रहते या कम पानकार नहीं सकते, तब उचके पत्रोंका रस पिया करते हैं।

जो खलकच्छप ईश्वर प्रथवा ग्रीतल स्थानमें रहते, वह तिल और कटुरसविशिष्ट उचके पत्र चरते हैं। चाखाम द्वीपवासी कहते—स्थानीय कच्छप तीन-चार दिनतक जलके पास रहते, फिर निम्न भूमिको चल पड़ते हैं। किसी किसी स्थानपर खलकच्छपोंकी उष्टिके जल भिन्न चपर समय जल रहनेके लिये नहीं मिलता। फिर भी यह जीते जागते हैं। पथमें पिपासा लगनेपर उक्त द्वीपवासी कच्छप मार खोलसे जल निकाल पी लेते हैं। यह जल अतिपरिष्कार रहता और खानेमें कटु लगता है। वहाँका खलकच्छप प्रत्यह दो कोष चल सकता है। शरत्कालको कच्छपके भिन्नका समय है। इसी समय स्त्री-पुरुष एकत्र होते हैं। पुरुष सुखके आशयमें मत्त हो प्राण छोड़ चिन्ताया करता है। वह कर्कशध्वनि २०० हाव दूरसे सुन पड़ती है। फिर द्वीपवासी समझ जाते—यह कच्छपके डिम्ब प्रसवका समय आया है। बालसे

रे डूबे स्थानमें कच्छपी चण्डे देती, फिर चण्डेपर जल चढ़ा लेती है। पर्वतपर इधर उधर गतमें भी कच्छपी चण्डे दे देती है। चण्डा देखनेमें साफ़ और ८ इञ्चतक बड़ा होता है। एक स्थानमें १८ चण्डे रहते हैं। यह बधिर होती, इसीसे किसीको यातादिकसे पकड़ने पाते देख-सुन नहीं सकते। यह कच्छप प्रायः शताधिक वर्ष जीवित रहता है।

विलकच्छपका स्वभाव अपर कच्छपजातिसे खनम होता है। यह खनकच्छपकी भांति धीरे-धीरे नहीं चलता, किन्तु जल और स्थल दोनोंमें प्रति शीघ्र याता-यात करता है। विलकच्छप केवल श्राकपत्रसे संतुष्ट नहीं रहता, सुविधा सगनेसे जीवजन्तु मत्स्यादि पकड़ ले उदर भरता है। इसका चण्डा प्रायः गोलाकार, शम्बुकादिकी भांति चूर्णीत्पादक आवरणसे आवृण्णादित और वर्षमें खच्छ रहता है। विलकच्छपी भी खोद गतमें चण्डा देती है। सचराचर वृक्ष वेलकी पास ही गतं करती और विशेष सतर्क रहती—गड्ढाकी चोट तो अच्छेपर नहीं पड़ती। यह नाना प्रकार होता है। एसियामें १६, अमेरिकामें १८, युरोपमें २ और अफ्रीकामें १ प्रकारका विलकच्छप मिलता है।

नदीकच्छप सर्वदा ही जलमें रहता, कभी-कभी स्थलपर आ चढ़ता है। यह बहुत बड़ा होता और एक एक वज्रमें पैंतीस साढ़े पैंतीस सेर बैठता है। इसकी खोलका परिमाण साढ़े तेरह इञ्च है। यह जलमें और जलके ऊपर तैरा करता है। देहका निम्नभाग बल्य श्वेतवर्ण, गुलाबी अथवा नीला जैसा देख पड़ता है। किन्तु उपरिभाग नानाविध रहता है। वह सचराचर पिङ्गल वा पाण्डुरवर्ण लगता, जिस पर छोटा-छोटा धब्बा पड़ता है। रात्रि पानेसे यह अपनकी निरापद्रु समझता और नदीतट, नदीके निकट पतित वृक्षकी शाखा अथवा नदीमें तैरते किसी काष्ठपर चढ़ विश्राम करता है। मानवका स्वर अथवा अपर किसी प्रकारका स्वर सुननेपर नदीकच्छप तत्क्षणात् नदीके गर्भमें छुप जाता है। यह बहुत मांसप्रिय रहता और कुम्भीरका छोटा बच्चा भी पाते ही उदरसात् करता है। आखेट अथवा पाककरचा

करते समय नदीकच्छप तीरवत् मनुक और धीवा चलाता है। यह किसीकी काटनेपर शीघ्र नहीं कोढ़ता, दंष्ट्रास्थान छछाड़ डालनेसे असंग होता है। इसीसे सब कोई इस जातिके कच्छपसे भय खाता है। भारतवासी कहते हैं—एकवार कच्छप किसीकी काटनेके लिये पकड़नेपर बिना मेघ गरम नहीं कोढ़ता। इस जातिमें स्त्रियां अधिक होती हैं। पुरुषोंकी संख्या प्रति बल्य है। स्त्री एकवार ५०६० चण्डे देती है। फिर स्त्रोके वयसानुर चण्डे भी कम-ज्यादा निकलते हैं।

सन्तरपके लिये समुद्र-कच्छपके मत्स्यकी भांति पर होते हैं। ऐसे घर अपर किसी जातीय कच्छपके देख नहीं पड़ते। इसके बद्ध-प्रत्यङ्ग भी सन्तरपोपयोगी हैं। चण्ड देनेका समय होइ यह प्रायः तटपर नहीं चढ़ता। कोई कोई कहता—यह रात्रिकालकी निर्जन स्थानमें घरते फिरता है।

समुद्रकच्छप कभी कभी अपनी ध्यारो घास-पत्ती खानेको उपकुलपर चढ़ अनेक दूर पर्यन्त चला जाता है। यह समुद्रके जलमें निष्पन्दभावसे तैरा करता और देहनेमें मुर्दा मालूम पड़ता है। सन्तरपमें समुद्रकच्छप विरिय पट्ट होता है। सामुद्रिक उद्भिद् ही इसका प्रधान खाद्य है। फिर भी जिस सामुद्रिक कच्छपके गात्रसे कस्तुरिकाकी भांति गन्ध पाता, वह चींचे पकड़ पकड़ खाता है।

चण्डे देते समय इस जातिकी स्त्री रात्रिकालपर पुरुषके साथ समुद्र कीड़ बहुत दूर किसी द्वीप मध्य बालुकामय स्थानमें उपस्थित होती है। बालूम वह दो फीट गहरा एक गतं कर लेती और उसी गतमें एक-कास १०० चण्डे देती है। इसी प्रकार दो-तीन सप्ताहमें फिर दो बार वह चण्डे दिया करती है। चंटेका आयतन छोटा और गोलाकार रहता है। वह पुरुषके उत्सापने १५से २८ दिनके मध्य फूट जाता है। चंटा फटनेसे प्रथम कच्छप-मिश्रके घटका पावरष नहीं होता। उस समय यह श्वेतवर्ण देख पड़ता और दाह्य विपद्का वेग रहता है। स्थलपर इसे पत्ती मारता और जलमें आ गिरनेसे कुम्भीर एवं सामुद्रिक



मत्स्य या डाक्षता है। अति मत्स्यसंख्यका मात्र शिशु जीति जागते हैं। जो दधते, वह समुद्रके गर्भमें बड़ कालक्रमसे हृद्दाकार बनते हैं। उस समय एक-एक समुद्रकच्छप वस्त्रमें २० मन्तक तुलता है। इस जातिका कच्छप मानवजातिकी अनैक उपकार करता है। नाना स्थानोंके लोग इसका मांस खाते हैं। विमेषतः जहाँ कच्छपका बड़ा कोप पावे, वहाँ लोग उससे नौका, कुटीरके आच्छादन, गुहादिकी सानी देनेके पात्र और व्यवहारयोग्य कई प्रकारके अपर वस्तु बनाते हैं।

यह जाति प्रधानतः तीन श्रेणियोंमें विभक्त है। फिर ८।१० भेद पड़ते हैं। इस कच्छपके कोपसे उत्पन्न कड़े बनते हैं।

भगवान् मनुके मतसे कच्छप भक्ष्य पशुगणोंमें गिना जाता है—

“वाविष मत्स्यकं नीषा यद्गन्तुमर्थाय वा

भगवान् पश्यन्ते वा हरिणं वा कर्तव्यः ॥” (मनु ५।१८)

यराहमिहिरने कच्छपजातिका लक्षण इसप्रकार लगाया है—

“स्तटिकरजतवर्णं नीषा (नीषा) कस्य च सप्तमर्षिणा चरन्त्येव मृगः।

चरन्त्येव मृगः सर्वपादाश्चिन्मः सक्तमवपमलं सतिरसः करोति ॥

अमनश्च मत्स्यवपुर्वा विन्दुर्विनीष्यन्तीति ॥

सर्पद्विषा वा स्य सक्तो वाः कोऽपि वृषाणां पादभिर्दृश्यते ॥

विदुर्वाति स्य सक्तलिखायां गुह्यदिशः कायं स्य जगः ॥

न वायां तोयपूर्वम् मनी वा कायः शूनीं लङ्कायां नरेन्द्रे ॥”

(इतुनं विना ४३ व०)

जिस कच्छपका वर्ण स्फटिक एवं रजत-जैसा तथा ऊपर नीलपद्मकी भांति चित्रित, आकार कलसतदृश्य, छठ मनोहर भयवा दिव्य भक्षणवर्ण और सरस-जैसा चित्रित रहता, वह घरमें रखनेसे राजाका महत्त्व प्रकाश करता है। जिस कच्छपका शरीर पद्मज एवं शूद्रकी भांति श्याम-वर्ण, सर्वाङ्ग विन्दु-विन्दु चित्रविचित्र भयवा मस्तक सर्प-जैसा या गला स्थूल दिखाना, वह राजाका राष्ट्र बढ़ाता है। जो कच्छप वेदूर्ध्ववर्ण, स्थूल-कण्ठ, त्रिकोण, गुरुहिड और मनोहर छठदण्ड-

विशिष्ट रहता, वह कूप बापो प्रभृति भयवा जन्तु-पूर्ण कनकमें महत्कार्य रखनेपर राजाका कल्याण करता है।

वैद्यकमतमें कच्छपका मांस वायुनाशक, शुक्र-वर्धक, पित्तको हितकर, वलवर्धक, शैषा तथा क्षति-कारक, स्त्रोतःसंशोधक और शोध-दोषनाशक है। इसका चर्म पिच्छनाशक, पद कफहारक और हिम्य शुक्रवर्धक एवं मधुर है।

२ चयतारविगेय। ३ नन्दोद्वह, तुलका पेड़। ४ कुवेरका एक निधि। ५ मन्त्रोंके बुद्धका एक कौशल, कुक्षीका कोई पेव। ६ विश्वामित्रके एक पुत्र। हरिवंशमें विश्वामित्रके पुत्रोंका नाम लिखा है—देवराज, वयवा, क्षति, हिरण्यच, रेणुमान, साङ्गति, गालव, सुहस, विद्युत, मधुच्छन्दा, प्रभृति, देवज, चटक, कच्छप और पूरित। ७ सर्वविशेष। ८ श्रेष्ठजन्म तासुरोगविशेष, तासुकी एक बीमारी। ९ सदिरायन्त्र, गराव उतारनेका एक आला। १० देशविशेष, एक मुक्त। ११ एक प्रकारका दोहा। इसमें ८ गुरु और १२ लघु लगते हैं।

कच्छपयन्त्र (सं० स्तो०) चौपधके पाकका एक यन्त्र, दवा बनानेका एक औजार।

कच्छपि (सं० पु०) १ सुद्वरोग, छोटी बीमारी।

२ तासुरोग, तासुकी बीमारी।

कच्छपिका (सं० स्त्री०) कच्छप स्त्रायें कान् भत इत् टाप् च। १ सुद्व पिङ्गाविशेष, छोटी छोटी जुग-सियोंकी बीमारी। यह बात और कफसे प्रनेह रोगमें उत्पन्न होती है। सुश्रुतके मतसे कच्छपिका दाहयुक्त एवं कच्छपाक्षति रहती और कफ तथा वायुसे उपजती है। भावप्रकाशके लीखानुसार इस रोगमें प्रथमतः स्नेहकिया चला हरिद्रा, कुष्ठ, गर्कारा, हरिताल और दानुहरिद्रा पीसकर प्रसेप देना चाहिये। फकनेपर म्रणकों भांति चिकित्सा करते हैं। २ विपमुष्टि। ३ महानिम्ब। ४ क्ष्यानिगुण्ठी।

कच्छपी (सं० स्त्री०) कच्छप-होय। गतिरकीविषया-व्यपगत। वा १।१।११। १ कच्छपघ्नी, कसूर। २ पीङ्गा-विशेष, जिसके किण्ठकी जुगसी। चक्षुषिना देवी।

३ वीणाविशेष। कच्छपके पृष्ठकी भांति तोंबी चपटी रहनेसे ही इसका नाम कच्छपो वा कूर्मी वीणा पड़ा है। स्त्रिय साधवके मतमें स्नायार, टेस्टिडो और कच्छपो—तीनों एकजातीय यन्त्र हैं। फिर युरोपीय गीटर यन्त्रके साथ भी इसका अनेक सौसादृश्य देख पड़ता है। युरोपीय गीटर यन्त्रकी भाँति देखने-भालने पर कच्छपोसे ही उसकी सृष्टि मानना होती है। जर्मन गीटरकी 'जितार' कहते हैं। यह कच्छपोके पथयवका भेदमात्र है। विचार देखो। ॥ सरस्वतीकी वीणा।

कच्छपोलि, कच्छपोलिका देखो।

कच्छपोलिका ( सं० स्त्री० ) जलवेतस, एक प्रकारका वृक्ष।

कच्छभू ( सं० स्त्री० ) जलयुक्त भूमि, दलदल।

कच्छवृद्धा ( सं० स्त्री० ) कच्छ रोहिता, कच्छ-वृद्ध-क-टाप्। इन्द्रवज्राभिः कः। वा १।१।१२२। १ दूर्वा, दूय।

२ नागरमुस्ता, नागरमोथा।

कच्छा ( सं० स्त्री० ) कच्छ पश्चात् प्रदेशं ज्ञादयति, कच्छ-कद-विष्-क-टाप्। १ परिषेय वज्रका पञ्चल, लांग। २ चौरिका, भोगुर। ३ वाराहीकम्। ४ भद्रमुस्ता। ५ खेतदूर्वा, सफेद दूब।

कच्छा ( हिं० स्त्री० ) मौकाविशेष, एक नाव। यह बड़ी होती है। इसके सिरे चपटे और चौड़े रहते हैं।

कच्छाट—एक प्राचीन ग्राम। यह वज्रदेशके अन्तर्गत थरदके मध्य अवस्थित है। (अमरक १।८१२)

कच्छाटिका ( सं० स्त्री० ) कच्छ-एव बाहुलकात् षटन् स्त्रायं कन् टाप् च। कच्छ, लांग।

कच्छान्त ( सं० पुं० ) ऊद वा नदीका तीर, भील या दरयाका किनारा।

कच्छान्तरुद्धा ( सं० स्त्री० ) खेतदूर्वा, सफेद दूब।

कच्छार ( सं० पुं० ) कच्छ, एक देश। यह शतभिषा, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपदके अधिष्ठित देशोंके अन्तर्गत है। (अमरक १।८१३)

कच्छारुद्धा ( सं० स्त्री० ) सूर्यकेतकी, सुनहला कीवड़ा।

कच्छालहारक ( सं० पुं० ) काशवध, काँस।

कच्छी ( हिं० वि० ) १ कच्छदेशीय, कच्छसे सरोकार रखनेवाला। २ कच्छदेशजात, कच्छमें पैदा होनेवाला। (पुं०) ३ अश्वविशेष, किसी किसीका घोड़ा। यह कच्छमें उत्पन्न होता है। इसकी पीठ गहरी रहती है।

कच्छ ( सं० स्त्री० ) कपति देहम्, कप-ल क्षान्ता-देश्य प्रपोदरादित्वात् क्लृप्तः। अरन्ध्रः। उद् १।२५। सुद्र कुष्ठके अन्तर्गत एक रोग, खाज, खुजली। कच्छ, दाह और स्त्रावयुक्त सूक्ष्म सूक्ष्म जो बहुसंख्यक पोढ़का पड़ती, उसे विक्षयण्णती पामा कहती है। फिर दोनों हाथ और हथेली की पीठपर तीव्रदाहयुक्त होनेवाले पामा ही कच्छ कहाते हैं। (अमरक १।८१४)

विहित्वा—१ सोमराजी, कासमर्द, पनवर, हरिद्रा तथा गणिकारिका प्रत्येक समभाग दक्षिणे मलु और कांजोके साथ पोष प्रलेप लगाना चाहिये। २ वायुकी लक्षणे पत्ते और हरिद्रा गोमूत्रमें रगड़ प्रलेप बढ़ाने पर तीन दिवसमें कच्छ रोग विनष्ट होता है। ३ हरिद्राको पोष दो पल गोमूत्रके साथ पीना चाहिये। ४ हरीतकीको गोमूत्रमें पका मसण करना उचित है। ५ मदारके पत्रका रस हरिद्राकच्छके साथ संयोजनमें पका मर्दन करते हैं। ६ चतुर्गुण दूर्वाके रसमें तैल पका सेवन करना चाहिये। (अमरक १।८१५)

कच्छप्रा, कच्छा देखो।

कच्छुप्रो ( सं० स्त्री० ) कच्छ, इन्ति, कच्छ-इन्-ठक्-छोप्। अमरक १।८१६। १ पटोछ, पावस। २ इन्द्रवाफतछुप, एक भाड़ी।

कच्छुमती ( सं० स्त्री० ) कच्छः साधनत्वेन चरत्य-स्याम्, कच्छ-मत्-उ-टाप्। शुकशिम्यो, खजोहरा।

कच्छुर ( सं० स्त्री० ) कच्छ, रस्यादि, कच्छ-र-उ-ठक्-छोप्। अमरक १।८१७। १ कच्छुरागयुक्त, खारिहरी, खजोहरा। २ परस्त्रीगामो, रंडोबा। ३ पामर, मायाक, कमीना।

कच्छुरा ( सं० स्त्री० ) कच्छं कच्छं राति ददाति, कच्छ-रा-क-टाप्। कायवधः। वा १।१।१२३। १ शुक-शिम्यो, खजोहरा। २ दुराक्षमा। ३ गंडो। ४ यवाध। ५ पाहिवा, खिरनो। ६ बेखा स्त्री।

कच्छराक्षसतैल ( सं० स्त्री० ) भावप्रकाशोक्त कच्छुरोग-  
नाशक तैलविशेष, खुजलीका तैल। सर्पपका तैल  
८ सेर, कष्टार्थ मनःशिला, हरिताक्ष, हीराक्षय,  
गन्धक, सैन्धव, क्षण्णचीरी, पाप्राणभेदी, शण्डी, कुष्ठ,  
पिप्पली, विषलाद्रला, करवीर, चक्रमर्द, विडङ्ग,  
चित्रक, दन्ती एवं निम्बपत्र तालि-तोसी, चक्रवृक्ष  
एवं सिलका सार पल-पल और गोमूत्र १६ सेर मृदु  
अग्नि के छत्तापसे पका गाजर मसनेसे दुःसाध्य कच्छ,  
पामा, कण्डू, चण्डान्य चर्मरोग तथा रक्तदोष आदि  
व्याधि दूर होते हैं।

कच्छराक्ष ( सं० पु० ) शिशुवृक्ष, लसोढ़ेका पेड़।

कच्छरी ( सं० स्त्री० ) घातकी, धायका फूल।

कच्छू ( सं० स्त्री० ) कपति हिमस्ति देशम्, कप-क  
छान्तादेशम्। कश्चिद्वर। वर्ष १८६१। १ कच्छुरोग,  
खारिग्रस्त। कच्छू देखो। ( हिं० पु० ) २ कच्छप,  
कलुषा।

कच्छूभा, कच्छू देखो।

कच्छूभ्री, कच्छू देखो।

कच्छूमती, कच्छू देखो।

कच्छूर, कच्छूर देखो।

कच्छूरा, कच्छूरा देखो।

कच्छूष्ट ( सं० पु० ) कच्छप, कलुषा।

कच्छूष्टा ( सं० स्त्री० ) भद्रसखा।

कच्छूटिका ( सं० स्त्री० ) कच्छी-पटन बाइसकान्  
कन् पत इत्वा टाप च कोकारादेशः। कच्छी, चांग।

कच्छूठ्या ( सं० स्त्री० ) सुस्था, मोथा।

कच्छूरी ( सं० स्त्री० ) केन शिरसा च्छेद्यते लिप्यते,  
कच्छूर-वृक्ष। गठी।

कच्छी ( सं० स्त्री० ) कच्छु-ह्रीम्। कच्छु-नामक कन्द-  
विशेष, परसी, घुइया।

कच्छना ( हिं० पु० ) परिधानवस्त्रविशेष, किसी  
विष्णुकी धोती। यह घुटनेपर चढ़ा पहना जाता है।

कच्छनी ( हिं० स्त्री० ) १ परिधानवस्त्र विशेष, किसी  
विष्णुकी धोती। इसे घुटनेपर चढ़ाकर पहनते हैं।

२ छोटी धोती। ३ वस्त्रविशेष, एक पहननेका  
कपड़ा। यह चाचरे-लेसा होता, और रामलीला

आदि उत्सवमें काम देता है। ४ पाचविशेष, एक  
वस्त्रतन। इसमें डालकर कपड़ेको काढ़ते हैं।

कच्छरा ( हिं० पु० ) घटविशेष, एक चढ़ा। यह  
भट्टीका बगैला और मुँह चौड़ा रहता है। इसमें जल,  
दुग्ध वा चक्र रखते हैं। कच्छरेकी पठि-छाँची और  
मजबूत होती है। बालकोंको कच्छरा-बछरा कहते हैं।

कच्छराखो, कच्छरा देखो।

कच्छरी ( हिं० स्त्री० ) छोटा कच्छरा, गमरी।

कच्छरा ( हिं० पु० ) चैत्रविशेष, काकीका खेत।  
इसमें गाकादि बोते हैं।

कच्छवाहा ( हिं० पु० ) चन्द्रियविशेष, राजपूतोंकी  
एक जाति। कोई कोई कच्छवाह भी कहता है।  
राजपूत देखो।

कच्छवोकेयत ( हिं० स्त्री० ) मृत्तिकाविशेष, एक  
भट्टी, भटकी। यह चिखुरनेसे चक्रेद पड़ जाती है।

कछान ( हिं० पु० ) घुटनेपर चढ़ा धोताका पहनावा।

कछार ( हिं० पु० ) १ कच्छ, दरयाके किनारेकी  
जमीन। यह भार्द और मित्र रहता है। कछार  
नदीकी मृत्तिकासे पटकर बनता और खूब हरा-भरा  
देख पड़ता है।

२ भासामप्रान्तका एक जिला। यह अक्षा०  
२४° १२' एवं २५° ५०' उ० और देशा० ८२° २८'  
तथा ८३° २८' पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल  
३७५० वर्गमील लगता है। जिलेके प्रमथका डीड-  
काटर् सिलचर नगरमें है।

कछारसे उत्तर कोपिनी एवं दियङ्ग नदी, पूव  
मणिपुर राज्य तथा नागालैण्ड जिला, दक्षिण लुगाई  
या कुकी जातिके रहनेका पारम्पर्यप्रदेश और पश्चिम  
मिस्रहट और जयन्ता पर्वत है। १८०५ ई०को  
दक्षिण सीमाकी ओर एक आभ्यन्तर रेखा खींची गयी  
थी। गवर्नमेण्टकी अनुमतिके अतिरिक्त कोई उसको  
पार कर नहीं सकता।

सिक्किम-किन्तने श्री कछारी राजा भासामके अधि-  
कांशपर आधिपत्य कर गये हैं। १८२० ई०को जब  
अन्तिम कछारी राजा मरि गये, और उनके उत्तराधि-  
कारी न रहे, तब अंगरेज इस प्रान्तके अधिपति बने।

प्रथमतः ई० १८२३ शताब्दी के पारम्परिक कछारी जातिने अपनेकी इस प्रान्तमें प्रतिष्ठित किया था। पारम्पर्य-से प्रमाणित होता, किसे समय आसाममें कछारियों-का बड़ा प्रावण रहा। किन्तु इसका कोई विश्वस्त लेख नहीं मिलता। कछारियोंका उक्त वैभव लोगोंके कथनानुसार कीर्त्तित पड़ेला था। सम्भवतः उस समय कछारी राज्यमें पूर्ववर्त्तका कुछ अंश भी सम्मिलित रहा। वस्तुतः कछारी राजा पहले बरेलीसे उत्तर पार्श्व प्रदेशमें आधिपत्य करते थे। दौमापुर राजधानी रहा। वहाँ गहन जनमें एक मकानों और तातावाँका अंसावशेष हाथ पाया है। अन्तको कछारी राजा माइबोङ्गको हट्टे थे। माइबोङ्गमें ही किसी कछारी राजाने टिपराके राजाको कन्यासे विवाह किया, जिसने बराककी उपत्यकाको दृष्टिमें दिया।

ब्राह्मण बङ्गालसे माइबोङ्ग धर्मप्रचार करने गये थे। ई० १८२३ शताब्दी के पारम्परिक माइबोङ्गपर जयन्तियाके राजा धारा मारने लगे और कछारी राजा वहाँसे हट कायपुरमें आ कर बसे। बराक उपत्यकामें पहुँचनेसे ही कछारियोंने शीघ्र शीघ्र हिन्दूधर्म ग्रहण किया। पहले वह भूतप्रेत पूज गरवलि बढ़ाते थे। १७८० ई०को कछारी राजा अपने आता और उत्तराधिकारीके साथ राजवंशी चमिय बने। ब्राह्मणोंने उन्हें एक ताम्रनिर्मित गीके भीतर रख शुद्ध किया। कितने ही लोगोंके हिन्दू हो जाते भी पहाड़ियोंने अपना धर्म न छोड़ा। अन्तिम राजा गोविन्दचन्द्र मणिपुर और मङ्गले युद्धमें मरे थे। ब्राह्मणसिधियोंके जीतने पर गोविन्दचन्द्रने अंगरेजी जिले सिलहटमें आ आश्रय लिया।

१८२६ ई०को ब्रह्मपुत्रके समय अंगरेजी फौजने उन्हें फिर सिंहासनपर बैठाया था। किन्तु कछारों सेन्ट्रल सेनापति तुलारामने विद्रोह उठाया और उत्तर कछारमें अपनेको स्वतन्त्र राजा बनाया। १८२० ई०को गोविन्दचन्द्र मारे गये थे। उनका कोई उत्तराधिकारी न रहा। १८२६ ई०को सन्धिक अनुसार फिर अंगरेजोंने कछार अधिकार किया। १८५४ ई०को उत्तर

राधिकारी मिश्र तुलाराम सेनापतिके मरनेपर उत्तर-कछार मौ अंगरेजी राज्यमें मिलाया गया।

१८५५ ई०की देखनेमें आया—चाय स्वभावतः कछारमें उत्पन्न होती है। १८५७ ई०की चट्टामसे भाग कर आये विद्रोही सिपाही कछार छोड़ गये। १८७१-७२ ई०को तुलाराम अमियाम चढ़ा, जिससे दक्षिण सोमापर पहाड़ियोंका आक्रमण करना रुका। किन्तु १८८० ई०को कोनोमास अङ्गमा नागावोंने उत्तर और उत्तर-कछारके चाय-बागपर आक्रमण कर २२ नौकरोंके साथ युरोपीय रोपक (ग्राण्टर)को मार डाला। इसीसे १८८०-८१ ई०को नागावोंके विरुद्ध सामरिक अभियान बढ़ाया और उनका कुछ स्वतन्त्र देश भी अंगरेजी राज्यमें मिलाया गया। १८८१ ई०के अन्त किसी पांगल कछारोंने घोषणा की थी—युद्धमें देखी शक्ति भरो और मुझे कछारी राज्यके पुनः संस्थापनकी आज्ञा मिली है। उसने कितने ही मूर्ख अपने साथी बनाये। विद्रोहियोंने उत्तर-कछारका राज्य मांगा और गुनजोंग आक्रमण कर तीन पादमियोंको मारा था। गुनजोंग भाग लगनेसे भस्मीभूत हुआ। फिर विद्रोहियोंने माइबोङ्गमें डिपटी-कमिशनर और सब-डिविजनल कमिशनरको आक्रमण किया। ६ आक्रामक गोलीसे मारे गये, बाकी जंगलमें जा छिपे। डिपटी-कमिशनरने हाथमें तलवारकी गहरी चोट पानेसे हडलोक छोड़ दिया था।

कछार जिला बराक उपत्यकाके उपरि-भागमें अवस्थित है। तीन और ऊँची पहाड़ियाँ खड़ी हैं। कैयल पश्चिमको सिलहटकी राह खुली है। तंग मैदानमें हरिहर हथ लगे हैं। नाले और भरने अधिक नहीं। केन्द्रस्थलमें पूर्वमें पश्चिम एक बड़ी नदी बहती है। उत्तर और दक्षिण नदीकी दोनों ओर छोटी छोटी पहाड़ियाँ जलके तट तक लटक पाई हैं। इन्हीं पहाड़ियोंपर चायके बाग लगे हैं। निम्न भूमिमें चावल बोया जाता है। बांस और फूलके पेड़ लोगोंके धोपड़े छिपाये हैं। पर्यतोमें प्रधान उत्तर सब दक्षिण कछारके बीपका शरक और

दक्षिणका बराक, भूवंग, रेंगती, तिलाइन तथा सिह-  
खर है। भूवंगकी घाटी बहुत ठाढ़ है। चारो ओर  
जंगल लगा है। बराक नदी ११० मील बड़ी  
है। पड़त १०० से २०० गज तक चौड़ा है। साफ-  
भर बराबर नाव चल सकती है। घसीखरी, काटा-  
खाल, घाघरा, सोनाई, जीरी, जातिंगा, मदुरा, बदरी  
और बीरी नदी बराककी सहायक है। वर्षा ऋतुमें  
रेंगती तथा तिलाइन पर्यन्तके बीच चातला ग्राम १२  
मील लम्बा और २ मील चौड़ा ऊद बन जाता है।

बराक नदीके उत्तर सारे भंडारमें कृषिकार्य होता  
है। चारो ओर मघन वन और सरोवर रहनेके कछार-  
का प्राकृतिक दृश्य अनुपम है। नृत्तिकामें जिन्यता  
अधिक देख पड़ती है।

इस जिलेमें धातुकी कोई खानि नहीं। किन्तु  
वनमें धन, भरा है। जादुल और नागेश्वरके वन  
अधिक मूल्यवान् होती हैं। बहालको कछारसे माय,  
लड़ा, बांस, बेंत और फूस भेजते हैं। जंगल काटने-  
वालोंको लैसन्स लेना और बराक पार करनेवालोंको  
सियासतेख घाटपर 'महसुल देना पड़ता है। चायके  
सन्दूक बनानेकी कई कारखाने हैं। गवरनमेंटकी  
व्यतिरिक्त दूसरा हाथी पकड़ नहीं सकता। कृषि-  
कार्यमें भैंसे चलते हैं।

लोकमेंख्या तीन लाखसे ऊपर है। यहाँ कछारी,  
जूकी, लुसाई, नागा और मिकीर रहते हैं। सियां  
मणिपुरी खेस नामक वस्त्र और मगहरी खूब बनाती  
है। मुख्य पोतलके बरतन तैयार करते हैं। प्रधानतः  
सोग चावल या चायके काममें लगे रहते हैं। सिल-  
चरमें देगी मौजका हड़ताट र है। जनवरी मास  
यहाँ एक बड़ा मेला लगता है। सोनाई, सियाल-  
तेख, बरकल, चघरवन, लप्पीपुर और हैलाकादी भी  
व्यवसायका स्थान है।

सब लोग चावल खाते हैं। वर्षमें तीनवार चावल  
उत्पन्न होता है—घासघ, साइल और आमन। जून  
मास साइलको भागमें लमाते, दूसरी मास भागसे  
छछाड़ भंडारमें लगाते और दिसम्बर या जनवरी मास  
काटते हैं। कुछ कुछ सरसों, तिल, दाक, जख,

मिर्च और तरकारी भी बो देते हैं। लखको छोड़  
दूसरी चीजमें खाद नहीं डालते। सिसाहटसे प्रत्येक  
वर्ष १ लाख मन चावल संग्रहा जाता है। चाय  
बाहर भेजते हैं। किन्तु इस जिलेमें व्यवसायका कोई  
केन्द्रस्थल नहीं। बराक नदीसे चायके बागोंतक  
सड़के लगी हैं। कछारमें तीन तहसीलें हैं—सिल-  
चर, हैलाकादी और गुनजोंग। जलवायु ग्रीतल  
और शार्द है। कछारमें भूकम्प अधिक पाता है।  
१८६८ ई०को जो भूकम्प आया, उसने सिलचर  
नगरको ठिकाने लगाया और नदियोंको उलटा  
बहाया था। लोगोंमें प्रधान स्वर, बजीर, संपहपी,  
विस्चिका और ग्रीतला है।

कहियाना (हिं० पु०) लपकोंके निवासका स्थान,  
काहियोंका मजला।

कछु, ऊह देखो।

कछुपा (हिं०) बचप देखो।

कजुई (हिं०) बचप देखो।

कजुक (हिं० वि०) कुछ, थोड़े। 'कजुक विहारि  
आ' (गनो)

कजुवा (हिं०) बचप देखो।

कछू, ऊह देखो।

कछीटा (हिं० पु०) काछ, कछनी, जांग।

कज (सं० क्री०) के लसे जायते, क-जन-ड।  
१ कमल, पद्म। २ अमृत। (फा० श्री०) ३ वक्रता,  
टेंढ़ापन। ॥ दोष, ऐह।

कजक (फा० पु०) हस्तोका पङ्कग, हाथी हांकने-  
का प्राङ्कस।

कजकोल (हिं० पु०) कजकोल, भीख, मांगनेका  
खप्पर।

कजनी (हिं० स्त्री०) खरदनी, बरतन साफ करनेका  
एक औजार। इससे ताँबे या पीतलके बरतन खुरच  
खुरच साफ किये जाते हैं।

कजपूती, कजपू देखो।

कजरा (हिं० पु०) १ कल्लस, जाजल। बगो देखो।

२ छपमरिगेय, एक बेल। इसकी आँखें काली रहती

हैं। (वि०) ३ श्यामवर्ण नेत्रविशिष्ट, जिसकी आँखें कालज या कालज-जगी जैसी रहें।  
 कजरार्द्ध (हिं० स्त्री०) श्यामता, कालापन।  
 कजरारा (हिं० वि०) १ कज्जलमुक्त, कालज लगा हुआ। २ श्यामवर्ण, काला।  
 कजरो (हिं० स्त्री०) १ रागविशेष, बरसातमें गानेकी एक रागिणी। २ पर्वविशेष, एक त्योहार। कजरो देखो। (पु०) ३ धान्यविशेष, काले रंगका एक धान।  
 कजरौटा (हिं० पु०) १ कज्जलपात्रविशेष, कालज रखनेकी एक डब्बी। यह छिछला रहता और लोहसे बगता है। कजरौटेकी डब्बी पतली होती है। २ पात्रविशेष, एक डब्बी। इसमें गोदना गोदनेकी स्याही रखते हैं।  
 कजरौटी (हिं० स्त्री०) शुद्ध कज्जलपात्रविशेष, छोटा कजरौटा।  
 कजसवाम (सु० पु०) सुगन्धजातिविशेष, सुगन्धकी एक क्रीम। यह बड़े लड़ाके होती है।  
 कजला (हिं० पु०) १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह काला होता है। २ कज्जल, कालज। ३ काली आँखका बेल। (वि०) ४ काली आँखवाला।  
 कजलाना (हिं० स्त्री०) १ श्यामता चाना, काला पड़ जाना। २ कुम्हना, कम पड़ना। ३ कज्जल लगाना, आँजना।  
 कजली (हिं० स्त्री०) १ श्यामता, कानिष्ठ। २ चूर्ण-विशेष, एक चुकनो। पारा और गन्धक एक साथ पीसनेसे कजली बनती है। ३ द्रव्यविशेष, किसी किस्मकी कण। यह वर्तमानमें होती है। ४ एक गाय। इसकी आँख काली रहती है। ५ किसी किस्मकी सफेद मेड़। इसकी आँखके पास काले बाल होते हैं। ६ पोखेकी एक बीमारी। इसमें फूलोंपर काली-काली धूस बेट जाते, जो फलसजी शानि पड़ पाती है। ७ पर्वविशेष, एक त्योहार। यह बुद्धदेवके नामसे गायत्री और सुक्तप्रदेगमें भाद्रपक्ष-त्योथाकी होती है। कजली महीपर लगे यवके चट्टर किसी सरोवरमें डेंके जाते हैं। इसी दिनसे कजली फिर नहीं गाते। ८ यवके नवीन चट्टर। यह

तालाबमें डाली और सम्मिश्रितकी बाटो जाती है।  
 ८ गोतविशेष, एक बरसातो गाना। इसे हरियासी तोलतक गाते हैं।  
 कजली-तीज (हिं० स्त्री०) भाद्रपक्षत्योथा, भाटा बंदी तोल।  
 कजलीवन (हिं० पु०) १ कदलीवन, केलेका जंगल। २ आसाम प्रान्तका एक वन। इसमें हाथी बहुत रहते हैं।  
 कजलीवा, कजरीटा देखो।  
 कजलीटी, कजरीटी देखो।  
 कजली (हिं० स्त्री०) कजली देखो।  
 कजली (हिं० स्त्री०) १ कजली, मांड। २ मूल, मोत।  
 कजली (च० स्त्री०) मूल, मोत।  
 कजली (हिं०) कजली देखो।  
 कजली (हिं०) कजली देखो।  
 कजली (फा० पु०) कजली एक काठो। इसको दोनों ओर एक-एक मनुष्यके बैठनेको जगह और बसबाव रखनेकी जाती रहती है।  
 कजिह्व (सं० पु०) महाभारतोक्त भारतका एक प्राचीन जनपद। (भोचपर्व) सिंहलियोंके धर्मग्रन्थमें इन स्थानका नाम 'कजिह्वे' नियुक्तमें लिखा है। चीना परितोजक यूएन युयङ्गने "कि-च-हो-वि-ली" (कजुहोर वा कजिह्व) नामसे इस जनपदका उल्लेख किया है। उन्होंने कहा,—“यह जनपद प्रायः २००० लि (डेड सी कोस्ट) विस्तृत है। यहाँकी भूमि समतल एवं सर्वथा देव पड़ती और यद्यपि नुतनी है। मध्य यद्येठ उपजता है। जन-वासु उष्ण है। पश्चिमासी सरल है। वह विद्या और विद्वान्का आदर करते हैं। यहाँ ६० बौद्ध महापुरुष और दस (हिन्दु) देवमन्दिर बने हैं। बहुतसे लोग देवताके दर्शनको आते हैं। कई छोटे बड़े यहाँके राजा मर गये हैं। उसके बाद यह जनपद निकटस्थ राजाके अधीन आगित होने लगा। सकल नगर लूटकर लूटे गये हैं। यन्त्रेण अधिवासी इसर धर आसामों जा रहे हैं। इस जनपदके दक्षिण

प्राप्तमें अनेक वन्य इन्हीं रहते हैं। उत्तर सीमापर गङ्गाके निकट इष्टक और प्रस्तरनिर्मित एक पत्थरु चट्टान् मन्दिर है। यह अंशामान्य शिल्पके नैपुण्यके विमुद्रित है। इसकी चारों ओर सिद्धगण, देवगण और बुद्धगणकी मूर्ति बनी है।”

अध्याने ८२ सोन दूर बाज भी कज्जरी नामक एक ग्राम अवस्थित है। जितने भी लोग इसी अक्षरमें कज्जलके अदख्यान मन्त्रधर पर मत दिया करते हैं।

कलिया (चं पु०) विवाद, भगड़ा, टंटा।

कली (फा० स्त्री०) १ वक्रता, टेढ़ाई। २ ऐव, डोप, कसर।

कज्जन (सं० स्त्री०) कु कुत्सितं जलं अस्मात्, कुत्सितं चक्षुःस्थदूषितं जलं दूरीभूतं भवत्यस्मात्, बहुव्री० कोः कदादेयः। १ अक्षन, काजल। इसका अपर संस्कृत नाम लोचन है। चायुर्वेदके मतसे नेत्ररोग पर उपकारप्रद कतिपय कज्जल चलते हैं। यथा—त्रिफलाका जल, भीमराजका रस, गुण्डीका काय, मधु, घृत, छागमूत्र और गोमूत्र सकल द्रव्यों ७ बार शीशिकी निमित्त कर अक्षग लगानेसे चक्षुका च्योति बढ़ता है।

त्रिफलाका जल, भीमराजका रस, घृत, विष-कल्क, छागदुग्ध और मधु—समुदायमें प्रत्यह एक अणु शीशा उत्तप्त करना चाहिये। इसी प्रकार सात बार करने बाद शीशिकी सलाका बना लेते हैं। पातःकाल अक्षनके साथ सला सलाका प्रयोग करनेसे विविध नेत्ररोग प्रगमित होते हैं।

सहस्रर काष्ठके पात्रमें इससीकी पत्तीका रस छाल घुँघचीके मूल और सैन्यवकी घोटना चाहिये। फिर इस चूर्णके साथ सुरमेकी नुकीली मिसा अक्षग लगानेसे काच, धर्म और अर्जुन प्रस्थित नेत्ररोग विनष्ट होते हैं।

मच्छिद्रा, यष्टिमधु और सैन्यवकी एकत्र चूर्ण कर चक्षुमें अक्षग लगानेसे तिमिररोग मिट जाता है।

हासकी बड़का काय सैन्यव मिसा छाल कर फिर पवाना चाहिये। घनीभूत होनेपर उत्तार कर

छत और मधु मिसा देते हैं। इसका अक्षग लगानेसे सर्वप्रकार तिमिररोग नष्ट होता है। चक्षु देखो।

२ नीलकमल। (पु०) कुत्सितमपि द्रव्यज्ञातं सतागुल्मादिकं ज्ञातयति जीवयति पर्येषेन इति श्रेयः, कु-जल-णिच्-अच् छलः कदादेयः। १ मेघ, बादल। ४ कामरूपके अन्तर्गत एक पर्यंत। (चानिचपु०) ५ कज्जली, एक मछली। ७ कन्दोविशेष, एक मटर। इसके प्रत्येक पादमें १४ माता रहती हैं। अन्तर्गत् एक शुक्र और एक लघु लगता है।

कज्जलध्वज (सं० पु०) कज्जलं ध्वज इव यस्य, बहुव्री०। प्रदीपशिखा, चिराग।

कज्जनरोचक (सं० पु०-स्त्री०) कज्जलं रोचयति, कज्जल-रुच-णिच्-अच् स्वायं कनू। दीपाधार, दीबट। इसका संस्कृत पर्याय कौमुदीछक, दोपछक, शिखातरु, दीपध्वज और ज्योत्सनावृक्ष है।

कज्जलतीर्थ (सं० स्त्री०) तीर्थविशेष, किसी पवित्र स्थानका नाम।

कज्जला (सं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, एक मछली। (Cyprinus atratus) इसका संस्कृत पर्याय काज्जली और अनपड़ा है।

कज्जलि, कज्जली देखो।

कज्जलिका, कज्जली देखो।

कज्जलित (सं० वि०) कज्जलं ज्ञातमस्य, कज्जल-इतच्। तदस्य मन्त्रार्तं तारकादिभ्यश्च। वा ३। ३। १। कज्जल-सला हुषा, जो खाँखा गया हो।

कज्जली (सं० स्त्री०) कज्जलमिवाचरति, कज्जन-किप्-अच्-ङीय च। १ मिश्रित पारद और गन्धक, मिला हुषा पारा और गन्धक। साधारणतः यह समपरिमाण पारद और गन्धक खरसमें छाल घोटनेसे बनती है। पारद और गन्धक मिलते ही काला पड़ जाता है। फिर सृषिकण होते ही व्यवहारोपयोगी कज्जली तैयार होती है। औषधविशेषमें हिमालय गन्धक द्वारा भी इसके प्रसुत करनेका उपदेश है। कज्जली छंश्ण, सौर्यवर्धन, और नाना अमृतपानसे सर्वरोग विनाशन होती है। (पञ्चनिषत्) २ मत्स्य-विशेष, एक मछली। ३ स्वाही।





सर्वकार्यके कुशल और शुभवान् भन्ता:पुरचारी  
हृष विप्रको कञ्चुकी कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय  
सौविदल, स्यापत्य और सौविद है। २ यव, कौ।  
३ चपकहृष, चनेका पेड़। ४ सर्प, सांप। ५ कम्पट,  
जिनाकार। ६ जोड़क हृष। ७ दोधान्वित घोटक-  
विशेष, एक ऐसी घोट। स्कन्ध, वक्ष, बाहु और  
अंस देगमें जो वाली चम्पवर्ण रहता, उसे विहान्  
कञ्चुकी कहता है। (मदन)

(स्त्री०) कञ्चयति रोगादिकमुपगमयति, कञ्च-  
यिष् बाहुनकात् एकन्-ङीप्। ८ शीपचविशेष,  
एक दवा। ९ शीरोमहृष। १० शरपुष्पा। ११ कञ्चुक  
श्याक। १२ शोली, पंगिया। (त्रि०) १३ भावह-  
कवच, वक्ष, शर पड़ने हुआ।

कञ्चुनिका (सं० स्त्री०) कञ्चते भङ्गानि पाहणोति,  
काचि-समाच्-ङीप् स्वार्थे कन् ङलः टाप् च। भङ्ग-  
रक्षिणी, बोली।

“क” सुभाषि विनेष कञ्चुलिकाय भन्ते मनोहारिणीम्।” (मदनमकर)

कञ्चून (सं० स्त्री०) कचि-उलच्। सियोंका एक  
भलहार।

कञ्ज (सं० पु०) के जले गिरसि च जायते, कम्-  
जन्-ङ। १ मद्गा। २ केग, बाल। (स्त्री०) ३ पद्म,  
कमल। ४ पञ्चतः।

कञ्जक (सं० पु०) कञ्चते वायवमुच्चारयितुं शक्नोति,  
कजि-गुल्। पचिविशेष, मैना।

कञ्चनिरि (सं० पु०) कामरूपकी सीमाके चल्तका  
एक पर्वत।

“कनार्या अरविनिः करतोवाल् पविने।

तोरेवे कानिपुनरी पूर्वमा दिक्किकम् ॥” (वीरनीतक ११ पटल)

कञ्जल (सं० पु०) कञ्चात् विष्णोर्नाभिपद्मात् जातम्,  
कञ्ज-लन-ङ। मद्गा। भागवतमें माभिपद्मसे मद्गाकी  
उत्पत्तिपर इस प्रकार वर्णित है—मद्गाप्रलयके समय  
मद्गाण्ड जनमग्न होनेपर विष्णु मसुदाय चपनेमें लीन  
कर जलगायी हो गये। सोते-सोते महत्सं चतुर्भुज  
पक्षीत होनेपर सर्वान् चपनी दृष्टाके अनुसार माभिसे  
एक पद्मकोप उत्पादन किया था। उसीसे स्वयम्भू  
मद्गा पाविर्भूत हुये। (भागवत ४/१/१८)

कञ्जम् (सं० पु०) कं सुखं जनयति, कम्-जनि-  
षण्। १ कम्प, कामदेव। २ पचिविशेष, मैना।  
कञ्जनाम (सं० पु०) कञ्जं पद्मं गभी भस्स, कञ्-  
नाभि संघायां चच्। विष्णु।

“कनोटं स्वेन वपेच कञ्जनामसिरोदधे।” (भागवत १/४/४४)

कञ्जमूल (सं० स्त्री०) कामलकन्द, कामलकी जड़।  
कञ्जयोनि (सं० पु०) शास्त्र, कसेरू।  
कञ्जर (सं० पु०) कं जलं जृणाति भाकर्पति जारयति  
या, कम्-कजि-परन्। १ सूर्य, चाफताब। २ मद्गा।  
३ उदर, पेट। ४ हस्ती, हाथी। ५ मयूर, मोर।  
६ भगस्य सुनि। ७ घातकी, घाय। ८ पाटला,  
घरसातका धान।

कञ्जल (सं० पु०) कञ्चते पठितुं शक्नोति, कजि-  
कलच्। मदनपक्षी, मैना।

कञ्चनता (सं० स्त्री०) कताविशेष, एक वृक्ष।  
(Asclepius odoratissima)

कञ्चनिका (सं० स्त्री०) चङ्गरक्षिणी, बोली।

कञ्जार (सं० पु०) कं जलं जारयति, कम्-ज-णिच्-  
षण् भारण् वा। कचिनिष्ठां पित्। ७१ १/१०। १ सूर्य,  
चाफताब। २ मद्गा। ३ भगस्य सुनि। ४ हस्ती,  
हाथी। ५ मयूर, मोर। ६ व्यञ्जन, खानेकी उम्दा  
चीज। ७ जठर, पेटकी भाग।

कञ्जिक (सं० स्त्री०) काञ्जिक, काजी।

कञ्जिका (सं० स्त्री०) कञ्चते भूमिं मित्वा उत्पद्यते,  
कजि कल्-टाप् इत्यच्। मद्गाण्डविहृष।

कञ्जिया—मध्यप्रदेशवाले सागर जिलेके उत्तरप्रान्तका  
एक प्राचीन नगर। पड़ने यह स्थान बुंदेलोंके  
अधिकारमें रहा। उस समय कञ्जियावाले शासन-  
कर्ताके करपोहनसे मद्गा विपदग्रस्त हुये थे। राज-  
ान इस स्थानकी भवस्था कमगः सुधर रही है।

कञ्जियाके प्रथम बुंदेला शासनकर्ता देवीमिह  
रहे। उनके पुत्र शाहजीने मगरके निकट पहाड़पर एक  
दुर्ग बनवाया था। यह दुर्ग चतुष्कोणाकार है। चारों  
पार्श्वके चार बुर्जे आजकल भग्नावशेष हो गये हैं।

१०२३ ई०की कुरवाड़ेके गजाव हमन उल्ला यान्ने  
शाहजीके बंधवर विक्रमादित्यको कञ्जियामें निकासे

दिया था। विक्रमादित्यने पिपरासी ग्राममें आश्रय लिया। इस ग्राममें सनके वंशधर भूतसिंह १८०० ई० तक निष्कार पञ्चग्रामके भागसे जीविका चलाते रहे।

१०५८ ई० को पेशवाके प्रतापसे इसन उल्ला विताड़ित हुये। उन्होंने अपने मित्र कर्मचारी खांडेरावको कच्छिया नगर सौंपा था। १८१८ ई० का खांडेरावके उत्तराधिकारी रामचन्द्र बेलाखने पेशवाको कच्छिया और मल्हारगढ़ दे वदलेमें डाटावा ले लिया। उसी वर्ष ब्रिटिश गवर्नमेंण्टने यह नगर सेधियाको प्रदान किया। १८०५ ई० को विद्रोहके समय कच्छियाके बुंदेलोंने भी भूतसिंहको अपना प्रकृत शासनकर्ता बताया था। किन्तु भूतसिंह कुछ दिनोंके मध्य ही अपमानित हो यह स्थान छोड़ गये। बुंदेलों नगर लूटने लगे थे। उसी समय सर ह्यूम-रोज सैन्य बुंदेलोंके विपक्षपर अग्रसर हुये। अंगरेज सेनापतिके आगमनकी वार्ता सुन बुंदेलों भगे थे।

१८६० ई० को यह नगर ब्रिटिश गवर्नमेंण्टके अधीन सागर जिलेमें मिलाया गया। कच्छिया अक्षा० २४° २३' १०" उ० और देशा० ७८° १५' ५०" पू० पर अवस्थित है।

कट (सं० पु०) कटति मदवारि वर्षति, कट-अच्। १ करिगण्डखल, हाथीकी कनपटी।

“वह्निगः कटकटाकट” भिगच्छोः।” (विश्वपाचवर्ष)

२ कटिदेश, कमर। ३ कटिके पार्श्वका स्थान, कमरकी बगलका हिस्सा। ४ किलिच्छक, चटार्क, दरवाजा। ५ छत्रविशेष द्वारा निर्मित रज्ज, किसी घासकी रस्सी। ६ छत्रादि निर्मित पट, घास बगलका परदा। ७ शय, सुर्दा। ८ समय, वज्र।

८ तख्ता। १० छत्र, घासकूस। ११ शर, एक लंबी घास। १२ शवरथ, जनावन। १३ शोधविशेष, एक लड़ीबूटी। १४ श्मशान, सुर्दा जलानेकी जगह। १५ एक राक्षस। १६ आधिक्य, ज्यादाती।

१७ पक्षि खेसनेका एक उपकरण।

“कैलाटसमस्तः पातः पञ्चमात्रं शोधितमयीः।”

कटिभद्रविंशतः कटिन विनिर्वातको दामि ४” (अष्टकटिक)

(श्री०), १८ पक्षकी आनमाके निधे रचित भूमि,

सुहदोहका मैदान। १८ पराग, फूलकी धूल। इस अर्थमें यह शब्द समासान्तकी आता है। (वि०) कटयति प्रकाशयति क्रियाम्, काट्-विच्-अच्। २० क्रियाकारक, काम करनेवाला।

कट (हिं० पु०) १ किसी किछका रंग। यह काला रहता और टीन, लोहचून, इर, बट्टे, पाँवसे तथा कसीसे बनता है। २ काट, कटन।

कट (अं० पु० = Cat) काट-काट, तराश, व्योत।

कटक (अं० पु०-क़ो०) कट्यते निर्गम्यते पश्चात् निर्भरिण्यादिभिः, कट्-बुन्। जगद्विभक्तः संप्रसार्य इत्। ७० शब्दः। १ पर्वतका मध्यदेश, पहाड़के बीचकी जगह। इसका संस्कृत पर्याय नितम्ब और मेखका है। २ वलय, कड़ा, चुड़ी। ३ चक्र। ४ इक्षिदन्तमण्डन, हाथीके दाँतका गहना। ५ सैन्यवनवण, समुद्रका नमक। ६ राजधानी, वादयाहके रहनेका शहर। ७ सैन्य, फौज। “तुम्हरे कटक काँचि मनु चहै।” (तुम्हरी) ८ नगरी, शहर। ९ शिविर, डेरा। १० पर्वतकी समतलभूमि, पहाड़की हमबार जमीन। ११ रज्ज, रस्सी, डोरो।

कटक—१ लड़ीसा प्रायिके बीचका एक जिला। यह अक्षा० २०° १५' १" एवं २१° १०' १०" उ० और देशा० ८५° ३५' ४५" तथा ८७° १' ३०" पू० के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १८५८ वर्गमील पड़ता है। कटक जिलेसे उत्तर घेतरवी नदी एवं धामरा नदीका मुहाना, दक्षिण पुरी जिला, पूर्व बङ्गोपसागर और पश्चिम लड़ोवेका पर्वतवाहन करट राज्य है। यह जिला तीन प्रधान भूभागोंमें विभक्त है—

१म भाग—समुद्रके किनारेसे १० मील तक विस्तृत है। स्थानीय वन सुन्दरवनसे मिलता-जुलता है। किन्तु गह्रातटके वनकी गोभा यहाँ अधिक लयन-प्रोतिकर है।

२य भागमें शष्पग्रामम धान्यभूमि है। इनकी एक और समुद्रका तट और दूसरी और गिरिभूट लगा है। प्रायः यह २० कोस विस्तृत है। इस भूमिखण्डमें कृषि धान्य उत्पन्न होता है। सेमके

मध्य मध्य ताल, तमान, पान्च, षण्चुर प्रभृति वृक्ष भी लग जाते हैं।

इय भाग पार्वतीय है। यह जिलेके पश्चिम प्रायस्में अवस्थित है। पश्चिम प्रायस्में अनेक सुद सुद पर्यंत है। इस भूभागमें माछुका, तछुता, बाण, गोंद, रंगमका कौड़ा, शहद और सन वगैरह मिलता है।

कटकके पर्वत छोटे छोटे हैं। सर्वाथ शिखर २५०० फीटसे अधिक ऊँचा नहीं। किन्तु सभी पर्यंत प्रति प्राचीन कालसे हिन्दुओंके पवित्र तीर्थस्थान-लेख प्रसिद्ध है। प्रधान प्रधान पर्वत यह हैं—

१ पश्चिमा पहाड़ (पालमगौर) अनेक स्थानों-पर जुड़ा है। इसका प्राचीन नाम चतुष्पीठ है। यहां गाना स्थानोंसे हिन्दू तीर्थ करने जाते हैं। इसके चार शृङ्ख बड़े हैं। इनमें एक विरुपा नदीकी ओर है। आजकल इसे 'पालमगौर' कहते हैं। इन शृङ्खपर एक ऊँची मसजिद खड़ी है। १७१८-२० ई०की लड़ाईके आसनकर्ता शजा-उद्-दीनने उसे बनवाया था। मसजिदके सम्मुखपर निम्नलिखित उपाख्यान प्रचलित है—

एक रोज मुहम्मद ध्योममार्गसे जाते थे। साथमें सनका दलबल भी रहा। नमाजके समय सब नसती गिरिशृङ्गपर उतर पड़े। गिरिका शृङ्ग जिसने लगा और उन्हें धारण कर ल सका था। उस समय मुहम्मद नसती गिरिकी अभिशाप दे मसजिदके पास ही आकर ठहर गये। मुहम्मदने जहां नमाज पढ़ी, वहां पाज भी एक पत्थर पर उनकी पदकी रखा बनी है। पक्षे यहां लल मिलता न था। मुहम्मदके अपने यष्टि द्वारा आघात लगाते ही स्वर्ण मल्लिका प्रसवण वह चला। मुसलमान् यात्री मुहम्मदके पदका चिह्न और लल प्रसवण देखने बराबर पाया करते हैं। शजा-उद्-दीनने कटक जाते समय इराकपुरमें शिविर लगाया था। वहाँसे उठे गिरिशृङ्गस्थित नमाजकी ध्वनि सुन पड़ा। उनके पनुसर नमाजकी हुन बधौर हुये और उनके सब गिरिशृङ्गाभिमुख जाने लगे थे। किन्तु उन्होंने निषेध

कर कहा—यदि हम उपस्थित युद्धमें जीत सकेंगे, तो सौतेले समय सब लोग इसी गिरिशृङ्ग पर जा नमाज पढ़ेंगे। शजा-उद्-दीनका जय हुआ था। उन्होंने फिर ससैन्या शृङ्गके ऊपर जा नमाज पढ़ी। उन्होंने वहां सुन्दर मसजिद बनवा दी।

हिन्दू लल शृङ्गकी मण्डप करते हैं। शृङ्गके नीचे ही मण्डपस्थान है। प्रतिप्राचीन कालकी यहां हिन्दू मण्डपयज्ञ करते थे।

२ उदयगिरि भी पश्चिमा गिरिमाझाके चार शृङ्गमें एक शृङ्ग है। यह पश्चिमा गिरिमाझाके पूर्वभागमें अवस्थित है। यहां हिन्दुओं और बौद्धोंके देखनेकी बहुतसी चीजें मौजूद हैं। शृङ्गके उद्भागसे पाददेग पर्यन्त परिदर्शन करनेपर असंख्य देवमूर्ति देख पड़ती हैं। बौद्धोंके आधिपत्यकाल यहां अनेक सद्धाराम और बौद्ध चैत्य विद्यमान रहे। वर्तमान समय तकका ध्वंसावशेष पड़ा है।

उदयगिरिके पाददेग पर एक प्रकाण्ड पद्मपाणि बुद्धमूर्ति है। यहां पानिसे दर्शकका पक्षसे मूर्ति देख पड़ती है। मूर्ति प्रायः ८ फीट ऊँची है। एक पत्थर खोदकर यह मूर्ति गड़ी गयी है। इसका अधोभाग वनसे आच्छादित चार कुछ अंग भूगर्भमें प्रोक्षित है। पद्मपाणिके वाम हस्तमें पद्म है। नासिका, बाहू और वक्षःस्थलमें अलङ्कार मोमा देता है। दक्षिण हस्त और नासिका दोनों पद्म टूट गये हैं।

पद्मपाणिकी मूर्तिके पानि थोड़ी दूर चसनेपर ध्वंसावशेष मिलता है। इसीके निकट पर्वतपर एक झूप बना है। विस्तारमें झूप २१ फीट है। लल निकालनेकी २८ फीट लंबी छोरी लगती है। चारों ओर पत्थरका घेरा है। वह सादे ८४ फीट लंबा और १८ फीट ११ इंच चौड़ा है। प्रवेशके पथमें दो बड़े बड़े स्तम्भ खड़े, आजकल जिनके मस्तक टूट पड़े हैं।

शृङ्गसे ५० फीट ऊपर वनमें एक चैत्य है। बौद्ध राजाओंके समय यहां बौद्ध यतिवृत्तोंका समावेश रहता था। बौद्धोंका पवसान होनेपर हिन्दुओंने यहां अनेक देवदेवी-मूर्ति निर्माव कीं। देवदेवी मुसलमानोंने

अनेक मूर्तियोंके मस्तक और बाहु तोड़ डाले हैं। स्थानीय हिन्दू सकल मूर्तियोंकी पूजा करते हैं। इसी वनमें एक बड़े तोरणका मग्नावशेष विद्यमान है। तोरणके सम्मुख एक वृहत् बुद्धमूर्ति ध्यान-निमीलित नेत्रसे बंदी है। तोरणका गठन अति चमत्कृत और तोन सुवृहत् प्रस्तरोंसे गठित है। मनोयोगपूर्वक देखनेसे प्राचीन शिल्पके नैपुण्यका बहुतसा परिचय मिलता है। तोरणके सोधे प्रस्तर पाँच स्तवकोंमें विभक्त हैं। स्तवक देखनेसे समझते, मानो तोरण वने एक ही दो दिन डूबे और उनके भीतर मछली नौलपञ्च खिले हैं। इसकी इयत्ता कर नहीं सकते—कितनी यत्नसे पक्ष काटे गये हैं। द्वितीय स्तवकमें समग्र नरनारीकी कितनी ही मूर्ति हैं। मध्य-स्तवकमें कुसुमकी माला विभूषित है। चतुर्थ स्तवकमें एक दूसरेका हाथ पकड़े पुरुष और रमणीकी मूर्ति दण्डायमान है। सभी मूर्तियाँ फूलकी मालासे आवृत हैं। शेष स्तवक देखनेसे नयन और मन दोनों प्रसन्न हो जाते हैं। कुसुमका चित्र कैसा सुन्दर है! सोधनेसे हृदय फूल उठता—इस निर्जन वनमें किसने अभिलाषपूर्वक प्रस्तरकी पुष्पकी माला पञ्चनायी है।

तोरणके आगे ११ हाथ चलनेपर एक सुदृढ़ गृह देख पड़ता है। गृहकी चारो ओर कंठीले पेड़ खड़े हैं। गृहमें ध्यानी बुद्धकी एक प्रकाण्ड मूर्ति है। यह मूर्ति सारे ५ फीट ऊँची है। देवर्षी यमनोने नासिका और दक्षिण हस्ताकी काट डाला है।

पञ्चम-वसन्त भी अशिया गिरिका एक गृह है। इस गृहके नीचे माझीपुर नगरका ध्वंसावशेष पड़ा है। पक्षे इस नगरमें स्थानीय राजा रहते थे। आज भी तोरण, प्रस्तरके उत्तम माहृष्य और सुदृढ़ प्राचीरका मग्नावशेष दृष्टिगोचर होता है।

बड़देही अशिया पर्वतका सर्वांश गृह है। इसके पाददेशमें स्थानीय दुर्गाधिपतिका आवास रहा। सुखलमानों और मरुठोंके समय यहां चिरस्थायी बन्दोबस्त चलता था।

नक्षत्री गिरि भी अशियाका एक पर्व है। केवल

मध्यमें विरूपा नदी द्वारा दो खतम पर्वत हो गये हैं। मोतकदनगर परगनेके उत्तर-पश्चिम कोषमें इसकी अवस्थिति है। यहां बन्दन वृषके मित्र दूसरा कोई बड़ा पेड़ नहीं होता। इसके निम्न गृहपर अति प्राचीन गृहादिका ध्वंसावशेष पड़ा है। पूर्व-कालकी यही बौद्धिके मन्दिर-रूपसे सुशोभित था। मण्डप विनकुल नष्ट हो गया है। प्रस्तरके मकल स्तव ७५ फीट उच्च हैं। उन्हींके निम्न देवदेवीकी मूर्ति है। इसी ध्वंसावशेषके पास सुखलमानोंका एक टूटा कबरस्तान लक्षित होता है। सम्भवतः बौद्धिके मन्दिर तोड़ यह कबरस्तान बनाया गया होगा। मन्दिरका मण्डप नहीं, गृह आज भी विद्यमान है। उसकी चारो ओर प्राचीर है। मध्यमें अनेक चलदृत्त बुद्धमूर्ति देख पड़ती हैं। स्थानीय लोग इन सकल मूर्तियोंकी अमृत पुरुषोत्तम कहते हैं।

नक्षत्री गिरिका उत्तर गृह उँचाईमें सड़ख फीट है। इस गृहपर प्रस्तर निर्मित एक वृहत् मन्दिर रहा। आजकल उसका चिह्नमात्र देख पड़ता है। इसीके नीचे ५०० फीट पर छापीखाल नामक एक गुहा है। गुहाकी छत टूट गयी है। यहां कुछ बुद्धमूर्ति विद्यमान हैं। इनके निकट प्राचीन कुटिल पत्थरोंमें खुदी बौद्ध धर्मप्रचारकोंकी शिलालिपि मिली है। पाँच ही दो सिंहापर शतदन-पासना सिंहावाहिनो देवीकी मूर्ति है।

अमरावती पर्वतकी आजकल सब लोग चटिया पहाड़ कहते हैं। पर्वतके पूर्व पाददेशपर प्राचीन दुर्गाका मग्नावशेष देख पड़ता है। यह दुर्ग प्रस्तरसे ऐसा दुर्भेद्य किया गया, कि सातिशय प्रशंसनीय हुआ है। पक्षे इसकी अवस्था अच्छी रही। मध्यमें सरकारी पूर्तविभागके लोगोंने इस दुर्गके पत्थर खोद राहमें लगा दिये। इस भग्न दुर्गकी एक ओर सुसज्जित इन्द्रापीको दो प्रस्तरमूर्ति हैं। अमरावतीपर पाव-मोक सन्धा नौलपुष्कर (नौलपोषर) नामक एक वृहत् वसाग्रय भरा है।

महाविनायक वाक्षीवण्ड गिरिमाझाका एक

यह है। यह यह प्रति पूर्वकालसे ग्रेवीका एक पुष्प-मद तीर्थस्थान समझा जाता है। पात्रकस वनसे पाच्छत्र घनेपर पूर्वोन्मद्यं चला जाती भी दसके दन गेव-यात्री यहाँ प्रति है। इस यहमें एक स्थान पर गुण्डाकार इसी देव पड़ता है। इसी लाग महा-विनायक वा गणेशमूर्ति कहते हैं। इसके ऊपर विनायकका मन्दिर है। पर्वतका दक्षिण मुख शिव और वाममुख गौरीकी भांति पूजा जाता है। इस स्थानसे ३० फाट ऊँचे एक जलपवात है। उसीके जनसे देवार्चना होती है। प्रपातके निकट शिवके चट लिङ्ग विद्यमान है।

कटक जिल्लेमें तीन प्रधान नदियाँ विद्यमान हैं। उत्तरमें कलुषनागिनो बेंतरणो, मध्यस्थलमें घाघ्राणो और दक्षिणमें महानदी बहती है। बेंतरणो नदी महाभारतके समयसे पुष्पसज्जिता गङ्गाकी भांति पूजनीय है। पञ्चपाण्डवने इसी नदीमें स्नानार्थ और अवगाहन किया। बेंतरणो-प्रवाहित भूमिषण्णकी पूर्वतल यक्षीय देग कहते थे। उत्कल, कलि और शिखो बस है। इन्हीं तीन नदियोंके गुणसे कटक जिला शस्यगामी है। नदियाँ-उच्च स्थानसे निम्न भूमिको जानें चयवा अपर नदीको अवर्तने नहीं मिलती। यह समतल भूमिपर बहती और शाखा प्रगाथा फला कटक जिल्लेको सुजल एवं सुफल करती है। इन जिल्लेमें जम्बू, बाकुद प्रवृत्ति नाले भी हैं।

कटक जिल्लेमें कई नगर हैं—१ कटक, २ याजपुर, ३ केन्द्रावाड़ा, ४ लगतुमिंदपुर।

१ कटक नगर पश्चात् २०° २८' ४" उ० और देशा० ८५° ५४' २८" पू० पर अवस्थित है। यहाँ महानदी बिधा हो होवाकार बन गयी है। महानदी और भाटलुडी नदीके मुहपर ही कटक नगर बसा है।

कटक भाषुनिक नगर नहीं। सादभाषणोंके मतमें यह नगर कान्हे भी मो वर्ष पूर्व केमरावंगीय किसी व्यक्तिले प्रस्थापित किया, जिसने भी बहुत पहले दूसरा कटक स्थापित हुआ। भवगुप्तके अनुशासन-

पत्रमें कटकका उल्लेख मिलता है। भवगुप्तने ई०के ८म शताब्द राजत्व किया था। अतएव उस समय वहाँ कटक विद्यमान रहा। (Indian Antiquary, Vol. V. 60.) कटक नगरसे छेड़ कीच पूव चौदार नामक एक ग्राम है। सब लाग इसे कटक-चौदार कहते हैं। किसी समय इस स्थानपर उत्कल राज्यकी राजधानी रही। उत्कलकी पञ्जाके मतमें इन नगर-को सर्पयज्ञके समय राजा जनमेजयने स्थापन किया था। कटक-चौदार ही भवगुप्तके अनुशासनका कटक समझ पड़ता है। पूर्वथा पात्रकल न रहते भी परिदग्गन करनेसे बोध जाता—जिसा समय कटक-चौदार पक्षिक सन्निधियावा रहा। इसी प्राचीन नगरके पार्श्वपर कपालेश्वर नामक एक दुर्ग है। उत्कलराज चौड़गङ्गके समय इस दुर्गमें एक सुविस्तीर्ण जलाशय खोदा गया था। पात्रकल भी स्थानीय लोग उत्त जलाशयको चौड़गङ्गका पाछरा कहते हैं।

वर्तमान कटक-नगरमें बड़वाटो नामका एक दुर्ग खड़ा है। ई०के १२व शताब्द राजा चनङ्गभोमने यह दुर्ग बनवाया था। १०५० ई०का पहलमदगाहके शासनकाल इस दुर्गका उत्तर-पश्चिम प्राकार लगा और पूर्ण तारण बना। दुर्ग प्रभारके दोहरे प्राचीरमें विरा है। चारो ओर गहरो खाई है। मध्यमें प्रभारका एक उच्च माथ खड़ा है। उमो, पर जयपेताका फहराती थी। चाईन-पक्षिकोंके मतमें इस दुर्गमें राजा मुकुन्ददेवका गो-मन्त्रिणा मकाम् रहा। किन्तु पात्रकल उसका पित्र भी देख नहीं पड़ता। कटक नगरमें दोबानो-चाटालत और कमिगनरका प्रधान कार्यालय मौजूद है।

२ याजपुर प्रति प्राचीन कालसे हिन्दुओंका पुष्प-स्थान-केसा प्रसिद्ध है। इसी स्थानपर पुराणाक्ष-विरला-सेत्र विद्यमान है। इन नगरमें किन्हीं को चोरी, देखने लायक हैं। पात्रकल याजपुर याजपुर सव-डिविजनका प्रधान स्थान है। याजपुर-और गिरा नद्वेन विस्तृत विवर देयी।

३ केन्द्रावाड़ा नगर महानदीकी चितातपसा नाम्नी याप्रावे उत्तर कुछ दूर पर अवस्थित है। सरहदोंके

समय यहाँ एक फौजदार रहे। कुजड़की राजा तत्काल नाना स्थानोंमें लूटमार मचाते थे। उक्त राजाकी शासन देनेके लिये ही यहाँ फौजदारने अवस्थान किया।

कटक जिलेमें धान्य अधिक उत्पन्न होता है। वियाली, दोफसली और साखिया धान्य ही प्रधान है। बङ्गदेशके धामनकी भाँति यहाँ 'शारद' धान्य लगता है। फिर धामनकी तरह शारद भी नाना प्रकार रहता है। चने, मूँग, चहूँद, चहूँहर वगैरह दालकी उपज अच्छी है। सरस, तम्बाकू, हल्दी, मेथी, सौंफ, प्याज, लहसुन, पलसी, पान प्रभृति द्रव्य भी उत्पन्न होती हैं।

बीपघके हवाँमें धामनकी, आक्रान्ता, पलुन, भक, पाखगन्ना, धान्न, विख, भुङ्गराज, ब्राह्मण-यष्टिका, वकुल, वज्रमूला, बहेड़ा, वेण, घासक, भुत्तारि, भूमिवाहणो, चमत्तमूल, बाकचो, चिरायता, चित्रकमूल, रक्तचित्रकमूल, दाड़िम, धतूरा, दास-हरिद्रा, दन्तो, दूधो, गजपिप्पली, हृत्कुमारो, गुर्च, गोक्षुर, हृदोकरण, हरीतकी, इन्द्रयव, इन्द्रयावो, इसबगोल, लाम, लयितो, जायफल, कण्ठापर्णी, कण्टककुसुम, कुचिला, कमरख, मोषा, मुद्गया, महा-निम्ब, निम्ब, नागखर, नील, फूट, परबल, पलाय, रक्तचन्दन, इमली, लालमूली, सोमराज, शालपर्णी, सोनामुखी प्रभृति देख पड़ते हैं।

इस जिलेमें हिन्दू, मुसलमान वगैरह नाना श्रेणियोंके लोग रहते हैं। चंगरेजी राज्यसे पूर्व पुनः पुनः विदेशीय आक्रमण पड़नेसे कटक जिला अत्यन्त दरिद्र और हीन अवस्थाकी पहुँचा था। आजकल फिर क्रमशः अवस्था सुधर रही है। किन्तु पहले खांग जैसे परिश्रमी थे, आजकल वेसे नहीं। कयक भी विलासी हुये जाते हैं। यहाँ क्रमशः विधायता द्रव्योंका आदर बढ़ रहा है। देशो द्रव्यादिसे लोगोंकी यक्षा घटते जाती है। नवंबर, उषे प्रथम शुद्ध दीपो।

कटकई (हिं० खी०) १ सेना, फौज। २ सैन्य-समावेश, फौजशा जमाव।

कटकट (नं० त्रि०) कटप्रकारः दिलम्। १ चर्चित,

बहुत ज्य.दा। २ सर्वोत्कृष्ट, सबसे अच्छा। (पु०) ३ मझादेव। ४ अथवा शब्दविशेष, एक भाषा। दाँत बजनेका शब्द कटकट कहाता है।

कटकटना, कटटना देखो।

कटकटा (सं० अथ०) कटकट-डाव। अथवा गुरवार धातुवाप्राप्तिको वाप। या श्रावण। धातुकरण शब्दविशेष, एक भाषा।

"हृदिभिर् नद्यापोरिन्द्रोऽथमभिगन्तुः।

ततः कटकटाशब्दो बभूव सुमहात्मनोः"। (भारत, वन ११० पं०)

कटकटाना (हिं० त्रि०) दत्तपेय्य करना, दाँत पीसना।

कटकटिका (हिं० स्त्री०) पवित्रिशेष, एक पुनपुन। यौतकाशको यह पर्यंतसे नाचे समस्त भूमिपर उत्तर पाती और हल वा भित्तिके खोखलेमें घोंसला लगाती है।

कटकवाला (हिं० पु०) मियादो दे, जिस वेंमें सुदत रहे।

कटकाई, कटकाई देखो।

कटकार (सं० त्रि०) कट करति, कट-क-प्र. १ चटाई बनानेवाला। (पु०) २ शिष्टकार जाति-विशेष, एक कौम। शूद्राके गर्भसे गापनमें वंशने इस जातिको उत्पन्न किया है। कटकारका व्यवसाय चटाई वगैरह बनाना है।

कटकी (सं० पु०) कटकोऽस्याप्ति, कटक-इति। १ पर्यंत, पहाड़। २ यज्ञ, हाथी। (त्रि०) ३ कटके-युक्त, फौजदार। ४ कटकका रहनेवाला। (स्त्री०) ५ साल भिर्बे।

कटकोय (सं० त्रि०) कटकाय हितः, कटक-इति। वनयादि प्रयुक्त करनेमें लगनेवाला, जो कड़े बनानेके काम आता हो। यह शब्द खण्डादिका विशेषण है।

कटकुटो (हिं० स्त्री०) पर्यमाणा, घास-कुसुमा भापड़ी।

कटकोल (सं० पु०) कटति स्त्रयति, कट-पंच,

कटस्थ कोली घनीभाषो यव, बड़ो। निठोवनपात्र,

पीकदान, चुकनेका वरतन।

कटरखदिर (सं० पु०) १ बाक, कोष। २ शूणाव,

गौदड़।

कटखना (हिं० वि०) १ दस्ताघात मारनेवाला, जो दाँतसे काट खाता हो। (पु०) २ छेन, काट-टाँट, कतर-झोत, हथकंडा, सफाई, चासाकी। कट-खन देवानको कटखनवाजी कहते हैं।

कटखाटक (सं० वि०) कटं खपादिकं सर्वमेव खादति, कट-खाद-एल्। १ सर्वभक्षक, सब खा जानेवाला, जो खानेसे कोई चीज छोड़ता न हो। २ श्वभक्षक, सुदो-खोर। (पु०) ३ काचकलस, ग्रीष्मकी सुराही। ४ काक, कौवा। ५ गृध्राल, गोदड़। ६ काच-लवण।

कटखनाम (सं० पु०=Cut-glass) सफ़ेद एवं काच-कार्य-वर्षित काच, मजबूत नज़्म, गीदार शीशा।

कटघरा (हिं० पु०) १ काष्ठभवन, लकड़ीका बाड़ा। इसमें जंगला या लोहे, लकड़ी समूहका ढंढा लगा रहता है। २ सड़क पिछर, बड़ा पिंजड़ा।

कटघोष (सं० पु०) कटप्रधाना घोषः, मध्यपदलो०। १ पूर्वदेशीय ग्रामविशेष, भारतके पूर्व प्रान्तका एक ग्राम। २ ग्वालपाड़ा।

कटहट (सं० पु०) कटं श्वं कटति खानत्या पात्रघोति, कट, बाहुलकात् खृष। १ चमि, पाग।

“कटहटाप माशाय नमः पचदराय च।” (चण्डिपुराण)

२ खर्च, मोना। ३ दाहहरिद्रा, दारहलदी। ४ गणेश। ५ बट्ट।

कटहटा (सं० स्त्री०) बाच्छुक वृक्ष, पालका पेड़।

कटहटी (सं० स्त्री०) दाहहरिद्रा, दारहलदी।

कटहटीरो (सं० स्त्री०) कटहटं यज्जिर्ज सुवर्णतुल्यं वा कान्तिं ईरयति प्रापयति, कटहट-ईट-वण्-लोप्। १ हरिद्रा, हलदी। २ दाहहरिद्रा, दारहलदी।

कटचुरि (सं० पु०) जाति एव मोक्षविशेष। नागर-खण्डमें यही शब्द कटखरी नामसे प्रसिद्ध है। पूर्वकाल-पर कटचुरि नामक एक प्रसक्त जाति भारतके गाना स्थानोंमें राजत्व करती थी। थिसालिपिमें इस जातिकी नाम कलचुरि लिखा है। कटचुरि देखो।

कटकोरा (हिं० पु०) कृष्णजीरक, कासा सीरा।

कटड़ा (हिं० पु०) भैंसका पंड़वा या नर बच्चा।

कटतास (हिं० स्त्री०) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह काठसे बनती है। अपर नाम करतास है।

कटतासा, कटतास देखो।

कटती (हिं० स्त्री०) विक्रय, फरोख्त, मांग।

कटदान (सं० स्त्री०) कटो देहवर्तनं दीयतेऽत्र, कट-दा-ष्णुट्। योक्षय्यके पार्श्वपरिवर्तनका एक उद्भव। यह उत्सव भाद्र मासकी शुक्ला एकादशीको चरणा-नक्षत्रके मध्यपाद-योगमें सम्पन्नकाल कर्तव्य है।

कटन (सं० स्त्री०) कटेन खपादिना भक्ष्यते, सम्पद्यते, कट-भन-वच्। १ गृहाध्यादन, घरका हप्पर।

कटनगर (सं० स्त्री०) पूर्वदेशीय नगरविशेष, मय-रकी सुल्तका एक शहर।

कटना (हिं० स्त्री०) १ दिधा होना, दो टुकड़े बनना। पक्षयक्षकी धार लगनेसे जब कोई चीज दो टुकड़े हो जाती, तब उसकी क्रिया कटना कहती है। २ पिस जाना, बंटना, बारीक पड़ना। ३ प्रियेय करना, सुगना, धंसना। ४ चंगकी हानि होना, दिग्घात भग्न पड़ना। ५ युद्धमें पराजित हो कर मरना, जन्म खाना। ६ काटा, कतरा या झोता जाना। ७ छूटक होना, छूटना, कम पड़ना, जाते रहना। ८ व्यतीत होना, गुजरना, बीतना, चला जाना। ९ समाप्त होना, बाकी न रहना। १० हस्तपूर्वक छूटक होना, धीकेसे साथ छोड़कर भग्न वच देना। ११ सज्जित होना, शरमाना, भेषना, सुंदर कटकाना। १२ बर्था करना, डाह मानना, जल जाना। १३ मोहित या पावस होना, भोपक रह जाना, सुंदर पानो खाना। १४ व्यर्थ व्यय पड़ना, फूजल खर्च लगना, बिगड़ना। १५ विकस्य होना, खप जाना। १६ मिलना, हाथ लगना, पक्के पड़ना। १७ नष्ट होना, मिट जाना। १८ बनना, तैयार होना। १९ तराग पड़ना। २० पूरा भाग लगना।

कटनास (हिं० पु०) मोलकपटपची, मोलागडांस।

कटनि (हिं० स्त्री०) १ कटाई, तराग, काटकांट।

२ प्रीति, मुहब्बत, लगी।

कटनी (हिं० स्त्री०) चन्द्रविशेष, एक खोजार।

काटनेमें काम आनेवाला बीजार कटनी कहाता है।  
२ कटार्थ, काटफाँक। ३ तिरछी दीड़।

कटपञ्चक ( सं० स्त्री० ) चखचालनाकी पञ्चविध भूमि,  
घोड़ा फेरनेकी पाँच तरफकी जमीन। इसमें पहली  
मण्डनाकार, दूसरी चतुरस्र, तीसरी गोमूत्राकार,  
चौथी अर्धचन्द्राकार और पाँचवीं नागपाशाकार  
रहती है। ( जयदल )

कटपञ्जिङ्गिका ( सं० स्त्री० ) टणगाला, घासकी  
भोपड़ी।

कटपखन ( सं० स्त्री० ) प्राग्देशीय खासविशेष, एक  
शरकी जगह।

कटपीस ( सं० पु० = Catpiece ) बखका कटा  
टुपा टुकड़ा। थान ख्य।दा बड़ा होनेसे जो  
फुल्ल कपड़ा फाड़ लिया जाता, वही कटपीस  
कहाता है।

कटपूतन ( सं० पु० ) कटस्थ शवस्थ पूर्ता तनोति,  
कटपूतन-वच्। प्रेतविशेष। क्षत्रिय शवना धर्म  
छोड़नेपर कटपूतन ही शव भक्षण करता है।

“कतिथ्य कुचपानी च चतियः कटपूतनः।” ( मनु १५०१ )

कटपू ( सं० पु० ) कटे श्रमानी प्रवृत्ति विचरति, कट-  
पू-क्षिप् दीर्घश्च। क्षिप्र-क्षिप्-विद्-हु-ग्रां होचोक्षिप्-कारवच्।  
वच्, ५।०। १ महादेव। २ राक्षस। ३ विद्याधर।  
४ पाशाक्रीडक, किमारवाज। ५ कीट, कीड़ा।

कटप्रोथ ( सं० पु०-स्त्री० ) कटस्थ कव्याः प्रोथः मांस-  
पिण्डः, ६-तत्। १ नितम्ब, चूतड़। २ कटि, कमर।

कटफरेश ( सं० पु० = Outfresh ) कटा-कटा मांस,  
बिगड़ी हुयी चीज। ससुद्धमें गिर जानेसे दाग पड़ा  
और सन्दूक खोलनेसे कटा टुपा तथा मांस कट-  
फरेश कहलाता है।

कटभग्न ( सं० पु० ) कटानां गम्यानां हस्तेन भग्नः।  
१ हस्तसे गम्यका छेद, हाथसे बनाज तोड़नेका  
काम। २ गुण्डो, खोँठ। ३ राजविनाश, सलतनतकी  
मिसमारी।

कटभिः कटनी ऐको।

कटमी ( सं० स्त्री० ) कटवद् भाति, कट-भा-ट-होष।  
१ सधु ज्योतिषकी लता, खोटी रजनीत। भावप्रकाय-

के मतसे यह कटु एवं तिक्तारस, सारक, कफ तथा  
वायुनाशक, पत्यन्त उष्ण, वमनकारक, तीक्ष्ण, अग्नि-  
वर्धक, सुखिजनक और स्मृति-शक्तिप्रद है। इसका  
संस्कृत पर्याय—कटभि, ज्योतिष्क, कट्टनी, पारावत-  
पदे, पष्पानलता और ककुत्स्थनी है। २ चपराजिता।  
इसका संस्कृत पर्याय—नामिक, शीण्डो, पाटकी,  
फिण्डी, मधुरेश, सुद्रम्यामा, केड्य और श्यामला  
है। राजनिघण्टुके मतमें यह कटु, उष्ण और वायु,  
कफ एवं अजीर्ण रोगनाशक है। कटमी श्वेत और  
नील दो प्रकारकी होती है। दोनों को समगुण-  
विशिष्ट हैं। इसके फलमें भी उन्नमनक गुण रहते हैं।  
किन्तु वह कफशुद्धकारी होता है। चरपादि ऐको।  
१ कण्टक-शिरोष, खंडीला सरसों। ४ सुपत्तो,  
भूसर।

कटमौलक ( सं० स्त्री० ) कटमौ-वृक्षक, रतनजोतकी  
छाछ।

कटमाखिली ( सं० स्त्री० ) कटानां क्षिप्राद्योपधीनां  
भासा साधमत्वेन यस्याः पक्षि, कटमासा-इन-डोप।  
मदिरा, शराब। क्षिप्रादि शीघ्रघटनमुद्दिने यह  
बनती है।

कटस्थ ( सं० पु० ) कटति, कट-पथ्यच्। कवचिदि-  
कटिस्थोपथ्य। उष्ण, शपट। १ वाद्यविशेष, एक बाजा।  
कथ्यते आश्रित्यते गद्वरनेन। २ वाण, तीर।

कटम्बरा ( सं० स्त्री० ) कटं गुणातिशयं हव्योति  
धारयति, कट-ह-पथ्य-टाप्। १ कटकी, कुटकी।  
२ गन्धपसारणी। ३ दन्तीहथ, दाँती। ४ गोधा,  
गोह। ५ बध्। ६ शोपाकहथ। ७ करिपी,  
हथिनो। ८ कलखिजा। ९ मूर्वा, सोंफ। १० पुन-  
र्वाया। ११ राजबला। १२ महाबला।

कटभर ( सं० पु० ) कटं गुणातिशयं विभर्ति, कट-  
भ-पथ्य-नुम्। संशयं धर्वाभिवारिपतिनिर्गमः। शा १।५५।  
१ शोपाकहथ। २ कटमौ हथ।

कटभरा ( सं० स्त्री० ) कटभर-टाप्। कटभरा ऐको।

कटर ( हिं० स्त्री० ) १ टणवियेय, पचवान, एक  
घास। ( सं० पु० = Cutter ) २ एक मसलका  
जहाज। ३ सरोता। ४ काटनेवाला। ५ मोता-



विशेष, एक जाय। इसमें हाँड नहीं लगता। कटर तप्तोदार वरिष्ठोंके महारि पाया-जाया करता है।

कटरफटर (हिं० लि० वि०) १ उद्योःपरमं, कुसुमं पायाजके माय। २ समपूर्वक, क्षीरमे।

कटरना (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली।

कटरपटर (हिं० लि० वि०) जूतेके क्षीरमे।

कटरा (हिं० पु०) १ सुदृढ वर्गाकार पण्यभासा, छोटा चीकोर बाजार। २ पंड़वा, भैरवा नर वशा।

कटरिया (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किष्कका धान। यह पाषाणमें अधिक उन्नता है।

कटरौ (हिं० स्त्री०) १ धान्यरोगविशेष, धानकी एक बीमारी। २ नदीके तटकी निम्नभूमि, दरयाके किनारेकी मोधी जगह। इसमें दृढदल रहता और मरकट लगता है।

कटरैतो (हिं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक चीज। इसमें एकड़ी रेतते हैं।

कटस (हिं० पु०) १ बूढ़, कसाई। यह शब्द मसमनानाको छुनाके साथ मसमोघन करनेमें भी आता है।

कटवा (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। इसके गन्धफलोंके निकट फण्टक रहते हैं।

कटवां (हिं० वि०) १ कटा हुआ, जो दोधमें रक्ता न हो।

कटवांसी (हिं० पु०) किसी किष्कका बाँस। यह पोला नहीं होता। फण्टक भरे रहते हैं। गाँठ पास-पास पड़ती है। कटवांसी बाँस मोधा नहीं बढ़ता और घना लगता है। इसे पासकी चारो ओर लगा देते हैं।

कटवण (सं० पु०) कटः उत्कटः वणः युद्धकण्टारम्, बहुश्री०। भीमसेन। भीमसेन क्षी०।

कटगर्करा (सं० स्त्री०) कटः मलः गर्करिव मिटरम-त्वात् यस्याः, बहुश्री०। १ गाँडेटी मत्ता, एक घन। २ टट्टी चटाईया एक टुकड़ा।

कटसरेया (हिं० स्त्री०) वृषविशेष, एक पेड़। इसमें जेन, पीत, रक्त और नील कई प्रकारके पुष्प आते हैं।

कांतिक मास इसके फूलनेका समय है। कटसरेया पड़सेको भाँति कटोली होती है।

कटस्यम (सं० स्त्री०) १ नितम्ब एवं कटि, चतुर्धोर कमर। २ हस्तिकपोल, बायोकी कनपटी।

कटहर, कटहन क्षी०।

कटहरा (हिं० पु०) १ कटहरा, काठका घर। २ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह उत्तर-भारत और पाषाणकी नदियोंमें मिलता है।

कटसारिका (सं० स्त्री०) कटसरेया, एक भाँडो।

कटहन (हिं० पु०) पनस, चको। (Artocarpus integrifolia) यह एक वृहत् वृक्ष है। उत्तर अफ्रिका कटहन भारतवर्ष और मध्यदेशमें सब स्थानों पर लगाया जाता है। पश्चिमवर्ष पर्वतके वनमें इसके खभावतः उत्पन्न होनेका अनुमान आता है। कटहनका पर्वतगोलाकृति गिरा श्यामवर्ण पत्तोंमें मण्डित रहता है। शाखा विकटाकार पत्तोंके भारसे झुक पड़ती है। मध्यदि पर्वतके सदा वृद्धिवर्ष वनमें कटहन लगाया और प्रजनन प्रवृत्तिमें भी पाया जाता है। पूर्व पर्वतपर यह चापसे घाय होता है।

एक गत खोदकर गोबरमें भर देते हैं। फिर उसमें जून या जुलाई मास कटहनका बीज डाला जाता है। ७-८ ई०को रोहमिरल रोहनी इसे जमेका ले गये। बाजिन मारियास पादि, स्थानोंमें भी यह लगाया गया है।

नव पत्तोंपर सुदृढ एवं दृढ कुन्तल रहते हैं। शाखाओंपर मण्डलाकार उत्थित रेखायें देख पड़ती हैं। पत्र धर्म-मध्य, चिकन, ऊपर प्रकाशमान, मोचे दृढ और चण्डाकार होते हैं। मध्यवर्षका मोचे प्रधान रहता है। उसकी दोहों ओर चारमे घात दृष्टतक ७० धार्मिक गिराये निकलना है। पत्तोंके मोचेका अनुबन्ध बढ़ा होता है। उसका छोड़ा पाषाण पत्तोंमें मिला रहता और गिर पड़ता है। फल वृहत् लगता, सुदृढ शाखाओंपर लटकता और दोधोंकार एवं भाँस दिखता है। उसका पाषाण मान्द्र और गोलाकार होता है। वहनपर तोण्ड चरिया उभर पानी है। बीज वृक्ष-मध्य और तेजमय रहता है।

वस्त्रसे प्रत्यक्ष आभरण निर्वास निकलता, जिसका भेद तिन्दुलित रहता और जलमें घुल सकता है। उस मूल्यवान् लेप और लालिकी भांति व्यवहृत होता है। उससे लचीला, चमड़े-जैसा पानी रोकने-वाला और पेंसिलके चिह्न मिटाने योग्य रवङ्ग बन सकता है। किन्तु अधिक रवङ्ग नहीं निकलता।

कटहलका काष्ठ वा चूर्ण उबालनेसे पौला रंग तैयार होता है। उससे मछलदेगवासी साधुवीके वस्त्र रंगे जाते हैं। कटहलके रंगकी मांग मन्द्राज, भारत-के अन्य प्रान्त और जावामे भी प्राया करती है। वह फिटकरी डालनेसे पक्का और हलसे थोड़नेसे गहरा पड़ जाता है। मोल मित्रानेसे कटहलका रंग हरा निकलता है। उसे रंगम रंगनेमें प्रायः व्यवहार करते हैं। यज्ञानमें फल और काष्ठ दोनोंसे रंग बनता है। भवघमें वस्त्र और सुमात्रामें कटहलके मूलसे रंग निकालते हैं। वस्त्रमें तन्तु होता है। कुमायू-में तन्तुसे रज्जु बनती है।

हृक्षका रस मांसके शोथ पार स्कोटपर संप्रयत्नको हृक्षके लिये लगाया जाता है। नवोम पत्र, चर्मरोग और मूल पक्षीरूपर चलता है। वीजमें ओ मण्डवत् द्रव्य रहता, वह उसको सुखाने और कुटाने-पिटानेसे प्रयत्न हो सकता है। अपक्व फल स्तम्भक और पक्व फल सारक पड़ता, किन्तु प्रत्यक्ष पौष्टिक होते भी कुछ कठिनतासे पचता है।

कटहलके हृक्ष फलको फलका सार समझना चाहिये। क्योंकि अंगवासकी भांति पुष्पसमूहसे उत्पन्न होनेवाले फलोंका वह रागीकरण है। विभिन्न फल प्रायः संस्कार कहलाते हैं। प्रत्येक फलमें एक बीज पड़ता, जो कर्कश गन्धवासे सुखादु खालके मांसल पिण्डसे ढाड़त रहता है। ऊपरका कठोर वस्त्र फेंक दिया जाता है। बीजको चारो ओर जो मांसल पिण्ड जमता, वह भारतवासियोंके भोजनमें चलता है। युरोपीय कटहलको बहुधा नहीं खाते। फल साधारणतः १२से १८ इंच तक लंबा और ६से ८ इंच तक चौड़ा होता है। प्रत्येक फलमें ५०से ८० तक कीचि निकलते, जो मृदु, सरस, एवं सुमिष्ट द्रव्यसे

बनते हैं। उक्त द्रव्य उबालने और टपकानेसे कर्कश गन्ध एवं भङ्ग, खादविगिष्ट मद्यसारका पेय प्राप्त होता है। बीजको भूनकर खाते हैं। वह पीसनेसे मिंधाहके चाटे-जैसा निकलता है। कच्चे फलकी तरकारी बनती है।

भीतरो काष्ठ पीत भयवा पीतप्रभ भूस्वरूप, निविड, समकणविगिष्ट एवं द्रवत् कठोर रहता, प्रदर्शनसे तिमिरावृत लगता, सम्यक् परिष्कृत पड़ता और सूक्ष्म परिष्कारको पड़ता है। दाहकर्ममें वह अधिक व्यवहृत होता है। कटहलके काष्ठकी मञ्जूपा और सजा बनती है। कसान्तर-कार्य और मांजनी-पृष्ठके लिये उसे युरोप मेंजते हैं। बोहाकी मूर्तियोंपर प्रायः कटहल देखनेमें आता है। कारण वह इस वृक्षको पवित्र समझते हैं।

काठ ( हिं० वि० ) काठ खानिवाला, जो दांतसे चबा डालता हो। ( स्त्री० ) कठरी।

काठा ( सं० स्त्री० ) १ कटकी, कुटकी। ( हिं० स्त्री० ) २ वध, कुतूह, मारकाट। ( वि० ) ३ विच्छिन्न, टूटाफूटा, जो कट गया हो।

काटई ( हिं० स्त्री० ) १ छेद, प्रहार, काटनेका काम। २ अक्षय्य, अनाजका काटा जाना। ३ छेदका पारिस्थितिक, काटनेकी उजरत या मजदूरी। ४ मटकटेया।

काटाक ( हिं० वि० ) काट-काट किया हुआ, जो काटा गया हो।

काटाकट ( हिं० पु० ) काटकटका शब्द, एक तरहकी भावाज।

काटाकटो ( हिं० स्त्री० ) वध, कुतूह, मारकाट।

काटाकु ( सं० पु० ) कटति लघुद्वेष नीविना निर्गहयति, कट-काकु। कटिद्विधा काठः उष्णः शुष्कः पक्षी, चिड़िया।

काटास ( सं० पु० ) कटो घतिप्रयितो पवित्रो यत्र, कटि-पवि-यत्। युरोपीय वस्त्ररूपी भाग्य १५। का १५१११। १ अथाह दर्शन, मञ्जारा। २ अथर्वके दोषका दर्शन, दूसरेके ऐशका इजहार।

“इत्यादि उपरीत्यां काठना काटाने पु कटापनिसेधे १” ( अथर्व )

नाटक आदिमें पात्रों की चाँचीपर साहरी और जो छोटी और पतली कानो कासी रेशायें लगायी जातीं, वह भी कटाक्ष कहलाती है। कटाक्ष हथियो-की चाँचीपर भी बनते हैं।

कटाक्षमुद्र (सं० द्वि०) अथाङ्ग दर्शन द्वारा शब्दोंत, जो मञ्जरिसे ही पकड़ा गया हो।

कटाक्षविग्रह (सं० पु०) प्रीतिका वाण-जैसा अथाङ्ग दर्शन, सुहृदयकी तीर-जैसी तिरकी मञ्जर।

कटाक्षवेक्षण (सं० स्त्री०) कामुक दृष्टिका निवेप, प्यारकी निगाहका इशारा।

कटाक्षि (सं० पु०) कटेन टपादि घेटनेन जातो-ईश्वर, ई-तत्। टपादिके घेटनसे उत्पन्न किया हुआ ध्वनि, जो चाग घास फूस छानकर बजायी गयी हो।

“लभासि तु भावेन ब्राह्मणा मुनया वरः।

विभूती सुदूरवृत्ती दूरुषकी वा कटाक्षिना॥” (मनु ५२९००)

कटाक्षिनी (हिं० स्त्री०) १ वध, कत्तल, मारकाट।

२ मुद्र, लड़ाई। ३ तर्क, बहस।

कटाक्ष (सं० पु०) शिष्य, महादेव।

कटाक्ष (हिं० द्वि०) १ द्विद कराना, काटनेमें लगाना। २ छसाना, दाँतोंसे फड़ाना। ३ घूमकर जाना, घुमाना, बघाना।

कटाक्षन (सं० स्त्री०) कटप्य पासन-विशिष्य अयमं उत्पत्तिरूपानम्, ई-तत्। बोरण, घुस।

कटार (सं० पु०) कटं कन्धर्ममटं शब्दप्रति, कट-क-पण्। १ कामी, जहमतपरस्त। २ सम्पट, क्षिणाला करनेवाला। (हिं० स्त्री०) ३ अस्त्रविशेष, एक-हथियार। यह छोटी और तिकोनी रहती और दोनों ओर चार घटती है। कटारकी मारती समय घेटनें घुमेड़ देते हैं। ४ वनविस्तार, जंगली बिली।

कटारा (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, बड़ी कटार। २ इसमीका फल। यह कटार-जैसा बना होता है। ३ कटंकटारा।

कटारिया (हिं० पु०) अस्त्रविशेष, एक रंगमी कपड़ा। इसमें कटार-जैसी रेशायें छासी जाती हैं।

कटारी (हिं० स्त्री०) १ अस्त्रविशेष, कटार। २ एक चोड़ार। इससे बूझे बनानेवाले मारियसको सुरक्ष-सुरक्ष चिकनाते हैं। ३ मारमें पड़ा हुआ तीरवाय काट, राइकी नोकदार लड़ाई। पालकी टोनेवासे कटार राइमें पड़ी नोकदार लड़ाईकी कटारी कहते हैं। कावय घेर पड़ जानेसे वह कटारीकी भाँति घुम जाती है।

कटाम (सं० द्वि०) कटोऽप्यासि, कट-काण्-पात्वम्। विचदिक्च। वा ३५४८०। सम्पद मन्त्रभुक्त, जिसके अण्डों कनपट्टी न रही।

कटामी (हिं० स्त्री०) भटकटेया।

कटाव (हिं० पु०) १ द्विदपच्छेद, काट-छांट, कतर-थोत। २ कृत्रिम पत्रमुष्पादि, बनावटी वैनमूटे। यह काटकर बनाये जाते हैं।

कटावदार (हिं० वि०) कृत्रिम पत्रमुष्पविशिष्ट, बना-वटी वैनमूटेवाला। जिस पत्थर या लकड़ीपर वैनमूटे कटनें, वैसे कटावदार कहते हैं।

कटावन (हिं० पु०) १ कटाव, काटका काम। २ विशिष्ट लण्ठ, कटा हुआ टुकड़ा।

कटास (हिं० पु०) १ कटार, चौखर, किसी क्षिणकी जंगली बिस्वा। २ पञ्चावप्रदेशकी वितस्ता नदीके तीरका एक तीर्थस्थान। यहाँ सतधरा मन्दिर बना है। इस तीर्थका दर्शन सेने बहुतसे लोग आया करते हैं। कटासमें ही धीन-परिब्राजक सुपुन सुयज्ञ वर्चित ‘पुष्पाप्रसन्नवच’ था।

कटामी (हिं० स्त्री०) श्रवक गाड़नेका स्थान, कर्मरि-स्थान, जिस जगहमें मुर्दा गड़े।

कटाह (सं० पु०) कटं अस्त्रापादिकं पाहगित निष्पा-रयति, कट-पा-हन्-ट। १ कच्छपका कर्पूर, कछुवेका खपड़ा। २ हीपविशेष, बड़े मुजका एक द्विष्ठा। ३ नैलपाकपात्र, घी या तेल गर्म करनेका हिल्ला बर्तन। ४ विद्याचारमागविशिष्ट ज्ञायमान मरिप-गिद, धौग निष्कलता पड़वा। ५ नरकविशेष, जहन्नुम। ६ कर्पूर, कष्टूर। ७ कूप, कुवा। ८ चूर्ण, अपाङ्गताव। ९ कड़ाह, कड़ाही। १० चप। ११ टह, टोहा।

काटाहक ( मं० स्त्री० ) काटाह खाये कन् । भाजन, पात्र, वर्तन, कड़ाह ।

काटाग्रय ( सं० स्त्री० ) यज्ञकन्द, कमलगद्दा ।

कटि ( सं० पु० स्त्री० ) कट्यते वस्त्रादिना सुन्नियतेऽसौ,

कट-घन । १ शरीरका मध्यदेश, कमर । इसका

संस्कृत पर्याय—कट, ओषिफनक, ओषी, ककुद्घनी,

ओषिकल, कटी, ओणि, कनक, कटीर, काष्ठोपद,

और कमर है । सुश्रुतके मतसे कटिदेशमें पाँच अस्थि

रहते हैं । उनमें शुष्क, योगि एवं नितम्बदेशमें चार

और त्रिक स्थानमें एक अस्थि आता है । अस्थि-

सङ्घातक एक है । अस्थिकी सन्धियाँ तीन बैठती हैं ।

उनका नाम तुल्यवेनी है । छाया साठ होती है ।

दोनों नितम्बोंमें पाँच-पाँचके हिस्सावसे दस पेयी हैं ।

कटिदेशस्थ मर्म अस्थिमर्म कहलाता है । उसका नाम

कटीक है । तद्वय अस्थिके पृष्ठबंध अर्थात् मेरुदण्डके

समय पार्श्वपर अन्तिमिन्द्र कुकुन्दर नामका दो मर्म

पड़ते हैं । उनमें किसी प्रकार शोणित बढनेपर स्वर्ग-

ज्ञान और शरीरको छेडा दोनोंका नाश होता है ।

नितम्बके ऊपरभागपर पाशान्तरसे प्रतिबद्ध नितम्ब

नामक मर्मबंध है । उससे शोणित गिरनेपर अध-

काय शुष्क एवं दुर्बल पड़ता और मृत्यु पटल आ

पड़ता है । कटिदेशके अन्तरस्थ मांस और

रक्तविशिष्ट मांसयका नाम मृताग्रय या वस्ति है ।

अश्वरी रोग व्यतीत अन्य कारणसे उसको दोनों और

विह्वलनेपर सदा मृत्यु आता है । एक पार्श्वमेद

करनेसे मूत्रस्रावो व्रण उत्पन्न होता है । यह भी

कट्यमाध्य है । कटिदेशमें आठ शिराये हैं । उनसे

द्विपक्षस्थ और कटिकतकर्म चार-चार रहती हैं ।

२ इसकी गण्डस्थान, जशीकी कनपटी । ३ देवा-

लयका द्वार, मन्दिरका दरवाजा । ४ कनक, बीबी ।

५ काशी, घुंघरी । ६ कटीर, कुत्ता ।

कटिका ( सं० स्त्री० ) प्रगम्भा कटिरस्याः, कटि-

कन्-टाप् । १ अतिमुन्दर कटिदेशयुक्ता स्त्री, जिस

औरतके पतनी कमर रहें । २ कटीर, कुत्ता ।

कटिकुष्ठ ( मं० स्त्री० ) आषीका कुष्ठभाग, कमर-

का कोट ।

कटिकूप ( सं० स्त्री० ) कटिदेशस्थ कूपम्, मध्यपद-  
लो० । ककुन्दर, सुष्व, चूतड़का गद्दा ।

कटिज्वर ( हिं० स्त्री० ) करधनी, कमरकी खवसूरती  
बढानेवाला ज्वर ।

कटितट ( सं० स्त्री० ) कटिरेव तटं स्थानम् । १ कटि-

देश, कमर । २ नितम्ब, चूतड़ ।

कटिब्र ( मं० स्त्री० ) कटिं व्यापते, कटि-वे-क ।

१ परिधेय वस्त्र, धोनी । २ चन्द्रहार । ३ कटिवर्म,

कमरका खसूर । ४ चक्राङ्ग । ५ कमरबंद ।

६ करधनी ।

“वृषाणवीरं मित्रिवाचनं कुरु ।

विरोधेऽपूरकटिगच्छकम् ॥” ( भागवत ११।१० )

कटिदेश ( सं० स्त्री० ) कटिनामकं देशं भवयवम्,

मध्यपदलो० । आषी, कमर ।

कटिन् ( सं० वि० ) कटोऽप्यस्य, कट-इनि । इच्छ-  
उज्जि इत्यादि । पा १।१८० । कटियुक्त, जिसके कमर रहें ।

कटिप्रांथ ( मं० पु० ) कट्याः प्रोथः मांसपिण्डः ।

नितम्ब, चूतड़ । इसका संस्कृत पर्याय—स्त्रिक, पूलक,

कटीप्रोथ, कटि, प्रोथ और पूल है ।

कटिवह ( सं० वि० ) तत्पर, तैयार, कमर बांधे

हुआ ।

कटिवन्ध ( सं० पु० ) १ कमरबंद । २ पृष्ठीका भाग-

विशेष, मिततका, जमोन्का एक हिस्सा । यह शीत-

लता और लष्णाताके अनुसार निर्धारित होता है ।

विद्वानोंने दृष्टिवशका पाँच कटिवन्धोंमें बाँटा है ।

कटिभूषण ( सं० स्त्री० ) कटिभूषणम्, १-तत् । कटि-

देशका पलहार, कमरका गद्दा ।

कटिमानिका ( मं० स्त्री० ) कटौ मानिव, कटिमान-

कन् इलम् । चन्द्रहार, औरतका कमरबंद ।

कटिया ( हिं० स्त्री० ) १ इह, १क, नग बनानेवाला ।

यह नग काट काट कर सुधारता है । २ पशुनाय-

विशेष, चापारोंका एक चारा । यह प्यास मर्कर

वादिके हृत्त गडानसे टुकड़े-टुकड़े कर बनायी जाती

है । कटिया पड़-टोर कटती है । ३ पलहारविशेष,

एक ज्वर । इसे क्षिप्त मन्त्रकपर धारण करती है ।

४ कटिया, मकली एकइनेका एक छोटा काँटा ।

कटियाना ( हिं० क्रि० ) १ पुलकित होना, रोमाञ्च  
पाना। २ ( देह ) टटना, चंगड़ाई पाना, सुखो  
लगना।

कटियाना ( हिं० प्रो० ) भटकटया।

कटिरोहण ( सं० पु० ) कटिं वृद्धि-पयाद्भागं रोहति,  
कटि-रुद्ध-पत्नम् । इत्योक्तं पयाद् भाग पर पारोहण  
करनेवाला, जो हाथों पीछे बैठता हो।

कटिष्ठ ( सं० पु० ) कटिष्ठ जलायां उत्पद्यते, कटि  
वाहुलकात् । कारयेत् फल, करेना।

कटिष्ठक ( सं० पु० ) कटिष्ठ स्त्रायं कर्तुं । १ कार-  
येत् फल, करेना। २ रत्नपुनर्णवा, साम पुनर्रगवा।

कटिवन्ध ( सं० पु० ) कटिवन्धते धनं, कटि-वन्ध-  
पत् । कमरबन्ध, जिससे कमर बंधे।

कटिशोषक ( सं० पु० ) कटिः शोषंमिष, कटिशोषं  
संश्राप्यं कर्तुं । कटिदेग, कृत्वा, पुद्ग।

कटिशूल ( सं० पु० ) कटिस्थः शूलः शूलरोगः, कर्मधा० ।  
कटिदेगस्थ शूलरोग, कमरका दर्द। कफ और

वायुमें कटिदेगस्थ शूलरोग उत्पन्न होता है। एक  
भाग कुष्ठ और दो भाग हरीतकीका चूर्ण उष्ण जलके

साथ मेषन करनेसे कटिशूल मिट जाता है। २५६०।  
कटिशूलना ( सं० स्त्री० ) कट्याः शूलना, १-तत् ।

करधनी, कमरमें पहननेका एक जीवर। इसमें  
छोटे छोटे पुंघट नंग रहते हैं।

कटिस्तम्भ ( सं० स्त्री० ) कट्यां धार्यं स्तम्भं, मध्यपटनो० ।  
१ नारा, औरतोंका कमरबन्ध। स्मृतिशास्त्रके मतमें

केवल कार्पासका सूत्र बांधना निषिद्ध है। २ चन्द्रहार,  
करधनी।

कटो ( सं० पु० ) कटः गण्डस्थं प्रागण्येनास्तीति,  
कटं चक्ष्यते इति । इत्युच्यते कटिं चक्षति । वा ३. १। १०० ।

१ दम्भी, हाथी। २ कटिरहण, खैरका पिट्ट।  
( स्त्री० ) कटि-होय । स्त्रिगर्दिभ ७. १। १३१ । ३ पिप्पली,

पोषण। ४ शोणितेग, कमर। ५ स्त्रिकण्ठदेग, चूतड़।  
कटीकतद्वय ( सं० स्त्री० ) नितम्बके गर्तोंकी समिका

गर्त, इनमें गन्धके फोड़की नाज़क जगह।  
कटीफलान ( सं० स्त्री० ) कटीफलक, कृत्वा, पुद्ग।

कटीपट्ट ( सं० स्त्री० ) कटीगत वानरोग, कमरकी चर्द।

कटीमत्त ( सं० पु० ) कट्यां तनमाग्नदमप्य । १ वज्र  
चक्र, तिरछी तलवार। २ पञ्च, तलवार।

कटीमोघ, कटिमोघयोः।

कटीर ( सं० पु० ) कट्यने प्रापियते इमो कट्यने  
गम्यते इति वा, कट-हरन् । ३५३ कटिरोहिणी ३५५।

१ कन्दर, गुहा। २ जघनदेग, पिट्ट।  
३ नितम्ब, चूतड़। ४ कटि, कमर। ( स्त्री० ) ५ कटि-

फलक, कृत्वा।  
कटीरक ( सं० पु० ) कटीर स्त्रायं संश्राप्यं वा कर्तुं ।

१ जघन, पिट्ट। २ कन्दर, पहाड़की गुहा। ३ नितम्ब-  
स्थल, चूतड़। ( स्त्री० ) ४ कटि, कमर।

कटीग ( हिं० पु० ) कटीगा।

कटीन ( हिं० स्त्री० ) कार्पास विगंध, चंगड़ाई, किसी  
किष्काकी कपाम।

कटीना ( हिं० वि० ) १ तीक्ष्ण, तेज, पैना, जो काट  
देता हो। २ प्रभावशाली, पुर-पमर, जो उम्दा

समझा जाता हो। ३ हृदयवाची, दिलकश।  
४ कण्ठकयुक्त, खारदार। ५ तीक्ष्ण, नोकदार।

( पु० ) ६ तीक्ष्णप काष्ठविशेष, एक नोकदार  
लकड़ी। यह दुग्ध प्रदान करनेवाले पशुके बघेकी

नाक पर बांधा जाता है। इससे वह दूध पी नहीं  
सकते। कारण मुख लगाने की कटीना पशुके स्तनमें

जुमता, जिससे वह उटक पड़ता है। ७ कटीरा।  
कटु ( सं० स्त्री० ) कटति सदाधारमाहचोतीति, कट-

उण् । १ चतुर्नायं, दुरा काम। २ भूयण, गहना।  
( स्त्री० ) ३ लता, धेनु। ४ राजिका, चर्द।

५ कटुकी, कुटकी। ६ कटुवती, एक धेनु। ७ प्रियङ्गु  
हय। ( पु० ) कटति तीक्ष्णतया रसनां मुखं वा

प्राहचोति यदा कटति वर्धते चतुर्मुखतासक्त्यादिवा  
जमं दाययतीति । ८ पट्टाधारमाहचोतीति, कटुवाहट,

चरपरायन । वाभटके मतमें कटुगर्त जिहा चर-  
परा चर द्विजनी उभती, मुखमें नाग टपकता और

गण्डद्वय एवं मुखके मध्य बन्नी जलग पड़ती है। चरक  
इसका मुखयोषक, ७५५५ दीपक, भुक्त तनुका परि-

शोषक, नासिका गर्त चतुर्मुख सायकारक, मन्त्र  
इन्द्रियका प्रपुञ्जजनक, चक्षुषक, श्रोत्र, उदध, दैर्घ्यव्य-

खेद, खेद, क्रोध तथा मलका नाशक, भयकी रुचिका कारक, कण्डू, ग्रंथ एवं क्षमिका विनाशक और घनीभूत रसका मिश्रकारक बताते हैं। कटुरस सकल श्रोतको प्रावरण और श्लेष्माको निवारण करता है।

ॐ

कटुरस अधिक परिमाणमें व्यवहार करनेसे शुष्क घटता, रूखानि, लज्जा, सूक्ष्मी, वेदना एवं सूखेविषय पौड़ाका वेग बढ़ता, प्रवसाद लगता, दोषेय दोड़ता, कण्डू जनता, शरीरपर ताप बढ़ता, वल क्षीण पड़ता, वायु तथा अग्नि के वाह्यत्वे भ्रम, मद, कम्प एवं भेद चकता और वायु के पार्श्वमें पन्थान्य वायुजन्य विकार उठता है।

८ कटुपटाक्ष, कड़वा परवल। १० चम्पकहृत्, चम्पेका पेड़। ११ चीनकपूर, चीना कपूर। १२ कटौलता। १३ चक्रेष्ठ, मदाराका पेड़। १४ जनलण विम्वि, एक पनिका घास। १५ कुलकपिष, छातीका लहर। १६ कुटतलष, कुटकीका पेड़। १७ राजसर्वप, बड़ा सरसों।

●

(वि०) १८ तिक्त, तीता। १९ कषाय, कसेला। २० विरच, बदजायका। २१ परयोकातर, चामिद, दूसरेकी गानशोक देख न सकनेवाला। २२ अमिय, नागवार। २३ तीक्ष्ण, तेज। २४ छण्ड, गर्म। २५ सुरभि, खुशबूदार। २६ दुर्गन्ध, बदबू देनेवाला। २७ कुत्तमित, खराब। २८ कटुरसविम्विष्ट, कड़वा। कटुषा (हिं० पु०) कौटविम्विष्ट, बांका, एक कौड़ा। यह धानके पेड़की काटता है। २ एक मिंचाई। इससे नहरका पानी सीधे खेतमें पहुँचता है। ३ सुसममान। हल्ला या साढ़ी उतारे दूधके दहीकी 'कटुषा दही' कहते हैं।

कटुक (मं० स्त्री०) कटुनां कटुरसानां त्रयम्, कटु संज्ञायां कन्। १ त्रिकटु। साँठ, मिर्च और पोपन तीनोंका नाम कटुक है। २ मरिच, मिर्च। ३ कटुश्री, कुटकी। (पु०) ४ कटुरस, कड़वापन। ५ पटोक्ष, परवल। ६ सुगन्धिलण, खुशबूदार घास। ७ कुटज-हृत्, कुटकीका पेड़। ८ चक्रेष्ठ, मदाराका पेड़। ९ राजसर्वप, बड़ा सरसों। १० चार्दक, चद-

रक। ११ लघुन, लहसुन। (वि०) १२ अमिय, नागवार।

“दुर्विषय कर्षे कटुषाचमायताम्।” (भारत, अत्रुपुन ००:१)

१३ तीक्ष्ण, कटु, छण्ड, तेज, कड़वा, गर्म।

कटुकण्टक (सं० पु०) गाल्लताहृत्, सेमरका पेड़।

कटुकवय (मं० स्त्री०) कटुकानां कटुरसानां त्रयम्, ६-तम्। त्रिकटु, तीनों कड़ुयो चीजे—अर्थात् साँठ, मिर्च और पोपन।

कटुकल (सं० स्त्री०) कटुकस्य भागः, कटुकलः। तस्य भागसंज्ञा। १ भाराष्टर। कटुता, चरपराहट, कड़वापन।

कटुकन्द (सं० स्त्री०) कटुः कन्दः सूतमयः। १ मूलक, मूली। (पु०) २ गिरहण, मूर्छोजनका पेड़। ३ पाट्टेज, चदरक। ४ लघुन, लहसुन।

कटुकन्दरी (मं० स्त्री०) योषधि विम्विष्ट, एक लहरी-दूटी। काहनमें इसे गोविन्दी कहते हैं। कटुकन्दुरिका छण्ड, तिक्त और वात एवं कफ तथा विस्मृति प्रादि मिटानेवाली है। (वैद्यनिघण्टु)

कटुकफल (मं० स्त्री०) कटुकं फलमस्य, बहुव्री०। ककोलक, सीतलचीनी।

कटुकमल्ली (मं० पु०) एक गीतप्रवर वृषि।

कटुकरञ्ज (मं० पु०) करञ्ज।

कटुकरस (सं० पु०) यद्भस्मिं एकः पन्थतम रसः, चरपराहट, कड़वापन।

कटुकरोहिणी (मं० स्त्री०) कटुका सती रोहिनि, कटुक-रुह-णिनि। कटुको, कुटकी।

कटुकवर्ग (मं० पु०) कटुकः द्रव्यममूढ, कड़ुयो वर्गीका टेर। मिश्र, मधुगन्ध, मूलक, लघुन, सुमुन, (मकेद तुलसी), शिवा (सौंफ), कुष्ठ, देवदार, सोमरात्रीके शोत्र, गन्धपुष्पो, शुग्गुल, मुन्तज, लाङ्ग-निजा, शुक्रनावा एवं पोपु, प्रभृति पिप्पल्यादि (पिप्पली, पिप्पलीमूल, चण्ड, वितकमूल, शुण्ठी, मरिच, मज्जापिप्पली, फणक, एना, यमानो, रन्ध्रपत्र, चक्रेष्ठ, जारक, सर्वप, मरहानिष्ठ, मदनफल, हिट्ट, माङ्गणयष्टिका, मूशामूल, पत्तोस, ववा, विडङ्ग तथा कटुको), सुषादि (तुलसी, श्रेतुलसी, गन्धपनाम,

यवर्ग, गन्धद्रव्य, महागन्धद्रव्य, राजिका, कर्मवी बर्गः, क्षाममर्त, वनस्पती, विडङ्ग, कटुफल, श्वेत निमिन्नु, नील निमिन्नु, कुङ्कुमुनी, इन्दुकर्षी, पाना, शालाघ-  
यसिका, काकजडा, काकाडा, मधुनिम्ब) चौर  
सामसारादिगण (गाल, विषामान, चटिर, श्वेतचटिर,  
विट्छटिर, सुषारो, भूषणपत्र, मियन्ट्री, निन्दुक,  
चन्दन, रत्नचन्दन, गिरु, गिरीष, वक्र, धव, चञ्जुन,  
ताल, करञ्च, छोटे करञ्च, क्षणामुल, चणुल, जना-  
शाक्त) को कटुकर्म कहते हैं।

कटुकवी (सं० स्त्री०) कटुका चासी वसी चेति,  
कर्मधा०। कटु नाम जनाविशेष, कटुवी लोकीकी  
धन। यह कटु, गीत एवं हृष्य जाती चौर कफ,  
ग्राम, तथा राजयक्ष्माको मिटाती है। (राघनिषधु०)  
कटुलग्नीर (सं० स्त्री०) पित्तघ्नोप चर पर एक  
योग। इसमें एक-एक तीले कटु रोहिणी चौर  
गर्गरा पड़ती है।

कटुखेड (सं० पु०) सर्वपत्रक, सरसोका पेड़।  
कटुका (सं० स्त्री०) कटु संज्ञायाम् कन्-टाप्। १ कटुकी,  
कुटकी। इसका संज्ञात पर्याय—जननी, तिळा,  
रोहिणी, तिलरोहिणी, चन्नाही, मत्स्यपित्ता, यकुना,  
गङ्गानादना, सादनी, शतपर्वा, हिजाही, मसमेदिनी,  
चमोकरोहिणी, छप्पा, छप्पभेदी, महीपयो, फटी,  
चन्द्रनी, काण्डवहा, वट, कटु रोहिणी, कटुक-  
रोहिणी, कदारकदुका, परिष्टा, गाम्भी, कटम्बरा,  
कशुभरा और चमाका है। राजवद्रमक मतमें कटुका  
चति-कटु, तिल एवं गीतम चौर पित्त, रक्त, दाह,  
कफ, पक्षि, ग्राम तथा च्वरनाशक है। २ ताम्बूनी,  
पान। ३ कुलिकतण्ड। ४ राजमर्षण, राई। ५ कटु-  
तुम्बी, कटुवी लोकी।

कटुकाया (सं० स्त्री०) कटुकी, कटकी।  
कटुकायलोह (सं० स्त्री०) गोवर्ग के अधिहारका  
एक द्रव्यकोष्ठ दोषघ्न, सुजनकी एक दवा। यह  
कटुकी, त्रिकटु, दन्ता, विडङ्ग, त्रिकला, चित्रक, देव-  
दारु, त्रिविध चौर गजपिप्पली बराबर दिगुण कोइमें  
मिश्रामें बनता है। दुग्ध के साथ इसे केवल कर्मपर  
योगसेम विनष्ट होता है। (राघनिषधु०)

कटुकाटव्य (सं० स्त्री०) कटु च तत् काटव्यचेति,  
कर्मधा०। १ चतुर्गुण कर्मका पात्र, निहायते कटु  
पात। २ मासोमनीज।

कटुकापानी (सं० स्त्री०) कण्टकपाली हृष्य, एक पेड़।

कटुकारोहिणी (सं० स्त्री०) कटुकी, कुटकी।

कटुकामाहु (सं० स्त्री०) कटुकामो चमाहुचेति,  
कर्मधा०। तिलतुम्बी, कटुवी लोकी।

कटुकी (सं० स्त्री०) कटु पार्थ कन् डोप्। कटुहा,  
कटकी।

कटुकीचाम—विहारमानक के चम्पारन जिलेका एक  
प्राचीन ग्राम। (हरिश्चन्द्रचरण १९१२)

कटुकीट (सं० पु०) कटुकीटः दंभतेन दुःखपदः  
कीटः, कर्मधा०। मगक, मण्डक, टांग।

कटुकीटक (सं० पु०) कटुकीट स्वार्य-कन्। मगक,  
मवा।

कटुलाप (सं० पु०) कटुः कर्मका; लापः मन्दो  
यस्य, बहुव्री०। टिटिम पक्षी, टिटिहरी।

कटुप्रति (सं० स्त्री०) कटुस्त्रीप्रो यन्निमूल पद्म,  
बहुव्री०। १ पिप्पलीमूल, विषरामूल। २ मण्डो,  
सीठ। ३ कज्जल, जहसुन।

कटुहता (सं० स्त्री०) कटु दूषितं करोति, कटु-  
ह-ह-लुम् एयोदरादित्वात् तन्-टाप्। नित्यकम  
एवं आचारकी निहृता, पुराव चाल।

कटुचातुर्जातिक (सं० स्त्री०) चतुर्धा जातकं स्वार्यं  
पद्म, कटु च तत् चातुर्जातिकचेति, कर्मधा०। इसा-  
यथी, तन्न, तेजपात चौर मिर्चका इहहा।

कटुच्छद (सं० पु०) कटुच्छदं पत्रमस्य, बहुव्री०।  
१ तगरहृष्य, तगरका पेड़। २ सुगन्धार्जक, सुगन्ध-  
दार तुलसी।

कटुज (सं० स्त्री०) येन पदार्थको भाति कटुं  
द्रव्यं प्रोक्तुं किंवा द्रव्य, जो चक्का तरङ्ग कटुवी  
कीजमें बना हो।

कटुजोरक (सं० पु०) जोरक, जोरा।

कटुता (सं० स्त्री०) कटु-तन्-टाप्। १ छपता,  
भड़क। २ तीक्ष्णता, तेज। ३ चरित्रता, नाराज।  
४ कर्मगता, कटुपन। ५ कटुवाहट।

कटु तिक्त, कटु तिक्त देखो।

कटु तिक्तक (सं० पु०) कटु यासो तिक्तचेति,  
कटु-तिक्त अर्थार्थे कन् । १ किराततिक्तक, चिरायता ।  
२ महाशयवृक्ष, पटसन । ३ शयवृक्ष, सनका पेड़ ।

कटु तिक्तका, कटु तिक्तिका देखो।

कटु तिक्ता (सं० स्त्री०) विपाके कटुः स्वादे तिक्ता ।  
१ कटु तुम्बी, कड़वी लौकी । २ कटु तुण्डी, कड़वी  
तरोई ।

कटु तिक्तिका (सं० स्त्री०) कटु तिक्त अर्थार्थे कन्-  
टाप् भत इत्वम् । महाशय, पटसन । २ कटु तुम्बी,  
कड़वी लौकी ।

कटु तिन्दुक (सं० पु०) कुचेलक, कुचिला ।

कटु तुण्डिका (सं० स्त्री०) कटु तुण्ड अर्थार्थे कन्-  
टाप् भत इत्वम् । तिक्त-तुण्डी, कड़वी तरोई । यह  
कटु, तिक्त तथा कफ, वायु, श्लेष्म, शरीरक एवं  
रक्तपित्तनाशक और रोचन होती है । (राजनिघण्टु)

कटु तुण्डी (सं० स्त्री०) कटु तीव्रं तुण्डमस्याः ।  
तिक्ततुण्डी, कड़वी तरोई । इसका संस्कृत पर्याय—  
तिक्ततुण्डी, तिक्तास्या और कटुका है । कटु तुण्डिका देखो ।  
कटु तुम्बिका, कटु तुम्बी देखो ।

कटु तुम्बिनी (सं० स्त्री०) तिक्तालावु, कड़वी लौकी ।  
कटु तुम्बी (सं० स्त्री०) कटु यासो तुम्बी चेति, कर्मधा० ।  
तिक्तालावु, कड़वी लौकी । इसका संस्कृत पर्याय—  
इक्ष्वाकु, कटुकालावु, शृणुमन्ना, कटु तिक्तिका, कटु-  
फला, तुम्बिनी, कटु तुम्बिनी, वृक्षफलता, राजपुत्री,  
तिक्तबीजा और तुम्बिका है । राजवल्लभके मतसे  
कटु तुम्बी कटु, तीक्ष्ण, वमनकारक, शोधक, लघुपाक  
और खांश, वायु, कास, शीघ्र, व्रण, शूलविष, पाण्डु,  
क्षमि एवं कफनाशक होती है । अणु देखो ।

कटु तैल (सं० स्त्री०) कटु तीक्ष्णं तैलम्, कर्मधा० ।  
सार्वप तैल, कड़वा तैल । भावप्रकाशके मतसे यह  
अग्निदीपक, कटुरस, कटुपाक, सधु, शरीर-क्षयता-  
कारक, सेवन, उष्णस्पर्श, उष्णवीर्य, तीक्ष्ण, रक्तपित्त-  
दूषितकर और कफ, मूत्र, वायु, अश्वरोग, शिरोरोग,  
कण्ठरोग, कण्ठ, कुष्ठ, क्षमि, घवल और दुग्धपानाशक  
है । राई और सफेद सरसोका तैल भी इसी प्रकार

गुणविशिष्ट होता है । विशेषतः उससे मूलकच्छ रोग  
लग जाता है ।

सर्वपतैलके द्वारा आशुवेद मतमें अनेक रोगनाशक  
तैल बनते हैं । इनके बननेसे पहले तैलपर मूर्छापाक  
लगाना पड़ता है । कटु तैल अर्थार्थे देखो ।

कटु तैलमूर्च्छा (सं० स्त्री०) कड़वे तैलको सुन कराई ।  
अच्छे कड़ाहमें डाल कड़वे तैलको पहले धोमो भाँवसे  
पकाते हैं । फेन मर जानेपर अच्छेमें छतार उसमें  
मच्छिछा, भामलकी, हरिद्रा, सुखा, विस्मलक, दाडिम-  
त्वक, नागकेसर, क्षण्णजीरक, बालक, मनुका एवं  
विभीतकको क्रम-क्रम पत्थरपर पीस और पानीसे  
घोल तैलमें छोड़ देना चाहिये । चार सिर तैल बनाने-  
में २ पल मच्छिछा ६ सिर जल और दूसरा द्रव्य दो-दो  
तोले पड़ता है । सूक्ष्म कटु तैल भामके दीपको  
दूर करता है ।

कटु त्रय (सं० स्त्री०) कटु नां कटुरसानां त्रयम्, ६-तत् ।  
त्रिकटु, तीन कड़वी चीजोंका इकट्ठा । सोंठ, मिर्च  
और पीपल एकमें मिलानेसे कटु त्रय प्रसृत होता है ।  
वाभटमें लिखा—कटु त्रयके सेवनसे शूलता, अग्नि-  
मान्द्य, खांश, कास, शीघ्र और पीनस रोग नष्ट  
होता है ।

कटु त्रिक, कटु त्रय देखो ।

कटु त्व (सं० स्त्री०) कड़वाहट, चरपराहट, भल ।

कटु दला (सं० स्त्री०) कटु दलं पत्रं यस्याः, बहुव्री० ।  
ककैटो, ककड़ी ।

कटु दुग्धिका (सं० स्त्री०) तिक्तालावु, कड़वी लौकी ।  
कटु निष्पाव (सं० पु०) कटु यासो निष्पावचेति,  
कर्मधा० । अदीर्घ उत्पन्न एक निष्पाव धान्य,  
हरया किनारे होने और पानीमें न डूबनेवाला एक  
पनाज ।

कटु निष्पाव, कटु निष्पाव देखो ।

कटु पत्र (सं० पु०) कटुः तीव्रं पत्रं यस्य, बहुव्री० ।  
१ पर्पट, पिस्तपापट्टा । २ शितामंज, सफेद छोटी  
तुलसी ।

कटु पत्रक, कटु पत्र देखो ।

कटु पत्रिका (सं० स्त्री०) कटु पत्रं यस्याः, कटु पत्र-



कटुटाण्ड-पत्र इत्यम् । १ कण्टकारी वृक्ष, भटकटेया ।

कटुपर्णी देवी । २ अणु-कुण्डल, मोटा विवृण ।

कटुपर्णी, कटुपर्णी देवी ।

कटुपर्णीका ( सं० स्त्री० ) चीरिची, पिरिची । इसका संज्ञितपर्याय—हैमचोरी, हैमचोरी, हिमाचोरी, हिमाचोरी चौर पोतदुग्धा है । कटुपर्णीकाके मूलको चीक कहते हैं । यह रसक, तिक्त, भेदन एवं उत्प्रेक्षककारी होता चौर कर्म, कण्ट, विष, पाण्डु, कफ, पित्त, शूल तथा कुष्ठरोगको हतो हतो है ।

कटुपर्णी, कटुपर्णी देवी ।

कटुपाक ( सं० वि० ) कटु, पाकोष्ठम् । १ पाकके समय कटु पकनेवाला, जो पकते पक कटुवा पक जाता हो । २ परिपाक होनेसे कटु पकनेवाला, जो पकनेसे कटुवा लगता हो । तेज, वायु चौर पाकागका अधिक गुण रचनेवाला द्रव्य कटुपाक होता है । कटुपाक द्रव्य वायुमधक है । ( भागवतम् )

कटुपाको ( सं० वि० ) कटु, पाकोष्ठम् । कटुपाक-फल । कटुपाकवृक्ष, हाजमिमें तनय वनगुम पेदा करनेवाला । कटुपाक देवी ।

कटुफल ( सं० पु० ) कटुफलमव्य, बड़ुमी । १ पटोल, परवल । वीर देवी । २ ककरोलवृक्ष, खापफल । ३ तिलककटिका, कटुवी ककड़ी । ४ तारवीरक, करेला । ( स्त्री० ) ५ दन्तवृक्ष ।

कटुफल ( सं० स्त्री० ) कटुफलमव्य, बड़ुमी । १ शोषकोकण्टकवृक्ष, एक कटोनी भाड़ी । २ तिल-मातु, कटुवी लोही । ३ उज्ज्वली, बरियारी । ४ कण्ट-कावी, भटकटेया । ५ विष्टोतक, विवृण ।

कटुबटरी ( सं० स्त्री० ) कटुविमेष, यह शेरका पैदा । २ घामविमेष, एक गाँव ।

कटुभद्र ( सं० पु० ) कटु, एकैकदेश भद्रम्, उष्य । सुखी, मोठ ।

कटुभद्र ( सं० स्त्री० ) कटु, पति भद्रं हितजनकम् । १ पादक, पदार्थ । २ सुखी, मोठ ।

कटुभाषी ( सं० वि० ) कटु, कर्कश भाषने, कटु-भाष-चिति । कटु वाक्क कहनेवाला, जो नागवार बात बोलता हो ।

कटुमन्त्रिका ( सं० पु० ) कटुमन्त्रिका देवी ।

कटुमन्त्रिका ( सं० स्त्री० ) कटु स्त्रीरूपमन्त्रो पक्षि पय्या; कटुमन्त्रो-पक्ष-कोष्ठी-भ्रंशाय कटु पूर-कथ्यत्वम् । पयामार्ग, भटभोर । ( बरभर देवी ) ।

कटुमूल ( सं० स्त्री० ) पिपलीमूल, पिपरीमूल ।

कटुमोद ( सं० स्त्री० ) कटुमोद मोदः पलोप, बड़ुमी । खरादिनामक एक सुगन्धि द्रव्य, शोषार वगैरह दूर करनेवाला एक पुष्पवृक्ष भीज या पत्तर ।

कटुशरा ( सं० स्त्री० ) कटु, विमर्ति, कटु-शरा-सुम्-टाण् । १ कर्कटो, ककड़ी । २ प्रसारणी, गन्धानी ।

कटुर ( सं० स्त्री० ) कटुति वर्पति मन्त्रमेव गुणान्तरं दधान्तरं वा, कटु-उरन् । तल, महा । नर देवी ।

कटुरव ( सं० पु० ) कटु, कर्कशो रवो ध्वनिर्ध्वज, बड़ुमी । शीप, मँडक ।

कटुरा ( सं० स्त्री० ) पाद्वं हरिद्रा, कथो हलदी ।

कटुरवा ( सं० स्त्री० ) विहता, निभोत ।

कटुरोहिणी ( सं० स्त्री० ) कटुपाको रोहिणी चैति कर्मधा, कटु, सती रोहिणी, कटु-रुच-विनि-टोप् वा । कटु, कटु ।

कटुलता ( सं० स्त्री० ) कटुली, कटुली ।

कटुनिद्रा—गोदु जातिनी एक माया । इस मायाके लोग (हनुवांको भाति) पाचार-धवहार करते हैं ।

कटुवर्ग, कटुवर्ग देवी ।

कटुवा ( सं० पु० ) १ प्रति दिन किसी बिक्रताके पाससे जानेवाला कोई द्रव्य । जो थोड़ा किसी दुकानसे रोज रोज जाती चौर कौमत से छोटे रकहा हो जाती, वह कटुवा कहानी है । २ सुसलमान ।

कटुवातीकी ( सं० स्त्री० ) कटुपाका वातीकी चैति, कर्मधा । १ श्रेतकटुकारी, मकड़ कटेया । २ तिल-वातीकी, कटुवा वेगल । ३ सुदुग्धती, छोटा वेगल ।

कटुवायिका ( सं० स्त्री० ) महापट्टी, पातोपोपर ।

कटुविपाक ( सं० वि० ) कटु, कटुरवा विपाके यव्य, बड़ुमी । कटुपाक, हाजमिमें वनगुम लागेवाला । कटु-विपाक द्रव्य कपु, गानक, सुखर चौर कफविना-नामक होता है । ( वर )

कटवीजा (सं० स्त्री०) पिप्पली, पीपल।  
 कटवीरा (सं० स्त्री०) कुमरिच, खाल मिर्च। यह  
 चर्मजनक, दाहक और बलास, मजीर, विशुची,  
 मग्न, क्षेद, तन्द्रा, मोह, प्रसाप, खरमङ्ग एवं भरोचक  
 नाशक है। कटवीरा सविपात-जड़ोभूत और  
 हृतेन्द्रिय मनुष्यको मरने नहीं देती। (चरित्रचिन्ता)  
 कटशुक्राट, कटशुक्राट शब्द।  
 कटशुक्राल (सं० स्त्री०) कट नां शुक्राय प्राधान्याय  
 भवति पर्याश्रिति, कट-शुक्र-यस्-मच्। गौरसुवर्ण  
 शाक, एक सुवर्णी।  
 कटुचोह (सं० पु०) कटुस्तोष्णः चोहो यस्य, बहुव्री०।  
 १ सर्पप, सरसो। २ श्वेतसर्पप, राई। ३ कट तैल,  
 कटुवा तैल।  
 कटुदुष्ठी (सं० स्त्री०) १ कारवेल, करेली।  
 २ कर्कटी, ककड़ो।  
 कटुति (सं० स्त्री०) अप्रियवार्ता, दुरी लगनेवाली  
 बात।  
 कटुकट (सं० स्त्री०) कटु च कटुकम्, अतत्।  
 १ पाईल, पदरक। २ शण्डी, सोंठ।  
 कटुकटक (सं० स्त्री०) कटुकट संज्ञायां कम्।  
 कटुकट शब्द।  
 कटुदूरी (सं० स्त्री०) पापविशेष। कौकलमें इसे  
 गोविन्दी कहते हैं।  
 कटुमर (हिं० पु०) वन्योदम्बर, जंगलो गूलर, कट-  
 गूलर।  
 कटुघण (सं० स्त्री०) १ पिप्पलीमूल, पिपरामूल।  
 २ शण्डी, सोंठ। ३ पिप्पली, पीपल।  
 कटुघणा (सं० स्त्री०) कटुघण शब्द।  
 कटोरी (हिं० स्त्री०) कण्टकारी, भटकटैया।  
 कटोली (हिं० स्त्री०) कार्पासभेद, किसी जिन्धकी  
 कपास। यह ब्रह्मासमें अधिक उत्पन्न होती है।  
 कटैया (हिं० स्त्री०) १ कण्टकारी, भटकटैया।  
 (पु०) २ क्षेदन करनेवाला, जो काटता हो।  
 कटैया (हिं० पु०) मुख्यवान् प्रसारविशेष, एक  
 श्रेयकोमत पत्थर।  
 कटोदक (सं० स्त्री०) कटाघ प्रेताय देयमुदकम्।

प्रेतके उद्देश्यसे होनेवाला तर्पण, जो पानी मुर्देके श्मिदे  
 दिया जाता हो।  
 कटोर (सं० स्त्री०) कथ्यते वृथते निमित्यते वा भय-  
 द्रव्यं यत्, कट-भोसच् रश्च संत्वम्। पात्रविशेष,  
 घेला, एक वर्तन।  
 कटोरक, कटार शब्द।  
 कटारा (सं० स्त्री०) कटार-टाप्। पात्र विशेष,  
 घेला, एक वर्तन। इसका मुँह खुला रहता है।  
 दोवार नीचे और पेदी चौड़ी पड़ती है। हिन्दुमें  
 यह शब्द पुलिङ्ग माना गया है।  
 कटोरिया (हिं० स्त्री०) कटो कटोरी।  
 कटोरी (हिं० स्त्री०) १ सुद्रकटोरक, शेरिया।  
 २ चोली। ३ तलवारकी मूठका ऊपरी हिस्सा। यह  
 गोच होता है।  
 कटोल (सं० पु०) कटति आहपोति सदाचारं  
 चम्यरसं वा, कट-भोसच्। अपिचमिनिचटिपठिभ्यो भोसच्।  
 उच ११०। १ कटुर, कटुवाहट, चरपराहट, तलछी,  
 तुर्गी। २ चण्डाल, कमीना। (त्रि०) ३ कटु,  
 कटुवा।  
 कटोलवीणा (सं० स्त्री०) कटोसस्य चण्डालस्य वीणा  
 वाद्यविशेषः। चण्डालांको एक वीणा।  
 कटोवा (हिं० वि०) कटनेवाला, जिसके कट जानेका  
 डर रहे।  
 कटोती (हिं० स्त्री०) काटकर निकालो जानेवालो  
 चीज। जैसे—धनाज बेचते या खेतसे चर उठा ले  
 जाते समय उससे जो कुछ काटकर ब्राह्मण, मजदूर  
 या किसी दूसरेको दिया जाता, वह कटोती कहता है।  
 कटोनी (हिं० स्त्री०) कटार, फलन काटनेका काम।  
 कटोची (हिं० पु०) ऐलुविशेष, एक कर्कटीका भाँव।  
 कहर (हिं० वि०) १ काट जानेवाला, कटका।  
 २ घपना विज्ञास न छोड़नेवाला, जो दूसरेकी बात  
 मानता न हो। ३ बड़ करनेवाला, जूरी, जो दूसरेकी  
 सुनता न हो।  
 कहरतैल (सं० स्त्री०) तैलविशेष, एक तैल। ४ गरा-  
 चक मूर्द्धित तिलतैलमें हल गरावक तल और १  
 गरावक लवण, शण्डी, कुष्ठ, मूर्वाभूज, साप्ता, हरिद्रा



कठ (सं० पु०) कठेन प्रीतिमयोति कठगाथासमि-  
जानाति वा, कठ निर्णेतुक । अठपरकाहृक् । या वा ११०० ।  
१. सुनिविशेय । यह वेदकी कठ-शाखाकी प्रवर्तक-ये ।  
महाभाष्यके मतसे कठ वैशम्पायनके शिष्य रहे । इनकी  
प्रवर्तित शाखा 'काठक' नामसे प्रसिद्ध है । चानकल  
इस शाखाकी वेदसंहिता नहीं मिलती । काठक  
शाखाध्यायी भी 'कठ' ही कहते हैं । इनसे सामके  
काशाप और कोथुमशाखीका संस्वर रहा । रामा-  
यणमें कठकाशाप एकत्र उद्धृत हैं ।

“पदकाभिध सर्वाभिनेकां द्रव्यतेन च ।

ये वैरि कठकाशापा वदन्ते इत्यमलवत् ॥” (पवीष्या १५।८)

हरदत्तके मतसे कठशाखाका भी वद्धृचादि विद्य-  
मान है ।

२ कठशाखाध्यायी । ३ कठविशेष, एक वेदिक  
मन्त्र । ४ स्वरविशेष, एक आयाज । ५ ब्राह्मण ।  
६ देवता । ७ उपनिषद् विशेष ।

“इत्येकैकवचनप्रत्ययकाणामभिनिर्दि । (हस्तिकोपनिषत्)

८ दुःख, तकलीफ़ । ९ कठ, सुखीवत ।

(हिं० पु०) १० पुरातन यादवविशेष । कोई  
पुराणा बाजा । यह काष्ठसे बनाया और चर्मसे  
मँटाया जाता है ।

कठ शब्द समासादिमें चानिसे काठनिमित्त और  
निष्ठार्थ रखता है—जैसे कठपुतली, कठकेला ।

कठंगर (हिं० वि०) खूब, कठोर, मोटा, कड़ा ।

कठोर और अभ्यवहार्य द्रव्यको 'काठकठंगर' कहते हैं ।

कठकाशापाः (सं० पु०) कठ और कशापीका  
सम्प्रदाय ।

कठकीली (हिं० स्त्री०) काठकी कौल, पसड़ ।

कठकेला (हिं० पु०) कदलीविशेष, जंगली केला ।

कठकोपनिषद् (सं० स्त्री०) तर्कादिसे पूर्ण एक  
उपनिषद् ।

कठफोसा (हिं० पु०) काठफूट, कठफोड़वा ।

कठकोयुमाः (सं० पु०) कठ और कुथुमीका सम्प्रदाय ।

कठगुलाव (हिं० पु०) पुण्यवृक्षविशेष, जंगली गुलाब ।

इसमें सुद्र सुद्र पुष्प लगते हैं ।

कठड़ा (हिं० पु०) १ काठशब्द, कठघरा । २ पात्र-

विशेष, कठौता । ३ मच्छपा विशेष, लकड़ीका सन्दूक ।

कठताल (हिं० स्त्री०) काष्ठवादित्रविशेष, लकड़ीका  
एक बाजा । इसे दोनों हाथसे बजाते हैं । हरक  
हाथमें एक-एक जोड़ा कठताल रहती है ।

कठधूर्त (सं० पु०) यजुर्वेदकी कठशाखाका परिष्ठाता  
ब्राह्मण ।

कठमेरा (हिं० पु०) वैश्वनातिविशेष, किसी किछका  
बगिया ।

कठपुतली (हिं० स्त्री०) काठभूर्तिविशेष, लकड़ीकी  
गुड़िया । सुसलमान दा कठपुतलियाँ से भीख  
मांगने निकलते हैं । वह इनको दानों हाथों नचाते  
और गाना सुनाते हैं । कुछ लोग तारसे पुतली  
नचाते और गांव-गांव घूँकर लगाने हैं । दूसरेके  
कड़नेपर चलनेवाला भी उसकी हाथकी कठपुतली  
कहाता है ।

कठफुला (हिं० पु०) खन्नक नामक उद्भिद, कुकुर-  
सुत्ता, काता । यह लकड़ी पर काते-जैसा फूलता है ।

कठफोड़वा (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया ।  
(Woodpecker) यह काष्ठकी फोड़ फोड़ छेद  
बनाता, इसीसे कठफोड़वा कहाता है । कठफोड़वा  
नेकई प्रकारका होता है । परीका रंग काला,  
सफ़ेद, भूरा, जैतूनो, हरा, पोला, गुलेनारी और  
नारंगी मिला रहता है । रंग-रंगकी धारियाँ,  
बुँदियाँ चार मोर्के इसके शरीरपर होती हैं । यह  
पृथिवी पर सिवा सादागाछर, चट्टनियाँ, सिनेवेस  
और कीरेवके सब स्थानोंमें मिलता है । इजिप्तमें  
कठफोड़वा कभी देख नहीं पड़ा । यह बड़ी लम्बा  
खाता और इसके लम्बाका पता मनुष्य कठिनाधि  
पाता है । कठफोड़वा अपना गिहार टूँडनेमें पूर  
ध्यान लगाता है । यह वृक्षकी नीची शाखाओं परभी  
कड़ी और लंबी चौंससे छेद कर घोंसला बनाता है ।  
घोंसलेका द्वार वृक्षाकार रहता और एक फुट गहरा  
चलता है । यह कोई एक सफ़ेद चमकोले पंटे  
देता है । चारपक्षी परीका रंग भद्रा होता है ।  
उनके नीचे कितनी चौं धारियाँ और बुँदियाँ पड़ी  
रहती हैं । पंठके कोड़ोको पाँचसे छाल छेद छेद

खाना हो, रसका सहसे बड़ा काम है। यंत्रोके मङ्गल  
कठफोड़ना मायाकोटर धूम-धूम चढ़ता है।

कठफोड़ा, बरगोड़ा है।

कठबन्धन (हिं० पु०) काठबेठन, मकड़ोंकी बेड़ी,  
चंद्वा। यह दाघोके घेरने पड़ता है।

कठबाप (हिं० पु०) मातेना पिता, भूठा बाप।  
किसी निधनामे दियाइ खरनेवाला पुत्र उससे  
पहले मङ्गलका कठबाप कहाता है।

कठबेल (हिं० पु०) कटिय, कंथा।

कठमढ़े (सं० पु०) कठं कठओवनं चट्नाति, कठ-  
भृद-पन्थ। गिय।

कठमनिया (हिं० पु०) १ काठमालाधारी गेलव।  
२ गिप्पा गाध, भूठा फकीर।

कठमन्त (हिं० वि०) १ छटपुट, तगड़ा, चट्काट्टा।  
२ व्यभिचारी, जिनाकार।

कठमप्ता, बरगल है।

कठमसो (हिं० स्त्री०) मुँहई, तगड़ापन।

कठमाटी (हिं० स्त्री०) चूत्तिका धियोप, कोचदकी  
मटो। यह चति गोघ गच्छ हो कठोर पड़ने  
लगती है।

कठर (सं० हिं०) कठ-परन्। कठिन, कड़ा।

कठरा, बरग है।

कठरी (हिं० स्त्री०) कीटा कठरा।

कठना (हिं० पु०) कठनाभरण विधेय, यद्यपि  
पहनेकी पह माना। कठनेमें चादी-मीनेके  
चतुर्भुज पत्र, व्याघ्रमण्ड, घन्या चाटि घनेह प्रकारके  
द्वय रहने, की चविष्ठाधिये बघेकी रसा संगते है।  
कठना भाग्य करनेमे यद्योकी दृष्टि नहीं लगती।

कठन, बरग है।

कठन (सं० पु०-स्त्री०) गिमा-धन्य, कंकड़-पगर।

कठरको (सं० स्त्री०) चतुर्वेदात्मगत उपनिषद्  
विधेय। इसमें तीन-तीन बसोके टी चपाय है।

उपम चपायमें कहा है—'नविदेताको पिता विम  
जित्ने पञ्च क्रिया दोर उपमा सर्वथ ब्राह्मणोकी  
दिया था। पलाकी सरकी मुहो गाव देते समय  
लगते पुत्र नविदेताने यद्यप्येक माघ तीन बार प्रद

उठाया—पिता। मुमि क्रियसे जाय समर्थक करोने।  
विश्वजित्ति मुरान कोष यम निरुक्त महा—मुमि  
यमराजके जाय ओपेने। बस, नविदेताको यमलोका  
जाना पड़ा। यहाँ यमराजने उन्हें ब्रह्मविद्या पढ़ावो  
यो।' इस चपायमें ब्रह्मविद्याका जो विम्वर वर्णन  
है। द्वितीय चपायमें ब्रह्मका सचय देखाया है।

कठबन्धुपनिषद्, बरगो है।

कठमाया (सं० स्त्री०) कठेन प्राप्ता माया, मज-  
पदको०। यत्तुर्वेदात्मगत एक कठमयी माया।

कठमाठ (सं० पु०) कठविधेय।

कठमुनि, बरगो है।

कठयोद्रीय (सं० पु०) कठद्विती वेति चधोने या,  
कठद्विती-यज्। १ कठद्वितीय। २ कठद्विती चप्ययम  
कानेवाला।

कठमरीया, बरगो है।

कठा (सं० स्त्री०) करिणी, इधियो।

कठाहु (सं० पु०) पवित्रविधेय, एक विधि या।

कठाधायक (सं० पु०) यत्तुर्वेदको कठमाया पढ़ाने-  
वाला गुरु।

कठारा (हिं० पु०) सरिता वा सरोवरका तट, दरया  
या तालाबका किनारा।

कठारी (हिं० स्त्री०) १ काठपात्र, मकड़ोका बरतन।  
२ कमण्डलु।

कठाहक (सं० पु०) कठं कठिनं चाहति, कठ-  
या-हन्-ट कठाहः तादृशं कं गिरो यत्। दान्ध  
पयो, पनह्या।

कठिका (सं० स्त्री०) कठ वाद्वयकात् पुम्। १ तुषकी-  
तृष। २ पटिका, छद्मिया, दडो।

कठिन्न (सं० पु०) कठिं कठिनं जरयति, कठ-  
विष्-पन्थ-सुम् कठ-ङ्-पन्थ उपोदरादिताम् वा।  
१ पदोप, कालो तुल्यकोका पैह। इसका संज्ञक  
पदोप-पदोप, कुटेरक, लाविना, लातुका, पर्वका,  
पसुर, जोरक, सुवयला, कुदवक, कुमनिका,  
कुलिका, तुलसी, सुरमा, घाया, तुम्हा, चपनचो,  
च्येतामचो, गारा, भुगडा चोर देरदुम्हि है।  
आर्यब्रह्मके मतमें कठिन्नर कट्ट पने निररथ,

चण्णवीर्य, दाहकारी, पित्तकारक, अग्निदीपक और कुष्ठ, मूत्रकच्छ, रक्तदीप, पाष्णशूल, कफ तथा वायु-नाशक है। इसकी मूल्य विलुप्त विवरण देखो।

२ पर्जकहृत्, छोटी तुलसी।

कठिन (सं० त्रि०) कठ-इनच्। बहुवचनवाचि। उच्। १४२। १ दृढ, सख्त, कड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—

काठर, ककुष्ठ, कूर, कठोर, कठोन्, जरठ, कर्कर, काठर और कमठायित है। २ निष्ठुर, बरहम। ३ दुर्वाध, मुश्किलसे समझ पड़नेवाला। ४ तोक्ष्ण, तीक्ष्ण, पैना। ५ दुःसह, जो मुश्किलसे बरदाश्त हो।

“नितान्तकठिनां धर्मम न वेद सा मानवीम्।” (विजयोपनी)

६ शृङ्ग, सड़ो, जो गुलत न हो। (पु०) ७ निविदारण्य, भाङ्गी। (ह्री०) ८ शवान्वाजाजीषिकटुभूमिस्वादिरूष्य, भजवायन, जोरा, सोंठ, मिर्च, पौपल, बिरायता वगैरह चीजें। ९ स्थाली, मट्टीकी हंडी।

हिंदीके कवियोंने कठिनताके स्थानमें भी इस शब्दकी व्यवहार किया है।

कठिनचित्त (सं० त्रि०) कठिनं चित्तं यस्य, बहुवो०। निर्दय, बरहम।

कठिनता (सं० स्त्री०) कठिनस्य भावः, कठिन-तल-टाप्। १ दृढता, सख्ती, कड़ापन। २ निष्ठुरता, बरहमो। ३ तोक्ष्णता, तीक्ष्ण, पैनापन। ४ दुःसहता, बरदाश्त कर न सकनेकी क्षमता। ५ दुर्वाधता, समझमें आ न सकनेकी क्षमता। ६ भयानकता, खौफनाकी।

कठिनताई (हिं०) कठिनता देखी।

कठिनत्व (सं० स्त्री०) कठिनता देखी।

कठिनपृष्ठ (सं० पु०) कठिनं पृष्ठमस्य, बहुवो०। कच्छप, बाघा, कटुवा।

कठिनपृष्ठक (सं० पु०) कठिन-पृष्ठ स्थायं संश्रावं कान्। कच्छप, बंगपुच्छ, कटुवा।

कठिनफल (सं० पु०) कठिनपृष्ठक, कैयका पेड़।

कठिनपदय, कठिनचित्त देखी।

कठिना (सं० स्त्री०) कठिन-टाप्। १ शर्करा, शक्कर, चीनी। २ गुड़शर्करा, गुड़के नीचे पड़नेवाला दाना। ३ काकोदुम्बरिका, गोबस्ता, कठगुलर।

कठिनाई (हिं०) कठिनता देखी।

कठिनान्तःकरण (सं० त्रि०) निष्ठुर, बरहम, कड़े दिसवाला।

कठिनिका (सं० स्त्री०) कठिन-हीप् स्थायं कान्-टाप्, कच्छय। १ कठिनी, खड़िया, हूँची। २ स्थाली, हंडी।

कठिनी (सं० स्त्री०) कठिन-हीप्। विद नीलदिग्ध। पा ३१। १। खटिका, खड़िया, हूँची। इसका संस्कृत पर्याय—पाकशुद्धा, अमिता धातु, कक-खटो, खटो, खड़ो, वर्णसेधिका, धातुपक्ष और कठिनिका है। खरी देखी।

“अधिरक्तचकारामे न पतति कठिनी समुत्तापस।

सिगन्धा यदि क्षतिनी नद दग्धा कोहनी नरति।” (हिनीपदेश)

कठिनीक (सं० पु०) खटिका, खड़िया।

कठिनोभूत (सं० त्रि०) अकठिनं कठिनं भूतम्, धि। दृढ़ पड़ जानेवाला, जो सख्ती पकड़ खाता हो। जो वस्तु द्रव होती कठिन पड़ जाता, वही कठिनोभूत कहाता है।

कठिनोपल (सं० पु०) कौस्तुभो ग्राहि, किसी किछका पनाज।

कठिन्यादिपेषा (सं० स्त्री०) वैद्यकोक्त पेषविशेष, एक अर्क। खड़िया ८ तोला, मिसरी ४ तोला, गोंद ४ तोला, सोंफ २ तोला और दासचीनी २ तोला एकत्र कुचल किसी मट्टीके बरतनमें १ मिर जलके साथ रातको भिगो देना चाहिये। फिर ह्यानकर कुछ देर स्थिर भावसे रखने पर ऊपरी चंग मिर्सेस पड़ जाता है। इसी खच्छ जलको पीनेसे पड़थी, अमाशय और रक्तपित्त दबता है। पूर्वोक्त द्रव्य-समूहके साथ २ तोला सोंफ और २ तोला घनिया भी मिला देनेसे पड़पित्तके लिये यह पेष उपकारी होता है। फिर कड़े डेनका चूर्ण २ तोला पूर्वोक्त संकल द्रव्योंके साथ हास देनेसे रक्ताभिमारको शाम-पड़ता है।

कठिया (हिं० वि०) १ कठिन, सख्त दिसकेवाना। (पु०) २ मोधूममेद, किसी किछका गेहूँ। इसका शब्द रक्तवर्ष-एवं म्यून रक्षता और तुपका पाधिश

देव पड़ता है। कठिया मंत्रकी रोटी या पूरी बहुत चपली लगती है। (को०) १ विजयाभेद, किसी विश्वको भाग। यह जिस नदीके तटपर स्थित पत्तन होता है।

कठियाना ( हिं० लि० ) कठोर पड़ना, कड़ा होना, रूपना, काठ बन जाना।

कठिम ( सं० पु० ) कठिनि भोजने दुःख सहनें वा खनयति, कठ बाहुलकात् इज्ज। १ कारवेक, करीया। २ कर्कट, वनकरंला। ३ पुनर्भवा। ४ रक्तपुनर्भवा, काम पुनर्भवा। ५ तुलसीतप।

कठिलक ( सं० पु० ) कठिल स्पर्शे कृत्। कठि ईश्वर।

कठिलका ( सं० स्त्री० ) १ कारवेकतप, करीसेवी श्वेत। २ तुलसी। ३ रक्तपुनर्भवा।

कठिलका, कठिया ईश्वर।

कठो ( सं० स्त्री० ) कठ-ठो। १ कठयापाध्यायोकी पत्नी। २ माधवी।

कठोर ( हिं० पु० ) मिह, मीर।

कठुना ( सं० स्त्री० ) १ कठना, बसोके गलेमें पहननेकी माला। २ माका, हार।

कठुनाना ( हिं० लि० ) १ कड़ा पड़ना, रूपना, लरी निकलना। २ कृष्य हो जाना, लकड़ना, ठिठरना।

कठेठ ( हिं० वि० ) १ कठिन, कड़ा, मजबूत। २ पदार्थ, जिसके कड़ा स्वाद-पेर रहे।

कठेठा, कठ ईश्वर।

कठेठां ( हिं० स्त्री० ) हड़, मजबूत, कड़ी।

कठेर ( सं० पु० ) कठिनि लपट्ठन सीपति, कठ-गरक। कठिनि लपट्ठन ईश्वर। कठिनि लपट्ठन ईश्वर। कठिनि लपट्ठन ईश्वर। कठिनि लपट्ठन ईश्वर।

कठेरवि ( सं० पु० ) कठिनिविजय।

कठेह ( सं० पु० ) कठ-पह। कुमिर।

कठिन ( हिं० पु० ) १ कठिनमात्रका कठिनि, पुनर्भवी समान। इसमें भुगतो बांध और कठका कर भुगिया कर या जलकी भुगता है। २ कठिनिविजय, एक योद्धा। यह कठका बलना और दोहरे एक कड़ा रहता है। कठेरे कठिन ईश्वर का पुत्र पातकी मोल कर देते हैं।

कठेना ( हिं० पु० ) काठपात्रविजय, कठोना, मजबूतीका एक वस्तु।

कठेनी ( हिं० स्त्री० ) कठोना कठेना, मजबूतीका एक टोटा वस्तु।

कठेदर ( हिं० पु० ) कठरोगविजय, पेटकी एक योमारी। इसमें पेट फूटकर काठकी भांति कड़ा पड़ जाता है।

कठोर ( सं० लि० ) कठिनि पादपमाधरति, कठ-धोरन। कठिनिपादधरन। कठिनिपादधरन। कठिनिपादधरन। कठिनिपादधरन।

कठोर ( सं० लि० ) कठिनि पादपमाधरति, कठ-धोरन। कठिनिपादधरन। कठिनिपादधरन। कठिनिपादधरन। कठिनिपादधरन।

कठोरगिरि—मेलविजय, एक पदार्थ। यह पदार्थचल और विषमावलीके मध्य स्थित है। कठोर-गिरिपर शिवमन्दिर बना है। यहां माता स्वामीने योगी देवदत्तके लिये पाया करते हैं। मद्रास-पुराणके एक चमका नाम 'कठोरगिरिमाहात्म्य' है।

कठोरता ( सं० स्त्री० ) १ कठिनता, मजबूती, कड़ापन। २ भयानकता, फोफनाकी, मिहन, मरमार।

कठोरताई ( हिं० ) कठोरता ईश्वर।

कठोरपन ( हिं० पु० ) कठोरता ईश्वर।

कठोल ( सं० लि० ) कठ-धोलन। कठोर ईश्वर।

कठोली, कठोरी ईश्वर।

कठोना ( हिं० पु० ) काठपात्रविजय, मजबूतीका एक वस्तु। यह बहुत कड़ा होता है। कठोनेकी भाट लकी रहती है।

कठोनी ( हिं० स्त्री० ) काठपात्रविजय, मजबूतीका एक वस्तु। यह कठोनेकी भांटी होती है।

कटु ( सं० लि० ) कठिनि माधति, कटु पचापत्त। १ कृष्य, ईश्वर। २ विजय, पातन। ३ कठिनि, कड़ा। ४ मज्ज, गुमसुम, वनभोजन।

( हिं० पु० ) ४ कठि, कठर। ५ कठुमा, कठुमका योम।

कड़क ( सं० स्त्री० ) कटते भयते, कड़-बच् संज्ञायां कन् । १ कड़कच लवण, समुन्दरी नमक । इसका संस्कृत पर्याय—सामुद्र, त्रिकूट, अथीव, वशिर, सामुद्रज, सागरज और उदधिसम्भव है । भावप्रकाशके मतसे कड़क मधुर, विपाक, ईष्य तिक्त एवं मधुररसयुक्त, गुरु, न पतिशय शीतल तथा न पतिशय उष्ण, अग्निदीपक, भेदक, चारयुक्त, अविदाही, 'कफकारक, वायुनाशक, तीक्ष्ण और शूल होता है ।

( हिं० स्त्री० ) २ कठोर शब्द, कड़ी आवाज । ३ अपट, तड़प । ४ वक्त्र, विजली । ५ अश्वगति-भेद, घोड़ेकी एक चाल । ६ रोगविशेष, एक बीमारी । इसमें मूत्र एक-एक उत्तरता और इन्द्रियमें टाढ़ चटने लगता है । ७ पटेवालीका एक हाथ । इसे खेसाड़ीके दक्षिण पदपर वाम और फूटकारते है । ८ कठोरता, कड़ापन । ९ घोड़ाविशेष, लसक, दर्द । गृह एक-एक कर हुआ करतो है ।

कड़कच ( सं० स्त्री० ) सामुद्रलवण, समुन्दरी नमक । यह लवण सफेद और काला दोप्रकार होता है । बङ्गालके वीरभूम जिलेमें सिवा सफेदके काला नहीं मिलता । कालेको अपेक्षा सफेद कुछ कड़ा-जैसा लगता है । कड़कच संश्लेष लवणकी भांति विशुद्ध रहता है । इसीसे खातिशास्त्रमें विषवाणिके भोजनको संश्लेष और सामुद्र दोनों लवणका विधान है ।

कड़कड़ ( हिं० पु० ) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी आवाज । दो वस्तुओंके एक दूसरेसे टकर खाने या परस्परके आघातसे टूट-फूट जानिके शब्दका नाम 'कड़-कड़' है ।

कड़कड़ाता ( हिं० वि० ) १ चटखता हुआ, जो कड़कड़ा रहा हो । २ प्रचण्ड, घोर, तेज, कड़ा ।

कड़कड़ाना ( हिं० क्ति० ) १ कठोर शब्द निकालना, बोलना, और औरसे चिहाना । २ भङ्ग करना, तोड़ फासना । ३ गर्म करना, ताना ।

कड़कड़ाष्ट ( हिं० स्त्री० ) कठोर शब्द, कड़ी आवाज ।

कड़कना ( हिं० क्ति० ) १ तड़पना, कड़कड़ाना, कड़ी आवाज निकालना । २ चटखना टूटना-फूटना ।

३ घोर शब्दके साथ डांट बताना, और-और बोलना ।

कड़कनाल ( हिं० स्त्री० ) एक तोप । इसका मुँह चौड़ा होता है । यह शत्रुको भयभीत करनेके लिये दागो जाती है । कारण इसका शब्द अत्यन्त कठोर और घोर होता है ।

कड़कवांका ( हिं० पु० ) बलवान् नययुक्त, ताकत-वर नौजवान् । जिसका शब्द सुनकर लोग कांपने लगते, उसी युवकको 'कड़कवांका' कहते हैं ।

कड़कविजली ( हिं० स्त्री० ) १ क्षियौका एक फल-हार, औरतीका एक गहना । यह कानोमें पहनी जाती है । इसका दूसरा नाम 'बांढवाला' है । कारण यह चन्द्राकार बनती है ।

कड़का ( हिं० पु० ) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी आवाज । कड़कका शब्द 'कड़ना' कहलाता है ।

कड़खा ( हिं० पु० ) शीतविशेष, एक नगमा । यह एक प्रकारका मुहसज्जीत है । इसमें बोरीको प्रयुक्त भारी रहतो है । कड़खा सुन याहा उत्तेजित होते हैं ।

कड़खैत ( हिं० पु० ) १ कड़खा सुनानेवाला, जो कड़खा गाता हो । २ चारण, बन्दो, भाट ।

कड़हर, कड़हर देवो ।

कड़ङ्ग ( सं० पु० ) कड़ें मादकतागर्ति गमयति जनयति, कड़-गम-ङ् । १ सुराविशेष, एक शराब । २ देशविशेष, एक सुष्क ।

कड़ङ्गर ( सं० पु० ) कड़ात् भक्षणीयशय्यादेः सकाशात् मियते क्षियते, कड़-वृ-खच्, कड़ें भक्षणीय-शय्यादिकं गिरति प्राप्नोति सकाशात्, कड़-वृ-प्रच् वा । गुप, भूयो, वेरा ।

कड़ङ्गरीय ( सं० स्त्रि० ) कड़ङ्गरं गुपं प्रकृति, कड़ङ्गर-कन् । गुपभक्षक, भूयो खानेवाला ।

"नीवारवादिषडङ्गरीयैरागर्ते भक्ष्यते" ( १३ ४१८ )

कड़ङ्ग ( सं० स्त्री० ) गच्छते मियते जनादिकम्, गड़-प्रत्यन् गकारस्य ककारः । ईदृशेव च । उच १०१६ । पात्रविशेष, एक बरतन ।

कड़ङ्गिका ( सं० स्त्री० ) विज्ञान, विद्या, इन्म, वाक्-क्षियत, दिकमत ।

कड़वड़ा ( हिं० वि० ) १ कड़ुरित, कवरा । ( पु० )



देख पड़ता है। कठिया नेहकी रोटी या पूरी बहुत पचती लगती है। (छी०) ३ विजयाभेद, किसी किसीको भांग। यह भैरव नदीके तटपर अधिक उत्पन्न होती है।

कठियाना (हिं० क्रि०) कठोर पड़ना, कड़ा होना, सुखना, काठ बन जाना।

कठिल (सं० पु०) कठित भोजने दुःखें उद्देगं वा जनयति, यह बाहुलकायुः इह। १ कारवेह, करेला। २ कर्कट, बनकरेला। ३ पुनर्नवा। ४ रत्नपुनर्नवा, साल पुनर्नवा। ५ तुलसीवृक्ष।

कठिलक (सं० पु०) कठिल स्त्राये कं। कठिह दो। कठिलका (सं० स्त्री०) १ कारवेहवृक्ष, करेलेकी वेल। २ तुलसी। ३ रत्नपुनर्नवा।

कठिलिका, कठिलका दीखी।

कठो (सं० स्त्री०) कठ-डीय। १ कठमाणाध्यायोकी पद्धि। २ ब्राह्मणी।

कठोर (हिं० पु०) मिह, शिर।

कठुला (सं० स्त्री०) १ कठना, बघोके गलीमें पड़नेकी माला। २ माला, हार।

कठुवाना (हिं० क्रि०) १ कड़ा पड़ना, सुखना, तरो निकलना। २ मृद्व हो जाना, जकड़ना, ठिठरना।

कठै (हिं० वि०) १ कठिन, कड़ा, मजबूत। २ बयस्क, जिसके कड़ा हाथ-पैर रहें।

कठैठा, कठैठ दीखी।

कठैठी (हिं० स्त्री०) हड़, मजबूत, कड़ी।

कठैर (सं० पु०) कठित छच्छण जीयति, कठ-परक। पतिव्रतकठितमिदुर्दिग्गिज परक। उष् ११८। दरिद्र, गृहीध, तफसीयसे काम चलानेवाला।

कठैरणि (सं० पु०) श्रमिविशेष।

कठैर (सं० पु०) कठ-एव। कुबेर।

कठेन (हिं० पु०) १ क्षर्णमाजकका कामुक, मुनियेकी कामना। इसीमें धुनकी बांध और सटका कर धुनिया रुई या जनकी धुनता है। २ यन्त्रविशेष, एक चोखार। यह साठका बनता और बीचमें एक गड्ढा रहता है। कचेरे कठैलके गड्ढेमें रख धातुके पात्रकी गोम कर देते हैं।

कठैला (हिं० पु०) काष्ठपात्रविशेष, कठोता, लकड़ीका एक बरतन।

कठैली (हिं० स्त्री०) छोटा कठैला, लकड़ीका एक छोटा बरतन।

कठोदर (हिं० पु०) उदररोगविशेष, पेटकी एक बीमारी। इसमें पेट फूलकर काष्ठकी भांति कड़ा पड़ जाता है।

कठोर (सं० वि०) कठित पारुष्यमाचरति, कठ-घोरन्। कठिपविमलोरन्। उष् ११६। १ कठिन, सख्त, कड़ा। २ पूर्ण, पूरा, चढ़

कठोरता (हिं० स्त्री०) कठोरताविषयवाचक-शक्तिः (नाय) ३ जरठ, पुराणा, गया-वाता। ४ क्रूर-कर्मा, बुरा काम करनेवाला। ५ भयानककर्म, खौफनाक काम करनेवाला। ६ सुतामोध्य, मुद्रिकसंघे समझमें चानेवाला। ७ दारुण, घोरहम। ८ तोष्ट, तेज, पैना। ९ चबरोधकारी, रोक लगानेवाला।

कठोरगिरि—शैलविशेष, एक पहाड़। यह पश्चात्तल और त्रिचनापल्लीके मध्य अवस्थित है। कठोर-गिरिपर शिवमन्दिर बना है। यहां माना स्थानोविधीमी देवदर्शनके लिये आया करते हैं। ब्रह्माण्ड-पुराणके एक अंशका नाम 'कठोरगिरिमाहात्म्य' है।

कठोरता (सं० स्त्री०) १ कठिनता, सख्ती, कड़ापन। २ भयानकता, खौफनाकी, शिष्ट, भरमार।

कठोरताई (हिं०) कठोरता दीखी।

कठोरपन (हिं० पु०) कठोरता दीखी।

कठोस (सं० वि०) कठ-घोसच्। कठोर दीखी।

कठोती, कठोती दीखी।

कठोता (हिं० पु०) काष्ठपात्रविशेष, लकड़ीका एक बरतन। यह बहुत बड़ा होता है। कठोतीकी बाट ऊंची रहती है।

कठोती (हिं० स्त्री०) काष्ठपात्रविशेष, लकड़ीका एक बरतन। यह कठोतीसे छोटी होती है।

कड़ (सं० वि०) कठित मायति, कड़ पपाद्यच्। १ मूख, बेवकूफ। २ विचित्र, पागल। ३ कर्कश, कड़ा। ४ मज्ज, गुमसुम, जनयोना।

(हिं० पु०) ४ कटि, कमर। ५ कुसुम।

६ कुसुमका बीज।

कङ्क ( हिं० स्त्री० ) कटते पयते, कङ्क-चच् संघायां कन् । १ कङ्कच लवण, समुन्दरी नमक । इसका संस्कृत पर्याय—सामुद्र, त्रिकूट, अचीव, शशिर, सामुद्रज, सागरज और उदधिसम्भव है । भावप्रकाशके मतसे कङ्क मधुर, विपाक, ईषत् तिक्त एवं मधुररसयुक्त, गुरु, न पतिशय शीतल तथा न पतिशय उष्ण, अग्निदीपक, भेदक, चारयुक्त, पविदाही, कफकारक, वायुनाशक, तीक्ष्ण और अरुच होता है ।

( हिं० स्त्री० ) २ कठोर शब्द, कड़ी भावाज् । १ चपट, तड़प । ४ घण्ट, बिजली । ५ अश्वगति-भेद, घोड़ेकी एक चाल । ६ रोगविशेष, एक बीमारी । इसमें मृत्र हक-हक उत्तरता और इन्द्रियमें टाढ़ उठने लगता है । ७ पटेबाजीका एक हाथ । इसे खेसाड़ीकी दक्षिण पदपर धाम और फटकारते हैं । ८ कठोरता, कड़ापन । ९ पोड़ाविशेष, कसक, दर्द । यह हक-हक कर हुआ करतो है ।

कङ्कच ( सं० स्त्री० ) सामुद्रलवण, समुन्दरी नमक । यह लवण सफेद और कासा दोप्रकार होता है । बङ्गासकी वीरभूम जिलेमें सिवा सफेदके काला मछों मिलता । कालेकी प्रमेचा सफेद कुछ कड़ा-जैसा लगता है । कङ्कच संन्यव लवणकी भांति विप्रद रहता है । इसीसे स्मृतिशास्त्रमें विषवायुके भोजनको सेन्धव और सामुद्र दोनों लवणका विधान है ।

कङ्ककड़ ( हिं० पुं० ) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी भावाज् । दो वस्तुओंके एक दूसरेसे टकर खाने या परस्परके आघातसे टूट-फूट जानिके शब्दका नाम 'कङ्क-कड़' है ।

कङ्ककड़ाता ( हिं० वि० ) १ चटखता हुआ, जो कड़कड़ा रहा हो । २ प्रचण्ड, घोर, तेज, कड़ा ।

कङ्ककड़ाना ( हिं० क्रि० ) १ कठोर शब्द निकालना, बोलना, और औरसे चिल्लाना । २ भङ्ग करना, तोड़ डालना । ३ गर्म करना, ताना ।

कङ्ककड़ाहट ( हिं० स्त्री० ) कठोर शब्द, कड़ी भावाज् ।

कङ्ककना ( हिं० क्रि० ) १ तड़पना, कड़कड़ाना, कड़ी भावाज् निकालना । २ चटखना टटना-फूटना ।

३ घोर शब्दके साथ डाँट बताना, और-और बोलना ।

कङ्ककनाल ( हिं० स्त्री० ) एक तोप । इसका मुँह चौड़ा होता है । यह शत्रुको भयभीत करनेके लिये दागो जाती है । कारण इसका शब्द अत्यन्त कठोर और घोर होता है ।

कङ्ककवांका ( हिं० पुं० ) बलवान् नवयुवक, ताकत-वर नौजवान् । जिसका शब्द सुनकर लोग कांपने लगते, उसी युवकको 'कङ्ककवांका' कहते हैं ।

कङ्ककविजली ( हिं० स्त्री० ) १ भ्रियोगा एक चल-हार, औरतीका एक गहना । यह कानोंमें पहनी जाती है । इसका दूसरा नाम 'चाँदमाला' है । कारण यह चन्द्राकार बनती है ।

कङ्कका ( हिं० पुं० ) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी भावाज् । कड़ाकैसा शब्द 'कङ्कका' कहलाता है ।

कङ्कखा ( हिं० पुं० ) गीतविशेष, एक नगमा । यह एक प्रकारका मुझसङ्गीत है । इसमें गोरोंको प्रशंसा भरी रहती है । कङ्कखा सुन यात्रा उत्तेजित होते हैं ।

कङ्कखैत ( हिं० पुं० ) १ कङ्कखा सुनानेवाला, जो कङ्कखा गाता हो । २ चारण, बन्दो, भाट ।

कङ्कहर, कहर देखो ।

कङ्कड़ ( सं० पुं० ) कड़ सादकतागतिं गमयति जनयति, कड़-गम-ह । १ सुराविशेष, एक मराठ । २ देशविशेष, एक मुल्क ।

कङ्कड़र ( सं० पुं० ) कड़ात् भक्षणीयशस्यादिः सकाशात् मियते सिप्यते, कड़-ग-खच्, कड़ भक्षणीय-शस्यादिकं गिरति पाकनः सकाशात्, कड़-ग-चच् वा । बुप, भूषो, पेरा ।

कङ्कड़रीय ( सं० वि० ) कङ्कड़रं बुपं पचति, कङ्कड़र-घन् । बुवभक्षक, भूषो खानेवाला ।

"बीरपापादिकङ्कड़रीयमयस्ये जलपदे" अचिन् । ( १३ ॥ ८ )

कड़व ( सं० स्त्री० ) गटते सिप्यते जलादिकम्, गड़-पचन् गकारश्च ककारः । ध्वेत्तदेव नः । ७७ ॥ १५०६ । पात्रविशेष, एक बरतन ।

कड़ुन्दिका ( सं० स्त्री० ) विज्ञान, विद्या, इतम, वाक्-फियत, हिकमत ।

कड़वड़ा ( हिं० वि० ) १ कड़ुरित, कड़रा । ( पुं० )

२ कर्तुरित गन्तुविगिट पुरुष, कथरी दाटीवाला भादमी।

कड़वा (हिं० पु०) गोलाकार द्रव्यविशेष, एक गोला होता है। इनके फानपर बांधा जानेवाला पत्र-रीय कड़वा कहा जाता है। इससे इस भूमिमें अधिक नहीं घंघता।

कड़वी (हिं० स्त्री०) मकईं चौर ज्वारके हरे या सखे लव। यह काट काट कर पशुओंको खिलाये जाती है।

कड़व्य (सं० पु०) कड़-पत्र्यच्। कश्चिद्विषकठिनीत्यच्। उच्यते। १ शाकनाडिका, मन्त्रीका इण्डल। २ कलाम्बी शाक, गरी। ३ अथभाग, भगौरा। ४ कोष, कोना। ५ पद्मर, कोपन। ६ कदम्ब। ७ वाय, तीर।

कड़म्यक (सं० पु०) कड़म्य स्थायें कन्। १ शाक-नाडिका, मन्त्रीका इण्डल। २ कलाम्बीशाक, गाड़ी।

कड़म्यी (सं० स्त्री०) कड़म्यी भूयसा विद्यते इत्याः, कड़म्य-पच्-ङीप्। अयं चादिभ्योच्। ता शां० १२०। कलाम्बी-शाक, गाड़ी, कलमौशाक।

कड़वक (सं० पु०) अपभ्रंशके निवन्धका बाध्याय, विरामसूचक चर्ग।

“अपभ्रंशनिबन्धोऽस्मिन् अर्थः अक्षरविशेषः ॥” (साहित्यदर्पण)

कड़वा (हिं) कट, देखो।

कड़वी (हिं) कट, गन् देखो।

कड़हन (हिं० पु०) मन्त्रधाम्यभेद, कठधान, जड़ली धावण। यह मोटा होता है।

कड़ा (हिं० पु०) १ चूड़ामेद, खड़वा। इसे हाथ या पैरमें पहनते हैं। २ चुला, कुण्ड। यह लोहे या दूसरे धातुका बनता है। ३ कपोतमेद, किमी कियका कपूरर। (वि०) ४ कठिन, सख्त, न दबनेवाला। ५ रुच, रुखा। ६ उष, तेज। ७ गाढ़, सुदृढ़, जो ठोसा न हो। ८ नातिसिक्त, जो व्यर्थता तर न हो। ९ समक, मजबूत। १० तीव्र, खरा। ११ सहनशील, बरदाय्य करनेवाला। १२ दुःसाध्य, मुश्किल। १३ तीव्र, तीखा। १४ पचका, बरदाय्य न होनेवाला।

कड़ारं (हिं० स्त्री०) कठोरता, सख्तो, कड़ापन। कड़ाका (हिं० पु०) १ कठोर द्रव्यके भङ्गका मन्त्र, कड़ी चीजके टूटनेकी धावण। २ उपवास, फाका। कड़ाबोन (हिं० स्त्री०) १ कराबोन, छोड़े सुइकी बन्दूक। इसमें कितनी ही गोलियां भरकर दागी जाती हैं। २ तपसा, भोका, छोटी बन्दूक। यह कमरमें बांधी जाती है।

कड़ार (सं० पु०) गड़ सेचने पारन् कड़ादिमय। गङ्गः कङ्कः। उच्यते। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा रङ्ग। २ दास, गौकर। ३ दानमानविधि। (त्रि०) ४ पिङ्गलवर्णयुक्त, गन्तुमी, भूरा।

कड़ानिद्धी—एक शब्दकी संज्ञासी। यह उपासक सम्प्रदायके प्रसङ्गत है। कड़ानिद्धी सर्वदा गन रहते चौर चपनी जितेन्द्रियताकी रक्षाके लिये सिद्धपर लोहेका एक कड़ा चढ़ा रहते हैं। यह प्रया नागक-पत्रियोंमें भी चलती है।

कड़ाह (हिं० पु०) १ कटाह, लोहेकी बड़ी कड़ाही। इसमें दोनों चौर पकड़कर उत्तारने-चढ़ानेके लिये कुण्डे लगाये जाते हैं। बहुत पादमियोंके लिये पुरो, जलवा यगैरह बगानेकी इसे व्यवहार करते हैं।

कड़ाहा, कड़ाहो।

कड़ाहो (हिं० स्त्री०) सुद कटाह, छोटा कड़ाह।

कड़िहा (सं० स्त्री०) कलिका, कूँडो।

कड़ितुन (सं० पु०) कट्यां तुना तोननं यहच यस्स, सुयोदरादित्वात् टस्य ङः। खट्वा, तलवार।

कड़ियल (हिं० पु०) मृन्मय पात्रका भग्न पात्र, मटके या घड़ेका टूटा-फूटा टुकड़ा। इसमें पत्थरकी स्थापनकर दबा देते हैं।

कड़िया (हिं० स्त्री०) दोघंकाठ, कांडा। दाना भाड़ सेनेसे धरहरका जो खूवा पेड़ बच जाता, वही ‘कड़िया’ कहलाता है।

कड़ियाली (सं० स्त्री०) पत्रके मुण्डका रङ्ग, स्याम।

कड़ी (हिं० स्त्री०) १ मृदुलाके छलका पत्त, लज्जुरकी चढोका कला। २ सुद मण्डल, छोटा कला। ३ पत्तया, गीतमें सुछड़ेके बाद जानेवाला

हिस्सा। ४ घघो। ५ पस्थिविशेष, एक षट्ठी। पशु-  
लोके वज्रस्थलके पस्थिको 'कड़ो' कहते हैं। ६ कठि-  
नता, मुश्किल, घड़घन। ७ कठोर, सख्त।

कड़ौदार (हिं० वि०) १ मण्डलविशिष्ट, छत्रेदार,  
जिसके कड़ौ रहें। (पु०) २ किसी क्रियाका कड़ोदा।  
यह गड़गलाके सूत्र-जैसा होता है।

कड़ुपा (हिं०) कटु देखो।

कड़ुपा तेल (हिं०) कटुतेल देखो।

कड़ुपाना (हिं० क्रि०) १ कटु बोध होना, कड़ु वा  
लगना। २ झुझ होना, गुस्सा पाना, नाक-भों  
चढ़ाना। ३ पोड़ा करना, दई होना, किरकिराना।

कड़ुभाइट (हिं०) कटुता देखो।

कड़ुई (हिं० स्त्री०) कटु, चरपरी। मृतकके घर-  
वालोंकी सम्यन्धियों द्वारा भेजा जानेवाला भोजन  
'कड़ुई-रोटो' या 'कड़ुई-विचड़ी' कहाता है।

कड़ुलौ (सं० स्त्री०) अस्थिविशेष, एक हडियार।

कड़ुबुद्धी (सं० स्त्री०) बुद्ध कारवेक्ष, छोटो करेखा,  
करेखी।

कड़ू (हिं०) कटु देखो।

कड़ोरा (हिं० पु०) खरादकर कोई चीज बनानेवाला।

कड़ोकोट (हिं० पु०) व्यायामभेद, मालखम्बकी  
एक कसरत।

कड़ोकोटन, कड़ोकोट देखो।

कड़ोड़ा (हिं० पु०) उच्च पदाधिकारी, करोड़ोंका  
अफसर।

कड़ा (हिं० वि०) कृष्ण से लेकर चपना काम  
चलानेवाला, जो कर्जके भरोसे रहता हो।

कड़ा, कड़ा देखो।

कड़ना (हिं० क्रि०) १ वहिर्गत होना, निकलना।  
२ उदय होना, चढ़ना, देख पड़ना। ३ चपसर  
होना, बढ़ना। ४ घनीभूत होना, गड़ियाना।

कड़नी (हिं० स्त्री०) मन्थनरज्जु, नेतो, मयानोकी  
रस्सी।

कड़नागा (हिं० क्रि०) हाथ या पैर पकड़ कर  
घसीटना, सयेड़ना।

कड़नागा, बगना देखो।

कढ़ाई (हिं० स्त्री०) १ वहिष्करण, काढ़नेका काम,  
निकलाई। २ वहिष्करणका पारिव्यमिक, निशास  
देनेकी छत्रत। ३ सूचिकर्म, सूईका काम, कसोदा।  
४ सूचिकर्मका पारिव्यमिक, कसोदा काढ़नेकी  
छत्रत। ५ कड़ाही।

कढ़ाना (हिं० क्रि०) वहिर्गत कराना, बाहर  
निकलाना।

कढ़ाव (हिं० पु०) १ सूचिकर्म, गित्य, कसोदा,  
नक्य। २ कड़ाह।

कढ़ावना, बड़ना देखो।

कढ़ी (हिं० स्त्री०) व्यञ्जन विशेष, एक सामान।  
कड़ाहीमें घी या तेल खूब कड़कड़ा होंग, राई और  
हलदोका चूर्ण छोड़ देते हैं। जब यह चूर्ण खूब  
पकता और सोंधा सुगन्ध पाने लगता, तब मढ़े या  
पतले दहीसे घुला हुआ बेशन कड़ाहीमें पड़ता है।  
घीले नमक-मिर्च छोड़ इसे धोमो भाँचमें पकानेसे  
कढ़ी बन जाती है। प्रायः कढ़ीमें बेशनकी छोटी  
छोटी पकोड़ियाँ भो डाल देते हैं। कढ़ी पत्थन  
स्तादु व्यञ्जन है। जिन स्थानों पर पूरी नहीं बनती,  
उनमें कढ़ी अवश्य खनतो है। यह भातके साथ  
खानेसे बहुत अच्छी लगती है। कढ़ी पाचन, दीपन,  
क्षुधाक, रुचिजनक और कफ, वायु तथा बड़कोष्ठ  
रोगनाशक है। कढ़ीमें पड़नेवाली पकोड़ो फुलोही  
कहाती है।

कड़ुधा, कटु देखो।

कड़ुधा (हिं० पु०) १ घड़ोत, लिया हुआ, जो निकास  
गया हो। २ रातका रखा भोजन। यह वसोंके  
निये बचाकर रखा लिया जाता है। ३ कृष्ण, देगा।  
४ पात्रविशेष, पुरवा, बोरका।

कढ़ोरा (हिं० क्रि०) यन्त्रविशेष, एक घोड़ा।  
इससे भातके पात्रोंपर गित्यकार गोलाकार रेखाएँ  
खींचते हैं।

कड़ैया (हिं० पु०) १ निकाने लेनेवाला, जो चपल  
कर सेता हो। २ उधारकर्ता, उधार लेनेवाला, जो  
बधाता हो। (स्त्री०) ३ कड़ाही।

कड़ोरा (हिं० क्रि०) घसीटना, सयेड़ना, कड़नागा।

कण ( सं० पु० ) कणति पतिसूक्ष्मत्वं गच्छति, कण-  
पचायक । १ खेय, दाना । २ धनिका चूदाय,  
खाकका चूरा । ३ हिमलय, वरफका तयक । ४ जल-  
विन्दु, पानीका कतरा । ५ अमिस्फुलिह, पागकी  
चिनगारी । ६ रत्नमुग्न, जवाहरका रूप । ७ शस्य-  
मञ्जरी, गन्धकी वाला । ८ परमाणु, चूरा । ९ पतिसूक्ष्म,  
निहायत सारीक । १० तण्डुल प्रसृतिका सुदृ चंग ।

“कणान् वा मण्येरथ” तिप्ठात् वा सकृन्नि । ( मय १५८९ )

१० पिप्पली, पीपल । ११ वनजीरक, जंगली जीरा ।  
कणकच ( हिं० पु० ) १ कपिकच्छु, केवाच । २ करञ्ज,  
करोदा ।

कणगघ, कणकच देखी ।

कणगज, कणकच देखी ।

कणगुगुलु ( सं० पु० ) कणयासी गुग्गुलुयेति, कर्मधा० ।  
१ गुग्गुलुविशेष, एक गुग्गुल । इसका संस्कृत पर्याय—  
गन्धराज, स्वर्णकर्ण, सुवर्ण, कनक, धंशपति, सुरभि  
और पलस्कप है । राजनिघण्टुके मतसे कणगुगुलु  
कटु, उष्ण, सुगन्धि, रसायन और वायु, शूल, गुल्म,  
उदराधान तथा कफनाशक है ।

कणजिह्विका ( सं० स्त्री० ) १ मन्दासमझा, कमहिया ।  
२ मारिवा, चनन्तमूल । ३ बहुपत्रिका, भुईं चांवला ।  
कणजीर ( सं० पु० ) कणयासी जीरयेति, नित्य  
कर्मधा० । श्वेतजीरक, सफेद जीरा ।

कणजीरक ( सं० स्त्री० ) कणं सुदृ जीरकम्, कणजीर  
स्वाये कन् । सुदृजीरा, छोटा जीरा । इसका संस्कृत  
पर्याय—हृद्यगन्धि और सुगन्धि है । भावप्रकाशके  
मतसे कणजीरका रुच, कटु, उष्णवीर्य, अमिदीपक,  
सद्यु, धारक, पित्रावधक, मेधाजनक, गर्भाशयशोधक,  
पाचक, वनकारक, शक्तवर्धक, रुचिकारक, कफनाशक,  
चक्षुका क्षितजनक और खर, वायु, उदराधान, गुल्म,  
वमि तथा पतिसार रोगनाशक है । जीरक देखी ।

कणजीरा ( हिं० ) कणजीरक देखी ।

कणजीर्य ( सं० स्त्री० ) श्वेतजीरक, सफेद जीरा ।

कणगिर्याम ( सं० पु० ) गुग्गुलु, गुग्गुल ।

कणप ( सं० पु० ) कण-पा-क । अक्षविशेष, वरछा,  
भासा ।

कणप्रिय ( सं० पु० ) सूक्ष्मचटक, मोरैया, चिरैया ।

कणभ ( सं० पु० ) कण इव भाति, कण-भा-क ।  
१ अमिप्रकृति कौटविशेष, एक नेगदार मक्खी । इसके  
काटनेसे विषय, शोथ, शूल, खर, वमि और शरीरकी  
अवसन्नताका रोग बढ़ता है । ( भावप्रकाश ) २ पुष्पसूक्ष-  
विशेष, एक फूलदार पेड़ । ३ कौटभेद, एक कीड़ा ।  
इसके काटनेसे पित्तज रोग लगते हैं । ४ पन्थजातीय  
कीट, किसी किंछका कीड़ा । यह चार प्रकारका  
होता है—चिकण्टक, कुण्ठी, अमिक्कच और पप-  
राजित । इसके काटनेसे शरीरमें अययु, अन्नमर्द  
तथा शुद्धताका बोध पाता और दष्ट स्थान काला  
पड़ जाता है । ( हृत्प )

कणभच ( सं० पु० ) कणान् भक्षयति, कण-भक्ष-गुल्मु ।

१ श्वाभचटक, एक चिड़िया । २ कणाद । कणाद देखी ।

कणभक्षण ( सं० स्त्री० ) शस्यस्य भोजन, नाशके  
किनकीका खाना ।

कणभुक् ( सं० पु० ) कणान् भुङ्क्ते, कण-भुज-विप् ।  
कणाद-वृत्ति ।

कणमूल ( सं० स्त्री० ) १ पिप्पलीमूल, पिपरामूल ।

२ पक्षितक छत, पांचकड़वी बीजोंका घी ।

कणमाभ ( सं० पु० ) कणानां लामो यस्मात्, बहुप्रो० ।  
पेय्य करनेका एक यन्त्र, चक्की । २ पावर्त, गिर्दवा,  
भंवर ।

कणयः ( सं० पद्य० ) कण बोभाये गम् । पल्य  
पल्य, कौड़ी-कौड़ी, योड़ा-योड़ा ।

कणही ( सं० स्त्री० ) सतागिरीय, वज्रगिरीय ।

कणा ( सं० स्त्री० ) कण-टाप् । १ जीरक, जीरा ।  
२ पिप्पली, पीपल । ३ कुम्भोरमक्षिका, एक मक्खी ।  
४ श्वेतजीरक, सफेद जीरा । ५ कणजीरक, काला  
जीरा । ६ पन्थ, योड़ा ।

“कणोऽपि मण्येण कणामावगच्छति” ( तिप्पदिन १ )

कणाच ( हिं० पु० ) केवाच ।

कणाचटा ( सं० स्त्री० ) पिप्पलीमूल, पिपरामूल ।

कणाटोन ( सं० पु० ) कणाय पटति, कण-पट्-इनन्  
पृथोदराटित्वात् दोर्घत्वञ्च । खस्रमपचा, खड़रेचा ।

कणाटीर ( सं० पु० ) कण-पट्-ईरन् । कणाटीर देखी ।

कषाटीरक ( स० पु० ) कषाटीर सार्धं कन् ।

कषाटीर देखो ।

कषाट ( स० पु० ) कषं अति भक्षयति, कष-भट्-भण् । १ सुनिविशिय । यही वैशेषिक दर्शनके प्रथिता रहे । इनका दूसरा नाम भौलुक्य, कषभक्ष, कषभुज और कांश्रय है ।

महाप्र कषाटने 'विशेष' नामक एक अतिरिक्त पदार्थ स्वीकार किया, इसीसे उनके बनाये दर्शनसूत्रका नाम लोगोंने वैशेषिक रख लिया है ।

कषाटके मतसे छह भाव पदार्थ और एक सभाव पदार्थ अर्थात् सब सात पदार्थ हैं । छह भाव-पदार्थोंके नाम यह हैं—१ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य, ५ विशेष और ६ समवाय ।

द्रव्य प्रथम पदार्थ है । यह नौ प्रकारका होता है । यथा—

“श्रुतिश्रुतको बाह्यपदार्थ काचोदिशाया मन इति द्रव्याणि”

( ईश० सू० १॥१३ )

जल, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मनका नाम द्रव्य है ।

जिसमें गन्ध रहता, उसको पित्तान् चिति कहता है । हम जलमें भी गन्ध अनुभव करते हैं । किन्तु वह गन्ध जलका नहीं ठहरता, पृथिवीसे जलपर उत्तरता है—जैसे किसी नूतन शृंगपात्रमें रख थोड़ी देर बाद पानीपर जलसे सोधा गन्ध आने लगता है । सुतरां मानना पड़ेगा—आय्यका गन्ध ही जलमें अनुभूत होता है ।

केवलमात्र शुद्धरूप किंवा स्थायिक द्रव्य रखने वाले द्रव्यका नाम जल है । शुद्ध पीत प्रभृति नानाविध रूप देख पड़ने और स्थायिकद्वयत्व न रहनेसे पृथिवीको जल कैसे कह सकते हैं ।

स्वाभाविक उत्पत्ता-युक्त द्रव्य तेज कहता है । समुष्ण, अशोतल और किसी प्रकारके पाकसे उत्पन्न न हुये अर्गविशित द्रव्यको वायु कहते हैं ।

जिसमें शब्द उठता, उसका नाम आकाश पड़ता है । कोई-कोई कहता—वायुसे ही शब्द निकलता, सुतरां आकाशको स्वीकार करना अस नहीं सकता ।

यह सन्देह दूर करनेके लिये विज्ञानाय न्यायपदानमने लिखा है—

“न च वादनवदेव शब्दसद्वत्त्वमिव वायो कारणवत्पुरुषः सन् उत्पत्ततामिति वाच्यं” अथात द्रव्यमात्रेण वाचाभिनिवेशशुच्यतामात्रम् ।” ( सिद्धान्तसारको )

कोई नहीं कहता—प्रथमतः वायुके पथययमें सूक्ष्म शब्द उठता, फिर उसी शब्दसे सूक्ष्म वायुमें सूक्ष्म शब्द खुलता है । क्योंकि आत्यय माघ जिसके मायका कारण नहीं, यह वायुका विशेष गुण कैसे हो सकता है ! आत्यय विद्यमान रहते भी जब शब्दका विनाश हो जाता, तब आत्ययतायको शब्दके मायका कारण कहना किसी मतसे सङ्गत नहीं आता । एकमात्र शब्द ही आकाशकी सिद्धि कहते हैं । इस सम्बन्धपर लिखते हैं—

“परिशेषाद्वाक्यादयः” ( २ सू० १ पा० १० सू० )

अन्य अष्टविध द्रव्योंमें शब्द रहना समभव होनेसे शब्द ही आकाशका एकमात्र सिद्ध ( अनुमापक हेतु ) है ।

श्वेष्ठल और कनिष्ठल आदि ज्ञानके कारण-पदार्थको दिक् कहते हैं ।

जिसमें क्षतिज्ञान प्रभृति रहता, उसका नाम आका पड़ता है ।

जिस पदार्थके रहनेसे हम सुख, दुःख प्रभृति उठते और विजातीय ज्ञानकी भूलक देख नहीं पाते, उसको संज्ञा मन बताते हैं ।

गुण पदार्थ २४ प्रकारका है । यथा—रूप, रस, गन्ध, शब्द, संख्या, परिमाण, दृढत्व, संयोग, वियोग, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुप्त, दुःख, इच्छा, हय, प्रयत्न, शब्द, सुखत्व, दुःखत्व, छेद, संस्कार, पाप और धर्म ।

\*( ईश० सू० १॥१४ )

कर्म पांच प्रकारका होता है—उत्प्रेषण, पच-सेषण, बाहुल्यन, प्रसारण और गमन । ( ईश० सू० १॥१५ )

सामान्य दो प्रकारका है—साधारण यद् वा जाति विशेष । जिस पदार्थके रहनेसे परमाणुकी भेद साधा जाता, वही विशेष कहता है । ( ईश० सू० १॥१६ ) समवाय जित् सम्बन्धको कहते हैं । ( ईश० सू० १॥१७ )

द्रव्यके साथ उसके परमाणुका सम्बन्ध रहता है—  
जैसे घटके साथ सत्तिकाका सम्बन्ध इत्यादि।

प्रभाव चार प्रकारका है—प्रागभाव, ध्वंसाभाव,  
अभ्युत्थाभाव और प्रत्यस्ताभाव। प्रभाव ही।

कथादके मतमें प्रत्यकार कोई स्वतन्त्र पदार्थ  
नहीं। तेजके प्रभावकी ही प्रत्यकार कहते हैं।

प्रमाण इन्होंने दो ही प्रकारका माना है—प्रत्यक्ष  
और अनुमान। उपमान अनुमानके प्रत्यभूत है।

महर्षि कथादने ही सर्वप्रथम परमाणुवाद बताया  
था। इनके कथनानुसार एकमात्र परमाणु सत्स्वरूप  
नित्य पदार्थ है। उसका दूसरा कोई कारण नहीं  
होता।

“एतद्वारणप्रतिष्ठा” ( वेदं • सू • ३।१। )

जब जो यावन्तीय जड़पदार्थ प्रत्यक्ष करते, वह  
समुदाय परमाणुके संयोगसे बनते हैं। विशेष  
विशेष प्रकारके परमाणुओंमें विशेष नामक एक पदार्थ  
रहता है। उसीको शक्तिसे मिश्र-मिश्र रूप परमाणु  
मिश्र-जसे देख पड़ते हैं।

कथादके मतमें पट्टर कारण विशेष द्वारा पर-  
माणुओंका संयोग गठनेसे इस विषय-सारकी उत्पत्ति  
होती है।

इन्होंने जड़पदार्थका मूलतत्त्व अपने सूत्रके मध्य  
की संविधेय किया है। वैज्ञानिक-उपकारमें स्पष्ट  
ही लिख दिया है—

“हृदे चारये मन्दहृदकालागमकालम्”

क्योंकि हृद कारण रहते पट्टर कारणकी कल्पना  
चावश्यक नहीं।

याज्ञिकिक महर्षि कथाद अपने चारों ओर जो  
देख पाते, उसीके ज्ञानानुसंगनमें प्रवृत्त हो जाते थे।

जो परमाणु या जड़तत्त्व कथादने अपने सूत्रमें  
प्रचार किया, याज्ञिकिक भारतवर्षमें विशेष चातर न  
मिलते भी युरोपीय दार्शनिकोंने उसको यथेष्ट सत्यान  
दिया है। ई०से ४४० वर्ष पूर्व ग्रीक देगमें डेम-  
क्रिटसने परमाणुवाद बताया था। उसके पीछे  
एपिक्युरसने इस मतको संविधेय प्रचार किया।  
उनका सिद्धान्त बिलकुल कथादसे मिलता है। यूनान

गियाने उनका मत प्रकाश किया। उन्होंने अपने  
बनाये काव्यदर्शनमें कहा है—

“Nunc age, quo motu genitalia material  
Corpora res varias gignant, genitasque  
resolvant

Et qua vi facere id congantur, quaeve  
sit ollis

Reddita mobilitas magnum per inane  
meandi Expediam.”

( II. 61-61. )

यूनानियोंने स्पष्ट ही स्वीकार किया, कि पर-  
माणुने इस जगत्को जन्म दिया है। याज्ञिकिक  
यूनानियोंका हितोद्य चर्चार्थ पढ़नेसे कथादका मत  
बहुत कुछ मिलता है।

यह देखना चाहिये—किसने सर्वप्रथम परमाणुवाद  
बताया था, महर्षि कथाद या यूनानी डेमक्रिटसने।

• इस बातके समझनेका कोई उपाय नहीं—कथाद  
किस समयके व्यक्ति रहे। अपना देवीय प्रवाद मानने-  
से यह ५५५ हजार वर्षके लोग हो सकते हैं। फिर  
भी भगवद्गीतामें वैज्ञानिकका मत गृहीत हुआ है।  
सुतरा गीता बननेसे पहले महर्षि कथाद विद्यमान  
थे। इससे मानना पड़ेगा—डेमक्रिटसने बहुत पहले  
कथादका जन्म हुआ। तत्पश्चात् समझ सकते—महर्षि  
कथादने ही सर्वप्रथम परमाणुवाद बताया था। डेम-  
क्रिटसकी जीवनी पढ़नेसे बाध होता—वह संन्यासि-  
योंके साथ भारतवर्ष आये थे। संन्यासतः भ्रान्तिमयों-  
के सुखसे कथादका मत सुन अपने प्रत्यक्ष उन्होंने  
वैज्ञानिककी बात लिखी है। :

• Thus the Great World's eternally renewed ;  
Thus endless atoms are with power endowed,  
Successive generations to supply ;  
Some creatures flourishing, while others die.  
Like racers, each revolving age, we find,  
Retires, and leaves the lamp of life behind.  
If you suppose that seeds at rest convey,  
Motiva to bodies, wide from truth you stray.  
Through the vast Void as those primordialists role,  
By foreign force or gravity they move.

कणादने जो पदुर लगाया, उसका सुफल भारतने न पाया। सुदूर युरोपखण्डमें डेल्टन साधने उसको पुनरुत्पन्न किया। आजकल युरोपमें परमाणु-वाद कीन नहीं मानता। परमाणु शब्दमें विद्युत विवरण देको।

बहुतेसे लोग कहते—कणाद ईश्वरका अस्तित्व मानते न थे। कारण कणादसूत्रमें किसी स्थानपर ईश्वरका नाम नहीं मिलता। जगत्के कारणको निर्धारण करना जो दर्शनशास्त्रका मुख्य उद्देश्य है। यदि कणाद ईश्वरको विश्वका कारण समझते, तो अवश्य ही इस विषयको स्पष्ट स्पष्ट उल्लेख करते।

किर क्या कणाद नास्तिक रहे अथवा ईश्वरके सम्बन्धपर कोई सन्देह रखते थे? नहीं, यह बात ही नहीं सकती। इन्होंने वेदको प्रामाण्य माना है—

“तत्त्वनादायास प्राप्तायम्” (वेदो. सू. १/१/१)

इन्होंने आत्मज्ञान, सम्पन्नको ही मोक्ष बताया और स्वर्ग एवं अपवर्गप्रद धर्मतत्त्वकी प्रचार करनेके लिये ही अपना सूत्र बनाया है। परमतत्त्ववित् भाषवाचार्यने कणादके किसी अंशका प्राधान्य मान लिखा है—

“दिले व पातजोत्पत्ती विभागेन विभाजते।

यस्य न व्यक्तित्वं बुद्धिः के वेदे निष्कृतिः” (सर्वदर्शनसंग्रह)

द्वितीयोत्पत्ति, पाक द्वारा रूपादिकी उत्पत्ति और विभागज विभागकी उत्पत्तिमें जिनकी बुद्धि नहीं बिगड़ती, उसे विद्वन्मण्डली वैज्ञानिक समझती है। यह बात भी युक्तिमय नहीं, कि कणाद कृपि निरीश्वरवादी रहे। शङ्करमिश्रने कणाद-सूत्रकी व्याख्या करते स्पष्ट ही लिख दिया है—

“तद्विद्युत्कालमपि प्रविष्टिनिवृत्तये चरं वरायमिति”

तत् शब्दका अर्थ ‘ईश्वर’ पसिड है। अतएव पूर्व सूचना न रहते भी यहां यह ईश्वरवाचक निश्चित होता है। ईश्वर शब्दका उल्लेख न उठाने भी कणादने गौणभाषमें ईश्वरको स्वीकार किया है। १५८ अ. देखो।

२ स्वर्णकार, सोनार।

• “बलासुदधनिःसंयतविद्विः सधरः” (वेदो. सू. १/१/१)

जिसमें समुद्र और निःसंयत बलान्तरों एवं चरमों मिलना, उसीका नाम धर्म पड़ता है।

कणादिगण (सं० पु०) पिप्पल्यादिगण, पोपल वगैरह चीजें। पिप्पली, पिप्पलीमूल, चय, चित्रक, नागर, मरिच, एला, अजमोदा, इन्द्रपाठा, रेणुक, क्षीरक, मार्गो, महानिम्बकल, हिरु, रोहिण्यो, मर्प, विडुह, अतिविषा और मूर्ख सबके समवायकी कणादिगण कहते हैं। (कणादिगणग्रन्थ ६४)

कणादिघटी (सं० स्त्री०) औषधका एक औषध, पोषणकी एक दवा। पिप्पली, चवा, देवदारु, पुनर्णवा, बैलकी काल और हृद्दकारकका बीज बराबर बराबर कूटपौष ३ रत्नों कांजोके साथ पानेसे औषधका उपयोग दूर होता है। (रसैन्द्रसार ६४)

कणादीय (सं० पु०) श्वेतधोरक, सफेद जीरा। कणाद्यलोह (सं० स्त्री०) अतिघारका एक औषध, दस्तकी कोई दवा। पिप्पली, गुण्डो, पाठा, पामलकी, बड़ेडा, चरीतकी, मुस्तक, चित्रक, विडुह, रक्तचन्दन, विष एवं औषध समभाग और सबके समान लोह डाल जलमें रगड़नेसे यह औषध बनता है। (मन्त्रावर)

कणाद्य (सं० स्त्री०) पक्षके क्षयमें जीविका चलायाना, जो दाना बीन बीन गुजर करता हो।

कणासता (सं० स्त्री०) पक्षके क्षयमें जीविका निर्वाह करनेकी स्थिति, जिस हालतमें दाने बीन बीन गुजर करे।

कणामूल (सं० स्त्री०) पिप्पलीमूल, पिपरामूल। कणारक—उद्दोषका एक तोय। इसका प्रकृत नाम कोषार्क वा कोषारक है। किन्तु कुछ लोग अपभ्रंश बना कणारक उच्चारण करते हैं। कोषार्क देखो।

कणासुफल (सं० स्त्री०) चटोम, टेंडू।

कणासा (सं० स्त्री०) श्वेतधोरक, सफेद जीरा।

कणिक (सं० पु०) कणैव स्वार्थे कन् पत इत्वम्। १ कणा, पोषण। २ शब्द गोधूमस्पर्श, एहि गीर्णका पाठा। ३ शत्रु, दुश्मन। ४ पारतिका एक नियम। ५ धृतराष्ट्रके एक भ्राता।

“कणिके मज्जिने देहं हनयादीज्जीवकः” (भात, मध्य १०१ अ०)

६ अंसका कण, बाधनका दाना।

कणिका (सं० स्त्री०) कणाः सन्वत्सराः, कण-ठन्।



नम इति टी। वा ११५ (१२) । १ अत्यन्त सूक्ष्मवस्त्र, निहायत  
बारीक चीन्। २ चर्ममन्त्र हृद्य, गनियारी। ३ कपा,  
करी, किनका। ४ तण्डुलविशेष, एक चावल।  
५ कसादिका सूक्ष्मांग, पानी वगैरे हृद्यका बारीक डिछा

“तन्मृदाय कण्टकविना मोहये गनिविना” (शिवदूत)

कपित (सं० स्त्री०) कण चार्तनादे भावे-क्त। पीहित-  
का यातनासूचक नाद, गमसे भरी धावाज।

कपिश (सं० स्त्री०) कषो विषयतेऽस्य, कष-इति,  
कपितः श्रिते चपिन्, कपित्-ग्री-ड। शस्यमध्वरी,  
धनाजकी बाल।

कपिष्ठ (सं० त्रि०) कष-इत्यन्। १ अन्य चपेचा  
सुद्र, दूसरेकी वनिस्त्रत छोटा। २ अन्य चपेचा  
चीन, दूसरेसे कम।

कषी (सं० स्त्री०) कष-ईकन्। १ कष्य, थोड़ी।  
२ हृद्यकण्टकता, एक धूल। ३ कषिका, कनौ,  
टुकड़ा। ४ तण्डुलविशेष, किसी किण्णका चावल।

कषीक (सं० त्रि०) कष्य, सूक्ष्म, छोटा, बारीक।  
कषीका (सं० स्त्री०) कष-छोप्। १ कषिका, कनौ,  
छोटा टुकड़ा।

कषीचि (सं० पु०) कष-ईचि। वक्षिगामीनिः। वष-  
शब्दः। १ पक्षी, छोटी कानी। २ निनाद, धावाज।  
(स्त्री०) ३ सुप्तितालता, झूलदार धूल। ४ गुप्ता,  
गुंघची। ५ गडक, गाड़ी।

कषीषो (सं० स्त्री०) कषीचि षोः।

कषीयः (सं० त्रि०) कष-ईयच्। विवचनविमर्शोप-  
दिताशेषहनी। वा ११५ (१०) । १ अत्यन्त सूक्ष्म, निहायत  
बारीक। २ अन्य चपेचा सुद्र, दूसरेकी वनिस्त्रत  
छोटा।

कषायान् (सं० पु०) कष-ईयच्। १ कनिष्ठ,  
छोटा। २ सुद्र, हकीर। ३ चीन, कम।

कषीमक (सं० त्रि०) कषिच षोः।

कषे (सं० पु०) कष-ए। १ इच्छासुरूप, जीभर।  
(सं०) २ निकट, समीप, पास।

कषेर (सं० पु०) कष-एर। कर्षिकारहृद्य, धमन-  
नामका पेड़।

कषिरा (सं० स्त्री०) कषेर-टाप्। १ वेष्टा, रस्ती।  
२ कृत्तिनी, हथिनो।

कषेर (सं० पु०) कष-एर। १ कर्षिकार हृद्य,  
धमनतामका पेड़। (स्त्री०) २ वेष्टा, रस्ती।  
३ कृत्तिनी, हथिनो।

कण्ट (सं० पु०) कटि-घच्। १ कण्टक, काटा।  
२ वक्रुल हृद्य, मौलधरीका पेड़।

कण्टक (सं० पु०-स्त्री०) कटि-क्वुल्। १ सूचीका  
अपभाग, सूईकी नोक। २ कांटा, चार। ३ मत्स्या-  
दिका कौकश, मल्लोकी नोकदार छत्रो। ४ नख,  
गाछून्। ५ रोमाच, रोंगटीका खड़ा डोना।  
६ सुद्रगुल, छोटा दुश्मन। ७ तीव्र घटना, तेज दर्द।  
८ क्षानिकारक भाषण, सुकसान् पट्टधानियाकी बात।  
९ दुःखका कारण, तकलीफका सबब। १० वाद-  
विवादका छण्डन, बहसकी तरदीद। ११ विप्रवाधा,  
भड़कन। १२ प्रथम, चतुर्थ, सप्तम चौर दशम गणत।  
१३ शाक्य मुनिका भय। १४ किसी अपहरणका  
नाम। १५ वेष्ट, बांध। १६ कर्मस्थान, कारखाना।  
१७ दोष, ऐव। १८ मकर, मगर। यह कामदेवका  
विश्व है। १९ केन्द्र, दायरेका मरकज।

“नक्षत्रान् कर्षाणि श्रेष्ठकण्टक कण्टकम्” (श्रीनिह)

२० गोचुरक्षुप, गोघर। २१ मदनहृद्य, मंगफल।  
२२ विष्यहृद्य, धूलका पेड़। २३ द्रुमद्विहृद्य, देगी  
वाढाम। २४ वनसुद्र, जङ्गली मूंग। २५ यवूरकहृद्य,  
वयून। २६ पञ्चवीज, कामलगदा।

कण्टककरश्च (सं० पु०) कण्टकमेद, जङ्गली करोंदा।  
कण्टककिंशुक (सं० पु०) कण्टकी पारिजात,  
काटिदार मदार।

कण्टकच्छद (सं० पु०) श्रेतकेतकहृद्य, धफेद  
कंधुका पेड़।

कण्टकत्रय (सं० स्त्री०) कण्टकारोवय, तीनों कटेया।  
हृदनी, कण्टकारी चौर गोचुर तीनोंका समूह  
कण्टकत्रय कह्यता है। कण्टकत्रय त्रिदोष, भ्रम,  
स्वर, पिप्त, हिंसा चौर तन्द्राभाषकी नाम करता  
है। (वैचकियहृद्य)

कण्टकदत्ता (सं० स्त्री०) दत्तकी हृद्य, केवड़ेका पेड़।

काण्टकदेही ( सं० त्रि० ) काण्टकप्रधानो देहोऽस्यास्ति, काण्टकदेह-इति । १ काण्टकाहत शरीरविग्रित, कांटीदार निम्न रखनेवाला । ( पु० ) २ शल्यक, खारपुत्र, स्याही । ३ मत्स्यविग्रह, कंठवा ।

काण्टकद्रुम ( सं० पु० ) काण्टकप्रधानो द्रुमः काण्टकेन पाचितो वा द्रुमः, मध्यपदलो० । १ शाखानिहय, सेमरका पेड़ । २ खदिरहय, खैरका पेड़ । ३ काण्टकयुक्त हय, कांटीदार पेड़ । वयस्य वगैरह कंटीले पेड़ोंको काण्टकद्रुम कहते हैं ।

काण्टकपञ्चक ( सं० त्रि० ) काण्टकं पक्षे यस्य ततः स्वायं कन् । पक्षमें काण्टक रखनेवाला, जिसके बाकू में कांटा रहे ।

काण्टकपञ्चमूल ( सं० स्त्री० ) स्वल्पमहत्त्वयवली काण्टकसंज्ञक पञ्च मूल, पाँच कंटीली जड़ें । कर्मरट, गोक्षुर, भिखरी, शतमूली और हिंसा पाँचोंका मूल मिलानेसे यह पौधप्रवृत्तता है । वैद्यक मतसे काण्टकपञ्चमूल रक्तपित्त, सर्वप्रकार मेह, शक्तादोष, तीनप्रकारके शोथ और क्षेमाको नाश करता है ।

काण्टकपाली ( सं० स्त्री० ) खगामप्यात हय, हिकानगरना ।

काण्टकप्राहता ( सं० स्त्री० ) काण्टकैः प्राहता व्याप्ता, इ-तत् । घृतकुमारी, वीकुवार ।

काण्टकफल ( सं० पु० ) काण्टकैराशितं फलं यस्य, मध्यपदलो० । १ पनसहय, काटहलका पेड़ । २ गोक्षुर, गोखरु । ३ काण्टकारी, भटकटैया । ४ परश्वहय, रड़का पेड़ । ५ धस्तुरहय, धतूरीका पौदा । ६ देवदाकी, मोखल, तख्तखारा । ७ कुसुमहय, कुसुमका पेड़ । ८ ब्रह्मटण्डुलहय । ९ करचहय, करोंदिका पेड़ । जिस हयका फल कांटीदार रहता, उसको संस्कृतमें 'काण्टकफल' कहता है ।

काण्टकफला ( सं० स्त्री० ) काण्टकफल इति ।

काण्टकसुक ( सं० पु० ) काण्टकान् सुकृत्, काण्टकसुज-क्तिप् । सड़, जट । कांटीको कंटीला पौदा ही खानिमें सबसे अच्छा लगता है ।

काण्टकमदन ( सं० त्रि० ) १ काण्टकोको कुचसनेवाला, को कांटीको रोंदता हो । २ भगान्ति मिटानेवाला,

जो भगड़ा-भञ्जट दूर कर देता हो । ( स्त्री० ) ३ काण्टकोको कुचसनेका काम, कांटीको रोंदना । ४ भगान्तिनिवारण, भगड़ा भञ्जट मिटानेका काम । काण्टकयुक्त ( सं० त्रि० ) काण्टकविग्रित, कांटीदार, कंटीला ।

काण्टकसता ( सं० स्त्री० ) १ वपुषा, घीरा । २ कर्कटिका, ककड़ी ।

काण्टकहस्ताकी ( सं० स्त्री० ) काण्टकैराशिता हस्ताकी मध्यपदलो० । वार्ताकु, बैंगन, मंटा ।

काण्टकशृङ्ग ( सं० पु० ) पर्वतविशेष, एक पहाड़ । यह महाभद्रके उत्तर अवस्थित है । ( मित्र० ४४११ )

काण्टकशेषी ( सं० स्त्री० ) काण्टकानां शेषी यस्याम्, बहुव्री० । १ काण्टकारी, भटकटैया । २ शक्तीहय, खारपुत्र, स्याही ।

काण्टकस्यल ( सं० पु० ) भारतका पम्पिकोपस्य जनपदविशेष, एक सुक्त । ( नागधेयपुराण )

काण्टकस्यली ( सं० स्त्री० ) काण्टकस्य इति ।

काण्टका ( सं० स्त्री० ) १ काण्टकारिका, भटकटैया । २ दुरासभा, अवासा । ३ वनसुह, मोट । ४ कर्कटिका, ककड़ी ।

काण्टकाप्य ( सं० पु० ) शृङ्गाटक, सिंघाड़ा ।

काण्टकागार ( सं० पु० ) काण्टका आगारो यस्य अथवा काण्टकं आगिरति, काण्टक-आ-ग-अच् । १ शरट, गिरगिट । २ शक्ती, खारपुत्र, स्याही ।

काण्टकाव्य ( सं० पु० ) काण्टकैराव्या, इ-तत् । १ कुसुमहय, बेला । २ विनयहय, बिलका पेड़ । ३ शास्त्रसिंहय, सेमरका पेड़ ।

काण्टकार ( सं० पु० ) काण्टकशृङ्गति, काण्टक-अ-अच् । १ शास्त्रसिंहय, सेमरका पेड़ । २ किमी किछका वटून ।

काण्टकारिका ( सं० स्त्री० ) काण्टकान् इयति शृङ्गति वा, काण्टक-अ-अच्-कु-टाप्-इत्यर्थे । काण्टकारी नामक हयविशेष । अर्थको इति ।

काण्टकारी ( सं० स्त्री० ) काण्टकार-कीप् । छद्रहय-विशेष, भटकटैया । इसका संस्कृत पर्याय—निदिम्बिका, स्वप्नो, धात्री, हजनी, प्रबोदनी, कुम्भी, छद्रा, दुष्कर्मा,

राष्ट्रिका, पगलाहाना, भण्टाकी, चिंही, घाबनिका, कण्टकारिका, कण्टकिनी, दुग्धघण्टी, निदिखा, धामनी, सुद्रुतपिष्टका, बहुकण्ठा, सुद्रुमला, कण्टानिका और वितकला है। सुतप्रदेशमें इसे भटकटेया, रिंगनी, कटेरी या कोटी कटार कहते हैं। अंत-कण्टकारीका यज्ञानी नाम सुद्रा, हिन्दुस्थानी कटीना, दक्षिणी दोरसिकाफल, तमोली कन्दमपवी और तैमहने बहुदकाया या नोनसुतकू है। पाषाण्य वैज्ञानिक नाम *Solanum xanthocarpum* है।

भावप्रकायके मतमें यह धारक, तिक्त एवं कटरस, स्रु, रुच, उष्णवीर्य, पाचक और कास, श्वास, ज्वर, देघा, वायु, शीतघ्न, पाण्डूशूल, क्षमि तथा हृद्रोग-नाशक है।

कण्टकारी और कहती दोनों शब्द पर्यायमें पाया करते हैं। सुद्रुतके मतमें जो जाति सुद्र और सुद्र भण्टाकी नामसे प्रसिद्ध रहती, उसीकी विदमलक्षणी कहती कहती है। कहती धारक, हृदयघातो, पाचक, कटुतिक्तरस, उष्णवीर्य और कफ, वायु, मूत्र-विरसता,



कण्टकारी ३५।

गम, भक्षि, कुठ, ज्वर, श्वास, शूल, कास एवं पित्तमात्रनाशक है।

यह शीतघ्न पित्तक सकण्टक और विस्फोट होती है। भारतवर्षमें पच्छिम एवं पश्चिममें सिद्ध और मलका द्वीप तक कण्टकारी मिलती है। दक्षिण-पूर्व एशिया, मलय, पयमहत्तमें थानिवाली पट्टेलिया और पोलिनेशियामें भी यह पाये जाती है। ग्रीककारमें कण्टकारी फलती है। पुष्प गन्धघ्न लगते हैं।

कण्टकारी अनेक और नाल भेदसे विविध होती है। अंतकण्टकारीको अंता, सुद्रा, चन्द्रकासा, मल्लपा, सेवट्टिका, गर्मदा, चन्द्रभा, चन्द्री, चन्द्रपुष्पी, और विषहरी कहते हैं। यह विषेयतः गर्भप्रद

है। इसका मूल व्यवहार्य है। उसके पत्रापरमें समस्त रोग से सकते हैं। मात्रा १ मापा रहती है।

कण्टकारीका फल तिक्त, रुच एवं पाकमें कषाय, वीर्यनिवारक, भेदक, तोष्य, पित्त तथा पित्तवर्धक, नष्ट और कफ, वात, कण्ट, काग, भेद, क्षमि एवं ज्वररोगनाशक होता है। मतान्तरमें उक्त फल, तोष्य, नष्ट, कटु, दोषघ्न, रुच और गम, काग, ज्वर तथा कुफनाशक है।

सुद्र कण्टकारीका फल कटु, तिक्त, रसक, पित्त-कर, भूवकारक और सिद्धा, कटि, यक्ष्म, श्वास, काग, कफ, कण्ट, वात, क्षमि एवं ज्वरनाशक होता है।

हाथर विस्मयने कण्टकारीकी कटु और वात-

रिचक कहा है। पदतलमें प्रदाह पहुँचे भार जलघृत पिङ्गका घटनेसे यह व्यवहार की जाती है। दन्त-भ्रूलमें व्याधा बढ़नेसे कण्टकारीका घूम और उत्ताप विशेष उपकारी है। डाक्टर मोरहेडके कथनानुसार यह विशेषतः कफनिःसारक होती है।

कई-कई लोग कण्टकारीका घोज खाते हैं।

कण्टकारीघृत ( सं० ली० ) कासरोगका एक वैद्यकीय औषध, खाँसकी एक दवा। यह भस्म, चपर और शङ्ख भेदसे त्रिविध रहता है।

चप-कण्टकारी और गुंलच तीस-तीस पल ६० सेर जलमें ज्ञाय करे। सवा पाँच सेर जल चव-मिष्ठ रहनेसे उक्त ज्ञायको ज्ञान लेते हैं। फिर इसी ज्ञायमें ४ सेर घृत पकाना चाहिये। यह घृत पीनेसे वाताधिक्य तथा कासरोग कूटता और भस्मिका वेग फूटता है।

चपर-कण्टकारीका ज्ञाय सवा छह सेर, घृत ४ सेर और रास्ना, बाव्यालक, त्रिकटु तथा गोघुर समुदायका बराबर-बराबर कल्क १ सेर यथा-विधि पका सेवन करनेसे पञ्चविध कासरोग विनष्ट होता है।

शङ्ख-मूल, पत्र एवं शाखायुक्त कण्टकारीका ज्ञाय सवा छह सेर, घृत ४ सेर और बाव्यालक, त्रिकटु, विडुङ्ग, शटी, चित्रक, सचल लवण, व्यवहार, सुंछा कक्षा वेल, चामलकी, कुष्ठ, खेतपुनर्षवा, भतीस, दूरालभा, भास्वलीमिका, हड़ती, हरीतकी, यमानी, दाड़िम, कटिहि, द्राक्षा, बलपुनर्षवा, कर्कटशृङ्गी, भूम्यामलकी, मीमंक्षण्यटिका, रास्ना तथा गोघुर समुदायका बराबर-बराबर कल्क १ सेर भस्मीतरङ्ग पका सेवन करनेसे सर्वप्रकार कासरोग एवं कफरोग कूट जाता है।

स्त्रमैदरोगके अधिकारपर निम्नलिखित कण्टकारीघृत कहा है—

कण्टकारीको कण्टकारीके ही रससे ज्ञाय कर चतुर्थांश बघनेपर बाव्यालक, गोघुर एवं त्रिकटुके कल्क और घृत सबकी फिर भस्मी भांति पकाते हैं। यह घृत पीनेसे स्त्रमैदर और पञ्चविध कास

विनष्ट होता है। रागीका बनावल देव पाध तोलेसे घृतकी मात्रा बढ़ाना चाहिये। अनुपान भी रोगीकी पचस्वाके अनुसार उष्णदुग्ध प्रभृति व्यवस्थेय है। कण्टकारीका रस यथेष्ट न मिलनेसे शटगुण जल डाल देते हैं।

कण्टकारीत्रय ( सं० ली० ) हड़ती, गच्छिकारो और दूरालभा तीनों द्रव्यका समुदाय। सिद्धयोगमें गच्छिकारीके स्थानमें गोघुर लेते हैं। कण्टकारीत्रय तन्द्रा, प्रसाप, भ्रम, पित्त, स्वर, और विदोषको नाश करता है। ( वैद्यकनिष्ठ )

कण्टकारीदृ ( सं० पुं० ) विकटत वृक्ष, वैद्यी।

कण्टकारीद्रुम, कण्टकारीद्रुमी।

कण्टकारीद्वय ( सं० ली० ) हड़ती और कण्टकारी उभय द्रव्य, छोटी और बड़ी दोनों कटेरी।

कण्टकारीफल ( सं० ली० ) कण्टकारीका फल, भटकटोयैकी गोली। यह तिक्त, कटुक, दीपक, तृप्त, रस, उष्ण और श्लास, कास, स्वर, पित्त तथा कफरोगनाशक है। ( भावप्रकाश )

कण्टकार्य ( सं० पुं० ) कुटजवृक्ष, मकीय।

कण्टकार्यो, कण्टकारी ईकी।

कण्टकार्योदि ( सं० पुं० ) पित्तद्रोषज स्वरका एक कषाय, सफ़े और बलगमके बोझारका एक काढ़ा या जीयादा। कण्टकारो, पचता, प्राप्रपयति, एण्टो, इन्द्रिय, दूरालभा, विरायता, रक्तवन्दन, सुप्त, पटोल और कटुची सब २ तोले आधसेर जलमें उबान पाध पाव रहनेसे उतार ले। फिर यह काढ़ा पित्तद्रोषज स्वरके रोगीको ज्ञानकर पिनाया चाहिये। कण्टकार्योदि पाचन पीनेसे पित्त, श्लेष्मा, स्वर, दाह, ज्वरा, चरुचि, वमि, कास और हृदय एवं पाखकी वेदनाका निवारण होता है। ( परचरितरत्नमञ्जरि )

कण्टकास ( सं० पुं० ) कण्ट कण्टकभास कर्मे कासयति उत्पादयति, कण्ट कल-चिच्-पच्, कण्ट केः कण्टकाकोचकनरसयति शोभते, कण्ट क-पल-पच्वा। १ पनघडच, कटहलका पेड़। २ मन्दार, मदार।

कण्टकालिका ( सं० स्त्री० ) कण्टकारी, कटार।

कण्टकाशुक्ल ( सं० पुं० ) कण्टकैरसयति कण्ट कास-

यति या, अष्टक चन्द्र, कण्टक-अक्ष वा उदयम् । १ दुरा-  
नता, जयाया । २ पाससुप, मासजयसिका घोटा ।

कण्टकाग्न (सं० पु०) कण्टकं पञ्चाति, कण्टक-  
पञ्च-अक्ष । ३४, कण्ट ।

कण्टकाग्न (सं० पु०) कण्टकः पञ्चोत्तव यम्,  
यद्वित्री० । मत्पञ्चविध, एक मङ्गली । पञ्च नाम  
कुनिग है । इसके दृष्टिदां बहुत होती है ।

कण्टकिज (सं० त्रि०) १ मत्पञ्चसे उत्पन्न, मङ्गलीसे  
पैदा । २ मदनपञ्चसे उत्पन्न, मैनफलके पेड़में निजला  
हुपा ।

कण्टकित (सं० त्रि०) कण्टको रोमाधो जातोऽस्य,  
कण्टक-इतच्छ । मदन सञ्जातं तारकादिभ्य उत्पन्न । पा ३११११  
१ रोमाधित, रोगटे खड़े किये हुपा । २ कण्टकयुक्त,  
काटेदार, कटीला ।

कण्टकिन्, कण्टकी द्वीप ।

कण्टकिनौ (सं० स्त्री०) कण्टकाः सन्त्यध्याः, कण्टक-  
इति डीप् । १ वार्ताकी सुप, बैंगनका पौदा ।  
२ कण्टकारिका, कटेरी । ३ रक्तभिण्टी, लाल  
कटसरीया । ४ मधुखर्जुरीहृत्, मोठी खजूरका पेड़ ।

कण्टकिफल (सं० पु०) कण्टकि कण्टकयुक्तं फलं  
यस्य, यद्वित्री० । १ पनसपञ्च, कटइलका पेड़ ।  
२ समझोक्षसुप, कट्टे जमीकान्दका पौदा । ३ त्रयुपा-  
जल, गीरा ।

कण्टकिफला (सं० स्त्री०) कण्टकी, कण्टकी ।

कण्टकिल (सं० पु०) कण्टकोऽभ्यस्तस्य, कण्टक-  
पञ्चोत्तव इत्यच् । वंशविधेय, कटीला भाग ।

कण्टकिन्ता (सं० स्त्री०) कण्टकिनां वासो सता  
पति, कर्मधा० । १ कण्टी, कण्टकी बेल । २ त्रयुपो-  
नता, गीरकी बेल ।

कण्टकिना (सं० स्त्री०) कण्टकिनी द्वीप ।

कण्टकी (सं० पु०) कण्टकोऽभ्यस्तस्य, कण्टक-इति ।  
१ मत्पञ्च, मङ्गली । २ खदिरहृत्, खैरका पेड़ ।  
३ मदनहृत्, मैनफलका पेड़ । ४ गोशूरसुप, गोशूरका  
भाड़ । ५ वदरहृत्, खैरका पेड़ । ६ वंशविधेय,  
गज कटीला भाग । ७ विकटहृत्, बैची । ८ खि-  
रदिर । ९ विरजहृत्, शैलका पेड़ । १० पारिभट

हृत् । (स्त्री०) कण्टक पञ्च पादित्वात् पञ्च-डीप् ।  
११ वार्ताकीविधेय, एक कटीला भांड । राजपञ्चमके

मतसे यह कट, तिल, उच्छरीर्य, दोषग्रहण, रक्त  
एवं पित्तप्रकीपकर और कण्ट तथा कण्टकाग्रह है ।

१२ गभीरहृत्, सेमका पौदा । १३ खदरी, कटाई ।  
(त्रि०) १४ कण्टकयुक्त, कटीला ।

कण्टकीकारी (सं० स्त्री०) कण्टकीमें कार्य करने-  
वाली, जो कटोंमें काम करती हो ।

कण्टकीहृत् (सं० पु०) कण्टकी चामी हृत्मध्येति  
खुपोदरादित्वात् दीर्घः, कर्मधा० । १ खदिरहृत्, खैरका  
पेड़ । २ वार्ताकीहृत्, बैंगनका पौदा ।

कण्टकीपारिजात (सं० पु०) पारिभट्टक, पांगरा ।  
कण्टकीफल, कण्टकिन्ता द्वीप ।

कण्टकीफला, कण्टकिन्ता द्वीप ।

कण्टकीसता, कण्टकिन्ता द्वीप ।

कण्टकीमरपुष्पा (सं० स्त्री०) मरपुष्पामेद, किसी  
फिफकी सरसोंका । यह कटु, उष्ण, और क्षमि  
एवं मूलद्रव्य होती है । (देवचमिषत्)

कण्टकीयक (सं० पु०) पारिभट्टक, पांगरा ।

कण्टकुरग (सं० पु०) कण्टक कण्टकप्रधानः कुरगः,  
मध्यपदनो० । १ पीतभिण्टी, पीली कटमरीया ।  
२ भिण्टीसुप, कटसरीयाका पौदा ।

कण्टकीहरण (सं० स्त्री०) १ कण्टकपादिका निवा-  
रण, निराई । २ क्षेमनिवारण, तकलीफ दूर करनेका  
काम । ३ खैर टाकुर्वीका निकाला जाना ।

कण्टकतनु (सं० स्त्री०) कण्टा कण्टकास्मिता तनु-  
र्यस्याः, मध्यपदनो० । १ केतकीपुष्प, केवड़ेका फूल ।  
२ खदरी, कटेरी ।

कण्टकना (सं० स्त्री०) कण्ट कण्टकाचितं दलं  
यस्याः, मध्यपदनो० । १ केतकीहृत्, केवड़ेका पेड़ ।  
२ खैरकेतकी, मखेट केवड़ा ।

कण्टपत्र (सं० पु०) १ विकटहृत्, बैची । २ गज-  
टक, मिंथाहा ।

कण्टपत्रक (सं० पु०) कण्टपत्र आयं कन् । गज-  
टक, मिंथाहा ।

कण्टपत्रफला (सं० स्त्री०) कण्टपत्रकी हृत् ।

कण्टपत्रा, कण्टपत्रिका देखी।

कण्टपत्रिका ( सं० स्त्री० ) वार्ताकी हृद्य, भटका पोदा।

कण्टपाद ( सं० पु० ) विकृत हृद्य, वैद्यो।

कण्टपुष्पा ( सं० स्त्री० ) कण्टकशरपुष्पा, कंटोकी शरफोंका।

कण्टपुष्पिका, कण्टपदा देखी।

कण्टफल ( सं० पु० ) कण्ट कण्टकान्वितं फलम्,

मध्यपदलो०। १ देवताड़, धूसरवेल, मनेया। २ सुद्र

गोक्षुरक, छोटी गोखरू। ३ पनस, कटहल। ४ भुसू-

रक, धनूरा। ५ लताकरञ्ज, किसी किछका कर्कोदा।

६ परण्ड, रैड़। ७ नद्यान्त्र। ८ कुसुम्भ, कुसुम।

९ ब्रह्मदण्डी। बहुव्रीहि समास करनेसे उक्त फलोंके पेड़का भी बोध होता है।

कण्टफला ( सं० स्त्री० ) कण्ट कण्टकान्वितं फलं

-यस्याः। १ देवदासी लता। २ लघुकारवेल्ली, छोटा

करैला। ३ ब्रह्मदण्डी हृद्य। ४ कर्कोटी, काकरोल,

गुलककरा। ५ हड़ती, कटाई।

कण्टल ( सं० पु० ) कण्टः कण्टल्य, कण्ट-कण्टल्य;

कण्टेन कण्टकेन चनति पर्याप्नोति, कण्ट-कण्ट-कण्ट-

इति वा। बावल हृद्य, बबूका पेड़। इसका संस्कृत

पर्याय—बावल, क्षणमुष्ण और सूक्ष्ममुष्ण है।

कण्टवल्ली ( सं० स्त्री० ) औषधी हृद्य। इसे कीड़-प-

तें बाधेँटी कहते हैं।

कण्टवल्ली ( सं० स्त्री० ) कण्टा कण्टकान्विता वल्ली,

मध्यपदलो०। औषधीहृद्य, बाधेँटी।

कण्टहृद्य ( सं० पु० ) तेजःफलहृद्य, कायफलका पेड़।

कण्टसारका ( सं० स्त्री० ) श्वेतकिण्ठीहृद्य, समेद

कटसरैयाका पेड़।

कण्टाकारी ( सं० पु० ) १ विकृत हृद्य, बेचोका

पोदा। ( स्त्री० ) २ पनसहृद्य, कटहल।

कण्टाकुम्भाद्, ( सं० पु० ) कण्टकलताविशेष, एक

कंटोली घेत।

कण्टाफल ( सं० पु० ) कटि भावे षप् कण्टा कण्ट-

कोपलचितं फलं यस्य। १ भुसूहृद्य, धनूरेका पेड़।

२ पनसहृद्य, कटहलका पोदा। ३ पनसफल, कटहल।

कण्टारवी ( सं० स्त्री० ) वासा, नीलो नरगन्धो।

कण्टारिका ( सं० स्त्री० ) १ अग्निदीपनी हृद्य। २ कण्ट-

कारी, कटोरी।

कण्टार्गल ( सं० पु० ) कण्टार्गला देखी।

कण्टार्तगला ( सं० स्त्री० ) नौसकिण्ठी, वाली कट-

सरैया।

कण्टार्हलता, कण्टार्गला देखी।

कण्टास ( सं० पु० ) १ मदनहृद्य, मेमफलका पोदा।

२ पनसहृद्य, कटहलका पेड़।

कण्टालिका, कण्टारी देखी।

कण्टावी, कण्टारी देखी।

कण्टालु ( सं० पु० ) कण्टाय कण्टकाय चनति

पर्याप्नोति, कण्ट-कण्ट-कण्ट। १ वधूरक हृद्य, बबूका

पेड़। २ हड़ती, कटाई। ३ बंग, बांस। ४ वार्ताकी

हृद्य, धंजनका पोदा। ५ कर्कोटीभेद, किसी किछकी

ककड़ी।

कण्टाह्वय ( सं० पु० ) कण्ट कण्टर्त्त पाद्वयते क्षयते,

कण्ट-पा-ह्वे-क। पक्षकन्द, कामसगहा।

कण्टिका ( सं० स्त्री० ) पतिवला, ककैया, ककई।

कण्टी ( सं० पु० ) कण्टः कण्टकः पस्यान्ति, कण्ट-

इति। १ श्वेतापामार्ग, समेद सटनीरा। २ गोक्षुर,

गोखरू। ३ सुद्रगोक्षुर, छोटी गोखरू। ४ खदिर, खैर।

कण्ट ( सं० पु० ) कण्ट-ठ। १ वरुणः २ ॥११॥

१ गलदेश, शीवाकी सन्मुखका भाग, हलक, नट्टा,

टेंटा। सुश्रुतके मतानुसार कण्टमें चार तरुपायि

और मण्डला नामक तीन पक्षिचन्धि हैं। इनकी

नाड़ोंमें समय पार्श्वपर चार धमनो रहती हैं।

उनमें दोको लीला और दोको मन्दा कहते हैं।

किसी प्रकारसे उक्त धमनी विष्ट होनेपर मूर्च्छता एवं

स्वरविकृति आती और रस-पचयको शक्ति चली

जाती है। २ शीवाका समुदाय बंग, गटनका सारा

हिस्सा। अनेक स्थानमें कण्टगुप्फ शीवाके समस्त

बंगका भी श्रोतक है। कण्टव्यतीत शीवाके पन्थास्य

बंगमें ४ कण्टरा, १ कूर्च, ८ पक्षि, ८ पक्षिचन्धि

और १६ धातु हैं। शीवाके समय पार्श्वमें यद्वेनालो

४ गिरावोंका नाम मायका है। इन गिरावोंके विष्ट

होनेसे सद्यः मृत्यु आता है। ( ८१० )

कण्टदेगमें प्रियङ्गु नामक पौधग श्वरदुल, भूमरस्य  
 और मङ्गाप्रभाविगिट्ट पौधगदल सप्तका स्वस्थान है।

“अहं न विदुः” इति शब्दः ।

४२०; श्रीगुरुभिरुक्तं च ब्रह्मणः अहोरात्रम् ।

विष्णुसंज्ञमात्रागमादालम्ब्य ननु ।" (भोटमन्त्र)

कण्ठरोग ( सं० पु० ) कण्ठगतो रोगः, मध्यपदलो० ।  
कण्ठनालीके भ्रम्यन्तरमें उत्पन्न सकल रोग, गलेकी  
नीचीमें होनेवाली सब बीमारी । महर्षि सुश्रुतके  
मतसे कण्ठनालीमें पटादय प्रकारका रोग उत्पन्न  
होता है—पांच प्रकारकी रोहिणी, शालुकण्ठक,  
अधिजिह्व, वन्य, वलास, एकहृन्द्, गतघ्नो, शिलाघ,  
गन्धविद्रधि, गन्धोघ, स्वरघ्न, मांसतान और विदारो ।

रोहिणी—द्रुति मायु, पित्त, कफ और रक्त गल-  
देग्य मांसको बिगाड़ मांसाद्भुर उत्पादन करता  
है । इससे कण्ठ खुलने नहीं पाता और शीघ्र प्राण  
छूट जाता है । इसी रोगकी रोहिणी कहते हैं ।  
वायुजन्य रोहिणीरोगमें जिह्वाकी चारो ओर अत्यन्त  
वेदनायुक्त कण्ठरोधक मांसाद्भुर उत्पन्न हो जाता  
और रोगी स्तम्भत्व प्रकृति वातजनित उपद्रवसमूहसे  
दुःख पाता है । पित्तजन्य रोहिणी रोगमें प्रतिशय  
दाह एवं पाकयुक्त मांसाद्भुर शीघ्र ही निकलता है ।  
विशेषतः रोगीकी अत्यन्त वेगवान् ज्वर घर दवाता  
है । कफजन्य रोहिणी रोगमें मांसाद्भुर गुरु एवं स्थिर  
रहता और विलम्बसे पकता है । कण्ठका स्त्रोत  
रुक्त जाता है । साक्षिपातिक रोहिणी रोगमें रक्त  
तीनों दोषोंका लक्षण भ्रमकता और मांसका पद्भुर  
गन्धोघ भावसे पकता है । यह रोग चिकित्सावाध्य  
नहीं होता । रक्तजन्य रोहिणी रोगमें जिह्वामूल  
स्त्रोटक द्वारा व्याप्त हो जाता और पित्तका सकल  
लक्षण देहमें पाता है । भावमित्रके मतानुसार  
त्रैदोषिक रोहिणी रोगमें रोगीका जीवन सद्य नष्ट  
होता है । कफज रोहिणी तीन रात्रि, पित्तिक  
रोहिणी पांच रात्रि और वातज रोहिणी सात  
रात्रिके मध्य रोगीका जीवन हरण कर लेती है ।  
वायु रोहिणी रोगमें रक्तमोचण, वमन, धूमपान,  
गण्डपघारप और मन्थ-हितकारक है । वातज  
रोहिणी रोगमें रक्त निःसर्ग संश्लेष द्वारा प्रतिधारण  
और ईषत् वण्य सङ्घ द्वारा पुनः पुनः गण्डपघारप  
कारणा चाहिये । पित्तज एवं रक्तज रोहिणीमें रक्त-  
मोचण कर प्रियङ्गु, चूर्ण, यकृत तथा मधु एकमें मिला  
रगड़ते और द्राक्षा एवं फासमेके जायसे कुत्ता करते

हैं । कफज रोहिणीरोगमें बदरीफल, शण्डो, पिप्पली  
और मरिचके चूर्णसे प्रतिधारण करना चाहिये ।

कण्ठगालक—कुपित कफ द्वारा बेरकी गुठलीको  
भाति काष्ठयत् वा शूकयत् वेदनाजनक खर एवं  
स्थिर धन्वि पड़नेसे कण्ठगालक समझा जाता है ।  
यह रोग पक्षसाध्य है । कण्ठगालकमें रक्तमोचण  
कर तुण्डिकेरो रोगकी भांति चिकित्सा चलाना  
चाहिये । छिम्ब यवान् अल्प परिमाण एकवार  
खिलाया जाता है ।

अधिजिह्व—रक्तमिश्रित कफसे जिह्वापर जिह्वाप-  
जैसा जो शीघ्र उठता, उसीका नाम अधिजिह्व  
पड़ता है । शीघ्र पकनेसे यह रोग पक्षाय हो  
जाता है ।

वन्ध—घ्रोषासे गलनालीपर जो दोष एवं वधत  
शीघ्र उठता और जिससे मुक्त द्रव्यका पय ईकता,  
उसीका नाम वन्ध पड़ता है । यह रोग पक्षाय है ।

वलास—घ्रोषा और वायु द्वारा गलदेगमें शीघ्र  
उठने और मर्मच्छेदा दाह्य वेदना पड़नेसे वलास  
रोग समझा जाता है । यह रोग भी साध्य नहीं ।

एकहृन्द्—गलदेगका मोल, वधत, दाह एवं कण्ठ-  
विग्रिष्ट और भार तथा कोमल बोध होनेवाला  
शीघ्र एकहृन्द् कहलाता है । इस रोगमें रक्त निःसर्ग  
विरसमादि द्वारा शोधन करना चाहिये ।

रक्तपित्तजन्य, मोल एवं पतियय वधत शीघ्र  
उठनेसे रोगीकी अत्यन्त ज्वर पाता और दाह मताता  
है । इसी रोगको हृन्द् कहते हैं । फिर यही अत्यन्त  
वेदनायुक्त रहनेसे वातज समझा जाता है ।

वन्धो—गलनालीमें मोटी बन्धो-जैसा, कठिन,  
कण्ठरोधकारी, वातजादि भेदसे नामाप्रकार वेदनायुक्त  
पयय मांसाद्भुर द्वारा अधिक व्याप्त जो शीघ्र उठता  
और जिसमें नामाप्रकार वातनाका वेग बढ़ता, उसीका  
नाम सिद्धोप गतघ्नो पड़ता है । इस रोगमें रोगी  
शीघ्र मर जाता है ।

जिह्व—जिस रोगमें द्रुति कफ एवं रक्तसे कण्ठके  
भीतर आंखलेकी गुठली-जैसा स्थिर तथा परु वेदना-  
युक्त धन्वि उठता और मुक्तद्रव्य संश्लेष नामाप्रकार पड़ता,



रोगीको मृत्युतन्त्र मिलाय रहता है। यह रोग यन्त्र-  
मात्र है। सुप्तमे इस रोगका नाम 'मिमायु' निम्ना है।

२-ममस्त-ममस्त रोगदेगका फूलना और उसमें  
नामाप्रहार यातना होना ममविद्रधि कहता है।  
यह रोग यदि मर्यादामें न रहे और अच्छीतरह  
पक सके, तो हेदन कर देना चाहिये।

३-श्वीर-कफ एवं रक्तमें ममदेग चस्यना फूल  
उठनेपर चस्यनाभी या लसप्रवेगका पथ रुकना, वायुकी  
गतिका विगड़ना और तीव्र प्यरका चढ़ना ही श्वीर  
रोग है।

४-रोगीकी मूर्छा पाने, सर्वदा यास जाने,  
प्यरभङ्ग पाने और कण्ठ सुप्तानेसे सारप्र रोग समझा  
जाता है। रोगी कुछ पचवान नहीं सकता और  
यासका पथ रुकता है।

५-नासना-ममदेगका शोध क्रमशः बढ़ते बढ़ते  
कण्ठनाभीको रंध सेनेसे मांसताम रोग होता है।  
इस रोगमें शोध विस्तृत, पति क्लेशदायक और  
सम्प्रमाण रहता है। इसमें रोगी बच नहीं सकता।

६-विन्तो-विन्तो प्रकीर्षी ममदेग एवं सुप्तमें ताम्र-  
वर्ण तथा दाह और वेदनायुक्त जो शोध उठता,  
चसीका नाम विदारो पड़ता है। विदारोमें सङ्काशका  
मांस गिर लाया करता है। रोगी जिस पात्रपर  
पचिक होता, उसीमें पात्रमें यह रोग होता है।

साधारणतः कण्ठरोगमात्रमें दाहचरित्रा, निम्बलक,  
शास्त्रच एवं इन्द्रय सकल द्रव्योंका क्षाय पथया  
मधु मिला करितकीका क्षयाय होना चाहिये।  
१-कटुकी, पतिविदा, देवदाह, पाकनादि, सुप्तक  
और इन्द्रय सकल द्रव्यका क्षाय शीघ्रसे साथ  
पान करते हैं। २-विषकी, विषकीमूल, चण्ड,  
पित्तक, शूलो, मर्जिचार और यवधार सकल द्रव्य  
सम्प्रमाणमें चूर्ण कर व्यवहारमें लाना योग्य है।  
३-ममःपिला, यवधार, हरिताल, सेन्धव और  
दाहचरित्रा सकलका चूर्ण मधु तथा घृतके साथ सुप्तमें  
धारण करनेमें मृगरोग एवं मरु रोग विनष्ट होता है।  
४-यवधार, मज्जिपिण्डी, पाकनादि, रसाचन,  
देवदाह, चरित्रा और विषकी सकल द्रव्य कटुपौष

मधुके साथ मुद्रिका बना कामे। यह मुद्रिका सुप्तमें  
धारण करनेसे मरु रोग दूर जाता है। (५४२०)

युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें कण्ठरोग नाम-  
प्रकार होता है। उनमें सामान्य कण्ठमोय (Simple  
sore throat), चतयुक्त कण्ठमोय (Ulcerated sore-  
throat), ममप्रतिप्रदाह (Quinsy or Tonsillitis),  
साहातिक कण्ठमोय (Malignant sore-throat),  
और साक्षिपातिक कण्ठरोग (Diphtheria) प्रधान है।

कण्ठमोय उठनेसे कण्ठमें प्रदाह, निगलनेमें कष्ट-  
बोध, खास होइनेमें दुःख, कण्ठके सरका परिवर्तन  
और प्यर होता है। प्रथम बाधा न देनेमें यह रोग  
क्रमशः बढ़ जाता है। लिङ्गा फूलती पार विगड़ती  
है। मसका पथि रक्तवर्ण रहता और ममदेगके पीछे  
छोटा-छोटा बीना फोड़ा पड़ता है। चस्य और  
नाड़ीकी गति बढ़ती है। कभी कभी गाल फूल  
कर सास हो जाता है। चस्य लसने लगते हैं। रोग  
बढ़नेपर चित्तविभ्रम होता है। रोगउत्तिके साथ हो  
साथ मलप्रथि भी बढ़ता और उसमें पूय पड़ता है।  
स्कोतक फट जानेसे खास्यबोध होता है। कभी कभी  
फूटनें पीछे पथि फिर पूर्ववत् फूल उठता है। इसकी  
चिकित्सा साथ ही साथ होना चाहिये। कारण  
चिकित्सा न करनेमें यह रोग साहातिक पड़ जाता  
है। ऐसे स्थलमें कठिन प्यर पाता है।

सामान्य कण्ठमोयमें जोमिषोपाधिक चिकित्सा  
विशेष उपकारा है। भीजने पीछे शीत लगनेमें जो  
सामान्य कण्ठमोय हो जाता, उसका चोषण हल-  
कामरा है। वायुके परिवर्तनसे होनेवाले कण्ठ-  
मोयपर गिलहेंमिनम् चलता है। प्यरके साथ शीत  
लगने और कण्ठमोय उठनेमें एकोनाइट दिया जाता  
है। कण्ठवेदना, कण्ठयुक्तता एवं गिरःपीड़ा बढ़ने  
और मुख मांस पड़नेमें बेलोडोना पिताते है।  
कण्ठ चिंचनी, निगलनेमें कट मामल पड़ने और  
कफ निकलने रहनेमें माकुरियाय उपकारो है।  
चतयुक्त कण्ठमोयमें प्रथम बेलोडोना बताने है।  
मधु, पांशुचर्च पथय चनिटदायक चत, होनेमें पतिट  
माद्रिक चलता है। दुर्गन्ध और पातुदीर्घ

बढ़नेपर बापेटेसिया तथा कार्बो-वेजिटेबिलिस दिया जाता है।

गलघन्थिप्रदाह (Tonsillitis)—गलदेशमें किसे स्थान-पर प्रदाह छठनेसे यह रोग होता है। यह रोग भी नामा प्रकारका है। किन्तु स्तन्यपायी ग्रिथस्तनानको गलघन्थिप्रदाह अधिक नहीं सताता। पांचने दश वर्ष तक इस रोगका प्रावच्य रहता है। फिर पचास वर्षकी अवस्थामें भी गलघन्थिप्रदाह छठ खुड़ा होता है। यह रोग संकल-जटुमें लगता और शीतकालमें विशेष प्रबल पड़ता है। शीतक धा हिम एवं धाई या दूधित-वायुके सेवन और शीत पेसिक प्रवृत्ति दोषके कारण गलघन्थिप्रदाह उत्पन्न होता है। यह रोग उसी मनुष्यको प्रायः आक्रमण करता, जो देखनेमें अच्छा लगता है। गण्डमाका रोग अच्छा होने पीछे भी गलघन्थिप्रदाह छटा करता है। यह रोग लगनेसे पहले रोगी विशेष स्वस्थ अवस्थामें रहता, कभी कभी उदरमें गड़बड़ पड़ता है। गलघन्थिप्रदाहका लक्षण शीतबोध, काम्यन, चर्ममें उत्ताप, उत्तेजित नाड़ी, दृष्ट्या, शिरःपीड़ा अथवा सुषामान्द्र, असुषबोध और प्रत्यक्षमें ख्या या शोथ है। घूंट उतारनेमें कष्ट मालूम होता, मानो गलदेशको कोई दबा लेता है। घण्टे दो घण्टेमें सामान्यसे बति दारुण यन्त्रणा, प्रदाह और निगलनेकी इच्छाका उद्भव होता है। घूंट उतारनेमें कभी कभी इतना कष्ट पड़ता, कि भाषेप पर्यन्त या लगता है। इस रोगमें खांसीका वेग बढ़ता और कफ निकलता है। कण्ठमें दीपका सञ्चार होता है। श्वासप्रश्वास कष्टसे चलता है। कण्ठ धरधराने लगता है। कभी कभी रोग कठिन होनेसे बिलकुल स्वर रुक जाता है। किसी किसी स्थानपर गलेका शोथ चाल्ना हडिकी प्राप्त होता है। निश्वास कोड़ने समय घेदना मालूम पड़ती, कभी कभी सांसतक रुकती है। यह रोग प्रति पीड़ादायक है। सचराचर गलघन्थिप्रदाह सातसे चौदह दिनतक रहता है।

शोथ काट न डालनेसे बात कहने, बसि करते या खांसे-समय फट जाता है। सोते समय भी यह फटा करता, किन्तु उस अवस्थामें रोगीको अधिक

कष्ट मालूम नहीं पड़ता। नींद टूटनेसे खास्य बोध होता है। यह रोग पांच सात दिनमें मिटता है। श्वास रुकनेसे मृत्युका भय रहता, नहीं तो केवल कष्ट पड़ता है।

चिकित्सा—प्रथम अवस्थापर किसी पात्रमें उष्ण जल डाल थोड़ा कपूर और भाध छटाक विनिगार छोड़ देने हैं। फिर सांसकी एकाएक ऊपर बढ़ा इसका उत्ताप ग्रहण किया जाता है। धूम लगनेसे किसी कारण यदि अधिक खांसी पाये, तो शयनकाल मृदु विरिचक और प्रातःकाल भेदक बोध व्यवहारमें लाये। उष्ण जलमें लवण और रात्रिचर्यप मित्रा रोगीके हाथ-पैर डुबाकर रखना चाहिये। पहले यह रोग होनेसे चिकित्सक फूली काट डालते थे। फिर कोई तेजाबसे उसे चढ़ा ही देता था। किन्तु उसमें भी अनिष्ट समझ कोई कोई अस्वाचिकित्सा द्वारा रक्त निःसारण किया करते हैं। दुर्बल, मन्दमोजे एवं अस्वस्थ व्यक्ति यह रोग लगनेसे बहुत दुबला हो जाता है। ऐसी अवस्थामें रक्त निकालना न चाहिये। सहज उपायसे चिकित्सा करना उचित है। २ ग्राम लमका तेजाब २ ग्राम फूके जलमें मित्रा रूईने सावधानतापर प्रलेप लगाते हैं। दिनको डेढाकठन चय सिनकोना, टिङ्गपर सिनकोना और एसेटेट चय चमोनिया प्रयोग करना चाहिये। इस औषधको क्रियत्काल कण्ठमें दबा पिछे निगलना कहा है। कोई कोई इस रोगमें पदमल छेद रक्त निकाला करता है। होमियोपैथिक मतसे इस रोगपर डेलीडोना, माङ्गरियास, डेवार, चार्मनिक, सारलेमिया प्रथमि प्रयोग करते हैं।

दुग्धपोथ ग्रिथवीक एकप्रकारका जो कण्ठशोथ होता, उसे थंगरेजमें धूम (Thrush) और हिन्दोमें मुंहना या मुंहवां कहते हैं। इस रोगमें मुंहमें एक प्रकार कुकुरमुत्ता उत्पन्न हो जाता है। मुखमें पहले छोटे-छोटे सफेद दाग छठने, जो धीमे-धीमे गांठ जैसे देख पड़ते हैं। रोगीको स्पर्शबोध होता है। तन्द्रा, उदराधान, शूलबद्धा, यकौर्चरोग प्रवृत्ति लक्षण भ्रमकने लगते हैं। ग्रिथ क्षयपाण करनेमें

पल्लव कट पाता है। इस रोगमें मधु पितामा चाहिये। २ भाग कार्बोनेट अथ मोहा चौर १ भाग से-वाइटर मिठा दो सेमसे पांच सेम तक प्रत्यह तीन-बार पिनाते हैं। कारमवाटर, विषय, चक इत्यादि भी उपकारक है।

होमियोपैथिक मतमें सुनायम रुईये योराक्को याहर जगाना चाहिये। अधिक परिमाणसे कफ निकलने या चत पड़ने पर मारकुरियाम्, पोछे सनफर दिन चौर रातको पिनाते हैं। अधिक दूध गिरने या चरम जगमेंसे दलसाटिका या जन्म देना चाहिये। रोग कठिन हो जानेपर कड़ या वारह घण्टेके पत्तर प्रथम पार्सेनिक, पोछे एसिड नाइट्रिक प्रयोग करना चाहिये।

वाक्प्राणिक कण्ठरोग (रिफ़ी)—यह रोग सघराचर मरुत्कालके प्रारम्भमें देग पड़ता चौर बहुधापो एवं संक्रामक ठहरता है। इसका लक्षण ग्रीत, कम्पन, ताप, दौर्बल्य, हृदयमें वेदना, वमन चार भेद है। सप्त जलमय चौर प्यानायुक्त हो जाते हैं। चोठ अधिक रक्तवर्ष देग पड़ते हैं। नाड़ो दुर्बल लगती है। मिट्टा मूत्र पड़ जातो है। निगलनेमें पति कट बोध होता है। कण्ठ फूलकर काल पड़ जाता है। कण्ठपर लाला पाकारमें नासोके चत उत्पन्न होती है। कभी-कभी यह लाली ऊपर नासिका चौर नीचे जलो पर्यन्त फैल जाती है। पड़सेमे गरीर चव-सच जगता है। रोगी मध्य मध्य चण्डबण्ड बक देता है। निद्रासमें दुष्ट गन्ध जाता चौर रोगीके हृदयमें भी दुर्गन्ध जा जाता है। गमितावस्था उपस्थित होनेपर कम्पन बढ़ता, नाड़ोका वेग दुर्बल पड़ता, सुष नीचेको मुक्तता, कठिन भेद जगता चौर नासिका तथा मुखमें रक्त गिरता है। उक्त लक्षण भलकनेसे रोग साक्षात्तिक समझा जाता है।

चिकित्सा—इस रोगमें पड़से हो अधिक ऊपर चढ़ने पर दो घण्टेके पत्तरमें एकोनाइट देना चाहिये। उपादे बाद थोड़ेकाला चलता है। मुखमें विस्फोट एवं दुर्गन्ध रहने, नाद कट गिरने, ग्रीत जगने, कम्पन बढ़ने, दोष शीघ्र गरीर उष्ण पड़ने चौर रात्रिको

बोद निद्रासमें दो घण्टेके पत्तरमें माडुरियात् निकलते हैं। रोग पल्लव कठिन होनेपर रसका व्यवहार करते हैं। विषा इसके सनफर, सादलसिप्रा, पार्सेनिक, एसिड नाइट्रिक घम्टिको भी प्रयोगमें ला सकते हैं।

मण्डराण (Diphtheria)—कण्ठके मध्य देमाको मित्रोपर प्रदाह-जनित छतिम मित्रो (False membrane) पड़ जाती है। इस कण्ठरोगका कायर डिफ़थिरिया कहते हैं। (चपर नाम Cynanchus Maligna या Angina Maligna है) यह रोग १ वर्षसे ८ वर्ष वयस पर्यन्त प्रायः गिरनेको अधिक जग जाता है। वाद्य वायु चौर गरीरस्थ रक्तके दोषसे यह रोग उत्पन्न होता है। छतिम मित्रो प्रथम गलपयि या तालुमें पड़ती, फिर कभी तालुमूल चौर कभी ग्रासनली (Larynx and Trachea) पर्यन्त बढ़ चलतो है। ग्रासनलीमें यह रोग उत्पन्न होनेसे श्वस्त्र रोकने लगे चलता।

चपर—कण्ठके भीतर छैमिक मित्रो लाल चौर फूसो देयाती है। सङ्ग पोड़ामें ऊपर जाता, गलेका दुःख बढ़ जाता, घोवाका पयि कृक घुमा देयाता चौर घूंट निगलनेमें रोगी कष्ट पाता है। फिर सर टूट जाता, नासाके रन्ध्रमें मण्ड समता चौर चम्प चम्प ग्रास हो जाता है। हृत्पिण्ड चमार रहनेसे सङ्ग हो श्वस्त्र टोड़ सकता है। कण्ठके स्थानविशेष पर प्राकमच होनेसे रोगका लक्षण भी बदल जाता है।

नासलमण्डराण (Nasal Diphtheria)—किसी किसी बिकृतसुखके मतमें यह रोग नासाके निकल गलदेग पर्यन्त फैलता, किन्तु सघराचर गलदेगमें चल नासिकातक पड़ जाता है। इस रोगमें ग्रासरीरको मन्दावस्था रहती चौर प्रायः श्वस्त्रको टोड़ जगा करतो है।

लसङ्गाणिक नाम (Diphtheric Croup)—इस रोगमें बड़ाघड़ बामका लक्षण भलकता, जो माहा-निक निकलता है।

१ एसिडकण्ठरोग (Cutaneous Diphtheria)—सघराचर कण्ठरोग होनेपर त्वक्के त्रिस कालमें चत

रहता, उसपर कृत्रिम भिक्षुका परदा चढ़ते देख पड़ता है। यह रोग सज्जन होनेपर पाठ दिनेसे अधिक नहीं चलता, कठिन होनेसे एक पक्ष रहता है। श्वास-प्रश्वासका पथ रुक जानेसे दो दिनमें ही मृत्यु पा पड़ता है।

चिकित्सा—२ ड्राम काष्ठिका ६ ड्राम चरित जलमें घोले प्रातः और सायंकाल रुईसे गलेके भीतर लगाया चाहिये। कोई कोई द्रुह्वा हाइड्रोक्लोरिक एसिड १० गुण जलमें मिला प्रलेप चढ़ानेको कहता है। गिरुको कुत्ता करनेका ज्ञान होनेसे १ ड्राम टिङ्गचर किरिमिचरियस ४ पौंस जलमें मिला प्यवहार करना चाहिये। ज्वरके समय १ बूँद टिङ्गचर एकीनाइट १ पौंस जलमें डाल पाच-पाच ड्राम दो-दो घण्टे बाद पिलाते हैं।

चिकित्सा—पक्षिक ज्वर, भयसञ्चता, अन्नप्रत्यक्षमें व्यथा और गिरावौड़ा होनेसे चण्डे या पाच चण्डेके अन्तर एकीनाइट दिया जाता है। कण्ठ एवं गल-प्रन्थि घोर रक्तवर्ण लगने, शोथकी चारो ओर पुनर्षी पड़ने, गलेमें स्नेह निकलने और गन्धयुक्त कफ बढ़नेसे माकु रियास चण्डे-चण्डे पर चलता है। सिवा इसके पार्श्वेनिक हाइड्रोसिस प्रयोग करते हैं।

कण्ठलग्न (सं० त्रि०) १ कण्ठसे बह, गलेमें बंधा हुआ। २ कण्ठसे लगा हुआ, जो गलेसे बिपटा हो। कण्ठलता (सं० स्त्री०) १ कण्ठभूषण, गलेका गहना। २ अज्ञवन्धन, भगाड़ी, घोड़ा बांधनेकी रस्सी।

कण्ठवर्ती (सं० त्रि०) कण्ठगत, गलेकी घेरे हुआ। कण्ठशालुक (सं० पु०) कण्ठगत मुखरोगविशेष, गलेकी एक बीमारी। इस रोगमें कफके कोपसे कण्ठ-मध्य शालुक-कन्दवत् बदराक्षिकी प्राकृति स्वरसंघर्ष एवं कठिन प्रन्थि पड़ जाता है। इससे कण्ठ-शूलकत् वेदना बढ़ती है। कण्ठशालुक रोग शूल-साध्य है। (तन्त्रनिपट्)

कण्ठशूल (सं० स्त्री०) तालुगत मुखरोगविशेष, सुंइके तालकी एक बीमारी। दूषित कफ और रक्त तालमूलमें दीर्घकृति भयघ वायुपूर्ण मिश्र-जेसा जो शोथ उठाता, वही रोग कण्ठशूल कहलाता है। इस

रोगमें विपासा, कास और श्वासका वेग बढ़ता है। इसका नामान्तर गन्धशूल और तालुशूल है।

चिकित्सा—१ कण्ठशूल रोगमें शोथको छेदन कर त्रिकटु, वच, मधु एवं सैन्धव भयया कुष्ठ, मरिच, सैन्धवलवण, पिप्पली, पाकनादि तया गुग्गुलु सकल द्रव्य द्वारा घिस देना चाहिये। उक्त पोषक घृतके साथ घर्षण और नासिकाके समोपवर्ती स्थानसे रक्त मोक्षण करते हैं। २ हरसिंहार त्रयका मूल चवानेसे कण्ठशूल रोग विनष्ट होता है। पतिविपा, पाकनादि, रास्ना, कटुकी और निम्बत्वक् सकल द्रव्यका काय बना कुत्ता करनेसे कण्ठशूल कट जाता है। (चरक)

कण्ठशुद्धि (सं० स्त्री०) गलका कफादिसे पक्षितत्व, गलेकी सफाई।

कण्ठशूल, कण्ठशूल रोग।

कण्ठशोष (सं० पु०) १ पित्तजन्य रोगविशेष, सफरसे पेदा होनेवाली एक बीमारी। २ गलको शुष्कता, गलेकी खूँकी। ३ गिर्यक प्रत्यादेग, निजायदा शोक-टोक।

कण्ठसञ्जन (सं० स्त्री०) कण्ठे सञ्जनम्, अतत्। कण्ठसे जन्म होकर आसिद्धन, गलेसे मिलकर बिपटाचिपटी।

कण्ठसूत्र (सं० स्त्री०) कण्ठे सूत्र इव, उपनि०। १ मासा, डार। २ आसिद्धन विशेष, किसी क्षिप्रको जमागोशो। “यः कृते वचनं पञ्चम समानिचानं निरिषोपकानम्। परिचकारैः जनकैर्विदग्धासत्पुष्पम्” अपरानि तन्मृगः” (एतिसास)

कण्ठस्थः (सं० त्रि०) कण्ठे तिष्ठति, कण्ठ-स्था-क। १ सुपक्ष, लवागी, जो चण्डीतरह याद क्रिया मया हो। २ कण्ठलग्न, गलेसे लगा हुआ। १ गन्धेय पर रखा हुआ, जो गलेपर हो। ४ कण्ठस्थानीय, गलेसे निकलनेवाला।

कण्ठस्थानी (सं० स्त्री०) चन्द्रदीपके अन्तर्गत एक प्राचीन महापाम। (मरिच-वच-वच १११८)

कण्ठा, कण्ठाग।

कण्ठागत (सं० त्रि०) कण्ठे आगतः, अतत्।

वर्द्धिमन्तोष्ण, कण्ठमें उपस्थित, बाहर निकल जानेवाला, जो गलेमें बाहर लग गया हो।

कण्ठाभि ( सं० पु० ) कण्ठे कण्ठाभ्यन्तरे अभिः पाचयाम्निः यण, बहुयो० । पक्षी, चिड़िया । पक्षीका बाहर गया; करपमें हो परिवर्तित हो जाता है।

कण्ठाभरण ( सं० लो० ) कण्ठे भावे आमरणम्, माध्यपदलो० । १ गलदेयका पचदार, गलेका लेवर, हार, माता । २ मरुतोदकण्ठाभरणका संक्षिप्त नाम । कण्ठा—जर्मूनिमे उधारका एक मन्त्राणाम् । दुर्गानि दुर्गापुरका मण्डक काट पादके बहुहमे उचका कण्ठ इमी स्थानपर स्थापित किया था । दुर्गापुरका कण्ठ यहाँ गिरनेसे हो इस स्थानका नाम कण्ठार पड़ा । चन्द्रिकाकर्म यहाँ भूमिहार और राजपूत जाति रहती है । राजपूतनि यवनीका युद्ध कीया । कण्ठारवासी अपने पासमें पाग लगा पलायन करेंगे ।

( अर्थः ३३३३३ ३३३३३३ )

कण्ठाभ ( सं० पु० ) कठि-पालच् । १ मुरक, जर्मि-कण्ठ । २ युद्ध, लड़ाई । ३ गौका, नाव । ४ सन्ता, मुरपी । ५ छट्, लट । ६ गुण, रण्यो । ७ छल-विनिय, एक पिट ।

कण्ठाभार ( सं० पु० ) काष्ठ, एक पात्र ।

कण्ठाभा ( सं० स्त्री० ) कण्ठाक-टाप् । १ जाल-गोपिका, फाँसी रण्यो । २ माध्यपदिका । ३ श्लोचविनिय, मटकी ।

कण्ठाभु ( सं० स्त्री० ) कण्ठ-भुडा, गमनीका । २ विपरीत नामक कण्ठमाक ।

कण्ठाभमक ( सं० लि० ) कण्ठमे विपटा वृषा, जो गले लगा रहा हो ।

कण्ठिका ( सं० स्त्री० ) कण्ठो हृत्पतया पस्त्ययाः कण्ठ-हृत्-टाप् । कण्ठाभरणविनिय, कण्ठो, गलेमें प्रवेशको पदमकी छोटी माता ।

कण्ठी ( सं० स्त्री० ) कण्ठ पण्यो ह्येप् । १ गलदेग, गुप् । २ पण्यकण्ठ-मेटनरन्, पगानी, छोटेके गलेमें बंधनेवाली रण्यो । ( लि० ) ३ मलकमन्तोष्ण, मलेमें मुरोकार रण्योवाला । ( पु० ) ४ कण्ठाभ, मटर ।

कण्ठीरव ( सं० पु० ) कण्ठा रण्यो दण्य, बहुयो० ।

१ धिङ्, गिर । २ मलकमन्तो, मतवाला बायो । ३ कण्ठ, कण्ठर ।

कण्ठीरवो ( सं० स्त्री० ) कण्ठीरव-कीप् । बासक हथ, पट्टीका पिट ।

कण्ठीर ( सं० पु० ) कर्मिक, लट ।

कण्ठीका ( सं० स्त्री० ) पावविनिय, मटकी, मयनेका भरतन ।

कण्ठीकास ( सं० पु० ) कण्ठे कासः विपदान्तो गौनिमा यल्ल, चतुक् समा० । मन्त्रादेव ।

कण्ठे मरुतोर्थ ( सं० स्त्री० ) तीर्थविनिय, एक पावत स्थान ।

कण्ठोत् ( सं० स्त्री० ) अपनी साधो, जाली मन्त्रादेव ।

कण्ठ ( सं० लि० ) कण्ठे मयः कण्ठ मरीरायय-त्यात् यत् । कण्ठाभारः । १ गलदेगमात, हलकमे निकलनेवाला । २ कण्ठोधारित, हलकमे होना जानेवाला । च, चा, क, म, ग, घ पोर ह पचर कण्ठमे उधारण किया जाता है । ३ कण्ठ-धरके उधकारी, गलेकी चामककी जायदा पट्ट-पानेवाला ।

"कण्ठीरवकण्ठाभो ह्यः कण्ठीरवारः ।" ( पट्टन )

कण्ठावर्ग ( सं० पु० ) कण्ठके निचे उधकारी हल धीय, हलककी पायदा पट्ट-वागिवाली लक्ष्-वृत्तिका, ऊपौरा । पनतामृक, पण्यमृक, मधुक, विपयो, द्राचा, विदारी, कटर्ग, हंगणदी, उद्धती पोर कण्ठकारिकाके मनुदायकी कण्ठावर्ग कहते हैं ।

कण्ठावर्ष ( सं० पु० ) कण्ठावर्षो वर्षदेति, कर्मणः । कण्ठमे उधारण किया जानेवाला वर्ष, जो वर्ष हलकमे निकलता हो । उद्धादेव ।

कण्ठाहार ( सं० पु० ) कण्ठका हार, जो हर्म-रक्त हलकमे निदलता हो । हलक चकार पोर चामार हो कण्ठाहार होता है ।

कण्ठक ( सं० पु० ) कण्ठाभरणविनिय, चाँदीकी एक बीमारी ।

कण्ठन ( सं० स्त्री० ) कठि भावे कण्ठ इति यात् गुम् । १ मनुष्योद्धरण, डराई, कुटारी । २ गुण, भूमि, पलायनका पतरा वृषा दिकका ।

“किंवा दुर्वाग् मित्रं पथात् शान्तिमुत्पन्नम्।” (सुख)  
 कण्डनी (सं० स्त्री०) कण्डवति मृपादिरपनीयते चनया,  
 कडि करणे खट्ट इदित्वात् सुम्। उद्वल्ल, भोखनी।  
 कण्डरवण (सं० पुं०) व्रणरोग, खुजली, खाज।  
 कण्डरा (सं० स्त्री०) कडि-परन् इदित्वात् सुम् टाप्  
 च। १ मछानाडी, बड़ी नख। २ मछासाय, मोटी  
 रग। सर्वाङ्गमें १६ कण्डरा होती हैं। उनसे हस्त-  
 पद, शीया और घुठनेमें चार-चार रहती हैं। हस्त  
 एवं पदगत कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा नख, शीया तथा  
 घुटने वस्त्रनीकी अघोगत कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा  
 शिर और घुटनेवत् कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा नितम्ब,  
 मस्त्रक, उर, वच, अच एवं स्तनपिण्ड है। (सुख)  
 कण्डरावों द्वारा शरीर आकुञ्चन और प्रसारण किया  
 जाता है। (भायवकाय) बाहुघटमें अकुञ्चलिपयन्त पाने-  
 वाली कण्डरावोंके घातसे पीड़ित होनेपर बाहुद्वयका  
 कार्य विगड़ जाता है। इस रोगका नाम विग्राही है।  
 कण्डरीक (सं० पुं०) सप्तकातिसरके मध्य विप्र-  
 विषय। (हरिवंश)  
 कण्डवली (सं० स्त्री०) कण्डवली, करेला।  
 कण्डाम्नि (सं० पुं०) पक्षी, चिड़िया।  
 कण्डानका (सं० पुं०) महादेवके एक अतुरंजः।  
 कण्डिका (सं० स्त्री०) कडि-पुल्टाप्। कण्ड,  
 कण्डिका, वेदका एकदेश। अध्याय प्रपाठक प्रभृतिके  
 अन्तर्गत ब्राह्मणवाक्यसमूहकी कण्डिका कहते हैं।  
 कण्डोर (सं० पुं०) १ लघुकारवेष्ट, छोटा करेला।  
 २ पीतसुन्न, पीली मोटी।  
 कण्डु (सं० पुं०) १ वृषिविशेष। इनके पिताका  
 नाम कण्ड रहा। विष्णुपुराणमें लिखा है,—“किसी  
 समय कण्डु सुनिने गोमती किनारे उत्कट तपस्या  
 आरम्भ की थी। इन्हीं उससे भय मोत हो प्रत्येका  
 नाम्नी अक्षराकी समका तपोभग्न करने भेजा। सुनि  
 भी समका रूपमावण्य और हावभाव देख मोहित हो  
 गये थे। इन्हीं अपनी तपस्या छोड़ बहुकाल उनके  
 साथ एकत्र अतिपाहित किया। बहुकाल बाद  
 एक दिन सम्प्राप्तानकी कण्डुने सम्प्रायन्दना करना  
 चाहा। किन्तु प्रसोधाने इनकी बात सुन उपहास

किया था। उसीसे इनका मोह छूट गया। इन्हीं  
 फिर पुरुषोत्तमसे अर्धबाहु हो तपस्या द्वारा सुनि  
 पायी। (स्त्री०) कण्डवति शरीरम्, कण्ड-कु। अतुल्य  
 २ बाहुजन्म कण्डूयादि, खुजली, खाज। ३ कर्णरोग-  
 विशेष, कानकी एक बीमारी। ४ शूकगिम्बो, केवांच।  
 कण्डक (सं० पुं०) कण्ड-कन्। १ कण्डक, कांटा।  
 २ कण्डू, खुजली। ३ किसी नापितका नाम।  
 कण्डुघ्न, कण्डु देवो।  
 कण्डुर (सं० पुं०) कण्ड, राति ददानि, कण्ड-  
 रा-क प्रयोदरादित्वात् क्तलः। ‘आगिष्टवर्ण’ वा शराश  
 १ कारवेक्षता, करेलेकी वेल। २ कुन्दरुण, कुन्द-  
 रकी वेल।  
 कण्डुरा (सं० स्त्री०) कण्डुराट्। १ शूकगिम्बो,  
 केवांच। २ कर्पूरक, मोरकन्द। ३ पत्यन्तपपी,  
 एक वेल। इसकी पत्ती बहुत खट्टी होती है।  
 कण्डुना (सं० स्त्री०) पत्यन्तपपी, बहुत खट्टी पत्ति-  
 योंकी एक वेल।  
 कण्डुनी, कण्डु देवो।  
 कण्डू (सं० स्त्री०) कण्डय सम्प्रदादित्वात् क्तिप्  
 अलोपो यलोपय। १ कण्डू, खुजली। २ सुद-सुद  
 पिङ्काविशेष, छोटी-छोटी फुनली। इसका संज्ञात  
 पर्याय—खशू, कण्डूया, कण्डुति और कण्डूयन है।  
 लिङ्गवा—दूर्वा एवं हरिद्रा एकत्र घीषकर प्रलेप  
 भगानेसे कण्डू, पामा, दह, मोतपित प्रभृति रोग  
 विनष्ट होते हैं। गुष्माफन और भृङ्गराजके रसमें  
 तैलकी पका मननेसे कण्डू, दारुण, कुष्ठ और कानाप  
 रोग मिट जाता है। हरिद्राखण्ड प्रभृति घीषण  
 भी इस रोगपर विषय उपकारी है। हरिवंश देवो।  
 कण्डूक (सं० स्त्री०) कण्डू सार्धं कन्। कण्डू,  
 खुजली, खाज।  
 कण्डूकरी (सं० स्त्री०) कण्डू करोति, कण्डू-क-ट-  
 ङीप्। शूकगिम्बो, खजोर।  
 कण्डूका (सं० स्त्री०) काकतुष्टा, पुंघभी, रत्नी,  
 चिरमिटो।  
 कण्डुघ्न (सं० पुं०) कण्डू हन्ति, कण्डू-घ्न-टन्।  
 १ पारम्प्य, पसलता। २ मोरसदेव, सन्द सराही।

कण्टप्रथमं (मं० पु०) कण्टप्रथमं वगैः समूहः ।  
 ६-तम् । कण्ट नामकारनेवाको योपधियोक्ता समूहः,  
 पात्र मिटानिवाको कटोर्द्विषोका लघोरा । अन्तः,  
 येवाम्बुन, वास्त्य, करण, निष्प, कुट्टन, समं, मोन,  
 दावहरिदा चोर सुपाहके समूहको कण्टप्रथमं कहते  
 हैं । (मन्)

कण्टनि (मं० लो०) कण्टय भावे हित् लघोपो  
 यमोपय । कण्टयन, पुत्रलो, पात्र ।

कण्टमका (मं० लो०) कटोविमेष, एक कोठा ।  
 यत्र कण्ट, मार, कुहल, हरिण, रत्न, यवचामं चोर  
 मृकुटो पाठ प्रचारको होते हैं । इसमें कटनेमें  
 शोकोका अत्र योतवर्षं पक्ष चोर वसन, चतिमार,  
 अर प्रथतिथि यत्र मर जाता है । (इहम)

कण्टमत् (मं० लि०) पुत्रजाते कृपा, जो खरोच  
 रहा हो ।

कण्टयत् (मं० लि०) पुत्रजाते कृपा, जो रगड़  
 रहा हो ।

कण्टयन (मं० लो०) कण्टय भावे लुट् । १ कण्ट,  
 पुत्रलो पात्र । “यन्मृगयति यद्विषि यत्तं हि यत्तं”

यद्यपि न कर्तव्यं कृत्वा यत्तम् । (मन्मथ ७०१३)

२ कण्टयन, पुत्रजानिका योक्ता । मात्रमें कण्ट,  
 उपस्थित होनेपर दोषिण इसमें पुत्रजाया करते हैं ।  
 कण्टयनक (मं० लि०) कण्टयन-प्राये कन् ।  
 १ पुत्रजाते कृपा, जो रगड़ रहा हो । (पु०) २ पुत्र-  
 जानिका ।

कण्टयना (मं० लो०) कण्टति, पुत्रको ।

कण्टयनी (मं० लो०) कण्टयन, पुत्रजानिकी लघो ।

कण्टयमान (मं० लि०) पुत्रजानिका, जो खरोच  
 रहा हो ।

कण्टया (मं० लो०) कण्ट-यन्-प-टाप् । कण्ट,  
 पुत्रलो ।

कण्टयित (मं० लो०) कण्टयन, पुत्रको ।

कण्टयित (मं० लि०) पुत्रजानिका ।

कण्टर (मं० पु०) माचक, मानकम् ।

कण्टरा (मं० लो०) कण्ट-राति, कण्ट-रा-क-  
 टाप् । मृगमिच्छोत्ता, चलोत्तर ।

कण्टन (मं० पु०) कण्ट-कान्त्यर्थे लप् । १ कण्ट-  
 कारक योम मद्रति, लमोहम् । (ति०) २ कण्ट-  
 दुक्, पात्रमे मरा कृपा ।

कण्टका (मं० लो०) कण्टकापचलितता, कण्टका  
 लमोहम् ।

कण्टोम (मं० पु०) कटि बाहुनकात् योतत् ।  
 १ रंगादि निर्मित भास्वरत्नक भाण्डार, वात वगैरहमे  
 बना धान्य रत्ननेका पात्र । इसका संस्कृत पर्याय—  
 पिट, पिटक चोर पेटक है । २ कट, कट । ३ गोपी-  
 भेद, निषी विष्णुका चोरा । ४ मुद्रातके पान  
 निसेका एक पर्यंत । यहाँ चतिमाचोम देवमन्दिर  
 बना है ।

कण्टोलक (मं० पु०) कण्टाल-प्राये कन् । कण्टोल,  
 मायका बना डोल ।

कण्टोलयोपा (मं० लो०) कण्टोलय योवा कण्टो-  
 लया योवा वा । कण्टालोको योवा, कोठा बीन ।  
 इसका संस्कृत पर्याय—पाण्डालिका, कण्टालवल्ली,  
 कण्टालिका चोर कटालयोवा है ।

कण्टाली (मं० लो०) कण्टालपादाधारोत्पत्त्या,  
 कण्टाल यमं वादित्यात् यच्-लौप् । कण्टालयोवा,  
 कोठा बीन ।

कण्टाय (मं० पु०) कोषकार, भाभा, कृष्ण योवा ।  
 कण्टाय (मं० पु०) कण्टनी योवः समूहो यथात् ।  
 मृककोट, भाभा ।

कटा (मं० लो०) कटयते यपोयते, कच्-कन् ।  
 १ पाप, इत्यादि । (पु०) २ शूतयोनिविषय, किमी  
 विष्णुका नेतान् । ३ मुनिविषय । यह गोरके मुख  
 चोर चरित्रमनागतवन्त रहे । शिखरदिताका अटम  
 अटक इनमें नाममें प्रविष्ट है । यह यत्तुपेदीय कल  
 मायाके द्रव्यके हैं ।

द्विधं दूरि भी चनेक कण्टोका नाम मिलता है—  
 करनामेट, यद्यप्योग चोर कण्टाकाय । यह  
 मभी कटययोगे दृष्टे । भिन्नता-परिपक्व मृगनामाको  
 मन्थनः कलाकारपने प्रतिपादित किया है ।

महाभारतमें टीकाकार गोलकटने कल नामका  
 अर्थ इस प्रकार लगाया है—

“कण्वः सुखमयः तत्त्वविद्याप्रभावात् सुखं च संसारजम्भ सुखमयः नहि तत्त्वज्ञानिना कथितं च संसारसक्तिः अविद्याप्रभावात् ।”

कण्वका अर्थ तत्त्वविद्याके प्रभावसे सुखमय रहने-वाला है। तत्त्वज्ञानियोंकी अविद्याके प्रभावसे संसारमें किसी प्रकारकी भासक्ति नहीं रहती। सुतरां वह संसारके सुखसे भी चला रहते हैं।

४ पुरुवंशीय एक राजा। तपस्याके वलसे यह भी सुनि हो गये थे। ५ एक राजा। यह प्रतिरथके पुत्र और मेधातिथिके पिता रहे। कोई कोई इसे अन्नमोदका पुत्र कहता है। ६ धर्मशास्त्रकार सुनि-विशेष। ७ तीर्थविशेष। (त्रि०) ८ यधिर, बहुरा, जिसे सुन न पड़े। ९ विद्याक्रियाकृत्यक, आलिस। १० मेधावी, अक्षमन्द। ११ सुतिकारक, तारीक करनेवाला। १२ स्तम्भोय, तारीकके क्रावित।

कण्वजम्भन (सं० त्रि०) कण्व नामक पिशाचोंकी नाम करनेवाला।

कण्वतम (सं० त्रि०) अत्यन्त बुद्धिमान्, निहायत अक्षमन्द।

कण्वमान् (सं० त्रि०) १ कण्वोंके विधिवे तैयार किया हुआ। २ सुतिकारकों द्वारा सज्जित।

कण्वरथम्भर (सं० स्त्री०) कण्वेन गीतं रथम्भरम्, मध्यपदको०। सामगानविशेष, सामवेदका एक गाना।

कण्वन् (सं० अर्थ०) कण्वकी भांति।

कण्वसखा (सं० पु०) कण्वका मित्र, जो कण्वोंके दोस्ताना बर्ताव रखता हो।

कण्वसुता (सं० स्त्री०) कण्वस्य प्रतिपालिता सुता। गङ्गुलका। एकदा विद्यामित्रको उस तपस्यासे डर देवराज इन्द्रने तपोविघ्नके लिये भेनका नाग्यी भस्त्राको भेजा था। विद्यामित्र उसका रूपसावध्यादि देख विमोहित हुये। फिर उन्होंने उसकी गर्भसे एक कन्या उत्पन्न की थी। भेनका उस सद्यप्रसूत कन्याको वनमें फेंक यथास्थानकी चली गयी। देववध कण्व सुनिने उस कन्याको देख लिया था। वह दयाद्विचित्रसे उसे अपने आश्रममें खा तनयाकी तरह सालन-पालन करने लगे। गङ्गुलका देखो।

कण्वहोता (सं० पु०) कण्वकी होताके स्थानमें रखनेवाला यजमान, जिसके कण्व होता रहे।

कण्वायम (सं० पु०) कण्वस्य पाथमः, १-तत्। कण्व सुनिका पाथम, कण्वके रहनेकी जगह। यह पाथम मान्जिनी नदी किनारे अवस्थित है। कण्वायम आदि धर्मारण्यके नामसे विख्यात है। इस स्थानके प्रवेशमात्रसे समस्त पाप विदूरित जाता है। (पात) कोटा राज्यसे दक्षिण चम्पल नदीके निकट भी एक कण्वायम विद्यमान है। इसी स्थानके समीप मौर्य-वंशीय शिवराजोंकी शिलालिपि मिली है।

कण्वस्मृतिः (सं० स्त्री०) कण्वेन प्रणीता स्मृतिः, कर्मशा०। शुक्लयजुर्वेदसे कण्वसुनि द्वारा संवृद्धीत एक धर्मशास्त्र।

कत् (सं० अर्थ०) १ ईपत्, चल्, घोड़ा। २ कृतृषिता। ३ काय।

कत (सं० पु०) कं जसं शुभं तनोति, क-तन्-ड। १ निर्मसौहृद, निर्मसीका पेड़। २ सुनि-विशेष। यह विद्यामित्रके एकतम पुत्र थे। (हिं० अर्थ०) किस कारण, क्यों, किस लिये।

कत (सं० पु०) खेडनीके उपभागका तिर्यक् छेदन, कलमकी नोककी तरहो तराश।

कतक (सं० पु०) तक् हासे दाहलकात् घ, कण्व जम्भस्य तका हासः प्रकाशोऽस्मात्। १ लघुविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—अमुप्रसाद, कत, तिन्-फल, हृष्य, केदनीय, गुच्छफल, कतफल और तिन्-मरिच है। कतकको बंगला और हिन्दोमें निर्मसी, डड़ियामें कतोक, तेलङ्गामें कतकसु, इन्दुप्रदेश प्रयवा चिन्न, तामिलमें तैतमरम् वा तैन्नकोत्त, दक्षिणमें विश्वविन्न, सिङ्गलामें इन्डिवि और वैज्ञानिक चंगरेकोमें स्ट्रिकनोस पोटेटोरम् (Strychnos potatorum) कहते हैं।

कति पूर्वकालसे यह लघु भारतवर्षमें प्रविष्ट है। हमारे पूर्वतन अरवि इसके फलसे अलस योग्य बन करते थे। (सूत्र) भगवान् मनुने कहा है—

“कर्म कतकफलस्य लघुस्य भगवत्कृतम्।

न नामकहादेव लघु कर्तृ प्रदीदति ॥” (१५०)



यद्यपि कतक हजका फल वधुकी परिवार करता,  
तथापि उगका नाम येनेमे ही कल वल्लव नहीं रहता।

इह हज भारतराईके वारस प्रदेम, बड़ा, दाचि-  
वाय और मिहलके किसी किसी स्थानमे उत्पन्न  
होता है। प्रदेम तथाकी उंचाई १० से १५ फीट  
तक रहती है। इसकी लकड़ीकी जो तल्लुम बनते,  
वह इतराईके वनेस वायसक कार्योंमें लगते हैं।

कतकका फल बादाभी और पाध इह मोटा  
होता, जिन्नु पदनेमे जाला पड़ जाता है। वल्लव  
हरिताम धमुरवर्ण लगता और वधुकी भांति  
परिष्कार होनेस पाच्छव रहता है। कतकका जेतसार  
वादाहमजोन होता है।

कतक कट्ट, मिह, उच्च, वल्लुचितकर, वधिकर  
और लमिदीवय एवं मूलनामक है। वीस लकड़ो  
निर्मल बना देता है। (रामनिष्ठ)

भावप्रकाशके मतसे कतकका फल लमपरिष्कारक,  
वल्लुचितकर, वायु एवं प्रकाशकी नाश, कानेवाला,  
भीतक, मधुर, गुरु और कषाय है। वल्लव बनाने,  
कि वल्लुम लकड़ा गिरना दबाने और इट्टीकी मालि  
बढ़ानेकी निर्मलो म्पु तथा कपूरके साथ रगड़  
कर लगाने है। मुमलमान चिकित्सक कतकको  
भीतल और मूक समझते हैं। पेटपर इम लगानेसे  
पदरमगा दूर होती है। यह वल्लुकी लाम  
पड़नाता और सपके निषको धर दहाना है।  
किसी वायस वन्देमे निष्ठा—मिह और मूयामय-  
वायमोय किसी प्रकारकी पीड़ापर निर्मलो विमिष  
उपकारी है। तामिल वेद्योके मतसे यह फलकी  
बुद्धिमा वल्लवकारक होती है। कार्यवाटिक बाधव  
लक्ष्मी—निर्मलोको मूलकषय रोगके औषधकी भांति  
व्यवहार करते हैं।

मुहकी दाताने काम यह फल विवाहियोंके दास  
रहना चहता है। योकि परम किसी प्रकारका मन्दा  
अल मिलनेसे निर्मलो दास परिष्कार विमिष ला  
मकता है। लक परिष्कार करनेका मुख रहनेसे ही  
वेनेरल लोग इसे लिफ्टिग मट (Cleaning mat)  
बनते हैं।

१ काममटे, कमीदी। २ कुषेनय, कुषमा।  
३ लक्ष्मीरुच, लक्ष्मीरी म्पु।

४ रामायणकी एक प्राचीन टीका। रामायण  
प्रभृति रामायणके टीकाकारोंने पदमी-पदमी टीकामें  
कतकका उल्लेख किया है। डा० मुरमनके मतसे कतक  
गण्यतः ई०पू० १४०० पदया १५०० मताम् विमान  
रहे। किन्तु पदर टीकाकारोंकी धर्मिक चमुर  
कतक-टीकाकार १५ या १६ मताम्के लीग है।  
कतक-टीकाकारोंने मयके चारधर्म कामवृत्तिका  
मूय किया है। इसमें चतुमान होता, कि यह दक्षिण  
देगमें रहते थे।

कतकजस (सं० पु०) १ कतकलस,रीठका पेड़। २ तमाल-  
पुष्प, दमपिन। (मो०) ३ वारिषवादनकल, रोड़ा।  
कतपेला (सं० पु०) किसी मुनिका नाम।  
कतज्ज (पा० पु०) कलकका कत काटनेके लिये  
पक्ष दस्ता। यह लकड़ो या बायोदांतवा बनता है।  
कतप्रेष (सं० पु०) सिन्धु राज्यके पलायन एक  
नगर।

कतगा (हिं० जि०) १ कता जाला, वनगा, तैयार  
होना। (जि० वि०) २ कितगा, किस कदर।  
कतनी (हिं० स्त्री०) १ टेरिया, गुल कागजकी टेकुरी।  
२ मूल कामकेला मामान् रपनेकी टीकरी।

कतया (हिं० पु०) बड़ा वेद्यो, कतरना।  
कतयो (हिं० स्त्री०) वेद्यो, कतरनी।  
कतकल (सं० पु०) कत लमप्रकाशके कमलपल,  
बहुमो०। १ निर्मलोप, रोठका पेड़। २ निर्मलो-  
पल, रोड़ा।

कतम (सं० वि०) किम्-कतम्। यह पदार्थोंके  
मध्य कोई एक, कोम, दोम पक्ष।

कतमाल (सं० पु०) लक्ष लल्लव तमय गोवधाय  
पलति पर्याव्रति, कतम-पल-पल। यमि, याग।  
इमका पाठाकार कलमान और लपमान है।

कतर (सं० वि०) किम्-कतरम्। दाहिं पक्ष,  
दाहिं कोम। "वेदवर्गविना कतमालम्" (११४)।

कतराई (हिं० स्त्री०) काटकाट, कतराई, कतराई  
और रोड़ा।

कातरतः ( सं० चय्य० ) दोमें किस घोर, कोन तर्फ ।  
कातरन ( हिं० स्त्री० ) काटकाटा टुकड़ा, कटा हुआ  
रही हिस्सा । कागज, कपड़े, धातु आदिका कटा  
हुआ रही टुकड़ा कातरन कहाता है ।

कातरना ( हिं० क्ति० ) १ कैसीसे काटना, काटना ।  
२ किमी भीजारेसे काटना, टुकड़े करना । ( पु० )  
३ बड़ी कैसी । ४ बतकाटा, बातकी काट डालनेवाला ।  
कातरनाम ( हिं० स्त्री० ) किमी किछकी धित्री ।  
इसपर दोहरी गडारी रहती है ।

कातरनी ( हिं० स्त्री० ) १ कैसी, मेकरान, बाल  
कपड़े वगैरह काटनेका एक भीजार । २ कर्मकारों  
और श्रमिकोंका एक यन्त्र । इससे धातुकी चहर,  
तार वगैरह चीजें काटी जाती है । यह संधुसी-जैसी  
होती है । ३ तंबोलियाका एक भीजार । इससे  
तंबोली पाग कातरते हैं । ४ सुनाहोंका एक भीजार ।  
इससे कपड़ा कटता है । ५ किमी सिक्की सुतारी ।  
इससे मोचो और जीनगर कड़ी जगह पर छोटी  
सुतारी बुनेइनेके लिये छिद बनाते हैं । यह थोड़ी  
और नुकीली रहती है । ६ चम्बी, पत्ती । यह सादे  
कागज या मोमजामिका एक टुकड़ा है । छीपी  
बेल छापनेमें इसे व्यवहार करते हैं । जिम कोणपर  
वह पूरी छाप मारना नहीं चाहते, उसपर इसे जमा  
देते हैं । ७ मत्स्यविशेष, एक मछली । यह मल-  
वारकी नदीवोंमें रहती है ।

कातरथीत ( हिं० पु० ) १ काट-काट, कातराई ।  
२ हरफोर, छल-पुलट । ३ सोचविचार । ४ निकास,  
चोरी । ५ हिंसार्थ-किताब, जोड़तीड़ ।

कातरवां ( हिं० वि० ) कटावदार, पीरेको, टेढ़ा,  
तिरछा ।

कातरवाई ( हिं० स्त्री० ) १ कातरानेका काम । २ कात-  
रानेका पारिव्यमिक, कटाईकी मजदूरी ।

कातरा ( हिं० पु० ) १ खण्ड, विच्छिन्न अंश, कटा-  
हुआ टुकड़ा । २ प्रसारखण्ड, पत्रका छोटा टुकड़ा ।  
यह गड़ाईसे निकलता है । ३ नौकाविशेष, एक बड़ी  
गाव । इसपर खड़े होकर मांझी नावको जेनेमें  
कांड चलाते हैं । यह पटेसे बराबर लम्बी रहते

भी कम थोड़ी होतो है । कातरपर पत्र वगैरह  
बढ़ता है ।

कातरा ( सं० पु० ) विन्दु, बूंद ।

कातराई ( हिं० स्त्री० ) १ कातरनेका काम, कातरथीत ।  
२ कातरनेका पारिव्यमिक, कटाईकी मजदूरी ।

कातराना ( हिं० क्ति० ) १ बचाना, बचकर निकल  
जाना । २ कटाना, कातरवाना ।

कातरी ( हिं० स्त्री० ) १ कातर, कोरहका पाट ।  
इसीपर बैठ मनुष्य बैस हाकता है । २ चमछार-  
विशेष, एक जेवर । यह पीतलकी बनती और टसवां  
रहती है । मोच आतिथी स्त्रियां कातरीको हाथोंपर  
धारण करती हैं । ३ यन्त्रविशेष, एक भीजार ।  
यह सकड़ीकी बनती और कारनिष्ठ जमानमें लगतो  
हैं । इसकी लम्बाई १ फुट, चौड़ाई १ इंच और  
मोटाई पाव इंच होती है । ४ लम्बी हुई मिठाईका  
एक टुकड़ा । ५ कैसी, कातरनी ।

कातस ( सं० पु० ) बध, हत्या, जानसे मारनेका काम ।  
कातसबाज ( सं० पु० ) बधिक, जलाद, मार डालनेवाला ।  
कातना ( हिं० पु० ) मत्स्यविशेष, एक मछली । यह  
बड़ी नदियोंमें मिलता है । कातना छह फीट लम्बा  
लम्बा होता है । इसमें बल अधिक रहता है । कभी  
कभी एकद्वे समय कातना मनुष्योंकी भपटकर गिरा  
देता और काट लेता है ।

कातनाम ( सं० पु० ) सर्वसंहार, अन्नाधुन्य, मार-  
काट । कातनाममें परराषी और निरपराषी नहीं  
देखते, एक ओरसे सबको मार देते हैं ।

कातवाना ( हिं० क्ति० ) काताना, कातनेका काम  
दूसरेसे कराना ।

कातवार ( हिं० पु० ) १ चमयोन्नतीय छपाई, धकाम  
घासफूस । २ कातनेवाला, जो धातु कातता हो ।

कातहू ( हिं० चय्य० ) किंसी घोर, कहीं ।

कातमं, कातं देवी ।

काता ( सं० स्त्री० ) १ रूप, यत्न, धरत, बनावट ।  
२ प्रकार, तर्ज, टङ्क । ३ काटकाट, छपाई ।

कतार्दे ( हिं० स्त्री० ) १ कातनेका काम । २ कातनेका  
पारिव्यमिक, कातनी ।



पदार्थ, तोन खराब चीजे। यह शब्द नित्य ही बहु-  
वचनान्त है।

कचादि ( सं० पु० ) पाणिनि उक्त जातादि धर्ममें  
ठकव् प्रत्ययसे बना हुआ शब्दमसूह १। कचपादिगणके  
अन्तर्भूत कचि, कचि, पुष्कन, मोदव, कुम्भी, कुण्डिन,  
मगरी, माहिमती, वमती, करव्या और ग्राम शब्द है।

कत्य ( हिं० पु० ) लोहेकी स्याही, एक रंग। किसी  
घटमें १५ सेर जल और आध सेर गुड़ या चीनी मिला  
घोड़ासा लोहचुन डालते हैं। फिर यह घट घातपमें  
रखा जाता है। कुछ दिन बाद चड़ेका पानी छूटता  
और मुखपर गांज या जमता है। जलका रूप कासा-  
भूरा होनेपर कत्य पक्का पड़ता और रंगदिमें सगता है।

कत्यई ( हिं० पु० ) १ किसी किसका रंग। आन-  
काले रंगको कत्यई कहते हैं। इसके बनानेमें हरी,  
कासो, गेरू, कत्या और चूना पड़ता है। कत्यई  
रंगमें खटाई या फिटकरोका बोर नहीं लगाने।  
( वि० ) २ खैरा, खैरका रंग रखनेवाला।

कत्यक ( हिं० पु० ) जातिविशेष, एक कौम। कत्यक  
नाचते और गाते-बाजते हैं। भारतवर्षमें जयपुरके  
कत्यक प्रसिद्ध हैं। कथकता देखो।

कत्यन ( सं० स्त्री० ) १ पचहाराति, जमरानी, छोंग।  
( वि० ) २ आत्मसाधावर, छींगिया। ३ शूरमन्य,  
शीर्षीखोर, लडाइया।

कत्या ( हिं० पु० ) १ खैर, खैरकी लकड़ियोंकी छेवाज  
कर निकाला हुआ सत। इसे दकड़ा कर चौकोर  
टुकड़े या छोटे छोटे मोचे बना लेते हैं। कत्या  
पानमें खाया और जख्मोंपर लगाया जाता है।  
कत्या और चूना बराबर पड़नेमें ही पानका मज्जा है।  
घटिर और खेर शब्द देखो।

कत्तप ( सं० स्त्री० ) कत् सुखकर पयाइय, बहुश्री०।  
१ सुखकर जलायय, फुरहावय्य तानाव। २ सुख-  
कार जन, आराम देनेवाला पानो। ( वि० ) ३ तर-  
झित, समझा हुआ, जो पढ़ रहा हो।

कत्तलखान्—यक लोहागा अफगान। इन्हेंके समय  
बहुपकमें मिट्टीछ छटा था। उसी सुधागमें (१५८० ई०)  
कत्तल खानने पठान सिपाही संघर्ष कर उड़ीसे पर

घावा मारा। क्रमशः इनके तत्त्वामधानमें चारो ओरसे  
पठान सिपाही आ आकर जमा हुये। कत्तलखान्ने  
उनके साहाय्यसे सलीमाबादमें सातगांवोंके शासन-  
कर्ता मिर्जा नजातको हराया और मदनोपुर, वसन्तपुर  
एवं दामोदर नदीके दक्षिण तीरका अधिकार पाया।  
उसी समय सम्राट् पकवरने मिर्जा भोजीजीको यहास,  
विहार और उड़ीसेका शासनकर्ता नियुक्त कर भेजा  
था। किन्तु वह भी इनसे हार गये। १५८३ ई०की  
सुगलमारोंके निकट दामोदर नदी किनारे सुग्गां और  
पठानोंमें युद्ध हुआ था। उसमें सादिक खान् और  
शाहजुनो महरमने इन्हें परास्त किया। फिर  
पकवरके कर्मचारी और कत्तलखान्के साथ सन्धि  
हुई। उसके अनुसार उड़ीसा इन्हेंके अधिकारमें  
रहा। किन्तु सम्राट् पकवरने उस सन्धिका मागा  
न था। कत्तलखान्का शास्ति देने मानसिंह बहाल  
और विहारके शासनकर्ता बनकर आये। धरपुरके  
निकट युद्ध बना था। इन्होंने सम्राट्के सिपाहि-  
योंका हरा-विजयपुर अधिकार किया और मानसिंहके  
पुत्र जगत्सिंहका बंध लिया। कुछ दिन पौड़े ही  
कत्तलखान् मर गये। इनके प्रधान बजार ईसा-  
खान्ने मानसिंहसे सन्धि कर जगत्सिंहका छोड़  
दिया।

कत्तवर ( सं० स्त्री० ) कत्त-वृ-भप्। स्कन्ध, कन्धा।

कायं ( सं० प्रथ० ) किन प्रकारसे, किम् पुम्। किम्प।  
या ३५११। १ किस विधानसे, कीन तरीके पर।  
३ कुतः, कस्मात्, क्यों, कहाँसे।

“कचं वदतः प्रवर्तते विरमाकरिदां स्त्री।” ( मनु ३/१ )

कचंरूप ( सं० द्वि० ) कचि पाकारका, कीमती  
सुरत-गन्त रखनेवाला।

कचंशेय ( सं० द्वि० ) किस शक्तिका, कीमती ताकत  
रखनेवाला।

कच, कचा देखो।

कचक ( सं० पु० ) कचयतीति, कच कर्तेरि च्।  
१ प्रौराधिक कचा बांधकर लोबिका निर्माण करने-  
वाला। २ नाट्यकी रचना करनेवाला, कथा गढ़ान्।



कथहर्मा ( सं० त्रि० ) किस प्रकार कार्य करनेवाला, कैसे काम चलायेवाला ।

कथहार ( सं० पद्य० ) कथम्-हृ-णमुल् । किसप्रकार, किस तौरसे, कैसे करके ।

कथश्चन ( सं० पद्य० ) कथम्-चन । किसी प्रकार, नहीं, किसी तौरसे नहीं ।

कथश्चित् ( सं० पद्य० ) १ कश्चित्, कुछ । २ कीओ प्रकार, किसी तौरसे, वसुञ्जित ।

कथन ( सं० स्त्री० ) कथ भाये क्युट् । १ कथा, वाक्य, वयान् । ( त्रि० ) २ कहनेवाला, बड़बड़िया, जो बहुत बात करता हो ।

कथना ( हिं० क्ति० ) १ कथन करना, कहना । २ काव्यरचना करना, शेर बनाना । ३ निन्दा निवासना, चिक्कारत करना ।

कथनी ( हिं० स्त्री० ) १ कथन, गातचीत । २ वकवाद, बड़बड़ाहट ।

कथनीय ( सं० त्रि० ) कथ-घनीयर् । तथ्यनयनीयः । वा १।।८६ । वक्तव्य, वयान् करने या कहने लायक । २ सम्बन्धकी योग्य, जो नाम रखने काबिल हो । ३ निन्दनीय, खराब ।

कथन्ता ( सं० स्त्री० ) निज्ञासा, पूछताछ ।

कथम्, कथं देवी ।

कथमपि ( सं० पद्य० ) कथय अपिच, हन् । १ किसी प्रकार, किसी भी तौरसे । २ पति यज्ञसे, बड़ी सुञ्जितमें । ३ पति कष्टसे, बड़ी तकलीफमें । ४ पति गौरवसे, बड़े बारमें । ५ दृढ़रूपसे, पक्के तौरपर ।

कथम्प्रमाण ( सं० त्रि० ) किस प्रमाणवाला, कौनसी नापका ।

कथम्भाष ( सं० पु० ) कथम्-भू-घञ् । कैसे स्थिति, कौनसी ज्ञात ।

कथम्भन ( सं० त्रि० ) कथम्-भू-ञ । १ किस रूप-वाला, कौनसी स्वरत रखनेवाला । २ किसप्रकार, उत्पन्न हुआ, किस तौरपर पैदा ।

कथयान ( सं० त्रि० ) कथन करनेवाला, कहते हुआ, जो बोल रहा हो ।

कथयितव्य ( सं० त्रि० ) कथ-यिच्-तव्य । वक्तव्य, कहने लायक, जो कहा जा सकता हो ।

कथरी ( सं० स्त्री० ) १ कन्थारो, नागफनी । ( हिं० ) २ पक्ष-विशेष, एक कपड़ा । कथरी पुराने चियड़ोंको जोड़ जोड़ बनाये घोर ढोढ़ी या बिछाणो जाता है । प्रायः दमिद्र इसे व्यवहार करते हैं । किन्तु कुछ वर्ष पहले भारतमें कथरीकी बड़ी चाल रही । कथरी बिछाने में मुन्नायम घोर ठण्डी रहती है । गरमोके दिनों कथरीपर सोना बहुत अच्छा लगता है ।

कथा ( सं० स्त्री० ) कथ-कथ्-टाप् । विनिर्मुनिचिदिनि-चिचि । वा १।।१०५ । १ प्रबन्धकी बहु मिया एवं अल्पसत्यपूर्ण कल्पना, कित्सा, कहानी । २ तर्क, बहस । “यत्तन्निर्देयविजयात्पराजयवयोनात्वावानुवृत्तवचनसम्बन्धः कथाः” ( गीतगोवि १।११ ) पदार्थके यथाव्यं निधय किंवा प्रतिपक्षके पराजय प्रयोजक वाक्यका ही नाम कथा है । व्यायदर्शनके मतमें कथा त्रिविध होती है—

वाद, जल्प और वितण्डा । नैयायिक उन्हीं व्यक्तियोंको कथाका अधिकारी समझते—जो श्रवणेन्द्रिय प्रवृत्तिमें कोई कोई दोष नहीं रखते, साधारण लोगोंका स्वीकृत वाक्य माननेमें तर्क ठठानेसे डरते, अक्षमहाकारो रहते, स्त्रीय वार्तामें साधारणका विज्ञास बढ़ानेकी युक्ति आदि कहते और यथाव्यं निर्णयमें समय पड़ते पक्षवा विपक्षके पराजयकी कामना करते हैं । “अथपिक्वार्थिच तत्तन्निर्देयविजयात्पराजयवयोनात्वावानुवृत्तवचनसम्बन्धः कथाः” ( गीतगोवि १।११ )

किसी किसी मतमें वादप्रतिवादीके पक्ष और प्रतिपक्षका परिपक्ष कथा कहाता है ।

“वादप्रतिवादिना पक्षप्रतिपक्षपरिपक्षः कथाः” ( वररत्नसंग्रह—अध्याय ४० )

१ वार्ता, बात । ३ वाक्य, सुमना । ४ विवरण, वयान्, तफ्फूसी । ५ धर्माशोधना, मन्त्रकी वयान् । ६ उपन्यास विशेष, किसी कित्सा काव्यान् । ७ सममें पूर्वपोडिका और उत्तरपोडिका रहती है । पूर्व-पोडिका एक कथक कहता है । पनेक थोता उसे उत्साह प्रदान करते हैं । कथक या पठा सब कथा कहता है । कथा समाप्त होनेमें उत्तरपोडिका पड़ती

६। दण्डे वस्त्रा चीर कोश दोनो चउनी-चउनी राख  
लेहै है। (चउ०) दण्ड, कोश, कचहरी, चउनी।

महापद (मं० पु०) कथायाः पदः प्रवृत्तः, ६-तत्।  
कथापदः, मुक्तमूलाः चाम्पूः।

कथाचम (मं० छं०) कथाचमनाका चाम्पू,  
विशेषो नाम।

कथादि (मं० पु०) उक्तं कथादिभिः निमित्तं पाणिनिना  
कथा एक शब्दस्य। इमं कथा, विख्या, विष-  
कथा, महाका, वितण्डा, कुतन्वि, अनवष्ट, अनवष्ट,  
प्रतिपक्ष, गुण, गण चौर चाम्पूदं शब्दं पठता है।

कथामर (मं० छं०) कथयति पठ, यथा बाहुसंज्ञात्  
चाम्पूः। १ मर्या, कथागी। २ कथाविमर्श, कोरि  
छोटा जिह्वा। वृत्तान्वयकोषो चौर विज्ञानवचनोमी  
पादिचो छोटी छोटी कथागीका नाम कथामर है।

कथानिका (मं० छं०) कथ्यासमेद, जिमी कथाको  
कथागी। यह कथागी विमकुल मिलनो-मुक्तो है।

विषय प्रधान विषयको चमक पात कथा करते है।

कथामुगम (मं० पु०) ध्याम, मगली, वातपोतमें मग  
मगनेकी वातत।

कथाम (मं० पु०) वातांको मगति, वातपोतका चपरी।

कथानर (मं० छं०) कथाया चमरं चमनामः।  
१ कथाचमर, वातपोतका मोकर। २ यथा कथा,  
हमरो वात। ३ कथन, भगवत।

कथापीठ (मं० पु०) कथायाः पीठमिव, श्रवणं।  
कथाका आधार, जिमीको कट। कथामरित्सागरके  
प्रथम कथ्यकको 'कथापीठ' कहते है।

कथाचमर (मं० पु०) कथायाः चमरः, ६-तत्।  
मगला चमरे, जिमीको चमर, मगी चुरि कथागी।

कथाचमर (मं० पु०) कथायाः चमरः, ६-तत्।  
१ नामाविषय कथामरकथन, मर-मरको वातपोत।  
२ वातां, वात। ३ मोक्षोपचम, गुण।

‘विषय प्रधान विषयको चमक पात कथा करते है।’ (कथामरित्सागर)

३ विमर्श, कथामरको कथा चमरका, जो कथर-  
मोकरा कथना को। (ति०) कथायां प्रमदी दण्ड,  
चपूमी। ४ चमरका मरकाच, कथामर जिह्वा  
कथामरको चमरका। ५ चाम्पू, चमर, मगला।

कथावाच (मं० पु०) कथया वादिनि मोचति, कथा-  
म चमर-चमर; कथायां वाचा चौरकोपाया यथा इति  
वा। १ कथन, विख्याती, कथागी कथर का  
चमरकावा। २ मरकाचविषय, मगली जिह्वा  
चमरकावा।

कथामर (मं० पु०) चमत् तर्कमूलक पाणिनिप्र,  
भूतो वचनको एक वात। मरकाचके इमं वादी चौर  
प्रतिवादी छताते है।

कथामर (मं० छं०) कथा-मर, ६-तत्। कथाचमर, जिमीके  
मर का कथा, जिमी कथानिमी रहे।

कथामर (मं० छं०) कथाया चाम्पूचम, ६-तत्।  
कथाचमरको मरकाच, कथको दोवावा। कथा-  
मरित्सागरके दूसरे कथ्यकका नाम 'कथामर' है।

कथाचम (मं० पु०) कथायाः चमः, ६-तत्। कथा-  
चमर, मुक्तमूला, वातचम।

‘इति कथामरित्सागर’ (कथामरित्सागर) (विमर्श)

कथारथ (मं० पु०) कथायाः चारथः, ६-तत्।  
कथाका चारथ, जिमीका चाम्पू, कथामरको कथा।

कथारथकाम (मं० पु०) कथाके चारथ कोमका  
चमर, जिम वचनमें जिह्वा कथना दण्ड करे।

कथानाच (मं० पु०) कथायाः चामाचः, ६-तत्।  
कथनाचमर, वातचम।

कथाविमर्श, कथामरको

कथावाता (मं० छं०) कथा ज वातां च, दण्डः। विविध  
कथा, मर-मरको वात-चम, जिह्वा-कथामरी।

कथाविमर्श (मं० छं०) वातांकाचम चमर दण्ड-  
वाता, जो वातपोत मरकाच करता को।

कथामर (मं० छं०) कथा वातां मरको दण्ड, चपूमी।  
१ मर, मुर्दा, जिमके जिह्वा वात वाको रहे। (पु०)  
२ कथामरति, जिह्वाका चाम्पूचम।

कथामर (मं० पु०) कथामरको चाम्पू, कथा-  
मरको छताते।

कथामरित्सागर (मं० पु०) १ कथाको मरित्सागर  
मरुत, कथानिमीके मरकाचका मरुत। २ मरकाच  
कथामरित्सागर, कथानिमीको जिमी जिह्वाका  
नाम। मरकाच मर मरकाच मरकाच मरकाच मरकाच

वाधिपति श्रीहर्षदेवकी सहिष्योके चित्तविनोदाय  
पेयाची भाषासे संस्कृतमें इसे अनुवाद किया था।  
इसमें कौशाम्बीराज वत्सराजके पुत्र नरवाहन दत्तका  
चरित्र वर्णित है। सुभाष, जोनदेव और वेमेश्वर देखो।

कथिक (सं० त्रि०) कथ-ठन्। १ कथक, पुराण-  
वक्ता, किन्हे कहनेका पेया करनेवाला। (हिं०)  
२ कथक, गाधने-गानेवाला।

कथिका (सं० स्त्री०) तत्कादि-साधित खाद्यद्रव्य-  
विशेष, कढ़ी, महेरो। कती देखो। यह पाचन, रुच्य,  
लह्य, वज्रिदीपन, कफानिलविघ्नघ्न और किञ्चित्  
चित्तप्रकोपन है। (देवकनिघण्टु)

कथित (सं० त्रि०) कथ-क्ते। १ उक्त, कहा हुआ।  
२ वर्णित, बयान किया हुआ। ३ उच्चारित, सुंघे  
निकासी हुआ। ४ व्याख्यात, समझाया हुआ।  
५ प्रतिपादित, साधित किया हुआ। (स्त्री०) ६ कथन,  
वातचीत। ७ प्रसन्न विशेष, खुदराका कोई बोल।  
(पुं०) ८ परमेश्वर, विष्णु।

कथितपद (सं० स्त्री०) कही हुई बात, दोहराव।  
कथितपदता (सं० स्त्री०) पुनरुक्ति, दोहरा कहना।  
यह अवधारणास्वात्म एक दोष है। एकाग्रवाचक  
दो शब्द किसी स्थानमें पड़नेसे कथितपदता पानी है।

“रतिजोवाचने भिने” उन्नीसमितीकहन्।” (साहित्यदर्पण)

उक्त पदमें लोला शब्द निरर्थक है। क्योंकि रति-  
यम कहनेसे ही अर्थ निकल सकता था। फिर  
अनेक स्थानमें यह दोष गुणकी भांति काम देता है—

“कथितपद पदे पुनः।

विहितलानुवाचने रिवादे विरुधे कुर्वि।

देवोऽयं लाटादुवाधेऽनुकृपाया प्रसादये।

कथानरसंक्षिप्तवाचि इवोऽवधारये।” (साहित्यदर्पण)

विहितानुवाद, विषाद, विषय, क्रोध, दीनता,  
लाटानुपास, अनुकम्पा, प्रसादन, अर्थान्तरवाच्य, इयं  
और अवधारणमें कथितपदता—दोष नहीं—गुण है।

कथोज्जत (सं० त्रि०) एकथा कथा सम्बन्धमाना  
क्रियतेत्यत, कथा-चि-ज-ऊ। कथामात्रमें अवशिष्टजत,  
मृत, सुदी। “परदन्त कथोज्जतं वृत्तिः।” (उद्धार भा११)

कथोर (हिं० पुं०) कसोर, रांगा।

कथोल, कथोर देखो।

कथीला, कथोर देखो।

कथोदय (सं० त्रि०) कथायां उदयः प्रकाशो यस्य,  
वहूनी०। १ कथासे उत्पन्न, कहानीसे निकाला हुआ।  
(पुं०) २ कथाका उत्थापन, किस्सेका उठान।

कथोदघात (सं० पुं०) माटकको एक प्रस्तावना,  
खानका शुरु।

“एवधारणं वाच्यं वा समाश्लेषार्थमथ वा।

अथैव पाठ्यवैयर्थ्यं कथोदघातः च उच्यते।” (साहित्यदर्पण)

प्रथम अभिनेता जब सूत्रधारके वाक्य वा वाक्यके  
किसी अर्थको एकदु प्रवेश करता, तब कथोदघात  
पड़ता है। रत्नावलीमें सूत्रधारके वाक्यकी प्रथमप्रथम  
और वेषीसंहारमें सूत्रधारके वाक्यार्थकी प्रथमप्रथम  
पात्रका प्रवेश देखाया है।

कथोपकथन (सं० स्त्री०) कथायां उपकथनम्, ७-तत्।  
कथापर कथा, विविध वार्ता, दो बार लोगोंका एकत्र  
हो किसी विषयपर परामर्श वा आन्दोलन, वातचीत।

कथ्य (सं० त्रि०) कथ-य। कहनेके उपयुक्त, वता देने  
लायक। “नरत्नस्य सभाये तैश्वर्यं कथ्यः कथयन्।” (रामायणः ७५७)

कथ्यमान (सं० त्रि०) कथ्य कर्मणि गानध। कहा  
जानेवाला, जिसे कोई कह रहा हो।

कद (सं० अर्थ०) कही, किस जगह।

कद (सं० पुं०) कं जलं ददाति, क-दा-क। १ मिथ,  
बादल। (त्रि०) २ जलदाता, पानी देनेवाला।  
३ सुखदायक, आराम बढ़ानेवाला।

कद (हिं० स्त्री०) १ ईर्ष्या, नाराजी, घमन। २ हठ,  
जिद। (अर्थ०) ३ कदा, कब, किस वक्त।

कद (अ० पुं०) डीलडोल, झगडाई-पोड़ाई।

कदक (अं० पुं०) कदः मिथश्च कायति प्रकाशते,  
कद-के-क। चन्द्रातप, चंदोश।

कदचर (सं० स्त्री०) कु कृतृमिति पदसम्, कोः कदा-  
देयः। १ कृतृमिति पदचर, पुराण चर, बुरो निपा-  
वट। (त्रि०) २ कृतृमिति पदचर लिपिनिर्गता, बदमन्त्र,  
जो बुरे चर्च बनाता हो।

कदमि (सं० पुं०) कु कृतृमिति पदमिः, कोः कदादेयः।



१ मन्दाग्नि, योड़ी भाग। (त्रि०) २ मन्दाग्निमुक्त, योड़ी भाग, रघुनेवाला।

कदम्ब (त्रि०) कदम्बाक्षी।

कदम्बा (सं० पु०) कुत्सितो ध्वा, को: कदादेयः। निन्दित पथ, बुरी राह। इसका संस्कृत पर्याय—व्यध, दुरध, विप और कापय है।

कदन (सं० स्त्री०) कदाते, दुःखं प्राप्यते इति, कद-  
पिह-स्य दृष्टादित्यात् नहतिः। १ पाप, गुनाह।  
२ मदं, मलाई, रौंदाई, कुचलाई। ३ युद्ध, लड़ाई।  
४ मारण, विनाश, बरबादी।

कदनप्रिय (सं० त्रि०) विनाशका असुराग रखने-  
वाला, जिसे मारकाट अच्छी लगे।

कदत्तनाद—मद्राजके मलवार जिलेके मध्यका एक  
प्राचीन राज्य। यह अक्षा० ११° ३६' से ११°  
४८' व० और देशा० ७५° ३६' से ७५° ५२' पू०के  
मध्य अवस्थित है। कदत्तनाद राज्य समुद्रोपकुलसे  
पश्चिमघाटके पश्चिमपार्श्व पर्यन्त फैल रहा है। इसके  
समुद्रतीरवर्ती स्थान बहुत उपजाऊ हैं। पूर्व और  
पार्वत्यप्रदेशमें वन वष्ट है। इसमें इलायची अधिक  
होती है। १५६० ई०को किसी नायक सरदारने यह  
राज्य स्थापित किया। उक्त व्यक्ति कोलाती राज्यके  
राजा तैक्कलदुरके निकटसे पाये थे। अन्तमें टीपू  
सुलतानने इस वंशकी राज्यसे दूरीभूत किया।  
फिर १७५२ ई०में अंगरेज सरकारने प्राचीन वंश-  
धरकी राज्यका अधिकार सौंपा। इसकी राजधानी  
कत्तिपुरम् है।

कदम्ब (सं० स्त्री०) कुत्सितं अन्नम्, को: कदादेयः।  
१ कुत्सितान्न, खराब खाना। २ कदर्यान्न, मोटा  
अनाज। शास्त्रनिषिद्ध और अपथ्य अन्नको कदम्ब  
कहते हैं। “इतिर्वेना इतिरिति विना पेटेन नाशयः।

कदम्बः पुष्टीकायः कदम्बे वनचयः” (उट्ट)

कदम्बभोजी (सं० त्रि०) कुत्सितं अन्नं भुङ्क्ते,  
कदम्ब-भुज-पिनि को: कदादेयः। जघन्य अन्नभोजन  
करनेवाला, जो खराब अनाज खाता हो।

कदपत्य (सं० स्त्री०) कुत्सितं अपत्यम्, को: कदा-  
देयः। १ कुपय, खराब बेटा, बुरी औलाद। (त्रि०)

२ पतिव्रत मन्द पुत्रवाला, जिसके बहुत खराब  
बेटा रहे।

कदपा—मद्राज प्रान्तका एक जिला। इससे उत्तर  
करनूल-जिला, पूर्व नैन्नूर, दक्षिण उत्तर अरकटू तथा  
कोलार जिला और पश्चिम बेलारी जिला है।  
भूमिपरिमाण ८७४५ वर्ग मील पड़ता है।

इस जिलेका पूर्व एवं दक्षिण अंश पार्वतीय है।  
दक्षिण-पश्चिम भाग समतल समता है। दक्षिण-पूर्व-  
भागमें हिन्दुर्वोका मुख्य श्रृंखला विद्यमान है।  
पालकोडा और शेषाचल नामक पहाड़ इस जिलेकी  
दो भागोंमें विभक्त करते हैं—मिन्न भाग और उच्च  
भाग। उक्त दोनों पर्वत पेंवार (पिनाकिनी) नदी  
पर्यन्त विस्तृत हैं। पालकोडिका अर्ध ‘दुग्धमैल’ है।  
बोध होता—यहां सुन्दर गोचारणक्षेत्र रहनेसे उक्त  
नाम पड़ा होगा। इस जिलेमें पेंवार नदी भी प्रधान  
है। इस नदीकी दो शाखा हैं—कुण्डेर और सगनैर।  
शिवा इनके पापसी, धैर और चित्रवती नामकी दूसरी  
भी कई नदी पड़ती हैं। यहां वनकी कोई कमी  
नहीं। वनमें अच्छी अच्छी लकड़ी मिलती है।

खनिज पदार्थोंमें लोहा, ताँबा, चूनेका कंकड़,  
छोट और बिलौरी पत्थर निकलता है। कदपा  
नगरसे तीन-चार कोस उत्तर पिनाकिनी नदी किनारे  
चेन्नूरके पास हीरा मिला है। उद्दिष्टमें चना, कन्बु,  
धान, गेहूँ, तम्बाकू, मिर्चा, नानाप्रकार तैलबीज, इन्डु,  
नील, केसर, कपास और पाट प्रश्रुति उपजता है।

शिल्पाद्य—पूर्वकाचको यह जिला चीनराज्यके  
अन्तर्गत था। यहां चीनराज्यके पागमनकी नाना-  
प्रकार किंवदन्ती प्रचलित है।

कदपामें बहुत दिन हिन्दुर्वोका राज्य रहा। स्थानीय  
पहाड़ोंपर अनेक दुर्गों का दुर्ग रहनेसे सुसन्नमान सहज  
हो इसे जीत न सके थे। अन्तकी अनेक कट उठा  
उन्होंने कदपा जय किया। १५६५ ई०को तालि-  
कोटकी दुर्घटनाके पोछे कर्णाटक जीत सुसन्नमान  
कदपाके बीचसे आते जाते रहे। उसी समय गोल-  
कुण्डेके पधोनेस्य प्रधान प्रधान मुसलमान सामन्त  
नाना स्थान अपने मागयोग बनाने लगे। उनमें

शुरू-कुच्छ के किसी नवाबने कदपा अधिकार किया। यह नवाब अत्यन्त पराक्रान्त हो गये थे। अन्तको इन्होंने अपने मामसे सुद्रादि भी खसा दिये।

चिरदिन कोई विषय समान नहीं रहता। यहां कि सुसलमानोंकी अमता क्रमशः घटने लगी। १६४२ ई०को महाराष्ट्र-वीरोंने यह स्थान जीत लिया था। महाराष्ट्र, शिवजीने ब्राह्मणोंको यहां कि दुर्गकी रक्षाका भार सौंपा। कुछ दिन बाद सुसलमानोंने इसे फिर जीता था। नबी खान नामक एक पठान कदपाके स्वाधीन नवाब बने। इसके पीछे क्रमान्वयमें तीन नवाबोंने प्रबल प्रतापसे राज्य शासन किया था। १७१२ ई०को अन्तिम नवाबसे महाराष्ट्रका विवाद बढ़ा। उसी समयसे यहां कि नवाबोंकी अमता घट चली। १७५० ई०को कदपाके नवाब कर्णाटिकके युद्धकाण्डमें लित थे। दूसरे वर्ष उन्होंने निजाम मुल्कपुर जङ्ग के विरुद्ध पड़वन्त किया। उसीसे लुकरहीपक्षी नामक गिरिपथपर निजाम मारे गये। १७५७ ई०को महाराष्ट्रोंने कदपा नगर जीत लिया था। किन्तु उसी समय निजामकी फौज कदपाभिमुख अचसर हीनेसे महाराष्ट्र कुछ कर न सके।

महिसुरमें हैदर अली प्रबल पड़ गये थे। १७६८ ई०को उन्होंने अंगरेजोंके साथ युद्ध रोक कदपा जीतनेका प्रबन्ध बांधा। किन्तु हैदर अलीने समझा, कि कदपा जीतना बहुत मज्द न था। इसीसे उन्होंने गुप्त भावमें निजामके साथ सन्धि की। उक्त सन्धिके अनुसार ठहर गया—दोनों मिलकर कर-मण्डल उपकूल जीतें और जयलब्ध लनपदादिके मध्य हैदर अली कदपा ले लें। अनेकवार युद्ध हुआ था। १७८२ ई०को हैदर अली मर गये। कदपा-वाले अन्तिम नवाबके किसी वंशधरने सिंहासन पानिका दावा किया था। कितनी ही अंगरेजों फौज उसको साहाय्य देने पर राजी हुई। किन्तु समय दसके सामने आते ही सुसलमानोंने अंगरेजों विप्राद्विर्षीको अग्रायद्वयमें मार डाला। इसके बाद कदपामें कुछ दिन तक कोई आगड़ा न उठा। १७८०

ई०को निजामने यह स्थान उधार करनेकी सविशेष चेष्टा लगायी थी।

१८२२ ई०के सन्धिपत्रानुसार टीपू सुसलमाने समस्त कदपा जिन्ना निजामको सौंप दिया। फिर निजामने रैमण्ड साहबको लायगिरि प्रदान किया। उसके बाद कई वर्षतक पल्लिगारोंने कदपा दुर्ग अधिकार करनेको अपनेक चेष्टा लगायी थी। १७८८ ई०में निजामने अपना देय धन परिशोधके लिये अंगरेजोंको कदपा दे डाला। १८०० ई०से यह जिन्ना अंगरेजोंके हाथ आया। इन्ही समय कदपाका पारवर्तनीय स्थान पल्लिगारके अधिकारमें रहा। यह मध्य मध्य बढ़ा उत्पन्न उठाते थे। दस्युवृत्ति द्वारा उनको एक प्रकार जीविका चलते रहीं। प्रथम अंगरेज उन्हें दबा न सके थे। किन्तु क्रमशः नाना प्रकार उपाय अवलम्बन करने पर पल्लिगारोंमें वधना मानी। उनके वंशधर आज भी कदपाके नामा स्थानोंमें भीरुनी जमीन् पाये हैं। १८१२ ई०को किसी समझदपर यहां कि पठानों और अंगरेजोंसे झगड़ा लग गया था। उससे यहां कि समस्त सुसलमानोंने विद्रोही हो सब-कलकूर भेकडीनडको मार डाला। इस घटनाके चार वर्ष पीछे यहां कि किसी पल्लिगारने गवरमनेष्टमें मनोमन वृत्ति न पानेपर कोई दो हजार सांग संघर्ष कर अंगरेजोंके साथ युद्ध छिड़ा था। कईवार युद्ध होनेपर विद्रोहियोंमें कोई हत तथा कोई पाहत हुआ और कोई भाग गया। उस समयसे कदपामें शान्ति स्थापित हुई।

यहां हिन्दू और सुसलमान रहते हैं। हिन्दुओंमें ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है। प्रायः सकल ब्राह्मण श्रेय और क्षत्रिय वेत्ताव हैं। शिवा इगके पनदी, येरकल, चेचुवर और सुगता प्रवृत्ति कई प्रकारको दूसरी जातियां भी बसती हैं।

कदपा जिसके प्रधान नगर यह है—कदपा, बदतीक, मोहतुर, लम्पलमदगु, कदिगे, दममवको, मुलियेन्दल, रायचोट, शैन्सी और बयलपद।

२ कदपा नगर। यह नगर अक्षा० १४° २८' ४८" उ० और देशा० ८८° ५१' ४०" पू० पर अवस्थित है।

कदपा शब्द संज्ञात कृपा शब्दका अपभ्रंश है।  
कोई कहता—गदप शब्दसे 'कदपा' बना है। संज्ञा  
गदप शब्दका अर्थ 'दार' है। तिरुपती जैनिका पद्य  
रचनेमें ही गदप (कहपा) नाम पड़ा है।

विजयनगरवासी राजाओंके समय कदपाकी अच्छी सफाई हुई। उस समयका प्राचीन नगर पथ देखनेमें नहीं आता। उसीके पार्श्वपर कदपा नगर स्थापित हुआ है। ई० १८वें शताब्दीके प्रारम्भमें कदपाके निवासीने यहाँ स्वतन्त्र राजधानी डाली थी।

कदव—महिसर-राज्यके सुमकुर जिलेकी एक तहसील। इसकी भूमिका परिमाण ४८६ वर्गमील है। प्रधान नदी शिमगा उत्तरपूर्वसे दक्षिणमुख बहती है। कदव घोर गन्धि नामक दोनों खनोपर इसी नदीके गर्भमें दो जूद विद्यमान हैं। इस जिलेका सदर मुकाम गव्यो है। उसमें पदाक्षत घोर याना मौजद है।

इस जिलेमें दबीघाटेके निकट एक प्रकारका खनिज पदार्थ मिलता है। अंगरेजीमें उसे हारन-ब्लेंड (Horn-blend) कहते हैं। यह धातु काचकी शलाका-जैसा लम्बा और ठालू रहता है। इसके तीन रङ्ग हैं—लज्ज, हरित और श्वेत। अंगरेजीमें लज्जवर्णको हारन-ब्लेंड (Horn-blend), हरितवर्णको आक्टिनोलाइट (Actinolite) और श्वेतवर्णको ट्रिमोलाइट (Tremolite) कहते हैं। इस पदार्थमें मैग्नेशियम, लौह और सोडिका अंश विद्यमान है।

इस जिलेके कदंब ग्राममें श्रीमैथिल्य भाषाधर्माका एक सपनिवेश है। इसे लाग चनेक दिनाका प्राचीन ग्राम कहतें हैं। ग्राममें एक हृहत् सरोवर विद्यमान है। शिमशा नदीमें बांध डालनेसे ही उक्त सरोवर निकला है। प्रवाद है—रामचन्द्र नन्दा जोतने पोछे प्रत्यावर्तनके समय यह बांध बना गये थे।

कदभ्यास (सं० पु०) कुत्सितोऽभ्यासः, क्षमधा० ।  
मन्द अभ्यासः, सुरो पादत ।

कदम ( हि० पु० ) १ कदम्यवृक्ष, एक पेड़ । कदम रसो ।  
२ छणवियेष, एक घास ।

कदम. (अ० पु०) १ पद, पैर। २ फसांग, डग,

पेका फुलता। ३ धूलि या पट्टपर पड़ित पदचिह्न,  
पेरका मिशान्। ४, पञ्चगतिविधिये, घोड़ेको एक  
चाल। इसमें घोड़ा खुद अमकर पैर छठातां पोर  
सवार बड़ा पासम पाता है। न तो उसका शरीर  
हिलता और न कोई धक्का हो लगता है। गहरे  
पहन घोड़ेको कदम ही सिखाते हैं। लगाम कटो  
न रखनेसे वह चल बिगड़ जाती है।

कदमचा (फा० पु०) १ पदार्थेण वारनेका स्यान,  
पैर रखनेकी जगह । २ खुट्टी ।

कदमवाज, (ःप० पु०) कदम चलनेवाला घोड़ा ।

कदमा ( हिं० पु० ) मिष्ट खाद्यद्रव्यविशेष, एक मिठाई। यह कदम्बके पुष्प-जैसा बनता है। यङ्ग-देशके राजा अश्वमेध-कदमाका प्रचुर व्यवहार है।

कदम्ब ( सं० पु० ) कदि-कम्बच् । लकड़िहकडिओ  
 ३५५ । चम् ३५५ । १ लुचविशेष, कदमका । पेड़ ।  
 (Anthocephalus Cadamba) इसका संस्कृत पर्याय—  
 नीप, म्रियक, हरिम्रिय, कादम्ब, पदपदेष्ट, प्रांठपेला,  
 हलिप्रिय, हन्तपुष्प, सुरभि, कलामप्रिय, कादम्बर्य,  
 सोधुपुष्प, महाश्व पीर कर्णपूरक है । इसका हिन्दी  
 एवं बंगला में कदम, कर्णाटीमें कदवेडु, तामिलमें  
 वेक्षकदम्ब, तेलगुमें कोदम्ब, उडिया, कदिमोमा या  
 कदपचेत कहते हैं ।

यह सुन्दर वृक्ष भारतवर्ष, मध्य और सिंधुनदी  
उत्पन्न होता है। ऊँचाई ७० से ८० फीट तक रहती  
है। कदम्ब बहुत गोघ्न बढ़ता है। पक्षी दो-तीन  
वर्ष तक सालमें यह काँटे १० फीट ऊँचा पड़ता है।  
किन्तु १०-१२ वर्ष बाद-बाद घटने लगती है।  
कदम्ब सदावहार पेड़ है। पत्र मधुवेक पत्रों में मिलते,  
किन्तु कुछ सुद्ध और भासुर लगते हैं। कदम्ब वर्षा  
ऋतुमें फूलता है। पुष्प गान और पीतवर्ण होते  
हैं। किन्तु पीत किरण भङ्ग जानेसे यही पुष्प गोल  
एवं हरितवर्ण फल बन जाते हैं। फल पकनेपर  
साल निकलते हैं। लोग उन्हें पचार या चटनौमें  
व्यवहार करते हैं। फलोंका छाल खटमिष्टा लगता  
है। कभी-कभी कदम्बकी पत्ती मधेयियोंको चिल्लायी  
जाती है। काष्ठ, मृदु एवं खेतवर्ष रहता, किन्तु

उसमें कुछ कुछ पीतत्व भक्तकता है। उससे कटार और दारजिलिङ्गमें चायके सन्दूक बनते हैं। कदम्बसे कड़ियों और बरगोंका भी काम निकलता है। कारण इसका काष्ठ सुलभ और सज्ज रहता है। फिर कदम्बके काष्ठसे मौका और नागाविष उप-योगी वस्तु बनते हैं।

भावप्रकाशके मतसे यह मधुर, कषाय एवं लवण-रस, शुष्क, विरेचक, विटथकारौ, रुच और कफ, स्तन्य तथा वायुवर्धक है।

नीप, महाकदम्ब, धाराकदम्ब, धूलिकदम्ब, कद-  
म्बक प्रभृति कदम्बके विविध भेद हैं।

कदम्ब फल शोण्यको बहुत प्रिय है। इसीसे भूलनेमें कदम्बके पुष्प व्यवहृत होते हैं। कदम्बके वृक्षसे एक प्रकारका मद्य निकलता, जिसका नाम कादम्बरी पड़ता है।

विष्णुपुराणमें लिखा है—बलरामको गोपगोपि-  
योंके साथ घूमते देख वरुणने वारुणी (शराव)से कहा था—हे मदिरा! तुम जिनके अभिलाषका प्राप्त हो, उन्हीं अनन्तदेवके उपभोगार्थ गमन करो। वरुणको बात सुन वारुणी वृन्दावनोत्पल कदम्ब वृक्षके कोटरमें पा पड़्यों। बलरामको घूमते-घूमते उत्तम मदिराका गन्ध मिठा था। इससे उनका पूर्वानुराग जाग उठा। कदम्ब वृक्षसे विगलित मद्य देख वह परम आनन्दित हुये थे। फिर गोपगोपियोंने गान करना आरम्भ किया। बलरामने उनके साथ साथ मदिरा पी।

कादम्बरी मद्यकी उत्पत्तिके सम्बन्धपर हरिवंशमें इसप्रकार लिखा है—किसी दिन बलराम एकाकी शैलगिखरपर घूमते-घूमते एक प्रफुल्ल कदम्बतकको छायामें बैठ गये। फिर एकष्णात् मदगन्धयुक्त वायु चलने लगा। वायुवय मदगन्ध उनके नासाविवरमें प्रविष्ट होने लगे रातको मद्यपान करनेसे प्रभातके समय सुख-सुखनेकी भांति मदपिपासाका वेग बढ़ा। वह कदम्ब वृक्षकी ओर देखने लगे। वर्षाका जल उस प्रफुल्ल कदम्बके कोटरमें पड़ मद्य बन गया था। बलराम पत्यन्त लप्साकुक्ष हो वह मदवारि

पुनः पुनः पान करने लगे। उस वारिपानसे बलराम मत्त हो गये। शरीर विधलित पड़ा था। उनका आरदोय सुषमगो रूपाय चक्षुष मोहनसे घूमने लगा। उस अमृतवत् देवानन्द-विधायिनी वाहयोहा नाम कदम्बके कोटरमें उत्पन्न होनेसे हो कादम्बरी पड़ा है।

“कदम्बकोटरे जाता मत्वा कादम्बरीति सा।” (हरिवंश ६६ च०)

२ सर्वपल्लव, सरसाका पेड़। ३ देवताङ्गुल। ४ मासिक, शहद। ५ जगत्, दुनिया।

“ह वय भीम निभे रात्रि नृपे विशद्वल्लव नरमः के पुनर वासा।” (रुवि)

(स्रो०) ६ समूह, गुच्छ।

कादम्ब (कादम्ब)—दाक्षिणात्यकी एक प्राचीन पराक्रान्त जाति। किसी समय इस जातिके लोग दक्षिण-भारतमें अभिषय प्रबल हो गये थे। उस समय तांजी नदीके दक्षिणमें गोवराष्ट्र (गोवा) पर्यन्त सकल देश कदम्ब राजाओंके अधिकारमें रहा।

दाक्षिणात्यका इतिहास और गितानिष्ठ पत्रनेसे कदम्बोंका जितना हो उतास ज्ञात होता है। किन्तु इस बातका आज भी कोई ठिकाना नहीं—कदम्ब दक्षिणभारतके प्रादिम निवासी हैं या नहीं। पायें हैं अथवा अनार्य और किस सम्प्रदायका मानते हैं। किसी-किसी जातिरचयिद्के मतसे यह दाक्षिणात्यके प्रादिमनिवासी हैं। वर्तमान कुछसाहि नामसे इनका बड़ा संस्पर्ध लगा है। किन्तु विवेचना करनेसे कुछम्ब खलन्ध्र अनार्य जातिके लोग समझ पड़ने हैं। इसका कुछ भी निश्चय या प्रमाणादि नहीं मिलता—पराक्रान्त कदम्बोंके साथ उनका कोई संघर्ष लगता है। फिर कदम्बोंका उत्तर भारतके प्राचीन प्रायोंकी शाखा भी कह नहीं सकते। किन्तु किसी समय सत्त्वताके बन इन लोगोंका प्रायोंसे समान आसन अधिकार करना सच है।

कदम्ब जातिके सकल पूर्वपुरुष ग्रैव रहे, यह अपर देवताका प्राधान्य मानते न थे। इसीसे पुराणकारोंने कदम्बोंको पशुर कहा है।

स्कन्दपुराणके तातोषाखण्डमें किसी कदम्ब राजाका पशुर नामसे उल्लेख है। उन पशुर-राजका निरव

मकल ही पक्ष्यामिं उमका गोलमाव रहता है। ऐसे ही किसी वस्तु वा विषयका एक भाव बना रहनेसे 'कदम्बगोलकन्याय' समझा जाता है।

कदम्बद (मं० पु०) कदम्बदो घलघे क। सर्पय, सरमो।

कदम्बनियाम (मं० पु०) कदम्बका शेटक, कदम्बका मत।

कदम्बपुष्प (मं० पु०) १ हरिद्रु वृक्ष, दारुहन्तदोका पेड़। (स्त्री०) २ कदम्बकुसुम, कदमका फूल।

कदम्बपुष्पगन्ध (सं० पु०) कलमगन्धि, एकप्रकारका घान।

कदम्बपुष्पा (सं० स्त्री०) कदम्बस्त्रेव पुष्पमस्यास्ति, कदम्बपुष्प भग्नं चादित्वात् भव-टाप्। सुपिङ्गितिका वृक्ष, मुण्डोका पेड़।

कदम्बपुष्पिका, कदम्बपुष्पी देखो।

कदम्बपुष्पा (सं० स्त्री०) कदम्बपुष्पमिव पुष्पमस्याः, कदम्बपुष्प-होप्। मन्त्राश्रावणिका, गोरक्षमुण्डो।

कदम्बवादी (सं० पु०) कदम्ब इति वादः संप्रापत्यस्य, कदम्बवाद-णिनि। गोप जातीय एक कदम्ब।

"कदम्बवादिना गीताम् हृत्वा कण्ठकितिरिव।

समनामो भागवान् कदम्बकदम्बकैः।" (काश्याख्य)

कदम्बवायु (सं० पु०) सुगन्धवायु, खुशबूदार हवा। कदम्बा, कदम्बी देखो।

कदम्बान्न, कदम्बवायु देखो।

कदम्बिका (सं० स्त्री०) कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़।

कदम्बा (सं० स्त्री०) कदम्ब-होप्। देवदाकी मत्ता। देवदाओ देखो।

कदर (मं० स्त्री०) कं जलं दृणाति दारयति नाग-यति इत्यर्थः, कदं चच्। १ पायसविशेष, जमा हुआ दूध। २ सुदुर्गन्धविशेष, टीकी, गोखरू। कदर एवं कण्टक प्रभृति द्वारा पदतन्त्रमि चत पङ्केतपर कुपित वायु पित्त, कफ, भेद तथा रक्तको दूषित बना वेदना और स्त्रावयुक्त बेरकी गुठली-जैसी जो गांठ उठता, वही भाग कदर कहा जाता है।

विनिर्मा—पद्मा द्वारा कदरको निकाल तप्त तैल तथा चामुने छल्ले स्नान जला देना चाहिये।

(पु०) १ श्वेतश्वदिर, सफेद घेर। इसका संस्कार पर्याय—सोमवल्क, मन्त्रमन्त्र, खदिरोपम, श्वेतसार, खदिर और सोमवल्कल है। भावप्रकाशके मतसे यह विषद, वर्णके लिये हितकर और मुख-रोग, कफ तथा रक्तदोषविनाशक है। ४ वर्षुरक वृक्ष, वयूतका पेड़। ५ ककच, पारा। ६ चण्डुश, चाकुस।

कदर (सं० स्त्री०) १ परिमाण, मेकदार। २ सत्कार, इज्जत, बड़ाई। ३ हिन्दुके एक सुसलमान कवि। इन्होंने अच्छी अच्छी ठुमरियाँ बनायी हैं।

कदरई, कदरई देखो।

कदरज (हिं० पु०) १ पापोविशेष, एक गुनहगार। (वि०) २ कदर्य, कष्टूस।

कदरदान् (फा० वि०) गुणग्राहक, इज्जत करनी-वाला, जो बड़ाईको समझता हो।

कदरदानो (फा० स्त्री०) गुणग्राहकता, कदर कर-नीका काम।

कदरमस (हिं० स्त्री०) ताड़नादि, मारपोट, लड़ाई भगड़ा।

कदरा (सं० स्त्री०) कदर देखो।

कदराई (हिं० स्त्री०) भावता, कायरो, भाग जानेकी पादत।

कदरामां (हिं० स्त्री०) भयभीत जाना, खोफ खाना, डर जाना।

कदरा (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक बिड़िया। इसका आकार-प्रकार सेनासे मिलता है।

कदर्य (सं० पु०) कुत्सितोदर्यः, काः कदादेयः।

१ कुत्सित धनं, खराब धन। २ पदार्थ, चीज। (त्रि०) ३ कुत्सित धन्यकारो, धैर्यमान, वैफावदा।

कदर्यन (सं० स्त्री०) कु-पय-शुट्। वेदना, व्यथा, तकलीफ।

कदयमा (सं० स्त्री०) कदर्यन-टाप्। विडम्बना, मुराई।

कदर्यित (सं० त्रि०) कु-पय-पिच्-ल। १ दूषित, बिगड़ा हुआ। २ विडम्बित, मुरा बनाया हुआ।

३ घृणित, नफरत किया हुआ।

कदर्वीकृत (सं० वि०) पदकदर्यं कदर्यं करोति,

कदर्य-दि-क-क-त । १ मन्दीकत, विगाड़ा हुआ ।  
२ विकलाकृत, घेचने किया हुआ ।

कदर्य (सं० लि०) कुत्सितोऽयं स्वामी, कुगतीति समासः । १ सुद, कमीना, छोटा । २ क्षपण, कछुस ।  
स्मृतिग्रन्थके मतमें जो स्वामी व्यक्ति थाका, धर्मकार्य और स्त्रीपुत्र प्रभृति की कष्ट दे धनका ढेर लगाता, वही कदर्य कहाता है । ३ पयाछ, नागवार, बुरा ।  
कदर्यता (सं० स्त्री०) १ लोभ, कछूसो । २ सुद्रता, कमीनापन । ३ बुराई ।

कदर्यभाव (सं० पु०) कदर्यस्य भावः, इत्यम् ।  
१ कुत्सित भाव, बुरी हालत । २ पक्षील भाव, फोड़म बातचीत ।

कदल (सं० पु०) कद ह्यादित्वात् कलच् । १ कदली-  
वृक्ष, कैलाका पेड़ । २ पृथ्विपर्णी । ३ शास्त्रमौलव, मेसरका पेड़ । ४ द्विविधा ।

कदलक (सं० पु०) कदल स्वार्थे कन् । कदली-  
वृक्ष, कैलाका पेड़ ।

कदला (सं० स्त्री०) कदल-टाप । १ कदलीवृक्ष,  
कैलाका पेड़ । २ पृथ्विपर्णी ।

कदलिका, कदली देखो ।

कदलो (सं० स्त्री०) कदल गीरादित्वात् डोप् ।

विगीरादिबन्ध । वा ५।१।१ । प्रोपधिविशेष, कैला । (Musa sapientum) यह उष्णकटिबन्ध प्रदेशमें होनेवाला एकप्रकारका मिष्ट फल है । सुगन्धद्रव्यकी चर्चित भाषामें इसे कैला कहते हैं । इसका संस्कृत पर्याय—  
वारण-बुसा, रश्मा, मोचा, पंचमत्फलता, कदन, काठन, वारणबुषा, वारबुषा, सुफना, सुकुमार, सुसत्फलता, सुच्छफलता, इन्द्रियधारी, सुच्छदशिका, निःशारा, राजिटा, वास्तकमिया, लहलहा, मानुफला, वनलक्ष्मी, कदलक, मोचक, रोचक, नोचक, वारण-  
वृक्षभा और चर्मवृक्षी है । उक्त सकल नामोंकी मार्थकता यथास्थान विवृत होगी ।

भारतवर्ष ही कदलोका आदि वासस्थान है । इसलिये यह इस देशके जना कार्योमें व्यवहृत होती है । इसको बराबर भावग्रहीय फल दूसरा नहीं । कदली उत्पन्न भी बहुत होती है । वृत्सरके सकल

ही काल इसमें फल लगता है । फिर भी कदलो बीस कालकी ही अधिक उपजती और फलमें विविध कोमलता एवं मधुरता रहती है ।

कदलीका वृद्धिवल—इसकी वृद्धितत्त्ववेत्ता कोमल-  
काण्ड वृक्षोंकी श्रेणीमें गिनते हैं । जिसके काण्ड पर्याप्त तनेमें काठका भाग पक्ष पाता, वही वृक्ष कोमलकाण्ड कहाता है । किन्तु वाम्बविक कदलोमें कोई काण्ड नहीं रहता । जो काण्ड मान लिया जाता, वह पत्रका ग्रेप भाग पर्याप्त काण्ड-  
कोप देखाता है । हिन्दीमें कैलाका वकला कहाने-  
वाला पत्र उभका समष्टिमात्र है । कदलीवृक्षमें पिण्डमूल (roots, stalks) होता है । इसी पिण्ड-  
मूलसे पत्र निकलते हैं । पिण्डमूलके मध्यस्थलसे एक सरल गोलाकार श्वेतवर्ण मज्जा (Pith) उत्पन्न होती है । इसको चारों ओर स्तर-स्तरमें कोप शिप काण्डकी भांति प्राकार धारण करते हैं । कदलीके कोमलकाण्ड कहानेका यहो कारण है । काल जानेसे उक्त मज्जा पुष्पदण्डमें परिणत हो जाती है । जब नूतन पत्र निकलता, तब यह मूलसे उपज और मज्जाके पार्श्वपर लटक ठाम खंड-जैसा बहुत लगता और पत्रकी कसबे बाहर हो पत्र दिया करता है । कदलोके पत्रका पंच पत्रक विभूत होता है । एक-एक पत्र १।८ फीट दीर्घ और २ फीट विस्तृत गपता है । पत्रको मध्य पर्यायाने बिनारे तक एत नखी-खन्वी सरल गिरा पड़ती है । इन सरल गिरावोंके मध्य पत्रव्य-पत्रके जानकी भांति सूक्ष्म विन्यास नहीं लगता । घुतरां घोड़ा प्रवन वायु खगने ही यह गिरा फट जाता है । कदलो वृक्षका पत्र-  
भाग, हलभाग और काण्डकोय समस्त ही पंचविगिष्ट रहता है । मज्जा बहुत कोमल होती है । यह केवल पक्षी-पक्षी कुछ रक्षाधार गिरावोंका समष्टिमात्र है । मज्जाका दण्ड हो बढ़ कर पुष्पदण्ड बन जाता है । कैलाके फूलकी मोचा कहते हैं । मोचा जानेसे पहले बदलीके स्तम्भदेशसे एक 'पसिकनख' निक्षत्ता, जिसका नाम पत्तेका मोचा पड़ता है । यत्नेमने मोचेके भीतर ही मोचा रहता है । मोचा पुट

घोनेपर पत्तेके मोचिका तम फटता और मोचा मोचिकी और फटकर नगता है। नारिकेल, तांग, सुपारी, खजूर प्रभृति वृक्षोंमें भी पत्तेका मोचा रहता है। मोचा फटकी हचके स्तम्भसे ऊर्ध्वमुख निकल गेपकी कुछ बटनेपर निम्नमुख भुक्त पड़ता है। यह देखनेमें कोणाकार होता है। नव्याईं प्रायः १ फुट और मध्यस्थकी चौड़ाई कोई ६ इंच रहती है। एक मोचेमें घनेक विभाग होते हैं। प्रति विभागमें दो बार मुकुलपुष्प चर्मवत् पौष्पिक पत्रावर्तने आहत रहते हैं। प्रत्येक सारमें ८ या १० पुष्प पाते हैं। प्रत्येक पुष्पमें फल लगता है। पुष्पोंके मध्य पुं पुष्प (Male-flowers) निम्नस्थेकी और स्त्रीपुष्प वा एर्मफ्रोडाय्ट पुष्प (Female-flowers or Hermaphrodite flowers) ऊर्ध्व स्थितिमें रहते हैं। प्रत्येक भागके पुष्प लंबी-लंबी बढ़ते, लंबे लंबे उनके आवरणके पौष्पिक पत्रावर्तन सतत पड़ते हैं। जड़की धोरसे पुष्प फलमें परिपत होते हैं। प्रत्येक पौष्पिक पत्रावर्तने ८ से १० तक फल लगते हैं। एक एक फलसमुच्चयकी द्वितीमें 'गहर' कहते हैं। पौष्पिक पत्रावर्तने जितने पुष्प लगते, उतने फल हो नहीं सकते। एक हलमें एक ही समय एकसे अधिक गहर नहीं आती। गहर काट लेनेसे कुछ दिन पीछे कदली हल छल जाती है। अत्यन्त पुरातन पड़ने या गहर कीड़ मर मिटनेपर हलके पिण्डमूलमें ६ से ८ तक किले फटते हैं।

कदली घनेक प्रकारकी होती है। सबमें बीज नहीं रहता। जङ्गली और चट्टान प्रदेशकी एक जातीय कदलीमें बीज होता है। इसी बीजसे हल उपजता है। किसी किसी अन्य जातीय कदलीमें रहते भी बीजसे कोपल नहीं फूटती। पार्वत्य प्रदेशमें कदली हल प्रतिफल होता है। वहां यह बढ़ नहीं सकती। क्योंकि अन्धान्य हलकी प्रतियोगितामें कदली हलकी पार्वत्यप्रदेशकी कठिन श्रुतिकासे इस चीज अपनी पुष्टिका साधन करना असम्भव देख पड़ता है। इसीसे इसमें किले नहीं फटते। किले न फटनेसे ही पार्वत्य कदलीमें बीज

रहता है। फिर बीज मोड़तना पाता, कि कांचपर बिस्कुल शय्य नहीं देखाता। बीजोपर पतनी मसालेकी भांति कुछ कोमल चिपचिपा शय्य रहता है। परमेश्वरकी पाश्र्वयं सहिमा है। पत्ती लहू शय्य स्थानिके लिये बड़ी दूरसे पा पलाफल से जाते हैं। फिर सखन स्थानसे इसी उपाय द्वारा बीज लाये जानेपर कदलीका हल उत्पन्न होता है।

अन्धान्य स्थानोंमें कदली लगायी जाती है। लगी हुई कदलीके फलमें बीज पड़ने नहीं पाता। फलकी उत्तरात्तर उन्नति होती रहती है। हलमें किले फटने लगता और उसका उत्पादक बल बढता है। यत्नपूर्वक लगाये जानेसे कदलीके अच्छे अच्छे फलोंमें पाजकल बिस्कुल बीज नहीं आता। इनकी बीजोत्पादनी शक्ति सम्पूर्ण रूपसे बिगड़ गयी है। किन्तु किसी किसी स्थानमें, जलवायुके प्रभावसे लगाये जाते भी सहज यह शक्तिरहित नहीं होते। दो-एक बार लगाये जानेपर फलमें बीज नहीं पा सकता, किन्तु तीसरी बार निकल पड़ता है। यह बीजका जलवायु ऐसा ही है। बङ्गालमें 'कांठाली' केसा बहुत दिनसे होता है। किन्तु पाज भी उसकी बीजोत्पादनी शक्ति बिस्कुल नहीं बिगड़ी। अति अल्प दिनको भी उसमें बीज पड़ जाता है। इसलिये बङ्गालमें कांठाली केलेका भाड़ अधिक पुरातन होने न देना चाहिये। किले निकाल अन्य स्थानमें लगाना और केलेकी उन्नति पर जाना लोगोंका कर्तव्य है। लगाये जाने और अच्छी भूमि पानेसे कांठाली केलेकी उन्नति मात्र होती है। किन्तु उसकी कुछ भी शक्ति नहीं बिगड़ती। चीन देशमें एक प्रकारकी कदली है। वह अति सुद्राकार और फल-विहीन रहती है।

कदली अति शीघ्र शीघ्र बढ़ती है। अच्छी भूमिमें इसे लगाने पर यह हल सहज ही देख पड़ती है। कदलीके कसे पत्रकी मध्यपत्र कहते हैं। जब वह एकबार बढ़ता, तब हलसे पत्रावर्तन एक धागा लगा कोई एक घण्टे अथवा करने पर देख पड़ता नापके धागेसे वह प्रायः १ इंच दीर्घ है।

प्रबल वायु कदली वृक्षको बड़ी क्षति पहुँचाता, विफल रहने पर अति अल्प वायुसे ही यह गिर जाता है। उस समय बांसकी तिकोनी खपाचें लगा वृक्षको बचाते हैं। बङ्गाल देशके केलमें एकप्रकारका कीड़ा लगा करता है। इस कीड़ेसे भी अति क्षति होती है। कीड़ा अगनेसे वृक्ष मर मिटता है।

कहाँ कहीं कदली मिलती और कैसे विभागकी श्रेणी चलती है? भारतवर्ष इसका आदि वासस्थान है। किन्तु यहाँ भी यह प्रायः प्रदेयकी अपेक्षा पूर्वप्रदेय और दक्षिणात्यमें ही अधिक होती है। पूर्वबङ्ग और दक्षिणात्यके मलबर उपकूलमें कदली बहुत लगायी जाती है।

बङ्गालमें रामरक्षा, अनुपान, मालभोग, अपरिमल्य, मर्त्यमान, चम्पक, चीनोचम्पा, कर्णाईवांसी, घोया, कालीबक, कांठासी प्रभृति कई जातिके केलें सर्वापेक्षा उत्कृष्ट रहते हैं। इनमें पहले चार पड़ली श्रेणी, दूसरे चार दूसरी श्रेणी और तीसरे तीन तीसरी श्रेणीके केलें हैं। मर्त्यमानकी चाटिम केला भी कहते हैं। इन सबमें बिलकुल बीज नहीं होता। कांठासी जातिके अन्यान्य फलोंमें भी बीज न रहते जिसका नाम शुद्ध कांठासी चलता, उसमें बहुत दिनों तक स्थानपर रहनेसे बीज पड़ने लगता है। सिवा इसके मदनौ, मदन्या, तुलसी, मनुषी, रङ्गवीर, पोड़ा रङ्गवीर प्रभृति कई जातिके केलोंसे किमी किसीमें अल्प बीज रहता, फिर किसी किसीमें बिलकुल देख नहीं पड़ता। बङ्गालमें बीज केला नामाविध होती है। इनमें यथेष्ट बीज रहते भी मिष्टता बढ़ जाती है। 'यथोदर'में 'दो' नामक एकप्रकारका बीज केला होता है। इसका सर्वतः बहुत उम्दा बनता है। कलकत्तेके निकटवर्ती स्थानोंमें 'डोगरे' नामका जो बीज केला उपजता, उसका फल पाया जा नहीं सकता, किन्तु मोचा बहुत सुखादुसगत है। मोचेके सिधे ही उसे लगाया करते हैं। 'सोया' नामक बीज केलाके रससे नामाकृत चतुरोग चारोग्य होता है। 'काँच' केला, 'कच्चा' केला, 'धनाजी' केला प्रभृति केला 'काँच' केलाकी जातिके हैं। इस

श्रेणीमें नाना आकारके केलें देख पड़ते हैं। यह पकनेपर सुमिष्ट लगता, किन्तु तरकारीमें ही अधिक चलता है। 'काँच' केलाको पंगरेजीमें 'मुसा-पाराडिसिका' (Musa-Paradisica) कहते हैं। 'कांठासी' केलीको कच्चा भी खाते हैं। इसका नाम 'ठूँठा' केला है। फिर 'कांठासी' जातिके केलीको 'ठूँठा' केला कह देते हैं। यह 'कांठासी' जातीय केला एक सतन्त्र श्रेणीका भी होता है।

संस्कृतमें भी कदलीके नाना भेद कहे हैं,—

“नायिकानां वलनचम्पकाया भेदाः कदला बहुभोजि वनिः।”

संस्कृतका मर्त्य एवं चम्पक केला ही बंगालमें मर्त्यमान वा चाटिम और चम्पा नामसे विख्यात है। कांठासीजाति कर्णाईवांसी केला कोई १ फुटसे भी ज्यादा लम्बा होता है। फिर 'कालीबक' बहुत मोटा रहता है। घोया कांठासीसे घृतकी भाँति सुगन्ध निकलता है। यह अल्प दुग्धमें डाल देनेसे मसुनकी तरह हुलता है।

कांठासी केला पकनेपर रङ्ग कुछ पोन्ना पड़ जाता और चाटिम पीताम आता है। किन्तु चाटिमके ऊपर फुटकीजेसे दागु उभरते हैं। चम्पा केला पकनेसे और पीतवर्ण होता है। कांठासी परिपुष्ट पड़ने पर कुछ चौपड़सा तथा टेढ़ा, चाटिम गोला एवं सीधा और चम्पा केला गोला तथा मोटा लगता है। लाल केलीको सिंदूरिया या चीना केला कहते हैं। मर्त्यमान और कांठासी केलीका उद्भिज्जगाश्लोख नाम 'मुसा सापियंटम' (Musa sapientum) है।

बङ्गालमें कांठासी जातिके केलीका मध्य कुछ कड़ा रहता है। फिर 'मर्त्यमान' जातिवालेका मध्य अधिक खोत एवं नवनीतवत् कामल और 'चम्पक' जातिवालेका रस चम्पकमयुक्त, सुगन्ध तथा फलके मध्य पीताम वर्ण होता है। 'कांठासी'के फलका छिलका मोटा और चम्पाका पतला पड़ता है। बङ्गाली मर्त्यमान केलीका ही अधिक पादर करते हैं। किन्तु इस देशके युरोपीय प्रवासी 'चम्पा' केलीको अच्छा समझते हैं। कांठासी और काँच केलीका व्यवहार अधिक है।



दाक्षिणात्यवासे हिन्दोगुप्त प्रदेशके पर्वत पौर वनमें साधारणतः जो कदमी मिलती, उसकी संज्ञा 'सुपर-रेकोम' मुसा सुपरबा (Musa Superba) चलती है। येास प्रदेशका केला सुगन्धविशिष्ट होता है। फिर महाँचम यह प्रचुर परिमाणमें उपजती है।

नेपालमें ज्ञानेवासे केलेकी 'नेपाली केला' (Musa nepalensis) कहते हैं।

मन्द्राजूम जितने प्रकारकी कदमी उपजती, उसमें 'रमकली' सर्वाधिक उत्तम रहती है। 'गण्डी' जातीय केलेका गन्ध बहुत कड़ा होता है। किन्तु मन्द्राजकी लोग इसीकी पक्ष्या समझते और पास छाल पकन पर बंधा करते हैं। 'पाका' बहुत लम्बा रहता, किन्तु पुष्ट होते ही झुक पड़ता है। इसका चरित्र वर्ष पकन पर भी नहीं बदलता। 'धेवेली' केला मीठा होता, किन्तु रंग ख़ाकी देता है। 'शेवेली' केला बहुत बड़ा लगता और लोहितवर्ण देख पड़ता है। मिठा इसके बच्चा, बंगला जमेई, घे, खेरवा, जेसेपासियान, पिदीमोया प्रभृति कई दूसरी श्रेणीके भी केले मिलते हैं।

मल्यमान केला चट्टाम और तेनासरिम प्रदेशमें बहुत परिमाणसे उत्पन्न होता है। उक्त दोनों प्रदेशके दक्षिण मल्यमान उपसागर है। कितने ही लोगोंके कथनानुसार इसी उपसागरसे प्रथम भारतमें उक्त कदमी चानेपर 'मल्यमान' नाम पड़ा है। किन्तु हम ऐसा नहीं मानते। 'मल्य' नामक कदमी ही 'मल्यमान' केला कहाती है।

बम्बईमें भी प्रकारकी कदमी होती है—बसरई, सुतेनी, तांबड़ी, रजनी, सोपुसडी, सोनकेली, बसकेली, करखनी और भरखंडी। इनमें तांबड़ी केला सास रहता है।

वृद्धदेशमें पीत एवं श्वर्णवर्ण नानाप्रकार-कदमी देख पड़ती है।

मिंगापुर, मलय और भारतसागरीय दीपपुष्पमें प्रायः ८० प्रकारका मीलनोपयोगी केला उपजता है। इसमें बहुतसे हृदयाकार और सुगन्धविशिष्ट होते हैं। 'पिस्पाटिस्वाना' केला सास रहता है। इसे

यहाँके लोग 'तामाटे' या 'काकड़ा' कहा करते हैं। 'पिस्पा' सुसुत धवेक जातीय केलेके तलमें कुछ क्लिका बकभावसे इसकी चौप-जोसा निकल पड़ता है। 'पिस्पा राजा' को राजा केला कहते हैं। 'पिस्पा सुसु' दूधिया केला कहाता है। इस प्रकारके दूसरे केलेका नाम सोनाकेला है। येवल तीनों प्रकारके केले चतिसुन्दर, सुमिष्ट और सुगन्धविशिष्ट होते हैं।

यवदीपमें 'पिस्पा टण्डक' नामक एक केला उपजता है। इसकी सम्भार प्रायः २ फ़ीट होती है। हम समझते—बङ्गालमें इसीकी कन्दाईवासी कहते हैं।

यवदीपमें दूसरा भी एक केला होता है। उसके एक लघुमें एक ही फल जगता है। अन्यान्य लघुकी भांति उक्त फल मोचिके साथ काण्डसे नहीं निकलता। वह काण्डके भीतर ही पका करता है। सम्पूर्ण पका जानेसे काण्ड फट पड़ता है। वह इतना बड़ा रहता, कि एक फलसे ४ लोगोंका पेट भरी भांति भर सकता है। उक्त सक्ल केलावोंकी छोड़ यवदीपमें जो कांठाकी या मल्यमान केले उपजती, उनमें वेल उपजते हैं। इस श्रेणीके केलोंको उस देशमें 'पिस्पा बुट' कहते हैं।

फिलिपाइन दीपके पार्वत्य प्रदेशमें उपजनेवाला केला इतना बड़ा रहता, कि एक मनुष्यको उसे उठाकर ले चलनेमें बोझ मालूम पड़ता है।

मलय दीपकी साधारण कदमीका अंगरेजी यंत्रानिक नाम 'मुसा ग्लौका' (Musa glauca) है।

मारिशस दीपमें गुलाबी रंगका मिशनेवाला केला 'मुसा रोसेगिया' (Musa rosacea) कहाता है।

अफ़्रीका और पश्चिम भारतीय दीपपुष्पमें कांठाकी और मल्यमान केला ही लगाया जाता है।

पश्चिम भारतीय दीपमें एकप्रकार सुदाकार बैंगनी केला होता है। इसका गन्ध पति मनोहर रहता है। उस देशके बड़े पादमी इसी केलेका समधिक धादर करते हैं। इस जातिके केलेको अंगरेज़ 'फ़िग बाना' (Fig banana) कहते हैं। फिर इसी जातिका एकप्रकार सुदाकार केला भी होता है। निक-

श्रेणीके लोग उसका भी प्रति पादर किया करते हैं। अंगरेजीमें इसे 'फिग सुकरीयर' वा 'लेडी फिगर' (Fig sucrier or Lady finger) कहते हैं। लेडी फिगरका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम 'मुसा ओरियेंटल' (Musa orientum) और फिग बनामका 'मुसा मस्कुलाटा' (Musa musculata) है।

अमेरिकाके फ्लोरिडा प्रान्तका 'ओरेंडो' केला प्रति उत्तम होता है। यह उष्ण प्रान्तके सकल ही स्थानोंमें मिलता है। इसका पका होनेपर इसके लहसुने मनुष्य, पशु और पक्षी पर्यन्त उन्नत बन जाता है।

चीनदेशमें उपजनेवाली एक कदली खर्वाकार रहती है। अंगरेज इसे डार्फ प्लानटेन (Dwarf plantain) अर्थात् बोना केला कहते हैं। यह दो प्रकारका होता है—मुसा ओकसिनिया (Musa occinea) और मुसा नाना (Musa nana)। चीनका एक केला मुसा कावेण्डिश (Musa cavendishi) कहता है। वहां खर्वाकार दूसरा भी केला लगता है।

पाकिस्तानियाके प्रति सुन्दर केलेका नाम मुसा इनसेटा (Musa ensata) है।

एतद्भिन्न अन्यथा स्थानोंमें भी केला मिलता है। प्रधानतः उष्ण-प्रधान स्थानमें ही यह होता है। एशियाके पूर्व चीन एवं भारतीय द्वीपसुख और एशियम तुर्कीके अन्तर्गत यूफ्रेतिस् नदीतोर पर्यन्त समस्त देशमें केला मिलता है। अन्यथा अंगरेजी जो भूभाग पृथिवीके मध्यभागपर आता, वहां भी यह पाया जाता है। भारतमें हिमालयके शीतल प्रदेश पर केला देख पड़ता है। उष्ण पर्वतके पाददेश पर १०० उत्तर अक्षांश पर्यन्त यह अधिक उपजता है। फिर मध्य, कर्नाट और गुजरात प्रदेश भी इसकी उत्पत्तिसे वञ्चित नहीं। किन्तु उष्ण प्रदेशके केलों वीज-व्यतीत मध्य बहुत कम रहता है। समुद्रसे ७००० फीट ऊर्ध्वस्थान तक यह उपज सकता है। दक्षिण-अमेरिकामें आनकन ग्रेट केला लगाया जाता है। काराकास, गोयना, डोमिंगो, लामेबा, त्रिनिदाद प्रभृति स्थानोंमें बराबर कितनी ही भूमि-पर इसकी जगि होती है। अष्टम प्रदेशके वन

मध्य केलेका वृक्ष इतना अधिक उपजता, कि उसे देख विचित्र होना पड़ता है। यहां इसी ओर गयास नामक महिष-जातीय पशु एकप्रकार केलेका वृक्ष खा जीवन धारण कर सकते हैं। साधारणतः पार्वत्यप्रदेशका केला मुसा ओरनाटा (Musa ornata) अर्थात् पहाड़ी और वनका मुसा सुपर्बा (Musa superba) यानी जङ्गलो केला कहता है। अष्टम प्रदेशमें भी यह घासकी तरह अर्पणित होता है। अन्यथा स्थानोंमें खाली मैदान पड़ा रहनेसे केले दूर्वा, सुस्तक प्रभृति टप उपजता, वेशेसे अष्टमामके खाली मैदानमें पहले घासके साथ केला भी निकल पड़ता था। लगानमें जितने केले उखाड़ कर फेंक दिये जाते थे, उनको मंदा करना प्रसन्न है। आज-कल भी नये लगाये जानेवाले केलोंका ऐसा ही हाल होता है।

यूरोपके दक्षिण अंगरेजी केला हुआ करता है। किन्तु उसके उत्तर काश्मिरे मकान् या उष्णप्रदेशके व्यतीत खुले क्षेत्रमें यह नहीं उपजता। क्यूबा द्वीपमें कहीं कहीं केला होता है।

भिन्न भाषामें केलेका भिन्न नाम आता है। संस्कृत नाम पहले ही कहे जा चुके हैं। प्रतिपूर्वकास इसकी भारतमें मोचक कहते थे। मोचकका अर्थ 'मुस हुआ' है। अर्थात् प्रथमतः वृक्षके गर्भमें इसका जो फूल निकलता, वह एक पावरणोके मध्य रहता है। उसी पावरणोके फट जानेसे फूल आता है। फिर प्रत्येक फूल गुच्छावत् दूसरे पावरणके आहत रहता है। वह पावरण मुक्त होनेपर फल निकलता है। इसीसे फलको मोचक कहते हैं। शिक्पूजाके मन्त्रमें इस केलेका मोचा नाम देखते हैं—

“यन्मु आचार्यं नमः विद्याय नमः”।

कोई भी इस स्थानपर कदली, रत्ना वा अन्य नाम व्यवहार नहीं करता। कदलीका अर्थ लम्बमें दी पुटि पाना है। केलेका वृक्ष कुछ लम्बप्रमाण होता है। यह घरम भूमिमें मो चट्टी तरह उपजता है। अष्टमप्रदेशके अर्थ वा तनु रश्मिवासे द्रव्यका अर्थ निकलता है। केलेके वृक्षका तनु विषय विस्तार

है। बारबनुषा और बारबलभाका अर्थ इस्तिमिया है। सलतफसा शब्दसे वनसरमें एक वृक्षके एक ही बार फल देनेका अर्थ निकलता है। भावुफसाका अर्थ सुर्योत्थापप्रिया है। वनसरमी वनकी शोभा बढ़ानेवाले फलकी ओतका है। इससे वनमें भी वनारस वा प्रापधारण होता है। इस्तिमियापीवह फल कहता, जो इस्तिदमकी भांति सुगन्ध, दोष वृद्ध ईष्य वस्तु पाता है। वनसरतीका अर्थ वनकी भांति आवरणयुक्ता है। अन्योन्य अर्थ नाम पदनेसे समझ पड़ते हैं।

केलिकी चरबी भाषामें 'मोज' कहते हैं। यह संस्कृतके मोचा शब्दसे निकला है। लाटिन भाषाका मिचसा वा मुजा शब्द चरबी मोलने बना है। अंगरेजीमें बनाना वा ज्ञानटम कहते हैं। अंगरेजीका बनाना शब्द ग्रीक चरियाणा (Ariana) से उत्पन्न है। ग्रीक चरियाणाका अपर पर्याय कौराना (Ourana) रहा। ग्रीक चरियाणा सम्भवतः तैलही भाषाके अदिति शब्दसे निकला है।

कितने ही लोग ग्रीक कौराना शब्दको संस्कृतके बारबनुषा शब्दसे उत्पन्न समझते हैं। किन्तु यह बात ठीक नहीं। क्योंकि ग्रीकभाषामें भारतवर्षीय किन वीधोंका उल्लेख नग्रा, उनका देशीय नाम अधिकांश दक्षिणदेशीय भाषासे ही संयुक्त हुआ है।

भाषा प्रचलित शब्द है।

ज्ञानटम शब्द ग्रीक चर्याकार यियोफाउस वा मिनिसे शिष्टे पल नामक शब्दसे उत्पन्न है। पल वृक्ष और उसके फलकी वर्णना शिखकुल कदलीवृक्ष और कदलीफलसे मिलती है। फिर उन्होंने उसे हमारे अरबियोंका खाय भी बताया है। इसमें कोई सन्देह नहीं—'पल' संस्कृत फल वा तामिल 'वल' शब्दसे निकला है। कदलीको हिन्दीमें केला, बंगला-में केला, महाराष्ट्रीय भाषामें केला, तामिलमें वल वा वेला, तेलुगुमें चरित, सिंधीमें कड़िकाड़, ब्राह्मीमें नेपियान या चड्डिट्ट, बाङ्गालीभाषा में विपु, जापा-नीमें गड्डा और मलयभाषामें पिळा कहते हैं।

हरषोका चर्याक—भारतवर्षमें कब केले, मोचे और

ढासकी तरकारी बनती है। पका केला सीधा खानेमें आता है। भारतीयोंकी दृष्टिमें यह पति पवित्र द्रव्य है। पूजा, याद, विवाह प्रभृति मकर ही कार्योंमें केला व्यवहृत होता है। इस्तिमियामें दूसरा ग्राह्य खाना मना है। किन्तु कच्चा केला पकाकर सबमें भी खा सकते हैं। कदलीका पत्र भारतवर्षके सकल ही स्थलोंमें भोजनपात्रका कार्य देता है। अधिक सख्यक लोगोंकी खिस्तीनेमें पत्र व्यवहृत होता है। ब्राह्मणादि उच्च वर्णके लोग जिन निम्नश्रेणीवासीके कूयें जलकी हाथ नहीं लगाते, उन्हें कदलीके पत्रमें ही खिलाते हैं। मन्द्राल, लगाड़े और मसगर प्रदेशमें इसे पत्रके लिये ही अधिकतर लगाते और सकल श्रेणीके लोग उसीमें खाते हैं। पाश्च पाठ-शाला में तासपत्र पर लिखना सीख लेनेपर छात्र कदलीके पत्रपर लिखनेका अभ्यास छात्रते हैं। कदलीके पत्रपर हाथ बैठ जानसे कागजपर लिखना आरम्भ किया जाता है। इसका कथा पत्र (बीचका पत्ता) विलेखारकी जलूमपर ढांक देनेसे ज्वाला मिटती है। बीचका पत्ता काट सीधी और माखन लगा जलूमपर ४१५ दिन बंधा रखनेसे विलेखार अच्छा हो जाता है। पश्चिम भारतमें बीड़ी और सुहट केलेके सूखे पत्तेमें सपेट प्रसृत करते हैं। फिर कोई भी द्रव्य सपेटनेके लिये वहां केलेका पत्ता पत्ता व्यवहारमें आता है। चक्षुरोगपर केलेका कथा पत्ता बड़ा उपकार करता है। चक्षुरोगीमें कथे पत्तेसे घर हाते हैं। कलकत्तेके तंथोनी केलेके कथे पत्तेमें सपेट लगे-लगाये पान धेवते हैं। बङ्गालमें गरीब लोग केलेका पत्ता फूंक खाकर कपड़े धोते हैं। बहुमूलरोगपर कविराज मधायय, कदल्यादि-वृत्तमें इसकी डालका रस डालते हैं। यह छत वायु और पित्तके दोषको मिटाता है। कोल्हापुर जिलेमें इस वृक्षके रससे रक्तपात निवारण करते हैं। जामेका-में भी इसका रस इसी प्रकार व्यवहृत होता है। वहां वृक्षमें एक छोटा सगा रस निकाला जाता है। यवदोषमें एक प्रकार कदलीवृक्षके पत्रकी छनटो और मोम-केला लो पदार्थ जलता, यह पत्ती बनानेमें लगता

है। कदलीके हृद्यसे भी अनेक कार्य निकलते हैं। जहाँ एकाएक बाढ़ आती; वहाँ बड़े बड़े हृद्य काट और पास-पास बांध घड़नाई बनाई जाती है। इसे कैलेका बेटा कहते हैं। अफ्रीकाके अरब्य और भारतवर्षीय दाक्षिणात्यके लोग कदलीहृद्यपर लक्ष्य लगा तीर और तलवार चलाया सीखते हैं। बङ्गालमें पट्टीपूजा, विवाह और अधिवासादि महत्त्वपूर्ण पर एक डालका समूचा कैला खगता है। युद्ध-प्रदेशमें सत्यनारायणको कथा, लष्ठाएमी और राम-नवमीपर कैलेके स्थाप खड़े किये जाते हैं। बीचके कोमल पत्तोंकी भाँकी बनती है। सुसज्जमान भी घोड़ोंकी शीरीको चढ़ाते समय कैलेसे काम लेते हैं। वासन्ती और दुर्गापूजाके समय नवपत्रिकामें कैलेके किले व्यवहृत होते हैं। फिर भारतीयोंके शुभकर्ममें कैलेका किष्का मङ्गलचिह्नकी भाँति लगा करता है। उत्सव, पूजा और विवाहादिके समय हिन्दू द्वार तथा पथमें कैलेके हृद्य सजा देते हैं। हिन्दुओंके विवाहादि संस्कारपर कैलेकी भूमि बनती है। इसी स्थानपर संस्कारार्थ व्यक्तिका स्नानकार्य, चौरकर्म, चूड़ाकरण, कर्णवेध, वरण इत्यादि होता है। बम्बईकी पतिरता कामिनियाँ कदलीहृद्यको घन एवं पायुप्रद समझ पूजती हैं। आर्यमें इसका काण्डकोप अत्यन्त पाव-शुद्धता पाता है। इसके द्वारा आर्यीय नैवेद्य, लक्ष एवं फलप्रदानके लिये एकप्रकार नौका बनती है। पीप-संक्रान्तिकी बङ्गालकी सन्तानवती रमणियाँ कदलीके काण्डकोपकी नौका बनाती और मेढके फूलसे सजाती हैं। फिर उसमें प्रदीप जला पुत्र द्वारा नदी वां पुष्करणीके लक्षपर बहा देती हैं। यह व्रत भगवती भवानोके उद्देश्यसे सन्तानकी महत्त्वकामनाको किया जाता है।

कदलीहृद्यका समस्त अंश गवादिका खाद्य है। दुर्भिक्षके समय कदलीहृद्य नीचेसे ऊपरतक छोटा-छोटा काट पशुओंको खिलाया जाता है। यह पशु-वृत्तके लिये विशेष उपकारक है। कामेकाहोपमें गह्वर उत्पन्न होता है। सुतरां कदली ही वहाँके निप-त्रापीवाले अधिवासियोंका एकमात्र सुख साध है।

अमेरिकाके आदिम अधिवासी भी इसे प्रधान खाद्य समझ व्यवहार करते हैं। बम्बई प्रदेशमें आम, कदलहृद्य आदि फलोंका कूटन लगा पायपर एक-एक कदलीहृद्य रोपण कर दिया जाता है। इसके द्वारा अरब्यभारतमें खरतर रौद्रके पातपसे हरा-भरा हृद्य रचित रहता है। ग्रेपकी ६५ वत्सरके बाद जब अच्छा हृद्य स्वयं रौद्र सज्ज करनेकी समता पाता, तब कदलीहृद्य काट डाला जाता है। वहाँ सुपारीके क्षेत्रमें भी कदलीहृद्य खगता है। कारण, इसकी छायासे सुपारीकी कोपल भीतल रहती है। एक प्रकारके कैलेको सुखा डालते हैं। शालीनी नामक कैलेको पकनेपर एक सन्दूकमें टुकड़े-टुकड़े काट और घास-फूससे ढाँक ७५ दिन रख छोड़ते हैं। फिर उसकी हिलका उत्तार समुद्रतीर मत्स्यपर सुपाते हैं। सारे दिन रौद्रमें सुखा, सन्ध्यासमय लडा और छत लगा रातभर चटाई तथा कैलेके पत्तोंसे ढका छेरे रख देते हैं। इसीप्रकार सात दिन तक सबको बराबर रौद्र देखाया और सन्ध्याको लडा तथा घृत लगा चटाई एवं कैलेके पत्तोंसे रात भर ढकाया करते हैं। ७५ दिनमें कैला खूब सूख जाता है। यह खानेमें सुरा नहीं लगता। सूखा कैला प्रति वन-कारक और श्रेयनिवारक होता है। फिर गान फूस लानेपर भी यह बड़ा उपकार करता है। समुद्रको यात्रामें सुखा कैला विशेष व्यवहार्य है। बम्बईके रहनेवाले घरमें खानेकी पक्का कैला बाँसकी लुपावसे पतला पतला चौर धूपमें सुपाकर रख छोड़ते हैं। इससे जो सुरब्धता बनता, वह खानेमें बहुत पक्का लगता है। इसकैली कैलेको सुपा कूटपोस कर बम्बईवाले एकप्रकारका जिमांदा बनाते हैं। यह गिर, रोमी और उद्यप्रसूता कामिनोके लिये प्रति उपकारक एवं बसकारक खाद्य है। मारिशस, पश्चिम-भारतीय द्वीप और दक्षिण-अमेरिकामें भी ऐसा ही जिमांदा बनता है। मैक्सिको देशमें क्या कैला लुपाकर रखा नहीं जाता। इसको पके कैलेको मिर्च वा मण्डका सपाटये समझ पाते हैं। दक्षिण-अमेरिका, अफ्रीका और पश्चिम-भारतीय द्वीपमें

इसका एवं बनता है। फिर दक्षिण-अमेरिकामें लकड़-चुनेमें बिल्कुल तैयार होता है। अटिग नीनियामें कया केना प्रधान खाद्य गिना जाता है। इसके बाद इन्हीं अधिक लगाते हैं। हथके रससे चार या लवणयुक्त द्रव्य प्रसृत होता है। दक्षिण-अमेरिकामें पक्के केलेसे ताड़ीकी तरह एकप्रकार मध्य बनता, जो तोड़ा नहीं पड़ता। फिर पक्के फलका मध्य पत्तोंमें लगा सुखाते और छोटे-छोटे टुकड़े काटकर बनाते हैं। प्रयोजनके अनुसार एक टुकड़ा तोड़ पानोंमें घुसानेसे गर्वत तैयार हो जाता है। यह गर्वत मूत्र शीतल और अमापहारक रहता है। भारतवर्षमें इसके किलकेसे चमड़ेका काला रङ्ग बनाता है।

इसका गुण—पक्के केलेमें पनेक गुण हैं। यह बल-कारक, शीतल, पितास्रनाशक, शुष्कपाक, अजीर्ण-रोगमें अपघ्न, सद्य शुक्रादिवर्धक, ट्यूब्रा एवं अम-शारक, लावण्यवर्धक, कफकर, आमकर, दुर्गन्ध, खागेंमें ईदत्त कषायसंयुक्त और मधुररसविशिष्ट होता है। दधि, दुग्ध और घोलके साथ कदनी खानेसे पतिश्रय दुग्ध्य निरुक्त होती है। चम्पक वातपित्तको मिटाता और पति शीतलता लाता है।

मोचा—कफ, क्षामि, कुष्ठ, झोडा, वातपित्त, एवं स्वरनाशक, पन्निहृदिशर और उदरदोषनिवारक है। काण्ड बलको बढ़ाता और वातपित्तको दबाता है। चम्पक बहुमूलरोगमें उपकारप्रद है। सुमनमान् इन्हींमें केलेकी पित्त, वायु, रक्त और इद्रोगनाशक मानते हैं। डाक्टर ब्रे-केयरके कथनानुसार यह शुक्ल-हृदिकर और मस्तिष्कदोषनाशक है। किन्तु मोचा दुग्ध्य होती है। इन्हींमें कदली-भोजन जनित दोषके लिये मधु, पादार्क और नियांस खानेकी बताते हैं। इसके कसे एरीको पावरपी चक्षुरोगमें उपकार करती है। इसके रससे बहुमूल रोगका कदल्याद्युत बनाता है।

इसका रस—कदलीमें फल, काण्ड, मोचा और पत्र-मीषाको छोड़ दूसरा भी एक सुन्दर प्रयोजनीय वस्तु उत्पन्न होता है। इसको केलेके पड़ेका रस सह

भक्त है। पायाव्य जोग अपने पञ्चवर्षमायसे यह मध्य प्राविष्कृत होनेपर बड़ी घोरता देखाते और कितने ही उन्हें इसके लिये घोर भी बताते हैं। किन्तु प्राचीन भारतवासी निश्चय यह विषय समझते और किसी-किसी कर्ममें इसे व्यवहार करते थे। संस्कृत नाम शंसमसूफला और मालाकरीका व्यवहार देखनेमें इस एकमात्र कयाका प्रमाण मिलता है। मानी पात्र भी केलेके सूतसे माला पिरोते, फूलोंके पत्ते नपेटते, जला-हृदोंके मद्य बाँधते और पावशक्ततानुसार दो-तीन घण्टे तक लगा रखो बट डालते हैं।

कदलीहृदके सूतसे कागज, रस्मो, प्रशति प्रसृत होता है। विदेशीय वणिक्कों द्वारा यह निष्पत्ति स्थित उपायमें बनाता है। केलेका सूत तैयार करनेको दो उपाय हैं—(१) हृदको जलमें सड़ा और (२) कलमें पिसाकर। प्रथम उपायसे सूत निकालनेको हृद काट क्षेत्रमें डाल देते और कुछ दिन सुखा लेते हैं। फिर शिपोक्त उपायसे हृदको काट कलमें पीसना पड़ता है। पिसाई और सड़ाई हो जानेसे हृदको मोडा तथा चुनैकी कलईके अलमें पका सूत कड़ा करते हैं। पकाते समय सूतसे पन्थान्य संग छूट जाता है। ६५ मनके एक बैलरसे एक ही दिनमें २१ मन सूत बन सकता है। सूत परिव्यार करनेकी पाँच बार कदली पकाना पड़ता है। २१ मन सूत तैयार करनेमें १ मन मोडा और १ मन चुनैको कलई डालते हैं। पकानेमें तरह तरहका सूत छांटकर निशालना पड़ता है। फोके रङ्गका सूत ६ घण्टे धानेमें परिव्यार होता है। किन्तु गहरा रंग रहते १८ घण्टेसे कम समय नहीं लगता। बैलरका विह सूतयन्त्रके सहारे जनके होजमें घोषा जाता है। फिर सूतको छायामें सुखाते हैं।

कदलीके काण्ड, पिटप, पत्र और चकल ही शंससे सूत निकलता है। काण्डकी पथिया गाढ़ाका सूत परिमाणमें अधिक पड़ता और अधिक मूल्यवान् भी ठहरता है। पत्रका सूत पति सूख रहता और सूद होनेसे शिवा कागज बनानेके दूसरे काममें नहीं लगता। १८६६ ई०को डाक्टर जेने इससे एकप्रकार

चिट्टो चिखनेका कागज बनाया, जो प्रति सुन्दर थावा। १८५१ ई० को छाकर इण्डरने महाप्रदर्शनीमें मन्द्राजसे केलेके सूतसे प्रस्तुत रखा, कागज, और कई तरहका नमूना भेजा था। उसमें एक कागज चांदीके वर्क-जैसा पतला तथा चिकना और दूसरा पाचमेण्ट-जैसा कड़ा एवं जलमें भीजनेसे बिगड़नेवाला न रहा। नमूनेका सूत भी नाना वर्णोंमें रञ्जित था। रस्सी और रस्सोंके कितने ही चयमें भक्षजतरा लगा रहा। छाकर सट्टडीने परीक्षासे देखकर कहा—केलेके सूतका कागज प्रति उत्कृष्ट होता है। दूसरी कोई चीज न मिला केवल केलेके सूतसे पतला और मजबूत कागज बन सकता है। कल घूमते समय इसमें नहीं पड़ती। इच्छाशु-सार भाकार और वर्णका कागज तैयार होता है। मोड़नेसे यह कागज नहीं फटता और सकल स्थान समान रहता है। कलकत्तेके समीप बालोके कारखानेमें भी इसकी परीक्षा हुई। उसमें बहाना और बान्दा-मान हीपके केलेका सूत लगा था। फल भी समीप-प्रद निकला। प्रति वृत्तमें २ घेर सूत हो सकता है। रस्सी या रखा लगानेमें भी ऐसी केलेका सूत स्वच्छन्द व्यवहृत होता है। किन्तु फिलिपाइन हीपके मुसा टेक्स्टिलिस (Musa Textilis) नामक कदलीवृक्षका सूत ही इस मध्यममें सर्वश्रेष्ठ है। इसे पंगरिजोमें मानिला हेम्प (Manilla hemp) कहते हैं। इसका फल खाया नहीं जाता। बहाना, मन्द्राज और बम्बई प्रान्तके स्थान-स्थान पर बाजकल इस जातिकी कदली उपजती है। बम्बईमें इसके काण्डका भीतरी चय खाते हैं। इसके बीजसे किन्ना ट्टी भी कृषम लगाना हो अच्छा रहता है। यह केला पार्श्व भूमि और ऐसे स्थलपर अधिक बढ़ता, जहां बगाना वृक्ष सड़ पड़ता है। इस ओषधोंमें फल खानेसे सूत अच्छा नहीं होता। इसका सुगा पत्ता ३ इंच चौड़ा और और पीस रौद्रमें सुखाते तथा सूत निकालते हैं। इस जातिके सूतसे सूत्र बन्ध प्रस्तुत हो सकता है। इसका सूत सनसे लार्ड शुष मारी पड़ता है।

टाकेमें एकप्रकार कदलीके सूतसे बन्ध प्रस्तुत होता है। टाकेके पटकार (लुमाई) कभी कभी इस वस्त्रपर नाना कादकार्य कर अपने गुणका उत्कर्ष देखाते, जिसके दर्शनसे मोग मोहित हो जाते हैं। १८८४ ई० को कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें टाकेके पटकारोंमें केवल कदलीके सूतसे एक फमात हुन और सघी जरीका काम कर भेजा था। कलकत्तेके प्रजाप-धर्ममें यह फमात आज भी रखा है। यह विनकुल टगर-जैसा देख पड़ता, किन्तु उससे कुछ गुरगुरा लगता है। ऐसे ही ३३ इंच लम्बे-चौड़े कपड़ेका दाम ५०) ५०) मकट है।

कठिन, नीरस और केवल वास्तुनामय स्थानको छोड़ अन्य सकल-प्रकार भूमिमें कदली लग सकती है। गोरी और तामाबको निकली महीमें यह बहुत पक्कीतरह उत्पन्न होती है।

पारकी बाल—कदलीमें कविला मही और प्लाकी खाद दी जाती है।

रोपणका समय—बहानामें वेमाघसे अश्वयुज मास पर्यन्त कदलीको रोपण करते हैं। खाने कहा है—  
(१) फाल्गुन मासमें कदलीको सूत सूत काटकर न लगानेसे लोगोंका परित्रम हुया जाता है। किन्तु उक्त नियम पालन करनेपर इतना फल पाता, कि कृषकका स्वस्थ ठोते-ठोते टूट जाता है। (२) चिर फाल्गुनमें कदली लगानेसे एक ही मासमें फल दिया करती है। (३) भाद्रपद और अश्वयुज मासमें कदली रोपण करना न चाहिये। कारण रोपण करने भो न तो काई फल पाये और न समझ भोये जायेगा। चौड़ा लग जानेसे कदली गिर पड़ेगी। (४) मंद और भोजके सूर्य छोड़ कदली लगानेसे फल खानेकी मिलता है। (५) भाद्र मासमें कदली लगानेसे ही सर्वत्र रावणको मरना पड़ा है।

उक्त नियमोंमें फाल्गुन मासकी शुद्ध सूत खाद कदली लगानेका समय बताता है। ऐसा करनेसे यह प्रति शीघ्र फलती और काण्ड एवं शुष्ककी शक्ति बढ़ती है। अतोप नियम भाद्रपद एवं अश्वयुज मास कदली लगानेको रोकता है। कारण इतने

मोड़ा पट्ट जानिको सभावन है। कीड़ा सगनेसे कदली छप आयेगी। चतुर्थ नियममें खैर एवं आग्निन मास छोड़ कदली सगानेका विधि रखा गया है। फिर प्रथम नियममें भाद्र मासको भी छोड़ दिया है। किन्तु पचाने को अपने दूसरे दवनमें पावाट एवं यावण मास कदली सगानेको छपदेग दिया है।

रोपणका नियम—केलेका बाग सगानेकी प्रथम चैत्रमें ८ हाथके पन्तर एक-एक श्रेणी बनानेके लिये कमसे कम १ हाथ मड़ी छठाना चाहिये। फिर कुदानसे छोले तोह और चैग जोड़ चैत्रको समतल करते हैं। कुलम सगानेको हरिक कुलमके साथ एक-एक प्राचीन हल या स्यूज मूलका कियटंग रखना आवश्यक है। फिर स्थूल मूल लमानीको उसे क्षर्धावोभायसे चार या पाठ खण्ड कर चैत्रमें गाड़ देते हैं। हरिक कुलम या मोटी जड़का टुकड़ा ८ हाथके पन्तर लगाया जाता है। कुलमका पेड़ बड़ा होता है। फिर स्थूल मूलका हल सुदूर रहते भी फल अधिक दीर्घ और सुखादु निष्कलता है। बाग सगानेकी सुविधा न होनेसे किसी स्थानमें श्रेणी बना कदलीको रोपण कर सकते हैं। श्रेणी बनानेमें पड़पन पड़ने पर किसी भावसे जगति भी कदली हुषा करती है। किन्तु पाद देना आवश्यक है। रोपणके समय जोदी हुई महीमें पोड़ी कचिला मड़ी मिला सकनेसे अच्छा रहता है। उसके बाद बीच बीच पोदेकी जड़में खाक छालते रहनेमें काम चल जाता है। इस समयमें सुनाके वधन है—

(१) सात हाथके पन्तर पर छिट्ट हाथके गट्टेमें कुलमके साथ पुराना पोदा लगाना चाहिये।  
(२) पाठ हाथके पन्तर पर दो हाथ गहरे गट्टेमें कदली रोपण करनेमें फल पानेको मिलता है।  
(३) सात हाथके पन्तर पर पोने दो हाथ गहरे गट्टेमें केला सगानेमें छपक अपने परिचमका फल पाते हैं।  
फिर कदली हचके समयमें उल्लूखाने दो प्रति सुन्दर और यथाय छपदेग दिये हैं—

(१) कदलीको लगा कर पत्ते काटना न चाहिये। क्योंकि उसीसे छपकीको दान-रोटी और कपड़े-मत्तेका सुमोता पड़ता है। (२) तीन सौ साठ केलेके भाड़ सगानेसे बृहस्प चरमें पड़े सोता और कोई दुःप नहीं होता।

पत्र कटते ही कदलीहच निर्धन पट्ट जाता है। सुतरां मोषा निकलनेमें विलम्ब लगता है। मनुष्य यथा समय फल पानेमें लाभ होना सभाव है। १६० केलेके भाड़ सगानेसे पाठ मास बाद सकल फल दिया करते हैं। सुतरां एक ही समय १६० गह्वर उत्तरनेपर प्रति प्रत्य पड़ते भी (१५) ६० गह्वर पाय होमा। पत्तीपाममें यदि प्रति मास (१५) ६० गह्वर कोई रुच करे, तो पत्त पायमें प्रति सुख और बृहस्प ने एक वर्ष उसका काम चले। फिर दो बीघे जमीनमें १६० केलेके भाड़ अच्छी तरह हो सकते हैं।

एकवार लगा देनेसे उसी भूमिमें प्रायः ५ वत्सपर पर्यन्त कदली फला करती है। किन्तु उसके बाद अन्य भूमिमें इसे लगाना पड़ता है।

वर्षा प्रदेशके लोग रसीली महीमें कदली लगाते हैं। भाड़में कभी एक और कभी दो किले छोड़ बाकी काट डाले जाते हैं। फिर फलका बीज छाल किन्तीपर छाया रखनेकी प्रत्येक बीजके पार्श्वपर एक एक कदली हच लगा देते हैं। पीछे पोदा बढनेपर कुछ वत्सपर बाद जब उल्लू कदलीहच उसके रस-सुधारमें बाधा पहुँचाता, तब यह काट डाला जाता है। सुपारीके चैत्रमें जो इसी प्रकार हचके मूलपर छाया पड़वानेको कदली रोपण करते हैं। पहा इसकी छापिमें भोग बड़ा यल लगते हैं। छप और पानकी रीतिसे पीछे उसी भूमिमें इसे रोपण करते हैं। प्रथमतः पान काटकर छप कोई लाती है। छप कटने पीछे जमीन पोढ़े दिन पानी पड़ी रहती है। फिर छिटके बाद योगाध-व्यैठ मास दामि-पाल्वमें इसी समय पानी बरसता है। छप और मई पना ८ इंच गहरे कुलम लगाया जाता है। कुलम लगाते समय फलीके छिलके, सड़ी मल्लो और गोबर-को पाद छाल देते हैं। मिश्र मिश्र प्रातीय कदलीको

देख-भाव कलम लगानेका नियम है। एक एक र परिमित भूमिमें दूसरीया केलेके १००० बीर तांबड़ी केलेके ५०० कलम लगाये जाते हैं। अन्यथा जातीय प्रत्येक हफ्ते के मध्य ३ फीट अन्तर रखते हैं। कलम लगानेके समयसे ४ मास तक खाद पड़ती है—प्रथम तीन मास फलोंके किसके बीर ४४ मास सड़ी मकलीकी। प्रत्येकवार खाद डाल कर प्रती मही देवाते हैं। मकलीकी खाद देनेसे बहुत कीड़ा पड़ जाता है। इसीसे यह खाद डालने पीछे ८।१० दिन जल नहीं देते। जल न पानेसे रीढ़में कीड़ा भर मिटता है। कलम लगाने बाद समाप्तमें दो बार जल दिया जाता है। पीछे जितने दिन पानी नहीं बरसता, उतने दिन समाप्तमें कदलीकी एकवार सींचना पड़ता है।

मन्द्राजमें दो प्रकार इसकी छपि होती है। छह भूमिमें 'पका बकर' बीर निम्न भूमिमें 'खुदबखर्' लगाया जाता है। वहाँ कदलीके क्षेत्रमें साठ भाग वगैरह बो देते हैं। फिर जल न चला कुदाससे ही कदलीकी भूमि तैयार करते हैं। ५ वत्सर पीछे कदलीको बोदखाद दूसरी बीज बोई जाती है।

ब्रह्मदेशवासी इसके लगानेमें कोई यत्न नहीं करते। किन्तु हरक बादमीके घरमें केलेका पेड़ रहता है। यत्न न करते भी वहाँ स्वच्छन्द भण्यांत उत्तम फल तैयार हो जाती है।

पूर्व-भारतीय दीपमें लोग इसकी छपि बड़े यत्नसे करते हैं। तीन तीन वत्सर पीछे क्षेत्र बदल गया कलम लगाया जाता है। पुरातन स्थूलभूमि खादका काम लेते हैं। वहाँ इतना यत्न न करनेसे फलमें बीज पड़ जाता है। किसी दीपमें पुरातन स्थूल-भूमि की खाद डालते हैं मही, किन्तु उसे अच्छा नहीं समझते। उससे भूमि खड़ी पड़ जाती है।

पश्चिम-भारतीय दीपमें पुरातन हफ्तेकी छपि खण्ड कर जला जायते हैं। फिर कलम काट उसी पुरातन हफ्तेकी खाकमें २ हाफके अन्तर गर्त बना लगा देते हैं। दूसरी कोई चेष्टा की नहीं जाती।

मुसा टेक्स्टिलिस (Musa textilis) पर्याप्त कलम

सूखी कदली ३ से ८ फीट अन्तर पर लगाया पड़ती है। अन्तर्को छत्र अन्तरमें भी कलम पड़ता है। दो वत्सरमें ही सूत्र निकल सकता, किन्तु चार वत्सर बीतनेपर कुछ पक्का पड़ता है। इसमें फल पाने नहीं देते। क्योंकि फल अगनेसे छत्र बिगड़ जाता है। फलका पाना बन्द करनेको केवल दो पत्र छोड़ बाकी सब काट डालते हैं।

बरबीके समान्य प्रकार—ब्रह्मासिरीमें कदलीके सम्बन्ध-पर अनेक प्रवाद चलते हैं। एक प्रवादसे अनुसार कदलीहफ्तेपर गिरनेसे फिर वल खर्गको छठकर जा नहीं सकता। बीर लोग इस वजहको रात्रिके समय चुपके छठा छिड़कीसे लोहारकी घर पास धाते हैं। फिर लोहार उससे बीरीका खन्ना बना छत्रों छिड़कीमें रख देते हैं। बीर भी रात्रिकी पा चुपके वल पन्ना छठा ले जाते हैं। इससे कहते हैं—बीर बीर लोहार कभी नहीं मिलते। दूसरा प्रवाद केलेकी यष्टी देवोका प्रिय खाद्य बताया है। फिर तीर्थ प्रवादके अनुसार केला बुद्धकी ध्यानमें बहुत अच्छा लगता है।

'तासिब-शरीफ' नामक फारसीके चिकित्साग्रन्थमें लिखा—केलेसे कपूर होता है। किन्तु चाईन-पक्ष-धरी इस बातकी नहीं मानता। इधर हिन्दूके ब्रह्म-चन्द्र नामक किसी कविने भी नायिकाभेदमें जहाका वर्णन करते कहा है—“कपूर पायो कदली।”

पंगरेजीमें लोग इसे बाइबिलोस निविह फल बताते हैं। अदलफके कथनानुसार बाइबिलोस 'डुदो-इम' (Dudoim) फल ही कदली है। फिर कोई कोई इसे निविह फल मान खर्गोद्यानमें मानवका प्रथम प्रधान खाद्य समझते हैं। पन्नाको भी चांदे की हो, किन्तु खर्गोद्यानका संस्कार रहनेसे ही अन्धश्रुत कदलीका नाम पारासिलिका (Paradisies) पड़ा है। क्योंकि पंगरेजीमें पाराडाइज (Paradise) खर्गको कहते हैं।

३६०२४—केलेका एक बीदा किमी जगह लगा-यिधि। इस हफ्तेके मूलमें जितने दिन बिना न निक-लेगा, उतने दिन कुछ करना भी न पड़ेगा। किन्तु किन्नेकी बढ़ने न दोषिध, निश्चयने हो उसे नष्ट



कीजिये। पीछे मूल वृक्षकी लड़खे १ हाथ छोड़ समस्त काट कातते हैं। फिर प्रत्यह इस वृक्षमें एक घट लस देने लाइये। इसमें फिर दोटा पनयेगा। १ हाथ बढ़नेमें पुनः पूर्व-कर्तित स्थानमें काट प्रत्यह लस डालते रहिये। इसी प्रकार बार-बार काटते काटते लस मोचा निकले, तब फिर न काट मूल वृक्षकी महीमे ठाक दे। फिर एक घोर काण्ड घोर मोचा दोनों बढ़ेंगे, किन्तु इस-उपर पचसम्बन न पा घोर लक्ष्मीको लस न ला भूमिपर ही फेंक प्रहेंगे। इससे कैला लताकी भांति दृष्टिगोचर होगा। इसपर विमेष ध्यान देना चाह्यगक है।

शैली—चार जातीय कैलाके चार वृक्ष मोठो लक्ष्मीके साथ ले पायिये। फिर वृक्षोंकी काटिये घोर लक्ष्मी लक्ष्मी इस प्रकार बार-बार भाने हिष्ठा निका-लिये, जिसमें चारोंकी मिलानेपर एक पूरी लक्ष्मी बना लायिये। पीछे चारोंकी लोड़ घोर रक्षीसे पच्छोतरह बांध लपर गोबर संकेत दीजिये। जिस स्थानपर इसे भगाने, उस स्थानमें १ हाथ गभीर एक गर्त बनाते हैं। गर्तका चर्चांग सड़ी घाससे भर इस लक्ष्मीको जमा घोर लपर मही दस देते हैं। कुछ दिन पीछे किला फूटता है। जबतक मोचा नहीं आतो, तबतक दूसरी लोड़ तद्वत भी की नहीं जातो। केवल इतना ध्यान रखना पड़ता, कि वृक्ष बराबर चला चलता है। फिर मोचा भानेका उपक्रम होनेसे वृक्षका पचभाग हड़ रक्षीसे बांध देते हैं। चन्तकी वृक्षसे एक जो काल चारो घोर चार जातीय मोचा निकलेंगे। मोचाकी गालायेकी मोचे तीन-तीन लकड़ियां लगा देना चाहिये, जिसमें गालाये मोचाके भारसे टूट न जाये।

११३३ पून—किसी मर्त्य या चम्पक कदलीका छोटा कुलम एक गमलेके घेंदेंमें बड़ा छिद्रकर इस प्रकार लगे, जिसमें कुलमके मोचे घेंदेंमें बहुत थोड़ी पर्याप्त ८। १० पदससे अधिक मही न रहे। जितने दिन कुलम चूष नहीं पनयता, उतने दिन चूष चूष लस देना पड़ता है। जब कुलम चूष पनय जाता, तब १ हाथ ऊंचे बांसके मछपर उसे पड़ा लस लोड़ना

बन्द कर दिया जाता है। पीछे समस्त पत लक्ष्मीके साथ काट कातते हैं। फिर पत चानेसे फिर काटा करते हैं। उपर गमलेके छेदमें लाल लटक पड़ती है। प्रत्यह इस डालपर लस छिड़कते हैं। फिर पतमोचा निकलनेमें पचभाग काट कातते हैं। चन्तकी इससे जो मोचा निकलेंगे, वह कदलीवृक्षके मस्तकपर लवाकार बग जल-जैसी देख पड़ेगी।

२ कदलीवृक्ष, एक हिरन। इसके चर्मका पाचन बनता है। १ इन्द्रिपर्वी।

कदलीकन्द ( सं० पु० ) रन्ध्रामूल, कैलेकी लड़। यह शीतल, बन्ध, क्रोश, अक्षतपित्तजिह्वा, वज्रिज्जल, मधुर घोर रक्षिकारक होता है। ( मदनपत्र )

कदलीकुसुम ( सं० स्त्री० ) रन्ध्रामूल, कैलेका फूल। यह स्निग्ध, मधुर, सुवर्ण, शुद्ध एवं शीत घोर वातपित्त, रक्षपित्त तथा चयको दूर करनेवाला है। ( वैद्यनिघण्टु )  
कदलीचता ( सं० स्त्री० ) कर्कटीमेद, किसी लक्ष्मीकी ककड़ी।

कदलीजन ( सं० स्त्री० ) कदलीरस, कैलेका पानी। यह शीतल एवं साहक रक्षता घोर मूलकण्ड, भेद, लम्बा, कर्णरोग, पित्तसार, पक्षिमात्र, रक्षपित्त, विस्कोट, योनिदोष तथा दाहका नाश करता है। ( वैद्यनिघण्टु )  
कदलीदण्ड ( सं० पु० ) मोचाके वृक्षगर्भका कोमल दण्ड-जैसा भाग, कैलेका भीतरी हिष्ठा। यह शीतल, पवित्रधर्म, बन्ध, रक्षपित्तहर, योनिदोषहर घोर पचमद्रनाशक है।

कदलीमास, बरगोदण्ड लो।

कदलीमूल ( सं० स्त्री० ) रन्ध्रामूल, कैलेकी लड़। यह बन्ध, वातपित्तघ्न घोर शुद्ध होता है।

कदलीमृग ( सं० पु० ) मवलमृग, एक हिरन। यह पक्षिजतर पूर्वदेयमें पवित्र है। कदलीवृक्ष वृक्षम विद्याल-लसा घोर विलेग्य होता है। ( धनुष )

कदलीवल्कल ( सं० स्त्री० ) कदलीवल्क, कैलेकी छाल। यह तिक्त, कटु, लघु घोर वातहर होता है। ( वैद्यनिघण्टु )

कदलीसार ( सं० पु० ) कदलीरस, कैलेका निघोड़। कदलीखम्ब ( सं० पु० ) रन्ध्रामूलविमेष, पीलेकी टटो।

कदम्ब (सं० पु०) कुक्षिताम्र, खराब घोड़ा।  
कदा (सं० पथ्य०) किस समय, कब, कौन वस्तुपर।  
कदाकार (सं० त्रि०) कुरूप, बदचरित्र।  
कदाप्य (सं० स्त्री०) १ कृष्णपथ, एक दवा। (त्रि०)  
२ निन्दित, बदनाम।

कदाच, कदाचन दो।  
कदाचन (सं० पथ्य०) किसी समय, एक दिन,  
एक बार।

कदाचार (सं० पु०) कुः कुक्षितः आचारः, कोः  
कदादेगः। १ कुक्षित आचार, मन्द व्यवहार, बुरा  
आचरण। (त्रि०) कुक्षित आचारी यथ, बहुलो०।

२ कदाचारी, बदचलन, बुरा काम करनेवाला।  
कदाचारिणी (सं० स्त्री०) कदाचारिण-स्त्रीय पत्न्य।  
अति मन्द व्यवहारवाली स्त्री, जिस चौरतके बहुत  
बुरा आचरण रहै।

कदाचारी (सं० त्रि०) कुक्षित आचारी इत्यादि,  
कदाचार-इति। मन्द व्यवहारकारी, बुरे आच  
रणवाला।

कदाचित् (सं० पथ्य०) कदा अनिर्धारित चित्।  
दूररे समय, एकबार। इसका संस्कृत पर्याय—कात  
भीर कश्चित् है।

“न पादो धारयेत् कालं कदाचिदपि मानने।” (ननु ३६१)  
कदान—व्यवसायिक दिवाकण्ड-जिसेका एक देशीय  
राज्य। यह पचा० २१° १६' ४" से २३° १०' १०"  
उ० और देगा० ७१° ४३' से ७१° ५४' पू०के मध्य  
अवस्थित है। कदान राज्यसे उत्तर डुंगरपुर तथा  
मेवाड़ राज्य, दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्व गुण्ट राज्य और  
पश्चिम तथा दक्षिण-पश्चिम कोणावर एवं दिवाकण्ड  
राज्य लगता है। भूमिका परिमाण ११० वर्गमील है।

यह प्रदेश बनुर (जंवा-नोवा) है। पर्यंत और  
तन चारी और परिस्थित है। राज्यके दक्षिणभागमें  
महानदी बहती है। इसकी भूमि उर्वरा है। उत्त-  
रांगमें नदीके उपमूलपर एक प्रमुख भूभागको छोड़  
दुसरा समस्त भाग अनुपूर्व और पर्वतमय है। ई०के  
११५ मीताब्द सिद्धदेवजी (सिमदेवजी) ने यह राज्य  
स्थापित किया था। यह पाँचमहालके प्रमुखतः भूतोंद

नगरके स्थापनकर्ता ज्ञानिमर्षिके वंशसम्मत और  
उन्हींके एक कनिष्ठ भ्राता रहे।

प्राजकत कदान राज्य भारत-गवर्नमेण्टको खर-  
देता है। राजधानी कदान नगर महानदीके पश्चिम  
तीर पर अवस्थित है।

कदापि (सं० पथ्य०) समय-समय पर, कभी-कभी,  
कब-कब। यह शब्द प्रायः 'न' के साथ आता है।

कदामत (प० स्त्री०) १ पुरातनत्व, पुराणापन।  
२ प्राचीन समय, पुराना कामना।

कदामत्त (सं० पु०) कदाचित् मतः। अविनिमय।  
कदिन्द्रिय (सं० स्त्री०) कुत्सितमिन्द्रियम्, कर्मधा०।  
कुत्सित इन्द्रिय, खराब इन्द्रिय।

कदी (हिं० वि०) कड़ी, ठोठ, कद रखनेवाला।  
कदीम (प० वि०) १ प्राचीन, पुराना। (हिं० पु०)  
२ लोहदण्ड, लोहेको छड़। इससे लड़ाजोंमें बोझ  
छाया जाता है।

कदुष्ट (सं० पु०) कुत्सित उष्टः, कोः कदादेगः।  
कोः कदुष्टवरेऽपि। न १११०१। मन्द उष्ट, खराब जट।

कदुष्य (सं० स्त्री०) कु ईप्सु उष्यन्, ईप्सुर्वा कोः  
कदादेगः। १ ईप्सु उष्यन्, खराबी गर्मी। इसका  
संस्कृत पर्याय कोष्य, कवोष्य और मन्दाप्य है।  
(त्रि०) २ ईप्सु उष्यविगिट, कुछ गर्म, जो ज्यादा  
लगता न हो।

“कदुष्यः सत्यः कदुष्यः कदुष्यः” (वहव)

कदूर—महिसुर राज्यका एक जिला। यह पचा०  
१३° १२' से १३° ५८' उ० और देगा० ७५° ८' से  
७६° २५' पू०के मध्य अवस्थित है। कदूर महिसुरके  
नगरविभागका दक्षिण-पश्चिमीय है। इस जिलेसे  
उत्तर मिमोग जिला, दक्षिण चमन जिला, पूर्व  
चितल दुर्ग और पश्चिम पश्चिमघाट पड़ता है।  
भूमिका परिमाण २८८४ वर्गमील है।

इस जिलेके पश्चिम-प्रान्तमें कदुरेमुण्ड (१२१४  
फीट उंच) एवं मेहतगुड (५४५१ फीट उंच) और  
मध्यभागमें बाबादुदन (१२१४ फीट उंच) तथा  
काकदुप्पो (११५५ फीट उंच) गिरि खड़ा है। गिरा  
इन्के कोटे-कोटे कितने ही दूररे पर्यंत भी विद्यमान

है। यहाँका महाराष्ट्र नामक स्थान पर्वत और उपत्यकासे समाच्छ्रित है।

रक्त नदी—तट्टा और भद्रा नामकी दो नदी मिल कर भद्रा नामसे कृष्णा नदीमें जा गिरी है। जिलेके दक्षिणार्धमें हैमवती और पूर्वार्धमें वेदवती नदी बहती है।

शाल—बाघानुदन गिरिप्रदेश की आजकल पत्तुलु छट उग्रा भूमि है। यहाँ कृष्णकी चेतनी होती है। प्रवाद है—बाघा नुदन नामक किसी एकौरने, मछलियों को पकड़ ला यहाँ फेंकाया था।

कटूरके वनमें मूल्यवान् चन्दन, गिण्ड प्रभृति उत्तम काष्ठ उत्पन्न होता है। फिर १४ प्रकारका घास, गेहूँ, ईर्, जव, सुपारी वगैरह योजों भी उपजती है। किन्तु कृष्णकी चेतनीकी ही आदर अधिक है। क्योंकि उससे भाव बहुत पाता है। इस जिलेमें ७८ वर्गमील सरकारी जङ्गल है। जङ्गलमें चूल्ही, वन्य मछिप, व्याघ्र, तरुण, शिवा नामक एकप्रकार भालूक, वन्यशूकर, हरिण, गजक (खरगोश) और मलाष्ट्र देश पड़ता है। स्थानीय नदी एवं जलाशय मत्स्य परिपूर्ण हैं। यहाँ कम्बल, तैल, खदिर, अतर और लौहका व्यवसाय होता है।

यह जिला पहले वनराजोसे समाच्छ्रित रहा। जनप्रवाद है—यहाँ ब्रह्मयज्ञका जन्म हुआ था। स्थानीय तुल्लनदीके तटस्थ नुद्रीकी कितने ही लोग ब्रह्मयज्ञ गिरिका अपभ्रंश मानते हैं। यह स्थान मूल्यपाद गङ्गाधारीका सीनासेव रहता। यहाँ दाक्षिणात्यवासी आर्य ब्राह्मणोंके 'नगदगुह' रहते हैं।

यहाँ रत्नपुरी पार गङ्गाधारीय स्थानमें प्राचीन नगरादिका चिह्न विद्यमान है। उसके देखनेमें स्थानीय पूर्वसमुद्रिका कुछ आभास मिलता है। उक्त दोनों स्थान पहले बल्लभ राजाओंकी राजधानी रहे। उसी समय दाक्षिणात्यके कितने ही महाप्रदय वहाँ आकर बसे थे। बल्लभ राजाओंके सम्बन्धमें यह प्राचीन शायद्वि विमलकुल सोच न हुई। किन्तु विजयनगरके मुसलमानोंकी हजिरी प्राचीन नगरोंकी समृद्धि मिट गयी। अन्तिम अन्धत्यागसे बल्लभ-राजवंश भी

विमलकुल विग्रहा था। कटूर और सकल निकटस्थ जनपद मुसलमानोंने अधिकार किये। कुछ दिन पीछे मदनूरके पल्लिवारोंने कटूर जिलेके अधिकारीपर आक्रमण मारा था। किन्तु जीतते भी अधिक दिन यह राज्यभोग कर न सके। १६८४ ई०की मद्रि-सुरके राजाने उन्हें फिर हराया था।

१७६१ ई०की हैदर-अलीने समस्त कदवा जिला अधिकार किया। फिर १७८८ ई०की टोपू राजतान्के मरनेपर तत्कालीन गवरनर जीमरस विलेसीने स्थानीय मित्र-राजको यह जिला दे डाला। कुछ दिन हिन्दू राजावोंने सुष-राष्ट्रमण्डले राज्य चलाया था। मध्यमें किसी राजाने एक ब्राह्मणका अपमान किया। उससे स्थानीय निद्रायत और जयक विमलु सङ्घे हुये। उन्होंने घोषणा की थी—यह हिन्दू राजा राज्यके उपयुक्त नहीं, जो ब्राह्मणका अपमान कर सके। १८२१ ई०की निद्रायतोंने विद्रोह उठाया। तरिकेरीके प्राचीन पल्लिवारवंशका एक व्यक्ति भी उससे पालिसा था। व्यापार कुछ शुक्तर हो गया। राजद्रोहियोंने अनेक स्थान आक्रमण किये थे। हिन्दू राजावोंने घोषा—पटना सिंहासन बचाना चाहिये। फिर चंगरेजी सेन्धको आवाग्रहता समी थी। चंगरेजीने आकर विद्रोह रोका। फिर चंगरेज गवरनर-मिष्टने समझ लिया—स्थानीय हिन्दू राजा किसी कामके नहीं। उसी समयसे कटूर राज्य पास चंगरेजी बन गया।

१८६१ ई०की चिकमगलूर नामक स्थान इस जिलेका सदर मुकाम हुआ।

इस जिलेमें सब मिचले कीई १७१ नगर और ग्राम हैं। प्रधान नगरोंके नाम यह हैं—चिकमगलूर, तरिकेरी, कटूर, पादिमपुर, पेंयनकेरी, बिन्दर, हरि-हरपुर और वीरेमगलूर कलस। यहाँका जनवास सकल स्थानोंमें समान नहीं। जनसाधन प्रतिवर्ष एकप्रकार भयानक वन्य रोग होता है। उससे प्रकोपमें कीई परित्याप नहीं पाता। अपर स्थान अच्छा है। कटूर जिलेका प्राचीन नगर कटूर है। यह एक गण्यग्राम समझा जाता है।

प्राचीन गिस्सालिपि और भग्नां स्तम्भ देखनेसे विदित होता—ई०के १० म शताब्द यहां जैन प्रवास हो गये थे। पहले यहां सदर थाना रहा, जो १८६३ ई०को धिकमगलूर चला गया। यह नगर पचा० १३° ३१' उ० और देशा० ७६° २५' पू० पर अवस्थित है। कटूरत (च० स्त्री०) वैमनस्य, घनघन, मेल, फट्। कटूडि (च० पु०) गोत्रप्रवर ऋषिविशेष। कट्टावर (फा० वि०) प्रयत्न शरीरयुक्त, कसीम, जिसके बड़ा और भारी जिस्म रहे। कट्टी (च० वि०) कट्ट रखनेवाला, हठो, जो मगमानी करता हो। कट्टू (फा० पु०) १ कट्टू, लौकी। २ लिङ्ग, घण्टा। गंधार इस शब्दको प्रयोक्त प्रथम व्यवहार करते हैं। कट्टुकम (फा० पु०) यन्त्रविशेष, एक चौजूर। इससे लौकीका लच्छा उतारा जाता है। यह लोहे या पीतलका बनता पार छोटी चौकी-लेखा रहता है। कट्टुकममें लम्बे-सम्बे छिद्र होते हैं। इनकी एक ओर छठा और दूसरी ओर दवा देते हैं। इस यन्त्रपर लौकी रगड़नेसे पतला-पतला लच्छा उतर जाता है। यह लच्छा राखता और मिठाई बनानेमें लगता है। कट्टुनामा (फा० पु०) कृमिमिद, एक कौड़ा। यह खेत एवं सुदूर रहता और उदरमें पड़ मलके साथ गिरता है। कट्टय (सं० पु०) कुत्सित; रघु, की: कदादेय:। रघुवशेष। पा ३।३।१०१। कुत्सितरघु, खराब गाड़ी। कट्टु (चं० पु०) कट्ट-ह। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा या नीलवां रङ्ग। २ ऋषिविशेष। (त्रि०) पिङ्गलवर्ण-विशेष, गन्धुमी, भूरा। (स्त्री०) ४ नागमाता। यह दक्षकी कन्या ए कश्यपकी पत्नी थीं। ५ उष-विशेष, एक पेड़। कट्टुज, बहुव शब्दो। कट्टुय (सं० त्रि०) कट्टुरस्यस्य, कट्टु-म। बीमादिवाचन-विशेष। कनकपत्र। पा ३।३।१००। पिङ्गलवर्णयुक्त, गन्धुमी, भूरा। कट्टुपुत्र (सं० पु०) कट्टो: पुत्र:; ६-तत्। नाग, सर्प,

सांप। इनका संस्कृत पर्याय काट्टवेय, कट्टुकाशु और कट्टुपुत्र है। कट्टुपुत्र (सं० पु०) कट्टो: पुत्र:; ६-तत्। सर्प, सांप। कट्टू (चं० स्त्री०) कट्टु-जड़। बहुवचनशब्दवि: पा ३।३।१०१। सर्पमाता, सांपोकी मा। कट्टाच (चं० त्रि०) कश्चिदचति, किम्-पक्ष-क्षिप् पद्यादेय: किम: कथ। १ अनिश्चित देगकी गमन करनेवाला, जो किसी नामानुसृत हो जाता हो। (स्त्री०) २ अनिश्चित देगका गमन, नामानुसृत की सफर। कट्टन् (चं० त्रि०) क पश्यत्य, क-मत्तुप् मस्य व:। कश्चिदयुक्त, 'क' लक्ष्मण रखनेवाला। कट्टती (चं० स्त्री०) कट्टन्-होप्। कश्चिदयुक्त मस्य प्रवृत्ति। कट्टद (चं० त्रि०) कुत्सितं वदति, कु-वद् पद्याद्यद् की: कदादेयश्च। १ कुत्सित वक्ता, खराब बोझनेवाला, जो ठोक कहता न हो। २ कर्कषभाषो, कट्टो बात कहनेवाला। ३ दु:खवशब्दयुक्त, सुननेमें अच्छा न लगनेवाला। ४ पति कुत्सित, निहायत पुराण। कट्टर (चं० स्त्री०) कं लक्षमिव पाचरति, क-क्षिप् शब्द कता मियति कत-त्रि-पच्। १ दक्षिणैर्युक्त तन्त्र, पानी मिला मझ। २ दूधका पानी, चाव-शोर, पन्था, तोड़। कथमिय (चं० त्रि०) स्वर्न्म प्रीयाति, प्री-क्षिप् प्रयोदरादित्वात्। स्वर्न्मप्रिय। कथमी (चं० त्रि०) कन्म प्रीयाति, प्री-क्षिप् प्रयोदरादित्वात्। स्वर्न्मप्रिय। कधी (चं० त्रि० वि०) कमी, किसी वस्तु। कधी-कधार (चं० त्रि० वि०) समय-समयपर, कभी-कभी, जब-तब। कन (चं० पु०) १ कण, जररा, बहुत छोटा टुकड़ा। २ पनाजका दाना। ३ पनाजके दानेका एक टुकड़ा। ४ लच्छिष्ट भोजन, कूटन। ५ मिषा, मोगा दुपा दाना। ६ विन्दु, कतरा, बूंद। ७ पाशुकाका सुदांग, बालका किलका। ८ सुदादुर, दाना-कमी कोपल। ९ गन्धि, ताकन, होर। योगन शब्दमें 'कन'के लक्षका बोध जाता है, जैसे—कनफटा, कनटोड, कनगुज, कनसराई।

कनई ( हिं० स्त्री० ) १ मद्यपात्र, मई डाल, डिङ्गा, कोपल । २ पाट्टे गुलिका, गोली मटो, कोनड ।

कन-उंगली ( हिं० स्त्री० ) कनिष्ठिका, 'चापकी मसवे छोटी उंगली, दिगुनिया । कान पुनवानेमें प्रायः काम जानेसे चापकी मसवे छोटी उंगली 'कनउंगली' छड़ जाती है ।

कनउड ( हिं० वि० ) कनौडा, कतल, एहसानमन्द ।

कनक ( सं० स्त्री० ) कसति दीप्यते, कन्-बुन् । १ स्वर्ण, सोना । सर्वे दीपोः । ( पु० ) २ रत्नपद्मवत्, 'टैम्बूका पेड़ । ३ नागकेसरवत् । ४ धुस्तरवत्, चतुरेका पेड़ । ५ काचनार वृक्ष, कचनारका पेड़ । ६ कामोद्यवृक्ष, कामी चगुनका पेड़ । ७ चम्पकवृक्ष, चम्पेका पेड़ । ८ काममर्दचुन, कसौडीका पेड़ । ९ कनकगुग्गुलु ।

१० जाचानक, नापका पेड़ । ११ जयपाकवृक्ष, जमानगोटेका पेड़ । १२ जणधुम्बर, कामा धतूरा । १३ महादेव ।

“उपकारः विद्मः सर्वः कनकः काचनारविः” ( भाग ११/१७२९ )  
१४ यद्वंशोप द्दर्म राजाके पुत्र । ( चरित्र ११/४ )  
१५ एक चोलराजा । ( हिं० ) १६ गोधूमचूर्ण, गेहूँका पाटा, कनिक । १७ गेहूँ ।

कनककदली ( सं० स्त्री० ) रघ्नामिद, किसी किरणका किला ।

कनककन्दपेरस ( सं० पु० ) वाजीकरणका एक चोपध, गामदीकी एक दवा । पारद एवं गन्धक प्रत्येक मम भाग चौर कालभोज, पैकाला तथा स्वर्ण प्रत्येक पारदमें चतुर्थांश पहले कलकी करे । फिर ताम्र-पातपर गूलरने रस, सरसंकि तेल चौर चतुरेके रसमें प्रत्येकको तीन दिन चपटाते हैं । सुखनेपर वातुका यन्त्रमें भीमी बाँधते सबको पकाना चाहिये । वातुका तप्त पदनेसे घाग बुझा देते चौर यौतल होनेपर नीचे उतार चोपधकी प्या खीते हैं । चतुर्थांश घृत, गर्जरस चौर मधु है ।

कनककण्ठो ( हिं० स्त्री० ) गोलकी लीग । यह एक पाभूप्य है । इसे खर्चमें धारण करते हैं ।

कनककमिषु ( सं० पु० ) हिरण्यकमिषु, एक देव ।

कनककुण्डला ( सं० स्त्री० ) हरिद्वंशकी माता ।

कनककुमस—एक जैन चन्द्रकार । गङ्गा विजयनेन स्थिरके गिर्य रहे । इन्होंने ज्ञानप्रपमोमादाका चन्द्र बनाया था ।

कनककेयरी—उत्कलके एक राजा । यह पञ्चाहु-केयरीके पुत्र थे ।

कनकचार ( सं० पु० ) कनकव्य द्रावणार्थ चार, मध्यपदलो० । टङ्गचार, मोहागा । कोरका दीपोः ।

कनकचोरी ( सं० स्त्री० ) सुवर्णचोरी, किसी किरणकी चिरनी ।

कनकगिरि ( सं० पु० ) सम्पदायविमेषके प्रतिष्ठाता ।

कनकगैरिक ( सं० स्त्री० ) चम्पक रत्नगैरिक, बहुत सास मीठ ।

कनकचम्पक ( सं० पु० ) चम्पकविमेष, किसी किरणका चम्पा । ( *Pterospermum acerifolium* ), यह वृक्ष भारतवर्षके नामा स्थानोंमें उत्पन्न होता है । कनकचम्पक बहुत बड़ा वृक्ष है । काष्ठसे सुन्दर और दृढ़ लक्ष्यते बनते हैं । पुष्प सुगन्धविशिष्ट रहता है । हिन्दूमें इसे खनिद्यारो कहते हैं । यहलक्ष पिङ्गलवर्ण होता है । पत्र हृदयाकार रहते हैं । यमल एवं मोक्ष वस्तु इसके फूलनेका समय है । पाट्टे भूमिमें यह प्रायः पनपता है ।

कनकचम्पा ( हिं० ) कनकचम्पक दीपोः ।

कनकचूर ( हिं० पु० ) चान्दविमेष, किसी किरणका घान । इसका पाकार गुम्फ, किन्तु सुगन्ध अधिक दीर्घ होता है । चम्पाच्य चामन चान्दकी अपेक्षा यह विमल्वर्ण पकता है । अधिक सर्वर चौर निम्नभूमि ग रहनेसे इसकी छवि करना कठिन है । कनकचूरको साँसे मुड़की लगती है ।

कनककोरा ( हिं० पु० ) चान्दविमेष, एक घान । यह प्रति स्वर होता है । इसकी मार्गगोर्ष माघमें काटते हैं । कनककोरेका तप्तुन बहुत दिन नहीं बिगड़ता ।

कनककोरव ( सं० पु० ) रास, मोधान ।

कनककिङ्गा ( हिं० पु० ) त्रयविमेष, एक पेड़ । ( *Polygonum elegans* )

कनकटह ( सं० पु० ) सर्वज्ञाकार, गानेका तबल ।

कनकटा ( हिं० वि० ) १ कर्णरहित, भूषा, जो कान  
कटा हुआ हो । २ कर्ण काटनेवाला, जो कान काट  
लेता हो ।

कनकतालाभ ( सं० त्रि० ) स्वर्णके तालवृत्तकी मति  
प्रभाविगट, जो सुनहले ताड़की तरह चमकता हो ।  
कनकतैल ( सं० स्त्री० ) सुद्रोगाधिकारका एक तैल,  
छोटो-छोटी बीमारियोंपर चमनेवाला तैल । मधुकके  
काषायमें एक कुड़व तैल पाक करना चाहिये ।  
फिर उसमें प्रियङ्गु, मण्डिटा, रत्नचन्दन, नीलोत्पल  
और नागेश्वर प्रत्येकका चार-चार सोने के छल्ले डालनेसे  
यह तैल बनता है । कनकतैल सुखकी कान्ति  
बढ़ाता और चक्षुःशूल, शिरःशूल प्रकृति रोग मिटाता  
है । ( चरकचिन्तामणि सं० )

कनकदण्डक ( सं० स्त्री० ) कनकस्य दण्डो यत्,  
बहुव्री० । रत्नचन्द्र, शाही पाफताबी ।

कनकध्वज ( सं० पु० ) धृतराष्ट्रके एक पुत्र ।

कनकान ( हिं० पु० ) शब्द विशेष, एक भावाञ्ज ।  
किसी विषयपर उठपूर्वक सोचते रहने और दूसरेकी  
बात न सुननेको कनकान कहते हैं ।

कन-कना ( हिं० वि० ) भङ्गुर, नाजुस, टूट-फूट  
जानेवाला ।

कनकना ( हिं० वि० ) १ कनकनानेवाला, जो कन-  
कनाहट जाता हो । २ सुन-सुनाहट जानेवाला,  
सुनसुना । ३ पसड़ा, बरदाभ न होनेवाला, जो  
खानेमें बुरा लगता हो । ४ पसड़नशील, चिड़चिड़ा,  
चिड़ उठनेवाला ।

कनकनाना ( हिं० त्रि० ) १ कनकनाहट मालूम  
पड़ना, सुनसुनाहट उठना, सुँडका लापका बिगड़ना ।  
जुर्मोकस्य, घुरया गगैरह चोअे कचो खानेसे सुँड  
कनकनाने लगता है । २ पसड़ा न लगना, बुरा  
मालूम पड़ना । ३ चकित होना, भड़कना, कान  
खड़े करना । ४ रोमांच पाना, सनसनाना ।

कनकनाहट ( हिं० स्त्री० ) कनकनानेकी हालत,  
कनकनी ।

कनकपत्र ( सं० स्त्री० ) कनकनिर्मित पत्र पत्राकार  
भूषणमित्यर्थः । कर्णान्धारविशेष, खानका पात ।

कनकपराग ( सं० पु० ) सुरचरेखा, सोनेका बुरादा ।  
कनकपत्र ( सं० पु० ) कनकस्य पत्रं मानविशेषः ।

१ अर्णोदि परिमाणक धोइगमापच, सोलह मासे  
सोनेको तोल । इसका चपर नाम कुहमिष्ट है ।  
२ मत्स्यविशेष । इसका मांस स्वर्ण-जैसा होता है ।

कनकपिङ्गव ( सं० स्त्री० ) तोयविशेष । ( अरि० ११२०४ )  
कनकपुर—धामविशेष, एक गाँव । यह कपिलवस्तुसे  
१ योजन दूर अवस्थित है । यहाँ कनकमुनि नामक  
बुद्धने जन्मग्रहण किया था ।

कनकपुरी ( सं० स्त्री० ) कनकनिर्मिता पुरी, मध्य-  
पदलो० । १ स्वर्णपुरी, सोनेका गड्ढर । २ कहर ।

कनकपुष्पिका ( सं० स्त्री० ) १ गणितारिका, छोटी  
धरनी । २ द्रुमोत्पल, उमट-कमल ।

कनकपुष्पो, कनकपुष्पिका इत्यौ ।

कनकप्रम ( सं० पु० ) सोमकृताभेद । सोम देवो ।

कनकप्रभा ( सं० स्त्री० ) कनकस्य प्रभेद प्रभा यस्याः,  
मध्यपदलो० । १ महाज्योतिष्मत्प्रभा, बड़ी रत्न-  
कीर्ति । २ पोतयुष्मिका, सोनसुइ । ३ ज्वरानिवारका  
एक रस, गुष्कारके दस्ताकी एक दवा । सुवर्चोज्ञ,  
मरिच, सरानवाद, कषा, टङ्गुलक, विष और गन्धक  
समान भाग से भांगके रसमें घोटने और गुष्ठाप्रसाध  
वटिका बनानेसे यह औषध प्रसृत जाता है । इसके  
सेवनसे पत्तीमार, यहचो और पन्निमान्द्य रोग छूट  
जाता है । ( ऐदवारव० ) ४ छन्दोविशेष । इसमें  
तेरह-तेरह चरखके चारपाद रहते हैं ।

कनकप्रसवा ( सं० स्त्री० ) कनकवत् प्रसवः पुष्प-  
यस्याः, बहुव्री० । स्वर्णवैतकीहृत्त, सुनहले केवड़ेका पेड़ ।

कनकप्रसून ( सं० पु० ) घुनाकदम्ब, तिली क्षिप्यके  
कदमका पेड़ ।

कनकफल ( सं० स्त्री० ) १ धूम्रफल, जूरेका फल ।  
२ जयपाल, लमाल-गोटा ।

कनकमङ्ग ( सं० पु० ) स्वर्णपत्र, सोनेका टुकड़ा ।

कनकमय ( सं० त्रि० ) कनकस्य विभारः, कनक-  
मयट । स्वर्णनिर्मित, सोनेका बना हुआ, सुनहला ।

कनकमुनि ( सं० पु० ) बुरविशेष ।

कनकशृंग ( सं० पु० ) कनकवर्ण शृंग, मध्यपदलो०

कर्पवर्ष भृगु, सुनहरी रङ्गका हिरण्य।—सोताहरवर्षके समय मारीच नामक राक्षसने मायावस्तुसे कर्पवर्ष भृगुका रूप बना सोताकी प्रसोमित किया था।

कनकरमा (मं० स्त्री०) कनकवर्षकालिका रक्षा, मध्यपदगो०। सुवर्णकटसौ, चम्पा-केला।

कनकरम (सं० पु०) कनकवर्षों रसः उपरसः। १ हरिताल। २ गदित छर्प, गला दूधा भोगा।

कनकरेखा (सं० स्त्री०) कनकप्रभाकी घंटी।

कनककोटव (सं० पु०) कनति दोष्यते इति कना, कला दौता कला चययवः तथा उद्वयति, कनकला-उद-भू-उद-। सुवर्ण, कोशान, धूना।

कनकवती (सं० स्त्री०) कनकमस्तुखाः, कनक-मस्तुप मय्य वः स्त्रीपू०। १ स्वर्णवित स्त्री, सोनेसे लड़ी औरत। २ कनकवर्ष राजाकी राजधानी।

कनकवतीरस (सं० पु०) चर्मोधिकारका एक रस, बवासीरकी एक दवा। धारा, गन्धक, हरिताल, दैत्यबलवर्ष, साङ्गली, दन्त्यय एवं तुलसी प्रत्येक १ पल और लगन ४ पल काश्मीरी (करेको) पत्रके रसमें १ दिन घोटनेसे यह रस प्रसृत होता है। बटो गुच्छा-प्रमाण बगती है। कनकवती रसकी एक बटो प्रत्येक सैवन करनेसे रक्त, घात एवं कफ तीनोंके विकारसे उत्पन्न होनेवाला चर्मरोग मिट जाता है। (रघुनाथर)

कनकवर्ष (सं० पु०) कनकवर्ष वर्षे इव वर्षो यस्य, बहुव्री०। १ राक्षसिय, एक राजा। निदानके बीच इन्ने शास्त्रनिर्दिष्टा पूर्ण पयतार मानते हैं। (वि०) २ स्वर्णकी भांति वर्षविगिष्ट, सुनहमा, सोनेकी तरह चमकनेवाला।

कनकवाहिनी (सं० स्त्री०) काश्मीर राज्यकी एक नदी। (राजतरङ्गिणी १।१००)

कनकविषय (सं० पु०) विष्णुपुरीके एक राजा।

कनकवेल (सं० स्त्री०) धुसूरवेल, दन्तेका बीजा।

कनकगति (सं० पु०) कनकवर्षा गतिर्वाचयित्वेयो यस्य, बहुव्री०। कान्तिरेव।

कनकगिल (सं० पु०) रामायणके एक पहाड़। (विश्वनाथ १०००)

कनकमहोदयरस (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रस, कोटकी एक दवा। सुनवर्ष एवं चर तथा घृत १।१ भाग, धारा १ भाग, घोर गन्धक १ भाग चम्पके रसमें पीस मोमी बनाये। फिर इस मोमीकी बीज पात्रमें सर्वपत्रके तैलसे पकाते हैं। जब चोपय चम्पकी तरह सुन जाता, तब घृतसे नीचे उतार देय उसका रूप बनाता है। चम्पाकी छल चूर्णमें चित्तकमूल, त्रिकटु, गुडत्वक्, विडङ्ग एवं विष १।१ भाग घोर त्रिकला १ भाग डाल कागमूत्रसे गुच्छा-प्रमाण बटो बांध लेते हैं। निष्कपरिमाण बाहुधो-तेलसे साथ कनकमहोदयरसकी एक मोमी सैवन करनेसे कुष्ठरोग पारोप्य होता है। (रघुनाथर)

कनकमुन्दरस (सं० पु०) ज्वरातिमारके उपधिकारका रस, गुष्कारके दस्तोंकी एक दवा। जिह्वक, मरिच, गन्धक, पिप्पली, टण्डुप (सोङ्गानीकी मारि), विष एवं धुसूरवीज समस्त द्रव्य समभाग एकत्र भांगके रसमें एक घाम घोट करनेकी बराबर मोमी बना लेते हैं। यह चोपय चम्पाकी घोर पक्षोरोगनिवारक है। इसके व्यवहारकाल दधि, चस, मोल प्रभृति पय्य भोजन करना चाहिये। (शैवम्भरवारी)

कनकघृय (सं० स्त्री०) कनकनिर्मितं घृतम्, मध्य-पदगो०। स्वर्णघृत, सोनेका तार।

कनकमिन—एक प्राचीन राजा। इन्होंने भैरावके राना-चौकाकुल प्रतिष्ठित किया था। रानाचौके कुलतालिका-पत्रमें लिखा—कनकमेनने भारतवर्षके विषीं कषार-प्रदेगसे चन सोराष्ट्र प्रायद्वीपमें पदार्पण किया और वहाँ एक उपनिधि बना दिया। उस समय गौराष्ट्र प्रायद्वीपमें परमारवंशीय कोई राजा राज्य करते थे। कनकमेनने बलपूर्वक उनका साधत्व हीन घोरनगर बनाया। एतद्वि संशय राजावासे विजयनगर, यन्मोपुर प्रभृति कई नगरोंकी प्रतिष्ठा की। प्रशस्त—कनकमेनने जो पक्षमी संयत् बनाया था।

कनकमन्दारर (सं० वि०) स्वर्णके स्नायुमें प्रकाश-मान, जिसमें धर्मके लक्ष्मी समेत।

कनकस्तथा (सं० स्त्री०) स्वर्णकेद्वीप, चम्प-केसेका पद।

कनकस्थली (सं० स्त्री०) स्वर्णभूमि, सोनेकी कान।  
कनकाद्द (सं० स्त्री०) कनकमय पद्मदम्, मध्य-  
पदली०। १ स्वर्णनिर्मित केयूर। (पु०) २ धृत-  
राष्ट्रके एक पुत्र।

कनकाद्दौ (सं० पु०) कनकाद्दमस्याक्षि, कनकाद्द-  
द्विनि। विष्णु।

“महाभारते गोविन्दः द्रुपदः कनकाद्दौ।” (विष्णुसहस्र०)

कनकाक्षल (सं० पु०) कनकमयो वृक्षः, मध्य-  
पदली०। १ सुमेध पर्वत। २ धान्यादि द्रव्य दानोंमें  
एक दान। इनका प्रमाण तीन प्रकार है। सहस्र  
एक स्वर्णदानको उत्तम कनकाक्षल कहते हैं। इसी  
प्रकार पाँच सौ पलमें मध्यम और द्वादश सौ पलमें  
प्रथम कनकाक्षल दान होता है। अतिरिक्तों ऐसे  
ही कनकाक्षल दान देनेसे सब पाप मिटता और  
ब्रह्मलोक मिलता है। (कृति)

कनकाक्षलि (सं० स्त्री०) कनकपूर्ण वृक्षः,  
मध्यपदली०। एक माहात्मिक दान।

कनकाक्षली (सं० स्त्री०) कनकाक्षलि-क्षौद्र। एक  
माहात्मिक दान। किसी देवार्चनाके पीछे प्रतिमा  
विशुद्धकाल संध्या गृहकर्त्री स्वयं वेशभूषा बना  
वाग्यान्व सधवा स्त्रियोंके साथ प्रतिमा वरपर्य्यंक  
पचना वृक्षन केला देतो है। उसी समय गृहस्वामी  
प्रतिमाके पद्यासुते उक्त वृक्ष पर मुद्रायुक्त तण्डुलपात्र  
निक्षेप करता है। कर्त्री वृक्षन उठा और मस्तकपर  
लगवा गृहकी चली जाती है। उस समय उन्हें जलकी  
धारासे ले जाना पड़ता है। इसीका नाम कनकाक्षली  
है। विवाहकी यात्रासे समय भो इसीप्रकार कनका-  
क्षली दान करनीकी प्रथा है।

कनकाद्रि (सं० पु०) कनकमयो इन्द्रिः, मध्यपदली०।  
सुमेध पर्वत।

कनकाद्रिपण्ड (सं० स्त्री०) स्कन्दपुराणका एक  
धर्म।

कनकाक्षय (सं० पु०) कनकस्थ रश्मि वृक्षः,  
मध्यपदली०। स्वरश्मि, सोनेका सुहाविल। इसका  
संस्कृत पर्याय भारिक है।

कनकानी (हिं० पु०) पद्ममेद, किसी विष्णुका

घोड़ा। यह पाकारमें गर्दभसे अधिक बड़ा नहीं  
होता। कनकानी खूब कदम चलता और हवाकी  
तरह उड़ता है।

कनकाक्षक, कनकाक्ष देवो।

कनकायु (सं० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

कनकारक (सं० पु०) कनकमिव सवता अच्युति  
व्याप्नोति दीप्येति शेषः, कनक-अ-अ-ए स्वार्थ कन्।  
कोविदारहच, सुनहले कथनारका पेड़।

कान्धार और कोरिहार देवो।

कनकालुका (सं० स्त्री०) कनकनिर्मित पाशुः  
सन्निपाद्याधारपात्रविभेदः, कनकालु संघ्रायी कन्-  
टाप्। सुवर्णशृङ्गार, सानेकी सुराही।

कनकासव (सं० पु०) विद्याधामका पासव, विष्णुकी  
और दम्बिकी सीमारोका एक धर्म। कन, मूल, पत्र  
एवं ग्रापा सहित धूम्र ४ पल, वासकके मूलकी  
जान ४ पल, पिप्पली, यष्टिमधु, कण्टकारी, नागेश्वर,  
गुण्डी, भार्गी तथा ताक्षोगपत्रका सूत्र ३२ पल,  
द्राक्षा २० पल, जल १२८ शरावक, गर्करा खाड़े  
१२ शरावक और मधु सवा ४ गैर एकत्र घड़ेमें १ मास  
भरकर रखनेसे यह पासव प्रसृत होता है। कनकासव  
जानकर पीनेसे बिजा और म्हामरोग हट जाता है।

(ईश्वरराजपरो)

कनकाद्य (सं० स्त्री०) कनकस्थ पात्रा नाम यज्ञ,  
वृक्षी०। १ ग्रेत धूम्र, सकेद धूम्र। २ तण्डुलीय  
शाक, चौराई। ३ जयपालहव, जमानगोटिका पेड़।  
४ धूम्रहव, चूरुका पेड़। ५ नागकेशरहव।

कनकाद्यय (सं० पु०) कनक पात्रयो यय, वृक्षी०।  
गुहदेवका एक नाम। पनाम वरुण निषे वरचय देवो।

कनकी (हिं० स्त्री०) १ सुद कण, छोटा टुकड़ा।  
प्रधानतः तण्डुलके सुद कणोंको ‘कनकी’ कहते हैं।

कनकूत (हिं० पु०) कनकीका अनुमान, दानकी  
पान्दाज। चैतमें पके पचके अनुमान करनेका नाम  
कनकूत है। समीन्द्र शयं वा हिमो दूधमसे पको  
पूषणमें जोन्दासे पनाजकी पनाजः लगा छपकडी  
सूत्र दे देता और पनाज ले लेता है।

कनकेश्वर (सं० स्त्री०) सोर्धेविमय।



कनकैया ( हिं० स्त्री० ) छोटा कनकौवा, गुच्छो।  
 कनकोद्वय ( सं० पु० ) मद्दासकद्वय, चपनेका पेड़।  
 कनकौवा ( हिं० पु० ) बड़ा पतझ, बड़ी गुच्छो। यह  
 पतने कागुज्जका वनता है। कागुज्जकी गोम-गोम  
 काट बीचमें बांधकी एक कुट्ट मीटो-जेसी खपाच  
 सीईके सहारे लगाते हैं। इसका नाम ठंडा है। फिर  
 बांधकी दूसरी पतनी खपाच लचाकर कमाल-जैसी  
 बनाते और गोम कटे कागुज्जके सिरेपर रख दोनों  
 कोनी सीईमें चपकाते हैं। मोचे दाहरे कागुज्जका एक  
 पत्ता भी लगा दिया जाता है। ऊपर जहाँ दोनों  
 खपाचें मिलती और मोचे पत्तेके पास दो-दो छेद  
 कर चुनकी पतनी छोरसे बसा बांधते हैं। ऊपरके  
 छेद ऐसे रहते जिसमें छोर छाननेमें दोनों खपाचें  
 फँस जाती हैं। फिर कच्चेको छोर बराबर तान  
 मोचेको एक चञ्चल बड़ा गाँठ लगा देते हैं।  
 इससे कनकौवा हवा लगनेसे खूब बढ़ता और काट  
 चमकता है। चमककी गाँठके ऊपर दूसरी छोर बांध  
 कनकौवा बढाया जाता है। जिसे अभ्यास रहता,  
 यह हलसे ही कनकौवा बढ़ा सकता है। किन्तु  
 नये खेलाडीको टीकी संगाना पड़ती है। एक पादमी  
 छोरसे बाँधे कनकौवाको दूर ले जा और ऊपर उठा  
 कर छोड़ देता है। उसके ऊपर उठाकर छोड़ते ही  
 कनकौवा उड़ानेवाला छोरको तानता है। इसीका  
 नाम टोकी है। इससे कनकौवा बढ़नेमें विनम्य  
 नहीं लगता। छोर दो प्रकारकी होती है—एक  
 सादो और दूसरी मञ्जदार। काचका कूट-पोष और  
 सीईमें खान कीई रख मिलानेसे मञ्जा बनता है।  
 छोरका एक सिरा किसी चीजमें बाँध और दूसरा  
 सिरा बाँधे हाथमें रख सीईमें सना हुआ काच रगड़नेसे  
 मञ्जा चढ़ता है। मञ्जा कनकौवा उड़ानेमें काम  
 आता है। इससे दूसरेका कनकौवा काट देते हैं।  
 जिस यन्त्रपर छार चढ़ाकर रखते, उसे कुचका या  
 लट्ठाई कहते हैं। कुचका बाँधकी खपाचोंका बनता  
 है। लट्ठाईमें सिर्फ सक्कीके पतले-पतले टुकड़े  
 लगते हैं। कनकौवा दो तरहसे उड़ाया जाता है—  
 खींचसे और टोचसे। खींचसे मोचे और टोच-

वाले ऊपरके मोचे होते हैं। पहले भोग प्रायः टोचसे  
 ही कनकौवा उड़ाते थे। किन्तु आजकल खींचको  
 खान ज्यादा देख पड़ती है। सपुनलका कनकौवा  
 प्रसिद्ध है। कनकौवा कई तरहका होता है—मकेद,  
 खान, पीसा, नीला, कटारोदार, गिलासदार, पधराडा  
 इत्यादि। टमडीका दमड़वी, छदामका कदमबो,  
 घेलेका घेलवी, पेसेका पेसेदल, टकेका टकेदल और  
 गच्छेका कनकौवा गच्छेदल कहलाता है। ज्यादा  
 बड़े कनकौवाको भररा कहते हैं। ऊपरदार कन-  
 कौवाका नाम तुकल है। इसे प्रायः नखसे उड़ाते  
 हैं। सन और रैगम मिलाकर बनायो जानेवाली  
 छोर नख कहाती है। यह बड़ी सुझिकनी कहती  
 है। पहले लाग चुनकी पतनी छोरपर मञ्जा चढ़ाते  
 थे। किन्तु आजकल विदेगोरीके सामने उसे कोई  
 नहीं पूछता। कनकौवा उड़ानेमें बड़ा डर रहता  
 है। कारण उड़ानेवाले चाकामको और ताका  
 करते और कभी-कभी काठसे गिरकर मर मिटते हैं।

कनकक ( ये० पु० ) विविविग, एक जूहर।

कनखजूरा ( हिं० पु० ) शतपदी, हजारपा, कनखोजर,  
 कनखनाई ( Centipede )। इसकी बाइसरी रधाको  
 ऊपरी रगोंमें पचास कोष रहता, जो प्रायः दो चतु-  
 र्भुजि प्रवृत्त पड़ता है। पातन कोषपर गिरकनक  
 होता है। इसीमें चक्षु देख पड़ते हैं। कनखजूरेके  
 कई पैर रहते हैं। इनमें कोई छोटा और कोई बड़ा  
 होता है। इसीसे इसको संस्कृतमें शतपदी ( सक्की  
 पैरवाला ) और फारसीमें हजारपा ( हजारों पैरवाला )  
 कहते हैं। इसका पद प्रायः छह खण्डमें विभक्त है।  
 कनखजूरा प्रयोग टांगिसे दूसरेका मार और चपनेको  
 बचा भी सकता है। इसके प्रायः चक्षु नहीं होते।  
 किन्तु जिसके चक्षु रहते, उसके एकसे चालीस तक  
 देख पड़ते हैं। यह काट खाता और चिपक भी  
 खाता है। भारतवासी कनखजूरेको लज्जोपुत्र कहते  
 हैं। जहाँ यह निरुलता, महाँ घनराशि रहनेका  
 अनुमान लगता है। कनखजूरेका हिन्दू नहीं मारते।  
 कनखना ( हिं० कि० ) अप्रमत्त होना, मुरा मानना,  
 रुठना।

**कनखल**—युक्तप्रदेश के सहारनपुर जिले का एक नगर ।  
 यह अक्षा० २८° ५५' ४५" उ० और देशा० ७८° ११' ५०" पू० पर अवस्थित है । कनखल हरिद्वार से बाघकोस दक्षिण गङ्गा के पश्चिमतीर पर होता है । भूमिका परिमाण ६३ एकर है । नगर के दक्षिण भाग में दशेश्वर महादेव का मन्दिर बना है । इसी मन्दिर के निकट सती के प्राण श्राद्धों पर शिव ने दण्ड्य ध्वंस किया था । भारतवासी कनखल को एक पुण्यतीर्थ मानते हैं । यहाँ स्नान करने में सर्वथाप छूट जाते और लोग सुक्ति पाते हैं । ( भारत, पृष्ठ १६५ )

हर्म और निहुराण के मत में कनखल में दण्ड्य श्राद्ध हुआ था । ( इति ११८५, निहुरा १००८ )  
 कनखल के मकान बहुत सुन्दर हैं । अनेक प्राचीनों में पौराणिक विषय खिंचे हैं । यहाँ गङ्गा के तट पर मनाहर उद्यान शोभित हैं । गङ्गा से उनका दृश्य बहुत अच्छा लगता है ।

कनखल में अधिकांश ब्राह्मण रहते हैं । यह हरिद्वार-मन्दिर के पुरोहित या पण्डा हैं । हरिद्वार में सुविधा न पड़ने से उन्होंने अपने लिये यहाँ मकान बना लिये हैं । जबलपुरी ब्राह्मणों के साथ उनकी कन्याका आदान-प्रदान चलता है । किसी चपर स्थान के ब्राह्मणों को वह प्रायः अपने कन्या नहीं देते । हरिद्वार के अनेक यात्री कनखल दर्शन करने आते हैं । हरिद्वार देखो ।

**कनखला** ( सं० स्त्री० ) गङ्गा नदी की एक शाखा । यह नदी बालूबीपुर में प्रवाहित है । ( बालूबीपुर २८१ )  
**कनखिया** ( हिं० स्त्री० ) कनखी, कटाच, तिरछी नगर ।  
**कनखियाना** ( हिं० स्त्री० ) कनखी मारना, कटाच करना ।  
**कनखी** ( हिं० स्त्री० ) कटाच, बाँखला इगारा, तिरछी नगर ।  
**कनखुरा** ( हिं० पु० ) छपविशेष, रीहा, एक घास । यह घास में अधिक उत्पन्न होता है ।  
**कनखिया** ( हिं० स्त्री० ) १ कनखी, कटाच, तिरछी नगर । ( हिं० ) २ कनखी मारनेवाला, कटाच करनेवाला, जो बाँखी पुतली मुमाकर इगारा करता हो ।

**कनगुत्र** ( हिं० पु० ) कर्षणविशेष, खान को एक बीमारी ।  
**कनगुरिया** ( हिं० स्त्री० ) कनिकिका, हाथ की चर्म की टोटी घंगनी ।  
**कनकदन** ( हिं० ) कर्षण विशेष ।  
**कनटी** ( सं० स्त्री० ) रत्नवर्ण मत्त, लाल मटिया ।  
**कनटोप** ( हिं० पु० ) एक बड़ी टोपी । हमने दोनों कान टंक जाते हैं । हमें प्रायः गीत श्रुति में व्यवहार करते हैं ।  
**कनदेव** ( सं० पु० ) एक बौद्धमुनि ।  
**कनधार** ( हिं० ) कर्षण विशेष ।  
**कनन** ( सं० स्त्री० ) कन-पुच्छ । काच, काना ।  
**कनप**, कनप देखो ।  
**कनपट** ( हिं० पु० ) १ कर्षण एवं चपुका मध्यस्थ, कान और पाँख के बीच की जगह । २ तमाचा, चप्पड़ ।  
**कनपटी** ( हिं० स्त्री० ) कनपट देखो ।  
**कनपेडा** ( हिं० पु० ) कर्षणविशेष, खान की एक बीमारी । हमें कर्षण के मूल पर एक चपटी मिट्टी पड़ती, जो न बैठने पर पकती है ।  
**कनफटा** ( हिं० पु० ) एक उच्च उपासक सम्प्रदाय । ये उपासक सम्प्रदाय में साधारणतः दो श्रेणी देख पड़ती हैं—नग्रासी और योगी । योगी योग को पकड़ साधना का एक व्यवसाय करते हैं । फिर वह योगी-श्रेणी भी नामा श्रेणी में विभक्त है । कनफटा श्रेणी ही एक श्रेणी के योगी जाते हैं । समय शर्तों में हिंदू रहने से जो कनफटा नाम पडा है । यह नहीं, कि केवल कनफटा धार्मिकों को ही खान सिदाना होता है । किन्तु सभी श्रेणियों के योगी खान सिदाना लेते हैं । परन्तु श्रेणीशान्ति हमें कुछ विवेक रहता है । कनफटे अपने कर्षण के हिंदी में कुण्डल पहनते हैं । यह कुण्डल पत्थर, बिजोर, गेटे के शृङ्ख, मटो या लकड़ी के बनते हैं । दोषों के समय हमें प्रथम धारण करना पड़ता है । कुण्डल मुद्रा या दर्शन कहाने हैं । इसीसे कनफटा का नाम 'दर्शन-योगी' भी है । इन कुण्डलों को छोड़ यह शृङ्ख

कनफटाप्रमाण एक लाखवर्ष पदार्थ परमके होरसे बाध अपने गलेमें डाले रहते हैं। उक्त लाखवर्ष पदार्थको 'नाद' और परमके होरेको 'सेनो' कहते हैं। नाद, सेनो और दर्शन रखनेवाले योगी, दूरसे ही कनफटा मानस होते हैं। सिवा इसके यह गिरहा बध्न सज्जते, कटा बढ़ाते, भध्न बढ़ाते और विभूतिका विपुष्ट प्रगाते हैं।

गुरु गोरक्षनाथ इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। कनफटे गोरक्षनाथकी शिष्यका अवतार मानते हैं। फिर गोरक्षनाथने ही चटयोग भी चलाया था। इसीसे कनफटे योगी आदि गुरुका प्रचारित पथ पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

रक्षाधिपति की भांति कनफटे योगी भी नागा गुरु मानते हैं। फिर इन गुरुओंमें कोई शिष्यको मस्तक मुँहाने, कोई कर्णमें सुझा लटकाने और कोई ज्योत्स्नार्थमें जानीषा आदेश देता है। 'ओम्' देवो।

भारतवर्षके पश्चिमाञ्चलमें इस श्रेणीवाले योगी सचराचर देख पड़ते हैं। यह सभी शिष्यकी पूजामें समय बिताने और किसी न किसी शिवमन्दिरमें अपना आश्रम जमाने हैं। कहीं कहीं अनेक कनफटे एकाग्र रह भिन्ना द्वारा अपना जीवन चलाते और कोई तीर्थभ्रमणके लक्ष्यसे देश-देशान्तर घूम-फिर पाते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकांश उदासीन होते हैं। फिर कोई-कोई विषयकार्यमें भी लित रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरक्षनाथके नामपर युक्तप्रदेशमें अनेक स्थानिका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। पैशावरमें गोरक्ष-चैत्र नामक एक स्थान है। फिर दूरसे गोरक्षचैत्र द्वारकाके निवृत्त अवस्थित है। हरिद्वारके निकट एक 'सुहृद्' पड़ता है। यह सुहृद् और द्वारकाका गोरक्षचैत्र कनफटे योगियोंका प्रतिश्रय तीर्थ है। निपाहके पश्चिमनाथ, मियारके एकलिंग प्रभृति विख्यात शिवमन्दिर भी इनके सम्प्रदाय संक्रान्त हैं। कश्यपके पास दमरुमें 'गोरक्ष-बांसरो' नामक एक स्थान है। दश तीग मनुष्यमूर्ति और शिव, काली

एवं हनुमान् प्रभृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्थानीय पूजक उक्त तीनों मनुष्यमूर्तियोंको दत्तात्रेय, गोरक्ष-नाथ और रुद्रसेन्द्रनाथ बताते हैं। त्रिवेणीसे ४१५ कोस दक्षिण महानाद ग्राममें जटेखर नाम एक शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके अधिकारमें है। जटेखर मन्दिरके निकट वसिष्ठ-गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रकृत गङ्गाकी भांति पवित्र मानते हैं। जटेखरके मन्दिरमें एक योगी रहते हैं। उनके यष्ट वियपादि विद्यमान हैं। लुम्हीन्दारो की भी धूमधाम रहती है। लोग उन्हें योगोराज कहते हैं। योगी राजाओंका वंश बहु कालसे प्रचलित है। वह दारपरिपत्र नहीं करते। योगीराजके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और विषयादिका उत्तराधिकारी होता है। जटेखर शिव और वसिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी समय महानाद ग्राममें एक दक्षिणावर्त शङ्ख घा गिरा था। वायु सगने पर उससे 'महानाद' शब्द उत्पन्न हुआ गुरु निखल पड़ा। फिर देवताओंने उस शब्दसे चौक-और वहाँ पहुँच जटेखर शिव तथा वसिष्ठ-गङ्गाको प्रतिष्ठित किया। शङ्खके महानादसे ग्रामका नाम भी महानाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें चौरासी सिद्ध योगियोंका नाम विशेष विख्यात है। चटयोगप्रदीपिकामें चटयोग-साहाय्यके वर्षानुसंधार निम्नलिखित कई नाम पाये जाते हैं—आदिनाथ, सत्सेन्द्रनाथ, सारदानन्द, भैरव, चौरङ्गि, मोन, गोरक्ष, विष्णुपाद, विलियम, महुन भैरव, सिद्धोष, कन्यद्वी, कौरण्डक, स्थिरानन्द, सिद्धपाद, चट्टो, कर्ण-पुष्पपाद, नित्यनाथ, निरञ्जन, बापाल, विन्दुनाथ, काकाण्ठोदरनाथ, प्रलय, प्रभुदेव, घोड़ाखोली, टिप्टिमी, भट्टो, नागबोध और खण्डकापालिक। यह सब महासिद्ध हैं।

युक्तप्रदेशका गोरक्षपुर कनफटेका प्रधान स्थान है। पहले वहाँ इनका एक मन्दिर रहा। अन्तः-सद दोनूने उसे तोड़ फोड़ उसे जगद एव महाजिद बनाया है। कुछ जगद पीछे उनी जगद फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु औरङ्गजेबने उसे भी तोड़ा-फोड़ा सुसज्जमानोंका भजनालय निर्माण कराया। अन्तर्को दुहनाथ नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनाया उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवलिङ्ग और अनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—प्राचकन भी अनेक सिद्ध योगी पृथिवीपर रहते और नाना स्थान घूमते फिरते हैं। राजस्थानीय एकलिङ्गके गोस्वामी कनफटोंके ही अन्तर्गत हैं। द्वारपरिचरमें दूर रहते भी वह वाणि-छादि करते हैं। उनके अधीन सेकड़ों योगी हैं। प्राच्यक पानिसे वह दल बांध युद्धादि भी करते हैं।

कनफुं कवा, कनफुं का देवी।

कनफुं का ( हिं० वि० ) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो दीक्षा या मन्त्र देता हो। २ दीक्षा लेनेवाला, जो अपना कान फुंका हुआ हो। (पु०) १ गुरु। ४ शिष्य।

कनफुंची ( Confusius )—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुंची चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि प्रतिष्ठाता और शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवर्तित धर्मशास्त्रको जत जत वर्तमानका प्राचीन होते भी जैसे हिन्दू गिरिधायं समझते, वैसे ही महात्मा कनफुंचीके धर्मशास्त्रपर आजतक अक्षय, अक्षय एवं अक्षय भावसे समान दृष्टिसे चीना चलते हैं। कालके प्रभावसे हिन्दुओंकी रीतिनीति स्थानविशेषमें मानवमात्रसे इन दिनां कुछ बदल गये हैं। किन्तु महात्मा कनफुंचीका शास्त्र इतना सर्वकाल एवं सर्वत्राधिके लागिके नियम उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष जाते भी आज उसमें कोई व्यतिरिक्त न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अक्षय फल लगा है। चीन-जैसे बृहत् साम्राज्यका कोई सामान्य अधिवासी यह शिक्षा छोड़ अन्य मत अवलम्बन कर नहीं सका है। इनकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अक्षय भक्ति रख जगत्के मध्य सर्वाधिका धर्मप्राप्त और श्रद्धालु बन गये हैं। पाश्चात्यसभ्यतामिसानी अवतितस्व-

वित् कहते—उस प्रागाका अनुसरण कर सिद्धि की चेष्टासे ही मनुष्य उन्नत होते रहते हैं। किन्तु चीनवासी-देखनेसे यह विषय नितास्त असमंजस समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुंचीके शिक्षा-वस्तुसे वह उच्च प्रागाका नाम नहीं जानते। अथवा तीन सहस्र वर्ष पहले उक्त महात्मासे जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे प्रविशके मध्य आज भी इनका दल धार्मिक, श्रद्धालु और आन्तरिक कहलाया है। महात्मा कनफुंची ईश्वरके प्रेममें उदासीन रहनेको अपेक्षा मानव जीवनको मनो-हारिता और समस्त-हारिता सम्पादन करनेको ही मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। यह कहते रहे,—“अपने, अधिन्य एवं अवाङ्मनसगोचर ईश्वरको पानिके नियमों के नीचे आने की और पितामाता आर्योय स्वजन तथा कन्यापुत्र छोड़ नानाविध परम-साधिका एवं अनिमानुषिक क्रियाकलापके अनुष्ठानकी अपेक्षा इष्टजीवनकी विनिश्चयता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही युक्तिमत्त है।” महात्मा कनफुंचीकेवल मनुपदेशक, धार्मिक, विद्वान और नीतिज्ञान ही न थे। इनमें यथार्थ व्यक्ति और स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन कालसे लोगोंकी जनतन्त्र और भक्तिमत्त कर ही पर्यवसित नहीं रहा। आज भी इनका कार्य पृथिवीके मध्य सर्वाधिका अधिकांश अधिवासी-समस्त राज्यमें चलन भावसे चल रहे हैं। इनकी प्रवर्तित नीतिनीति चीनदेशमें बराबर सन्नाह और सामान्य प्रसिद्ध करके समान स्थानके साथ प्रतिपादित होती पायी है। इनके उपदेशका प्रभाव राज्यके सकल राजकीय आज भी अभी प्रयत्न भावसे चल रहा है।

इन महात्माके जन्म के समय चीन-महादेश परतमान विस्तारका एक-वर्षाव साथ था। राज्यमें सर्वत्र सामन्तप्रथा प्रचलित रही। उस समय समस्त राज्य एक प्रधान और अन्त्या अनेक सुदृष्टाधिके विभक्त था। किन्तु प्राचीन कालकी चीन देशमें गुरो-पादि महादेवोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद लक्षित होता था। प्रथमतः सम्राट्

चन्द्रलिपुमात्र एकं क्षण्यर्थं पदार्थं पद्ममके होरिसे  
बाध पधने गसेमं हाने रचते है। उक्त क्षण्यवर्ण  
पदार्थको 'नाद' और पद्ममके होरको 'सेमी' कहते  
हैं। नाद सेमी और दशन रखनेवाले योगी दूरसे  
ही कनफटा मान्त्रम होत है। सिवा इसके यह  
मिश्रता दफ्न सजाते, कटा बढ़ाते, भग्न चढ़ाते और  
विमुक्तिका त्रिपुष्टु सजाते हैं।

गुरु गोरक्षनाथ इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे।  
कनफटे गोरक्षनाथकी शिवका अवतार मानते हैं।  
फिर गोरक्षनाथने ही जठयोग भी चलाया था।  
इसीसे कनफटे योगी आदि गुरुका प्रचारित पय  
पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

रक्षाधिकी भांति कनफटे योगी भी माना गुरु  
मानते हैं। फिर इन गुरुओंमें कोई शिष्यको मस्तक  
मुँहाने, कोई कर्णमें कुद्रा कटकाने और कोई ज्योत्स्ना-  
मार्गमें लानेवा आदेश देता है। ज्योत्स्ना देको।

भारतवर्षके पश्चिमाञ्चलमें इस श्रेणीवाले योगी  
सचराचर देख पड़ते हैं। यह सभी शिवकी पूजामें  
समय बिताते और किसी न किसी शिवमन्दिरमें  
अपना आश्रम जमाते हैं। कहीं कहीं अनेक कनफटे  
एकत्र रह भिन्ना द्वारा अपना जीवन चलाते और  
कोई तीर्थभ्रमणके सङ्ग्रहसे देश-देशान्तर घूम-फिर  
जाते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकशः उदासीन  
होते हैं। फिर कोई-कोई विषयकार्यमें भी निरत  
रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरक्षनाथके नामपर युक्तप्रदेशमें अनेक  
स्थानोंका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान  
कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। पैशावरमें गोरक्ष-  
सिंह नामक एक स्थान है। फिर दूसरा गोरक्षसिंह  
हारकाके निकट अवस्थित है। हरिद्वारके निकट  
एक 'सङ्क' पड़ता है। यह सङ्क और हारकाका  
गोरक्षसिंह वनफटे योगियोंका प्रतिश्रेय तीर्थ है।  
नैपाथके पशुपतिनाथ, मिवाके एकलिंग प्रभृति  
विख्यात शिवमन्दिर भी इन्हींके सम्प्रदाय संक्रान्त हैं।  
बरेल्लेके पास रमरुमें 'गोरक्ष-बाँसरो' नामक एक  
स्थान है। दश तीनों महामूर्ति और शिव, काशी

एवं हनुमान् प्रभृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्थानीय  
पूजक उक्त तीनों महामूर्तियोंकी दत्तात्रेय, गोरक्ष-  
नाथ और रुद्रसम्प्रदाय बताते हैं। त्रिवेणीसे ४१५  
कोस दक्षिण महानाद घाममें जठेश्वर नाम एक  
शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके  
अधिकारमें है। जठेश्वर मन्दिरके निकट पश्चिम-  
गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और  
तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रकृत गङ्गाकी भांति  
पवित्र मानते हैं। जठेश्वरके मन्दिरमें एक योगी  
रहते हैं। उनके यथेष्ट विषयादि विद्यमान हैं।  
कुम्भीन्दारो की भी घूमघाम रहती है। लोग उन्हें  
योगीराज कहते हैं। योगी राजाओंका वंश बहु  
कालसे प्रचलित है। वह दारपरिपक्ष नहीं करते।  
योगीराजाके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और  
विषयादिका उत्तराधिकारी होता है। जठेश्वर-शिव  
और वशिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी  
समय महानाद घाममें एक दक्षिणवर्त गङ्ग आ  
गिरा था। वायु लगने पर उससे 'महानाद' अर्थात्  
महाशब्द निकल पड़ा। फिर देवताओंने उस शब्दसे  
चौक-और वर्षा पड़ने पर जठेश्वर सिद्ध तथा पश्चिम-  
गङ्गाको प्रतिष्ठित किया। शब्दके महानादसे घामका  
नाम भी महानाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें शैरासी सिद्ध योगियोंका नाम  
विशेष विख्यात है। जठयोगप्रदीपिकामें जठयोग-  
माहात्म्यके वर्षान्त्यखण्डपर निम्नलिखित कई नाम  
पाये जाते हैं—आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द,  
भैरव, चौरङ्गि, मोन, गोरक्ष, विष्णुपाद, विलेगय,  
महुन भैरव, सिद्धोष, कज्जरी, कौरण्डक, स्थिरानन्द,  
सिद्धपाद, चण्डो, कर्ण-पुष्पपाद, नित्यनाथ, निरञ्जन,  
वापासि, विन्दुनाथ, काकाण्डेश्वरनाथ, चण्डय,  
प्रभुदेव, घोड़ाबुखो, टिण्टिमी, भल्लटो, नागबोध और  
एककापासिक। यह सब महासिद्ध रहें।

युक्तप्रदेशका गोरक्षपुर कनफटेका प्रधान स्थान  
है। पड़ने वहाँ इनका एक मन्दिर रहा। अला-  
उद् दोनूने उस तोड़ फोड़ डाले जगह एक मसजिद  
बनवा दी। कुछ काल पीछे उनी जगह फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु घोरकल्लेवने उसे भी तोड़ा-फोड़ा। सुमलमानोंका सलनानय निर्माण कराया। भक्तकी बुढ़नाय नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनाया उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवलिंग घोर अनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—प्राजकन भी अनेक सिद्ध योगी पृथिवीपर रहते घोर माना स्थान धूमते फिरते हैं। राजस्थानीय एकलिंगकी मोक्षामी कनफटोंकी ही अन्तर्गत है। द्वारपरिग्रहें दूर रहते भी वृद्ध बाण-ज्यादि करते हैं। उनके अधीन सैकड़ों योगी हैं। आवश्यक कामसे वृद्ध दल वीध सुहादि भी करते हैं। कनफुं कवा, कनफुं का देहो।

कनफुं का ( हिं० पि० ) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो दीक्षा या मन्त्र देता हो। २ दीक्षा लेनेवाला, जो अपना कान फुंका चुका हो। (पु०) १ गुरु। ४ शिष्य। कनफुंची (Confucius)—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुंची चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि प्रतिष्ठाता घोर शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवर्तित धर्मशास्त्रकी गत गत यत्नरका प्राचीन होती भी ऐसे हिन्दू गिरोधार्थ समझते, ऐसे ही महात्मा कनफुंचीके धर्मशास्त्रपर आजकल अक्षय, अम्य एवं अचल भावने समान चलते चीना चलते हैं। कालके प्रभावसे हिन्दुओंकी रीतिनीति स्वानुविशेष मान्यग्राह्यसे दल दिनों कुछ बदल गयी है। किन्तु महात्मा कनफुंचीका शान्त हृदय सर्वकाल एवं सर्वत्रोके लागा कि निधे उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष जाते भी आज उसमें कोई व्यतिरिक्त न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अक्षय फल जगा है। चीन-जैसे उच्छृंखल साम्राज्यका कोई सामान्य अधिवासी वृद्ध शिक्षा छोड़ अन्य मत पवलम्यन कर नहीं सक्ता है। इन्हींकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अचल मक्ति रख जगत्के मध्य सर्वविद्या धर्मप्राप घोर श्रद्धावृद्ध समझे गये हैं। पाश्चात्यसभ्यताभिमानो उच्चतितत्त्व-

वित् कहते—उच्च पाशाका अनुसरण कर सिद्धी की चेष्टासे ही मनुष्य उन्नत होते रहते हैं। किन्तु चीनवासीको देखनेसे यह विषय नितास्त प्रमूलक समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुंचीके शिक्षा-यन्त्रसे वृद्ध उच्च पाशाका नाम नहीं जानते। दसव तीन सहस्र वर्ष पहले उच्च महात्मासे जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे पृथिवीके मध्य आज भी उनका दस धार्मिक, श्रद्धावृद्ध घोर आन्तरिक कहाया है। महात्मा कनफुंची ईश्वरके प्रेममें उदासीन रहनेको अपेक्षा मानव जीवनको मनो-हारिता घोर चमत्कारिता सम्पादन करनेको जो मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। यह कहते रहे,—“अप्रमेय, अचिन्त्य एवं अवाहमनमोघर ईश्वरको पानेके निधे वैरागी की घोर पितामता आत्मोय स्वजन तथा कन्यापुत्र छोड़ नानाविध धर्म-साधक एवं अतिमानुषिक क्रियाकलापके अनुष्ठानकी अपेक्षा इहजीवनकी विनिश्चिता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही युक्तिमद्गन है।” महात्मा कनफुंचीकेवल मनुपदेशके, दार्शनिक, विषयपर घोर मोतिकुलग्न हो न थे। इनमें यथार्थ व्यक्तित्व घोर स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन ज्ञानमें नोनोंको चमत्कृत घोर अतिमनुष्य कर जो पर्यवर्तित नहीं हुआ। आज भी इनका कार्य पृथिवीके मध्य सर्वविद्या अधिकांश अधिवासी-मध्यस्थ राज्यमें प्रचल आधुनिक फल दे रहा है। इनकी प्रवर्तित शक्तिमोति चीनदेशमें बराबर सम्राट् घोर सामान्य भित्तुक कर्तव्य समान सम्राट्के साथ प्रतिपादित जाती पायी है। इनके उपदेशोंका प्रभाव राष्ट्रके सदन व्यक्तमें आज भी अभी प्रमय भावसे पड़ रहा है।

इन महात्माके जन्म लेते समय चीन-महादेश वर्तमान विस्तारका एक-चतुर्थांश मात्र था। राष्ट्रमें सर्वत्र सामन्तप्रथा प्रचलित रही। उस समय समस्त राज्य ईश्वर प्रधान घोर अन्याय अनेक उच्छृंखल विभक्त था। किन्तु प्राचीन ज्ञानकी चीन देशमें सुरो-पादि महादेशोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद लक्षित होता था। प्रथमतः सम्राट्

चक्रलिपुमात्र एक लक्ष्यार्थ पदार्थ पञ्चमके होरसे  
वाध पदने मनेमें छाने रहते हैं। उक्त लक्ष्यवर्ण  
पदार्थको 'नाद' और पञ्चमके होरको 'सिन्धो' कहते  
हैं। नाद, सिन्धो और दर्शन रखनेवाले योगी दूरसे  
ही कनफटा मामूम होते हैं। सिन्धो इसके यह  
महत्वा ददा सकते, कटा बढ़ाते, भङ्ग बढ़ाते और  
विभूतिका त्रिपुण्य मगाते हैं।

गुरु गोरक्षनाथ इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे।  
कनफटे गोरक्षनाथकी शिवका अवतार मानते हैं।  
फिर गोरक्षनाथने ही हठयोग भी चलाया था।  
इसीसे कनफटे योगी आदि गुरुका प्रचारित पथ  
पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

रक्षासिद्धीकी भांति कनफटे योगी भी नागा गुरु  
मानते हैं। फिर इन गुरुओंमें कोई शिष्यको मन्त्रक  
सुँछाने, कोई वर्षमें कुछ कटकाने और कोई ज्योति-  
स्मार्तमें जाननेवा आदेश देता है। ज्योत्स्ना देखो।

भारतवर्षके पश्चिमाञ्चलमें इस त्रैलोक्यासे योगी  
सुचराचर देख पड़ते हैं। यह सभी शिवकी पूजामें  
समय बिताते और किसी न किसी शिवमन्दिरमें  
पचना आश्रम बनाते हैं। कहीं कहीं अनेक कनफटे  
एकत्र रह भिन्ना द्वारा अपना जीवन चलाते और  
कोई तीर्थभ्रमणके दृष्ट्यसे देश-देशान्तर घूम-फिर  
जाते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकतर उदासीन  
होते हैं। फिर कोई-कोई विषयकार्यमें भी निम्न  
रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरक्षनाथके नामपर शुक्रप्रदेशमें अनेक  
स्थानोंका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान  
कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। पेशावरमें गोरक्ष-  
सिन्ध नामक एक स्थान है। फिर दूसरा गोरक्षसिन्ध  
हारका निषट् अयस्थित है। हरिद्वारके निकट  
एक 'सङ्ग्रह' पड़ता है। यह सङ्ग्रह और हारकाका  
गोरक्षसिन्ध कनफटे योगियोंका पति श्रेष्ठ तीर्थ है।  
नैपाहके दरपतिनाथ, सिन्धोके एकलिंग प्रभृति  
विख्यात शिवमन्दिर भी इन्हीं सम्प्रदाय संकाश हैं।  
कनफटे के पास दम्भमें 'गोरक्ष-वासिनी' नामक एक  
स्थान है। यहाँ लोग मनुष्यमूर्ति और शिव, कालो

एवं हनुमान् प्रभृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्वामीय  
पूजक उक्त तीर्थों मनुष्यमूर्तियोंको दत्तात्रेय, गोरक्ष-  
नाथ औरः रुद्रसेन्द्रनाथ बताते हैं। त्रिष्विंशे ४५  
कोश दक्षिण महाभाद पाममें कटेय्वर नाम एक  
शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके  
अधिकारमें है। कटेय्वर मन्दिरके निकट वसिष्ठ-  
गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और  
तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रसन्न गङ्गाकी भांति  
पवित्र मानते हैं। कटेय्वरके मन्दिरमें एक योगी  
रहते हैं। उनके यष्ट विषयादि विद्यमान हैं।  
जमोन्दारीकी भी धूमधाम रहती है। लोग उन्हें  
योगोराज कहते हैं। योगी राजाओंका वंश बहु  
कालसे प्रचलित है। वह दारपरिषद नहीं करते।  
योगोराजोंके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और  
विषयादिका उत्तराधिकारी होता है। कटेय्वर शिव  
और वसिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी  
समय महाभाद पाममें एक दक्षिणावर्त शङ्ख आ  
गिरा था। बाहु लगने पर उसी 'महाभाद' पथ्यात्  
महाशब्द निकल पड़ा। फिर देवताओंमें उस शब्दसे  
चौक-और वर्षा पड़ने पर कटेय्वर सिद्ध तथा वसिष्ठ-  
गङ्गाको प्रतिष्ठित किया। शङ्खके महाभादसे पामका  
नाम भी महाभाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें चौरासी सिद्ध योगियोंका नाम  
विशेष विख्यात है। हठयोगप्रदीपिकामें हठयोग-  
साहाय्यके धर्षणखलपर निम्नलिखित बाई नाम  
पाये जाते हैं—आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द,  
भैरव, चौरङ्गि, मोन, गोरक्ष, विष्णुपाद, विज्ञेय,  
महान् भैरव, सिद्धोष, कन्यद्वी, कौरण्डक, स्थिरानन्द,  
सिद्धपाद, चण्डो, कर्प-पुष्पपाद, निरुधनाथ, निरुधन,  
वापालि, विन्दुनाथ, काकाण्डोदरमय, पञ्चप,  
प्रभुदेव, घोड़ापुत्री, टिण्टिमो, मल्लो, नागधीप और  
दण्डकापालिक। यह सब महासिद्ध रहें।

शुक्रप्रदेशका गोरक्षपुर कनफटेका प्रधान स्थान  
है। पड़ने वहाँ इनका एक मन्दिर रहा। असा-  
वद् दोनने उन्हें तोड़ फोड़ सब जगह एक-मसजिद  
बना दी। कुछ बाक़ योहि ठीकी अमर फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु औरङ्गजेबने उसे भी तोड़ा-फोड़ा सुमलमानोंका भवनालय निर्माण कराया। अन्तर्को बुहनाय नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनवा उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवमन्दिर और इनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—शाजकल भी अनेक सिद्ध योगी प्रथिवीपर रहते और नाना स्थान घूमते फिरते हैं।

राजस्थानीय एक लिङ्गके गोस्वामी कनफटोंके ही अन्तर्गत हैं। दारपरिचयसे दूर रहते भी वह वाणिज्यादि करते हैं। उनके अधोन सेकड़ों योगी हैं। बावश्यक आनिसे वह दल बांध मुहादि भी करते हैं।

कनफुं कवा, कनफुं का देवी।

कनफुं का ( हिं० वि० ) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो टीका या मन्त्र देता हो। २ दोषा क्षेपणाला, जो अपरा कान फुं का खुला हो। ( पु० ) ३ शुभ। ४ शिष्य। कनफुंची ( Confusius )—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुंची चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि प्रतिष्ठाता और शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवृत्ति धर्मशास्त्रको शत शत वत्सरका प्राचीन होते भी जैसे हिन्दू गिराधायें समझते, वैसे ही महात्मा कनफुंचीके धर्मशास्त्रपर आजतक अक्षय, अक्षय एवं अचल भावसे समान ब्रह्ममें चीना चलते हैं। कालके प्रभावसे हिन्दुओंको रीतिनीति स्थानविशेषमें मानवशास्त्रसे इन दिनों कुछ बदल गयी है। किन्तु महात्मा कनफुंचीका शास्त्र इतना सर्वकाल एवं सर्वजनोंके लागिके नियम उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष बीतते भी आज उसमें कोई व्यतिक्रम न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अक्षय फल लगा है। लोग-जैसे लड़कू साम्राज्यका अधिपत्य कर लगे। चीनमें अधिकांश लोग शिक्षा छोड़ अन्य मते चलनचलन कर नहीं सका है। इन्हींकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अचल प्रतिपक्ष जगत्के मध्य सर्वविधा धर्मप्राय और श्रद्धावाहक समझे गये हैं। वायाव्यसभ्यताभिमानकी वृत्तिस्व-

विषय कहते—उस आत्माका अनुसरण कर निहिकी चेष्टासे ही मनुष्य उत्तम होते रहते हैं। किन्तु चीनवालोंको देखनेसे यह विषय नितास्त अचूक समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुंचीके शिक्षा-वस्तुसे वह उच्च आत्माका नाम नहीं जानते। पृथक् तीन सहस्र वर्ष पहले वहाँ महात्मासे जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे प्रथिवीके मध्य आज भी उनका दल धार्मिक, श्रद्धावाहक और शान्तिप्रिय कहाया है। महात्मा कनफुंची ईश्वरके प्रेमसे सदाचीन रहनेको अपेक्षा मानव जीवनकी मनो-हारिता और चमत्कारिता सम्पादन करनेको ही मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। यह कहते रहे,—“अप्रमेय, अविनश्य एवं अबाधमनसोपर ईश्वरको पानिके निये वैरागी जो और पितामाता आजीय सज्जन तथा कन्यापुत्र कांड नामादि धर्म-साधक एवं अतिमानुषिक क्रियाकलापके अनुष्ठानकी अपेक्षा दृढजीवनकी विनियता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही गुणि महान् है।” महात्मा कनफुंचीकेवल सुदुर्लभ, दार्शनिक, विद्वान् और मोतिकुमल ही न थे। इनमें यथार्थ व्याप्त्य और स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन कालमें लोगोंको चमत्कृत और भक्तिमुग्ध कर का पर्वविगत नहीं हुआ। आज भी इनका कार्य प्रथिवीके मध्य सर्वविधा अधिकांश अधिकांश-समस्त राष्ट्रमें अनुसरण भावसे चल रहे हैं। इनकी प्रवृत्ति रीतिनीति चीनदेशमें बराबर सम्राट् और सामान्य मनुष्य कष्टक समान सपानके साथ प्रतिपादित होते पायी है। इनके उपदेशका प्रभाव राज्यसे राजन राजन राजन आज भी अभी प्रबल भावसे पड़ रहा है।

इन महात्माके लक्ष्य जेते समस्त आत्म-साक्षात्कार वर्तमान विद्वान्का एक-पक्षीय साध था। राज्यमें सर्वत्र सामन्तपदा प्रवृत्ति रही। सग सम्पत्त समस्त राज्य ईश्वरमान और अन्याय अनेक सुदृष्ट पक्षमें विभक्त था। किन्तु प्राचीन कालको चीन देशमें गुरो-पादि महादेशोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद अविन होता था। प्रथमतः सम्राट्



चन्द्रनिर्माच एक लक्ष्मण पदार्थ पञ्चमके सोभने बाध पदने गनेमें जाने रहते हैं। उक्त लक्ष्मण पदार्थको 'नाद' और पञ्चमके धारको 'सोमो' कहते हैं। नाद सोमो और दर्शन रचनेवाले योगी दूसरे को कनफटा मान्य होते हैं। सिवा इसके यह निरुद्धा रक्ष संज्ञति, लटा बढ़ाते, भय चढ़ाते और विभूतिवा विपुल्य मगते हैं।

गुरु गोरचनाथ इस सम्प्रदायके पर्वतक थे। कनफटे गोरचनाथको शिवका चवतार मानते हैं। फिर गोरचनाथने ही चठयोग भी बताया था। वहीं कनफटे योगी बाद गुरुका प्रचारित पथ पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

रक्षासिधोकी भांति कनफटे योगी भी नाना गुरु मानते हैं। फिर इन गुरुओंमें कोई शिष्यको मस्तक सुंझाने, कोई कर्षमें कुट्टा कटकाने और कोई श्वेत-मार्गमें जानेवा बादेश देता है। लोगना' देखो।

भारतवर्षके पवित्रमाक्षलमें इस श्रैष्ठ्यवाले योगी सचराचर देख पड़ते हैं। यह सभी शिवकी पूजामें समय बिना और किसी न किसी शिवमन्दिरमें अपना पायस लगाते हैं। कहीं कहीं पनेक कनफटे एकर रह भिदा द्वारा अपना जीवन चलाते और कोई तीर्थभ्रमणके लक्ष्यमें देश-देशान्तर घूम-फिर पाते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकार्य उदासीन होते हैं। फिर कोई-कोई विषयकार्यमें भी लिप्त रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरचनाथके नामपर गुप्तप्रदेशमें पनेक स्थानीका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। येनाथमें गोरच-थेय नामक एक स्थान है। फिर दूसरा गोरचथेय दारवाके निकट अवस्थित है। हरिद्वारके निकट एक 'रुद्र' पड़ता है। यह रुद्र और दारकाका गोरचथेय कनफटे योगियोंका पति श्रेष्ठ तीर्थ है। मेवाड़के दरपतिनाथ, भिवाड़के एकलिन प्रभृति विद्वान् शिवमन्त्र भी इनके सम्प्रदाय संज्ञात हैं। कनफटे के पास दमरुमें 'गोरच-बासरी' नामक एक स्थान है। वहाँ लोग मनुष्यमूर्ति और शिव, काली

एवं अनुमान प्रकृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्थानीय पुत्रक वक्त तीनों मनुष्यमूर्तियोंकी दत्तातेय, गोरच-नाथ और मरुत्येन्द्रनाथ बताते हैं। त्रिषोमी ४१५ कीम दक्षिण महानाद ग्राममें कटेयर नाम एक शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके अधिकारमें है। कटेयर मन्दिरके निकट वशिष्ठ-गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रकृत गङ्गाकी भांति पवित्र मानते हैं। कटेराके मन्दिरमें एक योगी रहते हैं। उनके यथेष्ट विद्यादि विद्यमान हैं। समीन्दारी की भी धूमधाम रहती है। लोग सर्वे योगोराज कहते हैं। योगी राजाओंका वंश बहु कालसे प्रचलित है। वह दारपरिषद नहीं करते। योगीराजाके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और विद्यादिका उत्तराधिकारी होता है। कटेयर शिव और वशिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी समय महानाद ग्राममें एक दक्षिणवर्त गङ्गा पा गिरा था। वायु समने पर उससे 'महानाद' 'चर्चा' महाशब्द निकल पड़ा। फिर देवताओंने उस गङ्गसे चौक और वहाँ पहुँच कटेयर 'क्षि' तथा वशिष्ठ-गङ्गाकी प्रतिष्ठित किया। गङ्गके महानादसे ग्रामका नाम भी महानाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें चौरासी सिद्ध योगियोंका नाम विशेष विख्यात है। चठयोगप्रदीपिकामें चठयोग-साहाय्यके चर्चनखखवर निम्नलिखित कई नाम पाये जाते हैं—आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द, भैरव, चोरङ्ग, मोन, गोरच, विदुषाच, विमेषय, मधुन भैरव, सिद्धोद, कन्यो, कौरण्डक, सिरानन्द, सिद्धाद, चण्डी, कर्ण-पुण्यपाद, मित्थनाथ, निरञ्जन, वायान, विन्दुनाथ, काकाप्योगरमय, पदय, प्रभुदेव, घोड़ापुखी, टिप्पिमी, भकटो, नागवीर और चण्डिकापालिक। यह सब महासिद्ध रहे।

गुप्तप्रदेशका गोरचपुर कनफटेका प्रधान स्थान है। यहाँ वहाँ इनका एक मन्दिर रहा। यत्ना-वद दोनूने उधे तीर्थ फोड़ उधे जगद एव 'मसजिद' बना दो। कुछ ब्राह्मणोंने उनी जगद फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु औरङ्गजेबने उसे भी तोड़ा-फोड़ा सुमलमानोंका मजनाजय निर्माण कराया। अन्तको वुहनाय नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनाया उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवलिंग और अनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—आलकल भी अनेक सिद्ध योगी पृथिवीपर रहते और नाना स्थान घूमते करते हैं। राजस्थानीय एकलिंगके गोखानी कनफटेके ही अन्तर्गत है। दारपरिग्रहसे दूर रहते भी वह वाणिज्यादि करते हैं। उनके अधीन सैकड़ों योगी हैं। चावश्या आनेसे वह दल बांध युद्धादि भी करते हैं। कनफुं कवा, कनफुं कवी।

कनफुं कवा ( हिं० वि० ) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो टीका या मन्त्र देता हो। २ दोषा लेनेवाला, जो अपराधों का नफा चुका हो। (पृ०) १ गुरु। ४ शिष्य। कनफुंजी ( Confusius )—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुंजी चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि-प्रतिष्ठाता और शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवर्तित धर्मशास्त्रको शत शत वत्सरका प्राचीन होते भी जैसे हिन्दू शिरोधार्य समझते, वैसे ही महात्मा कनफुंजीके धर्मशास्त्रपर आजतक अध्यय, अध्याप एवं अचल भावसे समान बलमें चीना चलते हैं। काङ्गके प्रभावसे हिन्दुओंकी रीतिनीति स्थानविषयमें मानवशास्त्रसे इन दिनों कुछ बदल गयी है। किन्तु महात्मा कनफुंजीका शास्त्र इतना सर्वकाल एवं सर्वश्रेष्ठकी लोकाति नित्य उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष बीतते भी आज उसमें कोई व्यतिक्रम न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अध्ययन फल लगा है। चीन-जैसे बृहत् साम्राज्यका कोई सामान्य अधिवासी वह शिक्षा छोड़ अन्य मत धनधन्य कर नहीं सकता है। इन्हींकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अचल मल्लि रख जगत्के मध्य सर्वापेक्षा धर्मप्राण और गृहनाथक समझे गये हैं। वाचाव्यसम्पत्ताभिमानों अत्यन्त-व-

वित् कहते—उच्च आशाका अनुसरण कर मिहिकी चेष्टासे ही मनुष्य उन्नत होते रहते हैं। किन्तु चीनवाँकों देखनेसे यह विषय नितान्त असमझक समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुंजीके शिक्षा-वल्से वह उच्च आशाका नाम नहीं जानते। अथवा तीन सहस्र वर्ष पहले उक्त महात्माके जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे पृथिवीके मध्य आज भी उनका दल धार्मिक, गृहनाथक और शान्तिप्रिय कहाया है। महात्मा कनफुंजी ईश्वरके प्रेममें उदासीन रहनेको अपेक्षा मानव जीवनको मनो-हारिता और समतुकारिता सम्पादन करनेकी ही मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। यह कहते रहे,—“अप्रमत्त, अविषय एवं अवाङ्मनसगोचर ईश्वरको पानेके लिये वैरागी हो और पितामाता आश्रित स्त्रजन तथा कन्यापुत्र छोड़ नानाविध अस्म-सादिक एवं अतिमानुषिक क्रियाकलापके पशुपानकी अपेक्षा इहजीवनकी विचित्रता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही युक्ति सङ्गत है।” महात्मा कनफुंजीकेवल सदुपदेशक, दार्शनिक, विषयपर और मोतिकुशल ही न थे। इनमें यथार्थ व्याक्तत्व और स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन ज्ञानसे लोगोंको समतुक्त और भक्तिमुग्ध कर हाँ पर्यवसित नहीं हुआ। आज भी इनका कार्य पृथिवीके मध्य सर्वापेक्षा अधिजाग अधिवासो-समन्वित राष्ट्रमें अतुल्य भावसे फल दे रहा है। इनकी प्रवर्तित रीतिनीति चीनदेशमें बराबर सम्राट् और सामान्य भिक्षुक कर्तृक समान सन्धानके साथ प्रतिपासित होती पायी है। इनके उपदेशका प्रभाव राष्ट्रके सृजन स्थलमें आज भी उभी प्रयत्न भावसे पड़ रहा है।

इन महात्माके जन्म होते समय चीन-साम्राज्य यत्नमान विस्तारका एक-पक्षीय मात्र था। राष्ट्रमें सर्वत्र सामन्तप्रथा प्रचलित रही। उस समय सम्राट् राज्य ११ प्रधान और अन्यान्य अनेक सुदृष्ट पण्डितों विभक्त था। किन्तु प्राचीन कालको चीन देशमें युरो-पादि महादेशोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद लक्षित होता था। प्रथमतः सम्राट्त्वम-

बहुदिनावधि परितंत्र न पड़नेसे उद्यम, अथवसाय एवं उत्साहशून्य हो गया और इससे अपने अधीनस्थ सामन्त राजाओंके मध्य शान्तिरक्षा कर न सका। इसी प्रकार क्रमान्वये 'पञ्च गताब्दी' बीती थीं। सामन्त राजाओं और अधीनस्थ सरदारोंमें चिरविशद सहमूल रहा। सर्वदा युद्ध चलनेसे देशके मध्य दुःख, कष्ट, दुर्मिच और कुशासनकी घूम थी। दितोयतः बहुविवाह प्रचलित रहा। स्त्रियाँ अत्यन्त हेयवत् व्यवहृत होती थीं। उनके ऊपर नाना रूप निषेध-विधि प्रवर्तित रहा। इसकी इयत्ता कर नहीं सकते, शस्त्र धारणसे कितने पड़्यन्त, गृहविवाद और राज्य राज्य एवं वंश वंशमें युद्ध-विषय चलते थे। प्राचीन गुरोपोधोंकी भांति भूत-प्रेत न मानते या किसी प्रकारके धर्ममत परिवर्तनपर देशके मध्य विद्रुव न छासते भी चीना द्रव्योधि पतीत दूसरे यस्तुके-छोमें न जानेसे अज्ञात रहे। कार्यतः ऐसे यस्तुपर उन्हें विश्वास भी न था। स्वर्ग नरकादिके ज्ञानसे वह दूर रहे। सुतरां उनके सम्बन्धमें उन्हें किसी प्रकारकी कामना वा घृणा भी न थी।

कनकुचीके जन्म-समय चीनराज्यमें चाउ या चु वंश सम्राट्-पदपर अचिष्ठित रहा। जिस समयसे चीन राज्यका इतिहास मिलता, उसमें यह राजवंश ही श्रुतोय पड़ता है। उस समय इस वंशको उत्पत्ति अपने पराकाष्ठापर पहुँच गयी थी। शासनका दण्ड दृढ़भावसे इस वंशके हस्त न्यस्त रहा। पाँच श्रेणीके सामन्त-सरदार थे। यह सभी सम्राट्की कर और सेन्य द्वारा साहाय्य पहुँचाते रहे।

अथवसायमय्यप, उत्साहो और संमतावान् सम्राट् न रहनेसे राज्यमें स्वभावतः विद्रुहना पड़ जाती है। उस समय चीनकी भी ऐसी ही दशा रहती, साधारणतः शासनक्रिया दुर्बल पड़ी और प्रत्येक विभागमें अल्प अल्प विद्रुहना बढ़ी थी।

किन्तु दिने मन्द समय भी चीनदेशमें साहित्य एवं शिक्षणवर्षाकी संयत्क उत्पत्ति होती थी। सम्राट्से श्रेष्ठ सामान्य सामन्तकी समा-पर्यन्त गायक और

इतिहासिक उपस्थित रहे। गिधा देनेकी विद्या-लयोंकी भांति पाठशाला भी उपेष्ट थे।

ई०से-५५० या ५५१ यस्तुपर पूर्व १० राज्यमें महात्मा कनकुचीने ग्रीककालको जन्म लिया था। इनका वंशगत उपाधि वा नाम कङ्ग वा कन् रहा। फिर देशके लोग उन्हें कनकुची अर्थात् टागनिक वा गिघादाता कहने लगे।

इनके पिताका नाम छेईग रहा। यह अपने समयके एक विख्यात वीर थे। इतिहासमें भी इनका नाम मिलता है। उनके पुत्र साइसो और वनवान् पुत्र्य पति अल्प ही रहे। ई०से ५८२ वर्ष पूर्व यह पेईरयाङ्ग नगर न्यवरोध कर लड़ने थे। उसी समय विषय-पत्नीय किसी दम्पति कोशमपूर्ण नगरका द्वार खोल दिया। लोग अन्वरोधकारियोंके नगरमें घुसते ही द्वार बन्द कर देना चाहते थे। घटना भी वही हो हुयी। समस्त सेन्य नगरमें लामे छेई भी घुसे थे। फिर ठाक उसी समय विरचीय फाटकका द्वार बन्द करने लगे। छेईने देखा—महाविद्रु है। फिर उन्होंने निमेषमात्र विलम्ब न भगा निज सुत्रपनसे विराट् कपाटको खींचकर पकड़ लिया और स्वपत्नी-योंको नगरसे निवृत्तनेका आदेश दिया।

कनकुचीकी माताका नाम रचेल-सिङ्ग मार रहा। उन्होंने वीरदेशके 'द्वेग' नामक प्राचीन महर्गमें जन्म लिया था। छेईने ७० यस्तुपरके वयःक्रमपर अपने विवाह किया। इसीसे ज्ञानिने मोचा था—अब इनके सन्तानादि न होगा। अथवगता महात्मा

• यह वह राज्य वर्तमान मावट् प्रदेशके अन्तर्गत है। वहाँ कबाड़ नामक नगरमें कनकुचीने जन्मग्रहण किया था। इसी नगर कुपोरमें भी अद्यपर विद्याशालासे कोय विद्यादि सेवा प्रभूत चल पाता। कनकुचीने बहुत सामान्य ईश्वर जन्म लिया न था। यहसे कहा जा चुका—इनके जन्मकाल चीनदेशमें चाउ या चु नामक शहीव राजवंश राज्य पर अचिष्ठित था। पुर्वसे पूर्व "चाप" नामक शहीव राजवंश राज्य चरते रहा। इसी राजवंशके अन्तिमिद सम्राट् तीव नामक राजाके विद्याने कुलीनत्वमें कनकुचीका जन्म हुआ।

† कोई कोई इनके पिताका नाम कर्चिवाङ्ग भी बताते हैं। यह भीवृत्तमें यह राज्यके किसी प्रधान के घर विद्रुह है।

कनफुचीके जन्म लेने पर कुछ दम्पतीके प्रतिवेगो भानन्दसे फल उठे।

कनफुचीके जन्मकाल-सम्बन्धीय अपनेक गण्य सुन पड़ते हैं। चीन-ग्रन्थकारोंने इस सम्बन्धपर अपने अपने ग्रन्थोंमें विस्तारित वर्णना लिखी है। अन्यान्य प्रवादोंके मध्य निम्नलिखित विषय सकल ही ग्रन्थकार सिपिवह कर गये हैं—कनफुचीके जन्म दिनसे पूर्व-रात्रिको चिह्नसाईने एक खप्प देखा था। इसी खप्पके उपदेशानुसार वह किसी पर्वतगुहामें जा उपनीत हुई। गुहामें सन्ने देव्योंने घेर लिया था। उसी जगह देव्योंने चिह्नसाईसे उनके पुत्रको 'सहिमा, भविष्यत् कीर्ति और सम्मान-कथा कही। फिर पक्षराके हस्त महात्मा कनफुचीने जन्मग्रहण किया।

इनकी बाल्यजीवनीके सम्बन्धमें हम कुछ विशेष समझ नहीं सकते। फिर भा बाल्यकालसे ही देगोय आचार-व्यवहार पर इन्हे आस्था रही। तोन यत्सर वयःक्रम कालमें यह पिछड़ौन हुये। उस समय भी इनके पितामह जोते थे। शेषको वयसके साथ साथ इनमें इतिहासपाठका भुराग भी बढ़ने लगा।

अन्य वयसको ही इनमें महाप्रायके सकल पूर्व लक्षण भलकते थे। बाल्यकालमें देशप्रचलित धर्मविश्वास और आचार-व्यवहारके प्रति इन्हे दृढ़ आस्था रही। इनके निज प्रायमें भक्तिका बड़ा भावस्थ था। पूजा चैनापूर्वक इष्टदेवकी निज आहार्य निवेदन किये बिना यह सिको प्रकार खाते न रहे।

कनफुचीके पितामह अति धार्मिक एवं परम पण्डित थे। बाल्यकालमें सन्नेके निकट इनकी शिक्षाका विधान हुआ। पितामहके प्रदत्त शिक्षा-वस्तुसे कनफुची विविध शास्त्र पढ़ सदाशयताका अनुकरण करनेको विशेष यत्न लगाते थे। पितामहके भरनेपर यह तत्कालीन चीन-पण्डिताग्रगण्य 'वेङ्गो' नामक पण्डितके शिष्य बने। स्वीय अपरिमित बुद्धि एवं मेधावलसे १५ वत्सर वयःक्रमकालको ही कनफुची असाधारण विद्वान् हो गये। फिर इसी वयसमें सिद्ध-पद इन्होंने इयाओ और सांग नामक सम्प्रदाय-

रचित 'नीतिग्रन्थ' प्राचीन ग्रन्थ एवं शास्त्र-समूहमें सम्यक् व्युत्पत्ति साम की।

१८ वत्सरके वयसमें इन्होंने शानराज्यकी किसी कुमारीसे विवाह किया था। किन्तु स्त्रोके साथ कनफुची अधिक दिन न रहे। एक पुत्र सम्मान जोते ही इन्होंने स्त्रीपक्ष छोड़ दिया।

विवाहके पीछे इनका गुपराग भलकने लगा। इसी समय चीनदेशमें साधारणके निम्ने भलका एक भाण्डार रहा। सर्वविधा न्यायवराण्य व्यक्ति को ही उक्त भाण्डारका भार मित्रता था। कनफुची को वह पद दिया गया। यह पिताके मरने पर अपनी वंशगत कौकीन्य-मर्यादाको छोड़ दूधरे किसी पेल्ल घनके अधिकारी बन सके। इसीसे पक्षकी चेष्टामें इन्हे उक्त पद स्वीकार करना पड़ा। दूधरे वत्सर इनके पदकी उत्पत्ति हुयी। कनफुचीका साधारण भूमि और क्षेत्रकी पञ्चवता मिली थी। इसी समय इनके पुत्रका जन्म हुआ। देवके मध्य कनफुचीने इतना सम्मान पाया, कि तशांकार प्रधान सामन्तोंने पुत्र होनेका समाचार सुनते ही एक पुच्छरेणी ता मत्स्य उपहार पहुँचाया था। इसी वटनाके कारण इन्होंने पुत्रका नाम 'लि' या 'पिया' (पुच्छरेणी ता मत्स्य) रख दिया।

उस समय चीनदेशकी पक्षस्था पत्यस्त शोचनीय रही। न्यायपरता देवसे उठ गयी थी। पचावार और अविवार सर्वत्र फैल पड़ा। मन्त्रो राजाजी और पुत्र पिताको मार राज्य छीन लेता था। यह सक्त उपद्रव देख कनफुची कायने लगे। पत्रमेवना इन्होंने प्रतिज्ञा की—किसी न किसी प्रकार स्वजातिहा चरित सुचारैगी।

अपनी प्रतिज्ञा सक्त करनेको यह उपाय ढूँढ़ने लगे, किन्तु स्त्रीको एक विषय पन्तराय मन्त्रके। उव समय स्त्री-पुत्रको मायासे मंत्रारम फँस जाने पर इन्होंने कोई कार्य बनते न देखा। इन्होंने कनफुची स्त्रीपुत्र एवं राजकार्य छोड़ साधारण ही शिक्षा देनेके लिये प्रसुत हुये थे। उस समय पदने माताके जोरित रहनेसे यह कर्षो जा न सके, चामें ही दात्रमण्डलोको

नियमा देने लगे। किन्तु कनकपुरी प्राचीन शासक की पट्टा में थे। इन्हीं अपने समर्थ सोचा—प्राचीन धर्मके पर प्रथमतः हृदय पुराण वड़ा और सकल विधि विधानों के द्वारा प्रतिपादन करा सकने में लोगो का परिश्रम प्रथमतः सत्कार्य की ओर चलेगा। इसी समय इन्हीं कार्यका भार छोड़ा था। ह्वाव पाये ऐसे उत्साहान्वयित करने के अवसरान्तर में ही दिन बिताने लगे।

२२ वत्सर के वयःकालकाल कनकपुरी में शिक्षकता की अवसरान्तर किया था। उसी वत्सर ( ई० में १२४ वयः पड़ने ) इन्हें माध्यमियोग देखा पड़ा। इस घटना के कारण यह समझा कार्य में विरत हुये। क्योंकि वयः समय चीन में प्रया रही—पिता और माता दोनों एक ही मरने पर पुत्र की कोई कार्य करने का अधिकार नहीं। फिर कनकपुरी में स्वयं प्राचीन रीति-नीति पुनः चलायिका प्राप्त करने के चेष्टा लगायी। सुतरीं ऐसे समय यह वक्त प्राचीन नियमादि पालन करने में पक्षात्पद न हुये।

पतञ्जलि इन्होंने यह भी ठहरा लिया था—निकट-वर्ती विभी पतित भूमि में साष्टदेव समाहित न कर रीति के अनुसार आयोजन और महोत्सवों में पञ्चद्वि-क्रिया बनाये। प्रथम भी ऐसा ही हुआ। देश के साधारण लोगों ने देवद्वार समझा था—पश्चिम पर कनकपुरी के अवसरान्तर करने में यही प्रयास शास्त्रानु-मोदित और हमारा भी अवसरान्तर कार्य है। इनका भी गूढ़ उद्देश्य यही रहा। कारण इन्होंने देवा—देश के लोगों को धारणाशक्ति इनको घटी, कि हेवन उपदेश में कोई बात समझने की नहीं। सुतरीं कनकपुरी स्वयं पुराणपुस्तक में प्राचीन शास्त्र की नीति-पर चलते थे। इसी घटना के पीछे एकान्त रीतिवस्था के लोगो को ह्वाव सकल सत्कार्य के अनुसार पञ्चद्वि-क्रिया का उत्पन्न करने लगे। वही प्रयास आज भी चल रही है।

प्रथम कनकपुरी की आङ्ग्ल पर चला समझा न था। इन्होंने पञ्चद्वि-क्रिया की जो प्रयास चलाये, उसमें एक पति सुन्दर व्यवस्था लगायी है। अन्तिम द्वायने की

समाधिस्थल वा एतद् उद्देश्य निश्चित निश्चय करने के किसी स्थल में स्थलस्थ की चतुर्व्यक्ति के लिये कितना ही कार्य बनाना और गुणादि गाना पढ़ता है। इसी वयःमान काल चीन देश में पापामर साधारण के मध्य नृत्य व्यक्तिके उद्देश्य पर आर्थिक उत्पन्न मनाने और अपने मन में 'विद्युत्पुष्पका स्थ' बनाने की प्रयास चल गयी है।

इसी प्रकार स्त्रीय उद्देश्य कार्य में परिणत करने पर सद्यः हीने देख यह कुछ आशाद एवं पागाम में ह्वाव और कार्यप्रगति में पगोचके तीन वत्सर पश्चात् ही अपने गृह में ही रहने लगे।

पगोचका काल बीतने पर कनकपुरी में सु राक्षसों की ठहर इतिहास, साहित्य और सङ्गीतविद्या की पालोचना चलायी। जो लोग सीधे में पाने, यह पति यत्न से उपदेश पाते थे। अधिक वयः देने पर भी यह किसी का पक्षपात करने में दूर रहे। कनकपुरी मध्यको समान् यद्यपि बराबर उपदेश देते और अपनी निमन्त्रता तथा आशाप्रियता कार्य में देखा। लोगों का मनोवेग खींच लेते थे। उस समय देश के मध्य यह सर्वविधा शास्त्रवित्, माधुसूतम और मत्कर्मचारो पण्डित बन गये। सुतरीं किसी विषय पर विशेष बढने से लोगों को इनके निकट सीमासा लेने पाना पड़ता था। ऐसे सुयोग में यह धारा रीति उपदेश दे पाना उद्देश्य निकालते रहे। इनके उपदेश की महिमामें सुख हो प्रथमतः लोग इच्छा पा पानेच्छा से देश की प्राचीन रीतिनीति पर पाना और यथा दाने लगे।

२५ वत्सर के वयः ( ई० में १२५ वयः पड़ने ) पर कनकपुरी ने 'मियाङ्ग' नामक किसी सङ्गीतविद्या में मोक्ष सङ्गीतविद्या में पूर्णचमता पाये थी। वाक्तावले ही इन्हें सङ्गीत पर बड़ा पन्थान रहा। एकादिक्रम में १५ वत्सर माधना करने पर इन्हें सङ्गीत में पागामुत्पन्न सिद्धि मिली।

सु राक्षसों किसी प्रधान मन्त्रों के जोको और मानवपद्यों नामक दो पुत्र इनके गिण्य हुये। उनको गिण्य कर कनकपुरी देश के मध्य महा सन्धान और

अंशके पात्र बन गये थे। पूर्वोपेक्षा लोग इन्हें दिगुण भक्तिकी दृष्टिसे देखने लगे।

ऐसे ही समय इनकी मूर्तमें एक नूतन भाव उठा। पहले ही वता चुके—इस समय प्रत्येक देशके अधिपति नाममात्र सम्राट्के अधीन रहे, किन्तु कार्यतः सभी स्व स्व प्रधान और राज्यनियम चलायेंमें स्वतन्त्र थे। यह नियम अविकृत भावसे पालन कर देशके मध्य शृङ्खला बंधनेमें कठिनता पड़ी। अधिपति सर्वदा सार्वपर, अर्थस्रोत, अधिपत्यकारी, प्रतारक, यथेच्छा-चारी और दुष्टवृत्ति पारिपटोके परिपुष्ट हो केवल कुप्रवृत्तिके दास बने थे। कनफुचीने सोचा—कितने दिन राजाधोका चरित्र न सुधरे, उतने दिन प्रजाके मध्य भी प्रकृत परिवर्तन न पड़ेगा। सुतराने इन्होंने ठहरा लिया—किसी राज-दरबारमें घुस चढ़ेयकी सिद्धि पाय दूँगे। किङ्कसुकी मध्यस्थतासे इनका उद्देश्य सफल हुआ। इन्हें चाठ राज्यके सामन्त राजाकी समामें स्थान मिला था। वहां यह राज-नीति-कुप्रवृत्ति न कहाये। कनफुची सामन्तवंशके प्रतिष्ठाताका उद्देश्य और न्यायव्यवहार देखनेको एक वत्सर उक्त राज्यमें रहे। फिर यह स्वदेग लौट आयापनाके कार्यमें लगे थे। इनका ययः चारों ओर फैल गया। छात्र भी प्रायः ३८०० एकत्र हुये।

इसी समय लुके राजाने गुणसे मोहित हो इन्हें राज्यके विचारक पदपर नियुक्त कर दिया। कनफुची सकल समय विचारकके पदपर बैठते न थे। जब यह उक्त पदपर बैठे देशको कुछ न कुछ सुविधा पहुँचा सकते, तभी कार्यका भार अपने ऊपर रखते और कितने दिन अभीष्टसिद्धिके पक्षमें व्याघात न समते, उतने दिन पदको परित्याग न करते।

नामारूप चेष्टा सजाते भी कनफुची सम्यक् फल पा न सके थे। लु राज्यमें 'कि', 'सु' और 'मङ्ग' नामक तीन वंशके लोग प्रधान-राजपुरुष रहे। यह राजासे उदाय रखते न थे। शेषकी सबने एकत्र हो राजासे गुप्त किया। गुप्तमें चारों लुके राजा अपना राज्य कीड़ सि-राज्यकी भागे थे। कनफुचीने भी उनका अनुगमन किया।

कनफुची सि-राज्यकी द्वितीय उद्देश्यसे गये। इन्होंने सुना था—सान सम्राट्की पदावली इन दिनों केवल सि-राज्यके गायक ही जानते हैं। उक्त पदावली सीखनेको यह बहु दिवसावधि चेष्टा करते रहे। राजधानीके प्रवेशकाल इन्हें पदावलीका एक गान उठात् सुन पड़ा। उससे यह इतने मोहित हुये, कि गानके उद्देशानुसार तीन मास मांसस्पर्शसे परज रह। पदावलीके खरसम्बन्धमें कनफुची कहते—सङ्गीत-खरके इतने सुमिष्ट और सर्वाङ्गसुन्दर होनेकी धारणा हम रखते न थे।

सि-राज्यको जाते समय ताई पर्वतपर एक घटना हुई। इस स्थानपर उसका विशेष विवरण दिया गया है। इसीसे स्पष्ट समझ लेते—कितने सामान्य सामान्य विषय उठा कनफुची स्त्रीय क्षात्रोंकी सदुपदेश देते थे। ग्रिथोंमें भनक इनका साथ जोड़ते न रहे। सि-राज्य जाते समय भी वह कनफुचीके साथ थे।

सब लोग ताई पर्वत अतिश्रम करते किसी समाधिस्थानके निकट उपस्थित हुये। उसी स्थानपर बैठे एक स्त्री रोती थी। कनफुचीने स्वदनके साथ निकट पहुँच उससे शोकका कारण पूछा। स्त्रीने उत्तर दिया—इसो स्थानपर हमारे श्वशुरने व्याघ्रके मुलमें प्राण-विसर्जन किया, इसी स्थानपर हमारे पतिको खापदने खा लिया और इसी स्थानपर हमारे एकमात्र सन्तानका रक्त किसी व्याघ्रने पिया है। इन्होंने कहा—फिर माता! तुमने ऐंठ भयङ्कर खल-पर खो भवस्थान किया है। स्त्री बोल उठी—यहां रहनेमें कोई विशेष कष्ट नहीं, किन्तु प्रजापीडक अत्याचारी राजाके राज्यमें ठहरना कठिन है। कनफुचीने अपने ग्रिथोंको खोला कर समझाया था—वत्सो! सुना तो सही, अत्याचारो प्रजापीडक राजा व्याघ्रको अपेक्षा भी अधिक भयङ्कर होता है।

अपने राज्यमें जाते सुन सिके राजाने इनकी अभ्यर्थना करनेको लोग भेजे थे। कनफुची राज-सभामें पाये। सिके राजा इनसे कथनोपकथन कर अत्यन्त प्रसन्न हुये। फिर उन्होंने इन्हें सराज्यमें प्रतिष्ठित करनेको 'सिनकिज' नामक नगर समस्त

पायके साथ देना चाहा था। किन्तु पण्डितवर कनकुची कहने लगे—'विश्व लोग उपदेश देने और लक्ष्यक उसके अनुसार उपदेश सुननेवाले कार्य नहीं करते, तबतक उनका दान किमोपकार नहीं लेते। हमने राजाको उपदेश दिया है नहीं, किन्तु उन्होंने न तो धर्मीनक उसके अनुसार कार्य किया और न उसका उद्देश्य ही समझ लिया।' फिर राजासे राजनीतिपर कथनोपकथन होनेपर यह बोले—जिस देशमें राजा राजाका, मन्त्री मन्त्रीका, पिता पिताका और सन्तान सन्तानका कर्तव्य देख वायें कर सकता, उसी देशको सब कोई यथार्थ सुवासित कहता है। इस राजाने उत्तर दिया—'इस देशमें राजाका राजा, मन्त्रीका मन्त्री और सन्तानका सन्तान न होना सम्भव है। किन्तु मजासे प्राप्त करको हम उपभोग क्यों न करेंगे।'।

इन्होंने देखा—नि राज्यमें रहना नहीं अपनाया। उत्तर राजाने कनकुचीको पर्यटनसे वशीभूत कर रखना चाहा था। किन्तु यह उस घातुके लोग न रहे और किसी प्रकार कोई दाग लेनेको श्लोक्षित न हुये। राजाने नामा उपायोसे पर्यटन और भूमिहारी देना चाही थी। किन्तु कनकुचीने यही कथा कह प्रत्याख्यान किया—जबतक राजा हमारे उपदेशके अनुसार न चलेगी, तब तक हम उनका दिया कोई द्रव्य कैसे पक्ष करेगी। उस समय सिद्ध राजा और मजावर्ग अत्यन्त विनाशान्वित रहे। कनकुचीके उपदेशानुसार चमका उनके लिये पसन्धव था। किसी प्रकार दोनों और मनोमिस्रण होते न देन यह स्वदेश मोट पाये। तु राज्य उस समय भी पमान्तिपूर्ण रहा। शासनका भार राज्यके प्रधान पुत्रको हाथ पड़ा था।

देग पाकर इन्होंने १५ वर्षसकाल कार्यके जगत्से पवसर लिया और केवल शासकी चर्चा, देशके इतिहास-प्रपचन एवं सङ्गीत-पुस्तककी रचनामें कालयापन किया।

फिर तु राज्यमें (ई०सि १०५ वर्ष पूर्व) गान्धि स्थापित हुये थे। राज्यके प्रधान प्रधान व्यक्तियों

हम बार इन्हें देगका दोष सुधारनेको, मन्त्रीके पदपर बैठाया। कनकुचीने जिसकी चाहमें भ्रान्त लगाया, उसीको पाया था। राज्यके सम्पत्तिमें स्थिर किये हुये नियम और देशके लोगोंका चरित सुधारनेको स्थिर किये हुये उपाय कार्यमें परिपत करनेका सुयोग देख यह मन्त्र-प्राप्तदित हुये। इस बार इन्होंने बड़े सुविमलसे कार्य चलाया था। कुछ मासोंके मध्य ही क्या राजा, रत्ना मन्त्रा, क्या मन्त्र और क्या इतर—सभीका पाचार-व्यवहार एवं चरित इतना सुधरा, कि राज्यमें नूतन चमत्कार तथा नूतन भाव देख पड़ा। फिर तु राज्यकी कार्यप्रणालीमें लोग अत्यन्त प्रसन्न हुये थे। वह निज निज पन्थमें कनकुचीका जगमान निवृत्त हृदयकी अपूर्व क्षतप्रताका परिचय देने लगे।

तु राज्यको ओ और समृद्धि देन पार्श्ववर्ती भूभाग हिंसासे जन ठठे। उन्होंने भी कनकुचीके प्रशंसित नियम चलायान चला स्व-स्व राज्यकी ओ सदाना चाहे थी। किन्तु कार्यतः संसा न हुआ। पार्श्ववर्ती सि-राजने तु राज्यका भौमाम्य देन कहा था—'यदि कुछ दिन कनकुची मन्त्रित्व करते जायेंगे, तो मामन्त राज्योके मध्य हम तु राज्यको सर्वप्रधान पावेंगे। फिर सर्वोप पार्श्ववर्ती हमारा राज्य ही उनके पावमें पड़ेगा। इस समय तु-राजके राज्य छोड़ गान्धि पवसम्पन्न की चेष्टामें समनेसे ही हमारा मन्त्र है।' सि-राजके मन्त्रीकी बुद्धि पति कुटिल रही। उन्होंने राजाको समझाया—किसी गतिमें तु-राजके साथ कनकुचीका विवाद लगा उसनेसे पावको यह पागड़ा मिट जायेगी। सि-के राजा इस पर मग्न हुये थे। फिर मन्त्रीने उपलाब्धसम्पत्ति पूर्णरीत्या विना-कथिची मनोहर-नृत्यगोतादि निपुण, मधुरभाषिणी एवं कोकिलकण्ठो ८० कामिनी पोर पत्न्युत्त १२० चण्ड संघटकर लुके राजाका उपरीकन पक्षपाया। पण्डितवर कनकुचीने इस उपरीकनका भागे परिचान मोच राजासे प्रत्याख्यान करनेको उपदेश दिया था। किन्तु दुर्दृष्टमनः लुके राजाको मतिभ्रम पड़ गया। उन्होंने कनकुचीका परामर्श न मान सुवर्तियोंको पन्नापुरमें बैठासा था। पन्नाकी यह सुवर्तियों

मोहजालमें फंसे। राजकार्य दिन दिन उत्सन्न होने लगा। राजपुरुष उच्छ्वस्त बने थे। विज्ञापितियों के प्रीत्यर्थ राजा नित्य नूतन महोत्सवका अनुष्ठान करने लगे। इसीप्रकार राज्य श्रीहीन हुआ था। राजा विज्ञापितियों में परगण्य बने। कनफुचोने उनकी मति-गति फिरनेको यथेष्ट चेष्टा की थी। किन्तु समस्त आयास तथा गया। कुछदिन पीछे राजा रमणो-कुक्षक-से अत्यन्त उत्तबुद्धि हुये। कनफुचोके उपदेश देनेको जानेपर उन्होंने मोक्षोद्देशक चठता था। अवशेष राजा कनफुचोकी सुपथका कण्टकस्वरूप समझ मारने वा आभरण कारागारमें डालने पर कृतसहृदय हुये।

इतने दिनोंमें उन्होंने स्थिर कर लिया था—सु राज्यमें रहनेसे हमारा या राजाका—दोमें किसीका कल्याण न होगा। इसीसे कनफुचोने वह देश छोड़ने-की ठहरायी। यह इस बहाने अपना पद छोड़ चल दिये—‘राज्यके महत्कार्य देशोद्देशसे वसि चढ़ता है। किन्तु राजा बहुत दिनसे वसिका मंस राज्यके भिन्न भिन्न प्रदेशोंकी भेजनेमें श्रेयिका देखाते हैं।’ कनफुचोने मनमें सोचा था—सम्भवतः राजा और मन्त्रीकी मतिगति फिरनेसे हम फिर घोसाये जायेंगे। किन्तु वैसा सुयोग न लगा। यह ५१ वत्सरके वयसमें देश धूमने निकले थे।

शासनप्रणालीके सम्बन्धमें कनफुचोकी धारणा अतीव मनोहर रही। यह कहते—राजाके राजा, मन्त्रीके मन्त्री, पिताके पिता और पुत्रके पुत्र रहने ही राज्यमें अधिक सुख होता है। समाजके सम्बन्धमें भी कनफुचोका मत अति उच्च था। यह समाज बांध बांध करनेकी ईश्वराभिप्रेत बताते रहे। पांच सम्बन्धोंसे ही समाज बनता है—राजा-प्रजा, पति-पत्नी, पितापुत्र, श्वेषकनिष्ठ और बन्धु। राजा प्रभृति प्रथम चार लोगोंका धर्म कर्तृत्व और प्रजा प्रभृति जोष चारका धर्म वश्रता है। न्यायपरता तथा दयापर कर्तृत्व और न्यायपरता एवं ऐकान्तिकी यथा-भक्ति-पर वश्रता स्थापित होनेसे समाजमें सुखसाधक्य रहता है। फिर बन्धुभावसे दोनोंमें परस्पर उद्यतिकी चेष्टा करनेसे ही समाजमें कोई गड़बड़ पड़ नहीं

सकता। लोगोंने मोहमें फंस उक्त सम्बन्ध विगाड़नेसे समाजमें इतनी विग्रहला पाती है। किन्तु मनुष्यमें सत्यके अवलम्बनकी सृष्टा स्वभावतः अधिक है। सुतरां सत्पथके अवलम्बनकी सुविधा मिलने पर वह अपने ही हृत्कासे कभी मोहमें नहीं पड़ता। कनफुचो कहते,—‘वायुमरसे दीर्घ दीर्घ क्षण भुक्तनेकी भांति प्राणो व्यक्तिके सामने साधारण नाग चवनमित होते हैं। राज्यमें पादर्य राजा रहनेसे प्रजा भी पादर्य प्रजा बन जाती है। हम पादर्य राजा बना और उसका गुण बता सकते हैं। हम यह भी देखा देंगे—प्राचीन काल पादिवंश-स्थापयिता स्याङ्गि-वंशके पादिरुप विप्रतम स्याङ्गि और चीन देशमें प्रथमतः यंशानुक्रमिक राज्यके प्रतिष्ठाता प्रणितवर ‘हया’ने किस प्रकार कार्य किया था। इन सकल पादर्य लोगोंके अनुकरण और हमारे उपदेशानुसार यदि कोई चले, तो वही देशके मध्य प्रधान राजा बने तथा सुखी प्रजाके साथ महासुखमें अपना कालयापन करे। एक वत्सर हमारे उपदेशानुसार राजाके कार्य करनेसे हम राजश्री बढ़ल सकते हैं। फिर तीन वत्सर हमारे वशमें रहनेसे राजा उक्त सकल सुख उपभोग करेगा।’

यह ५१ वत्सरके वयस पर सु राज्यने निकल सि, गुधि, सु प्रभृति राज्योंमें खोय मत फैलाते धूमने लगे। कनफुचोको पामा रहा—किसी न किसी राजाकी इच्छागत कर खोय चमोष्ट बनायेंगे। किन्तु उस भागाके पूर्ण जानेका सुयोग कहाँ देख न पड़ा। कनफुचोकी धर्मनोति वा राश्रनांतिका अवलम्बन विज्ञापितियोंके लिये दुःसाध्य हो गया। इनके मकन नियमां पर चलना तो दूर रहा, उनके नामसे ही मार्गाकी भय और सहाय लगा। राजपुरुष मोहते थे—‘इहाँ इसी समय कनफुचो आकर हमारे कार्यका प्रतिवाद न लगायें और इनने दिनके नाम एर’ पामाद-प्रमोद-को जानि पहुँचायें। राजा विचारते रहे—‘वहा इसी समय कनफुचो आ और शासनकार्य वा प्रजापाननका दोष देखा हमें व्यतिथिस्त तो कर न डालेंगे। साधारण लोग समझते थे—‘इतने दिन हम बड़े सुख-



अथर्ववेद में रचे हैं। मनुष्यतः वृषीको विगाड़नेके लिये यह व्यक्तिके इधर-उधर घूमते फिरता है। इसी प्रकार सकल स्वामी राजाओं से सामान्य प्रजा पर्यन्त चापातपुष्पमें सुख हो कनफुचीका चपदेय पशुप्राप्त करने लगी। फिर पनेक स्वामीमें दुष्ट लोगोंने इनके प्राणविनाशकी चेष्टा भी की थी। किन्तु ईश्वरकी इच्छासे कोई हतकार्य न हुआ।

कनफुची तथा घूमते न रहे। प्रत्येक नगर घोर प्रत्येक घाममें इनके दो-चार शिष्य हो जाते थे। कनफुची साधारण 'सोमो' की नीतिगमिता तथा घम-गमिताके लिये दिया, मान, इष्ट, विद्वद्भार और भिक्षा-भार प्रभृति चीना मनोविषयोंके ल्याय एवं हटाना प्रचार करते रहे। इसीसे ज्ञानी व्यक्तिके इन्हें उन्नत सकल प्राचीन महात्माओंका प्रतिनिधि मान आदर देते थे।

क्रमशः इनके शिष्योंकी संख्या तीन हजार हो गयी। वह सकल भ्रमणकालपर गुरुके साथ ही साथ घूमते थे। इन्होंने शिष्योंकी शिक्षा देनेकी सुविधाके लिये चार श्रेणियोंमें विभाग किया। सकल विषयोंमें पारदर्शी, बुद्धिदृष्टिकी चालनामें श्रेष्ठ निर्भक्तताप्राप्त, विद्वद् धर्मपरायणस्वी एवं ऐकान्तिक चिन्तन ईश्वरके प्रति भक्तिमान् प्रथम श्रेणीके शिष्य माने जाते थे। द्वितीय श्रेणीमें याकुण्ठता, शास्त्राभ्यास तथा सुतर्कके पारदर्शी रहे। तृतीय श्रेणीके छात्रोंको यह वेदस राजनीति प्रतिविषयद्वयमें सिखा आदि-रिक्तोक्तोंके सिद्धताके कार्यमें लगा देते थे। फिर चतुर्थ श्रेणीके शिष्य लोगोंको सिद्धान्तके लिये साधारणकी शोधोपयोगी सरस भाषा में नीति तथा धर्मशास्त्र बताने रहे। फिर छात्रों, नगरों और राष्ट्रोंमें प्रायः ५०० शिष्य प्रधान प्रधान पदोंपर नियुक्त भी थे। इन चारों श्रेणियोंके शिष्योंमें दश जन प्रधान समझि जाते थे—प्रथम श्रेणीके जिनियन, भिचकन, वीगविमिष्ट एवं शयन, द्वितीय श्रेणीके चेंगी तथा गुह्य, तृतीय श्रेणीके इन्निन एवं किल और चतुर्थ श्रेणीके विज्ञेन तथा निरिदा। द्वितीय श्रेणीके टिजुल और टिजिकन बड़े अनुमन्त्रित्वापरवज एवं तात्त्विक थे। वह सर्वदा

गुरुके सामान्य सामान्य विषयोंपर तर्क उठा अथर्व मित्रा सेने रहे। इधर प्रथम श्रेणीके जिनियन गुरुके पथान्त प्रियपात्र थे। कनफुची उन्हें सुखकी भांति चाहते रहे। ११ वत्सुरके पयसमें जिनियनके एकाम प्राप होइने पर मोक्षदुःख-विजयो प्राप्तीपुत्रप ठहरने भी यह प्रियगम्यकी मायासे पथान्त पमिभूत हुये थे। एक दिन कनफुचीने पन्थ सकल शिष्योंकी बोला कह दिया—देखो। इतिपूर्व घमने नामाविष दुर्गमि पायी और दुःसह यन्त्रणा उठायो है सहे, किन्तु ऐसी मनोवेदना कभी नहीं पायी। जिनियनके सरनेपर इयेनह नामक शिष्यने इनके उक्त छेड़का स्वस पवि-कार किया था। गुपये पमीभूत हो यह जिनियनकी भांति इयेनह की भी चाहने लगे।

भ्रमणकाल कनफुचीके जीवनमें कई घटनाएँ हुईं। हहन् शिष्यदलके लिये इन्हें बहुत विव्रत बनना पड़ता था। प्रायः सर्वदा पान्थयका पभाव रहता और मध्य मध्य तीन दिन तक पानेकी प्रवृत्ति न मिलता, जिससे दीन होनकी भांति इनका समय निकलता। एक बार इनका दल विषम पभावमें था महात्मेय पा रहा था। उसी कष्टमें पमिभूत हो एक दिन टिजुल नामक शिष्यने पूजा-गुरु। सर्वदेह और सर्वविषा बुद्धिमान् मनुष्यकी भी क्या पभावमें पाना पड़ता है। इन्होंने उत्तरमें कहा—'पभावमें पाने भी वह व्यक्तिके सर्वदेह और सर्वविषा बुद्धिमान्की भांति कार्य करता है। साधारण लोग ऐसे स्वयंवर पमिभूत हो पवगो गुपगुप भूल जाते हैं।'

कनफुची अपने हतनिपमादि पभावान एवं ईश्वर-प्रेरित घमभूते और कभी कभी शिष्योंके मध्य यह बात कहते थे। किन्तु पनेक यह बात मानने न रहे। एक दिन कथाके प्रसङ्गमें टिजिकन नामक शिष्यने कहा—'पापके नियमादि सर्वविषा उत्कृष्ट होते भी किसी राष्ट्रके कोम किसी प्रकार पालन कर न सके। सुतरां उन्हें कुछ बदल लोगिके अव-सम्भोगयोगी बना देना पड़ता है।' इसीमें उत्तर दिया—'कथक वस्तु एवं परित्यक्त उठा देनेकी उत्तम-

• महर्षिदेव अथर्व वेद में कनफुचीकी वीच वीच है।

कपड़े जोत-सो सकती है। किन्तु वह अच्छी सफाई करे दायी नहीं। फिर मिथ्यकर-सुन्दर कारकाय कर, द्रव्यादि बना सकते हैं। किन्तु यह ठहराना कठिन है—वाटारमें उनको छोड़ दूसरा कोई वस्तु न विकेगा। इसीप्रकार आगे व्यक्ति सुनीतिकी व्यवस्था बना सकते, किन्तु इसके दायी कैसे ठहरने—सोग उसे प्रत्यक्ष कर सधेगी या नहीं।

उह राज्यमें घुसते समय 'पु' नामक स्थानपर कितने ही लोगोंने इनको आक्रमण किया था। सब मिथ्यकी मिलकर भी रोक न सकनेपर उन्होंने कनफुचीकी पकड़ लिया। यह उनके फन्देमें पड़ गये। उठानेकी बाध्य हुई—फिर कभी हम उह राज्यकी ओर आगे न बढ़ेंगे। किन्तु सुनि मिलते ही कनफुचीने उसी ओर चलनेकी इच्छा किया था। जो विश्वस्यता और सत्यताकी नीतिका प्रथम पय होता उपदेश देते रहे, उन्होंने इस प्रकार सत्य छोड़ते देख क्रिय थीक उठे। फिर टिजिकहने पूछा था—मथय होहना क्या उचित है। उन्होंने उत्तर दिया—यह प्रथम दूसरीने हमपूर्वक कराया है, हमारे प्राणमें यह मथय नहीं।

इसारी पृथिवीके किसी कार्यमें नहीं पसते। वह चारो ओर पापकी लीला देख आपने लगते और उससे दूर भगते हैं। फिर वह लोगोंकी भी: ऐसा ही करना उपदेश देते हैं। उस समय सन्नासी कनफुचीकी सोतके विरुद्ध कहते देख हंसते और आनन्दपूर्ण एवं हृष्ट समझते थे। किसी समय यह घूमते घूमते लष्पाने जा लकायय दूढ़ते रहे। दूरसे एक सन्नासी चेतनं अपना काम करती देख पड़े। उन्होंने टिजिककी उनके मिष्ट कलका संवाद लेने भेजा। इसारीने टिजिककी देख और कनफुचीका क्रिय समझ कहा था—'दिग्दला मनुजके तरङ्गकी भांति एक राज्यसे दूसरे राज्यमें पहुँच जाती है। कोई उसे रोक नहीं सकता। उचित परामर्श न माननेपर जो व्यक्ति एक राजाके द्वारसे चरकर राजाके द्वारपर घूमकर-पहुँचता, उसका अनुसरण करनेसे तुम्हें क्या फल मिलता है।' इससे तो उसीकी सेवा करना

अच्छा ठहरता, जो पुद्गातुपुद्गरूपमें देख-भाव और पचस-भटल मान नग्नरतासे पीछे हटता है। ऐसा करनेसे तुम्हें भवश्य फल मिलेगा।' सन्नासी यह बात कह अपने कर्ममें लगे। फिर उन्होंने उसका कोई संवाद दिया न था। टेलुजने बापस आ कनफुचीसे सब बात कही। उन्होंने उत्तर दिया—'बात ठीक है। किन्तु पृथिवीसे हट कैसे छड़े हंगे। मनुष्यका समाज छोड़ वनमें कैसे रहेंगे। साधो न होनेसे मनुष्य ली नहीं सकता। फिर वनके पशु-पक्षीसे मनुष्यका सम्पर्क क्या है। सुतरां उनके साथ कैसे ठहरेंगे। यदि साधोके पास ही मनुष्यको रहना पड़ता, तो दुर्दमायस्क मनुष्यके निकट अवस्थान करना उचित: जंघता है। देगदेगमें विश्वस्था रहनेसे ही हमारे कार्यकी आवश्यकता है। समस्त देगमें गृहस्था लगने और नीति चलनेसे हमें एक राजाके द्वारसे अन्यके द्वारपर जाना न पड़ेगा। फिर हमारा कोई विशेष कार्य भी न रहेगा। उसी समय हम यथार्थ विषयविरागी, पृथिवी-परित्यागी और निर्द्विष वैरागी समझे जायेंगे।' सोन राज्यकी जाती समय कोयाह नगरमें सदस कनफुचीपर बड़ी विपद् पड़ी। उस समय सत्त नगरमें इयाहन्न नामक किसी डाकूने भीषण उपद्रव उठाया था। सोग उसके उत्पातसे पत्न्यन्त उत्पन्न रहे। किन्तु दुःखसे कहना पड़ता, कि कनफुची और इयाहन्नका गरीर मिश्रता-मुलता था। इसीसे लोगोंने जिस गृहमें इन्होंने आश्रय लिया, उसे चारो ओरसे घेर दिया। मियथ बहुत डरे, किन्तु यह निर्भीक चित्तसे कहने लगे—'हमारे सम्बन्धमें सत्य कभी क्षिया न रहेगा। परमेश्वर यदि इतना शीघ्र इस सत्कार्यमें यादा जाता, तो हमें ऐसी अवस्थाकी क्यों पड़नाता। उसकी इच्छासे सत्य खुल जायेगा।' कोयाहन्नके सोग हमारा कुछ बना न सकेगी।' यही कहकर कनफुचीने अपने वीषाका खर मिलाया था। फिर यह प्राचीन घन्टाटीकी महिमासूचक निज रचित पदावली गाते लगे। घर घेरनेवाले सोग कहते कहते लसे गये—यह इयाहन्न नहीं, कोई दूसरा व्यक्ति है।

१६ वत्सर पीछे घटनाक्रमतः कनकचूरीकी सदेम कोटा पड़ा। उस समय न राज्यमें किकड़ नामक एक व्यक्ति राजाके प्रति मित्रपात्र बन बैठे थे। उन्होंने परामर्शपर राजा सकल कार्य करते रहे। घटनाक्रममें इयेनइउने नामक जनकचूरीके एक मित्रको किकड़के चणोन सैन्यविभागमें खीरे कर्म मिला। फिर इयेनइउने मिराजके विषय सुनवाया। कर प्रति कीमतसे जप पाया। किकड़ने उनको युधप्रवासी देमो यो। वह इयेनइउकी मृतम-प्रकार गुइरोति देप एक दिन पूरने गते—तुमने इस प्रकार युध करना कहाँ सीखा था। इयेनइउने उत्तर दिया—कनकचूरीने हमको यह युधप्रवासी सिखाये है। कनकचूरीका नाम तुम उन्हीं कहा था—वह कैसे पादमो है। इसपर इयेनइउ बोल उठे—‘किसी कर्ममें उन्हें नियुक्त कर लेनेसे पापका यम चारो ओर फैल जायेगा। आपके सैन्यसामान्य चक्रुतोभवसे देवदानवके समुप पड़े हो सकेंगे और किसीसे न उठेंगे। फिर यदि आप स्वयं उनके उपदेशानुसार कार्य चलायें, तो दीमोय मत-मत पण्डितोंके परामर्शपर भी किसीसे कोई कष्ट न पायें।’

उक्त वक्तव्य कया सुन किकड़ने भविष्यत् सुफलकी आशासे कनकचूरीकी नियुक्त करनेकी ठहराये थी। किन्तु इयेनइउने उनसे कहा,—यदि उन्हें नियुक्त करना हो चाहते, तो धरण रमिये—आप दोनोंके परामर्शमें कोई नीचमना व्यक्ति तुमने न पाये। हमके पीछे ही किकड़ने कनकचूरीका मानिके किये दून भोज दिये।

उस समय कनकचूरी उर राज्यमें रहे। यहाँ यह कड़वासाज नामक उरराजके किसी सेनापतिके व्यवहारसे विरक्त भी बन देनेकी राह देखते थे। उरर कड़वासाज समगाधराजाका परिश्रम पा इनके पास जाने और क्षम एकमात्र युद्धकी बातपर ही आलोचना उठाते रहे। किन्तु कनकचूरीकी युद्धगारका उपदेश देगा अच्छा लगता न था। इसीसे यह चालन विरक्त रहे। मेषकी इन्हीं छिर किया—यदि हम यह राज्य न छोड़ेंगे, तो इस विषयसे कैसे सुँह

मोड़ेंगे। जिस समय कनकचूरीके समझी पथला एको रही, उसी समय किकड़की दूतमण्डली पा पहुँची। इन्हींने दिवसि न उठा वनका प्रस्ताव पात्र दिया और विन्दुमास भी विनम्र न लगा दिवाँके पाय सदेमकी ओर पद फिर दिया।

कनकचूरीके राजमगामें पहुँचनेपर राजा ने (तेपड़) मागनकार्यके समयपर मानाद्वय प्रश्न उठाने लगे। इन्हींमें यथायथ उत्तर देते देते खट ही महंत किया था—यदि हमें किसी कर्ममें लगावोगे, तो राज्यमें घरीट मङ्गन देप पावोगे। फिर कनकचूरीने कहा—उपयुक्त मनो निर्वाण कर सकनेसे ही राज्यमें सुवासन बनता है। किकड़ने भी पूँछनेपर इन्हींने बताया था,—‘प्रमत्तमनाकी रक्ष नीजिये और नीचमनाकी निकाल दीजिये। फिर आप अन्य दिनोंके मध्य ही देखेंगे—नीचमनाका मन प्रमत्त हो गया है।’ किन्तु किकड़ ऐसी बातसे समझ न सके—कैसे क्या करना पड़ेगा। उसी समय सु राज्यमें उकेतीका भी प्रादुर्भाव हुआ। किकड़ समझ न सकते थे—कैसे हम उकेतीकी निवारण करेंगे। इसीसे कनकचूरीने कुछ सोलकर कहा—यदि आप स्वयं कोमो न लेंगे और चपगो प्रजाकी प्रस्कार दे प्रलोभित करें, तो यह ठाँके कैसे पड़े। इस उत्तरसे इन्हींने स्वयं गौराजपर भी कुछ खटाव किया था। कारण कनकचूरी समझने रहे—‘दो वत्सरसे राजा किकड़के चालन यमोभूत हो गये हैं। श्री वह कहते, राजा उसमें दिवसि नहीं करते।’ किन्तु मेषकी यह सु-राजकी समझमें ठहर न सके। कारण वेसे सागोंके वगने रहनेवाले प्रभुके निश्चय कनकचूरीसे ही व्यक्तिता टिकना चलाय था।

इस बार भी मुराजके निश्चय मनोभीट निश्चय होनेसे कनकचूरी राजकार्यकी आगा कुछ दबा और चवधर लगा घरमें बैठ रहे। फिर इन्हींने सदेमके प्राचीन इतिहास सुकिङ्ग पत्रकी टीका और भूमिका लिखी। विश्व-इतिहास हो नहीं, कनकचूरीने उस समय दूसरे मो पनेक विषयोंमें जप लगाया था।

प्राजकन कनफुची के जो पुस्तक मिलते, वह प्रधा-  
नतः दो श्रेणी के निकलते हैं। किन्तु प्रथम श्रेणीका  
आदि पुस्तक सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है। हिन्दुओं के वेदकी  
भांति चीना भी इस आदिपुस्तकको परम-पूज्य  
समझते हैं। आदि पुस्तकमें पाँच ग्रन्थ विद्यमान  
हैं—इकिङ्ग, सुकिङ्ग, सिकिङ्ग, सिकिङ्ग और सुङ्गकिउ।  
इकिङ्गमें चीनदेशके सामून् परिवर्तनका विषय लिखा  
है। किन्तु इन पुस्तकका मूल इन्होंने नहीं बनाया।  
यह उसके टीका एवं भाष्यकार रहे। लोग चीन  
राज्यके स्थापयिता कोहोको उसका प्रणेता बताते  
हैं। पुस्तकके प्रसङ्ग प्रद्विज्जाके रचित हैं। किन्तु  
भाषा अति कठिन है। साधारण लोग उसका चर्च  
लगा नहीं सकते। भाष्य न रहनेसे जैसे वेद समझमें  
नहीं आता, ऐसे ही कनफुचीका भाष्य बिना देखे  
इकिङ्ग दुर्बोध माना जाता है। इसके भाष्यको भूमि-  
का में स्वयं कनफुचीने ही लिखा है—“यदि हमारे  
वयसका परिमाण कुछ बढ़ता, तो ५० वत्सर अभी  
“इकिङ्ग”का पढ़ना चलता; फिर जो टीका-वा भाष्य  
बनाते, उसमें कोई वृद्ध भ्रम देख न पाते।” यह  
पुस्तक चीना ग्रन्थोंमें सर्वापेक्षा प्राचीन और पवित्र  
है। ई०पू० पूर्व षादम शताब्दीकी मेभाङ्ग नरपतिने  
एकवार इनके अर्थप्रसङ्गकी चेष्टा लगायी थी। किन्तु  
वह किसी प्रकार सकल न हुयी। कनफुचीने पक्षे  
दूसरा कोई इसका भार उठा न सका था। प्राजकन  
साधारणतः जैसे हिन्दुस्थानी ब्राह्मण वेद नहीं सम-  
झते, ऐसे ही पक्षे चीना भी इकिङ्गका अर्थ करनेमें  
अटकते रहे। यह इकिङ्गकी बड़े बादरकी दृष्टिसे  
देखते हैं।

आदि पुस्तकका द्वितीय ग्रन्थ ‘सुकिङ्ग’ है। यह  
संप्रथमे बनाया गया है। सुकिङ्ग ही चीनावोंका  
सर्वोत्कृष्ट प्राचीन इतिहास है। इसमें चीन-राज्यकी  
स्थापनाके कनफुचीके समय पर्यन्त समस्त इतिहास  
वर्णित है। हिन्दुओं के पुराण-शास्त्रकी भांति इसमें  
धर्मनैतिकता उपदेश भी मिलता है। इन्होंने प्राचीन  
ग्रन्थादिसे संप्रथम कर सुकिङ्ग लिखा था।

‘सिकिङ्ग’—आदि पुस्तकका तृतीय ग्रन्थ है। इसमें

कनफुची-रचित नीतिगर्भ काव्य लिखा, जो सङ्गीतसे  
भरा है। एतद्विषय सिकिङ्गमें प्राचीन कविता, काव्य  
और सङ्गीत-संग्रह भी है। चीना उत्तम गीत और  
कविता कण्ठस्थ कर लेते हैं। इसमें सङ्गीतका पक्षो-  
द्धार करनेको कनफुचीने कितने ही प्रयत्न किये हैं।  
चीना इनके गीतादि उत्सर्गपर व्यवहार करते हैं।  
चीनावोंका ग्राथक्रम और पाचार-व्यवहार यह  
पुस्तक पढ़नेसे यथेष्ट समझ पड़ता है।

कनफुचीका ‘सिकिङ्ग’ नामक चतुर्थ ग्रन्थ सर्वा-  
पेक्षा वृहत् है। पूर्वार्ध तीनो पुस्तक एकत्र करनेसे  
भी इसकी बराबर नहीं होनी। यह चीनावोंको धर्म  
और व्यवस्थाका ग्रन्थ है। इसमें धर्मकर्मकी रीति-  
नैतिका विधि वर्णित है। निर्णय करना कठिन है—  
इसका मूलार्थ स्वयं कनफुचीने बनाया था या नहीं।

सुङ्गकिउ नामक पञ्चम ग्रन्थमें कनफुचीकी जन्म-  
भूमि का राज्यका इतिहास दिया गया है। सुङ्ग ग्रन्थसे  
वसन्त और लिउसे शरत्कालका बोध होता है।  
वसन्तसे चारमा कर शरत्कालका ग्रन्थ करनेसे जो  
इन्होंने इसका नाम सुङ्गकिउ रखा है। यह पुस्तक  
कनफुचीने सहायस्थानमें लिखी थी। इसमें इन-राजके  
समयसे गैराजके राजत्वकाल (चतुर्दश वत्सर) पर्यन्त  
इतिहास मिलता है। इस ग्रन्थ से स्वयं कनफुचीने  
ही बनाया था। इसमें एक भी शब्द दूसरेका नहीं।  
इसीसे इन्होंने इसको बना और गियोंकी देना कहा  
था,—यदि हमारी रचनासे कोई घग चलेगा, तो वह  
इसी सुङ्गकिउसे मिलेगा और यदि पक्षपात चायेगा,  
तो वह भी इसीसे फैल जायेगा। इन पुस्तकमें कन-  
फुचीने ऐतिहासिक वा आध्यात्मिक तत्त्वपर कोई उपदेश  
नहीं दिया। अतकिन्ती शक्ति को समझा बता  
इन्होंने कुछ विषयोंकी सीमांका लगायी है। फिर  
प्रत्येक विषयकी सीमांकामें कनफुचीने कार्यकारण देखा  
दिया है। ‘केवल मृत्यु क्या है’ प्रत्येक उत्तरमें किसी  
स्थानपर इन्होंने लिखा—जब हम ‘जीवन क्या है’ नहीं  
समझते, तब ‘मृत्यु क्या है’ कैसे समझ सकते हैं।

ई०पू० ४४१ पूर्वार्ध इनके एकमात्र पुत्र की वत्त रही  
है। कनफुचीकी जीवनीमें उनका विवेक उल्लेख नहीं

मिलता। निम्नलिखित विषय देवानेको केवल एक-मात्र घटना मिली है—कनकचूची अपने पुत्रको उपदेय देनेके लिये बीम प्रवा प्रसारित थे। एकवार किसी निम्नले बीम पूछा—इमें की सकल उपदेय मिलते, उनको छोड़ बाप अपने पितासे दूसरे विषय सिखाते हैं या नहीं। बीम उत्तर दिया,—‘नहीं। किसी दिन वह एक स्नानघर चड़े थे। मैं उनके निकटसे खरद करके जाता रहा। तुम्हें देख कर उन्होंने पूछा—तुमने गीतिप्रसाद कहा है। मैंने इनकार करनेपर उन्होंने कहा—यदि तुम गीतिप्रसाद न पढ़ोगे, तो कनकोपकनके उपयुक्त बात कैसे बोलोगे। दूसरे दिन भी उन्होंने पूछा था—तुमने चापार-व्यवहारके विधिका पत्र पढ़ा है। मैंने फिर इनकार करनेपर वह कहने लगे—यह पत्र न पढ़नेसे तुम्हारा चरित्र गिर कैसे होगा।’

यह सुनकर शिष्य बीस ठठा—इमें भी दोनों उपदेय मिले हैं। किन्तु निम्नलिखित उपदेय अधिक है—विश्व मनुष्य अपने पुत्रको शिक्षा देनेके लिये कोई विनीत प्रवचन नहीं करते।

सुन मरनेके परमेश्वर इवेनहिल नामक कनकचूचीके सर्वाधिका प्रिय छात्रका भी मृत्यु हुआ। यह संवाद मिलते ही उनकी चत्पल व्यक्तिको कहा था—‘हाय। ईश्वरने इमें गलत कर लाया। इससे एक वत्सर पीछे निश्चय प्रसार, फैलने लगे थे। वह वत्सरविशेष पीछे बहुत लोच पकड़ साये। पीछे वह ग रुवा हा—यह बीम प्राची है। फिर कनकचूची बोलाथे गये। उन्होंने बात की कहा था—यह ‘विविध’ नामक प्राची है। प्रवाद है—यह प्राची कनकचूचीके वत्सर पढ़ने कि पर्यंतपर उनकी माताको सपने देखा गया। फिर उन्होंने भी सपने उसके वत्सर एक पीता रखा। पाचवेंका विषय है—एक प्राचीके वत्सर एक समय भी पीता रखा था। एनीय बार एक प्राचीको देखा सब लोग ‘पद्मसुख’को पाचवें बारने रगे। कनकचूचीने विश्राम होने भी बर्तमान घटनासे चक्षा और भीतारपूर्वक पत्रकी ‘और देख बीस ठठे—तू जिसके लिये पाया है। फिर

असुमें कल भर इनोने कहा—हमारे उपदेय तो बचे, किन्तु हम अपरिचित ही रह गये।

इस पर निश्चयने पूछा—पाचवें अपरिचित रहनेकी बात कैसे।

कनकचूचीने उत्तर दिया—हम इनके लिये ईश्वरकी दीप नहीं देते। मनुष्य हमारी मित्रा नहीं मानता। पयस यह सफलता पानेके लिये व्यस्त हो गया है। किन्तु इसके लिये हम उसको भी दोषो नहीं ठहराते। ईश्वर हमें पराजितता है। किसी मर्यादाका नाम कभी नहीं मिलता। किन्तु हमारे नियमादिका उपयुक्त प्रचार हुआ है। तुमने हम समझ नहीं सकते—मविश्वतमें लोग हमें किस दृष्टिसे देखेंगे।

किसी दिन प्रातःकाल सुन पड़ा—महात्मा कनकचूची ठठ और पचादिके कमरपर हाथ रखा अपने गृहके द्वार घूमते हैं। उनके हाथमें लकड़ी है। वह मरीमें घिसल रही है। कनकचूची पसने और कहते हैं—

“कभी विषय प्राप्तकी पूर पूर ई गये।

टूटे विटकी न रही भिरे मुनिर बाय।

बनके निमकी भाति की दृष्टिही नरकाम।

जितनी नदमें है बड़ी बनवन् बगिराम।”

कियत्सप पीछे कनकचूची घरमें हुन द्वारके समुच्च बैठ गये। निश्चय इसी समय मुदके निकट आते थे। वह इनकी बात सुन सोचने लगे,—‘यदि निरिका एक मित्र पर-पर को जायेगा, तो मैंने देखनेमें क्या पायेगा। फिर जो विनास विटकी टूटे चयना मर्यादाको मानवका दन पनके दृष्टकी भाति सुतेगा, तो मेरा विश्राम समझ दूँगा।’ ऐसे ही सोचने-सोचने निश्चय मुदके निकट जा पड़े हुये। कनकचूचीने उन्हें देखकर कहा था—‘जि पात्र तुम्हें इतना विमल्य क्यों लगा। इतने दिन पीछे एक सुदृढ राजा पा पड़ना है। वह हमें अपना मित्रक बनायेगा। हमारा पन्थिम समुद्र उपस्थित है।’ यह बात सत्य ठहरी। कनकचूची धाटपर जाकर सो गये। फिर सात दिन पीछे इनको लोच-लोला मिल गयी।

शियोनि महासमारोहसे इन्हें समाहित किया था। कितने ही शिष्य कुण्ड बना २८ वत्सर समाधिके निकट रहे। पिछतुष्य गुरुदेवके मृत्युसे शिष्य वास्तविक अभिभूत हुये थे। उस समय कनफुचीके तीन प्रियतम शियोनिमें एकमात्र जिकड़ ही जीवित रहे। यह किसी प्रकार शोककी संवरण कर न सके। इसीसे उन्होंने फिर तीन वत्सर समाधिके निकट ही वास किया। मृत्यु हो जानेसे देवके लोगोको इनका समाधि समझ पड़ा था। इसीसे समय देव इनके लिये शोकसन्तप्त हो गया।

किसकी नगरके बहिर्भागमें कङ्कवंगका समाधि-स्थान था। उसी स्थानपर किसी स्तम्भ विद्धृत चित्रमें कनफुचीका समाधि लगा, पीछे एक वृहत् एवं वृद्ध स्तम्भ भी बना। स्तम्भके सम्मुख भरमर पत्थरसे बनी इनकी प्रतिमूर्ति स्थापित हुयी। समस्त



कनफुचीकी भरमर-मूर्ति।

स्थान घेर कुण्डवाटिकामें परिणत किया गया है। प्रवेश-द्वारसे स्तम्भ पर्यन्त साद्रेस वृक्षकी खोखो गोभित है। प्रवेशके द्वारपर प्रति सुन्दर कारकाय बना है।

भरमरकी मूर्तिके नीचे 'सियाङ्ग' नामक राजवंश प्रदत्त कनफुचीका महाप्राणीगणापगम्य प्राचीन शिल्पक और सर्वविद्यानिपुण एवं सर्वज्ञ-सर्वज्ञा नामक उपाधि छोड़ा है।

कनफुचीके समाधि-स्तम्भकी दोनों ओर दूसरी भी दो सुदृष्ट स्तम्भ खड़े हैं। उनमें पद्मना इनके पुत्र और दूसरा पौत्रका समाधिसंलक्ष है। पौत्रके समाधि-स्तम्भकी दाहनी ओर एक मकान बना है। शोक कहते—ठीक इसी स्थानपर जिकड़ कुटीर निर्माणकर और गुरुके शोकसे पागल बन ३ वत्सर काल रहे थे।

समाधि-स्तम्भके सम्मुख की प्रतिमूर्ति पाती, उसको देख कनफुचीकी शक्ति छट समझी जाती है। यह दीर्घचन्द्र, वल्लिष्ठ एवं सुगठित पुरुष रहे। सुखमण्डल रत्नाम एवं पूर्णताप्राप्त और मस्तक वृहत् था। इनके शरीरमें ४८ विशेष चिह्न रहे।

कनफुची अपने प्रभु राजासे जिस भावमें व्यवहार करते, उससे पाकनिर्मलताके गुण भक्तकति थे। किन्तु राजाका सम्मान रखते समय इन्हें बड़ा पक्षाच्छन्त्य ठठाना पड़ता रहा। जब यह राजसभामें जाते या मृत्यु चिह्न हासनके निकट पाते, तब सुखके भाव परिवर्तित देखाते थे। उस समय इनके पैर कांपते रहे। कण्ठका स्वर इतना मृदु लगता, मानो बात करनेमें इन्हें कष्ट पड़ता था। घटनाक्रमसे राजविश्व बहाने करते समय कनफुचीका शरीर अप्रम हो जाता, उसका भार किसी प्रकार सहनेमें न पाता रहा। यदि किसी पीड़ाके समय राजा इन्हें पाकर देखते, तो पशुप शरीर पर भी अप्रम पदोचित वेपभूषा लगा यह पूर्वसुख लेते थे। किसी राज-भतियिको सादर आवाहन करनेकी राजा जब इन्हें बोलाते, तब इनके भावबदल जाते रहे। उस समय यह उत्साहित हो राजाके पत्न्यान्त कर्मचारियोंके साथ जाती बढ़ते थे। जब भतियिको आवाहन करनेके लिये यह स्वयं भेजे जाते, तब सर्वोप द्वारके निकट पहुँच विप्र-गतिसे स्वीय पञ्च-गव्यादि देखाते रहे। दुर्भिक्षादिके निवारणार्थ देवमें वार्षिक उत्सव होनेपर कनफुची स्वयं उसका मूनीद्वेष देख उत्साह देते और पदोचित वस्त्रादि परिधानपूर्वक अपने गृहकी पूर्ण ओर छड़े हो उत्सवके मतवाले लोगोंकी निकट जानेपर महासमादरसे सेते थे। पागारादिके कार्यमें यह अधिक सावधानतासे चरते रहे। कनफुची कभी

साधनमनुसार जहाँमें जाय समान न हो। इनका स्थापनादि पद्यन परिवर्तन कर समाना और प्रत्येक प्रकारका व्यवस्था निर्दिष्ट पादमें समाना जाता रहा। यह बहुत ज्यादा या न सकते थे। भोजनपर बैठ कर पढ़ना इन्हीं द्वारा समाना रहा। फिर जनकुची भी कुछ पानि लगवा कियेदंग मन्द होतें भी देवताको चढ़ाते थे। बिना देवताके नाम समर्पण किये यह कोई भीप येते ना सकते रहे। मध्यपानके निमित्त कोई निर्दिष्ट समय मया। यह जब चाहते, तभी श्रावण या देते रहे। किन्तु पश्चिम सामानि गराय भी जनकुची कभी प्रगत नगते न थे। यह बड़े दयालु रहे। गधको कुछ न कुछ जनकुची दे ही देते थे। जब लोगोंके समाय किसीका मत्कार होतें न देखते, तब यह 'यं शीघ्र शीघ्र काम करने सम देते रहे। किसीको पसामाय पढ़ने पर जनकुची साथ दयासाध्य साहाय्य पढ़ पागेमें बिचकते न थे।

यह सब गाड़ीपर चढ़कर चलते, तब किसी अपरिचित व्यक्तिको देखते ही चपलता ही ममकार करते थे। यह किसीको कभी अभिशादनके निमित्त चढ़ाते न करते। इनके निकट सबस ही समान पादर पाते थे। जनकुचीके मतानुसार जोध और भीष लोग 'मं वागु एवं' दासका सम्बन्ध रहता है। वागु चलनेमें लग भूक ही पड़ता है। सदैव व्यवहार करनेसे भीष लोग नियम समीपत ही जाते हैं।

इनकी कार्यावली देखनेमें भी ऐसा ही समझ पड़ता है। इन्हींके केवल उपदेशमें नहीं—एवं 'पादमं साध्यादिशर भीषोंको सिपाया या।

जनकुची मज्जीतनियामें बड़े पारदर्मी रहे। मज्जीत मिस इनके मतमें सबकी मित्रा चपरो रहते थे। यह कहते थे—'मज्जीत मिस किसी प्रकार मनको लागत कर नहीं सकते। नीतिके प्रवर्तनमें चरित्र भी गड़ता, किन्तु मज्जीत मिस यह गठन चपरा ही रहता है।' मज्जीतकी बात चलनेमें जनकुची एक प्रकार पादस ही जाते थे। किसीके विरोध कठानेपर यह शीघ्र शीघ्र कमर बांध तर्क करने लगते रहे।

जनकुची नीतिको मित्रा देते थे। इन्हींको

उपदेश दिया, समझें कि सब दुर्गम विज्ञानमय्यक व्यवहार नीति, समाननीति और राजनीतिको हाथ धर्म-कर्म किंवा संत एवं विज्ञान-मध्यमोय कोई विमिय विषय नहीं लिया। इन्हीं साधारण भीषोंके निमित्त एक व्यवहार मान्य बताया या। हम गाथा का नाम निमित्त या निमित्त है। मनुष्यके जीवनमें जो जगत्पद ठहरता, करना पड़ता या किया जा सकता, इस पुस्तकमें उक्त संघा निदम मिलता है। निमित्तमें पितामाता एवं नष्ट नीतिके व्यवहार और सामान्य जीवनके चरित्रको मोभावर्धनका जो उपदेश तथा नियम मिलता, वह पति सुन्दर एवं पति संजस व्यव-मयमोय समझ पड़ा है। पिताके निकट पुत्रको वाध्यताको ही जनकुचीने समस्त विषयोंका मूल ठहराया है। इनके मतमें एक परिवार किसी जातिवा लुट पादमं है। परिवारके मध्य पिता जैसे पुत्रपर प्रभुत्व पसता और पुत्र जैसे पिताको वाध्य पाता, वे ही समस्त जातिवा व्यवहार राजाके नियत समानानुवत् उचित जाता तथा राजा भी समस्त प्रजापर पिताका पक्षिहार पाता है। इसी मूल भित्तिपर इनके समस्त सामाजिक एवं राजनैतिक नीति स्थापन करनेमें चीनमें कभी कोई विमिय विगड़ता नहीं पड़ती।

किसी किसीके मतमें जनकुची ईश्वरकी मता मानते न थे। किन्तु अपने दर्शनमय्यमोय सकल प्रयोगमें इन्हींके लिया है—साम्प्रतिक मूण्यो किसी वस्तुका उद्भव कैसे सम्भव है। नियम किसी प्रकारका मूलवदायें पादि चलन कालमें विद्यमान है। कारण वा मूल इन्द्रियपाद्य वस्तुके साथ समभावमें रहता है। सुतरां कारण भी समानि चलन कालमें चलता पाता है। यह कारण चलन, पदस, पसीम, मर्क-मज्जिमान् और मर्क विराजित है। नीक पाकाम ही मज्जिका केन्द्रमान पाता पर्यात् इसी ध्यानमें प्रवानतः कारणके कार्यका कारण ही जाता है। पाकामसे समस्त प्रवृत्ति कारणकी मज्जि फैलती है। इसीमें मध्य मध्य विमियनः सत्तापय एवं दक्षि-पायनके समय जो दो दिन दिवारात समान पड़ते,

उनको आकाशके सहेयके राजा पूजादि प्रदान करते हैं। क्योंकि दोनोंमें एक दिन अन्न वपन किया और दूसरे दिन काट लिया जाता है।

कनफुचीके मतमें मनुष्यका देह दो विषयोंसे बना—पदमा सूक्ष्म, बृहत् एवं ऊर्ध्वगामी और दूसरा स्थूल, इन्द्रियप्राप्त तथा निम्नगामी है। इन दोनों स्थूल-विषयोंके पृथक् होनेसे सूक्ष्म देह आकाशको छड़ और स्थूल देह पृथिवीमें मिल जाता है। इनके दर्शनमें 'मृत्यु' नामक कोई बात नहीं। स्थूल देह महोसे मिल जायके वंशमें गण्य होता है। किन्तु सूक्ष्म देह चिरयतमान रहता और मध्य मध्य पृथिवी-पर अपने पूर्व वासस्थानको आ पहुँचता है। यह सकल सूक्ष्म देहभूत पूजा पानेपर अपने वंशधरोंका मङ्गलविधाग करते हैं। इसीसे चीनालोंके पिछ-मन्दिरमें उत्सवादि मनानेकी व्यवस्था है। चीना इन सकल उत्सवोंपर इतनी भक्ति और चेष्टा देखावे, कि दूसरे लोग आश्चर्यमें आ जाते हैं।

चीनालोंको विश्वास है—यदि हम ऐसा न करेंगे, तो पूर्वपुरुषोंके सूक्ष्म देह पिछमन्दिरमें कैसे पुसंगे पधवा वंशधरोंका प्रेम एवं यत्न कैसे ग्रहण कर सकेंगे।

कनफुची वा शिष्य ईश्वरको कोई आकृति किंवा प्रतिमा मानते न थे। यह आचारणतः लोगोंको सिखाते रहे—दूसरेसे जेधे व्यवहारकी प्रत्यागा रखें, दूसरेके साथ व्यवहार करते समय वेधे ही आप भो चले। कनफुची बृहत्वाद स्वीकार करते थे।

यह अपने शिष्योंसे कथनोपकथनके समय बहु-मूल्य मन्त्रव्य प्रकाशित करते रहे। पीछे उन्होंने सबको लीट 'दर्शनयास्यका कथनोपकथन' नामक ग्रन्थ बना। उक्त मन्त्रव्य पति सुन्दर एवं बहुमूल्य रहनेमें नीचे उद्धृत करते हैं। उन्हें पढ़नेसे कनफुचीके भूयोदर्शन और सर्व विषयकी विचक्षणताका परिचय मिलेगा।

१। जो किसीमें प्रशान्ति देख न सके, उसे यदि कोई पात्र भी न करे, तो उसके पूर्ण धार्मिक होनेमें क्या संदेह पड़े।

२। चिकनी-सुपही बातोंमें, पशुधन मत्त नहीं रहता।

३। विश्वास और हृदयको जो जीवनका प्रथम स्रष्टा ठहराना चाहिये।

४। मनुष्यके हमें न पड़वाननेसे कोई दुःख नहीं; दुःख इसी बातका है—हम मनुष्यको पड़वान न सके।

५। विन्ताशून्य विद्यामें क्या जो परिश्रम नष्ट जाता है। विद्याशून्य विन्ता भी सर्वनाशकर है।

६। क्या हम तुमको सिखायेंगे—ज्ञान किसे कहते हैं। ज्ञान वही है, जिसे तुम जानो उसे मानो और जिसे तुम न जानो उसे पड़वाओ। पर्याप्त किसे व्यक्ति-विशेषको ज्ञानी मानने, अपनी पद्धता जानने और किसीके भ्रमका यथार्थ पड़वाननेसे ज्ञानका सचा स्वरूप देख पड़ता है।

७। दृष्टि पढ़नेसे गुणवान् लोगोंमें हमें समता दर्शन करना उचित है। फिर यदि विपरीत समावके लोग देख पड़ें, तो हम पलाहटिसे अपनी आप परीक्षा करें।

८। प्रथम व्यवहारमें लोगोंकी बात सुनना और उनके आचरणकी प्रशंसा करना पड़ता है। फिर उनके बात सुन उनके आचरणपर लक्ष्य रहना आवश्यक है।

९। जिकिहने कहा—मैं जेसा व्यवहार पाना वेंसा जो व्यवहार देखाना भो चाहता हूँ। कनफुचीने उत्तर दिया—किन्तु उसने दूर पधमर होनेकी हृदय तुम्हें कहा है।

१०। ज्ञानी लोग बातमें लड़े, किन्तु व्यवहारमें लड़े रहते हैं।

११। इसप्रकार अपने मनमें ठहरा पाराधना करना चाहिये—मगशान् हमारे सामने बैठे हुये है।

१२। पाराधनाके समय यदि अपना मन उसमें न लगे, तो पाराधनाके दूर ही रहना उचित है।

१३। सबके निचे मोटे पारन, पानके निचे सामान्य जंस और मधनके निचे तक्रिया बना अपने हाथसे काम चला सकते हैं। किन्तु सोया हुआ धर्म,



घन और मान मिलते भी हमें शरत्के टूटे-फूटे मेघकी भांति देख पड़ता है।

१४। ज्ञानी अपने भीतर अविषय दूसरोंमें प्राप्तव्य विषयको ढूँढते हैं।

१५। जो पढ़ो, उसे अपने कार्यमें परिणत करो और प्रतिदिन कुछ कुछ नूतन विषय सीखते रहो। फिर आप शिक्षादाता बन सकेंगे और लोग आपकी बात सुनेंगे।

१६। अपने हृदयमें विश्वास और दृढ़ता न रखनेवाला हमारे देखते चमत्कौन शकटके समान है। यह जीवन्की पथपर कैसे चलेगा।

१७। तीन प्रकारसे तीन लोगोंके एकत्र होनेपर शिक्षा में सुविधा पड़ती है। शिक्षार्थी सद्व्यक्तिका अनुकरण और सद्व्यक्तिको देख अपना दोष संशोधन कर सकता है।

१८। मनुष्यको वस्तुपूर्वक सत्कार्यमें लगा सकते, किन्तु वस्तुपूर्वक उसमें उसकी प्रवृत्ति पड़ना नहीं सकते।

१९। स्वभावसे मनुष्य एक ही देशाता, किन्तु व्यवहारसे भिन्न भिन्न बन जाता है।

२०। ईश्वरके निकट अपराधी होनेवाला व्यक्ति किसके पास शरण लेगा।

२१। राजा धार्मिक रहनेसे न्याय एवं युक्तिके साथ कार्य करेगा और साहसके साथ बात कहेगा; किन्तु अधार्मिक होनेसे सावधान बात कहते भी न्याय एवं युक्तिके साथ कार्य न करेगा।

२२। ज्ञानी लोग इसी भयसे ललित रहते—हम अपने कर्ममें पिछली कथाकी अपेक्षा होन पड़ते हैं।

सहस्र दोष और सहस्र भ्रम मानते भी कनफुचीके आदर्श पुरुष धीमेमें कोई सन्देह नहीं। फिर यह थोड़े विषयकी बात कैसे हो सकती है—किसी प्रकार ऐश्वर्यक समताकी दोषार्थ न दे चीना भाजतक इनका उपदेश पासन करते भाते हैं। सोचनेसे विस्मित होना पड़ता है—चीना इनके प्रति १७६८ पुरुष कीर्ति भी समभावसे सम्मान देखाते हैं। प्रति ग्राम और प्रति नगरमें इनका चित्र एवं मन्दिर स्थापित है।

मान्दारन ( मन्दी ), देशके विषय एवं राजपुरुष इनकी प्रतिमूर्ति पूजते हैं। कनफुचीके मन्दिरमें धूप, सन्धन-काष्ठ एवं गुग्गुलु जलाया और सम्मुख परिष्कार पात्रमें पुष्प, फल तथा मद्य सजाकर लगाया जाता है। उक्त पात्रमें निम्नलिखित कई विषय खोदित रहते हैं—  
हे कनफुची। हे हमारे सम्मानार्थ शिक्षक। तुम इस स्थानपर आ कर अधिष्ठित हो और भक्तिपूर्वक दी हुई हमारी यह पूजा ग्रहण करा।

इन्होंने किसी दिन भूत भविष्यत् परकाल वा सृष्टि-तत्त्व, मनस्तत्त्व, वस्तुतत्त्व इत्यादि विषयों पर मीमांसा कननेको चेष्टा लगायी न थी। कनफुची वर्तमानके सेवक रहे। यह इहजीवनकी उन्नति और भवनति-पर ही उपदेश दे गये हैं। इन्होंने उपदेश-बलपर चीनवासी वर्तमानकी उपासना छोड़ा और इहजीवनकी उन्नतिमें शरीर लगा महासुखपूर्वक उस कामसे भाजतक निर्वाह करते चले भाते हैं।

कनफुसका ( हिं० पु० ) १ धीरे-धीरे बोलनेवाला, जो कानसे लगकर बताता हो। २ निन्दक, जुगलधोर। कनफुसकी ( हिं० स्त्री० ) १ धीरे-धीरे बोलनेवाली, जो कानसे लगकर बताती है। २ निन्दा करनेवाली, जो बुराई करती हो। ३ कानाफूसी, कानमें धीरे-धीरे कही जानेवाली बात।

कनफुल ( हिं० पु० ) कर्णभूषणविशेष, कानफूल, तरबन, कानका एक गहना।

कनफेड़ ( हिं० पु० ) कनपेड़ा, कानके पास पड़नेवाली गिलटी।

कनफोड़ा ( हिं० पु० ) कर्णकोट ईषो।

कनविधा ( हिं० पु० ) १ कर्णछेदन करनेवाला, जो कान छेदता हो। २ कान छेदाये हुआ।

कनमेंडी ( हिं० स्त्री० ) हृद्यविशेष, एक बीदा। यह अमेरिकासे भारतमें आयी है। दूधरा नाम 'वनमेंडी' है। बम्बईप्रान्तमें इसकी कृषि अधिक होती है। कनमेंडी एक प्रकारका पटसन है। ऐसा ८८ फीट लम्बा बैठता है। किन्तु कनमेंडी पटसनसे अच्छी नहीं ठहरती। पत्र, पुष्प एवं फल मिंहीसे मिलते हैं।

कनयून ( हि० पु० ) तण्डुल भेद, किसी किष्मका चावल । यह काशीमें उपजता, और खेतवर्ण रहता है । लोग इसे बहुत पच्छा समझते हैं ।

कनरयो ( हि० स्त्री० ) वृक्षविशेष, एक पौदा । इसे गुलू भी कहते हैं । कतीरा कनरयोसे ही उत्पन्न होता है ।

कनरग्राम ( हि० पु० ) रागविशेष, किसी किष्मका गाना । इसमें समस्त स्वर शुद्ध रहते हैं ।

कनरस ( हि० पु० ) १ सङ्गीतका आनन्द, गाने-बजानेका मजा । २ सङ्गीत व्यवस्थाका व्यसन, गाना-बजाना सुननेका चसका ।

कनरसिया ( हि० पु० ) सङ्गीतप्रेमी, गाना-बजाना सुननेका शौक रखनेवाला ।

कनल ( सं० त्रि० ) कन्-फलच् । प्रदीप्त, रौघन, चमकीला ।

कनवई ( हि० स्त्री० ) छटाक, पांच तोले ।

कनवक ( सं० पु० ) शूरपुत्रविशेष, औरके एक लड़के ।

कनवा ( हि० पु० ) कनवई, छटाक ।

कनवांवा ( हि० पु० ) दौहित्रपुत्र, नवसेका बेटा, लड़कीके लड़केका बेटा ।

कनवास ( सं० पु० = Canvas ) बख्खविशेष, एक कपड़ा । यह मोटा रहता, पटसनसे घनता और जूते या नावके पाल तैयार करनेमें लगता है ।

कनयो ( हि० स्त्री० ) कार्याभेद, किसी किष्मकी कपास । यह गुजरातमें अधिक उत्पन्न होती है ।

कनयोका विनोला बहुत छोटा रहता है ।

कनयोकीसम ( सं० पु० = Convocation ) विश्वविद्यालयका महीतुसव, युनिवर्सिटीका एक जससा । यह प्रति वर्ष हुमा करता है । इसमें बौ० ए० आदिकी परीक्षा पास करनेवालोंकी समद भिन्नती है ।

कनसलाई ( हि० स्त्री० ) १ कौटभेद, एक कौड़ा । यह छोटे कनखजूर-जैसी होती है । सोते बादमीके कोनमें घुस जानेसे ही इसका नाम कनसलाई पड़ता है । २ कुश्तीका कोई पेश । इसमें एक पक्षवान् दूसरे पक्षवान्के अपनी कमर पर रखे हाथोंके नीचे अपना एक हाथ ढाल डगलकी राह उसकी गर्दनपर

पड़वाता और अपनी शरीरकी घुमा टांग लड़ा कर उसे चित्त फटकारता है ।

कनसार ( हि० पु० ) ताम्रपत्रका सेव खींचनेवाला, जो ताँबेके पत्तरपर लिखता हो ।

कनसास ( हि० पु० ) चारपाईका टेढ़ा छेद । इसके कारण चारपाई कुछ टेढ़ी पड़ जाती है ।

कनसई ( हि० स्त्री० ) खटक, टोड़, पाष्ट ।

कनसुर ( हि० दि० ) १ मन्दस्वरयुक्त, जिसके अच्छे आवाज़ न रहे । २ अप्रसन्न, नाराज़ ।

कनस्तर ( सं० पु० = Canister ) टीनका बक्का, टीनका घोवा । यह चतुष्कोण-विशिष्ट रहता और घूम, तेज प्रवृत्ति वस्तु रखनेमें लगता है । मट्टीका तेज इसीमें भरकर आता है ।

कनडा ( हि० पु० ) फसलकी उपजका अम्दान लगानेवाला, जो फसल ख़ूतता हो ।

कनडार ( हि० पु० ) कर्णधार, किवट, पतवार यामनेवाला मसाह ।

कना ( सं० स्त्री० ) कनिगास धातु-पच । १ कनिडा, सबसे छोटी वंगली । ( ये ) २ कन्या, लड़की ।

कना ( हि० पु० ) १ कण, दाना । २ काण्ड, सरकण्डा ।

कनाई ( हि० स्त्री० ) १ कोमल शाखा, पतली छाल । २ नवपल्लव, कल्ला, टहन्यी । ३ पगड़ेके गिरावका एक हिस्सा ।

कनाखड़ा ( हि० वि० ) उपहत, एहसानमन्द, कमीड़ा ।

कनागत ( हि० पु० ) पिष्टपच, क्षार महीनेका चंधेरा पाख । इसमें भारतवासी मृत पितरोंके स्मरणसे आह-तर्पण किया करते हैं ।

कनात ( तु० स्त्री० ) स्त्रुतवक्ताका आवरण विमोद, माटे कपड़ेका परदा । इसमें थोड़ी थोड़ी दूरपर बसकी कटियाँ सी-सी कर लगायी जाती हैं । उनमें छोटी छोटी सज्जारे कनात खींच कर खड़े करते हैं । यह प्रायः छिरे या तम्बूमें लगते हैं ।

कनार ( हि० पु० ) पथरोगविमोद, पोड़ेकी एक बीमारी । पोड़ेकी सर्दी या कुशाम होनेका नाम कनार है ।

कनारक—बोधाण देखो।

कनारो (हिं० स्त्री०) १ कनारो, गाँठ। २ मन्द्राख प्रान्तके कनाड़ा जिलेकी भाषा या बोली। ३ कण्ठक, काँटा। (वि०) ४ कमरिका पधियासी, जो कनारमें रहता हो।

कनाल (हिं० पु०) चौघाई बोधा, घुमावका प्वां हिस्सा। कानूनकी यह शाखा पञ्चावमें चलती है।

कनावड़ा (हिं० पु०) उपकृत, एहसानमन्द, दवेल्, कनीड़ा।

कनासो (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक जोहार। कनासो एक प्रकारकी रीती है। इससे नारियलके डुङ्गे का सुँड़ बढ़ाते हैं। फिर एक प्रकारकी दूसरी कनारोसे भारके दांत भी पैनाये जाते हैं।

कनिषारो (हिं० स्त्री०) कर्णिकार, कानकचम्पा।

कर्णिकार देखो।

कनिक (हिं० स्त्री०) मोक्षम-चूर्ण, गेहूँ का मोटा भाटा। गेहूँके मोटे भाटेको कनिक और मझोमकी मेदा कहते हैं। कनिक प्रायः रोटी बनानेमें काम देती है। इसकी पूरी भी अच्छी होती है। किन्तु देखनेमें वह साफ नहीं पाती।

कनिका (हिं०) कपिका देखो।

कनिक्या (सं० स्त्री०) समिता, मेदा, कनिक।

कनिक्कन्द (सं० वि०) क्रन्द यङ्गुलक पञ्च सुखाभावः निगागमस्य। अत्यन्त क्रन्दनशील, फूट-फूट कर रोनेवाला। (पञ्चतन्त्रः १।४८)

कनिगर (हिं० पु०) मर्यादारक्षक, स्त्रीय कीर्ति स्थायी रखनेवाला, जिसे अपनी इच्छातक खयाल रहे।

कनिचि (सं० स्त्री०) शूरण, लीमोंकन्द।

कनिय्या (हिं० स्त्री०) झोड़, मोद।

कनिय्यागिरि (हिं०) कन्यागिरि देखो।

कनिय्याना (हिं० स्त्री०) १ साय छोड़ना, चलना होना। २ कतराना, हट जाना, तिरछे पड़ना। ३ कसो खाना, एक ओरको सुक जाना। ४ मोद लेना, कनियां उठाना।

कनियार (हिं०) कर्णिकार देखो।

कनिष्क—भारतके एक प्राचीन सम्राट। पञ्चावका

पालम्बर नगर इनका जन्मस्थान है। यह सुदर्भन कनिष्कके पितामह रहे। इन्होंने अपने भुजबलके प्रभावसे भारतमें नाना स्थान जीते थे। मानिक्याल, काश्मीर, मथुरा, भावलपुर प्रभृति नाना स्थानोंको विशालीपिमें कनिष्क राजाका नाम मिलता है। राजतरङ्गिणीके मतसे यह तुहस्क-जातीय बौद्ध रहे। काश्मीरमें बहुदिन इन्होंने राजत्व किया था। इन्हींके समय काश्मीरमें बौद्धधर्म प्रचल पड़ा। इन्होंने अपने नामपर कनिष्कपुर नगर बसाया था।

पालि बौद्धग्रन्थमें इनका नाम 'चन्दन कनिक' लिखा है।

कनिष्क एक कष्टर बौद्ध रहे। बौद्ध धर्म उधार करनेके लिये इन्होंने काश्मीर या नाना स्थानोंसे अर्हंतों और भ्रमणियोंको बुलाया था। फिर अनुशासन-पत्र चारों ओर भेजा गया। कई देशोंसे बौद्धपण्डित कनिष्कको समाने पाये थे।

प्रथम इन्होंने राजगृह था महासभाका अधिवेशन करना चाहा। किन्तु आर्यपार्श्विक प्रभृति अर्हंतोंने इनके प्रस्ताव पर असम्यक्त हो कहा था,—“राजगृहमें इस समय महासभाका अधिवेशन हो नहीं सकता। पालकल वहाँ विभिन्न मतवाल्सन्धी रहते हैं। अतएव गिरिमिच्छा-वेष्टित, यचराजरक्षित और सिद्धार्थ-वेष्टित इस काश्मीर राज्यमें ही महासभा होना चाहिये।”

अनेक तर्क-वितर्कके पीछे सब लोगोंने कनिष्कका मत माना। जहाँ सूत्र, विनय और अभिधर्मके विभाषा-सूत्र करनेको तर्कवितर्क उठा था, वहीं कनिष्कने एक सत्पाराम बनवाया। उसी समय प्रसिद्ध बौद्ध पण्डित वसुमित्र भी इनसे मिले। असाधारण समता देख सबने उन्हींको सभापति मनोनीत किया था। वसुमित्रने विभाषासूत्र प्रकाश किया और कनिष्कराजने उसे खोजित तात्विकरूपपर खोदवा प्रस्तरके आधारसे रखा दिया। जहाँ यह धर्मपत्र रखा था, वहीं कनिष्क ने एक स्तूप भी बनवाया था।

अभ्यागत बौद्धोंके विश्वासको इन्होंने चीनपति नामक स्थानमें तीन उच्च सत्पाराम निर्माह कराये।

एतद्व्यतीत गांधार राज्यमें एक पति, उहय देवाः सय, \* और कई सङ्काराम भो कनिष्ठने बनवाये। फाडियान प्रस्थति चीनके प्राचीन परित्राजक उह देवल और सङ्काराम देख गये हैं।

कनिष्कके मरनेपर कल्योने काश्मीर अधिकार किया था।

भाज भी स्थिर कर न सके—कनिष्क किस समय विद्यमान रहे। इस सख्यभमें चनेक जोग, चनेक वार्ते कह चुके हैं। चीन-परित्राजक सुङ्गयूनके मतमें बुहनिर्वाणसे १०० वर्ष पीछे कनिष्क विद्यमान थे। ह्विउएन मियाङ्ग कहते—बुहनिर्वाणसे ४०० वर्ष पीछे कनिष्क गांधारके राजा बने। किन्तु पञ्चाङ्ग भान्साय रावजपिण्डो शिलेके भन्तर्गत माणिक्याल नामक एक ग्राममें कनिष्ककी रोमक-मुद्रा मिली है। यह मुद्रा ई०स० ११ वर्ष पड़नेकी है। पाचाय्य पुरातत्त्वविदोंके मतसे यह युद्धि (Yuei-chi) के राजा रहे। मिला-लिविमें इन्हें 'कनिष्क कुपाण' या गुपाण-संयोग कनिष्क लिखा गया है।

मोचमूलरके मतसे कनिष्क शकराजा थे। इन्हींके समय शकाब्द प्रचलित हुआ।

कनिष्कपुर—बाह्यराज कनिष्क-प्रतिष्ठित काश्मीरका एक नगर। (राजतरङ्गिणी ११६८)

इस नगरका वर्तमान नाम कामपुर है। यह चीनगरसे ५ कोस दक्षिण पौरपञ्चास गिरिके पथपर अवस्थित है। आजकल कनिष्कपुर एक सामान्य ग्राम गिना जाता है। यहां एक सराय बनी है।

कनिष्ठ- (सं० वि०) प्रतिशयेन युवा पश्या वा, युवन् पश्या वा-इहन् कनादेमय। युवाशवाः जननतरमायुः। वा ३५५। १ पतिमुवा, निहायत कमसिन, बहुत छोटा। २ पत्य, कम। ३ सधु, छोटा। ४ पयान् जात, पीछे पैदा हुआ। ५ पयसमें छोटा, तन्ममें कम। (पु०) ६ पनुज, छोटा भाई। इनका संस्कृत पयोय गशोयान्, पनुज, पवरज, लघयज, कनोयान्, कन्यास और यवित है। ७ महादेव।

\* कनिष्ठनामके मतमें वर्तमान देवदार परसे १ कोस दक्षिण पथ पर बाह्यन देवदार का काण्ड पड़ा है।

"परिवि विहङ्गयन् कनिष्ठः उहयदेवाः।" (गारत १५१५११)

कनिष्ठक (सं० स्त्री०) कनिष्ठमिव कायति प्रकाशये, कनिष्ठ-कै-क। १ शूकटय, सूकड़ो घास। (त्रि०)

२ पति पत्य, निहायत कम, सबसे छोटा।

कनिष्ठता (सं० स्त्री०) १ पति युवावस्था, निहायत कमसिनो, छोटाई। २ पत्यता, कमी।

कनिष्ठपद (सं० स्त्री०) १ वीजगबितोष्ठ ज्येष्ठावस्था पत्य संख्या-युक्त पदका वर्गमूल। कनिष्ठपदका वर्ग निर्धारित गुणकसे गुणित जाने और निर्धारित संयोगक मिलाया या निर्धारित शोधक घटाया जानेपर निश्चित वर्गमूल प्रदान कर सकता है। २ पत्यस्य वा प्रथम मूल, निहायत छोटी या पड़तो जड़।

कनिष्ठमूल, कनिष्ठपद देखो।

कनिष्ठा (सं० स्त्री०) कनिष्ठ-टापू। १ दुर्बल पञ्जलि, क्षिमुनी, सबसे छोटी उंगली। २ नायिका विमेय। जो परिपोता नायिका स्वामीका पत्य छेड़ पातो, वही कनिष्ठा कहलाती है। यह तीन प्रकारकी होती है—धीरा, अधीरा और धीराधीरा।

धीरा कनिष्ठा—

"हे भारी देखो क्या कचो जगती दीप।  
जहाँ जगती कर रही हवरद विरवा राध।  
बीन भलि एलियो दीप कचो दीप पतय।  
नचो बिज रतिओ कीरे बहान बोध दीपय।  
कोच बिचो जनमानसे नचो बिचो उपरीय।  
पुनः नचो नचि कानकर राखतु हिरदि धाव।

अधीरा कनिष्ठा—

बिना दीपवाँ नचिवाँ दीपो को हँक पार।  
साथे मोटे बन्दको जगती दीपो कर।  
काचो सुख दीखपावक नाम मरनेके काज।  
काचो कचरी तुम नचो काचो राखी पाय।  
मारीको मारी नचो दीपो बिडी बरोन।  
कीन दीपको दीपि बह कीन नच बिह दीप।  
विषय नचिके हँ डिपे तबिसे कोच पतार।  
नचो को कचिदि बोध हँ पतयो कर पतार।

धीराधीरा कनिष्ठा—

एक जगती दीप है इन्हीमें रतिनोह।  
सकलमें उह बरि पावती पतयो दुन वा दीप।

कनी माति भगवा निटे मोहि बतायो बाग ।  
 यम मन धनसो करहु गो बहो गुहारी काम ॥  
 चपत पडिनी धनरसो फिर भी दीत भगवा ।  
 बिरहमे थापुल कर भयो हाथ-हाथ बिहाव ॥  
 ताते तनिके मोचको पासिइन करिछिह ।  
 नीती ताहि बिसारिके मोहि चना चर दीहु ॥

कनिष्ठिका ( सं० स्त्री० ) कनिष्ठा एव, कनिष्ठ स्त्रायें  
 कन्-टाप् पत इत्वम् । दुर्बल भङ्ग लि, छिगुनी, सबसे  
 छोटी उंगली ।

कनी ( सं० स्त्री० ) कन्-अच् गौरादित्वात् डोप् ।  
 कन्या, लड़की ।

कनी ( हिं० स्त्री० ) १ सुद्रकण, छोटा टुकड़ा ।  
 २ हीरककण, हीरका छोटा टुकड़ा । ३ किनकी,  
 भावलका छोटा टुकड़ा । ४ तण्डुलका मध्यभाग,  
 भावलका दरमियायी हिस्सा । यह प्रायः कम गलता  
 है । ५ बिन्दु, बूँद ।

कनीचि ( सं० स्त्री० ) कन बाहुलकात् इचि दीर्घश्च  
 वृषोदरादित्वात् । १ गुच्छालता, घुँघची । सपुष्प-  
 क्षता, फूलदार वेल । २ शकट, गाड़ी ।

कनोन ( वै० त्रि० ) कन्-ईनम् । कमनीय, मनोहर,  
 खूबसरत ।

“हयोऽनीशो इयमः कनीनः ।” ( अथ )

“कनीनः कमनीयः ।” ( सायण )

कनोनक ( सं० पु० ) १ चक्षुकी कनीनिका, पाँखकी  
 पुतली । २ बालक, लड़का ।

कनीनका ( सं० स्त्री० ) १ कन्या, लड़की । २ कमनीय  
 शास्त्रभक्षिका, गुड़िया, कठपुतली ।

कनीनिका ( सं० स्त्री० ) कनीन संज्ञायां कन्-टा-  
 पत इत्वम् । १ अक्षितारक, पाँखकी पुतली ।  
 २ कनिष्ठाङ्गुलि, छिगुनी, सबसे छोटी उंगली ।  
 ३ अश्वकी नासाके समीपका भाग, घोड़ेकी नाकके  
 पासका मुकाम ।

कनीनी ( सं० स्त्री० ) कन्-ईन्-डीप् । कनीनिका देखी ।

कनीयःपथमूल ( सं० स्त्री० ) निक्पट्क, हड्डीहय,  
 पृथक्पृथक् भीर विदारिगन्धाका मूल, गोखरू, दोनों  
 कटेधा, घरवन भीर कड़वी तौबिकी लड़ ।

कनीयस ( सं० स्त्री० ) कनः सूर्यः तस्येदं कनीयं  
 तद्रूपत्वेन सोयते भवसोयते, कनीय-सो सञ्जयं क ।  
 १ ताम्र, तांबा । ताम्रकी अधिष्ठातृ-देवता सूर्य हैं ।  
 ( त्रि० ) २ अल्पतर, ज्यादा छोटा । ३ अपेक्षात-  
 त्अल्पवयस्क, ज्यादा कमसिन ।

कनीयान् ( सं० त्रि० ) अयमनयोरतिशयेन युवा  
 अत्यो वा, युवन्-अल्प वा ईयसुन् कनादेगः । १ भुज,  
 पीछे पैदा होनेवाला । २ अतियुवा, निहायत कम-  
 सिन । ३ अति अल्प, निहायत कम । ४ वयसमें  
 लघु, कममें कम । ५ लघु, छोटा । ( पु० ) ६ कनिष्ठ-  
 सशोदर, छोटा भाई । ७ सीमलता-भेद ।

कनु ( हिं० पु० ) १ कण, दाना, टुकड़ा । २ शक्ति,  
 बल ।

कनूज—कान्यकुल देश ।

कने ( हिं० क्ति० वि० ) १ निकट, करीब, पास ।  
 २ भीर, तर्प । यह शब्द क्रिया-विशेषण होती भी  
 सम्बन्ध कारकमें संज्ञाकी भाँति आता है । जैसे—  
 भिरे कने, किसके कने ।

कनेखी ( हिं० स्त्री० ) कटाच, कनखी, पाँखका  
 इशारा ।

कनेठा ( हिं० पु० ) १ कान, कातरकी एक लकड़ी ।  
 यह घिसते हुये कोरहकी चारो भीर चक्कर लगाता  
 है । ( वि० ) २ काण, काना । ३ पैवाताना, घूमी  
 पाँखवाला ।

कनेठी ( हिं० स्त्री० ) कानकी घुमाई, गोगमाली,  
 कानागोथी ।

कनेतो ( हिं० स्त्री० ) धन, रुपया । यह शब्द दशा-  
 लोको बोलोमें चलता है ।

कनेर ( मं० पु० ) कर्णिकार, एक पेड़ । यह लम्बा  
 हँच हिमाचलके नीचे यमुनसे बङ्गाल, चट्टाम भीर  
 ब्रह्मदेश पर्यन्त मिलाता है । कोहनमें भी कनेर  
 पाया जाता है । पत्र १२ अङ्गुल दीर्घ, १ अङ्गुल  
 पर्यन्त प्रशस्त, तोषणाग्र, कठोर, चिकण भीर घोर  
 हरिहर्ष होते हैं । फिर शाखावे दो पत्र आमने-सामने  
 फूटा करते हैं । शाखासे खेत दुग्धभी पड़िगंत होता  
 है । किसी कनेरमें खेत एवं किसीमें रक्तवर्ण पुष्प

बारही मोस फल्ला करते हैं। यह एक विषय है। अतएव पुष्पकी कनेरकी जड़ अधिक विपरीत होती है। जब पुष्प गिर जाते, तब पार्श्व पक्ष दोष एवं पक्ष्य फल आते हैं। फलोंके चतुर्गुण सुख बीज रहते हैं। पक्षके लिये भीष विष होनेसे ही संस्कृतमें कनेरके नाम—पक्षघ्न, हयमार, तुरङ्गारि प्रभृति पड़े हैं। कनेर कई प्रकारका होता है। किभीमें सफेद, किभीमें लाल, किभीमें गुलाबी और किभीमें काले फल लगते हैं। एक दूसरा लक्ष भी इससे मिलता-जुलता है। किन्तु उसके पत्र अधिक पक्ष्य, सुदूर और भासुर रहते हैं। फिर उसका पुष्प भी अधिक दृष्ट एवं दीर्घवर्ण होता है। पुष्प भङ्ग जानेसे गोलाकार फल आते, जिनमें गोलाकार और समस्त बीज पाये जाते हैं। इन बीजोंको हिन्दीमें गुद्ग कहते हैं। बालक गोलियोंमें 'गुद्ग-टी' खेला करते हैं। गुलाबी फलवाला कनेर लाल फलवालेसे मिलता है। किन्तु काले फलवाले कनेरका लोख निषण्णरक्षाकर भिन्न दूसरे ग्रन्थमें नहीं। कनेर कंटु, तिल, लघु, शोधन, तुवर, रज्ज, सुखद और शोध, रसत्रय, कुष्ठ एवं क्षेपनायक है। (राजनिष्य) पक्षके कोमल रोमको सिकिमके पहाड़ी लोग लघुमसे रक्त बहना रोकनेमें व्यवहार करते हैं। कोहनमें पत्र एवं वल्कल लुनसा और कमलके साय मिला चिकन पर लगाया जाता है। बङ्गाल और बम्बई प्रान्तके लोग पत्रोंको तम्बाकू बांधनेमें व्यवहार करते हैं। फिर बङ्गाली विपक्ष समस्त पुष्पाणि कीड़े-मकोड़े दूर रखनेका काम लेते हैं। पत्राणि जलको सान्द्र बनानेका भी गुण विद्यमान है। शहरपर सिवा कनेरके दूसरा कोई हृद्दाल फल नहीं बढ़ता। इसका सारकाष्ठ अतएव और हृद्दाल सुदृ एवं ईषत् कठिन होता है। बङ्गालमें कभी-कभी कनेरकी सक्कोंके तण्डुलें तैयार किये जाते हैं। लोग कहते—इसकी सक्कोंपर घोटाईका काम अच्छा चलता और बढ़िया साङ्ग-सामान बनता है।

कनेरा (हिं. प्लो.) १ हस्तिनी, हस्तिनी २ मेघा, रक्की।

कनेरिया (हिं. वि.) कर्पिकारके पुष्पकी भांति रक्तवर्ण, सास, कनेरके फलका रस रक्षनीया। कनेरिये सास रक्तमें कुछ खाड़ी रहती है।

कनेव (हिं. पु.) वक्रभाव, टेढ़ापन। प्रायः चारपाईके टेढ़ेपनको ही कनेव कहते हैं। यह पार्थक्य छेद टेढ़े चलने और ताना छोटा पड़नेसे चारपाईमें पा जाता है।

कनोज, कनोज देवी।

कनोजिया (हिं. वि.) १ कनोजका अधिवासी, जो कनोज प्रान्तमें रहता था। (पु.) २ कान्यकुब्ज ब्राह्मण। यह कान्यकुब्ज देशमें रहनेसे ही कनोजिया कहाये हैं। इनमें खान-पोनेका बड़ा विचार रहता है। अपने आजीव एवं सम्बन्धो व्यतीत कोई किसीके हाथको नगो पूरी-तरकारी या राटो-दास खा नहीं सकता। इसीसे लोग कहा करते हैं—घाठ कनोजिया नो चूल्हा। किन्तु कनोजिया ब्राह्मण अपने घरकी नगो पूरी-तरकारी एक जगहसे दूसरी जगह ले जानेमें फसको भांति यह समझते हैं। इसीसे गङ्गा नहानेकी राह लोग पूरी-तरकारी गठरोमें बांध लिये चले जाते और अभिमत स्थानपर पहुँच यह भावसे बैठ हाथ-पैर धो धोकर खाते हैं। कनोजिये बिलस-तम्बाकू भी नहीं पीते। कारण यह काम बहुत पसन्द समझा जाता है। विवाहमें कन्यापक्ष वरपक्षको दण्ड देता है। दूसरे ब्राह्मणोंकी तरह इनमें कन्यापक्षवाले वरपक्षसे स्वयं-पेसा कुछ नहीं लेते। फिर वय कुछवाला जब किसी नीचकुलवालेकी कन्या लेता, तब उसका साखवा घर लोक भो कर देता है। बहुतसे कनोजिये इसमें मर मिटते हैं। कन्याका पिता वरके घरकी न तो कोई चीज देता और न उसके पामका पागोतक पीता है।

कनोजिया ब्राह्मण पाँच भाषाओं विभक्त है—१ कनोजिया, २ सरवरिया, ३ जभोतिया, ४ समान्ध और ५ बङ्गाली कनोजिया।

१ कनोजिया—यह सुभद्रदेशमें उत्तर-पश्चिम—गाह-बङ्गापुर तथा पोकीभीत, उत्तर—जानपुर एवं फतेहपुर

पश्चिम—ग्रादे, दक्षिण—हमीरपुर और दक्षिण-  
पश्चिम—इटावे जिले तक रहते हैं। अपनी कुल-  
कारिकाके मतानुसार कनौजिये घटकुलमें विभक्त है।  
किन्तु इन्होंने खादे कुछ कुल मान रहे हैं।

गोत्र	उपाधि
गौतम	अवस्थी
शाण्डिल्य	मित्र, दीक्षित
भारद्वाज	शुक्ल, त्रिवेदी, पाण्डेय
उपमान्यु	पाठक, द्विवेदी
काश्यप	त्रिवेदी, त्रिपाठी
कास्तोय	वाल्मपेयी
गर्ग	चतुर्वेदी

फिर यह अवस्थादि उपाधिवारो कनौजिये कई प्रकारके होते हैं, जैसे प्रभाकरके अवस्थी, खेचरके अवस्थी; रंभनैयाके मित्र, धोविहा मित्र; बालाके शुक्ल, कृष्णके शुक्ल; सद्गुरीके त्रिवेदी, खोरके पाण्डेय, सखनजके वाजपेयी, काशीरामके वाजपेयी, गोवर्धनके त्रिपाठी, दमाके त्रिपाठी, गोपालके त्रिपाठी, इत्यादि इत्यादि।

इनकी मर्यादा २० अंगों या बिल्लोंमें विभक्त है। इसीसे उच्च एवं नीच कुलका विधान होता है। उच्च कुलका कान्यकुल नीच कुलवांसेकी अपनी कन्या दे नहीं सकता। फिर बराबरबालोंमें भोतप्रोत सम्बन्ध चलता है। अपनी-अपनी मर्यादाके अनुसार दहेज बंधा है। किन्तु जितना ही छोटा कान्यकुल रहता और जितने बड़ेके साथ सम्बन्ध लगानेकी चेष्टा करता, उतना ही उसे अधिक धन दहेजमें देना पड़ता है।

कान्यकुलोंमें यज्ञोपवीत संस्कार सम्यक् समय होनेपर व्यवहारो टिकावन करने आते हैं। संस्कृत बालकके मस्तक पर रोचमाघत लगा अपने-अपने व्यवहारके अनुसार सामने रखी-यालीमें बड़े रुपया डालते हैं। इसीका नाम टिकावन है। फिर संस्कृत बालकके मत्तवाधायक व्यवहारियोंकी मिठाग्री गांठते हैं। संस्कार होने समय भी शर्वत-पान घसा करता है। बाले-गाले धूम धड़ाहिले गवजते हैं। फिर

संस्कृत बालक सात दिन तक खड़ाकर घट, बामा घटन और पगड़ी बांध अपने व्यवहारियोंके घर भिजा मांगने जाता है। स्त्रियां उसकी भोसी मिठाईसे भर दिया करती हैं।

कान्यकुलोंमें सबसे बड़ा गुण प्रतिपद न लेना है। नोम प्राण जाते भी दान-दक्षिणा लेना बुरा समझते हैं। इस बातकी कई बार परीक्षा हो चुकी है। कनौजियोंने दानमें हजारों रुपये लेनेसे इनकार किया है। इसीसे भिन्न कान्यकुल देख नहीं पड़ते।

कनौजिये युद्ध करनेसे भी संझ नहीं मोड़ते। पुरानी बात हम नहीं कहते। आज भी सरकारी फौजमें कान्यकुल ब्राह्मणोंकी 'गायत्री' नामक पसलन विद्यमान है। यह खूब कसरत (व्यायाम) करते और पखाडोंमें लड़ते-मिड़ते हैं। बालक ८-१० वर्षका होते ही लंगोटा बांधने और डण्ड-वेदक सारने लगता है।

विद्यामें कान्यकुल अप्सर न होते भी अधिक पचादपद नहीं। कितने ही कान्यकुल संस्कृत, फरबी, फारसी, अंगरेजी आदि प्रधान-प्रधान भाषाओंका अच्छा ज्ञान रखते हैं।

१ सरवरिया—यह कनौजसे चल पयोध्यामें जाकर रहे थे। राजाकेल सरवरिया पयोध्याप्रान्तके बह-राइष भिसे, नेपालके प्रान्त, काशी एवं प्रयागप्रदेश और दक्षिण बुंदेलखण्डमें वास करते हैं। गोरखपुरमें यह अधिक भिन्ने और इनमें १८ घर चलते हैं।

अनेक लोग सरवरिया शब्दको 'सरयूपारीण' वा 'सरयूपारिया'का अपभ्रंश बताते हैं। प्रवाद है—राम रावणकी मार पयोध्या आयी और कान्यकुलसे कुछ ब्राह्मण बोलाये थे। वह ब्राह्मण आकर सरयुके परपार रहे। इसीसे उनका नाम सरयु-पारीण या सरवरिया पड़ गया। इनमें भी भिन्न गोत्र और भिन्न उपाधि विद्यमान है।

गोत्र	उपाधि
गर्ग	पाण्डेय (इतिथ)
गौतम	द्विवेदी (कसजिया)
शाण्डिल्य	पाण्डेय (त्रिफला)

ग्राण्डिष्य	त्रिपाठी (पिण्डी)
भारद्वाज	द्विवेदी (हृषद्गम)
वक्त्र	मित्र (पियासी)
	द्विवेदी (समदारी)
काश्यप	मित्र (राड़ी)
	पाण्डेय (मात्ता)
कौशिक	मित्र (वर्मपुरा)
चन्द्रायन	पाण्डेय (चपला)
सावर्ण्य	पाण्डेय (इतारी)
पराशर	पाण्डेय

एतद्विषय पुस्तक्य, धनु. पत्रि, महिरा प्रभृति  
दूसरे गोत्रोंय भी सरवरिया होते हैं।

उपरोक्त गोत्रोंके मध्य गर्ग, गोतम और ग्राण्डिष्य  
गोत्रीय ही कुचीन समझे जाते हैं।

१ कनौजिया—हुं देनखण्डमें रहते हैं। उत्तर एवं  
पश्चिम कनौजियों और पूर्व सरवरियोंसे जन्मोत्पत्ति  
मिले हैं। इस ग्राण्डिष्य रूपरुद्धके चौबे (चतुर्वेदी),  
दरयाके दुबे (द्विवेदी) और हमीरपुर तथा करीमके  
मित्र श्रेष्ठवंश माने जाते हैं।

गोत्र	उपाधि
उपमन्यु	पाठक (रीरा)
"	वाजपेयी (दिनवारी)
काश्यप	पतिरिया (शाहपुर)
"	पक्षोरा (बंगवा)
गोतम	चौबे (रूपनौयाल)
"	गङ्गुली (मराई)
ग्राण्डिष्य	मित्र (हमीरपुर)
"	अजिरिया (कोटके)
मौनस	मित्र (करिया)
भारद्वाज	तेवारी (एजक)
"	दुबे (उठासनौ)
वक्त्र	तेवारी (पठरेसो)
एकाविष्ट	नायक (घियरी)

२. उपाधि—ग्राण्डिष्य हुं देनखण्डके मध्यप्रदेशसे दुपाव-  
के उत्तर एवं मध्यभाग, पोसीभोतसे ग्वाभियर, राम-  
पुरके उत्तरपश्चिम, रोवा, चहामाबाद तथा नवाब-

गञ्ज, बरेलीसे रामगढ़ा, ससीमपुर एवं मौलाबाद,  
गढ़ाके निघतटसे कान्यकुब्ज, काशीनदोके कूतये  
पत्तोपुरपट्टी, भाई-गांव, खोग, इटावे तथा यौरामज  
और दक्षिण यमुनासे चम्पल नदीके सहजमस्थान तक  
रहते हैं।

गोत्र	उपाधि
वशिष्ठ	व्यास
"	गोक्षामी
"	मित्र
"	पराशर
"	कतारी
"	देवसिया
"	दुबे
"	खेमर्ष
"	उपाध्याय
भारद्वाज	वैद्य
"	चौबे
"	टीक्ष्ण
"	त्रिपाठी
"	चतुर्धर
काश्यप	मित्र
सावर्ण्य	तेवारी
उपमन्यु	दुबे
गोतम	उपाध्याय
ग्राण्डिष्य	पाँडे

एतद्विषय कौशिक, विस्वामित्र, जमदग्नि, चनष्वाय,  
कौशिक, सौमिया, मिश्राय प्रभृति गोत्र और पाठक,  
खामो, समाध्याय, मनसू, विरवारो, चनपुरी, मोटिया,  
बरसिया, बोभा, मोटिया, सेधिया, उदसिया, चर्को-  
दिया प्रभृति उपाधि भी होते हैं।

२. वंशानुक्रम—यह चार श्रेष्ठियोंमें विभक्त है—  
१ वरिष्ठ, २ राड़ीय, ३ पावत्य और ४ दासिपात्य  
वैदिक। किन्तु पावत्यों और दासिपात्यको अपने-  
सोम कनौजिया ग्राण्डिष्य नहीं मानते।

पहली दोनों श्रेष्ठियोंके ग्राण्डिष्य चर्को-  
और राड़ीयोंने आदिपूरके समस्त कनौजने गढ़ावा



उपनिषद् किया था। इनके आदिपुरुष चित्तिय, चोतराग, सुधानिधि, सोमरि और मेधातिथि रहे। उक्त पाँचों लोगोंने संश्वर ब्रह्मलोकके समय १५६ घरोंमें बँट गये। उनमें १५० घर बरेन्द्रभूम और ५६ घर रादमें रहते हैं।

वारन्द ब्राह्मणोंमें ८ घर अथवा कुलीन हैं। यथा—१ मैत्र, २ भीम कालि, ३ रुद्रवागवी, ४ सञ्जामिनौ वा सान्याल, ५ लाहिली, ६ भादुङ्ग, ७ साधु वागवी और ८ भादङ्ग। फिर वारन्दोंमें ८ घर अथवात्रिय और ६४ घर कथ्योत्रिय भी होते हैं।

रादोयोंमें ६ घर कुलीन रहते हैं—१ सुखुटी वा सुखोपाध्याय, २ गाङ्गुलि (गङ्गोली), ३ काञ्चलाल, ४ चोपाल, ५ चन्द्रीघाटी वा चन्दोपाध्याय और ६ चाटुति वा चटोपाध्याय। एतद्व्यतीत १० घर त्रिय भी हैं। ब्राह्मण, कुलीन, वारन्द, रादोय प्रतीत भन्द देखो।

कनौठा (हिं० पु०) १ कोण, कोना, किनारा। २ वानिष्ठ, छोटा हिस्सेदार।

कनौड़ा, जनपद देखो।

कनौती (हिं० स्त्री०) १ पशुओंके दोनों कान या उनका जनफिर। २ सुरकी, कानकी छोटी और मोटी वाली।

कन्त (सं० त्रि०) कं सुखं प्रस्थास्ति, कन्त।

कन्तभान्जमनुचिततदर्थः। भा ३। ५। १८। १ सुखी, प्रसन्न, खुश।

(हिं० पु०) २ पति, स्वामी, ईश्वर, मालिक।

कन्ति (सं० त्रि०) कं सुखमस्थास्ति, कन्ति।

सुखसाक्षी, खुश-खुरम।

कन्तु (सं० पु०) कामयते, कम्तु। अग्निमित्रनि-  
कामवाग्निम्ब। ऋच, १। ७। १। १ कामदेव। २ रुद्रय, दिक्ष।  
३ धान्यागार, खकी, खल्लयान। (त्रि०) कं सुखं  
प्रस्थास्ति। ४ सुखी, खुश।

कन्त (हिं०) वन्त देखो।

कन्तक (सं० पु०) एक प्राचीन ऋषि।

कन्तरी (सं० स्त्री०) कम्-परन्-युक् प्रयोदरादित्वात्  
काम्। हव्यविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—  
कन्तारी, कन्ता, दुधैर्वा, तीक्ष्णकण्टका, तीक्ष्णगन्ध

घोर दुग्ध वेशो है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु,  
तिक्त, उष्ण, अग्निदीपक एवं रुचिकारक और कफ,  
वायु, श्लेष्म, रक्त, मज्जि तथा क्षरणाशक होती है।

कन्ता (सं० स्त्री०) कम् बाहुलकात् यन्-टाप्।  
१ स्यूतकण्ट, कधरी, गुदड़ी। कितने ही फटे कपड़  
इकट्ठा कर यह भी जाता है। दग्ध मिश्रुक इसे  
भोड़ भीत काटते हैं। २ अस्त्रिकाका सुदपाघोर,  
महीकी छोटी दोवार। ३ उशीर राष्णका एक  
नगर। ४ चौर, भोड़नी। ५ तृणपूर्ण गात्रवस्त्र,  
रुईका बापड़ा। ६ हव्यविशेष, एक पेड़। ७ दैग-  
विशेष, एक सुख।

कन्ताधारी (सं० पु०) कन्ता-ध-णिनि। मिश्रुक,  
फकीर।

कन्तागी (सं० स्त्री०) कम्-परन्-युक्। हव्यविशेष,  
एक पेड़। चन्तरी देखो।

कन्तेश्वरतीर्थ (सं० स्त्री०) एक प्राचीन तीर्थ।

कन्द (सं० पु०-स्त्री०) कन्द्यति जिह्वाया वेक्ष्य  
जमयति, कदि-षिच्-ञच्। १ भोज, जिनोंकन्द।  
भोज देखो। २ रक्तमूलक, खाल मूली। ३ कासालुक,  
रतालू। ४ खेतशृङ्ख-वृद्धपुटक कन्दविशेष, एक  
सफेद, उमड़ा और कई तरहकी कन्द। लोग इसे  
सर्पच्छत्रक (सांपका छाता) कहते हैं। ५ इन्डि-  
कन्द, सफेद बड़ो मूली। ६ शालूक, शलगम।

७ शृङ्खन, गाजर। ८ सुगन्धिलव्यविशेष, एक खुशबू-  
दार घास। ९ गुड़। १० शर्करा, शकर। ११ पिण्डा-  
लुक, गोल चासू। १२ सुखनीति नामक कन्द।  
१३ शशमूल, अनाजकी जड़। १४ फलहीनोपधि-  
मूल, फल न देनेवाली बूटोकी जड़। १५ मेघ,  
बादल। १६ कन्दविशेष। इसमें तरह तरह पत्तारके  
चार पाद होते हैं। १७ योनिरोगविशेष, औरतोंके  
पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। (Prolap-  
sus uteri) दिवागिन्द्रा, अतिरिक्त क्रोध, व्यायाम,  
अतिभोजन एवं मद्य दन्तादिके चतस्रे वायु, पित्त  
और कफ भटक योनिदेशमें पुरारुधर्ष मन्दारके  
फल उखा जो रोग उठ जाता, वही कन्द कहाता है।  
वातिक, पित्तिक, श्लेष्मिक और साजिपातिक भेदसे



कन्दरा (सं० स्त्री०) कन्दर-टाप्। गुहा, खो।

कन्दराकर (सं० पु०) कन्दरस्य आकरः, ६-तत्।

पर्वत, पहाड़, खोका खुजाना।

कन्दरातर (सं० पु०) कन्दरका भीतरी भाग, खोका चन्दरनी हिस्सा।

कन्दराल (सं० पु०) कन्दराय अदराय अकति,

कन्दर-अल्-अल्। १ अलवृत्त, पाकरका पेड़।

२ गर्दभाण्डवृत्त, गजहन्त, पारस-पोषल। ३ अल-

रोटका पेड़।

कन्दरासक (सं० पु०) अलवृत्त, पाकरका पेड़।

कन्दरा (सं० स्त्री०) कन्दर-होप्। गुहा, खो।

कन्दरुल (सं० पु०) कट्टे शूरण, कट्टा जिमीकन्द।

कन्दरोग (सं० पु०) योनिरोगविशेष, ओरता के

पेयावकौ लगद होनेवाली एक बीमारी। कन्दरौ।

कन्दरोद्गवा (सं० स्त्री०) कन्दरे उद्भवति, कन्दर-

उत्-भू अच्-टाप्। १ सुदूर पाषाणमिद्वत्त, छोटा

पयरचटा। २ गुडूचीविशेष, किसी किस्मकी गुर्च।

(त्रि०) ३ कन्दरोत्पन्न, खांसे निकला हुआ।

कन्दरोहिणी (सं० स्त्री०) कन्दगुडूची, छलेकी

गुर्च।

कन्दर्प (सं० पु०) कं कुत्सितो दर्पो यस्मात्,

वदुमो०। १ कामदेश। प्रवादानुसार ब्रह्माने काम-

देवका यह नाम इसलिये रखा, कि उसने उत्पन्न

होते हो कहा था,—मैं जिसको मर्दसे मस्त करूं।

“कं” दुर्वाकोति मदाप्तात्तमाभी जगद ॥

केन कन्दर्पनामानं तं चकार अमुं पुं० ॥” (कथासरित्सागर)

२ सङ्गीतका भुवविशेष। यह ब्रह्मतालका एक

मैद है।

“ततोऽपि धनिं वषां हृत् पुं० कन्दर्पमञ्जरी”

होरे वा कवचे वा स्नातुं चउत्तमै विधीयते ॥” (सङ्गीतद०)

कन्दर्पकूप (सं० पु०) कन्दर्पस्य कूप इव, उपमि०।

योनि, सुकाम-मल्लघुप।

कन्दर्पकेतु (सं० पु०) एक राजा।

कन्दर्पकेलि (सं० पु०) कन्दर्पेण केलि, ३-तत्।

१ कामव्यगत होनेवाला एक केलि, प्रारम्भिका खेल।

मैथुनादिकी कन्दर्पकेलि कहते हैं। २ एक प्रहसन, दिक्कमोकी कोरे किताब।

कन्दर्पजीव (सं० पु०) कन्दर्पं जीवयति वधयति,

कन्दर्पेजीव-पिष्ट-पच। १ काममनुष्य, एक पेड़।

२ कटहल। ३ कामउद्दिक्कारक द्रव्य, ताकत बढ़ाने-

वाली चीज।

कन्दर्पज्वर (सं० पु०) कन्दर्पविकारजो ज्वरः, मध्व-

पदलो०। १ कामके विकारसे उत्पन्न ज्वर, जो

डुलार धातुके बिगाड़से आया हो। २ काम,

खाद्विज, चाह।

कन्दर्पदहन (सं० पु०) कन्दर्पस्य दहनं वर्णितं यत्र।

शिवपुराणका एक अंश। दशयज्ञमें सतीके देह

कोड़नेपर महादेवने योग अशक्तत्वन किया था। उबर

सती भी हिमान्त्य पर जलसे ले महादेशकी परिचयमें

लग गयीं। उसी समय ताड़कासुरके पत्न्याचारसे

देव अत्यन्त उत्पीड़ित हुये। शिवनेजोनात एक-

भाव कार्तिकेयके व्यतीत उसके दमनका दूसरा

उपाय न रहा। इसीसे देवोंने महादेवका यागभङ्ग

करने रति, वसन्त और कन्दर्पकी भेजा था।

देवाप्राप्ति अनुसार शरीरपर पुष्पपाण मारते ही

महादेवके ललाटमें निश्चल अग्निशिखाने कन्दर्पकी

जला जाला। (विष्णुपुराण)

कन्दर्पनारायण—चन्द्रहोपके एक प्रवल बङ्गाली राजा।

यह एक बारभुंया रहे। इनके पितामह परमानन्द

बसुराय दक्षिण एवं पूर्ववङ्गोय कायस्थ-समाजके

समाजपति थे। वह अपनेको कान्यकुल-समाजगत

कायस्थ-प्रवर दमरय वसुके व्यंगधर बताते रहे।

बाईन-अकबरीमें भी उनका नाम मिलता है।

१५६८ ई०की कन्दर्पनारायण आकाला चन्द्रहोपमें

राजत्व करते थे। यह एक महावीर रहे। विमेषतः

इन्हें तोप चलाना बहुत अच्छा लगता था। इनके

गुणका परिचय तत्कालीन पाषाण्य अमणहारी भी

दे गये हैं। (Hackley's Voyages, Vol. II. p. 237)

कन्दर्पनारायणको जेतलशाली तोप आज भी

चन्द्रहोपमें रखी है। उस पर कन्दर्पनारायण और

निर्माताका नाम खोदा है। तोपकी कन्दार पीने

पाठ फीट, घरके जड़की चौड़ाई सवा दो फीट, चौर मुँह सांटे उचोस इंच है।

(Jour. As. Soc. Bengal, Vol. XLIII. p. 207)

कन्दर्पमथन (सं० पु०) कन्दर्पं मथति, कन्दर्प-मथ-  
यु। मथादेव।

कन्दर्पमूल (सं० पु०) कन्दर्पस्य मूल इव, उपमि०।  
उपस्य, निम्न, पञ्च-तनासुल।

कन्दर्परस (सं० पु०) वेद्यकोत्त एक चोपच। पारद,  
गन्धक, प्रधात, मेरिज, वेत्तात, रोप्य, शङ्ख एवं सुता  
बराबर बराबर से चौर षट्की लटके क्वाथसे सात  
बार भावना दे ३ रत्नी प्रमाण बटिका बनाये।  
इस रसका चिकित्सा चौर कक्षावचीनोके क्वाथसे  
धवन करनपर चोपसर्गिक मेहरोग सत्वर माग  
होता है।

कन्दर्पशर्मा—भट्टिशास्त्रटीका 'वेजयन्ती' के रचयिता।

कन्दर्पशृङ्गल (सं० पु०) कन्दर्पाय शृङ्गलः। रतिवश-  
विशेष, एक डोला।

कन्दर्पसारतेल (सं० स्त्री०) कुठाधिकारका वेद्यकोत्त  
तेलविशेष, कोढ़का एक तेल। समर्थण, कान्नी,  
गुड़ूची, विषुमर्दक, शिरीष, महातिक्ता, जया, तुम्बो,  
मृगादनी तथा निशा १०।१० पल एक क्षोण जलसे  
पका १५ घेर रहनेसे उतार ले। फिर जलमें १  
प्रस्थ तेल, चार प्रस्थ गोमूत्र, ११ प्रस्थ चारण्वज,  
शङ्कराज, जया, धुसर, हरिद्रा, सिद्धि, खजूर,  
गोमय, चित्रक, पर्क एवं सुडोका रस चौर कक्षाव्यं  
२३ तोले नाल दन्दायक, वषा, माझो, तुम्बो, चित्रक,  
चटुपुत्रिका, कुचेता, पटोमपत्र, हरिद्रा, मुस्तक,  
पत्रिका, शम्याक, पर्कचार, कासुन्दमूलक, ईश्वरमूलक,  
आल, मञ्जिठा, महातिक्ता, विगासा, हयिकानो,  
भूतिका, चास्कोत, मूर्वा, समर्थण, शिरीष, कुटज, विषु-  
मर्द, महातिक्ता, गुड़ूची, चन्द्ररेखा, भीमराट्, चक्र-  
मर्दक, तुम्बूक, भङ्ग, यष्टाङ्ग, कन्दक, कटुतोडिणी,  
मटो, दार्वी, विह्वत्, पत्रिका, पगुह, पुष्कर, कर्पूर,  
कटफल, मानी, एला, वाचक तथा समोर हासनेसे  
यह चोपच प्रसृत है। इसको मचनेसे पटादागविष  
कुष्ठ, पामा, र्फोटका, छमिठक, दहू, रत्तमन्त्रक,

मलगण्डावृद्ध, गण्डमासा, मगन्दर चादि रोग पारोम्ब  
हो जाते हैं। (मेघनारायण)

कन्दर्पविधात—सुगन्ध व्याकरणके एन टीकाकार।

कन्दल (सं० पु०-स्त्री०) कदि-पलच्। १ कलधनि,  
धोमो घोर सुनायम पावाज्। २ उपराग, छाटा  
राग। ३ गण्डदेग, गान, कनपटो। ४ कगाक,  
खावड़ा। ५ मशहूर, मया किन्ना। ६ परवाद,  
हिकारत। ७ कदतीविमेष, किसी किस्मका केता।  
८ स्वयं, संगी। ९ वागगुह, जवानो भगड़ा।  
१० समूर, छुण्, डेर। ११ पृथो, जनीन्।  
१२ कण्ठसारम्भ, एक हिरन। १३ गिनीभृगुप्य,  
कतेका फूल। १४ कमलबीज। १५ कदनापुष्प, केतेका  
फूल, छाता। १६ चार्द्रक, चदरक। १७ मूरच,  
जिमीकन्द। १८ कामलयाता, लम छाह।  
१९ अपमकुन, यदफासी।

कन्दलता (सं० स्त्री०) कन्दप्रधाना लता, मध्यरदनी०।  
१ मानाकन्द, एक लता। २ सुद्रकारवेज्ञा, कर्दनी।  
कन्दलायन—एक प्राचीन संस्कृत द्यमन्त्र। 'सर्वदुर्गम-  
संग्रह'में इनका उल्लेख है।

कन्दलित (सं० त्रि०) कन्दनोऽस्य सञ्जातः, कन्दल-  
इतच्। १ कन्दलयुक्त, डवेदार। २ प्रसृष्टित,  
खिना हुआ। ३ निवृत्त, निकास हुआ।

कन्दलित् (सं० त्रि०) कन्दनोऽस्त्यस्य, कन्दल-इति।  
कन्दलयुक्त, डवेदार।

कन्दनो (सं० पु०-स्त्री०) कन्दन-टीप्। १ मृग-  
विशेष, किसी किस्मका हिरन। २ पचीविमेष, एक  
विह्वी। ३ मृगविशेष, एक घोड़ा।

"चाविर्भूतवचनमुद्रा कन्दलीरागुडचनम्" (निवृत्त)

४ कटनी, केला। ५ पताका, भण्डा। ६ पन्न-  
बीज, कमलगड़ा। ७ चोवं सुनिकी, एक कच्चा।  
इदानी दुर्वासाके आपसे भयोभूत हो कदनी उचकपसे  
जलपचय किया या।

कन्दनोहार—मङ्गलतके एक प्राचीन विधान। विद्यमा  
चौर पचभट्टने इनका उल्लेख किया है।

कन्दनोक्तुम (सं० स्त्री०) कन्दन्या इव कुसुमं यज्,  
वदन्ती०। गिरीश, कुलाह-बारी, मांवा डोरो।

कन्दलीभाष्यकार—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान् ।

हेमाद्रिने इनका सनेख किया है ।

कन्दवर्ग ( सं० पु० ) कन्दजातिमात्र, हरिक किस्मके  
हलिका जखीरा । विदारोकन्द, धतावरी, मृषान्,  
विस, कशेरु, मृदाट, पिण्डालु, मध्यालु, इत्यालु,  
गङ्गालु, रत्नालु, इन्दीवर और उत्पल आदि कन्दोंके  
समूहको 'कन्दवर्ग' कहते हैं । उक्त कन्द रक्तपित्तहर,  
शीत, मधुर, शुक्र, बहुशक्तकर और स्तन्यवर्धन होते  
हैं । ( चरक )

कन्दवर्धन ( सं० पु० ) कन्देन वर्धते, कन्द-वृध-ल्यु ।

१ शूरण, जिमीकन्द । चीन देशी । २ कटुशूरण, किन-  
किना जिमीकन्द ।

कन्दयज्ञी ( सं० स्त्री० ) कन्दाकाश वल्ली, मध्यपदलो० ।

१ यन्त्राककौटकी, कड़वी फकड़ी ।

कन्दविप ( सं० पु० ) विपात कन्दका वृक्ष, जहरीले

हलिका पोटा । कालकूट, वत्सनाभ, सर्वप, पालक,  
कर्दम, वेराटक, सुस्तक, मृही, पुण्डरीक, मूलक,  
हलाहल, मराविप और कर्कटशृङ्ग—तीरह कन्दविप  
होते हैं । इनमें ४ वत्सनाभ, २ सुस्तक, ६ सर्वप  
और १ मिष्ट है । सब कन्दजविप उष्णवीर्य, रुच,  
उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, आशुष्यवायी, विषाशी, विशद,  
रसु और भपायी होते हैं । कालकूटसे स्त्रगोत्रोन,  
पेपय और स्तम्भ पड़ता है । वत्सनाभ भीषास्तम्भ  
नगता और बिट, मूत्र तथा नेत्रमें पीतता लाता है ।

सर्वपका कन्द वातवेगुष्ण, अमाह और ग्रन्थि उत्पन्न  
करता है । पालकसे ग्रीवादीर्घल और वाक्मङ्ग  
होता है । कर्दमसे प्रसेक, विट्भेद और नेत्रपीतताका  
वेग बढ़ता है । वेराटक ब्रह्मदुःख और शिरोरोग जग्या

देता है । सुस्तकसे गात्रस्तम्भ और वेपथु होता है ।  
मृहीविप ब्रूणसाद, दाह और उदरको बढ़ाता है ।  
पुण्डरीकसे श्रुतुर्वीमें रक्तल आता और उदर बढ जाता  
है । मूलक वैषर्ष्य, कटि, हिका, शोफ और मूत्रता

उपजाता है । हलाहलसे मनुष्यको भांस रकती है ।  
मराविप हृदयमें ग्रन्थि उपजाता और शूल बढ़ाता है ।  
कर्कटशृङ्गसे मनुष्य चित्त गिर जाता है । ( चरक )

कन्दशाक ( सं० स्त्री० ) कन्दप्रधानं शाकम् । शाकमें

व्यवहृत होनेवाला कन्द जो डला तरकारीमें लगता  
हो । कन्दवर्ग देखो । समस्त कन्दशाकमें शूरण श्रेष्ठ  
होता है । ( भावप्रकाश )

कन्दशूरण ( सं० पु० ) कन्द एव शूरणः । शूरणकन्द,  
जिमीकन्द । चीन देशी ।

कन्दसंज्ञ ( सं० स्त्री० ) योन्यर्थ, शौर्गतीके पेगावली  
जगह होनेवाली एक बीमारी । कन्द देखो ।

कन्दसम्भव ( सं० त्रि० ) कन्दसे उत्पन्न होनेवाला,  
जो डलेसे पैदा हो ।

कन्दसार ( सं० स्त्री० ) कन्दागां सारो यन्न, यष्टुलो० ।

१ चन्दनवन । २ शीत प्रवृत्ति कन्दसमूह, जिमीकन्द  
वगैरह डले । ३ इन्द्रका उद्यान ।

कन्दा ( सं० स्त्री० ) कन्दगुद्गुचो, डलेकी गुच्छ ।

कन्दाव्य ( सं० पु० ) कन्देन पाव्यः । भूमिकुषाण्ड,  
सुयिङ्गुहड़ा ।

कन्दानृता ( सं० स्त्री० ) कन्दप्रधाना वृक्षता, मध्य-  
पदलो० । गुद्गुचीविशेष, डलेकी गुच्छ ।

कन्दारा—कर्पाटी ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी ।

कर्पाटीग्रन्थ देखो ।

कन्दाहं ( सं० पु० ) कन्दशूरण, जिमीकन्द ।

कन्दालु ( सं० पु० ) कन्दमय भालु, मध्यपदलो० ।

१ कासालु, एक रतालु । २ भूमिकुषाण्ड, सुयिङ्गुहड़ा ।  
३ त्रिपणिका, एक डला ।

कन्दरी ( सं० स्त्री० ) कन्द-इरच्-डीप् । लज्जालुवृक्ष,  
जाजवल्ली ।

कन्दौ ( सं० पु० ) कन्दोऽस्यास्ति, कन्द-अच् । कटु-  
शूरण, किनकिना जिमीकन्द ।

कन्दुः ( सं० पु०-स्त्री० ) कन्द-उ सलोपय । कन्दः

अथोपयगोऽयं शाकः । १ खेदनपत्र, तथा । इसका पपर  
संस्कृत नाम कन्दौ है । २ खौहनिर्मित पाकपात्र,  
लोहेकी कड़ही । ३ भर्जनपात्र, भूषणनेका वरतन ।  
४ सुराकरणपात्र, शराय तैयार करनेका वरतन ।

कन्दुक ( सं० पु० ) कं सुकं ददाति, दा-डु संज्ञायां  
कन् । १ गेष्टक, गेट । ( स्त्री० ) २ गलतकिया ।

३ चट्टार, कोपल । ४ पूगफल, सुपारी । ५ कन्दो-  
विशेष । यह त्रयोदश अक्षरविशिष्ट होता है ।

कन्दुकप्रस्थ ( सं० पु० ) नगरविशेष, किसी शहरका नाम ।

कन्दुकलीला ( सं० स्त्री० ) कन्दुककी क्रीडा, गेंदका खेल ।

कन्दुकेय ( सं० पु० ) एक प्राचीन हिन्दू राजा ।

कन्दुकेश्वर ( सं० पु० ) काशोधामका एक शिवलिङ्ग ।

किसी समय पार्थवी कौतुकवश कन्दुक खेलती थीं ।

क्रीडाके प्रमत्त सेनका केशपात्र शिथिल और नयनद्वय आकुल हो गया । ऐसे भावादि देख उनको हरण करनेके लिये दो दैत्य शास्त्रीमाया चयनस्वनपूर्वक आन्तरिकसे उतरे थे । दैत्यतावेने दोनों दैत्योंके विनाश साधनको भगवतीसे इक्षित किया । भगवतीने इक्षित पाति हो इक्षितक कन्दुक फटकार उन्हें मार डाला था । फिर वह कन्दुक भूमिपर गिर लिङ्ग बन गया । ( काशीचन्द्र )

कन्दुपद्म ( सं० स्त्री० ) विना जनके उपमेक केवल पात्रमें चग्निसे सृष्ट तण्डुलादि, बड़री, भूंगड़ा, सुना हुआ दाल ।

“कन्दुपद्मानि तेषामि पादय” इति शतपथः ।

दिग्भेदानि भीमनि यद्विषयकानि ॥” ( बृ०पु०रा० )

सुने चुपे द्रव्य, तेल, दुग्ध, दधि और शक्तिको शूद्रके घरमें तैयार होते भी दिज खा सकते हैं ।

कन्दुगाला ( सं० स्त्री० ) कन्दुपाकार्यं शाखा, मध्य-पदनी० । द्रव्यादि भूतनिका सृष्ट, भाङ्गी जगह ।

“श्रीकृष्ण कन्दुगालायां, तैलवत्के पुरुषयोः ।

अभीमांस्तानि शेषानि कौटु पात्राणि तु च ॥” ( कृ०नि० )

स्त्री, आतुर, दासक, गोकुल, कन्दुगाला, तैलवत्क और इक्षुवत्कके मध्य शेषको कोई भीमांसा नहीं ।

कन्दुक ( सं० पु० ) कन्दुक, गेंद ।

कन्दूरौदय—एक प्रसिद्ध चीन राजा । इन्हींके रथमें रुद्रदेव प्रस्थतिने जन्म लिया था ।

कन्देष्टु ( सं० पु० ) कायभेद, एक लम्बी घास ।

कन्दोट ( सं० पु०-स्त्री० ) कदि-भोटन् । १ यक्षोत्पन्न,

मर्फेद कमल । २ मोक्षोत्पन्न, पासमानी कमल ।

३ कुमुद, कोकावेली, बघोला ।

कन्दोत ( सं० पु० ) कन्दे सूखी जलः, कन्द-वेष्ट-ज ।

१ कुमुद, कोकावेली, बघोला । २ म्फेद कमल ।

कन्दोत्थ ( सं० स्त्री० ) मोक्षोत्पन्न, पासमानी कमल ।

कन्दोद्भवा ( सं० स्त्री० ) कन्दोद्भवी इत्याः, वधुश्री० ।

१ कन्दमुडूची, एक गुर्च । २ सुद्रपायाभेदी, छोटा पथरचटा ।

कन्दोपध ( सं० स्त्री० ) पार्द्रक, चटरक ।

कन्ध ( सं० पु० ) कं जन् दधाति धारयति, कं-धा-क ।

१ मेघ । २ सुस्तकभेद, किसी क्षिप्रका मंघा ।

कन्धजाति—उड़ोमेकी एक समर्थ जाति । चंगरेज प्रत्यकारोंने इसको चाख्या नानाविध लगायी है । किसीने खन्द, किसीने खाद, किसीने गण्ड, किसीने खोंड और किसीने कन्द नाम लिखा है । किन्तु यह नियय करना कुछ विचार-सापेक्ष देखाता, कन्धोंका वास्तविक संबंधी-परिचारक नाम क्या आता है ।

उड़िया इन लोगोंका नाम ‘कन्ध’ रखते हैं । ‘कन्ध’ शब्दका अर्थ पडाहो है । अनेक लोग समझते—तामिल भाषामें ‘कन्दम्’ पर्यंतको कहते हैं । हमी ‘कन्दम्’ शब्दसे ‘कन्ध’ बना है । फिर दूसरोंके कथ-नानुसार तामिल भाषाके ‘कन्द’ शब्दका अर्थ तौर है । सुतरां हम जातिको श्रमयादिमें धनुर्बाण व्यवहार करते देख ‘कन्द’से कन्ध कहने लगे हैं । कोई कहता—दशपद्मा, थोट और गुमहर प्रदेशके मध्य एक स्थानका नाम किन्ने-रामपुरके कन्धोंमें ‘कन्द’ चलता और छत्त कन्द स्थानके नामसे हो इनका नाम ‘कन्ध’ पड़ता है ।

किसी-रामपुरका प्राचीन नाम भी ‘कन्ददण्डपत’ है । कोई कुछ भी कहे, किन्तु यह काम अपना परिचय ‘कन्ध’ नामसे नहीं देते । कन्ध अपनेको ‘क्षी’ गति बताते हैं । स्वजातीयोंमें जातिके अनुसार किसीका परिचय देनेको ‘किहवा’ वा ‘कुहडा’ नाम चलता है । हायटन और वुष्टरका पद्यानुसरण करनेमें इन्हें ‘कन्ध’ कहना अनुचित है । फिर प्राचीन शास्त्रादिका प्रमाण देखनेसे नियय किया जाता—वास्तविक इनका नाम कन्ध ही आता है । पुराणादिमें केमकन्धर०

तामसे एक प्रसभ्य जातिका परिचय मिलता है।  
बोध होता—प्राचीन उड़ियोंने केशकन्यार शब्दसे  
‘कन्य’ भाव रख छोड़ा है। पुराणादिका प्रमाण  
नीचे उद्धृत है—“मन्त्रोपा प्राचिनया मन्त्रकन्यैकमन्त्राः।”

उड़ीसेके पार्वत्यप्रदेशमें इनका प्रधान वासस्थान  
है। एतद्दिन उड़ीसेके दक्षिणांग महानदीके उत्तर  
किनारे ३४०० वर्ग मोल भूमिपर यह देख पड़ते  
और पूर्व विलका रुद्र, पश्चिम बरार प्रदेश, सम्बल-  
पुरके खंदोरी वा कलहण्डो प्रदेश और बस्ते जिलेमें  
भी यह रहते हैं।

अपने देशके मध्य केवल कन्य ही-वास नहीं  
करते। वहाँ शबर, कोल, डोम, पान और  
अन्यान्य प्रसभ्य भी रहते हैं। किन्तु वह कन्योंको  
पाखमें अत्यन्त घृण्य लगते और नीच श्रेणीके लोग  
समझ पड़ते हैं। कन्य उनसे कोई विशेष सम्बन्ध  
नहीं रखते। फिर वह प्रति सामान्य हस्त-ग्रिह्य पर  
जीवन चलाते और अपनी बनाये दूधसामग्रीके  
विनिमयमें कन्योंसे गद्यादि पाते हैं।

आजकल कन्य हिन्दुओंकी निम्नश्रेणीमें गिने  
जाते हैं। इस सम्बन्धमें अनुसन्धान करना उचित  
है—पहले कन्य कहाँ थे। इनमें कोई कहता—  
पहले मध्यभारतमें हमारा दल रहता था, जो ताड़ित  
हीनेपर पूर्वकी ओर उड़ीसेतक भग आया। फिर  
दूसरोंके कथनानुसार पहले कन्य उड़ीसेके दक्षि-  
णांगमें हो रहे, विताड़ित हीनेपर पश्चिमकी बरार  
प्रदेश पर्यन्त हट गये। इन दोनों मन्त्राश्रयि समझ  
पड़ा—जब उड़ीसे और मध्यभारतमें पाखजातिका  
प्रभुत्व बढ़ा, तब कन्योंका दल विताड़ित हो मध्यप्रदेशमें  
काकर बसा। जो हो, किन्तु प्रायः चार पुरुष गुजरी  
बौद प्रदेशकी हो इन्होंने अपना प्रधान वासस्थान मान  
रखा है। बौद प्रदेश आजकल एक हिन्दू राजाके  
अधीन है। यह राज्य महानदीके दोनों किनारे प्रायः  
३५ मील विस्तृत है। स्थानीय राजा महानदीका  
कर देते हैं। इसी प्रदेशके निकटवर्ती पर्वतोंमें कन्य  
रहते हैं। इनके घाम सुद्र सुद्रो पर्वत-शिखर वा  
चनवनमें परस्पर घुसक होते हैं। घुसक घुसक

रहनेसे प्रत्येक ग्रामका शासनकार्य सुगृह्लासे चलता  
है। अन्यान्य प्रसभ्योंकी भांति यह भी दा-चार  
घामोंकी मिला एक विभाग बनाते और उसका एक  
नायक ठहराते हैं। कन्य कहते—इसी नियमसे हम  
एकसाथ समस्त बौद राज्य शासन करते थे।

काई ८५ वर्ष पहले अंगरेज कन्यजातिके सम्बन्धमें  
कुछ अधिक जानते न थे। वह केवल इतना जो  
समझते—समुद्रोपकूलके बौद और गुमसर नामक  
दोनों हिन्दू राज्यांके पश्चिम यह प्रसभ्य लोग  
रहते हैं। गोदावरी एवं महानदीके मध्यवर्ती  
प्रायः ३०० मील दीर्घ और ५० से १०० मील प्रस्थ  
भूभागमें शबर तथा कन्य वास करते हैं। यह  
देश—वन एवं पर्वतमय होनेसे दुर्गम पड़ता है।  
विदेशीय इस देशमें थोड़े मजोने ही ठहर सकते  
हैं। १८३५ ई०को गुमसरके राजाने बाकी  
राजस्य देनेके लिये विद्रोही हो कन्योंका ही  
आश्रय लिया था। इसी घटनामें अंगरेज कन्योंसे  
परिचित हुये और लोगोंको रख इनके आचार,  
व्यवहार, नियम, न्याय, धर्म, कर्म एवं देशादिका  
विषय समझे।

अपने आवासकी मध्यस्थ भूमिमें जो कन्य रहते,  
वह अधिक दिन एक स्थलपर नहीं ठहरते; इधर  
उधर देखके माना स्थानोंमें घूमा करते हैं। यह  
न तो गवरनमेण्टको कुछ कार देते और न उसकी  
किसी कर्मचारीसे काई संस्पर्श रखते हैं। किन्तु  
अनेक स्थलपर इनमें अर्धकर्ता-प्रधान और अर्ध-  
सामन्त-प्रधान मिश्रित शासनप्रणाली देख पड़ती  
है। इस श्रेणीके कन्य अपने जातीय भावके प्रति  
एकान्त अनुरागो होते हैं।

हिन्दू राजाश्रयि दूरीभूत किये जानेपर कन्य तान  
श्रेणियोंमें बंट गये। इनमें जो सर्वापेक्षा दुर्बल  
पड़ते, वह हिन्दू राज्यके अधीन प्रति नीच श्रेणीके  
लोगोंकी भांति रहते, अपना भूमि नहीं रखते  
और दूसरोंके निकट दैनिक रीतिसे परिचयम उठा,  
या वनमें काष्ठ जुटा जीवन धारण करते हैं। दूसरी  
श्रेणीके कन्य युद्धके समय हिन्दुओंके निकट सेन्य

पट्ट'वा मंडनेकी पतिप्रापण जागोर पाते हैं। यही उड़ीसेमें सुसलमानोंके पाकमन्त्र-समय अपने-अपने राजाकी ओरसे सड़े थे। फिर तीसरी श्रेणीके कम्ब पराजित होते भी स्वाधीन भावसे मित्र-वामन्तकी भांति रहा करते हैं। यह जो युद्धके समय अपने-अपने मित्र राज्यको साहाय्य देते, किन्तु उसके लिये कोई वेतन या जागोर नहीं लेते। इस श्रेणीके कम्ब 'भेटिया' कहाने हैं। यह पृथ्वी-पर्वतकी निम्न-भूमिमें रहते हैं। इस श्रेणीके कम्ब 'बनिया' नामसे प्रख्यात हैं। यह पर्वतके ऊपर ही रहते हैं। फिर इस श्रेणीके कम्बोंका कोई स्वतन्त्र नाम नहीं। एतद्विषय वाचस्यानके भेदसे भी इनका भिन्न-भिन्न नाम रखा जाता है। पर्वतपर रहनेवाले 'मानिया' कोइड़ा, समतल भूमिपर रहनेवाले 'सानी कोइड़ा' और मझानदीके दक्षिण रहनेवाले केवल 'कोइड़ा' कहाने हैं। तेजहरी इन्हे 'कदुलू' या 'कदुवोगुलू' कहते हैं। इस शब्दका अर्थ 'पहाड़ी लोग' है।

कम्बोंकी शासन-प्रणाली—कम्ब 'आजकल' 'अंगरेजों'के अधीन तो रहते, किन्तु वस्तुतः उनके शासनपर नहीं चबते। यद्यपि इन्होंने शासनकी प्रणाली अपने ही अधीन रखी है। इन लोगोंमें शासनके कार्यको सुविधाको एक सुन्दर गृहना है। कम्बोंमें यशगत जातिविभाग लगा रहता है। फिर प्रत्येक वंशमें शाखाभेद पड़ता और प्रत्येक शाखामें एक एक गृहस्थ-को ले एक एक भाग चमता है। बहुतसे गृहस्थोंको मिलकर एक घाम बनता है। प्रत्येक घाममें प्रायः एक ही वंशके लोग रहते हैं। इस वंशकी प्रत्येक शाखामें एक अध्यक्ष निर्धारित होता है। फिर अध्यक्षोंमें जो व्यक्ति व्योमवंश-सम्भूत रहता, वही घामका 'मण्डल' ठहरता है। इन्हीं मण्डलको भेद राज्यमें 'खोड' चित्ताकेनेडी प्रदेशमें 'मांजी' और गुमसर राज्यमें 'मुनिको' कहते हैं। इसी प्रकार बहुतसे घामोंका एक नायक होता है। फिर बहुतसे नायकोंपर एक सरदार रहता और कितने ही सरदारोंपर एक राजा-जैसा व्यक्ति अधिकार रहता है। राजाकी 'विसाई' कहते हैं।

कम्बोंका समाज-व्यवस्था—प्रत्येक गृहस्थके मध्य पाचोन या ब्योठ ही कर्ता होता है। पुत्रपोषादि मकन ही उसके अनुगत रहते हैं। सभी एकाचरती होते हैं। पितामही या माता सबके लिये प्रवृत्त करती है। पुत्रपोषादि पिता या पितामहकी ओरद्वारमें ओ कमाने, उसपर पिता या पितामह ही अधिकार पाते हैं। एक वंशोद्भूत बहुतसे ऐसे ही गृहस्थोंसे शाखा बनती है। गृहस्थोंके कर्ताओंसे कोई व्यक्ति प्रत्येक शाखाका अध्यक्ष निर्धारित होता है। इसी प्रकार बहुतसे अध्यक्षोंमें एक मण्डल, बहुतसे मण्डलोंमें एक नायक, बहुतसे नायकोंमें एक सरदार और बहुतसे सरदारोंमें एक विसाई ठहराया जाता है। यह सकल पद वंशावृत्तिक धारावाहिकत्वमें निर्दिष्ट रहते भी यदि कोई अपने पदके उपयुक्त गुण नहीं रखता, तो उसे तत्त्वज्ञानात् निकाल देना पड़ता है। वंशके मध्य व्योम पुत्र ही सामान्यतः इन सकल पदोंका अधिकारी होता है। किन्तु उपयुक्त गुण न रहनेमें उसका आनुव्युक्त उक्त पद पाता है। निर्वाचनके समय सबका मतानमत लेना नहीं पड़ता। कार्यको गतिमें सबका परस्पर सहकार न देख और उपयुक्त व्यक्तिके अनुगत रह चमका पड़ता है।

इनका समाजव्यवस्था पति सुन्दर और हृदय है। अधिकार शब्द जातियोंमें ऐसी हृदय देव नहीं पड़तो। इनमें गुणका सेवा आदर और महान है, सेवा सभ्यताभिमानो अनेकानेक जातियोंमें नहीं। कम्बजातिके पूर्वोक्त प्रधान व्यक्ति ही अपने अपने अधोमुख लोगोंके यशकर्ता, सज्जित और पुरोहितका कार्य करते हैं। वंश और निर्वाचनकी प्रणाली उद्देश्य एकत्र मिल कर सकल प्रधान पद-विधिके लोगोंको धार्मिक बना डालता है। कम्ब प्रधान पदोंपर बैठ जो कर्तव्य करे, उसके लिये कोई वेतन या विशेष सुविधा नहीं रखते। विषारक, पुरोहित और शासकको केवल कुछ मन्थन मिल जाता है। प्रत्येक गृहस्थके संसारमें कर्ता ही प्रधान रहता है। शाकी लोग समपदशक्ति निर्दिष्ट ज्ञान



हैं। नायकों और सरदारोंका भी यही हाल है। इनके सम्मान-सूचक कोई भाङ्गम्बर नहीं रहता। अन्यान्य लोगोंकी भांति यह भी सामान्यभावसे कालयापन करते हैं। इनके स्वतन्त्र वासस्थान वा दुर्ग, प्रबन्धकारी सेन्य और विषयादि नहीं होता। पैदल भूमिकी क्षमिमें अपने और पुत्रपौत्रादिके परिचर्यसे उत्पन्न भय ही कर्मोंका प्रधान भाग है। इन्हें कोई किसी प्रकारका साहाय्य वा कर नहीं देता। किसी उत्सव वा क्रियाकाण्डके समय यह पदोचित सम्मानादि पाते और वहीसे परितुष्ट हो जाते हैं। प्रति घाममें 'डिगलू' निर्वाचित होते हैं। सरदारोंके समक्ष वही स्व-स्व घाम वा जातिका प्रभाव और अभियोग उपास्थित करते हैं। फिर वही घामोय लोगोंके मुखपात्र भी ठहरते हैं।

१) सरदार या विसाई प्रकाश आवश्यक् न चाते अपने अपनी जातिके किसी विषयमें हस्तक्षेप करनेसे शक्य रहते हैं। किसी कार्यमें वह मनमाने चला नहीं सकते। उन्हें अधीनस्थ नायकों और मण्डलोसे परामर्श ले कर्तव्यावधारण करना होता है। सब सरदार और विसाई अपने अधीनस्थ और अपरापर जातिका सम्बन्ध देखते रहते हैं। युद्धादिके विषयमें कर्तव्य ठहराना, किसी हिन्दू राजाको साहाय्य देनेके सम्बन्धमें मीमांसा लगाना, अपने जातिमें सकल विषयोंके नियम, न्याय, आचार एवं व्यवहारकी शुद्धता-रक्षाके प्रति दृष्टि दोहाना, अपराधीको दुष्कर्म करनेपर विचारपूर्वक दण्ड दिखाना और परस्परका विवाद मिटाना भी उन्हींका काम है।

शक्त सकल विचार एवं मीमांसाकार्यके निर्वाहको वह अपने अधीनस्थ अध्यक्ष एवं नायक एकत्र कर परामर्श लेते हैं। विषयका शुरुत्व देख परामर्श-दाताओंकी संख्या घटायी-बढ़ायी जाती है। जातिके सरदार ही अपने संसारका सामान्य कर्तृत्व, अपने घामके मण्डलका कार्य और अपनी गांथाकी अध्यक्षता किया करते हैं।

क्या घामके मण्डल, क्या गांथाके अध्यक्ष और

क्या जातिके सरदार—सभी अपने-अपने अधीनस्थ लोगोंको गृहधर्म और वाह्यधर्म बनानेके लिये विशेष चेष्टित रहते हैं। कर्मोंको विख्यास रहता—जिन जातियोंके साथ प्रकाश-रूपसे कोई सम्बन्ध-नियम नहीं ठहरता, उनमें स्वच्छन्द युद्ध चल सकता है। यहांतक, कि उसी विसाई या खोंडकी अधीनस्थ भिन्न जातियोंमें सम्बन्ध न रहते एक-दूसरेके सरदार परस्पर लड़ जाते हैं। सुतरां इनके मध्य परस्पर प्रकाश सम्बन्ध न रहनेसे सकल ही युद्ध-विषयमें डूब विमृष्टता झल सकता है। किन्तु सरदारों या अध्यक्षोंका प्रभुत्व अक्षुण्ण रहनेको सर्वदा ऐसा होने नहीं पाता।

२) शान्तिरक्षाके लिये कर्मोंमें जो नियम-विधि चलता, वह अन्यान्य प्रसभ्य जातियोंमें नहीं मिलता। किमीका हत्या होनेपर अन्य जातिमें जैसे हतव्यक्तिके आजीव्य प्राणके बदले प्राण लेनेपर बाध्य पड़ते, वैसे यह कभी नहीं, कहते। हत्याके बदले कन्ध प्रथं लेकर भी विवाद मिटा देते हैं। साक्षात्क प्रधातादि लगनेपर अपराधीके विषयसे पाछतकी क्षतिपूर्णा-स्वरूप प्रथं दिलाया जाता और जबतक वह धारोग्या-वस्थामें नहीं आता, तब तक अपराधीके व्ययसे ही अपनी संसारयात्रा चलाता है।

इनमें व्यभिचारके दोषपर किसीप्रकार क्षति-पूर्णाकी प्रथा नहीं। स्त्री व्यभिचारिणी रहने और पकड़ी जा सकनेसे स्वामी उपपतिको नार डालनेपर बाध्य है। व्यभिचारिणी स्त्री स्वामीके गृहमें स्थान नहीं पाती और बात खुल जानेसे उसी क्षण अपने पिताके घर भेज दी जाती है। विषयादिगत अपराधमें अपराधीके निकटसे दूत वा गृह वस्तु उधार कर देते ही न तो कोई भगड़ा रहता और पपक्षत वस्तु अपहारकसे ले अधिकारीका देनेपर न कोई दावा चल सकता। इससे घोरको प्रयय ता मिलता, किन्तु प्रथम अपराधमें ही ऐसा नियम चलता है। कारण द्वितीय बार घोर करके अपराधी व्यक्ति-विशेषके प्रति अत्याचारी वा सामान्य घोर ही समझा नहीं जाता, वरं समस्त समाजके प्रति अत्याचार करनेका अभियोग आता और स्वजातिसे निर्वासन-

देख पाता है। साधारणतः कन्यजातिके मध्य विषयगत अपराध दो प्रकार होता है—(१) छवि-जात सामग्री अपहरण और (२) अन्यायपूर्ण कर्मोंके क्षेत्रका अधिकार। गत्यापहरण करनेसे अपराधीको शय्य वापस देना पड़ता और जिस स्थानमें वापस देनेका उपाय नहीं रहता, उस स्थानमें अपराधी अपना गत्यापूर्ण क्षेत्र क्षतिग्रस्तको समर्पण करता है। जितने दिन उसका क्षतिपूरण हो नहीं जाता, उतने दिन वह उस क्षेत्रका उत्पन्न भन्नादि ले जाता है। क्षेत्र ले क्षतिग्रस्त कन्य अपराधीको सपरिवार स्त्रियोंके मुखमें नहीं डालते, बरं प्रतिवर्ष उत्पन्न भन्नादि इसप्रकार बांटते, जिससे उसको सपरिवार चलकट भेलना न पड़े। किसी-किसी स्थानमें अन्यायसे क्षेत्र अधिकार कर लेनेपर अधिकारीको कोई शक्ति नहीं मिलती। केवल उसके हाथमें क्षेत्र निकाल यथार्थ अधिकारीको दिला दिया जाता है। इन लोगोंमें अधिकारका प्राचीनत्व देख भूमिके स्वत्वका निर्णय होता है। पामदनी दे दूरकी भूमि भोगनेकी प्रथा कन्योंमें नहीं। प्रत्येक गृहस्थ अपनी भूमि रखता, जिसके लिये कोई स्वतन्त्र जमीन्दार नहीं रहता। जो व्यक्ति जिस भूमिमें अधिक दिन छवि करता, उसका उसमें स्वत्व ठहरता है।

इनकी क्षमिपवासी अधिकतर अग्रज्योनि पक्षधर्मोंसे मिलती है। कन्य जब किसी स्थानकी भूमिमें अधिक वर्षों गति नहीं पाते, तब उसे छोड़ जाते हैं। चौदह वत्सरमें वह अपने ग्राम भी बदल डालते हैं। इसप्रकार कन्य प्रदेशमें पतित भूमिका परिमाण बहुत बढ़ जाता है। किसी स्थानकी लोकसंख्या बढ़ने पर वह पार्श्ववर्ती पतित भूमि पापसमें खण्ड-खण्ड बांट भोग करते हैं। एकबार छोड़ देनेसे भूमि वा ग्राममें पूर्वाधिकारीका स्वत्व नहीं रहता। फिर जो लोग उसपर न्यून अधिकार करते, वही अपने अधिकारके प्राचीनत्वसे स्वत्व भी रखते हैं। एक जातिमें अधिकृत प्रदेशकी पतित भूमिपर अपर जाति अधिकार करने नहीं पाती। जिस जातिके अधिकृत प्रदेशमें भूमि रहती, उसीके मध्य प्रयोजनानु-

सार पतित भूमि बंटती है। भूमिका स्वत्व जैसे सफल हो उपजता, वैसे ही विक्रयका नियम भी प्रति सरल पड़ता है। भूमिविक्रय करनेकी इच्छा रखनेवाला व्यक्ति अपना भूमिप्राय पण्डित या सरदारसे कहता है। इसप्रकार अपना भूमिप्राय उसको अनुमतिके पक्षपात कहा नहीं जाता। किन्तु सर्व साधारणमें अधिकारियोंको प्रचार करना पापमूलक है—यही अपनी भूमि बेचता हूँ। फिर बेचनेवाला खरीदारको विक्रयवाली भूमिपर लेकर पड़ जाता है। वह ग्रामके शह गृहस्थ-लोक कोला अपने क्षेत्रको एक मुहो मुहो खरीदारके हाथपर देता और उसी समय मूल्य लेता है। मूल्य ले और ग्राम्य देवताको साक्षी दे विक्रयकर्ता सचोखरसे कहता है—इस भूमिपर चिरकालके लिये मेरा कोई स्वत्व नहीं।

भूमिके विषयपर जो विवाद-विर्षवाद आते, उन्हें ग्रामके मण्डल निबटाते हैं। यह लोग समय-पक्षके प्रत्योत्तर पर कान दे और साक्षीका साध्य से विचार करते हैं। सहजमें सीमांका न होनेसे अनेक परीक्षाएँ चलती हैं। साधारणतः कन्य व्याघ्रधर्म कृकर ग्रथ्य उठाते हैं। इसप्रकार ग्रथ्य उठानेसे व्याघ्रमुखमें मिथ्यावादीका स्त्रुत्व पच्य होता है। यदि कभी कोई कन्य व्याघ्रके मुखमें पड़ता, तो वह मिथ्यावादी एवं और ठहरता है। लोग ऐसे परिणामपर मन्तोष देखाते और उसके परिवारवर्गकी जातिसे निन्दा भगाते हैं। किन्तु ग्राम्य प्रेरित (होमने) दयापूर्वक यथासर्वशय से मिथ्यावादीको फिर जातिमें मिला सकते हैं। कभी-कभी गिरगिटका चर्म कृकर भी ग्रथ्य किया जाता है। ऐसे ग्रथ्यमें मिथ्या कहनेसे, मिथ्यावादीके शरीरमें कुष्ठ-धेनु चर्मरोग उठ खड़ा होता है। एतद्विषय कन्योंके विद्यासाधुसार, पृथ्वी देवीके उद्देश्य यदि विचारक-मेषवर्षि चढ़ा और उनके रक्तमें ग्राम्य मित्रा विचारकाल खाता, तो उसी स्थानपर यथायं अपराधी चकर खा कर मर जाता है। फिर विवादी-भूमिको महोमे विचारकके अपने हाथ कटमका ताल बगानेमें भी उल्टा हो पच जाता है। इन दोनों व्यवहारों पर

कन्य इतना दृढ़ विश्वास रखते, कि इनका आयोजन देखते ही यथार्थ भ्रपराधी आत्मप्रकाश करने लगते हैं।

उत्तराधिकारित्वके नियमानुसार जो व्यक्ति स्वयं कृषिकार्य वा भूमिरक्षा करनेमें असमर्थ रहता उसे पेटक भूमिका अधिकार नहीं मिलता। किसीके मरनेसे पुरुष जो विषयाधिकार पाता और ज्येष्ठ पुत्रके ही अंशमें अधिक भाग पाता है। किसी-किसी जातिमें सबको समान भाग भी मिलता है। पुत्र-सम्पत्ति न रहनेसे मृत व्यक्तिके भ्राता अधिकारी होते हैं। कन्यायें पल्लवारदि, अस्त्रावर सम्पत्ति और गृहकी सामग्री अंगानुसार बांट लेती हैं। मृत्युके समय किसीकी कन्या अविवाहिता रहनेसे जितने दिन विवाह नहीं ठहरता, उतने दिन उसे पिछलग्गमें ही ठहरना पड़ता और भोजन, वस्त्र तथा विवाहका व्यय मिलता है।

इन लोगोंने सन्ध्या रक्षार्थ अधिक मानसर्वादा नहीं। इसका कोई नियम कहाँ पाते—निश्चयेषो-वाले उच्च श्रेणीवालोंको देखते ही सम्मानके लिये अपना मस्तक झुकाते हैं। किन्तु यथैव चलते समय अश्रेणीके मध्य वयोवृद्धको देख इतना कहना पड़ता है—मैं जाता हूँ। वयोवृद्ध भी उत्तर देता है—जाओ। प्रणाम करते समय कन्य ऊर्ध्वबाहुकी भाँति दक्षिण हस्त ऊपरकी ओर उठाते हैं। कभी-कभी यह हिन्दुवाँकी शैतिनीति अवलम्बन करते हैं। पूर्व-पुरुषके प्रति कन्य विशेष सम्मान देखाते हैं।

कन्योंके तुल्य कष्ट-सहिष्णु दूसरी जाति नहीं। दुर्मित्र वा गृहविवादमें द्विष-मित्र पड़ते भी कोई साधारण विवाद जानेपर सब लोग नवोत्साहसे उसके विपक्ष उठ खड़े होते हैं। सुननेसे आश्चर्य पाता है—जब अंगरेजोंसे कन्योंका युद्ध हुआ, तब प्रत्येक सरदारने अपूर्व साहसका परिचय दिया और किसी बड़ी दृढ़ताके साथ अवश्य कष्ट उठा जीवनके श्रेष्ठ सुहृत् पर्यन्त युद्ध किया था।

जन्म, मृत्यु और विवाह—तीनों कर्मोंमें कन्योंके यथेष्ट उत्सवादि होते हैं। आसन्न-प्रसवा कामिनी आत्मके देवताकी पूजादि चढ़ाती है। प्रसव होनेमें

विशेष पहुने या क्षेत्र मिमनेसे पुरोहित आकर स्त्रीको दो भ्रान्तिके सङ्गमपर ले जाते, जन्मशीर्षक ले जाते और जन्म-देवताकी पूजादि दिलाते हैं।

नामकरणके लिये इनमें बड़ा उद्योग उठता है। कन्य ऐसा-वैसा नाम नहीं रखते। पुरोहित एक पात्रमें जल डाल शिशुके पादपुरुषसे प्रत्येकका नाम ले जलमें एक-एक धान्य फेंकते हैं। सभी धान्य जलमें डूब जाते हैं। किन्तु जिसके नामका धान्य फेंकते ही तैर जाता, वही शिशुका नाम रखा जाता है। इनको विश्वास रहता—उसी व्यक्तिने फिर आकर जन्म लिया है। सप्तम दिवस नव शिशुके कन्याधार्य ग्रामके लोगों और पुरोहितोंकी बोला खिन्नाते-पिलाते हैं। इस मौकेमें कन्य महुवेकी गराव पीते हैं।

विवाहके विषयमें यह बहुत सतर्क रह सम्बन्धादि जोड़ते हैं। वंशकी शुद्धता और वीर्यवत्ता बचानेके लिये कन्य कभी अश्रेणी वा आश्रित कुटुम्बमें विवाह नहीं करते। किन्तु जिन दो जातियोंमें विरविवाद रहता, उनके मध्य विवाह सम्बन्ध गठ सकता है। भयानक युद्ध चल जाते भी विवाहकी सभामें उभय जातिके लोग एकत्र हो पानामोद लगाते हैं। इस बातको कोई नहीं देखता—प्रभात होते ही फिर द्विगुण उत्साहसे युद्ध बढ़ेगा। ऐसी घटना प्रायः पड़ते रहती है। १०१२ वत्सरके वयसमें पुत्रका विवाह होता है। पुत्रकी अपेक्षा बधूका वयस अधिक होता है। १० वत्सरवाले बालकके साथ पभाव पक्षमें १४ वत्सरकी कन्याका विवाह करना चाहिये। इसकी अपेक्षा अल्पवयस्काका विवाह नहीं होता। फिर भी १५१६ वत्सरसे अधिक वयस्का कोई कन्या अविवाहिता नहीं रहती। सम्बन्ध स्थिर करनेके दिन वरकर्ता अपना आश्रित कुटुम्ब ले कन्याकर्ताके घर पहुँचते और कन्याका मूल-स्वरूप तटुल, मध्य तथा १०१२ पक्ष अपने साथ रखते हैं। कन्यापक्षके पुरोहित अपने यजमानके द्वारपर खड़े हो उनकी अभ्यर्थना करते हैं। फिर पुरोहित वरकर्ताका प्रदत्त मध्य पी विवाह-देवताकी

मर्यादा चढ़ा देते हैं। अन्तर्को समय वैवाहिकोंमें परस्पर हाथ मिलानेपर विवाहका सम्बन्ध स्थिर होता है। रातको सब लोग कन्या-कर्ताके घर ही आवा-रादि करते हैं। सारी रात नृत्य, गीत, वाद्य और मर्यादाकी धूम रहती है। त्रिप रात्रिको पुरोहित वर-कन्याके हाथ हरिद्राक्ष सूत्र बाँधते और धानसे चावल तैयार होनेवाले घरमें खड़ाकर दोनोंके सुखपर हरिद्राके जलकी छींट मारते हैं। प्रातःकाल होते ही वर एवं कन्याके चचा दोनोंको अपने-अपने स्वस्थपर बैठवा सहासमारोहसे नाचते-गाते वरके घरकी ओर चलाते हैं। कन्यापक्षीय भी साथ साथ जाते हैं। राहमें वर और कन्याका चचा अपना-अपना भार बदल वरके घरकी भागता है। वर कन्यापक्षीय कन्याको न देख वरपक्षसे उसे देखानेके लिये भगड़ा लगाते हैं। समस्त आमोद उत्सव एक जाता है। दोनों दल पृथक् पंख परस्पर युवायें खड़े होते हैं। युवमें लोगोंके मरते-कटते भी कुछ देर बाद पुरोहितकी मध्यस्थतासे विवाद मिट जाता है। कन्यापक्षीय वापस चले जाते हैं। यदि पक्षमें पार करनेकी कोई नदी पड़ती, तो निम्नलिखित व्यवस्था चलती है—पुरोहित वरके घर जा वरकन्याकी गात्रमें रक्षाबन्धन एवं ग्रान्तिपाठ कर लक्षदेवताके उपद्रवसे छद्धार कर पाते हैं।

विवाहके बाद जितने दिन पुत्र स्त्रीसहवासके उपयुक्त नहीं ठहरता, उतने दिन वरकर्ताके अनु-रोधसे पुत्रवधूकी दृष्टका समस्त कर्म करना पड़ता है। पोछे वयःप्राप्त होनेसे पुत्र और पुत्रवधू दोनोंको संसारके मध्य पूर्ण समता मिलती है।

कन्यामें स्त्रियाँ कुछ विशेष सम्मान पाती हैं। जितने दिन स्वामी छोटा रहता, उतने दिन उसपर स्त्रीका प्रभुत्व चलता है। विवाहके समय वर-कर्ता जो द्रव्य वधूका मूल्यस्वरूप कन्याकर्ताको दे पाता, वह वापस होते ही विवाहका बन्धन टूट जाता है। स्त्री पतिगृह छोड़ पितृगृहको चल देती है। स्त्रीके गर्भवती रहते भी कोई आपत्ति नहीं पड़ती। इस प्रकार एक बार विवाहबन्धन टूट

जानेसे स्वामीका स्त्रीपर कोई स्वत्व नहीं ठहरता। किन्तु वह स्त्री भी दूसरा विवाह करनेसे वंचित रहती है। स्वामी द्वितीय बार विवाह करता है। व्यक्तिवार दोष लगते ही इस प्रकार विवाह-बन्धन तोड़ देते हैं। किसी अन्य कारणसे ऐसा ही नहीं सकता। एक पक्षी रहते दूसरो पक्षय करना अवशय है।

वेष्टा रखनेकी प्रथा इन लोगोंमें निम्नाहं नहीं। स्त्रीवाला पुरुष वेष्टा रखने नहीं पाता। किन्तु स्त्रीको अनुमति है वह यह काम कर सकता है। ऐसे स्थलमें वेष्टापुत्रोंकी चोरस-पिताके विषयका समान भाग मिलता है। रखनेवाला प्रथा निम्नित न होते भी कन्यामें वेष्टापूर्वकी संज्ञा काम है। फिर व्यक्तिवार और वसात्कारकी बात सिवा दो-एक जगहके कहीं सुन नहीं पड़ती।

पतिके वयःप्राप्त होनेपर स्त्रियाँ बड़ी भक्तिसे सेवा करती हैं। भोजनके समय स्त्री पतिकी बैठकर खिमाती और समस्त गृहकर्म अपने हाथ चलाती है। जब स्वामीकी चिकित्से कर्मसे एकान्त अवसर होते देख पाती, तब दुग्ध-पोष्य सन्तानकी उपेक्षा कर स्त्री उसकी सहायताके लिये दौड़ पाती है। ऐसे समय स्त्रियाँ कमरमें कपड़ेसे सन्तानको खपेट लेती हैं।

कोई कोई कहता—पवित्राङ्गिता अवस्थामें पुत्र-वती रहते भी स्त्रीका विवाह होता है। उस स्त्रीकी निम्ना भी सुन नहीं पड़ती। किन्तु ऐसी कन्याका विवाह करनेपर लोग सन्देह ही स्वीकृत नहीं होते। कन्याकी कन्यायें रक्षा करते ही स्वामीका गृह छोड़ पिताके दृष्टकी वापस वा मकानों में। फिर घर पहुँचते ही उनके पिताकी विवाहकाचीन प्राप्त द्रव्यादि लोटा देना पड़ता है। इसीसे यह कन्यासन्तानमें बड़ी घृणा रहते हैं। इससे स्त्रीपर विश्वास नहीं। लोग कहते हैं—निताम्न मिथ कुठारका पाषाण लगने भी गोपनीय विषय प्रकाश नहीं करता। किन्तु स्त्रियाँ—चित्तनी ही बुद्धिमत्ता रखी न हो—सामान्य प्रतीतिन पाते ही पतिगोपनीय कथा खड़ देती हैं।

अपनी जातिके मध्य किसी मामाम्य व्यक्तिके मरनेपर यह यथासम्भव मौन ही देखको लजाते और

दशम दिवस ग्रामके सब लोगोको खिजाते हैं। किन्तु सरदार या मण्डलके मरने पर दोस बजा। नृतके अधीनस्थ समस्त ग्रामोंमें नृत्यका संवाद फैलाते और अन्यग्रामोंके मण्डल तथा जातीय सरदार बोला मिल-जुल श्रवण से जाते हैं। बहुत बड़ी चिता बना और उसके मध्यस्थानमें ध्वजा एवं जातीय पताका लगा श्रवणको रखते हैं। फिर नृतका पुत्र श्रवणको और पीठ केर चितामें प्रज्जि देता है। उसी समय नृतके यावतीय वस्त्रादि, तेजस तथा शस्त्रादि ला और चावलकी भूसोपर जमा चिताके निकट लगाते हैं। चिताको जलतक पताकादि पर्यन्त नहीं जलते, तबतक नृतके शाकीय चिताकी चारो ओर नृत्य करते हैं। फिर नृतके अधीनस्थ प्रधान उसको उक्त सकल सम्पत्ति अपने मध्य मान्यके चिह्नकी भांति बांटते और ८ दिन पर्यन्त मध्य मध्य वधः पट्टु तथा नृतके वंशसे मिल चिताभस्मकी चारो ओर नाचते एवं शोकसङ्गीत चलापते हैं।

दशम दिन नृतके समय अधीनस्थ एवं ग्रामके प्रधान छुटते और एक सरदार मनोनीत करते हैं। नृतका व्योम-पुत्र ही प्रायः मनोनीत होता है।

कन्यजातिमें दो प्रधान गुण हैं—विश्वस्तता और साहस। प्रातिप्य इन लोगोमें इतना प्रबल रहता, जो अनुमानसे समझ नहीं पड़ता। कन्य कहते—धन, मान और जन देकर प्रतिधिकी सेवा करना चाहिये। सन्तानकी अपेक्षा भी प्रतिधिकी यत्नका बल है। प्रतिधिक पर पड़नेसे विपद्को अपने प्राण देकर भी दूर कर देना उचित है। ग्राममें भा पट्टुवनेमें किसी विदेशी पथिकको प्रत्येक गृहके कर्ता भोजनके लिये बोलाते हैं। जिसके घर प्रतिधिकी प्राता, उसके भानन्दका पार कोई नहीं पाता। यह जितने दिन चढ़ता, उतने दिन टिकता है। उससे कोई 'जायो' कह नहीं सकता। यह उन लोगोको भी प्रायय देते, जो कुछ वा प्राणदण्डके मयसे भाग शरण लेते हैं। फिर अपने पिता, शाकीय वा सन्तानको मार डालनेवाला यदि कन्योंके निकट प्रायय मांगने आता, तो कभी विमुख होकर नहीं

जाता। किसी-किसी जातिमें दूध व्यक्त अपने ऐसे ही दुष्कार्यके फलसे परित्राण पानेकी चेष्टा करते हैं। इसीसे कन्योंने नियम बना रखा है—यदि कोई इत्यांकारी या इसप्रकार प्रायय ले, तो गृहस्थ उसको प्रायय प्रदान कर सपरिवार अपना घर छोड़ चल दे; किन्तु खाद्यादि प्रेरण न करे। प्राततायी जयतक घरमें रहता, तब तक कोई कुछ नहीं कहता। किन्तु घनाहारपीडित हो घरसे निकलते ही गृहस्थ उसे मार प्रतिशोध लेता है। दो-एक जगह हो जाते भी कन्य इस प्रथाको इतना बुरा समझते, कि नियमानुसार कभी कभी कार्य करते हैं। फिर जो इस नियमसे चक्षता, वह स्वजातिकी मध्य दृष्टित ठहरता है। प्रातिप्यके कारण समय-समयपर पहले इनमें युद्ध होने लगता था। एक बार इसी युद्धसे एक श्रेणिका दूधरी श्रेणिकी साथ युद्ध चला। जो दल हटा, वह अपना ग्राम छोड़ पार्श्ववर्ती ग्राममें जा टिका। ग्रामके प्रतिवासियोंने प्रतिधिकीको एक वत्सर प्रायय दिया था। फिर जयलाम करनेवाली दल श्रवणको प्रायय देनेवालीसे लड़ने लगी। किन्तु प्रायय देनेवालोंने अपने प्राय्यिकको छोड़ा न था। प्रवेशिको एक वत्सर बीतनेपर जीहदलने दयापरवश उनका ग्राम त्याग किया। स्वग्राम वापस या विजित दलने जीहदलसे प्रायय मांगा था। फिर क्या शत्रुता रह सकी। देवभावपूर्ण कन्योंने समस्त शत्रुता भूल विजितोंकी अधिकार की हुई भूमि वापस दी और अपने शत्रुसे वीज होनेको सामर्थ्य प्रदान की। इस महातुल्य जातिकी पदरेणुके योग्य क्या कोई सभ्य वा सभ्यतम जाति हो सकती है।

यह विश्वस्तताके कारण ही आज स्वाधीनता खो बैठे हैं। १८३५ ई०को गुमसर राज्यवालोंने पंगरेकी लड़ इनका प्रायय लिया था। उस समय इन्होंने जिन लोगोको प्रायय दिया, उन्हींके साथ निज स्त्रीपुत्र और कन्या शीघ्र नृत्यके सुपन्न पतन किया। पंगरेज गुमसर राज्यके व्यक्त दूनेको इनके पीछे लगे। पहले इन्होंने समझ न सकनेसे

चंगरेजोंको देगमें घुसने दिया था। पीछे जब चंगरेजी फौजका समिप्राय पाया, तब पायितोंकी रक्षाके लिये अपनी विपद न देख गुमसटराज्यके परिवारवर्गको इन्होंने गुप्त भावसे पर्वत पर्वत घुमाया। समय-समय पर युद्धमें अस्त्र-कन्य भरणे लगे, फिर भी पायितोंकी शत्रुके हाथ सौंप 'अविश्वासी' न बनें थे। शेषको कन्य अपने प्रान्तवासी किसी हिन्दू घरदारकी विश्वासघातकतासे चंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण करने पर बाध्य हुये।

अपि एवं युद्ध हो इनके मध्य सम्मानका कार्य है। अपि और युद्ध न करनेवाले लोग इनमें घुस्य होते हैं। प्रत्येक कन्य अपनी खेतीबारीके लिये थोड़ी-बहुत भूमि रखता और उसीसे साम्राज्यका सुख उपभोग करता है। अपनी थोड़ीसी भूमि रक्षा कर फसल काटा सकनेसे यह जितना समीप पाते, उतना किसी विस्तीर्ण साम्राज्यके सम्राट् भी नहीं उठाते। कन्योंके प्रत्येक ग्राममें कुछ नीच श्रेणीके लोग रहते हैं। वह दूसरीका दासत्व कर अपनी जीविका चलाते हैं।

एतद्भिन्न प्रत्येक कन्य-ग्राममें कितने ही वंशावृत्त-ज्ञानिक, जुलाहे, कर्मकार (लोहार), कुम्भकार (कुम्भार), खाले और शिल्पिक (कलवार) भी बसते हैं। वह लोग ग्रामके मध्य रहने नहीं पाते। ग्रामके प्राग्देग अथवा किनारे पर किसी स्थानमें पक्की छान बांध करते हैं। कन्य न तो उनका अस्त्र खाते और न व्यवसाय ही चलाते हैं। निम्नश्रेणी-वालोंमें तंबोली ही अधिक काम देते हैं। वह ग्राममें पचायत पड़ने या युद्ध चलनेके समय दूतका कार्य करते हैं। उत्सवादिमें शान्ति-गाजी माना उन्हींके हाथ रहता है। ग्रामीण लोगोंके लिये जुलाहे बल्ल बुनते और दूसरे भी अनेक कार्य करते हैं। पड़ले इनमें नरबलिकी प्रथा प्रचलित थी। उस समय जुलाहोंमें प्रत्येक धर्म वंशावृत्तमें अपने ग्रामके लिये बलिका प्राप्त करके रखते रहते। वह लोग अपने लिये भूमि छुटा अथवा उस जातिका अस्त्रस्त्रोय दूसरा कोई कार्य उठा नहीं सकते। इस लिये वह जातिके कन्य भी उनमें कुछ दयाके साथ व्यवहार

करते हैं। कोई उत्सवादि पा पड़ने पर सब लोग उन्हें निमन्त्रण देते हैं। फिर उठात् दीपका कोई कार्य कर छानने पर उनसे प्रतिशोध भी लिया नहीं जाता। यह कन्य जातिसे स्वतन्त्र श्रेणीके लोग समझ पड़ते हैं। उभयजातिमें किसी प्रकारका वर्णभेद दाप न मननेसे आज भी यह स्वतन्त्रता स्पष्ट प्रतीत होती है। अपनेक लोग उन्हींको इस प्रदेशके आदिम अधिवासी अनुमान करते हैं। कन्योंने पूर्वकाल उनको द्वारा खय देग से लिया था। उसी समयसे वह दासकी भांति कन्योंके अधीन रहते हैं। सकल नीच श्रेणियोंमें कन्यी और उड़िया दोनों भाषाये चलती हैं। कारण वह उभय जातिसे सहाय रहते और उभय जातिके वयोभूत रहते हैं।

कन्य बालककालसे ही अविश्वसनीय होते हैं। फिर बाल-सुलभ क्रोड़में रहते युवावस्थाकी शिष्टा भी भिन्न होती है। खेत बोने और काटनेके समय यह बड़े तड़के उठ खिचड़ी-जैसा एक पाहार बनाते-खाते और लज्जलकी चले जाते हैं। इस पाहारमें दाल, चावल और गूकरका भाग होता है। देवका गोहार सुखते न सुखते इस चलाने लगते और अविश्वसनीय तीन बजेतक कन्य अपना कार्य किया करते हैं। जब लज्जल काट नूतन खेत बनाते, तब दो पहरकी कुछ विश्राम लेते समय पाहार भी पकाते हैं। अन्य समय यह तीन बजेतक काम चला किसी निकटवर्ती नदीमें नहाते और घर वापस जा पाहार खाते हैं। उसी समय इनमें एक प्रकारका रक्षा बनता, जिसमें तम्बाकूका चर्क पड़ता है।

ग्राम-वृत्तनके लिये भूमि निर्णय करनेमें कन्य बड़ा यत्न लगाते हैं। प्रायः पर्वतके पायों या बहु-हस्त-लताकीचें स्थानमें उस भूमिपर ग्राम बसाया जाता है। प्रति ग्राममें दो पंक्ति गृह बनते हैं। मध्य-स्थानमें साम्यपथ भूमिग्राम निकलता है। इस पथकी दोनों ओर बन्द करनेको काष्ठ-निर्मित द्वार कपाट लगते हैं। प्रायः सकल ग्रामोंके मध्यस्थानमें ही प्रधानके रहनेका घर उठता है। ग्रामवृत्तके समय कन्य-व्यवस्थानमें एक कार्यावृत्त लगा अधिष्ठात्री देव-

ताके नाम उत्सर्ग करते हैं। उसी हृदयके नीचे प्रधानके रहनेका घर होता है। उक्त कार्पास हृदय इनके निकट देवतुल्य पूजित है। निम्नश्रेणीके लोग पूर्वीय पक्षके दोनों मुखोंके निकट रहते हैं।

तोष वत्सरमे पक्षके कर्म सुद्राका व्यवहार जानते न थे। फिर व्यवसाय-वाणिज्य क्या इनमें अधिक रहा। सुद्राके व्यवहारकी सर्वप्रथम पत्न्या कौडी भी चलती न थी। इनके क्लय-विक्रयका कार्य विनिमयमे निर्वाह होते थे। भेष वा गवादि पशु देनेसे ही अधिक परिमाणके मूल्यका आदान-प्रदान चलता था। अन्याय स्थलोंमें चायल दान प्रशक्तिके विनिमयमे मूल्य लिया-दिया जाते रहा। इस प्रकारके विनिमयका हिसाब बहुत टेढ़ा है।

युद्धमें इनका साहस अपरिचोम रहता है। सम-राज्यमें अपने अपने सरदारके निकट यह जिसप्रकार बाध्य पाते, उससे इनकी विवशताका चेष्टा परिचय पाते हैं।

कर्म उत्तमोंमें हिन्दुओं-जैसे होते हैं। सुगठित शरीर, हृदय मांसपेयो, द्रुतपादचेष, विस्तृत ललाट और पूर्णायत चोछाघर देखनेसे यह हृदयप्रतिष्ठ, वक्रिष्ठ एवं बुद्धिमान् समझ पड़ते हैं। इनकी कथा भी मिष्ट और सरस होती है। सुतरां इनके साथ रहनेसे अधिक कामोद पाता है। युद्धमें कर्म अत्यन्त भयानक बन जाते हैं। इनके युद्ध वा उत्सवकी विशेषता एक ही प्रकार रहती है। अन्य बाल समेत मस्तकके दक्षिण पार्श्व अलककी भांति झोटा बांधते हैं। फिर उसपर पक्षके पालकका सुकुट पहना जाता है। युद्धके पूर्व सरदार कई द्रुतगामी लुलाहे हाथमें ताण दे एक घामसे अपर घाम संवाद पहुँचानेकी भजन है। दूतके हाथ बाण देण कर्म चना-घाम युद्धता संवाद समझ लेते हैं। युद्धमें जगनेसे पहले समय दल जयसामकी आशासे पृथिवी देवताके निकट एक एक मानसिक मरधनि चढ़ाते हैं। एतद्दिन युद्धता भी एक देवता रहता है। उसके निकट भी मानता करते—जय भिन्नसे तत्त्वशास्त्र ही युद्धप्रथम आपके नाम आसन और पक्षी पक्षि

देगे। समय दलोंमें आरम्भ होनेपर जब तक कोई पक्ष रूपसे हार नहीं खाता, तब तक युद्ध चलता जाता है। दूसरे दिन यह फिर नूतन युद्ध आरम्भ करते हैं। युद्ध शेष न होनेपर आगामी दिनको पमेवा कर महा उत्सवपछासे रात बिताते हैं। प्रथम दिन आरम्भ हो पूरा न पड़ने पर द्वितीय दिन आरम्भ होनेसे पहले युद्धक्षेत्रमें एक रक्षाक्ष वस्त्र फैला समय दलोंके योद्धाओंको उत्तेजित करते हैं। दोनों दलोंके पक्ष अपने अपने पक्षके हृदय एवं स्त्रीकन्यादि वस्त्र-यस्त्र तथा खाद्यादि ले प्रस्तुत हो जाते हैं। युद्धक्षेत्रमें पछादि टटने या काम पड़नेसे भयवा योद्धाओंको टप्पादि जगनेसे यह तत्त्वशास्त्र उपकरणसामग्री पहुँचाते हैं। युद्धमें प्रथम हत होनेवाले व्यक्ति के रक्तमें आग-ह-सङ्कारसे समयपक्षीय घोर भयना-भयना कुठार डुबो लेते हैं। फिर जो व्यक्ति युद्धमें प्रथम किसीको मार लेता, वह हतयोद्धाका दक्षिण हस्त काट पति शीघ्र अपने दलके पीछे जा पुरोहितकी देता है। पुरोहित इस हस्तको युद्ध-देवताका पति प्रियवसु बताते हैं। केवल प्रथम हतयोद्धाका ही नहीं, युद्धमें मारे जानेवाले प्रत्येक व्यक्ति का दक्षिण हस्त हस्ता काट अपने दलके पुरोहितको प्रदान करता है। इसी प्रकार जितने दिन युद्ध चलता, उतने दिन प्रति सम्बन्धालकी दोनों दलके पीछे हत योद्धाओंके दक्षिण हस्तोंका ढेर लगता है। इनके युद्धास्त्राणि वक्राप कपाण, घटुर्वाण और कुठार व्यवहृत होता है। कर्म किसी प्रकारकी ठालसे लड़ना अच्छा नहीं समझते। चापसे बाण निकल और भूमि छूती जख्म-मुख वट टटिरेखाके नीचे लक्ष्य मारने पर मित्राको श्रेष्ठ मान प्रशंसा को जाता है। युद्धमें जय वा कभी कोई कर्मशोर अपने कौशल वा बलकी प्रशंसा न तो करता और न सुनता है। सब लोग हृदय रूपसे विश्वास रखते—युद्धदेवताकी लपारे जय हुआ है।

सम्बन्धजातिके लोभजनक इतने सदगुण रहते भी कर्मोंमें पानदाय बहुत प्रबल है। मङ्गलकी गाराय इनके प्रति उत्सवमें यथेष्ट परिमाणसे चलती है। इनको विश्वास रहता—मध्य भिन्न घामका कोई

उत्सव और व्यक्तिगत संस्कार पूरे नहीं पड़ता। इनकी स्त्रियां गराव नहीं पोतीं, केवल किसी-किसी उत्सवमें पत्तुरोधय जिज्ञा द्वारा श्रम कर लेती हैं। स्त्रियां मद्यपान करनेसे समाजमें निन्दनीय हो जाती हैं। मधुवा फूलनेसे कर्म सड़ी दुर्दशामें प्राति हैं। नग्न मधुका नग्न मद्य पी गयी-कृषे और मैदानमें दलके दल प्रदय पथितन पड़े रहते हैं। फिर स्त्रियां गृहके संस्कारका कार्य निवटा इनकी श्रम या किया करती हैं।

कर्मोंके चरित्रमें एक और ऐकान्तिकी स्वाधीनता-प्रियता, सरदारोंकी वाध्यता, चटल प्रतिष्ठा, साहस, आतिथ्य, चक्रवर्तिन वस्तुता तथा परिश्रमशोभता गुण और दूसरी ओर मद्यपान एवं प्रतिहिंसा-परायणता दोष देख सुख होना पड़ता है। दो-एक सुदृष्टिमानोंको छोड़ कहीं धोय वा दस्तुता-धेवा दूसरा कोई अपराध नहीं। फिर सन्देह रहता—आभिचारके अभियोग व्यतीत समस्त कर्म जातिमें कभी किसीके नाम कहीं क्या दूसरा कोई पाप जगता है।

यह ओर देवता—कर्मोंके यावतीय धर्मशर्ममें बनि हो प्रधान है। इनके देवताओंकी संख्या भी अधिक है। जल, खान, पत्तरीय एवं पातास सकल स्थानोंमें देवताओंका वास है। फिर सभी देवताओं पर जोवबलि चढ़ता है। इनके देवताओंकी तीन श्रेणियाँ हैं। प्रथम श्रेणीमें १४ देवता जाते हैं—१ बिरायेन (पृथिवीदेवता), २ मोहायेन (लोहदेवता वा सुहदेवता), ३ नादकयेन (धामाधिष्ठाता), ४ वेवमा येन (सूर्य) एवं दानकयेन (चन्द्र), ५ बांदि येन (सीमा-देवता), ६ जूगा येन (वधन्तरीयके देवता, शीतता), ७ सोरुयेन (पर्यंतदेवता), ८ खोरी-येन (नदीदेवता), ९ गखा येन (वनदेवता), १० सुयडा-येन (पुष्करिणीदेवता), ११ सुगू या चिदराज येन (निर्भरदेवता), १२ पिदन्न येन (हृदिदेवता), १३ पिनागू येन (पाखेटदेवता) और १४ गारीयेन (जम्बदेवता)।

उक्त सकल देवता ही कर्मोंके आम्बविधाता हैं। किन्तु बिरायेन, मोहायेन और नादकयेन सर्वोपेक्षा

प्रधान समझे जाते हैं। इनके पीछे सूर्य, चन्द्र एवं सीमा और नदी, वन, पुष्करणी, निर्भर तथा हृदिके देवता गणनीय हैं। फिर पाखेट, वधन्तरीय और जम्बके देवता भी पूजना पड़ते हैं।

द्वितीय श्रेणीमें ग्यारह देवता हैं—१ पितावहदी (पादिपिठदेव), २ बांदरी येन, ३ बाहमन येन (बाह्य), ४ बहसुण्डी येन, ५ डूंगरी येन, ६ सीगा येन, ७ दमोसिंघानी, ८ वतारवर, ९ पिंजारे, १० कण्ठात्री और ११ जलोदा सरोदा। पितावहदी की एकप्रकार प्रतिमा बनती है। हिन्दुओंके विश्व, वट वा चम्रत्यके गोषे एकलक्ष प्रस्तरको हिन्दू चन्दनादि लगा शिव, ब्रह्मा, धर्म प्रभृति की प्रतिमा माननेकी भांति यह भी वनके मध्य किसी बड़त्तु घटके गोषे एकलक्ष प्रस्तर चरित्रा लगा रखते और पादिपिठदेवकी प्रतिमा कल्पना करते हैं। वनवासी लोगोंके कथनानुसार यह प्रतिमा स्थापित होनेके स्थानपर पड़की उक्त देवता कभी कभी आविर्भूत और भ्रमस्थ चन्द्रहित होती है। बांदरी येनको भी प्रतिमा है। किन्तु कोई निर्णय करन सका—उसमें क्या जगा है। काष्ठ, प्रस्तर वा मोहादि कोई धातु उक्त मूर्तिमें मिलना कठिन है। डूंगरी येनको पूजा वस्त्रमें केवल एकबार होती है। प्रत्येक वर्षके लोग मिल-जुल किसी उद्य पर्वतपर चढ़ते और उक्त देवताके उद्देश्यसे बलि दे प्रायश्चात करते हैं—पिठपुहपके जीवन वितानेको भांति हमारे वस्तान भी अपना जीवन निराल कर चकें। सीगा येन संहार-देवता है। व्याघ्र उनको मूर्ति है। पृथिवीके मध्य यह जोह रूपसे रहते हैं। युद्धमें जोह पक्ष चलाने और व्याघ्रके मुखमें पड़ पनेक मर जानेंदे ही कर्मोंके सञ्चालन दोनोंकी संहार-देवताको मूर्ति ठहराया है। सीगा येनकी भी प्रतिमूर्ति होती है। कर्मोंके विज्ञानानुसार जिन उद्योगों गोषे उनकी प्रतिष्ठा करते, वह पक्ष दिन बाद ही मरते हैं। फिर उनकी पूजामें निवसित रूपसे नियुक्त पुरोहित भी बहुत नहीं होते। रक्षोष लोग पार बस्तर उनको पूजामें चढाते होते दिखते



है। उनके साथ सादृश्य देख करके कर्म काशी-देवीकी पूजा करने लगे हैं। इनके जातीय देवता अधिकांश पृथिवी वा पातासमें रहते हैं। इसीसे पुरोहित भूमिमें स्फोटन पड़ते हो यजमानोंको देखा कहते हैं—इसी स्फोटनसे देवताका आविर्भाव और तिरोभाव हुआ है। एकमात्र बेरा पेनू या पृथिवी-पूजाके दिन सब लोग एकत्र होते हैं। कारण उनकी पूजामें बलि चढ़ाना ही पड़ता है। कर्मोंमें वह प्रधान देवता, स्वभावोत्पादक वीर्य, सर्वमङ्गलानय और समस्त भुवनके स्वप्ता है। उनकी अकेली स्त्रीका नाम तारा देवी है। बेरा पेनू निरीह देवता है। वह कभी किसीका कोई अपकार नहीं करते। किन्तु तारा देवी बिलकुल उनसे विपरीत पड़ती है। कर्मोंके कथनानुसार तारा देवीके कारण मनुष्य समाजमें यावतीय दोष वा पाप घुसे हैं।

कर्मोंके मतमें सृष्टिका प्रारम्भ इस प्रकार हुआ है—किसी समय बेरा पेनूने अपनी स्त्रीको अधिक भक्तिमती देखा न था। सुतरां उन्होंने भी उनसे विरक्त हो मनमें ठहरा लिया,—“पृथिवीको उद्भिज्ज-मालिनी बना जीवकी सृष्टि करेंगे। यह जीव हमें सृष्टिकर्ता और आहारदाता समझ भक्तिसे पूजेंगे। ऐसा होनेपर हमारी पत्नी भक्तिभावमें जो लुटि करती, वह भी जाते रहेंगी।” इसके पीछे ही पृथिवीमें प्रथम उद्भिद् उपजा था। फिर जीवकुल निकल पड़ा। मनुष्य निष्पाप और निर्मल रहे। इसीसे उनके साथ बेरा पेनूका साक्षात्कार एवं कथनोपकथन बराबर चलता और आहारके लिये प्रस्थित ठठाना पड़ता न था। पृथिवी विना चेष्टा और लक्षिकायें स्वयं अपनी-प्रत्यक्ष उत्पन्न करती रहीं। सर्वत्र निरापद् और शान्ति थी। मनुष्य उस समय नन्द फिरते, किन्तु अपना अनाहतल समझते न रहे। शेषकी तारा देवी उनका सुख देख न सकीं। उन्होंने मनुष्यके मनमें पाप दोड़ा दिया था। जो उस समय तारा देवीके प्रलोभनसे स्वतन्त्र रह सके, वही एकप्रकार द्वितीय श्रेणीके देवता गिने गये। फिर उन्हें पापासक्तपर कष्ट-करनेका भार भी मिला

था। मानव-पापान्वित हो पतन विषम पथस्थानमें पड़ा। पृथिवीने प्रसुर शस्त्र उत्पन्न करना रोक दिया। पहले मनुष्य मरते न थे। यह पापान्वित पक्षीकी भांति उड़ और जलपर चल सकते रहे। किन्तु पीछे वह समता चल बसी। सब लोग मृत्युके यथोभूत हो गये। यह समस्त घटना होनेपर तारादेवी और बेरा पेनूके मध्य विवाद उठा था। उसी विवादके कारण मनुष्योंमें भी दोनों देवताओंके उपासक दो दल बने। बेरा पेनूके उपासक कहते,—“बेरा पेनूने तारा देवीको शाप दिया है—स्त्रियां पति कष्टसे सन्तान धारण और प्रसव करेंगी।” ताराके उपासक बताते—बेरा पेनूने तारा देवीको हरानेकी चमत्ता नहीं। तारादेवीकी उपासनासे रिक्ता सकने पर मनुष्यका दुर्भाग्य दूर हो जाता है। सुतरां वही सर्वोप पूज्य है।

बेरा पेनू और तारा देवीका यह विवाद बहुत दिन चला न था। दोनोंके भिन्नमेंसे कुछ पुत्र उत्पन्न हुये। वह भी कुछ देवता समझे जाते हैं—(१) पिदलू पेनू—हृष्टि वा जल-देवता। उनकी लपासे सेवमें हृष्टि होती है। (२) गुरमी पेनू—वसन्त ऋतु-देवता। वह वृक्षमें नूतन पत्र लाते और रस पड़ जाते हैं। (३) पिथोवी पेनू—जाम वा हृष्टि देवता। (४) कलस्य या पिलासू पेनू—पाखेट-देवता। (५) कोहा पेनू—कोह वा युद्ध-देवता। (६) स्रंदो या स्रंदि पेनू—सोमा-देवता। बेरापेनूके डोंगा पेनू नामक अपर पुत्र भी हैं। वह हिन्दुओंके यमकी भांति मृत-व्यक्तिका पाप-पुण्य देखते हैं।

एतदव्यतीत अपर श्रेणीके भी देवता होते हैं। वह मायायुक्त आदि मनुष्य हैं। सृष्ट, वन, नदी, पर्वत, शुद्ध और उद्यानादिके अधिष्ठातृरूपसे उनकी पूजा होती है।

बेरा और तारा देवीका वासस्थान स्वर्ग है। डिङ्गा समुद्र पार किमी पर्वतपर रहते हैं। कर्मोंके मतानुसार उसी पर्वतसे सूर्योदय होता है। फिर मरनेपर भी वही समुद्र तैरिषीकी पार करता है। कर्म उसे गुपस्वसी वा सम्पपर्वत कहते हैं। पश्चान्

देवता इधिवीपर रहते हैं। किन्तु उनमें कोई मनुष्यको देख नहीं पड़ता। पशु-पक्षी उन्हें देखते हैं। उत्सर्गके द्रव्यादि या कर्मोंके देवता अपना काम चलाते हैं। फिर भी समय समय वह स्वयं बाह्यरान्द्रपक्षको पृथिवी पर पाते रहते हैं। चेतनं बाह्य बाह्य लगनेसे लक्ष्य सिद्धान्त करते—कोई देवता आकर इसका शस्त्र ले गये हैं।

कर्म प्रति पूजामें बलि चढ़ाते हैं। जिस पूजामें बलिकी आवश्यकता नहीं पड़ती, व्यवहारवगतः उसमें भी शूकरहत्या चलती है। शूकर इनके निष्ठ बलिकी आवश्यकता, प्रत्येक पूजाके उपकारणका अङ्गमात्र कहता है।

यह सर्वमिषा उत्सृज्य बलि पृथ्वीदेवताको उत्सर्ग करते हैं। पृथ्वी देवताकी दो प्रकार पूजा होती है। समय जाति एकत्र ही एक प्रकार पूजा करती, फिर प्रत्येक गृहस्थके घर अपने-अपने स्वायंके लिये दूसरी पूजा चढ़ती है। नरबलि व्यतीत अन्य बलि भी चढ़े देना पड़ता है। चेत कोने और काटनेके समय बलि देनेका नियम है। किन्तु उसमें सामान्य ही बलि लगता है।

पहले सारीका भय वा दुर्भिक्ष लगने अथवा समय जातिके प्रतिनिधिरूप प्रधानके संसारपर अकस्मात् कोई विषम विपद् पड़नेसे नरबलि चढ़ाते थे। फिर साधारण लोग भी अपने-अपने सांसारिक विषम दुर्घटनाके चमत्से उबार होनेको नरबलि देते रहे। जब किसीकी व्याधु या जाता, तब उसके परिवार-सर्गको विश्वास जाता था—पृथ्वी देवताको एक नर-बलिका प्रयोजन है। तत्संपात् बलिका पात्र सङ्गृहीत न होनेसे गृहस्थ किसी कामलका जान कटा और रक्त भूमिपर बहा प्रतिष्ठा करते—एक वत्सरके मध्य हम नरबलि देंगे। कोई कोई निज-पुत्रका काम काट भी ऐसी ही प्रतिष्ठा करता था। यदि एक वत्सरमें बलिका पात्र न मिलता, तो गृहस्थको अपना एक पुत्र चढ़ा देवदत्त पुत्राणा पड़ता।

निर्दिष्ट कामपर हवा करती है। जो सकल द्रव्य देवताओंको चढ़ते, उनमें प्रत्येकका स्वतन्त्र स्वतन्त्र मन्त्र पढ़ते हैं।

यह लोग आत्माका पक्षित स्वीकार करते हैं। किन्तु उसके चार भाग हैं। आत्माका प्रथमांश निज-कृत सुकर्मका सुख तथा द्वितीयांश दुष्कर्मका दुःख उठाता, तृतीयांश फिर जन्म पाता और चतुर्थींश मर जाता है।

प्रति घासमें इनके पुरोहित रहते हैं। केवल वैराग्य और तारा देवीके पूजाकाल ही पुरोहित जाता है। किसी दूसरे कर्म वा अन्याय देवताकी पूजामें प्रति गृहस्थके गृहकर्ता ही पुरोहितका कार्य चलाते हैं। पहले ऐसा न रहा। कोई कोई वंश पुत्रपोषादिनामसे किसी न किसी देवताका पूजक था। किन्तु आजकल वैराग्य और तारा देवीकी पूजाको छोड़ पुरोहित नामक स्वतन्त्र व्यक्ति दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता। तारा और वैराग्य पूजक जड़ने-मिटने तथा साधारण लोगोंके साथ एकत्र भोजन करनेसे दूर रहते हैं। वह ऐसे-वैशेके जायका बना खाद्यादि भी खा नहीं सकते। कर्म सबको पुरोहित बना लेते हैं। किन्तु पुरोहित होनेवालेको अपना पद ग्रहण करनेसे पहले लोगोंके मनमें विश्वास जमाना पड़ता—स्वयं देवताने मुझे लक्ष्मि देव्यन दे अपने पुरोहित पदपर निवृत्त किया है। पुरोहितोंकी कोई वृत्ति नहीं होती। उन्हें केवल दक्षिणापर निर्भर कर चलना पड़ता है। किन्तु शान्ति अस्तव्ययन करा यदि कोई पारितोषिक वा पारित्यमिक स्वरूप कुछ देनेकी जाता, तो ले लिया जाता है। हिन्दू पुरोहित इन लोगोंमें पोषाका काम करते हैं। उपदेवताके धार्मिकमें यह भाङ्गते-फूँकते रहते हैं। इनमें एक जोषोके लोग देवप्रका कार्य भी करते हैं। प्रायः निचयेपीके उड़िया ही देवप्र बन जाते, किन्तु कन्नैपट और लुमका नामक स्थानपर कर्म-देवप्र भी देवप्रमें पाते हैं। उड़िया देवप्र (लामो या देसोरो) पञ्चाङ्गका व्यवहारमें जाते, किन्तु कर्म देवप्र शरीरगत सबबाह्य सब देख कर ही

उक्त समस्त देवताओंकी पूजा समय-समय पर

गुप्तायाम फल वनाते है। उड़िया देवता को छोटी बना देते है।

पूर्वकाल प्रयुद्धिता और युद्धदेवता पर नरवलि चढ़ता था। वैरापेनूके उपासक वैरापेनूकी और तारा-देवीके उपासक तारादेवीकी ही प्रयुद्ध देवता वताते है। फलतः प्रयुद्धीके उद्देश्यसे उभय दक्ष एकत्र होते भी वैरा-पेनूके उपासक मन ही मन नरवलि चढ़ानेकी प्रयाची बहुत दुरा समझते थे। ताराके उपासक कहते है,—‘पहले प्रयुद्धी भस्मना कठिन और कृषिके लिये अनुपयुक्त थी, कहीं भी उर्वरता न रही। ताराने भक्तोंको दुर्दशा देख एक चैत्रपर अपना रक्त टपका दिया। उसीसे प्रयुद्धीमें उर्वरता आयी। फिर उस दिनसे उनके उद्देश्यपर खेत बोते और काटते समय नरदान देना बंद पड़ा।’ कोई कोई कहता—प्रयुद्धीकी कठिनता और अनुर्वरता देख सब लोग प्रयुद्ध-देवताके निकट जा रोने लगे थे। उन्होंने लोगोंके दुःखमें चबरा कड़ दिया—प्रत्येक चैत्रमें मनुष्यका रक्त छिड़को। सबने सौटकर एक वासकको वलि चढ़ाया और रक्तसे चैत्र छिड़काया था। देवताने फिर आदेश लगाया—इस प्रयाची तुम चिरदिन पच-सम्भन करोगे। उसी समयसे नरवलि चला है।

नरवलिका नाम भेरिया उत्सव है। भेरिया उड़िया भाषाका शब्द है। उसका अर्थ वलिपात्र लगता है। कर्म-मायामें वलिके पात्रको ठोकी वा कीदी कहते है। पान या पनवोया जातिके लोग ही इस वलिका पात्र संपन्न करते थे। अर्थ दे क्रय करनेका नियम रहते भी पवित्र स्थलोंमें वह बोरीसे वलिका पात्र से भाते, किन्तु न मित्रनेसे शोभ-वगत; अपना सन्तान पर्यन्त साँप जाते थे।

वलिके लिये कर्म जिसी जातीय स्त्री वा पुरुषको निर्वाचित कर सकते रहे। किन्तु भस्मवयस्क वासकवासिका ही चुंटाते थे। पान माना स्थानोंसे वलिके पात्र लाते रहे। समय पाकर एकवारगी ही बहुतसे पकड़ रखते थे। वलिके पात्र जितने दिन आसमें ठहरते, उतने दिन सब लोग उनसे सादर व्यवहार करते रहे। लोग स्वयं जो द्रव्य खाते, उससे

पक्का उनको खिलाते थे। वह सख्खन्द सर्वत्र भूमते रहे। किन्तु भस्मवयस्क घरसे बाहर निकलने पाते न थे। कभी कभी पान वलिके निमित्त आसीत युवक-युवतीको एकत्र रख सहवास करने देते। उस गर्भसे जो सन्तान निकलते, वह भविष्यत् वलिके लिये रचित रहते थे।

वलिके १-१२ दिन पूर्व कर्म निर्वाचित पात्रका मखक तुंडा ढाचते। फिर समस्त ग्रामवासी एकत्र हो और नहा-धो उसकी पुरोहितके पवित्र आश्रम-पर से जाते थे। पुरोहित उड़ी समय देवताको सूचना देते—वलिके प्रसूत होता है। पुरोहितके आश्रममें १ दिन उत्सव मनाया जाता था। पचास नृत्य, गीत, मखपान और पाखारादि चलते रहा। इस उत्सवके पोछे वलि चढ़नेसे पूर्व दिन पात्रको रात्रिमें उपवासी बना और प्रातःकाल भनी भाँति खान करा नव-वस्त्र पहनाते, फिर सब मित्र-शुभ नाचते नाचते पुरोहितके साथ वलिस्थान पर से जाते थे। जिसी पुरातन वनका शिपदंश उल्ला उद्देश्यसे सुरक्षित रखते और वृक्षादि काट कुठाराघातसे कलङ्कित न करते। लोगोंको विज्ञास रहा—यहाँ उपदेवता वास करते है। वलिस्थानके विनकुल मध्यस्थलमें एक खूँटा गाढ़ते थे। खूँटेकी दोनों ओर अपने देवका पांकीशार नामक खंडोला पेड़ लगाते। पोछे पुरोहित खूँटेके पास वासकको बैठा भस्मी भाँति बांधते थे। फिर उसके वसदी ‘ओर तेल लगाया जाता। कर्म उल्ला तेल-हरिद्रा वा उस दिनके वलिका पक्कल्टट कोई द्रव्य पति पवित्र मानते। सुतरां प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति उससे कुछ न कुछ लेनेके लिये आग्रह देता बड़ा कोलाहल मचाता। उस दिन वलिके समग्र रात वंधा ही रखते थे। फिर अन्यान्य उपस्थित व्यक्ति पानि-पाने और आचने-गानेमें लग जाते। परदिन दो-पहर तक आमोद चलता था। पोछे सब लोग गहबड़ बन्द कर केषल गाते-गाते वलि चढ़ानेकी प्रसूत होते। वलिकी बांधकर मारना मना है। उड़ीसे शाय-पेर कटा या पकीम खिचा उसे

जमीन चुरकर लाते थे। फिर पुरोहित देवताके निकट गये, पुत्रकन्या एवं गवादि याचित पशु-पक्षीके मन्त्रस्य और सर्पव्याघ्रादिके कवचसे उधार होनेकी प्रार्थना करते। दशक भी उस समय अपने-अपने जमीनकी सिद्धिके लिये देवताको मनाते थे। पुरोहित साधारणके मध्य इतिहास सुना वलि चढ़ानेकी आवश्यकता देखा देते। फिर पुरोहित और वलिपात्रके मध्य तर्क उठता था। पुरोहित वलिके कहते,—‘एक व्यक्ति मारनेसे, यदि इतने लोगों—नहीं नहीं—समस्त देवको उपकार पहुँचे, तो वह मेरा जानिवाला क्या अनुयोग करे। फिर इसी लिये तुम्हें खरीद भी लाये हैं।’ वलि उत्तर देता था,—‘तुम्हें कवच लोग से लाये हैं। मुझसे दास बनानेकी बात बाकी गयी है। मैंने स्वयं प्रामाणिक्य नहीं किया, दूसरेने मुझे कैसे खरीद लिया।—इत्यादि।’ शेष पर पुरोहित उसे किसी प्रकार समझा-बुझा देते थे। उसके पीछे पुरोहित किसी प्रधानके साथ छत्रकी एक हरी गाखा काट मध्यभाग पर्यन्त फाड़ते और चिरे चुये दोनों किनारे वलिके गलेमें छाल रखीसे कसकर बांधते। पन्तको स्वयं पुरोहित छठारके उसका फण्ड काट डालते थे। खण्ड कटनेसे पहले सब लोग मिस्रकर वलिके कहते—‘देवताके प्रोत्थयं हम अर्थ लगा तुम्हें खरीद लाये हैं। अतएव तुम्हें मारनेसे हमको पाप नहीं पड़ता।’ इसके पीछे दशक मन्त्रक एवं उदर व्यतीत गरीरके प्रत्येक भागका पश्चि-मांस छोड़ा अवशिष्टांग दूसरे दिन जला देते। पिता पर एक मेघका वलि चढ़ाते थे। पिताका भय समस्त क्षेत्रपर छोड़ा जाता। उससे धान्यागार और गृहका मध्यभाग भीपते-पोतते। वलिके पिता या संप्रदायकारको एक साँठ उपहार मिलाता था। फिर दूसरे साँठको मार सब लोग महा आनन्दसे खाते। भोजके पीछे उत्सव शेष होता था। एक बत्सर बाद उसी दिन तारा-देवके चरेश्यसे एक गुरूवलि देते।

त्रिही किसी जिलेमें वलिकी जीत-जी जला

हासते। लोगोंमें प्रवाद था—वलिको पाँखसे जितना जल पड़ेगा, पृथिवीपर सुदृष्टिका शेष भी उतना ही बड़ेगा। चेसादेनेडी नामक स्थानपर वलिकी खोंष पर्वमस कन्ध चोत्कार करते करते पश्चिमे मांस छोड़ा ग्रन्थमें मिला देते। इसके सम्भवतः ग्रन्थमें कौड़ा लगता न था। मार्ग प्राक्तमें (बौद और पटनेके बीच) वलि चढ़नेके दिन कन्ध हाथमें धातुनिर्मित बड़े बड़े वलय पहनते। उन्हीं वलयोंसे सब लोग वलिके मस्तक पर आघात लगाते थे। उससे भी नृत्य न बानेपर वंगलण्डसे श्वास-रोक वलिकी मार डालते थे। पीछे प्रत्येक घाड़ा घोड़ा मांस से अपने अपने क्षेत्रमें वा नदी किनारे खूँटे पर लटकाते। अवशिष्ट पंथ भूमिमें गाड़ा जाता। फिर प्रति बत्सर वलिके पात्रका आच होता था।

साधारणतः कर्मोंके नियमानुसार वलिका मांस गाढ़नेसे क्षेत्रका दोष नष्ट होता है। ताराके उदा-सक किसी ग्राममें भेरिया उत्सव होनेका संवाद सुन ५-१० कोष दूर रहते भी डाक लगा वलिका मांस अपने ग्राम पहुँचाते थे। वलि चढ़नेके दिन ही ग्राममें मांस का जानेसे विवेक उपकार माना जाता।

जयपुर नामक स्थानमें भी पहले मानिकसोरा नामक गुरु-देवताकी वलि चढ़ता था। कड़ी सनड़ीका ६ फीट जंघा खूँटा गाढ़ पास हो एक अवस्थित नाका बनाते। वलिका मस्तक मुँदाया जाता न था। सन्ने सन्ने बाल खूँटेसे इस प्रकार बाँधते, जिससे सुष्ठ कटते ही निष्पुण्ड उठी नालेमें जा गिरे। फिर वलिके दक्षिण पात्रमें खड़े हो पुरोहित युद्धके लय-साम और रात्रा तथा कर्मचारो-गणके अस्त्राचार-निवारणकी प्रार्थना करते थे। एक एक प्रार्थना शेष होते एक एक आघात लगाते, पहले ही आघातनें सुष्ठ काट न डालते। प्रार्थना शेष होते भी वलि मरता न था। पन्तकी सब लोग उसके जानमें लग लड़ देते—‘पात्र पापका क्षमा माग्य है। मानिकसोरा देवता हमारे सामने पापको

पन्तगत एक ती० । प्रमासखण्डके किसी-किसी पुस्तकमें यह कर्पकुल नामसे उक्त है। कर्पकुल देखो।  
कन्यना (बै० स्त्री०) कन्या-माघटे, कन्या-पिच भावे  
उच। कन्या, धैटी, सड़की।

कन्यसा (बै० स्त्री०) कन्यं कमनीयतां भाति गृह्णाति,  
कन्या सा-का-टाप्। कन्या, धैटी, सड़की।

कन्यस (सं० पु०) कन्यत्वेन सीयते भवसीयते, कन्य-  
सी घञर्थे क। १ कनिष्ठ भ्राता, छोटा भाई।

“शमस कन्यो धाता सुनिवा येन सुचक्राः” (शमस ३।१५।८)

(त्रि०) २ अधम, कमीना। १ पद्म क्षिपरिभाष,  
पांशुरभर।

कन्यसा (सं० स्त्री०) कन्यस-टाप्। १ कनिष्ठा-  
भगिनो, छोटी बहन। २ कनिष्ठाङ्गुलि, सघसी छोटी  
उंगली।

कन्यसो (सं० स्त्री०) कन्यस-ङीप्। कनिष्ठा भगिनो,  
छोटी बहन।

“वनिनिर्गम्यं माना तु रोहिण्याः कन्यो सभा।”

(भारत, वन १५।८।१)

कन्या (सं० स्त्री०) कन्य-यक-टाप्। अग्रपदवच। ७५  
भा०। १ दशमवर्षीया कुमारी, दश वर्षकी सड़की।  
२ अविवाहिता स्त्री, ब्रह्मचारी औरत। भारतमें भी  
कन्या शब्दका ऐसा ही अर्थ लगाया है,—“सकलकी  
कामना कर सकनेसे अविवाहिता स्त्रीको कन्या कहते  
हैं।” तन्मने नवकन्याका प्राधान्य वर्णित है—

“नटी कामाक्षी वैया रजकी नापिताम्ना।

प्राज्ञो यदकन्या न तदा गीतपञ्चकः।

शाकाकारस्य कन्या न नवकन्या प्रकीर्तिताः ॥”

(गुणवाचनस्य १५ पटल)

नटी, कामाक्षीकी, वैश्या, रजकी (धोवन),  
नापितिनी, प्राज्ञपौ, गृह्य, गोपी (श्वानिनी)  
और माताकारकी कन्या नवकन्या नामसे प्रसिद्ध  
हैं। तन्मने मतसे यह कुसाङ्गना होती हैं।  
१ स्त्रीमात्र, कोई औरत। ४ घतकुमारी, घोकुवार।  
५ स्वसहा, बड़ी इनायची। ६ वाराही नाम महा-  
कन्दगाक, सुर्यि-कुहड़ा। ७ वन्याककौटकी, मुस-  
खर। ८ महोपधिविशेष, एक लड़ी-बूटो। सुद्युत

कहते—कन्यामें मयूरके पंखकी भांति बारह मनो-  
पत्र संगते हैं। और स्वर्णवर्ण निकलता है। कन्दमें  
इसकी उत्पत्ति है। ८ नारीयाक। १० मन्दा,  
गोदा। ११ कन्दगृह्यो, एक गुर्वा। १२ निपादि  
हादम रागिके पन्तगत पठ रागि। उत्तरकम्पुनीके  
श्रेय तीन पाद, हस्ताके सम्पूर्ण पाद और विना  
नचत्रके प्रथम एवं द्वितीय पादपर इस रागिको च-  
रित्यति रहते है। इसकी पधित्ताष्टदेवता जनके मन्त्र  
नौकाहुटा और मन्त्र एवं यमिन्धारिणो हैं। कन्याका  
अपर नाम पाण्ड्य है। मताम्नामें इसकी शोयोदया,  
दिग्वक्त्रा, पिङ्गलवर्णा, दक्षिणदिक्कामिनो, वायु-  
प्रकृति, शीतलस्वभावा, शुद्धभूमिधारिणी, वैद्यवर्णा,  
रुपा, श्यामी, खट्खट्हा, अल्पमस्ताना और अल्प-  
पुंसङ्गा कहते हैं। इस रागिमें जन्म लेनेसे मनुष्य  
वेदशास्त्रमें अद्यायान्, यथास्थानके कोषपर भी अनु-  
तापकारी, पक्षीके प्रति सर्वदा विरस, नाना शास्त्र-  
विशारद, सर्वाङ्गसुन्दर, सौभाग्यशाली और सुरतमिय  
होता है।

१३ सुता, धैटी। विवाह व्यतीत कन्याके अन्य  
संस्कारकालकी हवि-आवका निषेध है। इसका  
नामकरण, प्रसमागन एवं चूड़ाकरण कायें दिना मन्त्र  
निष्पादन करना चाहिये। निष्क्रामण संस्कार  
एकवारगी ही निषिद्ध है।

१४ तीर्थयात्रा। इस तीर्थमें स्नान करनेसे सहस्र  
गोदानका फल मिलता है।

“तदा मन्वेत धर्मं कन्योऽपि ननु सन्।

कन्योऽपि ननु सन् कन्योऽपि ननु सन् ॥” (भारत १।८।१०४)

१५ चतुरधारी कन्दविशेष। इस कन्दमें ग  
(एक गुरुवर्ष) और म (तीन गुरुवर्ष) अर्थात् चार  
गुरुवर्ष हो रहते हैं। “नोवेत् कन्या।” (अपरकाशर)  
कन्याका (सं० स्त्री०) कन्येय, कन्या स्वार्थे कन् प्रभु-  
पुंस्त्वान् न ङस्त्वः। १ कन्या, धैटी। २ कुमारी,  
सड़की।

कन्याकाल (सं० पु०) कन्यायाः कालः, ६-मत्।  
अविवाहिता रहनेके नियमका समय, शादी न  
होनेका काल। यह दशम वर्ष पर्यन्त रहता है।

कन्याकुल (सं० पु०) कन्याः कुलाय, बहुव्री० ।

१ कन्याकुल देश, कनौजियोंके रहनेका मुक्त ।  
२ कनौज नगर । यह फर्रुखाबाद जिलेमें कानो नदीके तटपर अवस्थित है । प्राचीनत्वमें अयोध्यासे कन्याकुल द्वितीय समझा जाता है । अपने कानूक अमिलापके पूर्ण किये न जानेपर वायुने इस नगरके राजा कुशनाभको सौ कन्याओंको कुल बना दिया था । धर्मशास्त्रमें वर्तमान सन्त नगरसे भी अधिक स्थान देख पड़ता है । कनौज और कानूक देखो ।

कन्याकुलदेश (सं० पु०) कन्याकुल नगरको चारो ओरका प्रान्त, कनौज गहरके इर्द-गिर्दका मुक्त ।  
कन्याकुलमारी (सं० स्त्री०) १ दुर्गा देशो । २ चम्प-रीपविशेष, एक रास । यह भारतके दक्षिण रामे-श्वरके निकट अवस्थित है । रामेश्वर देखो ।

कन्याकूप (सं० पु०) तीर्थविशेष । (भारत, चतु० ११० १०)  
कन्यागत (सं० वि०) १ कुमारोत्सवश्रौच, लड़कीसे ताबूत रखनेवाला । २ कनागत, कन्यारागिपर पहुँचा हुआ ।

कन्यागर्भ (सं० पु०) कन्यायाः गर्भः, इ-तत् । अ-विवाहिता स्त्रीका गर्भ, कारो लड़कीका एमल ।

कन्यागिरि—सम्प्राज-प्रान्तके नेतूर जिलेको एक तह-सोत । इसका क्षेत्रफल ७२१ वर्ग मील है । कन्या-गिरि पचा० १५° १' से १५° १२' उ० और देगा० ७८° ८' से ७८° ४४' पू०के मध्य अवस्थित है । इसमें फोजदारी पादागत और थाना मौजूद है ।

प्रधान नगरका नाम भी कन्यागिरि ही है । यह नगर पचा० १५° ११' उ० और देगा० ७८° १२' पू०पर अवस्थित है । ई०के १०म शताब्द मजपति-वर्गशय काकतीय वंशदेवके पुत्रने इसे बसाया था । ई०के १४वें शताब्द क्षत्रियरायने इसको शासकमण किया । पहली यहाँ अच्छे-बच्छे भवन बने थे । किन्तु हैदर-अलीने उन सबको ध्वंस कर डाला । मोरुसंख्या प्रायः १००० है । अधिकांश हिन्दू देख पड़ते हैं ।

कन्यापक्ष (सं० स्त्री०) कन्याया पक्षम्, इ-तत् । विवाह, शादी ।

कन्याट (सं० पु०) कन्या अटति पठ, कना-पट-

चाधारे घञ् । १ चाभ्यस्तर गृह, लुनानखाना ।

२ लम्पट, लड़कियोंके पीछे-पीछे फिरनेवाला ।

कन्यात्व (सं० स्त्री०) कन्याया भावः, कन्या-त्व । तत्त्व भावराज्यो । शाश्वत । कन्याका भाव, विकास्त । कन्यादाता (सं० पु०) कन्यादान करनेवाला, जो मेटो व्याह देता हो ।

कन्यादान (सं० स्त्री०) कन्याया दानं वराय सम्प-दानम् । पादके इन्द्र कन्याका सम्पदान, लड़कोको शादी करनेका काम । अग्निपुराण कन्यादानके फल-फलपर इस प्रकार लिखता—जो व्यक्ति विवाहकाल आनेमें उद्युक्त वरकी पत्नीद्वारा कन्या प्रदान करता, उसे गतयज्ञका फल मिलता है । विद्विषतामह कन्यादानकी कथा सुननेपर सब पापमें कष्ट मग्न होकर पड़ते हैं ।

ब्राह्मविवाह द्वारा कन्या देनेपर समुण्य ब्रह्मादि देव कर्टक पूजित हो ब्रह्मगोश जाता है । फिर दिव्य विवाहसे कन्या सम्पदान करनेपर स्वर्गकोशका द्वार भेद स्वर्ग पहुँचते हैं ।

गान्धर्व विवाहमें कन्या देनेपर गन्धर्वलोक जा देवताकी भांति चिरदिन लौड़ा करते हैं । जो व्यक्ति शक्तसह कन्या देता, वह अनन्तकाल किशोरों और गन्धर्वोंके साथ लौड़ा करनेका आनन्द लेता है ।

ब्राह्मविवाहमें कन्या देनेसे वरके गृह भोजन करना निषिद्ध है । जो मोहवशतः मोघन करता, उसे वरक लाना पड़ता है । फिर भी दोषिद्रको उत्तुंगति होनेपर शान्ति-पीनेमें कोई निषेध नहीं । वन्या कन्याके गृह चिरदिन भाजन करना न चाहिये ।

कन्यादूषक (सं० पु०) अविवाहिता बालिकाको बिगाड़नेवाला, या वैशाखी लड़कीको खराब करता हो ।

कन्यादूषण (सं० स्त्री०) कन्याया दूषणम्, इ-तत् । अविवाहिता बालिकाका अभिगार, वैशाखी-लड़कीका बिगाड़ ।

कन्यादोष (सं० पु०) बुराई देखो ।

कन्याधन (सं० स्त्री०) कन्याकासे सम्पत्ति, सम्प-पदश्री० । अविवाहितापक्षाका स्त्रीधन, लड़कीकी

दीप्तः । अधिकारिणीके मरनेपर भाई इस धनको पाते हैं ।

कन्यान्तःपुर ( सं० स्त्री० ) कन्याया अन्तःपुरम्, ६-तत् ।  
कन्याका वासस्थान, बेटीके रहनेकी जगह ।

“कन्यान्तःपुरोच्यते यदधिकाराय दीपयन् ।” ( देवध ४ )

कन्यापति ( सं० पु० ) कन्यायाः पतिः, ६-तत् । जामाता,  
दामाद, लड़कीका शोहर ।

कन्यापाल ( सं० पु० ) कन्याप्रधानः पालः, मध्य-  
पदस्रो० । १ गृहजातिविशेष । पाल दीखो । २ कन्याका  
पति, बेटीका शोहर । ३ कन्याका पिता, लड़कीका  
बाप । ४ अविवाहिता बालिका देखनेवाला, जो  
बेव्याही लड़कियाँ फुरोखत करता हो । ( त्रि० )  
५ कन्याका प्रतिपालक, लड़कीकी परवरिश  
करनेवाला ।

कन्यापुत्र ( सं० पु० ) कन्यायाः पुत्रः, ६-तत् । १ कन्याका  
पुत्र, दौहित्र, नाती, पोता, बेटीका बेटा । २ अविवा-  
हिता स्त्रीका पुत्र, बेव्याही धीरतका लड़का ।

कन्यापुर ( सं० स्त्री० ) कन्यायाः पुरम्, ६-तत् । कन्याका  
घर, बेटीका मकान् ।

कन्याप्रदान ( सं० स्त्री० ) कन्यायाः प्रदानं वराय सम्पू-  
दानम् । कन्यादान, बेटीका विवाह ।

कन्याभर्ता ( सं० पु० ) कन्याभिः प्रार्थनीयो भर्ता,  
मध्यपदस्रो० । १ कार्तिकेय । प्रतिग्रय रूपवान् रहनेसे  
कन्यामात्र कार्तिकेयकी भांति पतिकामना करती हैं ।  
२ जामाता, दामाद, लड़कीका शोहर ।

कन्याभाव ( सं० पु० ) कन्याया भावः, ६-तत् । कन्यात्व,  
कन्यावस्था, वजारत ।

कन्यामय ( सं० त्रि० ) कन्या-मयट् । १ कन्यास्वरूप,  
लड़की-जैसा । २ कन्याविशिष्ट, लड़कियाँसे भरा पूरा ।  
कन्यारत्न ( सं० स्त्री० ) कन्यारत्नमिव, उपमि० । जेठ  
कन्या, असाधारण रूप या गुणवती कन्या, अच्छी  
लड़की ।

कन्याराम ( सं० पु० ) बुद्धविशेष ।

कन्याराशि ( सं० पु० ) कन्यास्थः राशिः, कर्मधा० ।  
राशिविशेष, बुद्ध-सुखमा । अन्ता दीखो ।

कन्याराशेय ( सं० त्रि० ) कन्या राशेरिदम्, कन्या-

राशि-क । कन्याराशि-सम्बन्धीय, बुद्ध-सुखमाके  
सुताधिक ।

कन्यारामी ( हिं० वि० ) १ अन्तर्के समय कन्याराशिमें  
चन्द्रमा रखनेवाला, जिसके पैदा होने बाद बुद्ध-  
सुखमामें रहें । २ निर्दल, कमजोर । ३ छुट्ट, छोटा ।  
४ नपुंसक, नामदं ।

कन्यालीक ( सं० पु० ) कन्याके विवाह सम्बन्धमें गृहा-  
वाद, लड़कीकी शादीके लिये झूठी बात । यह मत  
जैन स्वीकार करते हैं ।

कन्यावेदी ( सं० पु० ) कन्यां दुहितरं पाविन्दति,  
कन्या-पा-विद्-पिनि । जामाता, दामाद ।

कन्याशुल्ल ( सं० स्त्री० ) कन्यायाः शुल्लम्, ६-तत् ।  
कन्याका मूख, लड़कीका दाम । विवाहके समय वरसे  
कन्याका पिता जो धन पाता, वही कन्याशुल्ल कहाता  
है । किन्तु भारतके सुसभ्य लोगोंमें यह प्रथा निन्द्य है ।

कन्यायम ( सं० स्त्री० ) तीर्थविशेष । इस तीर्थमें  
संयत हो ब्रह्मचर्य-निष्ठासे त्रिरात्र उपवास करनेपर  
मनुष्य शत कन्या पाता और पन्तकी खर्च जाता है ।

“ततः कन्यायमं यच्छेत् न नियतो ब्रह्मचर्यवान् ।

विराजोपविती रात्रन् नित्यतो नियतात्मनः ।

कनेत् कन्यायमे दिव्यं स्वर्गलोकं यच्छति॥” (भारत, ३१ पृ० ५०)

कन्यासंवेद्य ( सं० स्त्री० ) तीर्थविशेष । इस तीर्थमें  
नियमानुसार नियताशन होनेसे ब्रह्मलोक मिलता  
और कन्यार्थ अणु-परिमित भी दान करनेसे द्रव्य  
पचय रहता है ।

“कन्यासंवेद्यमाहाय नियतो नियतात्मनः ।

मनोः ब्रह्मचर्योर्भावाज्जातिर्युवचर्यम् ॥

कन्यासं वेत्तु यच्छेत्तु दिव्यं स्वर्गलोकं यच्छति॥” (भारत)

नदचयमिति प्राकृतं चरः “दिव्यमा ॥” (भारत)

कन्यासमुहव ( सं० पु० ) अविवाहिता स्त्रीका पुत्र,  
बेव्याही धीरतका बेटा ।

कन्यासम्पदान ( सं० स्त्री० ) कन्यायाः सम्पदानम्,  
६-तत् । कन्यादान । कन्यादान दीखो ।

कन्यास्वयम्बर ( सं० स्त्री० ) कन्याया स्वयं विद्यते यत्न,  
कन्या-स्वयं-भू-स्व । कन्याकण्ठ के कण्ठ परतिग्रहण, जिस  
शादीमें लड़की खुद अपना शोहर चुनें ।

कन्याहरण ( सं० स्त्री० ) कन्याको निकाल ले जानेका कार्य, लहक्री ले भागनेका काम ।

कन्याहट ( सं० पु० ) तीर्थविशेष । इस तीर्थमें वास करनेसे देवकीक जाते हैं ।

कन्यिका ( सं० स्त्री० ) कनया एव, कनया स्त्रायें कन-टाप् भत इत्वम् । कनया, वीव्याही लड़की ।

कन्युप ( सं० स्त्री० ) कन-इन्, कनया कान्ता श्रौयति इव, उप-क । १ हस्तपुच्छ, कनारैकी नीचेका हाथ । २ वन्याकर्कोटीकीफल, बाँध खेखसा ।

कनड़ी ( हिं० ) कर्णाटी देशी ।

कन्दाई ( हिं० पु० ) छप्प, कन्हाय ।

कन्दावर, कंधावर देशी ।

कन्हाया ( हिं० पु० ) १ श्रीकृष्ण, कन्दाई । २ प्रिय व्यक्ति, प्यारा शख्स । ३ सुन्दर बालक, खूबचूरत लड़का । ४ हृत्विशेष, एक पेड़ । यह एक पार्वत्य वृक्ष है । पूर्वहिमालय पर्वतपर ८००० फीट ऊँचे कन्हाया उत्पन्न होता है । काष्ठ भलि सुदृढ़ निकलता है । ५ वसपर रक्त वा हरिद्वर्ण रेशायें रहती हैं । बाधाममें कन्हायेका काष्ठ नौका बनानेमें लगता है । उसके चायके सन्दूक भी तैयार होते हैं । कभी कभी वह गृहके निर्माण कार्यमें लग जाता है ।

कप ( सं० पु० ) कानि जलानि पाति, क-पा-क । १ वक्षदेव । २ एक असुर । ( भागव, अ० ११० च० ) ( त्रि० ) ३ जनपायी, पानी पीनेवाला ।

कप ( सं० पु० = Cup ) १ पात्र, प्याला, कटोरा । २ सिद्धी, खप्पर ।

कपट ( सं० पु०-स्त्री० ) कप्-षटन्, कं सत्त्वं ब्रह्माय-मपि पठति वाचादयति, क-षट्-षच् वा । १ मिथ्या-व्यवहार, धोका, फरेव । इसका संस्कृत पर्याय—व्याज, दण्ड, उपधि, हस्त, खेत्य, झूट, कल्ल, छल, मिय, कौरव, व्यपदेश, मछ, निम, माया, गठता, ग्राह्य, कुपति और मिथति है । २ दनुपुत्र, कोई दानव । ३ भीड़ादेवदाह ।

कपटधारी ( सं० त्रि० ) कपट-धर-णिनि । प्रवचन, फरेबी, धोकेवाज ।

कपटकीड़ा ( सं० स्त्री० ) कीड़ा नामक देवदाह ।

कपटता ( सं० स्त्री० ) कपटस्थ भावः, कपट-तस-टाप् । कपटका भाव, कापव्य, धोकेवाजी ।

कपटतापस ( सं० पु० ) कपटन तापसः । हनपूर्वक तपस्वी बननेवाला व्यक्ति, जो शख्स धोका देनेको फकीर बना हो ।

कपटधारी ( सं० त्रि० ) कपटं धारयति, कपट-ध-णिनि । कपटयुक्त, धोकेवाज ।

कपटना ( हिं० क्लि० ) १ शिरःहिन करना, तोड़ना, नोचना । २ घृयक करना, असंग निकाल रखना ।

कपटपटु ( सं० त्रि० ) कपटे पटुः, क-तत् । १ प्रतारणा करनेमें निपुण, जो धोका देनेमें छोगियार हो । २ इन्द्रजालकारी, बाज़ीगर ।

कपटप्रवच ( सं० पु० ) छल, फरेव, धोकेकी बात ।

कपटलेख्य ( सं० स्त्री० ) चमृत पत्र, झूठी दस्तावेज, बनाया हुआ कागज ।

कपटवचन ( सं० स्त्री० ) कपटमूर्चं वचनम् । प्रतारणा-वाक्य, धोकेकी बात ।

कपटवेग ( सं० त्रि० ) कपटो वेगो यस्य, बहुव्री० । १ छद्मवेगो, शक्त बनाये हुआ, जो रूप बदले हो । ( पु० ) २ छद्मवेग, तनवीस-निवास ।

कपटवेगी ( सं० त्रि० ) कपटवेगोऽस्यास्ति, कपटवेग-इनि । छद्मवेगी, शक्त बनाये हुआ, जो रूप बदलता हो ।

कपटा ( सं० स्त्री० ) डसलहती, छोटी कटाई ।

कपटा ( हिं० पु० ) छमिविशेष, एक कीड़ा । यह कीड़ा धानके पौदोंको कपटता है ।

कपटिक ( सं० त्रि० ) कपटः विद्यते इय, कपट सत्वये ठन् । कपटविगिट, फरेबी, धोकेवाज ।

कपटिनी ( सं० स्त्री० ) कपटोऽस्यास्ति, कपट-इनि गौरादित्वात् ङोप् । कीड़ा नामक गन्धद्रव्य वा देवदाह ।

कपटो ( सं० त्रि० ) कपटोऽस्यास्ति, कपट-इनि । १ प्रतारक, वचक, दगाबाज, फरेबी । ( स्त्री० ) कप्-षटन्-ङोष् । २ परिमाचविशेष, एक नाय । इसमें दो पञ्चलि परिमित द्रव्य पाता है ।

कपटो ( हिं० स्त्री० ) १ छमिविशेष, एक कीड़ा । यह धानके पौदोंको कपटती है । २ छमिमेदः



कोड़ी कीड़ा। यह तम्राक्षी, घोंदोको खाकर मरती है।

कपटेश्वर—काश्मीरस्थ जलपटविशेष। इस स्थानमें पापघटन नाग रहते थे। राजतरङ्गिणी-वर्णित यहो पापघटनतीर्थ है। (राजतरङ्गिणी २११२) यह स्थान कोटहार परगनेके चन्तर्गत इसनामाबादसे दूर नहीं। कपटेश्वरी (सं० स्त्री०), कमिव शब्दः पटः वसनं तत्तुल्यं फलं इष्टे, कपट-ईश-क्षण-कोटि। १ श्वेत-कपटफारी, सफेद कटाई। २ कृष्णकृतो, कौटो कटाई।

कपड़कोट (हिं० पु०) शिविर, स्त्रीमा, डेरा, कपड़ेका किता।

कपड़गन्ध (हिं० स्त्री०) वस्त्रका गन्ध, कपड़ेके लकनकी वस्तु।

कपड़छान (हिं० पु०) वस्त्रसे किसी चूर्णकी छानाई, कपड़ेसे पिछी बुकनी छाननेका काम।

कपड़हार (हिं० पु०) वस्त्रका भाण्डार, कपड़ा रखनेकी जगह।

कपड़धूलि (हिं० स्त्री०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह रंगमत्त वनती और भारीक रहती है। इसे कपड़ भी कहते हैं।

कपड़मिटो (हिं० स्त्री०) कपड़ोटो, किसी द्रव्यको कपड़े और गोलो मटोमें लपेट फूँकनेका काम।

कपड़विदार (हिं० पु०) १ दरजी, कपड़ेको काटने-वाला। २ रफूगर, फटे कपड़ेको धागेसे भर देनेवाला।

कपड़ा (हिं० पु०) १ वस्त्र, पट, आच्छादन। यह रुई, जल, रेशम या सनके धागेसे बनता है। २ पोशाक, पहननेका पड़ा।

कपड़ोटो, कपड़मिटो स्त्री०।

कपन (सं० पु०) कप-ण्यु। १ कम्पन, कंपकंपी।

२ गुणादि कीट, घुन गगैरह कीड़ा।

कपना (वे० स्त्री०) कीट, कीड़ा।

कपरिया (हिं० पु०) भोजजातिविशेष, एक कमीना फूल। कपरी स्त्री०।

कपरीटी, कपरी स्त्री०।

कपट (सं० पु०) धर्मे पूरने भावे शिप वनापः इति परं पूर्ति, कस्य गङ्गाजलस्य परा पूरयेन दापयति शुद्धि, क-पट-टोप-क। रणु भोवः। का ११११। १ शिव-जटा। २ कौटो। कपटेश्वरी स्त्री०।

कपटक (सं० पु०) कपट-कन्। १ घराटक, कौटो। इसे हिन्दी तथा गुजरातीमें कौटो, बंगलामें कडि, तामिलमें कपदि, तेलुगुमें गवस, सिंधीमें पिहो, मलयालमें वेवा, फारसीमें खरमोहरा, पारसीमें बुदा, अंगरेजीमें कौरो (Cowrie), फरासीसीमें कोरिस वा बोगेस (Coris, Cauris or Bouges), पोल्यान्ड्रीमें कौरिस, स्लावोनकुलिस (Kauris, Slaugenhooftges), रोमकमें कोरी वा पोर्सेलैड (Cori, Porcellene) जर्मनमें कौरिस (Kauris), स्पेनिशमें सिक्वे-या बुसियोस (Siqueyes, Bucios), पोर्तुगीजमें बुमियोस वा जिम्बोस (Zimbos), देनिय, सुरस और रुसीमें कौरिस (Kauris) कहते हैं।

कपटक सामुद्रिक जीव है। यह पृथिवीकी नाना स्थानोंमें नानाप्रकार देख पड़ता है। किन्तु सबल ही एक जातीय है। कौटोका वैज्ञानिक अंगरेजी नाम साइप्रिडो (Cyprææ) है।

यह जीव एकसङ्गी पर्याप्त चपले ही सङ्क्रमसे खानानात्पादन करनेवाले हैं। इनमें जोषुदपकी भांति कोई विभिन्नता नहीं होती। कौटियोंका मत्वा स्वतन्त्र भावसे बाहर रहता है। उसीके साथ दोनों पाशोंपर दो कोणाकार रेखायुक्त स्थान होते हैं। वह स्थान और त्रिषेन्द्रियका कार्य करते हैं। फिर उसीके बाहर दोनों पाशोंपर दो पति सुदृ चक्ष रहते हैं।

कपटककी तीन अवस्था होती हैं। प्रथम वा वाह्यावस्थामें वहिरावरण खच्छ, पिङ्गलवर्ण और पतिसूक्ष्म देख पड़ता है। आवरणपर तीन लम्बी रेखायें खिंची रहती हैं। द्वितीय वा शोबनावस्थामें यह कितना हो स्वाभाविक प्रकार पाता है। उसी समय कपटकका वहिरोट मोटा पड़ता, किन्तु वहिरावरण फिर भी वेषा कठिन नहीं लगता। तृतीय वा पूर्वावस्थामें इसका वहिरावरण

पत्यस्त कठिन हो जाता है। भावरणपर कोटे-कोटे विन्दु देखनेमें आते हैं। येथीके अनुसार वर्ष भी परिस्पष्ट होता है।

राजनिघण्टुके मतसे कपर्दक पांच प्रकारका है। १—छीनेकी भांति घमकनेवाला कपर्दक सिंही कहाता है। २—घस्रवर्ण कपर्दकका नाम व्याघ्री है। ३—उपरिभागमें पीत और निम्नभागमें श्वेतवर्ण कपर्दक गृमी है। ४—केवल श्वेतवर्ण कपर्दक हंसो कहा जाता है। ५—पक्षिक बड़े न होनेवाले कपर्दकको विटण्डा कहते हैं।

पायात्य तत्त्वविदोंके मतसे कपर्दक तीन प्रधान त्रिणियोंमें विभक्त है। प्रथम—जिस त्रिणीके कपर्दकका वहिरावरण अति मृदुल और मेरुदण्ड (Columella) पत्यस्त विस्तृत रहता, उसका नाम साइप्रिया (Cypraea) पड़ता है। इस त्रिणीमें अनेकप्रकार कपर्दक होते हैं। इनमें १ गोल कपर्दक (Cypraea mappia), २ गन्धमुखी (C. Talpa), ३ भ्रूजक (C. Cicercula), ४ बालक (C. Childreni) प्रकृति साइप्रियाके ही अन्तर्गत हैं।

गोल कपर्दक भारत-महाभागमें मिलता है। इसमें कोई गुलाबी, कोई काला और कोई गारफो रङ्गका होता है। भरिचगरमें एकप्रकार चूगकी भांति वर्षाविशिष्ट कपर्दक देख पड़ता, जो अति सुन्दर लगता है। गन्धमुखी कपर्दकका गठन कितना ही बकुंदरशी भांति रहता है। मध्यके दन्त कटे या फासे होते हैं।

द्वितीय त्रिणीके कपर्दकको आरिसया (Aricia) कहते हैं। इस देगमें जो कौड़ी बाजार या दुकानपर श्यादिके मूल्यस्वरूपसे चलती, वह इसी त्रिणीके अन्तर्गत पड़ती है। चंगरेजी वैज्ञानिक नाम साइप्रिया मोनेटा (Cypraea moneta) है। यह कपर्दक अति पूर्वकालसे इस देगमें सामान्य मुद्राके बदले चल रहा है। २० गण्डा कौड़ीका एक पैसा होता है। इस समयकी अपेक्षा पहले कौड़ीका बड़ा आदर और अधिक मूल्य था।

भाष्यराचार्यने लिखा है—

“राष्ट्राणां दमकवर्धयन् मा काचित्पौ ताव दमकवर्धयः।

नै चोद्यम इत्य इहावगम्यो दमकवर्धयः चोद्यमिह निष्ठाः॥”

(कोशमयी)

२० कौड़ीमें १ काकिणी, ४ काकिणीमें १ पण, १६ पणमें १ द्रुम्य और १६ द्रुम्यमें एक निष्क गनते हैं। रघुनन्दनके प्रायश्चित्ततत्त्वमें भी ८० कौड़ीका १ पण कहा है—

“अथोत्तिमिर्ब्राह्मणः पण इत्यभिधीयते।

तैः शोधयेत् पुराणं व्याकरणं वनमिश्रं नै॥”

पहले दक्षिणामें कपर्दक दिया जाता था। यद्धि-तत्त्वमें लिखा है—

“इत्यनयोर्विषं दासं इतो वनमिश्रश्चिपः।

तस्मान् पणं काचित्पौ नैः कर्षं रुपमवादि वा।

यदप्याय दक्षिणां यन्ते तथा स चक्षुषो भवेत्॥”

पहले भफरीकामें भी कौड़ी मुद्रारूपसे चलती थी। आजकल कौड़ी क्रमशः सस्ती पड़ने लगी है। १८४० ई०को एक रुपयमें २४००० से अधिक कौड़ियां मिलती न थीं। किन्तु आजकल एक रुपयमें प्रायः ६००० कौड़ियां आती हैं।

तृतीय त्रिणीके कपर्दकका नाम नेरिया (Naria) है। इस त्रिणीके कौड़ीका गिरोदण्ड सूक्ष्म, दन्त तीक्ष्ण और वहिरावरण अति विज्ञय होता है। फिर इस त्रिणीमें भागा भाकारके कपर्दक देख पड़ते हैं। इनमें पण्डे लैमी कौड़ी ही ज्यादा बड़ी होती है। मुलाकी भांति छोटी छोटी कौड़ी भी इसी त्रिणीके अन्तर्गत है।

चीनदेश और आस्ट्रियात्मिक सामरमें लम्बी लम्बी कौड़ियां होती हैं। यहां लोग देखने पर उन्हें कौड़ी समी कह नहीं सकते। इस कपर्दक छदेरेको बांगुरी-जेमा मगता है।

धेदकके मतमें कपर्दक कटु, तिक्त, उष्ण और कर्षमुल, वष, गुस्म, मूल एवं नेत्रदोषनाशक है।

(राजनिघण्टु)

२ महादेवकी कृपा।

कपर्दकरस (४० पु०) रसविषय चिकित्साका एक रस। कार्पास-पुष्पके रससे एक दिन मर्दित-मूर्च्छित २ तोले पारद कौड़ियों भर मुचकी दण्ड कर दे।

“पुरोडाशकपालेन तुपातुपवपति ।”  
पुरोडाशकपाल द्वारा तुप परित्याग करना चाहिये ।

इन दोनों नृतियोंमें संगम्य उठता—पुरोडाशकपाल एवं तुपपरित्याग दोनों कपालके प्रयोजक हैं अथवा केवल पुरोडाशकपाल । इस संगम्यसे तो दोनों ही कपालके प्रयोजक होते हैं । क्योंकि एकका प्रयोजकत्व ठहरानेमें कोई विशेष हेतु देख नहीं पड़ता । इसी पूर्वपक्षका सिद्धान्त करते हैं—

“अर्धभिधानं च भविष्यत्वाद्येव तद्विहितत्वात्तदर्थे हि विभो-  
यते ।” (भौमसाधुः ३।१।१६)

‘अर्धभिधानं’ प्रयोजनसम्बन्धभिधानं तस्य यथा पुरोडाशकपालं इति, पुरोडाशार्थं कपालं पुरोडाशकपालम् । कथमेतदवयवम् ? पुरोडाश-  
कारणं तद्विन् कार्यं भाति । येन वतमानः सम्बन्धः कपालेन स्यात्, तेनैव हेतुना ॥ मूलः, स एव कपालपर पुरोडाशेन भविष्यता सम्बन्धः, भविष्यता सम्बन्ध तद्विहिततया भवति । तस्मात् पुरोडाशेन प्रयुक्तं यत् कपालं तेन तुपा उच्यतेत्याह—इति एवञ्च सति चरौ पुरोडाशालाघे यदा तुपातुपवपत्तुं कपालमुपाहोयति न तत् पुरोडाशकपालं स्यात्, न चैत्, न तेन तुपा उच्यतेत्याह । तस्मात् न तुपोपवापः कपालानां प्रयोजकः प्रयोजकत्वं नृपमं इति’

“पुरोडाशकपालेन तुपातुपवपति” नृति वाक्यमें जो पुरोडाशके कपालका अभिधान बना, वह प्रयोजन-  
विगित पुरोडाश ही प्रयोजन ठना है । जिस समय तुप परित्याग किया जाता, उसी समय पुरोडाश निकल नहीं जाता । फिर उससे पूर्व भी पुरोडाश कदा हुआ था । किन्तु पीछे पुरोडाश होगा । अतएव भाषी पुरोडाशके साथ कपालका सम्बन्ध इस नृतिसे मानना पड़ेगा । भविष्यत् वस्तुका सम्बन्ध उसी वस्तुके निमित्त रहता है । (पुरोडाशरूप भविष्यत् वस्तुका सम्बन्ध वर्तमान कपालमें होता है) पुरोडाश-  
कपाल शब्दका अर्थ पुरोडाशके लिये जानीत कपाल है । सुतरां शब्द द्वारा ही समझ पड़ता—पुरोडाश कपालका प्रयोजक लगता है, तुपपरित्याग कपालका प्रयोजक नहीं ठहरता । मौमांसादर्शनके मतसे जिस कार्यके लिये जो उपादान किया जाता, वही कार्य उसका प्रयोजक कहाता है । इस स्थलमें पालके लिये उपादान होनेसे कपालका प्रयोजक पुरोडाश

होगा । यदि पुरोडाशके कपालका प्रयोजन होनेका सिद्धान्त ठहरा, तो कइना पड़ेगा—पुरोडाशार्थं धातुत कपालद्वारा तुपका परित्याग चलेगा । फिर जिस यागमें पुरोडाश नहीं रहता, उसमें यदि तुपपरित्याग करनेकी कपाल पाया करता, तो उसे कोई पुरो-  
डाशका कपाल नहीं कहता । क्योंकि यागमें पुरो-  
डाशका प्रभाव होनेसे, उसके लिये कपालका पाया जाना ठीक नहीं ठहरता । ऐसेसे स्थलमें तो केवल तुपपरित्यागके लिये कपाल पाया करता है । अतएव पुरोडाशके लिये न जानेपर कपालसे यज्ञात् तुप परित्याग करना मना है । यही इस अधिकरणका स्थिरौत सिद्धान्त है ।

कपालास्त ( सं० स्तो० ) १ अर्धविशेष, एक इधियार । २ चर्म, ढाल ।

कपालास्थि ( सं० स्तो० ) खगासंख्यात् शरीरके मध्यका कर्परसदृश एक पस्थि, जिसके बीचकी एक छपट्टे-  
जैसी छट्टी । जानु, गितम्बमांस, तालु, गण्ड, शङ्ख-  
पीर शिरके पस्थिको यह संज्ञा है । ( दृष्टम् )

कपालि ( तं० पु० ) कां दृष्टा शिवः पालयति, क-  
पाल-इति । महादेव ।

कपालिका ( हिं० ) कपालविष द्रव्यो ।

कपालिका ( सं० स्तो० ) कपाल-कन्-टाप् अत इत्यम् । १ कर्पर, छपट्टा । २ घटादिका समय नृत्तिकाछपट्ट, घड़ेकी मिट्टीका एक हिस्सा । ३ दन्तरोगविशेष, दाँतोंकी एक बीमारी ।

“दन्ति दन्तवन्तानि यदा दन्तैरा कष्टः ।  
मेवा कपालिका मेव दन्तानां विधातिनी ॥” ( दृष्टम् )

शर्करा नामक रोगके पीछे दन्तसे सजल शर्करा छूट पड़ते समय वस्त्र भी दलित हो मिट जाता है । इस रोगका नाम दन्तशर्करा भी है ।

विजित्पुत्रादि दन्तरोधक द्रव्यो ।

कपालिनी ( सं० स्तो० ) कपालिन्-टोप् । १ दुर्गा । २ मोष-जातिको स्त्री । ब्राह्मणोंके गर्भ पीर पीरके पीरमेंसे उत्पन्न स्त्री कपालिनी कहाती है ।

कपाली ( सं० पु० ) कपालोऽस्मात्, कपाल-इति । १ महादेव । २ जातिविशेष, एक क्षीम । यह जाति

धीवरके औरस और आश्रय-कन्याके गर्भसे उत्पन्न है। (पारस्परिक) हिन्दीमें इसे कपरिया कहते हैं।  
१ योगिविशेष।

“कपासी विन्दुनाथ काकचयीवराहः।” (उद्योगदीपिका)

४ कपासकसम्पदायविशेष। कपालिक शब्दोः। (त्रि०)

५ कपालविशिष्ट, खोपड़ीवाला। ६ भाग्यवान्, सुख-बलुत्। (स्त्री०) ७ विहङ्गा।

कपालेश्वर (सं० पु०) १ शिव। २ उड़ीसे प्रान्तका एक प्राचीन ग्राम। यह महानदीके उत्तरकूल कटकसे थोड़ी दूर अवस्थित है। यहाँ कपालेश्वर नामक एक पुरातन दुर्ग खड़ा है।

कपास (हिं०) कापस शब्दोः।

कपासी (हिं० वि०) १ कापासतुल्यः वर्णविशिष्ट, कपासका रङ्ग रखनेवाला, जो रङ्गमें कपासकी तरह देख पड़ता हो। (पु०) २ वर्णविशेष, एक रंग। यह रंग कपासके फूलसे मिलता और इनका पौधा रहता है। हरिद्रा, पलाशपुष्प एवं शुष्क आम्बुफलके संयोगसे इसे बनाते हैं। कहीं कहीं हरसिंगारसे भी यह तैयार होता है। कपासी रंग देखनेमें बहुत सुहावना लगता है।

(स्त्री०) १ वातामहस विशेष, वादामका एक पेड़। इसे भोटिया कहते हैं। कपासीका आकार-प्रकार समान रहता है। काष्ठ पाटन निक्षालता और पीठ तथा फलक बनानेमें प्रयुक्त है। फल भक्ष्य पदार्थ है। कपासीको प्रायः लोग भोटिया-वादाम कहते हैं।

जपि (सं० पु०) कपि-इ नलोपस। इतिहासोत्तरः। १ वानर, बन्दर। २ कन्यो, हाथी। ३ कर्षविशेष, किसी क्षिप्रका करोड़ा। ४ मिष्टक, गिलारस। यह एक गन्धद्रव्य है। ५ धूप, पाफुताव। ६ मधुपर्दन। ७ आम्नातक, चामड़ा। ८ गुरु-गिम्बी, केशव। ९ वराह। १० पिङ्गसवर्ण। ११ रत्न-चन्दन। १२ शामनकी। (त्रि०) १३ पिङ्गसवर्ण-गुल, भूरा।

कपिकच्छु (सं० स्त्री०) कपीनामपि कच्छुर्धन्याः, बहुम्री०। गुरुगिम्बी, केशव, कौश, करैच, वानरी, मकंदी।

कपिकच्छुफल (सं० स्त्री०) गुरुगिम्बीका बीज, केशवका तुल्यम्।

कपिकच्छुफलीपमा (सं० स्त्री०) कपिकच्छुफलस्य उपमा यत्, बहुम्री०। जलकामता, पापड़ी।

कपिकच्छुरा (सं० स्त्री०) कपिभ्योऽपि कच्छुं कच्छुं राति ददाति, कपि-कच्छु-रा-क। गुरुगिम्बी, केशव। कपिकन्दुक (सं० स्त्री०) कपि-कदि-उक पतोभोपः, कस्य गिरसः पिबन्दुकं पस्ति वा। मन्दाकका पस्ति, खोपड़ा।

कपिका (सं० स्त्री०) कपिर्धराह इव काययति प्रकाशते क्षपत्वात्, कपि-कै-क-टाप्। १ मोनमिन्दुवार हृष, मोला सम्भाल। २ चर्कहृष, मदारका पेड़।

कपिकेतन (सं० पु०) कपिर्हनुमान् केतने यश्च, बहुम्री०। १ चञ्जन। “भगवत्प्रेमिर्ह नाशममरीन् बहिरेवः।” (भारत, पाप० पर० च०) २ कपिविहङ्गिन ध्वज, जिस नियान्पि बन्दरकी तमबीर रहे।

कपिकेतु, कपिश्चन शब्दोः।

कपिकोनि (सं० पु०) कपीनां प्रियः कोनिः, मध्य-पदमो०। शृगानकोनिका, किसी क्षिप्रका धर।

कपिचूड़ (सं० पु०) कपिचूडा शब्दोः।

कपिचूडा (सं० स्त्री०) कपीनां चूडाइव, उपमि०। आम्नातकहृष, चामड़ेका पेड़।

कपिचूत (सं० पु०) कपीनां चूत इव तेषामति-प्रियत्वात्। १ पञ्चलमेद, किसी क्षिप्रका पोषम्। २ आम्नातक, चामड़ा।

कपिज (सं० पु०) कपितो जायते, कपि जन्-उ। १ मिष्टक, गिलारस, मोक्षान। (त्रि०) २ वानर-जात, बन्दरसे पैदा।

कपिजलिका (सं० स्त्री०) कपिः वानरश्च बहु इव जल्लायथाः, मंजयां कन्। तेजपिबोनिता, तिजवहा।

कपिञ्चन (सं० पु०) कपिरिव जयते वेगेन गन्धति कं श्रुतिसुषुप्तं पिङ्गपति वा ह्योदरादिस्थत्। १ चामकपयो, पयोहा। इवका मांस शोथक, मधुर और मधु जनिमे रक्तपित्त, रक्तद्रव्यविहार एवं मन्दातविकारमे प्रयुक्त है। (चरक-संहिता) कपिञ्चनका मांस हृष्य, राक्व और चटवके मांससे मोक्षक होता

है। (राजनिष्ठ) २ तित्तिरिपची, तीतर। इसका मांस सर्पदोषनाशक, घारक, वर्ष-प्रससताकारक और हृद्य, श्लाघ्य, तथा वायुरोगनाशक है। गौरतिष्ठारि चम्पान्य तित्तिरिची अपेक्षा अधिक गुणगोची रहता है। (हह) कोई कोई कालानुवाको भी कपिष्ठात कहता है। ३ एक चपिकुमारः। चाणभट्ट-रचित फाटवरी उपारख्यानमें यह श्वेतकेतुवृद्धिके पुत्र और पुष्टरीकके शत्रुकी भांति वर्णित है। ४ गिलारस, खोवान।

कपिष्ठातनाय (सं० पु०) बहुत्वके त्रित्व संख्यामें पर्यवसित किये जानिका-न्याय, जिस तरीकेमें तीनसे ज्यादा वृद्ध होम हो बददपर स्तम्भ करे। वेदमें एक श्रुति है—

“वसन्नाय कपिष्ठातनायेन।”

वसन्त ऋणके निमित्त बहु कपिष्ठात जनन करे। इस श्रुतिसे प्रथम दृष्टिमें स्पष्ट समझ नहीं पड़ता—कितने कपिष्ठात जननका विधि जगता है। क्योंकि त्रित्वसे परार्धत्वं पर्यन्ता सकल संख्यापर बहुत्व चलता है। हेमिनिके “प्रथमोपस्थितपरित्यागे प्रमाणाभावात्” सूत्रको देखते इस स्थानपर ‘बहुत्व’से वैदिक तात्पर्य ‘त्रित्व’ निकलता है। फिर ऐसा न समझनेसे वेदपर प्रामाण्यापत्ति आती है। क्योंकि ‘त्रित्व’से ‘परार्धत्वं’ पर्यन्ता सकल संख्यामें ‘बहुत्व’ रहते लोग यह ठहरा न करनेसे निजय वेदपर प्रवृत्तिगुण्य हो जायेंगे—‘बहु वृद्धत्वं’से कितने कपिष्ठात जायेंगे। मीमांसाकारने इस विरोधको अच्छी मीमांसा देखायी है—

“प्रथमोपस्थितपरित्यागे।” (मीमांसा २)

त्रित्वकी उत्पत्ति होनेपर त्रित्वके साथ एकत्वके ज्ञानद्वारा चतुष्टु निकलता है। सुतरां चतुष्टु प्रवृत्ति संख्या निकलनेसे पहले नियमतः त्रित्वका वास्तव्य मानना पड़ता है। यही कारण है—त्रित्व संख्यामें ही वेदबोध्य बहुत्व पर्यवसत है। पर्यात् वेदमें जिस स्थानपर बहुत्व आवेगा, उस स्थानपर प्रथमोपस्थितत्वसे त्रित्व लिया जावेगा। जिनके मतमें त्रित्वविगट एकत्वज्ञान चतुष्टुका कारण नहीं ठहरता, उनके मतमें भी त्रित्वमें ही बहुत्वका पर्यवसान मानना

पड़ता है। उक्त मतमें एकत्ववय विषयक ज्ञान त्रित्व और एकत्व चतुष्टय विषयक ज्ञान चतुष्टुका कारण है। सुतरां त्रित्वके चतुष्टय कहनेसे बहुत्वके कारण एकत्वका साधय होगा। यदि चतुष्टुदि संख्यामें भी बहुत्व सम जाये, तो एकत्व चतुष्टय ज्ञान चतुष्टुका कारण ठहरते गौरव पाये। एकत्व चतुष्टय ज्ञानमें समुत्पन्न रहता है। इसलिये त्रित्वमें ही वेदबोध्य बहुत्वका पर्यवसान है। फिर ऐसा होनेपर बहुत्व समझना दुःसाध्य न लगेगा। यदि बहुत्वका ज्ञान आ जायेगा, तो बहुकपिष्ठातके जननमें प्रवृत्तिका दूसरा प्रमाणनियमन पाधा न लायेगा। सुतरां वेदके प्रामाण्याकी शङ्का चल नहीं सकती।

कपिष्ठाता (सं० स्त्री०) शालिधान्वविशेष, एक घात। यह श्लेषकारी होती है। (चविश्रुति)

कपित्थ (सं० स्त्री०) गिलारस, खोवान।

कपित्व (सं० स्त्री०) कापेय भाव, रीस, हिंस्र।

कपित्व (सं० पु०) कपिस्तित्ति फलप्रियत्वात् यत्, कपि-स्या-क इपोदरादित्वात् सत्तोपः। १ खगमाख्यात हृद्य, कैयिका पेड़। यह मधुर, भक्ष्य, कषाय, तिक्त, शीतल, हृष्य, सर्पाघी एवं यातल और पित्त, पनिल, तथा व्रणघ्न होता है। फिर चामकपित्व भक्ष्य, हृष्य, घाही, वातल, जिह्वाजघ्नकर, विदोषवर्धन, रोचक और कफ एवं विषघ्न है। पक्ष कपित्व मधुर, भस्त्ररस तथा गुरु, और दोषत्रय, श्लेष्म, वमि, ज्वर, हिकारोग तथा क्लमहर होता है। (राजनिष्ठ)

कपित्वका संज्ञित पर्याय—दधित्व, घाही, मन्थय, दधिफल, पुष्पफल, दन्तघट, कगित्व, मालूर, मन्थय, नीलमसिका, यादिकल, घिरपाकी, श्रित्थिकल, कुचफल, कपीट, मन्थफल, दन्तफल, करभयलभ, काठिन्यफल और करभयलभक है।

इस वृक्षको हिन्दीमें कैया, मराठादेशमें खोयल, दक्षिणीमें कवित, मलयमें थल्ल, तामिलमें थल्ल-मरु, बिजम् वा बिजल, तेलङ्गमें थल्लगाकेतु, कपित्वम् वा पुलि, सिंधुमें देवळ, मालवीमें पान्, श्यामीमें मा-फयेत, पोर्तुगीजमें वलम और पंगरेजीमें वुड पापल (Wood apple) कहते हैं। इसका रंग-

जीमें वैज्ञानिक नाम फेरोनिया एलिफाण्टम् (Feronia Elephantum) है।

यह भारतवर्षके नाना स्थानोंमें उत्पन्न होता है। इसमें इसे लगाया करते हैं। एक एक छत्र अति-मृदु होता है। इसका काष्ठ सुदृढ़, स्थायी और देखनेमें स्यादा रहता है। विद्याखपत्तनमें इसके काष्ठसे बहका निर्माणकार्य चलता है।

भावविशेष कषे-कैथेकी धारक, कपायरस, लघु और लेखनगुणयुक्त बताते हैं। फिर पक्षा कैथा गुह, कण्ठकपायरस, कण्ठगोपक एवं दुग्धच और पिपासा, शूल, वायु तथा पित्तनाशक होता है।

कपित्थके पत्रका संस्कृत नाम, कपित्थपत्रो, फण्ज, लिङ्गा और ओषधिका है। वैद्यशास्त्रके मतसे यह तीक्ष्ण, उष्ण और कफ, मेह एवं विषहर होता है।

इसकी कैथेकी शोतल, शुष्क, तेजस्कर, तीक्ष्ण, तलकारक, कफनिःसारक, कण्ठशोधने दितकर और तन्मूलहृदकारक समझते हैं। इसका गर्भत गूक बढ़ता और तरु-तरुकी बोमारियां घटाता है। अतिमृदु-तीव्र है। विपाक कोटपतत्रादिके काष्ठने पत्रका कोमलांश वा शस्य दष्ट स्थानमें लगाने पर उपकार पहुँचता है। शस्य न मिलनेसे इसकी छाल कूट-पीस प्रयोग करना चाहिये।

कपित्थसे उत्कृष्ट गौद निकलता, बम्बई अञ्चलके राजौरमें विक्रता है। दक्षिणाञ्चलमें सब लोग इसे व्यवहारमें लाते हैं। तामिलके कविरास पन्थमें एकाएक वेदना उठनेसे कैथेका गौद प्रयोग करते हैं।

इस एवं अङ्गुलिका एक विलक्षण संस्थान, शरीर और उंगलियोंकी एक पनीखो सूरत। यह भाव दृष्टमें अङ्गुष्ठ और तर्जनीका अप्रभाग मिलानेसे जाता है। १ कुम्भोपवासी राजा ज्योतिष्मान्के पुत्र। (विष्णु, १००, ४००) ४ चण्डव्यस्र, पीपलका पेड़। (कौ०) ५ कपित्थफल, कैथेका फल।

कपित्थ (सं० पु०-स्त्री०) १ कपित्थ, कैथा। २ चण्डव्यस्र, पीपलका पेड़। ३ अवन्तिदा एक जगह, वज्रकी एक जगह।

कपित्थले (सं० स्त्री०) कपित्थोश्रते, कैथेके तुल्यमका लेख। यह तुवर, खादु और पापुविशपह होता है। (वेदवर्णिक,)

कपित्थत्वक् (सं० स्त्री०) कपित्थ त्वग्नि त्वक् यस्य, मध्यपदलो०। १ एनशानुक, एक पृथ्वीर चीज। २ कैथेकी छाल।

कपित्थपत्रा, कपित्थपत्रो १।

कपित्थपर्षी (सं० स्त्री०) कपित्थस्य पर्षमिष पर्षं पत्रं यस्याः, बहुव्री०। हसविषेय, एक पेड़। महा-राष्ट्रमें इसे कंवटपक्षी कहते हैं। इसका संस्थान पर्याय—विराजा, सुराध और विरपक्षि है। यह तीक्ष्ण, उष्ण, पाकमें कटु, तुवर एवं रसमें तिक्त और क्षमि, कफ, मेह, मेह तथा छायागनाशक है।

(वेदवर्णिक,)

कपित्थानी (सं० स्त्री०) कपित्थश्रे, मध्विराजा का पेड़।

कपित्थान्न (सं० पु०) पाम्बमेद, किमो किमहा भाम।

कपित्थान्नक (सं० पु०) श्रेयाज्ज, सकेद वरई। २ तुलसीमेद, किमो किमकी तुलसी।

कपित्थाटकवृणं (सं० स्त्री०) पनीसार रोगका एक वैद्यशोक्त औषध, दक्षकी एक दवा। पत्रशायन, विपरामून, दालचीनी, इलायची, तेजात, नागमेद, सोठ, कालोमिर्च, चोत, सुगन्धना, कानाश्रीर, धनिया तथा सोवर नमक एक-एक भाग एवं हमली, धायके फूल, पीपल, वेनवीड, चमार तीन-तीन भाग, चीनी ६ भाग और केश ८ भाग एकत्र मिला खानेसे पनीसार, पक्ष्म, चरारोग, गुदन, मन्तराग, काष्ठ, ज्ञास, अक्षि तथा हिमरोग निवारित होता है। (चक्रवर्तिनः १०४)

कपित्थास्य (सं० पु०) कपित्थस्य गानाकारं पात्रं सुखं यस्य, बहुव्री०। १ वानरविषेय, एक वन्द्य। इसका मुँह कैथे-जैसा मोस होता है। २ शृगविषेय, एक चोपाया।

कपित्थिनो (सं० स्त्री०) कपित्थोऽस्य देये, कपित्थ-इन्-डोप। उपादितो २२। वा ११११। १ कपित्थश्रे

देव, त्विह एतन्मये मे घेयः। येन बहुत रक्षे। २ कपिल-  
पर्वी।

कपिल (सं० द्वि०) कपिल कागादित्यात् इत्।

इत्येवमत्र कपिलेति शब्दः कपिलः कपिलः कपिलः कपिलः कपिलः

कपिलः। कागादित्यात्। कपिलः कपिलः कपिलः कपिलः कपिलः

कपिल (सं० पु०) कपिलः कपिलः कपिलः कपिलः कपिलः

कपिलः। (भाष्य, वन १३१ अ०)

कपिलामक (सं० पु०) कपिलामन् खाद्यं कम्।

शिलाय, सोवान्। (भाष्य, वन १३१ अ०)

कपिलामा (सं० पु०) कपिलामिव नाम यस्याः बहुव्री०।

शिलाय, सोवान्।

कपिलपत्नी (सं० स्त्री०) कपिलपत्नी रक्षा पिप्पलीव,

पत्नी०। १ रक्षापामार्ग, साक्ष सटजीरा। २ वानर-

पिप्पली०। ३ श्यावर्तस्तप, सूरजमुखी।

कपिलभा (सं० स्त्री०) कपिलपि प्रभो निजगुण-

प्रसारो यस्याः, बहुव्री०। १ शकशिव्यो, केवाच।

२ अपामार्ग, सटजीरा।

कपिलभु (सं० पु०) कपिलो जमुमदादीनां प्रभु-

निदन्ता, इ-तत्। १ रामचन्द्र। २ वाल्मीकि। ३ सुषीवा

४ वानरिका खासी, वन्दरीका माखिक।

कपिलप्रिय (सं० पु०) कपिलो प्रियः, इ-तत्। १ पाप्मा-

नकहृत्, वामदा। २ कपिलपुत्र, केवाच।

कपिलभ (सं० पु०) कपिलो भवः, इ-तत्। १ वानरो-

का मध्य द्रव्य, वन्दरीके खानिकी घोष। २ कटकी,

केवाच। यद्य वानरीका प्रति प्रिय खाद्य है।

कपिलभूत (सं० पु०) पारिभाष्य, किसी किछका

पोषण।

कपिलक (सं० पु०) कपिल खाद्यं कम् सख रत्नम्।

कपिलवर्ण, पिप्पलीवर्ण, भूरा रंग।

कपिलय (सं० पु०) कपिलभुमान् रघव वाहनो

यस्य, बहुव्री०। १ रामचन्द्र। २ भर्तृन्।

कपिलर (सं० पु०) शिलाय, सोवान्।

कपिलसाध्य (सं० पु०) पाप्मातकहृत्, वामदेका

येन।

कपिलोमफला (सं० स्त्री०) कपिलो रोमश्च रोम-

फलो यस्याः, मध्यपदको०। कपिलच्छ, केवाच।

इसका फल वानरके कोमकी भांति पिप्पलीवर्ण शूकसे

प्राप्त रहता है।

कपिलोमा (सं० स्त्री०) १ कपिलच्छ, केवाच।

२ शूक, यादु।

